

जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-घासीलालजी-महाराज-

विरचितया अनुयोगचन्द्रिकाख्यया व्याख्यया समलङ्कृतं

हिन्दी-गुर्जर-भाषाऽनुवादसहितम्

श्री अनुयोगद्वारसूत्रम्

(प्रथमो भागः)

नियोजक :

संस्कृत-प्राकृतज्ञ-जैनागमनिष्णात-प्रियव्याख्यानि

पण्डितमुनि-श्रीकन्हैयालालजी-महाराजः

प्रकाशकः

साणंदनिवासी-श्रेष्ठिश्री डोसाभाई गोपालदासस्मरणार्थं

तत्पुत्रप्रदत्त-द्रव्यसाहाय्येन

अ० भा० श्वे० स्था० जैनशास्त्रोद्धारसमितिप्रमुखः

श्रेष्ठि-श्रीशान्तिलाल-मङ्गलदासभाई-महोदयः

मु० राजकोट

प्रथमा-आवृत्ति.

वीर-संवत्

विक्रम-संवत्

ईसवीसन्

प्रति १२००

२४९३

२०२३

१९६७

मूल्यम्-रु० २५-०-०

भजनानुं ठेकाष्टु :
श्री आ. ला. प्रवे. स्थानकेवासी
नैनशास्त्रोद्धार समिति,
ठ. गरेडिया कूवा रोड,
राजकोट, (सौराष्ट्र).



ये नाम केचिदिह नः प्रथयन्त्यवज्ञां,
जानन्ति ते किमपि तान् प्रति नैष यत्नः ।
उत्पत्स्यतेऽस्ति मम कोऽपि समानधर्मा,
कालोह्यं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी ॥ १ ॥



हरिगीतच्छन्दः



करते अवज्ञा जो हमारी यत्न ना उनके लिये ।
जो जानते हैं तत्त्व कुछ फिर यत्न ना उनके लिये ॥
जनमेगा मुझसा व्यक्ति कोई तत्त्व इससे पायगा ।
है काल निरवधि विपुलपृथ्वी ध्यान में यह लायगा ॥ १ ॥

मूल्य: ३. २५=००

प्रथम आवृत्ति प्रत १२००
वीर संवत् २४६३
विक्रम संवत् २०२३
धसवीसन १९६७

: मुद्रक :
भण्डिलाद छगनदाद शाह
नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस,
धीकांटा रोड, अमदावाद.

श्री
अनुयोगद्वारसूत्र भाग पहले की
विषयानुक्रमणिका

अनुक्रमाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
१	मंगलाचरण	१-२
२	विषयों का विवरण	३-१३
३	पांच प्रकार के ज्ञान के स्वरूप का निरूपण	१३-२९
४	श्रुतज्ञान के स्वरूप का निरूपण	३०-५७
५	आवश्यक के अनुयोगस्वरूप का निरूपण	५८-६०
६	आवश्यक के निक्षेप का निरूपण	६१-६३
७	नामावश्यक के स्वरूप का निरूपण	६४-७२
८	स्थापनावश्यक के स्वरूप का निरूपण	७२-७७
९	नामावश्यक और स्थापनावश्यक के भेद का कथन	७८-८५
१०	द्रव्यावश्यक का निरूपण	८६-१०१
११	नयभेद से द्रव्यावश्यक के स्वरूप का निरूपण	१०२-११५
१२	नो आगम से द्रव्यावश्यक का निरूपण	११६-११९
१३	ज्ञायक शरीर द्रव्यावश्यक का निरूपण	११९-१२६
१४	भव्यशरीर द्रव्यावश्यक निरूपणम्	१२७-
१५	ज्ञायक शरीर भव्य शरीर व्यतिरिक्त द्रव्यावश्यक का निरूपण	१३१-१३२
१६	लौकिक द्रव्यावश्यक का निरूपण	१३२-१४१
१७	कुप्तावचनिक द्रव्यावश्यक का निरूपण	१४२-१५०
१८	ज्ञायक शरीर भव्यशरीर व्यतिरिक्त लोकोत्तरीय द्रव्यावश्यक का निरूपण	१५०-१५९
१९	भावावश्यक का निरूपण	१५९-१६४
२०	नो आगम भावावश्यक का निरूपण	१६४-१६८

२१	कुप्रावचनिक भावावश्यक का निरूपण	१६८-१७०
२२	लोकोत्तरीय भावावश्यक का निरूपण	१७१-१७७
२३	भावावश्यक के पर्याय का निरूपण	१७८-१८२
२४	नामश्रुतका निरूपण	१८३-१८४
२५	आगम से द्रव्य श्रुतका निरूपण	१८४-१८६
२६	नो आगम से द्रव्यावश्यक का निरूपण	१८६-१८७
२७	ज्ञायक शरीर द्रव्यश्रुतका निरूपण	१८७-१८८
२८	भव्यशरीर द्रव्यश्रुतका निरूपण	१८९-१९०
२९	ज्ञायक शरीर भव्यशरीर व्यतिरिक्त द्रव्यश्रुतकानिरूपण	१९०-१९९
३०	आगमसे भावश्रुतका निरूपण	२००-२०१
३१	लौकिक नो आगम से भावश्रुतका निरूपण	२०२-२०५
३२	लोकोत्तरीय नो आगमसे भावश्रुतका निरूपण	२०६-२१०
३३	भावश्रुत के पर्यायों का निरूपण	२१०-२१२
३४	स्कन्धाधिकार का निरूपण	२१३-२१५
३५	द्रव्यस्कन्ध का निरूपण	२१६-२१८
३६	द्रव्यस्कन्ध के सचित्तरूप प्रथम भेद का निरूपण	२१९-२२१
३७	अचित्त द्रव्यस्कन्ध का निरूपण	२२२-२२३
३८	मिश्र द्रव्यस्कन्ध का निरूपण	२२४-२२७
३९	अकृतस्नस्कन्ध का निरूपण	२२८-२३०
४०	अनेक द्रव्यस्कन्ध का निरूपण	२३१-२३४
४१	आगमसे भावस्कन्ध का निरूपण	२३५-
४२	नो आगमसे भावस्कन्ध का निरूपण	२३६-२३८
४३	स्कन्धों के पर्यायों का निरूपण	२३९-२४१
४४	आवश्यक के छ अध्ययनों का निरूपण	२४१-२४५
४५	आवश्यक व्याख्यात हो चुके और आगे व्याख्यात होने वाले विषय का निरूपण	२४५-२५१
४६	लौकिक उपक्रम का निरूपण	२५१-२५३

४७ सचित्त द्रव्योपक्रम का निरूपण	२५४-२५७
४८ द्विपद संबंधी द्रव्योपक्रम का निरूपण	२५७-२५९
४९ चतुष्पद विषयक दोनों प्रकार के उपक्रम का निरूपण	२६०-२६१
५० अपद विषयक दोनों प्रकार के उपक्रम का निरूपण	२६१-२६२
५१ अचित्त द्रव्योपक्रम का निरूपण	२६२-२६३
५२ मिश्र द्रव्योपक्रम का निरूपण	२६३-२६५
५३ क्षेत्रोपक्रम का निरूपण	२६६-२६९
५४ कालोपक्रम का निरूपण	२६९-२७१
५५ नो आगम से भावोपक्रम का निरूपण	२७१-२८४
५६ शास्त्रभावोपक्रम का निरूपण	२८४-२८५
५७ आनुपूर्वीमादि के स्वरूप का निरूपण	२८६-
५८ नामादि आनुपूर्वी का निरूपण	२८७-३०४
५९ अनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी का निरूपण	३०५-३१६
६० नैगमव्यवहारार्थपदका निरूपण	३१७-३१९
६१ भङ्गसमुत्कीर्तनता का निरूपण	३१९-३२७
६२ भङ्गोपदर्शनता का निरूपण	३२७-३३४
६३ समवतार के स्वरूप का निरूपण	३३५-३३९
६४ अनुगमके स्वरूप का निरूपण	३३९-३४३
६५ सत्पद का निरूपण	३४३-३४४
६६ द्रव्यप्रमाण का निरूपण	३४५-३४७
६७ क्षेत्रप्रमाण का निरूपण	३४८-३५५
६८ स्पर्शनाद्वार का निरूपण	३५५-३६०
६९ कालद्वार का निरूपण	३६१-३६४
७० अन्तरद्वार का निरूपण	३६५-३७६
७१ भागद्वार का निरूपण	३७६-३८३
७२ भावद्वार का निरूपण	३८३-३८७

७३ अल्प बहुत्वद्वार का निरूपण	३८७-३९७
७४ अर्थपद का निरूपण	३९९-४०२
७५ भङ्ग समुत्कीर्तनता का निरूपण	४०३-४०५
७६ भङ्गोपदर्शनता का निरूपण	४०६-४०८
७७ समवतार के स्वरूप का निरूपण	४०८-४१०
७८ अनुगम के स्वरूप का निरूपण	४१०-४२४
७९ पूर्वानुपूर्वी आदि तीन भेदों का निरूपण	४२५-४३१
८० पुद्गलास्तिकायकों अधिकृत करके तीन द्रव्यों का निरूपण	४३१-४३८
८१ क्षेत्रानुपूर्वी का निरूपण	४३९-४४२
८२ अर्थपद की प्ररूपणा	४४२-४४८
८३ अर्थपद प्ररूपणा के प्रयोजन का निरूपण	४४९-४५०
८४ भङ्गसमुत्कीर्तनता के प्रयोजन का निरूपण	४५१-४५२
८५ भङ्गोपदर्शनता का निरूपण	४५२-४५६
८६ समवतार का निरूपण	४५६-४५७
८७ अनुगम का निरूपण	४५८-४५९
८८ द्रव्यप्रमाण का निरूपण	४६०-४६४
८९ क्षेत्रप्रमाणद्वार का निरूपण	४६५-४७७
९० स्पर्शनाद्वार का निरूपण	४७७-४७९
९१ कालद्वार का निरूपण	४८०-४८४
९२ अन्तरद्वार का निरूपण	४८५-४९०
९३ भागद्वार का निरूपण	४९१-५००
९४ भावद्वार का निरूपण	५०१-५०२
९५ अल्पबहुत्वद्वार का निरूपण	५०३-५१०
९६ औपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वी का निरूपण	५११-५१६
९७ औपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वी का निरूपण	५१६-५२३
९८ अधोलोक गत क्षेत्रानुपूर्वी का निरूपण	५२३-५२६

१९९	तिर्यग्लोक क्षेत्रानुपूर्वी का निरूपण	५२७-५३२
१००	ऊर्ध्वलोक क्षेत्रानुपूर्वी का निरूपण	५३३-५३९
१०१	कालानुपूर्वी आदि का निरूपण	५३९-५४०
१०२	नैगमव्यवहारनयसंमत अर्थपद का निरूपण	५४१-५४७
१०३	नैगमव्यवहारनयसंमत भक्तिसमुत्कीर्तन का निरूपण	५४८-५५०
१०४	नैगमव्यवहारनयसंमत मङ्गोपदर्शन का निरूपण	५५१-५५४
१०५	समस्तार के स्वरूप का निरूपण	५५५-५५६
१०६	अनुगम के स्वरूप का निरूपण	५५७-५६२
१०७	क्षेत्रद्वार और स्पर्शनाद्वार का निरूपण	५६३-५७३
१०८	कालद्वार का निरूपण	५७४-५७७
१०९	अन्तरद्वार का निरूपण	५७७-५८७
११०	अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी का निरूपण	५८७-५८८
१११	अर्थपदप्ररूपण आदि का निरूपण	५८८-५८९
११२	औपनिधिकी कालानुपूर्वी का निरूपण	५९०-६०१
११३	उत्कीर्तनानुपूर्वी का निरूपण	६०१-६०५
११४	गणनानुपूर्वी का निरूपण	६०५-६०८
११५	संस्थानानुपूर्वी का निरूपण	६०८-६१४
११६	सामाचार्यानुपूर्वी का निरूपण	६१४-६२३
११७	भावानुपूर्वी का निरूपण	६२३-६२८
११८	उपक्रम के दूसरेभेद नाम का निरूपण	६२८-६३०
११९	एक नाम के स्वरूपका निरूपण	६३०-६३२
१२०	द्विनाम आदिके स्वरूपका निरूपण	६३३-६४४
१२१	त्रिनाम के स्वरूपका निरूपण	६४५-६५५
१२२	पर्यवनामका निरूपण	६५५-६६६
१२३	प्रकारान्तरसे त्रिनामका निरूपण	६६६-६७१
१२४	चतुर्नामका निरूपण	६७१-६७७
१२५	पांचनामों का निरूपण	६७७-६७९
१२६	छ नामों का निरूपण	६७९-६८२
१२७	औदयिकादि भावों के स्वरूपका निरूपण	६८२-६९१
१२८	औपशमिक भावका निरूपण	६९३-६९६

१२९	क्षायिक भावका निरूपण	६९७-७१९
१३०	क्षयोपशमिक भावका निरूपण	७२०-७३५
१३१	पारिणामिक भावका निरूपण	७३५-७४५
१३२	सान्निपातिक भावका निरूपण	७४५-७४६
१३३	द्विकादि संयोगका निरूपण	७४७-७५६
१३४	द्विकादि त्रिकसंयोगज सांनिपातिकभावका निरूपण	७५७-७७२
१३५	चतुष्कसंयोगज सांनिपातिक भावका निरूपण	७७२-७८२
१३६	पंचक संयोगज सांनिपातिक भावका निरूपण	७८२-७८८
१३७	सप्तनामका निरूपण	७८९-७९२
१३८	कारणदर्शनपूर्वक स्वरोंका निरूपण	७९२-७९८
१३९	सात स्वरों के लक्षण का निरूपण	७९८-८०२
१४०	स्वरों के ग्राम एवं मूर्च्छना का निरूपण	८०३-८०५
१४१	स्वर के उत्पत्ति आदि का निरूपण	८०६-८०८
१४२	गीत में हेय और उपादेय का निरूपण	८०८-८२१
१४३	अष्ट नाम का निरूपण	८२१-८२७
१४४	नव नाम का निरूपण	८२८-८३३
१४५	लक्षणपूर्वक वीररस का निरूपण	८३३-८३६
१४६	लक्षणपूर्वक शृंगाररस का निरूपण	८३६-८३९
१४७	लक्षण सहित अद्भुतरस का निरूपण	८३९-८४०
१४८	लक्षण सहित रौद्ररस का निरूपण	८४१-८४४
१४९	लक्षणसहित व्रीडनकरस का निरूपण	८४५-८४८

समाप्त



પટેલ ડોસાભાઈ ગોપાલદાસ

સુ. સાણંદ (જી. અમદાવાદ)



જન્મ : તા. ૧૭-૧-૧૮૭૦

મરણ : તા. ૫-૬-૧૯૬૪

સાણુંદનિવાસી ધર્માનુરાગી સ્વ. શ્રી ડોસાભાઈ ગોપાળજીભાઈ પટેલનું સંક્ષિપ્ત જીવનચરિત્ર

સાણુંદ (જી. અમદાવાદ) નિવાસી પટેલ ડોસાભાઈનો જન્મ વિક્રમ સંવત ૧૯૨૬ તા. ૧૭-૧-૧૮૭૦ના રોજ થયો હતો. તેઓ એ ભાઈઓ હતા. મોટા હરીભાઈ અને નાના ડોસાભાઈ તેઓ કડવા પાટીદાર જ્ઞાતિના હતા. કડવા પાટીદાર જ્ઞાતિમાં વૈષ્ણવધર્મી અને જૈનધર્મી હોય છે શ્રી ગોપાળજીભાઈમાં જૈનધર્મના સંસ્કારો દૃઢ હતા. તેઓ સ્થાનકવાસી જૈનધર્મના ચુસ્ત અનુયાયી હતા તેથી તેમના બંને પુત્રોમાં જૈનધર્મના સંસ્કારો ખાલ્યાવસ્થામાંથી દૃઢ થયા હતા તેમના પૂર્વજો મૂળ અમદાવાદ પાસેના નરોડા ગામના વંતની હતા, પરંતુ સમય જતાં તેઓ સાણુંદમાં આવી વસ્યા હતા.

બંને પુત્રોએ ધાર્મિક શિક્ષણ સાથે ગુજરાતી શિક્ષણ લીધું, તે દરમિયાન બંને પુત્રોને બાળ-અવસ્થામાં ઢોડી પિતા ગોપાળજીભાઈ સ્વર્ગવાસ પામ્યા. માતા બંને પુત્રોને લઈ પોતાના પિયર ગયા ત્યારબાદ ૧૮ વર્ષની ઉંમરે ડોસાભાઈને લઈ તેમની માતા પુનઃ સાણુંદમાં આવી વસ્યા. ઈ સ. ૧૯૦૨માં શ્રી ડોસાભાઈનું શ્રીમંત કન્યા જડાવબાઈ સાથે ખીજવાર લગ્ન થયું જડાવબાઈ સરળ, ધાર્મિક અને સેવાપરાયણ હતા. પોતાના ખેતીના ધંધામાં જીવનનિર્વાહ ખરેખર ચાલતો ન હોવાથી ડોસાભાઈએ નોકરી સ્વીકારી ૩૦ વર્ષ સુધી નોકરી કર્યા બાદ અનાજના ધંધામાં પડ્યા અને પ્રમાણિકતા, મીઠી ભાષા વગેરે સદ્ગુણોથી તેઓએ ધંધામાં ખૂબ પ્રગતિ સાધી સાથે સાથે દ્રવ્ય પ્રાપ્તિ પણ ઘણી સારી કરી.

શ્રી ડોસાભાઈ ધર્મના રંગથી ખરેખરા રંગાયેલા હતા સામાયિક, બંને વખત પ્રતિક્રમણ, વરસોનાવરસો સુધી કરેલી બંને વખતની આયખીલની સંપૂર્ણ ઓળી, ઉપવાસાદિ તપશ્ચર્યા એ જૈનધર્મ પ્રત્યેની તેમની ભક્તિના અપૂર્વ પ્રતીકો હતાં.

પશુ-પ્રાણીઓ પ્રત્યેની તેમની હયા પ્રશંસનીય હતી. એકવાર તેઓ કોઈ ગામડામાં ઉધરાણીએ ગયેલા, ત્યાં રસ્તામાં ભૂખતરસથી પીડાતી એવી દુર્બળ ગાયને જોઈ, તેમનું હૃદય કંટાળી ભરાઈ આવ્યું. તેમણે ગામલોકોને આ દુઃખી ગાયની વ્યવસ્થા કરવાનું કહ્યું પણ કોઈએ ગણકાયું નહિ, તેથી ડોસાભાઈ પોતાની ઉધરાણીના કામને જતું કરી તરતજ ગામમાંથી એક ગાડું ભાડે લાવી તેમાં ગાયને તેમાં નાખી, સાણુંદ લાવ્યા અને પાંજરાપોળમાં મૂકી પોતાના તરફથી તેના ઘાસચારાનો સંપૂર્ણ બંદોબસ્ત કર્યો,

સાધુમુનિરાજો પ્રત્યે તેમને અનન્ય લક્ષિત હતી ગામમાં સંતસતીજીઓ મિરાજતા હોય ત્યારે તેમના દર્શન કર્યા પહેલાં તેઓ કદી અન્નજળ લેતા ન હતા. સંઘના દરેક કાર્યમાં તેમનો તન, મન, ધનનો હમેશાં સક્રિય સહકાર રહેતો તેમણે અને તેમના પુત્રોએ અમદાવાદ દાણા ખજારમાં (કાળુપુર-ચોખાખજાર) અનાજની જથ્થાબંધ દુકાન શરૂ કરી તેની સાથે તેમણે પેઢીમાં પોતાનું નામ રાખવાનું બીલકુલ પસંદ કર્યું નહિ તેઓ જૈન ધર્મના સૂક્ષ્મ તત્ત્વોને જાણતાં હોઈ, તેમણે “ક્રિયા”, (પાપની રાયાઈ) આવવાનાં કારણે નામ સ્થાપનાથી મુક્ત થયા છેલ્લા કેટલાયે વરસોથી તેઓ નિવૃત્ત ધાર્મિક જીવન ગાળતા.

તેઓ સાદુ જીવન ગાળતા જીંદગીમાં તેમણે કદી ડોક્ટરની દવા સુદ્ધાં લીધી ન હતી. તેઓએ ખૂબજ લાંબુ આયુષ્ય ભોગવી, ૬૫ વર્ષની ઉંમરે સંવત ૨૦૨૦ ના વૈશાખ વદ દશમ તા. ૫-૬-૧૯૬૪ના રોજ ખૂબજ સમતાપૂર્વક સ્વર્ગગમન કર્યું. તેમને પોતાના અંતિમ સમયની જાણ થઈ હોય તેમ તેમણે પોતાના જ્યેષ્ઠ પુત્ર મહાસુખભાઈને કહી દીધું કે સરસ્ત કુટુંબને અહિં એકત્ર કરો તે મુજમ આજુ કુટુંબ તેમની પાસે હાજર થયું સૌની ક્ષમાયાચના કરી અને પવિત્ર નવકરમંત્રના શાંત જાપપૂર્વક તેઓ આ ક્ષાની દુનિયાનો ત્યાગ કરી ગયા અને પોતાના મનુષ્યજીવનને ધન્ય બનાવી ગયા.

શ્રી ડે.સાભાઈને એક પુત્રી અને ત્રણ પુત્રો છે. પુત્રી મહાલક્ષ્મીબેન ધર્મના સંસ્કારથી ભૂષિત છે ત્રણ પુત્રો (૧) મહાસુખભાઈ (૨) બલદેવભાઈ (૩) ચમનલાલભાઈ જેઓ પોતાના અનાજના વ્યવસાયમાં રોકાયેલ હોવા છતાં જૈનધર્મમાં ઉત્થાન કાર્યમાં સારો ફાળો આપે છે, જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમીતીને તેમણે પોતાના સદ્ગત પિતાશ્રી ડે.સાભાઈની પુણ્યસ્મૃતિમાં રૂ. ૫૦૦૧ આપીને છે અને આ આગમ તેમન સ્મરણાર્થે પ્રગટ કરાવેલ છે.

તેમના જ્યેષ્ઠ પુત્ર મહાસુખભાઈ વર્ષો સુધી સરકારી સ્કૂલમાં અધ્યાપક કરીકે રહ્યા હતા. હાલ પોતાની અનાજની પેઢીમાં ધીકરો વ્યવસાય કરી રહ્યા છે બીજા પુત્ર શ્રી બલદેવભાઈ અમદાવાદ જૈન મચાન્દસ એસોસીએશનના પ્રમુખ પદ પર છે અને ત્રીજા પુત્ર શ્રી ચીમનભાઈ શિક્ષણપ્રિય સજ્જન છે. ત્રણે ભાઈઓનો ફાળો જૈનધર્મના કાર્યોમાં સહકાર ભરેલો રહેલ છે તે ખરેખર આનંદજનક છે.

રાજકોટ

માનદ્વંત્રીઓ

તા. ૨૫-૬-૧૯૬૭

અ. ભા. એ. સ્થા. જૈન. શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિ.

આધુરુજીશ્રીઓ



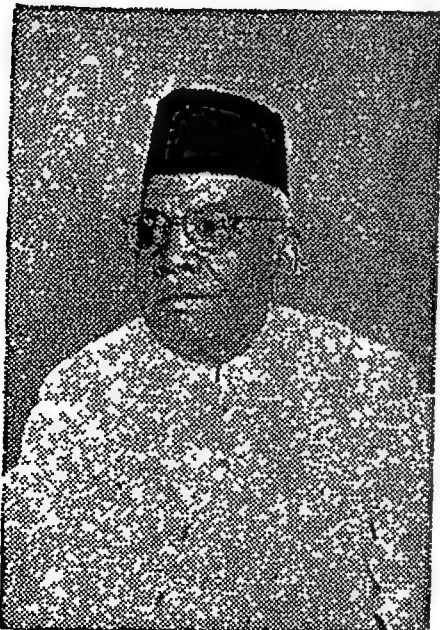
શ્રી શાંતિલાલ મંગળદાસભાઈ
અમદાવાદ.



(સ્વ.) શ્રી શામળભાઈ વેલ્હલભાઈ
વીરાણી-રાજકોટ.



(સ્વ.) શ્રી છગનલાલ શામળદાસ ભાવસાર - અમદાવાદ.



શ્રી શામળભાઈ શામળભાઈ
વીરાણી-રાજકોટ.



વચ્ચે બેઠેલા
લાલાજી કિશનચંદળ સા. જોહરી
ઉભેલા સુપુત્ર ચિ. મહેતાબચંદળ સા
નાના - અનિલકુમાર જૈન (દાયતા)

આધ્યમુરજીશ્રીઆ



(સ્વ.) શેઠશ્રી હરખચંદ કાલીદાસ વારિઆ
ભાણુવડ.



(સ્વ.) શેઠ રંગજીભાઈ મોહનલાલ શાહ
અમદાવાદ.



(સ્વ.) શેઠશ્રી દિનેશભાઈ કાંતિલાલ શાહ
અમદાવાદ.



શ્રી વિનોદભાઈ વીરાણી



શેઠશ્રી જસિંગભાઈ પાચાલાલભાઈ
અમદાવાદ.



સ્વ. શેઠશ્રી આત્મારામ માણેકલાલ
અમદાવાદ.

આધ્યમુરખીશ્રીઓ



શ્રી વૃજલાલ દુલ્લલ પારેખ
રાજકોટ.



કેઠારી હરગોવિંદ નેચંદલાઈ
રાજકોટ.



શેઠશ્રી મિશ્રીલાલ લાલચંદલ સા. દુહિયા
તથા શેઠશ્રી નેવંતરાજ લાલચંદલ સા.



(સ્વ.) શેઠશ્રી ધારશીલાલ જ્વલુલાલ
બારસી.



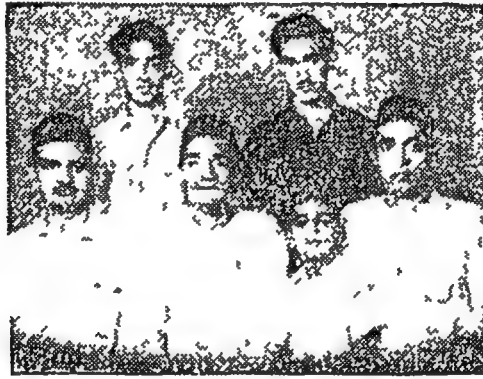
સ્વ. શ્રીમાન્ શેઠશ્રી મુકનચંદલ સા.
બાલિયા પાલી મારવાડ



સ્વ. શેઠશ્રી હરિલાલ અનોપચંદ શાહ
અંભાત.



સ્વ. શેઠ તારાચંદજી સાહેબ ગેલડા
મદ્રાસ.



શ્રીમાન્ શેઠ સા. ચીમનલાલજી સા.
કામચંદજી સા. અજીતવાલે (સપરિવાર)



૧ ચચે બેઠેલા મોટાભાઈ શ્રીમાન્ મૂલચંદ
જવાહીરલાલજી બરડિયા
૨ બાબુભાઈએલા ભાઈ મિશ્રીલાલજી બરડિયા
૩ ઉભેલા સૌથી નનાભાઈ પૂનમચંદ બરડિયા



શ્રીમાન્ સેઠશ્રી
શ્રીમરાજજી સા. ચોરડિયા

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

श्री जैनाचार्य—जैनधर्मदिवाकर—पूज्यश्री घासीलालव्रतिविरचितया
अनुयोगचन्द्रिकाख्यया व्याख्यया समलङ्कितम्—

श्री_अनुयोगद्वारसूत्रम्

(प्रथमो भागः)

(मालिनी वृत्तम्)

शिवसरणिविधानं जीवरक्षैकतानं,
सुरनरकृतगानं केवलज्ञानभानम् ।
प्रशमरसनिदानं ज्ञानदानप्रधानं,
परमसुखनिधानं वर्धमानं नमामि ॥ १ ॥

(२)

करणचरणधारं सर्वपूर्वाब्धिपारं,
शुभतरगुणधारं प्राप्तसंसारपारम् ।
कलितसकललब्धिं लब्धविज्ञानसिद्धिं,
गणधरमभिरामं गौतमं तं नमामि ॥ २ ॥

॥ श्री ॥

अनुयोगद्वार सूत्र का हिन्दी भाषान्तर प्रारम्भ

मैं उन अंतिम तीर्थंकर श्री महावीर जिनेन्द्र को नमस्कार करता हूँ कि जिन्होंने ४ घातिक कर्मों का अत्यंत विनाश करके केवलज्ञानरूपी अनन्त प्रकाश प्राप्त कर लिया है । और इसी कारण जो मोक्षमार्ग के विधायक तथा अनन्त अव्यावाध सुख के निधान (निधि) बने हैं । भव्य जीवों को जो प्रधानरूप से ज्ञान का दान देते हैं और जीवों की रक्षा करने में सदा तत्पर रहते हैं । देव और मनुष्य जिनके गुणों का गान करते हैं तथा जो प्रशम (शांत) रस के निदान—आदिकारण हैं ॥१॥

अनुयोगद्वार सूत्रनुं भाषान्तर प्रारंभ—

जेमणे चार घातिया कर्मोना संपूर्णतः क्षय करीने केवलज्ञानरूपी अनन्त प्रकाशने प्राप्त करी लीधा छे, अने ते कारणे जेयो मोक्षमार्गना विधायक तथा अनन्त अव्यावाध सुखना निधान (निधि) बनेला छे, जेयो लव्य एवोने मुष्यत्वे ज्ञाननुं दान हे छे अने एवोनी रक्षा करवाभा जे सदा तत्पर रहे छे, हेयो अने मनुष्यो जेमना गुणो गाय छे, अने जेयो शान्तरसना निदान आदिकारण छे एवां अंतिम तीर्थंकर श्री महावीर जिनेन्द्रने हुं नमस्कार करे छुं ॥ १ ॥

(પૃથ્વીચ્છન્દઃ)

સગુપ્તિસમિતિં સમાં વિરતિમાદધાનં સદા,
 ક્ષમાવદાશ્વિલક્ષમં કલિતમઞ્જુચારિત્રકમ્ ।
 સદોરમુખવસ્ત્રિકા વિલસિતાનનેન્દુ ગુરું,
 દુરન્ત ભવવારિધિપ્લવમપૂર્વબોધં સ્તુવે ॥૩॥
 (ગીતિઃ)

મધ્યાનામુપકૃતયે, પ્રવચનસિદ્ધાન્તવોધિનીં સરલામ્ ।
 ઘાસીલાલઃ કુરુતે, વ્યાખ્યામનુયોગચન્દ્રિકાં શિવદામ્ ॥ ૪ ॥

જો કરણસત્તરિ ઔર ચરણસત્તરિ કે ધારણ કરને વાલે હૈં । સમસ્ત ૧૪ પૂર્વરૂપ સમુદ્ર કે જો પારગામી હૈં । અત્યન્ત શ્રેષ્ઠ સમ્યગ્દર્શનાદિ ગુણાં કે જો ધારક હૈં । સંસાર કા પાર જિન્હોને પા લિયા હૈ । સમસ્ત લબ્ધિયાં કે જો મંડાર હૈં વિજ્ઞાન (વિશિષ્ટ જ્ઞાન) કો સિદ્ધિ જિન્હે પ્રાપ્ત હોં ચુકી હૈ—
 એસે ઉન મુનિશ્રેષ્ઠ ગૌતમ ગણધર કો મૈં નમસ્કાર કરતા હૂં । ॥૨॥

જો ત્રીન ગુપ્તિયોં સહિત પાંચ સમિતિયોં કો ઔર સમસ્ત વિરતિ કો સદા ધારણ કરતે હૈં । પૃથ્વી કી તરહ જો સર્વસહ હૈં । નિર્મલ ચારિત્ર કે જો આરાધક હૈં । વાયુકાયાદિક જીવોં કી રક્ષા કે લિયે સદોરકમુખ-
 વસ્ત્રિકા સે જિન કા મુખચન્દ્ર સર્વદા સુશોભિત હોતા રહતા હૈ । જો ઇસ દુરન્ત સંસારરૂપ સમુદ્ર મેં પ્રવહણ—(નૌકા) કે જૈસે હૈં । એસે અપૂર્વ બોધ વિશિષ્ટ ગુરુદેવ કો મૈં નમસ્કાર કરતા હૂં । ॥૩॥

જેઓ કરણસત્તરિ (સત્તર કરણ) અને ચરણસત્તરિ (સત્તર ચરણ)ના ધારક છે, સમસ્ત ૧૪ પૂર્વરૂપ સમુદ્રનો પાર જેમણે પામી લીધો છે, અત્યંત શ્રેષ્ઠ સમ્યગ્દર્શન-
 આદિ ગુણોથી જેઓ વિભૂષિત છે, જેમણે પોતાના સંસારનો અન્ત કરી નાખ્યો છે, જેઓ સમસ્ત લબ્ધિઓના મંડાર છે, અને વિજ્ઞાન (વિશિષ્ટ જ્ઞાન)ની સિદ્ધિ જેમને થઈ ચુકી છે એવાં મુનિશ્રેષ્ઠ ગૌતમ ગણધરને હું નમસ્કાર કરું છું ॥ ૨ ॥

ત્રણ ગુપ્તિઓ અને પાંચ સમિતિઓ તથા સમસ્ત વિરતિને સદા ધારણ કરનારા, પૃથ્વીના જેવા સહિષ્ણુ, નિર્મલ ચારિત્રના આરાધક, સદોરકમુખવસ્ત્રિકા (મુહુપત્તી) વડે જેમનું મુખચન્દ્ર સદા સુશોભિત રહે છે, જેઓ આ દુરન્ત સંસારમાં ભ્રમણ કરતાં છવો માટે નૌકા સમાન છે, એવાં અપૂર્વ બોધવિશિષ્ટ ગુરુદેવને હું નમસ્કાર કરું છું. ॥ ૩ ॥

इह मनुष्यजन्म दुर्लभं, यथा—केनाऽपि क्रीडापरेण देवेन यदि माणिक्य-
मयं स्तम्भं वज्रेण चूर्णीकृत्य परमाणुतुल्यं तच्चूर्णं नलिकान्तर्निधाय मेरुशिखरं
समारुह्य फूत्कृतसमीरणैस्तच्चूर्णं सकलं सर्वतः समुद्घातितं भवेत् । तदनन्तरं च
यदि विक्षिप्तास्ते परमाणवः प्रचण्डपवनोद्धृताः सर्वासु दिक्षु दूरं गता एकै
कशो विभिन्नाः पतिताः स्युस्तदा तान् परमाणुरूपान् सर्वतः संचित्य तैः पुनः

મેં ઘાસીલાલ મુનિવ્રતિ ભવ્ય જીવોં કે ઉપકાર કે નિમિત્ત પ્રવચન કે સિદ્ધાન્ત
કો સ્પષ્ટ કરનેવાલી અનુયોગદ્વાર સૂત્ર પર અનુયોગચન્દ્રિકા નામ કી સરલ
વ્યાખ્યા કી કિ જો ભવ્ય જીવોં કે લિયે આનન્દપ્રદ હૈ—રચતા હું । ॥૪॥

इस चतुर्गतिरूप संसार में मनुष्य जन्म बहुत दुर्लभ है । इस की
दुर्लभता शास्त्रकारोंने इस प्रकार से—प्रकट की है—जैसे क्रीडा में तत्पर बना
हुआ कोई—देव माणिक्य के स्तम्भ को वज्र से तोड़कर चूर २ कर देवें,
और फिर उस चूर्ण को एक नली के भीतर भरकर मेरु के शिखर पर खड़ा
२ अपनी फूंक से इधर उधर दिशाओं में उसे सब ओर उड़ादेवें । इस तरह
सर्व दिशाओं में बिखरे हुए वे चूर्ण परमाणु कि जिन्हें प्रचंड वायु के वेग
ने एक २ करके बहुत अधिक दूरतक तितर बितर कर लिया है अब यदि
वह देव—उन बिखरे हुए विभिन्न परमाणुओं को सर्व दिशाओं से एकत्रित

ભવ્ય જીવોના ઉપકારને માટે, પ્રવચનના સિદ્ધાન્તનું સ્પષ્ટીકરણ કરનારી,
અનુયોગદ્વાર સૂત્રની અનુયોગચન્દ્રિકા નામની સરળ વ્યાખ્યા, કે જે ભવ્ય જીવોને
માટે આનન્દપ્રદ છે, તેની હું ઘાસીલાલજી મુનિ, રચના કરું છું. ॥ ૪ ॥

ચાર ગતિવાળા આ સંસારમાં મનુષ્યજન્મની પ્રાપ્તિ થવી મુશ્કેલ છે.
તેની મુશ્કેલતાનું શાસ્ત્રકારોએ નીચેના ઢઠાન્ત દ્વારા પ્રતિપાદન કર્યું છે.

ધારો કે કોઈ એક દેવ ક્રીડામાં તત્પર બનેલો છે. તે વજ્રની મદદથી માણેકના
સ્તંભને તોડી નાખીને તેના ચૂરેચૂરા કરી નાખે છે. ત્યાર બાદ તે ચૂર્ણને એક
નળીમાં ભરી લે છે. ત્યારબાદ તે દેવ તે માણેકના ભૂકાથી ભરેલી નળીને લઈને
મેરુ પર્વતના શિખર ઉપર જઈને ઊભો રહે છે અને ફૂંક મારી મારીને તે નળીમાં
ભરેલા માણેકના ભૂકાને ચારે દિશાઓમાં ઉડાડી દે છે. ત્યાર બાદ પ્રચંડ વાયુ
ફૂંકાવાને લીધે ચારે દિશાઓમાં વિખરાયેલા તે માણેકના પરમાણુઓ દૂર દૂર સુધી
ઊડી જઈને વેર વિખેર થઈ જાય છે. હવે ધારો કે તે દેવ એવો વિચાર કરે કે
સર્વ દિશાઓમાં વેરવિખેર પડેલા તે માણેકના પરમાણુઓને એકત્ર કરીને ફરીથી

સ્તમ્ભનિષ્પાદનં દુષ્કરં, તથૈવ ચતુર્ગતિસંસારેષુ ભ્રમતાં જીવાનાં મનુષ્યજન્મ
દુર્લભમ્ તથા ચાયં સંગ્રહશ્લોકઃ—

“ચૂર્ણીકૃત્ય પરાક્રમાન્મણિમયં સ્તમ્ભં સુરેણ સ્વયં,

મેરૌ સન્નલિકાસમીરવશતઃ ક્ષિપ્તં રજો દિક્ષુ તત્ ।

સ્તમ્ભસ્તઃ પરમાણુભિઃ સુમિલિતૈર્લોકે યથા દુષ્કરઃ,

સંસારે ભ્રમતો મનુષ્યજનનં જન્તોસ્તથા દુર્લભમ્” ॥ ઇતિ ॥

એવંવિધમતિદુર્લભં માનુષં જન્મ સમ્પ્રાપ્ય, મિથ્યાત્વતિમિરપ્રણાશકં
શ્રદ્ધાજ્યોતિઃપ્રકાશકં તત્ત્વાતત્ત્વવિવેચકં પીયૂષપાનમિવ હિતાવહં ચન્ચન્ચન્દ્ર-
ચન્દ્રિકામિવ હૃદયાહ્લાદક સ્વપ્નદૃષ્ટવસ્તુનઃ પુનર્જાગ્રદવસ્થાયાં—તદ્દ્યાભવત્પ્રમોદજનકં
ભૂમિગતનિધાનપ્રાપ્તિમિવ સુખજનકસકલસન્તાપહારકં ધર્મશ્રવણં સમુપલભ્ય,

કર પુનઃ ઉનસે મણિમય સ્તંભ બનાના ચાહે તો જિસ પ્રકાર યહ સ્તંભ નિર્માણ કાર્ય
ઉમકા દુષ્કર હૈ, ઉસી પ્રકાર સે ઇસ ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર મેં મટકતે હુએ જીવો
કો મનુષ્ય જન્મ-મિલના દુર્લભ હૈ । યહી બાત ઇસ “ચૂર્ણીકૃત્ય—ઇત્યાદિ શ્લોક
દ્વારા કહી ગઈ હૈ । ઇસ તરહ સે અતિ દુર્લભ બને હુએ મનુષ્યજન્મ કો પાકર-
કે ઔર ઇસમેં મી મિથ્યાત્વરૂપ અન્ધકાર કો નાશ કરનેવાલે, શ્રદ્ધારૂપ જ્યોતિ
કા પ્રકાશ કરનેવાલે એવં તત્ત્વ ઔર અતત્ત્વ કા સ્વરૂપ કહને વાલે, એસે ધર્મ
કા શ્રવણ ક્રિ જો જીવ કે લિયે અમૃતપાન કે સમાન હિતકારક હૈ—ચમકતી
હુઈ ચન્દ્રિકા કે સમાન, હૃદયાનન્દજનક હૈ—જાગૃત અવસ્થા મેં સ્વપ્નદૃષ્ટ વસ્તુની
પ્રાપ્તિ કે સમાન પ્રમોદકારક હૈ, ભૂમિગતનિધાન કી પ્રાપ્તિ કે સમાન સુખ-
દાયક ઔર સમસ્ત સન્તાપોં કા નાશક હૈ, પ્રાપ્ત કરકે તથા ઇસકે પ્રમાણ સે

તેમાંથી માણિક્ય સ્તંભનું નિર્માણ કરે. તો તે વેર વિખર થઈને પડેલા પરમાણુઓને
એકત્ર કરીને તેમાંથી માણિક્ય સ્તંભનું નિર્માણ કરવાનું કામ તે દેવને માટે બેટલું
દુષ્કર છે, એટલું જ દુષ્કર ચાર ગતિવાળા આ સંસારમાં ભટકતાં જીવોને માટે
મનુષ્ય જન્મની પ્રાપ્તિરૂપ કાર્ય છે. એજ વાત સૂત્રકારે “ચૂર્ણીકૃત્ય” ઇત્યાદિ શ્લોક
દ્વારા પ્રકટ કરી છે.

આ રીતે અતિ દુર્લભ એવા મનુષ્યજન્મને પ્રાપ્ત કરીને, મિથ્યાત્વરૂપ અન્ધ-
કારનો નાશ કરનાર, શ્રદ્ધારૂપી જ્યોતિને પ્રકાશિત કરનાર, તત્ત્વ અને અતત્ત્વના સ્વ-
રૂપનું પ્રતિપાદન કરનાર, એવા ધર્મનું શ્રવણ કે જે જીવોને માટે અમૃતપાન સમાન
હિતકર છે, જે ચમકતી એવી ચન્દ્રિકાના પ્રકાશસમાન હૃદયને આનંદદાયક છે,
જાગૃત અવસ્થામાં જે સ્વપ્નદૃષ્ટ વસ્તુની પ્રાપ્તિના સમાન પ્રમોદકારક છે, જે ભૂમિની

સંસારસાગરતરણતરણિ મિથ્યાત્વતિમિરહરણદ્યુમણિ સ્વર્ગાપવગસુખચિન્તામણિ
ક્ષપકશ્રેણિસરણિ કર્મરિપુદમનીં કેવલદર્શનજનનીં શ્રદ્ધામવાપ્ય, કર્મરજઃ
પ્રક્ષાલને જલમિવ ભોગભુજંગ્ગનિવારણે મંત્રમિવ, કર્મઘનાઘનવિકરણે પવનમિવ-
કેવલજ્ઞાનભાસ્કરપ્રકટને પ્રાચીદિશમિવ સાધનન્તમુક્તિસામ્રાજ્યામિલિષિત-
પ્રાપ્તૌ કલ્પારુમિવ સયમ લઙ્કા, હે ગોપાદે ચતુસ્વલ્પનિરૂપકાણ્યવાધ-

સંસારસાગર સે પાર ઉતારને કે લિયે, તરણિ—નૌકા—જસી મિથ્યાત્વરૂપ-
ગહન અન્ધકાર કોં નાશ કરને કે લિયે સૂર્ય જૈસી સ્વર્ગ ઓર મોક્ષ કે સુખાં
કો દેને કે લિયે ચિન્તામણિ જૈસી ઓર ક્ષપકશ્રેણિ પર આરૂઢ કરાને કે
લિયે નસૈની (નિસરણી) જૈસી, એસી શ્રદ્ધા કો કિ જો જીવોં કે અનાદિ સંચિત
કર્મરૂપ રિપુઓં કો નાશ કરને વાલી હોતી હૈ એવં કેવલજ્ઞાન ઓર કેવલ-
દર્શન કો જન્મ દેને વાલી હોતી હૈ પ્રાપ્ત વરકે તથા જલ કે સમાન સંચિત
કર્મરૂપરજ કો ધોનેવાલે મંત્ર કે સમાન ભોગરૂપ ભૂજંગ કો દૂર કરનેવાલે,
પવનકે સમાન ભવિષ્યત્ કાલીન કર્મરૂપ મેઘોં કો ઉડા દેનેવાલે, અર્થાત્
(વિશ્કેરનેવાલે) પૂર્વ દિશા કે સમાન કેવલજ્ઞાનરૂપ સૂર્ય કો પ્રકટિત કરને-
વાલે, ઓગ વલ્પવૃક્ષ કે સમાન સાદિ-અનંત મુક્તિ કે સામ્રાજ્યરૂપ ઇચ્છિત
પદાર્થ કી પ્રાપ્તિ કરા દેને વાલે, એસે સંયમ કો પ્રાપ્ત કરકે તથા—હેય

નીચે છુપાયેલા ખજાનાની પ્રાપ્તિસમાન સુખદાયક છે, જે સમસ્ત સંતાપોનું નાશક
છે, એવા ધાર્મિક પ્રવચનનું ભાવિક જીવે શ્રવણ કરવું જોઈએ.

આ પ્રકારના ધર્મશ્રવણને પ્રાપ્ત કરીને, તેના પ્રભાવથી સંસારસાગરને પાર
કરવાને માટે શ્રદ્ધાની ખાસ જરૂર રહે છે તે શ્રદ્ધાને અહીં નૌકા સમાન કહી છે,
કારણ કે સંસારસાગરને પાર કરવામાં તે નૌકાની ગરજ સારે છે. એવી નૌકા
સમાન, મિથ્યાત્વરૂપ ગહન અન્ધકારને ભેદવામાં સૂર્યસમાન, સ્વર્ગ અને મોક્ષના
સુખ પ્રાપ્ત કરાવવામાં ચિન્તામણિ રત્ન સમાન ક્ષપકશ્રણિ પર આરોહણ કરાવવામાં
નિસરણી સમાન, એવી શ્રદ્ધા ધર્મતત્ત્વ પ્રત્યે હોવી જોઈએ. એવી શ્રદ્ધા જીવોના
અનાદિ કાળથી સંચિત કર્મરૂપ શત્રુઓના નાશ કરનારી અને કેવળજ્ઞાન અને
કેવળદર્શનની પ્રાપ્તિ કરાવનારી હોય છે.

જળની જેમ સંચિત કર્મરૂપ રજને ધોનાર, મંત્રની જેમ ભોગરૂપ ભુજંગને
દૂર કરનાર, પવનની જેમ ભવિષ્યકાલિન કર્મરૂપ વાદળોને અસ્તવ્યસ્ત કરી નાખનાર,
પ્રાચી દિશા (પૂર્વ દિશા) સમાન કેવળજ્ઞાનરૂપ સૂર્યને પ્રકટ કરનાર, અને કલ્પવૃક્ષ
સમાન અદિઅનંત મુક્તિના સામ્રાજ્યરૂપ ઇચ્છિત પદાર્થની પ્રાપ્તિ કરાવનાર એવા

સુખજનકાનિ આચારાઙ્ગાદિસૂત્રાણિ વિધિવદધીત્વ, સંસારવારિધિમહાતરણિ શિવ-
પદ-સરલસરણિ સિદ્ધિપદદાયકં સત્ત્વલગુણનાયકમ્ અનાદિ ભવસંચિતાષ્ટવિધ-
કર્મબન્ધનોચ્છેદકં મિથ્યાત્વગ્રન્થિભેદકં સમ્યગ્જ્ઞાનવર્ષણે સમર્થં સૂત્રપરમાર્થ-
સ્વપરસમયરહસ્યં ચ વિજ્ઞાય, તથાવિધકર્મક્ષયોપશમતત્ત્વમ્ભવિની સત્કલતત્ત્વ-
સ્વરૂપનિર્દર્શિની દ્રવ્યગુણપર્યાયિવિષયવિજ્ઞાં વિશદપ્રજ્ઞાં સમધિગત્ય, પ્રવચનાનુ-
યોગકરણે યતિભિર્યતિતત્ત્વમ્ ।

और उपादेयरूप वस्तुओं के स्वरूप के निरूपक एवं अव्याबाध सुख के जनक
आचाराङ्ग आदि-आगम शास्त्रों का सविधि अध्ययन करके, तथा-संसारमसुद्र
से पार उतारने में महातरणि जैसे-और शिवपद के सोपान जैसे, सूत्र के पर-
मार्थ को एवं स्व-पर समय के रहस्य को कि जिसके बल पर जीव को
सिद्धि गति की प्राप्ति होती है. और जीवों के अनादि भव परम्परा से
संचितअष्टविध कर्मों का समूह विनाश होता है तथा-मिथ्यात्वरूपी अन्तरंग
ग्रन्थि (गांठ)का जो भेदक होता है और सम्यग्ज्ञानरूपी वर्षा को जो बरसाने में
समर्थ होता है, जान करके, तथा तथाविधकर्म-ज्ञानावरणीय-के क्षयो-
पशम से उत्पन्न-हुई विशदप्रज्ञा को कि जो समस्त तत्त्वों के स्वरूप का यथार्थ
दर्शन कराती है, और जिसे-द्रव्यों के सहवर्ती गुणों एवं क्रमवर्ती पर्यायों
का वास्तविक भान होता है इस बात को जान करके मोक्षाभिलाषियों का
कर्तव्य है कि वे प्रवचन के व्याख्यान करने में प्रयत्नशील रहें ।

સંયમને પ્રાપ્ત કરીને તથા હેય અને ઉપાદેયરૂપ વસ્તુઓના સ્વરૂપના નિરૂપક અને
અવ્યાબાધ સુખના જનક આચારાંગ આદિ આગમશાસ્ત્રોનું વિધિપૂર્વક અધ્યયન કરીને
તથા સંસાર સાગરને તરી જવામાં મહાતરણિ (નૌકા) જેવા. શિવપદના સોપાન
સમાન, સૂત્રના પરમાર્થને પ્રકટ કરનાર, સ્વ અને પર સમયના (જૈન સિદ્ધાંત અને
અન્ય સિદ્ધાંતોના) રહસ્યને પ્રકટ કરનાર, જેના પ્રભાવથી જીવને સિદ્ધિની પ્રાપ્તિ
થાય છે, અનાદિ ભવ પરમ્પરાથી સંચિત અષ્ટવિધ કર્મોના સમૂહને જેના દ્વારા
વિનાશ થઈ જાય છે, તથા મિથ્યાત્વરૂપ અન્તરંગ ગ્રન્થિનું જે ભેદક હોય છે, અને
સમ્યક્ જ્ઞાનરૂપ વર્ષા વરસાવવાને જે સમર્થ હોય છે, એવા પ્રવચનનું શ્રવણ કરવામાં
તથા પકન કરવામાં જીવે તત્પર રહેવું જોઈએ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના ક્ષયોપશમથી
ઉત્પન્ન થયેલી વિશદ પ્રજ્ઞા કે જે સમસ્ત તત્ત્વોના સ્વરૂપનું યથાર્થ દર્શન કરાવે
છે, અને જેના દ્વારા દ્રવ્યોના સહવર્તી ગુણો અને કર્મવર્તી પર્યાયોનું વાસ્ત-
વિક ભાન થાય છે, એ વાતને સમજીને મોક્ષાભિલાષી જીવોએ પ્રવચનનું વ્યાખ્યાન
કરવામાં પ્રયત્નશીલ રહેવું જોઈએ.

નનુ કસ્તાવદનુયોગઃ ? ઉચ્યતે-યુજ્યતે=સંબધ્યતે ભગવદુક્તાર્થેન સહેતિ યોગઃ કથનલક્ષણો વ્યાપારઃ, અનુરૂપોઽનુકૂલો વા યોગઃ અનુયોગઃ । ભગવદ્દાષિતાર્થતો ન્યૂનાધિકવિપરીતભાવવૈલક્ષણ્યમીષદપિ ગણધરોક્તસૂત્રેષુ નાસ્તિ-
 इति भगवदुक्तार्थानुरूपः प्रतिपादनलक्षणो व्यापारोऽनुयोग-इति निष्कर्षः ।

અયમનુયોગશ્ચતુર્ધા—(૧) ચરણકરણાનુયોગઃ (૨) ધર્મકથાનુયોગઃ, (૩) ગણિતાનુયોગઃ, (૪) દ્રવ્યાનુયોગશ્ચ ।

શંકા—અનુયોગ શબ્દ કા કથા અર્થ હૈ,

ઉત્તર—ભગવાન્ ને અર્થરૂપ સે જો પ્રવચન કી પ્રરૂપણા કી હૈ ઉસી કે અનુસાર અનુકૂલ—જો વક્તા દ્વારા પ્રવચન કા કથન કિયા જાતા હૈ—ઉપકા નામ અનુયોગ હૈ ।

यहां पर कथन करनेरूप व्यापारका नाम योग है। भगवद्दाषित अर्थ को गणधरों ने सूत्ररूप से ग्रथित किया है। सो इस ग्रथनकार्य में उन्होंने अपनी तर्क से कुछ भी मिश्रण नहीं किया है—किन्तु जैसा प्रभु का कथन था उसी के अनुसार उन्होंने न्यूनता, अधिकता विपरीतता, एव भाववैलक्षण्य का परिहार करते हुए ज्यों का त्यों कथन किया-है-उसे सुमंबद्ध किया है। इसी कारण गणधरोक्त सूत्रों में न्यूनता अधिकता आदि बातें जगसी भी मात्रा में नहीं हैं। इस तरह “भगवदुक्त अर्थ के अनुरूप प्रतिपादन रूप जो व्यापार है—उपका नाम अनुयोग है” यह इसका निष्कर्षार्थ है ।

પ્રશ્ન—“અનુયોગ” શબ્દનો શો અર્થ થાય છે ?

ઉત્તર—ભગવાને અર્થરૂપ જે પ્રવચનની પ્રરૂપણા કરી છે, તેને અનુકૂળ અથવા તેની અનુસાર વક્તાદ્વારા પ્રવચનનું જે કથન કરાય છે તેનું નામ અનુયોગ છે.

અહીં કથન કરવારૂપ વ્યાપારને યોગ કહેવામાં આવેલ છે. ભગવદ્દાષિત અર્થને ગણધરોએ સૂત્રરૂપે ગ્રથિત કર્યો છે. પરંતુ તે ગ્રંથનકાર્યમાં તેમણે પોતાની દૃઢપનાથી કોઈ પણ વસ્તુનો ઉમેરો કર્યો નથી. ભગવાનનું જે પ્રકારનું કથન હતું તેને અનુરૂપ કથન જ તેમણે કર્યું છે. ભગવાનના કથનમાં સહેજ પણ વધારો કે ઘટાડો કર્યા વિના, તથા વિપરીતતા અને ભાવવૈલક્ષણ્યનો પરિહાર કરીને તેમણે તે કથન અનુસારનું જ કથન સૂત્રરૂપે ગ્રંથિત કરેલું છે. તે કારણે ગણધરો દ્વારા કથિત સૂત્રોમાં ન્યૂનતા, અધિકતા આદિનો અલ્પ માત્રામાં પણ સહભાવ નથી. આ પ્રકારે ભગવદુક્ત (અહીં તો દ્વારા ગ્રથિત) અર્થને અનુરૂપ પ્રતિપાદન રૂપ જે વ્યાપાર છે તેનું નામ જ અનુયોગ છે. આ પ્રકારનો અનુયોગ પદનો અર્થ ફલિત થાય છે.

યથા ગણધરેણ સુધર્મસ્વામિના જંબૂસ્વામિનં પ્રતિ ભગવદુક્તાર્થાનુરૂપ-
કથનરૂપોઽનુયોગ ઉપક્રમાદીનિ ચત્વારિ દ્વારાણિ સમાશ્રિત્ય કૃતસ્તથાઽન્યેનાપ્યા-
ચાર્યેણ શિષ્યેભ્યઃ સૂત્રાર્થકથનરૂપોઽનુયોગઃ કર્તવ્યઃ । યદ્યપિ સર્વેષામાગમાનામ-
નુયોગઃ કર્તવ્યઃ, તથાઽપ્યત્રસૂત્રે આવશ્યકસ્યાનુયોગઃ પ્રસ્તુતઃ । આવશ્યકસ્યાનુ-
યોગકરણે સમર્થઃ સ્વલુ સર્વેષામાગમાનામનુયોગકરણે સમર્થો ભવતિ । તસ્માદનુ-
યોગવિધિજિજ્ઞાસુના મુનિનાઽનુયોગદ્વારસૂત્રમધ્યેતવ્યમ્ । इदं च सूत्रं द्रव्या-
નુયોગાન્તર્ગતम् ।

यह अनुयोग चार प्रकार का है—(१) चरणकरणानुयोग (२) धर्मकथानुयोग
(३) गणितानुयोग और (४) द्रव्यानुयोग ।

जिस प्रकार से गणधर सुधर्मा स्वामीने जंबूस्वामी के प्रति भगवदुक्त
अर्थ के अनुसार कथन करनेरूप अनुयोग का उपक्रम आदि चार द्वारों का
आश्रय करके किया है उसी तरह से अन्य आचार्य को भी शिष्यों के—
प्रति सूत्रार्थ का कथन करनेरूप अनुयोग करना चाहिये । यद्यपि आचार्य
को शिष्यों के लिये समस्त आगमों का अनुयोग कर्तव्य है, फिर भी इस
सूत्र में आवश्यक का अनुयोग प्रस्तुत किया गया है ।—क्यों कि आवश्यक के
अनुयोग करने में समर्थ—बना हुआ मुनिजन समस्त आगमों के अनुयोग करने
में शक्तिशाली हो जाता है । इसलिये अनुयोग की विधि को जानने की
इच्छा रखनेवाले मुनिजन को इस अनुयोगद्वारसूत्र का अध्ययन अवश्य करता
चाहिये । इस सूत्र का अन्तर्भाव द्रव्यानुयोग में हुआ है । अनुयोग शब्द
का अर्थ व्याख्यात है ।

આ અનુયોગ નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકારના છે—(૧) ચરણકરણાનુયોગ, (૨) ધર્મ-
કથાનુયોગ, (૩) ગણિતાનુયોગ અને (૪) દ્રવ્યાનુયોગ.

જે પ્રકારે ગણધર સુધર્માસ્વામીએ પોતાના શિષ્ય જંબૂસ્વામીની સમક્ષ ભગ-
વદુક્ત અર્થને અનુરૂપ કથન કરવા રૂપ અનુયોગનું ઉપક્રમ આદિ ચાર દ્વારોનો
આશ્રય લઈને કથન કર્યું છે; એજ પ્રમાણે અન્ય આચાર્યોએ પણ શિષ્યોના હિતને
માટે સૂત્રાર્થનું કથન કરવા રૂપ અનુયોગ કરવો જોઈએ. જો કે આચાર્યોએ શિષ્યોને
માટે સમસ્ત આગમોના અનુયોગ કરવો જોઈએ, પરંતુ આ સૂત્રમાં આવશ્યકનો
અનુયોગ પ્રસ્તુત કરવામાં આવ્યો છે, કારણ કે આવશ્યકનો અનુયોગ કરવાને સમર્થ
હોય એવા આચાર્ય અથવા મુનિજન સમસ્ત આગમોનો અનુયોગ કરવામાં સમર્થ
બની જાય છે. તેથી અનુયોગની વિધિને જાણવાની ઇચ્છાવાળા મુનિઓએ આ અનુ-
યોગદ્વાર સૂત્રનું અધ્યયન અવશ્ય કરવું જોઈએ. આ શબ્દનો અન્તર્ભાવ (સમાવેશ)
દ્રવ્યાનુયોગમાં થયો છે. અનુયોગ શબ્દનો અર્થ વ્યાખ્યાત સમજવો.

अस्य शब्दार्थस्त्वेवम्—अनुयोगस्य—व्याख्यानस्य द्वाराणि अनुयोगद्वाराणि, तत्प्रतिपादकं सूत्रम्—अनुयोगद्वारसूत्रम् । अनुयोगस्य चत्वारि द्वाराणि सन्ति । तद्यथा—उपक्रमः, निक्षेपः, अनुगमः, नयश्चेति । तत्र उपक्रमः—उपक्रमणम् उपक्रमः । व्याख्येयवस्तुना नामनिर्देशः, व्याचिख्यासितशास्त्रस्य तैस्तैः प्रतिपादनप्रकारैः समीपीकरणं न्यासदेशानयनं निक्षेपयोग्यताकरणमित्यर्थः । उपक्रान्तं हि उपक्रमान्तर्गतभेदैर्विचारितं—निक्षिप्यते, नत्वनुपक्रान्तम् १ । निक्षेपः—निक्षेपणं निक्षेपः—उपक्रमानीतस्य व्याचिख्यासितस्य षड्विधभावश्रवणकादेः शास्त्रस्य नाम स्थापनादि भेदेन निरूपणम् २ । अनुगमः—अनुगमनम्—अनुगमः । नामादिना निक्षिप्तस्य शास्त्रस्यानुकूलं ज्ञानम्, अनुकूलार्थकथनं च ३ । नयः—नयति=अनेकांशात्मकं वस्तु

इस व्याख्यानरूप अनुयोग के द्वारों का प्रतिपादन करनेवाला जो सूत्र—आगम—है वह अनुयोगद्वार सूत्र है । अनुयोग के चार द्वार हैं । वे इस प्रकार से हैं—[१] उपक्रम (२) निक्षेप, (३) अनुगम और (४) नय । व्याख्येय वस्तु के नाम का कथन करना अर्थात् व्याचिख्यासित-व्याख्या से युक्त करने की इच्छा के विषयभूत बने हुए शास्त्र को उस २ रूपसे प्रतिपादन करने की शैली से न्यासदेश में लाना—निक्षेप की योग्यतावाला उसे बनाना इसका नाम उपक्रम है । उपक्रान्त-उपक्रम के अन्तर्गत भेदों से विचारित-वस्तु का ही तो निक्षेप होता है । अनुपक्रान्त का नहीं । षड्विध आवश्यक आदि शास्त्र का कि जो उपक्रमित एवं व्याचिख्यासित है, नाम स्थापना आदि के भेद से निरूपण करना इसका नाम निक्षेप है । नामादि के भेद से निरूपित शास्त्र का अनुकूल ज्ञान होना और अनुकूल उसके अर्थ का कथन करना इसका नाम अनुगम है । अनेक-धर्मात्मक वस्तु को एकांश के

आ व्याख्यानस्य अनुयोगना द्वारेणुं प्रतिपादन करनार जे सूत्र—आगम—छे, तेनुं नाम अनुयोगद्वार सूत्र छे. अनुयोगना जे चार द्वार छे, ते नीचे प्रमाणे छे. (१) उपक्रम, (२) निक्षेप, (३) अनुगम अने (४) नय. व्याख्येय वस्तुना नामनुं कथन करवुं ओटले के व्याचिख्यासित व्याख्याथी युक्त करवानी छान्छाना विषयस्य भनेल शास्त्रने ते ते इपे प्रतिपादन करवानी शैली वडे न्यासदेशमां लाववुं. तेने निक्षेपनी योग्यतावाणुं अनाववुं तेनुं नाम उपक्रम छे. उपक्रान्त उपक्रमना अन्तर्गत लेहोनी अपेक्षाये विचारायेली वस्तुना जे निक्षेप थाय छे—अनुपक्रान्तना थतो नथी. जे उपक्रमित अने व्याचिख्यासित छे ओवा छे प्रकारना आवश्यक आदि शास्त्रनुं नाम स्थापना आदि लेहोथी निरूपण करवुं. तेनुं नाम निक्षेप छे नामादिना लेहोथी निरूपित शास्त्रनुं अनुकूल ज्ञान होवुं अने तेना अर्थनुं अनुकूल कथन करवुं

एकांशः।वलम्बनेन प्रतीतिपथं प्रापयतीति नयः, नयनम्=अनन्तधर्मात्मकस्य वातु-
नो नियतैकधर्मात्मकतावलम्बनेन प्रतीतौ प्रापणं नयः। अनन्तधर्मात्मकस्य
वस्तुन एकांशपरिच्छेदो नय इति ४।

अत्र नगरदृष्टान्तमाह—

यथा द्वाररहितं नगरं नगरमेव न भवति। यद्येकस्यामेव प्राच्यां दिशि
द्वारं भवेत्, तर्हि तत्र गजरथतुरगपदातीनां नगरवासिनां तदितरेषा-
मागन्तुकानां जनानां च संघर्षे निर्गमः प्रवेशो वा दुष्करोऽनर्थकरश्च भवति।

અવલમ્બન સે જો પ્રતીતિ કરાતા હૈ, ઇસકા નામ નય હૈ। નગર કે દૃષ્ટાન્ત
સે ઇન ચારો દ્વારોં કા સ્પષ્ટીકરણ ઇસ પ્રકાર સે હૈ—જિસ નગર કો ડાર
નહીં હોતા હૈ વહ વાસ્તવ મેં નગર હી નહીં માના જાતા હૈ। જિસ નગર મેં
કેવલ પૂર્વદિશા મેં હી દ્વાર હો તો વહાં કે રહનેવાલે ગજ, તુરગ આદિ
જાનવરાં કા મનુષ્યો કા, તથા બાહર સે આયે હુએ પ્રાણિયોં કા આને જાને
મેં સંઘર્ષ હોને પર પ્રવેશ ઔર નિર્ગમ દુષ્કર બન જાતા હૈ, તથા વહ આના જાના
અનર્થોત્પાદક બી હોતા હૈં। ઇસી પ્રકાર સે ઇસ નગર મેં પ્રવેશ કરને
કે લિયે કેવલ પૂર્વ ઔર પશ્ચિમ દિશા મેં એક ૨ દ્વાર હો તો એસી સ્થિતિ મેં
યદ્યપિ પૂર્વ પશ્ચિમ દિગ્વિભાગવર્તી પ્રાણિયોં કો આને જાને મેં સરલતા ભલે
હી રહે, પરન્તુ જો ઔર દિશાઓં મેં વહાં રહતે હૈં, ઉન્હે તથા બાહર સે આને-
વાલે જો પ્રાણી હૈં ઉન્હે ઔર ગજ, રથ તુરગ, આદિ જો જાનવર હૈં—ઉન્હે સંઘર્ષ

તેનું નામ અનુગમ છે અનેક ધર્માત્મક અર્થાત્ અનેક ધર્મના સ્વભાવવાળી વસ્તુની
જે એકાંશના અવલંબનથી પ્રતીતિ કરાવે છે તેનું નામ નય છે.

નગરના દૃષ્ટાન્ત દ્વારા આ ચાર દ્વારોનું હવે સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—

જે નગરને દરવાજો જ ન હોય તેને વાસ્તવિક રીતે તો નગર જ કહી શકાય
નહીં. કોઈ નગરને માત્ર પૂર્વાદિ કોઈ એક જ દિશામાં એક જ દરવાજો હોય, તે
નગરમાં દાખલ થવાનું કે તે નગરમાંથી બહાર જવાનું કાર્ય મુશ્કેલ બની જાય છે,
કારણ કે હાથી, ઘોડા આદિ પ્રાણીઓ તથા મનુષ્યોની અવરજવરમાં સંઘર્ષ થવાને
કારણે તે નગરમાં પ્રવેશ કરવાનું કે તે નગરમાંથી બહાર નીકળવાનું કાર્ય દુષ્કર
બની જાય છે, તથા તે અવર-જવર ક્યારેક અનર્થોત્પાદક પણ બની જતી હોય છે.
કોઈ નગરમાં પૂર્વ પશ્ચિમ બે દિશામાં બે દ્વારો હોય તો તે તે દિશામાં રહેલા પ્રાણીઓ
અને મનુષ્યોને તો અવર જવર કરવાની અનુકૂળતા રહે છે, પરન્તુ અન્ય દિશાઓમાં જે
પ્રાણીઓ અને મનુષ્યો રહેતા હોય છે, તેમને તો અવર જવરમાં મુશ્કેલી જ પડે છે.
અન્ય દિશાઓમાંથી નગરમાં પ્રવેશ કરતાં હાથી, રથ ઘોડા આદિ પ્રાણીઓ અને
નગરની બહાર જતા પ્રાણીઓ વચ્ચે સંઘર્ષ થયા જ કરે છે, તે કારણે તે

प्राच्यां पश्चिमायां च दिशि द्वारसद्भावे तत्तद्विभागवर्तिनां निर्गमप्रवेशसौ-
कर्येऽपि तदितरदिग्भागवर्तिनां नगरान्तर्निवासिनां तदितरेषां बाह्य देशादागतानां
च जनानां गजरथतुरगादीनां च संघर्षे निर्गमः प्रवेशो वा दुष्करोऽनर्थकरश्च
भवति, तथैव त्रिषु दिग्भागेषु द्वारत्रयसद्भावेऽपि जनानां निर्गमः प्रवेशो वा
दुष्करोऽनर्थकरश्च भवति, यत्र तु नगरे चतुसृषु दिशासु चत्वारि मूलद्वाराणि, तथा
तदनुगतानेकमार्गसंलग्नस्थयाद्वाराणि विद्यन्ते, तत्र निर्गमः प्रवेशो वा सुकरो
भवति। तथैवावश्यकरूपं नगरमपि उपक्रमादिद्वाररहितं नाधिगन्तुं शक्यते। न
च केवलमुपक्रमद्वारेण, नापि वा द्वाभ्यामुपक्रमनिक्षेपाभ्यां, न चापि त्रिभिरुप-

होने पर आना जाना बड़ा मुश्किल हो जाता है। परस्पर में धक्कामधक्का होने
से अनेक प्रकार के अनिष्ट भी हो जाते हैं। इसी तरह से यदि उसमें प्रवेश
करने के लिये तीन द्वार हों, तो कुछ पहिले की अपेक्षा प्रवेश निर्गम में
सरलता होने पर भी सर्वथा सरलता नहीं आती है। परन्तु जब उसमें आने
जाने के लिये चारो दिशाओं में चार दरवाजे हों, तथा और भी अनेक मार्ग
संलग्न स्थयाद्वार हों, तो फिर आने जाने में किसी प्रकार का संघर्ष न होने
से कोई भी प्राणी को रुकावट नहीं होती है और न किसी प्रकार के अनर्थ
होने की संभावना ही रहती है। ठीक इसी प्रकार से आवश्यकरूप नगर भी
यदि उपक्रम आदि चार द्वारों से विहीन हो तो वह ज्ञान का विषयभूत नहीं
बन सकता अर्थात् उसका वास्तविक रहस्यज्ञात नहीं हो सकता, अतः उसे
वास्तविकरूप में जानने के लिये इन चार ही उपक्रम आदि द्वारों की परम

नगरमां प्रवेश करवानुं अने ते नगरमांथी निर्गमन करवानुं कार्य
मुश्किल न थई पडे छे. त्यां अेकणीन वच्चे धळ्ळा धळ्ळी थवाथी अनेक प्रकारना
अनिष्टो पणु उद्भववे छे. अेज प्रमाणे जे ते नगरने त्रणु दिशाओमां त्रणु दरवाज
राख्या डोय तो पडेला अने णीन प्रकारना नगर करतां प्रवेश अने निर्गममां
अधिक सरणता तो रहे छे, पणु संपूर्ण सरणता तो रहेती नथी. पणु जे नगरमां
आववा-जवा भाटे आरे दिशाओमां आर दरवाज राख्या डोय, तथा णीन मार्गेने
जेडतां णीन पणु उपद्वारे राख्यां डोय, तो त्यां अवरजवरमां डोय पणु प्रकारने
संघर्ष थतो नथी-डोय पणु जे प्राणीओ वच्चे धळ्ळाधळ्ळी आतती नथी अने
ते कारणे त्यां डोय पणु प्रकारना अनर्थनी शक्यता रहेती नथी. त्यां प्राणीओ
अने मनुष्यो सरणताथी प्रवेश पणु करी शके छे अने निर्गम पणु करी शके
छे. अेज प्रमाणे आवश्यकइय नगर पणु जे उपक्रम आदि आर द्वारेथी रहित
डोय, तो ज्ञानना विषयइय णनी शकतुं नथी-अेटवे के तेनुं वास्तविक रहस्य
जणु शकतुं नथी. तेथी तेने यथार्थइये जणुवा भाटे उपक्रम आदि आ आरे

ક્રમનિક્ષેપાનુગમૈર્દ્વારૈસ્તદર્થમધિગન્તું શક્યતે । તદર્થાનધિગમે ચ સતિ ક્લેશો
ઽનર્થશ્ચ જાયતે । ભેદપ્રભેદસહિતોપક્રમાદિદ્વારચતુષ્ટયસન્ધાવે તુ સ્વલ્પેનૈવ કાલેન
તત્સુગમં શાશ્વતસુખપ્રદં ચ ભવતિ । તસ્માદ્ દ્વારચતુષ્ટયમાશ્રિત્ય ષડ્વિધાવશ્યક-
પ્રતિપાદનાર્થમિદં સૂત્રં પ્રસ્તુતમ્ ।

इह शास्त्रे प्रवृत्त्यर्थमादावानुबन्धचतुष्टयं विज्ञेयम् । तच्च विषयः, प्रयोजनं
संबन्धः, अधिकारी चेति । तत्र विषयोऽभिधेयः—स चेह उपक्रमादीन्यनुयोग-

આવશ્યકતા હૈ । કેવલ એક ઉપક્રમદ્વાર સે યા ઉપક્રમ નિક્ષેપરૂપ દો દ્વારોં સે
અથવા ઉપક્રમ નિક્ષેપ ઓર અનુગમ ઇન ત્રીન દ્વારોં સે ઉસકા અર્થ નહીં જાના
જા સકતા । અર્થાધિગમ—પદાર્થ કે જ્ઞાન હુએ વિના ક્લેશ એવં અનર્થ હોતા
હૈ । જબ ભેદ પ્રભેદ સહિત ઇન ઉપક્રમ આદિ ચાર દ્વારોં કા ઉસમેં સન્ધાવ
હોતા હૈ, તો ઉનકી સહાયતા સે સ્વલ્પ કાલ મેં હી વાસ્તવિકરૂપ મેં શાસ્ત્ર કે
અર્થ કા વોધ સુગમરીતિ સે હો જાતા હૈ ઓર ઇસ સે વહ શાસ્ત્ર શાશ્વત સુખ
પ્રદ ભી હો જાતા હૈ । ઇસલિયે સૂત્રકારને ઇન પૂર્વોક્ત ચાર દ્વારોં કો
લેકર ષડ્ વિધ આવશ્યકોં કો પ્રતિપાદન કરાને કે લિયે ઇસ સૂત્ર કો
પ્રસ્તુત કિયા હૈ ।

इस शास्त्र में प्रवृत्ति होने के निमित्त चार बातों की आवश्यकता है ।
उनका नाम अनुबंध चतुष्टय है । और वे “विषय, प्रयोजन, संबन्ध अधिकारी”
ये हैं । जो इस शास्त्र का अभिधेय है, वह विषय है । वह विषय उपक्रमादि चार

દ્વારોની પરમ આવશ્યકતા રહે છે. કેવળ એક ઉપક્રમ દ્વારથી જ, અથવા ઉપ-
ક્રમ અને નિક્ષેપરૂપ બે દ્વારોથી અથવા ઉપશમ, નિક્ષેપ અને અનુગમરૂપ ત્રણ
દ્વારોથી તેનો અર્થ જાણી શકતો નથી અર્થાધિગમ (અર્થનું જ્ઞાન) થયા વિના
તો ક્લેશ અને અનર્થને પાત્ર થવું પડે છે. જ્યારે ભેદ પ્રભેદ સહિત આ ઉપ-
ક્રમ આદિ ચારે દ્વારોનો તેમાં સદ્સલાવ હોય છે, ત્યારે તેની સહાયતાથી ઘણા
થોડા સમયમાં જ અને સરળતાથી વાસ્તવિકરૂપે શાસ્ત્રના અર્થનો બોધ થઈ જાય
છે, અને તેને લીધે તે શાસ્ત્ર શાશ્વત સુખપ્રદ પણ થઈ જાય છે. તેથી સૂત્રકારે
પૂર્વોક્ત ઉપક્રમ આદિ ચાર દ્વારોને એનુલક્ષીને છ પ્રકારના આવશ્યકોનું પ્રતિ-
પાદન કરવાને માટે આ સૂત્રને પ્રસ્તુત કર્યું છે.

આ શાસ્ત્રમાં પ્રવૃત્તિ થવાને નિમિત્તે ચાર બાબતોની આવશ્યકતા રહે છે.
જે ચાર બાબતોની આવશ્યકતા રહે છે તે ચાર બાબતોને અનુબંધ ચતુષ્ટય કહે
છે. તે ચાર બાબતો નીચે પ્રમાણે છે—વિષય, પ્રયોજન, સંબંધ અને અધિકારી.
આ શાસ્ત્રનો જે અભિધેય છે તેનું નામ જ વિષય છે. તે વિષય ઉપક્રમ

દ્વારાણિ । પ્રયોજનં—ફલમ્, તત્ત્વ દ્વિવિધમ્—અન્તરફલં પરમ્પરાફલં ચ । તત્રાદ્યં શાસ્ત્રકર્તુર્ભવ્યાનુગ્રહરૂપમ્ । શ્રોતુશ્ચ શાસ્ત્રાર્થબોધઃ । ઉભયોરપિ પરમ્પરા પ્રયોજનમ્—પરમપદપ્રાપ્તિઃ । શાસ્ત્રસ્ય વિષયસ્ય ચ સમ્બન્ધઃ—પ્રતિબોધ્ય પ્રતિબોધકભાવઃ । પરમપદપ્રાપ્તિઃ । અધિકારી તુ જિનાજ્ઞારાધક इति ।

અથ શિષ્ટાચારપરિપાલનાર્થં શાસ્ત્રનિર્વિઘ્નપરિસમાપ્ત્યર્થં શાસ્ત્રસ્ય મંગલસ્વરૂપત્વેऽપિ શિષ્યસ્ય શાસ્ત્રવિષયીભૂતાર્થજ્ઞાનપ્રાપ્તિદર્શનશ્વાસાર્થં ચ મંગલરૂપં પ્રથમં સૂત્રમાહ—

મૂલમ્—નાણં પંચવિહં પળ્લવત્તં, તં જહા—આભિનિબોહિયનાણં સુયનાણં, ઓહિનાણં, મળપજ્જવનાણં, કેવલનાણં ॥ સૂ૦ ૧ ॥

અનુયોગ દ્વારરૂપ છે । પ્રયોજન નામ ફલ કા છે । વહ દો પ્રકાર કા હોતા હૈ—
[૧] અનન્તર—સાક્ષાત્—ફલ ઓર દૂસરા પરમ્પરા ફલ । “પઢને વાલે, સુનને વાલે મન્યજીવીં કા ઇસ સે અનુગ્રહ હો ઇસી ભાવના જો શાસ્ત્રકાર કે હૃદય મેં હોતી હૈ વહ ગ્રન્થકર્તા કી અપેક્ષા તથા ઇસે અધ્યયન કરનેવાલે, સુનનેવાલે પ્રાણિયોં કો જો ઇસ કે દ્વારોં બોધ પ્રાપ્ત હોતા હૈ વહ ઊંકી અપેક્ષા ઇસકા સાક્ષાત્ પ્રયોજન હૈ । ઇવં ગ્રન્થ—શાસ્ત્ર—કર્તા—ઓર અધ્યેતા—શ્રોતા કો જો પરમપદ (મોક્ષ) કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ વહ ઇસકા પરમ્પરા પ્રયોજન હૈ । શાસ્ત્ર કા ઓર વિષય કા પ્રતિબોધ્ય પ્રતિબોધકભાવ સંબન્ધ હૈ વિષય પ્રતિબોધ્ય શાસ્ત્ર ઊસકા પ્રતિબોધક હૈ જિનાજ્ઞા કા આરાધક જીવ અધિકારી હૈ ।—

આદિ ચાર અનુયોગ દ્વારરૂપ જ છે. પ્રયોજન એટલે કળ. તે પ્રયોજન બે પ્રકારનું હોય છે. અનન્તર સાક્ષાત્ અને (૨) પરમ્પરા કળ.

વાંચનારા અને શ્રવણ કરનારા ભવ્ય જીવોનું તેના દ્વારા કલ્યાણ થાય, એવી જે ભાવના તે શાસ્ત્રકારના હૃદયમાં હોય છે, તે ગ્રન્થકર્તાની અપેક્ષાએ તેનું સાક્ષાત્ પ્રયોજન છે. તથા તેનું અધ્યયન કરવાથી કે શ્રવણ કરવાથી અધ્યયન કરનારને કે શ્રોતાને જે બોધ થાય છે, તે તેમની અપેક્ષાએ તેનું સાક્ષાત્ પ્રયોજન ગણાય છે. ગ્રન્થ (શાસ્ત્ર) કર્તાને, ગ્રન્થનું અધ્યયન કરનારને અને તેનું શ્રવણ કરનારને જે પરમપદની પ્રાપ્તિ થાય છે, એજ તેનું પરમ્પરા પ્રયોજન ગણાય છે. શાસ્ત્રનો અને વિષયનો પ્રતિબોધ્ય-પ્રતિબોધકભાવ રૂપ સંબંધ હોય છે. વિષય પ્રતિબોધ્ય અને શાસ્ત્ર તેનું પ્રતિબોધક હોય છે. જિનાજ્ઞાનું આરાધન કરનાર જીવ તેનો અધિકારી ગણાય છે.

છાયા—જ્ઞાનં પञ्चविधं प्रज्ञप्तम्, तद् यथा—आभिनिबोधिकज्ञानं, श्रुत-
ज्ञानम्, अवधिज्ञानं, मनःपर्यवज्ञानं, केवलज्ञानम् ॥૧॥

ટીકા—‘નાળં’ इत्यादि—

જ્ઞાનમ્—જ્ઞાતિર્જ્ઞાનમિતિ ભાવસાધનઃ, સ્વવિદિત્યર્થઃ । જ્ઞાયતેવાઽનેના-
સ્માદ્દેતિ જ્ઞાનં, તદાવરણસ્ય ક્ષયઃ ક્ષયોપશમો વા । જ્ઞાયતે વાઽસ્મિન્નિતિ

અવ સૂત્રકાર શિષ્ટ પુરુષોં કે આચાર કો પાલન કરને કે લિયે શાસ્ત્ર કી
નિર્વિઘ્ન પરિસમાપ્તિ કે લિયે ઔર-શિષ્યોં કો શાસ્ત્ર વિષયીભૂત અર્થજ્ઞાન કી
પ્રાપ્તિ કા દૃઢ વિશ્વાસ જમાને કે લિયે મંગલરૂપ હોને પર મી ઇસ શાસ્ત્ર
કી આદિ મેં સર્વ પ્રથમ મંગલ સૂત્ર કા પાઠ કરતે હૈં ।

“નાળં પંચવિહં પળ્લત્તં” इत्यादि । ॥ सू० १ ॥

શબ્દાર્થ—(ળાળં) જ્ઞાન (પંચવિહં) પાંચ પ્રકાર કા—(પળ્લત્તં) કહા ગયા
હૈં । યહાં જ્ઞાન શબ્દ ભાવસાધન-કરણસાધન ઔર કર્તૃસાધન હૈ “જ્ઞાતિઃ-જ્ઞાનમ્
જાનના ઇસકા નામ જ્ઞાન હૈ યહ ભાવસાધન મેં જ્ઞાન કી વ્યુત્પત્તિ હૈ—“જ્ઞાયતે
અનેન ઇતિ જ્ઞાનમ્” યહ કરણસાધન મેં વ્યુત્પત્તિ હૈ—આત્મા જિસકે દ્વારા
પદાર્થોં કો જાનતા હૈ વહ જ્ઞાન હૈ—ઇસ કરણસાધન સે જ્ઞાનાવરણ કર્મ કા
ક્ષય અથવા ક્ષયોપશમ લક્ષિત હોતા હૈ । ક્યોં કિ ઇસ કે હોને પર હી આત્મા
મેં જ્ઞાન કા પ્રાદુર્ભાવ (ઉત્પત્તિ) યા જ્ઞાન મેં સર્વથા નિર્મલતા આતી હૈ । અતઃજ્ઞાનાવરણ
કા ક્ષય ઔર ક્ષયોપશમ જ્ઞાનરૂપ હોને કે કારણ અમેદ સંબન્ધ સે જ્ઞાનરૂપ હી

શાસ્ત્રકારે શિષ્ટ પુરુષોના આચારનું પાલન કરવા માટે, શાસ્ત્રની નિર્વિઘ્ને
પરિસમાપ્તિ કરવા નિમિત્તે અને શિષ્યોમાં શાસ્ત્રવિષયીભૂત અર્થજ્ઞાનની પ્રાપ્તિને
દૃઢ વિશ્વાસ જમાવવાને નિમિત્તે બે કે શાસ્ત્ર પોતે જ મંગળરૂપ હોવા છતાં
પણુ-આ શાસ્ત્રનો પ્રારંભ કરતી વખતે સૌથી પહેલાં મંગળ સૂત્રનો પાઠ કર્યો છે.

“નાળં પંચવિહં પળ્લત્તં” इत्यादि

॥ सू० १ ॥

શબ્દાર્થ—(ળાળં) જ્ઞાન (પંચવિહં) પ્રાચ પ્રકારનું (પળ્લત્તં) કહ્યું છે. અહીં
‘જ્ઞાન’ શબ્દ ભાવસાધન, કરણસાધન અને કર્તૃસાધનરૂપ છે. ભાવસાધનમાં જ્ઞાનની
વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે થાય છે “જ્ઞાતિઃ-જ્ઞાનમ્” બાણુવું તેનું નામ જ્ઞાન છે.
કરણસાધનમાં જ્ઞાનની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે છે “જ્ઞાયતે અનેન ઇતિ જ્ઞાનમ્”
આત્મા જેના દ્વારા પદાર્થોને બાણુ છે તેનું નામ જ્ઞાન છે. આ કરણસાધન દ્વારા
જ્ઞાનાવરણકર્મનો ક્ષય અથવા ક્ષયોપશમ લક્ષિત થાય છે, કારણ કે જ્ઞાનાવરણીય
કર્મનો ક્ષય અથવા ક્ષયોપશમ થવાથી જ આત્મામાં જ્ઞાનનો પ્રાદુર્ભાવ થાય છે અથવા
જ્ઞાનમાં સર્વથા નિર્મળતા પ્રકટ થાય છે. તેથી જ્ઞાનાવરણનો ક્ષય અને ક્ષયોપશમ
જ્ઞાન રૂપ જ હોવાને કારણે અલેદ સંબંધની અપેક્ષાએ જ્ઞાનરૂપ જ નિવડે છે.

જ્ઞાનમાત્મા—તદાવરણક્ષયક્ષયોપશમપરિણામયુક્તાઃ । જાનાતીતિ વા જ્ઞાનમ્ । તત્
પञ्चविधं=पञ्चप्रकारं प्रज्ञप्तं—प्ररूपितम् अर्थतस्तीर्थङ्करैः सूत्रतश्च गणधरैः । अत्र
गणधरेण स्वबुद्ध्या परिकल्पितं किञ्चिदपि नोच्यते । पण्णत्तं’ इत्यस्य ‘प्राज्ञा-
प्तम्’ इतिच्छायापक्षे—प्राज्ञात्—सर्वज्ञात् आप्तं—प्राप्तं गणधरैरित्यर्थः, यद्वा—प्रज्ञया
भव्यजन्तुभिराप्तं—प्राप्तं—प्रज्ञाप्तं तदेव प्राज्ञाप्तम् । नहि ऽज्ञादिकलैरिदमप्राप्तं शक्यते

होता है । इसलिये करणसाधन में पदार्थों के जानने में अत्यन्त साधक जो
ज्ञान है वह गृहीत हुआ है । जो कि ज्ञानावरण के क्षय और क्षयोपशमस्वरूप
है इसी तरह से पदार्थ जिस से जाना जाय वह ज्ञान है इस प्रकार की व्यु-
त्पत्ति करने पर भी ज्ञानावरण का क्षय और क्षयोपशम—ज्ञानरूप ही होता है
क्यों कि पदार्थ ज्ञान से जाना जाता है । “ज्ञायते अस्मिन्निति ज्ञानमात्मा”
पदार्थ जिस से जाना जावे—उसका नाम ज्ञान है इस प्रकार की व्युत्पत्ति में
आत्मा ज्ञान रूप प्रतीत होता है । यहां परिणाम और परिणामवाले का अभेद होनेके
कारण आत्मा को ज्ञानरूप मान लिया गया है । क्योंकि ज्ञानावरणकर्म के क्षय
अथवा क्षयापशम से विशिष्ट आत्मा का परिणाम ज्ञान है और आत्मा परिणाम
वाला है । “जानाति इति ज्ञानम्” इस व्युत्पत्ति में भी यही अर्थलभ्य है ।
ज्ञान में पांच प्रकारता अर्थ की अपेक्षा तीर्थंकरोंने और सूत्र की अपेक्षा
गणधोंने प्ररूपित की है । इस विषय में गणधोंने अपनी तरफ से
कुछ भी कल्पित करके नहीं कहा है “यह बात पण्णत्त” इस शब्द

તેથી કરણસાધનમાં પદાર્થોને જાણવામાં અત્યન્ત સાધક જે જ્ઞાન છે તેને જ અહીં
અહુષ્ કરાયું છે. એવું જ્ઞાન જ્ઞાનાવરણના ક્ષય અને ક્ષયોપશમ સ્વરૂપ જ હોય
છે. એજ પ્રમાણે “પદાર્થ જેના વડે જાણી શકાય તે જ્ઞાન છે,” આ પ્રકારની
વ્યુત્પત્તિ કરવામાં આવે તો પણ જ્ઞાનાવરણનો ક્ષય અને ક્ષયોપશમ જ્ઞાનરૂપ જ
થઈ પડે છે, કારણ કે પદાર્થ જ્ઞાનદ્વારા જ જાણી શકાય છે. “જ્ઞાયતે અસ્મિન્નિતિ
જ્ઞાનમાત્મા” “પદાર્થ જેમાં જાણી શકાય તેનું નામ જ્ઞાન છે,” આ પ્રકારની
વ્યુત્પત્તિમાં આત્મા જ્ઞાનરૂપ પ્રતિપાદિત થાય છે. અહીં પરિણામ અને પરિણામવાળામાં
અભેદ હોવાને કારણે આત્માને જ્ઞાનરૂપ માની લેવામાં આવ્યો છે, કારણ કે જ્ઞાનાવરણ
કર્મના ક્ષય અથવા ક્ષયોપશમવાળા આત્માનું પરિણામ જ્ઞાન છે અને આત્મા તે
પ્રકારના પરિણામવાળો છે. “જાનાતિ ઇતિ જ્ઞાનમ્” આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર પણ
એજ અર્થ પ્રાપ્ત થાય છે. જ્ઞાનમાં અર્થની અપેક્ષાએ પાંચ પ્રકારતા તીર્થંકરોએ
પ્રરૂપિત કરી છે અને સૂત્રની અપેક્ષાએ પાંચ પ્રકારતા ગણધરોએ પ્રરૂપિત કરી
છે. આ બાબતમાં ગણધરોએ પોતાના તરફથી કલ્પિત કરીને કંઈ પણ મિશ્રિત
કર્યું નથી, એજ વાત સૂત્રકારે “પાણ્ણત્ત” પદ દ્વારા પ્રકટ કરી છે. અથવા

પઞ્ચવિધત્વં દર્શયતિ—‘તં જહા’ इत्यादिना ‘तं जहा’ तद्यथा—तज्ज्ञान यथा पञ्चविधं भवति, तथा प्रोच्यते । तत्र (१) प्रथमं ज्ञानम्—‘आभिनिबोधिय-नाणं’ आभिनिबोधिकज्ञानम्. ‘अभि’ इति अभिमुखः—वस्तुयोग्यदेशवस्थाना-पेक्षी, ‘नि’ इति नियतः—इन्द्रियमनःसमाश्रित्य स्व स्व विषयापेक्षीबोधः—अभिनिबोधः, स एव आभिनिबोधिकम् तच्च तद् ज्ञानं च आभिनिबोधिक-ज्ञानम् । अत्र ‘ज्ञान’ शब्दः सामान्यज्ञान-वाचकः । अभिनिबोधशब्दः इन्द्रिय नो

સે સૂત્રકારને પ્રકટ કરી છે । અથવા, “પણત્ત” इस पद की संस्कृत छाया “प्राज्ञाप्त” ऐसी भी होती है—इस का अर्थ यह है कि ज्ञान में पंच प्रकारता गणधरो ने प्राज्ञ तीर्थ कर सर्वज्ञ भगवान् से प्राप्त की है । अथवा इसी छाया के पक्ष में ऐसा अर्थ भी होता है कि ज्ञान में यह पंच प्रकारता भव्य प्राणियों ने अपनी बुद्धि से ही पाई है । विना बुद्धि से तो यह प्राप्त की नहीं जा सकती है । इस तरह जो प्रज्ञाप्त है वही प्राज्ञाप्त हैं । (तं जहा) वह ज्ञान में पंच प्रकारता इस तरह से है ।

(આભિનિવોધિયનાણં) (૧) આભિનિવોધિક જ્ઞાન-યહ જ્ઞાન વસ્તુ કો યોગ્ય દેશ મેં હોને કી અપેક્ષા રાખતા હૈ તથા પાંચ ઇન્દ્રિય ઔર મન કી સહાયતા સે હોતા હૈ । યહ વાત “અભિ” ઔર “નિ” શબ્દ સે પ્રવટ્ત હોતી હૈ । ઇસ તરહ યોગ્ય દેશ મેં સ્થિત વસ્તુ કો ઇન્દ્રિય ઔર મન કી સહાયતા સે જાનને વાલે જ્ઞાન કા નામ અભિનિવોધ જ્ઞાન હૈ । યહ અભિનિવોધ હી આભિનિવોધિક

“પણત્ત” આ પદની સંસ્કૃત છાયા “પ્રાજ્ઞાપ્ત” છે. આ પ્રાજ્ઞાપ્તની અપેક્ષાએ બે વિચાર કરવામાં આવે તો તેનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે—જ્ઞાનમાં પંચવિધતાની પ્રાપ્તિ ગણધરોએ પ્રાજ્ઞ તીર્થ કર સર્વજ્ઞ ભગવાન પાસેથી કરી છે.

અથવા તેનો અર્થ એવો પણ થાય છે કે—જ્ઞાનમાં આ પાંચ પ્રકારતા ભવ્ય જીવોએ પોતાની બુદ્ધિથી જ પ્રાપ્ત કરેલ છે. બુદ્ધિ વગર તો તેની પ્રાપ્તિ થઈ શકતી જ નથી. આ રીતે જે પ્રજ્ઞાપ્ત છે, એજ પ્રાજ્ઞાપ્ત છે. (તં જહા) જ્ઞાનના તે પાંચ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(આભિનિવોધિયનાણં) (૧) આભિનિવોધિક જ્ઞાન—

આ જ્ઞાન વસ્તુ યોગ્ય દેશમાં હોય એવી અપેક્ષા રાખે છે, તથા પાંચ ઇન્દ્રિયો અને મનની સહાયતાથી થાય છે. એજ વાત “અભિ” અને “નિ” ઉપસર્ગો દ્વારા પ્રકટ કરી છે. આ રીતે આભિનિવોધિક જ્ઞાનની વ્યાખ્યા આ પ્રમાણે થાય છે—“યોગ્ય દેશમાં સ્થિત (રહેલી) વસ્તુને ઇન્દ્રિયો અને મનની સહાયતાથી બહુનારા જ્ઞાનનું” નામ આભિનિવોધ છે. તે આભિનિવોધ જ આભિનિવોધિક

इन्द्रियजन्यविशिष्टज्ञानवाचकः । अतः सामान्यविशेषयोर्ज्ञानयोः सामानाधिकरण्यम् । इदं मतिज्ञानमप्युच्यते ॥१॥

(૨) શ્રુતજ્ઞાનમ્—શ્રુતં—શ્રુતિઃ—શ્રવણં જ્ઞાનવિશેષઃ । તત્ત્વ કીદૃશમ્ ? ઉચ્યતે, શબ્દાય શ્રવણેન ભાષણાદિનાં ચા ત્વજ્ઞાન્મુત્પદ્યતે તદેવ શ્રુતમ્ । અત્ર શ્રુતશબ્દેન શ્રુતજ્ઞાનં ગૃહ્યતે—જ્ઞાનં પ્રમેદાકરણાન્તઃપાતિત્વાત્ । ન તુ શ્રૂયતે’ ઇતિ વ્યુત્પત્ત્યા શબ્દાર્થકઃ શ્રુતશબ્દઃ । લઘ્વિરૂપે મતિજ્ઞાને સતિ પશ્ચાત્ શ્રુતજ્ઞાન્મુત્પદ્યતે, ન તુ મતિજ્ઞાનાભાવે । અતો મતિજ્ઞાનં કારણં શ્રુતજ્ઞાનસ્ય ।

જ્ઞાનં હૈ । યહાં જ્ઞાન શબ્દ સામાન્યજ્ઞાન કા વાચક ઔર અભિનિબોધ શબ્દ ઇન્દ્રિય ઔર મન સે ઉત્પન્ન હોને વાલે વિશિષ્ટજ્ઞાન કા વાચક હૈ । અતઃ” ‘આભિનિબોધિકં ચ ત્વજ્ઞાનં ચ આભિનિબોધિકજ્ઞાનં’” ઇસ તર્હ સે ઇન દોનો સામાન્ય વિશેષ જ્ઞાનોં મેં સમાનાધિવચનતા હુઈ હૈ । ઇસ આભિનિબોધિકજ્ઞાન કા દૂસરા નામ મતિજ્ઞાન મી હૈ ।

શ્રુતજ્ઞાન—શબ્દ કે શ્રવણ સે અથવા ભાષણ આદિ સે જો જ્ઞાન ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ જ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાન હૈ । જ્ઞાન કે પ્રમેદોં કે પ્રકરણ કે આને કે કારણ યહાં શ્રુતશબ્દ સે જ્ઞાન કા ગ્રહણ હુઆ । શ્રુત સે શબ્દ કા નહીં । “શ્રૂયતે” ઇતિ શ્રુતં ઇસ પ્રકાર કી વ્યુત્પત્તિ સે શ્રુત શબ્દરૂપ અર્થ કા વાચક મી હાતા હૈ પરન્તુ વહ શબ્દાર્થક શ્રુત યહાં ગૃહીત નહીં હુઆ હૈ । કારણવહ શબ્દ પૌદ્ગલિક પર્યાય હોને સે અચેતન હૈ, ઔર જ્ઞાન આત્મા કા નિજસ્વરૂપ હોને સે ચેતન હૈ ।

જ્ઞાન છે.” અહીં જ્ઞાન પદ સામાન્ય જ્ઞાનનું વાચક છે અને અભિનિબોધ પદ ઇન્દ્રિયો અને મનની સહાયતાથી ઉત્પન્ન થનાર વિશિષ્ટ જ્ઞાનનું વાચક છે. તેથી “આભિનિબોધિકં ચ ત્વજ્ઞાનં ચ આભિનિબોધિકજ્ઞાનં” આ પ્રકારે તે બન્ને સામાન્ય વિશેષ જ્ઞાનોનાં સમાનાધિકરણતા થઈ છે. આ આભિનિબોધિક જ્ઞાનનું બીજું નામ મતિજ્ઞાન પણ છે.

(૨) શ્રુતજ્ઞાન—શબ્દના શ્રવણથી અથવા ભાષણ આદિ વડે જે જ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે તેને શ્રુતજ્ઞાન કહે છે. જ્ઞાનના પ્રભેદોના પ્રકરણમાં આવી જતું હોવાને લીધે અહીં શ્રુત શબ્દ વડે જ્ઞાનનું જ ગ્રહણ થયું છે—અહીં ‘શ્રુત’ પદ દ્વારા શબ્દ ગૃહીત થયેલ નથી. ‘શ્રૂયતે ઇતિ શ્રુતમ્’ આ પ્રકારની વ્યુત્પત્તિને આધારે શ્રુત પદ શબ્દરૂપ અર્થનું વાચક પણ સંભવી શકે છે, પરન્તુ તે શબ્દાર્થક શ્રુત અહીં ગ્રહણ કરવામાં આવ્યું નથી. કારણ કે તે શબ્દ પૌદ્ગલિક પર્યાયરૂપ હોવાથી અચેતન છે, પણ જ્ઞાન આત્માના નિજગુણરૂપ હોવાથી ચેતન છે.

શંકા—શબ્દ કે શ્રવણ અથવા ભાષણ આદિ સે જો જ્ઞાન હોતા હૈ વહ શ્રુતજ્ઞાન હૈ” એસા જો શ્રુત કા લક્ષણ કહા જા રહા હૈ વહ અતિવ્યાપ્તિ દોષ સે યુક્ત હોને કે કારણ ઠીક નહીં હૈ । ક્યોં કિ યહ લક્ષણ મતિજ્ઞાન મેં મી રહતા હૈ । વહ શ્રોત્રેન્દ્રિય ઔર મન સે મી હોતા હૈ ।—

ઉત્ત—એસા સમજના ઠીક નહીં હૈ—કારણ મતિજ્ઞાન પાંચોં ઇન્દ્રિયોં ઔર મન સે હી હોતા હૈ—। તબ યહ જ્ઞાન કેવલ મન સે હી હોતા હૈ—અન્ય ઇન્દ્રિયોં સે નહીં ।” શબ્દશ્રવણ અથવા ભાષણઆદિ સે જો જ્ઞાન હોતા હૈ વહ શ્રુતજ્ઞાન હૈ । એસા જો કહા ગયા હૈ ઉસકા કારણ યહ હૈ કિ શબ્દ શ્રવણ ઔર ભાષણ આદિ જન્ય જો શ્રોત્રેન્દ્રિય સે ઉસ વા જ્ઞાન હોતા હૈ વહ મતિજ્ઞાન હૈ—ઔર ઇસ મતિજ્ઞાનપૂર્વક ઉસ વિષય મેં જો શબ્દશ્રવણ આદિ કે સંબન્ધ સે વિશેષ ચિંતન ચાલૂ હોતા હૈ કિ જો કેવલ મન કા હી કાર્ય હૈ વહ શ્રુતજ્ઞાન હૈ । ઉદાહરણાર્થ—શબ્દ વિષયક શ્રોત્ર જન્યજ્ઞાન હોને પર ઉસકે સંબન્ધ સે મન મેં” યહ કિસ પ્રકાર કે શબ્દ કો બોલ રહા હૈ—ઉચ્ચસ્વર સે શબ્દ ઉચ્ચરિત હો રહા હૈ યા ધીમે સ્વર સે” ઇત્યાદ વિકલ્પોં કા હોના શ્રુતજ્ઞાન હૈ ।

શંકા—“શબ્દના શ્રવણ અથવા ભાષણ આદિથી જે જ્ઞાન થાય છે, તેને શ્રુતજ્ઞાન કહે છે,” આ પ્રકારનું જે શ્રુતનું લક્ષણ અહીં ગતાવવામાં આવ્યું છે તે અતિવ્યાપ્તિ દોષથી યુક્ત હોવાને કારણે ઉચિત નથી, કારણ કે તે લક્ષણનો સદ્ભાવ તો મતિજ્ઞાનમાં પણ હોય છે. તે શ્રોત્રેન્દ્રિય અને મનની સહાયતાથી થાય છે.

ઉત્તર—આ માન્યતા ઘરાળર નથી. કારણ કે—મતિજ્ઞાન પાંચે ઇન્દ્રિયો અને મનની સહાયતાથી જ ઉત્પન્ન થાય છે, પરંતુ શ્રુતજ્ઞાન તો માત્ર મનની સહાયતાથી જ ઉત્પન્ન છે—અન્ય ઇન્દ્રિયોની સહાયતાની તેને જરૂર રહેતી નથી. “શબ્દશ્રવણ અથવા ભાષણાદિથી જે જ્ઞાન થાય છે તેને શ્રુતજ્ઞાન કહે છે,” આ પ્રમાણે જે કહેવામાં આવ્યું છે તેનું કારણ એ છે કે શબ્દશ્રવણ અને ભાષણાદિ જન્ય જે શ્રોત્રેન્દ્રિય થી તેનું જ્ઞાન થાય છે તે મતિજ્ઞાનરૂપ હોય છે. અને તે મતિજ્ઞાનપૂર્વક તે વિષયને અનુલક્ષીને શબ્દશ્રવણ આદિના વિષયમાં વિશેષ ચિન્તન ચાલૂ થઈ જાય છે તે તો માત્ર મનનું જ કાર્ય હોવાથી તેને શ્રુતજ્ઞાન કહે છે ઉદાહરણ દ્વારા આ વાતનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—શબ્દવિષયક શ્રોત્રજન્ય જ્ઞાન થવાથી તેને વિષે મનમાં આ પ્રકારના વિકલ્પો ઉદ્ભવે છે—“આ કયા પ્રકારના શબ્દનું ઉચ્ચારણ થઈ રહ્યું છે જિંથે સ્વરે શબ્દનું ઉચ્ચારણ થઈ રહ્યું છે કે ધીમે સ્વરે શબ્દનું ઉચ્ચારણ થઈ રહ્યું છે” આ પ્રકારના વિકલ્પો જે જ્ઞાનમાં ઉદ્ભવે છે તે જ્ઞાનને શ્રુતજ્ઞાન કહે છે,

शंका-यद्यपि जिस प्रकार मतिज्ञान की उत्पत्ति में इन्द्रियाँ साक्षात् निमित्त होती हैं वैसी वे श्रुतज्ञान की उत्पत्ति में साक्षात् निमित्त नहीं होती हैं-परन्तु परम्परा से तो होती ही हैं। जैसे-स्पर्शन आदि इन्द्रियों से मतिज्ञान हो गया और फिर बाद में उनके विषय में श्रुतज्ञान-जो विशेष विचार-रूप है वह होता है। अतः इस अपेक्षा से तो मतिज्ञान और श्रुतज्ञान में कोई भेद प्रतीत नहीं होता सो ऐसा कथन भी ठीक नहीं है कारण कि यह औपचारिक कथन है। दूसरे मतिज्ञान विद्यमान वस्तु में ही प्रवृत्त होता है, और श्रुतज्ञान त्रैकालिक विषयों में प्रवृत्त होता है। तथा मतिज्ञान में शब्दोल्लेखन ही होता है और श्रुतज्ञान में नहीं होता है। अर्थात् जैसे श्रुतज्ञान की उत्पत्ति के समय संकेत स्मरण और श्रुतग्रन्थ का तात्पर्य अनुसरण अपेक्षित होता है, वैसे वह ईहा आदि मतिज्ञान की उत्पत्ति में अपेक्षित नहीं है। इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि लब्धिरूप मतिज्ञान के होने पर श्रुतज्ञान उत्पन्न होता है मतिज्ञान के अभाव में नहीं। इसलिये इस श्रुतज्ञान का वारण मतिज्ञान है।

शंका-जेम मतिज्ञाननी उत्पत्तिमां इन्द्रिये साक्षात् निमित्त भने छे जेम श्रुतज्ञाननी उत्पत्तिमां तेज्यो साक्षात् निमित्त भनती नथी. परन्तु परम्परानी अपेक्षाये तो तेज्यो श्रुतज्ञानमां पणु निमित्त इय भने न छे. जेम के स्पर्शेन्द्रिय आदिनी सहायतायो धारे के मतिज्ञाननी प्राप्ति थछ गछ छे, त्यारबाह तेमने विषे विशेष विचार करवाइय श्रुतज्ञान पणु उत्पन्न थछ जय छे. आ रीते विचार करवामां आवे तो मतिज्ञान अने श्रुतज्ञान वज्ये कोछ लेह न जणुतो नथी. समाधान-आ प्रकारनी मान्यता पणु भरी नथी. कारणके आ कथन तो मात्र औपचारिक कथन न छे वणी णीणुं कारण ये छे के मतिज्ञान तो मात्र विद्यमान वस्तुमां न प्रवृत्त थाय छे, परन्तु श्रुतज्ञान तो त्रैकालिक विषयोमां प्रवृत्त थाय छे. तथा मतिज्ञानमां शब्दोल्लेखन न थाय छे, ज्यारे श्रुतज्ञानमां तो स्मरण तर्कवितर्क आदि पणु थाय छे ओटवे के जेवी रीते श्रुतज्ञाननी उत्पत्तिने समये संकेत, स्मरण अने श्रुतार्थयतु अनुसरण अपेक्षित होय छे, जेवी रीते छडा आदिइय मतिज्ञानमां ते संकेत, स्मरण आदिनी अपेक्षा रहेती नथी. आ वात परथी जेन वात निश्चित थाय छे के लब्धिइय मतिज्ञानना सहसावमां न श्रुतज्ञान उत्पन्न थाय छे-मतिज्ञानने अभाव होय तो श्रुतज्ञान उत्पन्न थतुं नथी. तेथी मतिज्ञानने श्रुतज्ञानमां कारणभूत कछुं छे.

નનુ આભિનિવોધિકાઽપરપર્યાયમતિજ્ઞાનમેવ શ્રુતજ્ઞાનં સમ્પદ્યતે યથા મૃત્તિકૈવ ઘટઃ, તન્તુરેવ પટઃ. તર્હિ શ્રુતજ્ઞાનસ્ય પૃથગુપાદાનં ભગવતા કિમર્થકૃતમ્ ? ઉચ્યતે દૃષ્ટાન્તદ્વયમિદં વિષમમ્, યથા ઘટ પ્રાદુર્ભવિ-પિણ્ડાકારા મૃત્તિકા પ્રણ-શ્યતિ, પટોત્પત્તૌ સત્પાં તન્તુપુઙ્ગશ્ચ તથા શ્રુતજ્ઞાને સમુત્પન્ને મતિજ્ઞાનં ન પ્રણશ્યતિ ।

શંકા—જબ શ્રુતજ્ઞાન કા કારણ મતિજ્ઞાન હૈ કિં જિસકા દૂસરા નામ આભિનિવોધિકજ્ઞાન હૈ મી તબ જિસ પ્રકાર મિટ્ટીરૂપ કારણ ઘટકાર્યરૂપ સે પરિણમ જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર સે મતિજ્ઞાન મી શ્રુત જ્ઞાનરૂપ સે પરિણમ જાવે ગા—અથવા જિસ પ્રકાર મિટ્ટી હી ઘટ બન જાતી હૈ, ઔર તન્તુ હી પટ બન જાયા કરતે હૈં ઇતી તરહ સે મતિજ્ઞાન મી શ્રુતજ્ઞાન હો જાવેગા—તો ફિરં સૂત્ર કારને શ્રુતજ્ઞાન કા પૃથકરૂપ સે પાઠ સૂત્ર મેં ક્યોં રચ્ચા હૈ ?

ઉત્તર—યે દોનોં દૃષ્ટાન્ત હી વિષમ હૈં ક્યોં કિ—

ઇસ પ્રકાર કી માન્યતા મેં મતિજ્ઞાન કા વિનાશ પ્રસક્ત હોગા—હમ દેખતે હૈં કિ જબ ઘટ કા ઉત્પત્તિ હોતી હૈ, તબ પિણ્ડાકાર મૃત્તિકા કા વિનાશ હોતા હૈ ઔર પટ કી ઉત્પત્તિ મેં તન્તુપુંજ કા । પરન્તુ જબ શ્રુતજ્ઞાન હોતા હૈ તબ મતિજ્ઞાન કા અભાવ નહીં હોતા હૈ । ક્યોંકિ એક આત્મા મેં એક સાથ ચાર જ્ઞાન તક હોના સિદ્ધાન્તકારોં ને માના હૈ । યદિ શ્રુતજ્ઞાન કે સદ્ભાવ મેં મતિજ્ઞાન કા અભાવ સ્વીકાર કિંયા જાવે તો યહ સિદ્ધાન્ત વિરુદ્ધ કથન

શંકા—જે મતિજ્ઞાન અથવા આભિનિવોધિક જ્ઞાનને જ શ્રુતજ્ઞાનના કારણરૂપ માનવામાં આવે, તો જેમ માટીરૂપ કારણ ઘટકાર્યરૂપે પરિણમી જાય છે, એજ પ્રમાણે મતિજ્ઞાન પણ શ્રુતજ્ઞાનરૂપે પરિણમી જશે, અથવા જે પ્રકારે માટી જ ઘડારૂપે પરિણમિત થઈ જાય છે, એજ પ્રમાણે મતિજ્ઞાન પણ શ્રુતજ્ઞાનરૂપે પરિણમિત થઈ જશે. તો પછી સૂત્રકારે શ્રુતજ્ઞાનને અહીં પૃથકરૂપે (એક જુદા જ જ્ઞાનરૂપે) શા માટે પ્રતિપાદિત કર્યું છે ?

ઉત્તર—આ બન્ને દૃષ્ટાન્તો જ વિષમ છે, કારણ કે આ પ્રકારની માન્યતામાં તો મતિજ્ઞાનનો વિનાશ થવાની વાત માનવાનો પ્રસંગ ઉદ્ભવશે. આપણે એ વાતને તો પ્રત્યક્ષ દેખી શકીએ છીએ કે જ્યારે ઘટ (ઘડા)ની ઉત્પત્તિ થાય છે ત્યારે માટીનો પિંડાનો વિનાશ થઈ જાય છે અને જ્યારે પટ (કાપડ)ની ઉત્પત્તિ થાય છે ત્યારે તંતુપુંજનો નાશ થઈ જાય છે. પરંતુ જ્યારે શ્રુતજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે ત્યારે મતિજ્ઞાનનો વિનાશ થઈ જતો નથી, કારણ કે એક આત્મામાં એક સાથે ચાર જ્ઞાનનો સદ્ભાવ હોઈ શકે છે, એવું સિદ્ધાન્તકારોએ સ્વીકારેલું છે. જે શ્રુતજ્ઞાનનો સદ્ભાવ હોય ત્યારે મતિજ્ઞાનનો અભાવ હોય છે એવું માનવામાં આવે, તો તે માન્યતા તો

“જત્ય મઈ તત્ય સુયં, જત્ય સુયં તત્ય મઈ” (નન્દી સૂ. ૨૪)

છાયા—યત્ર મતિસ્તત્ર શ્રુતં, યત્ર શ્રુતં તત્ર મતિઃ ।

શ્રુતસ્ય સદ્ભાવે મતેર્વિદ્યમાનતા ભગવતાઽભિહિતા તસ્માદપેક્ષાકારણમેવ મતિ જ્ઞાનં શ્રુતજ્ઞાનસ્યેતિ મન્તવ્યમ, તથા ચ મતિજ્ઞાનપૂર્વકમિન્દ્રિયમનોજન્યમાસવચના- નુસારિ જ્ઞાનં તજ્ઞાનમિતિ નિષ્કર્ષઃ ।

‘શ્રૂયતે યત્તચ્છ્રુતમ્’ इति व्युत्पत्त्या श्रुतशब्देन प्रवचनमपि गृह्यते । तस्मिन्- पक्षे—श्रुतस्य=आप्तवचनस्य ज्ञानं श्रुतज्ञानमिति षष्ठीतत्पुरुषः । आप्तो रागादि

ઠહરતા હૈ । ક્રિ “જત્ય મઈ તત્ય સુયં, જત્ય સુયં તત્ય મઈ” જહાં પર મતિ- જ્ઞાન હૈ વહાં શ્રુતજ્ઞાન હૈ ઓર જહાં શ્રુતજ્ઞાન હૈ વહાં મતિજ્ઞાન હૈ । ઇસ તહ શ્રુત કે સદ્ભાવ મેં મતિજ્ઞાન કા સદ્ભાવ-ભગવાનને કહા હૈ । ઇસલિયે એસા માનના ચાહિયે, કિ તજ્ઞાન કા મતિજ્ઞાન કેવલ અપેક્ષાકારણ હી હૈ । અપેક્ષાકારણ કા તાત્પર્ય નિમિત્તકારણ સે હૈ । જો નિમિત્તકારણ હોતે હૈં વે ઉપાદાન કારણ કી તરહ સ્વયં કાર્યરૂપ નહીં પરિણમતે હૈં કેવલ ઉપાદાન કારણ હી કાર્યરૂપ પરિણમતા હૈ । તથા ચ—જો મતિજ્ઞાનપૂર્વક હી પરંપરા સે ઇન્દ્રિયોં સે જો જનિત હોં ઓર સાક્ષાત્કારણ જિસકી ઉત્પત્તિ મેં મન હો એસા આસ- વચનાનુસારી જા જ્ઞાન હૈં વહી શ્રુતજ્ઞાન હૈ ।

શ્રૂયતે યત્ તત્ શ્રુતમ્ “ઇસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર શ્રુતશબ્દ સે પ્રવચન કા મી ગ્રહણ” હો જાતો હૈ । અતઃ ઇસ પક્ષ મેં આપ્તવચનરૂપ શ્રુત કા જો જ્ઞાન હૈ વહ શ્રુતજ્ઞાન હૈ એસા ષષ્ઠી તત્પુરુષ સમાસ કરના ચાહિયે । રાગક્રેષ આદિ સે રહિત

સિદ્ધાન્તની વિરૂદ્ધની માન્યતા પ્રતિપાદિત થાય છે. શાસ્ત્રોમાં એવું કહ્યું છે કે.... “જત્ય મઈ તત્ય સુયં, જત્ય સુયં તત્ય મઈ” જ્યાં મતિજ્ઞાન હોય છે, ત્યાં શ્રુત- જ્ઞાન હોય છે જ્યાં શ્રુતજ્ઞાન હોય છે ત્યાં મતિજ્ઞાન હોય છે.” આ રીતે, શ્રુતના સદ્ભાવમાં મતિજ્ઞાનનો પણ સદ્ભાવ ભગવાને કહેલો છે. તેથી એવું માનવું જોઈએ કે મતિજ્ઞાન એ શ્રુતજ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં માત્ર અપેક્ષાકારણ (નિમિત્તરૂપ કારણ) જ છે. જે નિમિત્ત કારણો હોય છે તે ઉપાદાન કારણની જેમ સ્વયં કાર્યરૂપે પરિણમતા નથી. માત્ર ઉપાદાન કારણ જ કાર્યરૂપે પરિણમે છે. આ દૃષ્ટિએ વિચારવામાં આવે તો શ્રુતજ્ઞાનનો આ પ્રમાણે અર્થ ક્ષણિત થાય છે.

જે મતિજ્ઞાનપૂર્વક હોય, પરંપરાની અપેક્ષાએ જે જ્ઞાન ઇન્દ્રિયોથી જનિત હોય છે પણ જેની ઉત્પત્તિમાં સાક્ષાત્ કારણભૂત મન હોય છે, એવું આસવચનાનુસારી જે જ્ઞાન છે તેને શ્રુતજ્ઞાન કહે છે. “શ્રૂયતે યત્ તત્ શ્રુતમ્” આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર શ્રુત પદ દ્વારા પ્રવચન પણ ગ્રહણ થઈ જાય છે. તેથી આ દૃષ્ટિએ વિચારવામાં આવે તો આસવચન રૂપ શ્રુતનું જે જ્ઞાન છે તેને શ્રુતજ્ઞાન કહે છે, એવો ષષ્ઠી તત્પુરુષ

રહિતઃ સર્વજ્ઞસ્તસ્ય વચનમ્—આપ્ત વચનમ્ । તદર્થાધ્યવસાય (નિર્ણય) રૂપં જ્ઞાનં શ્રુત જ્ઞાનમિતિ । શ્રુતજ્ઞાનં પ્રતિ શબ્દસ્ય નિમિત્તકારણતયા શબ્દેઽપિ શ્રુતવ્યપદેશો ભવતિ । જ્ઞાનભેદવ્યવસ્થાયાં શ્રુતશબ્દઃ શ્રવણાર્થવાચીત્યભિધેયમ્ ॥૨॥

(૩) અવધિજ્ઞાનમ્—અપધાનમવધિ—ઇન્દ્રિય નોઇન્દ્રિય નિર્ગપેક્ષસ્ય આત્મનઃ સાક્ષાદર્થગ્રહણમ્, અવધિરેવજ્ઞાનમ્ અવધિજ્ઞાનમ્ । અથવા—‘અવ’ શબ્દોઽર્થઃશબ્દાર્થઃ । અવ=અધઃ વિસ્તૃતં વસ્તુ ધીયતે=જાયતેઽનેનેત્યર્થઃ । અવધિશ્ચાસૌ તજ્ઞાનં ચેત્યવધિજ્ઞાનમ્ । વિસ્તૃતવિષયકં જ્ઞાનમિત્યર્થઃ । યથા—અનુત્તરોપપાતિકા દેવા અવધિ જ્ઞાનબલેન, ભગવન્તમાપૃચ્છ્ય જીવાદિતત્ત્વસ્વરૂપં નિર્ધારયન્તિ ।

વિશિષ્ટ વ્યક્તિ કા નામ આપ્ત હૈ । જિસે સર્વજ્ઞ કહા જાતા હૈ । ઉસકે વચન કા નામ આપ્તવચન હૈ । ઉનકે દ્વારા પ્રતિપાદિત અર્થરૂપ જો આગમ હૈ । ઉસ આગમ કા નિર્ણયરૂપ જ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાન હૈ । શ્રુતજ્ઞાન કે પ્રતિ શબ્દ નિમિત્તકારણ હોતા હૈ એનાવતા નિમિત્ત કારણ કી અપેક્ષા લેકર શબ્દ મેં भी શ્રુત કા વ્યવહાર હોતા હૈ । પરન્તુ જ્ઞાન ભેદ કી વ્યવસ્થા મેં શ્રુતશબ્દ શ્રવણ જન્યજ્ઞાનરૂપ અથ કા વાચી લિયા ગયા હૈ ।

“અવધાનમવધિઃ” અર્થાત્ ઇન્દ્રિયોં એવં મનકી સહાયતા કે વિના કેવલ આત્મા સ્વે હી દ્રવ્ય ક્ષેત્રકાલ ઓર ભાવ કી મર્યાદા લેકરૂપી પદાર્થોં કો જો સાક્ષાત્રૂપ સે ગ્રહણ કરનેવાલા જ્ઞાન હોના હૈ ઉસકા નામ અવધિ હૈ ।

અથવા—અવધિજ્ઞાન મેં જો અપશબ્દ હૈ વહ અધઃશબ્દ કે અર્થ કો કહને વાલા હૈ । ઇસલિયે જિસજ્ઞાન કે દ્વારા નીચે કા વિષય વિસ્તારરૂપ સે “ધીયતે” જાના જાતા હૈ । વહ અવધિજ્ઞાન હૈ તાત્પર્ય ઇસકા યહ હૈ કિ જબ

સમાસ અહીં સમજવો જોઇએ. રાગ, દ્વેષ આદિથી રહિત વિશિષ્ટ વ્યક્તિને આપ્ત કહે છે. સર્વજ્ઞને જ એવાં આપ્ત કહી શકાય છે. તે સર્વજ્ઞના વચનને આપ્તવચન કહે છે. તેમના દ્વારા પ્રતિપાદિત અર્થ રૂપ જો આગમ છે, તે આગમના નિર્ણયરૂપ જ્ઞાનને જ શ્રુતજ્ઞાન કહે છે. શ્રુતજ્ઞાનની પ્રાપ્તિમાં શબ્દરૂપ નિમિત્ત પરમ્પ । કારણ રૂપ હોય છે. તેથી નિમિત્ત કારણની અપેક્ષાએ શબ્દમાં પણ શ્રુત શબ્દનો વ્યવહાર થાય છે પરંતુ જ્ઞાનના ભેદોની વ્યવસ્થામાં શ્રુત શબ્દને શ્રવણજન્ય જ્ઞાનરૂપ અર્થનો વાચક લેવામાં આવેલ છે.

(૩) “અવધાનમવધિઃ” અવધિજ્ઞાન—

ઇન્દ્રિયો અને મનના સહાયતા વિના કેવળ આત્મા દ્વારા જ દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવની મર્યાદાની અપેક્ષાએ રૂપી પદાર્થોને સાક્ષાતરૂપે ગ્રહણ કરનારું જો જ્ઞાન છે, તેને અવધિજ્ઞાન કહે છે. અથવા—અવધિજ્ઞાનમાં જો ‘અવ’ ઉપસર્ગ છે તે અધઃ શબ્દના અર્થનો વાચક છે. તેથી જો જ્ઞાન દ્વારા નીચેના વિષયનું વિસ્તૃત રૂપે “ધીયતે” જ્ઞાન થાય છે, તે જ્ઞાનને અવધિજ્ઞાન કહે છે. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—અવધિજ્ઞાનનું ક્ષેત્ર આંશજ્ઞાનના અસંખ્યાતમાં

यद्वा—अवधिना ज्ञानम्—इति तृतीया समासः । अवधिर्मर्यादारूपिद्रव्याप्येव विषयीकरोति नेतराणीति व्यवस्थारूपा । तथाचायमर्थः—अरूपि द्रव्यपरिहारेण रूपिद्रव्यमात्रविषयकं ज्ञानमवधिज्ञानमिति ।

यद्वा—अधोऽधोऽधिकं पश्यति येन तदवधिज्ञानम् । तश्चचतुर्गतिवर्तिनां जीवानामिन्द्रियमनोनीरपेक्षं प्रतिविशिष्टक्षयोपशमनिमित्तं रूपिद्रव्यसाक्षात्कार जनकं भवति । एतस्य देवमनुष्यतिर्यङ्नारका अधिकारिणः ॥३॥

અવધિજ્ઞાન કા ક્ષેત્ર અંગુલ કેઅપંખ્યાત્વે ભાગ સે લેકર સારા લોક હૈ—તવ उसका विषय भी कतिपय पर्याय सहितरूपी द्रव्य है इसलिये यह ज्ञान विस्तृत विषयवाला है । विस्तृत विषयता जो इस में प्रकट की है वह मनः पर्यायज्ञान की अपेक्षा जाननी चाहिये । क्यों कि मनःपर्याय ज्ञान का क्षेत्र सिर्फ मानुषोत्तर पर्वत पर्यंत ही है और उसका विषय अवधिज्ञान के विषयभूत हुए रूपी द्रव्य का अनंततत्वां भाग है । अथवा—अवधिशब्द का अर्थ मर्यादा है । इस अर्थ में अवधि और ज्ञान का तृतीया तत्पुरुष समास होकर ऐसा अर्थ होता है कि जो ज्ञान मर्यादा लेकर पदार्थों को जानता है । वह अवधिज्ञान है । इस में मर्यादा रूपी पदार्थों को जाननेकी अपेक्षा से जाननी चाहिये । क्यों कि वह ज्ञान रूपी पदार्थों को नहीं जानता है । इसलिये इस प्रकार का व्यवस्थारूप मर्यादा युक्त होने के कारण इस ज्ञानक नाम अवधिज्ञान रखा है । अथवा—नीचे नीचे की ओर जो ज्ञान अधिक विषय को

ભાગથી લઈને આખા લોક પર્યંતનું છે, અને કતિપય પર્યાય સહિતના રૂપી દ્રવ્યને વિષય કરનાર જ્ઞાન છે. આ રીતે તે જ્ઞાન વિસ્તૃત વિષયવાળું છે. તેમાં જે વિસ્તૃત વિષયતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે તે મનઃપર્યાય જ્ઞાનની અપેક્ષાએ સમજવી, કારણ કે મનઃપર્યાય જ્ઞાનનું ક્ષેત્ર માત્ર માનુષોત્તર પર્વત પર્યંત જ છે અને અવધિજ્ઞાન દ્વારા જેટલારૂપી દ્રવ્યને જોઈ શકાય છે તેના કરતાં મનઃપર્યાય જ્ઞાનદ્વારા અનંતમાં ભાગના રૂપી દ્રવ્યને જોઈ શકાય છે.

અથવા—અવધિ એટલે મર્યાદા. આ અર્થમાં અવધિ અને જ્ઞાન, આ બે પદોનો તૃતીયા તત્પુરુષ સમાસ બન્યો છે. આ દૃષ્ટીએ વેચારવામાં આવે તો અવધિજ્ઞાનનો અર્થ આ પ્રમાણે થશે—જે જ્ઞાન મર્યાદિત પદાર્થોને જાણે છે, તે જ્ઞાનનું નામ અવધિજ્ઞાન છે. તે જ્ઞાન, રૂપી પદાર્થોને જ જાણે છે—અરૂપી પદાર્થોને જાણતું નથી, આ પ્રકારની રૂપી પદાર્થોને જ જાણવારૂપ આ મર્યાદા સમજવી. તેથી આ પ્રકારની વ્યવસ્થારૂપ મર્યાદાથી યુક્ત હોવાને લીધે આ જ્ઞાનનું નામ અવધિજ્ઞાન પડ્યું છે. અથવા—જે જ્ઞાન નીચેની જાણુએ અધિક વિષયને દેખી શકે છે તે જ્ઞાનને અવધિજ્ઞાન કહે

દેખતા હૈ—વહ જ્ઞાન અવધિજ્ઞાન હૈ એસા યહ અવધિજ્ઞાન ચારોં ગતિયોં કે જીવોં કો ઇન્દ્રિયાં ઓર મન કી સહાયતા કે બિના અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હોતા હૈ ।

શંકા:—શાસ્ત્રકારોં ને મનુષ્ય ઓર તિર્યંચગતિ કે જીવોં કો જો અવધિજ્ઞાન કહા હૈ વહી ક્ષયોપશમ નિમિત્તક કહા હૈ—ફિર યહાં ચારોં ગતિયોં કે જીવોં કો જો અવધિજ્ઞાન હોતા હૈ વહ ક્ષયોપશમ નિમિત્તક હોતા હૈ એસા ક્યોં કહા—તોં ઇસ શંકા કા સમાધાન ઇસ પ્રકાર સે હૈ કિ અવધિજ્ઞાન કી ઉત્પત્તિ નિયમતઃ અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હી હોતી હૈ—પરન્તુ ઇસ ક્ષયોપશમ મેં જહાં વ્રત, નિયમ, આદિ અનુષ્ઠાન કી અપેક્ષા રહતી હૈ—વહ ક્ષયોપશમ નિમિત્તક કહલાતા હૈ એસા અવધિજ્ઞાન મનુષ્ય ઓર તિર્યંચોં કે હોતા હૈ । જિસ અવધિજ્ઞાન મેં ઇનકી અપેક્ષા ન હો કિન્તુ ભવજન્મ લેના હી કારણ હો વહાં વહ અવધિજ્ઞાન ઇન ગુણોં કી અપેક્ષા વિના હી અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ । એસા અવધિજ્ઞાન દેવ ઓર નારકિયોં કો હોતા હૈ । અન્તરંગ કારણ ઇન દોનોં પ્રકાર કે અવધિજ્ઞાનોં

છે. ઇન્દ્રિયો અને મનની સહાયતા વિના રૂપી પદાર્થોને જોઈ શકનારું આ અવધિજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયથી ચારે ગતિના જીવોમાં ઉત્પન્ન થતું હોય છે.

શંકા—શાસ્ત્રકારોએ તો એવું કહ્યું છે કે મનુષ્ય અને તિર્યંચગતિના જીવોને જે અવધિજ્ઞાન થાય છે તે ક્ષયોપશમ નિમિત્તક હોય છે. છતાં આપ શા કારણે એવું કહો છો કે ચારે ગતિના જીવોને અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમથી અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થઈ શકે છે?

સમાધાન—અવધિજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ તો નિયમથી જ અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મના ક્ષયોપશમથી જ થાય છે, પરન્તુ આ ક્ષયોપશમમાં જ્યાં વ્રત, નિયમ આદિ અનુષ્ઠાનોની આવશ્યકતા રહે છે, ત્યાં તે અવધિજ્ઞાનને ક્ષયોપશમનિમિત્તક કહેવામાં આવે છે. એવા ક્ષયોપશમનિમિત્તક અવધિજ્ઞાનનો સદ્ભાવ મનુષ્ય અને તિર્યંચોમાં જ હોય જે અવધિજ્ઞાનમાં તેની આવશ્યકતા ન હોય પણ ભવ જ (જન્મ લેવો એજ) કારણ રૂપ હોય, ત્યાં આ ગુણોની અપેક્ષા વિના જ અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મના ક્ષયોપશમથી અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થઈ જાય છે. એવા અવધિજ્ઞાનનો સદ્ભાવ દેવો અને નારકોમાં હોય છે. આ રીતે આ જન્મે પ્રકારના અવધિજ્ઞાનમાં અન્તરંગ કારણ તો સમાન જ છે અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષયોપશમ જ તે જન્મેમાં અન્તરંગ કારણ છે તે કારણે ‘અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમથી ચારે ગતિના જીવોમાં અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે.’ આ પ્રકારના કથનમાં કોઈ દોષ સંભવતો નથી.

મનઃપર્યવજ્ઞાનમિતિ । અવનમ્ અવઃ । ‘અવ રક્ષણં ગતિકાન્તિપ્રીતિતૃપ્ત્ય-
વગમાદ્યર્થેષુ’ પઠિતોઽરિત, તત્રાવગમ્યાર્થમાશ્રિત્ય નિષ્પન્નઃ । અવઃ—અવગમઃ, વૌધ
इत्यर्थः । परिशब्दः सर्वतो भावे, पर्यवः—समन्तादवबोधः । मनसः पर्यवो मनः
पर्यवः मनोविषयकः समन्तादवबोध इत्यर्थः । मनःपर्यवश्चासौ तज्ज्ञानं चेति
मनःपर्यवज्ञानम् । पर्ययः, पर्यायः, एते शब्दा एकार्थवाचकाः ।

में समान हैं । अवधिज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम ही अन्तरंग कारण है ।
अतः ऐसा कहने में कि अवधिज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से अवधि-
ज्ञान की उत्पत्ति चारों गतियों के जीवों को होती है इस प्रकार के कथन
में कोई विरोध नहीं है ।

मनःपर्यवज्ञान-पर्यव यह शब्द परि उपसर्ग अव धातु से बना है । अव
धातु रक्षण, गति, कान्ति, प्रीति, तृप्ति, अवगम आदि अर्थों में पठित हुआ
है सो यही पर इन में से अवगम अर्थ लिया गया है ।

अवगम का अर्थ बोध है । “परि” का अर्थ सब प्रकार से है । मन की सब
पर्यायों का साक्षात् जानने वाला जो ज्ञान है वह मनः पर्यवज्ञान है । पर्यय
पर्याय ये सब शब्द एकार्थवाचक हैं । तात्पर्य इसका यह है कि मनवाले
સંજ્ઞી પ્રાણી—કિસી મી વસ્તુ કા ચિન્તવન મનસે કરતે હૈ । ચિન્તવન કે સમય
ચિન્તનીયવસ્તુ કે ભેદ કે અનુસાર ચિન્તનકર્મ મેં પ્રવૃત્ત મન મિત્ર ૨ આકારોં
કો ધારણ કરતા રહતા હૈ । યે આકૃતિયાં હી મન કી પર્યાય હૈ । इन मन की
पर्यायों को साक्षात् जानने वाला ज्ञान मनःपर्यवज्ञान है द्रव्य मन और

(૪) મનઃપર્યવજ્ઞાન-પરિ+અવ્=પર્યવ. આ રીતે ‘અવ્’ ધાતુને ‘પરિ’ ઉપસર્ગ
લાગવાથી ‘પર્યવ’ પદ બન્યું છે. ‘અવ્’ ધાતુ રક્ષણ, ગતિ, કાન્તિ, પ્રીતિ, તૃપ્તિ,
અવગમ આદિ અર્થોમાં વપરાય છે. અહીં તેનો અવગમ અર્થ ગૃહીત થયો છે.
અવગમ એટલે બે ધ. અને ‘પરિ’ એટલે ‘સર્વ પ્રકારે’

“મનના સઘળા પર્યાયોને સાક્ષાત્ જાણનારું જે જ્ઞાન છે, તેનું નામ મનઃ
પર્યવજ્ઞાન છે.” પર્યય અને પર્યાય આ બંને શબ્દો સમાનાર્થી છે. આ કથનનો
ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—મનવાળા જીવો (સંજ્ઞી જીવો) કોઈ પણ વસ્તુનું મનની
મદદથી ચિન્તવન કરે છે. આ પ્રકારના ચિન્તનકર્મમાં પ્રવૃત્ત થયેલું મન સિન્નસિન્ન
આકારોને ધારણ કરતું રહે છે. તે આકૃતિઓ જ મનના પર્યાયો છે. મનન એ
પર્યાયોને સાક્ષાત્ જાણનારું જે જ્ઞાન છે તે જ્ઞાનનું નામ જ મનઃપર્યવજ્ઞાન છે.

મનોદ્વિવિધં-દ્રવ્યભાવભેદાત્ । તત્ર દ્રવ્યમનો મનોવર્ગણાઃ । સંજ્ઞિના મનો-
વર્ગણા ગૃહીતાઃ સત્યો મન્યમાનાશ્ચિન્ત્યમાના ભાવમનોઽભિધીયતે ।

તત્રેહ ભાવમનઃ પરિગૃહ્યતે । ભાવમનસઃ પર્યાયાશ્ચ પરેષામ્ અર્દ્ધતૃતીયદ્વીપાભ્ય-
ન્તર્વર્તિસંજ્ઞિપञ्ચેન્દ્રિયાણાં ચિન્ત્યમાનવિષયાઽધ્યવસાયરૂપાઃ । યથા—અન્યઃકશ્ચિ-
દેવં ચિન્તયેત્—આત્મા કીદૃશઃ ? અરૂપી, ચેતનાસ્વભાવઃ, કર્મણાં કર્તા
તત્ફલભોક્તા ચેત્યાદયો યે જ્ઞાનવિશેષરૂપાસ્તસ્યાત્મનઃ પરિણામવિશેષા તેષાં યદ્
જ્ઞાનં તન્મનઃપર્યાયજ્ઞાનમ્ ।

ભાવ મન કે ભેદ સે મન દો પ્રકાર કા હોતા હૈં । इनमें मनोवर्गणारूप तो
द्रव्य मन हैं तथा संज्ञी जीव उन मनोवर्गणाओं को ग्रहण करके उनके निमित्त
से जो विचार करता है वह भावमन हैं । यहां पर भावमन का ग्रहण हुआ
है । मनः पर्यायज्ञानी दूसरों के इस भावमन की पर्यायों को कि जो अढाई
द्वीपवर्ती संज्ञी पंचेन्द्रिय प्राणियों द्वारा विचारी गई हैं उन्हें साक्षात् जानता
है । जैसे कोई यह विचारे कि आत्मा वैसा है ? “अरूपी है चेतना स्वभाव-
वाला है, कर्मों का कर्ता है, और उन कर्मों के फलों का भोक्ता है “इस
तरह ये ज्ञानविशेषरूप जो उस आत्मा के विचारित परिणाम विशेष है उन
परिणाम विशेषों का जो ज्ञान है वह मनःपर्याय ज्ञान है । अर्थात् मनःपर्याय-
ज्ञानी इन से कल्पित मन की पर्यायों को साक्षात् जानता है । इससे यह
वात घनित होती है कि मनःपर्यायज्ञानी मन को ही प्रत्यक्षरूप से जानता
है, चिन्तनीय वस्तुओं को नहीं ।

द्रव્યમન અને ભાવમનના ભેદથી મન બે પ્રકારનું કહ્યું છે. આ બન્નેમાંનું જે દ્રવ્ય
મન છે તે મનોવર્ગણરૂપ છે, તે મનોવર્ગણાઓને ગ્રહણ કરીને તેમના નિમિત્તથી
સંજ્ઞી જીવ જે વિચાર કરે છે તે ભાવમનરૂપ છે. અહીં ભાવમન ગ્રહણ કરવામાં
આવ્યું છે. અઢી દ્વીપવર્તી સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવો દ્વારા વિચારવામાં આવેલી ભાવ-
મનના પર્યાયોને મનઃપર્યાયજ્ઞાની જીવ સાક્ષાત્ જાણે છે. જેમ કે કોઈ એવો વિચાર
કરે કે “આત્મા કેવો છે ? શું તે અરૂપી છે ? શું તે ચેતના સ્વભાવવાળો છે ? શું
તે કર્મોના કર્તા અને તે કર્મોના ફલોના ભોક્તા છે ?” આ પ્રકારનું આ જ્ઞાનવિશેષ-
રૂપ ને આત્માદ્વારા વિચારિત જે પરિણામવિશેષ છે, તે પરિણામવિશેષોને જાણનાર
જે જ્ઞાન છે, તે જ્ઞાનનું નામ મનઃપર્યાયજ્ઞાન છે. એટલે કે મનપર્યાયજ્ઞાની જીવ આ
સંકલ્પિત મનના પર્યાયોને સાક્ષાત્ જાણી શકે છે. આ કથન દ્વારા એ વાત સૂચિત
થાય છે કે મનપર્યાયજ્ઞાની જીવ મનની પર્યાયોને જ પ્રત્યક્ષરૂપે જાણે છે—ચિન્તનીય
વસ્તુઓને જાણતો નથી,

મન:પર્યજ્ઞાની ચ મન:પર્યયાનેવ પ્રત્યક્ષી કરોતિ, ન તુ બાહ્યવસ્તુ । ન ચ મન: પર્યયજ્ઞાનિના બાહ્યંવસ્તુ જ્ઞાયતે इति वाच्यम्, अनुमानतस्तस्य बाह्यवस्तुज्ञान-सद्भावात् । यथा विशिष्टक्षयोपशमिकप्रतिभाशाली प्रेक्षावान् प्रशान्तःकस्यचि-दाकारेङ्गितादिकं विलोक्य तदीयमनोगतं भावं सामर्थ्यं चानुमानतो विजानाति तथा मन:पर्यज्ઞાની કસ્યચિદ્ ભાવરૂપં મન:સર્વતોભાવેન પ્રત્યક્ષીકૃત્વાનુમાનેન બાહ્યં વિપયમવબુદ્ધતે—‘इदं वस्त्वनेन चिन्तयते’ इति । बाह्यपदार्थचिन्तनसमये हि बाह्यपदार्थाकारसदृशाकारं मनो भवति ।

इदं मन:पर्ययज्ञानं रूपिविषयत्वप्रत्यक्षायोपशमिकत्वप्रयक्षत्वादिसाम्येऽप्य-वधिज्ञानाद् भिन्नं, स्वाम्यादि भेदात् । तथाहि अवधिज्ञानमविस्तसम्पददृष्टेरपि

પ્રશ્ન —તો કયા ચિન્તનીય વસ્તુઓં કો મન:પર્યયજ્ઞાની જાન નહીં સકતા ?—ઉત્તર:—જાન સકતા હૈ—પર પીછે સે અનુમાનદ્વારા । જૈસે કોઈ વિશિષ્ટક્ષયોપશમિક પ્રતિભાશાલી વિદ્વાન્ શાન્તભાવ સે કિસી દૂસરે વ્યક્તિ કે આકાર ઇંગિત આદિ કો પ્રયક્ષ દેખ કર ઉસકે મનોગત ભાવ એવં સામર્થ્ય કો અનુમાન સે જાન લેતા હૈ ઉસી તરહ મન:પર્યયજ્ઞાની કિસી કે ભાવરૂપ મન કો સર્વતોભાવ સે પ્રયક્ષ કર અનુમાન સે તર્જીત ચિન્તનીય બાહ્ય વસ્તુ-ઓં કો જાનલિયા કરતા હૈ કિ ઇસને ઇસવસ્તુ કા ચિન્તન ક્રિયા હૈ ક્યોં કિ ઇસકા મન ઉસ વસ્તુ કે ચિન્તન કે સમય અવશ્ય હોનેવાલે ઇસપ્રકાર કે આકારોં સે યુક્ત હૈ । મન જબ બાહ્ય પદાર્થોં કા ચિન્તન કરતા હૈ તો ઉસ સમય વહ ઉસ ચિન્તિત બાહ્યપદાર્થ કે આકાર જૈસા આકારવાળા હો જાતા હૈ ।

મન:પર્યજ્ઞાન ઓર અવધિજ્ઞાન ઇન દોનોં મેં રૂપી પદાર્થોં કો જાનને

પ્રશ્ન શું મન:પર્યવજ્ઞાની શું ચિન્તનીય વસ્તુઓને જાણી શકે નથી ?

ઉત્તર—મન:પર્યવજ્ઞાની શું ચિન્તનીય વસ્તુઓને પાછળથી અનુમાનદ્વારા જ જાણી શકે છે જેવી રીતે કોઈ વિશિષ્ટ ક્ષયોપશમિક પ્રતિભાશાળી વિદ્વાન શાન્તભાવે કોઈ અન્ય વ્યક્તિની મુખાકૃતિ, તેની ચેષ્ટાઓ આદિને પ્રત્યક્ષ જોઈને તેના મનોગત ભાવોને સામર્થ્યને અનુમાનથી જાણી લે છે, એજ પ્રમાણે મન:પર્યવજ્ઞાની શું કોઈ અન્ય શુંના ભાવરૂપ મનને પોતાના મન:પર્યવજ્ઞાન વડે પ્રત્યક્ષ કરીને અનુમાનથી તદ્દગત ચિન્તનીય બાહ્ય વસ્તુઓને પણ જાણી શકે છે. તે મન:પર્યવજ્ઞાની શું એવું અનુમાન કરે છે કે આ વ્યક્તિએ આ વસ્તુનું ચિન્તન કર્યું છે, કારણ કે તેનું મન તે વસ્તુના ચિન્તન સમયે જેવાં આકારોથી અવશ્ય યુક્ત હોવું જોઈએ એવા આકારોથી અવશ્ય યુક્ત છે. મન જ્યારે બાહ્યપદાર્થોનું ચિન્તન કરે છે, ત્યારે તે (મન) તે ચિન્તિત બાહ્યપદાર્થોના આકાર જેવા આકારવાળું થઈ જાય છે.

મન:પર્યવજ્ઞાન અને અવધિજ્ઞાનમાં રૂપી પદાર્થોને જાણવાની અપેક્ષાએ, ક્ષાયો-

ભવતિ । દ્રવ્યતોઽશ્વેષરૂપિદ્રવ્યવિષયમ્, ક્ષેત્રતોઽસંખ્યાતલોકવિષયમ્ । કાલતોઽતી-
તાનાગતાસંખ્યાતોત્સર્પિણ્યવસર્પિણીવિષયમ્ । ભાવતઃ સકલરૂપિદ્રવ્યેષુ પ્રતિદ્રવ્ય-
મસંખ્યાતપર્યાયવિષયમ્ ।

મનઃપર્યવજ્ઞાનં તુ પ્રમાદરહિતસ્યાઽઽમર્ષાદ્યન્યત્ત્વલબ્ધિધારિણઃ સંયતસ્ય
ભવતિ । દ્રવ્યતઃ—સંજ્ઞિપञ्चेन्द्रિયમનોદ્રવ્યવિષયમ્ । ક્ષેત્રતઃ—સમક્ષેત્રમાત્રવિષયમ્ ।
કાલતઃ—અતીતાનાગતપલ્યોપમાસંખ્યાતભાગવિષયમ્ । ભાવતો—મનોદ્રવ્યગતઅનન્ત-
પર્યાયવિષયમ્ ॥૪॥

કી, ક્ષાયોપશમિકત્વ કી एवं પ્રત્યક્ષત્વ આદિ કી અપેક્ષા સે સમાનતા હૈ—
તો મી સ્વામ્યાદિ કી અપેક્ષા સે ભિન્નતા હૈ—અવધિજ્ઞાન જો અવિરતસમ્યક્
દૃષ્ટિ હૈ, ઉસકો મી હો જાતા હૈ, દ્રવ્ય કી અપેક્ષા યહ સમસ્તરૂપી પદાર્થોં કો
વિષય કરના હૈ, ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા અસંખ્યાત લોક ઇસકા વિષય માના ગયા
હૈ, કાલ કી અપેક્ષા યહ અતીત અનાગતકાલ કે અસંખ્યાત ઉત્સર્પિણી ઓર
અવસર્પિણી કાલોં કો જાનતા હૈ, તથા ભાવ કી અપેક્ષા યહ સમસ્તરૂપી
દ્રવ્યોં મેં પ્રતિદ્રવ્ય કી અસંખ્યાત પર્યાયોં કો જાનતા હૈ । મનઃપર્યવજ્ઞાન
અવિરત અવસ્થાવાલે જીવ કો નહીં હોતા હૈ । ઉસમેં મી પ્રમત્ત સંયત કા
નહીં હોતા હૈ કિન્તુ જો અપ્રમત્ત સંયત હૈ ઉસકો હોતા હૈ ।
ઉસમેં મી આમર્ષ આદિ કિસી ઇક લબ્ધિધારી કે હી હોતા હૈ । દ્રવ્ય કી
અપેક્ષા સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિયજીવ કે મનોદ્રવ્ય કો વિષય કરતા હૈ । ક્ષેત્ર કી

પશમિકત્વની અપેક્ષાએ અને પ્રત્યક્ષત્વ આદિની અપેક્ષાએ સમાનતા છે. પરન્તુ કેટલીક
બાબતોમાં તે અવધિજ્ઞાનથી બુદ્ધ પડે છે.

અવધિજ્ઞાન અવિરત સમ્યક્દૃષ્ટિ જીવમાં પણ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે, દ્રવ્યની
અપેક્ષાએ તે સમસ્તરૂપી પદાર્થોને જોઈ શકે છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત લોક
તેના વિષય મનાય છે, કાળની અપેક્ષાએ તે અતીત અને અનાગતકાળના અસંખ્યાત
ઉત્સર્પિણી અને અવસર્પિણી કાળોને જાણે છે, તથા ભાવની અપેક્ષાએ તે સમસ્તરૂપી
દ્રવ્યોમાંના પ્રત્યેક દ્રવ્યની અસંખ્યાત પર્યાયોને જાણે છે. મનઃપર્યવજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ
અવિરત અવસ્થાવાળા જીવમાં થતી નથી, પરન્તુ જે જીવ સંયત હોય છે તેને
જ મનઃપર્યવજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે. વળી પ્રત્યેક સંયત જીવને તે ઉત્પન્ન થાય
છે એવો કોઈ નિયમ નથી. જેમ કે પ્રમત્ત સંયતને તે ઉત્પન્ન થતું નથી, પણ
અપ્રમત્ત સંયતને જ ઉત્પન્ન થાય છે. અપ્રમત્ત સંયતમાં પણ આમર્ષ આદિ કોઈ
એક લબ્ધિધારીને જ મનઃપર્યવજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે. દ્રવ્યની અપેક્ષાએ સંજ્ઞી
પંચેન્દ્રિય જીવના મનોદ્રવ્યને તે વિષય કરે છે—જાણી શકે છે. ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ

(૫) કેવલજ્ઞાનમ્—કેવલમ્=એકમસહાયં જ્ઞાનાવરણીયકર્માત્મન્તક્ષયસમુદ્ભૂતમ્
અતીતાનાગતવર્તમાનધર્માવસ્થિતસકલદ્રવ્યગુણધર્મવિષયકમપ્રતિપાતિજ્ઞાનં કેવલ-
જ્ઞાનમ્ ॥૫॥

અધિકં જિજ્ઞાસુર્ભિર્નન્દિસૂત્રે મત્કૃતજ્ઞાનચન્દ્રિકાટીકાયાં વિલોકનીયમ્ ।

इत्थं शास्त्रस्थादावेव ज्ञानपञ्चकवर्णनेन मङ्गलं प्रदर्शितं भवति, सकलक्लेशो-
च्छित्तिमूलत्वेन ज्ञानस्य परममङ्गलत्वात् ॥सू० १॥

અપેક્ષા—ઇસકા વિષય સમયક્ષેત્ર માત્ર હૈ । કાલ કી અપેક્ષા—અતીત અનાગત
કાલ કા—પલ્લોપમ કા અસંખ્યાત વાં ભાગ ઇસકા વિષય હૈ । ભાવ કી
અપેક્ષા—ઇસકા વિષય મનોદ્રવ્ય સંબંધી અનંત પર્યાયે હૈ । કેવલજ્ઞાન—એક અસહાય
જ્ઞાન કા નામ કેવલજ્ઞાન હૈ । યહ જ્ઞાન જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે અત્યન્ત ક્ષય
સે હોતા હૈ । અન્ય જ્ઞાનોં કી તરહ યહ પ્રતિપાતી નહી હૈ । ઇસકે વિષય કા
અધિક વિસ્તાર નન્દીસૂત્ર કી જ્ઞાનચન્દ્રિકા નામ કી ટીકા મેં મૈને લિખા
હૈ—સો જિજ્ઞાસુ મહાનુભાવ વહાં સે ઇસે દેખલે ।

इस प्रकार से सूत्रकार ने शास्त्र की आदि में ही जो पांच प्रकार के
ज्ञानों का वर्णन किया है उससे मंगल प्रदर्शित होता है । क्योंकि ज्ञान
सकलक्लेशों की उच्छित्ति का मूलकारण है । अतः उसमें परम मंगलता
आती है । ॥ सूत्र० १ ॥

સમયક્ષેત્ર માત્રને જ તે વિષય કરનારૂં—જાણનારૂં—છે. કાળની અપેક્ષાએ અતીત
(ભૂત) અને અનાગત (ભવિષ્ય) કાળના પલ્લોપમનો અસંખ્યાતમો ભાગ તેનો વિષય
છે. ભાવની અપેક્ષાએ તેનો વિષય મનોદ્રવ્ય સંબંધી અનંત પર્યાયો છે.

(૫) કેવળજ્ઞાન—આ જ્ઞાન એવું છે કે જેમાં ઇન્દ્રિયો અને મનની સહાય-
તાની અપેક્ષા રહેતી નથી, જ્ઞાનાવરણીય કર્મના આત્યન્તિક (સંપૂર્ણતઃ) ક્ષયથી
આ જ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે. તેનો વિષય, ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન, આ ત્રણે
કાળ સંબંધી સમસ્ત દ્રવ્ય અને તેમની સમસ્ત (અનંત) પર્યાયો છે અન્ય જ્ઞાનોની
જેમ તે પ્રતિપ્રાતિ (એક વખત પ્રાપ્ત થયા બાદ જેનો વિનાશ થાય એવું)
નથી. કેવળજ્ઞાનનું વિસ્તૃત નિરૂપણ નન્દીસૂત્રની જ્ઞાનચન્દ્રિકા નામની મેં લખેલી
ટીકામાં કરવામાં આવ્યું છે, તો જિજ્ઞાસુ પાઠકોએ ત્યાંથી તે વાંચી લેવું.

આ પ્રકારે સૂત્રકારે શાસ્ત્રને પ્રારંભે જ પાંચ પ્રકારના જ્ઞાનોનું જે નિરૂપણ
કયું છે તેનું કારણ એ છે કે જ્ઞાન પોતે જ મંગલરૂપ છે. સકલ કલેશોના ઉચ્છે-
દનમાં જ્ઞાન જ કારણભૂત બને છે. આ રીતે જ્ઞાનમાં પરમ મંગળતાનો સદ્ભાવ
હોવાથી સૂત્રકારે શરૂઆતમાં જ તેની પ્રરૂપણા કરી છે. ॥ સૂ. ૧ ॥

પઞ્ચવિધેષુ જ્ઞાનેષુ શ્રુતજ્ઞાનસ્યૈવ ઉદ્દેશસમુદ્દેશાઘવસરેઽધિકારોઽસ્તિ, નેતરે-
પામિતિ બોધયિતુમાહ—

મૂલમ—તત્થ ચત્તારિ નાણાં ઠપ્પાં ઠવણિજ્ઞાં જો ઉદ્દિસંતિ,
જો સમુદ્દિસંતિ, જો અણુપ્પણવિજ્ઞંતિ । સુયનાણસ્સ ઉદ્દેસો સમુદ્દેસો
અણુપ્પણા અણુઓગો ય પવત્તઇ ॥ સૂ. ૨ ॥

છા. તત્ર ચત્વારિ જ્ઞાનાનિ સ્થાપ્યાનિ સ્થાપનીયાનિ નો ઉદ્દિશ્યન્તે, નો સમુદ્દિ-
શ્યન્તે, નો અનુજ્ઞાપ્યન્તે । શ્રુતજ્ઞાનસ્ય ઉદ્દેશઃ સમુદ્દેશઃ અનુજ્ઞા અનુયોગશ્ચ પ્રવર્ત્તતોઽસૂ. ૨।

ટીકા—‘તત્થ ચત્તારિ’ इत्यादि—

તત્ર=તેષુ પઞ્ચવિધેષુ જ્ઞાનેષુ ચત્વારિ—ચતુઃસંખ્યકાનિ જ્ઞાનાનિ આભિનિબો-
ધિકાઽવધિમનઃપર્યવકેવલરૂપાણિ અસંવ. વહાર્યાણિ-ન વપ્રવહારાર્હાણિ ‘ઠપ્પાં’ સ્થા-
પ્યાનિ ઉદ્દેશસમુદ્દેશાઘવસરે અત એવ ‘ઠવણિજ્ઞાં’ સ્થાપનીયાનિ=અનધિ-
કૃતાનિ । ન તેષામુદ્દેશાદયઃ ક્રિયન્તે इति भावः ।

અવ સૂત્રકાર યહ પ્રકટ કરતે હૈં કિ પાંચ પ્રકાર કે જો યે જ્ઞાન હૈં—
ઇનમૈં શ્રુતજ્ઞાન કા હી ઉદ્દેશ, સમુદ્દેશ આદિ કે અવસર મૈં અધિકાર હૈં દૂસરે
ચાર જ્ઞાનોં કા નહીં— “તત્થ ચત્તારિ”—इत्यादि । ॥સૂ. ૨॥

શબ્દાર્થઃ—(તત્થ) ઇન પૂર્વોક્ત પાંચ પ્રકાર કે જ્ઞાનોં મૈં (ચત્તારિ નાણાં)
ચાર પ્રકાર કે જ્ઞાન—મતિ—અવધિ, મનઃપર્યય ઓર કેવલજ્ઞાન—(ઠપ્પાં) ઉદ્દેશ,
સમુદ્દેશ આદિ કે અવસર મૈં વ્યવહારયોગ્ય નહીં હૈં । કયોં કિ યે ગુરુ કે
ઉપદેશ કી અપેક્ષાવાલે નહીં હૈં । ઇસલિયે (ઠવણિજ્ઞાં) યે સ્થાપનીય હૈં—
અર્થાત્ ઇન્કે ઉદ્દેશ આદિ નહીં—કિયે ગયે હૈં । ઇસ વિષય મૈં એસા જાનના
ચાહિયે કિ શ્રુતજ્ઞાન હી વાચના આદિ દ્વારા અપને વિષયભૂત પદાર્થોં મૈં

હવે સૂત્રકાર એ પ્રકટ કરે છે કે પાંચ પ્રકારના જે જ્ઞાન છે તેમાંથી શ્રુત-
જ્ઞાનનો જ ઉદ્દેશ, સમુદ્દેશ આદિને અવસરે અધિકાર છે—અન્ય ચાર જ્ઞાનોનો નથી.

“તત્થ ચત્તારિ” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(તત્થ) પૂર્વોક્ત પાંચ પ્રકારનાં જ્ઞાનોમાંથી (ચત્તારિ નાણાં) ચાર
પ્રકારનાં જ્ઞાન એટલે કે મતિજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યવજ્ઞાન અને કેવળજ્ઞાન
(ઠપ્પાં) ઉદ્દેશ, સમુદ્દેશ આદિના અવસરે વ્યવહારયોગ્ય નથી. કારણ કે ચારે
જ્ઞાનમાં શુરુના ઉપદેશની અપેક્ષા રહેતી નથી, તેથી (ઠવણિજ્ઞાં) તે ચારે જ્ઞાન
સ્થાપનીય છે. એટલે કે તેમના ઉદ્દેશ આદિ કરવામાં આવેલ નથી આ વિષયને
અનુલક્ષીને એવું સમજવું જોઈએ કે શ્રુતજ્ઞાન જ વાચના આદિ દ્વારા પોતાના

इदमत्राबधेयम्—श्रुतज्ञानमेव हि वाचनादिना साक्षात् प्रवर्त्तकं च । अन्यानि तु यद्यपि पदार्थानां स्वरूपमवबोधयन्ति, तथापि श्रुतज्ञानमनाश्रित्य साक्षात् प्रवर्त्तयितुं निवर्त्तयितुं वा न समर्थाणि, तस्मादिह तेषां नाधिकार इति । उक्तमेवार्थं विशदयन्नाह—‘णो उद्दिश्यन्ते’ इत्यादि । नो उद्दिश्यन्ते शिष्येभ्यो नोपदिश्यन्ते । नो समुद्दिश्यन्ते—एतानि स्थिरपरिचितानि कुरु इत्येवंरूपेण एतानि चत्वारि ज्ञानानि गुरुभिः शिष्यान् प्रति नोपदिश्यन्ते, अत एव एतानि नो अनुज्ञाप्यन्ते—‘एतानि सम्प्रगवधारय, अन्यांश्चापि अध्यापय’ इत्येवं रूपेण एतानि शिष्यान् प्रति नानुमोद्यन्ते ।

अथ—आभिनिबोधिकज्ञानम्, अवधिादीनि च ज्ञानानि स्थाप्यानि गुर्वनधीनत्वेनोद्देशाद्यविषयाणि, अतः स्थापनीयानि=अध्याख्येयानि । श्रुतज्ञानं तु

साक्षात् प्रवर्त्तक होता हैं । यद्यपि अन्यज्ञान भी पदार्थों के स्वरूप का बोध कराते हैं, परन्तु वे श्रुतज्ञान का आश्रय लिये बिना अपने विषयभूत हेयोपादेय विषय से न साक्षात् रूप में निवर्त्तक होते हैं, और न उसमें प्रवर्त्तक होते हैं । इसलिये उन ज्ञानों का यहां उद्देश समुद्देश आदि में विचार नहीं किया गया है । इसी अर्थ को सूत्रकार विशद रूप से विवेचन करने के लिये कहते हैं कि (णो उद्दिश्यन्ते णो समुद्दिश्यन्ते) ये चार ज्ञान गुरुजनों द्वारा शिष्यों के लिये उपदिष्ट नहीं होते हैं—और न गुरुजन उनसे ऐसा कहते हैं । कि तुम इनका स्थिररूप से परिचय करो (णो अणुणविज्जन्ति) इन्हें अच्छी तरह से निश्चित कर हृदय में धारण करो तथा दूसरों को भी इन्हें पढाओ अथवा—ये आभिनिबोधिक और अवधि आदि ज्ञान स्थाप्य हैं—गुरुजनों के ये आधीन नहीं हैं इस कारण उद्देश आदि विषयभूत नहीं हैं इसलिये स्थापनीय

विषयभूत पदार्थोंमें साक्षात् प्रवर्त्तक अने निवर्त्तक होय छे जे के अन्य ज्ञान पण पदार्थोंना स्वरूपने बोध करावे छे जरां, परन्तु तेजो श्रुतज्ञानने आधार दीधा बिना पोताना विषयभूत हेयोपादेय विषयथी साक्षात् रूपे निवर्त्तक पणु होतां नथी. अने तेमां प्रवर्त्तक पणु होतां नथी. तेथी ते ज्ञानेने अही उद्देश समुद्देश आदिमां विचार करवामां आये नथी. ओज विषयनुं विशदरूपे विवेचन करवा निमित्ते सूत्रकार कहे छे के—

(णो उद्दिश्यन्ते णो समुद्दिश्यन्ते) ते चार ज्ञान गुरुजनों द्वारा शिष्योंने उपदिष्ट थतां नथी, अने गुरुजन तेमने ओवु पणु कहेता नथी के तमे तेमने स्थिर रूपे परिचय करे, (णो अणुणविज्जन्ति) तेमने सारी रीते निश्चय कराने हृदयमां धारणु करे तथा अन्यने पणु तेनुं अध्ययन करावे.

अथवा—आभिनिबोधिक, अवधिज्ञान अने ज्ञेयज्ञान स्थाप्य छे, ते चार ज्ञाने गुरुजनोंने

અનેકાર્થત્વાદતિગંભીરત્વાદ્ વિવિધમન્ત્રાદ્યતિશયસમ્પન્નત્વાચ્ચ ગુરુપદેશસાપેક્ષમ્, અતઃ એવ ગુરોરન્તિકે ઉદ્દેશાદિવિધિનાં પરમકલ્યાણકારિ શ્રુતમેવ ગૃહ્યતે । આભિ-
નિવોધિકાદીનિ તુ તત્તદાવરણીયકર્મક્ષયોપશમાભ્યાં સ્વતઃ એવ જાય તે,
અતઃ તુ ઉદ્દેશાદિક્રમપેક્ષન્તે । અતઃ એવ-આભિનિવોધિકસ્ય અવધ્યાદીનાં ચ ઉદ્દેશા-
દ્યો ન ક્રિયન્તે, કિન્તુ શ્રુતજ્ઞાનસ્ય ઉદ્દેશઃ=ઉદ્દિશ્યતે इत्युद्देशः=इदमध्ययनादि
ત્વયા પઠિતવ્યમિતિ ગુરોરુપદેશરૂપં વચનમ્ । સમુદ્દેશઃ=‘इदमधीतसूत्रादिकं स्थिर-
परिचितं कुरु’ इति ગુરોરુપદેશવચનમ્ । અનુજ્ઞા-‘इदं धारय अन्यांश्च अध्यापयेति

हैं-अव्याख्येय हैं । परन्तु जो श्रुतज्ञान है वह तो अनेक अर्थवाला होने से,
अति गंभीरता युक्त होने से, और विविध प्रकार के मन्त्रादिकों के अतिशय
से समन्वित होने से गुरुजनों के उपदेश की अपेक्षावाला है । इसलिये गुरु-
जन के समीप उद्देश आदिरूप विधिपूर्वक परम कल्याणकारी श्रुत ही ग्रहण
किया जाता है । अवशिष्ट जो आभिनिवोधिक आदिक ज्ञान हैं वे तो अपने
२ आवरणीय कर्म के क्षयोपशम और क्षय से स्वतः ही आविर्भूत हो जाया
करते हैं । ये उद्देश, समुद्देश आदिरूप क्रम की अपेक्षा अपनी आविर्भूति-
उत्पत्ति-में नहीं रखते हैं । इसलिये आभिनिवोधिक ज्ञान और अवधिज्ञानों
के उद्देश आदि नहीं किये जाते हैं । किन्तु जो (सुयनाणस्स) श्रुतज्ञान है-
उसका ही (उद्देशो) उद्देश-इस अध्ययन आदि-को तुम्हें पढ़ना चाहिये इस
प्रकार का गुरु का उपदेशरूप वचन, (समुद्देशो) समुद्देश-ये पठित सूत्रादिक
त्रि मृत न हो जावे इसलिये इन्हें स्थिररूप से परिचित करो बार २ इनका
पाठ करो इस प्रकार का गुरु का उद्देशरूपवचन (अणुण्णा) अनुज्ञा हृदय

આધીન નથી, તે કારણે તે ચારે જ્ઞાન ઉદ્દેશ આદિના વિષયભૂત નથી. તેથી તે ચારે જ્ઞાનોને
સ્થાપનીય-અવ્યાખ્યેય કહેવામાં આવેલ છે. પરન્તુ શ્રુતજ્ઞાન તો અનેક અર્થવાળું
હોવાથી, અતિ ગંભીરતા યુક્ત હોવાથી, અને વિવિધ પ્રકારના મન્ત્રાદિકોના અતિ-
શયેથી સમન્વિત (યુક્ત) હોવાથી ગુરુજનોના ઉપદેશની અપેક્ષાવાળું છે. તે કારણે
ગુરુજનોની સમીપે ઉદ્દેશ આદિરૂપ વિધિપૂર્વક પરમ કલ્યાણકારી શ્રુત જ ગ્રહણ
કરવામાં આવે છે. બાકીના આભિનિવોધિક આદિ જે ચાર જ્ઞાનો છે તે તો પોતા
પોતાના આવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમ અને ક્ષયથી પોતાની જાતે જ અવિર્ભૂત
(પ્રકટ) થઈ જાય છે. તે ચારે જ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં આ ઉદ્દેશ સમુદ્દેશ આદિરૂપ
કર્મની અપેક્ષા રહેતી નથી. તેથી આભિનિવોધિક જ્ઞાન અને અવધિજ્ઞાન આદિ
જ્ઞાનોના ઉદ્દેશ કરવામાં આવતા નથી પરંતુ જે (સુયનાણસ્સ ઉદ્દેસો) શ્રુતજ્ઞાન
છે. તેના જ ઉદ્દેશ, (સમુદ્દેસો) સમુદ્દેશ, (અણુણ્ણા) અનુજ્ઞા (અણુઓગો ય) અને
અનુયોગ (પવત્તદ) હોય છે-અન્ય જ્ઞાનોના ઉદ્દેશ, સમુદ્દેશ આદિ હોતા નથી.

શિષ્યં પ્રતિ ગુરોરુપદેશવચનમ્ । અનુયોગઃ—ભગવદુક્તાનુરૂપતા ચ પ્રવર્ત્તે । શ્રુત-
જ્ઞાનસ્યૈવ ઉદ્દેશઃ સમુદ્દેશઃ અનુજ્ઞા અનુયોગશ્ચ ભવતિ, નાન્યેષામિતિભાવઃ ॥સૂ.૦૨॥

મૂલમ્—જહ સુચનાણસ્સ ઉદ્દેસો સમુદ્દેસો અણુગ્ગણા અણુઓગો
ય પવત્તહ કિં અંગપવિટ્ઠસ્સ ઉદ્દેસો સમુદ્દેસો અણુગ્ગણા અણુઓગો
ય પવત્તહ ? કિં અંગવાહિરસ્સ ઉદ્દેસો સમુદ્દેસો અણુગ્ગણા અણુઓગો

મેં इनका धारणरूप संस्कार जमाओ, और दूसरों के लिये इन्हें पढाओं इस प्रकार का गुरु का उपदेशरूपवचन, (अणुओगो य) और अनुयोग भगवदुक्तानुरूपता (पवत्तइ) ये सब होते हैं । अन्य ज्ञानों के नहीं ।

भावार्थ—श्रुतज्ञान के अतिरिक्त अवशिष्ट चार ज्ञानों में उद्देश, समुद्देश, अनुज्ञा और अनुयोग ये चार बातें नहीं होती हैं । क्यों कि इन ज्ञानों में गुरु के उपदेश से जन्यत्व की अपेक्षा नहीं है । ये तो अपने २ आवरण-कर्मों के क्षय क्षयोपशम के अनुसार उत्पन्न होते हैं । यद्यपि तज्ज्ञान भी अपने आवरणकर्म के क्षयोपशम से ही उत्पन्न होता है—फिर भी उस में गुरु-पदेश की अपेक्षा से जन्यता मानी गई है । अतः उसमें उद्देश आदि होते हैं । ॥सू.०२॥

આ અધ્યયન આદિનો તમારે અભ્યાસ કરવો જોઈએ, આ પ્રકારના ગુરુના ઉપદેશરૂપ વચનને ઉદ્દેશ કહે છે. આ પઠિત સૂત્રાદિ ભૂલી ન જવાય તે મ'ટે સ્થિર ચિત્તે તેમનો પરિચય કરો. વારંવાર તેનો પાઠ કરો, આ પ્રકારે । ગુરુના વચનોને સમુદ્દેશ કહે છે.

હૃદયમાં આ સૂત્રને કદી પણ વિસ્મૃત ન થાય એવી રીતે ધારણ કરો. અને અન્યને તેનું અધ્યયન કરાવો, આ પ્રકારના ગુરુના ઉપદેશરૂપ વચનોને અનુજ્ઞા કહે છે. ભગવદુક્તાનુરૂપતાને અનુયોગ કહે છે.

ભાવાર્થ—શ્રુતજ્ઞાન સિવાયના જે ચાર જ્ઞાનો છે તેમાં ઉદ્દેશ, સમુદ્દેશ, અનુજ્ઞા અને અનુયોગનો—(આ ચાર વાતનો) સદ્ભાવ હોતો નથી, કારણ કે તે જ્ઞાનોની ઉત્પત્તિ ગુરુના ઉપદેશને લીધે સંભવી શકતી નથી. તે ચાર જ્ઞાનોની ઉત્પત્તિ તો ત્યારે જ થાય છે કે જ્યારે તે પ્રત્યેક જ્ઞાનના આવારક કર્મોનો ક્ષયોપશમ અથવા ક્ષય થઈ જાય છે. કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ ત્યારે જ થાય છે કે જ્યારે જ્ઞાનવરણીય કર્મોનો સંપૂર્ણતઃ ક્ષયોપશમ થવાથી જ તે જ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે. જો કે શ્રુતજ્ઞાન પણ તેનું આવરણ કરનારા કર્મના ક્ષયોપશમથી જ ઉત્પન્ન થતું હોય છે. છતાં પણ તેમાં ગુરુના ઉપદેશની અપેક્ષાએ જન્યતા માનવામાં આવી છે. તેથી જ શ્રુતજ્ઞાનમાં ઉદ્દેશ સમુદ્દેશ આદિનો સદ્ભાવ રહે છે. ॥ સૂ. ૨ ॥

ય પવત્તઈ ? અંગપવિટ્ઠસ્સ વિ ઉદ્દેસો જાવ પવત્તઈ, અણંગપવિટ્ઠસ્સ વિ ઉદ્દેસો જાવ પવત્તઈ । ઇમં પુણ પટ્ટવણં પહુચ્ચ અણંગપવિટ્ઠસ્સં અણુઓગો ॥ ૩ ॥

છાયા—યદિ શ્રુતજ્ઞાનસ્ય ઉદ્દેશઃ, સમુદ્દેશઃ, અનુજ્ઞા, અનુયોગશ્ચ પ્રવર્તતે કિમ્ અણ્ગપ્રવિષ્ટસ્ય ઉદ્દેશઃ, સમુદ્દેશઃ અનુજ્ઞા અનુયોગશ્ચ પ્રવર્તતે ? કિમ્ અણ્ગવાહ્યસ્ય ઉદ્દેશઃ સમુદ્દેશઃ અનુજ્ઞા, અનુયોગશ્ચ પ્રવર્તતે ? અણ્ગપ્રવિષ્ટસ્યાપિ ઉદ્દેશો યાવત્ પ્રવર્તતે, અનણ્ગપ્રવિષ્ટસ્યાપિ ઉદ્દેશો યાવત્ પ્રવર્તતે । इदं पुनः प्रस्थापनं प्रतीत्य अनङ्गप्रविष्टस्य अनुयोगः ॥सू० ३॥

ટીકા—‘જઈ સુચનાણસ્સ’ ઇત્યાદિ—

યદિ શ્રુતજ્ઞાનસ્ય ઉદ્દેશઃ સમુદ્દેશઃ અનુજ્ઞા અનુયોગશ્ચ પ્રવર્તતે તર્હિ સ ઉદ્દેશાદિઃ કિમ્ અણ્ગપ્રવિષ્ટસ્ય-દ્વાદશાઙ્ગાન્તર્ગતસ્યાચારાઙ્ગાદેઃ પ્રવર્તતે, કિં વા અનણ્ગપ્રવિષ્ટસ્ય-અણ્ગવાહ્યસ્ય દશવૈકાલિકાદેઃ પ્રવર્તતે ? ઇતિ શિષ્યપ્રશ્નઃ । ગુરુ-રુત્તરયતિ—‘અંગપવિટ્ઠસ્સ વિ’ ઇત્યાદિના । હે શિષ્ય ! અણ્ગપ્રવિષ્ટસ્યાપિ ઉદ્દેશો

“જઈ સુચનાણસ્સ” ઇત્યાદિ

શબ્દાર્થ—(જઈ) યદિ (સુચનાણસ્સ) શ્રુતજ્ઞાનમાં (ઉદ્દેસો) ઉદ્દેશ (સમુદ્દેસો) સમુદ્દેશ, (અણુણ્ણા) અનુજ્ઞા (ય) ઓર (અણુઓગો) અનુયોગ इन की (पवत्तइ) प्रवृत्ति होती है तो (किं) क्या (अंगपविट्ठस्स) जो अंगप्रविष्ट श्रुत है उसमें (उद्देशो) इन उद्देश, (समुद्देशो) समुद्देश, (अणुण्णा) अनुज्ञा (य) और (अणुओगो) अनुयोग की (पवत्तइ) प्रवृत्ति होती है ? क्या अथवा जो (अंगवाहिरस्स) अंगवाह्य श्रुतज्ञान है उसमें (उद्देशो समुद्देशो अणुण्णा अणुओगो य पवत्तइ) उद्देश, समुद्देश, अनुज्ञा और अनुयोग इनकी प्रवृत्ति होती है क्या ? उत्तर—(अंगपविट्ठस्स) अंग प्रविष्ट जो आचाराङ्गादि श्रुत है उनमें (वि) भी (उद्देशो य जाव

“જઈ સુચનાણસ્સ” ઇત્યાદિ

શબ્દાર્થ—(જઈ) જો (સુચનાણસ્સ) શ્રુતજ્ઞાનમાં (ઉદ્દેસો) ઉદ્દેશ, (સમુદ્દેસો) સમુદ્દેશ, (અણુણ્ણા) અનુજ્ઞા (ય) અને (અણુઓગો પવત્તઈ) અનુયોગની પ્રવૃત્તિ (સહભાવ) થાય છે, તો (કિં અંગપવિટ્ઠસ્સ) શું જે અંગપ્રવિષ્ટ શ્રુત છે તેમાં (ઉદ્દેસો, સમુદ્દેસો, અણુણ્ણા ય અણુઓગો પવત્તઈ) એ ઉદ્દેશ, સમુદ્દેશ, અનુજ્ઞા અને અનુયોગની પ્રવૃત્તિ થાય છે ? કે જે (અંગવાહિરસ્સ) અંગબાહ્ય શ્રુતજ્ઞાન છે તેમાં (ઉદ્દેસો, સમુદ્દેસો અણુણ્ણા અણુઓગો ય પવત્તઈ) ઉદ્દેશ, સમુદ્દેશ, અનુજ્ઞા અને અનુયોગની પ્રવૃત્તિ થાય છે ?

ઉત્તર—(અંગપવિટ્ઠસ્સ વિ ઉદ્દેસો જાવ પવત્તઈ) આચારાંગ આદિ જે અંગ

યાવત્ પ્રવર્ત્તે, અનંગપ્રવિષ્ટસ્યાપિ ચ ડ શો યાવત્ પ્રવર્ત્તે । અત્ર શાસ્ત્રે પુનઃ
 ઇદં=પ્રસ્તુતં પ્રસ્થાપનં—પ્રારમ્ભં પ્રતીત્ય આશ્રિત્ય અનંગપ્રવિષ્ટસ્ય અનુયોગઃ પ્રવર્ત્તે । સૂ. ૩
 મૂલમ્—જઈ અંગપવિટ્વસ્સ અણુઓગો, કિં કાલિયસ્સ અણુ-
 ઓગો ? ઉક્કાલિયસ્સ અણુઓગો ? । કાલિયસ્સ વિ અણુઓગો,
 ઉક્કાલિયસ્સ વિ અણુઓગો । ઇમં પુણપટ્ટવણં પહુચ્ચ ઉક્કાલિયસ્સ
 અણુઓગો ॥ સૂ. ૪ ॥

છાયા—યદિ અનંગપ્રવિષ્ટસ્ય અનુયોગઃ, કિં કાલિકસ્ય અનુયોગઃ ? ઉત્કા-
 લિકસ્યાનુયોગઃ ? કાલિકસ્યાપિ અનુયોગઃ, ઉત્કાલિકસ્યાપિ અનુયોગઃ । ઇદં
 પુનઃ પ્રસ્થાપનં પ્રતીત્ય ઉત્કાલિકસ્યાનુયોગઃ ॥ સૂ. ૪ ॥

ટીકા—‘જઈ’ ઇત્યાદિ—

યદિ અનંગપ્રવિષ્ટસ્ય અનુયોગઃ કિં કાલિકસ્યાનુયોગઃ ? કિં વા ઉત્કા-
 લિકસ્યાનુયોગઃ ? ઇતિ શિષ્યપ્રશ્નઃ । તત્ર-કાલેન નિર્વૃત્તં કાલિકમ્ । કાલે પ્રથમ-

પવિ તઈ] ઇન ઉદ્દેશ સમુદ્દેશ આદિ કી પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ, તથા “અંગપવિટ્વસ્સ વિ જા ’
 અનંગ પ્રવિષ્ટ દશવૈકાલિક આદિ સૂત્ર હૈં ડનમૈં મી (ઉદ્દેસો જાવ પવત્તઈ) ઉદ્દેસ
 આદિ કી પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ । (ઇમં પુણ પટ્ટવણં પહુચ્ચ) ઇસ શાસ્ત્ર મૈં યહ પ્રારંભ કી
 અપેક્ષા લેકર અનંગ પ્રવિષ્ટ મૈં અનુયોગ પ્રવર્તિત હોતા હૈં ંસા કહા ગયા હૈં । ॥ સૂત્ર ૩ ॥

“જઈ અંગપવિટ્વસ્સ ઇત્યાદિ ।”

શબ્દાર્થ—(જઈ) યદિ (અંગપવિટ્વસ્સ અણુઓગો) અનંગ પ્રવિષ્ટ શ્રુત મૈં
 અનુયોગ કી પ્રવૃત્તિ હોતી હૈં તો (કિં) કયા (કાલિયસ્સ અણુઓગો ?) કાલિક
 મૈં અનુયોગ પ્રવૃત્તિ હોતી હૈં કયા ? યાં (ઉક્કાલિયસ્સ અણુઓગો) ઉત્કાલિક

પ્રવિષ્ટ શ્રુત છે તેમા ઉદ્દેશ, સમુદ્દેશ, અનુશા અને અનુયોગ પ્રવર્તે છે, તથા
 (અંગપવિટ્વસ્સ વિ ઉદ્દેસો જાવ પવત્તઈ) દશ વૈકાલિક આદિ જે અનંગપ્રવિષ્ટ
 શ્રુત છે તેમાં પણ ઉદ્દેશ, સમુદ્દેશ, અનુશા અને અનુયોગ પ્રવર્તે છે, આ રીતે
 અંગપ્રવિષ્ટ અને અંગણાદ્ય, એ બન્ને પ્રકારના શ્રુતમાં ઉદ્દેશ આદિ ચારેનો સદ્ભાવ
 સમજવો. (ઇમં પુણ પટ્ટવણં પહુચ્ચ) આ શાસ્ત્રમાં આ પ્રારંભની અપેક્ષાએ એવું
 કહેવામાં આવ્યું છે કે અનંગ પ્રવિષ્ટ શ્રુતમાં અનુયોગની પ્રવૃત્તિ થાય છે. ॥ સૂ. ૩ ॥

“જઈ અંગપવિટ્વસ્સ” ઇત્યાદિ— ॥ સૂ. ૪ ॥

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન (જઈ અંગપવિટ્વસ્સ અણુઓગો) જે અનંગપ્રવિષ્ટ શ્રુતમાં અનુ-
 યોગની પ્રવૃત્તિ થાય છે, તો (કિં કાલિયસ્સ અણુઓગો ?) શું કાલિક શ્રુતમાં

ચરમપૌરુષીલક્ષણે અસ્વાધ્યાયકાલં વિહાય પઠ્યતે યત્ તત્કાલિકમ્ । તચ્ચ ઉત્તરાધ્યયનાદિકં, યદિહ દિવસરાત્રિ પ્રથમચરમપૌરુષીદ્વયે એવ પઠ્યતે । ઉર્ધ્વકાલાત્ પઠ્યતે, હત્યુત્કાલિકમ્ । અસ્વાધ્યાયકાલં વિહાય દિવસે રાત્રૌ ચ સર્વસ્મિન્ યામે યત્ પઠ્યતે તદુત્કાલિકમિત્યર્થઃ કાલિકસૂત્રાણિ— (૧) ઉત્તરાધ્યયન—(૨) દશાશ્રુતસ્કન્ધ—(૩) બૃહત્કલ્પ—(૪) વ્યવહાર—(૫) નિશીથ—(૬) જમ્બૂદ્વીપપ્રજ્ઞપ્તિ—(૭) ચન્દ્રપ્રજ્ઞપ્તિ—(૮) નિરયાવલિકા—(૯) કલ્પાવતંસિકા—(૧૦) પુષ્પિતા (૧૧) પુષ્પચૂલિકા—(૧૨) વૃષ્ણિદશાદીનિ અઙ્ગનાહ્યાનિ, આચારાઙ્ગાદીનિ

મં અનુઓગ કી પ્રવૃત્તિ હાતી હૈ ? (કાલિયસ્સ વિ અણુઓગો ઉત્કાલિયસ્સ વિ અણુઓગો) ઉત્તરઃ—કાલિકકા મી અનુઓગ હોતા હૈ ઓર ઉત્કાલિક કા મી અનુઓગ હોતા હૈ । (ઈમં પુણ પઠ્ઠવણં પઠ્ઠુચ્ચ ઉત્કાલિયસ્સ અણુઓગો) ઇસ શાસ્ત્ર મં યહ પ્રારંભ કી અપેક્ષા લેકર ઉત્કાલિક કા અનુઓગ કહા હૈ ।

ભાવાર્થ—અનંગ પ્રવિષ્ટ શ્રુત કે અનેક ભેદ કહે ગયે હૈ—અનંમં કાલિક ઉત્કાલિક શ્રુત હૈ । પ્રથમ પૌરુષી ઓર અન્તિમ પૌરુષીરૂપ વાલ મં જો અસ્વાધ્યાયકાલ કો છોડકર પઢા જાતા હૈ. વહ કાલિક શ્રુત હૈ । જૈસે—ઉત્તરાધ્યય ૧, દશાશ્રુતસ્કન્ધ ૨, બૃહત્કલ્પ ૩, વ્યવહાર ૪, નિશીથ, ૫ જંબૂદ્વીપ પ્રજ્ઞપ્તિ ૬, ચન્દ્રપ્રજ્ઞપ્તિ ૭, નિરયાવલિકા ૮, કલ્પાવતંસિકા ૯, પુષ્પિતા ૧૦, પુષ્પચૂલિકા ૧૧, વૃષ્ણિદશા આદિ યે સવ અંગનાહ્ય શ્રુત હૈ વે કાલિક શ્રુત હૈ । તથા આચારાં-

અનુઓગની પ્રવૃત્તિ થાય છે, કે (ઉત્કાલિયસ્સ અણુઓગો) ઉત્કાલિક શ્રુતમાં અનુઓગની પ્રવૃત્તિ થાય છે ?

ઉત્તર—(કાલિયસ્સ વિ અણુઓગો ઉત્કાલિયસ્સ વિ અણુઓગો) કાલિક શ્રુતમાં પણ અનુઓગની પ્રવૃત્તિ થાય છે અને ઉત્કાલિક શ્રુતમાં પણ અનુઓગની પ્રવૃત્તિ થાય છે, (ઈમં પુણ પઠ્ઠવણં પઠ્ઠુચ્ચ ઉત્કાલિયસ્સ અણુઓગો) આ શાસ્ત્રમાં આ પ્રારંભની અપેક્ષાએ ઉત્કાલિકનો અનુઓગ કહ્યો છે.

ભાવાર્થ—અનંગ પ્રવિષ્ટ શ્રુતના અનેક ભેદ કહ્યા છે. તેમાંના બે ભેદો આ પ્રમાણે છે—(૧) કાલિકશ્રુત અને (૨) ઉત્કાલિક શ્રુત.

પહેલી પૌરુષી (પહેલો પ્રહર) અને છેલ્લી પૌરુષી (છેલ્લો પ્રહર)૩૫ કાળમાં અસ્વાધ્યાયકાળ બે કહ્યો છે તેટલા કાળને છોડીને, જેનું અધ્યયન કરવામાં આવે છે, એવા શ્રુતને કાલિક શ્રુત કહે છે. કાલિક શ્રુત નીચે પ્રમાણે કહ્યા છે—

(૧) ઉત્તરાધ્યયન (૨) દશાશ્રુતસ્કન્ધ, (૩) બૃહત્કલ્પ, (૪) વ્યવહાર, (૫) નિશીથ (૬) જંબૂદ્વીપપ્રજ્ઞપ્તિ, (૭) ચન્દ્રપ્રજ્ઞપ્તિ, (૮) નિરયાવલિકા (૯) કલ્પાવતંસિકા, (૧૦) પુષ્પિતા, (૧૧) પુષ્પચૂલિકા (૧૨) વૃષ્ણિદશા વગેરે જે અંગનાહ્ય શ્રુત છે તેમનો કાલિકશ્રુતમાં સમાવેશ થાય છે, તથા આચારાંગાદિ જે ૧૧ અંગ છે તેમનો પણ

एकादशोज्ञानि च । इतोऽतिरिक्तान्यपि कालिकसूत्राणि नन्दिसूत्रे निर्दिष्टानि सन्ति, विच्छिन्नत्वान्नेह तानि निर्दिश्यन्ते । उत्कालिकसूत्राणि—(१) दशवैकालिकौ—(२) पपातिक—[३] राजप्रश्रीय—(४) जीवाभिगम—(५) प्रज्ञपना(६)—नन्दीसूत्रा—[७] नुयोगद्वारा—(८) वश्यक—(९) सूर्यप्रज्ञप्ति सूत्राणि । इतोऽन्यान्यप्युत्कालिकसूत्राणि नन्दिसूत्रे निर्दिष्टानि सन्ति, विच्छिन्नत्वान्नेह तानि निर्दिश्यन्ते । उत्तरयति—कालिकस्याऽप्यनुयोगः, उत्कालिकस्याप्यनुयोगः । पुनरत्र शास्त्रे इदं=प्रस्तुतं प्रस्थापनं=प्रारम्भं प्रतीत्य=आश्रित्य, उत्कालिकस्थानुयोगः ॥ सू. ४ ॥

मूलम्—जइ उक्कालियस्स अणुओगो, किं आवस्सगस्स अणुओगो ? आवस्सगवइरित्तस्स अणुओगो ? आवस्सगस्स वि अणुओगो,

गादि जो ११ अंग हैं ये भी कालिकश्रुत हैं । इन से अतिरिक्त और भी कालिक सूत्र हैं जिनका कथन नन्दिसूत्र में किया गया है । विच्छिन्न हो जाने के कारण हम उन्हें यहां निर्दिष्ट नहीं करते हैं । (१) दशवैकालिक, (२) औपपातिक, (३) राजप्रश्रीय (४) जीवाभिगम, (५) प्रज्ञापना (६) नन्दीसूत्र (७) अनुयोगद्वार (८) आवश्यक, (९) सूर्यप्रज्ञप्ति, ये सब उत्कालिकसूत्र हैं । इनसे अतिरिक्त और भी उत्कालिक सूत्र है । जिन्हें नन्दिसूत्र में निर्दिष्ट किया गया है, परन्तु वे सब विच्छिन्न हो चुके हैं अतः हम उन्हें यहां प्रकट नहीं करते हैं । उत्कालिक सूत्र अस्वाध्यायकाल को छोड़कर दिन में और रात्रि में जब चाहे तब हरएक समय में पढ़े जाते हैं । इस शास्त्र में उत्कालिक का अनुयोग ही प्रस्तुत होने से प्रकट किया गया है । ॥सूत्र ४॥

કાલિકશ્રુતમાં જ સમાવેશ થાય છે, તે સિવાય બીજાં કેટલાક કાલિકસૂત્રો પણ છે, જેમનું કથન નન્દિસૂત્રમાં કરવામાં આવ્યું છે. તે સૂત્રો વિચ્છિન્ન થઈ ગયેલા હોવાથી અહીં તેમનો નિર્દેશ કરવામાં આવ્યો નથી.

હવે ઉત્કાલિક સૂત્રોનાં નામ આપવામાં આવે છે—

(૧) દશવૈકાલિક, (૨) ઔપપાતિક, (૩) રાજપ્રશ્રીય, (૪) જીવાભિગમ, (૫) પ્રજ્ઞાપના, (૬) નન્દિસૂત્ર, (૭) અનુયોગદ્વાર, (૮) આવશ્યકસૂત્ર અને (૯) સૂર્યપ્રજ્ઞાપ્તિસૂત્ર, આ બધાં સૂત્રોનો ઉત્કાલિક શ્રુતમાં સમાવેશ થાય છે. આ સિવાય બીજાં કેટલાક ઉત્કાલિક સૂત્રો છે, જેમનાં નામ નન્દિસૂત્રમાં આપવામાં આવ્યાં છે. પરન્તુ તે સૂત્રો વિચ્છિન્ન થઈ ગયેલાં હોવાથી તેમનાં નામો અહીં પ્રકટ કર્યાં નથી. અસ્વાધ્યાય કાળ સિવાયના કોઈ પણ કાળે—દિવસે અથવા રાત્રે, જ્યારે ઇચ્છા થાય ત્યારે ઉત્કાલિકસૂત્રોનું અધ્યયન થઈ શકે છે. આ શાસ્ત્રમાં ઉત્કાલિકનો અનુયોગ જ પ્રસ્તુત હોવાથી પ્રકટ કરવામાં આવ્યો છે. ॥ સૂત્ર ૪ ॥

આવસ્સગવહરિત્તસ્સ વિ અણુઓગો ! इमं पुण पट्ठवणं पडुच्च आव-
स्सगस्स अणुओगो ॥ सू० ५ ॥

છાયા-યદિ ઉત્કાલિકમ્ય અનુયોગ, કિમાવશ્યકમ્ય અનુયોગઃ ? આવ-
શ્યકવ્યતિરિક્તમ્ય અનુયોગઃ ? આવશ્યકમ્યપિ અનુયોગઃ, આવશ્યકવ્યતિરિક્ત-
મ્યપિ અનુયોગઃ । इदं पुनःप्रथानं प्रतीत्य आवश्यकस्य अनुयोगः ॥सू० ५॥

ટીકા-‘જઈ’ इत्यादि-

यदि उत्कालिकम्य अनुयोगः, किमावश्यकम्य अनुयोगः ? आवश्यक
व्यतिरिक्तम्य वाऽनुयोगः ? इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरयति-‘आवस्सगस्स वि’
इत्यादिना । अनुयोग आवश्यकस्यापि भवति, आवश्यकव्यतिरिक्तस्यापि भवति ।

“जइ उक्कालिय स” इत्यादि ।

शब्दार्थ—(जइ) यदि (उक्कालिय स) उत्कालिक श्रुत का (अणुओगो)
अनुयोग होता है तो (किं) क्या (आवस्सग स अणुओगो ?) आवश्यक का
अनुयोग होता है ? या (आव सगवहरित्तस्स अणुओगो) आवश्यक से व्यति-
रिक्त का अनुयोग होता है ? उत्तर—(आवस्सगस्स वि अणुओगो) आवश्यक
का भी अनुयोग होता है । और (आव सगवहरित्त स वि अणुओगो) जो
आवश्यक से भिन्न है उनका भी अनुयोग होता है । (इमं पुण पट्ठवणं पडुच्च
आव सगस्स अणुओगो) इस शास्त्र में यह प्रारंभ की अपेक्षा लेकर आवश्यक
का अनुयोग कहा है ।

भावार्थ—शिष्य पूछ रहा है कि हे भद्रंत ! यदि उत्कालिक श्रुत का
अनुयोग होता है तो किस उत्कालिक श्रुत का—आवश्यक का या आवश्यक

“जइ उक्कालियस्स” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન—(જઈ ઉક્કાલિયસ્સ અણુઓગો) જે ઉત્કાલિકશ્રુતનો અનુ-
યોગ થાય છે, તો (કિં આવસ્સગસ્સ અણુઓગો) શું આવશ્યકનો અનુયોગ થાય છે કે
(આવસગસગવહરિત્તસ અણુઓગો ?) આવશ્યકથી ભિન્ન હોય એવાં શ્રુતનો
અનુયોગ થાય છે.

ઉત્તર—(આવસ્સગસ્સ વિ અણુઓગો) આવશ્યકનો પણ અનુયોગ થાય છે, અને
(આવસ્સગવહરિત્તસ્સ વિ અણુઓગો) જે આવશ્યકથી ભિન્ન છે તેમનો પણ અનુ-
યોગ થાય છે. (इमं पुण पट्ठवणं पडुच्च आव सगस्स अणुओगो) આ શાસ્ત્રમાં આ
પ્રારંભની અપેક્ષાએ આવશ્યકનો અનુયોગ કહ્યો છે.

ભાવાર્થ—શિષ્ય અહીં એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે “હે ભગવન ! જે ઉત્કાલિક
શ્રુતનો અનુયોગ થાય છે, તો કયા ઉત્કાલિક શ્રુતનો અનુયોગ થાય છે ? શું આવશ્યકનો
અનુયોગ થાય છે ? કે આવશ્યક સિવાયના જે ઉત્કાલિક શ્રુત છે ? તેમનો અનુયોગ થાય છે ?”

पुनरत्र शास्त्रे इदं—प्रस्तुतं प्रस्थापनं—प्रारम्भं प्रतीत्य—आश्रित्य आवश्यक—ग्रमणैः
श्रावकैश्चोभयकालमवश्यकरणीयस्य सामायिकादिषडध्ययनात्मकस्य सकलसामाचा-
रीमूलस्यावश्यकसूत्रस्यानुयोगः प्रवर्तते । यद्यप्यावश्यकसूत्रे उद्देशसमुद्देशानुज्ञा
वर्तन्ते तथाऽप्यत्र सूत्रे उद्देशादिकं त्रयं विहायानुयोग एवाधिक्रियते, तथावसरप्राप्त
त्वात् । अनुयोगस्य वक्तव्यताचैवम्—

“निक्रवेवेगद्वं निरुक्तिं विही, पविर्त्ती य केण वा कस्स ? ।

तदार मेयलक्षणं,—तदरिह परिसा च सुत्तथो ॥ ”

छाया—निक्षेप एकार्थी निरुक्तिः विधिः प्रवृत्तिश्च केन वा करय ।

तद्द्वाराणि भेदा लक्षणं, तदर्ही परिषच्च सूत्रार्थः ॥ इति ॥

अत्र व्याख्या—निक्षेपः=नामस्थापनादिकः । एकार्थः=पर्यायः—अनुयोगो

से अतिरिक्त का—तब उत्तर देते हुए आचार्य कहते हैं कि इन दोनों का
भी अनुयोग होता है । यहां पर उद्देश, समुद्देश और अनुज्ञा का कथन कर
के सूत्रकार ने जो आवश्यक में केवल अनुयोग का कथन किया है वह अनु-
योग को अवसर प्राप्त होने से किया है । यह आवश्यक साधु साध्वी और
श्रावक श्राविका को प्रातः और सायंकाल दोनों समय अवश्य करने योग्य
कहा गया है । सामायिक आदि के भेद से यह आवश्यक छह प्रकार का है ।
इसके ऊपर षडध्ययनात्मक एक स्वतन्त्र सूत्र रचा गया है—जिसका नाम आव-
श्यक सूत्र है । यह सकल सामाचारी का मूल कारण है । अनुयोग के विषय
में वक्तव्यता इस प्रकार से है—

“निक्रवेवेगद्वं इत्यादि” नाम स्थापना आदिरूप से अनुयोग का कहना
यह अनुयोग का निक्षेप है । अनुयोग के पर्यायवाची शब्दों को कहना—जैसे

आ प्रश्नो उत्तर आपत्तां आचार्य कहे छे के “आ जन्नेनो अनुयोग छे ?”

अही उद्देश, समुद्देश अने अनुज्ञानुं कथन करीने सूत्रकारे आवश्यकतां केवण
अनुयोगनुं न न कथन कथुं छे ते अनुयोगना प्राप्त अवसरनी अपेक्षाये कथुं
छे. आ आवश्यक साधु साध्वी, श्रावक अने श्राविकाये प्रातः अने सायंकाण, अ
जन्ने समये करवा योग्य कहेल छे. सामायिक आदिना लेहथी आ आवश्यक छ
प्रकारनो कह्यो छे. आ विषयने अनुलक्षीने छ अध्ययनवाणुं अके स्वतन्त्र सूत्र
रचवाभां आबुं छे. ते सूत्रनुं नाम “आवश्यक सूत्र” छे. ते सकल सामाचारीनुं
भूण कारणु छे. अनुयोगना विषयभां आ प्रमाणे वक्तव्यता छे,

“निक्रवेवेगद्वं” इत्यादि—नाम, स्थापना आदिरूपे अनुयोगनुं कथन थनुं तेनुं
नाम अनुयोगनो निक्षेप छे. अनुयोगना पर्यायवाची शब्दोनुं कथन करवुं—जेभ के

નિયોગો ભાષા વિભાષા વાર્તિકં ચૈતેજ્ઞયોગ પર્યાયાઃ । નિરુક્તિઃ=નિર્વચનમ્, સા
 ચૈવમ્-તીર્થઙ્કરપ્રરૂપિતાર્થસ્ય ગણધરોક્તશબ્દસમૂહરૂપસૂત્રેણ સહ અનુ=અનુકૂલો
 નિયતો વા યોગઃ સંબન્ધોજ્ઞયોગઃ । અનુયોગશબ્દસ્ય વિસ્તૃતવ્યાખ્યા-ઉપા-
 સકદશાઙ્કસૂત્રસ્ય મત્કૃતાયામગારધર્મસંજીવન્યાં ટીકાયાં વિલોકનીયા । વિધિઃ=
 સૂત્રાર્થવચનવિધિઃ । તત્ર-ગુરુણાં પ્રથમં શિષ્યેભ્યઃ સૂત્રાર્થો વક્તવ્યઃ । તદનુ સોઽર્થો
 નિર્યુક્તિમિશ્રો વક્તવ્યઃ । સૂત્રે નિર્યુક્તાનાં-નિશ્ચયેન યુક્તાનામેવાર્થાનાં યુક્તિપુરસ્કાર્થઃ
 શિષ્યેભ્યો વક્તવ્ય इत्यर्थः । ततः पुनरपि प्रसङ्गानुप्रसङ्गागतः सर्वोऽप्यर्थो वाच्यः । तदुक्तम्-

“सुत्तत्थो खलु पढमो बीयो निज्जुत्तिमीसिओ भणिओ ।

तइओ य निरवसेसो, एस विही होइ अणुओगे ॥”

અનુયોગ, નિયોગ, ભાષા, વિભાષા, વાર્તિક યહ શબ્દ અનુયોગ કે પર્યાયવાચક
 હૈ । નિરુક્તિપૂર્વક અનુયોગ વા અર્થ કહના યહ અનુયોગ કી નિરુક્તિ હૈ ।
 ઇસ મેં તીર્થકરોં દ્વારા પ્રરૂપિત ઈર્થ કા ગણધરોક્ત શબ્દ સમૂહરૂપ સૂત્ર કે સાથ
 અનુકૂલ અથવા નિયત સંબન્ધ પ્રકટ કરના હોતા હૈ । સૂત્રાર્થ કહ ને કી પદ્ધતિ
 કા નામ વિધિ હૈ । ઇસમેં સર્વ પ્રથમ ગુરુ કો શિષ્ય કે લિયે સૂત્ર કા અર્થ
 સિખલાને કા વિધાન હૈ । બાદ મેં ઉસ શિક્ષિત અર્થ કો નિર્યુક્તિ સે મિશ્રિત
 કર શિષ્ય કો સિખલાના ચાહિયે અર્થાત્ નિશ્ચયયુક્ત પદાર્થોં કા હી-અર્થાત્
 વીતરાગ કથા સે જિન પદાર્થોં કા પદોં કે અર્થોં કા ગુરુ કે
 દ્વારા શિષ્યને નિશ્ચય કર લિયા હૈ એસે હી પદાર્થોં કા યુક્તિ પ્રદાનપૂર્વક
 શિષ્ય કો ઔર અર્થ કહના ચાહિયે, ઇસકે બાદ પ્રસંગ અનુપ્રસંગ કો લેકર
 ઔર બી જો ૨ અર્થ હોતા હો-ઉસ સબ કો પ્રકટ કરના ચાહિયે-ઇન સબ

અનુયોગ, નિયોગ, ભાષા, વિભાષા વાર્તિક, આ બધા પદો અનુયોગના પર્યાયવાચક
 શબ્દો છે. નિરૂક્તિપૂર્વક અનુયોગનો અર્થ કહેવો તેનું નામ “અનુયોગ નિરૂક્તિ
 દર્શક અનુયોગનો અર્થ કહેવો તેનું નામ “અનુયોગની નિરૂક્તિ” છે. તેમાં તીર્થકરો
 દ્વારા પ્રરૂપિત અર્થનો ગણધરોક્ત શબ્દસમૂહરૂપ સૂત્રની સાથે અનુકૂળ અથવા નિયત
 સંબંધ પ્રકટ કરવાનો હોય છે. સૂત્રાર્થ કહેવાની પદ્ધતિનું નામ વિધિ છે. તેમાં
 શરૂએ સૌથી પહેલાં તે શિષ્યને સૂત્રનો અર્થ શિખવવો જોઈએ, એવું વિધાન છે.
 ત્યારબાદ શિખવવામાં આવેલા તે અર્થને નિર્યુક્તિથી મિશ્રિત કરીને શિષ્યને શિખ-
 વવો જોઈએ. એટલે કે નિશ્ચયયુક્ત પદાર્થોના જ [વીતરાગ દ્વારા પ્રરૂપિત જે પદાર્થોના
 પદોના અર્થોના ગુરુની મદદથી શિષ્યે નિશ્ચય કરી લીધો હોય એવાં જ
 પદાર્થોના] યુક્તિ પ્રદાનપૂર્વક જે કોઈ બીજો અર્થ થતો હોય તે પણ શિષ્યને કહેવો
 જોઈએ, ત્યારબાદ પ્રસંગ અને અનુપ્રસંગને અનુલક્ષીને તેના બીજાં જે જે અર્થ
 થતાં હોય તે સઘળાં અર્થ પણ પ્રકટ કરવા જોઈએ. આ બધી બાબતોને અનુયોગમાં

છાયા-સૂત્રાર્થઃ સ્વલુ પ્રથમો, દ્વિતીયો ન્યુક્તિમિશ્રિતો મણિતઃ ।

તૃતીયશ્ચ નિરવશેષઃ, એષ વિધિર્ભવત્યનુયોગે ॥ ઇતિ ॥

વિસ્તરતઃ વચ્ચન્ન । તથા-અનુયોગસ્ય પ્રવૃત્તિઃ અત્ર ચત્વારો ભક્ત્તાઃ । તત્ર પ્રથમો ભક્ત્તઃ-ઉદ્યમી ગુરુરુદ્યમી શિષ્યઃ । દ્વિતીયો ભક્ત્તઃ-ઉદ્યમી ગુરુરનુદ્યમી શિષ્યઃ । તૃતીયો ભક્ત્તઃ-અનુદ્યમી ગુરુરુદ્યમી શિષ્યઃ । ચતુર્થો ભક્ત્તઃ-અનુદ્યમી ગુરુરનુદ્યમી શિષ્યઃ; અત્ર-પ્રથમભક્તેઽનુયોગસ્ય સર્વથા પ્રવૃત્તિર્ભવતિ, ચતુર્થભક્તે તુ સર્વથા નૈવ ભવતિ । દ્વિતીય તૃતીયયોસ્તુ કદાચિત્ પ્રવૃત્તિર્ભવત કદાચિન્નાપિ ભવતિ । તથાઽનુયોગઃ કેન કર્તવ્યઃ ? ઇતિ પ્રોચ્યતે-

કા અનુયોગ મેં સમાવિષ્ટ હૈ । યહી વાત તદુક્ત કરકે "સુત્તથો" ઇત્યાદિ-ગાથા દ્વારા પુષ્ટ કી હૈ । વિધિ સંબન્ધી વિસ્તાર અન્ય શાસ્ત્રોં મેં લિખા હૈ । અતઃ જિજ્ઞાસુ જન ઇસ વિષય કો વહાં સે જાન લેવેં અનુયાંગ કી પ્રવૃત્તિ મેં ચાર ભંગ હૈ—વે ઇસ પ્રકાર સે હૈ-

ઉદ્યમી ગુરુ ઉદ્યમી શિષ્ય યહ પ્રથમ ભંગ હૈ । ઉદ્યમી ગુરુ અનુદ્યમી શિષ્ય યહ દ્વિતીય ભંગ હૈ । અનુદ્યમી ગુરુ ઉદ્યમી શિષ્ય યહ તીસરા ભંગ હૈ । અનુદ્યમી ગુરુ અનુદ્યમી શિષ્ય યહ ચૌથા ભંગ હૈ । ઇન મેં સે જો પ્રથમ ભંગ હૈ ઉસમેં તો અનુયોગ કી સર્વથા પ્રવૃત્તિ હોના નિશ્ચિત હૈ । ચૌથે ભંગ મેં અનુયોગ કી પ્રવૃત્તિ વિલકુલ નહીં હોતી હૈ । દ્વિતીય ઓર તૃતીય ભંગ મેં અનુયોગ કી પ્રવૃત્તિ કમી હોતી હૈ ઓર કમી નહીં મી હોતી હૈ ।

સમાવી શકાય છે એજ વાત "સુત્તથો" ઇત્યાદિ ગાથાઓ દ્વારા પુષ્ટ કરવામાં આવી છે. વિધિ સંબન્ધી વિસ્તૃત કથન અન્ય શાસ્ત્રોમાં આપવામાં આવેલું છે, તો જિજ્ઞાસુ પાઠકોએ આ વિષયનું વિશેષ કથન ત્યાંથી વાચી લેવું જોઈએ. અનુયોગની પ્રવૃત્તિમાં નીચે પ્રમાણે ચાર ભાંગો (વિકલ્પો) છે—

(૧) ઉદ્યમીગુરુ અને ઉદ્યમી શિષ્ય, આ પહેલો ભાંગો છે.

(૨) ઉદ્યમી ગુરુ અને અનુદ્યમી શિષ્ય, આ બીજો ભાંગો છે.

(૩) અનુદ્યમી ગુરુ અને ઉદ્યમી શિષ્ય, ત્રીજો ભાંગો છે.

(૪) અનુદ્યમી ગુરુ અને અનુદ્યમી શિષ્ય, આ ચોથો ભાંગો છે.

આ ચાર વિકલ્પોમાંથી જે પહેલો વિકલ્પ બતાવ્યો છે તે વિકલ્પ પ્રમાણેની પરિસ્થિતિમાં તો અનુયોગની પ્રવૃત્તિ થવાનું કાર્ય સર્વથા નિશ્ચિત જ હોય છે. ચોથા વિકલ્પમાં બતાવ્યા પ્રમાણેની જગ્યાએ પરિસ્થિતિ હોય છે, ત્યારે અનુયોગની પ્રવૃત્તિ બિલકુલ ચાલી શકતી નથી. બીજા અને ત્રીજા વિકલ્પોમાં બતાવેલી પરિસ્થિતિમાં ક્યારેક અનુયોગની પ્રવૃત્તિ સંભવી પણ શકે છે અને ક્યારેક નથી પણ સંભવી શકતી.

“દેસ^૧ કુલ^૨ જાઈ^૩ રૂઘી^૪, સંહન^૫ની, ધિજ્જુ^૬ઓ અણાસંસી^૭ ।
 અવિકત્થ^૮નો અમાઈ^૯, સ્થિરપરિવાડી^{૧૦} ગહિયવકો^{૧૧} ॥ ૧ ॥
 જિયપરિસો^{૧૨} જિયનિદો^{૧૩}, મઙ્ગલ^{૧૪}થો દેસકાલભાવન્તૂ^{૧૫} ।
 આસન્નલલ્લપદ્મો^{૧૬}, નાનાવિહદેસભાસન્તૂ^{૧૭} ॥ ૨ ॥
 પંચવિદે^{૧૮} આચારે, જુત્તો^{૧૯} સુત્તત્થતદુભયવિહિન્તૂ^{૨૦} ।
 આહરણ^{૨૧} હેહ ઉવણય, નય^{૨૨} નિઉળો^{૨૩} ગાહણાકુસલો^{૨૪} ॥ ૩ ॥
 સસમયપરસમયવિઙ્ગ^{૨૫}, ગંભીરો^{૨૬} દિત્તિમં^{૨૭} સિવો^{૨૮} સોમો^{૨૯} ।
 ગુણસયકલિયો^{૩૦} જુત્તો, પવયણસારં^{૩૧} પરિકહેહં^{૩૨} ॥ ૪ ॥
 છાયા-દેશકુલજાતિરૂપી સંહનની, ધૃતિયુતઃ અનાશંસી ।
 અવિકત્થનઃ આમાયી, સ્થિરપરિપાટી ગૃહીતવાક્યઃ ॥૧॥
 જિતપરિપદ્ જિતનિદ્રો મધ્યસ્થો દેશકાલભાવજ્ઞઃ ।
 આસન્નલલ્લપ્રતિભો નાનાવિધદેશભાષાજ્ઞઃ ॥૨॥
 પંચવિધે આચારે, યુક્તઃ સત્ત્વાર્થતદુભયવિધિજ્ઞઃ ।
 આહરણહેતૂપનય, નય નિપુણો ગ્રાહણાકુશલઃ ॥૩॥
 સ્વસમયપરસમયવિદ્, ગમ્ભીરો દીપ્તિમાન્ શિવઃ સોમઃ ।
 ગુણશતકલિતો યુક્તઃ, પ્રવચનસારં પરિકથયિતુમ્ ॥૪॥

ગાથાર્થઃ—યો મુનિઃ દેશકાલકુલ જાતિરૂપી-દેશઃ=આર્યદેશઃ, કુલં=વિશુદ્ધઃ
 પિતૃવંશઃ, જાતિઃ=વિશુદ્ધો માતૃવંશઃ, રૂપં=શોભનાઽઽકૃતિઃ, એતાનિ
 ચત્વારિ સન્ત્યસ્યેતિ તથા ભવતિ । અર્થાદ્ યઃ આર્યદેશોત્પન્નઃ, વિશુદ્ધપિતૃમાતૃ-
 વંશોદ્ભવઃ, રૂપવાંશ્ચ ભવતિ । તથા સંહનની=દૃઢસંહનનવાન્ । દૃઢસંહનની હિ

અવ યહ કહા જાતા હૈ કિ યહ અનુયોગ કિસ પ્રકાર કે વિશેષણોં સે વિશિષ્ટ
 મુનિજન દ્વારા કિયા જાતા હૈ—“દેસકુલ જાઈ રૂઘી” ઇત્યાદિ દેશ—જો મુનિ આર્ય
 દેશ મેં ઉત્પન્ન હુઆ હો (૧) કુલ જાતિ શુદ્ધ હો જિસકા પિતૃવંશ ઓર જિસકા માતૃવંશ
 વિશુદ્ધ હો (૨) રૂપ—આકાર જિસકા શોભન હોં (૩) સંહનની—જો દૃઢ સંહનન
 વાલા હો (૪) ધૃતિ યુક્ત—અતિ ગહન મી અર્થ મેં જિસે કિસી મી પ્રકાર કી

હવે એ વાત પ્રકટ કરવામાં આવે છે કે કયા કયા ગુણોથી (વિશેષણોથી)
 સંપન્ન વિશિષ્ટ મુનિજનો દ્વારા આ અનુયોગમાં પ્રવૃત્તિ થઈ શકે છે—

“દેસકુલ જાઈ” ઇત્યાદિ—

(૧) જે મુનિ આર્યદેશમાં ઉત્પન્ન થયેલા હોય, (૨) જે મુનિના ગુણોમાં
 શુદ્ધ હોય—એટલે કે જેનો માતૃવંશ અને પિતૃવંશ વિશુદ્ધ હોય, (૩) રૂપ—જેમનો
 આકાર (રૂપાવ) સુદૃઢ હોય, (૪) સંહનની—જે મુનિ દૃઢ સંહનનવાળા હોય, (૫)

व्याख्यानादौ न श्राम्यतीति भावः । धृतियुतः—धृतिः=अतिगहनेष्वप्यर्थेषु निर्भ्रान्तता, परीषहोपसर्गसहने निश्चलता च, तथा युतः=युक्तः । अनाशंसी=वस्त्रसत्काराद्यनाकाङ्क्षी । अविकल्थनः=आत्मश्लाघावर्जितो नाति बहुभाषी वा । अमायी=कपटवर्जितः । स्थिरपरिपाटी—स्थिरा=अतिशयेन निरन्तराभ्यासतः स्थैर्यमापन्ना परिपाटी—अनुयोगकरणक्रमो यस्य स तथा । यद्वा—गुरुपरम्पराप्राप्तज्ञाननिरन्तरपाठकः । एतादृशो हि सूत्रमर्थं च न कदाचिदपि विपरीतं करोति । गृहीतवाक्यः—गृहीतं वाक्यं=वचनं यस्य स तथा, आदेयवचनवान् इत्यर्थः । तस्य हि अल्पमपि वचनं महार्थमिव प्रतिभाति । जितपरिषद्—जिता परिषद् येन स तथा, महत्यामपि परिषदि यः क्षोभं नोपयाति । जितनिद्रः—जिता निद्रा येन स तथा, रात्रौ सूत्रमर्थं च चिन्तयन् निद्राधीनो न भवतीत्यर्थः । मध्यस्थः=पक्षपातवर्जितः । देशकालभावज्ञः—द्रव्यक्षेत्रकालभावज्ञानसम्पन्नः । आसन्नलब्धप्रतिभः—

आन्ति न हो, तथा परीषह और उपसर्ग के सहने में जिसके निश्चलता हो (५) अनाशंसी—वस्त्र सत्कार आदि की जिसके आकांक्षा न हो (६) अविकल्थन आत्मप्रशंसा से जो रहित हो अथवा व्यर्थ का जा बहुत भाषण करने वाला न हो (७) अमायी—कपट भाव से जो रहित हो (८) स्थिर परिपाटी—जिसका अनुयोग करने का क्रम अतिशय निरन्तर अभ्यास के वश से स्थिरता को प्राप्त हो गया हो अथवा—गुरु परम्परा से प्राप्त ज्ञानका जो पाठक हो, (९) गृहीत वाक्य—जिसके वचन आदेय हों (१०) जित परिषद्—बड़ी भारी सभा में भी जो क्षोभ को प्राप्त न हो, ११, जितनिद्रः—रात्रि में भी जो सूत्र और अर्थ का चिन्तन करता हुआ निद्रा के वशवर्ती नहीं होता हो १२, मध्यस्थ—पक्षपात से जो रहित हो १३, देशकाल भावज्ञ—जो देश, काल भाव का ज्ञाता

धृतियुक्त—अति गहान विषयना अर्थ विषे पणु जेमना मनमां केरि पणु प्रकारनी आन्ति न होय. तथा परीषहो अने उपसर्गोनी निश्चलतापूर्वक जे सहन करना होय, ६, अनाशंसी वस्त्र, सत्कार आदिनी आकांक्षाथी जेओ रहित होय, ७, अविकल्थन—जेओ आत्मश्लाघाथी रहित होय अथवा नकासुं लाणुं थोडुं लाषणु करनाश न होय. ८, अमायी—जेओ कपटलावथी—मायाचारीथी रहित होय. ९, स्थिरपरिपाटी निरन्तर अभ्यासने कारणे जेमना अनुयोग करवाने कुभ स्थिरता युक्त जेओ होय, अथवा गुरुपरम्पराथी प्राप्त ज्ञानना जेओ पाठक होय, १०, गृहीतवाक्य—जेमना वचनो आदेय (अहणु करवा योग्य) होय. ११, जितपरिषद्—घण्टी विशाण सभाभां पणु जेओ क्षोभ अनुलपता न होय. १२, जितनिद्रः—जेमणु निद्रा उपर पणु विजय प्राप्त कयो होय ओटवे के रात्रे पणु निद्राने अधीन तथा विना जेओ सूत्र अने अर्थनु चिन्तन कया करता होय १३, मध्यस्थ—जेओ पक्षपातथी रहित होय, १४. देशकाल

આસન્ન=શાસ્ત્રાર્થ કર્તુ સમીપે સમાગતં પરવાદિનં પ્રતિ. લંઘ્યા પ્રતિભા યેન સ
તથા, પરવાદિભિરાશ્નિસઃ શીઘ્રમુત્તરદાયીત્યર્થઃ । નાનાવિધદેશભાષાજ્ઞઃ—
અનેકદેશભાષાજ્ઞાનસંપન્નઃ । પञ्चविधआचारे युक्तः=જ્ઞાનાદિપञ्ચાચારે યુક્તઃ ।
सूत्रार्थतदुभयविधिज्ञः । આહરણહેતૂપનયનિપુણઃ-તત્ર-આહરણ=દૃષ્ટાન્તઃ, હેતુ=
કારકો જ્ઞાપકશ્ચ । તત્ર કારકો-યથા ઘટસ્ય કર્તા કુમ્ભકારઃ । જ્ઞાપકો યથા-ઘટા-
નામભિવજ્જકઃ પ્રદીપઃ । ઉપનયઃ=ઉપસંહારઃ, નયાઃ=નૈગમાદયઃ, एतेषु निपुणः=
કુશલઃ । ગ્રાહણાકુશલઃ ગ્રાહણાયાં=શિષ્યઃ સૂત્રાર્થતદુભયગ્રાહણાયાં કુશલઃ ।
स्वसमपरसमयवित्=સ્વસિદ્ધાન્તપરસિદ્ધાન્તજ્ઞાનસંપન્નઃ । गम्भीरः=અતુચ્છસ્વભાવઃ ।

હો-અર્થાત્ દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવ ના જો જાનને વાલે હો ૧૪, આસ-
ન્નલઘ્યપ્રતિભઃ-શાસ્ત્રાર્થ કરને કે લિયે નિકટ આયે હુએ પરવાદી કો પરાસ્ત
કરને કે લિયે જિસ કી પ્રતિભા તેજ હો-અર્થાત્ પરવાદી સે આશ્નિત હોને
પર જા શીઘ્ર હી ઉત્તર દાતા હો ૧૫, નાનાવિધ દેશભાષાજ્ઞઃ-અનેક દેશો
કી ભાષાઓ ના જિસે જ્ઞાન હો ૧૬, પञ्चविध आचारयुक्तः-જ્ઞાનાચાર આદિ
પાંચ પ્રકાર કે આચારોં કા જા પાલન કર્તા હો, ૧૭, सूत्रार्थ तदुभय विधिज्ञः-
સૂત્ર અર્થ તથા તદુભય સૂત્રાર્થ કી વિધિ કા જાનકાર હો ૧૮, आहरण
हेतूपनयननिपुणः-ઉદાહરણ, હેતુ, ઉપનય ઓર નય इनमें जो निपुण हो ૧૯,
ग्रहण कुशल-જો શિષ્ય કો તત્ત્વ ગ્રહણ કરાને મેં કુશલ હો ૨૦, स्वसमय पर
समयवित्-જિસ સ્વસમય કા ઓર પરસમય કા અચ્છી તરહ સે બોધ-જ્ઞાન

ભાવજ-જેઓ દેશ, કાળ અને ભાવના જ્ઞાતા હોય, એટલે કે દ્રવ્ય ક્ષેત્ર, કાળ
અને ભાવના જેઓ જાણકાર હોય, ૧૫, “આસન્નલઘ્યપ્રતિભઃ” શાસ્ત્રાર્થ કરવાને
માટે પોતાની પાસે આવેલા પરમવાદીને પરાસ્ત કરવાને યોગ્ય પ્રતિભાથી જેઓ
સંપન્ન હોય-એટલે કે પરમતવાદીની સાથે જ્યારે ચર્ચા થાલે ત્યારે તેના પ્રશ્નોનો
યોગ્ય ઉત્તર આપીને તેના મતનું ખંડન અને પોતાના મતનું (સ્વ સમયનું)
સમર્થન કરવાને જેઓ સમર્થ હોય છે, ૧૬, “નાનાવિધદેશભાષજ્ઞઃ” જેમને
અનેક દેશની ભાષાઓનું જ્ઞાન હોય, ૧૭, ‘પञ्चविधआचारयुक्तः’ જ્ઞાનાચાર
આદિ પાંચ પ્રકારના આચારોનું જેઓ પાલન કરનારા હોય. ૧૮, ‘सूत्रार्थतदु
भयविधिज्ञः’ — જેઓ સૂત્ર, અર્થ તથા તદુભય (સૂત્ર અને અર્થ બન્ને) સૂત્રાર્થની
વિધિના જાણકાર હોય, ૧૯. “આહરણહેતૂપનયનિપુણઃ” ઉદાહરણ, હેતુ
ઉપનય અને નયમાં જેઓ નિપુણ હોય, ૨૦, “ग्रहणकुशलः” જેઓ શિષ્યને તત્ત્વ
ગ્રહણ કરાવવામાં કુશળ હોય, ૨૧, “स्वसमयपरसमयवित्” જેઓ સ્વસમય
(નૈન સિદ્ધાંત) અને પરસમયનું (અન્યસિદ્ધાંતોનું) સાદું જ્ઞાન ધરાવતા હોય,

दीप्तिमान्-परवादिभिरनुद्वर्णयः । शिवः=अकोटः यदा—त्र तत्र वा विहार
लोकालयाणकारी । सोमः=शान्तदृष्टिः । गुणशतकलितः=गुणाः=दद्यादाक्षि-
ण्यदयः तेषां शतानि, तैः कलित, इह शतशब्दो बहुत्ववाचकः । एतादृश एव
मुनिः प्रवचनसारं=द्वादशाङ्गरूपप्रवचनार्थं परिकल्पितुं=रम्यं प्ररूपयितुं युक्तः=
योग्यः समर्थो भवतीत्यर्थः उक्तपञ्चविंशतिगुणयुक्तस्य मुनेर्वचनं घृतपरिषिक्त-
वह्निरिव भाति । उक्तगुणरहितस्य वचनं तु स्नेहविहीनदीप इव न शोभते ।
एवं पञ्चविंशति गुणयुक्तेन मुनिना कस्य वाऽनुयोगः=कस्य शास्त्रस्यऽनुयोगः
कर्तव्य इत्यपि वक्तव्यम् । तद्द्वाराणि-तस्य अनुयोगस्य द्वाराणि=उपक्रमादीनि
वक्तव्यानि । वक्ष्यते अग्रे स्वयमेव सूत्रकारः । तथा-अनुयोगस्य लक्षणं वक्तव्यम् ।
लक्षणं चैवमुक्तम्—

हो २१, गंभीरः—जिसका स्वभाव गहरा हो २२, दीप्तिमान् परवादियों द्वारा
जो परास्त न किया जा सके २३, शिव—क्रोध जिसे न आवे, अथवा—इत-
स्ततः विहार करता हुआ जो लोक का कल्याणकारी हो २४, सोम—जिसकी
दृष्टि शान्त हो २५ और गुणशत कलित—सैकड़ों दयादाक्षिण्य आदि गुणों से
जो युक्त हो, ऐसा मुनि द्वादशाङ्गरूप प्रवचन के अर्थ को अच्छी तरह से
प्ररूपित करने के लिये समर्थ होता है । इन २५, (पच्चीस) गुणों से युक्त
मुनि के वचन घृत से सिंचित अग्नि के जैसे तेजस्वी होते हैं । परन्तु इन
गुणों से रहित जो साधु होता है उसके वचन स्नेह से रहित दीपक की तरह
शोभित नहीं होते हैं । इस प्रकार इन २५ गुणों से युक्त मुनि को “किस
शास्त्र का अनुयोग कर्तव्य है यह भी कहना चाहिये । अनुयोग के जो उपक्रम
आदि द्वार कहे गये हैं—वे भी शिष्य को कहना चाहिये । अनुयोग के भेद

२२, “गंभीरः” जेम्मे स्वभावे गंभीर होय, २३, “दीप्तिमान्” जेम्मे दीप्तिमान्
होय—परमत्ववादीज्जे जेम्मे परास्त करवाने समर्थ न होय, २४, “शिवः”
जेम्मेनामां क्रोधने अलाव होय अथवा अहीं तहीं विहार करता थकां जेम्मे
मुनि कल्याण करवाय होय, २५, “सोम” जेम्मेना दृष्टि अथवा मुग्धमुद्रा शान्त
होय, “गुणशतकलितः” अने जेम्मे दया दक्षिण्य आदि सैकड़ों गुणोधी संपन्न
होय, अथवा मुनि जे द्वादशाङ्गरूप प्रवचनना अर्थने सारी रीते प्ररूपित करवाने
समर्थ होय छे, आ २५ गुणोधी युक्त मुनिनां वचने धी वडे सिंचित अग्निना
समान तेजस्वी होय छे परन्तु आ गुणोधी रहित जे साधु होय छे तेना वचने
तेजस्वी रहित दीपकना समान तेजरहित (प्रलाव रहित) होय छे ।

आ प्रकारना २५ गुणोधी युक्त मुनिजे क्या शास्त्रने अनुयोग करवे
जेम्मे, ओ बात पण अहीं प्रष्ट करवा अनुयोगना जे उपक्रम आदि द्वार

“સંહિતા ય પયં ચૈવ, પયત્યો પયવિગ્રહો ।

ચાલના ય પસીદ્ધી ય છબ્ધિહં વિદ્ધિ લક્ષણં ॥

છાયા—સંહિતા ચ પદં ચૈવ પદાર્થઃ પદવિગ્રહઃ ।

ચાલના ચ પ્રસિદ્ધિશ્ચ ષર્ઙ્ગધં વિદ્ધિ લક્ષણમ્ ॥

તત્ર—સંહિતા=અસ્ખલિતપદોચ્ચારણમ્ । પદમ્=વર્ણાનામન્યોન્યાપેક્ષાણાં નિરપેક્ષા સંહતિ, સુવન્તં તિઙ્ઘન્તં વા । પદાર્થઃ—પદસ્ય અર્થઃ=અભિધેયઃ । પદવિગ્રહઃ=પ્રકૃતિપ્રત્યયવિભાગરૂપો વિસ્તારઃ । ચ=પુનઃ ચાલના=પ્રશ્નઃ । પ્રશ્ને સતિ પ્રસિદ્ધિઃ=સમાધાનં ચેતિ ષર્ઙ્ગધમ્ અનુયોગત્ય લક્ષણં વિદ્ધ=જાનીહિ । વ્યાખ્યેયસૂત્રત્રય ચ ‘અલિગ્મુવધાયજ્ઞયં’ इत्यादि द्वात्रिंशदोषरहितत्वादिकं लक्षणं वक्तव्यम् ।

કિ જિन्हें सूत्रकार स्वयं ही आगे कहेंगे । अनुयोग का क्या लक्षण है यह भी शिष्य को समझाना चाहिये । अनुयोग का लक्षण इस प्रकार बहा है—“संहिता य” इत्यादि—अस्खलितरूप से पदों का उच्चारण करना इस का नाम संहिता है । अन्योन्यापेक्षावाले वर्णों की निरपेक्ष जो संहिता है उसका नाम अथवा सुवन्त और तिङन्त वा नाम पद है । पद के अभिधेय का नाम पद विग्रह है । चालना नाम प्रश्न का है । प्रश्न के समाधान का नाम प्रसिद्धि है । ये छह प्रकार का अनुयोग का लक्षण है । यह लक्षण बहना चाहिये—तथा “अलिग्मुवधायज्ज्ञयं” इत्यादि जो ३२, दोष कहे गये हैं उनसे रहित अनुयोग होता है यह भी अनुयोग का लक्षण बहना चाहिये । तथा यह भी कहना चाहिये कि अनुयोग को सुनने के लिये

છે. તે પણ તેમણે શિષ્યોને કહેવા નેમળે. અનુયોગના પણ ભેદો શિષ્યોને બતાવવા નેમળે. તે ભેદોનું નિરૂપણ સૂત્રકાર પોતે જ આગળ કરવાના છે. તેમણે શિષ્યોને અનુયોગનાં લક્ષણો પણ સમજાવવા નેમળે. અનુયોગનાં લક્ષણો નીચે પ્રમાણે છે.

“સંહિતા ય” ઇત્યાદિ—પદોનું અસ્ખલિત રૂપે ઉચ્ચારણ કરવું તેનું નામ સંહિતા છે. અન્યોન્યની અપેક્ષાવાળા વર્ણોથી નિરપેક્ષ જે સંહિતા છે તેનું નામ અથવા સુવન્ત અને તિઙ્ઘન્તનું નામ પદ છે. પદના અભિધેયનું નામ પદાર્થ છે. પ્રકૃતિ પ્રત્યયના વિભાગરૂપ વિસ્તારનું નામ પદવિગ્રહ છે પ્રશ્નને “ચાલના” કહે છે. પ્રશ્નના સમાધાનરૂપ ઉત્તરને પ્રસિદ્ધિ કહે છે. આ છ પ્રકારનું અનુયોગનું લક્ષણ છે. શુદ્ધ અનુયોગના આ છ લક્ષણો પણ શિષ્યને કહેવા નેમળે. તથા “અલિગ્મુવધાયજ્ઞયં” ઇત્યાદિ જે ૩૨ દોષ છે તે પણ કહેવા નેમળે આ ૩૨ દોષોથી અનુયોગ રહિત હોય છે, અને પણ શિષ્યોને કહેવું નેમળે. વળી તેમણે શિષ્યોને એ પણ સમજાવવું નેમળે કે અનુયોગનું શ્રવણ કરવા માટે કેવા કેવા મુનિને યોગ્ય ગણવામાં આવે છે. અનુયોગનું શ્રવણ કરવા માટે મુનિમાં નીચેની યોગ્યતાઓ હોવી નેમળે.

तदर्हाः तस्य=अनुयोगरयः अर्हाः=योग्या मुनयो वक्तव्याः । तथाहि—

बहुस्तुए चिरपव्वइए, कप्पिए य अचंचल्ले ।

अव्वट्टिए य मेहावी, अपरिभाविओ विज्ज ॥१॥

पत्तं य अणुण्णाए, भावओ परिणामगे ।

एयारिसे महाभागे, अणुओगं सोउमरिहह ॥२॥

छाया—बहुश्रुतश्चिरप्रव्रजितः, कल्पिकश्च अचञ्चलः ।

अवस्थितश्च मेधावी, अपरिभावितो विद्वान् ॥१॥

पात्रं चानुज्ञातः, भावतः, परिणामकः ।

एतादृशो महाभागः, अनुयोगं श्रोतुमर्हति ॥२॥

यो मुनिः बहुश्रुतः=शास्त्रज्ञः, चिरप्रव्रजितः=चिरकालगृहीतदीक्षः, कल्पिकः=गीतार्थः, अचञ्चलः=चाञ्चल्यवर्जितः, अवस्थितः=साधुमर्यादायां स्थितः, मेधावी=बुद्धिमान्, अपरिभावितः=परिषहोपसर्गैरपरिभूतः, परतीर्थिकैरपरिभूतो वा, विद्वान्=पण्डितः—प्रभूनाशेषशास्त्राभ्यासनिर्मलबुद्धिरित्यर्थः, पात्रं=योग्यः, अनुज्ञातः=गुरुणाऽऽज्ञप्तः, तथा—भावतः परिणामकं=भावपरिणामयुक्तश्च भवति । एतादृशो महाभागो मुनिरनुयोगं श्रोतुमर्हति ।

ऐसा मुनि योग्य होता है—जो बहुस्तुए, चिरपव्वइए” इत्यादि, बहुश्रुत—शास्त्रों का ज्ञाता हो, चिरकाल का दीक्षित हो, गीतार्थ हो, चञ्चलता से रहित हो, साधुमर्यादा में स्थिर हो, बुद्धिशाली हो, परीषह और उपसर्गों से परतीर्थिकजनों से अपरिभूत हो, विद्वान् हो,—अर्थात् अनेकशास्त्रों के अभ्यास से जिस की बुद्धि निर्मल हो अनुयोग का पात्र हो गुरु से अनुयोग सुनने की जिसे आज्ञा मिल चुकी हो, और जो भावसे परिणामयुक्त हो ऐसा महाभाग मुनि अनुयोग को सुनने के योग्य होता है । गुरु को अनुयोग सुनाने वाली सभा का भी कथन करना चाहिये—उन्हें कहना चाहिये कि

“बहुस्तुए चिरपव्वइए” इत्यादि—जे बहुश्रुत—(शास्त्रों का ज्ञाता) होय, चिरकाल का दीक्षित होय, गीतार्थ होय, अचञ्चलताशी रहित होय, साधुनी मर्यादातुं दृढतापूर्वक पालन करनार होय, बुद्धिशाली होय, परीषहो, उपसर्गों अने अन्यतीर्थिकों से अपरिभूत (परास्त न थाय ओवो) होय, विद्वान् होय—ओरले के अनेकशास्त्रों का अभ्यासशी जेनी बुद्धि निर्मल थयेली होय, अनुयोगने पात्र होय, शुद्ध ओ जेने अनुयोगतुं श्रवण करवानी अनुज्ञा आपी होय, अने जे लावनी अपेक्षाओ परिष्णामयुक्त होय, ओवा महाभाग मुनिने जे अनुयोगतुं श्रवण करवाने पात्र मानवामां आवे छे, शुद्ध ओ अनुयोग श्रवण करनारी परिषह डेवी होवी

તથા-પરિષદ્=અનુયોગરય યોગ્યા પરિષદ્ વક્તવ્યા । સા ચ સામાન્યત-
સ્ત્રિધા ભવતિ । તદ્યથા—

“જાણંતિયા અજાણંતિયા ય, તદ્દુર્વિદગ્ધિકા ચૈવ ।

ત્રિવિદ્યા ય હોઽ પરિષા, ત્રીસે નાણત્તમં વોક્ષ્યં ॥૧॥”

છાયા—જાણના અજાણના ચ, તથા દુર્વિદગ્ધિકા ચૈવ ।

ત્રિવિદ્યા ચ ભવતિ પરિષત્ તસ્યા નાનાત્વં વક્ષ્યે ॥૧॥

અર્થ ભાવઃ—પરિષત્ ત્રિવિદ્યા ભવતિ, —જ્ઞાયકપરિષત્, અજ્ઞાયકપરિષત્,
દુર્વિદગ્ધિકા પરિષદિતિ । તત્ર-એકૈકપરિષત્સ્વરૂપં લક્ષયિતું પ્રથમં જ્ઞાયકપરિષ-
ત્સ્વરૂપમાહ—

“ગુણદોષવિશેષણૂ અણભિગ્મહિયા ય કુસ્સુદ્ધમણુ ।

સા સ્વલુ જાગગપરિસા, ગુણતત્તિહ્યા અગુણવજ્ઞા ॥૧॥

સ્ત્રીરમિવ રાયહંસા, જે ઘુટ્ટંતિ ગુણે ગુણસમિદ્ધા ।

દસે વિ ય છઢિત્તા, તે વસહા ધીરપુરિસત્તિ ॥૨॥

છાયા—ગુણદોષવિશેષજ્ઞા અણભિગ્મહીતા ચ કુશ્રુતિમતેષુ ।

સા સ્વલુ જ્ઞાયકપરિષત્, ગુણતત્પરા અગુણવર્જા ॥૧॥

સ્ત્રીરમિવ રાજહંસા, તે પિવન્તિ ગુણાન્ ગુણસમૃદ્ધાઃ ।

દોષાનપિ ચ ત્યક્ત્વા, તે વૃષભા ધીરપુરુષા इति ॥૨॥

અર્થ ભાવઃ—યા પરિષદ્ ગુણદોષાન્ વિશેષતો જાનાતિ । કુશ્રુતિમતેષુ
આગ્રહવતી ન ભવતિ । એવંચિદા ગુણેષુ તત્પરા અગુણેભ્યો રહતા પરિષત્જ્ઞાયક

અનુયોગ કો સુનને કે યંચ્ય એસી પરિષત્ હોતી હૈ—અર્થાત્ પરિષત્ સામાન્ય
સે ૩, પ્રકાર કી હોતી હૈ—એક જ્ઞાયક પરિષત્, દૂસરી અજ્ઞાયક પરિષત્ ઔર
૩ તીસરી દુર્વિદગ્ધિકા પરિષત્ । યહી વાત “જાણંતિયા” ઇત્યાદિ ગાથાદ્વારા પ્રકટ
કી ગઈ હૈ । ઇનમેં સે જ્ઞાયક પરિષત્ કો સ્વરૂપ ઇપ પ્રકાર સે હૈ—ગુણદોષ
વિશેષણૂ “ઇત્યાદિ—જો પરિષદ્ ગુણ ઔર દોષોં કો વિશેષરૂપ સે જાનતી હૈ

જોઈએ તે પણ શિષ્યને સમજાવવું જોઈએ. તેમજો તેને એ વાત સમજાવવી
જોઈએ કે અનુયોગનું શ્રવણ કરનારી પરિષદમાં આ પ્રકારની યોગ્યતા
જોવી જોઈએ—પરિષદના સામાન્ય રીતે ત્રણ પ્રકાર હતા છે, તે પ્રકારો નીચે
પ્રમાણે છે—૧, જ્ઞાયક પરિષદ, ૨, અજ્ઞાયક પરિષદ અને ૩. દુર્વિદગ્ધિકા પરિષદ
આ વાત “જાણંતિયા” ઇત્યાદિ ગાથા દ્વારા પ્રકટ કરવામાં આવી છે.

જ્ઞાયક પરિષદનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું હોય છે—

“ગુણદોષવિશેષણૂ” ઇત્યાદિ—જે પરિષદ ગુણ અને દોષોને વિશેષરૂપે
જાણતી હોય છે, અને જોટાં શાસ્ત્રોની માન્યતાઓને જે માનતી નથી—જોટાં શાસ્ત્રોને

પરિષદુચ્યતે । અત્ર પરિષદિ યે નરા ભવન્તિ, તે ગુણસમૃદ્ધા ભવન્તિ ।

યથા રાજહંસા સજલદુગ્ધાદ્ જલં વિહાય દુગ્ધમેવ પિવન્તિ, તથૈવ એતે દોષાન્ વિહાય ગુણાનેવ ગૃહ્ણન્તિ । એતે હિ ધર્મધુરાધાગ્ને વૃષભા ઇવ ઉદ્યુક્તા ભવન્તિ । અત એવ એતે ધીરપુરુષા ઉચ્યન્તે, ઇતિ જ્ઞાયક-પરિષત્ ।

અથ-અજ્ઞાયકપરિષત્સ્વરૂપમાહ—

“જા હોઈ પગડમુદ્દા મિગસાવગસીહકુકુટકમ્ભૂયા ।

રયણમિવ અસંઠવિયા, સુહસંણપ્પા ગુણસમિદ્ધા ॥૧॥

છાયા-યા ભવન્તિ પ્રકૃતિમુગ્ધા મૃગશાવકસિંહકુકુટકમ્ભૂતા ।

રત્નમિવાસંસ્થાપિતા સુખસંજ્ઞાપ્યા ગુણસમૃદ્ધા ॥૧॥

અર્થ ભાવઃ-યા પરિષત્ પ્રકૃતિમુગ્ધા=પ્રકૃત્યા-સ્વભાવેન મુગ્ધા=ભદ્રભાવ-સંપન્ના, મૃગશાવકસિંહકુકુટકમ્ભૂતાઃ-તવ મૃગશાવકાઃ=હરિણશિશવઃ, સિંહાઃ=સિંહ-

ઔર खोटे शास्त्रों को मानने वालों के मत में जिसे आग्रह नहीं होता है वह परिषत् ज्ञायक परिषत् है । ऐसी परिषत् गुणों में तत्पर और अगुणों से रहित होती है । इस परिषत् में जो मनुष्य होते हैं वे गुणसमृद्ध होते हैं । जैसे राज हंस जलसहितदुग्ध मेंसे जल का परित्याग कर दूध का ही पान करते हैं वैसे ही यह परिषत् दोषों को छोड़ कर गुणों को ही ग्रहण करती है । इस परिषत् के सदस्यजन धर्म की धुरा को धारण करने में वृषभ की तरह सदा उद्योगशील रहा करते हैं । इसलिये ये धीर पुरुष कहलाते हैं । अज्ञायक परिषत् का स्वरूप इस प्रकार से है-“जा होइ पगड़ मदा” इत्यादि-जो परिषत् स्व-भाव से भद्रभावयुक्त होती है । तथा मृगशिशु, सिंहशिशु और कुक्कुटशिशु के समान जिसके सदाय सरल भाव वाले होते हैं-एवं जो खान से निकले हुए

માનનારા લોકોના મતમાં જેને બિલકુલ શ્રદ્ધા હોતી નથી એવી પરિષદને જ્ઞાયક પરિષદ કહે છે. એવી પરિષદ ગુણગ્રાહી અને અગુણોથી રહિત હોય છે. આ પરિ-ષદમાં એકત્ર થયેલા મનુષ્યો ગુણસમૃદ્ધ હોય છે. જેવી રીતે રાજહંસ જલમિશ્રિત દૂધમાંથી દૂધને જ ગ્રહણ કરે છે અને જળનો પરિત્યાગ કરે છે. તેમ આ પરિષદ પણ દોષોનો પરિત્યાગ કરીને ગુણોને ગ્રહણ કરે છે. આ પરિષદના સભ્યો ધર્મની ધુરાને ધારણ કરવામાં વૃષભની જેમ સદા ઉદ્યોગશીલ રહે છે. તે કારણે તેમને ધીર પુરુષો માનવામાં આવે છે.

અજ્ઞાયક પરિષદનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું હોય છે—

“જા હોઈ પગડમદા” ઇત્યાદિ-જે પરિષદના સભ્યો સ્વભાવની અપેક્ષાએ ભદ્રભાવ (સરલતા)થી યુક્ત હોય છે. જેના સભ્યો મૃગશિશુ, સિંહશિશુ અને કુકુટના

શાવકાઃ, કુકુટકાઃ=કુકુટકશાવકાઃ-તદ્ભૂતાઃ=તત્સદૃશા । ‘સિંહકુકુટ’ શબ્દો
અત્ર તત્તચ્છાવકપરૌ । તજ્જના હરિણશિશુસિંહશિશુકુકુટશિશવ ઇવ અત્યન્ત
સરલ इत्यर्थः ।

તથા—રત્નમિવ અસંસ્થાપિતા=સહજરત્નમિવાસંસ્કૃતા=ભવતિ । સા પરિપત્
સુખસંજ્ઞાપ્યા=અનાયાસબોધનીયા ગુણસમૃદ્ધા=ગુણગણયુતા ચ ભવતિ । કિં ચ—

“જા રાલુ અભાવિયાકુસ્સુદ્ધિં ન ય સસમણ ગહિયસારા ।

અકિલેસકરા સા રાલુ, વઢરં છકોલિસુદ્ધં વ ॥”

છોયા—યા રાલુ અભાવિતા કુશ્રુતિભિઃ, ન ચ સ્વસમયે ગૃહીતસારા ।

અક્લેશકારી સા રાલુ વજ્રં પટ્કોટિશુદ્ધમિવ ॥૨॥

અયં ભાવઃ—યા પરિપત્ કુશ્રુતિભારભાવિતા ભવતિ, ન ચ સ્વસમયે ગૃહીત
સારા=સ્વસિદ્ધાન્તાભિજ્ઞા ચ ન ભવતિ, અક્લેશકારી=ક્લેશોત્પાદિકા ન ભવતિ, યા
ચ પટ્કોટિશુદ્ધં સર્વથા શુદ્ધવજ્રમિવ હીરક ઇવ વિશુદ્ધા ભવતિ, સા રાલવ
જ્ઞાયકપરિપદુચ્યતે । ઇતિ ॥

સમ્પ્રતિ દુર્વિદગ્ધપરિપદુચ્યતે—

“ન ય કત્થ વિ નિમ્માઓ, ન ય પુચ્છહ પરિભવસ્સ દોસેણ ।

વત્થિવ વાયપુણ્ણો, ફુદ્ધહ ગામેલ્લગઽવિયઢ્ઢા ॥૧॥

કિંચિમ્મત્તગાહી, પલ્લવગાહી ય તુરિયગાહી ય ।

દુવિયઢ્ઢાગા ડ ઇસા, મણિયા તિવિહા ઇમા પગિસા” ॥૨॥

રત્ન કે સમાન અસંસ્કૃત હોતે હૈં । ઔર ઇસી સે જિન્હેં સમજાના બહુત સરલ
હોતા હૈ—અર્થાત્ જો થોડે સે કહને મેં હી સન્માર્ગ પર આ જાતે હૈં । યે સવ
ગુણગણ સે યુક્ત રહા કરતે હૈં । “જા રાલુ અભાવિતા” ઇત્યાદિ—યહ પરિપત્
કુશ્રુતિયોં કે વહકાવે મેં નહી આતી હૈ ઔર અપને સિદ્ધાન્ત કે પીછે યહ
લટના ળગડના નહીં જાનતી હૈ । પટ્કોટિ શુદ્ધ હીરે કે સમાન યહ પરિપત્
વિશુદ્ધ હોતી હૈ । દુર્વિદગ્ધ પરિપત્ કા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર સે હૈ—‘ન ય કત્થ
વિ’ ઇત્યાદિ—જો પુરુષ કિસી મી વિષય મેં નિજ્ઞાત ન હો ઔર જો પુરુષ

શિશુ સમાન સરલભાવથી યુક્ત હોય છે. અને જાણોમાંથી નીકળેલા રત્ન સમાન જે
અસંસ્કૃત હોય છે. જે પરિપદાને ધર્મતત્ત્વ સમજાવવાનું કાર્ય ધણું જ સરલ હોય
છે. એવા શુણોથી યુક્ત પરિપદને અજ્ઞાયક પરિપદ કહે છે. “જા રાલુ અભાવિતા”
કુશાસ્ત્રો આ પરિપદને બહેકાવી શકતાં નથી અને તે પરિપદ સ્વ સિદ્ધાંતોથી અભિજ્ઞ
પણ હોતી નથી. સિદ્ધાન્તને નામે તને ઝગડા કરતા પણ આવડતા નથી. પટકોટ
શુદ્ધ હીરા સમાન વિશુદ્ધ આ પરિપદ હોય છે.

છાયા—ન ચ કુત્રાપિ નિર્માતો ન ચ પૃચ્છતિ પારમવસ્ય દોષેણ ।

વસ્તિરિવ વાતપૂર્ણઃ સ્ફુટતિ ગ્રામેયકોઽવિદગ્ધઃ ॥૧॥

કિંચિન્માત્રગ્રાહિણી, પલ્લવગ્રાહિણી ત્વરિતગ્રાહિણી ચ ।

દુર્વિદગ્ધા ત્વેષા ભણિતા, ત્રિવિધેયં પરિષત્ ॥૨॥

યો નરઃ કુત્રાપિ વિષયે નિષ્ણાતો ન ભવતિ ।

પરિમવસ્ય દોષેણ=અપમાનદોષેણ ચાન્યં જનં વસ્તુતત્ત્વં ન પૃચ્છતિ । ‘યદ્યહમેનં પ્રક્ષ્યામિ તવ મમાપ્રતિષ્ઠા સ્યાદિતિ હેતો સ્તત્ત્વજ્ઞજન-કાશાત્ તત્ત્વજ્ઞાનં લબ્ધું ન યતતે’ इति भावः । एतादृशो ग्रामेयको—ग्राम्यः=संस्कारवर्जितः अविदग्धः—अनिपुणः पुरुषः, वातपूर्णो वस्तिरिव स्फुटति =स्थूलो भवति अहंकारी भवतीत्यर्थः किंच—य किञ्चिन्मात्रग्राही भवति,

નિષ્ણાત હૈં ઉનસે વહ ઇસ અભિપ્રાય સે વસ્તુતત્ત્વ કો નહીં પૂછતા હો કિ ઇન સે પૂછને પર મેરી અપ્રતિષ્ઠા-અવજ્ઞા-હોગી ઇસી કારણ વહ તત્ત્વજ્ઞાન પ્રાપ્તિ મેં પ્રયત્નશાલી નહીં હોતા હૈં એસી વ્યક્તિ સત્ જ્ઞાન કે સંસ્કાર સે રહિત બન કર કેવલ અવિદગ્ધ-અનિપુણ બના રહતા હૈં ઓર વાયુસે પૂર્ણ ધમની કે સમાન અપને અભિમાન મેં ફૂલા રહતા હૈં । ઇસી તરહ જો થોડા બહુત જાનતા હૈં તથા પલ્લવગ્રાહી પાંડિત્ય-જિસકે પાસ મેં હૈં, જો ત્વરિતગ્રાહી હૈં-કહને પર શીઘ્ર સમજતો લેતો હૈં-પર ફિર વિસ્મૃત હો જાતા હૈં-ફિર મી જ્ઞાનિ કે અહંકાર મેં તત્પર રહતા હૈં એસે ઇન વ્યક્તિયોં કી સમા કા નામ દુર્વિદગ્ધા સમા હૈં । તાત્પર્ય ઇસ કા યહ હૈં કિ બોધ લવ હોને પર જો અપને આપ

દુર્વિદગ્ધ પરીષદનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું હોય છે.

‘નય ક્તથ વિ’ ઇત્યાદિ—કોઈ એક પુરુષ અમુક વીષયમાં નિષ્ણાત નથી. તે વિષયમાં બીજી કોઈ એક વ્યક્તિ નિષ્ણાત છે, પરન્તુ પહેલી વ્યક્તિ બીજી વ્યક્તિને વસ્તુતત્ત્વ વિષે એ કારણે પૂછતી નથી કે તેને પૂછવાથી મારી અપ્રતિષ્ઠા થશે. આ પ્રકારના અભિમાનને કારણે તે તત્ત્વજ્ઞાન-પ્રાપ્તિમાં પ્રયત્નશીલ રહેતો નથી. એવો માણસ સાચા જ્ઞાનના સંસ્કારથી રહિત જ રહેવાને કારણે અવિદગ્ધ-અનિપુણ જ રહે છે. એવો માણસ હવાથી ભરેલી ધમણ સમાન અભિમાનથી ફૂલાયો જ કરે છે, આ પ્રકારના અધકચરા જ્ઞાનવાળાને અર્ધવિદગ્ધ કહે છે. આ પ્રકારના અર્ધવિદગ્ધ, છીછરા જ્ઞાનવાળા, ત્વરિતગ્રાહી (કોઈ વાત કહેવામાં આવે તો શીઘ્ર સમજી લેનારા પણ પાછળથી તેને ભૂલી જનારા) માણસો જ્ઞાનના અભિમાનમાં તત્પર રહેતા હોય છે. એવી વ્યક્તિયોની સલાને દુર્વિદગ્ધા પરીષદ કહે છે આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે જેઓ પોતાને વિશિષ્ટ તત્ત્વજ્ઞાની માની રહ્યા છે, અને જેવો વારંવાર સમજાવવા

પલ્લવગ્રાહી ત્વરિતગ્રાહી ભવતિ । તેષાં પરિષદ્ દુર્વિદગ્ધા । इत्येवमुक्तरीत्या त्रिविधा परिषद् विज्ञेया । इहाद्ये उभे अनुयोगाहे, तृतीया तु अनुयोगानर्हा । एतत्सर्वमुक्त्वा सूत्रार्थो वक्तव्यः । इत्येवमनुयोगस्य द्वादश द्वाराणि वक्तव्यानि भवन्ति । सूत्रकारस्तु शेषाणि द्वाराण्युपलक्षयितुं ‘कस्य शास्त्रस्यायमनुयोगः ?’ इति सप्तमं द्वारं चेतसि निधाय ‘जइ सुयनाणरस उद्देसो’ इत्यारभ्य ‘इमं पुण पट्टवणं पडुच्च आवस्सगस्स अणुओगो’ इति यावदुक्तवान् ॥सू० ५॥

કો વિશિષ્ટ તત્ત્વજ્ઞાની માન વેઠે છે અને સમજાને પર મી જો અપને સૂઠે આગ્રહ કો છોડતે નહીં છે એસે વ્યક્તિ દુર્વિદગ્ધ કહે ગયે છે । इन की समा का नाम दुर्विदग्ध समा है । इस प्रकार इन तीन समाओं में से आदि की दो समाएं तो अनुयोग के योग्य हैं, परन्तु जो तीसरी समा है वह अनुयोग है वह अनुयोग के योग्य नहीं है ।—

यह सब अनुयोग से लगता हुआ विषय पहिले कहकर अनुयोगाचार्य को सूत्रार्थ का कथन करना चाहिये । इस प्रकार ये अनुयोग के १२ द्वार हैं । इन बारह द्वारों को अनुयोगाचार्य के विषय कहना चाहिये । सूत्रकारने यद्यपि इन १२ द्वारों का यहाँ कथन नहीं किया है तो भी उन्होंने शेष द्वारों को उपलक्षित करनेकेलिये “कस्य शास्त्रस्य अयम्-अनुयोगः” इस सप्तमद्वार को चित्त में रखकर—“जइ सुयनाणस्स उद्देसो” यहाँ से प्रारंभ करके “इमं पुण पट्टवणं पडुच्च आवस्सगस्स अणुओगो” यहाँ तक कहा है । स्थिर परिपाटी—

છતાં પણ પોતાના દુરાગ્રહને છોડતા નથી, જેઓ જ્ઞાની પુરુષોની વાત સમજવાને પણ તત્પર નથી એવાં પુરુષોને દુર્વિદગ્ધ કહે છે અને એવા પુરુષોની સલાને દુર્વિદગ્ધ પરિષદ કહે છે. આ ત્રણ પ્રકારની જે પરિષદો કહી તેમાંની પહેલા બે પ્રકારની પરિષદો તો અનુયોગને પાત્ર ગણાય છે, પણ ત્રીજા પ્રકારની જે દુર્વિદગ્ધ પરિષદ છે, તેને અનુયોગને પાત્ર ગણી નથી, અનુયોગને લગતું આ બધું કથન સૌથી પહેલાં કરવું જોઈએ. ત્યારબાદ જ અનુયોગાચાર્યે સૂત્રાર્થનું કથન કરવું જોઈએ. આ પ્રકારના તે અનુયોગના ૧૨ દ્વાર છે. તે બાર દ્વારોનું અનુયોગાચાર્યે શિષ્ય આગળ કથન કરવું જોઈએ. જે કે સૂત્રકારે જે ૧૨ દ્વારોનું કથન અહીં કર્યું નથી, છતાં પણ બાકીના દ્વારોને ઉપલક્ષિત કરવા નિમિત્તે “કસ્ય શાસ્ત્રસ્ય અયમ્ અનુયોગઃ” “કયા સૂત્રનો આ અનુયોગ છે,” આ સાતમાં દ્વારને હૃદયમાં ધારણ કરીને “જइ सुयनाणस्स उद्देसो” આ સૂત્રપાઠથી શરૂ કરીને “इमं पुण पट्टवणं पडुच्च आवस्सगस्स अणुओगो” આ સૂત્રપાઠ પર્યન્તનું કથન કર્યું છે. “स्थिर परिपाटी” આ વિશેષણ

મૂલમ્—આવસ્સયં ણં કિં અંગં અંગાઈ ? સુયં સુયાઈ ?
 સ્વંધો સ્વંધા ? અજ્ઞયણં અજ્ઞયણાઈ ? ઉદેસો ઉદેસા ? । આવસ્સયં
 ણં નો અંગ, નો અંગાઈ, સુયં, નો સુયાઈ, સ્વંધો, નો સ્વંધા, નો
 અજ્ઞયણં, અજ્ઞયણાઈ, નો ઉદેસો, નો ઉદેસા ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—આવશ્યકં સ્વલુ કિમ્ અજ્ઞમ્ અજ્ઞાનિ ? શ્રુતં શ્રુતાનિ ?, સ્કન્ધઃ સ્કન્ધાઃ ?
 અધ્યયનમ્ અધ્યયનાનિ ?, ઉદ્દેશઃ ઉદ્દેશાઃ ? । આવશ્યકં સ્વલુ ના અજ્ઞં, નો
 જો વિશેષણ બતલાયા ગયા હૈ વહ યહ પ્રમાણિત કરતા હૈ કિ ઇમ વિશેષણ-
 વાલા મુનિ કમી મી સૂત્ર ઔર અર્થ કો વિપરીત નહી કરતા હૈ । જો આદેય
 વચનવાલા મુનિ હોતા હૈ—ઉસકે થોડે મી વચન મહાર્થ સે ભરે હુય જૈસે
 માલૂમ હોતે હૈ । આહરણ નામ ઉદાહરણ કા હૈ । હેતુ દો પ્રકાર કા હોતા હૈ—
 ૧ એક જ્ઞાપક હેતુ ઔર દૂસરા કારક હેતુ—ઘટકા—અભિવ્યંજક દીપ ઘટકા જ્ઞાપક
 હેતુ હૈ । ઘટકા કર્તા કુંભકાર—ઘટકા કારક હેતુ હૈ । ઉપસંહાર કા નામ
 ઉપનય હૈ । નૈગમાદિ સાત નય હૈ । ॥સૂત્ર ૫॥

“આવસ્સયં ણં” ઇત્યાદિ । ॥સૂત્ર ૬॥

શબ્દાર્થ—(આવસ્સયં ણં) આવશ્યક સૂત્ર (કિં અંગમ્) કયા ? એક અંગ
 રૂપ હૈ ? (અંગાઈ) યા અનેક અંગરૂપ હૈ ? (સુયં સુયાઈ) એક શ્રુતરૂપ હૈ ?
 યા અનેક શ્રુતરૂપ હૈ ? (સ્વંધો સ્વંધાઈ) એક સ્કંધરૂપ હૈ ? યા અનેકસ્કંધ
 રૂપ હૈ ? (અજ્ઞયણં અજ્ઞયણાઈ) એક અધ્યયનરૂપ હૈ—યા અનેક અધ્યયનરૂપ
 હૈ ? (ઉદેસો ઉદેસા) એક ઉદ્દેશરૂપ હૈ યા અનેક ઉદ્દેશરૂપ હૈ ?—

એ વાતનું સમર્થન કરે છે કે આ વિશેષણવાળો મુનિ કદી પણ સૂત્ર અને અર્થનું
 વિપરીત કથન કરતો નથી. જે મુનિ આદેયવચનથી ચુકત હોય છે, તેમના થોડાં
 વચનો પણ મહા અર્થથી ભરેલા હોય છે. “આહરણ” એટલે ઉદાહરણ અથવા
 દૃષ્ટાન્ત હેતુ બે પ્રકારનો હોય છે—(૧) જ્ઞાપકહેતુ અને (૨) કારક હેતુ ઘટનો
 અભિવ્યંજક દીપક ઘટના જ્ઞાપક હેતુરૂપ છે. ઘટનું નિર્માણ કરનાર કુંભકાર (કુંભાર)
 ઘટના કારકહેતુરૂપ છે. ઉપસંહારનું નામ ઉપનય છે. નૈગમ આદિ સાત નય છે. । સૂત્ર ૫ ।

“આવસ્સયં ણં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(આવસ્સયં ણં અંગમ્ અંગાઈ ?) આવશ્યક સૂત્ર શું એક અંગરૂપ
 છે, કે અનેક અંગરૂપ છે ? (સુયં સુયાઈ ?) શું તે એક શ્રુતરૂપ છે, કે અનેક શ્રુત-
 રૂપ છે ? (સ્વંધો સ્વંધાઈ ?) શું તે એક સ્કંધરૂપ છે, કે અનેક સ્કંધરૂપ છે ?
 (અજ્ઞયણં અજ્ઞયણાઈ ?) શું તે એક અધ્યયનરૂપ છે, કે અનેક અધ્યયનરૂપ છે ?
 (ઉદેસો ઉદેસા ?) શું તે એક ઉદ્દેશરૂપ છે, કે અનેક ઉદ્દેશરૂપ છે ?

અજ્ઞાનિ, શ્રુતમ્, નો શ્રુતાનિ, સ્કન્ધઃ નો સ્કન્ધાઃ નો અધ્યયનમ્ અધ્યયનાનિ, નો ઉદ્દેશો નો ઉદ્દેશાઃ ॥સૂ. ૬॥

ટીકા—‘આવસ્સયં ણં’ इत्यादि—

આવશ્યકં સ્વલુ કિં દ્વાદશાન્તર્ગતમેકમજ્ઞમિદમ્ ? કિં વા અજ્ઞાનિ—બહૂન્ય-જ્ઞાનિ । તથા કિં શ્રુતં શ્રુતાનિ ? આવશ્યકં કિમેકશ્રુતરૂપં કિંવાઽનેકશ્રુતરૂપમ્ ? તથા કિં સ્કન્ધઃ સ્કન્ધાઃ—કિમેકઃ સ્કન્ધઃ, બહવો વા સ્કન્ધાઃ ! । તથા અધ્યયનમ્ અધ્યયનાનિ આવશ્યકમિદં કિમેકમધ્યયનં કિં વા બહૂન્યધ્યયનાનિ । તથા ઉદ્દેશ-ઉદ્દેશા વા—કિમ્—એક ઉદ્દેશો વા બહવો વા ઉદ્દેશાઃ इति દશ પ્રશ્નાઃ ।

ઉત્તરયતિ—‘આવસ્સયં ણં’ इत्यादि । આવશ્યકં સ્વલુ નો એકાજ્ઞરૂપં નૈવા-

ઉત્તર—(આવસ્સયં ણં નો અંગં નો અંગાઈ) અનંગ પ્રવિષ્ટરૂપ શ્રુત હોને કે કારણ આવશ્યક સૂત્ર—ન એક અંગરૂપ હૈ । ઓર ન અનેક અંગરૂપ હૈ । ‘સુયં નો સુયાઈ’ યહ તો એક શ્રુતરૂપ હૈ । અનેક શ્રુતરૂપ નહીં હૈ । (સ્વંધો નો સ્વંધા) એક સ્કંધરૂપ હૈ, અનેક સ્કંધરૂપ નહીં હૈ । (નો અજ્ઞયણં, અજ્ઞ-યણાઈ) પડ્ અધ્યયન સ્વરૂપ હોને સે યહ એક અધ્યયનરૂપ નહીં હૈ કિન્તુ અનેક અધ્યયનરૂપ હૈ । (નો ઉદ્દેસો નો ઉદ્દેસા) યહ ન એક ઉદ્દેશરૂપ હૈ ઓર ન અનેક ઉદ્દેશરૂપ હૈ । ઇસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિં યહ આવશ્યક સૂત્ર એક શ્રુત સ્કંધાત્મક ઓર પડ્ અધ્યયનરૂપ હૈ । યહ એક અંગરૂપ ઓર અનેક અંગરૂપ નહીં હૈ । અનેક શ્રુતસ્કંધરૂપ નહીં હૈ ઓર ન એક અધ્યયનાત્મક હૈ, ન એક ઓર અનેક ઉદ્દેશરૂપ હી હૈ ।

શંકા—યહાં યે દો પ્રશ્ન હૈ કિં “યહ આવશ્યક સૂત્ર ૧ અંગરૂપ હૈ યા અનેક અંગરૂપ હૈ” કરને યોગ્ય હી નહી પ્રતીત હોતે—ક્યોં કિં યહ સૂત્ર નન્દિ-

ઉત્તર—(આવસ્સયં ણં નો અંગં નો અંગાઈ) અનંગ પ્રવિષ્ટ શ્રુતરૂપ હોવાને કારણે આવશ્યકસૂત્ર એક અંગરૂપ પણ નથી, અને અનેક અંગરૂપ પણ નથી. (સુયં નો સુયાઈ) તે એક શ્રુતરૂપ જ છે. અનેક શ્રુતરૂપ નથી, (સ્વંધા નો સ્વંધા) તે એક સ્કંધરૂપ છે, અનેક સ્કંધરૂપ નથી, (નો અજ્ઞયણં, અજ્ઞયણાઈ) તે ૬ અધ્યયનોવાળું હોવાને લીધે તેને એક અધ્યયનવાળું કહી શકાય નહીં, પણ અનેક અધ્યયનવાળું કહી શકાય. (નો ઉદ્દેસો, નો ઉદ્દેસા) તે એક ઉદ્દેશરૂપ પણ નથી અને અનેક ઉદ્દેશરૂપ પણ નથી. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—આવશ્યક સૂત્ર એક શ્રુતસ્કંધાત્મક અને છ અધ્યયનવાળું છે, તે એક અંગરૂપ પણ નથી અને અનેક અંગરૂપ પણ નથી, તે અનેક શ્રુતસ્કંધરૂપ પણ નથી, તે એક અધ્યયનાત્મક પણ નથી, અને એક અથવા અનેક ઉદ્દેશરૂપ પણ નથી.

શંકા—“આવશ્યક સૂત્ર એક અંગરૂપ છે ? કે અનેક અંગરૂપ છે ?” આ બે પ્રશ્નો અહીં પૂછતા બોલતા નહતા, કારણ કે આપે જ આગળ એવી વાત કરી

नैकाङ्गरूपम् अयानङ्गप्रविष्टत्वात् । श्रुतम्—इदमेकश्रुतरूपमस्ति नो श्रुतानि—बहु-
श्रुतात्मकं च नारित । स्कन्धः—इदमेकस्कन्धरूपं नतु स्कन्धाः—बहुस्कन्धात्मकं
न भवति । नो अध्ययनम्—नैकाध्ययनरूपम्, किन्तु अध्ययनानि—षडध्ययनात्म-
कतयाऽनेकाध्ययनरूपम् । नो उद्देशः—इदं नैकोद्देशरूपम्, नो उद्देशाः—न बहुद्देशा-
त्मकमित्यर्थः ।

अयं भावः—इदम् आवश्यकम् एकश्रुतात्मकत्वात् श्रुतमैक स्कन्धात्मकत्वात्
स्कन्धः षडध्ययनात्मकत्वात् अध्ययनानि च, किन्तु नो अङ्गम्, नो अङ्गानि, नो
श्रुतानि, नो स्कन्धाः, नो अध्ययनम्, नो उद्देशः, नो उद्देशा वा ।

नचावश्यकम्—अङ्गम् अङ्गानि वा ? इति प्रश्नद्वयमकरणीयमेव, नन्दिसूत्रे-
ऽस्यानङ्गप्रविष्टत्वेनोक्तत्वात्, अत्र तृतीयसूत्रे—‘इमं पुन पटुवणं पटुच्च अङ्ग-
पविट्टस्स अनुअङ्गो’ इत्यनेनास्य सूत्रस्यानङ्गप्रविष्टत्वेनोक्तत्वात् ? इति चेत्,
‘उच्यते—यत्तावदुक्तम्—नन्दिसूत्रेऽस्यानङ्गप्रविष्टत्वमुक्तम्, अतोऽत्र सूत्रेऽस्याङ्गत्वविषये
प्रश्नोऽयुक्त इति, तदयुक्तम्, यतो नास्ति काश्चिदेवंविधो नियमो यत्प्रथमं नन्दि-
सूत्रं व्याख्यायैवेदं सूत्रं व्याख्येयम्, कदाचिदनुयोगद्वारं व्याख्यायैव नन्दिसूत्रं

सूत्र में अनङ्ग प्रविष्टरूप से कहा गया है । तथा इसी सूत्र के तृतीय सूत्र में
“इमं पुन पटुवणं पटुच्च अङ्गपविट्टस्स अनुअङ्गो” इस अंशद्वारा भी इसी
बात को कहा है कि यह सूत्र अनङ्ग प्रविष्ट श्रुतरूप है । अतः अनङ्ग-
प्रविष्ट होने के कारण इस सूत्र के प्रति ये पूर्वोक्त दो प्रश्न अकरणीय ही हैं ।
उत्तर—इस बात को लेकर कि नन्दिसूत्र में इस सूत्र के अनङ्ग प्रविष्ट कहा है;
इसलिये सूत्र में अङ्गत्वविषयक ये दो प्रश्न अयुक्त हैं सो ऐसा कहना ठीक
नहीं है क्यों कि इस प्रकार का कोई नियम तो है नहीं कि पहिले नन्दि-
सूत्र का व्याख्यान करके ही इस सूत्र का व्याख्यान करना चाहिये । कदाचित्
ऐसा भी हो सकता है कि पहिले इस अनुयोगद्वार सूत्र का व्याख्यान कर

छे के आवश्यक सूत्रने नन्दिसूत्रमां अनङ्ग प्रविष्ट (अङ्गणाह्य) सूत्ररूपे कळेवामां
आव्युं छे. वणी आ अन्थना त्रीन सूत्रमां न “इमं पुन पटुवणं पटुच्च अङ्ग-
पविट्टस्स अनुअङ्गो” आ सूत्रांश द्वारा पणु आवश्यक सूत्रने अनङ्ग प्रविष्ट श्रुत
रूपे प्रतिपादित करवामां आव्युं छे. आ रीते तेने अनङ्गप्रविष्ट श्रुतरूप प्रकट कर्या
गाह उपयुक्त छे प्रश्नो शुं अस्थाने नथी ? आ प्रकारना प्रश्न करी पूछवामां शुं
युनरुक्ति दोषनी संभावना रहेती नथी ?

उत्तर—नन्दिसूत्रमां आवश्यकसूत्रने अनङ्ग प्रविष्ट श्रुतरूप कळेवामां आव्युं
छे, तेथी आ सूत्रने अनुलक्षीने अङ्गत्व विषयक न छे प्रश्नो पूछवामां आव्या छे,
ते प्रश्नाने अयुक्त गण्वा ते उचित नथी, कारण के अवेो केछ नियम तो नथी

વ્યાખ્યેયં भवेत् । किञ्च-यदि नन्दिसूत्रेऽस्या बाह्यत्वे निर्णीते पुनरस्याङ्गत्वविषये प्रश्नो निरर्थकस्तर्हि ‘जइ सुयनाणस उद्देसो समुद्देसो अणुण्णा अणुओगो य पवत्तइ, किं अंगपविट्ठस्स.....? किं अंगवाहिरस्स.....?’ इत्यादि तृतीयसूत्रोपन्यास एव निरर्थकः स्यात्, अतो नारित नन्दिसूत्र-अनुयोगद्वारसूत्रयोः पौर्वापर्यभावः, अतोऽस्याङ्गत्वविषये प्रश्नः समीचीन एव ।

ननु मङ्गलार्थं नन्दिसूत्रमेव प्रथमं व्याख्यातव्यम् ? इति चेदुच्यते-तदपि न, नन्दिसूत्रेऽपि ज्ञानपठचक्रेत्कीर्त्तनस्यैव मङ्गलत्वम्, तच्चेहाऽप्यस्तीति मङ्गलस्यापि नन्दिसूत्रस्य प्रथमव्याख्याने प्रयोजनाभावात् । रच्चेत्तम्-‘इमं पुण पट्टवणं’

के बाद में व्याख्याता नन्दिसूत्र का व्याख्यान करदें । किञ्च-यदि नन्दिसूत्र में इसमें अंगबाह्यता का निर्णय होने से अंगत्व विषयक प्रश्न निरर्थक है ऐसा ही मान लिया जावे तो फिर “जइ सुयनाणस” इत्यादि तृतीय सूत्र का उपन्यास ही निरर्थक हो जावे गा । इसलिये नन्दिसूत्र और अनुयोगद्वारसूत्र इनमें पौर्वापर्यभाव नहीं है-अतः अंगत्व विषयक प्रश्न इसके ऊपर जो किया गया है वह समीचीन ही है ।

शंका-मंगल के निमित्त नन्दिसूत्र ही प्रथम व्याख्यान करने योग्य है अतः इस तरह इन में पौर्वापर्यभाव आ जायगा-सो ऐसी भी बात नहीं है क्योंकि कि नन्दिसूत्र में भी पांच ज्ञानों के कथन से जिस प्रकार मंगलता है उसी प्रकार से वह मंगलता इसमें भी है । क्योंकि यहाँ पर भी पांच ज्ञानों

જ કે પહેલાં નન્દિસૂત્રનું વ્યાખ્યાન (કથન) કર્યા બાદ આ સૂત્રનું વ્યાખ્યાન કરવું ન જોઈએ. કદાચ એવું પણ સંભવી શકે છે કે પહેલાં આ અનુયોગ દ્વાર સૂત્રનું વ્યાખ્યાન કરીને ત્યારબાદ વ્યાખ્યાતા નન્દિસૂત્રનું વ્યાખ્યાન પણ કરે.

વળી એવું જ માની લેવામાં આવે કે નન્દિસૂત્રમાં આ સૂત્ર (આવશ્યક સૂત્ર) ની અંગબાહ્યતાનો નિર્ણય થઈ ગયો હોવાથી-અંગત્વ વિષયક જે પ્રશ્નો પૂછવામાં આવ્યા છે તે નિર્ણય લાગે છે, એવી પરિસ્થિતિમાં તો “જइ सुयनाणस” ઇત્યાદિ ત્રીજા સૂત્રનો ઉપન્યાસ જ નિર્ણય બની જશે. નન્દિસૂત્ર અને અનુયોગદ્વારસૂત્રમાં પૌર્વાપર્ય ભાવનો સદ્ભાવ નથી, તેથી તેને અનુલક્ષીને અંગત્વ વિષયક જે પ્રશ્નો પૂછવામાં આવ્યા છે તે ઉચિત જ છે.

શંકા-મંગળનિમિત્તની અપેક્ષાએ તો નન્દિસૂત્ર જ પ્રથમ વ્યાખ્યાન કરવા યોગ્ય છે, તે કારણે તે બન્નેમાં પૌર્વાપર્ય ભાવનો સદ્ભાવ પણ સંભવી શકે છે.

ઉત્તર-એવી વાત પણ નથી, કારણ કે નન્દિસૂત્રમાં પણ પાંચ જ્ઞાનના કથનથી જેવી મંગળતાનો સદ્ભાવ છે, એવી જ મંગળતાનો આ સૂત્રમાં પણ સદ્ભાવ છે,

इत्यादिनाऽऽस्थानङ्गत्वमुक्तमेव, पुनरस्त्याङ्गत्वविषये प्रश्नोऽसमीचीन एवेति. तत्सत्यम्, परन्तु विस्मरणशीलानामल्पबुद्धिमतां शिष्याणामनुग्रहार्थमेवायं प्रश्नः, इत्यस्याङ्गत्वविषये प्रश्नो निर्दुष्ट एवेति बोध्यम् ॥ सू० ६ ॥

‘इमं पुण पट्टवणं पडुच्च आवस्सगस्स अणुओगो’ । इत्यनेन ‘आवश्यकम्’ इति सूत्रनाम निर्णीतम्, तथाऽनन्तरोक्तेषु दशसु प्रश्नेष्ववश्यकं श्रुतत्वेन स्कंध-त्वेनाध्ययनकलापात्मकत्वेन च निर्णीतम्, तस्मात् प्रकृते किम् ? इत्याह-‘तस्मा’ इत्यादिना

का सर्व प्रथम कथन किया गया है । इस लिये इस बात को लेकर मंगल भूतभी नन्दिसूत्र का प्रथम व्याख्यान करना चाहिये यह बात नहीं बनती है । क्योंकि इस प्रकार के कथन में कोई खास प्रयोजन की पुष्टि नहीं होती है । तथा यह जो बात यही है कि ‘इमं पट्टवणं’ इत्यादि पाठ से भी इस अनुयोगद्वार में अनङ्गप्रविष्टता प्रतिपादित होती है अतः इस में यह अंगत्व विषयक प्रश्न असमीचीन ही है सो यह बात ठीक है-परन्तु जो शिष्य विस्मरणशील है और अल्पबुद्धिवाले हैं उनके अनुग्रह के लिये ही यह प्रश्न किया गया है । इस तरह इसमें यह अंगत्व विषयक प्रश्न निर्दोष ही है ऐसा जानना चाहिये । ॥सू० ६॥

“इमं पुण पट्टवणं पडुच्च आवस्सगस्स अणुओगो” इस सूत्र पाठ से इसका नाम आवश्यक सूत्र है यह निर्णीत हो जाता है, तथा अनन्तरोक्त दश प्रश्नों में यह आवश्यक श्रुतरूप है, स्कंधरूप है, और पट्टाध्ययनात्मक है यह

કારણ કે આ સૂત્રમાં પણ સૌથી પહેલાં પાત્ર જ્ઞાનોનું જ કથન કરવામાં આવ્યું છે. આ દૃષ્ટિએ વિચાર કરવામાં આવે તો મગળભૂત નન્દિસૂત્રનું જ પ્રથમ વ્યાખ્યાન કરવું જોઈએ, એવી વાત પ્રતિપાદિત થતી નથી, કારણ કે આ પ્રકારના કથનથી કોઈ ખાસ પ્રયોજનને પુષ્ટિ મળતી નથી.

તથા એવી જ દલીલ કરવામાં આવી છે કે “इमं पट्टवणं” इत्यादि सूत्रपाठ द्वारा પણ આ અનુયોગ દ્વારમાં અનંગપ્રવિષ્ટતા પ્રતિપાદિત થાય છે, તેથી અંગત્વ વિષયક પ્રશ્નો અનુચિત જ છે, તો એ દલીલ પણ ખરાબર નથી, કારણ કે જે શિષ્ય વિસ્મરણશીલ અને અલ્પબુદ્ધિવાળા હોય તેમના ઉપર અનુગ્રહ કરવાને માટે જ આ બે પ્રશ્ન પૂછવામાં આવ્યા છે. તે કારણે અંગત્વ વિષયક બે પ્રશ્ન પૂછવામાં આવેલ છે, તે બધા નિર્દોષ પ્રશ્નો જ સમજવા જોઈએ. ॥ સૂ. ૬ ॥

“इमं पुण पट्टवणं पडुच्च आवस्सगस्स अणुओगो” આ સૂત્રપાઠ દ્વારા તેનું નામ આવશ્યકસૂત્ર છે, તે નિર્ણીત થઈ જાય છે, અને ત્યાર પછીના દસ પ્રશ્નો દ્વારા એ નિર્ણીત થઈ જાય છે કે આ સૂત્ર શ્રુતરૂપ છે, સ્કંધરૂપ છે અને છ

મૂલમ—તમ્હાં આવસ્સયં નિવિલ્લવિસ્સામિ, સુયં નિવિલ્લવિસ્સામિ
સ્કંધં નિવિલ્લવિસ્સામિ, અજ્ઞયણાઈં નિવિલ્લવિસ્સામિ ॥ સૂ. ૭ ॥

હાથા-તરમાત્ આવશ્યકં નિલ્લેપ્યામિ, શ્રુતં નિલ્લેપ્યામિ સ્કંધ નિલ્લેપ્યા-
મિ, અધ્યયનાનિ નિલ્લેપ્યામિ ॥ સૂ. ૭ ॥

ટીકા—‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ—

इह हि आवश्यकसूत्रस्यानुयोगः तच्चाऽऽवश्यकं श्रुतरूपं स्कंधरूपम्,
अध्ययनरूपं च । ‘तम्हा’ तस्मात् आवश्यकं निक्षेप्यामि=आवश्यकं निक्षेपं
करिष्यामि, श्रुतं निक्षेप्यामि=श्रुतस्य निक्षेपं करिष्यामि, स्कन्धं निक्षेप्यामि
स्कन्धस्य निक्षेपं करिष्यामि, अध्ययनानि निक्षेप्यामि=अध्ययनानां निक्षेपं करि-

निर्णीत हो जाता है—इससे प्रकृत में क्या बात आती है ? इस शंका के
“समाधान निमित्त” सूत्रकार कहते हैं—

“तम્हा आवस्सयं” इत्यादि । ॥सू. ७॥

शब्दार्थ—यहां आवश्यक सूत्र का अनुयोग प्रस्तुत है और वह आव-
श्यक श्रुतरूप, स्कंधरूप एवं अध्ययनरूप है । (तम્हा) इसलिये (आवस्सयं)
आवश्यक का मैं (निविल्लवિस्सामि) निक्षेप करूंगा । (सुयं निविल्लवિस्सामि)
श्रुत का निक्षेप करूंगा (अज्झयणाईं निविल्लवિस्सामि) अध्ययनों का निक्षेप
करूंगा । इसका तत्पर्य यह है—कि जब यह शास्त्र आवश्यक आदिरूप से निर्णीत
हो चुका है । तब इन आवश्यक आदि शब्दों का अर्थ खुलासारूप से स्पष्ट
करने के योग्य हो जाता है । इसके अर्थ का स्पष्टरूप से विवेचन तभी हो
सकता है कि जब पदों का निक्षेप किया जावे । बिना निक्षेप किये इन

અધ્યયનવાળું છે. હવે આ સૂત્રમાં કયા કયા વિષયનો સમાવેશ થાય છે, તે પ્રકટ
કરવા નિમિત્તે સૂત્રકાર કહે છે કે—“તમ્હા આવસ્સયં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—અહીં આવશ્યક સૂત્રનો અનુયોગ પ્રસ્તુત છે, અને તે આવશ્યક
શ્રુતરૂપ, સ્કંધરૂપ અને અધ્યયનરૂપ છે. તમ્હા તેથી (આવસ્સયં નિવિલ્લવિસ્સામિ)
આવશ્યકનો હું નિલ્લેપ કરીશ, (સુયં નિવિલ્લવિસ્સામિ) શ્રુતનો નિલ્લેપ કરીશ,
(અજ્ઞયણાઈં નિવિલ્લવિસ્સામિ) અને અધ્યયનોનો હું નિલ્લેપ કરીશ.

આ કમનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—જ્યારે આ શાસ્ત્ર આવશ્યક આદિરૂપે
નિર્ણીત થઈ ગયું છે, ત્યારે આ આવશ્યક આદિ શબ્દોના અર્થ ખુલાસા સહિત
સ્પષ્ટ કરવાનું જરૂરી બની જાય છે. તેના અર્થનું સ્પષ્ટરૂપે વિવેચન કરવાનું
કાર્ય ત્યારે જ સરળ બની શકે કે જ્યારે પદોનો નિલ્લેપ કરવામાં આવે. નિલ્લેપ

प्वामि । अयं भावः—इदं शास्त्रमावश्यकदिरूपतया निर्णीतम्, अत आवश्यकानां शब्दानामर्थो निरूपणीयः ! स च निक्षेपपूर्वक एव स्पष्टतया निरूपितो भवति, अत आवश्यकानां निक्षेपः क्रियते । निक्षेपश्च निक्षेपणं आवश्यक-
देयथासम्भवं नामादिभेदनिरूपणम् ॥सू० ७॥

उत्कृष्टतो जघन्यतश्च कियान् निक्षेपः कर्त्तव्यः ? इत्याह—

मूलम्—जत्थ य जं जाणेज्जा निक्खेवं निक्खिक्खे निरवसेसं ।

जत्थ वि य न जाणेज्जा चउक्कग निक्खिक्खे तत्थ ॥सू० ८॥

छाया—यत्र च यं जानीयाद् निक्षेपं निक्षिपेत् निरवशेषम् । यत्रापि च न जानीयात्, चतुष्कं निक्षिपेत्तत्र ॥सू० ८॥

के अर्थ का विवेचन स्पष्टरूप से नहीं हो सकता है । इसलिये इन आव-
श्यक आदि शब्दों का अब निक्षेप किया जाता है । निक्षेप का अर्थ—आव-
श्यक आदि शब्दों के यथा संभव नामादि भेदों का निरूपण करना—होता है । ॥सूत्र ७॥

उत्कृष्टरूप से और जघन्यरूप से कितने निक्षेप कर्त्तव्य होते हैं इसके लिये
सूत्रकार कहते हैं कि— “जत्थ य जं जाणेज्जा” इत्यादि । सू० ८ ॥

शब्दार्थ—(जत्थ य जं जाणेज्जा) जीवादिरूप वस्तु में निक्षेप
यदि निक्षेप—न्यास—को जानता हो तो उस जीवादिरूप वस्तु में
वह (निरवसेसं निक्खेवं निक्खिक्खे) नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल,
भव और भावादि स्वरूप समस्त निक्षेप भेदों का निरूपण करें । (जत्थ वि य न
जाणेज्जा तत्थ चउक्कगं निक्खिक्खे) तथा जिस वस्तु में जीवादिरूप पदार्थ में—

क्या बिना अर्थानुं विवेचन स्पष्टतापूर्वक थछ शक्तुं नथी. तेथी आ आवश्यक
आदि पढोना हुवे निक्षेप करवाभां आवे छे.

निक्षेपना अर्थ आवश्यक शब्दोना यथा संलव नामादि लेहोनुं निरूपण
करवुं तेनुं नाम न निक्षेप छे. ॥ सू० ७ ॥

उत्कृष्टरूपे अने जघन्यरूपे डेटला निक्षेप कर्त्तव्य (यखा योज्य) होय छे, ते
प्रकट करवाने भाटे सूत्रकार कहे छे डे—

“जत्थ य जं जाणेज्जा” इत्यादि—

शब्दार्थ—(जत्थ य जं जाणेज्जा) ज्वादिइय वस्तुभां निक्षेप निक्षेप
(न्यास)ने जणुतो होय तो (निरवसेसं निक्खेवं निक्खिक्खे) ते ज्वादिइय वस्तुभां
नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, लव अने लावादिइय निक्षेपना समस्त लेहोनुं
निरूपण करवुं जेधये. (जत्थ वि य न जाणेज्जा तत्थ चउक्कगं निक्खिक्खे) तथा
जे वस्तुभां—ज्वादिइय पदार्थभां—समस्त निक्षिपोने (निक्षेप निक्षेप करमार शुरु)

ટીકા—‘જથ્થ ય’ ઇત્યાદિ—

યત્ર ચ=જીવાદિ વસ્તુનિ યં નિક્ષેપં-ન્યાસં જાનીયાત્,

તત્ર જીવાદિવસ્તુનિ નિસ્વશેષં=સમગ્રં-નામ સ્થાપના દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભવભાવાદિ સ્વરૂપં નિક્ષેપભેદસમૂહં નિક્ષિપેત્-નિરૂપયેત્ । યત્રાપિ ચ અપિ ચ=પુનઃ યત્ર=યસ્મિન્ જીવાદિવસ્તુનિ સર્વાન્ નિક્ષેપાન્ ન જાનીયાત્, તત્ર-તસ્મિન્નાપિ જીવાદિવસ્તુનિ ચતુષ્કં-નામસ્થાપનાદ્રવ્યભાવરૂપં નિક્ષેપં નિક્ષિપેત્-ન્યસ્યેન્ । અયં ભાવઃ-યત્ર નામસ્થાપનાદ્રવ્યક્ષેત્રકાલભવભાવાદિલક્ષણા ભેદા જ્ઞાયન્તે, તત્ર એભિઃ સર્વૈરપિ ભેદૈર્વસ્તુનો નિક્ષેપો ભવતિ । યત્ર તુ સર્વે ભેદા ન જ્ઞાયન્તે, તત્રાપિ નામાદિ-મિશ્રતુર્મિવસ્તુનિક્ષેપવ્યમેવ, નામાદીનાં સર્વવ્યાપકત્વાન્ । ન હિ કિમપિ સદૃશં વસ્તુ વિદ્યતે, યત્ર નામાદિવતુષ્ટયં નાસ્તીતિ ॥સૂ૦ ૮॥

યદિ વહ નિક્ષેપ્તા સમસ્ત નિક્ષેપોં કો નહીં જાનતા હો તો મી ઉસ વસ્તુ મેં વહ નામ સ્થાપના, દ્રવ્ય, ઔર ભાવરૂપ ચાર નિક્ષેપોં કા ન્યાસ કરેં ।

ભાવાર્થ—જહાં પર નામ સ્થાપના, દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ, ભવ, ઔર ભાવ આદિરૂપ નિક્ષેપ ભેદ જાને જાતે હૈં વહાં પર ઇન સમસ્ત મી ભેદોં સે વસ્તુ કા નિક્ષેપ હોતા હૈ । પરન્તુ જહાં યે સબ ભેદ નહીં જાને જાતે હૈં વહાં મી નામ આદિ ચાર વસ્તુ કા નિક્ષેપ તો કરના હી ચાહિયે । ક્યોં કિ નામાદિક સર્વવ્યાપક હૈં । એસી કોઈ વસ્તુ નહીં હૈં કિ જિસ મેં નામાદિ ચતુષ્ટય નહીં હૈં ।

લોક મેં યા આગમ મેં જિતના મી શબ્દવ્યવહાર હોતા-હૈં-વહ કહોં કિસ અપેક્ષા સે કિયા જા રહા હૈ । ઇસ ગ્રન્થી કો સુલજ્ઞાના હી નિક્ષેપ-વ્યવસ્થા કા કામ હૈ । પ્રયોજન કે અનુસાર એક હી શબ્દ કે અનેક અર્થ હો

જાણુતા ન હોય, તે વસ્તુમાં પણ નામ, સ્થાપના, દ્રવ્ય અને ભાવરૂપ નિક્ષેપના ચાર ભેદોનું નિરૂપણ તો તેમણે કરવું જ જોઈએ.

ભાવાર્થ—જ્યાં નામ, સ્થાપના, દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ, ભવ અને ભાવ આદિરૂપ નિક્ષેપ જાણી શકાય એમ હોય ત્યાં આ સમસ્ત ભેદોની અપેક્ષાએ વસ્તુનો નિક્ષેપ થાય છે. પરન્તુ જ્યાં આ બધાં ભેદો જાણી શકાતા ન હોય ત્યાં પણ નામ, સ્થાપના, દ્રવ્ય અને ભાવ, આ ચાર વસ્તુનો નિક્ષેપ તો કરવો જ જોઈએ, કારણ કે નામાદિક ચારે વસ્તુઓ તો સર્વવ્યાપક છે. એવી કોઈ પણ વસ્તુ નથી કે જેમાં નામાદિ ચતુષ્ટયનો સફળાવ ન હોય.

લોકમાં અથવા આગમમાં જેટલા શબ્દોનો વ્યવહાર થાય છે તે ક્યાં કંઈ દૃષ્ટિએ કરવામાં આવતો હોય છે, આ સમસ્યાને હલ કરવાનું જ નિક્ષેપ-વ્યવસ્થાનું કામ છે. એક જ શબ્દના પ્રયોજન અનુસાર અનેક અર્થ થતા હોય છે, તે અર્થ

आवश्यकं, श्रुतं, स्कन्धम्, अध्ययनानि च निक्षेपस्यामीति प्रतिज्ञातम् ।
तत्र प्रतिज्ञानुसारेण प्रथममावश्यकनिक्षेपार्थमाह—

मूलम्—से किं तं आवस्सयं ? आवस्सयं चउव्विहं पणत्तं,
तं जहा—नामावस्सयं ठवणावस्सयं दव्वावस्सयं भावावस्सयं ।सू०९।

जाते हैं । ये अर्थ ही उस शब्द के न्यास—निक्षेप—अथवा विभाग हैं । शब्द का अर्थ यदि निक्षेप्ता नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भाव आदि रूप से जानता है तो उसका कर्तव्य है कि वह इन सब न्यासों का विश्लेषण उस शब्द के अर्थ को समझाने में करे । यदि वह इन सब भेदों से परिचित नहीं है तो कम से कम उस शब्दार्थ को वह नाम, स्थापना, द्रव्य और भावरूप से विश्लेषण अवश्य करे । क्योंकि कि ऐसा कोई भी पदार्थ नहीं है जो इन चाररूप न हो । हरएक पदार्थ कम से कम नाम, स्थापना, द्रव्य और भावरूप तो है ही । इन में से वक्ता किस निक्षेपरूप अर्थ का प्रतिपादन कर रहा है यह बात सहज में समझ में आ जाती है । इस से प्रकृत अर्थ का बोध और अप्रकृत अर्थ का निराकरण होनेरूप फल श्रोता को प्राप्त हो जाता है । सूत्र ८।

अब सूत्रकार प्रतिज्ञा के अनुसार आवश्यक इस शब्द का निक्षेपार्थ क्या है । इस बात को स्पष्ट करते हैं । क्योंकि उन्होंने अभी ऐसी प्रतिज्ञा की है कि मैं आवश्यक, त, स्कंध और अध्ययनों का निक्षेप करूँगा ।

જ તે શબ્દના ન્યાસ, નિક્ષેપ અથવા વિભાગરૂપ છે. જે નિક્ષેપ્તા (નિક્ષેપ કરનાર શુરુ) શબ્દનો અર્થ નામ, સ્થાપના, દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ, ભવ અને ભાવ આદિ રૂપે જાણતો હોય, તો તેનું એ કર્તવ્ય થઈ પડે છે કે તેણે શબ્દનો અર્થ સમજાવતી વખતે આ બધાં ન્યાસો (વિભાગો)નું વિશ્લેષણકરવું જોઈએ. જે નિક્ષેપ્તા એ બધાં ભેદોથી પરિચિત ન હોય તો તેણે શબ્દાર્થનું નામ, સ્થાપના, દ્રવ્ય અને ભાવરૂપે તો અવશ્ય વિશ્લેષણ કરવું જ જોઈએ, કારણ કે એવો કોઈ પદાર્થ નથી કે જેમાં નામ આદિ ઉપર્યુક્ત ચાર નિક્ષેપોનો સહભાવ જ ન હોય પ્રત્યેક પદાર્થ એછામાં એછા નામ, સ્થાપના, દ્રવ્ય અને ભાવરૂપ તો અવશ્ય હોય જ છે. આ નિક્ષેપોમાંથી વક્તા કયા નિક્ષેપરૂપ અર્થનું પ્રતિપાદન કરી રહ્યો છે એ વાત સરળતાથી સમજાઈ જાય છે. તેના દ્વારા પ્રકૃત અર્થનો બોધ અને અપ્રકૃત અર્થનું નિરાકરણ થવારૂપ ફળ શ્રોતાને પ્રાપ્ત થઈ જાય છે. ॥ સૂ. ૮ ॥

હવે સૂત્રકાર પોતાની પ્રતિજ્ઞા અનુસાર “આવશ્યક” આ શબ્દનો શો નિક્ષેપાર્થ છે, તે પ્રકટ કરે છે, કારણ કે તેમણે હમણાં જ (પૂર્વ સૂત્રમાં) એવું વચન આપ્યું છે કે “હું આવશ્યક, શ્રુત, સ્કન્ધ અને અધ્યયનોનો નિક્ષેપ કરીશ.”

છાયા—અથ કિં તદાવસ્યકમ્ આવશ્યકં ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞસમ્, તદથા—નામા-
વશ્યકં સ્થાપનાવશ્યકં, દ્રવ્યાવશ્યકં, ભાવાવશ્યકમ્ ॥સૂ૦ ૯॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

‘સે’ ઇતિ ‘અથ’ શબ્દાર્થે । સ ચેહ વાક્યોપન્યાસે । ઉક્તં ચ—‘મજ્જલા-
નન્તરારમ્ભપ્રશ્નકાત્સન્યે’ષ્વથો અથ’ ઇતિ । કિં શબ્દઃપ્રશ્ને । તદિતિ પૂર્વપ્રક્રાન્તપરામર્શે
તતોઽયં નિષ્કર્પો—અથ તત્=પૂર્વપ્રક્રાન્તમ્ આવશ્યકં કિમ્=કિં સ્વરૂપમ્ ?
ઇતિ શિષ્યપ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—‘આવસ્સયં’ ઇત્યાદિના । આવશ્યકમ્—અવશ્યં કર્ત-
વ્યમ્—આવશ્યકમ્—શ્રમણાદિમિશ્રતુર્વિધસંઘેરવશ્યમુભયકાલં ક્રિયતે ઇતિ ભાવઃ ।

સે કિં તં આવસ્સયં ઇત્યાદિ । ॥સૂત્ર ૯॥

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં આવસ્સયં) શિષ્ય પૂછતા હૈં કિં હે ભદંત ! પૂર્વ
પ્રક્રાન્ત આવશ્યકકા કયા સ્વરૂપ હૈં ?

ઉત્તર—(આવસ્સયં ચતુર્વિધં પણત્તં) આવશ્યક ચાર પ્રકાર કા કહા ગયા
હૈં । (તંજહા) ઉસકે વે ચાર પ્રકાર યે હૈં—(નામાવસ્સયં, ઠાવણાવસ્સયં, દ્વા-
વસ્સયં ભાવાવસ્સયં) નામ આવશ્યક સ્થાપના આવશ્યક દ્રવ્ય આવશ્યક, ઓર
ભાવ આવશ્યક । અથ શબ્દ કા પ્રયોગ મજ્જલ અનન્તર, આરંભ, પ્રશ્ન ઓર
કાત્સન્યે इन अर्थों में होता है । यहां इसका प्रयोग वाक्य के उपन्यास में
हुआ है । “किं” शब्द प्रश्न में आया है । अवश्य कर्तव्य जो होता है उसका
नाम आवश्यक है । साधुसाध्वी और श्रावक श्राविकारूप चतुर्विध संघ के
लिये प्रातःकाल और सायंकाल यह नर्म आवश्यक कर्तव्य कहा गया है ।—अथवा

‘સે કિં તં આવસ્સયં’ ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં આવસ્સયં ?) શિષ્ય શુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે
“હું ભગવન્ ! પૂર્વોક્ત આવશ્યકનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(આવસ્સયં ચતુર્વિધં પણત્તં) આવશ્યક ચાર પ્રકારના કહ્યા છે,
(તં જહા) એ ચાર પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(નામાવસ્સયં, ઠવણાવસ્સયં, દ્વા-
વસ્સયં, ભાવાવસ્સયં) (૧) નામ આવશ્યક, (૨) સ્થાપના આવશ્યક, (૩) દ્રવ્ય
આવશ્યક અને (૪) ભાવ આવશ્યક. “અથ” શબ્દનો પ્રયોગ મંગળ, અનન્તર,
આરંભ, પ્રશ્ન, અને કાત્સન્ય, આટલા અર્થમાં થાય છે. અહીં તેનો પ્રયોગ વાક્યના
ઉપન્યાસમાં થયો છે. (“કિં”) આ પદ પ્રશ્ન પૂછવા નિમિત્તે વપરાયું હોવાથી પ્રશ્ના-
ર્થનું વાચક છે. જે અવશ્ય કરવા યોગ્ય હોય છે તેને આવશ્યક કહે છે. સાધુ,
સાધ્વી, શ્રાવક અને શ્રાવિકા રૂપ ચતુર્વિધ સંઘને સવારે અને સાંજે (સાયંકાળે)
અવશ્ય કર્તવ્ય (કરવા યોગ્ય) અમુક જે કાર્યો છે તેને આવશ્યક કહે છે. અથવા
અવશ્ય શબ્દનો આ પ્રમાણે પણ અર્થ થાય છે—અચલ, અરુજ, અક્ષય, અવ્યાપાધ

યદ્વા-અચલમરુજમક્ષયમવ્યાવાધમમન્દાનન્દસન્દોહરૂપં શાશ્વતં શિવસુખમવશ્ય-
નિશ્ચયેન ભવતિ યસ્માત્-તદાવશ્યકમ્ । યદ્વા-આ=સમન્તાદ્વશ્યા ભવન્તિ ઇન્દ્રિ-
યકષાયાદિ ભાવશત્રવો યસ્માત્તદાવશ્યકમ્ । યદ્વા-જ્ઞાનાદિગુણસમૂહો મોક્ષો વા
આ=સમન્તાદ્વશ્યઃ ક્રિયતેઽનેનેતિ-આવશ્યકમ્ ।

યદ્વા-‘આવસ્સય’ इत्यस्य ‘आवासक’ मितिच्छाया । विंशतिसंख्यकेषु
स्थानकेषु आवासयति-तदाराधने तत्परं करोत्यात्मानमित्यावासकं षड्विधावश्य-
कमेव । यद्वा-श्रुतचारित्रलक्षणधर्मारामे आवासयति-निवासयत्यात्मानमित्यावासकम् ।

इदं आवश्यकं चतुर्विधं-चत्स्रो विधा भेदा अस्येति चतुर्विधं-चतुःप्रकार-
कं प्रज्ञप्तं-प्ररूपितम् । तद्यथा-यथा-तदाव यकं चतुर्विधं भवति तथोच्यते-नामा-
वश्यकं, स्थापनावश्यकं, द्रव्यावश्यकं, भावावश्यकम्, इत्येवं चतुर्विधमावश्यकं भवति॥सू९॥

અવશ્યશબ્દ કા અર્થ અચલ અરુજ અક્ષય અવ્યાવાધ અમન્દઆનન્દ (અત્યન્ત આનંદ કા
પુંજ) કા સંદોહરૂપ જો શાશ્વત શિવ સુખ હૈ વહ હૈ । યહ શિવ સુખ નિશ્ચય સે જિસકે
પ્રભાવ વશ જીવાં કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ વહ આવશ્યક હૈ । અથવા-ઇન્દ્રિય ઔર કષાય
આદિ ભાવશત્રુ સર્વ પ્રકાર સે જિસ સે વશ મેં હો જાતે હૈ વહ આવશ્યકહૈ ।
અથવા-જ્ઞાનાદિક ગુણોં કા સમૂહ યા મંક્ષ જિસકે દ્વારા સર્વ પ્રકાર સે વશ્ય
કિયા જાતા હૈ વહ આવશ્યક હૈ । અથવા-“આવસ્સય” કી સંસ્કૃત છાયા
“આવાસક” એસી બી હૈ-જો ૨૦ સ્થાનોં મેં-અર્થાત્ ઇન સ્થાનોં કી આગધના
મેં-આત્મા કો તત્પર બનાતા હૈ ઉસકા નામ આવાસક હૈ ઔર વે ૧૫ છહ
પ્રકાર કે આવશ્યક હી હૈ । અથવા-શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મોધ્યાન મેં જા આત્મા
કા નિવાસ કરતા હૈ વહ આવાસક હૈ । યહ આવાસકરૂપ આવશ્યક ચાર
પ્રકાર કા કથિત હુઆ હૈ । ॥સૂત્ર ૯॥

અમન્દ આનંદના સંદોહરૂપ જે શાશ્વત શિવ સુખ છે તેને અવશ્ય કહે છે. જેના
પ્રભાવથી જીવને તે શિવ સુખની અવશ્ય પ્રાપ્તિ થઈ જાય છે, તે વસ્તુનું નામ
આવશ્યક છે. અથવા-ઇન્દ્રિયો અને કષાય આદિ ભાવશત્રુઓ જેના દ્વારા સર્વ પ્રકારે
વશ થઈ જાય છે, તેનું નામ આવશ્યક છે. અથવા જ્ઞાનાદિ ગુણોનો સમૂહ અથવા
મોક્ષ જેના દ્વારા સર્વ પ્રકારે વશ્ય (પોતાને અધીન) કરવામાં આવે છે, તેનું નામ
આવશ્યક છે. અથવા “આવસ્સય” આ પદની સંસ્કૃત છાયા “આવાસક” પણ
થાય છે. એ દૃષ્ટિએ વિચારવામાં આવે તો આવશ્યકનો અર્થ આ પ્રમાણે પણ થાય
છે-જે ૨૦ સ્થાનોની આરાધના કરવામાં પોતાના આત્માને પ્રવૃત્ત રાખે છે તેનું
નામ આવાસક છે, અને એવાં છ પ્રકારના જ આવશ્યક છે. અથવા શ્રુત ચારિત્રરૂપ
ધર્મોધ્યાનમાં જે આત્મા નિવાસ કરે છે તેને આવાસક કહે છે. તે આવાસકરૂપ
આવશ્યક ચાર પ્રકારના કહ્યા છે. ॥ સૂ. ૬ ॥

સમ્પ્રતિ નમાવશ્યકસ્ય સ્વરૂપં પ્રતિપાદયિતુ સૂત્રકાર આહ—

મૂલમ્—સે કિં તં નામાવસ્સયં ?, નામાવસ્સયં જસ્સ ણં જીવ-
સ્સ વો અજીવસ્સ વા જીવાણં વા અજીવાણં વા તદુભયસ્સ વા તદુ-
ભયાણં વા, આવસ્સણ્તિ નામં કજ્જહ, સે તં નામાવસ્સયં ॥સૂ૦૧૦॥

છાયા—અથ કિં તદ્ નામાવશ્યકમ્ ? નામાવશ્યકં—યસ્ય સ્વલુ જીવસ્ય વા અજીવ-
સ્ય વા જીવાનાં વા અજીવાનાં વા, તદુભયસ્ય વા, તદુભયેષાં વા આવશ્યક-
મિતિ નામ ક્રિયતે, તદેતન્નામાવશ્યકમ્ ॥ સૂ૦ ૧૦॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં નામાવ સય’ ઇતિ । અથ કિં
તન્નામાવશ્યકમ્ ? ઉત્તરયતિ—નામાવશ્યકમ્—એવં મત્તિ યસ્ય સ્વલુ જીવસ્ય વા
અજીવસ્ય વા, જીવાનાં વા અજીવાનાં વા, તદુભયસ્ય વા જીવાજીવોભયસ્ય વા,
તદુભયેષાં વા=જીવાજીવોભયેષાં વા આવશ્યકમિતિ નામ ક્રિયતે તદેતન્નામાવ-

અવ કાર નામ આવશ્યક વા કયા સ્વરૂપ હૈં ઇસે પ્રતિપાદન કરને
કે લિપે સૂત્ર કથન કરતે હૈં—“સે કિં તં નામાવસયં” ઇત્યાદિ । ॥ સૂત્ર ૧૦॥

શબ્દાર્થ—શિષ્ય પૂછતા હૈ કિ હે મદંત । (સે કિં તં નામાવસ્સયં) પૂર્વ
પ્રક્રાન્ત નામ આવશ્યક વા કયા સ્વરૂપ હૈ ? ઉત્તર—(નામાવસ્સયં) નામ આવ-
શ્યક વા સ્વરૂપ ઇત્ત પ્રકાર સે હૈ—(જસ્સ ણં જીવસ્સ વા અજીવસ્સ વા જીવાણં
વા અજીવાણં વા) જિસ મિસી જીવ કા અથવા અજીવ કા, યા અનેકજીવો
કા યા અનેક અજીવો કા (તદુભયસ્સ વા તદુભયાણં વા) અથવા જીવઅજીવ
દોનો કા, યા જીવાજીવો કા (આવસ્સણ્તિ નામં કજ્જહ) આવશ્યક એસા
જો નામ સ્થલિયા જાતા હૈ (સે તં નામાવસ્સયં) એહ નામ આવશ્યક હૈ । નામ

હવે સૂત્રકાર નામ આવશ્યકનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે, એ વાતનું પ્રતિપાદન
કરવાને માટે નીચેના સૂત્રનું કથન કરે છે—“સે કિં તં નામાવસ્સયં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે—(સે કિં તં નામાવસ્સય ?) હે
ભગવન્ ! પૂર્વોક્ત નામ આવશ્યકનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(નામાવસ્સય) નામ આવશ્યકનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે—(જસ્સ ણં
જીવ સ વા અજીવસ્સ વા, જીવાણં વા અજીવાણં વા) એ કેાઇ જીવનું અથવા
અજીવનું, અથવા અનેક જીવોનું કે અનેક અજીવોનું, (તદુભયસ્સ વા તદુભયાણં વા)
અથવા જીવ અજીવ બન્નેનું અથવા જીવોનું અને અજીવોનું (જીવો અને અજીવો
બન્નેનું) (આવસ્સણ્તિ નામં કજ્જહ) “આવશ્યક” એવું એ નામ નાખવામાં આવે
છે. (સે તં નામાવસયં) તેને ‘નામ આવશ્યક’ કહે છે નામ આવશ્યકમાં નામ

શ્યકમ્ । નામ ચ તદાવશ્યકં ચેતિ નામાવશ્યકં નામરૂપમાવશ્યકમિત્યર્થઃ ।
 યદ્વા-જીવાદિવસ્તુ નામાવશ્યકં ભવતિ, નામ્ના-નામમાત્રેણ આવશ્યકં નામાવશ્યક-
 મિતિ વ્યુત્પત્તિસંભવાત્ । યદિ જીવાદિ-વસ્તુન આવશ્યકમિતિ નામ ક્રિયતે
 તદા જીવાદિવસ્તુ નામમાત્રેણાવશ્યકં ભવતીતિ નામાવશ્યકશબ્દાર્થો જીવાદિ-
 વસ્તુભવતીતિ ભાવઃ । નામ્નો લક્ષણં ચેદમ્-“યદ્વસ્તુનોઽભિધાનં, સ્થિતમન્યાર્થે
 તદર્થનિરપેક્ષમ્ “અપર્યાયાનભિધેયં ચ નામ યાદૃચ્છિકં તથા ।” ઇતિ । અયં ભાવ-
 ‘યદ્વસ્તુનોઽભિધાનમ્’ વસ્તુનઃ इन्द्रादेः यदभिधानम्=इन्द्रेति वर्णपञ्चकानुपूर्वीरूपं

આવશ્યક મેં નામ હી આવશ્યક હો જાતા હૈ । અર્થાત્ “આવશ્યક” એસા
 નામ ઉસ વસ્તુ કા રખ લિયા જાતા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા ગહ હૈ કિ કિસી
 મી જીવાદિક કા “આવશ્યક” એસા જો વ્યવહાર મેં ઇચ્છાનુસાર ગુણનિરપેક્ષ
 નામ રખ લિયા જાયા કરતા હૈ વહ “આવશ્યક” કા નામનિક્ષેપ હૈ । ઇસ
 નામનિક્ષેપ મેં વસ્તુ કેવલ “આવશ્યક” ઇસ નામ માત્ર સે હી ઉસરૂપ કહી
 જાતી હૈ । ઇસ નામનિક્ષેપ મેં તદનુરૂપ ગુણોં કી આવશ્યકતા નહીં હોતી હૈ ।
 કેવલ વ્યવહાર ચલાને કે લિયે હી એસા ક્રિયા જાતા હૈ । અતઃ નામ માત્રેણ
 આવશ્યકં નામાવશ્યકં” ઇસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર વહ આવશ્યકરૂપ વસ્તુ નામ
 માત્ર સે આવશ્યક કહા જાતા હૈ । આવશ્યક જૈસેગુણ ઉસમેં નહીં હોતે ।
 ઇસ વિષય કા સુલાસા અર્થ ઇસ પ્રકાર સે હૈ-જવ કિસી જીવાદિ વસ્તુ કા
 “આવશ્યક” એસા નામ રખ લિયા જાતા હૈ ઉસ સમય વહ જીવાદિક વસ્તુ
 નામ માત્ર સે આવશ્યક કહલાતી હૈ । ઇસ પ્રકાર નામરૂપ આવશ્યક ઇસ

જ આવશ્યક થઇ જાય છે. એટલે કે તે વસ્તુનું “આવશ્યક” એવું નામ
 રાખવામાં આવે છે. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે કોઈ પણ જીવાદિકનું “આવ-
 શ્યક” એવું જે ગુણનિરપેક્ષ (ગુણની અપેક્ષાથી રહિત) નામ. ઇચ્છાનુસાર વ્યવહાર
 નક્કી કરવામાં આવે છે તેને “આવશ્યકનો નામ-નિક્ષેપ” કહે છે. આ નામનિક્ષેપ-
 માં વસ્તુને કેવળ “આવશ્યક” એવા નામ માત્રથી જ તે રૂપે ઓળખવામાં આવે
 છે. આ નામ નિક્ષેપમાં તેને અનુરૂપ હાય એવા ગુણોની આવશ્યકતા રહેતી નથી.
 કેવળ વ્યવહાર ચલાવવાને નિમિત્તે જ એવું કરવામાં આવે છે. તેથી “નામમાત્રેણ
 આવશ્યકં નામાવશ્યકં” આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર તે આવશ્યકરૂપ વસ્તુને નામ
 માત્રની અપેક્ષાએ જ-એટલે કે નામ પુરતી જ આવશ્યક કહેવામાં આવે છે-જો કે
 આવશ્યકને અનુરૂપ ગુણોનો તે વસ્તુમાં અભાવ હોય છે. આ વિષયનું વિશેષ સ્પષ્ટી-
 કરણ હવે કરવામાં આવે છે-જ્યારે કોઈ જીવાદિક વસ્તુનું “આવશ્યક” એવું નામ
 રાખવામાં આવે છે. ત્યારે તે જીવાદિક વસ્તુને નામમાત્રની અપેક્ષાએ જ આવશ્યક

તન્નામ, इति प्रथमः प्रकारः । अथ द्वितीयेन प्रकारेण नाम्नो लक्षणमाह—
‘स्थितमन्यार्थे’ तदर्थनिरपेक्षं पर्यायानभिधेयं च’ इति । अन्यार्थे—गोपालदार-
कादौ स्थितम्—इन्द्रेति नाम तदर्थनिरपेक्षं=तस्य प्रसिद्धस्य इन्द्रशब्दस्य परमै-
श्वर्यादिरूपो योऽर्थस्तन्निरपेक्षं भवति, गोपालदारकादौ परमैश्वर्यादिरभावात् ।
तथा—गोपालदारकादौ स्थितम् ‘इन्द्र’ इति नाम इन्द्रस्य ये पर्यायाः शक्रादयस्त-
दभिधेयंच भवति । शक्रादौ इन्द्रेति प्रसिद्धं नाम वाच्यार्थशून्ये गोपालदारका-

शब्द का वह जीवादिरूप वस्तु वाच्यार्थ हो जाता है । नाम वा लक्षण इस प्रकार से कहा गया है—

“वस्तुनो यदभिधानं तन्नाम” વસ્તુ નો અભિધાનમાં નામ રહે હવે નામ છે । जैसे किसी इन्द्रादिरूप वस्तु का इन्द्र इनमें इन्-द्र-अ-इन् पाँच अक्षरों की आनु-पूर्वीरूप आभिधान यह नाम का प्रथम प्रकार है । नाम के लक्षण का द्वितीय प्रकार इस तरह से है—“स्थितमन्यार्थे निरपेक्षं पर्यायानभिधेयं च” किसी गोपाल के लडके का नाम किसी ने इन्द्र ऐसा रखदिया—उसमें परमैश्वर्य आदि-रूप जो इन्द्रशब्द का अर्थ है वह है नहीं—क्यों कि वह तो ग्वाले का लडका है उस में परमैश्वर्य का होना कहां से आ सकता है, उसका तो उसमें अभाव ही है—इसलिये उसका इन्द्र यह नाम अपने अर्थ से निरपेक्ष है । और इन्द्र के जो शक्र पुरन्दर आदि पर्यायवाची शब्द हैं उन से भी वह अनभिधेय (नहीं कहने योग्य) है । इन पर्यायवाची शब्दों से अभिधेय तो इन्द्र ही हो सकता है । अतः

કહેવામાં આવે છે. આ રીતે તે જીવાદિરૂપ વસ્તુ નામરૂપ ‘આવશ્યક’ આ શબ્દનો વાચ્યાર્થ ખની જાય છે. નામનું લક્ષણ આ પ્રમાણે કહ્યું છે.

“વસ્તુનો યદભિધાનં તન્નામ” વસ્તુનું જે વ્યવહારમાં નામ રહે તેનું જ નામ ‘નામ’ છે. જેમ કે કોઈ ઇન્દ્રાદિરૂપ વસ્તુનું “ઇન્દ્ર” એવું પાંચ અક્ષરોની આનુપૂર્વીરૂપ અભિધાન. આ નામનો પ્રથમ પ્રકાર છે. નામના લક્ષણનો બીજો પ્રકાર આ પ્રમાણે છે—“સ્થિતમન્યાર્થે તદર્થનિરપેક્ષં પર્યાયાનભિધેયં ચ” કોઈજીવાળના પુત્રનું નામ કોઈએ ‘ઇન્દ્ર’ પાડ્યું ‘ઇન્દ્ર’ પદ તો પરમ ઐશ્વર્યનું વાચક છે. જોવાળના ‘ઇન્દ્ર’ નામના પુત્રમાં આ ઐશ્વર્ય ક્યાંથી સંભવી શકે ? તેમાં તો આ ગુણનો અભાવ જ હોય છે. આ રીતે તેનું આ નામ પોતાના અર્થની અપેક્ષાએ તો બરાબર ભાગતું નથી. આ રીતે અર્થની અપેક્ષા રાખ્યા વિના પણ કોઈ વસ્તુ કે વ્યક્તિને અસુક નામે ઓળખવામાં આવતી હોય છે. વળી શક્ર, પુરન્દર આદિ જે શબ્દો ઇન્દ્રના પર્યાયવાચી છે. તેમના દ્વારા પણ તે અનભિધેય છે. આ પર્યાયવાચી શબ્દો દ્વારા અભિધેય તો ઇન્દ્ર જ હોઈ શકે છે. આ રીતે જોવાળના બાળકને ઇન્દ્ર એવું

દાવારોપિતં, તદપિ નામ ભવતીતિ બોધ્યમ્ । તૃતીયપ્રકારેણાપિ તલ્લક્ષણમાહ—
'યાદૃચ્છિકં ચ તથા' ઇતિ । તથા—યદૃચ્છયા કમપ્યર્થમનાશ્રિત્ય સ્વેચ્છયા તથા-
વિધવ્યુત્પત્તિશૂન્યં "હિત્યહવિત્યાદિરૂપં નામ ક્રિયતે, તદપિ નામ । ઇતિ
ત્રિવિધં નામલક્ષણમ્ । ત્રિવિધિમપિ નામ અવશ્યકરણીયત્વાદ્ નામાવશ્યકમુચ્યતે ।
અત્ર સૂત્રે 'વા' શબ્દાઃ વિકલ્પાર્થકાઃ ।

નનુ જીવસ્ય 'આવશ્યકમ્' ઇતિ નામ કયં સંભવાત ? ઉચ્યતે—યથા
કશ્ચિલ્લે કે જીવસ્ય સ્વપુત્રાદે 'દેવદત્ત' ઇત્યાદિ નામ કરોતિ તથા કશ્ચિત્ સ્વે-

ગોપાલદારક (બાલક) કા ઇન્દ્ર એસા નામ જો કિ શક્ર આદિ મેં પ્રસિદ્ધ હૈ
વાચ્યાર્થ સે શૂન્ય બને હુએ ઉસ ગોપાલદારક મેં આરોપિત કિયા ગયા હૈ ।
નામ કે લક્ષણ કો યહ દ્વિતીય પ્રકાર હૈ । તથા જો યદૃચ્છા સે નામ રચ
લિયે જાતે હૈં વે યાદૃચ્છિક નામ હૈં જૈસે કિસી અર્થ કી અપેક્ષા કિયે વિના
હી હિત્ય હવિત્ય ઇત્યાદિ નામ તથાવિધ વ્યુત્પત્તિ સે રહિત રચે જાતે હૈં ।
ઇન નામોં કે રચને મેં રચનેવાલે કી ઇચ્છા હોતી હૈ । ઇસ તરહ યહ ત્રીન
પ્રકાર નામ કે લક્ષણ હૈં । યે ત્રીનો પ્રકાર કે નામ અવશ્યકરણીય હોને કે
કારણ નામ આવશ્યક કહે જાતે હૈ ।

શંકા—જીવકા "આવશ્યક" એસા નામ કૈસે સંભવિત હોતા હૈ ?

જે નામ રાખવામાં આવ્યું છે તે વાચ્યાર્થથી રહિત જ લાગે છે. શક્ર આદિને
અનુલક્ષીને જ્યારે "ઇન્દ્ર" નામ વપરાય છે. ત્યારે તો તે નામ તેના વાચ્યાર્થથી
ચુકત લાગે છે. આ રીતે વાચ્યાર્થ સાથે મેળ ન ખાય અથવા જે નામમાં વાચ્યાર્થ
નો જ અભાવ હોય એવું નામ પણ કોઇ કોઇ વાર રાખવામાં આવતું હોય છે.
નામના લક્ષણનો આ બીજો પ્રકાર સમજવો.

તથા જે નામ ઇચ્છા અનુસાર રાખવામાં આવે છે, તે નામને યાદૃચ્છિક નામ કહે
છે. જેમકે કોઇ અર્થની અપેક્ષા રાખ્યા વિના જ "હિત્ય, હવિત્ય" ઇત્યાદિ, તે
પ્રકારની વ્યુત્પત્તિથી રહિત નામો પણ રાખવામાં આવે છે. આ પ્રકારના
નામો રાખવામાં તે નામો રાખનારની ઇચ્છા જ મુખ્ય લાગ લગવતી હોય છે.
નામનું આ ત્રીજા પ્રકારનું લક્ષણ છે. આ રીતે પહેલા પ્રકારમાં "ઇન્દ્ર"
નામ સાર્થક લાગે છે, બીજા પ્રકારમાં ગોવાળના પુત્રનું "ઇન્દ્ર" નામ
તેના અર્થ પ્રમાણે શુભથી સંપન્ન લાગતું નથી ત્રીજા પ્રકારના
"હિત્ય, હવિત્ય" આદિ નામો કોઇ પણ પ્રકારના અર્થની અપેક્ષા વિના માત્ર
નામ રાખનારની ઇચ્છાનુસાર રાખવામાં આવે છે. આ ત્રણ પ્રકારનાં નામ અવશ્ય
કરણીય હોવાથી તેમને આવશ્યક કહેવામાં આવે છે.

શંકા—જીવનું "આવશ્યક" એવું નામ કેવી રીતે સંભવી શકે છે ?

છાવશાત્ સ્વપુત્રાદેરાવશ્યકમિતિ કરોતિ । ભાવાવશ્યક સ્વરૂપશૂન્યે ગોપાલદારકાદૌ
આવશ્યકેતિ નામકરણે નામ્ના-નામમાત્રેણાવશ્યકં નામાવશ્યકં ગોપાલદારકાદિ ભવતિ ।

અજીવસ્યાવશ્યકમિતિ નામ કથં સંભવતિ । ઉચ્યતે-‘આવશ્યકાવાસક’
શબ્દયોરેકાર્થતા પ્રોક્તા । લોકે હિ-શુષ્કોઽચિત્તો बहुकोटराकीर्णो वृक्षोऽन्यो

ઉત્તર—જેણે કોઈ વ્યક્તિ અપને પુત્ર કા નામ દેવદત્ત રાખ લેતા હૈં ઉસે
દેવને તો દિયા નહીં હૈં—પરન્તુ લોક વ્યવહાર ચલાને કે લિયે એસા કિયા
જાતા હૈં—ઉસી તરહ કોઈ ગ્વાલા આદિ અપની ઇચ્છા સે અપને પુત્ર આદિ
કા નામ “આવશ્યક” એસા રાખલેં તો યહ આવશ્યક કા નામ નિશ્લેષ હૈં ।
વાસ્તવ મેં આવશ્યક જેસે ગુણ ઉસ ગોપાલદારક મેં નહીં હૈં—વહ તો ઉન સે
શૂન્ય હૈં—અર્થાત્ ભાવાવશ્યક સે વહ રહિત હૈં—ઉસ મેં આવશ્યક એસા જો નામ-
કરણ કિયા ગયા હૈં વહ એક જીવ કો આશ્રિત નામ માત્ર કા આવશ્યક હૈં ।
હસ નામ માત્ર આવશ્યક કા વાચ્ય વહ ગોપાલદારક હૈં । એક અજીવ મેં
આવશ્યક એસા નામ નિશ્લેષ હસ પ્રકાર સે ઘટિત કરના ચાહિયે—

આવશ્યક ઓર આવાસક હન દોનોં શબ્દોં મેં એકાર્થતા અમી ર કહી
ગઈ હૈં—સો હસ દૃષ્ટિ કો ધ્યાન મે રાખકર અજીવ મેં “આવશ્યક” યહ નામ
એસે ઘટિત હો જાતા હૈં કિ કિસી વ્યક્તિને કિસી એક શુષ્ક (સૂચે) ઓર

ઉત્તર—જેમ કોઈ વ્યક્તિ પોતાના પુત્રનું નામ ‘દેવદત્ત’ રાખે છે, જો કે
દેવે તેને તે પુત્ર આપ્યો હોતો નથી, પરન્તુ લોકવ્યવહાર ચલાવવાને એવું કોઈ
પણ નામ રાખવું જ પડે છે, એજ પ્રમાણે જો કોઈ ગોવાળ આદિ વ્યક્તિ પોતાની
ઈચ્છાથી પોતાના પુત્રનું નામ “આવશ્યક” રાખી શકે છે. તો આ પ્રકારનું નામ
રાખવું તેનું નામ જ આવશ્યકનો નામનિશ્લેષ સમજવો. ખરી રીતે તો
તે ગોવાળના પુત્રમાં આવશ્યક જેવા શુણ્ણો તો હોતા નથી—એ
પ્રકારના શુણ્ણથી તો તે રહિત જ હોય છે. એટલે કે ભાવાવશ્યકથી તે બાળક
રહિત જ છે, છતાં પણ તેમાં ‘આવશ્યક’ એવા નામનું જ આશય પણ કરવામાં
આવ્યું છે તે એક જીવને આશ્રિત નામ માત્રનું જ ‘આવશ્યક’ છે. આ નામ માત્ર
ના આવશ્યકનો વાચ્ય તે ગોવાળપુત્ર છે. લોક વ્યવહાર ચલાવવા નિમિત્તે જ આવી
કોઈ પણ ‘સંજ્ઞા’ તે બાળકને બાળખવા માટે ઉપયોગી થઈ પડે છે એટલે જેમ
‘દેવદત્ત’ નામ રાખી શકાય છે, તેમ “આવશ્યક” નામ પણ શા માટે ન રાખી
શકાય કોઈ એક અજીવમાં “આવશ્યક” એવો નામ નિશ્લેષ આ પ્રકારે ઘટાવી શકાય
છે—આ સૂત્રમાં જ આગળ એ વાતનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે કે આવશ્યક અને
આવાસક, આ બંને સમનાથી પદો છે. આ દૃષ્ટિએ વિચાર કરવામાં આવે તો
અજીવમાં “આવશ્યક” એવું નામ આ પ્રમાણે સુસંગત લાગે છે—

वा तथाविधः कश्चित् पदार्थविशेषः सर्पादेरावासोऽयमिति प्रोच्यते । स वृक्षो-
ऽन्यो वा तथाविधः पदार्थो यद्यप्यनन्तैः परमाणुलक्षणैरजीवद्रव्यैर्निष्पन्नस्तथाऽप्येक-
स्कन्धपरिणतिमाश्रित्य एकाजीवत्वेन विवक्षितः । स्वार्थिक क प्रत्यये कृते आवास
एव आवासकमिति नाम एकस्याजीवस्य सिद्धम् ।

बहूनामपि जीवानामावासकमिति नाम संमति । यथा इष्टकापाकाद्य-
ग्निमूषिकावास इत्युच्यते । इष्टकापाकाद्यग्नौ हि मूषिकाः संमूर्च्छन्ति । अत-
स्तेषामसंख्येयानामग्निजीवानां पूर्ववदावासकमिति नाम सिद्धम् । बहूनाम-
जीवानामपि आवासकमिति नाम भवति । दृश्यते हि बहुभिरचितै स्तृणैर्नीडं

अनेक कोटरों से युक्त वृक्ष को अथवा इसी प्रकार के किसी दूसरे पदार्थ को
कि जिस में सर्पादिक का निवास स्थान है देखकर कह दिया कि यह वृक्षा-
दिशुष्क पदार्थ सर्पादिक का निवासस्थान है—आवासभूत है—। लोक में ऐसा
व्यवहार चलता है—इसलिये उस अजीव एक वृक्षादि पदार्थ का “आवासक
या आवश्यक ऐसा नाम रखना यह एक अजीव के आश्रित नाम निक्षेप का
विषय है । यद्यपि वह वृक्षादि पदार्थ अनंत परमाणुरूप अजीव द्रव्यों से निष्पन्न
हुआ है तो भी एक स्कंधरूप परिणति को आश्रित करके वह एक अजीव-
रूप विवक्षित किया गया है । तात्पर्य कहने का यह है कि यदि कोई यहाँ
पर ऐसी आशंका करें कि यहाँ पर एक अजीव पदार्थ को लेकर आवश्यक
ऐसा नाम निक्षेप का विषय प्रस्तुत है—शुष्क-वृक्ष में आपने इसे घटित किया
है सो वह शुष्क वृक्ष एक अजीव पदार्थ नहीं है—वह तो अनेक परमाणु

કોઈ એક શુષ્ક (સૂકા) અને અનેક બળોલોથી યુક્ત વૃક્ષમાં સર્પાદિક જીવોનો
વાસ જોધને એમ કહી દેવામાં આવે છે કે આ વૃક્ષ તો સર્પાદિકનું નિવાસસ્થાન
છે અથવા સર્પાદિકના આવાસરૂપ છે. લોકમાં આ પ્રકારનો વ્યવહાર ચાલે છે. તેથી
તે વૃક્ષાદિ અજીવ પદાર્થનું “આવાસક અથવા આવશ્યક” એવું નામ રાખવું તે
એક અજીવમાં “આવાસક અથવા આવશ્યક” એવા નામ નિક્ષેપરૂપ સમજવું. જો કે
તે વૃક્ષાદિ પદાર્થ અનંત પરમાણુ રૂપ અજીવ દ્રવ્યો વડે નિષ્પન્ન થયેલ હોય છે,
છતાં પણ એક સ્કન્ધરૂપ પરિણતિનો આશ્રય લઈને તેને એક અજીવરૂપે પ્રકટ
કરવામાં આવેલ છે. અહીં કોઈ એવી શંકા કરે કે અહીં તો એક અજીવ પદાર્થની
અપેક્ષાએ આવશ્યક એવા નામનિક્ષેપની વાત ચાલી રહી છે, આપે તો શુષ્ક વૃક્ષમાં
‘આવશ્યક’ એવો નામનિક્ષેપ કયો છે, પરંતુ તે શુષ્ક વૃક્ષ એક અજીવ પદાર્થરૂપ
નથી. તે તો અનેક પરમાણુ પુંજમાંથી નિષ્પન્ન થયેલું હોવાથી અનેક અજીવ દ્રવ
રૂપ પદાર્થ જ છે, તો આ શંકાનું સમાધાન આ કથન દ્વારા કરવામાં આવ્યું છે.
અહીં એમ બતાવવામાં આવ્યું છે કે શુષ્ક વૃક્ષ જો કે અનેક પૌદ્ગલિક પરમાણુ

સમ્પદ્યતે । તદ્વિ પક્ષિણામાગસવ મિત્યુચ્યતે । इत्थं बहूनामजीवानामपि 'आवा-
सक'मिति नाम सिद्धम् ।

પુંજ સે નિષ્પન્ન હોને કે કારણ અનેક અજીવ દ્રવ્યરૂપ પદાર્થ હૈ—સો ઇસ શંકા વા સમાધાન ઇસ વચન મેં ક્રિયા ગયા હૈ । કહા ગયા હૈ કિ વહ શુદ્ધ પદાર્થ યદ્યપિ અનેક પૌદ્ગલિક પરમાણુઓં કે પુંજ સે નિષ્પન્ન હુઆ હૈ—પાન્તુ ઉસરૂપ કી યહાં વિવક્ષા નહીં હૈ—યહાં તો ઉન સવકે સંવન્ધ સે એક પરિણતિરૂપ હુણ એક સ્કંધદ્રવ્ય કી વિવક્ષા હૈ—ઇસસે વહ એક અજીવ દ્રવ્ય કી વિવક્ષા હૈ—ઇસસે વહ એક અજીવ દ્રવ્ય હૈ । અનેક અજીવ દ્રવ્ય નહીં ।

અનેક જીવોં મેં આવાસક એસા નામ ઇસ પ્રમાર સે ઘટિત કરના ચાહિયે—ઇષ્ટકા (ઇંટ) પાક આદિ કી જો અગ્નિ હોતી હૈ ઉસમેં અનેક મૂષિકાઈ સંમૂર્ચ્છન જન્મ ધારણ કરતી હૈ । ઇસ અપેક્ષા વહ ઇષ્ટપાક આદિ કી અગ્નિ મૂષિકા-વાસરૂપ સે વહ દી જાતી હૈ । ઇસ તરહ ઉન અસંખ્યાત અગ્નિ જીવોં વા આવાસક એસા નામ સિદ્ધ હો જાતા હૈ । અનેક અજીવોં વા આવાસક એસા નામ ઇસ પ્રકાર સે હાતા હૈ કિ અનેક અચિત્ત તિનકોં સે નીડ-ઘોંસલા-વનતા હૈ । ઓર ઉસમેં પક્ષી રહતે હૈ—ઇસલિયે વહ પક્ષિયોં વા આવાસક હૈ—ઇસ નામ સે વહા જાંતા હૈ । અતઃ અનેક અજીવ મેં આવાસક એસા આવાસકા નામનિષ્કેપ

ઓના પુંજથી નિષ્પન્ન થયેલું છે, પાન્તુ અહીં તે પ્રકારની વિવક્ષા કરવામાં આવી નથી. અહીં તો તે બધાના સંબંધથી એક પરિણતિરૂપ થયેલા એક સ્કંધ દ્રવ્યની જ વિવક્ષા આવી રહી છે. તેથી તેને અહીં એક અણુવ દ્રવ્ય રૂપે જ પ્રતિપાદિત કરવામાં આવેલ છે, અનેક અણુવ દ્રવ્ય રૂપે પ્રતિપાદિત કરવામાં આવેલ નથી.

અનેક જીવોમાં “આવશ્યક” એવું નામ આ પ્રમાણે ઘટિત કરવું જોઈએ—

ઇંટો પકવવાના ભટ્ટા આદિની જે અગ્નિ હોય છે તેમાં અનેક મૂષિકાઓ (ઉંદરડીઓ) સંમૂર્ચ્છન જન્મ ધારણ કરે છે. તેથી તે ભટ્ટા આદિની અગ્નિને મૂષિકાવાસરૂપે પણ ઓળખવામાં આવે છે. આ રીતે તે અસંખ્યાત અગ્નિજીવોનું “આવાસક” એવું નામ સિદ્ધ થઈ જાય છે.

અનેક અણુવોનું આવાસક એવું નામ આ પ્રમાણે સિદ્ધ કહી શકાય છે.

અનેક અચિત્ત તણુખલાંઓની મદદથી માળો બને છે, અને તેમાં પક્ષીઓ રહે છે, તે કારણે તેને પક્ષીઓના આવાસરૂપ ગણીને એવું કહેવામાં આવે છે કે “આ પક્ષીઓનો આવાસક છે.” આ રીતે અનેક અણુવોમાં “આવાસક” એવો

જીવાંજીવોભયદ્વાપિ 'આવાસક'મિતિ નામ સંભવતિ । દૃશ્યતે હિ-જલા-શયોઘાનજલયન્ત્રાદિસહિતઃ પ્રાસાદાદિપ્રદેશો રાજાદેરાવાસ ઉચ્યતે । અ^ત ચ-જલાશયોઘાનાદયઃ સચેતનરત્નાદયશ્ચ જીવાઃ સન્તિ । ઇષ્ટકા કાણ્ણાદયોઽચેતન-રત્નાદયશ્ચાજીવાઃ સન્તિ । એતદુભયનિષ્પન્નસ્ય રાજપ્રાસાદાદિ-પ્રદેશસ્ય આવાસકં નામ સિદ્ધ્યતિ ।

ઉભયેષાં જીવાનામજીવાનાં ચાપિ 'આવાસક' મિતિ નામ સંભવતિ । દૃશ્યતે હિ-રાજપ્રાસાદયુક્તં સમ્પૂર્ણનગરં રાજાદીનામાવાસ ઉચ્યતે । સત્તલઃ સૌધર્માદિકલ્પ ઇન્દ્રાદીનામાવાસ ઉચ્યતે । इत्थं बहूनां जीवानामजीवानां च सम्मिलितानाम् 'आवासकम्' इति नाम सिद्धम् । રાજપ્રાસાદસ્ય લઘુત્ત્વાદેકમેવ જીવા-

સિદ્ધ હો જાતા હૈ । જીવ ઓર અજીવ ઇન દોનોં મેં આવાસક યહ નામ નિક્ષેપ ઇસ પ્રકાર સે બનતા હૈ, કિ જો રાજમહલ કા પ્રદેશ જલાશય, ઉઘાન એવં જલ યન્ત્ર-તલ-આદિ સે યુક્ત હોતા હૈ વહ રાજા આદિકા આવાસસ્થાન હૈ- ઇસ નામ સે કહાં જાતા હૈ । વહાં જો જલાશય, ઉઘાન એવં સચેતન રત્નાદિક હૈ-વે તો સચિત દ્રવ્ય હૈ ઓર ઇષ્ટકા (ઈંટ) કા ઘાણ, અચેતન રત્નાદિક હૈ વે સબ અજીવ હૈ । ઇન દોનાં સે નિષ્પન્ન હુએ ઉસ રાજમહલ આદિ કે પ્રદેશ કા નામ આવાસરૂપ હોને કે કારણ "આવાસક" કા નિક્ષેપ બનતા હૈ । ઇસી પ્રકાર સે જીવ અજીવ ઇન દોનોં કા ભી આવાસક યહ નામ ઇસ પ્રકાર સે ઘટિત હોતા હૈ કિ રાજપ્રાસાદ સે યુક્ત સમસ્ત નગર રાજાદિક કા આવાસ હૈ ઇસ રૂપ સે વ્યવહાર મેં કહ દિયા જાતા હૈ । તથા સૌધર્મ આદિ સમસ્ત કલ્પ ઇન્દ્રાદિકોં કે આવાસરૂપ સે વ્યવહૃત હોતે હૈ । ઇસ તરહ સંમિલિત અનેક અજીવ ઓર જીવોં કા "આવાસક" એસા નામ સિદ્ધ હો જાતા

આવાસનો નામનિક્ષેપ સિદ્ધ થઈ જાય છે. જીવ અજીવ, એ બન્નેમા "આવાસક" આ નામનિક્ષેપ આ પ્રમાણે સિદ્ધ કરી શકાય છે.

જે રાજમહેલનો પ્રદેશ જળાશય, ઉઘાન અને જળયન્ત્ર (નળ) આદિથી યુક્ત હોય છે, તેને "રાજા આદિતું આવાસસ્થાન છે," એ રૂપે કહેવામા આવે છે, ત્યાં જે ઉઘાન, જળાશય અને સચેતન રત્નાદિક વસ્તુઓ છે, તે તો સચિત્ત દ્રવ્યરૂપ જ છે, અને ઇંટની દીવાલો, અને અચેતન રત્નાદિકો વગેરે જે વસ્તુઓ છે, તે અચિત્તદ્રવ્યરૂપ હોવાથી અજીવ છે, એ બન્નેથી જેનું નિર્માણ થયું છે. એવા તે મહેલ આદિના પ્રદેશનું નામ આવાસરૂપ હોવાનેકારણે "આવાસક"નું નિક્ષેપ બનેછે. એજ પ્રમાણે જીવાજીવમાં પણ 'આવાસક' આ નામનિક્ષેપ આ પ્રમાણે ઘટાવી શકાય છે.

રાજપ્રાસાદથી યુક્ત સમસ્ત નગર "રાજાદિકોના આવાસ છે." આ રૂપે વ્યવહારમાં કહેવામાં આવે છે. તથા સૌધર્મ આદિ સમસ્ત કલ્પને ઇન્દ્રાદિકોના આવાસ રૂપ કહેવામાં આવે છે એ રીતે સંમિલિત અનેક અજીવો અને જીવોનું "આવાસક"

જીવોભયં વિવક્ષિતમ્ । નગરાદીનાં સૌધર્માદિકલ્પાનાં ચ મહત્વાદ્ બહૂનિ જીવા-
જીવોભયાનિ વિવક્ષિતાનિ । इत्थं जीवाजीवोभयैकत्वबहुत्वविषये एकत्वं बहुत्वं
च विवक्षाधीनं द्रष्टव्यम् । एवमन्यत्रापि जीवादीनामावासकनाम यथासंभवं
भावनीयम् । इदं हि दिङ्मात्रप्रदर्शनार्थमुक्तम् इति नामावश्यकप्ररूपणा ॥सू० १०॥

અથ સ્થાપનાઽઽવશ્યકં નિરૂપયિતું સૂત્રકાર આહ—

મૂલમ્—સે કિં તં ઠવળાવસ્સયં ? ઠવળાવસ્સયં જણં કટ્ટકમ્મે

હૈ । राजप्रासाद नगर एवं सौधर्म आदि की अपेक्षा लघु होने के कारण
जीव और अजीव इन दोनों रूप से एक कहा गया है । तथा राजप्रासाद
की अपेक्षा नगरादिक एवं सौधर्मकल्प महान्-विशाल-होने के कारण
अनेक जीव और अजीवरूप से विवक्षित, हुए हैं । इस प्रकार जीव, अजीव,
और उभय में अनेकत्व का यह विचार विवक्षा के आधीन हुआ जानना
चाहिये । इस प्रकार से अन्यत्र भी जीवादि वों का आवासक नाम यथा
संभव समझ लेना चाहिये । यह जो यहाँ समझाया गया है वह तो बहुत
ही संक्षेप से समझाया गया है ।

इस प्रकार यह नाम आवश्यक की प्ररूपणा जाननी चाहिये ।

भावार्थ—सूत्रकार ने यहाँ नाम आवश्यक का स्वरूप जीव अजीव आदि
पदार्थों के एकत्व अनेकत्व को लेकर समझाया है । इसे व्यवहार में पहिले
यों समझ लेना चाहिये—कि प्रत्येक शब्द का अर्थ चार प्रकार का होता है—
(१) नामरूप (२) स्थापनारूप, (३) द्रव्यरूप और चौथा भावरूप । शास्त्रीय
परिभाषा में इन्हें निक्षेप कहा गया है । निक्षेप नाम रखने या न्यास का है ।

એવું નામ સિદ્ધ થઈ જાય છે. રાજપ્રાસાદ, નગર એને સૌધર્મ કલ્પ આદિની અપેક્ષાએ
જીવ અને અજીવો નાના હોવાને કારણે તે બંનેને અહીં અજીવરૂપ એક શબ્દથીજ
પ્રતિપાદિત કરવામાં આવેલ છે. તથા રાજમહેલ કરતાં નગર સાધર્મોદિકલ્પો વિશાળ
હોવાને કારણે અનેક જીવ અને અજીવરૂપે વિવક્ષિત થયેલ છે. આ રીતે જીવ,
અજીવ અને ઉભયમાં એકત્વ અનેકત્વનો આ વિચાર વિવક્ષાને અધીન રહીને
થયેલો સમજવો. એજ પ્રકારે અન્યત્ર પણ જીવાદિકોનું ‘આવાસક’ નામ યથા સંભવ
સમજ લેવું જોઈએ. અહીં આ જે સમજૂતી આપવામાં આવી છે. તે તો બહુજ
સંક્ષિપ્તમાં આપવામાં આવી છે. આ પ્રકારની આ નામ આવશ્યકની પ્રરૂપણા સમજવી.

સૂત્રકારે અહીં નામ આવશ્યકનું સ્વરૂપ જીવ અજીવ આદિ પદાર્થોના એકત્વ
અનેકત્વની અપેક્ષાએ સમજાવ્યું છે. આ બાબતમાં પહેલાં તો એ સમજ લેવું
જોઈએ કે પ્રત્યેક શબ્દનો અર્થ ચાર પ્રકારનો હોય છે. તે ચાર પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે.

વા પોત્થકસ્મે વા, ચિત્તકસ્મે વા, લેપ્પકસ્મે વા ગંથિમે વા વેદિમે
વા પૂરિમે વા સંઘાદિમે વા અક્ષે વા વરાહણ વા ઇગો વા અણેગો
વા સઘ્ભાવઠવણા વા અસઘ્ભાવઠવણા વા આવસ્સણ ત્તિ ઠવણા
ઠવિજ્ઞહ, સે તં ઠવણાવસ્સયં ॥સૂ. ૧૧ ॥

જિસમે વ્યુત્પત્તિ કી પ્રધાનતા નહીં હૈ કિન્તુ જો માતાપિતા યા ઇતરલોગોં કે સંકેત બલ સે જાના જાતા હૈં વહ નામનિક્ષેપ કા વિષય હૈ. જૈસે કિસી વ્યક્તિ મેં “મહાવીર” જૈસે ગુણ નહીં હોને પર મી વ્યવહાર ચલાને કે નિમિત્ત ઉસકે માતા પિતા આદિ જન ઉત્કા નામ મહાવીર રખ લેતે હૈં. જો વસ્તુ અસલી વસ્તુ કે સદૃશ આકાર વાલી હૈ વહ સ્થાપના નિક્ષેપ કા વિષય હૈ. જૈસે જંબૂદ્વીપ કા નકશા અઢાદ્વીપ કા નકશા તથા વૃક્ષ મહેલ આદિ કા ચિત્ર. જા પદાર્થ ભાવ કા પૂર્વરૂપ યા ઉત્તરરૂપ હો વહ દ્રવ્યનિક્ષેપ કા વિષય હૈ—જૈસે જો વર્તમાન મેં શ્રાવકપુત્ર હૈ વહ આગે શ્રાવક બનેગા ઉસે શ્રાવક કહના. જિસ શબ્દ કે અર્થ મેં શબ્દ કા વ્યુત્પત્તિ યા પ્રવૃત્તિ નિમિત્ત વર્તમાન મેં વરાવર ઘટિત હો રહા હો વહ ભાવનિક્ષેપ કા વિષય હૈ. જૈસે વર્તમાન મેં મહાન વીરતા કે કાર્ય કરને વાલેકો મહાવીર કહના. ઇસી તરહ સે જિસ જીનાદિ

(૧) નામરૂપ (૨) સ્થાપનારૂપ, (૩) દ્રવ્યરૂપ અને (૪) ભાવરૂપ શાસ્ત્રોની પરિભાષામાં તેને નામનિક્ષેપ કહેવામાં આવે છે. નિક્ષેપ એટલે નામ રાખવું અથવા ન્યાસ (વિભાગ) કરવો તેનું નામ નિક્ષેપ છે.

જેમાં વ્યુત્પત્તિની પ્રધાનતા હોતી નથી પણ જે માતા, પિતા અથવા અન્ય લોકોના સંકેતનો આધાર લઈને જાણી શકાય છે, એવું નામનિક્ષેપનું સ્વરૂપ અથવા એવો નામનિક્ષેપનો વિષય છે. જેમકે કેાઈ વ્યક્તિમાં મહાવીર જેવાં ગુણોનો અભાવ હોવા છતાં પણ વ્યવહાર અજાવવાને નિમિત્તે તેના માતા, પિતા આદિ લોકો તેનું નામ મહાવીર રાખી લે છે જે વસ્તુ અસલી વસ્તુના સમાન આકારવાળી છે, તે સ્થાપના નિક્ષેપનો વિષય છે. જેમકે જંબૂદ્વીપનો નકશો, અઢીદ્વીપનો નકશો, વૃક્ષ મહેલ આદિના ચિત્ર, આ બધા સ્થાપના નિક્ષેપના ઉદાહરણો છે.

જે પદાર્થ ભાવનો પૂર્વરૂપ કે ઉત્તરરૂપ હોય, તે દ્રવ્યનિક્ષેપનો વિષય છે. જેમકે જે અત્યારે શ્રાવકપુત્ર છે તે ભવિષ્યમાં શ્રાવક બનશે માટે તેને શ્રાવક કહેવો જોઈએ. આનું નામ દ્રવ્યનિક્ષેપ છે.

જે શબ્દના અર્થમાં શબ્દની વ્યુત્પત્તિ અથવા પ્રવૃત્તિનું નિમિત્ત વર્તમાનમાં બરાબર ઘટાવી શકાતાં હોય. તે ભાવનિક્ષેપનો વિષય છે જેમકે વર્તમાન સમયે મહાવીરતાનું કાર્ય કરનારને મહાવીર કહેવો, તે ભાવરૂપ નિક્ષેપ થયો ગણાય.

પદાર્થ મેં આવશ્યક જૈસા એક મી ગુણ નહીં હૈ ઓર ઉસે આવશ્યક ઇસ નામ સે વ્યવહાર કરના સો નામ આવશ્યક હૈ । નામ કા ત્રીન પ્રકાર કે લક્ષણ સે વ્યવહાર હોતા હૈ—જહાં નામ કા વ્યુત્પત્તિ યા પ્રવૃત્તિ કા નિમિત્ત ઘટિત હોતા હૈ વહ નામ-નામનિક્ષેપ કા વિષય ન હો કર માનનિક્ષેપ કા વિષય બનતા હૈ । જૈસે પરમૈશ્વર્ય કો મોગતે હુએ ઇન્દ્ર નામધારી વ્યક્તિ કો ઇન્દ્ર ઇસ નામ સે પુકારના । યહ નામ કા પ્રથમ પ્રકાર હૈ । ઢિતીય પ્રકાર મં જૈસા નામ હો ઉસકી પ્રવૃત્તિ કા નિમિત્ત વ્યુત્પત્તિ કા નિમિત્ત ઉસ મં । હો કિન્તુ સંકેત આદિ હો તો યહ નામનિક્ષેપ મં પરિણમિત કિતા ગા હૈ જૈસે ગોપાલદારક—ગોપાલ વાલક । ત્રીતીય પ્રકાર મં હિત્ય, હવિત્ય આદિરૂઢ શબ્દ કિ જો વ્યુત્પત્તિ રહિત હી સ્વેચ્છાનુસાર પ્રચલિત હોતે હૈ—લિયે ગયે હૈ । ઇન મં મી પ્રવૃત્તિ કા નિમિત્ત વ્યુત્પત્તિ કા નિમિત્ત નહીં હોતા હૈ કિન્તુ રુઢિ હોતી હૈ । ઇસ તરહ કેવલ ઢિતીય પ્રકાર હી નામનિક્ષેપ કા વિષય પડતા હૈ । અતઃ જિસ મં આવશ્યક જૈસે ગુણ નહીં હૈં ઉસ મં આવશ્યક ઇસ નામ કા ન્યાસ (રચના) કરના યહ આવશ્યક કા નામનિક્ષેપ હૈ । જીવઆદિક પદાર્થો મં વહ નિક્ષેપ કિસ

એજ પ્રમાણે જે છવાદિ પદાર્થમાં ‘આવશ્યક’ એવો એક પણ ગુણ નથી, તે છવાદિ પદાર્થમાં ‘આવશ્યક’ એવા નામનો વ્યવહાર કરવો, તેને નામ આવશ્યક કહે છે. નામનો ત્રણ પ્રકારના લક્ષણોથી વ્યવહાર થાય છે—જ્યાં નામનું વ્યુત્પત્તિ અથવા પ્રવૃત્તિનું નિમિત્ત ઘટિત થતું હોય છે, તે નામ-નામનિક્ષેપનો વિષય બનવાને બદલે ભાવનિક્ષેપનો વિષય બની જાય છે. જેમકે પરમ એશ્વર્યથી સંપન્ન એવી કેાઈ વ્યક્તિને “ઇન્દ્ર” એવા નામે ઓળખવી. આ નામનો પહેલો પ્રકાર છે.

નામનો બીજો પ્રકાર—જેનું નામ હોય એવી પ્રવૃત્તિના નિમિત્તનો અથવા વ્યુત્પત્તિના નિમિત્તનો જેમાં સદ્ભાવ ન હોય, પરન્તુ સંકેત આદિનો સદ્ભાવ હોય તો તેને નામનિક્ષેપમાં પરિણમિત કરવામાં આવ્યું છે. જેમકે ગોવાળના પુત્રનું ‘ઇન્દ્ર’નામ.

ત્રીજા પ્રકારમાં ‘હિત્ય હવિત્ય’ આદિ રૂઢ શબ્દો કે જે વ્યુત્પત્તિથી રહિત છે અને જોલનારની ઇચ્છાનુસાર પ્રચલિત (ઉચ્ચારિત) થયેલ છે, તેમને ગણાવી શકાય છે. તેમાં પણ પ્રવૃત્તિનું નિમિત્ત અથવા વ્યુત્પત્તિનું નિમિત્ત હોતું નથી પણ રુઢિનો જ સદ્ભાવ હોય છે. આ રીતે કેવળ બીજો પ્રકાર જ નામનિક્ષેપના વિષયરૂપ ગણી શકાય છે. તેથી જેમાં આવશ્યક જેવાં ગુણ નથી, તેમાં ‘આવશ્યક’ આ નામનો ન્યાસ કરવો તેને આવશ્યકનો નામનિક્ષેપ કહે છે છવાદિક પદાર્થોમાં આ નિક્ષેપ કેવા પ્રકારે ઘટિત કરવામાં આવ્યો છે, તે વિષયનું ટીકાકારે સૂત્રની

છાયા:—અથ કિં તત્ સ્થાપનાવશ્યકમ્ ? સ્થાપનાવશ્યકં—યત્સલુ કાષ્ઠ-
કર્મણિ વા પુસ્તકર્મણિ વા ચિત્રકર્મણિ વા લેપ્યકર્મણિ વા ગ્રન્થિમે વા વેષ્ટિમે વા
પૂરિમે વા સંજ્ઞાતિમે વા અક્ષે વા વરાટકે વા ઇકો વા અનેકો વા સ્મદ્ધાવસ્થાપનયા વા
અસદ્ધાવસ્થાપનયા વા આવશ્યકેતિ સ્થાપ્યતે, તદેતત્ સ્થાપનાવશ્યકમ્ ॥મૂ૦ ૧૧॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

‘સે કિં તં ઠવણાવસ્સયં’ અથ કિં તત્ સ્થાપનાવશ્યકમ્ ? ઇતિ શિષ્ય
પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—‘ઠવણાવસ્સયં’ ઇત્યાદિ । સ્થાપનાવશ્યકમ્—સ્થાપ્યતે—ક્રિયતે
ઇતિ સ્થાપના । યથા—જંબૂદ્વીપસ્ય માનચિત્રમ્, ‘નકશા’ ઇતિ ભાષાગ્રસિદ્ધમ્ ।
આવશ્યકમિત્યનેન આવશ્યકક્રિયાવાન્ શ્રાવકાદિરિહ ગૃહ્યતે । આવશ્યક તદ્વતો
રભેદોપચારાત્ । કાષ્ઠપાષાણાદૌ કૃતં તસ્ય ચિત્રં-જ્ઞાનાદિગુણરહિતાઽઽકૃતિઃ સ્થાપના ।

પ્રકાર સે ઘટિત કિયા ગયા હૈ યહ વિષય સૂત્ર કી ટીકા મેં ટીકાકારને સ્પષ્ટ
કિયા હૈ । ઉસે ભાવર્થ મેં સ્પષ્ટ કરને કી આવશ્યકતા નહીં હૈ । ॥સૂત્ર ૧૦॥

અવ મૂત્રકાર સ્થાપના આવશ્યક કા નિરૂપણ કરતે હૈ—

“સે કિં તં ઠવણાવસ્સયં” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ઠવણાવસ્સયં) શિષ્ય પ્રશ્ન કરતા હૈ મહંત । સ્થા-
પના આવશ્યક કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?—

ઉત્તર:—(ઠવણાવસ્સયં) સ્થાપના આવશ્યક કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈ—
જો કી જાવે ઉસકા નામ સ્થાપના હૈ । જેસે જંબૂદ્વીપ કા નકશા, અઢાઈ દ્વીપ
કા નકશા હૈ । આવશ્યક શબ્દ સે યહ આવશ્યક ક્રિયાવાલા શ્રાવક આદિ
ગૃહીત હુઆ હૈ । વયોં કિ આવશ્યક ક્રિયા ઔર આવશ્યક ક્રિયાવાલે મેં અભેદ
કા ઉપચાર કિયા ગયા હૈ । કાષ્ઠપાષાણ આદિ મેં કિયા ગયા—ઉકેરા ગયા—

ટીકામાં જે સ્પષ્ટીકરણ કરેલું છે. તેથી ભાવાર્થમાં તેનું સ્પષ્ટીકરણ કરવાની જરૂર
રહેતી નથી ॥ સુ૦ ૧૦ ॥

હવે મૂત્રકાર સ્થાપના આવશ્યકનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં ઠવણાવસ્સયં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—શિષ્ય ગુરૂને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે—(સે કિં તં ઠવણાવસ્સયં ?)
હે ભગવન્ ! સ્થાપના આવશ્યકનું કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—(ઠવણાવસ્સયં) સ્થાપના આવશ્યકનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે. જે
કરવામાં આવે તેનું નામ સ્થાપના છે જેમકે જંબૂદ્વીપનો નકશો, અઢીદ્વીપનો નકશો,
વગેરે સ્થાપના આવશ્યકરૂપ છે. આવશ્યક પદના પ્રયોગદ્વારા અહીં આવશ્યક ક્રિયા-
વાળા શ્રાવક વગેરે ગૃહીત થયા છે, કારણ કે આવશ્યક ક્રિયા અને આવશ્યક ક્રિયા-
વાળામાં અભેદનો ઉપચાર કરવામાં આવ્યો છે. કાષ્ઠ પાષાણ આદિમાં આવેખવામાં—

तत्र श्रावकाद्यभेदोपचारात् स्थापनारूपमावश्यकमित्यर्थः । काष्ठकर्मादिषु आवश्यक क्रियां कुर्वन्तो यत् स्थापनारूपाः श्रावकादयः स्थाप्यन्ते चित्ररूपेण तत् स्थापनावश्यकमिति तात्पर्यम् ! तदाह—जण्णं' इत्यादि । 'यत्खलु काष्ठकर्मणि वा—काष्ठे' समुत्कीर्णे रूपके वा पुस्तकर्मणि वा । पुस्तं वस्त्रं तस्य कर्म—तन्निर्मिता पुत्तलिका तस्मिन् वा । अथवा—'पोत्थकर्मणि' इतिच्छाया, पोत्थं=पुस्तकं, तच्चेह संपुटकखपम्, तत्र कर्म=तन्मध्ये वर्तित्वाल्लिखितं रूपकं तस्मिन् वा । यद्वा—पोत्थं-पुस्तं=ताडपत्रं, तत्र कर्म=तच्छेदनिष्पन्नं रूपकं तस्मिन् वा । चित्रकर्मणि वा=चित्रलिखिते रूपके वा लेप्यकर्मणि-लेप्यरूपके वा, ग्रन्थिमे वा-ग्रन्थेन निवृत्तं ग्रन्थिमं-नैपुण्यातिशयात् ग्रन्थिसमुदाय निष्पादितं रूपकं तस्मिन् वा । वेष्टिमे वा-वेष्टनेन=पुष्पवेष्टनक्रमेण निष्पन्नं रूपकं वेष्टिमं

उसका चित्र जो कि ज्ञानादि गुणों से सर्वथा शून्य (रहित) होता है, वह स्थापना-निक्षेप है उसमें आवश्यक क्रिया को संपादन करने की आकृतिरूप में श्रावक आदि को का फोटो-पत्थर या काष्ठ के पट्टिये पर बनाया जाता है, सो चित्र यही स्थापनारूप आवश्यक है । इसी विषय को सूत्रकार "जण्णं" इत्यादि पदों द्वारा स्पष्ट करते हैं—(जण्णं कट्टकम्मे वा पोत्थकम्मे वा) जो आकृति काष्ठ में उकेरी जावे उसमें अथवा पुस्त-वस्त्र-कपड़े पर चित्रित की जावे उसमें अथवा वस्त्र से पुत्तलिका के रूप में बनाई जावे उस में या पोत्थकर्मणि" पुस्तक के बीच में कुची से रंग आदि भर कर बनाई जावे उसमें अथवा ताड पत्र पर छेद करके बनाई जावे उसमें अथवा (चित्तकम्मे वा) चित्ररूप में बनाई जावे इसमें (लेप्यकम्मे वा) अथवा मृत्तिका को गिली करके बनाई जावे उसमें (गन्धिमे वा वेष्टिमे वा पूरिमे वा संधाइमे वा) अथवा वस्त्र की गांठों के समुदाय से

केतरीवाभां आवेलुं तेनुं चित्र के जे ज्ञानादि गुणोत्थी सर्वथा विहीन होय छे, ते स्थापनानिक्षेप छे, जेभां आवश्यक क्रियाने संपादन करवानी आकृतिइये श्रावक आदिजोनां चित्रो पत्थर पर अथवा लाकडानां पाटियां वगेरे पर बनाववाभां आवे छे, तेने जे स्थापना रूप आवश्यक कहे छे, ओज विषयने सूत्रकार "जण्णं" इत्यादि पदो द्वारा स्पष्ट करे छे—

(जण्णं कट्टकम्मे वा पोत्थकम्मे वा) जे आकृति लाकडा पर केतरी कटववाभां आवे तेभां अथवा पुस्त पर (वस्त्र पर) चित्रित करववाभां आवे तेभां, अथवा वस्त्र-भाथी ढींगलीइये बनाववाभां आवे तेभां अथवा-पोत्थकर्मणि" पुस्तकनी अंदर पीछी वडे रगादि पूरीने बनाववाभां आवे तेभां, अथवा (चित्तकम्मे वा) चित्रइये जेनुं सज्जन करववाभां आवे तेभां, (लेप्यकम्मे वा) लीनी माटीभाथी बनाववाभां आवे तेभां, (गन्धिमे वा, वेष्टिमे वा, पूरिमे वा, संधाइमे वा) अथवा वस्त्रनी गांठोना समुदायथी ।

तस्मिन् वा । यद्वा—एकस्य द्वयोर्वहूनां वा वस्त्राणां वेष्टनेन निष्पन्नं यद्रूपं तद् वेष्टितं तस्मिन् वा । पूरिमे वा—पूरणेन भरणेन निष्पन्नं पूरिमं—ताम्रपित्तलादिमयं तस्मिन् वा । सङ्घातिमे वा—सङ्घातेन=बहुवस्त्रादिस्त्रण्डसमुदायेन निष्पन्नं रूपकं सङ्घातिमं तस्मिन् वा । अक्षे वा—अक्षश्चन्दनकस्तस्मिन् वा वराटके=कर्पटके वा सद्भावस्थापनया वा काष्ठकर्मदिषु आकारवती या स्थापना सा सद्भावस्थापना श्रावकाद्याकारस्य तत्र सद्भावात् । तथा सद्भावस्थापनया, असद्भावस्थापनया वा अक्षादिषु अनाकारवती असम्यग्रूपेण स्थापना भवति सा असद्भावस्थापना, श्रावकाद्याकारस्य तत्रासद्भावात् । तथा वा स्थाप्यमानः एको वा अनेको वा आवश्यकेति—आवश्यकक्रियायुक्तश्रावकादिः स्थापना स्थाप्यते=क्रियते । तदेतत् स्थापनाऽऽवश्यकम् । सू. ११॥

जो बनाई जावे उसमें, अथवा एक या दो अथवा अनेक वस्त्रों को वेष्टित करके जो बनाई जावे उसमें, अथवा पुष्पों को आकृति के रूप में सजा सजा करके जो आकार बनाया जावे उसमें अथवा पित्तलादि द्रव्यों को सांचे में ढार कर जो आकृति बनाई जावे उसमें अथवा अनेक वस्त्रों के खण्डों से—घज्जियों से—जो रूप बनाया जावे उसमें (अक्खेवा) अथवा पाशों में (वराडएवा) अथवा कोडी में (एगो वा अणेगो वा) एक अथवा अनेक आवश्यक क्रिया युक्त एक अनेक श्रावक आदि की (सम्भावठवणा असम्भावठवणा) की गई जो सद्भावस्थापना अथवा असद्भावस्थापना है (आवस्सएत्ति ठवणा ठविज्जइ) वह आवश्यक की स्थापना है । (से तं ठवणावस्सयं) यह स्थापना आवश्यक का स्वरूप है । ॥पुत्रं ११॥

अनाववामां आवे तेमां, अथवा अेक, वे अथवा अनेक वस्त्रोने वेष्टत करीने अनाववामां आवे तेमां, अथवा पुष्पोनी आकृतिइये सज्जवट करी करीने वे आकार अनाववामां आवे तेमां, अथवा पित्तलादि द्रव्योने धीणांमां ढाणीने वे आकार अनाववामां आवे तेमां अथवा आवे तेमां, अथवा अनेक वस्त्रोना लीरांओ (चिंदर-डांओ)मांथी वे आकृति अनाववामां आवे तेमां (अक्खे वा) अथवा पाशाओमां अथवा (वराडए वा) कोडीमां (एगो वा अणेगो वा) अेक अथवा अनेक आवश्यक क्रिया युक्त अेक-अनेक श्रावक आदिवडे (सम्भावठवणा असम्भावठवणा) करवामां आवेली वे सद्भावस्थापना अथवा असद्भाव स्थापना छे. (आवस्सएत्ति ठवणा ठविज्जइ) तेतुं नाम आवश्यकनी स्थापना छे. (से तं ठवणावस्सयं) आ प्रकारतुं आ स्थापनाआवश्यकतुं स्वरूप छे. ॥ सू० ११ ॥

નામસ્થાપનયોર્મેદમાહ---

મૂલ્ય—નામદ્વવગાણં કો પદ્ધવિસેસો ? નામં આવકહિયં, ઠવણા
ઇત્તરિયા વા હોજા આવકહિયા વા ॥સૂ૦ ૧૨॥

છાયા—નામસ્થાપનયોઃ કઃ પ્રતિવિશેષઃ ? નામ યાવત્કથિકમ્, સ્થાપના
ઇત્વરિકા વા ભવેત્, યાવત્કથિકા વા । ॥સૂ૦ ૧૨॥

ટીકા—‘નામદ્વવગાણં’ ઇત્યાદિ—

શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—નામસ્થાપનયોઃ કઃ પ્રતિવિશેષઃ ? નામસ્થાપનયો કો
વિશેષઃ ? ન કોઽપિ વિશેષો દૃષ્યતે । યથા ભાવાવશ્યકસ્વરૂપશૂન્યે ગોપાલદારકાદૌ
આવશ્યકેતિ નામ ક્રિયતે, તથૈવ સ્થાપનાર્ઘ્ય ભાવાવશ્યકસ્વરૂપશૂન્યે કાષ્ઠપુસ્તકા-
દૌ આવશ્યકશાસ્ત્રસ્ય તદાકારરૂપતયા અતદાકારરૂપતયા વા સ્થાપના સ્થાપ્યતે
અતો ભાવશૂન્યે દ્રવ્યમાત્રે ક્રિયમાણત્વાદનયો નાસ્તિ કશ્ચિદ્ વિશેષ ઇતિ પ્રષ્ઠુરા-

અવ સૂત્રકાર નામ ઓર સ્થાપના નિક્ષેપ મેં કયા અન્તર હૈ—ઇસ વાત
કો પ્રકટ કરતે હૈ—“નામદ્વવગાણં” ઇત્યાદિ । ॥સૂત્ર ૧૨॥

શબ્દાર્થ—(હે ભદ્રંત ! નામ ઓર સ્થાપના કા કયા ભેદ હૈ ? ઇસ પૂર્વોક્ત
કથન સે તો ઇન દોનોં મેં કાહ અન્તર નહીં જ્ઞાત હોતા હૈ ? કારણ—

જિસ પ્રકાર ભાવાવશ્યક કે સ્વરૂપ સે શૂન્ય ગોપાલદારક આદિ મેં આવ
શ્યક હેસા નામનિક્ષેપ કિયા જાતા હૈ—ઉસી પ્રકાર સે ભાવાવશ્યક કે સ્વરૂપ
સે શૂન્ય કાષ્ઠ પુસ્તક આદિ મેં આવશ્યકશાસ્ત્ર કી તદાકારરૂપ સે યા અતદા-
કારરૂપ સે સ્થાપનાનિક્ષેપ કિયા જાતા હૈ । અતઃ ભાવ સે શૂન્ય દ્રવ્યમાત્ર મેં
ક્રિયમાણ હોને કે કારણ ઇન દોનોં મેં કોઈ વિશેષતા લક્ષિત નહીં હોતી હૈ—
ઇવ પ્રકાર કા અભિગ્રાથ પૂછનેવાલે શિષ્ય કા હૈ ।

હવે સૂત્રકાર નામ નિક્ષેપ અને સ્થાપના નિક્ષેપ વચ્ચે શો તફાવત છે, તે પ્રકટ કરે છે.
“નામદ્વવગાણં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—શિષ્ય ગુરૂને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે “હે ભગવન્ ! નામ અને સ્થા-
પના વચ્ચે શો તફાવત છે ? પૂર્વોક્ત કથન પ્રમાણે તો તે બન્ને વચ્ચે કોઈ ભેદ
જ દેખાતો નથી, કારણ કે.....જેમ ભાવાવશ્યકના સ્વરૂપથી રહિત ગોવાળપુત્ર
આદિમાં “આવશ્યક” એવો નામ નિક્ષેપ કરવામાં આવે છે, એજ પ્રમાણે ભાવા-
વશ્યકના સ્વરૂપથી વિહીન, કાષ્ઠ, પુસ્તક આદિમાં આવશ્યકશાસ્ત્રની તદાકારરૂપે અથવા
અતદાકાર રૂપે સ્થાપના રૂપ નિક્ષેપ કરવામાં આવે છે. તેથી ભાવથી વિહીન દ્રવ્ય
માત્રમાં ક્રિયમાણ હોવાને કારણે એ બન્ને વચ્ચે કોઈ પણ પ્રકારનો ભેદ દેખાતો
નથી. આ પ્રકારની પ્રશ્ન કરનાર શિષ્યની માન્યતા અહીં પ્રકટ કરા છે.

શબ્દ: ઉત્તરયતિ—‘ણામં આવકહિયં’ इत्यादि । नाम यावत्कथिकम्—स्वाश्रयद्रव्यस्य अस्तित्वकथां यावद् नाम अवतिष्ठते, नाग्न आश्रयद्रव्यं यावत्तिष्ठति तावन्नामापि तिष्ठतीति भावः । स्थापना तु इत्वरिका=स्वल्पकालावस्थायिनी वा भवेत् यावत्कथिका वा भवेत् । काष्ठकर्मादौ आवश्यकशास्त्रस्य तदाकाररूपा अतदाकाररूपा स्थापना यावत्कथिका भवति, अक्षादौ तु सा इत्वरिका भवतीत्यर्थः । अयं भावः—काचित् स्थापना स्वाश्रयद्रव्यस्य सद्भावेऽपि मध्यकाल एव निव-

ઉત્તર—(ણામં આવકહિયં ઠવળા इत्तरिया वा होज्जा आवकहिया वा) नाम यावत्कथिक होता है और स्थापना इत्तरिक तथा यावत्कथिक दोनों प्रकार का होता है ।

સ્વાશ્રય દ્રવ્ય કે અસ્તિત્વ કાલ તક નામ રહતા હૈ—અર્થાત્—જિસકા વહ નામ હૈ વહ જવ તક મૌજૂદ રહતા હૈ તવ તક ઉસના વહ નામ વિદ્યમાન રહતા હૈ—इसका नाम यावत्कथिक है परन्तु स्थापना जो है वह स्वल्प काल-तक भी रहती है और यावत्कथिक भी होती है—काष्ठ कर्म आदि में आवश्यकशास्त्र की तदाकाररूप अथवा अतदाकाररूपकृत स्थापना यावत्कथिक होती है—स्वाश्रयद्रव्य की स्थिति तक रहती है । तथा अक्ष—(चौकोर पाशा) आदि में कृत अतदाकार स्थापना स्वल्प काल तक रहती है । तात्पर्य यह है कि कोई स्थापना स्वाश्रय द्रव्य के सद्भाव में भी बीच ही में समाप्त हो जाया करती है और कोई स्थापना ऐसी होती है जो अपने आश्रयभूत द्रव्य की

ઉત્તર—(ણામં આવકહિયં ઠવળા इत्तरिया वा होज्जा, आवकहिया वा) नाम यावत्कथित હોય છે, પરન્તુ સ્થાપના ઇત્વરિક (સ્વલ્પકાળ સુધી જ રહેનાર) અને યાવત્કથિત, એ બન્ને પ્રકારની હોય છે. સ્વાશ્રયભૂત દ્રવ્યના અસ્તિત્વકાળ સુધી નામ રહે છે. એટલે કે જેનું તે નામ રાખવામાં આવ્યું છે તે વસ્તુ અથવા વ્યક્તિનું અસ્તિત્વ જ્યાં સુધી રહે છે. ત્યાં સુધી જ તે નામનું અસ્તિત્વ રહે છે. આ રીતે નામને યાવત્કથિત કહેવામાં આવ્યું છે. પરન્તુ સ્થાપના તો સ્વલ્પકાળ સુધી પણ રહે છે અને યાવત્કથિત (વસ્તુનું અસ્તિત્વ રહે એટલા માટે કાળ સુધી ટકનારી) પણ હોઈ શકે છે.

જેમકે કાષ્ઠ કર્મ આદિમાં આવશ્યકશાસ્ત્રની તદાકારરૂપ અથવા અતદાકારરૂપ કરેલી સ્થાપના યાવત્કથિત હોય છે—સ્વાશ્રયભૂત દ્રવ્યનું જ્યાં સુધી અસ્તિત્વ રહે ત્યાં સુધી જ તે સ્થાપનાનું અસ્તિત્વ રહે છે, તથા અક્ષ (પાશા) આદિમાં કરેલી અતદાકાર સ્થાપના ઝાડુ જ એછા કાળ સુધી રહે છે. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે—કોઈ સ્થાપનાના સ્વાશ્રયભૂત દ્રવ્યનું અસ્તિત્વ રહેવા છતાં પણ વચ્ચેથી જ

તંતે, કાચિત્તુ તત્સત્તાં યાવદ્વતિષ્ઠતે, ઇતિ એવં ચ-નામસ્થાપનયોર્ભવિશૂન્યત્વે-
નાધાર્મ્યાભ્યેડપિ ભેદઃસ્વ સ્વાવસ્થાનકાલ કૃત એવ ભગવતા પ્રદર્શિતઃ યદ્યપિ ગોપાલ-
દારકાદૌ વિદ્યમાનેડપિ કદાચિદનેકનામપરિવર્તનં લોકે કચ્ચીદ્દૃશ્યતે, તથાચ
કાલકૃતોડપિ ભેદો નાસ્તિ, તથાપિ-વહુશઃ સ્થલે નામ્નો યાવત્કાથિકત્વમેવ દૃશ્યતે,
નામ્નઃ પરાવર્તનં તુ કચિદ્વિરલતયોપલભ્યતે । અતોડલ્પસ્થલવ્યાપિત્વેન નામ્ન ઇત્વ-
રિકતા ભગવતા ન વિવક્ષિતા । નામ્નોડલ્પકાલિકતાકલ્પને તૂત્સુત્રપ્રરૂપણા-
પત્તિરિતિ બોદ્યમ્ ।

સત્તા કાલ તક રહતી હૈ । ઇસ પ્રકાર નામ ઓર સ્થાપના નિષ્લેપ મેં ભાવશૂન્યતા
કી અપેક્ષા આધાર કી સમાનતા હોને પર મી અપને ૨ અવસ્થાન કાલ કી
અપેક્ષા કૃત હી ભેદ હૈ એસા ભગવાન ને પ્રદર્શિત કિયા હૈ । યદ્યપિ ગોપાલ-
દારક આદિ મેં ઉની વિદ્યમાનતા રહને પર મી કમી ૨ અનેક નામોં કા
પરિવર્તન હોતા હુઆ લોક મેં કહીં ૨ દેખા જાતા હૈ-ઇસ અપેક્ષા કાલકૃત
ભેદ સર્વથા નહીં આતા હૈ-તો મી અનેક સ્થલોં મેં નામ મેં યાત્કથિકતા
દેખી જાતી હૈ । ઇત્વરિકતા નહીં । યહ તો કેવલ વિરલતારૂપ મેં હી કહીં ૨
દેખી જાતી હૈ । ઇસલિયે નામ કી ઇત્વરિકતા અલ્પસ્થલ વ્યાપી હોને કે વારણ
ઉસ મેં ભગવાન ને વિવક્ષિત નહીં કી હૈ । યદિ નામ મેં અલ્પકાલિકતારૂપ
ઇત્વરિકતા કલ્પિત કી જાવે તો ઉત્સુત્ર પ્રરૂપણા કી આપત્તિ આતી હૈ એસા
જાનના ચાહિયે ।

ગમે ત્યારે સમાપ્ત થઇ જતી હોય છે, ત્યારે કોઇ સ્થાપના એવી હોય છે કે જે
પોતાના આશ્રયભૂત દ્રવ્યનું અસ્તિત્વ જ્યાં સુધી રહે ત્યાં મોજૂદ રહે છે.

આ પ્રમાણે નામ અને સ્થાપના નિષ્લેપમાં ભાવશૂન્યતાની અપેક્ષાએ આધારની
સમાનતા હોવા છતાં પણ પોતપોતાના અવસ્થાનકાળની અપેક્ષાએ જ ભેદ રહેલો
છે, એવું ભગવાને કહ્યું છે.

જો કે ગોવાળપુત્ર આદિનું અસ્તિત્વ રહેવા છતાં પણ કોઇ કોઇ વાર તેમના
નામોમાં પરિવર્તન થયા કરતું હોય છે, એવું પણ જોવામાં આવે છે ખરું. આ
દૃષ્ટિએ વિચારવામાં આવે તો એવી પરિસ્થિતિમાં તો નામમાં યાવત્કથિકતા રહેતી
નથી, પરંતુ આવું ભાગ્યે જ બને છે. અનેક વસ્તુઓ અથવા પદાર્થોમાં તો નામની
યાવત્કથિકતા જ જોવા મળે છે-ઇત્વરિકતા (અલ્પ સ્થાયિત્વ) દેખાતી નથી. નામની
અપેક્ષાએ ઇત્વરિકતા તો કેવળ વિરલતા રૂપે જ કોઇ કોઇ વસ્તુમાં જોવામાં આવે
છે. આ રીતે નામની ઇત્વરિકતા અલ્પ સ્થલવ્યાપી હોવાથી ભગવાને અહીં તેની
વિવક્ષા કરી નથી. જો નામમાં અલ્પકાલિકતા રૂપ આ ઇત્વરિકતાને સ્વીકારવામાં

यत्तु—उपलक्षणमात्रं चेदं कालभेदेनैतयामेदकथनम्—अपरस्यापि बहुप्रकार-
भेदस्य सम्भवात्, इत्युक्तं,

तदुत्सृत्रप्ररूपणम्—यथोत्सृत्रप्ररूपणमिषा—नामनिक्षेपे इत्वरिकतायाः कचिन्
संभवेऽपि भगवताऽनुक्तत्वादुपलक्षणमिति न स्वीकृतं; तथैव स्थापनायां काञ्च-
तिरिक्तस्य भेदहेतोः कल्पनेऽप्युत्सृत्रप्ररूपणं प्रसज्येत कालान्यकृतभेदस्य भगवता-
ऽनुक्तत्वात् । एतेन—यत् कैश्चिदुक्तं यथा—प्रतिमारूपस्थापना—दर्शनात् भावः समुल्ल-

जो कोई ऐसा कहते हैं कि” इस प्रकार के काल भेद से नामनिक्षेप
और स्थापननिक्षेप में जो भेद का कथन किया गया है वह उपलक्षण मात्र
है क्योंकि इससे और भी अनेक प्रकारों को लेकर इन दोनों में भेद संभवित
होता है “तो उनका ऐसा कथन करना उत्सृत्र प्ररूपणा है—आगम से विरुद्ध
है—। देखो जैसे नाम निक्षेप में कचित् इत्वरिकता का संभव होने पर भी
भगवान् ने इसे उत्सृत्रप्ररूपणा के अर्थ से उस में नहीं कहा है—वहां तो
यावत्कथितता ही कही है और इसी कारण से इत्वरिकता को उपलक्षणरूप से
स्वीकार नहीं किया है—उसी तरह स्थापना में काल से अतिरिक्त और किसी
बात को भेद का हेतु स्वीकार किया जायगा तो उसमें भी उत्सृत्र प्ररूपणा
की प्रसक्तिमाननी पड़ेगी । क्योंकि काल के सिवाय अन्य कृत भेद भगवान्
ने उसमें कहा नहीं है । इसी तरह से जो कोई और भी ऐसा कहते हैं कि” प्रतिमारूप

आवे तो उत्सृत्रप्ररूपणानां दोष लागे छे—अटले के अ प्रकारनी प्ररूपणा करवी अ
सृत्र विरुद्धनी सिद्धान्तोथी विरुद्धनी प्ररूपणा करी गणाय, अम समञ्जसुं.

अही कोछ अवी हलील करे के आ प्रकारना काणलेहनी अपेक्षाअे नामनिक्षेप
अने स्थापननिक्षेप अये अे लेह प्रकट करवामां आये छे, ते तो उपलक्षण
मात्र अ छे कारण के आ सिवाय भीअ अनेक रीते पण ते अने अये लेह
संलवी शके छे. तो आ प्रकारनुं तेनुं अे कथन छे तेने उत्सृत्र प्ररूपणा इय अ
गणी शकय, कारण के ते प्रकारनी मान्यता आगमनी विरुद्ध जाय छे. अम नाम-
निक्षेपमां कोछ कोछ प्रसंगे इत्वरिकता (अदपकाकिनता)नो संलव ह्वा छतां पण
लगवाने उत्सृत्र प्ररूपणाना लयथी तेनो उल्लेख कयीं नथी—त्यां तो मात्र यावत्कथितता
अ प्रदर्शित करवामां आवी छे अने अे कारणे इत्वरिकतानो उपलक्षणरूपे स्वीकार
करवामां आये नथी, अे प्रमाणे स्थापनामां पण काण सिवायनी कोछ पण
आगतने लेह कारणरूपे स्वीकारवामां आवे तो अे प्रकारनी प्ररूपणामां पण
उत्सृत्रप्ररूपणानो अ प्रसंग प्राप्त थसे, कारण के स्थापना निक्षेपमां काणकृत लेह
सिवायनो कोछ पण लेह लगवाने उछो नथी.

સતિ નૈવ નામશ્રવણમાત્રાદિતિ નામ સ્થાપનઘોર્મેદઃ, યથા ચન્દ્રાદેઃ પ્રતિમારૂપ-
સ્થાપનાર્થાં લોકસ્યોપયાચિતેચ્છા પૂજાપ્રવૃત્તિસમીહિતલાભાદયો દૃશ્યન્તે, નૈવ
નામેન્દ્રાદૌ, इत्यपि तद्योर्भेदः । एवमन्यदपि वाच्य” मिति तदुत्पन्नप्ररूपणाजनि-
तानन्तसंसारजनकम् । आगमे यदिदमुपलभ्यते—“तथारूपवाणं अरहंताणं नामगोत्र-
श्रवणयाए महाफलं” । इति । तत्र नास्ति नामनिक्षेपस्य विषयः । “अरहंताण
भगवंताणं” इत्युक्त्या तस्मिन्नर्थे प्रयुक्तस्य नाम्न एव श्रवणेन महाफलसंभवात्

સ્થાપના કે દેખને સે જૈસે માં ેં મેં ઉલ્લાસ હોતા હૈ—જૈસા ભાવ ઉત્પન્ન હોતે હૈ વૈસા
ભાવો મેં ઉલ્લાસ—ઉસ તરહ કા પરિણામ—ઉસ નામ માત્ર કે શ્રમણ સે નહીં હોતા
હૈ—યહી નામ ઔર સ્થાપનાનિક્ષેપ મેં ભેદ હૈ ।— દેરવો—જબ ઇન્દ્રકી પ્રતિમા
રૂપ સે સ્થાપના કી જાતી હૈ તો લોગ ઉસકે સમક્ષ વિવિધ પ્રકાર કી
યાચના કરતે હૈ, ઉસકી પૂજા કરતે હૈ, ઔર અપને સમીહિત કી પ્રાપ્તિ કરલે-
તે હૈ, इत्यादि सब बातें देखी जाती हैं—नाम इन्द्र आदि में इस प्रकार की
बातें नहीं देखी जाती—अतः इस तरह से भी इन दोनों निक्षेपों में भेद है—
तथा और भी उसी तरह से भेद के हेतु वाच्य हैं” सो ऐसा यह वक्तव्य
भा आगम के विरुद्ध है और इस तरह की प्ररूपणा करना अनन्त संसार
का बढ़ाने वाला है । कि “तथारूपवाले अरहंत भगवंतों के नाम और गोत्र के सुनने
से महाफल होता है” सो यह कथन नामनिक्षेप का विषय नहीं है । “अरहंता
णं भगवंताणं” क्योंकि इस उक्ति से तथारूप भावअर्हत में प्रयुक्त नाम के

વળી કોઈ કોઈ માણસો એવું પણ કહે છે કે.....“પ્રતિમારૂપ સ્થાપનાને
નિહાળવાથી ભાવોનો જેવો ઉલ્લાસ અનુભવવામાં આવે છે—જેવો ઉલ્લાસ ઉત્પન્ન થાય
છે, એવો ભાવોનો ઉલ્લાસ (એ પ્રકારનું મનઃપરિણામ)—તે નામ માત્રના શ્રવણથી
ઉત્પન્ન થતો નથી. નામનિક્ષેપ અને સ્થાપનાનિક્ષેપ વચ્ચે આ પ્રકારનો જ તફાવત
છે. જેમકે ઇન્દ્રની પ્રતિમાની સ્થાપના કરવામાં આવી હોય તો લોકો તેની સમક્ષ
વિવિધ પ્રકારની યાચના કરે છે, તેની પૂજા કરે છે અને પોતાની ઇચ્છિત વસ્તુઓની
પ્રાપ્તિ કરી લે છે, પરંતુ નામ ઇન્દ્ર આદિમાં એવું જોવામાં આવતું નથી. આ રીતે
તે બંને પ્રકારના નિક્ષેપોમાં આ પ્રકારનો ભેદ પણ રહેલો છે એટલું જ નહીં પણ
તે બંને નિક્ષેપો વચ્ચે રહેલો ભેદ દર્શાવતા બીજાં કેટલાક કારણોનો પણ સદ્ભાવ છે.

તો આ પ્રકારનું કથન પણ આગમ વિરુદ્ધનું કથન હોવાથી ઉત્સૂત્રકથન જ
ગણાય છે. આ પ્રકારની આગમ વિરુદ્ધની પ્રરૂપણા કરનાર વ્યક્તિ અનન્ત સંસારની
બંધન બને છે. આગમમાં આ પ્રકારનું જે કથન આવે છે કે.....

“તથારૂપ અહંત ભગવંતોના નામ અને ગોત્રનું શ્રવણ કરવાથી મહાફલની
પ્રાપ્તિ થાય છે,” આ કથન નામનિક્ષેપના વિષયરૂપ નથી. કારણકે “અરહંતાણં ભગ-

गोपालदारकादौ प्रयुक्तस्य नाम्नः श्रवणेन तु गोपालदारकाद्यर्थस्यैव बोधादात्म-
परिणामशुद्धिहेतुत्वं तस्य नास्तीति । नामनिक्षेपस्थले भगवतोऽर्हतः स्मरणा-
संभवः, तस्य भावशून्यत्वात्, अत्र तु नामगोत्रात् भगवदर्हतः सम्बन्धं पृष्ठयन्त-
पदप्रयोगादेव दर्शयता भगवता नामनिक्षेपो न विवक्षितः । भावजिनबोध-

ही श्रवण से महाफल होना बतलाया गया है । केवल नाम श्रवण से नहीं ।
नहीं तो गोपालदारक में प्रयुक्त अर्हत नाम के श्रवण से भी महाफल की
प्राप्ति हो जानी चाहिये । वहां तो ऐसा होता नहीं
है । केवल उस नाम से गोपालदारकरूप अर्थ की ही प्रतीति होती है ।
आत्मपरिणामों की शुद्धिरूप महाफल उससे प्राप्त नहीं होता है । अतः यह
मानना चाहिये कि भावरूप अर्हत नाम के ही श्रवण से जीवों को आत्म-
परिणामों की शुद्धिरूप फल प्राप्त होता है । क्यों कि वही उसका हेतु है ।
साधारण नामनिक्षेप में यह हेतुता नहीं आती है । यदि कोई ऐसा कहे-
कि अर्हत नामनिक्षेप भले ही आत्मपरिणामों की शुद्धि का हेतु न हो तो
न सही परन्तु उसके श्रावण से भगवान् अर्हत का तो स्मरण हो जाता है
सो ऐसा कहना भी उचित नहीं है क्यों कि नामनिक्षेप स्थल में भगवान्
अर्हत का, उससे भावनिक्षेप से शून्य होने के कारण स्मरण हो आना असं-

वन्ताणं" छत्यादि कथन द्वारा ये गतावयामां आच्यु छे के तथाइय लावइय अहं-
तमां प्रयुक्त नामना ज श्रवणुथी मडाइलनी प्राप्ति थाय छे-केवण नाम नामना ज
श्रवणुथी मडाइलनी प्राप्ति थती नथी. नही तो केछ पणु व्यक्तितने माटे (हाथला
तरीके गोवाणना पुत्रने माटे) 'अहं'त' आ नामने उपयोग करवामां आवे, तो
तेना नामनुं श्रवणु करवाथी पणु मडाइलनी प्राप्ति थछ जवी जेधये । पणु अही
तो अेवुं अनतुं नथी. ते नामद्वारा मात्र ते गोवाणपुत्र इय अर्थनी ज प्रतीति
थाय छे. आत्मपरिणामोनी शुद्धिइय मडाइलनी प्राप्ति तेना नाम श्रवणुथी थती नथी.
तेथी अेवुं मानवुं जेधये के लावइय अहं'त नामना ज श्रवणुथी एवोने आत्म-
परिणामोनी शुद्धिइय इणनी प्राप्ति थाय छे, कारण के अेज तेना हेतु छे. साधारण
नामनिक्षेपमां आ हेतुता संलवी शकती नथी.

वणी केछ माणुस अही अेची हलील करे के अहं'त नामनिक्षेप लवे आत्म
परिणामोनी शुद्धिमां कारणभूत न थतो होय, पणु तेनाश्रवणुथी लगवान अहं'तना
नामनुं स्मरणु तो थछ जय छे, अेटवुं तो आपे मानवुं ज पडथे ।

तो आ प्रमाणे कडेवुं ते पणु उचित नथी, कारण के लापनिक्षेपथी रहित
अेवा नामनिक्षेपथी अहं'त लगवाननुं स्मरणु थवानी वात असंलवित छे.

કસ્ય નામ્ન એવ શ્રવણેન મહાફલસંભવઃ । એવં સ્થાપનાપિ ભાવરૂપાર્થશૂન્યા, સ્થાપનયા ભાવરૂપાર્થસ્ય નાસ્તિ કોઽપિ સમ્બન્ધઃ । ભાવજિનશરીરવર્તિની યા ઽઽકૃતિરાસીદ્ તસ્યા આશ્રયાશ્રયિભાવરૂપસમ્બન્ધો ભાવજિનેન સહ તદાનીં ભાવો- હ્યાસોઽપિ કસ્યચિત્ સંજાતઃ, તથા ઋક્ત્યા તામાકૃતિં રમરતો જનસ્ય ભાવોઽહ્યાસઃ સંભવતુ, તદાઽઽકૃતેર્ભાવજિનેન સંબન્ધાત્, પરંતુ-સ્થાપનાયા આશ્રયાશ્રયિભાવ- સમ્બન્ધો નાસ્તિભાવજિનેન સહ । ભાવજિનાત્મનરતત્રાવાહનં સ્થાપનં તુ જિનાજ્ઞાવાહ્યં

ભવ છે । इसलिये “तहारूपाणं अरहंताणं” इत्यादि पाठ में नाम और गोत्र इन दोनों के साथ भगवान् अर्हंत के संबन्ध को पष्ठ्यन्तपद के प्रयोग से प्रकट करनेवाले सूत्रकार ने नामनिक्षेप की विवक्षा नहीं की है । किन्तु भाव- निक्षेप जिनके बोधक नाम की विवक्षा की है । क्योंकि उसी नाम के श्रवण से श्रोता को महाफल की प्राप्ति होना संभवित है । इसी तरह से स्थापना- भी भावरूप अर्थ से शून्य होती है । क्यों कि उसका भावनिक्षेपरूप अर्थ के साथ कोई संबन्ध ही नहीं है । यदि कहा जावे कि पहिले भाव जिनके अस्तित्व काल में जो उनके शरीर की आकृति थी—वह आकृति ही स्थापना निक्षेप में विद्यमान रहती है—इसलिये उससे आश्रयाश्रयी भावरूप संबन्ध का बोध हो जाता है—सो यह कथन भी ठीक नहीं है—क्योंकि स्थापनानिक्षेप में आश्रयी ही नहीं हैं तब उससे भावजिन के साथ आश्रयाश्रयी भावरूप संबन्ध ज्ञात कैसे हो सकता है ? यह तो भावजिनके साथ वे जब थे तब

તેથી “તહારૂવાણં અરહંતાણં” ઇત્યાદિ પાઠમાં નામ અને ગોત્ર એ બન્નેની સાથે ભગવાન અર્હંતના સંબંધને છઠ્ઠી વિભક્તિના પદના પ્રયોગ દ્વારા પ્રકટ કરનાર સૂત્રકારે નામનિક્ષેપની વિવક્ષા કરી નથી, પરંતુ ભાવનિક્ષેપ જિનના બોધક એવા નામની વિવક્ષા કરી છે. કારણ કે એજ નામના શ્રવણથી શ્રોતાને મહાફલની પ્રાપ્તિ થવાનું સંભવી શકે છે. એજ પ્રમાણે સ્થાપના પણ ભાવરૂપ અર્થથી વિહીન જ હોય છે, કારણ કે ભાવનિક્ષેપરૂપ અર્થની સાથે તેનો કોઈ સંબંધ જ હોતો નથી.

જો અહીં એવી દલીલ કરવામાં આવે કે પહેલાં ભાવજિનના અસ્તિત્વકાળમાં જ તેમના શરીરની આકૃતિ હતી, એ આકૃતિ જ સ્થાપનાનિક્ષેપમાં વિદ્યમાન રહે છે, તેથી તેના દ્વારા આશ્રયાશ્રયી ભાવરૂપ સંબંધનો બોધ થઈ જાય છે, તો એ પ્રકારની માન્યતા પણ ઉચિત નથી, કારણ કે વર્તમાન કાળે સ્થાપના નિક્ષેપમાં જો આશ્રયીને જ સદ્ભાવ ન હોય તો તેના દ્વારા ભાવજિનની સાથે આશ્રયાશ્રયી ભાવરૂપ સંબંધનો બોધ જ કેવી રીતે થઈ શકે ! ભાવજિનની સાથે જ્યારે તે

प्रवचनविरुद्धं कर्तुमशक्यं, कथं तर्हि—भावजिनसम्बन्धाभावे प्रतिमा भावजिनं तद्गुणं वा स्मारयितुं शक्ता भवेत् । सर्वथा कुप्रावचनिकद्रव्यावश्यकवत् प्रतिमापूजनं कुर्वन्तः कारयन्तश्च मिथ्यात्वं प्राप्नुवन्ति न तु सम्भ्यक्त्वमिति । इति स्थापनावश्यकम् ॥ सू० १२ ॥

था—। हां यह हो सकता है कि जिस प्रकार भावजिन का दर्शन करनेवाले किसी व्यक्ति को भावोल्लास हो आता है, उसी तरह भक्ति से उनकी उस आकृति का स्मरण करनेवाले जन को भावोल्लास हो आवे—क्यों कि उस आकृति का भावजिन के साथ संबन्ध है यदि भावजिनके साथ उस आकृति को संबन्ध नहीं होवे तो फिर प्रतिमा भावजनक और उनके गुणों का स्मरण कराने में समर्थ कैसे हो सकती है ? परन्तु स्थापना का भावजिन के साथ आश्रयाश्रयी भावरूप संबन्ध तो कोई है नहीं—कि जिस से उससे इसका बोध हो जावे । भावजिन की आत्मा का उसमें आह्वान करना, स्थापन करना यह सब तो जिनाज्ञा से बिल्कुल बाहिर की बात है । ऐसी प्रवचन विरुद्ध बात को करना अशक्य है इसलिये सर्वथा कुप्रावचनिक द्रव्यावश्यक की तरह प्रतिमा पूजन करने और करानेवाले मिथ्यादृष्टिपने को प्राप्त होते हैं—सम्पत्तत्र को नहीं । इस तरह स्थापनावश्यक का यह स्वरूप है । भावार्थ इसका स्पष्ट है । ॥ सूत्र १२ ॥

आकृति विद्यमान होती तब ही उसे जो आ प्रकट करने संबंध अस्तित्व धरावती होती है, ऐसे सब ही शक्य है कि जो प्रकट भावजिनना दर्शन करने के लिए व्यक्तिमां भावोद्भासने उभजके आवी जाय, ऐसे प्रमाणों लक्षणों पूर्वक तो आकृतिनुं स्मरण करने के लिए व्यक्तिमां पणु भावोद्भासने उभजके आवी जाय, कारण के आकृतिना भावजिननी साथे संबंध है, जो भावजिननी साथे तो आकृतिने संबंध न होय, तो ते प्रतिमा भावजनक अने अनेक गुणोंनुं स्मरण कराने में समर्थ केवी रीते, जनी शक्य । परन्तु स्थापनाना भावजिननी साथे आश्रयाश्रयी भावरूप के संबंध तो है नही, के जेना द्वारा तेना बोध थय जाय, भावजिनना आत्मानुं तेमां आवाहन करवुं—स्थापन करवुं, ऐं तो, जिनाज्ञानी विरुद्धनुं कृत्य गणाय, ऐवी प्रवचनविरुद्धनी बात करवी जेअने नही, तेथी सर्वथा कुप्रावचनिक द्रव्यावश्यकनी जेम प्रतिमापूजन करने के अने कराने के मिथ्यादृष्टियुक्त, जनी जाय है अने सम्भ्यक्त्वथी रहित न रहे, स्थापनावश्यकनुं आ प्रकटनुं स्वयं है, तेना भावार्थ स्पष्ट होवार्थी विशेष स्पष्टीकरणनी जरूर रहेती नथी ॥ सू० १२ ॥

इदानीं द्रव्यावश्यकं निरूपयति—

मूलम्—से किं तं दव्वावस्सयं ? दव्वावस्सयं दुविहं पणत्तं

तं जहा—आगमओ य नो आगमओ य ॥ सू० १३ ॥

छाया—अथ किं तद् द्रव्यावश्यकम् ? द्रव्यावश्यकं द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—आगमतश्च नो आगमतश्च ॥ सू० १३ ॥

टीका—‘से किं तं’ इत्यादि—

शिष्यः पृच्छति—अथ १क तद् द्रव्यावश्यकम् ? उत्तरयति—‘दव्वावस्सयं’ इत्यादि । द्रव्यावश्यकम्—द्रवति=गच्छति तांस्तान् पर्यायानिति द्रव्यम्—विवक्षितयोः स्तीतभविष्यद् भावयोः कारणम्, अनुभूतविवक्षितभावमनुभविष्यद्विवक्षितभावं वा वस्त्वित्यर्थः । द्रव्यलक्षणं च सामान्यत इदं बोध्यम् ।

अब सूत्रकार द्रव्यावश्यक का निरूपण करते हैं—

“से किं तं दव्वावस्सयं” इत्यादि । ॥सूत्र १३॥

शब्दार्थ—(अथ) शिष्य पूछता है कि हे भदंत ! (किं तं दव्वावस्सयं) पूर्व प्रक्रान्त (पूर्व प्रस्तुत विषय) द्रव्यावश्यक का क्या स्वरूप है ?

उत्तर—(दव्वावस्सयं दुविहं पणत्तं) द्रव्यावश्यक दो प्रकार का है जो उन २ पर्यायों को प्राप्त करता है उसका नाम द्रव्य है अर्थात् जो विवक्षित अतीत अनागत भाव का कारण हो वह द्रव्यनिक्षेप है । जैसे राजगद्दी से पृथक् किये हुए राजा को नरेश कहना । तथा जो आगे राजा होनेवाला है वर्तमानमें वह राजा की पर्याय में नहीं है उसे अभी से राजा कहना यह भविष्यत् कालीन पर्याय की अपेक्षा द्रव्यनिक्षेप है । जैसे राजा का पुत्र

હવે સૂત્રકાર દ્રવ્યાવશ્યકનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં દવ્વાવસ્સયં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે....

“સે કિં તં દવ્વાવસ્સયં?” હે ભગવન! પૂર્વ પ્રક્રાન્ત (પૂર્વ પ્રસ્તુત વિષય)

દ્રવ્યાવશ્યકનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(દવ્વાવસ્સયં દુવિહં પણત્તં) દ્રવ્યાવશ્યક બે પ્રકારનો કહ્યો છે. તે તે પર્યાયોને જે પ્રાપ્ત કરતું રહે છે તેનું નામ દ્રવ્ય છે. એટલે કે જે વિવક્ષિત અતીત (ભૂત કાલિન), અનાગત (ભવિષ્યકાલિન) ભાવનું કારણ હોય છે, તે દ્રવ્યનિક્ષેપ છે. જેમકે રાજગાદીનો જેની પાસે ત્યાગ કરાવવામાં આવ્યો છે તેને નરેશ કહેવો તે ભૂતકાલિન પર્યાયની અપેક્ષાએ દ્રવ્યનિક્ષેપ છે, તથા વર્તમાન કાળે જે રાજા નથી. પણ ભવિષ્યમાં રાજા બનવાનો છે તેને અત્યારથી જ રાજા કહેવો તે ભવિષ્યકાલિન પર્યાયની અપેક્ષાએ દ્રવ્યનિક્ષેપ છે. જેમ કે, રાજાના પુત્રને રાજા કહે

भूतस्य भाविनो वा भावस्य हि कारणं तु यल्लोके ।

तद् द्रव्यं तत्त्वज्ञैः सचेतनाचेतनं कथितम् । इति ।

व्याख्या—लोके हि भूतस्य=अतीतस्य भाविनः=भविष्यतो वा भावस्य तु रत्कारणं भवति, तत् तत्त्वज्ञैः द्रव्यं-कथितम् । तद्द्रव्यं सचेतनाचेतनं-सचेतनं=पुरुषादिकम्, अचेतनं=काष्ठादिकं च भवति । अयं भावः—यः पूर्वं स्वर्गादिष्विन्द्रादिर्भूत्वा इदानीं मनुष्यादित्वेन परिणतः स जीवोऽतीतस्य इन्द्रादिपर्यायस्य कारणत्वात् साम्प्रतमपि द्रव्यत इन्द्रादिरुच्यते । यथा-अमात्यादि पदात् प्रच्युतोऽपि अमात्यादिरुच्यते । अपि च अग्रेऽपि य इन्द्रादित्वेनोत्पत्त्यते, स इदानीमपि भविष्यदिन्द्रादिपदपर्यायकारण-

राजा कहा जाता है द्रव्य निक्षेप में विवक्षितपर्याय को जा अनुभवित कर चुकी है ऐसी वस्तु तथा विवक्षित पर्याय को जो भविष्यत्काल में अनुभव करेगा ऐसी वस्तु के विषयरूप से परिगणित हुई है यही बात सामान्यरूप से कथित इस द्रव्य के लक्षण में इस प्रकार से जानने के लिये वही गई है—लोक में तत्त्वज्ञों ने भूतपर्याय का अथवा भविष्यत् पर्याय का जो कारण होता है वह द्रव्य है । ऐसा कहा है । वह द्रव्य सचेतन भी है और अचेतन भी है । इस का भाव इस प्रकार से जानना चाहिये—जैसे कोई जीव पहिले स्वर्ग आदि में इन्द्र आदि की पर्याय में था और वहाँ से चव कर मनुष्य पर्याय में आगया । फिर भी उसे अतीत इन्द्रादि पर्याय का कारण होने से मनुष्य पर्याय में भी अमात्यपद से रहित हुए व्यक्तिको अमात्य कहने की तरह इन्द्र कहना यह द्रव्य निक्षेप है । इसी तरह जो जीव भविष्य में

वामां आवे छे द्रव्यनिक्षेपमां विवक्षित (अमुक) पर्यायने जे अनुभवित करी चुकी छे जेवी वस्तु तथा विवक्षित पर्यायने जे भविष्यकालमां अनुभव करशे, जेवी वस्तु तेना विषयरूपे परिगणित थछ छे. जेज वात सामान्यरूपे कथित द्रव्यना लक्षणमां आ प्रकारे ज्ञानवाने माटे गताववामां आवी छे-तत्त्वज्ञो जे जेवुं कहुं छे के लोकमां भूतपर्यायनुं अथवा भविष्यती पर्यायनुं जे कारण छे, तेनुं नाम द्रव्य छे. ते द्रव्य सचेतन पणु छे अने अचेतन पणु छे. तेना लावार्थ आ प्रमाणे समजवो.

जेमके केह अछे जेव पहिलां स्वर्गमां ईन्द्रनी पर्याये उत्पन्न थयो छतो. त्यागनाह ते जेवनुं आयुष्य पूरं थतां, त्यांथी ज्यवीने ते मनुष्यलोकमां मनुष्यनी पर्याये उत्पन्न थछ गयो. जेम अमात्यना पहथी ज्युत थयेली व्यक्तितने अमात्य कहेवामां आवे छे. जेम मनुष्यनी पर्याये उत्पन्न थयेला ते मनुष्यने तेनी भूत-कालिन ईन्द्ररूप पर्यायने कारणे ईन्द्र कहेवो, तेनुं नाम जे द्रव्यनिक्षेप छे. जेम

त्वाद् द्रव्यत इन्द्रादिरभिधीयते, यथा—राजकुमारोऽपि राजा प्रोच्यते भाविराज पर्यायप्राप्तिहेतुत्वात् । एवमचेतनस्य काष्ठादेरपि भूतभविष्यत्पर्यायकारणत्वेन द्रव्यता भावनीयेत्यर्थः ।

एवं द्रव्यरूपमावश्यकम् । तद् द्रव्यावश्यकं द्विष्टिं प्रज्ञप्तम् ? तद्यथा—आगमतश्च—आगममाश्रित्य, नो आगमतश्च—नो आगममाश्रित्य । च शब्दौद्वयोरपि स्वस्वविषये प्राधान्यख्यापनार्थो ॥सू० १३॥

तत्र—आगमतो द्रव्यावश्यकं निरूपयति—

मूलम्—से किं तं आगमओ दृवावस्सयं ? आगमओ दृवाव-
स्सयं जस्स णं आवस्सएत्ति पदं सिक्खियं ठियं जियं मियं परिजियं
नामसमं घोससमं अहीणक्खरं अणच्चक्खरं अट्वाइक्खरं अक्ख-
लियं अभिलियं अवच्चामेलियं पडिपुण्णं पडिपुण्णघोसं कट्ठाट्ठविप्प-

इन्द्र की पर्याय से उत्पन्न होनेवाला हो उसे भविष्यत्वालीन इन्द्र पर्याय का कारण होने के कारण राजकुमार को राजा कहने की तरह इन्द्र कहना यह भी द्रव्य निक्षेप का विषय है । यद्यपि राजकुमार वर्तमान में राजा नहीं है आगे राजा होगा—परन्तु जो उस अवस्था में भी वह राजा कहा जाता है वह भाविराज पर्याय की प्राप्ति का हेतु होने से ही कहा जाता है । इसी तरह से अचेतनकाष्ठ आदि में भी भूत, भविष्यत् पर्याय की कारणतालेकर द्रव्यता घटित कर लेनी चाहिये । इस तरह द्रव्यरूप आवश्यक का नाम द्रव्यावश्यक है । यह द्रव्यावश्यक आगम को आश्रित करके और नो आगम को आश्रित करके दो प्रकार का होता है । भावार्थ स्पष्ट है—सूत्र १३।

लविष्यकाणमां राज्ञ णनवानो होय येवा राजकुमारो 'राज' कडेवामां आवे छे, जेण प्रमाणे जे जव लविष्यमां इन्द्रनी पर्याये उत्पन्न थवानो होय तेने लविष्यकालिन इन्द्र पर्यायनुं कारण होवाने दीधि इन्द्र कडेवा ते पणु द्रव्यनिक्षेपनो विषय छे जे के राजकुमार अत्यारे राज्ञ नथी, परन्तु लविष्यमां राज्ञ थवानो छे, छतां पणु तेने राजकुमारनी अवस्थामां पणु जे राज्ञ कडेवामां आवे छे ते लावि राजपर्यायनी प्राप्तिश्च कारणुनी अपेक्षाये जे कडेवामां आवे छे. जेण प्रमाणे अचेतन काष्ठ आदिमां पणु भूत—लविष्य पर्यायनी कारणुतानी अपेक्षाये द्रव्यता घटित करी लेवी जेधये. आ प्रकारे द्रव्यरूप आवश्यकनुं नाम द्रव्यावश्यक छे ते द्रव्यावश्यक जे प्रकारनो छे—(१) आगमनी अपेक्षाये अने नो आगमनी अपेक्षाथी जे प्रकारना समजवा. भावार्थ स्पष्ट छे. ॥ सू० १३ ॥

મુકું ગુરુવાયળોવગયં, સે ણં તત્થ વાયણાણ પુચ્છણાણ પરિયટ્ટણાણ
ધમ્મકહાણ નો અણુપ્પેહોણ, કમ્હા ? ‘અણુવઓગો દઁવ્વ’ મિત્તિ કહુસૂ. ૧૪।

છાયા—અથ કિં તદ્ આગમતો દ્રવ્યાવશ્યકમ્ ? આગમતો દ્રવ્યાવશ્યક
યસ્ય સ્વલુ આવશ્યકેતિ પદં શિક્ષિતં સ્થિતં જિતં મિતં પરિજિતં નામસમં
ઘોષસમમ્ અહીનાક્ષરમ્ અનત્યક્ષરમ્ અવ્યાવિદ્ધાક્ષરમ્ અસ્વલિતમ્ અમિલિતમ્ અવ-
ત્યાગ્રેડિતં પરિપૂર્ણં પરિપૂર્ણઘોષં કણ્ઠોષ્ટવિપ્રમુક્તં ગુરુવાચનોપગતમ્ । સ સ્વલુ તત્ર
વાચનયા પ્રચ્છનયા પરિવર્તનયા ધર્મકથયા નો અનુપ્રેક્ષયા, કસ્માત્ ? અનુપયોગો
દ્રવ્યમિતિ કૃત્વા ॥ સૂ. ૧૪ ॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં આગમઓ દઁવ્વાવસ્સયં’ इति ।
अथ किं तद् आगमतो द्रव्यावश्यकम् ? आगममाश्रित्य द्रव्यावश्यकं किम् ?
इति प्रष्टुराशयः उत्तरयति—‘आगमओ दव्वावस्सयं’ इत्यादि । आगमतो द्रव्या-
वश्यकम्—एवं विज्ञेयम्—यस्य स्वलु साधो—आवश्यकमिति पदम्—सर्वज्ञप्रणीतमाव-
श्यकामिधेयं शास्त्रं शिक्षितम्—विनयपूर्वकं गुरुमुखाद् गृहीतम् । स्थितं स्मृतिपथे

આગમની અપેક્ષા દ્રવ્યાવશ્યકના સ્વરૂપ સૂત્રકાર નિરૂપિત કરતે હૈ—

“સે કિં તં” इत्यादि ॥ સૂત્ર ૧૪ ॥

શબ્દાર્થ—(સે) શિષ્ય પૂછતા હે કિં હૈં મદંત ! (કિં તં આગમઓ દઁવ્વા-
વસ્સયં) આગમની અપેક્ષા કરકે દ્રવ્યાવશ્યકના કયા સ્વરૂપ હૈ ? અર્થાત્
દ્રવ્યાવશ્યકનાં જો દો ભેદ કહે ગયે હૈં ઉનમ્ સે પહિલે ભેદના કયા
સ્વરૂપ હૈ ? ઉત્તર—(આગમઓ દઁવ્વાવસ્સયં) આગમની અપેક્ષા લેકર દ્રવ્યાવશ્યક
ના સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર સે હૈ—(જસણ આવસ્સણત્તિ પદં સિવિલ્લયં) જિસ સાધુને
આવશ્યક શાસ્ત્રના વિનયપૂર્વક ગુરુના મુખ સે સીખા હૈ (ઠિયં) ઉસે અચ્છી

હવે સૂત્રકાર આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાવશ્યકના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે.

“સે કિં તં” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે—(કિં તં આગમઓ દઁવ્વા-
વસ્સયં ?) આગમની અપેક્ષાએ જે દ્રવ્યાવશ્યક કહ્યો છે તેનું કેવું સ્વરૂપ છે ?
એટલે કે દ્રવ્યાવશ્યકના જે જે ભેદ બતાવવામાં આવ્યો છે, તેમાંથી જે પહેલાં ભેદ
બતાવ્યો છે તેનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(આગમઓ દઁવ્વાવસ્સયં) આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાવશ્યકનું સ્વરૂપ
આ પ્રકારનું છે—(જસણ આવસ્સણત્તિ પદં સિવિલ્લયં) જે સાધુએ આવશ્યકશાસ્ત્રનું
ગુરુની સમક્ષ વિનયપૂર્વક અધ્યયન કર્યું છે, (ઠિયં) તેને સારામાં સારી રીતે પોતાના

વિદ્યમાનમ્, જિતં-શબ્દતોઽર્થતથા પરિચિતમ્-પરિજ્ઞાતમ્ । મિતં-વિજ્ઞાતશ્લોકપદ-
વર્ણાદિ સંખ્યામાનમ્. પરિજિતં-પરિ=સમન્તાત્ સર્વપ્રકારૈર્જિતં-પરિજિતમ્, આનુ-
પૂર્વ્યા, અનાનુપૂર્વ્યા ચ પરાં તિતમ્, નામસમમ્-નામના સમં યથા સ્વનામં ન વિસ્મૃતં
ભવતિ, તથા રત્ વદાપિ વિસ્મૃતં ન ભવતિ, તન્નામસમમ્, ઘોષસમં=ઘોષા ઉદા-
ત્તાદ્યસ્તૈઃ સમમ્, યથા ગુરુણાં ઘોષા ઉક્તાસ્તથા યત્ર શિષ્યેણાપિ સમુચ્ચાર્યન્તે
તદ્ ઘોષસમમ્ । અહીનાક્ષરમ્ એકેનાપ્યક્ષરેણ અહીનમ્ । અનત્યક્ષરમ્-એકદ્વયાદિ-
ભિરક્ષરૈઃધિકમત્યક્ષરમ્, ન અત્યક્ષરં યત્ર તદનત્યક્ષરમ્-અધિકાક્ષરરહિતમિત્યર્થઃ,
અવ્યાવિદ્ધાક્ષરમ્-અવ્યાવિદ્ધાનિ=વિપર્યસ્તરત્નમાલાગતરત્નાનીવ વિપર્યસ્તાનિ અક્ષરાણિ
યસ્મિન્સ્તદ્ વ્યાવિદ્ધાક્ષરમ્, ન તથા અવ્યાવિદ્ધાક્ષરમ્=અવ્યાવિદ્ધાક્ષરત્વદોષ-

તરહ સે અપને સ્મૃતિપથ મેં ઉતારા હૈ, (જિયં) શબ્દ ઓર અર્થ કી અપેક્ષા
લેકર જિસને ઉસે અચ્છી તરહ સે જાન લિયા હૈ (મિયં) જિસકે શ્લોકોં કી
પદોં કી ઓર વર્ણોં કી સંખ્યા કા પ્રમાણ જિસેં મલી પ્રકાર અભ્યાસ કિયા હુઆ હૈ
(પરિજિયં) આનુપૂર્વીં એવં અનાનુપૂર્વીં સે જિસને ઉસે સબ તરફ સે ઓર સબ
પ્રકાર સે આવર્તિત કિયા હૈ, (નામસમં) અપને નામ કે સમાન જો કોઈ
મી ઉસે અપને સ્મૃતિપથ સે દૂર નહીં કરતા હૈ (ઘોષસમં) જિસ પ્રકાર સે
ગુરુ મહારાજ ઉદાત્ત આદિ ઘોષ સ્વરોં કા ઉચ્ચારણ કિયા હૈ, ઉસી
પ્રકાર સે જો ઉસકે ઘોષાદિ સ્વરોં કા ચારુરૂપ સે ઉચ્ચારણ કરતા હૈ, તંથા-(અહી
ળવચ્ચરં) એકમી અક્ષર કી હીનતા સે રહિત ઉસે જિસને સીખા હૈ (અણચ્ચ-
વચ્ચરં) વોલતે સમય-પાઠ કરતે સમય જો અંપની તરફ સે વોલતા હૈ-અર્થાત્
જેસા ઉસમેં લિખા હૈ વૈસા હી ઉસે ઉચ્ચારણ કરતા હૈ (અવાઇદ્ધવચ્ચરં) જિસે

સ્મૃતિપટલમાં ઉતાર્યું છે, (જિયં) શબ્દ અને અર્થની અપેક્ષાએ જેને તેણે સારી
રીતે બાણી લીધેલ છે, (મિયં) જેના શ્લોકોની, પદોની અને વર્ણોની સંખ્યાનું
પ્રમાણ જેણે સારી રીતે સમજી લીધું છે; (પરિજિયં) આનુપૂર્વીં અને અનાનુપૂર્વીં
પૂર્વક જેણે તેને બધી તરફથી અને બધા પ્રકારે પરાવર્તિત કરી લીધું છે, (નામસમં)
પોતાના નામની જેમ જે તેને કદી પણ પોતાના સ્મૃતિપટમાંથી દૂર કરતો નથી,
(ઘોષસમં) જે રીતે ગુરુ મહારાજે ઉદાત્ત આદિ ઘોષસ્વરોનું ઉચ્ચારણ કર્યું હોય,
એજ પ્રકારે તેના ઘોષાદિ સ્વરોનું જે સુંદર રીતે ઉચ્ચારણ કરતો હોય, (અહીળવચ્ચરં)
એક પણ અક્ષરની હીનતા ન રહે એવી રીતે જેણે તેનું અધ્યયન કર્યું છે,
(અણચ્ચવચ્ચરં) બોલતી વખતે-પાઠ કરતા વખતે જે પોતાના તરફથી એક પણ અક્ષર
તેમાં ઉમેરીને બોલતો નથી-એટલે કે તેમાં જે પ્રમાણે લખ્યું હોય એ પ્રમાણે જ
તેનું ઉચ્ચારણ કરે છે.

रहितम्, अक्षरव्यतिक्रमरहितमित्यर्थः, अखलितम्—शास्त्रपाठसमये मध्ये मध्ये विरम्य विरम्य तदुच्चारणम् तत्स्वलितरूपोच्चारणदोषस्तेन रहितमित्यर्थः । अमिलितं=मिलितदोषरहितम्, यत् शास्त्रान्तरवर्तिभिः पदैरमिश्रितं, यथा—सामायिक-सूत्रे दशवैकालिकोत्तराध्ययनादिपदानि न क्षिपति । अथवा—परावर्तमानस्य यत्र पदादि विच्छेदो न प्रतीयते तन्मिलितं, न तथा, अमिलितम् । अव्यत्याग्रेडितम्—एकस्मिन्नेव शास्त्रेऽन्यान्यस्थाननिबद्धानि एकार्थानि सूत्राणि एकत्र स्थाने समानीय यत्पठितं तद् व्यत्याग्रेडितम्, अथवा—आचाराङ्गादिसूत्रमध्ये स्वबुद्धि-

उसने इस तरह से सीखा है कि जिस से उसके उच्चारण में अक्षरों का व्यतिक्रम नहीं हो सकता हो, (अवखलियं) पाठ करते समय जो बीच २ में ठहर कर उसका उच्चारण नहीं करना है किन्तु धाराप्रवाह के समान सावधि जो उसे बोलता चला जाता है, (अमिलियं) शास्त्रान्तरवर्ती पदों को मिलाकर जो उसे नहीं बोलता है—जैसे सामायिक सूत्र में दशवैकालिक, उत्तराध्ययन के सूत्रों को बोलना—यह मिश्रित दोष है—इस दोष से रहितकर सामायिक पाठ का बोलना यह अमिश्रित दोष है। अथवा पाठ करते समय जहाँ पदादिका विच्छेद प्रतीत नहीं होता है, उसका नाम मिलित है, इसरूप से नहीं बोलना इस का नाम अमिलित है—अर्थात् इस तरह से आवश्यकसूत्र का उच्चारण करता है कि जिसके उच्चारण में पदादिका विच्छेद अच्छी तरह से लक्षित होता रहता है। (अवच्चामेलियं) एक ही शास्त्र में अन्य २ स्थानों पर लिखे गये ऐतार्थिक सूत्रों को एक स्थान में लेकर उस शास्त्र का पढ़ना इसका नाम

(અન્વાઈદ્યક્ષરં) જેનું તેણે એવી રીતે અધ્યયન કર્યું છે કે તેના ઉચ્ચારણ વખતે અક્ષરોનો વ્યતિક્રમ થઈ જતો નથી, (અક્ષવલિયં) જેનો પાઠ કરતી વખતે વચ્ચે વચ્ચે અટકીને તેનું ઉચ્ચારણ કરતો નથી પણ પાણીના પ્રવાહની જેમ અસખલિતરૂપે જે તેનું ઉચ્ચારણ કર્યું જાય છે, (અમીલિયં) અન્ય શાસ્ત્રવર્તીપદોને તેની સાથે સેળસેળ કરીને જે તેનું ઉચ્ચારણ કરતાં નથી-જેમકે સામાયિક સૂત્રમાં દશવૈકલિક કે ઉત્તરધ્યયનના સૂત્રોનું ઉચ્ચારણ કરવું તેનું નામ મિશ્રિત દોષ છે, આ દોષો ન થાય એવી રીતે સામાયિક પાઠનું ઉચ્ચારણ થવું જોઈએ. અથવા પાઠ કરતી વખતે જ્યાં પદાદિનો વિચ્છેદ થતો નથી, તેનું નામ મિલિત છે અને તે પ્રકારે ઉચ્ચારણ ન કરવું તેનું નામ અમિલિત છે. એટલે કે તે આવશ્યકસૂત્રના પાઠનું એવી રીતે ઉચ્ચારણ કરે છે કે જેના ઉચ્ચારણમાં પદાદિનો વિચ્છેદ સારી રીતે લક્ષિત થતો રહે છે, (અવચ્ચામેલિયં) એક જ શાસ્ત્રમાં જુદા-જુદા સ્થાનો પર લખવામાં આવેલા એકાર્થક સૂત્રોને એક જ સ્થાનમાં લઈને તે શાસ્ત્રનો પાઠ કરવો.

कल्पितानि तत्सदृशानि सूत्राणि कृत्वा प्रक्षिप्य पठितं व्यत्याग्रेडितम् । यद्वा
अस्थानविरतकं व्यत्याग्रेडितम्, न तथा, अव्यत्याग्रेडितदोषरहितमित्यर्थः ।
परिपूर्णम्-सूत्रतो विन्दुमात्रादिभिरननम्, अर्थतोऽध्याहागकाङ्क्षादिरहितं च ।
परिपूर्णघोषम् उदात्तादिघोषयुक्तम् ननु 'घोषसमम्' इत्युक्त्वा पुनः परिपूर्णघोषमिति
कथनं पुनरुक्तिदोषग्रस्तम्, इति चेदुच्यते, घोषसमम्' इति शिक्षाकालमाश्रित्यो-
क्तम्, 'परिपूर्णघोषम्' इति तु परावर्तनाकालमाश्रित्युक्तम्, अतो नास्ति पुनरु-

व्यत्याग्रेडित है अथवा आचारांग आदि सूत्र के बीच में अपनी बुद्धि से
बनाकर उसके जैसे सूत्रों को प्रक्षिप्त करके पढ़ना इसका नाम भी व्यत्या-
ग्रेडित है, अथवा बोलते समय जहां विराम लेना चाहिये वहां विराम नहीं
लेना और नहीं लेना चाहिये वहां विराम लेना इसका नाम भी व्यत्याग्रेडित
है। इस प्रकार का व्यत्याग्रेडित दोष जिसके द्वारा उस आवश्यक शास्त्र के
अध्ययन करने में नहीं लगा गया है अर्थात् इस दोष के वर्जित करके जिसने
आवश्यकशास्त्र को सीखा है, (पडिपुण्णं) सूत्र की अपेक्षा विन्दु मात्र आदि से
अन्यून एवं अर्थ की अपेक्षा अध्याहार एवं आकांक्षा आदि से रहितरूप से
उस आवश्यकशास्त्र का जिसने भली प्रकार से ज्ञान प्राप्त कर लिया है-
(पडिपुण्णघोसं) उदात्त अनुद्यत्तस्वरिस घोषों का यथास्थान ज्ञान प्राप्तकर जिसने
उस शास्त्र का अच्छी रीति से परावर्तन किया है। "घोषसमं और परिपूर्णघोषं" इन
दोनों विशेषणों में पुनरुक्तिदोषइव लिये नहीं मानना चाहिये कि पहिला विशेषण
शिक्षा काल को आश्रित करके कहा गया है और यह दूसरा विशेषण परावर्तन

तेनुं नाम "व्यत्याग्रेडितं छे. अथवा आचारांग आदि सूत्रनो पाठ करती वअते
वअते वअते पोतानी बुद्धिथी इयेवां तेना जेवां न सूत्रेनुं उच्यारथु करवुं तेनुं
नाम पणु व्यत्याग्रेडित छे अथवा जोलनी वअते जथां विराम लेवो अने विराम
न लेवानो होय त्यां विराम लेवो तेनुं नाम पणु व्यत्याग्रेडित छे. आ प्रकारनो
व्यत्याग्रेडित होणुं जेना द्वारा ते आवश्यक शास्त्रनुं अध्ययन करती वअते सेवन
'कराथु' नथी, ओरवे के आ होपनो त्यागपूर्वक जेणे आवश्यकशास्त्र अध्ययन करथुं छे.
(पडिपुण्णं) सूत्रनी अपेक्षाओ विन्दु मात्र आदिथी अन्यून अने अर्थनी अपेक्षाओ
अध्याहार अने आकांक्षा आदिथी रहितइये ते आवश्यकशास्त्रनुं जेणे सारी रीते
ज्ञान प्राप्त करी लीधुं छे.

(पडिपुण्णघोसं) उदात्त आदि घोषोनुं यथास्थान ज्ञान प्राप्त करीने जेणे
ते शास्त्रनुं सारी रीते परावर्तन करथुं छे, 'घोषसमं' अने "पडिपुण्णघोसं" आ पणने
विशेषणोभां पुनरुक्ति दोष ओ कारणे मानवो जेधओ नहीं के पडेथुं विशेषण
शिक्षा काणने आश्रित करीने वपराथुं छे अने थीणुं विशेषण परावर्तन काणने

ક્તિદોષઃ । કઠ્ઠોઠ્ઠવિગ્રમુક્તમ્-કઠ્ઠશ્ચ-ઓઠ્ઠંચ-કઠ્ઠોઠ્ઠમ્-તેન વિગ્રમુક્તમ્-સુસ્પષ્ટ-
મિત્યર્થઃ ન તુ બાલમૂકાદિભાષિતવદસ્પષ્ટમ્ । તથા-ગુરુવાચનોપગતં-ગુરોઃસઙ્ગ-
જ્ઞાદધિગતા યા વાચના,=સૂત્રસ્યાર્થસ્ય ચ ગ્રહણં તથા ઉપગતં પ્રાપ્તમ્, તદેવં યસ્ય
સાધોરાવશ્યકપદં-શિક્ષિતાદિગુણોપેતમધિગતં ભવતિ, સ સ્વલુ સાધુઃ । તત્ર=
આવશ્યકપદે વાચનયા-શિષ્યાધ્યાપનરૂપયા પ્રચ્છનયા-પ્રચ્છના-પૂર્વાધીતસૂત્રાદૌ
સંશયે સતિ ગુરુસમીપે પ્રચ્છનમ્, યદ્વા-પ્રચ્છના-વિશોધિતસ્ય સૂત્રસ્ય માભૂદ્ વિસ્મરણ-
મિત્તિ ગુરોઃ પ્રશ્નરૂપા, તયા, પરિવર્તનયા=અધીતસ્ય સૂત્રાદેઃ પુનઃપુનરાવૃત્તિ કરણં
ગુણનં પરિવર્તના, તયા, ધર્મકથયા=દુર્ગતૌ પ્રપન્નન્તં સત્ત્વસંઘાતં સુગતૌ ધારય-

(પુનરાવર્તન) કાલકો આશ્રિત કરકે કહા ગયા હૈ। (કંઠોઠ્ઠવિપ્પમુક્કં) બાલ આદિ કે
ભાષિત કી तरह जिस का उसशास्त्र वा अस्पाष्ट उच्चारण नहीं है-किन्तु बिलकुल स्पष्ट स्वर
से जो उसका उच्चारण करता है, तथा (गुरुवायणोवगयं) गुरुके पास रहकर जिसने
इस आवश्यकशास्त्र की वाचना पाई है-सूत्र और अर्थ का अध्ययन किया है-जिस
से उसे उस-आवश्यक शास्त्र का ज्ञान प्राप्त हुआ है-इस तरह इन पूर्वोक्त श्रुत-
गुणरूपविशेषणों के अनुसार जिस साधुने आवश्यकशास्त्र का ज्ञान प्राप्त कर-
लिया है-अतः (से) वह साधु (तत्थ) उस आवश्यकशास्त्र में (वायणाए पुच्छ-
णाए परियट्टणाए धम्मकहाए) शिष्य अध्ययनरूप वाचना से, पूर्वाधीत सूत्रादि
में संशय होने पर गुरु के समीप पूछनेरूप अथवा विशोधित सूत्र का विस्म-
रण न हो जावे इस ख्याल से गुरु से प्रश्नकरनेरूप पृच्छना से, अधीत पढा हुआ
सूत्रादिक कि पुनः पुनः आवृत्ति करनेरूप परिवर्तना से और दुर्गति में पड़ते

આશ્રિત કરીને વપરાયું છે. (કંઠોઠ્ઠવિપ્પમુક્કં) બાલક અથવા મૂંગા માણસના
જેવું અસ્પષ્ટ ઉચ્ચારણ જે કરતો નથી-પરન્તુ બિલકુલ સ્પષ્ટ સ્વરથી જે તેનું ઉચ્ચારણ
કરે છે, (ગુરુવાયણોવગયં) ગુરુની પાસે રહીને જેણે આ આવશ્યક શાસ્ત્રની વાચના
કરી છે-એટલે કે ગુરુની સમક્ષ જેણે સૂત્ર અને અર્થનું અધ્યયન કર્યું છે અને
આ રીતે જેને આવશ્યક સૂત્રનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત થયું છે, આ રીતે પૂર્વોક્ત શ્રુત ગુણ
રૂપ વિશેષણોના અનુસાર જે સાધુએ આવશ્યકશાસ્ત્રનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી લીધું છે. અને
તેથી (સે) તે સાધુ (તત્થ) તે આવશ્યકશાસ્ત્રમાં (વાયણાએ પુચ્છણાએ પરિયટ્ટણાએ
ધમ્મકહાએ) શિષ્ય અધ્યયનરૂપ વાચન વડે પૂર્વાધીત (પહેલાં જેનું અધ્યયન કરવામાં
આવ્યું છે તેને પૂર્વાધીત કહે છે) સૂત્રાદિમાં સંશય થાય ત્યારે ગુરુને તે વિષે પ્રશ્ન
કરવારૂપ પૃચ્છાવડે અથવા વિશોધિત સૂત્રનું વિસ્મરણ ન થઈ જાય તે ખ્યાલથી
ગુરુને પ્રશ્ન કરવારૂપ પૃચ્છના વડે અધીત સૂત્રનો ફરી ફરીને પાઠ કરવારૂપ પરિવર્તના
વડે અને દુર્ગતિમાં પડતાં જીવોને સુગતિમાં ધારણ કરાવનાર ધર્મકથાવડે-એટલે

તીનિ ધર્મઃ તસ્ય વથનં ધર્મકથા અહિંસાદિ ધર્મપ્રરૂપણરૂપા, તયા, વર્તમાનોઽસ્તીતિ આગમનો દ્રવ્યાવશ્યકમુચ્યતે । નનુ વાચનાદિભિસ્તત્રાવશ્યકશાસ્ત્રે વર્તમાનઃ સાધુઃ કથમાગમનો દ્રવ્યાવશ્યકં ભવતીતિ શિષ્યશક્ત્યાં નિરાકર્તુમાહ—‘નો અણુપ્પેહાણ’ નો અનુપ્રેક્ષયા—વાચનાદિભિસ્તત્ર વર્તમાનોઽપિ શાસ્ત્રાર્થાનુચિન્તનરૂપયાઽનુપ્રેક્ષયા નો વર્તમાનો ભવતિ અનુપ્રેક્ષયા યુક્તો ન ભવતીત્યર્થઃ, અતઃ સ આગમતો દ્રવ્યાવશ્યકં ભવતિ । અનુપ્રેક્ષયાચાઽવર્તમાનઃ કથમાગમતો દ્રવ્યાવશ્યકં ભવતીતિ સ્વયમાહ સૂત્રકારઃ—‘કમ્હા’ इत्यादिना । કસ્માત્ આગમતો દ્રવ્યાવશ્યકં ભવતિ ? ઉત્તરયતિ—‘અણુવઓગો દવ્વામિતિ વદ્ધુ’ અનુપયોગો દ્રવ્યમિતિ કૃત્વા—ઉપયુજ્યતે—વસ્તુપરિચ્છેદં કરોતિ જીવોઽનેત્યુપયોગઃ । કરણે ઘણૂ પ્રત્યયઃ । ઉપયોગઃ=

હુણ જીવોં કો સુગતિ મેં ધારણકરણે વાલે (પહોંચાને વાલે) ધર્મ કી કથા સે—અર્થાત્ અહિંસાદિ ધર્મ કી પ્રરૂપણા સે—વર્તમાન હૈ—ઇસ તરહ આગમ કી અપેક્ષા હેહ સાધુ દ્રવ્યાવશ્યક વહા ગયા હૈ । યહાં એસી આશંકા નહીં કરની चाहिये, कि वाचनादिरूप क्रियाओं से उस आवश्यक शास्त्र में वर्तमान वह साधु आगम की अपेक्षा द्रव्यावश्यक कैसे है क्योंकि (नो अणुप्पेहाण) इस पद से सूत्रकारने इस शंका का समाधान किया है—वे कहते हैं कि वाचनादिरूप क्रियाओं से आवश्यकशास्त्र में वर्तमान रहा हुआ भी वह साधु शास्त्र के अर्थ का अनुचिन्तन करने रूप अनुप्रेक्षा चिन्तन से उसमें वर्तमान नहीं है । इसलिये वह आगम से द्रव्यावश्यक है । (कम्हा अणुपयोगो दव्वमिति) क्योंकि “अनुपयोगो द्रव्यं” ऐसा शास्त्र का वचन है । इस का तात्पर्य यह है कि—जीव जिस के द्वारा वस्तु का परिच्छेद करता है उस का नाम उपयोग है । उप उपसर्ग पूर्वक युज्

કે અહિંસાદિ ધર્મની પ્રરૂપણાવડે વર્તમાન (વિદ્યમાન) છે. આ રીતે આગમની અપેક્ષાએ તે સાધુને દ્રવ્યાવશ્યક કહેવામાં આવ્યો છે.

અહીં એવી શંકા ન કરવી જોઈએ કે વાચનાદિ ક્રિયાઓ વડે તે આવશ્યક સૂત્રમાં વર્તમાન તે સાધુ આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાવશ્યક કેવી રીતે સંભવી શકે છે ? સૂત્રકારે આ સૂત્રપાઠ દ્વારા તે શંકાનું સમાધાન કર્યું છે—

(નો અણુપ્પેહાણ) વાચનાદિરૂપ ક્રિયાઓ વડે આવશ્યક શાસ્ત્રમાં વર્તમાન રહેલો એવો તે સાધુ શાસ્ત્રના અર્થનું અનુચિન્તન કરવારૂપ અનુપ્રેક્ષાની અપેક્ષાએ તેમાં વર્તમાન હોતો નથી તે કારણે તે આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાવશ્યક છે. (કમ્હા અણુપયોગો દવ્વામિતિ) કારણ કે શાસ્ત્રનું એવું વચન છે કે “અનુપયોગો દ્રવ્યં” આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—

જીવ જેના દ્વારા વસ્તુનો પરિચ્છેદ કરે છે (વસ્તુનું જ્ઞાન મેળવે છે) તેનું

જીવસ્ય बोधरूपो व्यापारः । न विद्यते उपयोगो द्वासाः—अनुपयोगः । इति
 कृत्वा=अरमात् कारणात् स साधुरागमतो द्रव्यावश्यकं भ-ति। यस्य. वरयचित्
 साधोरावश्यकशास्त्रं शिक्षितं स्थितं जितं यावद् वाचनोपगतं भवति, स खलु
 साधुरतत्रावश्यकशास्त्रे वाचना-प्रच्छना-परिवर्तना धर्मकथाभिर्दत्तमानोऽपि आ-वश्यको-
 पयोगरहितत्वादागमतो द्रव्यावश्यकं भवतीति समुदितार्थः । अत्रेदं बोध्यम्—
 वाचना प्रच्छनादय उपयोगपूर्वका अनुपयोगपूर्वकाश्च भवन्ति । परमिह द्रव्या-
 वश्यकप्रस्तावादनुपयोगपूर्वका वाचनाप्रच्छनादयो बोद्धव्याः । अनुपयोगस्तु भौव-

धातु से करण में धञ् प्रत्यय करने से उपयोग शब्द निष्पन्न हुआ है । जीव
 के बोधरूप व्यापार का नाम उपयोग है । यह उपयोग जहां पर नहीं है
 उस का नाम अनुपयोग है । इस अनुपयोग से उस आवश्यकशास्त्र में युक्त
 होने के कारण वह आवश्यक शास्त्र वा ज्ञाता आगम से द्रव्यावश्यक माना
 जाता है । तात्पर्य कहने का यह है कि जिस साधुने आवश्यक शास्त्र को
 अच्छी तरह से जान लिया है, सीख लिया है—उसका वह पूर्णरूप से ज्ञाता
 हो चुका है—अतः वह साधु उस आवश्यकशास्त्र में वाचना पृच्छना, परिवर्तना
 एवं धर्मकथा के रूप से वर्तमान मान लिया जाता है—फिर भी आवश्यक
 के उपयोग से रहित होने के कारण वह आगम से द्रव्यावश्यक कहलाता है ।
 उसे यों समझना चाहिये कि वाचना पृच्छना आदि उपयोगपूर्वक भी होते हैं
 और अनुपयोगपूर्वक भी । परन्तु यहां द्रव्यावश्यक का प्रकरण होने से वे

नाम ‘उपयोग’ છે. ‘યુજ્’ ધાતુને ઉપ ઉપસર્ગપૂર્વક કરણ અર્થ ધજ્ પ્રત્યય લગા-
 ડવાથી ઉપયોગ શબ્દ બને છે. જીવના બોધરૂપ વ્યાપારનું નામ ઉપયોગ છે. તે
 ઉપયોગનો જ્યાં સદ્ભાવ નથી તેને અનુપયોગ કહે છે. તે અનુપયોગપૂર્વક તે આવ-
 શ્યકશાસ્ત્રમાં યુક્ત હોવાને કારણે તે આવશ્યકશાસ્ત્રના જ્ઞાતાને દ્રવ્યની અપેક્ષાએ
 આવશ્યક (દ્રવ્યાવશ્યક) માનવામાં આવે છે. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે જે
 સાધુએ આવશ્યક શાસ્ત્રને સારી રીતે બાણી લીધું છે—સારી રીતે તેનું અધ્યયન કરી
 લીધું છે. તેના પૂર્ણરૂપે બાણકાર થઈ ગયો છે, એવા સાધુને તે આવશ્યકશાસ્ત્રમાં
 વાચના, પૃચ્છના, પરિવર્તના અને ધર્મકથા રૂપે વર્તમાન માની લેવામાં આવે છે,
 છતાં પણ આવશ્યકના ઉપયોગથી રહિત હોવાને કારણે તેને આગમની અપેક્ષાએ
 દ્રવ્યાવશ્યક કહેવામાં આવે છે. આ વાતનો વધુ ખુલાસો આ પ્રમાણે સમજવો—
 વાચના, પૃચ્છના, આદિ ઉપયોગપૂર્વક પણ થાય છે અને અનુયોગપૂર્વક પણ થાય
 છે પરન્તુ અહીં દ્રવ્યાવશ્યકનું પ્રકરણ ચાલતું હોવાથી તેમને અનુપયોગપૂર્વક જ

शून्यता, तच्छून्यं च वस्तु द्रव्यमेव शब्दतीति वाचनादिमिस्तत्र वर्तमानोऽपि साधु द्रव्यावश्यकम् । अनुपेक्षा तूपयोगपूर्विकैव संभवति, अतस्तत्र वर्तमानो द्रव्यावश्यकं न भवति ।

ननु आगममाश्रित्य द्रव्यावश्यकमित्यागमरूपमिदं द्रव्यावश्यकमित्युक्तं भवति, एतच्च युक्तं न प्रतिभाति, यत् आगमो ज्ञानं, ज्ञानं च भाव एवेति कथमस्य द्रव्यत्वमुपपद्यते ? इति चेत् उच्यते—आगमस्य कारणमात्मा, तदधिष्ठितो देहः, शब्दश्चोपयोगशून्यसूत्रोच्चारणरूप इहास्ति, न तु साक्षादागमः । एतच्च त्रितयमागम कारणत्वात् कारणे कार्योपचारादागम उच्यते, कारणं च विवक्षित भावस्य द्रव्यमेव भवतीत्यदोषः ।

अनुपयोगपूर्वकं गृहीत किये गये हैं । भावशून्यता का नाम अनुपयोग है । उपयोग से शून्य द्रव्य ही होता है । इसलिये वह आवश्यकशास्त्र का ज्ञाता साधु उसमें वाचनादिक से वर्तमान होता हुआ भी उपयोग से शून्य होने के कारण द्रव्यावश्यक है । अनुपेक्षा जो होती है वह उपयोगपूर्वक ही होती है इसलिये उसमें वर्तमान साधु द्रव्यावश्यक नहीं है वह तो भावावश्यक है ।—शंका—जब आप आगम को आश्रित करके द्रव्यावश्यक की प्ररूपणा करते हो तो वह द्रव्यावश्यक आगमरूप बहा गया है मानने में आता है । परन्तु यह बात युक्त प्रतीत नहीं होती है क्योंकि आगम जो होता है वह तो ज्ञानरूप होता है । और ज्ञान भावरूप होता है । अतः आगम में द्रव्यता कैसे बन सकती है ?

उत्तर—आगम के कारण आत्मा, आत्माधिष्ठित देह, और उपयोगशून्य सूत्र का उच्चारणरूप शब्द ये तीन माने गये हैं । साक्षात् आगम नहीं । ये तीन आगम के कारण होने से कारण में आगमरूप कार्य का उपचार किया गया है । इसलिये इन्हें आगमरूप से बहा है । विवक्षित भाव का जो कारण

गृहीत करवाया आवेद्य छे । आवशून्यतानुं नाम अनुपयोग छे द्रव्य न उपयोगथी रहित होय छे । तेथी ते आवश्यक शास्त्रनो ज्ञाता साधु तेमां वाचना आदिउपे वर्तमान होवा छतां पणु उपयोगथी रहित होवाने कारणे द्रव्यावश्यक न कडेवाय छे । अनुपेक्षा तो उपयोगपूर्वक न थाय छे । तेथी तेमां (अनुपेक्षाभां) वर्तमान साधु द्रव्यावश्यक नथी, पणु भावावश्यक छे ।

शंका—न्याये आप आगमने आश्रित करीने द्रव्यावश्यकनी प्ररूपणा करे छे । त्यादे ओपुं लागे छे के द्रव्यावश्यकने आगमरूप कडेवायां आन्युं छे, ओपुं आप प्रतिपादन करी रह्या छे । परन्तु ओ बात युक्त लागती नथी कारणे के आगम

નનુ—આગમતોऽનુપયુક્તો દ્રવ્યાવશ્યકમ્, इत्येतावतैवेष्टसिद्धेः शिक्षितादि-
श्रुतगुणाभिधानं व्यर्थमिति चेत्, उच्यते—शिक्षितादिश्रुतगुणाभिधानेन सूत्रकार इदं
सूचयति—एवंविधं निर्दोषमपि श्रुतमुच्चारयतोऽनુपयुक्तस्य द्रव्यश्रुतं द्रव्यावश्यक-
मेव भवति, किं पुनः सदोषम् । उपयुक्तस्य स्वलितादिदोषदुष्टमुच्चारयतोऽपि

હોતા હૈ વહ દ્રવ્ય હી હોતા હૈ । इसलिये आवश्यक में उपयोगरहित आत्मा
का आगम से द्रव्यावश्यक कहना निर्दोष है ।

શંકા—ઠીક હૈ—આવશ્યક મેં અનુપયુક્ત આત્મા કો આપ આગમ કી
અપેક્ષા દ્રવ્યાવશ્યક કહિયે—इसमें कोई विरोध नहीं है—परन्तु सूत्रकार ने
जो शिक्षितादि श्रुतगुणों का वर्णन किया है सो उनके कहने की क्या
आवश्यकता थी ? वह श्रुतगुण कथन तो व्यर्थ है । क्यों कि इस श्रुतगुण
कथन से आगम की अपेक्षा लेकर द्रव्यावश्यक की सिद्धि में कोई संगति
प्रतीत नहीं होती ? सो इस प्रकार का आक्षेप भी संगत प्रतीत नहीं होता—
कारण सूत्रकार इस श्रुतगुणवर्णन से यह सूचित करते हैं कि इस प्रकार निर्दोष भी
शास्त्र का उच्चारण करने वाले साधुका कि जो उस में अनुपयुक्त (विना उपयोग के)

તો જ્ઞાનરૂપ હોય છે અને જ્ઞાન ભાવરૂપ હોય છે. તેથી આગમમાં દ્રવ્યતા કેવી
રીતે ઘટાવી શકાય છે ?

ઉત્તર—આગમના આ ત્રણ કારણો માનવામાં આંચાં છે—(૧) આત્મા, (૨)
આત્માધિષ્ઠિત દેહ અને (૩) ઉપયોગ રહિત સૂત્રના ઉચ્ચારણરૂપ શબ્દ—સાક્ષાત
આગમ નહીં. આગમના આ ત્રણ કારણો હોવાથી કારણમાં આગમરૂપ કાર્યનો
ઉપચાર કરવામાં આંચો છે. તે કારણે તેમને આગમરૂપ કહેવામાં આવેલ છે. વિવ
ક્ષિત ભાવનું જે કારણ હોય છે તે દ્રવ્ય જ હોય છે. તેથી આવશ્યકમાં ઉપયોગ
રહિત આત્માને આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાવશ્યક કહેવો એમાં કોઈ દોષ નથી, એ
તો નિર્દોષ કથન જ ગણી શકાય.

શંકા—આવશ્યકમાં અનુપયુક્ત આત્માને આપ આગમની અપેક્ષાએ ભલે
દ્રવ્યાવશ્યક કહો, એમાં અમને કંઈ વાંધો નથી; પરન્તુ સૂત્રકારે જે શિક્ષિત આદિ
શ્રુતગુણોનું વર્ણન કર્યું છે. તે વર્ણન કન્વાની અહીં શી આવશ્યકતા હતી ? તે
શ્રુતગુણકથન તો વ્યર્થ જ લાગે છે, કારણ કે આ શ્રુતગુણ કથન વડે આગમની
અપેક્ષાએ દ્રવ્યાવશ્યકની સિદ્ધિમાં કોઈ સંગતિ દેખતી નથી.

ઉત્તર—આ પ્રકારનો આક્ષેપ પણ સંગત લાગતો નથી, કારણ કે સૂત્રકાર આ
શ્રુતગુણ વર્ણન વડે એ સૂચિત કરવા માગે છે કે—આ પ્રકારે નિર્દોષરૂપે પણ શાસ્ત્રનું
ઉચ્ચારણ કરનારો સાધુ કે જે તેમાં અનુપયુક્ત જ રહેલો છે, તેનું તે દ્રવ્ય ત

ભાવશ્રુતમેવ ભવતિ । एवं प्रत्युपेक्षादि क्रिया निर्दोषा अपि अनुपयुक्तस्य न तथाविधफलदायिन्यो भवन्ति । उपयुक्तरस्य तु मतिर्वैकल्यादिनः सदोषा अपि प्रत्युपेक्षादि क्रियाः कर्ममलापनयनाय समर्था भवन्तीति ।

નનુ ભવત્વનુપયુક્તો દ્રવ્યાવશ્યકમ્, કિન્તુ હીનાક્ષરંસૂત્રં સમુચારિતે કો દોષઃ ? કથમુક્તમહીનાક્ષર ? મિતિ, ઉચ્યતે—લૌકિકવિદ્યાઃમંત્રા અપિ અક્ષરહીનાઃ સમુચાર્યમાણાસ્તત્ફલં દાતુમરુમર્થા અનર્થવિહાસ્ય ભવન્તિ, કિં તર્હિ પરમમંત્રરૂપે હો રહા હૈ—વહ દ્રવ્યશ્રુત દ્રવ્યાવશ્યક હી હૈ । તો ફિર સદોષ શાસ્ત્ર કો ઉચ્ચારણ કરને વાલે કી તો વાત હી વ્યા હૈ ? જો હસ શાસ્ત્ર મેં ઉપયોગ યુક્ત હૈ એસા પ્રાણી યદિ સ્વલિત આદિ દોષ સે મી દૂષિત શાસ્ત્ર કા ઉચ્ચારણ કરતા હૈ તો હસકા વહ દ્રવ્ય ત ભાવશ્રુત હી હૈ । હસી તરહ અનુપયુક્ત સાધુ રૂપ પ્રાણી કી પ્રત્યુપેક્ષણાદિ ક્રિયા નિર્દોષ મી હોં તો મી વે તથાવિધ ફલ કી પ્રદાતા નહીં હોતી હૈ । પરન્તુ જો સાધુ હનપ્રત્યુપેક્ષણાદિ-પઢિલેહણા ક્રિયાઓ કો હનમેં ઉપયુક્ત બન કર કરતા હૈ ઓર યદિ વે મતિ વિકલતા આદિ કે વશ સે સદોષ મી કર્મમલકો દૂર કરને કે લિયે સમર્થ હોતી હૈ ।

શંકા—અનુપયુક્ત સાધુ દ્રવ્યાવશ્યક ભલે હો પરન્તુ હીનાક્ષરરૂપ સે સૂત્ર કે ઉચ્ચારિત હોને પર વ્યા દોષ હૈ કિ હિસ સે “અહીળવશ્વર” યહ શ્રુત કા કથિત ગુણરૂપ સ્વરૂપ વિશેષણ સફલ માના જા સકે ?

ઉત્તર—લૌકિક વિદ્યા, મંત્ર, મી જવ અક્ષર ન્યૂન બોલે જાતે હૈ તો વે અપને વાસ્તવિક ફલ કો દેને મેં અસમર્થ હો જાતે હૈ ઓર અનર્થકારક બન જાતે હૈ તવ ફિર પરમમંત્ર રૂપ સૂત્ર કે વિષય મેં વ્યા કહના । હીનાક્ષર સૂત્ર કે

દ્રવ્યાવશ્યક જ છે, તો સદોષ શાસ્ત્રનું ઉચ્ચારણ કરનારની તો વાત જ શી કરવી ! જે તે શાસ્ત્રમાં ઉપયોગયુક્ત છે એવો સાધુ પણ જો સ્થલિત આદિ દોષથી દૂષિત થયેલા શાસ્ત્રનું ઉચ્ચારણ કરે છે, તો તેનું તે દ્રવ્યશ્રુત ભાવશ્રુત જ છે. એજ પ્રમાણે અનુપયુક્ત સાધુરૂપ જીવની પ્રત્યુપેક્ષણાદિ ક્રિયા નિર્દોષ હોય તો પણ તથાવિધ (તે પ્રકારના) ફલની પ્રદાતા સંભવી શકતી નથી. પરન્તુ જે સાધુ તે પ્રત્યુપેક્ષણાદિ ક્રિયાઓને તેમાં ઉપયુક્ત બનીને કરે છે, એવો સાધુ કદાચ મતિ વિકલતા આદિને કારણે સદોષ હોય તો પણ તેની તે ક્રિયાઓ કર્મભળને દૂર કરવાને સમર્થ જ હોય છે.

શંકા—અનુપયુક્ત સાધુને દ્રવ્યાવશ્યક માની લઈએ, પરન્તુ હીનાક્ષરરૂપે સૂત્રનું ઉચ્ચારણ કરવામાં એવો તો કયો દોષ છે કે જેથી “અહીળવશ્વર” આ શ્રુતના કથિત ગુણરૂપ વિશેષણને સફળ આની શકાય ?

ઉત્તર—લૌકિક વિદ્યારૂપ મંત્રનું ઉચ્ચારણ કરવામાં પણ જો એકાદ અક્ષરને ઉણડી દેવામાં આવે છે, તો તે મંત્ર પણ વાસ્તાવિક રૂપે આપવાને અસમર્થ

सूत्रे वक्तव्यम् ? हीनाक्षरे सूत्रे उच्चारिते तत्कलत्रमकल्याणरूपमोक्षानवाप्तिरनन्तसंसात्वापि भवतीति सुधीभिर्विभाव्यम् ।

अत्रायं दृष्टान्तः—एकदा राजगृहनगरोद्याने समवसृतस्य भगवतो महावीरस्य चरणौ वन्दितुं देवासुरविद्याधरनरसमुदायः समागतः । स्वपुत्रेणामयकुमारेण सह राजा श्रेणिकोऽपि समागतः । भगवता परिषदि धर्मदेशनादत्ता । धर्मदेशनानन्तरं सर्वेऽपि भगवन्तमभिवन्द्य स्वस्वस्थानं गताः । सपुत्रः श्रेणिको भगवन्तं पर्युपासीनः । भगवत्समीप एव स्थितः । अस्मिन् समये कश्चिद् विद्याधरो विस्मृतविद्यैकाक्षरो नभसा गन्तुमुत्पतितः, किञ्चिद् गत्वा

उच्चरित होने पर उसका फल जो परम कल्याणरूप मोक्ष की प्राप्ति होना वह नहीं होती है और अनन्त संसार की प्राप्तिरूप अनर्थ प्रगट होते हैं, इस विषय में यह दृष्टांत है—एक समय राजगृह नगर के उद्यान में भगवान् महावीर का समवसरण हुआ ।

प्रभु को वंदना करने के लिये देव, असुर, विद्याधर एवं मनुष्य इन सबका समुदाय आ पहुंचा । अपने पुत्र अभयकुमार के साथ राजा श्रेणिक भी आये । भगवान् ने परिषदा में धर्म की देशना दी । देशना सुनकर सब भगवान् को वंदना करके अपने-अपने स्थान पर चले गये । पर राजा श्रेणिक नहीं गये । सपुत्र वे भगवान् की पर्युपासना में लवलीन हो कर भगवान् के समीप में ही बैठ गये । इतने में कोई एक विद्याधर जिसको अपनी विद्या का एक अक्षर विस्मृत हो गया था । आकाशमार्ग से जाने के लिये उड़ा । वह

गनी जय छि अने अनर्थकारक पणु गनी शके छि, तो पछी परम मंत्रइय सूत्रनी तो वात न शी करवी ? हीनाक्षर सूत्रना उच्चारणने लीधि परमकल्याणकारक मोक्ष इय इगनी प्राप्ति पणु थती नथी ओगुं न नही पणु अनन्त संसारनी प्राप्तिइय अनर्थ पणु प्रगट थाय छि आ विषयने अनुलक्षीने नीयेनुं दृष्टात आपवामां आव्युं छे.

कोछ ओक समये राजगृह नगरना उद्यानमां महावीर प्रभुनुं समवसरण थयुं प्रभुने वंदणा करवा निमित्तं देव, असुर, विद्याधर अने मनुष्यने समुदाय आवी पड़ोऽये। पोताना पुत्र अभयकुमारने साथे लधने महाराज श्रेणिक पणु आवी पड़ोऽया लगवाने त्या ओकत्र थयेली परिषदने धर्मनी देशना दीधी। लगवाननी देशना सांलणने अने लगवानने वंदणा करीने सौ पोतपोताने स्थाने पाछां इयां, परन्तु राजा श्रेणिक त्यांथी अस्या नही। ते पोताना पुत्रनी साथे लगवाननी पर्युपासनामां लवलीन थधने त्यांज जेसी रह्यो। हुवे आ वणते नीयेनो गनाव जन्थे। समवसरणमांथी पाछी इरतो। कोछ ओक विद्याधर आकाशमार्गे उडवा भागतो हुतो पणु आकाशमां उडवा भाटे जे मंत्रनो उच्चार करवे जेधये ते मंत्रनो ओक अक्षर ते लुली

નિપતિતઃ, પુનસ્તપતિતો નિપતિતશ્ચ । एवं पुनः पुनस्तपतन्तं निपनन्तं तं विद्याधरं वीक्ष्य
 अभयकुमारो भगवन्तं प्रणम्यैवमब्रवीत्—भदन्त । कथमयं महाभागो विद्याधरो
 विच्छिन्नपक्षः पक्षीव पुनः पुनर्नभसि उत्पतति निपतति च ? ततो भगवता
 प्रोक्तम्—अयं विद्याधरो विस्मृतविद्यैकाक्षरो नभसि गन्तुं प्रयतते, परन्तु सफला
 न भवति । भगवद्वचनं श्रुत्वा अभयकुमारस्तस्य विद्याधरस्य समीपे समागत्यै-
 वमब्रवीत्—महाभाग ! यदिवं मह्यमपि विद्यासाधनोपायं कथयेस्तदा—त्वद्विस्मृत-
 विद्यैकाक्षरं तुभ्यं निवेदयामि । विद्याधरेणाभयकुमारवचनं प्रतिपन्नम् । अभय-

કુછ દૂર ગયા. હી થા કિ નીચે ગિર પડા । વહાં સે ફિર ઉડા ઓર ફિર
 આગે જાકર ગિર પડા । ઇસ તરહ વારંવાર ઉડતે ઓર ગિરતે હુએ उस विद्याधर
 को अभयकुमारने देख लिया । देखकर उसने भगवान् से नमस्कार कर पूछा-
 हे भदन्त ! कटे हुए पक्षवाले पक्षी की तरह यह विद्याधर बार २ आकाश
 में उड़ता है और गिर पड़ता है सो इसका क्या कारण है ? तब भगवान् ने
 कहा—यह विद्याधर अपनी आकाश गामिनी विद्या का एक अक्षर भूल गया
 है—अतः उड़ने का प्रयत्न करता हुआ भी यह उसमें सफल नहीं हो पा रहा
 है । भगवान् के इस प्रकार वचन सुनकर अभयकुमार शीघ्र ही उस विद्याधर
 के पास गया और बोला—महाभाग ! यदि तुम मुझे विद्या सिखा
 देंगे तो मैं तुम्हारे लिये विद्या के विस्मृत हुए एक अक्षर को कह
 दूंगा । अभयकुमार की इस बात को उस विद्याधर ने मान लिया—तब अभय-

ગયો હતો. તે આકાશમાં ઉડ્યો તો ખરો પણ થોડે દૂર જઈને નીચે પડી ગયો.
 વળી ફરીથી ઉડ્યો, પરન્તુ થોડે દૂર જઈને ફરી નીચે પડી ગયો. આ પ્રમાણે
 વારંવાર ઉડતાં અને પડતાં તે વિદ્યાધરને અભયકુમારે જોયો. તેનું કારણ જાણવાની
 તેને ઇચ્છા થઈ તેણે મહાવીર પ્રભુને વંદણા નમસ્કાર કરીને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન
 પૂછ્યો—“હે ભગવન્ ! તુટેલી પાંખવાળા પક્ષીની જેમ આ વિદ્યાધર વારંવાર આકા-
 શમાં ઉડે છે અને નીચે પડી જાય છે. તેનું કારણ શું હશે ?

ત્યારે મહાવીર પ્રભુએ અભયકુમારને આ પ્રમાણે જવાબ આપ્યો—હે અભય-
 કુમાર ! તે વિદ્યાધર પોતાની આકાશગામિની વિદ્યાનો એક અક્ષર ભૂલી ગયો છે.
 તે કારણે ઉડવાનો પ્રયત્ન કરવા છતાં પણ તે તેમાં સફળ થતો નથી.

ભગવાનનાં એવાં વચનો સાંભળીને અભયકુમાર તુરંત જ તે વિદ્યાધરની
 પાસે પહોંચી ગયો. તેણે તે વિદ્યાધરને કહ્યું—“હે મહાભાગ ! જો તમે મને વિદ્યા
 સાધવાનો ઉપાય બતાવો, તો હું તમને આકાશગામિની વિદ્યાના મંત્રનો વિસ્મૃત
 થઈ ગયેલો એક અક્ષર બતાવી દઉં વિદ્યાધરે અભયકુમારની તે વાતનો સ્વીકાર કર્યો.

कुमारस्य एकस्मादपि पदादनेकपदाभ्यूहनशक्तिरासीत् । स विद्याधरकथितमन्त्रं श्रुत्वा विस्मृतमक्षरं तस्मै निवेदितवान् । स विद्याधरोऽपि तस्मै विद्यासाधनोपायमकथयत् । ततो विद्याधरो विस्मृतमक्षरमुपलभ्य स्वसमीहितप्रदेशं गतः । अनेन दृष्टान्तेनेदं बोध्यम्—यथा तस्य विद्याधरस्यैकाक्षरविस्मरणेन हीनाक्षरतादोषान्नभोगतिरुपरता, विद्या च व्यर्थतां याता तथैव हीनाक्षरे सूत्रे उच्चारितेऽर्थभेदतद्भेदात् क्रियाभेदः, क्रियाभेदे च मोक्षानवाप्तिः । ततो दीक्षाग्रहणादिकमपि वैयर्थ्यमापद्येतेति । एवमधिकाक्षरादिष्वपि दोषा बोध्याः । विस्तरभिया दृष्टान्ताभिधानाद् विस्म्यते । ॥ सू० १४ ॥

कुमार ने कि जिसे 'सर्वाक्षर सन्निपाती' विद्या में निपुणता थी जिससे उनको एक भी पद से अनेक पदों को विचार करने की शक्ति प्राप्त थी उस विद्याधर के कथित मंत्र को सुनकर विस्मृत अक्षर उसे कह दिया । विद्याधरने भी अभयकुमार को विद्यासाधन के उपाय कह दिये । इस प्रकार अपनी विद्या के विस्मृत अक्षर को प्राप्त कर वह विद्याधर अपने यथेष्ट स्थान पर चला गया । अतः इस दृष्टान्त से यह स्पष्ट हो जाता है कि जिस प्रकार उस विद्याधर की एक अक्षर विस्मृत हो जाने के कारण विद्या हीनाक्षरता के दोष से दूषित होने से नभोगति करने में असमर्थ हुई और व्यर्थ हुई उसी तरह हीनाक्षर करके सूत्र का उच्चारण से अर्थ में भेद हो जाता है, उस से क्रिया में भेद आने से मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो पाती है । इस से दीक्षा ग्रहण आदि कार्य भी सब व्यर्थ हो जाते हैं । इसी तरह

अभयकुमार पास 'सर्वाक्षरसन्निपाती' विद्या होवाथी तेओभां ओवी शक्ति हुती के ते ओकाद पदने श्रवण करीने पणु अनेक पदोने विचार करी शक्ता हुता. आ शक्तिना प्रभावथी विद्याधर कथित मंत्रने सांभणीने विस्मृत अक्षर तेले ते विद्याधरने जतावी दीधा. विद्याधरे पणु अभयकुमारने विद्या साधवाना उपाय जतावी दीधा. आ प्रकारे मंत्रना विस्मृत अक्षरने जाली लईने ते विद्याधर-पोताने यथेष्ट स्थाने आदये गये.

आ दृष्टान्त द्वारा ओ बात सिद्ध थाय छे के—जेम ते विद्याधर पोतानी आकाशगामिनी विद्याने ओक अक्षर लूली जवाने करले तेनी विद्या हीनाक्षरताना दोषथी दूषित थवाने दीधे तेने नभोगति कराववाने असमर्थ अनि गछ, ओज प्रमाणे हीनाक्षर करीने सूत्रनु उच्चारण करवामां आवे तो अथ मां लेद पडी जाय छे, अर्थमां लेद पडी जवाने करले क्रियामां पणु लेद पडी जाय छे अने क्रियामां लेद पडी जवाने दीधे मोक्षनी प्राप्ति पणु थछ शक्ती नथी. ते करले दीक्षाग्रहण आदि कार्य पणु व्यर्थ अनि जाय छे. ओज प्रमाणे सूत्रमां अक्षरने उमेरीने सूत्रनु

सम्प्रति नयभेदेन द्रव्यावश्यकभेदा उच्यन्ते—

मूलम्—नेगमस्स णं एगो अणुवउत्तो आगमओ एगं दव्वाव-
स्सयं, दोण्णिण अणुवउत्ता आगमओ दोण्णिण दव्वावस्सयाइं, तिण्णिण
अणुवउत्ता आगमओ तिण्णिण दव्वावस्सयाइं, एवं जावइया अणुव-
उत्ता आगमओ तावइयाइं दव्वावस्सयाइं । एवमेव ववहारस्सवि ।
संगहस्स णं एगो वा अणेगे वा अणुवउत्तो वा अणुवउत्ता वा
दव्वावस्सयं दव्वावस्सयाणि वा, से एगे दव्वावस्सए । उज्जुसुयस्स
एगो अणुवउत्तो आगमओ एगं दव्वावस्सयं, पुहुत्तं नेच्छइ ।
तिण्हं सदनयाणं जाणए अणुवउत्ते अवत्थु, कम्हा ? जइ जाणए
अणुवउत्ते न भवइ, जइ अणुवउत्ते जाणए ण भवइ तम्हा णत्थि
आगमओ दव्वावस्सयं । से तं आगमओ दव्वावस्सयं ॥सू० १५॥

अधिक अक्षर आदि करके सूत्र के उच्चारण में दोष आते हैं । इनके ऊपर भी दृष्टान्त है जिन्हें यहाँ शास्त्र के विस्तार के भय से नहीं लिखा है ।

भावार्थ—संक्षेप में आगम की अपेक्षा लेकर द्रव्यावश्यक का स्वरूप सूत्र-कार के अभिप्रायानुसार इस प्रकार जानना चाहिये जिस साधुने आवश्यक सूत्र को सविधि अच्छी तरह से सीख लिया है—श्रुत गुण के अनुसार उसका अध्ययन कर लिया है—परन्तु उसमें उपयोग से वह रहित है—ऐसी स्थिति में वह साधु का आगम द्रव्यावश्यकरूप है । ॥सूत्र १४॥

उत्तराणु करवामां पणु देष रडेवो छे. तेनुं प्रतिपादन करतुं ओक दृष्टान्त आपी थकाय ओम छे, पणु शास्त्रने विस्तार थछुजवाना लयथी. अही ते दृष्टान्त आप्युं नथी.

भावार्थ—आगमनी अपेक्षाओ द्रव्यावश्यकनु स्वरूप सूत्रकारना अभिप्राय अनुसार केवुं छे ते हुवे संक्षिप्तमां प्रकट करवामां आवे छे—

जे साधुओ आवश्यकसूत्रने विधिपूर्वक सारी रीते सीखी लीधु छे—श्रुतगुणानुसार तेनुं अध्ययन करी लीधुं छे. परन्तु तेमां ते उपयोगथी विहीन छे; ओवी परिस्थितिमां ते साधु आगमनी अपेक्षाओ द्रव्यावश्यक कहेवाने योग्य गणाय छे ॥सूत्र १४॥

छाया-नैगमस्य खलु एकः अनुपयुक्त आगमत एकं द्रव्यावश्यकम्, द्वावनुपयुक्तौ आगमतो द्वे द्रव्यावश्यके, त्रयः अनुपयुक्ता आगमतः त्रीणि द्रव्यावश्यकानि । एवं यावन्तः अनुपयुक्ता आगमतः तावन्ति द्रव्यावश्यकानि । एवमेव व्यवहारस्यापि । संग्रहस्य खलु एका वा अनेके वा अनुपयुक्तो वा अनुपयुक्ता वा द्रव्यावश्यकं द्रव्यावश्यकानि वा, स एकं द्रव्यावश्यकम् । ऋजुसूत्रस्य एकः अनुपयुक्त

अब सूत्रकार नयों के भेद से द्रव्यावश्यक के भेद कहते हैं:—

“नैगमस्स णं एगो” इत्यादि । ॥सू० १५॥

शब्दार्थ-(नैगमस्स णं) नैगमनय की विवक्षा से (एगो) एक (अणुवउत्तो) अनुपयुक्त आत्मा (आगमओ) आगम को आश्रित करके (एगं दव्वावस्सयं) एक द्रव्यावश्यक है । (दोण्णि अणुवउत्ता आगमओ दोण्णि दव्वावस्सयाइं) दो अनुपयुक्त आत्माएं आगम की अपेक्षा लेकर दो द्रव्यावश्यक हैं । (तिण्णि अणुवउत्ता आगमओ तिण्णि दव्वावस्सयाइं) तीन अनुपयुक्त आत्माएं आगम की अपेक्षा लेकर तीन द्रव्यावश्यक हैं । (एवं जावइया अणुवउत्ता आगमओ तावइयाइं दव्वावस्सयाइं) इसी तरह जितनी और भी आत्माएं अनुपयुक्त हैं उतने ही आगम की अपेक्षा लेकर द्रव्यावश्यक हैं । (एवमेव व्यवहारस्स वि) इसी तरह से व्यवहारनयकी विवक्षा से जानना चाहिये । (संग्रहस्स णं एगो वा अणेगो वा अणुवउत्तो वा अणुवउत्ता वा दव्वावस्सयं दव्वावस्सयाणि वा से एगे दव्वावस्सए) संग्रहनय की विवक्षा से एक, अनुपयुक्त आत्मा एक द्रव्यावश्यक तथा अनेक द्रव्यावश्यक हैं’ ऐसा जो कथन नैगमनय और व्यवहार

द्वे सूत्रकार नयोंना लेहनी अपेक्षे से द्रव्यावश्यकता लेहोनुं कथन करे छे,

“नैगमस्स णं एगो” इत्यादि—

शब्दार्थ—(नैगमस्स णं) नैगम नयनी दृष्टिसे विचार करवामां आवे तो (एगो) ओक (अणुवउत्तो) अनुपयुक्त आत्मा (आगमओ) आगमने आश्रित करीने (एगं दव्वावस्सयं) ओक द्रव्यावश्यक छे. (दोण्णि अणुवउत्ता आगमओ दोण्णि दव्वावस्सयाइं) जे अनुपयुक्त आत्माओ आगमनी अपेक्षासे जे द्रव्यावश्यक छे. (तिण्णि अणुवउत्ता आगमओ तिण्णि दव्वावस्सयाइं) त्रणु अनुपयुक्त आत्माओ आगमनी अपेक्षासे त्रणु द्रव्यावश्यक छे. (एवं जावइया अणुवउत्ता आगमओ तावइयाइं दव्वावस्सयाइं) ओज प्रमाणे णीज्जं जेटला आत्माओ अनुपयुक्त छे. जेटला आगमनी अपेक्षासे द्रव्यावश्यक छे. (एवमेव व्यवहारस्स वि) व्यवहारनयनी दृष्टिसे विचारवामां आवे तो पणु आ विषयने अनुलक्षीने उपर सुजणनुं ज कथन समज्जुं. (संग्रहस्स णं एगो वा अणेगो वा अणुवउत्तो वा अणुवउत्ता वा दव्वावस्सयं दव्वावस्सयाणि वा से एगे दव्वावस्सए) संग्रह नयने आधारे विचार करवामां आवे तो “ओक अनुपयुक्त आत्मा आगमनी अपेक्षासे ओक द्रव्यावश्यक

આગમત એક દ્રવ્યાવશ્યકમ્, પૃથક્ત્વં નેચ્છતિ । ત્રયણાં શબ્દનયાનાં જ્ઞાયકઃ અનુપયુક્તઃ
અવસ્તુ, કરમાત્ ? યદિ જ્ઞાયકોઽનુપયુક્તો ન ભવતિ, યદિ અનુપયુક્તો જ્ઞાયકો ન ભવતિ
તરમાદ્ નારિતં આગમતો દ્રવ્યાવશ્યકમ્ । તદેતદાગમતો દ્રવ્યાવશ્યકમ્ ॥૬૦૧૫॥

ટીકા—‘નેગમસ્સ ણં’ इत्यादि—

जिनशासने हि सर्वमपि सूत्रमर्थश्च नयैर्विचार्यते । तत्र न्याः सप्तविधाः ।

નય કી દૃષ્ટી સે જિયા જાતા હૈ વહ સવ એક દ્રવ્યાવશ્યક હૈ । કયોકિ
સંગ્રહનય મિન્ન ૨ પ્રકાર કી વસ્તુઆં કો તથા અનેક વ્યક્તિયાં કો કિસી
મી સામાન્ય તત્ત્વ કે આધાર પર એક રૂપ મેં સંકલિત કરતા હૈ । (ઉજ્જુ
સુયસસ એગો અણુવત્તો આગમઓ એગં દવ્વાવસસયં પુહુત્તં નેચ્છઈ) ઋજુ સૂત્ર
નયકી દૃષ્ટી મેં એક અનુપયુક્ત આત્મા આગમ કી અપેક્ષા લેવર એક દ્રવ્યા-
વશ્યક હૈ । રહ નય ભેદવાદ કો નહીં ચાહતા હૈ । (તિણ્ણં સદ્દનયા-
ણં જાણે અણુવત્તે અવત્થુ, કમ્હા ? જઈ જાણે અણુવત્તે ન ભવઈ, જઈ અણુવત્તે,
જાણે ન ભવઈ) ત્રીન શબ્દનયોં કી દૃષ્ટિ મેં જો જ્ઞાયક હોતા હૈ વહ યદિ તો
અનુપયુક્ત હૈ, તો વહ અવસ્તુસ્વરૂપ હૈ । કયોં કિ જ્ઞાયક અનુપયુક્ત નહીં
હોતા । યદિ વહ અનુપયુક્ત હૈ તો વહ જ્ઞાયક નહીં હૈ । ઇસલિયે આગમ કી
અપેક્ષા લેવર દ્રવ્યાવશ્યક જો કહાં મયા હૈ વહ નહીં હૈ । (સે તં આગ-
મમ્મો દવ્વાવસસયં) ઇસ તરહ આગમ કો આશ્રિત કરકે પ્રકાન્ત દ્રવ્યાવશ્યક

છે, તથા અનેક અનુપયુક્ત આત્માઓ અનેક દ્રવ્યાવશ્યક છે.” આ પ્રકારનું જે
જે કથન નેગમ નય અને વ્યવહાર નયની અપેક્ષાએ કરવામાં આવ્યું છે, તેને બદલે
અહીં બધાને એક દ્રવ્યાવશ્યક જ કહેવા બોધ્યો, કારણ કે સંગ્રહનય બુદ્ધા બુદ્ધા
પ્રકારની વસ્તુઓને તથા અનેક વ્યક્તિઓને કેઈ પણ સામાન્ય તત્ત્વનો આધાર
લઈને એક રૂપમાં સંકલિત કરે છે. (ઉજ્જુસુયસસ એગો અણુવત્તો આગમઓ એગં
દવ્વાવસસયં પુહુત્તં નેચ્છઈ) ઋજુસૂત્ર નયની દૃષ્ટિએ એક અનુપયુક્ત આત્મા આગમની
અપેક્ષાએ એક દ્રવ્યાવશ્યક છે. આ નય ભેદભાવને ચાહતો નથી. (તિણ્ણં સદ્દનયા-
ણં જાણે અણુવત્તે અવત્થુ, કમ્હા ? જઈ જાણે અણુવત્તે, ન ભવઈ,
જઈ અણુવત્તે, જાણે ન ભવઈ) ત્રણ શબ્દ નયોની દૃષ્ટિએ એવું માનવામાં આવે
છે કે—જે જ્ઞાયક હોય છે તે બે અનુપયુક્ત હોય તો તે અવસ્તુ સ્વરૂપ છે, કારણ
કે જ્ઞાયક અનુપયુક્ત સંભવી શકે જ નહીં બે તે અનુપયુક્ત હોય, તો તે જ્ઞાયક
જ હોઈ શકે નહીં. તે કારણે આગમનો આશ્રય લઈને જે દ્રવ્યાવશ્યક બતાવવામાં
આવેલ છે તેનો સદ્ભાવ જ નથી. (સે તં આગમમ્મો દવ્વાવસસયં) આ પ્રકારનું
આગમને આશ્રિત કરીને પ્રકાન્ત (પ્રસ્તુત વિષયરૂપ) દ્રવ્યાવશ્યકનું સ્વરૂપ છે.

उक्तं च—

नैगम संग्रहव्यवहार, उज्जुसुण चेव होइ बोद्धव्वे ।

सदे य समभिरूढे, एवंभूत य मूलनया ॥१॥

छाया—नैगमः संग्रहो व्यवहार ऋजुसूत्रश्चैव भवति बोद्धव्यः ।

शब्दश्च समभिरूढ एवंभूतश्च मूलनयाः ॥इति॥

तत्र—नैगमनयमाश्रित्य आगमतो द्रव्यावश्यकभेदमाह—

का स्वरूप है।—

जिनशासन में समस्त सूत्र और अर्थों का विचार नयों को लेकर किया गया है। ये नय मूल में सात हैं कहाभी है (१) नैगम (२) संग्रह (३) व्यवहार (४) ऋजुसूत्र (५) शब्द (६) समभिरूढ (७) एवंभूत । इनमें से नैगमनय को लेकर सूत्रकार आगम की अपेक्षा से द्रव्यावश्यक के भेदों को कहते हैं—नैगमनय का तात्पर्य उन विचारों से है कि जिनके बल पर पदार्थ का बोध विविध प्रकार से होता है। “नैको गमो बोधमार्गः यस्य सः नैगमः” बोधका अनेक उपाय है वे नैगम हैं इस व्युत्पत्ति के अनुसार यही अर्थ लभ्य होता है।

इस नैगम नयकी अपेक्षा से उपयोग वर्जित एकदेवदत्त आदि व्यक्ति एक आगम द्रव्यावश्यक हैं। दो अनुपयुक्त देवदत्त और यज्ञदत्त नाम के व्यक्ति दो आगम द्रव्यावश्यक हैं। अनुपयुक्त देवदत्त, यज्ञदत्त और विष्णुदत्त नाम के व्यक्ति ३ आगमद्रव्यावश्यक हैं। इसी तरह जितने भी अनुपयुक्त व्यक्ति हैं वे सब उतने ही आगमद्रव्यावश्यक इस नय की दृष्टि

जिन शासनमां समस्त सूत्र अने अर्थोना जुहा जुहा नयना आधार लधने विचार करवामां आव्यो छे. ये नय सुण्यत्वे सात कहा छे. (१) नैगम नय, (२) संग्रह नय, (३) व्यवहार नय, (४) ऋजुसूत्र नय, (५) शब्द नय, (६) समभिरूढ नय अने (७) एवंभूत नय.

पड़ेलां तो नैगम नयनी मान्यता अनुसार सूत्रकार आगमनी अपेक्षासे द्रव्यावश्यकता लेहानुं निरूपण करे छे. नैगम नयना लावार्थ नीचे प्रमाणे छे—जे विचाराने आधार पदार्थना बोध विविध थाय छे, ते विचारधारानुं नाम न नैगम नय छे. नैको गमो बोधमार्गः यस्य सः नैगमः” आ व्युत्पत्ति अनुसार उपर्युक्त अर्थ न प्राप्त थाय छे,

आ नैगमनयनी अपेक्षासे उपयोग वर्जित एक देवदत्त आदि व्यक्ति एक आगम द्रव्यावश्यक छे. उपयोगरहित (अनुपयुक्त) देवदत्त अने यज्ञदत्त नामनी जे व्यक्ति जे आगमद्रव्यावश्यक छे. देवदत्त, यज्ञदत्त अने विष्णुदत्त नामनी त्रण अनुपयुक्त व्यक्तियो त्रण आगमद्रव्यावश्यक छे. जे प्रमाणे जेटदी अनुपयुक्त व्य

નેગમસ્ય જં' इत्यादिना' नैको गमोऽर्थमार्गो यस्य स नैगमः । पृषोदरा-
दित्वात् ककारस्य लोपः बहुविधवस्त्वबोधक इत्यर्थः । तस्य नैगमस्य खलु
एको देवदत्तादिः अनुपयुक्तः=उपयोगवर्जितः, आगमत एकं द्रव्यावश्यकम् ।
द्वौ देवदत्तयज्ञदत्तावनुपयुक्तौ आगतौ द्वे द्रव्यावश्यके । त्रयो देवदत्तयज्ञदत्त-
विष्णुमित्रा अनुपयुक्ता आगतस्त्रीणि द्रव्यावश्यकानि । 'एवं' अनेन प्रकारेण
भावन्तः अनुपयुक्ताः, आगततः तावन्ति द्रव्यावश्यकानि अयं भावः—नैगमनयः
सामान्यरूपं विशेषरूपं च वस्तु अधिगमयति=बोधयति । न तु संग्रहवत्सामान्यमेव ।
तत्र—विशेषरूपं भेदमाश्रित्य देवदत्तादि प्रत्येकव्यक्तिभेदेन यावन्तोऽनुपयुक्ताः भवन्ति
सर्वाण्यस्य द्रव्यावश्यकानि । न पुनः संग्रहवत्सामान्यवादित्वादेकमेव द्रव्यावश्यकम् इति ।

में हैं । तात्पर्य इसका यह है कि—नैगमनय सामान्य और विशेषरूप अर्थ को
कहता है—जिस प्रकार संग्रहनय सामान्यरूप ही अर्थ है ऐसा कहता है, उस
प्रकार से यह नय नहीं कहता । यह तो विशेष को भी विषय करता है ।
इसकी मान्यतानुसार पदार्थ सामान्य और विशेष उभयरूप है वह न सामान्यरूप
है और न केवल विशेषरूप ही । इस तरह विशेषरूप भेद का आश्रय करके
देवदत्त आदि जितने भी अनुपयुक्त व्यक्ति हैं उतने ही आगम द्रव्यावश्यक
इस नय की दृष्टि से हैं सामान्यवादी होने के कारण संग्रहनय की तरह
एक ही द्रव्यावश्यक नहीं हैं । संग्रहनय से गृहीत पदार्थों को विधिपूर्वक-
विभाग जिस अभिप्राय के द्वारा किया है उस अभिप्राय का नाम व्यवहार
नय है । इस नय की मान्यतानुसार सामान्य कोई वस्तु नहीं है । क्योंकि
यह सामान्य का निराकरण करता है । इसके प्रतिपादन का विषय विशेष है ।

કિતઓ હોય છે તેઓ આ નયની માન્યતા અનુસાર એટલા જ આગમદ્રવ્યાવશ્યક
છે. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે. નૈગમ નય સામાન્ય અને વિશેષરૂપ
અર્થને બતાવે છે. જેવી રીતે સંગ્રહનય “સામાન્યરૂપ જ અર્થ છે,” એવું કહે છે,
એ પ્રકારે આ નય કહેતો નથી. એ તો વિશેષરૂપે પણ અર્થને બતાવે છે. નૈગમ
નયની માન્યતા અનુસાર તો પદાર્થ કેવળ સામાન્યરૂપ પણ નથી, કેવળ વિશેષરૂપ
પણ નથી, પરંતુ સામાન્ય અને વિશેષરૂપ એટલે કે ઉભયરૂપ છે. આ રીતે વિશેષ-
રૂપ ભેદની અપેક્ષાએ દેવદત્ત આદિ જેટલા અનુપયુક્ત પુરૂષો છે, એટલા જ
આ નયની દૃષ્ટિએ આગમ દ્રવ્યાવશ્યક છે—સામાન્યવાદી હોવાને કારણે સંગ્રહનયની
જેમ એક જ દ્રવ્યાવશ્યક નથી, સંગ્રહનયથી ગૃહીત પદાર્થોનો જે અભિપ્રાયદ્વારા
વિધિપૂર્વક વિભાગ કરવામાં આવે છે, તે અભિપ્રાયનું નામ વ્યવહાર નય છે. આ
નયની માન્યતા અનુસાર કોઈ વસ્તુ સામાન્ય નથી, કારણ કે તે સામાન્યનું નિરા-

एवं व्यवहारस्यापि—संग्रहनयेन गृहीतानामर्थानां विधिपूर्वकमवहरणं येनाभिसंधिना क्रियते स व्यवहारः । अर्थात् विशेषप्रतिपादनपरो व्यवहारनय इत्यर्थः । परसंग्रहनयेन गृहीतार्थविषये व्यवहारोदाहरणं यथा—यत् सत्, तद् द्रव्यं पर्यायो वेति । अपरसंग्रहगृहीतार्थविषये व्यवहारोदाहरणं यथा—यद् द्रव्यं तल्लीवादिषड्विधम् । स पर्यायः द्विविधः—क्रमभावी सहभावी चेति । एवं यो जीवः स मुक्तः संसारी-

અંતઃ ગ્રહ ઉસકે પ્રતિપાદન કરને મેં હી તત્પર રહતા હૈ । સંગ્રહનય કે દો ભેદ હૈ—૧, પર સંગ્રહનય ઓર દૂસરા અપર સંગ્રહનય—૧ જડ ચેતનરૂપ અનેકદ્રવ્યત્વ-યો મેં જો સદ્રૂપ એક સામાન્યતત્ત્વ હૈ ઉસી પર દૃષ્ટિ રાખકર દૂસરે વિશેષોં કો ધ્યાન મેં ન રાખતે હુએ સમી વ્યક્તિયોં કો એક રૂપ માનકર એસા જો વિચાર હોતા હૈ કિ સંપૂર્ણ જગત્ સદ્રૂપ હૈ ક્યોં કિ—સત્તા સે રહિત કોઈ વસ્તુ હૈ હી નહીં । ઇસી કા નામ પરસંગ્રહનય હૈ । ઇસ પર સંગ્રહનય સે ગૃહીત વિષય કે વિષય મેં વ્યવહાર એસા વિચાર કરતા હૈ કિ જો સદ્રૂપ હૈ વહ દ્રવ્ય હૈ યા પર્યાય હૈ । યદિ દ્રવ્યસત્ હૈ જો કિ પરસંગ્રહનયકે વિષય કી અપેક્ષા ઉપર સંગ્રહનય કા વિષય પડતા હૈ તો કયા જીવ દ્રવ્ય હૈ, યા અજીવ દ્રવ્ય હૈ । ક્યંકિ દ્રવ્ય કે જીવ પુદ્ગલ, ધર્મ, અધર્મ, આકાશ ઓર કાલ ઇસ પ્રકાર સે ૬ ભેદ હૈ । ઇન મેં જીવ કો છોડકર પુદ્ગલ આદિ સબ અજીવ દ્રવ્ય કે ભેદ હૈ । યદિ પર્યાય સત્ હૈ—તો વહ દો પ્રકાર કી હૈ (૧) ક્રમભાવી ઓર દૂસરી સહભાવી । યદિ જીવદ્રવ્ય સત્ હૈ તો

કરણુ કરે છે. તેને પ્રતિપાદન કરવાનો વિષય વિશેષ છે, તેથી તે તેનું પ્રતિપાદન કરવાને જ તત્પર રહે છે. સંગ્રહનયના બે ભેદ છે—(૧) પર સંગ્રહનય અને (૨) અપરસંગ્રહનય જડ ચેતનરૂપ અનેક વસ્તુઓમાં જે સદ્રૂપ એક સામાન્ય તત્ત્વ છે. એના પર જ નજર નાખીને બીજી વિશિષ્ટતાઓને ધ્યાનમાં લીધા વિના સઘળી વસ્તુઓને એકરૂપ માનીને એવો જે વિચાર કરવામાં આવે છે કે સંપૂર્ણ જગત્ સદ્રૂપ છે, કારણ કે સત્તા (અસ્તિત્વ)થી રહિત કોઈ પદાર્થ છે જ નહીં, તેનું જ નામ પરસંગ્રહનય દ્વારા ગૃહીત પદાર્થના વિષયમાં વ્યવહાર એવો વિચાર કરે છે કે જે સદ્રૂપ છે તે દ્રવ્ય છે કે પર્યાય છે ? બે તે દ્રવ્યસત્ રૂપ હોય તો તે પરસંગ્રહનયનો વિષય હોવાને બદલે અપરસંગ્રહનયનો વિષય ગણી શકાય છે. બે તે દ્રવ્યસત્ રૂપ હોય તો 'શું' તે જીવદ્રવ્યરૂપ છે કે અજીવદ્રવ્યરૂપ છે ? કારણ કે દ્રવ્યના પુદ્ગલ, ધર્મ, અધર્મ, આકાશ અને કાળ, આ પ્રકારે ૬ ભેદ પડે છે. તેમાંથી જીવ સિવાયના જે પાંચ ભેદો કહ્યા છે તે અજીવદ્રવ્યના ભેદો છે. બે પર્યાયસત્ હોય તો તે પર્યાય બે પ્રકારની હોય છે—(૧) ક્રમભાવી અને (૨) સહભાવી.

ચ," इत्यादि । तस्य एवमेव=नैगमवदेव एको देवदत्तादिरनुपयुक्त आगमत
एकं द्रव्यावश्यकम्, द्वावनुपयुक्तौ आगतौ द्वे द्रव्यावश्यकं, त्रयाऽनुपयुक्ता
अगमतस्त्रीणि द्रव्यावश्यकानि । एवं यावन्तौऽनुपयुक्तास्तावन्ति आगतौ द्रव्या-
वश्यकानि विज्ञातव्यानि । विशेषार्थप्रतिपादकतया नैगमव्यवहारयोः साम्यम्,
अतःक्रमप्राप्तं संग्रहमतिक्रम्य ग्रन्थलाघवार्थं व्यवहारोपन्यासो नैगममनुकूलः । सम्प्रति

કૌન સા જીવદ્રવ્ય સંસારી જીવ યા યુક્ત જીવ ? इस तरह यह व्यवहार
नय वहाँ तक भेद करता चला जाता है कि फिर जिस से और भेद नहीं
हो सके । जिस विधि से संग्रह किया जाता है उसी विधि से उनका वि-
भाग किया जाता है । इस प्रकार नैगमनय की तरह ही अनुपयुक्त एक
देवदत्त आदि व्यक्ति आगम द्रव्यावश्यक है । अनुपयुक्त दो व्यक्ति दो आगम
द्रव्यावश्यक हैं । अनुपयुक्त तीन व्यक्ति तीन आगम द्रव्यावश्यक हैं । इस
तरह जितने भी आगम में अनुपयुक्त व्यक्ति हैं वे सब उतने ही आगम द्रव्या-
वश्यक हैं । जिस प्रकार विशेषरूप अर्थ की प्ररूपणा नैगमनय करता है उसी
प्रकार से उसकी प्ररूपणा व्यवहारनय भी करता है—एता ता इन दोनों में
समानता है । इसीलिये सूत्रकारने क्रमप्राप्त संग्रहनय को छोड़कर शास्त्र की
लघुता निमित्त व्यवहारनय का उपन्यास संग्रहनय से पहिले और नैगमनय
के पीछे किया है । संग्रहनय की विचारधारा के अनुसार आगम द्रव्यावश्यक
एक ही है—वह इस प्रकार से सामान्य मात्र को विषय करनेवाला जो परा-

જે જીવદ્રવ્ય સંસારી જીવ યા યુક્ત જીવ ? એવું છે—સંસારી જીવદ્રવ્ય એવું છે કે
યુક્ત જીવદ્રવ્ય એવું છે ? આ પ્રકારે આ વ્યવહારનય ત્યાં સુધી ભેદ કરતો જ
નય છે કે જેટલે એમાંથી અન્ય કોઈ ભેદ પાડી શકાય જ નહીં. જે વિધિથી
સંગ્રહ કરવામાં આવે છે, એજ વિધિથી તેમનો વિભાગ કરવામાં આવે છે. આ
પ્રકારે નૈગમનયની જેમજ અનુપયુક્ત એક દેવદત્ત આદિ વ્યક્તિ એક આગમ
દ્રવ્યાવશ્યક છે. અનુપયુક્ત બે વ્યક્તિ બે આગમદ્રવ્યાવશ્યક છે. અનુપયુક્ત ત્રણ
વ્યક્તિ ત્રણ આગમદ્રવ્યાવશ્યક છે. એજ પ્રમાણે જેટલી આગમમાં અનુપયુક્ત વ્ય-
ક્તિઓ હોય, એટલા જ આગમદ્રવ્યાવશ્યક સમજવા. જે પ્રકારે નૈગમનય વિશેષ
રૂપ અર્થની પ્રરૂપણા કરે છે, એજ પ્રમાણે તેની પ્રરૂપણા વ્યવહારનય પણ કરે છે.
એટલા પુરતી એ બંનેમાં સમાનતા છે. તે કારણે સૂત્રકારે ક્રમપ્રાપ્ત સંગ્રહનયને
છોડીને શાસ્ત્રની લઘુતાને નિમિત્તે નૈગમનયની પછી અને સંગ્રહનયના પહેલાં વ્ય-
વહારનયનો ઉપન્યાસ કર્યો છે.

સંગ્રહનયની માન્યતા અનુસાર આગમદ્રવ્યાવશ્યક એક જ છે. તે આ પ્રમાણે
સમજવું—સામાન્ય માત્રને વિષય કરનારો જે પરમૈશ (અભિપ્રાય-માન્યતા) છે, તે

સંગ્રહનયમેતેન ગ્રાહ-‘સંગ્રહસ્સ’ इत्यादिना । संग्रहस्य, सामान्यमात्रग्राही परामर्शः संग्रहः । स द्विविधः—परोऽपरश्च । सर्वं वस्तु एकं, सद्रूपत्वेनाविशेषात् । अयमर्थः—सर्वस्मिन् वस्तुनि सत्ता विद्यते, सा चैकैव, अतस्तां सत्तामाश्रित्य सर्वं वस्तु एकं सदित्युच्यते । सत्ताख्यं महासामान्यमाश्रित्य परसंग्रहः प्रोक्तः । अपर-संग्रहस्तु अवान्तरसामान्यं द्रव्यत्पर्यायत्वादिकमाश्रित्य भवति । यथा—‘धर्मा-धर्माकाशकालपुद्गलजीवद्रव्याणामैक्यं द्रव्यत्वाभेदात्’ इत्यादि । अयमर्थः—

મર્શ હૈં ઉસકા નામ સંગ્રહનય હૈં । યહ સંગ્રહનય પર સામાન્ય ઔર અપરસામા-ન્ય કૌ વિષય કરને કી દષ્ટિ સે દો પ્રકાર કા હૈં—પરસામાન્ય કો વિષય કરનેવાલા—પરસંગ્રહનય ઔર અપરસામાન્ય કૌ વિષય કરનેવાલા અપરસંગ્રહ-નય હૈં । સત્તા નામ કા મહા સામાન્ય પરસામાન્ય હૈં । દ્રવ્યત્વ, પર્યાયત્વ આદિ જો અવાન્તર સામાન્ય હૈં વહ અપરસામાન્ય કી અવિશેષતા સે એક હૈં—અર્થાત્ તેસી કોઈ વસ્તુ નહીં હૈં કિ જિસ મેં સત્તા નહીં હો અતઃ—અબ સબ મેં સત્તા વિદ્યમાન હૈં ઔર વહ સત્તા એક હી હૈં—તબ ઇસ સત્તા કો લેકર સબ વસ્તુએં એક સદ્રૂપ હૈં । યહ પરસંગ્રહનય કી વિચાર ધારા હૈં । અપરસંગ્રહનય કી વિચારધારા અવાન્તર સામાન્ય કો લેકર ચલતી હૈં—જેસે ધર્મ, અધર્મ આકાશ કાલ, પુદ્ગલ ઔર જીવ ઇન દ્રવ્યોં મેં દ્રવ્યત્વજાતિ કી અપેક્ષા અભેદ હોને સે એકતાં હૈં । ક્યૌં કિ ઇનમેં ઇસી સે દ્રવ્ય દ્રવ્ય એસા

નામ સંગ્રહનય છે. તે સંગ્રહનય, પરસામાન્ય અને, અપરસામાન્યને વિષય કર-વાની દાષ્ટ્યે બે પ્રકારનો છે. પર સામાન્યને વિષય કરનારો, પરસંગ્રહનય છે અને અપરસામાન્યને વિષય કરનારો અપરસંગ્રહનય છે. સત્તા નામના મહાસામા-ન્યને પરસામાન્ય કહે છે. દ્રવ્યત્વ, પર્યાયત્વ, આદિ જે અવાન્તર સામાન્ય છે, તેને અપરસામાન્ય કહે છે. જ્યારે એવો વિચાર કરવામાં આવે છે કે સમસ્ત વસ્તુ સત્તા સામાન્યની અવિશેષતાની અપેક્ષાએ એક જ છે—એટલે કે એવી કોઈ વસ્તુ જ નથી કે જેમાં સત્તા જ (અસ્તિત્વજ) ન હોય. આ રીતે સઘળી વસ્તુઓમાં સત્તા વિદ્યમાન છે અને તે સત્તા એક જ છે, જો એ સત્તાની દષ્ટિએ વિચાર કરવામાં આવે તો સઘળી વસ્તુઓ એક સદ્રૂપ જ છે. આ પ્રકારની પરસંગ્રહ-નયની વિચારધારા (માન્યતા) છે.

અપરસંગ્રહનયની વિચારધારા અવાન્તર સામાન્યની અપેક્ષાએ ચાલે છે—જેમકે ધર્મ, અધર્મ, આકાશ, કાળ, પુદ્ગલ અને જીવ, આ દ્રવ્યોમાં દ્રવ્યત્વ-જાતિની અપેક્ષાએ અભેદ હોવાથી એકતા છે. કારણ કે તેમનામાં તેના દ્વારા જ દ્રવ્યદ્રવ્ય એવું જ્ઞાન અને દ્રવ્યોદ્રવ્ય એવી વચનપ્રવૃત્તિ થાય છે. એજ વાતને

लोके हि धर्मो द्रव्यम् अधर्मो द्रव्यम्, आकाशो द्रव्यं, कालो द्रव्यं, पुद्गलो द्रव्यं-
जीवो द्रव्यम्, इत्येवमुच्यते, अतो ज्ञायते-धर्मादौ द्रव्यत्वं वर्तत इति । एक-
मेव द्रव्यत्वं धर्मादिषु पदसु विद्यते । द्रव्यत्वेन धर्मादीनामेकत्वं संगृह्यते । एवं
चेतनाचेतनपर्यायाणां सर्वेषामेकत्वं संगृह्यते, पर्यायत्वाविशेषादिति । एवंभूतो
यः संग्रहो न्यस्तस्यापेक्षया खलु एको वा अनेके वा अनुपयुक्तो वा अनुपयुक्ता
वा यद् आगमतो द्रव्यावश्यकं द्रव्यावश्यकानि वा । तत् किमिति याह—‘से एगे’
इति । तदेकं द्रव्यावश्यकम् । अस्या माशयः—संग्रहनयो हि सामान्यस्यैव ग्राहकः
न तु विशेषाणाम्, तस्मात् सामान्यव्यतिरेकेण विशेषसिद्धेर्यानि कानिचिद् द्रव्या-

જ્ઞાન ઔર દ્રવ્ય, દ્રવ્ય એસીવચન પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ । ઇસી વાત કો “ધર્મો દ્રવ્યં
અધર્મો દ્રવ્યં, આકાશો દ્રવ્યં, કાલો દ્રવ્યં પુદ્ગલો દ્રવ્યં, જીવો દ્રવ્યં” ઇન પદોંદ્વારા
પ્રગટ ક્રિયા હૈ, ઇસ તરહ અનુવૃત્તિ પ્રત્યય હોને સે યહ પ્રતીત હોતા હૈ કિ ઇનમેં દ્રવ્યત્વ
હૈ । ઔર યહ દ્રવ્યત્વ ધર્માદિક ૬ દ્રવ્યવ્યક્તિયોં મેં એક હી હૈ । ઇસલિયે ઇસ
દ્રવ્યત્વ કી અપેક્ષા ધર્માદિક દ્રવ્યોં મેં એકતા કા સંગ્રહ હો જાતા હૈ । ઇસી
તરહ સે સચેતન ઔર અચેતન દ્રવ્યોં કી જિતની બી પર્યાયોં હૈં ઁન સબ મેં
માં પર્યાયત્વરૂપ સામાન્ય કી અપેક્ષા સે એકતા કા સંગ્રહ હો જાતા હૈ । ઇસ
પ્રકાર કા જો યહ સંગ્રહનય હૈ । ઁસ કી અપેક્ષાસે ઁહાં તો એક આગમ
મેં અનુપયુક્ત દેવદત્તાદિ વ્યક્તિ હોં ઁહાં અનેક દેવદત્તાદિ વ્યક્તિ હોં । વે
સબ એક હી આગમદ્રવ્યાવશ્યક હૈં । તાત્પર્ય ઇસકા યહ હૈ—કિ સંગ્રહનય એક
સામાન્યમાત્ર કા હી ગ્રાહક હૈ, વિશેષોં કા નહીં । ઇસલિયે વિશેષ કી
અપેક્ષા જો અનેક આગમ દ્રવ્યાવશ્યક હૈં વે સબ જબ સામાન્ય કે અતિરિક્ત

“ધર્મો દ્રવ્યં અધર્મો દ્રવ્યં, આકાશો દ્રવ્યં, પુદ્ગલો દ્રવ્યં જીવો દ્રવ્યં” આ પદો
દ્વારા પ્રકટ કરવામાં આવી છે. આ રીતે અનુવૃત્તિ પ્રત્યય હોવાથી એવું લાગે છે કે
તેમનામાં દ્રવ્યત્વ છે. અને તે દ્રવ્યત્વ ધર્માદિક ૬ દ્રવ્યવ્યક્તિઓમાં (પદાર્થોમાં)
એક જ છે. તેથી આ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ધર્માદિક દ્રવ્યોમાં એકતાનો સંગ્રહ થઈ
જાય છે. એજ પ્રમાણે સચેતન અને અચેતન દ્રવ્યોની જેટલી પર્યાયો છે, તે સઘળી
પર્યાયોમાં પણ પર્યાયત્વરૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ એકતાનો સંગ્રહ થઈ જાય છે.
આ પ્રકારનો સંગ્રહનય છે તેની અપેક્ષાએ એક આગમમાં અનુપયુક્ત દેવદત્ત આદિ
વ્યક્તિ પણ એક જ આગમદ્રવ્યાવશ્યક છે, અને અનુપયુક્ત દેવદત્ત આદિ અનેક
વ્યક્તિઓ પણ એકજ આગમદ્રવ્યાવશ્યક છે. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે સંગ્રહ-
નય એક સામાન્ય માત્રનો જ ગ્રાહક છે. વિશેષોનો ગ્રાહક નથી. તેથી વિશેષની
અપેક્ષાએ જે અનેક આગમદ્રવ્યાવશ્યક છે, તે બધાં જ નો સામાન્ય છે—વિશેષોરૂપ

વજ્યકાનિ તાનિ સર્વાણિ સામાન્યાપેક્ષયા સત્તાયા એકત્વાદેવમેવ, અત સંગ્રહ-
નયમતે એકમેવ દ્રવ્યાવશ્યકમ્ । ઇતિ ।

અથ ઋજુસૂત્રમતે આહ-‘ઉજ્જુસુયસ્સ’ ઇત્યાદિ । ઋજુસૂત્રસ્ય ઋજુ=વર્ત-
માનક્ષણસ્થાયિ પર્યાયમાત્રં પ્રાધાન્યતઃ સૂત્રયત્તિ-સૂચયતીતિ ઋજુસૂત્રઃ । યથા

વિશેષ હૈં હી-નહીં તો उसकी अपेक्षा जायमान ये अनेक आगम द्रव्यावश्यक
सत्ता की एकता के कारण एक ही हैं । इसलिये संग्रहनय के मत में एक
ही द्रव्यावश्यक है । अब सूत्रकार ऋजु सूत्रनय की अपेक्षा आगम द्रव्यावश्यक
का विचार करते हैं-वर्तमानक्षण स्थायि पर्यायमात्रं को जो प्रधानता से विषय
करता है उसका नाम ऋजु सूत्रनय है । नैगम, संग्रह और व्यवहार ये तीन
नय पदार्थों की विविध अवस्थाओं की ओर ध्यान नहीं देते हैं । इसलिये
उन्हें क्या पता कि वर्तमान में पदार्थ का क्या रूप है । इसीलिये इन तीन
नयों को द्रव्यार्थिकनय माना गया है । क्यों कि इनमें द्रव्य को ही विषय
करने की मुख्यता है । पर्यायों की तरफ इनका लक्ष्य नहीं है-क्योंकि इन
की दृष्टि में अविवक्षित है-गौण-हैं । परन्तु ऐसा तो हो ही नहीं सकता
कि विचारक का ध्यान केवल द्रव्य पर ही रहे, पर्याय पर न जावे । विचा-
रक के विचार जिस प्रकार विविध पदार्थों का उनकी विविध अवस्थाओं
की विवक्षा किये बिना वर्गीकरण और विभाग करते हैं उसी प्रकार वे उन
पदार्थों की विविध अवस्थाओं को भी अपने लक्ष्य में रखते हैं । किंतु

જ નથી, તો તેની અપેક્ષાએ જાયમાન તે અનેક આગમદ્રવ્યાવશ્યક સત્તાની એકતાને
કારણે એક જ છે. તેથી સંગ્રહનયની માન્યતા અનુસર તો એકજ દ્રવ્યાવશ્યક છે

હવે સૂત્રકાર ઋજુસૂત્રનયની અપેક્ષાએ આગમદ્રવ્યાવશ્યકનો વિચાર કરે છે-
વર્તમાન ક્ષણસ્થાયી પર્યાયમાત્રનો જ જે મુખ્યત્વે વિચાર કરે છે, તે નયનું નામ
ઋજુસૂત્રનય છે. નૈગમ, સંગ્રહ અને વ્યવહાર, આ ત્રણ પ્રકારના નય, પદાર્થની
વિવિધ અવસ્થાઓ તરફ ધ્યાન દેતાં નથી, તેથી તે નયને આધારે એવું કેવી રીતે
જાણી શકાય કે વર્તમાનમાં પદાર્થનું કેવું સ્વરૂપ છે ? તે કારણે તે ત્રણ નયને
દ્રવ્યાર્થિક નય માનવામાં આવેલ છે. કારણ કે તેમાં દ્રવ્યને જ વિષય કરવાની-
દ્રવ્યનો જ વિચાર કરવાની-પ્રધાનતા હોય છે. પરન્તુ પર્યાયોની તરફ તેમનું લક્ષ્ય
હોતું નથી, કારણ કે તે તો તેમની દૃષ્ટિએ અવિવક્ષિત અથવા ગૌણ છે. પણ વિ-
ચારકનું ધ્યાન કેવળ દ્રવ્ય પર જ રહે અને પર્યાય પર ન જાય એવું તો સંભવી
શકતું નથી. વિચારકના વિચારે જે પ્રમાણે વિવિધ પદાર્થોનું-તેમની વિવિધ અવ-
સ્થાઓની વિવિધતા કર્યા વિના-ધ્યાનમાં લીધા વિના જેમ વર્ગીકરણ અને વિભાગી-
કરણ કરે છે, એજ પ્રમાણે તેઓ વિવિધ પદાર્થોની વિવિધ અવસ્થાઓને પણ

‘સંગ્રતિ સુખવિવર્તોઽસ્તિ’ इत्यादि । अनेन वाक्येन हि वर्तमानक्षणवर्ति सुखा-
ख्यं पर्यायमात्रं प्रदर्श्यते । तस्य मते-एको देवदत्तादिः अनुपयुक्तः, आगमत एकं
द्रव्यावश्यकम् । अयं भावः-ऋजुसूत्रनयो हि वर्तमानकालिकमेव पर्यायवस्तु
बोधयति, नातीतं विनष्टत्वात्, नाप्यनागतमनुत्पन्नत्वात् । वर्तमानकालिकमपि

विविध अवस्थाओं का सम्मेलन द्रव्य केाटि में आता है पर्याय केाटि में आता
है क्योंकि पर्याय एक क्षणवर्ती होती है । उसमें भी वर्तमान का नाम ही
पर्याय है । क्योंकि अतीत विनष्ट और अनागत अनुत्पन्न होने के कारण
उनमें पर्याय का व्यवहार नहीं हो सकता । इसी से ऋजु सूत्रनय का विषय
वर्तमान पर्यायमात्र कहा गया है । आशय यह है कि यह नय विद्यमान
अवस्थारूप से ही वस्तु को स्वीकार करता है । द्रव्य उसमें सर्वथा अविवक्षित
रहता है । अतः पर्याय संबन्धी जितने भी विचार होते हैं वे सब ऋजु
सूत्रनय की श्रेणि में आते हैं । जैसे “संग्रति सुखविवर्तोऽस्ति” इस समय सुखयुक्त हैं
इस वाक्य से वर्तमानक्षणवर्ती सुख नाम की पर्यायमात्र दिखालाई गई है । इसके
मत में एक अनुपयुक्त देवदत्तादि एक आगम द्रव्यावश्यक है । यह अभी
स्पष्ट किया गया है कि वर्तमानकालीन पर्याय वस्तु को ही यह नय
विषय करता है अतीत अनागत पर्यायों को नहीं—क्योंकि अतीत पर्याय विनष्ट
है और अनागत पर्याय अनुत्पन्न हैं । वर्तमान कालीन पर्याय में भी जो

લક્ષ્યમાં રાખે છે. પરંતુ વિવિધ અવસ્થાઓનું સંમેલન દ્રવ્યકોટિમાં આવે છે-
પર્યાયકોટિમાં આવતું નથી. વાસ્તવમાં તો એક પર્યાય જ પર્યાયકોટિમાં આવે છે,
કારણ કે પર્યાય એક ક્ષણવર્તી હોય છે. તેમાં પણ વર્તમાનનું નામજ પર્યાય છે.
કારણ કે અતીત (ભૂતકાલિન) વિનષ્ટ હોય છે અને અનાગત (ભવિષ્ય કાલિન)
અનુત્પન્ન હોય છે. તે કારણે તેમનામાં પર્યાયનો વહેવાર થઈ શકતો નથી. તે
કારણે ઋજુસૂત્ર નયનો વિષય વર્તમાન પર્યાય માત્ર જ કહ્યો છે. આ કથનનો ભાવાર્થ
એ છે કે આ નય વિદ્યમાન અવસ્થા રૂપે જ વસ્તુનો સ્વીકાર કરે છે. દ્રવ્ય તેમાં
સર્વથા અવિવક્ષિત રહે છે. તેથી પર્યાય સંબંધો જેટલાં વિચારો હોય છે, તે
બધાં ઋજુસૂત્રનયની શ્રેણિમાં આવી જાય છે. જેમકે “સંગ્રતિ સુખવિવર્તોઽસ્તિ”
આ વાક્યથી વર્તમાન ક્ષણવર્તી સુખ નામની પર્યાય માત્ર જ બતાવવામાં આવી
છે. ઋજુસૂત્રનયની માન્યતા અનુસાર એક અનુપયુક્ત દેવદત્તાદિ એક આગમદ્રવ્યા-
વશ્યક છે. એ વાત તો આગળ સ્પષ્ટ કરવામાં આવી ચૂકી છે કે આ નય વર્તમાન
કાલિન પર્યાયવસ્તુને જ વિષય કરે છે—અતીત અનાગત પર્યાયોને વિષય કરતો નથી
કારણ કે અતીત (ભૂતકાલિન) પર્યાયો વિનષ્ટ હોય છે અને અનાગત (ભવિષ્ય

સ્વકીયમેવ बोधयति. स्वकार्यसाधकत्वात् स्वधनवत्, न तु परकीयं, स्वकार्यासाधकत्वात् परधनवत्, तस्मादेको देवदत्तादिरनुपयुक्तोऽस्य मते आगत एकं द्रव्यावश्यकम्, इति । अयं नयः—पृथक्त्वं नेच्छति—अतीतानागतभेदतः परकीयभेदतश्च पार्थक्यं नामिलषति, किंतु वर्तमानकालिकं स्वगतमेव वस्तु, तच्चैकमेव । तस्मादेकमेव द्रव्यावश्यकमेतन्नयमते ।

શબ્દાદીંત્રીન્ નયાન્ સમાશ્રિત્ય કથયતિ—‘તિર્ણં સદ્નિધાનં’ इत्यादि । त्रयाणां शब्दप्रधाना नयाः शब्दनयाः=शब्दसमभिरूढैवभूता, एते हि अर्थावगमकारणत्वात् शब्दस्यैव प्राधान्यमिच्छन्ति, न तर्कस्य । शब्दादेवार्थप्रतीतेः, तेषां

अपनी पर्याय है उसे ही कहता है क्योंकि वही स्वधन की तरह अपने कार्य की साधक होती है । परकीय पर्याय को वह विषय नहीं करती है कारण वह अपने कार्य की साधक नहीं होती है जैसे परका धन । इस नयकी दृष्टि में इसी कारण से पृथक्त्व—नानात्व नहीं है—अर्थात् अतीत अनागत के भेद से और परकीय भेद से यह पर्यायों में भिन्नता नहीं मानता है । किन्तु वर्तमान कालिक स्वगत पर्याय को ही वास्तविक मानता है और एक ही है ऐसा प्रतिपादन करता है । इसलिये इस नयकी मान्यतानुसार आगमद्रव्यावश्यक एक ही है—अनेक नहीं ।—अब सूत्रकार शब्द, समभिरूढ और एवंभूत नय को लेकर आगमद्रव्यावश्यक का विचार करते हैं ।—शब्दप्रधाननयों का नाम शब्दनय है और ऐसे ये तीन नय हैं । अर्थावगम अर्थ का ज्ञान होने का कारण होने से शब्द की ही ये प्रधानता मानते हैं—अर्थ की नहीं । इन नयों की

કાલિન) પર્યાયો અનુત્પન્ન હોય છે. વર્તમાનકાલિન પર્યાયમાં પણ જે પોતાની પર્યાય છે તેને જ તે ખતાવે છે, કારણ કે એજ પોતાના ધનની જેમ પોતાના કાર્યની સાધક હોય છે. કારણ કે એજ પોતાના ધનની જેમ પોતાના કાર્યની સાધક હોય છે. પરકીય પર્યાયને તે વિષય કરતો નથી. કારણ કે અન્યના ધનની જેમ તે પોતાના કાર્યની સાધક હોતી નથી. આ નયની દૃષ્ટિએ એજ કારણે પૃથક્ત્વ—વૈવિધ્ય નથી કારણ કે અતીત અનાગતના ભેદથી અને પરકીય ભેદથી આ નય પર્યાયોમાં ભિન્નતા માનતો નથી. પરંતુ વર્તમાનકાલિક સ્વગત પર્યાયને જ તે વાસ્તવિક માને છે અને એક જ છે એવું પ્રતિપાદન કરે છે. તેથી આ નયની માન્યતા અનુસાર આગમ દ્રવ્યાવશ્યક એક જ છે અનેક નથી.

હવે સૂત્રકાર શબ્દનય, સમભિરૂઢ નય અને એવંભૂત નયની દૃષ્ટિએ આગમ-દ્રવ્યાવશ્યકનો વિચાર કરે છે—શબ્દ પ્રધાન નયોનું નામ શબ્દનય છે. અને એવાં આ-ત્રણ નય છે, અર્થાવગમ (અર્થનો ઓધ)નું કારણ હોવાથી શબ્દની જ પ્રધાનતા

જ્ઞાયક:- જ્ઞાતા, અથ ચ અનુપયુક્તઃ, इत्येतत् अवस्तु=असत्, न संभवतीत्यर्थः ।
 कस्मात् एवमुच्यते ? इत्याह—‘जइ’ इत्यादि—यदि ज्ञायको भवति, अथ अनुप-
 युक्तो न भवति, यदि अनुपयुक्तो भवति तर्हि ज्ञा' को न भवति । अयं भावः—
 आवश्यकशास्त्रज्ञस्तत्र चानुपयुक्त आगतो द्रव्यावश्यकमिति पूर्वं प्ररूपितम् ।
 एतच्च शब्दादिनया न स्वीकुर्वन्ति । एतेषां मते यो हि—आवश्यकशास्त्रज्ञः सो-
 ऽनुपयुक्तो न भवितुमर्हति, यो हि—अनुपयुक्तः स आवश्यकशास्त्रज्ञो न भवितु-
 मर्हति, ज्ञानस्थोपयोगरूपत्वात् । एते हि शुद्धन्यासाश्रित्य वस्त्वभ्युपगच्छन्ति,

मान्यता है कि द्रव्य और पर्याय के संबन्ध में जितने विचार होते हैं उनका
 वर्गीकरण उपर्युक्त चार नयों में ही हो जाता है । जिनका वर्गीकरण स्वतंत्र
 नय द्वारा किया जाय ऐसे विचार ही शेष नहीं रहते । तथापि विचारों को
 प्रकट करने और इष्ट पदार्थ का ज्ञान कराने का प्रधान साधन शब्द है ।
 इसलिये इसकी मुख्यता से जितना भी विचार किया जाता है वह सब तीन
 नयों की ही कोटि में आता है । ये नय यह कहते हैं कि अवतक शब्द
 प्रयोग की विविधता होने पर भी अर्थ में भेद स्वीकार नहीं किया गया
 है—परन्तु जहां शब्दनिष्ठ तारतम्य है उसके अनुसार अवश्य अर्थभेद है ।
 इसीलिये ये कहते हैं कि यह बात कैसे बन सकती है कि जो आवश्यक
 शास्त्र का ज्ञाता है वह उसमें अनुपयुक्त है । क्योंकि ज्ञाता होने पर अनुप-
 युक्त—और अनुपयुक्त होने पर ज्ञाता यह असत् है—संभवित नहीं होता है ।

આ ત્રણે નયો માને છે—અર્થની પ્રધાનતા માનતાં નથી. આ નયોની એવી માન્યતા
 છે કે દ્રવ્ય અને પર્યાયના સંબંધમાં જેટલા વિચારો હોય છે. તે વિચારોનું વર્ગી-
 કરણ ઉપર્યુક્ત ચાર નયમાં જ થઈ જાય છે.

જેમનું વર્ગીકરણ સ્વતંત્ર નય દ્વારા કરી શકાય એવો કોઈ વિચાર જ બાકી
 રહેતો નથી. છતાં પણ વિચારોને પ્રકટ કરનાર અને ઈષ્ટ પદાર્થોનું જ્ઞાન કરાવનાર
 મુખ્ય સાધન શબ્દ છે. તેથી તેની (શબ્દની) પ્રધાનતાની અપેક્ષાએ જેટલા વિચારો
 કરવામાં આવે છે તેટલા વિચારોને આ ત્રણ નયોની કોટિમાં જ મૂકી શકાય છે.
 તે નયો એ બતાવે છે કે હજી સુધી શબ્દ પ્રયોગની વિવિધતા હોવા છતાં પણ
 અર્થમાં ભેદનો સ્વીકાર કરવામાં આવ્યો નથી પરન્તુ જ્યાં શબ્દ નજીક તારતમ્ય છે.
 તેના અનુસાર અર્થભેદ પણ અવશ્ય છે જ. તેથી તેઓ કહે છે કે—એવી વાત
 કેવી રીતે સંભવી શકે કે જે આવશ્યકશાસ્ત્રનો જ્ઞાતા છે. તે તેમાં અનુપયુક્ત છે,
 કારણકે જ્ઞાતા હોવા છતાં પણ અનુપયુક્ત હોય અને અનુપયુક્ત હોવા છતાં પણ
 જ્ઞાતા હોય એ વાત જ અસંભવિત હોય છે. જ્ઞાતા હોય તો તે તેમાં ઉપયુક્ત

अतो यदप्यागमकारणत्वादात्मदेहादिकमागमत्वेनोक्तं तदप्यौपचारिकम्, अत-
तदागमत्वेन न प्रतिपद्यन्ते । तस्मादेतन्मते द्रव्यावश्यकस्य असंभवेति ।
उक्तार्थमुपसंहरन्नाह—‘से तं आगमो द्रव्यावश्यकस्य’ इति । तदेतदागमतो द्रव्या-
वश्यकम् ॥ सू० १५ ॥

ज्ञाता है तो वह उस में उपयुक्त है । अनुपयुक्त है तो वह उस का ज्ञाता
नहीं है । अतः आवश्यक शास्त्र के अनुपयुक्त ज्ञाता को लेकर जो आगमद्रव्या-
वश्यक की प्ररूपणा को ये शब्दादिनय स्वीकार नहीं करते हैं । क्योंकि
ज्ञाता और अनुपयुक्तता का समन्वय बैठता नहीं है । अनुपयुक्तता की स्थिति
में वह आवश्यक शास्त्र का ज्ञाता ही नहीं हो सकता है । ज्ञाता शब्द का
अर्थ “उस संबन्धी ज्ञानवाला” ऐसा होता है । जब तत्संबन्धी ज्ञानवाला वह
है तो इसका तात्पर्य यही है कि वह ज्ञान के उपयोगवाला है । क्योंकि
ज्ञान स्वयं उपयोगरूप है । ये तीनों नय शुद्धनय को आश्रित करके वस्तु को
स्वीकार करते हैं । इसलिये जो “आगम के कारण होने से आत्मा तदधि-
ष्ठित देह, और शब्द ये आगमरूप हैं” ऐसा कहा है । क्योंकि ये आगम-
रूप से नहीं माने जाते हैं । इसलिये इन नयों के मन्तव्यानुसार आगमद्रव्या-
वश्यक असंभव ही है । इस तरह पूर्व प्रक्रान्त आगमद्रव्यावश्यक का स्वरूप
इस प्रकार का कहा है ।

(‘उपयोग’ संपन्न) होय, अने अनुपयुक्त होय तो तेना ज्ञाता न
होय ओ बात न संभवी शके छे, तेथी आवश्यकशास्त्रना अनुपयुक्त ज्ञातानी अ-
पेक्षाओ जे आगम व्यावश्यकनी प्ररूपणा करी छे, ओ प्ररूपणाने आ शब्दादि त्रणु
प्रकारना नये स्वीकार करता नथी, कारण के ज्ञाता अने अनुपयुक्तताने समन्वय
न संभवी शकतो नथी, अनुपयुक्ततानी स्थितिमा ते आवश्यकशास्त्रने ज्ञाता न
संभवी शकतो नथी, (‘ज्ञाता’ ओटवे “तेना संबन्धी ज्ञान धरावनादे,” आ प्रकार-
ने अर्थ समजने) ओ ते ज्ञाता होय ओटवे के ते विषयना ज्ञानथी संपन्न होय,
तो तेनु तात्पर्य ओ छे के ते ज्ञानना उपयोगवाणे (उपयुक्त) छे, कारण के ज्ञान
पोते न उपयोगरूप होय छे आ त्रणु नय शुद्ध नयने आधारे वस्तुने स्वीकार
करे छे, तेथी ओनु जे कहेवामां आव्यु छे के “आगमनां कारणरूप होवथी आत्मा
तदधिष्ठित देह अने शब्द ओ आगमरूप छे,” आ कथन पण औपचारिक कथन
न छे, कारण के तेमने आगमरूप मानवामां आवता नथी, तेथी आ त्रणु नयेनी
मान्यता अनुसार आगमद्रव्यावश्यक संभवित नथी, आ रीते पूर्वप्रक्रान्त आगम-
द्रव्यावश्यकनु स्वरूप आ प्रकारनु कहुं छे.

સમ્પ્રતિ નોઆગમતા દ્રવ્યાવશ્યકં ગ્રાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં નો આગમઓ દઢ્વાવસ્સયં ? નો આગમઓ દઢ્વાવસ્સયં તિવિહં પપ્પણત્તં, તં જહા-જાણયસરીરદઢ્વાવસ્સયં, ભવિ-
યસરીરદઢ્વાવસ્સયં, જાણયસરીરભવિયસરીરવઙ્ગિત્તં દઢ્વાવસ્સયં । સૂ૦૧૬

છાયા—અથ કિં તદ્ નોઆગમતો દ્રવ્યાવશ્યકમ્, નો આગમતો દ્રવ્યા-

અયં ભાવઃ—સૂત્રકાર ને નૈગમાદિ સાત નયોં કી માન્યતા કો આશ્રિત કરકે આગમદ્રવ્યાવશ્યક મેં એકત્વ અનેકત્વ આદિ કા પ્રતિપાદન ધિયા હૈ । નૈગમનય કી અપેક્ષા સે આગમદ્રવ્યાવશ્યક મેં એકત્વ ઓર અનેકત્વ હૈ । સંગ્ર-
હનય કી અપેક્ષા સે ઉસમેં કેવલ એકત્વ હૈ । વ્યવહારનય કી અપેક્ષા સે એક ઓર અનેક આગમ દ્રવ્યાવશ્યક હૈ । ઋજુસૂત્રનય કી અપેક્ષા સે આગમ-
દ્રવ્યાવશ્યક એક હી હૈ । શબ્દ, સમભિરૂઢ ઓર એવંભૂત ઇન ત્રીન નયોં કી અપેક્ષાસે આગમદ્રવ્યાવશ્યક હૈ હી નહીં । ઇન સવ નયોં કી માન્યતાઓં કા સ્પષ્ટીકરણ ટીકા કે અર્થ મેં કરદિયા ગદ્યા હૈ । ॥ સૂત્ર ૧૫ ॥

અવ સૂત્રકાર નોઆગમદ્રવ્યાવશ્યક વા પ્રતિપાદન કરતે હૈ—

“સે કિં તં નો આગમઓ” ઇત્યાદિ । ॥ સૂત્ર ૧૬ ॥

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નોઆગમઓ દઢ્વાવસ્સયં) હે મંદંત ! નોઆગમ

સંક્ષિપ્ત ભોવાર્થ—સૂત્રકારે નૈગમ આદિ સાત નયોની માન્યતાનો આધાર લઈને આગમદ્રવ્યાવશ્યકમાં એકત્વ, અનેકત્વ આદિનું પ્રતિપાદન કર્યું છે. નૈગમ-
નયની માન્યતા અનુસાર આગમદ્રવ્યાવશ્યકમાં એકત્વ અને અનેકત્વ છે. સંગ્રહનય-
ની માન્યતા અનુસાર તેમાં માત્ર એકત્વ જ છે. વ્યવહારનયની માન્યતા અનુસાર
એક આગમદ્રવ્યાવશ્યક પણ છે અને અનેક દ્રવ્યાવશ્યક પણ છે. ઋજુસૂત્રનયની
માન્યતા પ્રમાણે આગમદ્રવ્યાવશ્યક એક જ છે. શબ્દનય, સમભિરૂઢનય અને એવં-
ભૂતનય આ ત્રણે નયોની માન્યતા અનુસાર આગમદ્રવ્યાવશ્યક છે જ નહીં. આ
સમગ્ર નયોની માન્યતાનું સ્પષ્ટીકરણ ટીકાર્થમાં કરવામાં આવ્યું છે. ॥સૂ૦ ૧૫॥
હવે સૂત્રકાર “નોઆગમદ્રવ્યાવશ્યકનું” પ્રતિપાદન કરે છે—

“સે કિં તં નોઆગમઓ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નો આગમઓ દ્રવ્યાવસ્સયં ?) હે ભગવન્ ! નો આગમ
ને આશ્રિત કરીને દ્રવ્યાવશ્યકનું કેવું સ્વરૂપ છે ?

વશ્યકં ત્રિવિધં પ્રજ્ઞસમ્, તદ્વથા-જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યાવશ્યકમ્, ભવ્યશરીરદ્રવ્યાવશ્યકમ્, જ્ઞાયકશરીરભવ્યશરીરવ્યતિરિક્તં દ્રવ્યાવશ્યકમ્ ॥સૂ. ૧૬॥

ટીકા—‘સે કિં તે’ इत्यादि—

अथ किं तद् नो आगमतो द्रव्यावश्यकम् ? इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरयति—
‘नोआगमओ दव्वावस्सयं तिविहं पणत्तं’ इत्यादि । नो आगमतो द्रव्यावश्यकं
त्रिविधं प्रज्ञसम् । अत्र नो शब्दः सर्वथा प्रतिषेधे देशतः प्रतिषेधेऽपि च वर्तते ।
तथा च सर्वथा आगमाभावमाश्रित्य द्रव्यावश्यकं, तथा-देशतः आगमाभावमाश्रित्य
द्रव्यावश्यकं च नोआगमतो द्रव्यावश्यकमिति । तत् त्रिविधं प्रज्ञसं=तीर्थं करैः
प्ररूपितमित्यर्थः । (१) ज्ञायकशरीरद्रव्यावश्यकं, (२) भव्यशरीरद्रव्यावश्यकम्, (३)
ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तद्रव्यावश्यकंचेति । तत्र—ज्ञानवानिति ज्ञायकः, शीयंते

को आश्रित वर के द्रव्यावश्यक का क्या स्वरूप है ? उत्तर—(नोआगमओ
दव्वावस्सयं तिविहं पणत्तं)नोआगम की अपेक्षा करके द्रव्यावश्यक तीन
प्रकार का प्रज्ञस हुआ है । (तंजहा) उसके वे तीन प्रकार ये हैं—(जाणयसरीर-
दव्वावस्सयं, भवियसरीरदव्वावस्सयं, जाणयसरीरभवियसरीरवइरिक्तं
दव्वावस्सयं) (१)ज्ञायक शरीर द्रव्यावश्यक (२)भव्य शरीरद्रव्यावश्यक, और ज्ञायक
शरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्त द्रव्यावश्यक । नो शब्द सर्वथा प्रतिषेध में और
किञ्चित् प्रतिषेध में भी आता है । नो आगमद्रव्यावश्यक में नो शब्द इन्हीं
दोनों अर्थों में व्यवहृत हुआ है । इस तरह आगम के सर्वथा अभाव को
और आगम के एकदेश अभाव को लेकर द्रव्यावश्यक बनता है । यह नो
आगम द्रव्यावश्यक ज्ञायक शरीर आदि के भेद से ३ प्रकार का है । जो
आगमशास्त्र को जान चुका है ऐसे ज्ञायक का निर्जीव शरीर नोआगम-

ઉત્તર—(નોઆગમઓ દવ્વાવસ્સયં તિવિહં પણત્તં) નો આગમની અપેક્ષા-
દ્રવ્યાવશ્યકના ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે. (તંજહા) તે ત્રણ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે સમજવા—

(જાણયસરીરદવ્વાવસ્સયં, ભવિયસરીરદવ્વાવસ્સયં, જાણયસરીરભવિય-
સરીરવइरिक्तं દવ્વાવસ્સયં) (૧) જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યાવશ્યક. (૨) ભવ્યશરીર દ્રવ્યા
વશ્યક અને જ્ઞાયકશરીર ભવ્યશરીર વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાવશ્યક.

ટીકાર્થ—“નો” શબ્દ સર્વથા નિષેધ અથવા અંશતઃ નિષેધના અર્થમાં વપરાય
છે. “નોઆગમ દ્રવ્યાવશ્યકમાં” જે ‘નો’ શબ્દ આવ્યો છે તે ઉપર્યુક્ત બન્ને
અર્થમાં વપરાયો છે. આ રીતે આગમના સર્વથા અભાવને અને આગમના એક
દેશતઃ અભાવને લઇને દ્રવ્યાવશ્યક બને છે. આ નોઆગમદ્રવ્યાવશ્યક જ્ઞાયક
શરીર આદિના લેદથી ત્રણ પ્રકારનો કહ્યો છે. જે આગમનું બાણી ચુક્યો છે એવા
જ્ઞાયકનું નિર્જીવ શરીર નો આગમદ્રવ્યાવશ્યક છે. આગામી કાળમાં જે જીવ વિવક્ષિત

પ્રતિક્ષણં ક્ષીયતે इति शरीरं, ज्ञायकश्च शरीरं तदेव द्रव्यावश्यकमिति ग्रहः
जीवपरित्यक्तमावश्यकशास्त्रज्ञानवतः शरीरं ज्ञायकशरीरद्रव्यावश्यकम् । विव-
क्षितपर्यायेण भविष्यतीति भव्यस्तस्य शरीरं भाविभाववश्यककारणत्वात् द्रव्या-

द्रव्यावश्यक है । विवक्षित पर्याय से युक्त जो आगामी काल में होगा उसका नाम भव्य है । भावि, भावरूप आवाक का कारण होने से उसका शरीर भव्य शरीर द्रव्यावश्यक है ज्ञायक शरीर और भव्यशरीर इन दोनों से भिन्न जो द्रव्यावश्यक है वह ज्ञायक शरीर-भव्यशरीर व्यतिरिक्त द्रव्यावश्यक है । इस प्रकार यह तीन प्रकार का नो आगमद्रव्यावश्यक है ।

भावार्थ—नो आगमद्रव्यावश्यक का स्वरूप प्रकट करने के लिये सूत्र-
कार ने इसके तीन भेद किये हैं—(१) ज्ञायकशरीरद्रव्यावश्यक, (२) भव्य
शरीरद्रव्यावश्यक और (३) तद्व्यतिरिक्त-द्रव्यावश्यक । नोआगम द्रव्यावश्यक
में नो शब्द आगम के सर्वथा निषेध करने में प्रयुक्त हुआ है—तथा च—जीव
पहिले आवश्यकशास्त्र का ज्ञाना था वह जब मर जाता है—पर्यायान्तरित हो
जाता है तब उस समय का निर्जीव शरीर है वह आगमाभाव से विशिष्ट
होने के कारण ज्ञायकशरीरद्रव्यावश्यक है । इसी तरह जो आगामी काल
में आवश्यकशास्त्र का ज्ञाता होगा ऐसे उसका जो शरीर है वह भव्यशरीर

પર્યાયથી યુક્ત થવાનો છે, તેને ભવ્યશરીર કહે છે ભાવિ સ્વભાવરૂપ આવશ્યકનું કારણ
હોવાથી તેનું શરીર ભવ્યશરીર દ્રવ્યાવશ્યક ગણાય છે. જ્ઞાયક શરીર દ્રવ્યાવશ્યક
અને ભવ્યશરીર દ્રવ્યાવશ્યકથી ભિન્ન જે દ્રવ્યાવશ્યક છે તેને જ્ઞાયકશરીર-ભવ્ય-
શરીર વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાવશ્યક કહે છે. આ પ્રમાણે આ ત્રણ પ્રકારનો આ
નોઆગમ દ્રવ્યાવશ્યક છે.

ભાવાર્થ—નોઆગમ દ્રવ્યાવશ્યકનું સ્વરૂપ પ્રકટ કરવા નિમિત્તે સૂત્રકારે તેના
નીચે પ્રમાણે ત્રણ ભેદ કહ્યા છે—

(૧) જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યાવશ્યક, (૨) ભવ્યશરીરદ્રવ્યાવશ્યક, (૩) તદ્વ્યવ્યતિરિક્ત
(બંનેથી ભિન્ન) દ્રવ્યાવશ્યક.

નોઆગમ દ્રવ્યાવશ્યકમાં “નો” પદ આગમનો સર્વથા નિષેધ કરવામાં
પ્રયુક્ત થયો છે. જેમકે—

જે જીવ પહેલાં આવશ્યકશાસ્ત્રનો જ્ઞાતા હતો, તે જ્યારે મરણ પામે છે—અન્ય
પર્યાયે ઉત્પન્ન થઈ જાય છે, તે સમયનું તેનું જે નિર્જીવ શરીર હોય છે તે આગમના
અભાવવાળું હોવાને કારણે જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યાવશ્યક રૂપ ગણાય છે. એજ પ્રમાણે
જે જીવ ભવિષ્યમાં આવશ્યકશાસ્ત્રનો જ્ઞાતા થવાનો છે; તે જીવના શરીરને ભવ્ય-

વશ્યકં મન્યશરીરદ્રવ્યાવશ્યકમ્ । જ્ઞાયકશરીરમન્યશરીરમ્પાં વ્યતિરિક્તં-ભિન્ન
દ્રવ્યાવશ્યકં इत्येवं त्रिविधं नोआगमता द्रव्यावश्यकं बोध्यम् ॥ सू० १६ ॥

ત્ર પ્રથમભેદં નિરૂપયિતુમાહ—

મૂલ—મેં કિં તં જાણયસરીરદ્વાવસ્સયં ? જાણયસરીર-
દ્વાવસ્સયં આવસ્સણ્તિ પયત્થાહિગારજાણયસ્સં જં સરીરયં વવગંય-
ચુયચવિયચત્તદેહં જીવવિપ્પજઢં સિજ્જાગયં વા સંથારગયં વા નિસી-
હિયાગયં વા સિદ્ધસિલાતલગયં વા પાસિત્તા ણં કોઈ મળેજ્જા અહો !
इमेणं सरीरसमुस्सएणं जिणदिट्ठेणं भावेणं आवस्सएत्तिपयं आघ-
वियं पणवियं परूवियं दंसियं निदंसियं उददंसियं । जहा को दि-
ट्ठतो ? अयं महुकुंभे आसी, अयं घयकुंभे आसी से तं जाणयसरीर-
द्ववावस्सयं ॥ सू० ૧૭ ॥

છાયા—અથ કિં તદ્ જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યાવશ્યકમ્ ? જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યાવશ્યકમ્ આ-
શ્યકેતિ પદાર્થાધિકારજ્ઞાયકસ્ય યત્ શરીરકં વ્યપગતચ્યુતચ્યાતિત્યક્તદેહં જીવ-

દ્રવ્યાવશ્યક હૈ । તથા ઇન દોનોં સે વ્યતિરિક્ત જો દ્રવ્યાવશ્યક હૈ વહ તદ્વ્ય-
તિરિક્ત દ્રવ્યાવશ્યક હૈ । ॥ સૂત્ર ૧૬ ॥

અવ સૂત્રકાર નોઆગમ દ્રવ્યાવશ્યક કા જો પ્રથમ ભેદ જ્ઞાયક શરીર
દ્રવ્યાવશ્યક હૈ ઉસે વિશેષરૂપ સે સ્પષ્ટ કરતે હૈ—

“સે કિં તં જાણયસરીરદ્વાવસ્સયં” इत्यादि । ॥ सू० ૧૭ ॥

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન—(સે કિં તં જાણયસરીરદ્વાવસ્સયં) હે મદંત ! જ્ઞાયક
શરીર દ્રવ્યાવશ્યક કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

શરીર દ્રવ્યાવશ્યકરૂપ માનવામાં આવે છે. તથા આ જાણને કરતાં લિન્ન એવો જે
દ્રવ્યાવશ્યક છે તેને તદ્વ્યવ્યતિરિક્ત (ઉભયથી લિન્ન) દ્રવ્યાવશ્યક કહે છે. ॥સૂ ૧૬॥

“નોઆગમ દ્રવ્યાવશ્યક” નો, જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યાવશ્યક નામનો જે પહેલો
લેદ છે તેનું સૂત્રકાર હવે વિશેષ સ્પષ્ટીકરણ કરે છે—

‘સે કિં તં જાણયસરીરદ્વાવસ્સયં’ इत्यादि—

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન—(સે કિં તં જાણયસરીરદ્વાવસ્સયં) હે ભગવન્ ! જ્ઞાયક
શરીર દ્રવ્યાવશ્યકનું કેવું સ્વરૂપ કહ્યું છે ?

विप्रहीणं शय्यागतं वा संस्तारगतं वा नैषेधिकीगतं वा सिद्धशिलातलगतं वा दृष्ट्वा खलु केऽपि भणेत—अहो ! अनेन शरीरसमुच्छ्रयेण जिनदृष्टेन भावेन आश्रयकेतिपदम् आघवितं प्रज्ञापितं प्ररूपितं दर्शितं निदर्शितम् उद्दर्शितम् ।

उत्तर—(आवरसएत्ति पयत्थाहिगारंजाणयस्स जं सरीरं) आवश्यक पदवाच्य आगम के अर्थरूप अधिकार के ज्ञाता का—अर्थात् आवश्यकसूत्र के अर्थ को जाननेवाले साधु आदि का—ऐसा शरीर कि जो (ववगयचुयचवियचत्तदेहं) व्यपगत चैतन्यपर्याय से रहित है, च्युत-बलिष्ठ आयुक्षय के कारणों से प्राण रहित है त्यक्तदेह-आहारपरिणति जनित वृद्धि जिससे सर्वथा निकलचुकी है (जाणयसरीरदव्वावरसयं) ज्ञायक शरीर द्रव्यावश्यक है । इसी अर्थ का स्पष्ट ज्ञान होने के लिये सूत्रकार शब्दान्तर से इसका वर्णन करते हैं (जीवविष्पज्जं सिज्जागयं वा संथारगयं वा निषीहियागयं वा सिद्धशिलातलगयं वा पासित्ता णं कोई भणेज्जा) वे कहते हैं कि जब इस प्रकार के प्राण रहित शरीर को शय्या पर देखकरके, संस्तारगत देखकरके स्वाध्यायभूमि अथवा स्मशानभूमि गत देखकरके या सिद्ध शिलातलगत देखकरके वे कहते हैं कि (अहो) अहो ! (इमेणं) इस (सरीरसमुस्सएणं) शरीररूप पुद्गल संघात ने (जिनदिद्वेणं भावेणं) तीर्थंकरों द्वारा मान्य हुए कर्म निर्जरण के अभिप्राय से अथवा तदावरण के क्षय, क्षयोपशमरूप भाव से अर्थात् ज्ञानावरणीयकर्म के क्षय

उत्तर—(आवरसएत्ति पयत्थाहिगारं जाणयस्स जं सरीरं) आवश्यक पदवाच्य आगमना अर्थइय अधिकारना ज्ञातानुं ओटले के आवश्यकसूत्रना अर्थने ज्ञाताना साधु आदिनुं ओपुं शरीर के जे (ववगयचुयचवियचत्तदेहं) व्यपगत-चैतन्य पर्यायशी रहित छे, च्युत-इस प्रकारना प्राणोशी परिवर्जित (रहित) छे, त्यक्तदेह आहारपरिणति जनित वृद्धि जेभांशी स पूछुं नीकणी चुकी छे, (जाणय सरीरदव्वावरसयं) ओवा शरीरने “ज्ञायक शरीर द्रव्यावश्यक” कहे छि, आ अर्थने बहु स्पष्ट ज्ञात आपवाना हेतुशी सूत्रकार अन्य शब्दों द्वारा तेनुं वर्णन करे छे—

(जीवविष्पज्जं सिज्जागयं वा, संथारगयं वा, निषीहियागयं वा, सिद्धशिलातलगयं वा पासित्ताणं कोई भणेज्जा) आ प्रकारना प्राणरहित शरीरने शय्या पर देखीने, संस्तारगत देखीने, स्वाध्यायभूमि अथवा स्मशानभूमिगत देखीने अथवा सिद्धशिलागत देखीने तेओ कहे छे के—(अहो) अहो ! (इमेणं सरीरसमुस्सएणं) आ शरीर रूप पुद्गल संघाते (जिनदिद्वेणं भावेणं) तीर्थंकर लागवाना द्वारा मान्य द्येला कर्मनिर्जरणना अभिप्रायशी अथवा तदावरणना क्षय, क्षयोपशम रूप भावशी ओटले के ज्ञानावरणीय कर्मना क्षय क्षयोपशम अनुसार (आवरसएत्तिपय)

यथा को दृष्टान्तः ? अयं मधुकुम्भ आसीत्, अयं घृतकुम्भ आसीत् । तदेतत् ज्ञायकशरीरद्रव्यावश्यकम् ॥ सू० १७ ॥

टीका—शिष्यः पृच्छति—‘से किं तं’ इत्यादि । हे भदन्त ! अथ किं तत् ज्ञायकशरीरद्रव्यावश्यकम् ? उत्तरमाह—‘ज्ञायकशरीरद्रव्यावश्यकम्’ इत्यादि । ज्ञायकशरीरद्रव्यावश्यकं दर्शयते इत्यर्थः । आवश्यवेति पदार्थाधिकारज्ञायकस्य—आवश्यवेतिपदस्य=आवश्यपदवाच्यस्य आगमस्य यः अर्थाधिकारः=अर्थ एव अर्थाधि, कारः तस्य ज्ञायकः=ज्ञाता, तस्य आवश्यकमन्त्रार्थं ज्ञातवतः साध्वादे र्यत् शरीरम् ।

क्षयोपशम के अनुसार (आवरसंत्तिपयं) आवश्यक सूत्र वा विशेषरूप से (आध्रवियं) गुरु से ज्ञान प्राप्त किया था (पण्णवियं) सामान्यरूप से उसे शिष्यों को समझाया था । (परुवियं) सूत्रार्थ कथनपूर्वक फिर उसे शिष्यजनों को पढ़ाया था (दंसियं) प्रतिलेखनादि क्रियारूप में उसे स्वयं ने अपनी आत्मा में उतारा था । और बाद में इसी रूप में दूसरों को दिखलाया था—अर्थात् प्रतिलेखनादि क्रिया के प्रदर्शन से यह प्रकट किया था कि दोनों समस्त भण्डपेकरणों की प्रतिलेखना करनी आवश्यक हैं । अंगुल मात्र वस्त्र खण्ड भी बिना प्रतिलेखना के नहीं रहना चाहिये । (निदंसियं) आवश्यकशास्त्र के ग्रहण करने में जो शिष्यजन अक्षम थे उनके लिये इसने वस्त्रावश होकर बार २ आवश्यकशास्त्रग्रहण करवाया था । (उवदंसियं) सर्वनय और युक्तियों द्वारा शिष्यजनों के हृदयस्थान में इसे बिना किसी संदेह के इसने जमाया था अतः वह शरीरज्ञायक शरीरद्रव्यावश्यक हैं ।

आवश्यक सूत्रनुं विशेषरूपे (आध्रवियं) गुरु पास अध्ययन कथुं हुतुं—ज्ञान प्राप्त कथुं हुतुं । (पण्णवियं) सामान्यरूपे तेले शिष्येने ते सगण्णोयुं हुतुं, (परुवियं) सूत्रार्थना कथनपूर्वक तेले इरीथी शिष्येनेने तेनुं अध्ययन कराओयुं हुतुं (दंसियं) प्रतिलेखनादि क्रियाइये तेरेले पोते पोताना आत्माभां उतारुं हुतुं, अने त्थार भाद ओज इये शिष्येने भताओयुं हुतुं, ओटले के प्रतिलेखना आदि क्रियाना ग्रहणथी ओ प्रकट कथुं हुतुं के भन्ने समय समस्त पात्र वस्त्रादि उपकरणोंनी प्रतिलेखना करवी आवश्यक छे. वस्त्रेने ओक छंय नेटले लाग पणु प्रतिलेखना विनाने। रडेवे। नेछंओ नही. (निदंसियं) आवश्यकशास्त्रने अहुणु करवाने ने शिष्ये अक्षम हुता, तेमना प्रत्ये करणुलाव राणीने तेले तेमने बारबार आवश्यक सूत्र अहुणु करावाने। प्रयत्न कर्यो हुते। (उवदंसियं) अधां नय अने युक्तियों द्वारा तेले शिष्येनेने। हृदयस्थानभां निःशङ्कइये तेने अवधानु कराओयुं हुतुं तेथी तेनुं आ शरीर ज्ञायक शरीर द्रव्यावश्यक छे.

કીદૃશં જાયવશ્ચરીર દ્રવ્યાદ્યકં ભવતીત્યાહ—‘વદગય’ इत्यादि । व्यपगतच्युत-
 च्यावितत्यक्तदेहं—व्यपगतं=चैतन्यपर्यायः हितम्. अत एव—च्युतं=दशविधप्राणेभ्यः
 परिवर्जितम्, च्यावितम्=बलवताऽऽयुःक्षयेण प्राणेभ्यः परिभंशितम्, त्यक्तदेहं—
 त्यक्तो देहः=आहारपरिणतिजनित उपचयो रेन तत्तथा, व्यपगतादीनां च्युर्णा
 कर्मधारयः । अमुमेवार्थं स्पष्टप्रतिपत्तये शब्दान्तरेणाह—‘जीवविप्पजडं’ इति,
 जीवविप्रहीणं=जीवात्मना सर्वथा परित्यक्तं तत् शय्यागतं वा—शय्या शरीरप्रमाणा
 तत्र गतं=स्थितं दृष्ट्वा संस्तारगतं वा संस्तारेऽर्धद्वतीयहरतप्रमाणस्तत्र गतं दृष्ट्वा
 नैपेधिकीगतं वा—नैपेधिकी स्वाध्याय भूमिः इमंशान्भूमिश्च तत्र गतं दृष्ट्वा सिद्ध-
 शिलातलगतं वा—अनेकविधतपःपरिशोषितशरीराः साधवो यत्र स्वयमेव गत्वा
 भक्तप्रत्याख्यानरूपमनशनं कृतवन्तः, कुर्वन्ति, वरिणन्ति च, तत् सिद्धशिला-
 तलम्, यद्वा यत्र कश्चिद् महर्षिः सिद्धस्तत् सिद्धशिलातलम्, तत्र गतं=स्थितं दृष्ट्वा
 खलु कोऽपि श्रौतकादिः, भणति=कथयति—‘अहो !’ अहो इति दैन्ये, विस्मय,
 आमन्त्रणे च ‘अनित्यं शरीरम्’ दैवम् । ‘आवश्यकं ज्ञातम्’ इति विरमयः ।
 पार्श्वस्थं प्रति आमन्त्रणम् । त्रितयोऽप्यर्थोऽत्र संगच्छते । खलु अनेन=प्रत्यक्ष-
 तया परिदृश्यमानेन शरीरसमुच्छ्रयेण=शरीरमेव समुच्छ्रयः पुद्गलसंघातस्तेन
 जिनदृष्टेन तिर्थङ्कराभिमतो भावेन=कर्मनिर्जराभिप्रायेण, यद्वा—तदावरणक्ष-
 क्षर्योपशमलक्षणेन आवश्यकेतिपदम्—आवश्यकशास्त्रम्, आगृहीतम्=गुरोः सका-
 शादधिगतम्, प्रज्ञापितम्—सामान्यरूपेण शिष्येभ्यः कथितम्, प्ररूपितम्=सुत्रार्थ-
 कथनपूर्वकं शिष्येभ्योऽध्यापितम्, दर्शितम्=प्रतिलेखनादिक्रियायाः प्रतिलेखनी-
 यम् अर्जुलमात्रं दस्त्रखण्डमपि अप्रतिलेखनेन न स्थापनीयम्, इति । निदर्शितम्—

શંકા—અચેતન હોને સે શરીરરૂપ પુદ્ગલ સ્કંધ જવ આવશ્યકશાસ્ત્ર વા
 જ્ઞાતા હી નહીં હો સકતા હૈ તવ સૂત્રવાર વા “આવસ્સણ્તિ પદં આધવિયં”
 આદિ વહના સંગત ઃતીન નહીં હોતા હૈ । ક્યોંકિ ગ્રહણ કરના પ્રરૂપણાઆદિ
 કરના યે સવ ક્રિયાએ જીવ કે સાથ સંબન્ધિત હોતી હૈ । અતઃ જીવ
 કે ધર્મ હોને કે વારણ ઇનકી ઘટના શરીર કે સાથ નહીં હો
 સકતી હૈ ? સો ઇસ આશંકા કા ઉત્તર ઇસ પ્રકાર

શંકા—અચેતન હોવાને કારણે શરીરરૂપ પુદ્ગલ સ્કંધ નો આવશ્યકશાસ્ત્રનો
 જ્ઞાતા જ હોઈ શકતો નથી. તે સૂત્રકારનું “આવસ્સણ્તિ પદં આધવિયં” આ પ્રકાર-
 નું કથન સંગત લાગતું નથી. કારણ કે ગ્રહણ કરવાની અને પ્રરૂપણા આદિ કરવાની
 ક્રિયાઓ તે જીવની સાથે સંબંધ ધરાવનારી હોય છે. આ ક્રિયાઓ જીવના ધર્મ
 રૂપ હોવાને કારણે મૃત શરીરમાં તેને કેવી રીતે ઘટાવી શકાય? ચૈતન્ય સુકૃત
 શરીરમાં જ આ ક્રિયાઓનો સદ્ભાવ હોય છે.

आवश्यकशास्त्रग्रहणाक्षमेभ्यः शिष्येभ्यः करुणावशात् पुनः पुनर्दर्शितम्, उपदर्शितम्=सर्वनययुक्तिभिश्च प्रदर्शितम् । अत इदं शरीरं ज्ञायकशरीरद्रव्यावश्यकम् ! नन्वेनेन शरीरसमुच्छ्रयेणाऽऽवश्यमागृहीतमि यदि नोपपद्यते, ग्रहण-प्ररूपणादीनां जीवधर्मत्वेन शरीरस्थाघटमानत्वात्, इति चेदुच्यते-भूतपूर्वमाश्रित्य तत्कथितम्, अतो नास्ति दोषः । ननु शय्यादिगतं साधुशरीरं दृष्ट्वा कश्चित् पूर्वोक्तप्रकारेण वदति, परन्तु तस्य द्रव्यावश्यकत्वं न संभवति, “भूतस्य भाविनो वा भावस्य हि कारणं तु यल्लोके । तद्रव्यं तत्त्वज्ञैः सचेतनाचेतनं कथितम्” इति पूर्वोक्तचिन्तान् आवश्यकपर्यायस्य कारणमेव द्रव्यावश्यकं भवितुमर्हति । आवश्यकपर्यायस्य कारणं तु चेतनाधिष्ठितमेव शरीरम्, नत्वचेतनम्, अतो निर्जीव

से है कि ज्ञायक शरीर को जो द्रव्यावश्यक कहा है वह भूतपूर्व को (अर्थात् भूतकाल की अपेक्षा को) लेकर कहा है । अर्थात् जब यह शरीर चेतनाधिष्ठित था—तब उस के संबन्ध से यह उस शास्त्र की प्ररूपणा आदि करता था । अतः इसमें कोई दोष नहीं है ।

शंका-शय्यादिगत साधु के शरीर को देख वरके यदि कोई पूर्वोक्त प्रकार से कहता है तो भले कहो । परन्तु उस शरीर में द्रव्यावश्यकता संभवित नहीं होती है क्यों कि भूत अथवा भावी पर्याय का जो कारण है—चाहे वह सचेतन हो चाहे अचेतन हा वही तत्त्वज्ञों की दृष्टि में द्रव्य-द्रव्य निक्षेप का विषय माना गया है । अतः इस कथन से आवश्यकपर्याय का कारण ही द्रव्यावश्यक होने के योग्य हो सकता है । सो ऐसे द्रव्यावश्यक का ऐसा कारण तो चेतनाधिष्ठित शरीर ही होता है, अचेतन शरीर नहीं । इसलिये निर्जीव शय्यादिगत साधु शरीर द्रव्यावश्यक नहीं हो सकता है ।

आ शंकातुं समाधान नीचे प्रभाषे समञ्जसु—

ज्ञायक शरीरने જે દ્રવ્યાવશ્યક કહેવામાં આવ્યું છે, તે ભૂતપૂર્વની અપેક્ષાએ કહેવામાં આવ્યું છે. એટલે કે જ્યારે તે શરીર ચૈતન્યથી યુક્ત હતું ત્યારે તે આ શાસ્ત્રની પ્રરૂપણા આદિ કરતું હતું. તેથી આ પ્રદારના કથનમાં કોઈ દોષ નથી. શંકા—શય્યાદિગત સાધુના શરીરને જોઈને કોઈ પૂર્વાગત પ્રકારે કહેતા હોય તો ભલે કહે, પરન્તુ એ શરીરમાં દ્રવ્યાવશ્યકતા તો સત્યવી જ શકતી નથી. કારણ કે ભૂત કે ભાવી પર્યાયનું જે કારણ છે—એલે તે સચેતન હોય અથવા એલે તે અચેતન હોય. પણ એને જ તત્વજ્ઞો દ્રવ્ય-દ્રવ્યનિક્ષેપને વિષય માને છે. તેથી આ કથન અનુસાર તો આવશ્યકપર્યાયનું કારણ જ દ્રવ્યાવશ્યક ગણવાને યોગ્ય હોઈ શકે છે અને એવા દ્રવ્યાવશ્યકનું એવું કારણ તો ચેતનાયુક્ત શરીર જ હોઈ શકે છે, અચેતન શરીર એવાં કારણરૂપ બની શકતું નથી. તે કારણે શય્યાદિગત નિર્જીવ સાધુનું શરીર દ્રવ્યાવશ્યક કોઈ શકતું નથી.

શર્યાદિગતં સાધુશરીરં દ્રવ્યાવશ્યકં ભવિતું નાર્હતીતિ ચેદુચ્યતે-યદ્યપિ તસ્મિન્ કાલે ચૈતન્યાભાવાત્ શરીરસ્ય દ્રવ્યાવશ્યકત્વં નાસ્તિ, તથાપિ અતીતપર્યાયાનુવૃત્ત્યા-ભ્યુપગમપરન્યાનુવૃત્ત્યાઽતીતમાવશ્યકપર્યાયકારણત્વમપેક્ષાસ્ય દ્રવ્યાવશ્યકત્વં બોધ્યમિતિ નાસ્તિ કાચિદ્ વિપ્રતિપત્તિઃ । અત્રાર્થે શિષ્યો દૃષ્ટાન્તં પૃચ્છતિ-‘જહા કોંદિ-ટ્વંતો’ इति । यथा को दृष्टान्तः=अत्र यथा कश्चिद् दृष्टान्तो भवेत्, तथा कथय-तु ? इति शिष्यपृच्छायां दृष्टान्तमाह-‘अयं मधुकुम्भे आसी, अयं घयकुम्भे आसी’ इति । अयं मधुकुम्भ आसीत्, अयं घृतकुम्भ आसीत् इति । अयं भावः-यथा कोऽपि कस्मिंश्चिद् घटे घृतं वा मधु वा भृत्वा समानीतवान्, पुनस्ततस्तदपसारितवान्, अपसारिते तस्मिन्-अयं घृतकुम्भ आसीत्, अयं मधुकुम्भ आसीदिति

સો આ શંકા કા ઉત્તર આ પ્રકાર સે છે કે યદ્યપિ તે કાલ મેં ચેતના નહીં હોને સે તે શરીર મેં દ્રવ્યાવશ્યકરૂપતા નહીં છે તો મી ભૂતપૂર્વ પ્રજ્ઞાપન નય કી અપેક્ષા સે અતીત આવશ્યક પર્યાય કે પ્રતિ કારણતા તેમ મી આ માનકર તેમ મેં દ્રવ્યાવશ્યકતા જાનની ચાહિયે । આ તરફ આ કથન મેં કોઈ દોષ નહીં છે । શિષ્યજનાં કો સમજાને કે લિયે આ વિષય મેં સૂત્રકાર દૃષ્ટાન્ત કહેતે છે ક્યોંકિ (જહા કોંદિટ્વંતો) ઉંઠોને આ પદોદ્ધારા યહી પૂછા છે કે હે ગુરુ મહારાજ ! આ વિષય મેં જૈસા કોઈ દૃષ્ટાન્ત હો વૈસા આપ કહિયે । (અયં મધુકુમ્ભે આસી અયં ઘયકુમ્ભે આસી) તવ વે શિષ્ય કો દૃષ્ટાન્ત કહેતે છે કે જિસ પ્રકાર કોઈ વ્યક્તિ ઘડે મેં મધુ યા ઘૃત ભરકર લાયા ઓર ફિર તેમ મેં સે તે મધુ યા ઘૃતકો નિકાલ લિયા મી વહ તે યહ મધુકુમ્ભ થા યા યહ ઘૃતકુમ્ભ થા આ પ્રકાર સે કહેતા છે । ઓર આ વ્યવહાર મી લોક મેં તેમ ભૂતકાલિક મધુ યા ઘૃત કા આધાર-

આ શકાતું હવે સમાધાન કરવામાં આવે છે—

જો કે તે કાળે તે સાધુશરીરમાં ચેતનાનો સદ્ભાવ નથી અને તે કારણે તે શરીરમાં દ્રવ્યાવશ્યકરૂપતાનો સદ્ભાવ નથી, પરંતુ ભૂતપૂર્વ પ્રજ્ઞાપનનયની અપેક્ષાએ અતીત (ભૂતકાલિન) આવશ્યકપર્યાયના કારણેના તે તેમાં સદ્ભાવ હતો જ, એમ માનીને તેમાં દ્રવ્યાવશ્યકતા જાણવી-જોઈએ આ રીતે વિચારવામાં આવે તે આ કથનમાં કોઈ દોષ નથી, આ વિષય શિષ્યજનોને સારી રીતે સમજાવવા માટે સૂત્રકાર એક દૃષ્ટાન્ત આપે છે, (જહા કોંદિટ્વંતો) કારણ કે શિષ્યો દ્વારા જ આ પ્રકારનું સૂચન કરવામાં આવ્યું છે “હે ગુરુમહારાજ ! આ વિષયનો અમને સુચોટ આપો આવે તે માટે એવું કોઈ દૃષ્ટાન્ત હોય, તો આપ અમને તે કહી સંભળાવવાની કૃપા કરો”

(અયં મધુકુમ્ભે આસી, અયં ઘયકુમ્ભે આસી) શિષ્યજનોની આ વિનંતિને ધ્યાનમાં લઈને ગુરુ નીચેનું દૃષ્ટાન્ત આપે છે—કોઈ એક વ્યક્તિ એક ઘડામાં મધ અથવા ઘી ભરીને આવે છે, ત્યાર બાદ તે તેમાંથી મધ અથવા ઘી કાઢી નાખે છે અથવા વાપરી નાખે છે. છતાં પણ તે એવું કહે છે કે, “આ મધનો ઘડો છે અથવા આ ઘીનો ઘડો છે.” ભૂતકાળમાં તે કુંભ મધ અથવા ઘીને ભરવા

ભૂતકાલિક ઘૃતમધ્વાધારત્વેન લોકે વ્યપદિચ્યતે । તથૈવ ભૂતકાલિકાવ્યયકપર્યાય
કારણત્વાધારત્વેન નિર્જીવં શય્યાગતં શરીરમપિ દ્રવ્યાવશ્યકમુચ્યતે, इति ।

इत्थं पूर्वोक्त जीव विप्रमुक्तं शय्यादिगतं साधुशरीरं नोआगमतो द्रव्या-
वश्यकं भवति । आवश्यकार्थज्ञानलक्षणस्य आगमस्य तदानीं तच्छरीरं सर्वथाऽभावात् ।

‘चुय’ इत्युक्त्वा ‘चाविय’ इति पुनरभिधानं स्वभाववादिनो मतनिराकर-
णार्थम् । स्वभाववादिना हि स्वभावत एव मरणं मन्यन्ते, परन्तु स्वभावस्य सर्वदा
वर्तमानत्वेन सर्वदा तत्प्रसङ्गात्, अतः आयुः क्षयेणैव प्राणिनां प्राणाः शरीरा-
न्निर्गच्छन्तीति सूचयितुं ‘चाविय’ इत्युक्तम् ।

વાલા હોને સે વ્યપદિષ્ટ હોના હૈ । उसी प्रकार भूतकालीन आवश्यक पर्याय
का कारणरूप आधारवाला होने से निर्जीव शय्यादिगत शरीर भी द्रव्यावश्यक
कहा जाता है । इस तरह पूर्वोक्त जीव विप्रमुक्त शय्यादिगत साधु आदि का
शरीर नोआगमकी अपेक्षा लेकर द्रव्यावश्यक होता है । क्योंकि उस अवस्था
में आवश्यक का अर्थज्ञानरूप आगम का उस शरीर में सर्वथा अभाव है “चुय”
ऐसा कहकरके भी जो सूत्रकार ने “चाविय” ऐसा कहा है वह स्वभाववादी
मत को निराकरण करने के लिये कहा है, क्योंकि स्वभाववादियों की ऐसी
मान्यता है कि मरण स्वभाव से ही होता है । परन्तु यह उनकी मान्यता ठीक
नहीं है क्योंकि मरण स्वभाव तो सर्वदा वर्तमान ही रहता है—अतः सर्वदा
मरण होने का प्रसंग प्राप्त होता है । इसलिये इस पद से यह बात काया गया
है कि जब आयु का क्षय होता है तभी प्राणियों के प्राण शरीर से निकलते

માટે વપરાતો હોતો. તે કારણે લોકોમાં તેને મધનો ઘડો અથવા ઘીનો ઘડો કહેવાતો.
અથવા હાર-થતો જોવામાં આવે છે. એજ પ્રમાણે ભૂતકાલિન આવશ્યક પર્યાયના કારણ
રૂપ આધારવાળું હોવાથી નિર્જીવ શય્યાદિગત શરીર પણ દ્રવ્યાવશ્યક જ કહેવાય
છે. આ પ્રકારે પૂર્વોક્ત જીવવિપ્રમુક્ત (પ્રાણોથી રહિત) શય્યાદિગત સાધુ આદિનું
શરીર નોઆગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાવશ્યક હોય છે. કારણ કે તે અવસ્થામાં આવ-
શ્યકના અર્થજ્ઞાનરૂપ આગમનો તે શરીરમાં જિલ્લકુલ અભાવ હોય છે.

“ચુય” “ચ્યુત” આ પદનો પ્રયોગ કર્યા બાદ “ચાવિય” “ચ્યાવિત” આ
પદનો જે પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે તે સ્વભાવવાદીઓના મતનું નિરાકરણ કરવા
માટે કરવામાં આવેલ છે. સ્વભાવવાદીઓની એવી માન્યતા છે કે મરણ તો સ્વાભા-
વિક રીતે જ થાય છે. તેમની તે માન્યતા બરાબર નથી. કારણ કે મરણસ્વભાવ તો
સર્વદા વિદ્યમાન રહે છે. અને તેમની માન્યતા સ્વીકારવામાં આવે તો સર્વદા મરણ
થવાનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થશે. તેથી તેમની તે માન્યતા ખોટી છે. “ચાવિય” આ પદનો

સમ્પ્રત્યુપસંહરન્નાહ—‘સે ત્તં જાણયસરીરદ્વાવસ્યય’ ઇતિ । તદેતત્ જ્ઞા ક
શરીરદ્વાવસ્યકં વર્ણિતમ્ । ઇતિ ॥ સૂ૦ ૧૭॥

હैं । इतना बतनकर अब सूत्रकार इसका उपसंहार करते हुए कहते हैं कि—
(से त्तं जाणयसरीरद्व्यावस्यं) इस प्रकार पूर्वोक्त ज्ञायकशरीरद्रव्यावश्यक
का यह वर्णन है ।

भावार्थ—सूत्रकारने इस सूत्र द्वारा ज्ञायकशरीर द्रव्यावश्यक का स्वरूप
वर्णन किया है । यह बात पहिले स्पष्ट की जा चुकी है कि भूत या भवि-
ष्यत् का कारण ही द्रव्य होता है । अतः जो साधु आदि आश्रयशास्त्र को
जान रहा है परन्तु उसका उसमें उपयोग नहीं है ऐसा वह साधु आदि का
जीव द्रव्यावश्यक है । इस द्रव्यावश्यक का भेद ही नोआगम द्रव्यावश्यक है ।
जिस साधुने पहिले आवश्यक सूत्र का सविधिज्ञान प्राप्त कर लिया था और
जब वह पर्याप्तान्तरित होता है—तो उसका वह निजीव शरीर आवश्यक सूत्र
के ज्ञान से सर्वथा अभावविशिष्ट होने के कारण ही नोआगमज्ञायकशरीर-
द्रव्यावश्यक है । आगमज्ञान जिस में बिल्कुल नहीं है ऐसा वह शरीर उस
आगम के ज्ञाता का है कि जिसने उन आगम को जाना तो था परन्तु वह
उसमें उपयोग से विहीन था । इस तरह नोआगमज्ञायक शरीर द्रव्यावश्यक
पदों के अर्थ से वह निजीव शर्यादिगत साधु का शरीर नोआगमज्ञायक

પ્રયોગ કરીને એ વાતનું પ્રતિમાદન કરવામાં આવ્યું છે કે જ્યારે આયુર્કર્મનો
ક્ષય થાય છે ત્યારે જ પ્રાણીએનાં પ્રાણ શરીરમાંથી નીકળી જાય છે.

હવે સૂત્રકાર આ સૂત્રનો ઉપસંહાર કરતાં આ પ્રમાણે કહે છે—(સે ત્તં જાણય
સરીરદ્વાવસ્યયં) આ પ્રકારનું પૂર્વોક્ત જાયક શરીર દ્રવ્યવસ્યકનું સ્વરૂપ છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા જાયક શરીર દ્રવ્યવસ્યકના સ્વરૂપનું વર્ણન
કર્યું છે. એ વાત તો પહેલાં સ્પષ્ટ કરવામાં આવી ચુકી છે કે જૂન અથવા ભવિષ્ય
પર્યાયનું કારણ જ દ્રવ્ય હોય છે તેથી જે સાધુ આદિ આવશ્યકશાસ્ત્રને જાણી ગયો
છે, પણ તેમાં તેનો ઉપયોગ નથી એટલે કે જે અનુપયુક્તતા સંપન્ન છે, એવાં
તે સાધુ આદિનો જીવ દ્રવ્યવસ્યક કહેવાય છે.

“નોદ્રવ્યવસ્યક” આ દ્રવ્યવસ્યકનો એક ભેદ છે.

જે સાધુએ પહેલાં આવશ્યક સૂત્રનું સવિધિ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી લીધું હતું. એવા
સાધુનો જીવ જ્યારે મનુષ્યપર્યાયમાંથી નીકળીને અન્ય પર્યાયમાં આવ્યો જાય છે.
ત્યારે તેનું તે નિર્જીવ શરીર આવશ્યક સૂત્રના જ્ઞાનથી સર્વથા અભાવવિશિષ્ટ (રહિત)
થઈ જાય છે. તે કારણે તેના તે નિર્જીવ શરીરને નો આગમજાયક શરીર દ્રવ્યવસ્યક
રૂપ કહેવામાં આવે છે. આગમજ્ઞાન જેના બિલકુલ નથી. એવું તે શરીર તે
આગમજ્ઞાતાનું છે કે જેણે તે આગમને જાણ્યો તો હતો પણ તે તેમાં
ઉપયોગથી વિહીન (અનુપયુક્ત) હતો. આ રીતે નોઆગમ જાયક શરીર

અથ દ્વિતીયભેદં નિરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ—સે કિં તં મવિયસરીરદઢ્વાવસ્સયં ? મવિયસરીર-
દઢ્વાવસ્સયં જે જીવે જોણિ મ્મણનિવ્વતે ઇમેણં ચે વ આત્તણ્ણં
સરીરસમુસ્સણં જિવોવદિદ્દેણં માવેણં આદસ્સણ્ણત્તિપયં સેયકાલે
સિવિવ્વસ્સઈ ન તાવ સિવ્વવાઈ । જહા કો દિદ્ધંતો ? અય મહુકુમ્ભે
મવિસ્સઈ, અયં ઘયંકુમ્ભે મવિસ્સઈ । સે તં મવિયસરીરદઢ્વાવસ્સયં । સૂ. ૦ ૧૮ ।

છાયા—અથ કિં તદ્ મવ્યશરીરદ્રવ્યાવશ્યકમ ? મવ્યશરીર દ્રવ્યાવશ્યક
યો જીવો યોનિજન્મનિષ્ક્રાન્તઃ અનેનૈવ આત્તકેન શરીરસમુચ્છયેણ જિનોપદિષ્ટેન
શરીર દ્રવ્યાવશ્યક હૈ । અનેવ વિધ તપરયાઓં સે જિનકા શરીર પરિશોષિત હો
રહા હૈ એસે સાધુજનોં ને જહાં સુયમેવ જાકર મક્ત પ્રત્યાખ્યાનરૂપ અનશન કો
ક્રિયા હૈ કરતે હૈ ઓર આગે મી વરેંગે ઉસ સ્થાનવા નામ સિદ્ધશિલાતલ
હૈ । અથવા જહાંપર જો કોઈ મહર્ષિ સંસ્તારક કરકે મર્ગધર્મકો પ્રાપ્ત ક્રિયા હો
ઉસ સ્થાન વા નામ સિદ્ધ શિલાતલ હૈ । ॥ સૂ. ૦ ૧૭ ॥

અવ સૂત્રધાર નોઆગમ દ્રવ્યાવશ્યક વા જો દૂસરા ભેદ મવ્યશરીર
દ્રવ્યાવશ્યક હૈ—ઉસકિ પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

“સે કિં તં મવિયસરીરદઢ્વાવસ્સયં ઇત્યાદિ—॥ સૂ. ૦ ૧૮ ॥

શબ્દાર્થ—(અથ) શિષ્ય પૂછતા હૈ કિં હે મદન્ત ! (તં મવિયસરીર-
દઢ્વાવસ્સયં કિં) પૂર્વપ્રક્રાન્ત મવ્યશરીરદ્રવ્યાવશ્યક વા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

દ્રવ્યાવશ્યક” આ પદોના અર્થની અપેક્ષાએ તે નિર્ણય શબ્દાદિગત સાધુનું શરીર નો
આગમ જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યાવશ્યક છે.

અનેક પ્રકારની તપસ્યાઓ વડે જેનું શરીર પરિશોષિત થઈ રહ્યું છે. એવાં
સાધુઓ જ્યાં જાતે જ જઈને આહારપાણીના પ્રત્યાખ્યાનરૂપ અનશન ધારણ કરે
છે. ધારણ કરતા હતા અને ધારણ કરશે. તે સ્થાનનું નામ ‘સિદ્ધશિલાતલ’ છે.
અથવા જે સ્થાને કોઈ મહર્ષિ થઈ ગયા હોય તે સ્થાનને સિદ્ધશિલાતલ કહે છે. સૂ. ૧૭

હવે સૂત્રધાર લવ્ય શરીર દ્રવ્યાવશ્યક નામનો નો આગમદ્રવ્યાવશ્યકનો જે બીજો
ભેદ છે તેની પ્રરૂપણા કરે છે—“સે કિં તં મવિયસરીરદઢ્વાવસ્સયં ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(અથ) હવે શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (તં મવિયસરીર-
દઢ્વાવસ્સયં કિં) હે ભગવન્ ! પૂર્વોક્ત લવ્ય દ્રવ્યાવશ્યકનું કેવું સ્વરૂપ છે ?

ભાવેન આવશ્યકેતિ પદમ્ એકાલે શિક્ષિયતે, ન તાવત્ શિક્ષતે । યથા
કો દૃષ્ટાન્તઃ ? અયં મધુકુમ્ભો ભવિષ્યતિ, અયં ઘૃતકુમ્ભો ભવિષ્યતિ । તદેતત્
ભવ્યશરીરદ્રવ્યાવશ્યકમ્ ॥ સૂ. ૧૮ ॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—સે કિં તં ભવિયસીરદવાવસસય' ઇતિ અથ
કિં તદ્ ભવ્યશરીરદ્રવ્યાવશ્યકમ્ ? ઉત્તરમાહ—'ભવિ' સરીરદવાવસસય' ઇતિ
ભવ્યશરીરદ્રવ્યાવશ્યકં=ભવિષ્યતીતિ મંદઃ—વિવક્ષિતપર્યાયયોગ્ય इत्यर्थः, तस्य
शरीरं तदेव भविभावावश्यककारणत्वाद् द्रव्यावश्यकं—भव्यशरीरद्रव्यावश्यकं
वर्ण्यते इत्यर्थः । यो जीव—योनिजन्मनिष्क्रान्तः=योन्धः=योनिमध्यात्—जन्म
काले निष्क्रान्तः=निर्गतो न तु पूर्णसमयात् पूर्वमेव गर्भात् पतितो अनेक आत्त-
केन=गृहीतेन शरीरसमुच्छ्रयेण जिनोपदिष्टेन भावेन आवश्यकेति पदम्=आव-
श्यकशास्त्र भविष्यत्काले शिक्षिष्यते=अध्येष्यते, न तावत्-संप्रति शिक्षते ? एवं
विधं शरीरं भव्यद्रव्यावश्यकं मंदति । अत्रापि आगमाभावमाश्रित्य नोआगमत्वं
बोध्यम्, तस्मिन् समये तत्र शरीरे सर्वथाऽऽगमस्याऽभावात् । नो शब्देऽत्र
आगमस्य सर्वथा निषेधं सूचयति ।

ઉત્તર—(જે જીવે જોળિજન્મણનિવરંતે ઇમેણં ચેવ આત્તણં સરીસમુસ-
ણં જિણોવદિદ્દેણં આવસ્સણં તિ પયં સેયકાલે સિવિસ્વસ્સહ ન તાવસિસ્વાહ
ભવિયસીરદવાવસસયં) જો જીવ ઉત્પત્તિસ્થાનરૂપ યોનિ સ્થે અપના સમયપૂર્ણ
કારકે હી નિકલાં હૈ—સમય કે પહિલે વીચ મેં ઉત્પન્ન નહીં હુઆ હૈ—એસા
વહ જીવ ઉસ પ્રાપ્ત શરીર સે જિનોપદિષ્ટ ભાવકે અનુસાર આશ્યકશાસ્ત્ર કો
ભવિષ્યતકાલ મેં સીખેગા—વર્તમાન કાલમેં સીખ નહીં રહા હૈ એસા વહ શરીર
ભવ્યશરીર દ્રવ્યાવશ્યક હૈ । હસ ભવ્યશરીર દ્રવ્યાવશ્યક મેં મી આગમ કે
અભાવ કો લેકર નો આગમતા જાનની ચાહિયે । ક્યોં કિ ઉસ સમય ઉસ

ઉત્તર—(જે જીવે જોળિજન્મણનિવરંતે ઇમેણં ચેવ આત્તણં સરીસમુસણં
જિણોવદિદ્દેણં ભાવેણં આવસ્સણં તિ પયં સેયકાલે સિવિસ્વસ્સહ ન તાવસિસ્વાહ
ભવિયસીરદવાવસસયં) જે જીવ ઉત્પત્તિસ્થાનરૂપ યોનિમાંથી પોતાનો સમયપૂરો
કરીને જે બહારનીકળ્યો છે સમય પૂરો થયા પહેલા બહારનીકળ્યો નથી એટલે કે ગર્ભમાંથી
પૂરો સમય વ્યતીત થયા પહેલાં પતિત થયો નથી, એવો તે જીવ તે પ્રાપ્ત શરીર
પડે જે જિનોપદિષ્ટ ભાવ અનુસાર આવશ્યકશાસ્ત્રને ભવિષ્યમાં શિખશે—વર્તમાન
કાળમાં તે તેને શીખી રહ્યો નથી, એવાં તે લગ્ય જીવનું શરીર 'ભવ્યશરીર દ્રવ્યા-
વશ્યક' કહેવાય છે. આ લગ્યશરીરદ્રવ્યાવશ્યકમાં પણ આગમના અભાવને લીધે
નોઆગમતા (આવશ્યકશાસ્ત્રના જ્ઞાનનો સર્વથા અભાવ) બાણવી, કારણ કે તે સમયે

ननु-आवश्यकपर्यायस्य कारणं द्रव्यावश्यकत्वमुच्यते-तदानीं तत्र शरीरे आगमाभावात् तस्य नास्ति ते प्रति कारणत्वम्, अतोऽयं शरीरे नास्ति द्रव्यावश्यकत्वम् ? इति चेत्, उच्यते-तदानीमपि तत्र द्रव्यावश्यकत्वमुपचर्यते इति नास्ति कोऽपि दोषः। अत्र दृष्टान्तजिज्ञासया शिष्यः पृच्छति-‘जहा को दिदृतो’ इति। यथा को दृष्टान्तः हे भदन्त। अत्र यथा कोऽपि दृष्टान्तो भवेत्, तथा ब्रवीतु ? उत्तरमाह-‘अयं महुकुं मे भविस्सइ, अयं घटकुं मे भविस्सइ’ इति। अयं मधुकुम्भो भविष्यति, अयं घृतकुम्भो भविष्यति। अयं भावः-घृतरक्षणाय मधुरक्षणाय च कुम्भ-शरीर में आगम वा सर्वथा अभाव है। नो शब्द इस समय के शरीर में आगम का सर्वथा निषेध सूचित करता है।

शंका-आवश्यक पर्याय का जो कारण होता है वह द्रव्यावश्यकत्व कहा जाता है। इस समय के शरीर में तो आगम का सर्वथा अभाव है, इसलिये उस शरीर को द्रव्यावश्यक के प्रति कारणता नहीं होने से उसमें द्रव्यावश्यकता कैसे आसक्त होती है ?

उत्तर-उस समय भी उसमें द्रव्यावश्यकता उपचार किया जाता है। क्योंकि यह शरीर आगे चलकर इसी पर्याय में आवश्यकशास्त्र वा ज्ञाता बनेगा-परन्तु वर्तमान में नहीं है। इसलिये आवश्यकशास्त्र वा भाविगाल संबंधी अनुपयुक्त ज्ञातृत्व वा उसमें उपचार करके उसका सर्वथा निषेध किया गया है। इस विषय में दृष्टान्त जानने की इच्छा से शिष्य पृच्छति है कि हे भदन्त ! (जहा को दिदृतो) यहां पर जैसा दृष्टान्त हो वैसा आप कहिये

ते शरीरमां आगमनो सर्वथा अलाव न होय छे। “नो” पद ते समये शरीरमां सर्वथा निषेध सूचित करे छे।

शंका-आवश्यकपर्यायनुं जे कारण होय छे, तेने द्रव्यावश्यक कहिवांमां आवे छे। अतएवे तो तेना शरीरमां आगमनो सर्वथा अलाव न छे। आ रीते शरीरमां द्रव्यावश्यकता कारणनो न सहलाव न होवा छतां पुण तेमां द्रव्यावश्यकता केवी रीते संलवी शके छे ?

उत्तर-आ समये तो तेमां द्रव्यावश्यकतानो उपचार करवांमां आवे छे ओटले के आ अथनने औपचारिक इथन न समजवु जेहोने कारण के आ शरीर आगम जतां आ मनुष्य पंथयिमां न आवश्यकशास्त्रनो ज्ञाता बनवाने। १-वर्तमानमां तो ते तेना ज्ञाता नथी। तेही आवश्यकशास्त्रना विविधता सगधी अनुपयुक्त ज्ञातृत्वनो तेमां उपचार करीने तेना सर्वथा निषेध करवांमां आवे छे।

आ विषयने दृष्टान्तही समजवा भाटे शिष्य गुरुने आ प्रमाणे ‘कहे छे- (जहा को दिदृतो) हे भदन्त ! आ विषयनुं प्रतिपादन करतुं कोछ दृष्टान्त कहैवांनी कृपा करे। शुद्ध महाराज आ विषयनुं प्रतिपादन करवा निमित्त नीचेनुं दृष्टान्त ओहो छे

કારેણ ઘટૌ નિર્મિતૌ । તતઃકોઽપિ તં પૃથ્વાન્—કિમર્થૌ એતૌ ઘટૌ ? કુમ્ભ-
કારઃ કથયતિ અયં ઘૃતકુમ્ભો ભવિષ્યતિ, અયં તુ મધુકુમ્ભો ભવિષ્યતિ, इति ।
યથા ભવિષ્યદ્ઘૃતાધારત્વપર્યાયં મધ્વાધારત્વપર્યાયં તદાનીમપ્યાશ્રિત્ય ઘૃતકુમ્ભો
મધુકુમ્ભશ્ચેતિ વ્યપદિષ્યતે, તથાઽપિ ભાવિનઃ દ્રવ્યાવશ્યકપર્યાયકારણત્વ-

(અયં મધુકુમ્ભે ભવિરસઙ્, અયં ઘયકુમ્ભે ભવિરસઙ્) સુનો દૃષ્ટાન્ત : સ વિષય મેં
ઇસ પ્રકાર હૈ—ઘૃત રાખને કે લિયે, ઓર મધુ રાખને કે લિયે, કિસી કુંભાર
ને દો ઘડે બનાયે । ઉન્હેં દેખાર કિસીને ઉસસે પૂછા કિ યે કિસલિયે તુમને
બનાયે હૈ—તબ ઉસને ઉસસે કહા કિ યહ ઘૃત કુંભ હોગા ઓર યહ મધુકુંભ
હોગા । તો જિસ પ્રકાર ઉસ સમય ભવિષ્યત્ ઘૃતાધારત્વરૂપ પર્યાય ઓર મધ્વા-
ધારત્વરૂપ પર્યાય વા ઉન દોનોં મેં આશ્રય કર ઉન્હેં વહ ઘૃત કુંભ ઓર મધુ-
કુંભ ઇસરૂપ કે કહ દેતા હૈ, ઉસી તરહ ઇસ સમય કે શરીર મેં 'મી ભાવિ
આવશ્યકરૂપ પર્યાય' કે પ્રતિ કારણતા કો લેકર ઉસે દ્રવ્યાવશ્યકરૂપ સે માન
લિયા જાતા હૈ । ઇસ દ્રવ્યાવશ્યકરૂપ ભવ્યશરીર મેં વર્તમાન મેં આવશ્યક કે
અર્થજ્ઞાન વા સર્વથા અભાવ હૈ ઇસલિયે ઉસમેં નોઆગમતા જાનની ચાહિયે ।
ઇમ તરહ યહ પ્રક્રાન્ત (પૂર્વપ્રસ્તુત) ભવ્યશરીર દ્રવ્યાવશ્યક કા વર્ણન કિયા ।

તાત્પર્ય ઇસકા યહ હૈ કિ—સૂત્રકારને ઇસ સૂત્રદ્વારા ભવ્યશરીર દ્રવ્યા
વશ્યક કા સ્વરૂપ પ્રકટ કિયા હૈ । મનુષ્ય પ્રાપ્ત શરીર સે જા આગે આવશ્યક

(અયં મધુકુંભે ભવિસ્સઙ્, અયં ઘયકુંભે ભવિરસઙ્) કેઠ એક કુંભારે મધ
ભરવાને માટે તથા ઘી ભરવાને માટે બે ઘડા બનાવ્યા. તે બન્ને ઘડાને જોઈને
કેઠએ તેને એવો પ્રશ્ન પૂછ્યો કે “આ બે ઘડા તમે શા માટે બનાવ્યા છે ?”
ત્યારે કુંભારે એક ઘડો બતાવીને કહ્યું કે “આ મધુકુંભ છે” અને બીજો ઘડો
બતાવીને કહ્યું કે “આ ઘૃતકુંભ છે” જે પ્રકારે ભવિષ્યકાલિન ઘૃતાધારત્વરૂપ પર્યાય
અને મધુ આધારત્વરૂપ પર્યાયનો તે બન્ને ઘડામાં આશ્રય લઈને ત્યારે પણ તેમને
ઘૃતકુંભ અને મધુકુંભ રૂપે ઓળખવામાં આવે છે—(જો કે વર્તમાનકાળે તો તેમાં
ઘૃત પણ નથી અને મધ પણ નથી) એજ પ્રમાણે આ સમયના શરીરમાં પણ
ભવિષ્યકાલિન આવશ્યકરૂપ પર્યાયના કારણનો સદ્ભાવ હોવાને કારણે તેને દ્રવ્યાવશ્યક
રૂપે માની લેવામાં આવે છે. આ દ્રવ્યાવશ્યકરૂપ ભવ્યશરીરમાં વર્તમાન કાળે તો
આવશ્યકના અર્થજ્ઞાનનો સર્વથા અભાવ જ છે. તે કારણે તેમાં “નોઆગમતા”
સમજવી. પૂર્વપ્રક્રાન્ત (પૂર્વપ્રસ્તુત) ભવ્યશરીરદ્રવ્યાવશ્યકનું આ પ્રક્રાન્તું સ્વરૂપ છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા ભવ્યશરીર દ્રવ્યાવશ્યકનું સ્વરૂપ પ્રકટ કર્યું
છે. જે મનુષ્ય પ્રાપ્ત શરીર દ્વારા જ ભવિષ્યમાં આવશ્યકસૂત્રનો અનુપયુક્ત જ્ઞાતા

माश्रित्य द्रव्यावश्यकत्वं विज्ञेयमिति । भव्यशरीरे आवश्यकार्थज्ञानाभावान्नो-
 आगमत्वं बोध्यम् । तदेतद् भव्यशरीरद्रव्यावश्यकं वर्णितम् ॥सू० १८॥

अथ तृतीयभेदं निरूपयितुमाह—

मूलम्—से किं तं जाणयसरीरभवि सरीरवइरित्तं दव्वावस्सयं
जाणयसरीरभवियसरीरवइरित्तं दव्वावस्सयं तिवि पणत्तं । तं
जहा—लोइयं, कुप्पावयणियं, लोउत्तरियं ॥ सू० १९ ॥

छाया—अथ किं तद् ज्ञायकशरीरमव्यशीरव्यतिरिक्तं द्रव्यावश्यकम् ।
 ज्ञायकशरीरम् = शरीरव्यतिरिक्तं द्रव्यावश्यकं त्रिविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा लौकिकं,
 कुप्रावचनिकं, लोकोत्तरिकम् ॥सू० १९॥

टीका-शिष्यः पृच्छति—‘से किं तं’ इत्यादि । अथ किं तद् ज्ञायः शरी-
भवः शरीरव्यतिरिक्तं द्रव्यावश्यम् ? उत्तरमाह—‘जाणयसरीरभवियसरीरवहरित्तं’

शास्त्र का अनुपयुक्त ज्ञाता बनेगा उस का वह शरीर द्रव्यावश्यक है। वर्तमान में वह ऐसा नहीं है, अतः उसका उसमें उपचार करलिया जाना है। इस द्रव्यवशक में आवश्यक का अर्थज्ञान बिलकुल नहीं है। इसलिये इसे नो-आगम की अपेक्षा वह भव्यशरीर द्रव्यावश्यक है। ॥ सूत्र १८ ॥

अब सूत्रकार तृतीय भेद के स्वरूप का निरूपण करते हैं—

से किं तं जाणयसरीरभवियसरीरवइरितं इत्यादि । ॥ सू० १९ ॥

शब्दार्थ—(से) शिष्य पूछता है कि हे भदंत ! (त) जाणयसरीर भविष्य
सरीर वहरित्तं दब्बावरसयं किं) पूर्व प्रक्रान्त (पूर्वप्र-तुत) ज्ञायकशरीर भव्यशरीर
व्यतिरिक्त द्रव्यावश्यक वा क्या स्वरूप है ? उत्तर—(जाणयसरीरभविष्यसरीर-

ધનવાનો છે, તેના તે શરીરને દ્રવ્યાવશ્યકરૂપે અહીં પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે. વર્તમાનકાળે તે એવું નથી, તેથી તેનો તેમાં ઉપચાર કરી લેવામાં આવે છે આ અપેક્ષાએ, તેને દ્રવ્યાવશ્યક ધનાવી લેવામાં આવે છે. આ દ્રવ્યાવશ્યકતાં આવશ્યકનું અર્થજ્ઞાન ણિલકુલ નથી, તેથી નોઆગમની અપેક્ષાએ તેને લબ્યશરીર દ્રવ્યાવશ્યક રહેવામાં આવ્યું છે.-॥ સૂ० ૧૮ ॥

હવે સૂત્રકાર ઉપર્યુકત યન્ત્રેથી લિન્ન એવા 'નોઆગમદ્રવ્યાવશ્યક' ના ત્રીજા
લેદનું સ્વરૂપ સમજાવે છે-“સે કિં તં જાણયસીરમવિયસી. વહરિતં” ઇત્યાદિ--

શબ્દાર્થ-શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (સે તં જાણયસરીર ભવિયસરી-
ચરિતં દન્વાવસ્સયં કિં) હે ભગવન્ ! પૂર્વપ્રરતુત જ્ઞાયકશરીર ભવ્યશરીર વ્યતિ-
રિકત દ્રવ્યાવશ્યકત્વં સ્વરૂપ કેવું છે ? એટલે કે જ્ઞાયકશરીર અને ભવ્યશરીરથી ભિન્ન
એવા દ્રવ્યાવશ્યકત્વં સ્વરૂપ કેવું છે ?

इत्यादि । ज्ञायकशरीर भव्यशरीरव्यतिरिक्तं ज्ञायकशरीर भव्यशरीराभ्यां व्यतिरिक्तं
= भिन्नं द्रव्यावश्यकं त्रिविधं प्रहस्यम् । तथा—लौकिकं, कुप्रावचनिकं च ॥ सू० १९ ॥

तत्र ज्ञायकशरीर भव्यशरीरव्यतिरिक्तलौकिक द्रव्यावश्यकं प्रथमं भेदं निरूपयितुमाह—

मूलम्—सै किं तं लोइयं दव्वावस्सयं लोइयं दव्वावस्सयं जे इमे
राईसरतलवर माडंबियकोडुंबियइब्भसेट्टि सेणावइ सत्थवाहप्पभिइओ
कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए सुविमलाए फुल्लुप्पलकमलकोमल्लुम्मि-
लियम्मि अहापंडुरे पभाए रक्तासोगप्पगासकिंसुयसुयमुहगुंजद्ध-
रागसरिसे कमलागरनल्लिणिसंडबोहए उट्टियम्मि सूरे सहस्सर-
स्सिमि दिणयरे तेयसा जलंते मुहधोयणदंतपक्खालण-तेह-ण्हाण-
फणिहसिद्धत्थय-हरि आलिय-अद्दागध्ववपुप्फमल्लगंधतंबोलवत्थाइ
याइं दव्वावस्सयाइं करेति । तओ पच्छा रायकुलं वा देवकुलं वा
आरामं वा उज्जाणं वा सभं वा पवं वा गच्छंति से तं लोइयं दव्वा-
वस्सय ॥ सू० २० ॥

છાયા--અથ કિં તદ્ લૌકિકં દ્રવ્યાવશ્યકમ્ ? લૌકિકં દ્રવ્યાવશ્યકં--ય

વડરિત્તં દવ્વાવસ્સયં તિવિહં પળ્ણત્તં) જ્ઞાયકશરીર ભવ્યશરીર વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યા-
વશ્યક ત્રીન પ્રકાર કા વહા હૈ--(તં જહા) વે પ્રકાર યે હૈ--(લોઈયં કુપ્પાવય-
ણિયં લોઉત્તરિયં) લૌકિક કુપ્રાવચનિક ઓર લૌકોત્તરિક । ॥ સૂ०-૧૯ ॥

અવ સૂત્રકાર તદ્વ્યતિરિક્ત લૌકિક દ્રવ્યાવશ્યકરૂપ પ્રથમ ભેદ કા
કથન કરતે હૈ--સે કિં ત લોઈયં દવ્વાવસ્સયં" ઇત્યાદિ । ॥ સૂત્ર ૨૦ ॥

શબ્દાર્થ--સે કિં તં શિષ્ય પૂછતા હૈ કિં હૈ મદંત ! (તં લોઈયં દવ્વાવસ્સયં

ઉત્તર--(જાણયસરીર ભવિયસરીર વડરિત્તં દવ્વાવસ્સયં તિવિહં પળ્ણત્તં)
જ્ઞાયકશરીર ભવ્યશરીર વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાવશ્યકના ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે. (તંજહા) તે
પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે--(લોઈયં કુપ્પાવયણિયં લોઉત્તરિયં) (૧) લૌકિક, (૨)
કુપ્રાવચનિક અને (૩) લૌકોત્તરિક ॥ સૂ. ૧૯ ॥

હવે સૂત્રકાર તદ્વ્યતિરિક્ત લૌકિક દ્રવ્યાવશ્યકરૂપ પહેલા ભેદનું સ્વરૂપ સમજાવેછે.

"સે કિં તં લોઈયં દવ્વાવસ્સયં" ઇત્યાદિ--

શબ્દાર્થ--(સે) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે-છે કે હે-ભગવન્ ! (તંલોઈયં

इमे राजेश्वरतल-रमाडम्बिककौटुम्बिकेभ्यश्चेष्टिसेनापतिसार्थवाहप्रभृतयः कल्पे प्रादुप्रभातायां रजन्वां सुविमलायां फुल्लोत्पलकमलकोमलोन्मीलिते- यथापाण्डुरे प्रभाते रक्ताशोकप्रकाशकिंशुकशुकमुखगुञ्जार्द्धरागसदृशे कमलाकरनलिनीपण्ड- बोधके उत्थिते सूर्ये सहस्ररश्मौ दिनकरे तेजसा ज्वलति मुखधावनदन्तप्रक्षालन

किं) लौकिक द्रव्यावश्यक रूप प्रथम भेद का क्या स्वरूप है? (लो.यं दद्वा- वस्सयं) उत्तर-लौकिक द्रव्यावश्यक का स्वरूप इस प्रकार से है-(जे इमे राईसर, तलवरमाडंबिय, कोडुंबिय, इब्म, सेट्टि, सेणावड, सत्थवाहप्पभिइओ) जो ये राजेश्वर-मांडलिकनरपति, ऐश्वर्य संपन्नव्यक्ति, तलवर, मांडंबिक कौटु- म्बिक, इभ्य, श्रेष्ठी, सेनापति, सार्थवाह आदि मनुष्य (कल्लं) सामान्य प्रभात के होने पर (पाउप्पभायाए रयणीए) प्रारंभिक अवस्था प्राप्त है प्रभात जिस में ऐसी रात्रि के होने पर (सुविमलाए, फुल्लुत्पलकमलकोमलुम्मिलियम्मि) तथा पूर्व की अपेक्षा स्फुटतर प्रकाश संपन्न रात्रि के होने पर विकसित कमल के पत्रों के और मृगविशेष के नयनों के सुकुमार उन्मीलनवाले (अहापंडुरे) यथा योग्य पीतमिश्रित शुक्ल (पभाए) प्रभात के होने पर (रक्तासोगप्पगासकिं सुयसुयमुहगुं जद्धरागसरिसे) तथा रक्त अशोकवृक्ष की कान्ति के तथा पलाश पुष्प, और शुक मुख एवं गुंजार्ध के राग के सदृश (कमलागरनलिणि संडवोहए) कमलों की उत्पत्ति भूमिरूप हृदादिजलाशयों में पत्रवनों के विकाराश (सहस्सरस्सिम्मि

दद्वावस्सयं किं?) लौकिक द्रव्यावश्यक रूप ते प्रथम भेदनु स्वरूप केवुं छ?

उत्तर--(लोइयं दद्वावस्सयं) लौकिक द्रव्यावश्यकनु स्वरूप आ प्रकारनु छ-

(जे इमे राईसर, तलवर, माडंबिय, कोडुंबिय, इब्म, सेट्टि, सेणावड, सत्थवाहप्पभिइओ) जे आ राजेश्वर (मांडलिक नरपति-अश्वर्यसंपन्न व्यक्ति), तलवर, मांडलिक, कौटुम्बिक, इभ्य, श्रेष्ठी, सेनापति, सार्थवाह आदि मनुष्य (कल्लं) सामान्य प्रभातकाण थतां, (पाउप्पभायाए रयणीए) रात्रि व्यतीत थदने दिवसनी प्रारंभिक अवस्थाइय प्रभातकाणने प्रारंभ थतां, (सुविमलाए, फुल्लुत्पल- कमलकोमलुम्मिलियम्मि) तथा रात्रिकाण पसार थदने परेलां इत्ता स्फुटतर प्रकाशधी संपन्न, विकसित कमलपत्रोधी संपन्न अने मृगविशेषना नदनोना सुकुमार उन्मीलनधी युक्त, (अहापंडुरे) यथायोग्य पीतमिश्रित शुक्ल (आछां पीणां) पभाए) प्रभात थतां, (रक्तासोगप्पगासकिंसुयसुयमुहगुं जद्धरागसरिसे) तथा पाल अशोकवृक्षना प्रमान, पलाशपुष्प समान तथा शुकना मुष्प समान अने गुंजार्ध (अण्णोहीना अधं लाग) समान लाल, (कमलागरनलिणि संडवोहए) कमलोना उत्पत्ति स्थानइय हृदादि जलाशयोभां पत्र वनोने विकसित करनार, (सहस्सरस्सिम्मि दिणयरे तेयसा

તૈલસ્નાનફણિહસિદ્ધાર્થકહરિતાલિકાઽઽદર્શધૂપપુષ્પમાલ્યગન્ધતામ્બૂલવસ્ત્રાદિકાનિ દ્રવ્યા-
વશ્યકાનિ કુર્વન્તિ । તતઃપશ્ચાત્ રાજકુલં વા દેવકુલં વા આરામં વા ઉદ્યાનં
વા સભાં વા પ્રપાં વા ગચ્છન્તિ । તદેતત્ લૌકિકં દ્રવ્યવશ્યકમ્ ॥સૂ. ૨૦॥

ટી. ૧—શિષ્યઃપૃચ્છતિ—‘સે કિં તં’ इत्यादि । अथ किं तद् लौकिकं
द्रव्यावश्यकम् इति । उन्तरमाह—लौकिकं—लोके भवं लौकिकं द्रव्यावश्यकं वर्णिते

दिणयरे तेयसा जलंते) सहस्रविरणां से युक्त, दिवसविधायक और तेज से
देदीप्यमान ऐसे (सूरे उड्डियम्मि) सूर्य के उदित होने पर (मुहधोयण—दंतपत्रखा-
लण—तेल—पहाणफणिह—सिद्धत्थय—हरि—अदागधू-पुष्पमल्लगंधतंबूलवत्था याइं
द्रव्यावश्यकं करेति) मुँह का धोना दन्तों का पक्षालन करना फणिह
—कंची से बालों का ऊछना, मङ्गलनिमित्त सरसों का और दुर्वा का प्रक्षेपण
करना, दर्पण में मुँह का अवलोकन करना, धूप से वस्त्रों को सुरभित करना,
फूलों को लेना, पुष्पों की माला पहिरना पान खाना, और शुद्ध वस्त्रों का
पहिरना इत्यादिरूप द्रव्यावश्यक करते हैं । (तओ पच्छा) इसके बाद वे (रायकुलं वा
देवकुलं वा आरामं वा उज्जाणं वा सभं वा, पवं वा गच्छन्ति) राजकुल में, या
देवकुल में अथवा आराम में या उद्यान में, या सभा में अथवा पानीयशाला
में जाते हैं । तात्पर्य इसके बहने का यह है कि राजेश्वरादि संबन्धी जो
मुखधाःनादि कार्य हैं वह सब लौकिक द्रव्यावश्यक हैं । राजा जिन्हें

जलंते) सहस्र (કિન્નોર્થી) યુક્ત, દિવસ વિધાયક અને તેજથી દેદીપ્યમાન એવા
(સૂરે ઉડ્ડિયમ્મિ) સૂર્યને ઉદય થતાં (મુહધોયણં, દંતપત્રચાલણં, તેલ, પહાણ-
ફણિહ, સિદ્ધત્થય, હરિ, અદાગધૂપ, પુષ્પમલ્લગંધતંબૂલવત્થાદ્યાઈં દ્રવ્યાવ-
શ્યકં કરેતિ) મુખ ધોવારૂપ, દાંત સાફ કરવા રૂપ શરીર પર તેલનું
માલિશ કરવારૂપ, સ્નાન કરવારૂપ, દાંતિયા કે કાંસકી વડે વાળ ઓળવારૂપ, મંગળ
નિમિત્તે સરસવ અને દુર્વાનું પ્રક્ષેપણ કરવારૂપ, દર્પણમાં પોતાના મોઢું અવલો-
કન કરવારૂપ, સુગંધયુક્ત ધૂપથી વસ્ત્રોને સુગંધિત કરવારૂપ, ફૂલો ગ્રહણ કરવારૂપ,
ફૂલોની માળાઓપહેરવારૂપ, પાન ખાવારૂપ, સ્વચ્છ વસ્ત્રોને પરિધાન કરવારૂપ ઇત્યાદિ-
રૂપ દ્રવ્યાવશ્યક કરે છે (તઓ પચ્છા) ત્યારબાદ તેઓ (રાયકુલં વા, દેવકુલં વા,
આરામં વા, ઉજ્જાણં વા, સભં વા, પવં વા, ગચ્છન્તિ) રાજદરબારમાં, અથવા દેવ
સ્થાનમાં, અથવા આરામગૃહમાં અથવા ખાતમાં, અથવા સભામાં અથવા જગતશય
તન્દ્ર બાય છે.

આ સમસ્ત કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે રાજેશ્વર આદિ ઉપર્યુક્ત માણસોના
એ મુખધાવન આદિ કાર્યો છે તે સૌને લૌકિક દ્રવ્યાવશ્યકરૂપ ગણવામાં આવ્યા છે.

इत्यर्थः । ये इमे मनुष्याः राजेश्वरतलवरमाण्डविककौटुम्बिकेभ्यश्चेष्टितेनापति
सार्थवाहप्रभृतः, तत्र—राजानः=माण्डलिका नरपतयः, ईश्वराः=ऐश्वर्यसम्पन्नाः,
तलवराः=भूपालदत्तपट्टपरिभूषितराजबल्पाः कौटुपाला इत्यर्थः छिन्नभिन्नजनाश्रय-
विशेषो मडम्बस्तत्राधिकृताः माडम्बिकाः ग्रामपञ्चशतीपत्य इत्यर्थः, यद्वा—
सार्द्धक्रोशद्वयपरिमितप्रान्तरैर्विच्छिद्यविच्छिद्यस्थितानां ग्रामाणामधिपतयः, कौटु-
म्बिकाः=कुटुम्बभरणे तत्पराः, यद्वा—बहुकुटुम्बप्रतिपालकाः, इभ्याः इभो=हरती तत्प्र-
माणं द्रव्यमर्हन्तीति तथा, ते च जघन्यमध् मोत्कृष्टभेदात् त्रिपकाराः, तत्र हस्ति-
परिमितमणिमुक्ताप्रवालसुवर्णरजतादिद्रव्यराशिस्वामिनो जघन्याः, हस्तिपरिमित
वज्रमणिमाणिक्यराशिस्वामिनो मध्यमाः, हस्तिपरिमितकेवलवज्रस्वामिन

पट्टबन्ध प्रदान करता है उनका नाम तलवर है अर्थात् कोटवाल । ये राजा
जैसे ही होते हैं । छिन्नभिन्न जनाश्रय विशेष का नाम मडम्ब है । इन मडम्बों
में जो अधिकृत होते हैं उ का नाम माडम्बिक है । ये ५०० गांवों के अधि-
पति होते हैं । ढाई २ कोस के अन्तर को छोड़ छोड़ कर जो गांव बसते
हैं उनका नाम भी मडम्ब है । इनके जो अधिपति होते हैं वे माडम्बिक हैं ।
कुटुम्ब के भरणपोषण कार्य में जो रत रहते हैं अथवा अनेक कुटुम्बों का जो
प्रतिपालन करते हैं वे कौटुम्बिक हैं । इभ नाम हाथी का है । हाथी प्रमाण
द्रव्य जिनके पास होता है वे इभ्य है । ये जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट इस
त ह ३ प्रकार के होते हैं । इनमें से जो हस्ति परिमित मणि, मुक्ता, प्रवाल
सुवर्ण और रजत आदि द्रव्यराशि के स्वामी होते हैं वे जघन्य इभ्य हैं ।
हस्तिपरिमित वज्र—हीरा, मणि, और माणिक्य राशि के जो स्वामी होते हैं

हुये आ सुत्रमां वपरायेला तलवर आदि पढोना अर्थ समजववामां आवे
छे—“तलवर” संतुष्ट थाय त्पारे राज जेमना राजपोषाक प्रदान करे छे तेमनु नाम
तलवर छे. तेओ राज जेवां जे होय छे. छिन्नभिन्न जनाश्रयविशेषने मडम्ब कहे
छे. आ उक्तारना मडम्बोना अधिपतिने माडम्बिक कहे छे तेओ ५००-५०० गाभोना
अधिपति होय छे. अथवा अढी अढी गाउने अंतरे जे गाभो वसे छे ते गाभोनु
नाम मडम्ब छे अने तेना अधिपतिने माडम्बिक कहे छे. कुटुम्बना लरण पोषण
ना कार्यमां जेओ रत रहे छे तेमने. अथवा अनेक कुटुम्बोनु परिपालन करनारने
कौटुम्बिक कहे छे. ‘इभ्य’ ओटवे हाथी हाथी प्रमाण धन जेनी पास होय छे.
तेने इभ्य कहे छे इभ्यना नीचे प्रमाणे त्रण प्रकार छे. जघन्य मध्यम अने उत्कृष्ट
हस्तिपरिमित (हाथी प्रमाण) मणि, मोती, प्रवाल, सुवर्ण, रजत (चांदी) आदि
द्रव्यराशिने जे स्वामी होय छे तेने ‘जघन्य’ इभ्य’ कहे छे. हस्तिपरिमित वज्र

ઉત્કૃષ્ટાઃ, શ્રેષ્ઠિનઃ=લક્ષ્મીકૃપાકટાક્ષપ્રત્યક્ષલક્ષ્યમાણદ્રવિણલક્ષણ-
વિલક્ષણહિરણ્યપદ્મમલકૃતમૂર્ધાનો નગરપ્રધાનવ્યવહર્તારિઃ, સેના તથાઃ
=ચતુરંગસેનાનાયકાઃ, સાર્થવાહાઃ=ગણિમ-ધરિમ-મેય-પરિચ્છેદ્યરૂપદ્રવ્યવિક્રેય વસ્તુ-
જાતમાદાય લાભેન્છયા દેશાન્તરાણિ વ્રજતાં સાર્થં વાહયન્તિ=યોગક્ષેમેભ્યો પરિ-
પાલયન્તિ, દીનજ્ઞોપવસાય મૂલધનં દત્ત્વા તાન્ સંવર્દ્ધન્તીતિ તથા, તત્ર-
ગણિમમ્=અકલ્પિતચતુરાદિ સંસ્થાદ્રમેણ ગણયિત્વા યદીતે તથા-નાલિ=ર-પૂર્ણી-

વે મધ્યમ દ્રવ્ય' હૈં । જો હસ્તિ પરિમિત વજ્ર કે હી અકેલે સ્વામી હોતે હૈં વે
ઉત્કૃષ્ટદ્રવ્ય' હૈં । જિન કે પાસ લક્ષ્મી દેવી કે કૃપાકટાક્ષ સે લાભાં કા દ્રવ્ય
હોતા હૈં ઓર હસી કારણ જો નગર સેઠ કી ઉપાધિ સે વિભૂષિત રહા કરતે
હૈં । હસકે ઉપલક્ષ્ય મેં રાજા હૈં સુવર્ણ વા પદ્મવંધ પ્રદાન કરતા હૈં જિસ સે
ઉન કા મસ્તક સદા વિભૂષિત રહા કરતા હૈં । એસે મનુષ્ય શ્રેષ્ઠી વહલાતે
હૈં । ચતુરંગ સેના કે જો નાયક હોતે હૈં ઉનકા નામ સેનાપતિ હૈં । ગણિમ,
ધરિમ, મેય, ઓર પરિચ્છેદ્યરૂપ ક્રય વિક્રય યોગ્ય દ્રવ્યસમૂહ કો લેકર, જો
લાભ કી ઇચ્છા સે દેશાન્તર કા જાતે હુએ મનુષ્યો કે સાથ કો દીનજનો' કે
નિમિત્ત પ્રદાન કર ઉનકા સંવર્દન કરતે હૈં ઉનકા નામ સાર્થવાહ હૈં । અલબ્ધ
વસ્તુ કા લાભ હોના હસકા નામ યોગ ઓર લબ્ધ કા પરિરક્ષણ હોના હસકા
નામ ક્ષેમ હૈં । નારિકેલ-નારિયલ, પૂર્ણીફલ-સુપારી, કદલીફલ-કેળાઆદિ
યે સવ ગણિમ દ્રવ્ય હૈં । વયોંકિ યે એક, દો, ત્રીન, ચાર, આદિરૂપ સે

-હીરા, મણિ અને માણિકની રાશિનો જે સ્વામી હોય છે તેને 'મધ્યમ દ્રવ્ય' કહે છે.
હસ્તિપરિમિત વજ્રનો જે જે સ્વામી હોય છે તેને 'ઉત્કૃષ્ટ દ્રવ્ય' કહે છે.

જેમની પાસે લક્ષ્મીદેવીની કૃપાને લીધે લાખોનું દ્રવ્ય હોય છે. અને તે
કારણે જેને નગરશેઠની પદવી મળી હોય છે. એવા મનુષ્યને શ્રેષ્ઠી (શ્રેષ્ઠ) કહે છે.
આ પદવીના ઉપલક્ષ્યમાં રાજા તેમને સુવર્ણનો પદ્મવંધ પ્રદાન કરે છે તે પદ્મવંધથી તે
શ્રેષ્ઠીનું મસ્તક સદા વિભૂષિત રહે છે. ચતુરંગ સેનાના નાયકને સેનાપતિ કહે છે.

હવે 'સાર્થવાહ' આ પદનો અર્થ સમજાવવામાં આવે છે—

ગણિમ, ધરિમ, મેય, અને પરિચ્છેદ્યરૂપ ક્રયવિક્રયયોગ્ય દ્રવ્યસમૂહને લઈને
લાભ પ્રાપ્તિની ઇચ્છાથી અન્ય દેશ તરફ પ્રયાણ કરતાં મનુષ્યોના સાર્થ (સમૂહ)ને
જે યોગ ક્ષેમપૂર્વક પાળે છે. અથવા તેમને જવાનું હોય તે સ્થાને સલામત રીતે
પહોંચાડે છે, જે પોતાના મૂળ ધનનું ગરીબ લોકોને માટે દાન કરીને તેમનું સંવ-
ર્ધન કરે છે, એવા પુરુષને સાર્થવાહ કહે છે,

અલબ્ધ વસ્તુનો લાભ (પ્રાપ્તિરૂપ લાભ) થવો તેનું નામ 'યોગ' છે. અને
લબ્ધ (પ્રાપ્ત થયેલી વસ્તુ)નું પરિરક્ષણ થવું તેનું નામ 'ક્ષેમ' છે ન ગિયેર. સુપારી

फलं—कदलीफलादिकम् । धरिमं=तुलासूत्रेणोत्तोल्य यदीयते. यथा ब्रीहि—यव-
लवण—सितादि । मेयं=शरावलघुभाण्डादिनोत्तोल्य यदीयते, यथा—दुग्ध—घृत—
तैलग्रभृति । परिच्छेद्यं च प्रत्यक्षतो निकषादिपरीक्षया यदीयते, यथा—मणि—
मुक्ता—प्रवालाभरणादि । एतेषां राजेश्वरादीनामितरेतरयोगद्वन्द्वः, ते प्रभृतयः—
आद्या मुख्या येषां ते तथा, कल्पे=सामान्येन प्रभाते, प्रभातस्यैव विशेषावस्थाः
प्राह—‘पाउप्पभायाए’ इत्यादिना । ‘पाउप्पभायाए’ प्रादुष्पभातायां—प्रादुर्भूतः प्रार-
म्भिकावस्थां प्राप्तः प्रभातो यस्यां सा तथा तस्याम्, राज्ञ्याम्—रात्रौ इति
प्रभातस्य प्रथमावस्था १ । तदनन्तरम् सुविमलायां=पूर्वपिक्षया—फुटतरप्रकाशायां

गिनकर बेचे या दिये जाते हैं । जो तराजू से तोलकर बेचे या दिये जाते
हैं—उनका नाम धरिम है जैसे ब्रीहि, यव—जौ, लवण, शक्कर आदि ।
पीतल आदि के बनाये गये बाँटो से जो नापकर बेचे या दिये जाते हैं—
उनका नाम मेय है—जैसे घृत, तेल दुग्ध वगैरह । जो कसौटी आदि पर
कसकर प्रत्यक्ष में परीक्षित करके दिये जाते हैं वे परिच्छेद्य हैं । जैसे मणि,
मुक्ता प्रवाल आदि । “पाउप्पभायाए” इत्यादि पदों द्वारा सूत्रकारने प्रभात
की विशेष अवस्थाओं का प्रतिपादन किया है । वे अवस्थाएँ यहां ३-तीन
प्रकट की गई हैं—“पाउप्पभायाए” इस पद से प्रभात की प्रथम अवस्था बत-
लाई गई है—इस अवस्था में रात्रि प्रभातप्राय हो जाती है । यह समय प्रभात
की आभा प्रारम्भिक अवस्था में आ जाती है । इसके बाद प्रभात कीद्विती-

केणां आदिने गणिमद्रव्य कहे छे, केराणु के आ वस्तुओ अके, जे, त्रण आदिइय
गणीने वेच्याय छे—अथवा भरीह कराय छे. त्राज्वानी भद्वथी वजन करीने जे वस्तु
ओने वेच्याय अथवा भरीहाय छे ते वस्तुओने धरिम कहे छे. जेमके ओआ. जव,
भीहुं. साकर आदि द्रव्यो पीतण आदिमांथी जनावेला पावणां आदि साधनो वडे
भापीने जे द्रव्यो वेच्याय छे ते द्रव्योने ‘मेय’ कहे छे. जेमके धी. तेल; हृध.
जे द्रव्योने कसोटी पथर आदि पर कसोटी करीने—तेमनी प्रत्यक्ष परीक्षा करीने
करीने वेच्याय के भरीहवामां आवे छे. ओवां द्रव्योने परिच्छेद्य कहे छे. जेमके.
मणि. मोति. प्रवाल आदि द्रव्यो.

“पाउप्पभायाए” इत्यादि पदों द्वारा सूत्रकारने प्रभातनी विशेष अवस्थाओनुं
प्रतिपादन कथुं छे. ते अवस्थाओ आडीं त्रण प्रकारनी कहेवामां आवी छे—“पाउ-
प्पभायाए” आ यह द्वारा प्रभातनी प्रथम अवस्था प्रकट करवामां आवी छे. आ
अवस्थांमां रात्रि प्रभातप्राय थछ जय छे. लगलग रात्रिना चार वाग्याना समयने
आ प्रभातनी प्रथम अवस्थाइय समय समजवो. ते समये प्रभातनी आला

તથામેવ રાત્રૌ અનન્તમ્ ફુલ્લોત્પલકમલકોલાન્મીલિતે-ફુલ્લં ચ તદુત્પલં ચ ફુલ્લોત્પલમ્, કમલો મૃગવિશેષઃ, તથોઃ વોમલં=સ્કુમા મ્ દલાન્ । ન રનયોશ્ચ ડન્મી-લિતમ્=ડન્મીલનં યસ્મિન્ પ્રભાતે સ તથા તસ્મિન્ 'અહાપંડુરે' યથાપાપંડુરે =યથાયોગ્યપીતસંકલિતશુક્રે પ્રભાતે સત્તિ ઇતિ-પ્રભાતસ્ય દ્વિતીયાવસ્થા ૨। તદ્વન્તરં-સ્ત્રક્તાશોવ પ્રકાશકિશુકશુકમુખમુજ્જાર્દ્વરાગસદૃશો સ્ત્રક્તાશોવ સ્ય પ્રકાશઃ=કાન્તિઃ, વિશુકં =પલાશપુષ્પં ચ, મુઠ્ઠજાર્દ્વં ચ, તેષાં રાગેણ સદૃશો યઃ સ તથા તસ્મિન્, કમ-લાવરનલિનીષણ્ડબોધકે-કમલાનામ આકરાઃ=ઉત્પત્તિભૂમયો હૃદાદિ જલાસ્ય વિશેષાસ્તેષુ યાનિ નલિનીષણ્ડાનિ=પદ્મવનાનિ તેષાં બોધકસ્તસ્મિન્, સદૃશાશ્મૌ=સહસ્રકિરણે દિનકરે=દિવસવિધાયિનિ તેનસા જ્વલતિ સૂર્યે ઉત્થિતે ચ સત્તિ ઇતિ પ્રભાતસ્ય તૃતીયાવસ્થા ૩। તદા મુખધાવનદન્તપ્રક્ષાલનતૈલસ્નાનફણિહ-સિદ્ધાર્થકહરિતાલિકાઽઽદર્શધૂપપુષ્પમાલ્યગન્ધતામ્બૂલવસ્ત્રાદિકાનિ દ્રવ્યાવશ્યકાનિ કુર્વન્તિ । તત્ર-મુખધાવનં=જલેન મુખપ્રક્ષાલનમ્, દન્તપ્રક્ષાલનમ્=દન્તકાઠા-

ય અવસ્થા હોતી હૈ-इसमें पहिले की अपेक्षा प्रकाश स्फुटतर हो जाता है-जिसे पौ फटना कहते हैं । धीरे २ प्रकाश बढ़ते २ कमलों के ईपत् विकाश और मृगों के उन्निद्र-निद्रारहित नयनों के सुकुमार उन्मीलन से युक्त होकर कुछ २ पीतवर्ण से मिश्रितशुभ्रता से समन्वित बन जाता है । इस द्वितीय अवस्था को पार कर जब प्रभात अपनी तृतीय अवस्था में पहुंचता है तब इस समय सूर्य उदित होकर अपने प्रकाश-ऊषा से उसे प्रकाशित कर देता है । इसे तृतीय अवस्था संपन्न प्रभात के समय जो राजेश्वरादि मनुष्य मुखधावनादि आवश्यक कृत्यों का संपादन करते हैं वे सब कार्य लौकिक द्रव्यावश्यक हैं ।

પ્રારંભિક અવસ્થામાં આવી જાય છે. ત્યારબાદ પ્રભાતની દ્વિતીય અવસ્થાનો પ્રારંભ થવા માટે છે. ત્યારે પહેલા કરતાં પ્રકાશ સ્ફુટતર થતો જાય છે. આ સમયને 'પોં ફાટવો' અથવા લળલાખ્ખળાનો સમય કહે છે ધીરધીરે પ્રકાશ વધતો વધતો કમળોનો ઈપત્ (આમાન્ય અદ્ય) વિકાસથી અને રૂઝોના ઉન્નિદ્રનયનોના સુકુમાર ઉન્મીલનથી (ઉઘડવાથી) યુક્ત થઈને સહેજ સહેજ પીતવર્ણથી મિશ્રિત એવી શુભ્રતાંથી સમન્વિત બની જાય છે આ બીજી અવસ્થા પસાર કરીને જ્યારે પ્રભાત પોતાની ત્રીજી અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરે છે, ત્યારે સૂર્યોદય થઈ જવાને કારણે, સૂર્યના હજારો કિરણો વડે-ઊષા વડે પ્રભાત પ્રકાશિત થઈ જાય છે. આ તૃતીય અવસ્થા સંપન્ન પ્રભાતને સમયે રાજેશ્વર આદિ મનુષ્યો જે મુખધાવન આદિ આવશ્યક કૃત્યો કરે છે, તે સંપૂર્ણાં કૃત્યોને લૌકિક દ્રવ્યાવશ્યક કહે છે.

दिना दन्तानां धावनं, तैलं=तैलाभ्यङ्गः, स्नानं, तथा—फणिहः—कङ्कतिका—कङ्कति-
कया केशेषु व्यापारणमित्यर्थः, सिद्धार्थकाः=सर्षपाः, हरितालिका=दूर्वा, मस्तके
मङ्गलार्थं सिद्धार्थकानां दूर्वायाश्च प्रक्षेपणम्. आदर्शः=दर्पणः—मुखाद्यवलोकनम्,
धूपः=धूपेन वस्त्राणां सुरभीकरणम्, पुष्पाणि, माल्यम्=पुष्पमाला, पुष्पमाल्यानां मस्त-
कादिषूपयोगः, ताम्बूलम्, वस्त्राणि च आदिर्येषां तानि तथाभूतानि द्रव्यावश्य-
कानि कुर्वन्ति । ततःपश्चात्=मुखधावनादि-द्रव्यावश्यककरणानन्तरं राजकुलं वा
देवकुलं वा आरामं वा उद्यानं वा तथा सभां वा, प्रपां=पानीयशालां वा गच्छ-
न्ति । राजेश्वरादिसम्बन्धिकं मुखधावनादिकं द्रव्यावश्यकं विज्ञेयम् ।

ननु राजेश्वरादिभिरवश्यं क्रियमाणत्वाद् मुखधावनादीनां भवत्वावश्यकत्वम्
परन्तु द्रव्यत्वं तु तेषां नास्ति, विवक्षितपर्यायस्य यत् कारणं तस्यैव द्रव्य-
त्वात्, उक्तं चापि—

“भूतस्य भाविनो वा भावस्य हि कारणं तु यल्लोके ।

तद्द्रव्यं तत्त्वज्ञैः सचेतनाचेतनं कथितम्” ॥ इति ॥

अस्य पद्यस्य व्याख्या प्रागेव ‘से किं तं द्रव्यावश्यं’ इति त्रयोदश-
सूत्रस्य टीकायां कृता ।

इत्थं राजेश्वरादि संबन्धिनां मुखधावनादीनामावश्यकपर्यायकारणत्वाभावाद्

शंका—राजेश्वर आदि मनुष्य द्वारा संपादित मुखधावनादि कृत्यों में
अवश्यकरणीयता होने के कारण आवश्यकत्व भले रहे. इस में हमें कोई विवाद
नहीं है—परन्तु उनमें विवक्षित पर्याय के प्रतिकारणत्वरूप द्रव्यत्व नहीं आता
है । क्योंकि विवक्षित यहाँ आवश्यक पर्याय है, उस पर्याय के प्रति मुख
धावनादि क्रियाओं वा क्या संबन्ध ? । द्रव्य का लक्षण १३ वें सूत्र की
टीका में “भूतस्य भाविनो वा” इत्यादि पद्यद्वारा स्पष्ट ही कर दिया गया
है । अतः इस प्रकार की द्रव्यता राजेश्वर आदि के मुख धावनादि लौकिक

शंका—राजेश्वर आदि मनुष्यद्वारा संपादित मुखधावन आदि क्रियाओं में
अवश्यकरणीयता होवाने कारणे आवश्यकत्व भले रहे. ये बातें संबंधों में अनेक
विवादों में उतारवा भागता नहीं. परन्तु ते क्रियाओं में विवक्षित पर्यायों का कारण
द्रव्यत्व संलक्षणीय शक्त नहीं. कारण के विवक्षित पर्यायों में आवश्यक पर्याय अर्थात्
प्रकट करवाना आवी है, ते पर्यायों की साथ मुखधावन आदि क्रियाओं में से संबंध
है ? तब में सूत्र की टीका में आपे द्रव्यत्वं आ प्रमाणे लक्षण कहे हैं—“भूतस्य
भाविनो वा” इत्यादि. आपे प्रतिपादित करेला ये लक्षण प्रमाणों की द्रव्यता राजे-
श्वर आदिना मुखधावन आदि लौकिक कार्यों में नहीं आवी शकवाथी (असंलक्षित

નાસ્તિ દ્રવ્યાવશ્યકત્વમિતિ ચેદુચ્યતે—‘ભૂતસ્ય ભાવિનો વા’ इत्याद्येव द्रव्य-
लक्षणं नास्ति, किन्तु—‘अप्पाहणो वि दव्वसदोत्थि’ अप्राधान्येऽपि ‘द्रव्यशब्दो-
ऽस्ति—इति वचनात् अप्रधानरूपेऽर्थेऽपि द्रव्यशब्दो वर्तते । मुखधावनादौ मोक्षप्राप्तेर-
प्राधान्यं च मोक्षकारणभूतभावावश्यकपेक्षया बोध्यम् । यतो मोक्षस्य कारणं तु भावा-
वश्यकमेव नतु द्रव्यावश्यकम् अतोऽत्र मुखधावनादेरप्राधान्यमिति । ततश्च-द्रव्यभूतानि—
अप्रधानभूतानि—आवश्यकानि द्रव्यावश्यकानीत्यर्थः, एवं च संसारकारणानां राजेश्व-
रादि मुखधावनादीनामस्त्येव द्रव्यावश्यकत्वम्, इति नास्ति दोषावसरः । मुख-

कार्यों में नहीं. आसकने से उनमें आवश्यक पर्याय के प्रति कारणता नहीं
बन सकती है । इस कारणता के अभाव में उनमें द्रव्यावश्यकता नहीं आसकती है ?

उत्तर—शंकाकार को जो इस प्रकार की शंका उत्पन्न हुई है । उसका
कारण “भूतस्य भावિનો वा” इत्यादि पद्योक्त द्रव्य का लक्षण
है कि इसपर यह कहना है कि द्रव्य का लक्षण इतना ही नहीं
है किन्तु “अप्पाहणो वि दव्वसदोत्थि” अप्राधान्य अर्थ में भी द्रव्य शब्द है “इस-
कथन के अनुसार अप्रधान अर्थ में भी द्रव्य शब्द का प्रयोग हुआ है ।
इन मुखधावनादि लौकिक कृत्यों में मोक्षप्राप्ति की अप्रधानता मोक्ष के कारण
भूत भावावश्यक की अपेक्षा से कहा गया है । क्योंकि मोक्ष का कारण तो
भावावश्यकही होता है, नहि कि द्रव्यावश्यक इसलिए यहाँ मुखधावनादि
की अप्रधानता है । इसकारण द्रव्यभूत-अप्रधानभूत जो आवश्यक
हैं वे द्रव्यावश्यक हैं—ऐसा अर्थ द्रव्यावश्यक का लब्ध हो जाता
है । इस तरह राजेश्वर आदि के संसारकारणभूत मुखधावनादि कार्यों में
द्रव्यावश्यकता घटित हो जाती है । इन मुखधावनादि कृत्यों में लोकप्रसिद्धि
से भी आगमरूपता नहीं है—अतः उनमें आगम का अभाव होने से नो

હોવાથી) તે ક્રિયાએ આવશ્યકપર્યાયના કારણરૂપ બની શકતી નથી. આ કારણતાના
અભાવને લીધે તે ક્રિયાઓમાં દ્રવ્યાવશ્યકતાનો સદ્ભાવ સંભવી શકતો નથી,

ઉત્તર—શંકા કરનારે આ પ્રકારની જે શંકા કરી છે તેનું કારણ “ભૂતસ્ય
ભાવિનો વા” ઇત્યાદિ સૂત્રપાઠ દ્વારા દ્રવ્યનું જે લક્ષણ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે,
તે લક્ષણવાળા પદાર્થને જ દ્રવ્ય માનવું જોઈએ, એવી જ તેની માન્યતા છે. આ
પ્રકારની માન્યતાને કારણે જ આ શંકા ઉદ્ભવી છે. તો તેની શંકાના જવાબરૂપે
અમારે એટલું જ કહેવાનું કે દ્રવ્યનું લક્ષણ એટલું જ નથી, પરંતુ “અપ્પહાણો
વિ દવ્વસદોત્થિ” “અપ્રધાન્યમાં પણ દ્રવ્ય શબ્દ છે,” આ કથન અનુસાર અપ્રધાન
અર્થમાં પણ દ્રવ્ય શબ્દનો પ્રયોગ થયો છે. તે મુખધાવન આદિ લૌકિક કૃત્યોમાં
જે અપ્રધાનતા (પ્રધાનતાથી રહિતપણું) કહી છે તે મોક્ષના કારણભૂત ભાવાવશ્યકની
અપેક્ષાએ કહેવામાં આવી છે, તેથી દ્રવ્યભૂત-અપ્રધાનરૂપ જે આવશ્યક છે તેમને

धावनादौ लोकप्रसिद्धयाऽपि आगमाभावात् सर्वथा नोआगमत्वम्, नौशब्दश्चात्र सर्वथा आगमनिषेधे वर्तते । तदेतत् लौकिकं द्रव्यावश्यकं वर्णितम् ॥ सू० २० ॥

आगमता आजाती है । इस प्रकार सर्वथा आगम के अभावेऽन्य द्रव्यावश्यकता इनमें होने से लौकिक द्रव्यावश्यकता इनमें बन जाती है । इस तरह से लौकिक द्रव्यावश्यक का स्वरूप वर्णन है ।

भावार्थ—इस सूत्रद्वारा सूत्रकार ने तद्व्यतिरिक्त लौकिकद्रव्यावश्यक का स्वरूप बतलाया है । उसमें संसारीजनोंद्वारा जो भी मांगलिक कृत्य हैं कि जिन्हें करना आवश्यक होता है वे सब लौकिक द्रव्यावश्यक हैं । मंगल निमित्त सर्पपों का प्रक्षेप करना दूर्वा का संसार कार्यों में उपयोग करना, दही आदि का किसी शुभ कार्य के निमित्त भक्षण करना आदि सब द्रव्यावश्यक हैं । यद्यपि इन लौकिक आवश्यकपर्याय के प्रति कोई संबंध नहीं है फिर भी इन्हें द्रव्यावश्यक का अर्थ अप्रधानभूत आवश्यक मानकर द्रव्यावश्यकरूप माना गया है । इन लौकिक कार्यों में आगम का सर्वथा अभाव रहता है । अतः ये नोआगमरूप हैं ॥ सूत्र २० ॥

द्रव्यावश्यक इत्युक्तं छिन्नं प्रकाशं द्रव्यावश्यकं अर्थ प्राप्तं यथैव छिन्नं प्रकाशं रात्रेश्चरान्तिना संसारकारणभूतं मुण्धावने आदि कार्येषु द्रव्यावश्यकता घटितं यथैव छिन्नं प्रकाशं मुण्धावनादिकृत्येषु लोकप्रसिद्धिनी अपेक्षाये पण्य आगमरूपता नथी । ते कारणे ते क्रियाभ्यां आगमनो अलावच्छेदवाने शीघ्रं नो आगमता सिद्धं यथैव छिन्नं प्रकाशं आगमना सर्वथा अलावच्छेदय द्रव्यावश्यकता तेभ्यो भाष्येणोपाधी । तेभ्यो भाष्येण लौकिक द्रव्यावश्यकता होवानी वात सिद्धं यथैव छिन्नं द्रव्यावश्यकताना स्वस्वरूपं प्रकाशं वृत्तिं अही करवामां आव्युं छिन्नं ।

भावार्थ—आगमता ये सूत्रमां (१७) अने १८ मां सूत्रमां शायकशरीरं द्रव्यावश्यक अने लव्यशरीरं द्रव्यावश्यकं स्वस्वरूपं प्रकट करवामां आव्युं छिन्नं तेभ्यो भाष्येणोपाधी । लव्येभ्यो द्रव्यावश्यकनी प्रत्यक्षां करवामां आवे छिन्नं । सूत्रद्वारा तेनां प्रथम लेखेन लौकिक द्रव्यावश्यकं स्वस्वरूपं ज्ञातव्यमां आव्युं छिन्नं । संसारी जनों द्वारा जे जे मांगलिक क्रियाओं करवानुं आवश्यक मानवामां आवे छिन्नं । ते सधणी क्रियाओं ने लौकिक द्रव्यावश्यक कहेवामां आवे छिन्नं । मंगल निमित्त सरसव आदिनां प्रक्षेप करवो; दूर्वा (दही)ना मांगलिक कार्येषु उपयोग करवो । कोष्ठ शुभकार्येने निमित्त कहेवामां आदिनां लक्षण करवो । वगैरे क्रियाओं ने लौकिक द्रव्यावश्यक कहे छिन्नं । जे जे आ लौकिक आवश्यक कृत्येना आवश्यकपर्यायनी साथे कोष्ठ संबंध नथी । छतां पण्य द्रव्यावश्यकनो अर्थ अप्रधानभूत आवश्यक माननी तेभ्यो द्रव्यावश्यक इत्युक्तं मानवामां आवे छिन्नं । आ लौकिक कार्येषु आगमनो सर्वथा अलाव रहै छिन्नं । तेथी तेथी नो आगमरूप छिन्नं ॥ सू० २० ॥

અથ જ્ઞાયકશરીરભવ્યશરીરવ્યતિરિક્ત-કુપ્રાવચનિકદ્રવ્યાવશ્યકરૂપં દ્વિતીય-
ભેદં નિરૂપયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં કુપ્પાવયણિયં દઢ્વાવસ્સયં ? કુપ્પાવયણિયં
દઢ્વાવસ્સયં જે હમે ચરગચીરિગચમ્મખંડિયભિક્ખોડપંડુરંગગોયમ
ગોઠ્ઠતિય ગિહિધમ્મધમ્મચિંતગઅવિરુદ્ધવિરુદ્ધવુદ્ધેસાવગંપભિત્ત-
ઓ પાસેદત્થા કલ્હં પાઉપ્પમાયાણ રયણીણ જાવ તેયસા જલંતે
ઈંદસ્સ વાં સ્વંદસ્સ વા રુદ્ધસ્સ વા સિવસ્સ વાવેસમણસ્સ વા દેવસ્સ
વા નાગસ્સ વા જક્કસ્સ વા મૂયસ્સ વા મુગુદસ્સ વા અજ્ઞાણ વા
હુંગ્ગાણ વા કોદકિરિયાણ વા ઉવલેવણસંમજ્જણઆવરિસણધૂવ-
પુપ્ફગંધમહાહયાઈં દઢ્વાવસ્સયાઈં કરેતિ, સે તં કુપ્પાવયણિયં
દઢ્વાવસ્સયં ॥ સૂ. ૨૧ ॥

છાયા—અથ કિં તત્ કુપ્રાવચનિકં દ્રવ્યાવશ્યકમ્ ? કુપ્રાવચનિકં દ્રવ્યા-
વશ્યકં ય હમે ચરકચીરિકચર્મખંડિકભિક્ષોણ્ડપાણ્ડુરાગ્ગોતમગોત્રતિક

અથ સૂત્રકારંતદ્વ્યતિરિક્ત કા-જા. દસરા ભેદ કુપ્રાવચનિક દ્રવ્યાવશ્યક
હૈ ઉસા વર્ણન કરતે હૈ—“સે કિં તં કુપ્પાવયણિયં” ઇત્યાદિ ॥ સૂત્ર ૨૧ ॥

શબ્દાર્થ—(સે) હે મદંત ! (તં) પૂર્વપ્રકાન્ત (પૂર્વ પ્રસ્તુતવિષય) કુપ્પાવયણિયં
દઢ્વાવસ્સયં (કિં) કુપ્રાવચનિક દ્રવ્યાવશ્યક કાં વગા સ્વરૂપ હૈ. (કુપ્પાવયણિયં
દઢ્વાવસ્સયં) ઉત્તર—કુપ્રાવચનિક દ્રવ્યાવશ્યક કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર હૈ—સુનો—
(જે હમે ચરગચીરિગચમ્મખંડિયભિક્ખોડપંડુરંગગોયમગોઠ્ઠતિયગિહિધમ્મ

“તદ્વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાવશ્યકનો જે કુપ્રાવચનિક દ્રવ્યાવશ્યક નામનો ખીજો ભેદ છે
તેનું હવે સૂત્રકાર વર્ણન કરે છે—“સે કિં તં કુપ્પાવયણિયં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે) શિષ્ય ગુરૂને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભગવન ! (તં) પૂર્વ
પ્રકાન્ત (પૂર્વ પ્રસ્તુત વિષય) (કુપ્પાવયણિયં દઢ્વાવસ્સયં કિં) કુપ્રાવચનિક દ્રવ્યા-
વશ્યકનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(કુપ્પાવયણિયં દઢ્વાવસ્સયં) કુપ્રાવચનિક દ્રવ્યાવશ્યકનું સ્વરૂપ આ
પ્રકારનું છે—(જે હમે ચરગચીરિગચમ્મખંડિયભિક્ખોડપંડુરંગગોયમગોઠ્ઠતિગિ-

गृहिधर्म धर्मचिन्तकाविरुद्ध विरुद्धवृद्धश्रावकप्रभृतयः पाषण्डस्थाः कल्पे प्रादु-
 षप्रभातायां रजन्यां यावत् तेजसा जलति इन्द्रस्य वा स्कन्दस्य वा रुद्रस्य वा
 शिवस्य वा वैश्रवणस्य वा देवस्य वा नागस्य वा यक्षस्य वा भूतस्य वा मुकु-
 ण्डस्य वा आर्याया वा दुर्गाया वा कोट्टक्रियाया वा उपलेपनसम्मार्जनावर्षण-
 धूपपूष्पगन्धमाल्यादिकानि द्रव्यावश्यकानि कुर्वन्ति । तदेतत् कुप्रावचनिकं द्रव्या-
 वश्यकम् ॥ सू० २१ ॥

धम्मचित्तगं अविरुद्धविरुद्धवुद्धसावगप्पमित्तो पासंडत्था) जो ये चरक,
 चीरिक्, चर्मखंडिक, भिक्षोण्ड, पाण्डुराङ्ग, गौतम, गोत्रतिक, गृहि, धर्माधर्म
 चित्तक, अविरुद्ध, विरुद्ध, और वृद्ध श्रावक आदि हैं कि जो पाषण्डस्थ
 अपने आप को ब्रती मानते हैं (कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव तेयसा जलंते)
 सामान्य प्रभात होने पर प्रभातप्राय रजनी के होने पर यावत् तेज से ज्वलित
 सूर्य के उदय होने पर (इंदस्स वा) इन्द्र की (खंदस्स वा) अथवा स्कंद—कार्ति-
 क स्वामी की (रुद्रस्स वा) अथवा रुद्र की (सिवस्स वा) अथवा शिव की (वैस-
 मणस्स वा) अथवा वैश्रमण की (देवस्स वा) अथवा सामान्य देव की (नागरस्स वा)
 अथवा नाग की (जक्खस्स वा) अथवा यक्ष की (भूयस्स वा) अथवा भूत की
 (मुकुण्डस्स वा) अथवा मुकुंद की (अज्जाए वा) अथवा आर्यादेवी की (दुग्गाए वा)
 अथवा दुर्गा की (कोट्टकिरियाए वा) अथवा कोट्टक्रिया की (उवलेवण संमज्जण—
 आवरिसण—धूवपुप्फगंधमल्लाइयाइ दव्वावस्सयाइं वरेन्ति—से तं कुप्पावयणियं

हि धम्मधम्मचित्तगं अविरुद्धविरुद्धवुद्धसावगप्पमित्तो आ पासंडत्था) जे आ अरक
 चीरिक्, धर्माधर्म, भिक्षोण्ड, पाण्डुराङ्ग, गौतम, गोत्रतिक, गृहिधर्मा, धर्माधर्म,
 अविरुद्ध अने वृद्ध श्रावक आदि छे के जेओ पाषण्डस्थ छे-जेओ पोतानी मतने
 ब्रती माने छे (आ पधां पढोने अर्थ शण्ढार्थने अन्ते स्पष्ट करवाभां आव्यो छे)
 (कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव तेयसा जलंते) तेओ सामान्य प्रभात यतां-
 लगलग रात्रिने अन्तकाण समीप आवे त्यारे लगलांभणुं थाय त्यारे अने सूर्य
 पोतानी सङ्खकिरणोत्थी प्रकाशवा लागे त्यारे (इंदस्स वा) इन्द्रनी अथवा (खंदस्स वा)
 स्कंदनी—कार्तिक स्वामिनी, (रुद्रस्स वा) अथवा रुद्रनी (सिवस्स वा) अथवा शिवनी
 (वैसमणस्स वा) अथवा वैश्रमणुनी कुण्डरनी. (देवस्स वा) अथवा सामान्य देवनी
 (नागरस्स वा) अथवा नागनी (जक्खस्स वा) अथवा यक्षनी. (भूयस्स वा) अथवा
 भूतनी (मुकुण्डस्स वा) अथवा मुकुन्दनी (अज्जाए वा) अथवा आर्यादेवीनी (दुग्गाए वा)
 अथवा दुर्गानी (कोट्टकिरियाए वा) अथवा कोट्ट क्रियानी (उवलेवण, संमज्जण—
 आवरिसण—धूव पुप्फ गंधमल्लाइयाइ दव्वावस्सयाइं करेन्ति से तं कुप्पावयणियं

टी० ॥—शिष्यः पृच्छति—‘से किं तं’ इत्यादि । अथ किं तत् कुप्रावच-
निकं द्रव्यावश्यकम् ? उत्तरमाह—कुप्रावचनिकं=कुत्सितं प्रवचनं येषां ते कुप्रा-
वचनाः, कुत्सितत्वं चाग्य प्रवचनस्य मोक्षानुपयोगित्वात्, तेषामिदं कुप्रावचनि-
कम् द्रव्यावश्यकमेवं विज्ञेयम्—य इमे चरकचीरिकचर्मखण्डिक-भिक्षोण्ड-पा-
ण्डुराङ्गोतमगोत्रतिकगृहिधर्मधर्मचिन्तकाविरुद्धविरुद्धवृद्धश्रावकप्रभृतयः, पाष-
ण्डस्थाः, तत्र-चरकाः=वाटिवाहकाः—यूथबद्धाः सन्तो ये भिक्षां चरन्ति ते चरकाः,
अथवा-भुञ्जाना ये चरन्ति ते चरकाः । चीरिकाः=रथ्यापतितवस्त्रखण्डधारकाः,
चर्मखण्डिकाः=चर्मवसनाः, यद्वा-चर्ममयसर्वोपकरणाः, भिक्षोण्डाः=ये भिक्षा-
लब्धमेवान्नादिकं भुञ्जते न तु स्वपालितगवादीनां दुग्धादिकं, ते भिक्षोण्डा

द्रव्यावश्यकं) उपलेपन क्रिया करते हैं, संमार्जन क्रिया करते हैं, दुग्ध एवं गन्धो-
दक आदि से स्नान क्रिया करते हैं, पुष्पपूजा करते हैं, धूपपूजा करते हैं,
चन्दन से उनका उपलेपन करते हैं उन पर माला चढ़ाते हैं, इत्यादिरूप जो
द्रव्यावश्यक करते हैं वह सब कुप्रावचनिक द्रव्यावश्यक है । इस प्रकार पूर्व
प्रक्रान्त द्रव्यावश्यक का यह स्वरूप है ।

जो समुदायरूप में एकत्रित होकर भिक्षा मांगते हैं
वे चरक हैं । अथवा खाते २ जो चलते हैं वे चरक हैं
मार्ग में पड़े हुए वस्त्रखंडों को जो पहना करते हैं वे चीरिक हैं । चमड़े को
वस्त्ररूप में पहनते हैं अथवा चमड़े के ही समस्त उपकरण जिनके होते हैं
उनका नाम चर्मखण्डिक है । भिक्षा में प्राप्त हुए अन्न से ही जो अपना-
उदर पूर्ण करते हैं अपने घर में पालित गाय आदि के दुग्धादिक से नहीं—

द्रव्यावश्यकं) उपलेपक किया करे छे, संमार्जन किया करे छे, दूध, गन्धोदक आदि-
वडे स्नान कराववानी किया करे छे, फूलो वडे पूजा करे छे, धूपपूजा करे छे, चन्दन
वडे तेहुं उपलेपन करे छे, तेमना पर भाणाओ अडावे छे, इत्यादि प्रकारना जे
द्रव्यावश्यक करे छे ते सधणा द्रव्यावश्यकने कुप्रावचनिक द्रव्यावश्यक कहे छे. पूर्व
प्रस्तुत कुप्रावचनिक द्रव्यावश्यकनुं आ प्रकारहुं स्वइप छे उवे चरक आदि पहोने।
अर्थ स्पष्ट करवाभां आवे छे—जेओ समुदायरूपे ओकत्र थधने भिक्षा मागे छे
तेमहुं नाम चरक छे. अथवा भातां भातां जेओ आवे छे. तेमने ‘चरक’ कहे छे.
मार्ग पर पडेला वस्त्रखंडोने ओकत्र करीने जेओ ते वस्त्रखंडोने धारणु करे छे—
पडेरे छे—तेमने ‘चीरक’ कहे छे, आभडाने ज वस्त्रइपे पहेरनार अथवा आभडानां
ज उपकरणो राखनारने ‘चर्मखण्डित’ कहे छे.

भिक्षामां प्राप्त थयेला अन्नथी ज जेओ पोतानुं चेट लरे छे—पोताने घर
भाजेली गाय आदिना दूध आदिथी जे पोतानुं चेट लरतो नथी तेने ‘भिक्षोण्ड’

उच्यन्ते, यद्वा—भिक्षोण्डाः=सुगतशासनस्थाः, पाण्डुराङ्गाः=पाण्डुराणि=भस्मलेप-
नात् शुभ्राणि अङ्गानि=गात्राणि येषां ते तथा, भस्मलेपितशरीरा इत्यर्थः
गोतमाः—ये हि विस्मयकारकपादपतनादिशिक्षाभिवृषभं शिक्षयित्वा वराट्-
वमालाभिस्तं विभूष्य तस्य वृषभस्य विविधमभिनयं दर्शयित्वा भिक्षन्ते ते गोतमाः
गोत्रतिकाः—गोत्रतं येषां ते गोत्रतिकाः=गोचर्यानुकारिणः, ते हि गावां मध्ये
वस्तुमिच्छया तद्भवनाभावितान्तःकरणा पुरान्निर्गच्छन्तीभिर्गोभिः सह निर्गच्छन्ति,
तिष्ठन्तीभिः सह तिष्ठन्ति, उपविशन्तीभिः सहोपविशन्ति, भुञ्जानाभिः सह तद्वदेव
तृणपुष्पफलादिकं भुञ्जते, जलं पिबन्तीभिः सह तदनुकरणेनैव जलं पिबन्ति ।
उक्तं च— “गावीहिं समं निगमयवेसठाणांसणाइ पकरंति ।
भुञ्जंति जहा गावी तिरिक्खवासं विभावंता ॥”

उनका नाम भिक्षोण्ड है। अथवा सुगत-(बुद्ध) के शासन को मानने वालों
का नाम भी भिक्षोण्ड है। भस्म के लेपन से जिनका शरीर शुभ्र हो जाता
है उन का नाम शुभ्राङ्ग है। जो बैल को विस्मयकारक चाल सिखा करके
और उसे कौड़ियों की मालाओं से विभूषित करके उसका अभिनय दिखा
कर भिक्षावृत्ति करते हैं उनका नाम गोतम है। राजा दिलीप की तरह
गोत्रत का जो पालन करते हैं उनका नाम गोत्रतिक है। गोत्रत को पालन
करने वाले मनुष्य गायों के मध्य में रहने की इच्छा से गायें जब पुर से
नीकलती हैं तब उनके साथ ही निकलते हैं, जब वे बैठती हैं—तब बैठते हैं,
जब वे खड़ी होती हैं—तब वे खड़े होते हैं, जब ये चरती हैं तब वे भोजन
करते हैं फलादि का, और जब वे जल पीती हैं, तब वे जल पीते हैं।

કહે છે અથવા સુગતના (બુદ્ધના) શાસનને માનનારનું નામ ભિક્ષોંડ છે. ભસ્મના
લેપથી જેમનું શરીર શુભ્ર થઈ જાય છે, તેમને ‘શુભ્રાંગ’ કહે છે. જેઓ બળદને
આશ્ચર્યજનક ચાલ શિખવીને અને તેને કોડીઓની માળાઓથી વિભૂષિત કરીને,
તેનો અભિનય દોઢોને બતાવી બતાવીને ભિક્ષાવૃત્તિ કરે છે તેમને ‘ગોતમ’ કહે
છે. રાજા દિલીપની જેમ ગોત્રતનું પાલન કરનારને ‘ગોત્રતિક’ કહે છે. ગોત્રતનું
પાલન કરનાર પુરુષ ગાયોની પાસે રહીને તેમની સેવા કર્યા કરે છે. જ્યારે ગાયો
ગામમાંથી બહાર નીકળે છે ત્યારે ગોત્રાતક પણ તેમની સાથે જ ગામની બહાર
ચાલી નીકળે છે, જ્યારે તે ગાયો નીચે બેસે છે ત્યારે તે ગોત્રતિક પણ નીચે બેસે
છે. જ્યારે તેઓ બેઠી થાય છે ત્યારે તે પણ બેઠો થાય છે, જ્યારે તેઓ ચરતી
હોય છે, ત્યારે તે પણ ફલાદિફલ લોબન કરે છે, જ્યારે તેઓ પાણી પીવે છે, ત્યારે
તે પણ પાણી પીવે છે. કહ્યું પણ છે, એમ કહીને સૂત્રકારે જે ગાથા આપી છે તે

છાયા-ગોભિઃ સમં નિર્ગમપ્રવેશસ્થાનાસનાદિ પ્રકર્વન્તિ ।

મુઠજંતે યથા ગૌઃ, તિર્યગ્વાસં વિમાવયન્તઃ ॥૩૮૮॥

ગૃહધર્માણઃ—ગૃહિણાં ધર્મોં યેષાં તે ગૃહધર્માણઃ=‘ગૃહસ્થ-ધર્મ’ એવ શ્રેયાન્’
 इति मत्वा तदुचितधर्माचारिणः, । उक्तं च तदनुसारिभिः—

“ગૃહાશ્રમસમો ધર્મો, ન ભૂતો ન ભવિષ્યતિ ।

તં પાલયન્તિ તે ધીરાઃ, ક્લીબાઃ પાષ્ણ્ડમા તાઃ ॥ ૩૮૮ ॥

ધર્મચિન્તકાઃ—યાજ્ઞવલ્ક્યઆદિ પ્રણીતધર્મસંહિતાદિભિઃસહ યે ધર્મં ચિન્તયન્તિ=તામિ-
 વ્યવહરન્તિ યે તે ધર્મચિત્તિકા ઉચ્યન્તે, અવિરુદ્ધાઃ—દેવનૃપમાતાપિતૃતિર્યગાદીનામ-
 વિરોધેન વિનયકારિણો યે ભવન્તિ તેઽવિરુદ્ધાઃ=વૈનયિકા इत्यर्थः, વિરુદ્ધાઃ=

उक्तं च—करके जो गाथा लिखी है उस का अर्थ भी यही है । गृह-
 स्थ धर्म ही श्रेयस्कर है ऐसी जिन की मान्यता होती है । और उसी के
 उचित जो धर्म का आचरण करते हैं वे गृहधर्मा हैं । इन लोगों का ऐसा
 कहना है कि गृहस्थाश्रम जैसा धर्म न हुआ है और न होगा । जो धीर होते
 हैं वे ही इसका पालन करते हैं और जो क्लीब-कमजोर हैं वे व्रतों को लेते
 हैं । याज्ञवल्क्य आदि के द्वारा रचित धर्मसंहिता आदि को लेकर जो
 धर्म का विचार करते हैं-उनके अनुसार अपनी दैनिक प्रवृत्ति चलाते हैं वे
 धर्मचिन्तक हैं । देव नृप, मातापिता और तिर्यञ्च आदि का विना किसी
 भेदभाव के जो एकसा विनय करते हैं वे अविरुद्ध-वैनयिक मिथ्यादृष्टि-हैं ।

ગાથાનો ઉપર મુજબનો જ અર્થ થાય છે. તે ગાથામાં ગોત્રતિકનાં લક્ષણો બતા-
 વવામાં આવ્યા છે,

“ગૃહસ્થધર્મ” જ શ્રેયસ્કર છે,” આ પ્રકારની માન્યતા ધરાવનાર અને તેને
 અનુરૂપ જ ધર્મનું આચરણ કરનાર જે પુરુષો હોય છે તેમને ‘ગૃહધર્મા’ કહે છે.
 તે લોકોની એવી માન્યતા છે કે “ગૃહસ્થાશ્રમ જેઓ કોઈ ધર્મ થયો, પણ નથી
 અને થવાનો પણ નથી જે લોકો ધીર હોય છે તેઓ જ તેનું પાલન કરી શકે છે
 અને જે લોકો કલીબ (કમજોર) હોય છે તેઓ જ વ્રતોની આરાધના કરે છે.
 યાજ્ઞવલ્ક્ય આદિ તત્ત્વચિન્તકો દ્વારા રચિત ધર્મસંહિતા આદને આધારે જેઓ
 ધર્મનો વિચાર કરે છે, અને તેને અનુસાર જ પોતાની દૈનિક પ્રવૃત્તિ ચલાવે છે
 તેમને “ધર્મચિન્તક” કહે છે.

જેઓ દેવ, નૃપ, માતા, પિતા, અને તિર્યંચાદિનો કોઈપણ પ્રકારનો ભેદભાવ
 રાખ્યા વિના એક સરખો વિનય કરે છે, તેમને ‘અવિરુદ્ધ’ (વૈનયિક મિથ્યાદૃષ્ટિ)

અક્રિયાવાદિનઃ, એતે હિ પુણ્યપાપપરલોકાદિકં ન મન્યન્તે, અતઃ સર્વપાષણ્ડિ-
વિરુદ્ધાચારત્વાદેતે વિરુદ્ધા ઉચ્યન્તે ।

નન્વેતેષામક્રિયાગદીનાં પુણ્યપાપાદ્યસ્વીકરણાત્ ઇન્દ્રાદ્યુપલેપનકર્તૃત્વં ન સંભ-
વતીતિ ચેત, ઉચ્યતે, પુણ્યપ્રાપ્તીચ્છયા યદ્યપિ તેષામ્ ઇન્દ્રાદ્યુપલેપનકર્તૃત્વં ન
સંભવતિ તથાપિ જીવિકોદ્દેશેન તુ તત્સંભવત્યેવેતિ ન કશ્ચિદ્ દોષઃ ।

વૃદ્ધશ્રાવકાઃ=વૃદ્ધાઃ પ્રાચીનકાલમપેક્ષ્ય વૃદ્ધાઃ, તદ્દેવ શ્રાવયન્તીતિ શ્રાવકાઃ-
બ્રાહ્મણા—ઋષભદેવજ્યેષ્ઠપુત્રભરતશાસનકાલે યે દેવગુરુધર્મસ્વરૂપં શ્રાવયિતાર

પુણ્ય, પાપ ઓર પરલોક આદિ કી માન્યતા સે જો બહિર્ભૂત હોતે હૈં એસે
અક્રિયાવાદી વિરુદ્ધ હૈં । इनका आचारविवार सर्व पाषण्डियों सर्व धर्मवाले
की अपेक्षा विरुद्ध हाता है । इसलिये ये विरुद्ध कहे जाते हैं ।

શંકા—યે અક્રિયાવાદી જબ પુણ્યપાપ આદિ કુછ મી નહીં માનતે હૈં
—તબ ઇન્દ્ર આદિ કા યે ઉપલેપન આદિ ક્યોં કરેંગે—અર્થાત્ નહાં કરેંગે,
એસી સ્થિતિ મેં ઇન્દ્રે ઇન્દ્રાદિ કે ઉપલેપન આદિ કે કર્તૃત્વ મેં ક્યોં ગિનાયા
ગયા હૈં—સો ઇસ શંકા કા ઉત્તર ઇસ પ્રકાર સે હૈં કિ ઇન મેં મલે હી પુણ્ય
પ્રાપ્તિ કી ઇચ્છા સે ઇન્દ્રાદિક કા ઉપલેપન કર્તૃત્વ સંભવન હો—તોમી
આજિવિકા કે ઉદ્દેશ સે उनमें इन्द्रादिक का उपलेपनादि करना संभ-
वित होता ही है । अतः सूत्रकार की कुप्रावचनिक द्रव्यावश्यक में इनकी
परिगणना निर्दुष्ट है । वृद्धश्रावक का अर्थ यहां ब्राह्मण से है । क्योंकि प्राचीन

કહે છે. જેઓ પાપ, પુણ્ય, પરલોક આદિને માનતા જ નથી એવાં અક્રિયાવાદીને
‘વિરુદ્ધ’ કહે છે. તેમના આચારવિચાર બધાં ધર્મવાળા કરતાં વિરુદ્ધના જ હોય છે.

શંકા—તે અક્રિયાવાદીઓ જે પાપ પૂણ્ય આદિમાં માનતા જ નથી. તો
તેઓ ઇન્દ્ર આદિનું ઉપલેપન. પૂજન આદિ શા માટે કરે ? કહેવાનું તાત્પર્ય એ
છે કે સૂત્રમાં ઇન્દ્રાદિનું ઉપલેપન. પૂજન આદિ કરનારમાં આ અક્રિયાવાદીઓને
પણ ગણાવવામાં આવેલ છે. અક્રિયાવાદીઓ આ પ્રકારની ક્રિયાઓ કરે તે કેવી
રીતે માની શકાય ?

ઉત્તર—ભલે તેઓમાં પુણ્યપ્રાપ્તિની ઇચ્છાથી ઇન્દ્રાદિનું ઉપલેપન, પૂજન આદિ
ક્રિયાઓ કરવાની વાત અસંભવિત હોય પરંતુ આજીવિકા ચલાવવાના હેતુથી તેઓમાં
પણ ઇન્દ્રાદિકનું ઉપલેપન પૂજન આદિ ક્રિયાઓનો સદ્ભાવ હોઈ શકે છે. તેથી
સૂત્રકારે કુપ્રાવચનિક દ્રવ્યાવશ્યકમાં તેમની જે પરિગણના કરી છે તે નિર્દોષ કથનરૂપ
જ સમજવી જોઈએ.

આ સૂત્રમાં ‘વૃદ્ધશ્રાવક’ આ પદ બ્રાહ્મણના અર્થમાં વપરાયું છે, કારણ કે
અહીં પ્રાચીન કાળની અપેક્ષાએ તેમનામાં વૃદ્ધતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે. આ

आसन् अतएववृद्धाः, त एव पश्चाद् ब्राह्मणा जाताः। एतेषामितरेतरयोगद्वन्द्वः,
ते प्रभृतयः=आद्योः—मुख्या येषां ते तथा, प्रभृतिग्रहणात् परिव्राजकादीनां संग्रहः,
पाण्डस्थाः—पाण्डं=व्रतं तत्र तिष्ठन्तीति पाण्डस्थाः=व्रतिनः कल्ये प्रादुप्रभा-
तायां रजन्यां यावत्तेजसा ज्वलति, एतेषां पदानां व्याख्या पूर्वसूत्रे कृता तत
एवावगन्तव्या, इन्द्रस्य वा स्कन्दस्य=कार्तिकेयस्य वा, रुद्रस्य=हरस्य वा, शिवस्य
=व्यन्तरविशेषस्य वा, वैश्रवणस्य वा, देवस्य=सामान्यदेवस्य वा, नागस्य=

काल की अपेक्षा लेकर इनमें वृद्धता कही गई है, और वह इस प्रकार से
है कि—जब ऋषभदेव भगवान् यहाँ विराजमान थे, तब उनके ज्येष्ठपुत्र भरत-
चक्रवर्ती ने अपने शासनकाल में देव गुरु धर्म के स्वरूप को सुनाने के लिये
इनकी स्थापना की थी। अतः स्थापना का काल बहुत ही अधिक प्राचीन
इस तरह से प्रमाणित होता है! बाद में ये वैदिकधर्म के उपासक बन गये
अतः ये ब्राह्मण कहलाने लगे। यहाँ प्रभृति शब्द से परिव्राजक आदि
कों का ग्रहण हुआ है। पाण्ड शब्द का अर्थ व्रत है। व्रतका
पालन करने वाले पाण्डस्थ है। यहाँ यावत् शब्द से २१, वेः सूत्र
में कथित प्रातःकाल की ३ अवस्थाओं का और सूर्य के सहस्ररश्मि-दिनकर
आदि विशेषणों का ग्रहण किया गया है। स्कन्द नाम कार्तिकेय का है।
रुद्रनाम महादेव का है। शिव-व्यन्तरदेव विशेष का नाम है। वैश्रवण

कथननुं नीचे प्रमाणों स्पष्टीकरण समझनुं—ज्यारे ऋषभदेव लगवान् अही विराज-
मान् होता, तयारे तेमना ज्येष्ठ पुत्र भरतचक्रवर्तीये, प्रोतानां शासनकालमां देव,
गुरु अने धर्मनुं स्वइय संलगाववाने। कालेषु प्राचीन होवानी बात प्रमाणित
(सिद्ध) यथं ज्ञाय छे। तयार बाद ते दोको वैदिक धर्मना उपासक भनी गया, अने
ते कारणे—प्राह्मण्य तरीके ओणभावा लाया आरीते प्राचीन कालमां ज्येष्ठो जिते-
न्द्रना उपासको होता, पणु पाछणथी नैदिक धर्मना उपासक भनी गयी। ओवा
दोकोने अही, “वृद्धप्रावक” कहा छे। अही ‘प्रभृति’ पदने प्रयोग करीने सूत्रकारे
अही परिव्राजक आदि अन्य पन्थना दोकोने ग्रहण करवावुं सूचन कथुं छे।
“पाण्ड” आ पद “व्रत”ना अर्थमां वपरायुं छे। व्रतने पालन करनारने ‘पाण्ड-
स्थ’ कहे छे। “कलं पादुप्रभायाए रयणीए जाव तेयसां जलते” आ सूत्रपाठिमां
“जाव (यावत्)” पद आंयुं छे। तेना द्वारा २१ मां सूत्रमां कथित प्रातःकाली
त्रय अवस्थाओने तथा सूर्यना सहस्ररश्मि दिनकर आदि विशेषणोने ग्रहण
करवामां आवेल छे।

स्कंध ओटवे कार्तिकेय, रुद्र ओटवे महादेव, शिव आ, शण्ड व्यन्तरदेव-

भवनपतिविशेषस्य वा, यक्षस्य वा, भूतस्य वा यक्षोभूतौ व्यन्तरविशेषौ मुकु-
न्दस्य=नारायणस्य वा, आर्यायाः=आर्यादेवी विशेषः, तस्या वा, दुर्गायाः—
सिंहारूढामहिषासुरं हतुं तदुपरिनिहितैकचरणा दुर्गा तस्या वा, कोट्टक्रियायाः
=महिषकट्टनपरा कोट्टक्रिया—तस्या वा, उपलेपनसंमार्जनावर्षणधूपपुष्पगन्धमाल्या-
दिकानि=द्रव्यावश्यकानि कुर्वन्ति । तत्र उपलेपनम्=नवनीताद्युपलेपः, सम्मार्जनं=
वस्त्रखण्डेन संशोधनम्, आवर्षणम्=दुग्ध—गन्धोदकादिना स्नपनम्, पुष्पं=पुष्पैः
पूजनम्, धूपः=धूपदानम्, गन्धः=चन्दनाद्यनुलेपनम्, माल्यं=मालापरिधापनम्,
एतान्यादौ येषां तानि तथा, द्रव्यावश्यकानि कुर्वन्ति । अयं भावः—य इमे
चरकचीरिकादयः पापण्डस्थाः कलये प्रादुष्प्रभातरजन्यादिक्रमेण समुत्थाय इन्द्रा-
कुबेर का नाम है । भवनपति विशेष नागकुमार का नाम नाग है । यक्ष और
भूत ये व्यन्तरदेवविशेष हैं । नारायण का नाम मुकुन्द है । दुर्गा नाम की
एक देवी है । जिसकी सवारी सिंह पर है । महिषासुर को मारने के लिये
इसका एक चरण सिंह पर रखा रहता है—इसरूप में इसकी मूर्ति बनी हुई
होती है । कोट्टक्रिया नाम की भी एक देवी होती है । जिसने महिषासुर
का नाश किया है । नवनीत—मखन आदि वा इन पर उपटन करना इसका
नाम उपलेपन है । वस्त्रखंड से इनको झाड़ना पोछना इसका नाम सम्मार्जन
है । दुग्ध एवं गन्धोदक से इन्हें नहलाना इसका नाम स्नपन है । तात्पर्य
कहने का यह है कि जो चरक चीरक आदि पापण्डस्थ प्रातःकाल आदि के

विशेषने भाटे वपराये छे. वैश्रण्व ओटवे कुबेर नामने. दोकपोल हसं प्रकाशना
भवनपति देवाभां जे नागकुमार देवे छे तेमने अही “नाग” कहेवाभां आवेल
छे. यक्ष अने भूत आ भन्ने व्यन्तर निकायना देवे छे. “मुकुन्द” ओटवे नारायण
(विष्णु लगवान), “दुर्गा” आ नामनी ओक देवी छे. ते सिंहा पर सवारी करे छे.
महिषासुरने मारनारी आ देवीनी ओवी मूर्ति अनाववाभां आवे छे के जेना ओक
थरलु महिषासुर पर अने जीले सिंहा पर रहले होय छे. “कोट्टक्रिया” आ नामनी
पलु ओक देवी होय छे. जेले महिषासुरना ध्वंस कर्यो हुतो.

हुवे उपलेपन आदि पहोना अर्थ रूप करवाभां आवे छे—उपयुक्त देव-
देवीओनी मूर्ति पर माणलु आदिनुं उपटन (लेपन) करवुं तेनुं नाम उपलेपन
छे. वस्त्रना ककडा वडे तेमनी मूर्तिओने लूखी अथवा आपटवी तेनुं नाम सम्मा-
र्जन छे. दूध अने गन्धोदक (सुगन्धयुक्त जल) आदि वडे तेमनी मूर्तिओने
नवरावधी तेनुं नाम ‘स्नपन’ छे.

आ सधणा कथनने लावार्थ ओ छे के चरक, चीरक आदि उपयुक्त पापण्ड-
स्था (पापण्डीओ) प्रातःकाल आदि समये इन्द्रादिकेनी प्रतिमाओनुं उपलेपन आदि

દીનામુપલેપનાદીનિ દ્રવ્યાવશ્યકાનિ કુર્વન્તિ, તૈઃ કૃતમુપલેપનાદિકં કુપ્રાવચનિકં દ્રવ્યાવશ્યકમિતિ । અત્રાપિ અપ્રાધાન્યાદ્ દ્રવ્યત્વમ્, અપ્રાધાન્યં ચોપલેપનાદૌ મોક્ષકારણભાવાવશ્યકાપેક્ષયા બોધ્ય ,

મોક્ષકારણં તુ ભાવાવય મેવ ન તુ દ્રવ્યાવશ્યકમ્,

અતોઽપોલેપનાદિ દ્રવ્ય વશ્યકસ્યાપ્રાધાન્યં ભવતીતિ ।

સર્વથા-આગમત્વાભાવાત્ નોઆગમત્વં ચ જ્ઞેયમ્ । તદેતત્કુપ્રાવચનિકં દ્રવ્યાવશ્યકં વર્ણિતમિતિ ॥સૂ. ૨૧॥

જ્ઞાયકશરીર-ભવ્યશરીરવ્યતિરિક્તં દ્રવ્યાવશ્યકમ્ લોકોત્તરિકરૂપં તૃતીય-
ભેદમાહ--

મૂલમ્—સે કિં તં લોગુત્તરિયં દઢ્વાવસ્સયં ? લોગુત્તરિયં દઢ્વા-
વસ્સયં જે इमे समणगुणमुक्कजोगी छक्कायनिरणुक्कंपा हय इव उद्दामा,
गया इव निरंकुसा, घट्टा मट्टा तुप्पोट्टा पंडुरपडपाउरणा जिणाणां
मणाणाए सछंदं विहरिऊणं उभओ कालं आदस्सयस्स उवट्ठंति ।
સે તં લોગુત્તરિયં દઢ્વાવસ્સ । સે ત જાણયસરીરભવિયસરીર-
વહરિત્તં દઢ્વાવસ્સયં । સે તં નોઆગમઓ દઢ્વાવસ્સયં ॥સૂ. ૨૨॥

હો જાને પર ઇન્દ્રાદિકોં કી પ્રતિમાઓં કા ઉપલેપન આદિ આવશ્યક કૃત્ય
કરતે હૈં વે સબ કૃત્ય કુપ્રાવચનિક દ્રવ્યાવશ્યક હૈં । इन उपलेपनादि क्रियाओं
में मोक्ष के कारणभूत भावावश्यक की अपेक्षा अप्रधानता होने से द्रव्यत्व
जानना चाहिये और सर्वथा आगम के अभावका अपेक्षा नोआगमता जाननी
चाहिये । इस प्रकार कुप्रावचनिक द्रव्यावश्यक का यह स्वरूपवर्णित किया
है । भावार्थ स्पष्ट है—॥सूत्र २१॥

અવ સૂત્રકાર તદ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાવશ્યક કા તીસરા ભેદ જો લોકોત્ત-
રિક દ્રવ્યાવશ્યક હૈ—ઉસકા કથન કરતે હૈં—

આવશ્યક કૃત્યો કરે છે. તે બધાં કૃત્યોને કુપ્રાવચનિક દ્રવ્યાવશ્યક કહેવામાં આવે
છે. તે ઉપલેપન આદિ ક્રિયાઓમાં મોક્ષના કારણભૂત ભાવાવશ્યકની અપેક્ષાએ
અપ્રધાનતા હોવાથી દ્રવ્યત્વનો સદ્ભાવ સમજવો જોઈએ. અને આગમના સર્વથા
અભાવની અપેક્ષાએ નો આગમતા સમજવી જોઈએ. આ પ્રકારે કુપ્રાવચનિક
દ્રવ્યાવશ્યકનું આ સ્વરૂપ અહીં પ્રતિપાદિત કરવામાં આવ્યું છે. ભાવાર્થ સ્પષ્ટ છે. ॥સૂ. ૨૧॥

તદ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાવશ્યકના લોકોત્તરિક દ્રવ્યાવશ્યક નામના ત્રીજા ભેદનું સ્વ-
રૂપ હવે સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે—“સે કિં તં લોગુત્તરિયં” ઇત્યાદિ—

અનુયોગચત્રિકા ટીકા--મુ. ૨૨ તદ્વ્યતિરિક્તલોકોત્તરીયદ્રવ્યાવશ્યકનિરૂપણમ્ ૧૫૧

છાયા—અથ કિં તદ્ લોકોત્તરિકં દ્રવ્યાવશ્યકમ્ ? લોકોત્તરિકં દ્રવ્યા-
વશ્યક—ય इमे श्रमणगुणमुक्तयोगिनः षट्कायनिरनुकम्पाः हया इव उदामानः,
गजा इव निःकुशाः, घृष्टाः मृष्टाः, तुम्रोष्ठाः पाण्डुरपटप्रावरणाः जिनातामनाज्ञया
स्वच्छन्दं विहृत्य उभयकालम् आवश्यकाय उपतिष्ठन्ते । तदेतद् लोकोत्तरिकं द्रव्या-
वश्यकम् । तदेतद् ज्ञायकशरीर-भव्यशरीरव्यतिरिक्तं द्रव्यावश्यकम् । तदेतत्
नो आगमतो द्रव्यावश्यकम् ॥सू० २२॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ । અથ કિં તદ્ લોકો-
ત્તરિકં દ્રવ્યાવશ્યકમ્ ? ઉત્તરમાહ—લોકોત્તરિકં લોકેષુ=ભુવનત્રયે ઉત્તરાः=ઉત્કૃષ્ટ-
તરાઃ સાધવઃ, યદ્વા—લોકેષુ=ભુવનત્રયે ઉત્તરમ્=ઉત્કૃષ્ટતરં જિનપ્રવચનં, તેષાં તસ્ય
વા-ઇદમ્—લોકોત્તરિકં સાધુસમ્બન્ધિજિનશાસનસમ્બોન્ધ વા, દ્રવ્યાવશ્યકમ્ એવં
વિજ્ઞેયમ્ ય इमे श्रमणगुणमुक्तयोगिनः—શ્રમણાઃ=સાધવસ્તેષાં ગુણાઃ=મૂલોત્તર-
ગુણરૂપાઃ, તત્ર—પ્રાણાતિપાતવિરમણાદયો મૂલગુણાઃ, પિન્ડવિશુદ્ધ્યાદયસ્તૂત્તર-
ગુણાઃ—તેષુ મુક્તઃ=પરિત્યક્તો યોગો=વ્યાપારો દૈસ્તે શ્રમણગુણમુક્ત-

“સે કિં તં લોગુત્તરિયં” ઇત્યાદિ । ॥સૂત્ર ૨૨॥

શબ્દાર્થ—(સે) હે મદંત । (તં) લોગુત્તરિયં દવ્વાવસયં કિં) લોકોત્તરિક
દ્રવ્યાવશ્યક કા કયાં સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(લોગુત્તરિયં દવ્વાવસયં) લોકોત્તરિક દ્રવ્યાવશ્યક કા સ્વરૂપ
इस प्रकार है—(जे इमे समणगुणमुक्कजोगी छक्काय निरणुक्का हया इव उदामा)
श्रमण के मूल गुणों और उत्तर गुणों में जिनका व्यापार परित्यक्त हो चुका
है—अर्थात्—मूलोत्तर गुणों में जिनकी बिल्कुल आस्था नहीं उपेक्षाहै अर्थात् उनसे
जो रहित है तथा छक्काय के जीवों के प्रति जिन के अन्तःकरण में दया
नहीं है, अतएव उदण्ड घोड़ों की तरह जिनकी प्रवृत्ति बिल्कुल हो रही है—

શબ્દાર્થ—(સે) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે—(તં) લોગુત્તરિયં દવ્વા-
વસયં કિં ?) કે ભદ્રન્ત ! પૂર્વપ્રસ્તુત લોકોત્તરિક દ્રવ્યાવશ્યકનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(તં) લોગુત્તરિયં દવ્વાવસયં) લોકોત્તરિક દ્રવ્યાવશ્યકનું આ પ્રકારનું
સ્વરૂપ છે.

(जे इमे समणगुणमुक्कजांगी छक्काय निरणुक्का हयाइव उदामा) श्रमणना
भूणगुणो अने उत्तरगुणोभांथी जेमने। व्यापार (प्रवृत्ति) परित्यक्त थछ चुकी छे-
अट्ठे के मुलोत्तरगुणोभां जेमने जिवकुल आस्था नथी यण उपेक्षा न छे-अट्ठे
के जेओ। श्रमणना भूणगुणोथी अने उत्तरगुणोथी रहित छे. तथा छक्कायना एवे
प्रत्ये जेमना अंतःकरणभां दया नथी. अने ते कारणे उदंभ अश्वनी जेम जेमनी

યોગિનઃ, મૂલોત્તરગુણરહિતા इत्यर्थः । एते कदाचित् सानुकम्पा
 अपि स्युरित्याह—‘छक्कायनिरणुकम्पा’ इति । पक्कायनिरनुकम्पाः—पक्कायेषु
 =पृथिव्यादिषु निर्गताः=अनुकम्पा दया येषां ते तथा, षड्जीवनिकायदयावर्जिताः
 अत एव—ते हया इव उद्दोमानः=वल्गारहिता अश्वा इव, चरणनिपातजीवोप-
 मदर्निरपेक्षत्वात् द्रुतचारिणः, गजा इव निरङ्कुशाः=आचार्याज्ञोल्लङ्घनशीलत्वात्
 तथा—घृष्टाः=फेनादिना श्लक्ष्णीकृत=जङ्घाधवयवा अवयवाधवविनोरभेदोपचारात्
 घृष्टाः । तथा—मृष्टा=तैलादयमादिना मृष्टाः चिकणीकृताः केशाःशरीरं वा येषां ते
 मृष्टाः, तथा—तुषांष्टाः=शीतकालि रूक्षत्वापनयनार्थं नवनीतादिस्निग्धपदार्थे
 म्रक्षिता ओष्ठा येषां ते तथा, नवनीतादिभिः चिकणितौष्ठा इत्यर्थः, तथा—

अर्थात् जिस प्रकार विनालंगाम के अश्व चरण निपात में जीवोपमर्द निरपेक्ष होने से
 द्रुतगति किया करते हैं उसी तरह जो ईर्यासमिति से रहित होने के कारण
 दवदवचारी (द्रुतचारी) होते हैं (गयाइव निरंकुसा) मदोन्मत हाथी की तरह जो
 निरङ्कुश होते हैं—जिस प्रकार मदोन्मत गज अपने महावत की आज्ञा से
 बहिर्भूत बन जाया करता है—उसी प्रकार जो आज्ञा को नहीं मानते हैं—
 (घट्टा) जिन्होंने फेन आदिसे जंघा आदि अवयों का चिक्राण—(मुलायम) बनाया
 है (मट्टा) तैल आदिस्निग्धपदार्थों से केशों का जो संस्कार करते हैं, जल
 से बार २ जो शरीर को धोते रहते हैं (तुष्पोट्टा) शीतकाल जन्य ओष्ठों की
 रूक्षता हटाने के लिये जो नवनीत-मखन-आदि स्निग्धपदार्थों की उनमें
 मालिश करते हैं—अर्थात् नवनीतादिक की मालिश से जो अपने ओष्ठयुगल

પ્રવૃત્તિ આ. । રહી છે. એટલે કે જેવી રીતે અશ્વ જમીન પર ચરણ મુકતી વખતે
 જીવોપમર્દનની પેરવી કર્યા વિના દ્રુતગતિથી ચાલ્યા કરે છે. એજ પ્રમાણે જેઓ
 ઇર્યાસમિતિથી વિહીન હોવાને કારણે જીવોપમર્દનની પેરવા કર્યા વિના શીઘ્રગતિથી
 ચાલ્યા કરતા હોય છે (તાચારી હોય છે). (ગયાઇવ નિરંકુસા) જેઓ મદોન્મત
 હાથીના જેવાં નિરંકુશ હોય છે—જેમ મદોન્મત હાથી તેના મહાવતની આજ્ઞા
 પ્રમાણે ચાલતો નથી એજ પ્રમાણે જેઓ શુરુની આજ્ઞાને માનતા નથી. (ઘટ્ટા)
 ફેન (એક પ્રકારનો સ્નિગ્ધ પદાર્થ) આદિ વડે જેમણે જાંઘ આદિ અવયવોને મુલા-
 યમ બનાવ્યાં છે. (મટ્ટા તૈલ આદિ સ્નિગ્ધ પદાર્થ વડે જેઓ પોતાના વાળનો
 સંસ્કાર કરે છે. અને જેઓ જળથી શરીરને વારંવાર ધોયા કરે છે.
 ધોયાં કરે છે, (તુષ્પોટ્ટા) ઠંડીને કારણે કાટી ગયેલા હાઠની રૂક્ષતા દૂર કરવાને માટે
 જેઓ માળણ, સ્નેહ, વેસેલીન આદિ સ્નિગ્ધ પદાર્થોનું તેના પર માલિશ કરે છે,
 એટલે કે જેઓ સ્નેહ આદિના માલિશ વડે પોતાના હાઠને મુલાયમ રાખવાનો

પાણ્ડુરપટપ્રાવરણાઃ—પાણ્ડુરાઃ ધૌતાઃ મલપરીપહસહનાક્ષમત્વાત્, પટાઃ=પરિધાન-
વસ્ત્રાણિ, પ્રાવરણાનિ—શરીરાચ્છાદનવસ્ત્રાણિ ચ યેષાં તે તથા, પરિહિતનિર્મલ-
વસનાઃ, જિનાનામનાજ્ઞયા સ્વચ્છદં વિહત્ય—જિનાજ્ઞામનાદૃત્ય સ્વસ્ત્ર રુચ્યા વિવિધ-
ક્રિયાઃ કૃત્વા ઉભયકાલં—પ્રાતઃસાયમ્ આવશ્યકાય—પ્રતિક્રમણાય ઉપતિષ્ઠન્તે—
ઉદ્યુક્તા ભવન્તિ । તત્તેષામાવશ્યકં લોકોત્તરિકં દ્રવ્યાવશ્યકમ્ । અત્ર દ્રવ્યાવશ્યક-
ત્વં ભાવશૂન્યત્વાત્, તત્ફલાભાવાત્, સંસારકારણત્વાન્ચ અપ્રધાનતયા વોદ્યમ્ ।

કો ચિકને રચતે હૈ. (પંડુરપટપાઉરણા) જો મલ પરીપહ કો સહને મેં અસમર્થ
હોને કે કારણ અપને પહનને ઓર ઓઢને કે વસ્ત્રોં કો ધોને મેં આસક્ત રહતે
હૈ—। જિનાણમણાણા) જિન મગવાનુ શી આજ્ઞાકી પરવાહ ન કરકે જો (સ
છંદં વિહરિજ્ઞં) અપની અપની રુચિ કે અનુસાર વિવિધ ક્રિયાઓં લેા કરકે
(ઉમઓ કાલં) પ્રાતઃ સાયં દોનોં સમય (આવસ્સયસ્સ ઉવઠંતિ) પ્રતિક્રમણ કરને
કે લિયે ઉદ્યુક્ત હેતે હૈ (સે) સો (તં લોઉત્તરિયં દ્રવ્યાવશ્યકં) ઉનકા વહ
આવશ્યક-પ્રતિક્રમણ—લોકોત્તરિક દ્રવ્યાવશ્યક હૈ । (સે તં જાણયસરીર ભવિય
સરીરવદ્દરિત્તં દ્રવ્યાવશ્યકં) ઇસ તરહ જ્ઞાયકશરીર ઓર ભવ્યશરીર ઇન દોનોં સે
જુદા યહ દ્રવ્યાવશ્યક—લોકોત્તરિક દ્રવ્યાવશ્યક હૈ । ઇન ક્રિયાઓં મેં ભાવ-
શૂન્યતા હોને કે કારણ ઉનકા કોઈ વાસ્તવિક ફલ પ્રાપ્ત નહીં હોતા હૈ—
ઉલ્ટા ઉન સે સંસાર વા હી વર્ધન હોતા હૈ । ઇસલિયે ઇન ભાવશૂન્ય દ્રવ્ય-
લિજ્ઞિ સાધુઓં દ્વારા કિયા ગયા આવશ્યક કર્મ અપ્રધાન હોને કે કારણ દ્રવ્યા-

પ્રયત્ન કરતા રહે છે, (પંડુરપટપાઉરણા) જેઓ મલપરીપહને સહન કરવામાં અસ-
મર્થ હોવાને કારણે પોતાના પહેરવા ઓઢવાના વસ્ત્રોને ધોવામાં આસક્ત રહે છે.
(જિનાણમણાણા) જિનેન્દ્ર લગવાનની આજ્ઞાની પરવા કર્યા વિના જેઓ (સછંદં
વિહરિજ્ઞં) પોતાની ઇચ્છા અનુસારની વિવિધ ક્રિયાઓ કરીને (ઉમઓકાલં)
પ્રાતઃકાળ અને સાયંકાળ, આ બન્ને સમયે (આવસ્સયસ્સ ઉવઠંતિ) પ્રતિક્રમણ કર-
વાને તૈયાર થાય છે, (સે તં લોઉત્તરિયં દ્રવ્યાવશ્યકં) તે તેમની તે આવશ્યક
ક્રિયાપ્રતિક્રમણ લોકોત્તરિક દ્રવ્યાવશ્યકપ્રતિક્રમણ ગણાય છે. (સે તં જાણયસરીર ભવિય
સરીરવદ્દરિત્તં દ્રવ્યાવશ્યકં) જ્ઞાયકશરીર અને ભવ્યશરીર, આ બન્નેથી ભિન્ન
એવા દ્રવ્યાવશ્યકના લોકોત્તરિક દ્રવ્યાવશ્યક નામના ત્રીજા ભેદનું આ પ્રકારનું સ્વ-
રૂપ સમજવું. આ ક્રિયાઓમાં ભાવશૂન્યતા હોવાને કારણે તેમનું કોઈ વાસ્તવિક
ફલ પ્રાપ્ત થતું નથી, પરંતુ ઉલ્ટો સંસાર જ વધે છે. તેથી આ પ્રકારના દ્રવ્ય-
લિંગી સાધુઓ દ્વારા કરવામાં આવેલું આવશ્યકકર્મ અપ્રધાન હોવાને કારણે દ્રવ્યા-

નોઆગમત્વં ચ દેશે ક્રિયાલક્ષણે આગમાભાવાત્ । ‘નો’ શબ્દસ્યાત્ર દેશપ્રતિષેધ-
વચનત્વં બોધ્યમ્ । આવશ્યકજ્ઞાનસદ્ભાવાદાગમોઽપિ દેશતો વર્તતે, इति ।

અત્ર લોકોત્તરિકદ્રવ્યાવશ્યકે દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શયતે—પુરા વસન્તપુરે નગરેઽ-
ગીતાર્થે એકઃ સંઘો વિહરતિઃમ્ । તત્ર સંઘે સાધુગુણરહિતઃ કશ્ચિત્સંવિગ્નાભાસઃ
સાધુઃ પ્રતિદિનં પુરઃકર્માદિદોષદુષ્ટમનેષણીયં ભક્તાદિં ગૃહીત્વા મહતા સંવેગેન
પ્રતિક્રમણકાલે સર્વમાલોચયતિ । અગીતાર્થો ગચ્છાચાર્યઃ તસ્મૈ અગીતાર્થત્વાત્

વશ્યક માના ગયા છે એસા જાનનાં ચાહિયે । યહાં પર ‘નો’ શબ્દ એક દેશ પ્રતિ-
ષેધ અર્થે મેં પ્રયુક્ત હુઆ છે । અર્થાત્ પરિક્રમણ ક્રિયારૂપ એકદેશ મેં આગમ
રૂપતા નહીં છે । પરન્તુ પ્રતિક્રમણરૂપ આવશ્યક કે જ્ઞાન વા સદ્ભાવ હોને સે
વહાં આગમ મીં ઇસ તરહ એકદેશરૂપ આવશ્યક ક્રિયા મેં આગમ વાં પ્રતિ-
ષેધ યહ ‘નો’ શબ્દ કરતા છે । ઓર યહ પ્રવટ કરતા છે કિં યહાં કેવલ
આગમ એકદેશ મેં વર્તમાન છે । ઇસ તરહ “નો” શબ્દ મેં દેશ પ્રતિષેધવચ-
નતા જાનની ચાહિયે । લોકોત્તરિક દ્રવ્યાવશ્યક કે ઉપર દૃષ્ટાન્ત ઇસ પ્રકાર
સે છે—પ્રાચીનકાલ મેં વસન્તપુર નામ કે નગર મેં એક અગીતાર્થ સંઘવિહાર
કરતા હુઆ આયા । ડસમેં સાધુગુણોં સે રહિત એક સાધુ થા । જો સંવિગ્ના-
ભાસ (ઉપર સે વૈરાગ્ય દેખાનેવાલા) થા । વહ પ્રતિદિન પુરઃ કર્માદિં દોષોં
સે યુક્ત અનેષણીય આહાર લે કરકે આતા—ઓર વડે હી સંવેગ ભાવ સે

વશ્યકરૂપ માનવામાં આંચું છે, એમ સમજવું. અહીં “નો આગમ” પદમાં વપરાયેલો
“નો” શબ્દ એક દેશ પ્રતિષેધ (નિષેધ)ના અર્થમાં પ્રયુક્ત થયો છે, એટલે કે
પ્રતિક્રમણ ક્રિયારૂપ એક દેશમાં આગમરૂપતા હોતી નથી, પરન્તુ પ્રતિક્રમણરૂપ
આવશ્યક જ્ઞાનનો સદ્ભાવ હોવાથી ત્યાં આગમનો પણ એકદેશની અપેક્ષાએ
સદ્ભાવ હોય છે. આ રીતે ‘નો’ પદ અહીં એક દેશરૂપ આવશ્યક ક્રિયામાં આગમ-
નો પ્રતિષેધ (નિષેધ) કરે છે, અને એ વાત પ્રકટ કરે છે, કે ત્યાં આગમ કેવળ
એક દેશતઃ વર્તમાન છે. આ પ્રમાણે “નો” શબ્દમાં દેશ પ્રતિષેધ વચનતા સમ-
જવી જોઈએ લોકોત્તરિક દ્રવ્ય-વશ્યકત્વં પ્રતિપાદન કરવાને માટે હવે નીચેનું
દૃષ્ટાન્ત આપવામાં આવે છે—

પ્રાચીન કાળમાં વસન્તપુર નામના નગરમાં અગીતાર્થ સાધુઓનો એક સંઘ
વિહાર કરતો કરતો આવી પહોંચ્યો. તે સંઘમાં સાધુઓના ગુણોથી રહિત, પણ
સંવિગ્નાભાસી (ઉપર ઉપરથી વૈરાગ્ય ભાવ દેખાડનારો) એવે. એક સાધુ હતો. તે
હંમેશા પુરઃકર્માદિ દોષોથી યુક્ત અનેષણીય (અકલ્પ્ય) આહાર વહોરી લાવતો
હતો. અને પ્રતિક્રમણ કરતી વખતે ઘણા જ સંવેગભાવ પૂર્વક પોતાના દોષોની

प्रायश्चित्तं प्रयच्छन् एवं वदति-पश्यन् साधवः । कथमयं स्वदुष्कृतमगोपयन्
अशठतया प्रकाशयति, दोषासेवने सुकरम्, आलोचना तु दुष्करा, अतोऽशठ-
तयैव शुध्यतेऽसौ । इत्थं तस्य प्रशंसां त्वाऽन्येऽपि अगीतार्थश्रमणास्तं प्रशंस-
न्ति, चिन्तयन्ति च गुरुसमीपआलोचनां चेत् शुद्धस्तर्हि असकृद्दोषासेवनायां
कृतायामपि न कश्चिद् दोषः । इत्थं गच्छति कियतिकाले तत्रैकः संविग्नगीतार्थः
कश्चित् साधुः समायातः । स प्रतिदिनमेवविधं व्यतिकरं विलोक्य तं गच्छा-

प्रतिक्रमण करने के समय में अपने दोषों की आलोचना करता । गच्छाचार्य
जी कि स्वयं अगीतार्थ थे वे अगीतार्थ जान करके उसके लिये प्रायश्चित्त दे ते
समय ऐसा कहते कि है साधुओं—देखो—यह साधु कितना भला है कि जो
अपने एक भी दोष को नहीं छिपाता है, और सबको सरल भावसे प्रकटकर
देता है । दोषों का सेवन तो हो जाता है, परन्तु उनकी आलोचना करना
बड़ा कठिन काम है । इसलिये यह किसी भी मायाचार के बिना जो
अपने दोषों की आलोचना करता है उसी से यह शुद्ध हो जाता है । इस
प्रकार आचार्यकृत प्रशंसा को सुनकर के संघस्थ अन्य अगीतार्थ श्रमणजन भी
उसकी प्रशंसा करने लगजाते । और विचारने लगते कि गुरु के समीप में
यदि आलोचना करने मात्र से ही दोषों की शुद्धि हो जाता है तो बार २
दोषों के सेवन करने में भी कोई हानि नहीं है । इस प्रकार करते २ जब
कितनाक समय निकल गया—तब उस संघ में एक संविग्न (क्रियापात्र) गीता
र्थ कोई साधु विहार करता हुआ बाहर से आया । जब उसने संघ की इस

आलोचना करतो हुतो. ते गच्छना आचार्य के जेयो अगीतार्थ हुता, तेयो आ
संविग्नलासी साधुने प्रायश्चित्त देती वण्णते साधुयोनी पासे तेनी आ प्रमाणे प्रशंसा
कर्या करतां हुतां—“हे साधुयो ! जेयो, आ साधु केटलो ललो छे के तेनो ओक
पणु दोष छुपावतो नथी, अने पोताना सधणा दोषोने सरलभावे प्रकट करी दे छे.
दोषोनु सेवन तो थछ जय छे, परन्तु तेमनी आलोचना करवानुं काम धालुं ज
कळणु छे. केछ पणु प्रकारना मायाचार बिना पोताना दोषोनी आलोचना करवाने
दीधे ते शुद्ध थछ जय छे.” आचार्य द्वारा तेनी आ प्रमाणे प्रशंसा थती जेधने
संघना अगीतार्थ अन्य श्रमणो पणु तेनी प्रशंसा करवा मंडी जता. ते संघना
साधुयोमां आ प्रकारनी जोटी मान्यता व्यापी गछ के गुरुनी समीपे मात्र आलो-
चना करवाथी ज दोषोनी शुद्धि थछ जती होय, तो वारंवार दोषोनुं सेवन करवा-
मां पणु केछ हानि नथी. आ प्रकारनी तेमनी प्रवृत्ति केटलाक समय सुधी थालु
ज रही. जेवामां केछ ओक संविग्न (क्रियापात्र) गीतार्थ साधु गामनगर आदिने
विहार करतो करतो ते वसन्तपुर नगरमां आवी पडोन्चा. जयादे तेले ते अगी-

चार्यमुक्तवान्—त्वमस्य शठसाधः प्रशंसां कुर्वन् अग्निभक्तप्रशंसको नृप इव दृश्यसे ।
गच्छाचार्येण तत्कथां कथयितुं प्रेरितः स संविग्नगीतार्थो मुनिरेवं प्रोक्तवान् ।

आसीद् गिरिनगरवासी कश्चिदग्निभक्तो वणिकः । स प्रतिवर्षं पद्मराग-
रत्नैः गृहं भृत्वा वह्निना तत् प्रदीपयति । अग्नौ तस्यैवं विधं श्रद्धातिशयं
विलोक्य, तन्नगरवासिनो जना नरपतिश्च विवेचितया तं प्रशंसन्त एवमवदन्ति—‘अन्यो-
ऽयं वणिकः, यः प्रतिवर्षं पद्मरागैर्वह्निं सन्तर्पयति । अथान्यदा प्रबलपवनवेगेन

प्रकार की प्रतिदिन की व्यवस्था देखी—तब उससे नहीं रहा गया—और गच्छा-
चार्य के पास जाकर उसने उनसे कहा आप इस शठ साधु की जो प्रशंसा
करते हैं—वह क्यों आपका अग्निभक्त की प्रशंसा करनेवाले एक राजा की
तरह है । यह कथा कैसी है इस प्रकार गच्छाचार्य के पूछने पर उस संवि-
ग्न गीतार्थ साधुने उन्हें यह कथा इस तरह से सुनाई—गिरिनगर में एक अग्नि-
भक्त वणिक रहता था । वह प्रतिवर्ष पद्मरागरत्नों को घर में भरकर उसमें
आग लगा देता था । उसके अविवेक पूर्ण कार्य की वहां का राजा और
पुरवासिजन सबही प्रशंसा करते । कहते—देखो इसके श्रद्धातिशय को—जो प्रति
वर्ष पद्मरागमणियों से अग्निदेव को संतर्पित रता है । एकदिन की बात
है कि जब उसने पद्मरागमणियों को भरकर घरमें आग लगाई—तब उस समय
आंधी के वेग से अग्निज्वाला इतनी अधिक प्रदीप्त हुई कि उसका संभालना
मुश्किल हो गया—। देखते ही उस प्रदीप्त अग्निने राजमहल सहित उस समस्तनगर

तार्थसंघना ते संविग्नवासी साधुनी ते प्रकारनी करदोजनी प्रवृत्ति देणी, त्याहे
तेनाथी ते सहन थळ शकी नही. तेणे ते अगीतार्थ संघाचार्यनी यासे जघने
तेमने आ प्रमाणे कळु — ‘आप आ शठ साधुनी जे प्रशंसा करे छ। ते अग्नि-
लकतनी प्रशंसा करनारा ओक राजाना कथं जेवुं कार्य छ. त्याहे ते संघाचार्य
तेमने पूछ्युं—‘अग्निलकतनी शी कथा छ ?

त्याहे ते संविग्न गीतार्थ साधुणे तेमने नीचे प्रमाणे कथा कळी—गिरिनगर-
मां ओक अग्निलकत वणिक रहेतो हुतो. ते अग्निदेवने भुश करवा माटे प्रतिवर्ष
पद्मराग रत्नेने घरमां लरीने तेने आग लगाउतो हुतो तेना आ अविवेकपूर्ण
कार्यनी त्याने राजा अने नगरवासींओ भूण प्रशंसा करता हुता. तेओ ओक ठीकने
कहेतां—‘जुओ तेने अग्निदेव प्रत्ये डेटली गधी श्रद्धा छ । ते श्रद्धाने कारणे तो
ते प्रतिवर्ष पद्मराग मणियोथी अग्निने संतृप्त करे छ.’ हुवे ओक दिवसे जेवुं
जन्थुं के ज्यारे ते वणिके घरमा पद्मरागमणियो लरीने घरने आग लगाडी त्याहे
अचानक आधी गडवाने कारणे ते आग ओमेर प्रसरी गध अने तेने काण्ठमां

प्रवर्द्धितरतत्प्रदीपितवह्नीराजप्रासादसहितं समस्तमपि तन्नगरं ददाह । ततो राज्ञा
सं वणिग्दण्डितो नगराद् निष्कासितश्च ।

तथा त्वमपि अविधिप्रवृत्तस्य अस्य प्रशंसां कुर्वन् आत्मानं संघं च विना
जयसि । यदि पुनस्तमेनं शिक्षयसि, तदाऽपर नृप इव स्वपरकल्याणकारको
भविष्यसि । तथाहि—

आसीत्कश्चिद् राजा, यो हि तथाविधकर्मकारिणं कंचीदेकं वणिजं समा-
हूय प्रोक्तवान्—यदि तव पद्मरागमणिभिरग्नेस्तर्पणमावश्यकं, तर्हि वने गत्वा
को भी स्वाहा कर दिया । राजा ने जब परिस्थिति का विचार किया तो
अपने भ्रजानना पर उसे बड़ा पश्चात्ताप हुआ । अन्तमें उसने उस वणिक् को दण्डित
कर अपने नगर से बाहिर निकाल दिया । इसी प्रकार आप भी अविधि में प्रवृत्त
हूँ इस साधु की जो प्रशंसा करते हैं—वह आप का आर संघ का विनाशक है ।
यदि इस संघ में आप किसी एक को भी शिक्षित करदे तो आपका यह कार्य
एक दूसरे राजा की तरह ही और पर का कल्याणकारक होगा—सुनिये—एक
राजा था। उसके राज्य में भी इसी अग्निभक्त वणिक् की तरह एक वणिक् रहता था।
वह भी प्रतिवर्ष पद्मरागमणियों के घर में भरार उसमें आग लगा देता था—और
इस तरह से अग्नि को संतर्पित किया करता था । जब राजा को उसकी इस बात का
पता लगा—तब उसे बुलाकर उसने कहा कि यदि पद्मरागमणियों से अग्नि
को संतर्पित करना तुम्हारे लिये आवश्यक है—तो तुम यह कार्य नगर में रह

देवानु कार्य सुशुद्ध गनी गयुं. ते आगनी ज्वाणायोमां राजभडेस सडित
आयुं नगर लक्ष्मीलूत थछ गयुं. ज्यारे राजने आ परिस्थितिना कारणेना शांत-
चित्ते विचार क्यो त्य रे तेने पोतानी अज्ञानताने माटे पश्चात्ताप थये. तेणे ते
वणिकने सज्ज इरमावीने पोताना नगरमांथी डांडी काढ्यो. ते राजनी जेम आप
अविधिमां—पापाचारमां प्रवृत्त थयेला आ थछ साधुनी जे प्रशंसा करे छे, ते
आपने अने संधने विनाश करनारी निवडशे. जे आप आ संधमांथी जेवा जेक
साधुने पणु शिक्षा करीने डांडी काढशे. तो आपनुं ते कार्य जेक भीज राजना
कार्यनी जेम रव अने परनुं कल्याण करनाइं थछ पडशे. हुवे ते सविज्ञ गीतार्थ
साधु ते राजनी कथा ते आचार्यने कडी संलगावे छे --

कैछ जेक राजना नगरमां उपर्युक्त अश्लिषकत वणिक जेवे जेक वणिक
रहेतो हुतो. ते पणु अग्निदेवने तृप्त करवा नमिस्ते प्रतिवर्ष पोताना घरमां पद्म-
रागमणियो लरीने घरने आग लगाडी देतो हुतो ज्यारे राजने तेनी आ वातनी
अणर पडी त्यारे तेणे ते वणिकने पोतानी पासे गोदावीने आ प्रभाणे जेतवणी
आपी—जे पद्मराग मणियो घरमां लरीने तेने आग लगाडीने तमे अग्निदेवने

कथं नैव करोषि ? तवैवंविधया क्रियया कदाचित्सम तोऽपि प्राप्नोति विनश्येत् । इत्येवं तं निर्भर्त्स्य दण्डयित्वा नगराद् निष्कासितवान् । तथा त्वमपि कुरु ।

एवं तेन संविग्नगीतार्थेन बहुशः प्रतिबोधितोऽपि स गच्छाचार्यो यदा स्वव्यापारान्न निवृत्तस्तदा स साधुः अन्यान् गच्छस्थितान् साधून् एवमुक्तवान् — “यद्येषोऽसंविग्नोऽगीतार्थो गच्छाधिपो भवद्भिर्न परित्यज्यते, तदा भवतां महान् अनर्थो भविष्यतीति । एवंविधं साध्वाभासावशं कप्रकारं सर्वलोकोत्तरिकं द्रव्यावश्यकम् । एतत्सर्वं निगमयन्नाह—‘से तं लोकोत्तरियं द्रव्यावस्सगं’

कर क्यों करते हो—क्यों नहीं जंगल में जाकर इसे किया करते हो । क्यों कि इस तुम्हारी प्रवृत्ति से कभी न कभी समस्त ग्राम के नष्ट होने की संभावना है । अतः तुम इस दुष्प्रवृत्ति का या तो त्याग करो नहीं तो गाँव से बाहिर निबल जाओ । इस प्रकार डाँट डपट कर उस रज्जुजाने उसे दण्डित करके अपने नगर से बाहिर निकाल दिया । अतः आप भी संघ की कल्याण कामना से ऐसा ही कीजिये । इस प्रकार उस संविग्नगीतार्थ साधुने उन गच्छाचार्य को बहुत प्रकार से समझाया । परन्तु जब वे समझाने पर नहीं समझे तब उस आगतसाधुने संघस्थित अन्य साधुओं से इस प्रकार कहा—देखो यह गच्छाधिपति असंविग्न (क्रियाहीन) और अगीतार्थ है, यदि आपलोग इससे अलग नहीं होते हैं—तो इसमें आप सब का बड़ा भारी अनर्थ होगा । इस प्रकार का साध्वाभासों (वेपथारियों) का जो भी आवश्यक प्रकार है वह

संतुष्ट करवानुं आवश्यक मानता हो। तो तमारे नगरमां रड्डीने ओवुं कार्य करवुं जेधजे नडीं। जंगलमां जधने तमे ते काम करी शके हो। नगरमां रड्डीने तमे तमारी आ प्रवृत्ति आबु राणशे। तो तमारी आ दुष्प्रवृत्तिने कारणे डोछ वार आभा नगरने लस्मीभूत करी नाणशे। भाटे डां तो तमारी आ दुष्प्रवृत्ति जध करी हो नडीं तो ग्राम छोडीने जता रडो” आ प्रमाणे धमकावीने राजजे तेने पोताना नगरमांथी डांकी काढये। आपे पणु संघना कल्याणने आतर ते शठ साधुने संघमांथी डांकी काढये जेधजे आ प्रमाणे ते स विग्नगीतार्थ साधुजे ते गच्छाचार्यने भूणभूण समजव्या, छतां पणु जयारे तेमजे तेनी वातने न स्वीकारी तयारे ते संविग्नगीतार्थ साधुजे ते संघना अन्य साधुजोने आ प्रमाणे कह्युं—आ गच्छाधिपति असंविग्न (क्रियाहीन) अने अगीतार्थ छ जे आप तेगनाथी बुद्धा नडीं पडे तो आपनुं अकल्याण थशे। आपने संसार अल्प थवाने जहले दीर्घ थतो जशे।”

आ प्रकारना द्रव्यदिंगी साधुजोनी (मात्र वेपनी अपेक्षाजे न साधु देखाता होय पणु साधुना आचारोथी रडित होय जेवा साधुने द्रव्यदिंगी कहे छ) जे

इति तदेतत् लोकोत्तरिकं द्रव्यावश्यकं वर्णितम् । नोआगमतो द्रव्यावश्यकमपि सर्वं निरूपेतमिति एकटयितुमाह—तदेतद् नोआगमतो द्रव्यावश्यकं वर्णितम् । तदेतत् द्रव्यावश्यकं वर्णितम्, इति ॥सू० २२॥

अथावसरभासं भावावश्यकं निरूपयितुमाह—

मूलम्—से किं तं भावावस्सयं ? भावावस्सयं दुविहं पणत्तं, तं जहा आगमओ य, नो आगमओ य ॥ सू० २३ ॥

छाया—अथ किं तद् भावावश्यकम् ? भावावश्यकं द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्य ॥—आगमतश्च, नोआगमतश्च ॥सू० २३॥

टीका—शिष्यः पृच्छति—‘से किं तं भावावस्सयं’ इति । हे भदन्त ! अथ किं तद् भावावश्यकम् ? उत्तरमाह—‘भावावस्सयं’ इति । भावावश्यकं-

सब लोकोत्तरिक द्रव्यावश्यक है । इस तरह यहाँ तक (से तं नोआगमओ द्रव्यावस्सयं) पूर्व प्रक्रान्त नोआगम द्रव्यावश्यक का कथन किया गया है कि नोआगम को लेकर द्रव्यावश्यक के भेद प्रभेदों का पूर्वोक्त रूप से वर्णन हो चुका है । ॥ सूत्र २२ ॥

अब सूत्रकार भावावश्यक का वर्णन करते हैं—

से किं तं भावावस्सयं इत्यादि ॥सूत्र २३॥

शब्दार्थ—(से) हे भदन्त ! भावावश्यक का क्या स्वरूप है ?

उत्तर—(भावावस्सयं दुविहं पणत्तं) भावावश्यक दो प्रकार का है । (तंजहा) वे प्रकार ये हैं—(आगमओ य नोआगमओय) एक आगम को लेकर भावावश्यक और दूसरा नोआग को लेकर भावावश्यक । विवक्षित क्रिया के अनुभव से युक्त जो साध्यादिरूपपदार्थ है उसका नाम भाव है । यहाँ भाव

कोई आवश्यक क्रियाओं द्वारा है । ते लोकोत्तरिक द्रव्यावश्यक रूप गणाय छः (से तं नो आगमओ द्रव्यावस्सयं) आ रीते अही सुधीमां पूर्वप्रस्तुत नोआगम द्रव्यावश्यकनु कथन करवामां आणुं छे. ओम समजपुं. कडेवानुं तात्पय ओ छे के नोआगमनी अपेक्षाओ द्रव्यावश्यकना ने लेह-प्रलेहो पडे छे. तेमनुं वर्णन अही पूरुं थाय छे. ॥सू० २२॥

इसे सूत्रकार भावावश्यकना स्वरूपनुं निरूपण करे छे—

‘से किं तं भावावस्सयं’ इत्यादि—

शब्दार्थ—(से) शिष्य गुरुने ओयो प्रश्न पूछे छे के—तं भावावस्सयं किं) हे भगवन् ! भावावश्यकनुं स्वरूप केवुं कहुं छे ?

इह-विवक्षितक्रियानुभवयुक्तोयोऽर्थः साध्वादिरूपः स भावः। भाव तद्वतो भेदोपचाराद् भावः। यथा-ऐश्वर्यरूपायाः इन्दनक्रियायाः अनुभवाद् इन्द्रो भाव उच्यते। भाव-श्चासौ आवश्यकं च भावावश्यकम्। यद्वा-विवक्षितक्रियानुभवरूप भावमाश्रित्य आवश्यकं भावावश्यकम्।

तद् द्विविधं प्रज्ञेयम्। तद् यथा-आगमतश्च=आगममाश्रित्य, नोआगम-तश्च=आगमाभावमाश्रित्य ॥ सू० २३ ॥

મૂલમ્—સે કિં તં આગમઓ ભાવાવસ્સય ? આગમઓ ભાવા-વસ્સયં જાણય ઉવઉત્તે । સે તં આગમઓ ભાવાવસ્સયં ॥ સૂ૦ ૨૪॥

છાયા—અથ કિં તદ્ આગમતો ભાવાવશ્યકમ્ ? આગમતો ભાવાવશ્યકં જ્ઞાયક ઉપયુક્તઃ । તદેતદાગમતો ભાવાવશ્યકમ્ ॥ સૂ૦ ૨૪ ॥

और भाववान् में अभेदोपचार किया गया है। इसलिये विवक्षित क्रिया के अनुभव से युक्त अर्थ को भाव कह दिया है। जैसे ऐश्वर्यरूप इन्दन क्रिया के अनुभव से इन्द्र भाव कहा जाता है। भावरूप आवश्यक का नाम भावावश्यक है। अथवा विवक्षित क्रिया के अनुभवरूप भाव को लेकर जो आवश्यक होता है उसका नाम भावावश्यक है। ॥सूत्र २३॥

ભાવાવશ્યક કા સ્વરૂપ આગમ કી અપેક્ષા લેકર સૂત્રવારે આ પ્રકાર સે પ્રકટ કરતે હૈં—સે કિં તં આગમઓ ભાવાવસ્સયં ઇત્યાદિ ॥સૂત્ર ૨૪॥

શબ્દાર્થ—હે મદંત ! આગમ કો આશ્રિત કરકે ભાવ આવશ્યક કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(ભાવાવસ્સયં દુવિહં પળ્લત્તં) ભાવાવશ્યકના બે પ્રકાર છે (તંજહા) તે પ્રકારે નીચે પ્રમાણે કહ્યા છે (આગમો ય નોઆગમો ય) (૧) આગમની અપેક્ષાએ ભાવાવશ્યક અને (૨) નો આગમની અપેક્ષાએ ભાવાવશ્યક.

વિવક્ષિત ક્રિયાના અનુભવથી યુક્ત જે સાધુ આદિ રૂપ પદાર્થ છે, તેનું નામ ભાવ છે અહીં ભાવ અને ભાવવાનમા અભેદોપચારની અપેક્ષાએ આ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે. તેથી વિવક્ષિત ક્રિયાના અનુભવથી યુક્ત અર્થને ‘ભાવ’ કહેવામાં આવ્યો છે. જેમ કે ઐશ્વર્ય રૂપ ઇન્દ્રન ક્રિયાના અનુભવથી ઇન્દ્રને ભાવરૂપ કહેવામાં આવે છે. ભાવરૂપ આવશ્યકનું નામ ભાવાવશ્યક છે. અથવા વિવક્ષિત ક્રિયાના અનુભવની અપેક્ષાએ જે આવશ્યક હોય છે, તેનું નામ ભાવાવશ્યક છે. ॥ સૂ૦ ૨૩ ॥

હવે સૂત્રકાર ભાવાવશ્યકના પ્રથમ ભેદ રૂપ જે “આગમનની અપેક્ષાએ ભાવાવશ્યક” છે, તેના સ્વરૂપનું કથન કરે છે—

टीका—शिष्यः पृच्छति—‘से किं तं आगमओ भावावस्सयं’ इति ।

अथ किं तद् आगमतो भावावश्यकम् ? उत्तरमाह—‘आगमओ भावावस्सयं’ इत्यादि ।
आगमतो भावावश्यकम् ज्ञातक उपयुक्तः । अयमर्थः—आवश्यक आश्रित पदार्थ-
जनित-संवेगेन विशुध्यमानपरिणाम तत्र चोपयुक्तः साध्यादिरागमतो भावा-
वश्यकम् । आवश्यकार्थज्ञानरूपस्यागमस्यात्र सत्त्वात् । भावेश्चात्रावश्यकार्थज्ञान-
जनितोपयोगवत्त्वात्, भावमाश्रित्यावश्यकमिति व्युत्पत्तेः । इदमुक्तं भवति—अवि-

उत्तर—(आगमओ भावावस्सयं जाणय उवउत्ते) आवश्यकसूत्र के अर्थ को जानने वाला ऐसा उसमें उपयोगयुक्त बना हुआ साध्यादि कि जिसके परिणाम संवेग से विशुद्ध बन रहे हैं आगमतः भावावश्यक है । क्योंकि इसमें आवश्यक सूत्र के अर्थज्ञानरूप आगमका सद्भाव हो रहा है । यद्यपि आश्रित के अर्थज्ञान से जनित जो उपयोग है उसका नाम भाव है । और इस भाव को आश्रित करके जो आवश्यक है वह भावावश्यक है, इस प्रमाण की व्युत्पत्ति से आवश्यक अर्थ के ज्ञाता का आवश्यक में उपयोगरूप बना हुआ परिणाम, आगम से भावावश्यकरूप उहरता है फिर भी जो साध्यादि को भावावश्यकरूप में कहा जाता है वह इस प्रकार के परिणाम से युक्त होने के कारण उपचार से कहा जाता है ऐसा जानना चाहिये । आवश्यक में जो यह उपयोग परिणाम

से किं तं आगमओ भावावस्सयं ” इत्यादि—

शण्ढार्थ—हे लगवन् ! आगमने आश्रित करीने (आगमनी अपेक्षाये) लाव आवश्यकत्वं स्वरूप केवुं छे ?

उत्तर—(आगमओ भावावस्सयं जाणय उवउत्ते) आवश्यक सूत्रना अर्थने जाननारे अने तेमां उपयोग युक्त जनेवो साधु के जेनां परिणामो संवेगते दीधे विशुद्ध जनी रह्या होय छे, ते आगमनी अपेक्षाये लावावश्यक होय छे, कारण के जेवा साधुमां आवश्यक सूत्रना अर्थज्ञान रूप आगमने सद्भाव थछ रह्यो होय छे, जे के आवश्यकना अर्थज्ञानथी जनित जे उपयोग छि तेनुं नाम लाव छे, अने ते लावने आश्रित करीने जे आवश्यक छे, तेनुं नाम लावावश्यक छे, आ प्रकारनी व्युत्पत्ति अनुसार आश्रित अर्थना ज्ञातानुं आवश्यकमां उपयोगयुक्त जनेवुं परिणामे (गनोवृत्ति) आगमनी अपेक्षाये लावावश्यक रूप प्रतिपादित थाय छे, छतां पणु जे साधु आदिने लावावश्यक रूप कहेवामां आवेल छे ते आ प्रमाण परिणामथी युक्त होवाने कारणे औपचारिक रीते कहेवामां आव्युं छे, जेम समजवुं.

રૂપ ભાવાવશ્યક છે તે વહ ધર્મ પદવાચ્ય છે કયોંકિ યહ શ્રુત ધર્મ કે અન્તર્ગત છે
 હસી કી માન્યતા કે વિષય મેં જિન ભગવાન કી આજ્ઞા કા સદ્ભાવ છે ।—

તાત્પર્ય કહનેકા યહ છે કિ યહાં પર શંકાકાર કી એસી શંકા હો
 સકતી છે કિ નામ આવશ્યક, સ્થાપના આવશ્યક ઓર દ્રવ્ય આવશ્યક યે
 આરાધના કરને યોગ્ય છે એસી જિન ભગવાન કી આજ્ઞા હી નહીં છે યહ બાત
 તો નિશ્ચિત છે—કયોંકિ હનમેં ઉપયોગ કા અભાવ છે ઓર ચારિત્ર ગુણ વિહી-
 નતા છે । અતઃ યે કમોં કિ નિર્જરા કે સાધક નહીં હોતે છે । ઓર હસી
 વારણ યે ધર્મપદ વાચ્ય ખી નહીં હોતે છે । પરન્તુ જો સામાયિક આદિ રૂપ
 લોકોત્તરિક દ્રવ્યાવશ્યક છે કિ જો પ્રવચનોક્ત છે—આગમ સંમત છે—વહ તો
 ધર્મપદવાચ્ય હોના ચાહિયે—સો હસ શંકા વા સમાધાન હસ પ્રકાર સે છે—કિ
 સામાયિક આદિ ક્રિયાઈ પ્રવચનોક્ત અવશ્યક છે તો ખી વે જિનાજ્ઞા સે વહિ
 ભૂત બને હુઈ સાધ્વામાસોં (વેષધારિયોં) દ્વારા કિ જો સ્વચ્છંદ વિહારી હોતે
 છે, મૂલગુણ ઓર ઉત્તર ગુણોં મેં જિનહેં આસ્થા નહીં હોતી છે, છકાયના કે
 જીવોં કી રક્ષા કરનેરૂપ અનુકંપા વા ભાવ જિનકે અંતઃકરણ મેં શૂન્યરૂપ
 સે રહતા છે અનુપયોગપૂર્વક અપની રુચિ કે અનુસાર યદ્વા તદ્વા ક્રિયા કી

આવશ્યકમાં જે આ ઉપયોગ પરિણામ રૂપ ભાવાવશ્યક છે તે ધર્મ પદવાચ્ય છે,
 કારણ કે તે શ્રુતધર્મની અંદર સમાવિષ્ટ થઈ જાય છે. તેની જ માન્યતાના વિષયમાં
 જિનેન્દ્ર ભગવાનની આજ્ઞાનો સદ્ભાવ છે આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—
 કહાય કેાઈને એવી શંકા થાય કે નામ આવશ્યક સ્થાપના આવશ્યક અને
 દ્રવ્યાવશ્યક, તે ત્રણે આવશ્યકો આરાધના કરવા યોગ્ય છે, એવી જિનેન્દ્ર ભગવાનની
 આજ્ઞા જ નથી. કારણ કે તેમનામાં ઉપગનો અભાવ છે, અને ચારિત્રગુણ વિહી-
 નતા રહેલી છે તેથી તેઓ કમની નિર્જરાના સાધક થતા નથી. અને એજ કારણે
 તેઓ ધર્મ પદવાચ્ય પણ હોતા નથી. પરન્તુ સામાયિક આદિ રૂપ લોકોત્તર દ્રવ્યા-
 વશ્યક, કે જે પ્રવચનોક્ત છે—આગમ સંમત છે, તે તો ધર્મ પદવાચ્ય હોવા જ જોઈએ.

તો તે પ્રકારની શંકાનું સમાધાન આ પ્રમાણે સમજવું સામાયિક આદિ ક્રિયાઓ
 આગમસંમત અવશ્ય છે. પરન્તુ જિનાજ્ઞાના પરિપાલનથી જેઓ વિહીન બનેલા છે
 એવા દ્રવ્યલિંગી (સાધુ વેષધારી) સાધુઓ દ્વારા કરવામાં આવતી તે સામાયિક આદિ
 ક્રિયાઓ ધર્મ પદવાચ્ય હોઈ શકતી નથી. કારણ કે એવા સાધુઓ તો સ્વચ્છંદ
 વિહારી હોય છે, મૂલગુણ અને ઉત્તર ગુણોથી તેઓ રહિત હોય છે, છકાયના જીવોની
 રક્ષા કરવા રૂપ અનુકંપા ભાવનો તેમનામાં સદંતર અભાવ હોય છે, એવા સાધુઓ
 તો અનુપયોગ પૂર્વક, પોતાની રુચિ પ્રમાણે ફાવે એવી રીતે તે સામાયિક આદિ

इयकार्थज्ञस्य आवश्यकोपयोगपरिणाम आगमतो भावावश्यकम् । साध्वादिस्तु तादृशपरिणामवत्त्वादुपचारादागमतो भावावश्यकमुच्यते ।

इदमावश्यकोपयोगपरिणामरूपं भावावश्यकं धर्मपदवाच्यं भवति, श्रुतं धर्मान्तर्गतत्वादत्र जिनाज्ञायाः सत्त्वात् ।

जाती है । अतः वे भी धर्मपदवाच्य नहीं हो सकती है । इसलिये उस लोकोत्तरिक द्रव्यावश्यक में भी निर्जराजनकत्व का अभाव होने से जिन भगवान् की आज्ञा उसे मान्यता प्रदान करने की—वह आराधना करने योग्य है इस प्रकार की—नहीं हैं । इस प्रकार यह आगम भावावश्यक का वर्णन किया ।

भावार्थ—यह सूत्रकारने पहिले ही प्रकट कर दिया है कि विवक्षित क्रिया के अनुभव से युक्त अर्थ का नाम भाव है । अर्थात् जो आवश्यक शास्त्र का ज्ञाता है और उसमें उपयोग से युक्त है—ऐसा साध्वादिरूप अर्थ भावावश्यक है । इस भावावश्यक के दो भेद हैं—? एक आगम भावावश्यक और दूसरे नोआगम भावावश्यक । आगम भावावश्यक में ज्ञाता का उपयोग रूप परिणाम आगमरूप माना गया है । अतः वह परिणाम आगम की अपेक्षा भावावश्यक होने से आगम भावावश्यक है । साध्वादिकों कि जो आवश्यकशास्त्र के ज्ञाता होकर उसमें उपयुक्त बने हुए हैं जो आगमभावावश्यक कहा जाता है वह उस परिणाम की अभेद विवक्षा से कहा जाता है । जिन भगवान् ने इस आगमभावावश्यक को ही धर्मपदवाच्य होने के कारण उपादेय

कियाओ करता होय छे. ते कारणे तेमनी ते कियाओ धर्म पदवाच्य (धर्म कही शक्य ओवी) होती नथी. तेथी ओ लोकोत्तरिक द्रव्यावश्यकमां पणु निर्जराजनकत्वने अभाव होवाधी जिन लगवाने तेमने आराधना करवा योग्य कही नथी. आ प्रकारे आ सूत्र द्वारा आगम लावावश्यकतुं स्वरूप प्रकट करवामां आओ छे.

भावार्थ—सूत्रकारे ओ बात तो आगण प्रकट करी दीधी न छे के विवक्षित क्रियाना अनुभवथी युक्त अर्थतुं नाम भाव छे. ओ लोके ओ साधु आवश्यक शास्त्रने ज्ञाता छे अने तेमां उपयुक्त (उपयोग परिणामथी युक्त) छे, ओवा साधु आदि रूप अर्थने लावावश्यक कहे छे. आ लावावश्यकना ओ लेह भताओ छे (१) आगम लावावश्यक अने (२) नोआगम लावावश्यक.

आगम लावावश्यकमां ज्ञाताना उपयोग रूप परिणामने आगम रूप मानवामां आवेछे. तेथी ते परिणाम आगमनी अपेक्षाओ लावावश्यक रूप होवाधी तेने आगम लावावश्यक कहेवामां आओ छे. साध्वादिके के ओओ आवश्यक शास्त्रना ज्ञाता होवानी साथे साथे तेमां उपयुक्त भनेला तेमने न न आगम लावावश्यक कहेवामां आवे

नामावश्यकम्-आवश्यकनामको गोपालदारकादिः, स्थापनावश्यकम् आव-
श्यकक्रियावतः कस्यचित् काष्ठकर्मादिषु चित्रम्, द्रव्यावश्यकं च आवश्यकोप-
योगशून्या देहागमक्रियाः । एषावश्येषु उपयोगाभावेन चरणगुणरहितत्वेन
च कर्मनिर्जराजनकत्वाभावादाराध्यत्वेन जिनाज्ञा नास्ति, तस्मादेतत् त्रिविध-
मावश्यकं धर्मपदवाच्यं न भवतीति निश्चयः । लोकोत्तरिकद्रव्यावश्यकं-
प्रवचनोक्तं सदपि जिनाज्ञावाह्यैः स्वच्छन्दविहारिभिर्मूलोत्तरगुणरहितैः पट्काय-
निःसृक्तम्पैरनुपयोगपूर्वकं क्रियमाणं सामायिकादिकम् । तदपि धर्मपदवाच्यं न
भवेत्तुमर्हति तत्रापि निर्जराजनकत्वाभावेन विधेयतया जिनाज्ञाया अभावात् ।

उक्तमर्थमुपसंहरन् प्राह—‘से तं आगमओ भावावस्सयं’ इति । तदेतत्
आगमतो भावावश्यकं वर्णितम् ॥ सू० २४ ॥

अथ भावावश्यकस्य द्वितीयभेदमाह—

मूलम्—‘से किं तं नो आगमओ भावावस्सयं ? नो आगमओ
भावावस्सयं तिविहं पणत्तं, तं जहा-लोइयं, कुप्पावयणियं,
लोउत्तरियं ॥ सू० २५ ॥

स्वीकार्य कहा है—नाम स्थापना और द्रव्य आवश्यक को नहीं । क्योंकि आवश्यक
नाम के धारी गोपालवालों में आवश्यक की स्थापनावाले किसी श्रावकआदि
के आवश्यक क्रिया संपन्न चित्र में तथा आवश्यक क्रिया में उपयोग शून्य
बने हुए नोआगम द्रव्यावश्यकरूप देह में एवं आगमोक्त भी लोकोत्तरिक
द्रव्यावश्यकरूप सामायिक आदि में उपयोग की शून्यता से और चारित्र-गुण
की रहितता से कर्म निर्जरा करने की सामर्थ्य नहीं है । अतः ये धर्मपदवाच्य
नहीं हुए हैं । और इसी कारण इन्हें उपादेय नहीं कहा गया है । ॥ सूत्र २४ ॥

छे ते आ पण्डितमनी अलेह विवक्षानी अपेक्षाये कडेवाभां आवे छे आ आगम
लोवावश्यकं न धर्म पदवाच्य डोवाथी निनेधर लगवाने तेने उपादेय कडेल छे-
नामावश्यक, स्थापना आवश्यक अने द्रव्यावश्यकने उपादेय कहा नथी. कारण
के आवश्यक नामधारी गोपालवाणोभां, आवश्यकनी स्थापनावाणा डोह श्रावक
आदिना आवश्यक क्रिया संपन्न चित्रभां, तथा आवश्यक क्रियाभां उपयोग शून्य
(अनुपयुक्त) गनेला नोआगम द्रव्यावश्यक रूप सामायिक आदिभां उपयोगनी
शून्यता अने चारित्रगुणनी रहितताने दीधे कर्मनी निर्जरा करवानुं समर्थ डोतुं
नथी. तेथी- तेमने धर्म पदवाच्य कही शकय नही, अने अेज कारणे तेमने उपा-
देय पण गली शकय नही. ॥ सू० २४ ॥

છાયા--અથ કિં તદ્ નોઆગમતો ભાવાવશ્યકમ્ ? નો આગમતો ભાવાવશ્યકં ત્રિવિધં પ્રજ્ઞસમ્, તથા--લૌકિકં કુપ્રાવચનિકં લોકોત્તરિકમ્ ॥સૂ. ૨૫॥

ટીકા--‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ । વ્યાખ્યા નિગદસિદ્ધા ॥સૂ. ૨૫॥

લૌકિકં ભાવાવશ્યકમાહ--

પ્રશ્ન--સે કિં તં લોહ્યં ભાવાવસ્સયં ? લોહ્યં ભાવાવસ્સયં પુવ્વણ્હે મારહં અવરણ્હે રામાયણં । મે તં લોહ્યં ભાવાવસ્સયં ॥સૂ. ૨૬॥

અવ સૂત્રકાર ભાવાવશ્યક કા દ્વિતીય ભેદ જો નોઆગમભાવાવશ્યક હૈ ઉત્તકા નિરૂપણ કરતે હૈ--‘સે કિં તં નોઆગમઓ’ ઇત્યાદિ ॥સૂત્ર ૨૫॥

શબ્દાર્થ--(સે) શિષ્ય પૂછતા હૈ કિં હે મદંત । નોઆગમ કી અપેક્ષા લેતર ભાવાવશ્યક કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર--(નોઆગમઓ ભાવાવસ્સયં તિવિહં પળ્લત્ત) નોઆગમ કો આશ્રિત કરકે ભાવાવશ્યક ત્રીન પ્રકાર કા કહા હુઆ હૈ । (તંજહા) જૈસે--(લોહ્યં) લૌકિક (કુપ્રાવચનિકં) કુપ્રાવચનિક ઓર (લોગુત્તરિકં) લોકોત્તરિક । ઇસ પ્રકાર જાનનાં ચાહિયે । ઉસ વ્યાખ્યા મેં દ્રવ્યાવશ્યક કી જગહ ભાવાવશ્યક શબ્દ કા પ્રયોગ કરનાં ચાહિયે । ॥સૂત્ર ૨૫॥

અવ સૂત્રકાર લૌકિક ભાવાવશ્યક કા વર્ણન કરતે હૈ--

‘સે કિં તં લોહ્યં’ ઇત્યાદિ ॥સૂત્ર ૨૬॥

ભાવાવશ્યકનો જે ‘નોઆગમ ભાવાવશ્યક’ નામનો ખીલો ભેદ છે તેનું સૂત્રકાર હવે નિરૂપણ કરે છે--‘સે કિં તં નો આગમઓ’ ઇત્યાદિ--

શબ્દાર્થ-- (સે) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે કે હે ભગવન્ ! નો આગમની અપેક્ષાએ જે ભાવાવશ્યક કહ્યો છે તે ભાવાવશ્યકનું એટલે કે નો આગમ ભાવાવશ્યકનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર--(નોઆગમઓ ભાવાવસ્સયં તિવિહં પળ્લત્ત) ‘નોઆગમને આશ્રિત કરીને ભાવાવશ્યકનાં ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે. (તંજહા) તે ત્રણ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે--

(લોહ્ય) (૧) લૌકિક (કુપ્રાવચનિકં) અને (૩) લોગુ-ત્તરિકં) લોકોત્તરિક આ પદોની વ્યાખ્યા દ્રવ્યાવશ્યકની જેવી જ સમજવી જોઈએ, પરંતુ તે વ્યાખ્યામાં દ્રવ્યાવશ્યકની જગ્યાએ ‘ભાવાવશ્યક’ પદનો ઉપયોગ કરવો જોઈએ ॥ સૂ. ૨૫ ॥

હવે સૂત્રકાર લૌકિક ભાવાવશ્યકનું નિરૂપણ કરે છે--

‘સે કિં તં લોહ્યં’ ઇત્યાદિ--

છાયા—અથ ત્વં લૌકિક ભાવાવશ્યકમ્ ? લૌકિક ભાવાવશ્યક
પૂર્વાહિ ભારતપ્ર, અપરાહ્ને રામાયણમ્ । તદેતત્ લૌકિક ભાવાવશ્યકમ્ । સૂ. ૨૬।

ટીકા—શિષ્યઃ પૂછતિ—‘સે ત્વં લોહ્યં ભાવાવશ્યકમ્’ અથ ત્વં
લૌકિક ભાવાવશ્યકમ્ ? ઉત્તરમાહ—‘લોહ્યં ભાવાવશ્યકમ્’ इत्यादि । લૌકિક
ભાવાવશ્યક પૂર્વાહિ ભારત=ભારતસ્ય વાચનં શ્રવણં વા. અપરાહ્ને રામાયણમ્,
અપરાહ્ને રામાયણમ્=રામાયણસ્ય વાચનં શ્રવણં વા । લોકે હિ—ભારતસ્ય વાચનં
શ્રવણં પૂર્વાહિ ક્રિયામાણં દૃશ્યતે તથા—રામાયણસ્ય વાચનં શ્રવણમ્ અપરાહ્ને
ક્રિયામાણં દૃશ્યતે, વૈપરીત્યે દોષદર્શનાત્ । તત્તથેતથં લોકેઽવશ્યકરણીયતયાઽઽવશ્ય-
કત્વં તદ્વાચકાય શ્રોતુશ્ચ તદર્થોપયોગપરિણામસત્ત્વાદ્ ભાવત્વમ્, તદ્વાચકઃ
માણક્રિયા પુસ્ત્રરૂપત્રાદિપરાવર્તનરૂપયા હસ્તામિનયરૂપયા ચ ક્રિયા યુક્તા

શબ્દાર્થ—(સે) શિષ્ય પૂછતા હૈ કિ હે ભદ્રંત ! પૂર્વપ્રક્રાન્ત (પૂર્વપ્રસ્તુત)
લૌકિક ભાવાવશ્યક કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(લોહ્યં ભાવાવશ્યકમ્ પુવ્વહ્ને ભારતં અવરણે રામાયણં) લૌકિક
ભાવાવશ્યક કા સ્વરૂપ એસા હૈ કિ પૂર્વાહ્ન મેં મહાભારત વા વાચના અથવા
શ્રવણ કરના, અપરાહ્ન મેં રામાયણ કા વાચન અથવા શ્રવણ કરના । લોકમેં
મહાભારત કા વાચન અથવા ઉસકા શ્રવણ કરના યહ કામ પૂર્વાહ્ન મેં દેખા
જાતા હૈ, તથા રામાયણ કા વાચના અપરાહ્ન મેં (દૂપેર પીછે) । ઇસકે વિપરીત કરને સે
દોષ કા પાત્ર હોના પડતા હૈ । ઇસ તરહ યહ કામ અવશ્યક ક ને યોગ્ય
હોને કે કારણ અવશ્યકરૂપ હૈ, તથા ઉસકે શ્રોતા ઔર વાચનકર્તા કા ઉસકે
અર્થ મેં ઉપયોગરૂપ પરિણામ કે સત્તાવ સે ઉનમેં ભાવરૂપતા હૈ । વાચને વાલા

શબ્દાર્થ—શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભગવન્ ! પૂર્વપ્રસ્તુત લૌકિક
ભાવાવશ્યકનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(લોહ્યં ભાવાવશ્યકમ્ પુવ્વહ્ને ભારતં અવરણે રામાયણં) લૌકિક ભાવા-
વશ્યકનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—પૂર્વાહ્ન (દિવસના આગલા ભાગમાં) મહાભારતને
વાંચવું અથવા શ્રવણ કરવું અને અપરાહ્ને (દિવસના પાછલા ભાગમાં) રામાયણને
વાંચવું અથવા શ્રવણ કરવું, તે અવશ્ય કરવા યોગ્ય હોવાથી આવશ્યક રૂપ ગણાય
છે. લોકોમાં મહાભારતનું વાંચન અથવા શ્રવણ કરવાનું કાર્ય પૂર્વાહ્નમાં કરવા યોગ્ય
ગણાય છે અને રામાયણનું વાંચન અથવા શ્રવણ કરવાનું કાર્ય અપરાહ્નમાં કરવા
યોગ્ય મનાય છે. તેના કરતાં વિપરીત ક્રમે તે કરવાથી દોષને પાત્ર થવું પડે છે.
આ રીતે આ કાર્ય અવશ્ય કરવા યોગ્ય હોવાથી આવશ્યક રૂપ છે, તથા તેના શ્રોતા
અને વાચનકર્તાના તેના અર્થમાં ઉપયોગ રૂપ પરિણામના સદ્ભાવને લીધે તેમાં
ભાવરૂપતા પણ હોય છે. વાચનકર્તા તે વખતે ભાષણ કરવાની ક્રિયાથી, પુસ્તકના

भवति, श्रोताऽपि च श्रवण-गात्र संयतत्व-कसंपुटीकरणादित्रियावान् भवति । एवं तयोः क्रियादत्त्वेन नोआगमत्वम्, 'किरियाऽऽगमो न होइ' इति वचनात् । क्रियारूपे देशे आगमत्वाभावाद् नोआगमत्वमपि । अत्र ना शब्दस्य देशनिषेधबोधकत्वात् । लोके भारतादावागमत्वं व्यवहियते, तस्माद्देशत आगमोऽत्यपि । तस्मात् पूर्वाह्णपरह्ण यथानिर्दिष्टकाले भारताद्युपयुक्तो यदवश्यं भारतादिकं वाचयति शृणोति वा, तद्वाचनं श्रवणं च लौकिकं भावावश्यकमिति

वाचते समय भाषण क्रिया से, पुस्तक के पन्नों को पलटने आदिरूप क्रिया से, और निज हाथ से इशारा करने रूप अभिनय क्रिया से युक्त होता है । तथा जो श्रोता होते हैं । वे भी श्रवण क्रिया से शरीर को संयत करनेरूप क्रिया से और दोनों हाथों को जोड़े रहनेरूप क्रिया से युक्त होते हैं । इस तरह की इन दोनों की इन क्रियाओं में आगमता नहीं है—क्यों कि "किरिया-आगमो न होइ" क्रिया आगम नहीं होती है ऐसा सिद्धांत वा वचन है । इसलिये क्रियारूप देश में आगमता का अभाव होने से नोआगमता भी है । यहां नो शब्द देशनिषेधका बोधक है । परन्तु लोक में महाभारत आदि ग्रन्थों में आगमता का व्यवहार होता है—इसलिये इनमें आगमता भी है । इस तरह क्रिया में आगमता वा सद्भाव होने से वहीं आगमता वा सद्भाव और वहीं आगमता का अभाव बन जाने से नो एकदेश से आगमता बन जाती है । इस प्रकार यथा निर्दिष्ट पूर्वाह्ण और आराध काल में भारतादि में उक्त हुए व्यक्ति आदि का जा उनका वाचना और सुननारूप आग-

पानांओ इशवानी क्रियाथी युक्त होय छे, तथा श्रोताओ ते श्रवण करवा रूप क्रियाथी, शरीरने संयत करवा रूप क्रियाथी अने गन्ने छाथेने जेडी रागवा रूप क्रियाथी युक्त होय छे. आ प्रकारनी वकता अने श्रोतानी ते क्रियाओमां आगमताने सद्भाव होतो नथी कारण के "किरिया आगमो न होइ" "क्रिया आगमरूप होती नथी," आ प्रकारनुं सिद्धान्तनुं कथन छे. आ प्रकारे क्रिया रूप देशमां आगमताने अभाव होवाथी तेमां 'नो आगमता'ने पण सद्भाव होय छे. अर्द्धी "नो" शब्द देश निषेधने (अंशन निषेधने) बोधक छे. परन्तु लोकमां महाभारत आदि ग्रन्थमां आगमताने व्यवहार थाय छे, ते कारणे तेमनामां आगमताने सद्भाव पण रहेले छे. आ रीते क्रियामां आगमताने अभाव अने महाभारत आदिमां आगमताने सद्भाव होवाथी ओटले के ओक प्रकारे आगमताने सद्भाव होवाथी तेमां नोआगमता (ओक देशनी अपेक्षाओ आगमता) सिद्ध थाय छे. आ प्रकारे यथा निर्दिष्ट पूर्वाह्न काणमां महाभारत आदिमां उपयुक्त (उपयोग परिष्कारथी युक्त) थयेद व्याकृतनुं जे तेमना वाचन अने श्रवण रूप

બોધ્યમ્ । તદેતત્ નિગમયન્નાહ—‘સે તં લોહ્યં ભાવાવસ્સયં’ इति । तदेतत् लौकिकं
भावावश्यकं वर्णितम् ॥सू० २६॥

કુપ્રાવચનિકં ભાવાવશ્યકમાહ—

મૂઝમ્—સે કિં તં કુપ્પાવયણિયં ભાવાવસ્સયં ? કુપ્પાવયણિયં
ભાવાવસ્સયં જે હમે ચરગચીરિગ જાવ પાસંડથા, હજ્જંજલિ હોમજપોં
દુસ્કનમોક્કારમાહ્યાઈ ભાવાવસ્સયાઈ કરેતિ । સે ત કુપ્પાવયણિયં
ભાવાવસ્સયં સૂ૦ ૨૭॥

છાયા—અથ કિં તત્ કુપ્રાવચનિકં ભાવાવશ્યકમ્ ? કુપ્રાવચનિકં ભાવા-
વશ્યકં ય હમે ચરકચીરિક યા ત્ પાપણ્ડ થાઃ હજ્યાજ્જલિહોમજપોન્દુસ્કનમસ્કારાદિ-
કાનિ ભાવાવશ્યકાનિ કુર્વન્તિ । તદેતત્ કુપ્રાવચનિકં ભાવાવશ્યકમ્ ॥સૂ૦ ૨૭॥

અવશ્યક કર્મ હૈ વહ વાચન ઔર શ્ર ણ લૌકિક ભાવાવશ્યક હૈ । इस तरह एक-
देश में आगमता की अपेक्षा लेकर (से तं लोह्यं भावावस्सयं) यह पूर्वप्रक्रान्त
लौकिक भावावश्यक का वर्णन किया । ॥सूत्र २६॥

અવ સૂત્રકાર કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યક ના વર્ણન કરતે હૈ ।

“સે કિં તં કુપ્પાવયણિયં” इत्यादि । ॥सू० २७॥

શબ્દાર્થ—(સે) શિષ્ય પૂછતા હૈ કિં હે ભદ્રંત ! તં (તત્) પૂર્વ પ્રક્રાન્ત
(પૂર્વપ્રસ્તુત) (કુપ્પાવયણિયં ભાવાવસ્સયં કિં) કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યક કા કયા
સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(કુપ્પાવયણિયં ભાવાવસ્સયં) કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યક કા સ્વરૂપ

આવશ્યક કર્મ છે, તે વાચન અને શ્રવણ લૌકિક ભાવાવશ્યક રૂપ હોય છે.
(સે તં લોહ્યં ભાવાવસ્સયં) આ પ્રકારનું નો આગમ (એકદેશરૂપ આગમતાના
સદ્ભાવવાળા) લૌકિક ભાવાવશ્યકનું સ્વરૂપ સમજવું.

હવે સૂત્રકાર નો આગમ ભાવાવશ્યકના બીજા ભેદ રૂપ કુપ્રાવચનિક ભાવા-
વશ્યકનું નિરૂપણ કરે છે—“સે કિં તં કુપ્પાવયણિયં” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે) શિષ્ય શુરને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (તં) પૂર્વપ્રક્રાન્ત-પૂર્વપ્ર-
સ્તુત (કુપ્પાવયણિયં ભાવાવસ્સયં કિં) કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યકનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર—(કુપ્પાવયણિયં ભાવાવસ્સયં) કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યકનું સ્વરૂપ આ પ્રકાર-
નું છે—(જે હમે ચરગચીરિગ જાવ પાસંડથા) જે ચરક, ચીરિક આદિ પૂરોક્ત

शिष्यः पृच्छति—‘से किं तं कुप्रावयणियं भावावश्यकं?’ इति । अथ किं तत् कुप्रावचनिकं भावावश्यकम् ? । उत्तरमाह—कुप्रावचनिकं भावावश्यकमेवं विज्ञेयम्—य इमे चरकचीरिका यावत् पाषण्डस्थाः उपयुक्ताः सन्तो यथावसरं यदवश्यकम्, इज्याञ्जलिहोमजपो-दुरुक्कनमस्कारादिकानि, भावावश्यकानि कुर्वन्तीत्यन्वयः । तत्र चरकादयः प्राग्व्याख्यानाः । तत्र—इज्या=यज्ञः अञ्जलिः—जलाञ्जलिः सूर्याय दीयते, होमः=नित्यहवनम् जपः=गायत्रीः, उन्दुरुक्कम्—धूपः, धूपदानमित्यर्थः, अयं देशीयः शब्दो धूपार्थकः । नमस्कारः=वन्दनम्, एतान्यादौ येषां तानि भावावश्यकानि कुर्वन्ति । एतानि हि चरकचीरिकादिभिः पाषण्डस्थैरवश्यं क्रियमाणत्वादावश्यकानि । तदर्थोपयोगश्चादिपरिणामसद्भावाद् भावत्वम् । चरकादीनां तदर्थज्ञानरूपो देशत आगमः, करशिरः संयोगादिक्रियारूपो देशस्तु नो आगमः । इस प्रकार से है । (जे इमे चरक चीरिका जात पाषण्डस्था) जो ये चरक चीरिका आदि पाषण्डस्थ मनुष्य उपयुक्त होकर अवसर के अनुसार (इज्जंजलिहोमजपो-दुरुक्कनमोक्कारमाइयाइं) यज्ञ करते हैं, सूर्य के लिये जलाञ्जलि देते हैं, नित्य हवन करते हैं, गायत्री का जाप करते हैं, अग्नि में धूप जलाते हैं, तथा वंदना आदिरूप भावावश्यक करते हैं, सो ये सब क्रिया उन चरक चीरिकादिकों द्वारा आवश्यककरणीय होने के कारण आवश्यकरूप हैं । तथा इनके अर्थ में जो उनका उपयोग परिणाम लगा रहता है तथा श्रद्धा आदि का भाव जाग्रत रहता है—सो इस कारण ये क्रियाएं भावावश्यकरूप हैं । इस तरह चरक आदि को वा जो उन क्रियाओं संबंधीज्ञान है वह एक देश आगमरूप है । तथा उनका कर और शिर का संयोजनादिरूप जो व्यवहार है वि—क्रियाएं हैं—वह क्रियारूप व्यवहार आगमरूप नहीं हैं—नो-

पाषण्डस्थी (पाषण्डी) मनुष्योऽप्युक्त (उपयोग इय परिणाम संपन्न) यद्यने अवसरने अनुस्य (इज्जंजलिहोमजपो-दुरुक्कनमोक्कारमाइयाइं) यज्ञ करे छे, सूर्यने जलाञ्जलि अर्पण करे छे, नित्य होमहवन करे छे, गायत्रीने जाप करे छे, अग्निमां धूप नाथीने तेने जाणे छे, तथा वंदना आदि क्रियाओ करे छे, ते अधी क्रियाओ भावावश्यक इय गणाय छे, आ सधणी क्रियाओ ते चरक, चीरिका आदि पूर्वोक्त दोहो द्वारा अवश्य करवा योग्य होवाने कारणे आवश्यक इय गणाय छे, वणी ते क्रियाओमां तेमना उपयोग परिणामनो पणु सहलाव रहे छे, अने श्रद्धादि लावो पणु जगृत रहे छे, आ कारणे ते क्रियाओने भावावश्यक इय कडे-वामां आवी छे, तथा ते वणते तेमना कर अने शिरना संयोजन आदि इय ने व्यवहार अथवा क्रियाओ थाय छे, ते क्रियाइय व्यवहार आगम इय नथी पणु ने

તથા ચ દેશિકાગમાભવમાશ્રિત્ય નોઆગમત્વમપિ । નો શબ્દસ્યાત્રાપિ દેશનિષેધ
પરત્વાત્ । ચરકચીરિકાદિભિઃ પાષણ્ડસ્થૈરવશ્યં ક્રિયમાણમ્ ઇજ્યાઞ્જલિ હોમાદિકં
કુપ્રાવચનિકં ભાવાવશ્યકમિતિભાવઃ । તદેતત્કુપ્રાવચનિકં ભાવાવશ્યકં વર્ણિતમ્ ॥૨૭॥

આગમ છે—। इस तरह देशिक आगमके अभाव को लेकर उन क्रियाओं में
नोआगमता है । नोआगम का तात्पर्य एकदेश में आगमता का सद्भाव है ।
अतः चरक, चीरक आदि पाषण्डस्थ पुरुषों द्वारा की गई इज्या (यज्ञ) अंजलि
होमादिकरूप एक देश क्रियाओं के ज्ञान में तो आगमता है । इस प्रकार
कुप्रावचनिक—भावावश्यक का यह स्वरूप है ।

भावार्थ—यहां नोआगम का तात्पर्य सर्वथा आगमाभाव से नहीं है ।
किन्तु एकदेशमें आगम के अस्तित्व से है । चरक चीरिकादि पाषण्डी जनों
को यज्ञादि क्रियाएँ उनके सिद्धान्तानुसार अवश्यकरणीय होती हैं, वे उन्हें
उपयोगपूर्वक करते हैं । उनमें उनकी अटूट श्रद्धा होती है । इस तरह ये
क्रियाएँ भावावश्यकरूप में पड़ती हैं और ये सब क्रियाएँ उनकी ज्ञान मूलक
ही होती हैं । इसलिये इन क्रियाओं के ज्ञानमें तो आगम रहता ही है ।
परन्तु जो और उनकी हस्त शिर की संयोजन आदिरूप क्रियाएँ हैं उनमें

આગમ રૂપ જ છે; કારણ કે આ ક્રિયાઓ આગમમાન્ય ક્રિયાઓ નથી. આ રીતે
દેશિક આગમના અભાવની અપેક્ષાએ છે ક્રિયાઓમાં નો આગમતાનો સદ્ભાવ હોય
છે એમ સમજવું. “નો આગમતા” એટલે એકદેશની અપેક્ષાએ આગમતા તેથી
ચરક, ચીરિક આદિ પૂર્વોક્ત પાષંડસ્થ પુરુષો દ્વારા કરવામાં આવેલી યજ્ઞ, અંજલિ
દ્વારા અભિષેક, હોમ આદિ રૂપ એકદેશરૂપ ક્રિયાઓના જ્ઞાનમાં તો આગમતાનો
સદ્ભાવ છે. તે દષ્ટિએ વિચારતા તે ક્રિયાઓ કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યક રૂપ ગણાય
છે. કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યકત્વ આ પ્રકારનું સ્વરૂપ સમજવું.

ભાવાર્થ—“નો આગમ” આ પદ સર્વથા આગમાભાવતા દર્શાવતું નથી, પણ
એકદેશના આગમનો સદ્ભાવ બતાવે છે. ચરક, ચીરિક આદિ પાષંડી લોકોને માટે
યજ્ઞાદિ ક્રિયાઓ તેમના સિદ્ધાન્તાનુસાર અવશ્ય કરણીય ગણાય છે તેઓ તે ક્રિયાઓ
ઉપયોગપૂર્વક કરે છે. તેમાં તેમને અટૂટ શ્રદ્ધા હોય છે આ રીતે આ ક્રિયાઓ
ભાવાવશ્યક રૂપ ગણાય છે, અને તેમની આ બધી (યાઓ જ્ઞાનમૂલક જ હોય છે.
તેથી તે ક્રિયાઓના જ્ઞાનમાં તો આગમનો સદ્ભાવ રહે છે જ પરન્તુ એ સિવા-
યની હસ્તશિરના સંયોજન આદિ રૂપ જ ક્રિયાઓ છે તેમાં આગમરૂપતા હોતી.

लोकोत्तरिकं भावावश्यकमाह—

मूलम्—से किं तं लोгуत्तरियं भावावस्सयं ? लोгуत्तरियं भावावस्सयं जणं इमे समणे वा समणी वा सावओ वा साविआ वा तच्चित्ते तम्मणे तद्धेसे तदज्झवसिए तत्तिव्वज्झवसाणे तदट्ठोव-उत्ते तदप्पियकरणे तब्भावणाभाविए अणत्थकत्थइमणं अकारेमाणे उभओकालं आवस्सयं करेति, से तं लोгуत्तरियं भावावस्सयं । से तं नो आगमओ भावावस्स ।, से तं भावावस्सयं ॥ सू २८ ॥

छाया—अथ किं तद् लोकोत्तरिकं भावावश्यकम् ? लोकोत्तरिकं भावावश्यकं-यत्त्वलु इमे वणा वा श्रवण्यो वा श्रावका वा श्राविका वा तच्चित्तास्तन्म-नसस्तल्लेश्यास्तदध्यवसितास्तत्तीव्राध्यवसानास्तदर्थोपयुक्तास्तदपितकरणास्तद्भावना-

आगमरूपता नहीं हैं । इस तरह आगम का एकदेश में अस्तित्व लेकर चरकचीरिकादि संबंधी होम आदि क्रियाएं कुप्रावचनिक भावावश्यक हैं । सू० २७।

अब सूत्रकार लोकोत्तरिक भावावश्यक का कथन करते हैं—

“से किं तं लोगुत्तरियं” इत्यादि । ॥ सू० २८ ॥

शब्दार्थ—(से) शिष्य पूछता है कि हे भदंत ! लोकोत्तरिक भावावश्यक का क्या स्वरूप है ?

उत्तर—(लोगुत्तरियं भावावस्सयं) लोकोत्तरिक भावावश्यक का स्वरूप इस प्रकार से है—(जणं इमे समणे वा समणी वा सावओ वा साविआ वा) जो ये श्रमण श्रमणी, श्रावक अथवा श्राविका जन (तच्चित्ते) आवश्यक में चित्त लगाकर (तम्मणे) मन लगाकर (तल्लेस्से)

नथी. आ रीते आगमना अेकदेशतः अस्तित्वनी अपेक्षाये चरक, चीरिक आदि द्वाश कृत होम, ध्वन, यज्ञ आदि क्रियाओ कुप्रावचनिक भावावश्यक रूप होयछे । सू. २७।

इवे सूत्रकार लोकोत्तरिक भावावश्यक नामना नो आगम भावावश्यकना त्रीण लेद्धनुं निरूपणु करे छे “से किं तं लोगुत्तरियं” इत्यादि—

शब्दार्थ—(से) शिष्य गुरुने अेवा प्रश्न पूछे छे के पूर्वप्रस्तुत लोकोत्तरिक भावावश्यकनुं स्वरूप केवुं छे ?

उत्तर—(लोगुत्तरियं भावावस्सयं) लोकोत्तरिक भावावश्यकनुं आ प्रकारनुं स्वरूप होय छे—

(जणं इमे समणे वा समणी वा सावओ वा साविआ वा) आ श्रमण, श्रमणी (साध्वी), श्रावक अ.ने श्राविकाओ (तच्चित्ते) आवश्यकभां चित्त लगावीने, (तम्मणे)

ભાવિતા અન્નપત્ર કુત્રાપિ મનોઽકુર્વન્ત ઉભયતઃ કાલમ્ આવશ્કં કુર્વન્તિ । તદેતદ્ લોકોત્તરિકં ભાવાવશ્યકમ્ । તદેતન્નો અગમતા ભાવાવશ્યકમ્ તદેતદ્ ભાવાવશ્યકમ્ ॥સૂ. ૨૮।

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં લોગુત્તરિયં ભાવાવશ્યકમ્’ અથ કિં તદ્ લોકોત્તરિકં ભાવાવશ્યકમ્ ? इति । उत्तरमाह—‘लोगुत्तरियं’ भावावश्यकम् इत्यादि । लोकोत्तरिकं भावावश्यकमेव विज्ञेयम्, यत्खलु इमे श्रमणा वा श्रमण्यो वा श्राम्बन्ति=मुक्त्यर्थं तपन्तीति—श्रमणाः स्त्रियश्चेत् श्रमण्यः—साधवो वा साध्व्योवेत्यर्थः श्रावका वा श्राविका वा, शृण्वन्ति=साधुसमीपे जिनप्रणीतां सामाचारीमिति श्रावकाः=श्रमणोपासकाः, स्त्रियश्चेत् श्राविकाः=श्रमणोपासिकाः, वा शब्दाः समुच्चयार्थाः, तच्चित्ताः=तस्मिन्नेव आवश्यकं चित्तं=सामान्योपयोगरूपं येषां ते तथा, आवश्यकं सामान्योपयोगवन्तः, तथा तन्मनसः—तस्मिन्नेव मनो विशेषो शुभपरिणामरूप लेश्यासंपन्न होकर (तदज्ઞવસિણ) ક્રિયા સંપાદન વિષયક અધ્યવસાયયુક્ત હોકર (તત્તિવજ્ઞવસાણે) તીવ્ર આત્મપરિણામ વિશિષ્ટ હોકર (તદદ્વોવઉત્તે) તદર્થ મેં ઉપયુક્ત હોકર (તદપિયકરણે) તદર્પિત કરણવાળે હોકર (તદ્ભાવણાભાવિણે) તદ્ભાવના સે ભાવિત હોકર (અણતથકત્થઈ મળં અકરેમાણે) અન્ય ઔર કહીં પર મી મનકો નહીં લગાકર (ઉમઓ કાલં) દેનોં સમય (આવશ્યક કરેતિ) આવશ્યક કરતે હૈં (સે ત્ત લોગુત્તરિયં ભાવાવશ્યકમ્) વહ લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક હૈ । મુક્તિ પ્રાપ્તિ કે નિમિત્ત જો તપ તપતે હૈં ઉન કા નામ “શ્રામ્યન્તીતિ શ્રમણાઃ” ઇસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર શ્રમણ હૈં જો સાધુઓં કે સમીપ જિન પ્રણીત સામાચારી કા શ્રવણ કરતે હૈં ઉનકા નામ શ્રાવક હૈ । યે શ્રમણોપાસક હોતે હૈં । આવશ્યક ક્રિયા મેં જિનકા સામાન્યરૂપ સે ઉપયોગ હૈ, વે શ્રમણ આદિજન યહાં “તચ્ચિત્તે” પદ કે વાચ્યાર્થ હુણ

મન લગાવીને (તલ્હેસલ) શુભ પરિણામરૂપ લેશ્યા સંપન્ન થઈને (તદજ્ઞવસિણ ક્રિયાસંપાદન વિષયક અધ્યવસાયથી યુક્ત થઈને, (તત્તિવજ્ઞવસાણે) તીવ્ર આત્મ પરિણામ યુક્ત થઈને, (તદદ્વોવઉત્તે) આવશ્યક અર્થમાં ઉપયુક્ત (ઉપયોગરૂપ પરિણામયુક્ત) થઈને (તદપિયકરણે) તદર્પિત કરણયુક્ત થઈને (તદ્ભાવણા ભાવિણે) તે પ્રકારની ભાવનાથી ભાવિત (સંપન્ન) થઈને (અણતથકત્થઈ મળં અકરેમાણે) અને અન્ય કોઈ પણ વસ્તુમાં મનને ભમવા દીધા વિના, (ઉમઓ કાલં) બન્ને સમયે (આવશ્યક કરેતિ) જે આવશ્યક (પ્રતિક્રમણ આદિ અવશ્ય કરવા યોગ્ય ક્રિયાઓ) કરે છે, તેને લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક કહે છે.

હવે આ સૂત્રમાં શ્રમણ આદિ પદોનો ભાવાર્થ સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—

“શ્રામ્યન્તિ ઇતિ શ્રમણાઃ” આ વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે “મુક્તિ પ્રાપ્ત કરવા નિમિત્તે જેઓ તપ તપે છે તેમને શ્રમણ કહે છે જેઓ સાધુઓની સમીપે જિનપ્રણીત સામાચારીનું શ્રવણ કરે છે તેમને શ્રાવક કહે છે તેઓ શ્રમણોપાસક હોય છે. આવશ્યક ક્રિયામાં સામાન્યરૂપે ઉપયોગ યુક્ત હોય એવા શ્રમણ આદિને અહીં “તચ્ચિત્તે” આ પદના વાચ્યાર્થ રૂપે પ્રયુક્ત થયેલા સમજવા. જેઓ વિશેષ રૂપે

પયોગરૂપં યેષાં તે તથા, આવશ્યકે વિશેષોપયોગવન્તઃ, તલ્લેશ્યાઃ—તસ્મિન્=આવ-
શ્યકે એવ લેશ્યા=શુભપરિણામરૂપા યેષાં તે તથા, આવશ્યકે શુભપરિણામવન્તઃ,
તથા—તદધ્યવસિતાઃ—તસ્મિન્=આવશ્યકે એ તત્ત્વિત્ત્વાદિના અધ્યવસિતમ્=
અધ્યવસાયઃ ત્રિયાસંપાદનવિષયો યેષાં તે તથા, આશ્રયક્રિયાસંપાદન-
વિષયકવિચારયુક્તા, તથા—તત્ત્વીત્રાધ્યવસાનાઃ—તસ્મિન્=આવશ્યકે એવ તીર્થ-
=પ્રારમ્ભકાલાદેવ પ્રતિક્ષણં પ્રવર્ધમાનમ્ અધ્યવસાનમ્ इदं सकलकर्मनिर्जराजनकं
तस्मादवश्यमाश्रयणीय—મિત્યાચારક આત્મપરિણામો યેષાં તે તથા, તદર્થોપયુક્તાઃ
આવશ્યકાર્થોપયુક્તાઃ—‘આવશ્યક—સામાયિક—ચતુર્વિંશતિસ્તવ—વંદન—પ્રતિક્રમણ-
કાર્યોત્સર્ગ—પ્રત્યાશ્વાનરૂપં યદવશ્યં શાશ્વતમચલમરુજમક્ષયમભ્યાવાધમમન્દાનન્દ-
સન્દોહરૂપં શિવસુખં પ્રાપયતિ, તસ્માદવશ્યં સોપયોગં પ્રશસ્તતઃ સંવેગનિર્વેદ-

જાનનાં ચાહિયે । જિનકા ઉપયોગ વિશેષરૂપ સે આવશ્યક ક્રિયા મેં લગા
હુઆ હૈ એસા શ્રમણ આદિ જન “તમ્મણે” ઇસ પદ કે વાચ્યાર્થ હુએ જાનના
ચાહિયે । આવશ્યક ક્રિયાઓં કે સંપાદન વિષયક વિચારોં સે જો યુક્ત હૈ
એસે શ્રમણ આદિ જન “તદજ્ઞસિએ” ઇસ પદ કે વાચ્યાર્થ હુએ જાનનાચાહિ-
યે । તથા જિનકા આત્મપરિણામ પ્રારમ્ભકાલ સે હી ઇસ પ્રકાર કે વિચાર
સે કિ યહ આવશ્યક સકલકર્મોં કી નિર્જરા કા જનક હૈ ઇમલિયે અવશ્ય
આશ્રયણીય હૈ, પ્રતિક્ષણ વૃદ્ધિગત હોતા રહતા હૈ વે શ્રમણ આદિ જન ‘તત્ત્વિ-
જ્ઞવમાણે” ઇસ પદ કે વાચ્યાર્થ હુએ હૈ । આવશ્યક મેં જિન કે પરિણામ
શુભ હૈ વે ‘તલ્લેસે” પદ કે વાચ્યાર્થ—જાનનાં ચાહિયે । આવશ્યક—સામા-
યિક ચતુર્વિંશતિસ્તવ, વંદન પ્રતિક્રમણ, કાર્યોત્સર્ગ ઇનરૂપ હૈ, સો યહ અવશ્ય,
શાશ્વત, અચલ, અરુજ, અક્ષય, અભ્યાધાધ ઓર અનન્દ આમન્દ કે સન્દોહરૂપશિ

આવશ્યક ક્રિયાઓમાં ઉપયોગ યુક્ત થયેલા છે એવાં શ્રમણોને અહીં “તમ્મણે”
આ પદના વાચ્યાર્થ રૂપે પ્રયુક્ત થયેલા સમજવા.

, આ આવશ્યક આશ્રયણીય છે, આ પ્રકારની વિચાર ધારાથી જેમનું આત્મ-
પરિણામ આરંભકાળથી જ યુક્ત રહે છે, અને ક્રમે ક્રમે જેમનું આ પ્રકારનું
આત્મપરિણામ વૃદ્ધિ પામતું રહે છે, એવાં શ્રમણોને અહીં “તત્ત્વિજ્ઞવમાણે”
આ પદના વાચ્યાર્થ રૂપ સમજવા. આવશ્યક ક્રિયામાં જેમના પરિણામ શુભ છે
એવાં શ્રમણોને અહીં “તલ્લેસે” આ પદના વાચ્યાર્થ રૂપ સમજવા જોઈએ.

“સામાયિક, ૨૪ તિર્થંકરોની સ્તુતિ, વંદન, પ્રતિક્રમણ, કાર્યોત્સર્ગ ઇત્યાદિ
રૂપ જે આવશ્યક છે, તેઓ શાશ્વત, અચલ, અરુજ, અક્ષય, અભ્યાધાધ અને અમન્દ
આનંદના સન્દોહરૂપ (સમુદાયરૂપ) શિવ સુખની પ્રાપ્તિ અવશ્ય કરાવી દેનાર છે, અને

પૂર્વે મારાધનીય—' મિત્યાત્મપરિણામયુક્તાઃ' इत्यर्थः । तथा—तदर्पितकरणाः—
तस्मिन्=आवश्यक के अर्पितानि=याथातथ्येन नियुक्तानि करणानि=तत्साधकभूतानि
देहरजोहरणसदोरकमुखवस्त्रिकादीनि ये ते तथा, आवश्यककर्मणि सम्यग्यथा
स्थानन्यस्तोपकरणा इत्यर्थः, तथा-तद्भावनाभाविताः—तस्य=आवश्यकस्य भावना=
आवश्यक-सर्वकल्याण-कारणम्, अनन्तभवोपार्जित कर्मरजोऽपहारक-मिति प्रति-
क्षण-मनुस्मरणरूपा, तथा भाविताः प्रमादपरिहारपूर्वक परमोत्साहेन आवश्यक
क्रियाकरणपरायणाः, अन्यत्र कुत्रापि मनः अकुर्वन्तः, उपलक्षणत्वाद् वाचं कायं
चान्त्रा कुर्वन्तः उभयकाले यत् आवश्यकं कुर्वन्ति तदेतल्लोकोत्तरिकं भावाव-

સુખ કો પ્રાપ્ત કરા દેતા હૈ અતઃ યહ અવશ્ય ઉપયોગપૂર્વક પ્રશસ્તર સંવેગ કે સાથ
નિર્વેદપૂર્વક આરાધનીય હૈ ઇસ પ્રકાર કે આત્મપરિણામોં સે જો યુક્ત હૈ
એસે શ્રમણ આદિજન “તદદૃશ્વઉત્તે” ઇસ પદ કે વાચ્યાર્થ હુએ હૈ । તથા—જિંહોં
ને આવશ્યક મેં યથાસ્થાન તત્સાધકભૂત દેહ, રજે હરણ, સદોરકમુખવસ્ત્રિકા
આદિકોં કો નિયુક્ત કર રાખા હૈ અર્થાત્ આવશ્યક ક્રિયા મેં અચ્છી તરહ
સે ઉ હોંને યથા સ્થાન ઉપકરણોં કો રાખા હૈ એસે વે શ્રમણ આદિજન “તદ-
પિયકરણે” પદ કે વાચ્યાર્થ હુએ હૈ । આવશ્યક સમસ્ત કલ્યાણોં કા કારણ
હૈ તથા અનંત ભવોપર્જિત કર્મ રજ કા નાશક હૈ ઇસ પ્રકાર વી પ્રતિક્ષણ
મેં અનુસ્મરણરૂપ ભવના સે જો પ્રમાદ પરિત્યાગપૂર્વક પરમોત્સાહ સે આવશ્યક
ક્રિયા કે કરને મેં પરાયણ બને હુએ હૈ એસે શ્રમણ આદિજન “તદ્ભાવનાભા-
વિણ” પદ કે વાચ્યાર્થ હુએ હૈ । મન રહ પદ બવન ઔર કાયકા ઉપલક્ષણ

તે કારણે તે અવશ્ય ઉપયોગ પૂર્વક પ્રશસ્તર સંવેગની સાથે, નિર્વેદપૂર્વક આરા-
ધનીય છે,” આ પ્રકારના આત્મપરિણામથી જેઓ યુક્ત હોય છે એવાં શ્રમણ
આદિને “તદદૃશ્વઉત્તે” આ પદના વાચ્યાર્થ રૂપે ગ્રહણ કરવા જોઈએ.

આવશ્યક ક્રિયા કરતી વખતે તે ક્રિયાના સાધનભૂત દેહ, રજોહરણ, સદોરક
મુહુપત્તી આદિ ઉપકરણોને જેમણે યોગ્ય સ્થાને રાખેલાં છે એટલે કે આવશ્યક ક્રિયામાં
જેમણે ઉપકરણોને ઘરઘર વિચાર પૂર્વક ઉચિત સ્થાને સ્થાપિત કરેલાં છે, તે
શ્રમણ આદિને આહી “તદપિયકરણે” આ પદના વાચ્યાર્થ રૂપ સમજવા જોઈએ.

“આવશ્યક ક્રિયાઓ સમસ્ત કલ્યાણોની જનક છે, તથા અનંત ભવોપાર્જિત
કર્મરજનો નાશ કરનારી છે” આ પ્રકારની પ્રતિક્ષણે અનુસ્મરણ રૂપ ભાવનાથી
પ્રેરાધને જેઓ પ્રમાદના ત્યાગ પૂર્વક અને પરમોત્સાહ પૂર્વક આવશ્યક ક્રિયાઓ
કરવાને પરાયણ બનેલા છે એવાં શ્રમણ આદિને “તદ્ભાવનાભાવિણ” આ પદના
વાચ્યાર્થ રૂપ સમજવા જોઈએ.

શબ્દકમ્ મૂલે સમણે વા' इत्यादौ बहुत्वे वाच्ये एकवचननिर्देश आर्पत्वात्—यदिमे
श्रमणादयस्तच्चित्तादि विशेषण—विशिष्टा उभयकालं प्रतिक्रमणाद्यावश्यकं कुर्वन्त
तल्लोकोत्तरिकं भावावश्यकम्, इति संक्षेपार्थः । अत्रापि—अवश्यं करणात् आव-
श्यकम्. तदुपयोगपरिणामस्य सद्भावाद् भावत्वम्, आवश्यक क्रियालक्षण देशस्था-
नोऽगमत्वाद् नोआगमत्वं च बोध्यम् । तदेतल्लोकोत्तरिकं भावावश्यकं वर्णितम्
एवं त्रिधं नोआगमतो भावावश्यकं निरूपितमिति सूचयितुमाह—‘से तं नो-
आगमतो भावावस्सयं’ इति । तदेतन्नो आगमतो भावावश्यकं वर्णितम् । एवं
सर्वथा भावावश्यकं निरूपितमिति सूचयितुमाह—‘से तं भावावस्सयं’ इति । तदे-

हैं । तात्पर्य कहने का यह है कि जो श्रमण आदिजन तच्चित्त आदि विशेष-
णों से युक्त बनकर दोनों काल प्रतिक्रमण आदि आवश्यकों को करते हैं
भावावश्यक है । ये क्रियाएँ श्रमण आदि जनोंको अवश्य करने योग्य हैं
इसलिये तो ये आवश्यक हैं । तथा उनमें इनके करनेवालोंका उपयोग परिणाम
वर्तमान रहता है इसलिये उसमें भावरूपता है । तथा आवश्यक क्रियाएँ स्वयं
आगम रूप नहीं हैं अतः आवश्यक क्रिया रूप एकदेशमें अनागमता और
इनके ज्ञानरूप एकदेशमें आगमताका सद्भाव होनेसे नो आगमकी अपेक्षा ये
आवश्यक क्रियाएँ लोकोत्तरिकभावावश्यक जाननी चाहिये । इस तरह नोआ-
गमको आश्रित करके लोकोत्तरिकभावावश्यकका यहां तकका वर्णन किया ।
इस प्रकार नोआगम भावावश्यकका पूर्णरूपसे वर्णन हो चुका है । इस बातको
बतलाने के लिये सूत्रकारने “से तं भावावस्सयं” पदका प्रयोग किया है ।

‘मन’ आ પદ વચન અને કાયતું ઉપલક્ષક છે. આ સઘળા કથનનું તાત્પર્ય
એ છે કે જે શ્રમણ, શ્રમણી, શ્રાવક અને શ્રાવિકા “તચ્ચિત્ત” આદિ વિશેષણોથી
યુક્ત બનીને બન્ને કાળે પ્રતિક્રમણ આદિ જે આવશ્યકો કરે છે, તે આવશ્યકો
નોઆગમની અપેક્ષાએ લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક ગણાય છે. આ ક્રિયાઓ
શ્રમણ શ્રમણી શ્રાવક અને શ્રાવિકોને માટે અવશ્ય કરવા યોગ્ય
મનાતી હોવાથી તેમને આવશ્યક રૂપ કહી છે. તે આવશ્યક ક્રિયાઓ કર-
નાર શ્રમણ આદિનું ઉપયોગ પરિણામ તેમાં વિદ્યમાન રહે છે, તે કારણે તેમાં
ભાવરૂપતાનો સદ્ભાવ હોય છે. તથા આવશ્યક ક્રિયાઓ સ્વયં આગમ રૂપ નથી,
તેથી આવશ્યક ક્રિયા રૂપ એકદેશમાં અનાગમતા અને તેમના જ્ઞાનરૂપ એક દેશમાં
આગમતાનો સદ્ભાવ હોવાથી આ આવશ્યક ક્રિયાઓને નોઆગમની અપેક્ષાએ
લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક રૂપ સમજવી આ રીતે નોઆગમને આશ્રિત કરીને લોકોત્તરિક
ભાવાવશ્યકનું આ સૂત્રમાં પ્રતિપાદક કરવામાં આવ્યું છે. એજ વાતને સૂત્રકારે ‘સે
તં ભાવાવસ્સયં’ આ સૂત્રપાઠ દ્વારા પ્રગટ કરી છે. આ સૂત્રપાઠ એ વાત સૂત્રના

તદ્ ભાવાવશ્યકં સર્વથા વર્ણિતમ્ । ભાવાવશ્યકમેવ ચતુર્વિધસંધૈરુપાદેયં ન તુ નામસ્થાના દ્રવ્યાવશ્યકાનિ, તેષાં કર્મ નિર્જરાજનકન્ધાભાવાત્ સંસારકાણ્ણ-સ્વાદ્ । તથા-ભાવાવશ્યકેઽપિ આગમતો ભાવાવશ્યકં લોકોત્તરિકરૂપં નોઆગમતો ભાવાવશ્યકં चेति द्वयमेवोपादेयं, न तु-लौकिकं कुप्रावचनिकं च भावावश्याक मिति सर्वतीर्थं करणामभिप्रायः ॥सू० २८॥

ભાવાવશ્યક હી ચતુર્વિધ સંધર્મે ઉપાદેય છે । નામ સ્થાપના ઔર દ્રવ્યરૂપ આવશ્યક ઉપાદેય નહીં છે । ક્યોંકિં હનમેં કર્મ નિર્જગતી જનકતાકા સર્વથા અભાવ છે અર્થાત્ હનકો નિમિત્ત યા હનકા સેવન કરકે યદિ કોઈ પ્રાણી અપને કર્મોંકી નિર્જરા કરના યાહે તો વહ નહીં કર સ-તા છે- । હસલિયે હનહેં સંસાર વર્તક કારણોંમેં પરિગણિત િયા ગયા છે । ભાવાવશ્યકમેં મી આગમ ભાવાવશ્યક ઔર નોઆગમના તૃતીય મેદ રૂપ લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક યે દોહી ઉપાદેય છે । લૌકિક ઔર કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યક નહીં ંસા સંમસ્ત તીર્થંકરોંકા કથન છે ।

ભાવાર્થ:—નોઆગમ ભાવાવશ્યકમેં આવશ્યક રૂપ આગમકા સર્વથા અભાવ વિવક્ષિત નહાં હુઆ છે । કિન્તુ આગમકા ંકદેશ વિવક્ષિત હુઆ છે । હસ નોઆગમ ભાવાવશ્યકકે લૌકિકકુપ્રાવચનિક ઔર લોકોત્તરિક યે ૩ તીન મેદ કિયે ગયે છે । પૂર્વાહ્ન મેં મહાભારતકા અપરાહ્ન મેં રામાયણકા વાચના

ઉપસંહાર રૂપે પ્રકટ કરે છે કે આ રીતે નોઆગમ લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યકનું નિરૂપણ અહીં પુરૂં થાય છે.

ભાવાવશ્યક જ ચતુર્વિધ સંધને માટે ઉપાદેય ગણાય છે. નામ, સ્થાપના અને દ્રવ્યાવશ્યક ઉપાદેય ગણાતાં નથી, કારણ કે તે ત્રણે આવશ્યકોમાં કર્મનિર્જરાની જનકતાનો સર્વથા અભાવ જ છે. કારણ કે તેમનું સેવન કરવાથી જો કોઈ જીવ કર્મોની નિર્જરા કરવાનું ઇચ્છતો હોય, તો તે રીતે કર્મોની નિર્જરા કરી શકતો નથી. તે કારણે તે ત્રણે આવશ્યકોને સંસારવર્ધન કરનારાં કારણો રૂપે ગણાવવામાં આવેલ છે. ભાવાવશ્યકમાંથી પણ આગમ ભાવાવશ્યક અને નોઆગમના ત્રીજા ભેદ રૂપ લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક આ બેને જ ઉપાદેય કહી શકાય તેમ છે. લૌકિક અને કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યકને ઉપાદેય રૂપ ગણી શકાય નહીં, એવું સમસ્ત તીર્થંકરોંકા કથન છે.

ભાવાર્થ—નોઆગમ ભાવાવશ્યકમાં આવશ્યક રૂપ આગમનો સર્વથા અભાવ વિવક્ષિત થતો નથી, પરંતુ આગમનો ંકદેશ વિવક્ષિત થયો છે. આ નોઆગમ ભાવાવશ્યકના નીચે પ્રમાણે ત્રણ ભેદ પડે છે (૧) લૌકિક, (૨) કુપ્રાવચનિક અને (૩) લોકોત્તરિક પૂર્વાહ્નમાં મહાભારતનું અને અપરાહ્નમાં રામાયણનું વાંચન

અને શ્રવણ કરવા જે નિર્દિષ્ટ સમય પર ક્રિયમાણ હોનેસે આવશ્યક રૂપ છે । તેમાં વાચક અને શ્રોતાનું જે અર્થોપયોગ યુક્ત પરિણામ છે, તે ભાવરૂપ છે. આ કારણે તે અંશોમાં ઉપયોગ યુક્ત પરિણામથી યુક્ત એવાં તે વાચક અને શ્રોતાજનો લૌકિક ભાવાવશ્યક રૂપ ગણાય છે તથા લોકની અપેક્ષાએ મહાભારત આદિને આગમ પણ ગણવામાં આવે છે. તે આગમોમાં ઉપયુક્ત બનેલા વક્તા અને શ્રોતાઓમાં તે સમયે વિવિધ પ્રકારની ક્રિયાઓ થતી રહે છે, તે ક્રિયાઓ આગમરૂપ નથી, કારણ કે શ્રુતજ્ઞાનને જ આગમરૂપ માનવામાં આવ્યું છે. આ રીતે એકદેશની અપેક્ષાએ આગમની વિદ્યમાનતા હોવાના કારણે મહાભારત આદિનું વાંચન અને શ્રમણ 'નોઆગમ લૌકિક ભાવાવશ્યક' રૂપ છે. ચરક, ચીરિક આદિ પાંચડીઓ દ્વારા જે યજ્ઞ, હોમ, હવન આદિ ક્રિયાઓ કરવામાં આવે છે તે તેમના માન્ય સિદ્ધાન્તાનુસાર તેમને માટે અવશ્ય કરવા યોગ્ય મનાય છે. તેથી તે બધી ક્રિયાઓને આવશ્યક રૂપ કહેવામાં આવે છે. આ આવશ્યક ક્રિયાઓ કરતી વખતે તે ક્રિયાઓ કરનાર લોકોના ઉપયોગ આદિ રૂપ પરિણામ તે આવશ્યક ક્રિયાઓમાં સંલગ્ન રહે છે, તેથી આ પ્રકારના ભાવથી યુક્ત તે ક્રિયાઓને ભાવાવશ્યક રૂપ માનવામાં આવે છે. તે ક્રિયાઓનું જ્ઞાન આગમ રૂપ ગણાય છે. અને તે ક્રિયાઓ કરનારની કર શિર સંયોગ આદિ રૂપ આ અનાગમ રૂપ ગણાય છે. આ પ્રકારે એક દેશમાં આગમતાને

અને શ્રવણ કરવા જે નિર્દિષ્ટ સમયે ક્રિયમાણ હોવાથી આવશ્યકરૂપ છે. તેમાં વાચક અને શ્રોતાનું જે અર્થોપયોગ યુક્ત પરિણામ છે, તે ભાવરૂપ છે. આ કારણે તે અંશોમાં ઉપયોગ યુક્ત પરિણામથી યુક્ત એવાં તે વાચક અને શ્રોતાજનો લૌકિક ભાવાવશ્યક રૂપ ગણાય છે તથા લોકની અપેક્ષાએ મહાભારત આદિને આગમ પણ ગણવામાં આવે છે. તે આગમોમાં ઉપયુક્ત બનેલા વક્તા અને શ્રોતાઓમાં તે સમયે વિવિધ પ્રકારની ક્રિયાઓ થતી રહે છે, તે ક્રિયાઓ આગમરૂપ નથી, કારણ કે શ્રુતજ્ઞાનને જ આગમરૂપ માનવામાં આવ્યું છે. આ રીતે એકદેશની અપેક્ષાએ આગમની વિદ્યમાનતા હોવાના કારણે મહાભારત આદિનું વાંચન અને શ્રમણ 'નોઆગમ લૌકિક ભાવાવશ્યક' રૂપ છે. ચરક, ચીરિક આદિ પાંચડીઓ દ્વારા જે યજ્ઞ, હોમ, હવન આદિ ક્રિયાઓ કરવામાં આવે છે તે તેમના માન્ય સિદ્ધાન્તાનુસાર તેમને માટે અવશ્ય કરવા યોગ્ય મનાય છે. તેથી તે બધી ક્રિયાઓને આવશ્યક રૂપ કહેવામાં આવે છે. આ આવશ્યક ક્રિયાઓ કરતી વખતે તે ક્રિયાઓ કરનાર લોકોના ઉપયોગ આદિ રૂપ પરિણામ તે આવશ્યક ક્રિયાઓમાં સંલગ્ન રહે છે, તેથી આ પ્રકારના ભાવથી યુક્ત તે ક્રિયાઓને ભાવાવશ્યક રૂપ માનવામાં આવે છે. તે ક્રિયાઓનું જ્ઞાન આગમ રૂપ ગણાય છે. અને તે ક્રિયાઓ કરનારની કર શિર સંયોગ આદિ રૂપ આ અનાગમ રૂપ ગણાય છે. આ પ્રકારે એક દેશમાં આગમતાને

અથ—ભાવાવશ્યકસ્ય પર્યાયાનાહ—

મૂલમ્—તસ્સ પાં ઇમે એગટ્ટિયા ણાણાઘોસા ણાણાવંજણા ણામ-

ધેજ્ઞાં ભવંતિ, તં જહા—

આવસ્સયં ૧, અવસ્સકરણિજ્ઞં ૨, ધુવનિગ્ગહો ૩, વિસોહી ૪ય ।

અજ્ઞયણહુક્કવગ્ગો ૫, નાઓ, આરાહણા ૭ મગ્ગો ૮ ॥૧॥

સમણેણં સાવણં ચ અવસ્સકાયંઠ્ઠવયં હવઈ જમ્હા ।

અંતે અહો નિસસ્સય તમ્હા આવસ્સયં નામ ॥૨॥

સે તં આંવસ્સયં ॥સૂ૦ ૨૧॥

ચતુર્વિધ સંઘ દ્વારા ઉપયુક્ત હોકર જો દોનોં સમય—સુબહ ઓર સાય-
કાલ—પ્રતિક્રમણ આદિ આવશ્યક ક્રિયાઈં કી જાતી હૈ વે નોઆગમકી અપેક્ષા
લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક હૈં સંઘકો યે અવશ્ય હી ઉમયકાલ મેં ક્રિયમાણ
હોનેસે આવશ્યક રૂપ હૈં । કર્તાં ઇનમેં ઉપયોગ પૂર્વક તલ્લીન હોતા હૈ ઇસ-
લિયે ઇનમેં ભાવરૂપતા હૈ । ઇનકા જ્ઞાન ઉપયોગરૂપમેં ઉસે હોતા હૈ અતઃ યે
આગમ રૂપ હૈ તથા ઓર અવશિષ્ટ કરશિર સંયોજનાદિ ક્રિયાઈં આગમ રૂપ
નહીં હૈં । ઇસ તરહ નોઆગમકો આશ્રિત કરકે પ્રતિક્રમણ આદિ િયાઈં
લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક હૈં । સૂત્ર ॥ ૨૮ ॥

સદ્ભાવ હોવાથી આગમના એક દેશને આશ્રિત કરીને તે ક્રિયાઓને નોઆગમ
કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યક રૂપ કહેવામાં આવે છે.

ચતુર્વિધ સંઘ ઉપયુક્ત થઈને ઝનને સમય પ્રાતઃકાળે અને સાયંકાળે પ્રતિ-
ક્રમણ આદિ જે આવશ્યક ક્રિયાઓ કરે છે, તે ક્રિયાઓ નોઆગમની અપેક્ષાએ
લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક રૂપ છે. ઝનને કાળે શ્રમણાદિ દ્વારા તે અવશ્ય કરવા યોગ્ય
હોવાથી આવશ્યક રૂપ છે કર્તાં તેમાં ઉપયોગ પૂર્વક તલ્લીન થઈ જાય છે, તેથી
તેમાં ભાવરૂપતા છે. તે ક્રિયાઓના જાનનો ઉપયોગ રૂપે તેનામાં સદ્ભાવ હોય છે,
તેથી તે ક્રિયાઓ આગમરૂપ છે, તથા બીજી કરશિર સંયોજન આદિ ક્રિયાઓ
આગમરૂપ નથી. આ રીતે નોઆગમને આશ્રિત કરીને પ્રતિક્રમણ આદિ ક્રિયાઓ
લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક રૂપ છે, એટલે કે તે પ્રતિક્રમણ આદિ આવશ્યક ક્રિયાઓ
નોઆગમ લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક રૂપ છે, એમ સમજવું. ॥ ૨૪ ૨/ ॥

છાયા—તસ્ય સ્વલુ હમાનિ એકાર્થિકાનિ નાનાઘોષાણિ નાનાવ્યઞ્જનानि
નામધેયાનિ ભવન્તિ, તદ્યથા—

આવશ્યકમ્ ૧ અવશ્યકરણીયમ્ ૨ ધ્રુવનિગ્રહો ૩ વિશેધિશ્ચ ૪ ।

અધ્યયનષટ્કવર્ગઃ ૫ ન્યાયઃ ૬ આરાધના ૭ માર્ગઃ ૮ ॥૧॥

શ્રમણેન શ્રાવકેણ ચ અવશ્યકર્તવ્યકં ભવતિ યસ્માત્ ।

અન્તેઽહર્નિશસ્ય તસ્માદાવશ્યકં નામ ॥૨॥

તદેતદાવશ્યકમ્ ॥ સૂ. ૨૯ ॥

અવ સૂત્રકાર ભાવાવશ્યકતા પર્યાયોંકો કહતે હૈ—

“તસ્સણં હમે” ઇત્યાદિ । સૂત્ર ॥ ૨૯ ॥

શબ્દાર્થઃ—(તસ્સ ણં) એસ આવશ્યક કે (હમે) યે વક્ષ્યમાણ (એગંદ્રિયા)
એક અર્થવાળે (નામધેજ્જા) નામ હૈ । યે નામ (ણાણા ઘોસા ણાણા વંજણા)
ભિન્ન ૨ ઉદાત્ત આદિ સ્વરોં એવં કકાર આદિ અનેક વ્યઞ્જનોંસે સહિત હૈ ।
(તંજહા) વે હસ પ્રકારસે હૈ—(આવસ્સયં) ૧ આવશ્યક (અવસ્સ કરણિજ્જં)
અવશ્યકરણીય, (ધ્રુવનિગ્રહો) ધ્રુવનિગ્રહ ૩, (વિસેહી ય) વિશેધિ ૪ અજ્ઞયણ
છકવર્ગો) અધ્યયનષટ્કવર્ગ ૫, (નાઓ) ન્યાય ૬, (આરાહણા) આરાધના ૭, (મર્ગો)
માર્ગ હનમેં આવશ્યક શબ્દકા અર્થ (સે કિં તં આવસ્સયં) હસકે પહિલે નૌવે—
સૂત્ર મેં સ્પષ્ટ કર દિયા ગયા હૈ । અવશ્યકરણીય—મોક્ષાર્થીજનોં દ્વારા યહ નિયમસે
અનુષ્ઠેય (કરને યોગ્ય) હોતા હૈ હસલિયે હસકા નામ અવશ્યકરણીય હૈ । ધ્રુવ

હવે સૂત્રકાર ભાવાવશ્યકતા પર્યાયવાચી શબ્દોંનું નિરૂપણ કરેહિ—

“તસ્સણં હમે” ઇત્યાદિ—

(તસ્સણં હમે એગંદ્રિયા નામધેજ્જા) તે આવશ્યકતા નીચે પ્રમાણે એકાર્થક
નામે છે—

(ણાણા ઘોસા ણાણા વંજણા) તે નામે જુદા જુદા ઉદાત્ત આદિ સ્વરો
અને કકાર આદિ અનેક વ્યઞ્જનોથી યુક્ત છે. (તંજહા) તે નામે નીચે પ્રમાણે છે—
(આવસ્સયં) (૧) આવશ્યક, (અવસ્સકરણિજ્જં) (૨) આવશ્ય કરણીય, (ધ્રુવનિ-
ગ્રહો) ધ્રુવનિગ્રહ, (વિસેહીય) (૪) વિશેધિ, (અજ્ઞયણછકવર્ગો) (૫) અધ્યય-
નષટ્ક વર્ગ, (નાઓ) (૬) ન્યાય, (આરાહણા) (૭) આરાધના અને (મર્ગો) માર્ગ (૧)
‘આવશ્યક’ આ પદનો અર્થ ‘સે કિં તં આવસ્સયં’ આ પ્રશ્નસૂત્રથી સંદેહ થતા
નવમાં સૂત્રમાં પ્રકટ કરવામાં આવ્યો છે. (૨) ‘અવશ્યકરણીય’—મોક્ષાર્થીજનો દ્વારા
તે અવશ્ય અનુષ્ઠેય (અનુષ્ઠાન કરવા યોગ્ય, આચરણીય) હોય છે, તેથી તેનું ‘અવ-
શ્યકરણીય’ નામ પડ્યું છે.

અથ—ભાવાવશ્યકસ્ય પર્યાયાનાહ—

મૂલમ્—તસ્સ પં ઇમે એગટ્ઠિયા ણાનાઘોસા ણાણાવંજણા ણામ-
ધેજ્ઞાં ભવંતિ, તં જહા—

આવસ્સયં ૧, અવસ્સકરણિજં ૨, ધુવનિગ્ગહો ૩, વિસોહી ૪ય ।

અંજ્ઞયણહક્કવગ્ગો ૫, નાઓ, આરાહણા ૭ મગ્ગો ૮ ॥૧॥

સમણેણં સાવણં ય અવસ્સકાયઠ્ઠવયં હવઙ્ગ જમ્હા ।

અંતે અહો નિસસ્સય તમ્હા આવસ્સયં નામ ॥૨॥

સે તં આંવસ્સયં ॥સૂ૦ ૨૯॥

ચતુર્વિધ સંઘ દ્વારા ઉપયુક્ત હોકર જો દેનોં સમય—સુવહ ઓર સાય-
કાલ—પ્રતિક્રમણ આદિ આવશ્યક ક્રિયાઈં કી જાતી હૈ વે નોઆગમકી અપેક્ષા
લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક હૈ સંઘકો યે અવશ્ય હી ઉભયકાલ મેં ક્રિયમાણ
હોનેસે આવશ્યક રૂપ હૈ । કર્તા ઇનમેં ઉપયોગ પૂર્વક તલલીન હોતા હૈ ઇસ-
લિયે ઇનમેં ભાવરૂપતા હૈ । ઇનકા જ્ઞાન ઉપયોગરૂપમેં ઉસે હોતા હૈ અતઃ યે
આગમ રૂપ હૈ તથા ઓર અવશિષ્ટ કરશિર સંયોજનાદિ ક્રિયાઈં આગમ રૂપ
નહીં હૈ । ઇસ તરહ નોઆગમકો આશ્રિત કરકે પ્રતિક્રમણ આદિ િયાઈં
લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક હૈ । સૂત્ર ॥ ૨૮ ॥

સદ્ભાવ હોવાથી આગમના એક દેશને આશ્રિત કરીને તે ક્રિયાઓને નોઆગમ
કુપ્રાવચનિક ભાવાવશ્યક રૂપ કહેવામાં આવે છે.

ચતુર્વિધ સંઘ ઉપયુક્ત થઈને બન્ને સમય પ્રાતઃકાળે અને સાયંકાળે પ્રતિ-
ક્રમણ આદિ જે આવશ્યક ક્રિયાઓ કરે છે, તે ક્રિયાઓ નોઆગમની અપેક્ષાએ
લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક રૂપ છે. બન્ને કાળે શ્રમણાદિ દ્વારા તે અવશ્ય કરવા યોગ્ય
હોવાથી આવશ્યક રૂપ છે કર્તા તેમાં ઉપયોગ પૂર્વક તલલીન થઈ જાય છે, તેથી
તેમાં ભાવરૂપતા છે. તે ક્રિયાઓના જ્ઞાનનો ઉપયોગ રૂપે તેનામાં સદ્ભાવ હોય છે,
તેથી તે ક્રિયાઓ આગમરૂપ છે, તથા બીજી કરશિર સંયોજન આદિ ક્રિયાઓ
આગમરૂપ નથી. આ રીતે નોઆગમને આશ્રિત કરીને પ્રતિક્રમણ આદિ ક્રિયાઓ
લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક રૂપ છે, એટલે કે તે પ્રતિક્રમણ આદિ આવશ્યક ક્રિયાઓ
નોઆગમ લોકોત્તરિક ભાવાવશ્યક રૂપ છે, એમ સમજવું. ॥ સૂ. ૨૮ ॥

છાયા—તસ્ય સ્વલ્પ હમાનિ એકાર્થિકાનિ નાનાઘોષાણિ નાનાવ્યઙ્જનानि
નામધેયાનિ ભવન્તિ, તદ્વથા—

આવશ્યકમ્ ૧ અવશ્યકરણીયમ્ ૨ ધ્રુવનિગ્રહો ૩ વિશેધિશ્ચ ૪ ।

અધ્યયનષટ્કવર્ગઃ ૫ ન્યાયઃ ૬ આરાધના ૭ માર્ગઃ ૮ ॥૧॥

શ્રમણેન શ્રાવકેણ ચ અવશ્યકર્તવ્યકં ભવતિ યસ્માત્ ।

અન્તેઽહર્નિશસ્ય તસ્માદાવશ્યકં નામ ॥૨॥

તદેતદાવશ્યકમ્ ॥ સૂ. ૨૯ ॥

અવ સૂત્રકાર ભાવાવશ્યકકા, પર્યાયોંકો કહતે હૈ—

“તસ્સણં હમે” ઇત્યાદિ । સૂત્ર ॥ ૨૯ ॥

શબ્દાર્થઃ—(તસ્સ ણં) એસ આવશ્યક કે (હમે) યે વક્ષ્યમાણ (એગઢિયા)
એક અર્થવાલે (નામધેજ્જા) નામ હૈ । યે નામ (ણાણા ઘોસા ણાણા વંજણા)
ભિન્ન ૨ ઉદાત્ત આદિ સ્વરોં એવં કકાર આદિ અનેક વ્યઙ્જનોંસે સહિત હૈ ।
(તંજહા) વે ઇસ પ્રકારસે હૈ—(આવસ્સયં) ૧ આવશ્યક (અવસ્સ કરણિજ્જં)
અવશ્યકરણીય, (ધ્રુવનિગ્રહો) ધ્રુવનિગ્રહ ૩, (વિસોહી ય) વિશેધિ ૪ અજ્ઞયણ
છક્કવર્ગો) અધ્યયનષટ્કવર્ગ ૫, (નાઓ) ન્યાય ૬, (આરાહણા) આરાધના ૭, (મર્ગો)
માર્ગ ઇનમેં આવશ્યક શબ્દકા અર્થ (સે કિં તં આવસ્સયં) ઇસકે પહિલે નૌવે—
સૂત્ર મેં સ્પષ્ટ કર દિયા ગયા હૈ । અવશ્યકરણીય—મોક્ષાર્થીજનોં દ્વારા યહ નિયમસે
અનુષ્ટેય (કરને યોગ્ય) હોતા હૈ ઇસલિયે ઇસકા નામ અવશ્યકરણીય હૈ । ધ્રુવ

હવે સૂત્રકાર ભાવાવશ્યકના પર્યાયવાચી શબ્દોત્તુ નિરૂપણ કરેછે—

“તસ્સણં હમે” ઇત્યાદિ—

(તસ્સણં હમે એગઢિયા નામધેજ્જા) તે આવશ્યકના નીચે પ્રમાણે એકાર્થક
નામે છે—

(ણાણા ઘોસા ણાણા વંજણા) તે નામે જુદા જુદા ઉદાત્ત આદિ સ્વરો

અને કકાર આદિ અનેક વ્યઙ્જનોથી યુક્ત છે. (તંજહા) તે નામે નીચે પ્રમાણે છે—

(આવસ્સયં) (૧) આવશ્યક, (અવસ્સકરણિજ્જં) (૨) આવશ્ય કરણીય, (ધ્રુવનિ-

ગ્રહો) ધ્રુવનિગ્રહ, (વિસોહાય) (૪) વિશેધિ, (અજ્ઞયણછક્કવર્ગો) (૫) અધ્યય-

નષટ્કવર્ગ, (નાઓ) (૬) ન્યાય, (આરાહણા) (૭) આરાધના અને (મર્ગો) માર્ગ (૧)

‘આવશ્યક’ આ પદનો અર્થ ‘સે કિં તં આવસ્સયં’ આ પ્રશ્નસૂત્રથી શંકા થતા

નવમાં સૂત્રમાં પ્રકટ કરવામાં આવ્યો છે. (૨) ‘અવશ્યકરણીય’—મોક્ષાર્થીજનો દ્વારા

તે અવશ્ય અનુષ્ટેય (અનુષ્ઠાન કરવા યોગ્ય, આચરણીય) હોય છે, તેથી તેનું ‘અવ-

શ્યકરણીય’ નામ પડ્યું છે.

ટીકા—‘તસ્ય ણં’ इत्यादि—

तस्य=आवश्यकस्य खलु इमानि=वक्ष्यमाणानि नानाघोषाणि—नाना=भेदक
विधाः भिन्ना भिन्ना इति यावत्, घोषाः=उदात्तादिरवराः येषां तानि तथा-
भिन्नाभिन्नोदात्तादिस्वरयुक्तानि, तथा-नानाव्यञ्जनानि—नाना=अनेकविधानि
व्यञ्जनानि=ककारादीनि येषां तानि तथा—इकारादिभिन्नभिन्नव्यञ्जनसहितानि
एकार्थिकानि=परमार्थत एकार्थविषयाणि नामधेयाणि-नामानि-पर्यायाः भवन्ति ।
तद्यथा—आवश्यकम् १ अवश्यकरणीयम् २ ध्रुवनिग्रहो ३ विशेषाधिश्च ४ अध्ययनपट्टवर्गो ५
न्यायः ६ आराधना ७ मार्गः ८ । इति । अयमर्थः—आवश्यकम्, अस्य शब्दार्थः=
‘से किं तं आवस्सयं’ इत्यत्र प्राग् वर्णितः ॥१॥ अवश्यकणीयम्—मोक्षार्थि-
भिर्नियमेनानुष्ठेयत्वात्—अवश्यकरणीयम् ॥२॥ ध्रुवनिग्रहः—अनादित्वात् चिद-
पर्यवसितत्वाद् ध्रुवं=कर्म तत्फलभूतः संसारो वा, तस्य निग्रहः=निग्रहहेतुत्वात्
निग्रहः, ध्रुवनिग्रहः—चतुर्गतिकसंसारनिवारकः ॥३॥ विशेषाधिः—विशेषनं
विशेषाधिरतद्हेतुत्वाद् आवश्यकं विशेषाधिः=तस्य कर्ममलापहारकत्वात् ॥४॥ अध्य-
यनपट्टवर्गः—अध्ययनापट्टम्=अध्ययनपट्टकम् तद्रूपा वर्गः अध्ययनपट्टकवर्गः=सामा-
यिकादिषडध्ययनसमूहरूपः ॥५॥ न्यायः अभीष्टार्थसिद्धेः सत्यगुपायत्वाद् न्यायः यद्वा—

निग्रह—अनादि होने के एवं नाना जीवों की अपेक्षा पर्यवसानसे रहित होने के
कारण ध्रुवनामकर्म या कर्म के फलभूत संसार है । इस कर्मका या उसके
फलभूत संसारका निग्रह इससे होता है, इसलिये इसका नाम ध्रुवनिग्रह है ।
विशेषाधि—कर्मरूप मल की अपहृति (निवृत्ति) इससे होती है— इसलिये इसका
नाम विशेषाधि है । यह सामायिक आदि छह अध्ययन समूह रूप है—इसलिये
इसका नाम अध्ययनपट्टक वर्ग है । अभीष्ट अर्थ की सिद्धिका यह सबसे भला
उपाय है इसलिये इसका नाम न्याय है—अथवा जीव और कर्म के अनादिका-

(૩) ‘ધ્રુવનિગ્રહ’—કર્મ અથવા કર્મના ફલસ્વરૂપ સંસારનું નામ ધ્રુવ છે, કારણ
કે કર્મ અને સંસાર, આ બંને અનાદિ અને વિવિધ જીવોની અપેક્ષાએ પર્યવ-
સાનથી રહિત (અનંત) છે. એવા અનાદિ અનંત કર્મનો અથવા કર્મના ફલભૂત
સંસારનો નિગ્રહ આ આવશ્યક ક્રિયાઓ વડે થાય છે, તેથી તેનું ‘ત્રીજું’ નામ
‘ધ્રુવનિગ્રહ’ છે.

(૪) વિશેષાધિ—તેના દ્વારા કર્મરૂપી મળની નિવૃત્તિ અથવા વિશુદ્ધિ થાય છે,
તેથી તેનું ચોથું નામ “વિશેષાધિ” છે.

(૫) ‘અધ્યયનપટ્ટક વર્ગ’—તે સામાયિક આદિ ૬ અધ્યયનના સમૂહરૂપ હોવાથી
તેનું પાંચમું નામ ‘અધ્યયનપટ્ટક વર્ગ’ છે.

(૬) ‘ન્યાય’—અભીષ્ટ અર્થની સિદ્ધિના સૌથી સારા ઉપાય રૂપ હોવાને કારણે

જીવકર્મસંબંધાપનયનાક્રમઃ—યથાર્થિ પ્રત્યર્થિનોર્દ્યયોરપિ ક્ષેત્રધનદિસમ્બન્ધિકં ચિર-
કાલિકમપિ વિવાદં ન્યાયાધ્યક્ષેર્દષ્ટોઽયાયો રૂપનયતિ, તથૈવાવશ્યકમપિ જીવકર્મણો-
રનાદિકાલિકમાશ્રયાશ્રયિભાવસમ્બન્ધમપનયતીતિ—આવશ્યકમપિ ન્યાય इत्युच्यते
॥૬॥ આરાધના=મોક્ષારાધના હેતુત્વાદા ચ્યકમ્ આરાધના ॥૭॥ માર્ગઃ—તથા
માર્ગો નગરં પ્રાપયતિ, તથૈવાવશ્યકમપિ મોક્ષં પ્રાપયતીતિ મોક્ષરૂપપુરપ્રાપકત્વાત્
આવશ્યકં માર્ગઃ इति ॥૮॥

સમપ્રતિ—આવશ્યકપદસ્ય શબ્દાર્થઃ સૂત્રકારઃ સ્વયમેવ પ્રદર્શયતિ—‘સમ-
ણેન’ इत्यादि । શ્રમણેન=સાધુના શ્રાવકેણ, ચકારસ્યોપલક્ષણત્વાત્ શ્રમણા
શ્રાવિકયા ચ યસ્માત્ અહર્નિશસ્ય=અહોરાત્રસ્ય અન્તે=અવસાને દિવસાન્તે રાત્ર્યન્તે ચે

લીન સંબન્ધકો યહ દૂર કર દેતા હૈ—જિસ પ્રકાર વાદિ પ્રતિવાદી કે વહુત
સમય કા મી ક્ષેત્ર, ધન આદિ સંબન્ધી વિવાદકો ન્યાયાધ્યક્ષ ન્યાય કે વજ્ર
પર દૂર કર દેતા હૈ—ઉસી પ્રકાર આવશ્યક મી જીવ ઔર કર્મ કે અનાદિ-
કાલીન આશ્રયાશ્રયિભાવરૂપ સંબન્ધકો દૂર કર દેતા હૈ—इसलिये इसका नाम
મી ન્યાય હૈ । મોક્ષકી આરાધના કરનેકા યહ હેતુ હૈ । इसलिये इसका नाम
આરાધના હૈ । જિસ પ્રકાર માર્ગ પથિકકો નગર મેં પહુંચા દેતા હૈ ઉસી
પ્રકાર આવશ્યક મી મોક્ષ રૂપ નગર મેં અપને પથિકકો પહુંચા દેતા હૈ—इसलिये
इसका नाम-मार्ग है । આવશ્યક શબ્દકા ક્યા અર્થ હૈ—इस बातको अव
સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—(શ્રમણેન સાવણં ચ) શ્રમણ, શ્રાવક કે દ્વારા યહ (જમ્હા)
જિસ કારણસે (અહોનિસસ અંતે) દિવસાન્ત ઔર નિશાન્ત મેં (અવસસ કાયવ્વં
હોઈ) અવશ્ય કરણીય હોતા હૈ (તમ્હા) इसकारण से (आवससयं नाम) इसका

તેનું છઠું નામ “ન્યાય” અથવા—જેવી રીતે ન્યાયાધીશ વાદી અને પ્રતિવાદીના
જર, જમીન આદિ વિવાદોને ન્યાયને આધારે દૂર કરી નાખે છે, એજ પ્રમાણે
આવશ્યક પણ જીવ અને કર્મના અનાદિ કાલિન આશ્રયાશ્રયી ભાવરૂપ સંબંધને દૂર
કરી નાખે છે. તેથી આવશ્યકનું છઠું નામ ‘ન્યાય’ છે.

(૭) ‘આરાધના’—મોક્ષની આરાધના કરવામાં આવશ્યક હેતુરૂપ (સાધનરૂપ)
થઈ પડે છે, તેથી તેનું સાતમું નામ ‘આરાધના’ છે.

(૮) ‘માર્ગ’—જેવી રીતે માર્ગ પથિકને નગરમાં પહોંચાડી દે છે, એજ પ્રમાણે
આવશ્યક પણ તેના આરાધક જીવને મોક્ષ રૂપ નગરમાં પહોંચાડી દે છે, તેથી તેનું
આઠમું નામ માર્ગ છે. આવશ્યક શબ્દનો શો અર્થ છે, તે હવે સૂત્રકાર પ્રકટ કરે
છે(શ્રમણેન સાવણં ચ) શ્રમણ અને શ્રાવક દ્વારા તે (જમ્હા) જે દારણે (અહો
નિસસ અંતે) દિવસને અન્તે અને રાત્રિને અન્તે (અવસસ કાયવ્વં હોઈ) અવશ્ય

ત્વર્થઃ, અવશ્યકત્ત્વવ્યકત્ત્વ=અવશ્યક કરણીયં ભવતિ, તસ્માત્ અસ્ય આવશ્યકં નામ ભવતિ । તદેતદાવશ્યકમ્—‘આવસ્સયં નિવિલ્લવિસ્સામિ’ इति यत्प्रतिज्ञातं तदेवं नामादिभेदैरावश्यकं निक्षिप्य वर्णितम् । इत्थमनुयोगद्वारसूत्रे आवश्यक-
 काधिकारः संपूर्ण ॥ सू० २९ ॥

‘સુયં નિવિલ્લવિસ્સામિ’ इति प्रतिज्ञानुसारेण श्रुताधिकारः प्रारभ्यते-तत्र प्रथमं श्रुतस्वरूपं निरूपयितुमाह—

મૂલમ્—સે કિં તં સુયં ? સુયં ચઽઉવ્વિહં પળ્લત્તં, તં જહા-નામ-
 સુયં, ઠવળાસુયં, દવ્વસુયં, ભાવસુયં ॥સૂ૦ ૩૦॥

છાયા--અથ કિં તત્ શ્રુતમ્ ? શ્રુતં ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્, તથથા-નામશ્રુતમ્, સ્થાપનાશ્રુતમ્, દ્રવ્યશ્રુતં, ભાવશ્રુતમ્ ॥ સૂ૦ ૩૦ ॥

ટીકા--‘સે કિં તં સુયં’ इत्यादि—व्याख्या निगदसिद्धा ॥सू० ३०॥

નામઆવશ્યક છે । (સે તં આવસ્સયં) “આવસ્સયં નિવિલ્લવિસ્સામિ” इसप्रकार की जो सूत्रकार ने पहिले कहा है उसी के अनुसार नाम, स्थापना आदि भेदां द्वारा आवश्यकका न्यास करके वर्णन किया है । इस प्रकारसे अनुयोगद्वार सूत्र में आवश्यक का अधिकार समाप्त हुआ । सूत्र० २९ ॥

અવ સૂત્રકાર “સુયં નિવિલ્લવિસ્સામિ” इस कथन के अनुसार श्रुताधिकार प्रारंभ करते हैं—इसके पहिले वे श्रुत के स्वरूपको निरूपण करने के लिये “से किं तं सुयं, इत्यादि । सूत्र कहते हैं—

“સે કિં તં સુયં ?” इत्यादि । ॥ सूत्र ३० ॥

શબ્દાર્થઃ—(સે) शिष्य पूछता है कि हे भदन्त ! श्रुतका क्या स्वरूप है?

उत्तर—(सुयं चउव्विहं पण्णत्तं) श्रुत चार प्रकारका कहा गया है

કરણીય હોય છે, (તમ્હા)તે કારણે (આવસ્સયં નામ) તેનું નામ આવશ્યક છે. (સે તં “આવસ્સયં” ‘આવસ્સયં નિવિલ્લવિસ્સામિ’ આ પ્રકારે સૂત્રકારે જે પહેલાં કહ્યું છે તે અનુસાર નામ સ્થાપના આદિ ભેદો દ્વારા આવશ્યકનો ન્યાસ (વિભાગ) કરીને વર્ણન કર્યું છે આ પ્રકારે અનુયોગદ્વાર સૂત્રનો આવશ્યક અધિકાર અહીં સમાપ્ત થાય છે. ॥ ૨૯ ॥

હવે સૂત્રકાર “સુયં નિવિલ્લવિસ્સામિ” આ કથન અનુસાર શ્રુતાધિકારનો પ્રારંભ કરે છે સૌથી પહેલાં તેઓ શ્રુતના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવા નિમિત્તે “સે કિં તં સુયં” इत्यादि सूत्र કહે છે—“સે કિં તં સુયં?” इत्यादि —

— शब्दार्थ—(से किं तं सुयं ?) शिष्य गुरुने जेवो प्रश्न पूछे छे के ‘हे भदन्त ! श्रुतनुं स्वरूप केवुं छे ?

તત્ર નામશ્રુતં નિરૂપયતિ -

મૂલમ્—સે કિં તં નામસુય ? નામસુયં જસ્સ ણં જીવસ્સ વા જાવ સુણ્ણિ નામ કજ્જઈ, ॥સૂ૦ ૩૧॥

છાંયા—અથ કિં તદ્ નામશ્રુતમ્ ? નામશ્રુત યસ્ય સ્વલુ જીવસ્યે વા યાવત્ શ્રુતેતિ નામ ક્રિયતે, તદેતત્ નામશ્રુતમ્ ॥સૂ૦ ૩૧॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि । व्याख्या निगदसिद्धा ॥ सू० ३१ ॥

અથ સ્થાપનાશ્રુતં નિરૂપયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં ઠવણાસુયં ? ઠવણાસુયં જણં કટ્ટકમ્મે વા જાવ ઠવણા ઠવિજ્જઈ, સે તં ઠવણાસુય । નામઠવણાણં કો પઢવિસે-સો ? નામ આવકહિયં, ઠવણા ઇત્તરિય વા હોજા આવકહિયા વા ।સૂ૦ ૩૨॥

(તં જહા) उसके वे चार प्रकार ये हैं—(नामसुयं ठवणासुयं-द्व्वसुयं भाव-सुयं) नामश्रुत, स्थापनाश्रुत, द्रव्य त और भाव त । ॥ सूत्र ३० ॥

નામ શ્રુતકા કયા સ્વરૂપ હૈં इस बातको सूत्रकार प्रकट करते हैं—

‘સે કિં તં નામ સુય’ इत्यादि । ॥ सूत्र ३१ ॥

શબ્દાર્થઃ— हे भदंत ! नामश्रुत का क्या स्वरूप है ? उत्तर—(नामसुयं) नाम श्रुतका स्वरूप इस प्रकार से है (जस्स णं जीवस्स वा अजीवस्स वा जाव सुण्णि नाम कज्जई) जिस किसी जीव अथवा अजाव आदि का त ऐसा जो नाम रख लिया जाता है । इसकी व्याख्या नामावश्यक की तरह जाननी चाहिये । ॥ सूत्र ३१ ॥

ઉત્તર—(સુયં ચત્તરિહં પણ્ણત્તં) શ્રુત ચાર પ્રકારનું કહ્યું છે (તંજહા) તે ચાર પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(નામ સુયં, ઠવણાસુયં, દ્વ્વસુયં, ભાવસુયં, (૧) નામ શ્રુત (૨) સ્થાપનાશ્રુત, (૩) દ્રવ્યશ્રુત, અને (૪) ભાવશ્રુત. ॥ સૂ૦ ૩૦ ॥

હવે સૂત્રકાર નામશ્રુતના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં નામસુયં?” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—शिक्ष्य शुरुने એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભગવન્ ! નામશ્રુતનું કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—(नामसुयं) नामश्रुतनुं स्वरूप आ प्रकारनुं छे—(जस्स णं जीवस्स वा अजीवस्स वा जाव सुण्णि नाम कज्जई) જે કોઈ જીવ અથવા અજીવ આદિનું “ ત” એવું જે નામ રાખવામાં આવે છે તેને નામ ત કહે છે. આ નામશ્રુતની વ્યાખ્યા 1મ આવશ્યકની વ્યાખ્યા અનુસાર જ સમજી લેવી. ॥ સૂ૦ ૩૧ ॥

છાયા—અથ કિં તત્ સ્થાપનાશ્રુતમ્ ? સ્થાપનાશ્રુતં યત્સ્વલુ કાઠકર્મણિ
વા યાવત્ સ્થાપના સ્થાપ્યતે, તદેતત્ સ્થાપનાશ્રુતમ્ । નામસ્થાપનયોઃ કઃપ્રતિ
દિશેષઃ ? નામ યાવત્કથિકમ્, સ્થાપના ઇત્વરિકા વા ભવેત્, યાવત્કથિકા વા ॥ સૂ. ૩૨

ટોકા—‘સે કિં તં ઠવ્ણાસુ ’ ઇત્યાદિ—વ્યાખ્યા પ્રાગ્વત્ ॥ સૂ. ૩૨ ॥
દ્રવ્યશ્રતં નિરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં દઢ્વસુયં ? દઢ્વસુયં દુવિહં પળ્ળત્તં, તં જહા
—આગમઓ ય નો આગમઓ ય ॥ સૂ. ૩૩ ॥

છાયા—અથ કિં તદ્ દ્રવ્યશ્રુતમ્ ? દ્રવ્યશ્રતં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞતમ્, તથા—
આગમતશ્ચ નો આગમતશ્ચ ॥ સૂ. ૩૩ ॥

સ્થાપના શ્રુત કા સ્વરૂપ કયા હૈં ઇતિવાતવા સૂત્રકાર નિરૂપણ કરતે હૈં—
“સે કિં તં” ઇત્યાદિ । ॥ સૂત્ર ૩૨ ॥

શબ્દાર્થઃ—સે(કિં તં)હે ભદન્ત ! સ્થાપનાશ્રુત કા કયા સ્વરૂપ હૈં ?

ઉત્તરઃ—(ઠવ્ણાસુયં) સ્થાપનાશ્રુત કા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર સે હૈં (જળ્ણં) જો
(કટ્ટકમ્મે વા જાવ ઠવ્ણાઠવિજ્જઇ) કાઠ આદિ મેં “રહ ત હૈં” ઇસ
પ્રકારકી જો કલ્પના યા આરોપ કિયા જાતા હૈં (સે તં ઠવ્ણાસુયં) વહ
સ્થાપના શ્રુત હૈં । નામ ઠવ્ણાણં કો પઙ્ગવિસેસો) નામ ઔર સ્થાપના મેં કયા
અન્તર હૈં ?

ઉત્તરઃ—(નામ આવકહિયં યા ઠવ્ણા ઇત્તરિયા વા હોજ્જા) નામ યાવત્કથિક
હોતા હૈં ઔર સ્થાપના યાવત્કથિક/ઔર ઇત્વરિક દોનોં પ્રકાર કી હોતી
હૈં । ઇસકી વ્યાખ્યા વારહવેં સૂત્ર કી તરહ જાનનીં ચાહિયે । ॥ સૂત્ર ૩૨ ॥

હવે સૂત્રકાર સ્થાપના શ્રુતના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે —

“સે કિં તં ઠવ્ણાસુયં?” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થઃ—(સે કિં તં) ઇત્યાદિ—શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભગવન્ !
સ્થાપનાશ્રુતનું કેવું સ્વરૂપ છે ? (કટ્ટકમ્મે વા જાવ ઠવ્ણા ઠવિજ્જઇ) કાઠ
આદિમાં “આ શ્રુત છે” આ પ્રકારની જે કલ્પના અથવા આરોપ કરવામાં આવે
છે (સે તં ઠવ્ણાસુયં તેને ‘સ્થાપનાશ્રુત’ કહે છે (નામ ઠવ્ણાણં કો પઙ્ગવિસેસો)
હે ભગવન્ ! નામ અને સ્થાપના વચ્ચે શો તફાવત છે ?

ઉત્તર—(નામ આવકહિયં ઠવ્ણા ઇત્તરિયા વા હોજ્જા) નામ યાવત્કથિક
હોય છે. અને સ્થાપના યાવત્કથિક અને ઇત્વરિક, આ બન્ને પ્રકારની હોય છે. આ
સૂત્રનું વિશેષ વિવેચન તથા આ સૂત્રનો ભાવાર્થ બારમાં સૂત્રમાં (સ્થાપના આવ-
શ્યક સૂત્રમાં) કહ્યા અનુસાર સમજવો. ॥ સૂ. ૩૨ ॥

ટીકા—‘સે કિં તં દઢ્વસુયં’ ઇત્યાદિ ।

વ્યાખ્યા પ્રાગ્વત્ ॥ સૂ૦ ૩૩ ॥

તત્ર—આગમતો દ્રવ્યશ્રુતં નિરૂપયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં આગમઓ દઢ્વસુયં ? આગમઓ દઢ્વસુયં જસ્સ ણં સુણત્તિ પયં સિલ્લિયં ઠિયં જિયં જાવ ણો અણુપ્પેહાણ કમ્હા ? અણુવઓગો દઢ્વમિત્તિ કદ્દુ, નેગમસ્સ ણં ઇગો અણુવઉત્તો આગમઓ ઇગં દઢ્વસુયં જાવ કમ્હા ? જઇ જાણણ અણુવઉત્તે ન ભવઇ । સે તં આગમઓ દઢ્વસુયં ॥સૂ૦ ૩૪॥

છાયા—અથ કિં તદાગમતો દ્રવ્યશ્રુતમ્, આગમતો દ્રવ્યશ્રુતં—યસ્ય સ્વલુભતેતિ પદં શિક્ષિતં સ્થિતં જિતં યાવત્ નો અનુપ્રેક્ષયા, કસ્માત્ ? અનુપયોગો

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં) હે ભદન્ત ! દ્રવ્યશ્રુત કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(દઢ્વસુયં દુવિહં પ્પણત્તં) દ્રવ્યશ્રુત દો પ્રકારકા વહા ગયા હૈ । (તંજહા) ઉસકે વે પ્રકાર યે હૈ—(આગમઓ ય નોઆગમઓ ય) ? આગમ કો અશ્રિત કર કે દ્રવ્યશ્રુત હોના હૈ ઓર દૂસરા નોઆગમકો અશ્રિત કરકે દ્રવ્યશ્રુત હોતા હૈ । ઇસકી વ્યાખ્યા પહિલે કી તરહ જાનની ચાહિયે ॥સૂત્ર ૩૩॥

અવ સૂત્રકાર આગમ કી અપેક્ષા કર કે દ્રવ્યશ્રુતકા નિરૂપણ કરતે હૈ—

‘સે કિં તં આગમઓ દઢ્વસુયં’ ઇત્યાદિ । ॥ સૂત્ર ૩૪ ॥

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં) શિષ્ય પૂછતા હૈ કિં હે ભદન્ત । આગમ કા આશ્રય કરકે જો દ્રવ્યશ્રુત હોતા હૈ ઉસકા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

હવે સૂત્રકાર દ્રવ્યશ્રુતના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

‘સે કિં તં દઢ્વસુયં ?’ ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં દઢ્વસુયં?) હે ભગવન્ ! દ્રવ્યશ્રુતનું કેવું સ્વરૂપ કહ્યું છે?

ઉત્તર—(દઢ્વસુયં દુવિહં પ્પણત્તં) દ્રવ્યશ્રુતના બે પ્રકાર કહ્યા છે. (તંજહા) તે બે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે (આગમઓ ય નોઆગમઓય) (૧) આગમને આશ્રિત કરીને દ્રવ્યશ્રુત હોય છે, અને (૨) નોઆગમને આશ્રિત કરીને દ્રવ્યશ્રુત હોય છે. તેની વ્યાખ્યા આવશ્યક સૂત્રમાં આગળ કહ્યા પ્રમાણે સમજવી. ॥ સૂ૦ ૩૩ ॥

હવે સૂત્રકાર આગમને આશ્રિત જે દ્રવ્યશ્રુત છે તેનું નીચે પ્રમાણે નિરૂપણ કરે છે—‘સે કિં તં આગમઓ દઢ્વસુયં’ ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં આગમઓ દઢ્વસુયં?) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે—હે ભગવન્ ! આગમનો આશ્રય કરીને જે દ્રવ્યશ્રુત હોય છે, તે દ્રવ્યશ્રુતનું કેવું સ્વરૂપ છે ?

દ્રવ્યમિતિ કૃત્વા, નૈગમસ્ય સ્વલુ એકોઽનુપયુક્ત આગમત એકં દ્રવ્યશ્રુતં યાવત્
કસ્માત્ ? યદિ જ્ઞાયકઃ અનુપયુક્તો ન ભવતિ । તદેતદાગમતો દ્રવ્યશ્રુતમ્ ॥સૂ૦૩૪॥

ટીકા—‘સે કિં તં આગમઓ દવ્વસુયં’ इत्यादि । व्याख्या पूर्ववत् ॥सू० ३४॥

ઉક.માગમતો દ્રવ્યશ્રુતમ્ । અથ નો આગમતો દ્રવ્યશ્રુતમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં નો આગમઓ દવ્વસુયં ? નો આગમઓ
દવ્વસુયં તિવિહ પપ્પણત્તં, તં જહા—જાણયસરીરદવ્વસુયં, ભવિય-
સરીરદવ્વસુયં, જાણયસરીર—ભવિયસરીરવહરિત્તં દવ્વસુયં ॥સૂ૦૩૫॥

ઉત્તર:—(આગમઓ દવ્વસુયં) આગમવા આશ્રય કર કે દ્રવ્યશ્રુત કા સ્વરૂપ
હસ પ્રકાર સે હૈ—(જસ્સ ણં સુણત્તિ પયં સિવિસ્વયં ઠિયં જિયં જાવ ણો અણુપ્પેહાણ)
જિસ સાધુ આદિ કો શ્રુતપદ શિક્ષિત હૈ સ્થિત હૈ જિત હૈ । યાત્પદ સે મિત
હૈ, પરિજિત હૈ નામસમ હૈ, ધોપસમ હૈ, અહીનાક્ષર હૈ, અનત્યક્ષર હૈ, અવ્યાવિદ્ધાક્ષર
(ઉલટ પુલટ પનેસે રહિત) હૈ, અસ્થલિત હૈ, અમિલિત હૈ, અવ્યત્યામેહિત હૈ,
પરિપૂર્ણ ઘોષવાલા હૈ, વળ્ઠોઠવિપ્રમુક્ત હૈ, ઓર શુરુવાચનોપગત હૈ । હસતરહ
વહ સાધુ આદિ વાચના સે પૃચ્છનાસે પરિવર્તના (આવૃત્તિ)સે ઓર ધર્મકથા સે હસમેં
વર્તમાન હૈ પરંતુ ઉપયોગ સે વર્તમાન નહીં હૈ, અતઃ ઉપયોગ સે રહિત હં ને કે
કારણ વહ સાધુ આગમ કો આશ્રિત કર કે દ્રવ્યશ્રુત માના ગયા હૈ । (કમ્હા)
ક્યોંકિ (અણુવઓગો દવ્વમિતિ કહું) હસા આગમ વા વચન હૈ કિ જો
ઉપયોગ સે રહિત હોતા હૈ વહ દ્રવ્ય માના જાતા હૈ । હસકી વ્યાખ્યા ૧૪ વે
સૂત્રકે સમાન જાનની ચાહિયે । સૂત્ર ॥ ૩૪ ॥

ઉત્તર—(આગમઓ દવ્વસુયં) આગમનો આશ્રય કરીને દ્રવ્યશ્રુતનું આ
પ્રકારનું સ્વરૂપ છે—

(જસ્સ ણં સુણત્તિ પયં સિવિસ્વયં ઠિયં જિયં જાવ ણો અણુપ્પેહાણ) જે
સાધુ આદિને શ્રુતપદ શિક્ષિત છે, સ્થિત છે, જિત છે, મિત છે, પરિજિત છે,
નામસમ છે, ધોષસમ છે, અહીનાક્ષર છે, અનત્યક્ષર છે, અવ્યાવિદ્ધાક્ષર અસ્થલિત
છે, અમિલિત છે, અવ્યત્યામેહિત છે, પરિવણ્ઠધોષયુક્ત છે, કંઠોઠ વિપ્રમુક્ત છે,
અને શુરુવાચનોપગત છે, આ રીતે તે સાધુ આદિ વાચનાથી, પરિવર્તનાથી પૃચ્છ-
નથી, પરિવર્તનાથી અને ધર્મકથાથી તેમાં વર્તમાન છે, પરંતુ ઉપયોગ પરિણામથી
તેમાં વર્તમાન (પ્રવૃત્ત) નથી, અને તેથી ઉપયોગથી રહિત હોવાને કારણે તે સાધુને
આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યશ્રુત માનવામાં આવે છે, (કમ્હા) કારણ કે (અણુવઓગો
દવ્વમિતિ કહું) આગમનું એવું વચન છે કે જે ઉપયોગથી રહિત હોય છે—
અનુપયુક્ત પરિણામવાળો હોય છે તેને દ્રવ્યરૂપ માનવો જોઈએ. આ રૂત્રમાં
વપરાયેલાં પદોનો લાવાર્થ ૧૪ માં સૂત્રમાં આપ્યા પ્રમાણે સમજવો. ॥ સૂ૦ ૩૪ ॥

છાદો—અથ કિં તદ્ નો આગમતો દ્રવ્યશ્રુતમ્ ? નો આગમતો દ્રવ્ય શ્રુતં ત્રિવિધં પ્રજ્ઞસમ તદ્યથા—જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યશ્રુતમ્, ભવ્યશરીરદ્રવ્યશ્રુતમ્, જ્ઞાયક-શરીરભવ્યશરીરવ્યતિરિક્તં દ્રવ્યશ્રુતમ્ ॥સૂ. ૩૫॥

ટીકા—‘સે કિં તં નોઆગમઓ દવ્વસુયં’ इत्यादि । व्याख्या पूर्ववत् ॥सू. ३५॥

અથ જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યશ્રુતમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં જાણયસરીરદવ્વસુયં ? જાણયસરીરદવ્વ-સુયં સુયત્તિપયત્થાહિગારજાણયસ્સ જં સરીરયં વવગયચુયચાવિય-ચત્તદેહં તં ચેવ પુત્તવભણિયં ભાણિયવ્વં જાવ સે તં જાણયસરીર-દવ્વસુયં ॥ સૂ. ૩૬ ॥

अब सूत्रकार नोआगम को आश्रित करके द्रव्यश्रुत का कथन करते हैं—

“से किं तं नोआगमओ दव्वसुयं” इत्यादि । सूत्र ३५ ॥

शब्दार्थः—(से किं तं) हे भदन्त ! नोआगम को आश्रित करके द्रव्यश्रुत का क्या स्वरूप है ? (नोआगमओ दव्वसुयं) नोआगम को आश्रित करके द्रव्यश्रुत (तिविहं पणत्तं) ३ तीन प्रकार का कहा है । (तं जहा) वे प्रकार ये हैं—(जाण-यसरीरदव्वसुयं, भवियसरीरदव्वसुयं, जाणयसरीर—भवियसरीरवइरित्तं दव्वसुयं) ज्ञायकशरीरद्रव्यश्रुत, भव्यशरीरद्रव्यश्रुत, और ज्ञायकशरीरभव्यशरीर इन दोनों से व्यतिरिक्तद्रव्यश्रुत । इस सूत्र की व्याख्या पहिले कहे हुए १६ वे सूत्र की व्याख्या के अनुमार जाननी चाहिये । ॥ सू. ३५ ॥

હવે સૂત્રકાર નોઆગમને આશ્રિત કરીને દ્રવ્યશ્રુતનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં નોઆગમઓ દવ્વસુયં?” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં) ઇત્યાદિ શિષ્ય શુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે કે હે ભદ્રન્ત !

નોઆગમને આશ્રિત કરીને દ્રવ્યશ્રુતનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(નોઆગમઓ દવ્વસુયં તિવિહં પણત્તં) નોઆગમને આશ્રિત કરીને દ્રવ્યશ્રુતના ત્રણ પ્રકાર કહ્યા તે. (તંજહા) તે ત્રણ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે (જાણયસરીરદવ્વસુયં, ભવિયસરીરદવ્વસુયં, જાણયસરીરવइरित्तं દવ્વસુયં) (૧) જ્ઞાયક શરીર દ્રવ્યશ્રુત, (૨) ભવ્યશરીર દ્રવ્યશ્રુત, અને (૩) જ્ઞાયક શરીર અને ભવ્યશરીરથી ભિન્ન એવું દ્રવ્યશ્રુત આ સૂત્રની વ્યાખ્યા આગળ ૧૬ માં સૂત્રની જે વ્યાખ્યા આપવામાં આવી છે, તે વ્યાખ્યા પ્રમાણે સમજવી. ॥ સૂ. ૩૫ ॥

છાયા--અથ કિં તદ્ જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યશ્રુતમ્ ? જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યશ્રુત-
શ્રુતેતિ પદાર્થાધિકારજ્ઞાયકસ્ય યત્ શરીરકં વ્યપગતચ્યુતચ્યાવિતત્યક્તદેહં તદેવ
પૂર્વભણિતં મણિતવ્યં યાવત, તદેતત્ જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યશ્રુતમ્ ॥સૂ૦ ૩૬॥

ટીકા--'સે કિં તં જાણયસરીરદ્રવ્યસુયં' इत्यादि । व्याख्या पूर्ववत् ॥सू० ३६॥

જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યશ્રુત કા કયા સ્વરૂપ હૈ--ઇસ વાત કો સૂત્રકાર સ્પષ્ટ
કરતે હૈ--"સે કિં તં જાણયસરીરદ્રવ્યસુયં" इत्यादि ॥सू० ३६॥

શબ્દાર્થ--(સે કિં તં જાણયસરીરદ્રવ્યસુયં) હે મદન્ત (જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્ય
શ્રુત કા કયા સ્વરૂપ હૈ?

ઉત્તર--(સુચત્તિપયત્યાહિગારજાણયસ્સ) શ્રુત શબ્દ વાચ્ય આગમ કે
અર્થ રૂપ અધિકાર કે જ્ઞાતા કા એસા (સરીરય) શરીર (જં) જો (વગમચુય
ચાવિયચત્તદેહં) વ્યપગત--ચૈતન્ય પર્યાય સે રહિત હો ચુકા હૈ, ચ્યુત--દશ પ્રકાર
કે પ્રાણો સે પરિવર્જિત હા ગયા હૈ, ચ્યાવિત--બલિષ્ઠ આયુક્ષય કે કારણો સે
પ્રાણ રહિત હો ગયા હ । ત્યક્તદેહ આહાર પરિણત જનિત વૃદ્ધિ જિસસે
સર્વથા નિકલ ચુકી હૈ (જાણયસરીરદ્રવ્યસુયં) જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યશ્રુત હૈ । (તં
ચેવ પુવ્વભણિયં) યહાં પર ૧૭ વેં સૂત્ર કથિત ઇસ વિષય સંબંધી ઇસ વ્યપગત
આદિ પાઠ સે આગે (જાવ સે તં જાણયસરીરદ્રવ્યસુયં) જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યશ્રુત
કા પાઠ (માણિયવં) ગ્રહણ કરલેના ચાહિયે । ઇસકી (વ્યાખ્યા ૧૭ વેં સૂત્ર
મેં કહી ગઈ હૈ । ॥ સૂત્ર ૩૬ ॥

હવે સૂત્રકાર જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યશ્રુતના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે--

"સે કિં તં જાણયસરીરદ્રવ્યસુયં" इत्यादि--

શબ્દાર્થ--(સે કિં તં જાણયસરીરદ્રવ્યસુયં?) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન
પૂછે છે કે હે ભગવન્! જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યશ્રુતનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર--(સુચત્તિ પયત્યાહિગારજાણયસ્સ) શ્રુત શબ્દના વાચક એવા આગ-
મના અર્થરૂપ અધિકારના જ્ઞાતાનું (સરીરય) શરીર (જં) કે જે (વગમચુય
ચાવિયચત્તદેહં) વ્યપગત થઇ ચુક્યું છે ચૈતન્ય પર્યાયથી રહિત થઇ ચુક્યું છે,
ચ્યુત થઇ ચુક્યું છે દસ પ્રકારના પ્રાણોથી રહિત થઇ ચુક્યું છે, ચ્યાવિત થઇ
ચુક્યું છે, બલિષ્ઠ આયુક્ષયના કારણોથી પ્રાણરહિત થઇ ચુક્યું છે, ત્યક્તદેહ થઇ
ચુક્યું છે આહાર પરિણતિ જનિત વૃદ્ધિ જેમાંથી સર્વથા નીકળી ચુકી છે
(જાણયસરીરદ્રવ્યસુયં) એવાં શરીરને 'જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યશ્રુત' રૂપ કહેવામાં આવે
છે. (તં ચેવ પુવ્વં મણિયં) અહીં ૧૭માં સૂત્રમાં કથિત આ વિષય સંબંધી આ
વ્યપગત આદિ પદ્ધતી શરૂ કરીને (જાવ સે તં જાણયસરીરદ્રવ્યસુયં) જ્ઞાયક-
શરીર દ્રવ્યશ્રુત પર્યાન્તનો પાઠ (માણિયવં) અહીં કરવો જોઈએ. તેની વ્યાખ્યા
૧૭માં સૂત્રની વ્યાખ્યા પ્રમાણે સમજવી જોઈએ. ॥ સૂ૦ ૩૬ ॥

अथ भव्यश्रुतं निरूपयितुमाह—

मूलम्—से किं तं भवियसरीरद्वयसुयं ? भवियसरीरद्वय-
सुयं जे जीवे जोणी जम्मण निक्खंते जहा दव्वावस्सए तहा भाणि-
यव्वं जाव, से तं भवियसरीरद्वयसुयं ॥ सू० ३७ ॥

छाया—अथ किं तद् भव्यशरीरद्रव्यश्रुतम् ? भव्यसरीरद्रव्यश्रुतं यो
जीवो योनिजन्मनिष्क्रान्तो यथा द्रव्यावश्यकं तथा भणितव्यं यावत् तदेतद् भव्य-
शरीरद्रव्यश्रुतम् ॥ सू० ३७ ॥

अब सूत्रकार भव्यशरीर द्रव्यश्रुत का निरूपण करते हैं—

“से किं तं भवियसरीरद्वयसुयं” इत्यादि । ॥ सूत्र ३७ ॥

शब्दार्थः—(से) हे भदन्त ! (तं) पूर्वप्रक्रान्त (भवियसरीरद्वयसुयं) भव्य-
शरीरद्रव्यश्रुत का (किं) क्या स्वरूप है ?

उत्तरः—(जे जीवे जो णीजम्मणनिक्खंते) जो जीव उत्पत्तिस्थानरूप
योनि से अपना समय पूर्ण करके निकला है—गर्भपात्र से उत्पन्न नहीं हुआ है
किन्तु जन्मा है ऐसा वह जीव उस प्राप्त शरीर से जिनोपदिष्टभाव के अनु-
सार श्रुत शब्द वाच्य आगम के अर्थ को भविष्य में सीखेगा—वर्तमानकाल में
सीख नहीं रहा है ऐसा शरीर भव्यशरीर द्रव्यश्रुत है । (जहा दव्वावस्सए तहा
भाणियव्वं जाव से तं भवियसरीरद्वयसुयं) इस विषय से लगता हुआ वर्णन
जिस प्रकार से द्रव्यावश्यक के वर्णन में किया गया है उसी प्रकारका वर्णन
यहाँ भी समझना चाहिये । और यह वर्णन यह “भव्यशरीर द्रव्यश्रुत है”

इवे सूत्रकार लव्यशरीर द्रव्यश्रुतनुं निरूपणुं किरे छे—

“से किं तं भवियसरीरद्वयसुयं” इत्यादि

शब्दार्थः—(से) शिष्य गुरुने जेवा प्रश्न पूछे छे के (तं) पूर्वप्रस्तुत विषय-
इय (भवियसरीरद्वयसुयं) लव्यशरीरद्रव्यश्रुतनुं (किं) केवुं स्पष्ट छे ?

उत्तर (जे जीवे जोणीजम्मणनिक्खंते) जे एव उत्पत्ति स्थानइय योनि-
मांथी पोताने समय (गर्भां रूडेवाने समय) पूरे करीने नीकले छे गर्भा-
तथी उत्पन्न थया नथी जेवा ते एव ते प्राप्त शरीर वडे वर्तमानकाले श्रुत
शब्दवाच्य आगमना अर्थने सीखी रह्यो नथी पणु लविष्यमां आगमना अर्थने
सीखवाने छे जेवा ते एवना शरीरने लव्यशरीर द्रव्यश्रुत इय गणुवामां आवे
छे (जहा दव्वावस्सए तहा भाणियव्वं जाव से तं भवियसरीरद्वयसुयं) १८मां
सूत्रमां द्रव्यावश्यकता विषयने अनुलक्षीने जेवुं वर्णन करवामां आण्यु छे जेवुं
वर्णन अही पणु अहणु करवु जेछे जे “तेने लव्यशरीर द्रव्यश्रुत कहे छे” आ

टीका--‘से किं तं भवियसरीरद्वयसुयं’ इत्यादि । व्याख्या पूर्ववत् ॥ सू० ३७ ॥
अथ-ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तं द्रव्यश्रुतमाह--

मूलम्--से किं तं जाणयसरीरभवियसरीरवहरित्तं दव्वसुयं ?
जाणयसरीरभवियसरीरवहरित्तं दव्वसुयं पत्तयपोत्थयलिहियं ।

अहवा जाणयसरीरभवियसरीरवहरित्तं दव्वसुयं पंचविहं
पणत्तं, तं जहा-अंडयं १ वोंडयं २ कीडयं ३ वालव ४ वागयं ५ ।
(तत्थ) अंडयं हंसगव्भादि वोंडयं कप्पासमाइ । कीडयं पंचविहं
पणत्तं, तजहा-पट्टे मलए अंसुए चीणंसुए, किमिरागे । वालयं
पंचविहं पणत्तं, तं जहा-उण्णिणए, उट्टिए, मियलोमिए, कोतवे,
किटिसे । वागयं सणमाइ । से तं जाणयसरीरभवियसरीरवहरित्तं
दव्वसुयं । से तं नो आगमओ दव्वसुयं । से तं दव्वसुयं ॥ सू० ३८ ॥

छाया--अथ किं तद् ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तं द्रव्यश्रुतम् ? ज्ञायक-
शरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्त द्रव्यश्रुतं पत्रकपुस्तकलिखितम् ।

यहाँ तक जानना चाहिये । इसकी व्याख्या १४ वें सूत्र के अनुसार ही
जाननी चाहिये । ॥ सूत्र ३७ ॥

अब सूत्रकार ज्ञायकशरीरभव्यशरीर इन दोनों से भिन्न जो तद्व्यति-
रिक्त द्रव्यश्रुत हैं इसका स्वरूप कहते हैं--

“से किं तं जाणयसरीरभवियसरीरवहरित्तं दव्वसुयं” इत्यादि ॥ सूत्र ३८ ॥

शब्दार्थः--(से किं तं जाणयसरीरभवियसरीरवहरित्तं दव्वसुयं) शिष्य

सूत्रपाठ पर्यन्तं ‘लव्यशरीर द्रव्यावश्यक’ सूत्रानुं समस्त कथन अहो पणु अहणु
करुणु लेधये तेनी व्याख्या पणु १८ भां सूत्रनी व्याख्या प्रमाणे न समजवी ॥ सू० ३७ ॥

ज्ञायक शरीर अने लव्यशरीर आ गन्नेथी लिन्न येणुं ले ‘तद्व्यतिरिक्त
द्रव्यश्रुत’ छे तेना स्वइपणुं हवे सूत्रकार निइपणु करे छे

“से किं तं जाणयसरीरभवियसरीरवहरित्तं दव्वसुयं” इत्यादि--

शब्दार्थः--(से किं तं जाणयसरीरभवियसरीरवहरित्तं दव्वसुयं ?) शिष्य

अथवा-ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तं द्रव्यसूत्रं पञ्चविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-
अण्डजं, बोण्डजं, कीटजं, बालजं, बालफलम् । (तत्र) अण्डजं हंसगर्भादि. बोण्डजं
कर्पासादि, कीटजं पञ्चविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-पटुं, मलयम्, अंशुकं, चीनां-
शुकं, कृमिरागम्, बालजं पञ्चविधं प्रज्ञप्तम्-तद्यथा और्णिकम् औष्ट्रिकम्, मृगलौ-
मिकम्, कौतवम्, किट्टिसम् । बालकलं शणादि । तदेतद् ज्ञायकशरीरभव्यशरीर-
व्यतिरिक्तं द्रव्यश्रुतम् । तदेतद् नोआगमतो द्रव्यश्रुतम् । तदेतद् द्रव्यश्रुतम् ॥ सू० ३८ ॥

टीका—शिष्यः पृच्छति—‘से किं तं जाणयसरीरभवियसरीरवहरितं
द्रव्यसुयं’ इति । अथ किं तद् ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तं द्रव्यश्रुतम् ?
इति । उत्तरमाह—‘जाणयसरीरभवियसरीरवहरितं । द्रव्यसुयं’ इत्यादि । ज्ञायक-
शरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तं द्रव्यश्रुतम्, पत्रकपुस्तकलिखितम्-पत्रकाणि=तलि-
पत्रादीनिच पुस्तकानि=पत्रसङ्घानरूपाणि च तेषु लिखितम् । यद्वा-‘पत्तयपोतयलिहियं’
इतिपाठस्य ‘पत्रकपोतकलिखितम्’ इतिच्छाया । एतन्-पोतकानि=वस्त्राणि । पत्र-
केषु पुस्तकेषु वस्त्रकेषु च लिखितं ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तद्रव्यश्रुतम् ।

पूछता है कि हे भदन्त ! ज्ञायकशरीर और भव्यशरीर इन दोनों से भिन्न
जो द्रव्यश्रुत है उसका क्या स्वरूप है ?

उत्तरः—(पत्तयपोतयलिहियं जाणयसरीरभवियसरीरवहरितं द्रव्यसुयं)
ताडपत्रो और पत्रों के संघातरूप पुस्तकों में लिखा हुआ जो श्रुत हैं वह ज्ञायक
शरीर और भव्यशरीरव्यतिरिक्त द्रव्यश्रुत हैं ऐसा जानना चाहिये । सूत्रकार
(अहवा) अथवा—एतद् से कहते हैं “पत्तयपोतयलिहियं” इस पाठकी संस्कृत
छाया पत्रकपोतकलिखितं, ऐसी भी होती है इस पक्ष में पोतकशब्द का-
अर्थ वस्त्र है, और पत्रक शब्द का अर्थ पुस्तक । इस प्रकार वस्त्रों के ऊपर
और पुस्तकरूप कागजों के ऊपर लिखा गया श्रुत ज्ञायकशरीर और भव्यशरीर

श्रुतने એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભદ્રન્ત ! જ્ઞાયકશરીર અને ભવ્યશરીર, આ બન્નેથી
લિન્ન એવું જે દ્રવ્યશ્રુત છે તેનું કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—(પત્તયપોત્થયલિહિય જાણયસરીરભવિયસરીરવહરિતં દ્રવ્યસુયં)
તાડપત્રો અને પત્રોના સમૂહરૂપ પુસ્તકોમાં લખેલું જે શ્રુત છે તેને જ્ઞાયકશરીર અને
ભવ્યશરીર વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યશ્રુત કહે છે. (અહવા) અથવા “પત્તયપોત્થયલિહિય”
આ સૂત્રાંશની સંસ્કૃત છાયાની દૃષ્ટિએ વિચાર કરવામાં આવે તો આ સૂત્રપાઠને,
નીચે પ્રમાણે અર્થ થશે—

“પોતક” એટલે વસ્ત્ર, અને “પત્રક” એટલે પુસ્તક આ રીતે શબ્દનો અર્થ
કરતા દ્રવ્યશ્રુતનો નીચે પ્રમાણે અર્થ પણ થઈ શકે છે “વસ્ત્રો ઉપર અને પુસ્તક
રૂપ કાગળો પર લખેલા શ્રુતને જ્ઞાયકશરીર અને ભવ્યશરીરથી લિન્ન એવું દ્રવ્ય-

પત્રકાદિલિખિતં ચ શ્રુતસ્ય ઉપયોગરહિતત્વાત્ દ્રવ્યત્વં વોધ્યમ્ । આગમો हि ज्ञानं, तस्य कारणम्—आत्मा—देहः शब्दश्चैतत्प्रयं, तः भावात् तस्य नोआगमत्वं विज्ञेयम्, अपि च—पत्रकपुस्तकलिखितस्य अचेतनत्वाद् ज्ञानरूपत्वाभावाच्च नोआगमत्वम् । इह ‘सुय’ इत्यस्यार्पत्वात् सूत्रमिति छायापक्षे ग्राह—‘अहम्’ इत्यादि । अथवा ज्ञायकशरीरभविग्यशरीरव्यतिरिक्तं द्रव्यं सूत्रं पञ्चविधं प्रज्ञप्तम् । तद्यथा—अण्डजम्^१, वोण्डजम्^२, कीटजम्^३, बालजम्^४, बालकल^५,

तत्र પંચવિધદ્રવ્યસૂત્રમધ્યે પ્રથમં ભેદં પ્રરૂપયતિ—‘અંડયં હંસગંભાદિ’ इति । अण्डजं हंसगर्भादि, इह हंसशब्देन चतुरिन्द्रियो जीवविशेषो गृह्यते, तस्य

સે વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યશ્રુત છે । પત્રક આદિ પર લિખે હુએ શ્રુત મેં ઉપયોગ સે રહિત હોને કે કારણ દ્રવ્યત્વ છે । આગમ નામ જ્ઞાન કા છે । ઇસ કે કારણ આત્મા, દેહ ઓર શબ્દ કારણભૂત હંતે છે । ઇનકા અભાવ હોને પર ઉસમે નોઆગમતા છે । અપિ ચ—પત્રક પુસ્તક આદિ મેં લિખિત શ્રુત મેં અચેતનતા હોને કે કારણ જ્ઞાનરૂપતા કા અભાવ છે ઇસલિયે મી ઉસમેં નોઆગમતા છે । તથા જબ “સુય” પદ કી છાયા ‘સૂત્ર’ એસી હોતી છે તવ ઉસ પક્ષ મેં કયા ઇસ કા અર્થ હોતા છે ઇસે (જાણકશરીરભવિગ્યશરીરવ્યતિરિક્ત દ્રવ્યસુયં પંચવિધં પ્રજ્ઞાત્) વે કહતે છે કિ જ્ઞાયક શરીર ઓર ભગ્યશરીર ઇન સે ભિન્ન જો દ્રવ્યસૂત્ર છે વહ પાંચ પ્રકાર કા છે—(ત જહા) વે પ્રકાર વે છે (અંડયં, ૧ વોંડયં^૨, કીડયં^૩, બાલયં^૪, વાગયં^૫), અણ્ડજ વોણ્ડજ, કીટજ, બાલજ ઓર બાલકલ । (તથા) ઇન મેં (અંડયં) અંડજ કા તાપય ઇસ પ્રકાર સે છે (હંસ

શ્રુત કહે છે.” આગળ આદિ પર લખાયેલા શ્રુતમાં ઉપયોગથી રહિતતા હોવાને કારણે દ્રવ્યત્વ છે. જ્ઞાનને આગમ કહે છે તે આગમરૂપ જ્ઞાનમાં આત્મા; દેહ અને શબ્દ કારણભૂત અને છે. તેમનો જ્યાં અભાવ હોય ત્યાં આગમતાનો સદ્ભાવ હોતો નથી પણ નોઆગમતાનો સદ્ભાવ રહે છે. તાડપત્ર પુસ્તક આદિમાં લખેલા શ્રુતમાં અચેતનતા હોવાથી જ્ઞાનરૂપતાનો અભાવ હોય છે, તે કારણે તે શ્રુતમાં નોઆગમતા રહેલી છે.

જ્યારે “સુય” આ પદની સંસ્કૃત છાયા “સૂત્ર” ‘સૂત્ર’ થાય છે, ત્યારે તેનો શો અર્થ થાય છે તે હવે સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે—(જાણકશરીરભવિગ્યશરીર-વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યસુયં પંચવિધં પ્રજ્ઞાત્) તેઓ કહે છે કે જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યશ્રુત અને ભવિગ્ય-શરીર દ્રવ્યશ્રુતથી ભિન્ન એવું જે દ્રવ્યસૂત્ર (‘દ્રવ્યસુય’)ની સંસ્કૃત છાયા “દ્રવ્ય-સૂત્ર”ને આધારે આ પદ બન્યું છે) છે તે પાંચ પ્રકારનું કહ્યું છે— (તંજહા) જે પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે—(અંડયં વાંડયં કીડયં વાગયં) (૧) અંડજ, (૨) વોંડજ, (૩) કીટજ, (૪) બાલજ અને (૫) વાલકલ (તથા અણ્ડયં હંસગંભાદિ)

ગર્ભઃ=તન્નિર્મિતા કોશિકા 'કોથલી' इति પ્રસિદ્ધા તદુત્પન્નં સૂત્રમણ્ડજમુચ્યતે, 'રેશમી' इति ભાષાપ્રસિદ્ધમ્ । આદિશબ્દચતુરિન્દ્રિયમેદં પ્રદર્શયતિ । નહુ ચદિ હંસગર્ભોત્પન્નં સૂત્રમણ્ડજમુચ્યતે તર્હિ 'અંડયં હંસગર્ભાદિ' इति સામાનાધિકરણ્ય નોપપદ્યતે इति ચે દુચ્યતે, કારણે કાર્યોપચારાત્ હંસગર્ભોત્પન્નં સૂત્રમપિ—હંસગર્ભં હન્યુચ્યતે इति નાસ્તિ કોઽપિ દોષઃ ॥૧॥

અથ દ્વિતીયમેદં પ્રરૂપયતિ—'બોંડયં કપ્પાસમાહ' इति । બોંડજં કાર્પાસાદિ' કાર્પાસનિષ્પન્નં સૂત્રં બોંડજં-બોંડં=કાર્પાસકોશઃ ફલવિશેષરૂપસ્તજ્ઞાતં ગર્ભાદિ) 'હંસ' એક ચતુરિન્દ્રિય જીવ વિશેષ હોતા હૈ । વહ એક કોથલી બનાતા હૈ । હસસે ઉત્પન્ન જો સૂત્ર હોતા હૈ ઉસકા નામ અંડજ હૈ । હસે ભાષા મેં રેશમી વસ્ત્ર કહતે હૈ । હંસગર્ભ મેં જો આદિ શબ્દ હૈ વહ ચૌદ્રિયોં કે મેદં કા પ્રદર્શક હૈ ।

શંકાઃ— યદિ હંસગર્ભ સે ઉત્પન્ન સૂત્ર અંડજ કહલાતા હૈ તો "અંડયં હંસ ગર્ભાદિ" મેં સમાનાધિકરણતા નહીં બન સકતી હૈ, સો ઉસકા ઉત્તર હસ પ્રકાર સે હૈ કિં યહાં પર કારણ મેં કાર્યકા ઉપચાર કિયા ગયા હૈ । હસલિયે હંસ કે ગર્ભ કોથલી સે ઉત્પન્ન હુએ સૂત્રકોં મીં હંસગર્ભ કે નામ સે કહ દિયા હૈ । હસતરહ કે કથન મેં કોઈ દોષ નહીં હૈ । (બોંડયં કપ્પાસમાહ) કપાસ સે બને હુએ સૂત્રકા નામ બોંડજ હૈ । બોંડ નામ કપાસ કે કોશકા હૈ । કપાસ કા કોશ એક પ્રકારકા ફલ હોતા હૈ । જિસમેં સે કપાસ નિકલતા

પહેલાં તો અંડજનો ભાવાર્થ બતાવવામાં આવે છે. "હંસ" એક ચતુરિન્દ્રિય જીવ-વિશેષનું નામ છે. (અહીં હંસ નામનું પક્ષી ગૃહીત થયું નથી પણ પતંગીયા જેવું કોઈ ચતુરિન્દ્રિય જંતુ ગૃહીત થયું છે.) તે એક કોથળી (કોશ) બનાવે છે તેમાંથી જે સૂત્ર ઉત્પન્ન થાય છે તેને 'અંડજ' કહે છે. તેને ગુજરાતી ભાષામાં રેશમી વસ્ત્ર કહે છે. 'હંસગર્ભ' આ પહેલી પાછળ જે 'આદિ' પદ મૂકવામાં આવ્યું છે તે ચૌદ્રિયોના ભેદનું પ્રદર્શક છે.

શંકા—જો હંસગર્ભમાંથી ઉત્પન્ન થયેલા સૂત્રને અંડજ સૂત્ર કહેવામાં આવે તો "અંડયં હંસગર્ભાદિ"માં સમાનાધિકરણતા ઘટિત થતી નથી.

ઉત્તર—અહીં કારણમાં કાર્યનો ઉપચાર કરવામાં આવ્યો છે. તે કારણે હંસના ગર્ભમાંથી (કોશમાંથી) ઉત્પન્ન થયેલા સૂત્રને પણ અહીં હંસગર્ભના નામે પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે. આ કારણે આ પ્રકારના કથનમાં કોઈ દોષ નથી.

(બોંડયં કપ્પાસમાહ) કપાસ અથવા રૂમાંથી બનેલા બોંડજ છે. "બોંડ" આ પદ કપાસના કોશરૂપ કાલાને માટે વપરાય છે. આ કપાસમાંથી જે સૂત્ર બને છે તેને બોંડજ કહે છે. (હિન્દીમાં કાલાને 'બોંડિયા' કહે છે) અહીં આદિ પદ

બોળજમિતિ । હાપ્યાદિ શબ્દઃ પ્રકારવાચી । ફલસ્ય પ્રકારો ભેદઃ કર્પાસિ
હતિ બોધયિતુમાદિ શબ્દઃ પ્રયુક્ત હતિ । અગ્રાપિ કાર્પો કાર્યોન્વારાત કર્પાસિ
બોળજમિતિ સામાનાધિકરણ્યમ ।

અથ તૃતીયભેદમાહ-‘કીટયં પંચવિહં પળ્લત્ત’ હતિ । કીટજં પઠ્ઠવિહં
પ્રજ્ઞસમ્-કીટજં=કીટાત્ ચતુરિન્દ્રિયજીવવિશેષાજ્ઞાતં સૂત્રં પચ્ચપ્રકારકં પ્રજ્ઞસં=પ્રક-
પિતમ્ । પઠ્ઠવિહંપ્રકારત્વમેવ સ્પષ્ટયતિ-‘તં જહા’ હત્યાદિ । તથા-પટ્ટં=પટ્ટસૂત્રમ્,
પટ્ટસૂત્રોત્તિવિષયે, એવં વૃદ્ધસમ્પ્રદાયઃ-અરણ્યે નિકુન્જમધ્યે માંસચીડાદિરૂપામિપ-
પુજાઃ સ્થાપ્યન્તે । તેષાં પુજાનાં પાર્શ્વતો નિમ્ના ઉન્નતાથ સાન્તરાં વહવઃ

હૈ । ઇસ કપાસ કે વને હુએ સૂત્ર કો બોળજ કહા જાના હૈ । યહાં આદિ
શબ્દ પ્રકારવાચી હૈ । કપાસ સે ફલકા ભેદ હૈ । યહ ભેદ કપાસ હૈ । ઇસ
વાતકો સમજાને કે લિયે યહાં આદિ શબ્દ પ્રયુક્ત હુઆ હૈ । યહાં મી કારણ
મેં કાર્ય કે ઉપચાર સે બોળજ સૂત્ર કો કપાસ વહ દિયા હૈ । ઇસલિયે સમા-
નાધિકરણતા વનને મેં કોઈ દોષ નહીં હૈ । (કીટયં પંચવિહં પળ્લત્ત) કીટજ
સૂત્ર પાંચ પ્રકારકા કહા ગયા હૈ । ચૌદ્રિય જીવ વિશેષ
કા નામ કીટ હૈ । ઁસ સે ઉત્પન્ન જો સૂત્ર હોતા હૈ વહ પાંચ પ્રકાર
કા હોતા હૈ । (તજહા) જૈસે-“પટ્ટે મલય અંસુણ ચીળંસુણ
કિમિરાગે” પટ્ટ, મલય, અંશુક ચીનાંશુક ઔર કિમિરાગ । પટ્ટ સે યહાં પટ્ટ-
સૂત્ર લિયા ગયા હૈ । ઇસ પટ્ટસૂત્ર કી ઉત્પત્તિ કે વિષય મેં વૃદ્ધ પરમ્પરા સે
એસી વાત સુનને મેં આતી હૈ-જંગલ મેં એક નિકુન્જ લતાપિહિત પ્રદેશ હોતા
હૈ । ઇસ મેં માંસચીડાદિ રૂપ અમિપુજ રાખ દિયે જાતે હૈ- ।

પ્રકારવાચક છે. કપાસ અને કાલા વચ્ચે ભેદ છે. કાલું એક પ્રકારના ફલ રૂપ છે
જ્યારે કપાસ તેમાંથી નીકળતી વસ્તુરૂપ છે. આ વાતને સમજાવવાને માટે અહીં
આદિ શબ્દ વપરાયો છે. અહીં પણ કહેવામાં આવેલ છે. તેથી સમાનાધિકરણતા ઘટિત
થવામાં કોઈ દોષ રહેતો નથી.

(કીટયં પંચવિહં પળ્લત્ત) કીટજ સૂત્ર પાંચ પ્રકારના હતાં છે. ચતુરિન્દ્રિય
જીવવિશેષ (રેશમના કીડા આદિ જીવો)ને કીટ (કીડા કહે છે. તેની લાળ આદિ-
માંથી બનેલું જે સૂત્ર હોય છે તેને કીટજ સૂત્ર કહે છે (તંજહા) કીટજ સૂત્રના
પાંચ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે-(પટ્ટે, મલય, અંસુણ, ચીળંસુણ, કિમિરાગે) (૧) પટ્ટ,
(૨) મલય, (૩) અંશુક, (૪) ચીનાંશુક અને (૫) કિમિરાગ.

‘પટ્ટ’ આ પદથી અહીં પટ્ટસૂત્ર ગ્રહણ થયું છે. આ પટ્ટ સૂત્રની ઉત્પત્તિના
વિષયમાં વૃદ્ધ પરમ્પરાની અપેક્ષાએ આ પ્રકારની વાત પ્રચલિત છે-જંગલમાં કોઈ
એક નિકુન્જમાં (વૃક્ષ અને લતાઓના સમૂહથી યુક્ત સ્થાનને નિકુન્જ કહે છે)

कीलका निखन्यन्ते । मांसलोलुपाः पतङ्गकीटाः मांसचीडादिकमभितः समायान्ति । ते हि कीलकान्तरेषु इतस्ततः परिभ्रमन्तो लालाः प्रमुञ्चन्ति । ताश्च कीलकेषु लग्नाः परिगृह्यन्ते । ततस्ताभिः पट्टसूत्रं निर्मीयते ॥१॥ मलयं=मलयदेशोत्पन्नं सूत्रम् ॥२॥ अंशुकम्=चीनदेशबहिर्भागे समुत्पन्नं सूत्रम् ॥३॥ चीनांशुकम्=चीनदेशाभ्यन्तरभागे समुत्पन्नं सूत्रम् ॥४॥ कृमिरागं=कृमिरागं=कृमिरागसूत्रम् । अत्र विषये एवं श्रूयते-कस्मिंश्चिद्देशे मनुष्यादिशोणितं गृहीत्वा केनापि योगेन योजयित्वा पात्रे स्थाप्यते । तच्च सच्छिद्रपात्रेणाच्छाद्यते । तत्र-पुनः प्रभूताः कृमयः समुत्पद्यन्ते । ते पवनसेवनाभिलाषिणः पात्रच्छिद्रान्निर्गच्छन्ति आसन्नप्रदेशे पर्यट-

उन आमिष पुंजों को आजूबाजू में नीचीऊंची कुछ अन्तर से अनेक कीलें गाढ़ दी जाती हैं । वहां मांस के लोभी अनेक पतंग कीड़े उस मांस चीडादिक की चारों ओर आते हैं ।-और उन कीलों के आसपास घूम कर अपनी लारको छोड़ते हैं । उनकी लों पर लगी हुई उनकी लारोंको फिर लोग एकात्रत कर के उनसे पट्टसूत्र बनाते हैं । मलयदेश में उत्पन्न हुए सूत्रका नाम मलय है । चीनदेश के बाहर उत्पन्न हुए सूत्रका नाम अंशुक है । चीनदेश के भीतर बने हुए सूत्रका नाम चीनांशुक है । कृमिराग सूत्र के विषय में ऐसी बात सुनी जाती है कि किसी देश में मनुष्य आदिका रक्त ले कर लोग उसे पात्र में किसी भी तरह जमाते हैं । और फिर उस पात्र के मुँहको छिद्रोंवाले ढकने से ढक देते हैं । उसमें घीरे कीड़े उत्पन्न हो जाते हैं । वह जब वायुसेवन की इच्छा से सच्छिद्रढक्कन से होकर

मांस आदिद्रव्य आमिषपुंज पाथरी देवाभां आवे छे । त्यां ते मांसपुंजेनी आसपास थोडे थोडे अंतरे नीची ऊंची अनेक भीलीयो थोड़ी देवाभां आवे छे । अनेक पतंगीयाओ (कीडाओ) मांसथी आकर्षित थधने ते भावानी धृच्छाथी ते मांसपुंजेनी आरे तरफ आवे छे । अने मांसपुंज लक्षण करीने ते भीलाओनी आसपास लमीलमीने पोतानी लाग ते भीलाओ पर छोडे छे । ते भीलाओ पर ओकत्र थयेली लागने ओकत्र करी लधने बोडो । तेमांथी पट्टसूत्र बनावे छे ।

मलयदेशमां उत्पन्न थयेला सूत्रने मलयसूत्र कडे छे । चीन देशनी पहारना प्रदेशोमां जनेला सूत्रने अंशुक कडे छे । चीन देशनी अंदरना भागोमां जनेला सूत्रने चीनांशुक कडे छे । कृमिरागसूत्र विषे आ प्रकारनी मान्यता प्रचलित छे । कोध मनुष्य आदिना रक्तने ओकत्र करीने कोध ओक पात्रमां जभावी दे छे । त्यांर पाद ते पात्र पर छिद्राणु आच्छादन ढांडी दे छे । तेमां धीरे धीरे कीटराशि उत्पन्न थध जय छे । ते हुवा भावानी धृच्छाथी ते सच्छिद्र आच्छानमांथी पहार नीकणीने

ન્તસ્તે લાલજાલં મુચ્ચન્તિ । તેન નિષ્પન્નં સૂત્રં કૃમિરાગમુચ્ચતે । તચ્ચ રક્તવર્ણ-
કૃમિસમુત્પન્નત્વાત્ સ્વાભાવિકરક્તવર્ણં ભવતિ ।

અથ વાલજસૂત્રરૂપં ચતુર્થમેદં પ્રહૃપ્યતિ—‘વાલયં’ इत्यादि । वाटजं-वालाः
=रोमाणि बालेभ्यः=ऊरुणिकादि लोमभ्यो जातम् तत् पञ्चविधं प्रज्ञप्तम्=प्ररूपितम्;
तद्यथा—और्णिकम्—ऊर्णाया इदमौर्णिकम् मेघ रोमनिष्पन्नम् ॥१॥ ओष्ट्रिकम्—उष्ट्रा-
णामिदम्, औष्ट्रिकम्—उष्ट्रोमनिष्पन्नं सूत्रम् ॥२॥ मृगलौमिकम्—मृगरोमभिर्निष्पन्नं,
मृगलौमिकम् । मृगसदृशा मृगेभ्यो ह्रस्वाकारा आरण्यजीवविशेषा इह मृग
शब्देन विवक्षिताः, तेषां रोमभिर्निष्पन्नं सूत्रं मृगलौमिकम् ॥३॥ कौतवम्—उन्दु
रोमनिष्पन्नं सूत्रम् । ४॥ किट्टिसम्—औरुणिकादिसूत्रनिर्माणानन्तरं यदवशिष्टं

વાહર નિકલતે હૈં તો વહ આસપાસ કે પ્રદેશ મેં ઘૂમતે હુએ વહાં અપની લાર
છોડતે હૈં । इस लार से जो सूत्र बनता है वह कृमिराग सूत्र कहलाता
है । इसकी रक्तवर्णवाले कृमियों से उत्पन्न होने के कारण वर्ण स्वभावतः
लाल रहता है । (वालयं पंचविहं पण्णत्तं) भेड आदि के बालों से उत्पन्न
हुवा सूत्रका नाम वालज सूत्र है । यह भी पांच प्रकारका है— (तंजहा)
जैसे—(उण्णिण) मेघ आदि के रोम से उत्पन्न हुआ सूत्र और्णिक (उट्टिए)
उष्ट्र के रोम से उत्पन्न हुआ सूत्र औष्ट्रिक (मियलोमिए) मृग के रोम से उत्पन्न
हुआ सूत्र मृगलोमिक (कोतवे) चूहे के रोम से उत्पन्न हुआ सूत्र कौतव,
(किट्टि से) और्णिक आदि सूत्रों के निर्माण करते समय जो बाल इधरउधर
गिर जाते हैं उसका नाम किट्टिस है । इस किट्टिस से जो सूत्र बनाया

તે પાત્રની આસપાસ ભમવા માંડે છે અને તે પાત્ર પર પોતાની લાળ છોડ્યા કરે
છે. તે લાળને લોકો એકત્ર કરી લે છે, અને તેમાંથી જે સૂત્ર બનાવવામાં આવે છે
તેને કૃમિરાગસૂત્ર કહે છે. લાલવર્ણવાળા કૃમીઓમાંથી ઉત્પન્ન થવાને કારણે તેના
રંગમાં સ્વાભાવિક રતાશનો સદ્ભાવ હોય છે.

(वालयं पंचविहं पण्णत्तं) घेटां आदिना वाणमांथी उत्पन्नं थयेला सूत्रमु
नाम ‘वालजसूत्र’ છે. તેના પછી પાંચ પ્રકાર છે (તંજહા) જેમ કે ઉણિણ (૧)
ઔષ્ણિક—ઘેટાં આદિના વાળમાંથી બનેલા સૂત્રને ઔષ્ણિક (ઉત્તુ બનેલુ) સૂત્ર કહે
છે. (ઉટ્ટિય) (૨) ઔષ્ટ્રિક ઊંટના વાળમાંથી ઉત્પન્ન થયેલા સૂત્રને ‘ઔષ્ટ્રિકસૂત્ર’
કહે છે (મિયલોમિય) મૃગના વાળમાંથી બનાવેલા સૂત્રને ‘મૃગલોમિકસૂત્ર’ કહે છે.
(કોતવે) (૪) ઉંદરની રંવાટીમાંથી બનાવેલા સૂત્રને કૌતવ સૂત્ર કહે છે. (કિટ્ટિય)
(૫) આરણિક આદિ સૂત્રોનું નિર્માણ કરતી વખતે જે વાળ ઉડીને આમતેમ જઈ
પડ્યાં હોય છે તે વાળને ‘કિટ્ટિસ’ કહે છે. કિટ્ટિસમાંથી (વસ્ત્રમાંથી જે સૂત્ર બના-

તત્ કિદ્દિસં તન્નિષ્પન્નં સૂત્રમપિ કિદ્દિસમુચ્યતે : યદ્વા-ઔર્ણિકાદીનાં સૂત્રાણાં દ્વયાદિસંયોગેન નિષ્પન્નં સૂત્રં કિદ્દિસમ્ । અથવા-પૂર્વોક્તાતિરિક્તા યેઽશ્વાદયો જીવાસ્તલ્લોમનિષ્પન્નં સૂત્રં કિદ્દિસમ્ । ૫૥॥

અર્થ પઞ્ચમં ભેદમાહ=‘વાગયં સળમાહ’ इति । ચાલ : લં શળાદિ-શળાદિ નિષ્પન્નં સૂત્રં ચાલકલમ્ ।

નનુ શ્રુતપ્રકરણે પ્રસ્તુતે કિમર્થં સૂત્રપ્રરૂપણમ્ इति चेदुચ્યતે, પ્રાકૃતે-‘સુય’ શબ્દેન શ્રુતસ્ય, આર્ષત્વાત્સૂત્રસ્ય ચ ગ્રહણાત્ સમાનશબ્દપ્રતિપાદ્યત્વરૂપસામ્યાદિ-દમપિ પ્રરૂપયતીતિ નાસ્તિ કશ્ચિદ્દોષઃ, પ્રસંગતઃ શિષ્યવુદ્ધિવૈશદ્યર્થં સૂત્રસ્વરૂપં

જાતા સે વહ કિદ્દિસ સૂત્રે સે । અથવા ઔર્ણિક આદિ સૂત્રો કેા અવ દુહરા તિહરા- દો તારવાલા તી તારવાલા આદિ રૂપમેં કરકે જો સૂત્ર બનાયા જાતા હૈં ઉસમા નામ કિદ્દિસ હૈં । અપના इन मेष आदि जीवों से अतिरिक्त जो अश्व आदि जीव हैं, उनके रोमों से निष्पन्न हुआ सूत्र किद्विस है । (वागयं सળमाह) सन आदि है जो सूत्र बनता है उसका नाम चालकल चलचन सूत्रे हैं ।

શંકા-યહાં તો શ્રુત કો પ્રકરણ પ્રસ્તુત હૈ ફિર કિં કારણ યહાં સૂત્રે કી પ્રરૂપણા સૂત્રેકાર ને કી ?

ઉત્તર-આર્ષ હોને કે કારણ પ્રાકૃત મેં “સુય” શબ્દ સે શ્રુત ઔર સૂત્ર इन दोनों वा बोध होता है-क्योंकि इन दोनों अर्थों का प्रतिपादक यह “सूत्र” शब्द है । अ : इन दोनों में समान शब्दद्वारा प्रतिपाद्यत्वरूप

વવામાં આવે છે તેને ‘કિદ્દિસસૂત્ર’ કહે છે. અથવા ઔર્ણિક આદિ સૂત્રોને જ્યાં રૂપટ, ત્રિપટ, ચોપટ, આદિ રૂપે વણીને તેમાંથી જે સૂત્ર બનાવવામાં આવે છે તેને કિદ્દિસ કહે છે. અથવા ઉપયુક્ત ઘેટાં, ભાંટ આદિ જીવો સિવાયના અશ્વાદિ જીવોના વાળમાંથી બનાવેલ સૂત્રને કિદ્દિસસૂત્ર કહે છે. (વાગયં સળમાહ) ૫) શણ આદિની છાલમાંથી જે સૂત્ર બને છે તેને વલ્કલ સૂત્ર કહે છે.

શંકા-અહીં શ્રુતનો અધિકાર આટલી રહ્યો છે. છતાં અહીં સૂત્રકારે સૂત્રની પ્રરૂપણા શા માટે કરી છે ?

ઉત્તર-“સુય” આ પ્રાકૃત પદનો અર્થ શ્રુત થાય છે, અને ‘સુય’ની સંસ્કૃત છાયા ‘સૂત્ર’ થાય છે આ વાત તો આગળ પ્રકટ થઇ ચુકી છે. આ રીતે ‘સુય’ પદ શ્રુત અને સૂત્ર, આ બંનેના અર્થનું બોધક છે, કારણ કે “સુય” શબ્દ આ બંને અર્થોનું પ્રતિપાદન કરે છે તેથી તે બંનેમા સમાન શબ્દ દ્વારા પ્રતિપાદ્યત્વ સમાનતા હોવાને કારણે સૂત્રકારે અહીં સૂત્રની પણ પ્રરૂપણા કરી

પ્રરૂપિતમ્ અનેન—‘ભાવશ્રુતે પ્રક્રાન્તે, કથં નામશ્રુતાદિ પ્રરૂપણ ?’ મિતિસન્દેહા-
વસરોઽપિ નિસ્તઃ, તસ્યાપિ શિષ્યબુદ્ધિવૈશદ્યફલત્વાત્ । કિંચ નામસ્થાપનદ્રવ્ય-
શ્રુતાનાં પ્રરૂપણમન્તરેણ ભાવશ્રુતસ્ય વિશિષ્ટજ્ઞાનં ન ભવતીત્યપિ બોધ્યમ્ ।

ઉક્તમર્થં નિગમન્નાહ—‘સે ત જાણયસરીરભવિયસરીરવદરિતં દ્વવસુય’
इति । तदेतद् ज्ञायकशरीरभव्यशरीरवदतिरिक्तं द्रव्यश्रुतम् । नो आगमतो द्रव्य-
श्रुतमपि सर्व निरूपितमिति प्रकटितुमाह—‘से तं नोआगमओ दव्वसुयं’ इति । तदे-

સમાનના હોને કે કારણ મુત્રકારને ફરકની મી પ્રરૂપણા કર દી છે ।
અથવા પ્રસંગ લેકર શિષ્યબુદ્ધિ કી વિશદતા કે નિમિત્ત મુત્રકારને
મુત્રે કા સ્વરૂપ યહાં પ્રકટ કિયા છે । ઇમ વર્ણન
સે ઇસ સંદેહ કો મી કિં “યહાં પર તો ભાવશ્રુત કા પ્રકરણ ચલ રહા છે—
ફિર ઇસ પ્રકરણ મેં નામશ્રુત નામ આદિ કા પ્રરૂપણ વયોં કિયા” અવસર
નહીં મિલતા છે । ક્યોંકિ યહ વર્ણન મી શિષ્યજ્ઞેનાં કી બુદ્ધિ કી વિશદતા
કરને રૂપ ફલ સે સફલ છે । કિંચ-નામ સ્થાપના ઓર દ્રવ્યશ્રુત કી પ્રરૂ-
પણા કે વિના ભાવશ્રુત કા વિશિષ્ટજ્ઞાન નહીં હોના છે ફરલિયે યહ નામ
શ્રુત આદિ કી પ્રરૂપણા કી ગઈ છે એસા મી જાનના ચાહિયે । અવ મુત્રકાર
ફરસ અર્થ કા ઉપસંહાર કરતે હુએ કહતે છે કિં (સે તં જાણયસરીરભવિય-
સરીરવદરિતં દ્વવસુયં) ઇસ પ્રકાર યહ પૂર્વ પ્રક્રાન્ત જ્ઞાયકશરીર ઓર ભવ્ય-

તે કારણે આ પ્રકારની પ્રરૂપણા નિર્દોષ સમજવી જોઈએ. અથવા પ્રસંગ પ્રાપ્ત
આ સૂત્ર પદની પ્રરૂપણા કરવા પાછળ સૂત્રકારનો આ પ્રકારનો હેતુ પણ સંભવી
જાય છે—“સુય” પદની સંસ્કૃત છાયા “સૂત્ર” થાય છે. આ સંબંધને અનુલક્ષીને
શિષ્યબુદ્ધિની વિશદતાને નિમિત્તે પણ સૂત્રકારે અહીં સૂત્રના સ્વરૂપની પ્રરૂપણા
કરી છે. વળી અહીં એવી શંકા પણ અસ્થાને છે કે “અહીં તો દ્રવ્યશ્રુતની પ્રરૂપણા
આવી રહી છે, છતાં આ પ્રકરણમાં નામશ્રુત આદિની પ્રરૂપણા શા માટે કરવામાં
આવી છે?” આ શંકા ઉચિત ન ગણી શકાય, કારણ કે આ વર્ણન પણ શિષ્ય-
જ્ઞેનાની બુદ્ધિની વિશદતાને નિમિત્તે જ કરવામાં આવ્યું છે અને તે પ્રકારની વિશ-
દતા કરવા રૂપ ફલથી સંપન્ન છે. વળી નામશ્રુત, સ્થાપનાશ્રુત આદિની પ્રરૂપણા
કર્યા વિના દ્રવ્યશ્રુતનું વિશિષ્ટજ્ઞાન પ્રાપ્ત થઈ શકતું નથી. તે કારણે આ નામશ્રુત
આદિની પ્રરૂપણા અહીં કરવામાં આવી છે, એમ સમજવું જોઈએ.

હવે સૂત્રકાર આ વિષયનો ઉપસંહાર કરતાં કહે છે કે—

(સે તં જાણયસરીરભવિયસરીરવદરિતં દ્વવસુયં) જ્ઞાયકશરીર અને ભવ્ય-
શરીરથી ભિન્ન એવા દ્રવ્યશ્રુતનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે. (સે તં નોઆગમઓ

તદ્ નો આગમતો દ્રવ્યશ્રુતમ્ । દ્રવ્યશ્રુતમપિ સર્વં નિરૂપિતમિતિ મુચયિતુમાહ—
‘સે તં દ્રવ્યસુયં’ इति । तदेतद् द्रव्यश्रुतं वर्णितम् ॥ सू० ३८॥

अथ भावश्रुतं निरूपयति—

મૂલમ્--સે કિં તં ભાવસુયં ? ભાવસુયં દુવિહં પળ્લત્તં, તં જહં
આગમઓ ય, નોઆગમઓ ય ॥સૂ૦ ૩૯॥

છાયા-અથ કિં તદ્ ભાવશ્રુતમ્ ? ભાવશ્રુતં ઢિવિધં પ્રજ્ઞસં, તથથા-આગમ-
તથ નોઆગમતશ્ચ ॥સૂ૦ ૩૯॥

ટીકા--શિષ્ય:પૂછતિ-સે કિં તં ભાવસુયં’ इति । अथ कितद्
भावश्रुतम् ? इति, उत्तरमाह-‘भावसुयं’ इत्यादि । भावश्रुतम्-इह श्रुतपदाऽर्था-

શરીર સે વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યશ્રુત હૈ । (સે તં નોઆગમઓ દ્રવ્યસુયં) इस तरह
नोआगम को आश्रित करके समस्तद्रव्यश्रुत का निरूपण हो चुका । (से तं
द्रव्यसुयं) यही सब द्रव्यश्रुत का स्वरूप है । ॥सूत्र ३८॥

अब सूत्रकार-भावश्रुत का वर्णन करते हैं—

“से किं तं भावसुयं” इत्यादि । सूत्र ॥ ३९ ॥

शब्दार्थः—(से किं तं) शिष्य पूछता है कि हे भदन्त ! पूर्व प्रकान्त भाव-
श्रुत का क्या स्वरूप है ?

उत्तर—(भावसुयं) भावश्रुत (दुविहं पण्णत्तं) दो प्रकार का कहा गया
है । श्रुत रूप पदार्थ के अनुभूत से युक्त जो साधु आदि जीव हैं वह भाव
शब्द का वाच्यार्थ है । भाव और श्रुत इन दोनों में अभेद के उपचार से भाव-
श्रुत साध्वादि को कहा गया है । इसतरह भाव जो है वही श्रुत बन जाता है ।

દ્રવ્યસુયં)આ રીતે નોઆગમ દ્રવ્યશ્રુતના ત્રણે ભેદોનું નિરૂપણ અહીં સમાપ્ત થાય
છે. (સે તં દ્રવ્યસુયં) અને દ્રવ્યશ્રુતના બધાં ભેદોનું નિરૂપણ પણ અહીં પૂરું
થાય છે. ॥ સૂ૦ ૩૮ ॥

“સે કિં તં ભાવસુયં” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ભાવસુયં?) शिष्य गुरुने એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે
ભગવન્ ! પૂર્વપ્રસ્તુત ભાવશ્રુતનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ભાવસુયં દુવિહં પળ્લત્તં) ભાવશ્રુત બે પ્રકારનું કહ્યું છે. શ્રુતરૂપ પદાર્થના
અનુભવથી યુક્ત જે સાધુ આદિ જીવો હોય છે તેઓ ભાવ શબ્દના વાચ્યાર્થ
રૂપ છે ભાવ અને શ્રુત આ બંનેમાં અભેદના ઉપચારની અપેક્ષાએ સાધુ આદિને
ભાવશ્રુત કહેવામાં આવેલ છે. આ રીતે જે ભાવ છે એજ શ્રુત બની જાય છે.

નુભવયુક્તો યઃ સાધ્વાદિઃ સ મારઃ, શ્રુતં ચ ગૃહ્યતે । ભાવશ્રુતયોગતદ્રતો-
શ્ચ અભેદોપચારાદ્ ભાવશ્વાસૌ શ્રુતં ચ ભાવશ્રુતમ્ । યદ્વા-અર્થાનુભવરૂપં ભાવ-
માશ્રિત્ય શ્રુતં ભાવશ્રુતમ્ । યદ્વા-ભાવપ્રધાનં શ્રુત-ભાવશ્રુતમ્, તત્ દ્વિવિધ
પ્રજ્ઞસમ્, તં જહા' તદ્યથા-આગમઓ ય નોઆગમઓ ય આગમતથ નોઆગમતથેતિ ॥૩૯॥

તત્ પ્રથમં મેદં નિરૂપયિતુમાહ--

મૂલમ્--સે કિં તં આગમઓ ભાવસુયં ? આગમઓ ભાવસુયં
જાણણ ઉવવત્તે । મે તં આગમઓ ભાવસુયં સૂ૦ ૪૦ ॥

છાયા--અથ કિં તદ્ આગમતો ભાવશ્રુતમ્ ? આગમતો ભાવશ્રુતં જ્ઞાયત
ઉપયુક્તઃ । તદેતત્ આગમતો ભાવશ્રુતમ્ । સૂ૦ ૪૦ ।

ટીકા--શિષ્યઃ પૂછતિ--સે કિં ત આગમઓ ભાવસુયં' ?તિ । અથ
કિં તત્ આગમતો ભાવશ્રુતમ્ ? ઉત્તરમાહ--'આગમઓ ભાવસુયં' इत्यादि । आग-

અથવા ભાવરૂપ શ્રુત કો આશ્રિત કરકે જો શ્રુત હોતા હૈ વહ ભાવશ્રુત હૈ ।
અથવા ભાવ પ્રધાન જો શ્રુત હૈ ઉસકા નામ ભાવશ્રુત હૈ (તંજહા) ઉસ ભાવશ્રુત કે
બે દો પ્રકાર યે હૈ--(આગમઓ ય, નોઆગમઓ ય) ? એક આગમ ભાવશ્રુત
ઔર દૂસરા નોઆગમ ભાવશ્રુત । इनमें जो आगम को आश्रित करके भावश्रुत
होता है उसका नाम आगम भावश्रुत और जो नोआगम आश्रित करके भाव-
श्रुत होता है वह नोआगम भावश्रुत है । ॥ सूत्र ३९ ॥
अब सूत्रकार आगम भावश्रुत का स्वरूप बहते हैं--

“સે કિં તં આગમઓ ભાવસુયં” इत्यादि । ॥ सूत्र ४० ॥

શબ્દાર્થઃ-- (સે કિં તં આગમઓ ભાવસુયં) હે મદન્ત ! આગમ કો આશ્રિત
કરકે જો ભાવશ્રુત હોતા હૈ ઉસકા વ્યા સ્વરૂપ હૈ ?

અથવા ભાવરૂપ શ્રુતને આશ્રિત કરીને જે શ્રુત હોય છે તેને ભાવશ્રુત કહે છે.
અથવા ભાવપ્રધાન જે શ્રુત છે તેનું નામ ભાવશ્રુત છે. (તંજહા) તે ભાવશ્રુતના
નીચે પ્રમાણે બે પ્રકારે કહ્યા છે--(આગમઓ ય, નોઆગમઓ ય) (૧) આગમ
ભાવશ્રુત અને (૨) નોઆગમ ભાવશ્રુત આગમને આશ્રિત કરીને જે ભાવશ્રુત હોય
છે તેને આગમ ભાવશ્રુત કહે છે અને નોઆગમને આશ્રિત કરીને જે ભાવશ્રુત
હોય છે તેને નોઆગમ ભાવશ્રુત કહે છે. ॥ સૂ. ૩૯ ॥

હવે સૂત્રકાર આગમ ભાવશ્રુતના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે--

“સે કિં તં આગમઓ ભાવસુયં” इत्यादि--

શબ્દાર્થ--(સે) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન કરે છે કે હે ભગવન્ ! (કિં તં
આગમઓ ભાવસુયં?) આગમને આશ્રિત કરીને જે ભાવશ્રુત હોય છે તેનું
સ્વરૂપ કેવું છે ?

મતો ભાવશ્રુતં જ્ઞાયક ઉપયુક્તઃ—શ્રુતપદાર્થજ્ઞઃ શ્રુતપદાર્થે ઉપયોગવાંશ્ચ યઃ સાધ્વાદિઃ સ આગમતઃ=આગમમાશ્રિત્ય ભાવશ્રુતં ભવતિ । અયં શ્રુતોપયોગરૂપ-પરિણામસ્ય સદ્ભાવાત્ ભાવત્વમ્ । શ્રુતાર્થજ્ઞાનસ્ય સદ્ભાવાદાગમત્વં બોધ્યમ્ । તદેતન્નિગમયન્નાહ—‘સે તં આગમઓ ભાવસુય’ ઇતિ । તદેતદાગમતો ભાવશ્રુતં વર્ણિતમ્, ઇતિ ॥સૂ. ૪૦॥

અથ દ્વિતીયમેદમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં નો આગમઓ ભાવસુયં ? નોઆગમઓ ભાવ-સુયં દુવિહં પળ્લત્તં, તં જહા—લોઙ્ગયં, લોગુત્તરિયં ચ ॥સૂ. ૪૧॥

છાયા—અથકિં તદ્ નોઆગમતો ભાવશ્રુતમ્ ? નોઆગમતો ભાવશ્રુતં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્, તદ્વથા—લૌકિકમ્, લોકોત્તરિકં ચ ॥સૂ. ૪૧॥

ઉત્તર—(આગમઓ ભાવસુયં જાણણ ઉવઉત્તે) આગમ કો આશ્રિત કરકે ભાવશ્રુત કા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર સે હૈ—જો સાધ્વાદિ શ્રુત કા જ્ઞાતા હૈ ઓર ઉસમેં ઉપયોગ યુક્ત હૈ । વહ આગમ કો આશ્રિત કરકે ભાવશ્રુત હોતા હૈ । શ્રુત મેં ઉપયોગરૂપ પરિણામ કે સદ્ભાવ સે ઉસ સાધ્વાદિ મેં ભાવતા હૈ, ઓર શ્રુત કે અર્થજ્ઞાન કે સદ્ભાવ સે આગમતા હૈ । ઇસતરહ (સે તં આગમઓ ભાવ-સુયં) યહ આગમ કો લેકર ભાવશ્રુત કા સ્વરૂપ હૈ । ॥ સૂત્ર ૪૦ ॥

નોઆગમકી અપેક્ષા લેકર ભાવશ્રુત કા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર સે હૈ—

“સે કિં તં” ઇત્યાદિ । ॥ સૂત્ર ૪૧ ॥

શબ્દાર્થઃ—(સે) હે ભદન્ત ! નોઆગમકી અપેક્ષા લેકર ભાવશ્રુત કા ત્રયા સ્વરૂપ હૈ ? (નોઆગમઓ ભાવસુયં દુવિહં પળ્લત્તં) નોઆગમ કી અપેક્ષા લેકર

ઉત્તર—(આગમઓ ભાવસુયં જાણણ ઉવઉત્તે) આગમને આધારે ભાવશ્રુતનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ કહ્યું છે. જે સાધુ આદિ જીવ શ્રુતનો જ્ઞાતા હોય છે અને તેમાં ઉપયોગ પરિણામથી યુક્ત હોય છે, તે સાધુ આદિને આગમની અપેક્ષાએ ભાવશ્રુત કહે છે શ્રુતમાં ઉપયોગ રૂપ પરિણામના સદ્ભાવને લીધે તે સાધુ આદિમાં ભાવતા હોય છે શ્રુતના અર્થજ્ઞાનના સદ્ભાવને લીધે તે સાધુ આદિમાં આગમતાનો પણ સદ્ભાવ હોય છે. આ પ્રકારનું (સે તં આગમઓ ભાવસુયં) આગમને આશ્રિત કરીને ભાવશ્રુતનું સ્વરૂપ છે, એમ સમજવું ॥ સૂ. ૪૦ ॥

હવે સૂત્રકાર નોઆગમ ભાવશ્રુતના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે.

“સે કિં તં નોઆગમઓ ભાવસુય” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભગવન્ ! નોઆગમનો આશ્રય લઈને ભાવશ્રુતનું કેવું સ્વરૂપ કહ્યું છે—

टीका— 'से किं तं नोआगमओ भावसुयं' इत्यादि ।

व्याख्या निगदसिद्धा सू० ४१

तत्राद्यभेदं निरूपयति—

मूलम्—'से किं तं लोइयं नोआगमओ भावसुयं ? लोइयं नोआगमओ भावसुयं जं इसं अण्णाणि एहिं मिच्छादिट्ठि एहिं सच्छंदं बुद्धिमइविगप्पियं, तं जहा—भारहं रामायणं भीमासुरोक्तं कोटिल्लयं घोटयमुहं सगडभदियाओ कप्पासियं नागसुहुयं कणगसत्तरी वेसियं वइसेसियं बुद्धसासणं काविल लोगायइय सट्ठित्तं माठरं पुराणं वागरणं नाडगाइं, अहवा वावत्तरिकलाओ चत्तारि वेया सगोवंगा । से तं लोइयं नो आगमओ भावसुयं ॥ सू० ४२ ॥

छाया—अथ किं तद् लौकिकं नोआगमतो भावश्रुतम् ? लौकिकं नोआगमतो भावश्रुतं यदिदमज्ञानिकैः मिथ्यादृष्टिकैः स्वच्छन्दबुद्धिमतिविकल्पितम् तद्यथा—भारतं, रामायणं, भीमानुरोक्तं, कोटिल्लयकम्, घोटकगुखम्, गकटमर्द्रका कर्पासिकम्, नागसुक्ष्मम्, कनकसप्ततिः, वैशेशिकम्, बुद्धजाम्बनम्, कपिलं, लोकायतिकम्, पण्डितन्त्रम्, माठरं पुराणं व्याकर नाटकानि । अथवा द्वासप्ततिकलाः, चत्वारोवेदाः साङ्गोपाङ्गाः । तदेतद् लौकिकं नोआगमतं भावश्रुतम् ॥ सू० ४२ ॥

भावश्रुत दो प्रकार का कहा गया है । (तंजहा) वे प्रकार ये हैं (लोइयं लोगुत्तरियं) १. एक लौकिक दूसरा लोकोत्तरिक । इस सूत्र की व्याख्या पहिले कही गई व्याख्या के अनुसार जाननी चाहिये । ॥ सू ४१ ॥

अब सूत्रकार नोआगमको आश्रित करके लौकिक भावश्रुत का कथन करते हैं—
“से किं तं” इत्यादि । सूत्र ४२ ॥

शब्दार्थः—(से) हे भदन्त ! (नोआगमओ) नोआगम को आश्रित करके (तं)

उत्तर—(नोआगमओ भावसुयं दुविह पणत्तं) नोआगमनी अपेक्षाओ भावश्रुतना ओ प्रकार कहा छे (तंजहा), ते प्रकारे नीचे प्रमाणे छे—(लोइयं, लोगुत्तरियं) (१) लौकिक अने (२) लोकोत्तरिक आ सूत्रनी व्याख्या पड़ेला आवश्यक सूत्रभां कहा अनुसार समझवी ॥ सू. ४१ ॥

इवे सूत्रकार नोआगम लौकिक भावश्रुतना स्वश्रुतं निश्रुतु करे छे—

“से किं तं” इत्यादि—

शब्दार्थः—(से) शिष्य गुरुने ओवो प्रश्न पूछे छे हे भगवन् ! (नोआग-

ટીકા—શિષ્યઃપૃચ્છતિ—સે કિં તં લેઇયં નોઆગમઓ ભાવસુયં' ઇતિ ।
અથ કિં તદ્ લૌકિકં નોઆગમતો ભાવશ્રુતમ્ ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—'લેઇયં
નો આગમઓ ભાવસુયં' ઇત્યાદિ । લૌકિકં નોગમતો ભાવશ્રુતમ્, યદિદં-વક્ષ્ય-
માણં ભારતાદિકમ્, અજ્ઞાનિકૈઃ=અલ્પજ્ઞાનિભિઃ—અત્રાલ્પાર્થકો નજૂ શબ્દઃ,
સમ્યગ્દષ્ટયોઽપ્યજ્ઞાનિકા ભવન્તિ ઇત્યત આહ—'મિચ્છાદિદ્વિહિં' ઇતિ । મિથ્યા
દષ્ટિભિઃ સ્વચ્છંદબુદ્ધિમતિવિકલ્પિતમ્—સ્વચ્છન્દેન=સર્વજ્ઞોક્તાર્થવિરુદ્ધેન સ્વાભિ-
પ્રાયેણ બુદ્ધિમતિભ્યાં-બુદ્ધિઃ=ઈહાવગ્રહરૂપા, મતિઃ=અવાયધારણારૂપા, તામ્યાં
વિકલ્પિતમ્—સર્વજ્ઞોક્તાર્થાનુસારિબુદ્ધિમતિભ્યાં વિરચિતમિત્યર્થઃ । તદ્ લૌકિકં
નોઆગમતો ભાવશ્રુતં વિજ્ઞેયમ્ । તદેવ નામતો નિર્દિશતિ 'તં જહા' ઇત્યાદિના—
તદ્વથા—ભારતં, રામાયણં, ભીમાસુરોક્તં=ભીમાસુરેણ રચિતં શાસ્ત્રમ્, કૌટિલ્યકમ્

પૂર્વપ્રકાન્ત (લેઇયં ભાવસુયં) લૌકિક ભાવશ્રુત (કિં) કયા હૈ ?

ઉત્તરઃ—(નોઆગમઓ) નોઆગમ કો આશ્રિત કરકે (લેઇયં ભાવસુયં)
લૌકિક ભાવશ્રુત ઇસ પ્રકાર સે હૈ—(જં હમં અળ્પાણિહિં મિચ્છાદિદ્વિહિં
સ્વચ્છંદબુદ્ધિમદ્વિગપ્પિયં) જો યહ અજ્ઞાની મિથ્યાદષ્ટિયોં દ્રાગ અપંની
સ્વચ્છંદ બુદ્ધિ ઓર મતિ સે રચા ગયા હૈ । વહ લૌકિકભાવશ્રુત હૈ એસા
જાનના ચાહિયે । ઈહા ઓર અવગ્રહરૂપ વિચારધારા કા નામ બુદ્ધિ હૈ । તથા
અવાય ઓર ધારણરૂપ વિચારધારા કા નામ મતિ હૈ । સર્વજ્ઞ ઉક્ત અર્થસે
વિરુદ્ધ અભિપ્રાયવાલી બુદ્ધિ ઓર મતિ સે જિન શાસ્ત્રોંકા ગ્રંથન કિયા ગયા
હૈ વે સર્વ લૌકિક ભાવશ્રુત હૈ । (તંજહા) જૈસે—(ભારહં રામાયણં ભીમાસુરુકં

મઓ) નોઆગમને આશ્રિત કરીને (તં) પૂર્વપ્રસ્તુત વિષયરૂપ (લેઇયં ભાવસુયં?)
લૌકિક ભાવશ્રુતનું (કિ) કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—(નોઆગમઓ) નોઆગમને આશ્રિત કરીને (લેઇયં ભાવસુયં) લૌકિક
ભાવશ્રુતનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ કહ્યું છે.

(જં હમં અળ્પાણિહિં મિચ્છાદિદ્વિહિં સ્વચ્છંદબુદ્ધિમદ્વિગપ્પિયં) અજ્ઞાની
મિથ્યાદષ્ટિયોં વડે પોતાની સ્વચ્છંદ બુદ્ધિ અને મતિથી રચેલા શ્રુતને 'લૌકિક
ભાવશ્રુત' કહે છે ઇહા અને અવગ્રહરૂપ વિચારધારાનું નામ બુદ્ધિ છે, તથા અવાય
અને ધારણરૂપ વિચારધારાનું નામ મતિ છે. સર્વજ્ઞ કેવળી ભગવાને દ્વારા રચિત
અર્થથી વિરુદ્ધ અભિપ્રાયવાળી બુદ્ધિ અને મતિથી જે શાસ્ત્રોનું ગ્રંથન (રચનારૂપ
ગ્રંથન) કરાયું હોય છે, તે શાસ્ત્રોને લૌકિક ભાવશ્રુત કહે છે (તંજહા) એવાં લૌકિક
ભાવશ્રુતોનાં નામ નીચે પ્રમાણે છે.

(ભારહં રામાયણં, ભીમાસુરુકં કૌટિલ્ય ચોડયમુહ) મહાભારત, રામા-
યણ; ભીમાસુર રચિત શાસ્ત્ર, કૌટિલ્ય (ચાણક્ય) રચિત અર્થશાસ્ત્ર, ચોટકમુખે

કૌટિલ્યેન=ચાણક્યેન નિર્મિતમ્-અર્થશાસ્ત્રમ્ (ઘોટકમુખમ્,) ઘોટકમુખનામકં શાસ્ત્રમ્,
 શકટભદ્રિકા:=એતન્નામકશાસ્ત્રાણિ, કાર્પાસિકમ્-કાર્પાસિકનામકં શાસ્ત્રમ્, નાગસૂક્ષ્મમ્,
 એનન્નામકં શાસ્ત્રમ્, કનકસપ્તતિઃ-કનકસપ્તતિનામકં શાસ્ત્રમ્, વૈશિકમ્-કામશાસ્ત્ર-
 પ્રકરણવિશેષઃ, વૈશેષિકમ્-કાળાદર્શનમ્, બુદ્ધશાસનં-ત્રિપિટકરૂપમ્, કવિલમ્-
 સાંખ્યશાસ્ત્રમ્, લોગાયતિકં=ચાર્વાકદર્શનમ્-સાંખ્યશાસ્ત્રગ્રન્થવિશેષઃ, માઠરં પુરાણં
 વ્યાકરણં નાટકાનિ-માઠરં=માઠરનિર્મિતશાસ્ત્રવિશેષઃ, પુરાણં=વ્યાકરણં, નાટકાનિ=
 દૃશ્યકાવ્યાનિ, બહુવચનાન્તપદાત્-શ્રવ્યકાવ્યાનિ ચ । એતાનિ પૂર્વોક્તાનિ ભારતા-
 દીનિ લૌકિકં નોઆગમતો ભાવશ્રુતમ્ । પ્રકારાન્તરેણ તદાહ-‘અહવા’ इत्यादि ।
 અથવા-દ્વાસપ્તતિકલાઃ-કલનાનિ=લૌકિકસ્તુસ્વરૂપપરિજ્ઞાનાનિ વલાઃ, દ્વાસપ્તતિ
 સંખ્યકાઃ કલાઃ-દ્વાસપ્તતિકલાઃ, એતાશ્ચ-સમવાયાજ્ઞાદિસૂત્રેષુ પ્રોક્તાઃ, તથા-ચ-
 ત્વારો વેદાઃ સાંગોપાંગાઃ-અજ્ઞાનિ=શિક્ષાવલ્પવ્યાક્રાણનિરુક્તછન્દોજ્યૌતિપરૂપાણિ

કૌટિલ્યં ઘોડયમુહ) મહાભારત રામાયણ, भीमासुररचित शास्त्र, चाणक्य
 रचित अर्थशास्त्र, घोटकमुखनामकशास्त्र, (सगडभद्वियाओ)
 शकटभद्रिका नामकशास्त्र (कप्पासियं) कार्पासिक नामकशास्त्र (णागसुहुमं) नाग
 सूक्ष्म नामक शास्त्र (कणगसत्तरी) कनकसप्तति नामक शास्त्र (वेसियं) कामशास्त्र
 प्रकरण विशेष (वेइसेसियं) वैशेषिकशास्त्र, (बुद्धसासणं) त्रिपिटकरूप बुद्धशास्त्र,
 (कविलं) सांख्यशास्त्र, (लोगायइयं) चार्वाक दर्शन (सद्वितंतं) पट्टि तंत्र
 सांख्यशास्त्र ग्रन्थ विशेष, (माठर) माठरनिर्मितशास्त्र विशेष, (पुराणं) पुराण
 (वागरणं) व्याकरण (नाडगाइं) दृश्य वाच्य और श्राव्य काव्य । (अहवा)
 अथवा (वावत्तरिकलाओ) ७२ कलाएँ (संगोवंगा चत्तारिवेया) सांगोपांग
 चारों वेद । ७२ कलाओं का वर्णन समवायाज्ञ आदि सूत्रों में है । शिक्षा, कल्प,

नाમનું શાસ્ત્ર, (સગડભદ્રિયાઓ) શકટ ભદ્રિકા નામનું શાસ્ત્ર, (કપ્પાસિકં) કાર્પા-
 સિક નામનું શાસ્ત્ર, (ણાગસુહુમં) નાગસૂક્ષ્મ નામનું શાસ્ત્ર, (વણગસત્તરી) કનક
 સપ્તતિ નામનું શાસ્ત્ર, (વેસિયં) કામશાસ્ત્રનું પ્રકરણ વિશેષ, (વેइसेसियं) વૈશેષિક
 શાસ્ત્ર, (बुद्धसासणं) ત્રિપિટક રૂપ બૌદ્ધોનું ધર્મશાસ્ત્ર, (कविलं) કવિલનું સાંખ્ય-
 દર્શન નામનું શાસ્ત્ર, (लोगासुइयं) ચાર્વાક દર્શન, (सद्वितंतं) પટ્ટિતંત્ર સાંખ્ય
 શાસ્ત્રનો અર્થવિશેષ, (माठर) માઠર નિર્મિત શાસ્ત્ર વિશેષ, (पुराणं) પુરાણ (वागरणं)
 વ્યાકરણ, (नाडगाइं) દૃશ્યકાવ્ય અને શ્રાવ્યકાવ્ય, (अहवा) અથવા (वावत्तरिकलाओ)
 ૭૨ કલાઓ, (संगोवंगा चत्तारि वेदा) અંગ અને ઉપાંગયુક્ત ચારે વેદ આ
 બધાને લૌકિકભાવશ્રુત કહે છે. ૭૨ કલાઓનું વર્ણન સમવાયાંગ આદિ સૂત્રોમાં કર-
 વામાં આવ્યું છે. વેદોના છ અંગ નીચે પ્રમાણે છે શિક્ષા, કલ્પ, વ્યાકરણ, નિરુ-
 ક્ત છન્દ અને જ્યોતિષ અને તેમની વ્યાખ્યા રૂપ બે અંગો છે તેમને ઉપાંગ કહે

ષટ્, ઉપાજ્ઞાનિ=તદ્વ્યાખ્યારૂપાણિ. તૈઃ સહિતા ઋગ્યજુઃસામ.અર્થર્ણલક્ષણાશ્ચત્વારો વેદાઃ, લૌકિકં નોઆગમતો ભાવશ્રુતમ્ । ભારતરામ યણાદીનાં લોકે આગમત્વેન પ્રસિદ્ધત્વાદાગમત્વેઽપિ તદુક્તક્રિયાયા અનાગમત્વાત્ નોઆગમત્વમ્, લોકપ્રસિદ્ધયૈવ યત્તત્ત્વમપિ તેષાં । તદુપયોગ એવ મવિતુમર્હતિ, ઉપયોગો ભાવનિક્ષેપ ઇતિવચનાત્ । તદેતત્ લૌકિકં નોઆગમતો ભાવશ્રુતં વર્ણિતમ્ । ઇતિ॥ સૂ.૦૪૨॥

વ્યાકરણ નિરુક્ત, છ દ. ડ્યૌનિષ, યે છહ વેદોં કે અંગ હૈં । ઓર ડનકી વ્યાખ્યા રૂપ જો ગ્રન્થ હૈં વે ઉપાંગ હૈં । ઋગ્વેદ, યજુર્વેદ, સામવેદ, ઓર અર્થર્ણવેદ યે ચાર વેદ હૈં । યે સર્વ લૌકિક ભાવશ્રુત હૈં । લોક મેં ભારત રામાયણ આદિ આગમ શાસ્ત્રરૂપ સે માને જાતે હૈં, ઇસલિયે ડનમેં આગમતા હૈ ઓર ડનમેં જો ક્રિયાઈ વર્ણિત હૈં, વે આચારરૂપ નહીં હોને સે અનાગમરૂપ હૈં । ઇસપ્રકાર ભારત આદિકોં મેં તદુક્ત ક્રિયાઓંકી અપેક્ષા નોઆગમતા આ જાતિ હૈ । લોક પ્રસિદ્ધિ સે હી ડનમેં શ્રુતતા હૈ । ઇસલિયે યે નોઆગમ કો આશ્રિત કરકે લૌકિક ભાવશ્રુત હૈ । ડનમેં જો સૂત્રકારને ભાવશ્રુતતા પ્રકટ થી હૈ વહ ડનકે સંલગ્ન ઉપયોગ કી અપેક્ષા સે હી પ્રકટ થી ગઈ જાનની ચાહિયે । શબ્દાત્મક જો ભારત, રામાયણ આદિક હૈં વે તો ભાવશ્રુત હો હીં નહીં સકતે હૈં કયોંકિ “ઉપયોગો ભાવનિક્ષેપઃ” ઉપયોગ કો હી ભાવનિક્ષેપ કહા હૈ એસા આસવચન હૈ । (સે તં લોઙ્યં નોઆગમઓ ભાવસૂયં) ઇસ પ્રકાર નોઆગમકી અપેક્ષા યહ લૌકિક ભાવશ્રુતતા વર્ણન કિયા।—

છે. ચાર વેદના નામ આ પ્રમાણે છે ઋગ્વેદ, સામવેદ, યજુર્વેદ અને અર્થર્ણવેદ લોકમાં મહાભારત, રામાયણ આદિને આગમ-શાસ્ત્ર રૂપે માનવામાં આવે છે, તેથી તેમાં આગમતાનો સદ્ભાવ છે, અને તે શાસ્ત્રોમાં જે ક્રિયાઓનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે ક્રિયાઓ આચારરૂપ નહીં હોવાથી અનાગમરૂપ છે. આ રીતે મહાભારત આદિ ગ્રંથોમાં તદુક્ત ક્રિયાઓની અપેક્ષાએ નોઆગમતા આવી જાય છે. લોકપ્રસિદ્ધિની અપેક્ષાએ તે ગ્રંથોમાં શ્રુતતાનો સદ્ભાવ છે. તેથી તે શાસ્ત્રોને નોઆગમ લૌકિક ભાવશ્રુત રૂપ કહેવામાં આવ્યાં છે તે શાસ્ત્રગ્રંથોમાં સૂત્રકારે જે ભાવશ્રુતતા પ્રકટ કરી છે તે તેમના તે શ્રુતોમાં ઉપયોગરૂપે પરિણામની યુક્તતા (સંલગ્નતા)ને કારણે જ પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે, એમ સમજવું. શબ્દાત્મક જે મહાભારત, રામાયણ આદિ છે, તેમને તો ભાવશ્રુત ગણી શકાય જ નહીં કારણ કે “ઉપયોગો ભાવનિક્ષેપઃ” ઉપયોગને જ ભાવનિક્ષેપ કહે છે. આ પ્રકારનું સિદ્ધાન્તોનું વચન છે (સે તં લોઙ્યં નોઆગમઓ ભાવસૂયં) આ પ્રકારનું નોઆગમ લૌકિક ભાવશ્રુતનું સ્વરૂપ સમજવું.

‘અજ્ઞાનિક’ અજ્ઞાની પદમાં જે “અ” ઉપસર્ગ છે, તે નકારવાચક નથી

अथ लोकोत्तरिकं नोआगमतो भावश्रुतमाह—

मूलम्—से किं तं लोउत्तरियं नोआगमओ भावसुय ? लोउत्तरियं नोआगमओ भावसुयं जं इयं अरहंतेहि अययंतेहिं उत्पण्ण-
णाणदंसणधरेहिं तीयपञ्चुप्पणजणायजं जायहिं सव्वण्णूहिं सव्व-
दरिसीहिं तिलुधवहियसहियपूइयहिं अग्रदिहयवरनाणदंसणधरेहिं
पणीय दुवालसंगं गणिपिटगं, तं जहा—आयाते सुययडो ठाणं सम-
वाओ विवाहपणत्ती नायाधम्मवहाओ, उवात्तजदसाओ अंतगड-
दसाओ अणुत्तरोदवाइयदसाओ, एवहावागएणाइं विवागसुयं दिट्ठि-
वाओय । से तं लोउत्तरियं नोआगमओ भावसुयं । से तं आगमओ
भावसुयं । से तं भावसुयं ॥ सू० ४३ ॥

अथ किं तद् लोकोत्तरिकं नोआगमतो भावश्रुतम् ? लोकोत्तरिकं नो-
आगमतो भावश्रुतं यदिदं अर्हति रीत्यस्तिरूपेणानदर्शनधरैः अतीतप्रत्युत्पन्ना
नागतज्ञायकैः सर्वज्ञैः सर्वदर्शिभिः शैलोदयान्तेनितमहितपूजितैः अग्रतिहतवर-
ज्ञानदर्शनधरैः प्रणीतं द्वादशाङ्गं गणिपिटकं, तद्यथा—आचारः, सूत्रकृतं, स्थानं,
समवायः, विवाहप्रज्ञप्तिः, दातादर्शनथाः, उपासकदशाः, अस्तकृतदशाः, अनु-
त्तरोपपातिकदशाः प्रश्नव्याख्यानानि, विषयश्रुतम्, दृष्टिवादश्च । तदेतत् लोको-
त्तरिकं नोआगमनो भावश्रुतम् । तदेतद् नोआगमनो भावश्रुतम् । तदेतत् आग-
मतो भावश्रुतम् ॥ सू० ४३ ॥

अज्ञानिक पद में जो नञ् समास हुआ है वह अल्पार्थ में हुआ है। अतः
अज्ञानिक का तात्पर्य “अल्पज्ञानवाले” ऐसे होता है। ऐसे अल्पज्ञानी तो
सम्यक् दृष्टि भी होते हैं—अतः इनकी निवृत्ति के लिये मिथ्यादृष्टि पद
सूत्रकार ने प्रयुक्त किया है। ॥ सू० ४२ ॥

अब सूत्रकार नोआगम की अपेक्षा करके लोकोत्तरिक भावश्रुतका वर्णन
पण्य अल्पार्थक छे. तेथी अज्ञानी ओटहे अल्पज्ञानवाला, आ प्रकारनो अर्थ अही
समजवो ओवो अल्पज्ञानी तो सम्यक् दृष्टि ओव पण्य होइ शके छे, तेथी अही
सम्यक्दृष्टि अल्पज्ञानवालांनी निवृत्तिने निमित्ते सूत्रकारे मिथ्यादृष्टि विशेषणने पण्य
प्रयोग कर्थो छे. ॥ सू. ४२ ॥

‘से किं तं’ इत्यादि—

अथ किं तद् लोकोत्तरिकं नोआगमतो भावश्रुतम् ? इति शिष्यप्रश्नः ।
उत्तरमाह—उत्पन्नज्ञानदर्शनधरैः, उत्पन्ने ज्ञानावरणक्षपणादिप्रकारेण संजाते न
तु सहजे ये ज्ञानदर्शने तयोर्धराः=धारकास्तः, सादिकेवलज्ञानदर्शनोपयोगयुक्तै
रित्यर्थः, तथा-अतीतप्रत्युत्प-जानागतज्ञायकैः तत्र अतीताः=भूतकालिकाः, प्रत्युत्पन्नाः=
वर्तमानकालिकाः, अनागताः=भविष्यत्कालिका अर्थास्तेषां ज्ञायकास्तैः, तथा—
सर्वज्ञैः=सर्वद्रव्यपर्यायं जानन्तीति सर्वज्ञास्तैः, सर्वदृशिभिः=केवलदर्शनेन एकेन्द्रि-
यादि सर्वं त्रसस्थावरं जगद् द्रष्टुं शीलं येषां ते सर्वदर्शिनस्तैः, तथा त्रिलोक्या-
करते हैं—“से किं तं लोउत्तरियं” इत्यादि । ॥ सूत्र ४३ ॥

शब्दार्थः—(से) शिष्य पूछता है कि हे भदन्त ! (नोआगमओ) नोआग-
मको आश्रित करके (तं) पूर्वप्रकान्त (लोउत्तरियं भावसुयं किं) लोकोत्तरिक
भावश्रुत क्या है ?

उत्तर—(नोआगमओ) नोआग की अपेक्षा करके (लोउत्तरियं भावसुयं)
लोकोत्तरिकभावश्रुत इस प्रकार है— (उत्पण्णणाणदंसणधरेहिं) ज्ञाना
वरणकर्म के क्षय से उत्पन्न हुए केवलज्ञान और दर्शनावरण कर्म के
क्षय केवलदर्शनरूप उपयोग को धारण करनेवाले, (तीयपच्चुप्पण-
मणागयजाणएहिं) अतीत-भूतकालिक प्रत्युत्पन्न-वर्तमान कालिक
अनागत-भविष्यत्कालिक पदार्थों को जाननेवाले (सच्चण्णूहिं)
समस्त द्रव्यों और उनकी त्रिकालवर्ती पर्यायों के ज्ञाता (सच्चद-
रिसीहिं) केवलदर्शन से एकेन्द्रियादि समस्त त्रसस्थावर रूप जगत् देखने के

हुवे सूत्रकार नोआगम लोकोत्तरिक भावश्रुतनु निरूपणु करे छे—

“से तं लोउत्तरियं” इत्यादि—

शब्दार्थ—(से) शिष्य गुरुने ऐसे प्रश्न पूछे छे के छे लगवन् । (नोआगमओ)
नोआगम भावश्रुतना गीज्जा लेद्धप (उ लोउत्तरिय भावसुयं किं) पूर्वप्रस्तुत
लोकोत्तरिक भावश्रुतनु स्वरूप केवुं छे ?

उत्तर—(नोआगमओ) नोआगमनो आश्रय लधने (लोउत्तरियं भावसुयं)
लोकोत्तरिक भावश्रुतनु स्वरूप आ प्रकारनु छे.

“उत्पण्णणाणदंसणधरेहिं” ज्ञानवरणना क्षयथी उत्पन्न थयेला केवलज्ञान
अने केवलदर्शनरूप उपयोगने धारणु करनारा, ‘तीयपच्चुप्पणमणागयजाणएहिं’
अतीत (भूतकालिक), प्रत्युत्पन्न (वर्तमान कालिक), अने अनागत (भविष्यत्कालिक)
पदार्थोंने जानुनारा, (सच्चण्णूहिं) समस्त द्रव्ये अने तेमनी त्रिकालवर्ती पर्यायिना
ज्ञाता (सच्चदरिसीहिं) केवल दर्शनथी एकेन्द्रियादि समस्त त्रस अने स्थावररूप

वलोकितमहितपूजितैः—त्रैलोक्येन=त्रिलोकीस्थितेन भवनपतिव्यन्तरनरविद्याधर
वैमानिकादिसमूहेन सूत्रे 'वहिय' इति देशी शब्दः अवलोकितार्थ
वाचक स्ततः—अवलोकिताः—अमन्दानन्दापरिप्लुतलोचनैर्निरीक्षिताः महिताः=
यथावस्थिताऽसदृशगुणोत्कीर्तनलक्षणेन भावस्तवेन अभिषुताः पूजिताः=
वन्दनादिलक्षणया कायिकक्रिया सत्कृतास्तैः, तथा अप्रतिहयवरज्ञानदर्शनधरैः
अप्रतिहते=समस्तावरणक्षयसम्भूतत्वाद् मूर्त्तामूर्त्तेषु समस्तवस्तुषु कटकुड्यादिभिर-
स्वलिते अविसंवादके वा अतएव क्षायिकत्वाद्वा वरे=श्रेष्ठे ये ज्ञानदर्शने=केवल
ज्ञानकेवलदर्शनरूपे, तयोर्धराः—धारका ये ते तथा तैः, एवंभूतैर्हृद्भिर्भगवद्भिः,
यदिदं द्वादशाङ्गं=अतरूपस्य परमपुरुषस्याज्ञानीव अज्ञानि द्वादशअज्ञानि—आचारा-
दीनि यत तद् द्वादशाङ्गगणिपिटकम् गणोऽस्यास्तीति गणी=आचार्यस्तस्य
पिटकमिव=सर्वस्वाधारमञ्जूषेव प्रणीतं=ग्ररूपित, तद् लोकोत्तरिकं—लोकोत्तरैः=

स्वभाववाले (तिलुक्कवहियमहियपूइएहिं) तीन लोकवर्ती भवनपति,
व्यन्तर, नर, किन्नर, विद्याधर ज्योतिषिक वैमानिक आदि के समूह से
अवलोकित अमन्द आनन्द के अश्रुओं से परिप्लुत लोचनों द्वारा
निरीक्षित—हुए, महित—यथावस्थित गुणों के कीर्तनरूप भावस्तव-
से संस्तुत हुए, पूजित—वन्दनादिरूप कायिक क्रिया से सत्कृत हुए
(अप्पडियवरणाणदंसणधरेहिं) तथा अप्रतिहत समस्त आवरण के क्षय
से उत्पन्न होने के कारण मूर्त और अमूर्त सबलवस्तुओं में कटकुडय (कट-
चटाई कुडय—भित्ति) आदि से भी अस्वलित अथवा अविसंवादी ऐसे
श्रेष्ठ के लक्षण और केवलदर्शन के धारक (अरिहंतेहिं भगवंतेहिं) अर्हन्त
भगवन्तो द्वारा (दुवालसंगं) आचारंगादि द्वादश अंगवाचा (जं इमं) जो यह

जगतने जेई शकवाना स्वभाववाणा, (तिलुक्कवहियमहियपूइएहिं) त्रय लोकवर्ती
भवनपति, व्यन्तर, नर, किन्नर, विद्याधर, ज्योतिषिक, वैमानिक आदिना समूह
अवलोकित, अमन्द आनंदा श्रुत्येथी परिप्लुत लोचनो द्वारा निरीक्षित
थती महित—यथावस्थित गुणोना कीर्तनरूप भावस्तवनथी संस्तुत (स्तवित)
थतां, पूजितां—वन्दनादिरूप कायिक क्रियावडे सत्कारित थतां, (अप्पडियवरणाणदंसण
धरेहिं) तथा अप्रतिहत समस्त आवरणोना क्षयथी उत्पन्न थयेलुं होवाने कारणे
मूर्त्त अने अमूर्त्त सकल वस्तुओ कट, कुडय (कट ओटवे चटाई अने कुडय ओटवे
लीत) आदिथी पणु अस्वलित अथवा अविसंवादी ओवा श्रेष्ठ केवलज्ञान अने
केवलदर्शनना धारक (अरिहंतेहिं भगवंतेहिं) अर्हन्त भगवन्तो द्वारा (दुवालसंगं)
आचारंग आदि आर अंगवाणुं (जं इयं) जे आ (गणिपिटकं पणीयं) गणिपिटक
ग्रन्थत थयुं छे, ते लोकोत्तर तीर्थंकरो द्वारा प्रणीत होवाने कारणे लोकोत्तरिक

તીર્થકૃદ્ધિઃ પ્રણીતત્વાદ્ લોકોત્તરિ ભાવશ્રતમ્ । તત્સ્વરૂપમાહ—‘તં જહા’ ઇત્યા
 દિના-તથથા-આચારઃ, સૂત્રકૃતં, થાનં, સમવાયો વિવાહપ્રજ્ઞસિઃ, જ્ઞાતાધર્મ-
 કથાઃ, ઉપાસકદશાઃ, અન્તકૃત શાઃ. અનુત્તરાપપાતિકદશાઃ, પ્રશ્નવ્યાકરણાનિ
 વિપાકશ્રુતં, દૃષ્ટિવાદશ્ચ । સર્વજ્ઞપ્રણીતં દ્વાદશાઙ્ગરૂપં યદ્ ગણિપિટકં. તદર્થો
 પયાગો ભાવશ્રુતં ઉપયોગો ભાવનિક્ષેપ ઇતિ વચનાત્ । સ ચોપયોગશ્ચરણગુણસમ-
 ન્વિતશ્ચેત્ તર્હિ નો આગમતો ભાવશ્રતં ભવતિ. ચરણગુણસ્ય ક્રિયારૂપત્વેન આ-
 નાગમત્વાત્. નો શબ્દસ્ય ચ દેશપ્રતિષેધકત્વેના યજાત્ । ઉપયોગચારિત્રવાન્

(ગણિપિટકં પળીયં) ગણિપિટક પ્રરૂપિત હુઆ હૈ લોકોત્તર તીર્થકરોં દ્વારા
 પ્રણીત હોને કે કારણ લોકોત્તરિક ભાવશ્રત હૈ । ‘તં જહા’ દ્વાદશ
 અંગોં કે નામ ઇસ પ્રકાર હૈ ।—(આચારો) આચારાંગ (સૂયગહો
 સૂત્રકૃતાંગ (ઠાણં) સ્થાનાંગ (સમવાઓ) સમવાયાંગ (વિવાહ પળ્ણત્તી) વિવાહ પ્રજ્ઞસિ-
 ‘ભગવતી સૂત્ર’ (નાયાધર્મ્મકહાઓ) જ્ઞાતા ધર્મકથા (ઉવાસગદસાઓ) ઉપાસક દર્શાંગ
 (અંતગહદસાઓ) અન્તકૃતદર્શાંગ (અણુત્તરોવવાહ્યદસાઓ) અનુત્તરાપપાતિક
 દર્શાંગ (પળ્હાવાગરણાઈ) પ્રશ્નવ્યાકરણ, (વિવાગસુયં) વિપાકશ્રુત (દિદ્ધિવાઓ
 ય) આર દૃષ્ટિવાદ । ઇન બારહ અંગોં કે અર્થ મેં જા ઉપયોગરૂપ પરિણામ હૈ
 વહ ભાવશ્રુત હૈ “ઉપયોગો ભાવનિક્ષેપ” હૈ, એસા સિદ્ધાન્ત કા વચન હૈ । યહ
 ઉપયોગરૂપ પરિણામ યદિ ચરણગુણ—ચારિત્ર ગુણ સે યુક્ત હૈ તો વહ નોઆગમ
 સે ભાવશ્રુત હૈ કયોં કિ ચરણ ગુણ ક્રિયારૂપ હૈ ઓર ક્રિયા આગમ નહીં
 હોતી હૈ । ઇસ પ્રકાર યહાં નોશબ્દ મેં આગમ એકદેશ મેં નિષેધક હાને
 સે દેશ પ્રતિષેધકતા બન જાતી હૈ । યદ્યપિ ઉપયોગ આર ચારિત્ર ગુણ સે

ભાવશ્રુતરૂપ છે. (તં જહા) તે દ્વાદશ (બાર) અંગોના નામ નીચે પ્રમાણે છે—(આચારો)
 (૧) આચારાંગ, (યગહા) (૨) સૂત્રકૃતાંગ. (ઠાણં) (૩) સ્થાનાંગ, (સમવાઓ) (૪)
 સમવાયાંગ. (વિવાહ પળ્ણત્તી) (૫) વિવાહ પ્રજ્ઞસિ (ભગવતી સૂત્ર) (નાયા ધર્મ્મકહાઓ)
 (૬) જ્ઞાતા ધર્મકથા. (ઉવાસગદસાઓ) (૭) ઉપાસકદર્શાંગ. (અંતગહદસાઓ)
 (૮) અન્તકૃતદર્શાંગ. (અણુત્તરોવવાહ્યદસાઓ) (૯) અનુત્તરાપપાતિકદર્શાંગ.
 (પળ્હાવાગરણાઈ) (૧૦) પ્રશ્નવ્યાકરણ. (વિવાગસુયં) (૧૧) વિપાકશ્રુત અને
 ‘દિદ્ધિવાઓ ય’ (૧૨) દૃષ્ટિવાદ. આ બારે અંગોના અર્થમાં જે ઉપયોગરૂપ પરિણામ
 છે તેનું નામ ભાવશ્રુત છે. કારણ કે “ઉપયોગો ભાવનિક્ષેપઃ” આ પ્રકારનું
 સિદ્ધાન્તનું વચન છે. આ ઉપયોગરૂપ પરિણામ જે ચરણગુણ—ચરિત્રગુણથી યુક્ત
 હોય તો તે નોઆગમની અપેક્ષાએ ભાવશ્રુત છે, કારણ કે ચરણગુણ ક્રિયારૂપ હોય
 છે, અને ક્રિયા આગમરૂપ હોતી નથી. આ પ્રકારે અહીં ‘નો’ પદ એકદેશની અપે-
 ક્ષાએ આગમનું નિષેધક હોવાથી દેશપ્રતિષેધકતા ઘટિત થઈ જાય છે. જે કે ઉપ-

સાધ્વાદિ-પ્યમેદોપચારાદ્ ભાવશ્રુત મવિતુમર્હતિ । इह तु चारित्रलमन्वितो द्वाद-
 શાઙ્ગોપયોગો નોઆગમતો ભાવશ્રુતમિત્યાશયેન દ્વાદશાઙ્ગો ગણિપિટકમિત્યુક્તમ્ ।
 અન્યથાં શબ્દાત્મકસ્ય દ્વાદશાઙ્ગસ્યોપયોગરૂપત્વાભાવાદ્ ભાવશ્રુતત્વં નોપપદ્યતે ।
 પ્રકૃતમુપસંહરન્નાહ-‘સે તં’ इति । तदेतद् लोकोत्तरिकं नो आगमनो भावश्रुतम् ।
 ‘સર્વં નો આગમતા ભાવશ્રુતં નિરૂપિતમિતિ સૂચયિતુમાહ-‘સે તં’ इति । तदेतन्नो
 આગમતો ભાવશ્રુતમ્ । इत्थं समेदं भावश्रुतं प्ररूपितमिति सूचयितुमाह-‘से तं
 भावसुयं’ इति । तदेतद् भावश्रुतम् इति । सू० ४३॥

इत्थं भावश्रुतस्वरूपमुक्त्वा सम्प्रति तत्पर्यायानाह—

मूलम्—तस्स णं इमे एगट्ठिया णाणाघोसा णाणावज्जणा नाम-
 धेज्जा भवंति, तं जहा—

सुयसुत्तगंथसिद्धं,—तसासणे आणावयग उवएसे ।

पन्नत्रण आगमे वि य, एगट्ठा पज्जवा सुत्ते ॥

से त सुयं ॥स० ४४॥

युक्त हुआ साधु आदि भी अभेदोपचार से भावश्रुत हो सकता है, परन्तु यहाँ जो द्वादशाङ्गगणिपिटकमो नोआगम से भावश्रुत कहा है वह द्वादशांग के चारित्रगुणसमन्वित उपयोग को लेकर ही कहा है ऐसा जानना चाहिये । क्योंकि शब्दात्मक जो द्वादशांग है वह उपयोगरूप नहीं होता है । अतः उसमें उपयोगरूपता का अभाव होने के कारण भावश्रुतता नहीं बनती है । (से तं नोआगमओ भावसुयं) इस तरह नोआगम को आश्रित करके यह लोकोत्तरिक भावश्रुत का स्वरूप है । (से तं भावसुयं) इस प्रकार से सूत्रकारने समेद-भावश्रुत की प्ररूपणा यहाँ तक की है । ॥सूत्र ४३॥

યોગ અને ચારિત્રગુણથી યુક્ત થયેલા સાધુ આદિ પણ અભેદોપચારથી ભાવશ્રુત હેઇ શકે છે, પરન્તુ અહીં જે દ્વાદશાંગરૂપ ગણિપિટકને નોઆગમની અપેક્ષાએ ભાવશ્રુત કહ્યું છે તે દ્વાદશાંગના ચારિત્રગુણ સમન્વિત ઉપયોગની અપેક્ષાએ જ કહેવામાં આવ્યું છે, એમ સમજવું બેઠએ, કારણ કે શબ્દાત્મક જે દ્વાદશાંગ છે તે ઉપયોગ રૂપ હોતું નથી. તેથી તેમાં ઉપયોગ રૂપતાનો અભાવ હોવાને કારણે ભાવશ્રુતતા સંભવી શકતી નથી. (સે તં નોઆગમઓ ભાવસુયં) આ પ્રકારનું નોઆગમને આશ્રિત કરીને લોકોત્તરિક ભાવશ્રુત નામના નોઆગમ ભાવશ્રુતના બીજા લેદનું સ્વરૂપ સમજવું (સે તં ભાવસુયં) આ પ્રકારે સૂત્રકારે ભાવશ્રુતના લેદોની અહીં સુધીમાં પ્રરૂપણા કરી છે આ રીતે ભાવશ્રુતનું વર્ણન અહીં સમાપ્ત થાય છે. ॥સૂ० ૪૩॥

छाया—तस्य खलु इमानि एकार्थिकानि नानाघोषाणि नानाव्यञ्जनानि नामधेयानि भवन्ति, तद्यथा—

श्रुतसूत्रग्रन्थसिद्धान्त शासनमाज्ञावचनमुपदेशः ।

प्रज्ञापना आगमोऽपि च एकार्थाः पर्यायाः सूत्रे ॥

तदेतत् श्रुतम् ॥ सू० ४४ ॥

टीका—‘तस्स णं’ इत्यादि—

तस्य=भावश्रुतस्य खलु इमानि=वक्ष्यमाणानि एकार्थिकानि=एकार्थविषयाणि नानाघोषाणि=उदात्तानुदात्तादि नानास्वरयुक्तानि, नानाव्यञ्जनानि=ककाराद्यनेकव्यञ्जनात्मकानि नामधेयानि=नामानि भवन्ति. तद्यथा—श्रुतसूत्र‘सिद्धान्त’ग्रन्थशासनम्—तत्र— श्रुतम्—श्रूयते गुरुसमीपे यत्तत्श्रुतम् १, सूत्रम्—अथानां सूचकं सूत्रम् २, ग्रन्थः—तीर्थंकरकल्पपादवचनप्रसूनानां ग्रन्थनाद् ग्रन्थः ३, सिद्धान्तः

अब सूत्रकार भावश्रुत के पर्यायवाची शब्दों को कहते हैं ।

“तस्स णं इमे” इत्यादि ॥ सू० ४४ ॥

शब्दार्थ—(तस्स णं इमे णाणाघोसा णाणावज्जणा एगट्ठिया नामधेज्जा भवन्ति) उस भावश्रुत के ये उदात्त अनुदात्त आदि नाना स्वरों से युक्त, और ककारआदि अनेक व्यञ्जनोंवाले एकार्थविषयक नाम हैं । (तं जहा) जो इस प्रकार से ह—

(सुयसुत्तगंथसिद्धंतसासणे आणवयणउवएसे पन्नवणआगमे वि य एगट्ठा पज्जवा सुत्ते) गुरु के समीप सुना जाने के कारण भावश्रुत का नाम श्रुत है अर्थों की सूचना इससे होती है इसलिये इसका नाम सूत्र है । तीर्थंकर रूप कल्पवृक्ष के वचन रूप पुष्पों का इसमें ग्रथन रहता है इसलिये इसका

इसे सूत्रकार भावश्रुतना पर्यायवाची शब्दोंनुं कथन कर छे—

“तस्सणं इमे” इत्यादि—

शब्दार्थ—(तस्सणं इमे णाणाघोसा णाणावज्जणा एगट्ठिया नामधेज्जा भवन्ति) ते श्रुतना, उदात्त अनुदात्त आदि विविध स्वरोंवाली युक्त अने ककार आदि अनेकव्यञ्जनोंवाली युक्त अनेकार्थवाचक नामो छे. (तंजहा) ते नामो नीचे प्रमाणे छे—

(सुयसुत्तगंथसिद्धंतसासणे आणवयण उवएसे पन्नवण आगमे वि य एगट्ठा पज्जवा सुत्ते) (१) श्रुत—गुरुनी समीपे तेनुं श्रवण करवामां आवे छे, ते श्रवण तेनुं नामश्रुत छे. (२) सूत्र—अर्थोनी सूचना तेना द्वारा मणे छे तेथी तेनुं भीणुं नाम सूत्र छे.

(३) ग्रन्थ—तीर्थंकरे इप कल्पवृक्षना वचनरूपी पुष्पोनुं तेमां ग्रथन थयेनुं

સિદ્ધં=પ્રમાણપ્રતિષ્ઠિતમર્થમ્ અન્તં નયતિ=પ્રમાણકોટિમારોહયતીતિ સિદ્ધાન્તઃ૪,
 શાસનમ્—મિથ્યાત્વાવિરતિકપાયાદિપ્રવૃત્તજીવાનાં શાસનાત્=શિક્ષણાદ્—શાસનમ્ ૫,
 एषां समाहारः । तथा-आज्ञा-आज्ञाप्यन्ते मोक्षार्थिनः प्राणिनोऽनयेति-आज्ञा६,
 વચનમ્—ઉક્તિઃ=વાગ્યોગ્મ્યમ્ इत्यर्थः ૭, ઉપદેશઃ—હિતાહિતપ્રવૃત્તિનિવૃત્ત્યુપદેશનાત્—
 ઉપદેશઃ ૮, પ્રજ્ઞાપના—પ્રજ્ઞાપ્યન્તે યથાવસ્થિતજીવાદિપદાર્થોં અનયેતિ પ્રજ્ઞાપના ૯,
 અપિ ચ આગમઃઆચાર્યપારમ્પર્યેનાગચ્છતીતિ-આગમઃ, આપ્તવચનં વા આગમ ૧૦,
 એતે સર્વેઽપિ સૂત્રવિષયે એકાર્થાઃ પયાર્યાઃ વૌદ્ધવ્યાઃ । પ્રકૃતમુપસંહરન્નાહ—તદેતત્
 શ્રુતમ્—શ્રુતાદિનામભેદૈર્યદુક્તં તત્ શ્રંતં વિજ્ઞયમિતિ ॥સૂ૦ ૪૪॥

નામ ગ્રન્થ હૈ । પ્રમાણ પ્રતિષ્ઠિત અર્થ કો યહ પ્રમાણ કોટિમેં સ્થાપિત કર દેતા હૈ
 इसलिये इसका नाम सिद्धान्त है, मिथ्यात्व अविरति, और कपाय आदि में
 प्रवृत्त हुए व्यक्तियों को उनसे दूर होनेकी शिक्षा देता है इसलिये इसका
 नाम शासन है । मोक्षामिलायी प्राणी जन इससे आज्ञापित किये जाते हैं,
 इसलिये इसका नाम आज्ञा है । वाणी के द्वारा यह स्पष्ट किया जाता है
 इसलिये इसका नाम वचन है । जीवों को इससे हित में प्रवृत्त होने की
 शिक्षा (उपदेश) मिलता है इसलिये इसका नाम उपदेश है । इसके द्वारा
 जावादिक समस्त पदार्थ जिस रूप में स्थित है उसी रूप से प्रज्ञापित किये
 जाते हैं इसलिये इसका नाम 'प्रज्ञापना' है । आचार्य परंपरा से यह चला
 आ रहा है इसलिये इसका नाम 'आगम' है । अथवा यह आप्त का वचन है
 इसलिये भी 'आगम' है । ये सब सूत्र के पर्यायवाची शब्द हैं ऐसा जानना

હોવાથી તેનું નામ ગ્રન્થ છે. (૪) સિદ્ધાન્ત પ્રમાણપ્રતિષ્ઠિત અર્થને તે પ્રમાણભૂ-
 તની કોટિમાં સ્થાપિત કરી દે છે તેથી તેનું નામ સિદ્ધાન્ત છે. (૫) શાસન
 મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, કપાય આદિમાં પ્રવૃત્ત થયેલી વ્યક્તિઓને તેનાથી દૂર રહેવાની
 શિક્ષા તે આપે છે, તેથી તેનું પાંચમું નામ શાસન છે (૬) આજ્ઞા—તેના દ્વારા
 મનુષ્ય આદિને અમુક આજ્ઞાઓ આપવામાં આવે છે, તેથી તેનું છઠું નામ આજ્ઞા છે.
 (૭) વચનવાણી દ્વારા તેને સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે, તેથી તેનું નામ વચન છે.
 (૮) ઉપદેશ—તેના દ્વારા જીવોને ઉપદેશોમાં પ્રવૃત્ત થવાની અને અનુપાદેય (હિત
 પદાર્થો)થી નિવૃત્ત થવાની શિક્ષા (ઉપદેશ) મળે છે, તેથી તેનું આઠમું નામ ઉપદેશ છે.
 (૯) પ્રજ્ઞાપના—તેના દ્વારા, જીવાદિક પદાર્થો જે રૂપે વર્તમાનમાં છે એજ રૂપે પ્રજ્ઞા-
 પિત કરવામાં આવે છે એટલે કે જીવાદિક સમસ્ત પદાર્થોના યથાર્થ સ્વરૂપને
 પ્રજ્ઞાપિત કરવામાં આવે છે, તેથી તેનું નામ પ્રજ્ઞાપના છે. (૧૦) આગમ—આચાર્ય
 પરમ્પરાથી તે આદ્યું આવે છે, તેથી તેનું નામ “આગમ” છે. આ બધા શ્રુતના

इत्थं श्रुताधिकारमुक्त्वा सम्-ति-‘खंधं निखिविस्सामि’ इति कथना-
नुसारेण स्कन्धाधिकार उच्यते—

मूलम्--से किं तं खंधे ? खंधे चउव्विहे पणत्ते, त जहा-
नामखंधे ठवणाखंधे दव्वखंधे भावखंधे ॥ सू० ४५ ॥

છાયા-અથ કોડસૌ સ્કન્ધઃ ? સ્કન્ધશ્ચતુર્વિધઃ પ્રજ્ઞસઃ, તદ્યથા-નામસ્ક-
ન્ધઃ, સ્થાપનાસ્કન્ધઃ દ્રવ્યસ્કન્ધઃ, ભાવસ્કન્ધઃ ॥ સૂ. ૪૫ ॥

टीका-‘से किं तं’ इत्यादि--

अस्य व्याख्या स्पष्टा, नवरं-स्कन्धःपरमाण्वादि समुदायः ॥४५॥

चाहिये । (से तं सुयं) इस तरह इन श्रुतादि नामों से यह श्रुत कहा गया है ॥सूत्र४४॥

अब सूत्रकार (खंधं निखिविस्सामि) इस कथन के अनुसार स्कन्धाधि-
कार प्रारंभ करते हैं—

शब्दार्थः-(से किं तं खंधे) हे भदन्त ! स्कंधका क्या स्वरूप है ?
(खंधेचउव्विहे पणत्ते)

उत्तरः-स्कंधका स्वरूप प्रकट करने के लिये उस के चार प्रकार प्रज्ञप्त
हुए हैं-(तं जहा) वे इस तरह से हैं-(नामखंधे) नाम स्कंध (ठवणा खंधे)
स्थापना स्कंध (दव्वस्कंधे) द्रव्यस्कंध (भावखंधे) और भावस्कंध । स्कंध
शब्द का अर्थ है पुद्गल परमाणुओं का सश्लेष । इसकी व्याख्या पहिले
की गई व्याख्या की तरह ही जाननी चाहिये ।

પર્યાયવાચી શબ્દો છે, એમ સમજવું બેઠ્યો. (સે તં સુયં) આ પ્રકારે અહીં
શ્રુત્યું નિરૂપણ સમાપ્ત થાય છે. ॥ સૂ. ૪૪ ॥

હવે સૂત્રકાર ‘સ્કંધં નિખિવિસ્સામિ’ આ કથન અનુસાર સ્કન્ધાધિકારનો
પ્રારંભ કરે છે—‘સે કિં તં સ્કંધે’ ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ-(સે કિં સ્કંધે ?) શિષ્ય શુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભગવન્ !
સ્કન્ધનું કેવું સ્વરૂપ હોય છે ?

ઉત્તર-(સ્કંધે ચઉવ્વિહે પણત્તે) સ્કન્ધના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવા નિમિત્તે
તેના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે. (તંજહા) તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે-(નામસ્કંધે, ઠવણા-
સ્કંધે, દવ્વસ્કંધે, ભાવસ્કંધે) (૧) નામસ્કન્ધ, (૨) સ્થાપનાસ્કન્ધ, (૩) દ્રવ્યસ્કન્ધ
અને (૪) ભાવસ્કન્ધ સ્કન્ધ શબ્દનો અર્થ “પુદ્ગલ પરમાણુઓના સંશ્લેષ” સમ-
જવો આ સૂત્રની વ્યાખ્યા આગળ કહેલી વ્યાખ્યા પ્રમાણે સમજવી

ભાવાર્થ:—રૂપ, ગંધ, રસ, ઓર સ્પર્શ' જિસમેં પાયે જાતે હૈં ઉસકા નામ પુદ્ગલ હૈ। યહ પુદ્ગલ અણુ ઓર સ્કંધ કે ભેદ સે દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ। કિતને હી પ્રકાર કે પુદ્ગલ કયોં ન હોં, વે સવ્ર इन दो भागों में समा जाते हैं। जो પુદ્ગલદ્રવ્ય અતિસૂક્ષ્મ હૈ—જિસ કા ભેદ નહીં હો સકતા હૈ इसी कारण से जो स्वयं अपना ही आदि अथवा अपना ही अंत और अपना ही मध्य है, दो स्पर्श एक रस, एक गंध, और एक वर्ण से युक्त है वह परमाणु है। यद्यपि पुद्गल रंध्य में स्निग्ध रूक्ष में से एक, शीत उष्ण में एक मृदु कठोर में से एक, और लघु गुरु में से एक, ये चार स्पर्श होते हैं, किन्तु परमाणु के अतिसूक्ष्म होने के कारण उसमें मृदु कठोर लघु और गुरु, इन चार स्पर्शों का ग्रन्थ ही नहीं उठता है। इसलिये इसमें केवल दो स्पर्श माने गये हैं। इससे अन्य द्रव्यणुक आदि स्कंध बनते हैं। इसलिये यह उनका कारण है। कार्य नहीं।

यद्यपि द्रव्यणुक आदि स्कंधों का भेद होने से परमाणु की उत्पत्ति देखी जाती है इसलिये यह भी कथञ्चित् कार्य ठहरता है परन्तु मौलिक रूप में यह पुद्गलकी स्वाभाविक दशा है इसलिये वस्तुतः यह किसी का कार्य नहीं है। इसका ज्ञान इन्द्रियों से नहीं होता—किन्तु कार्य विज्ञ द्वारा इसका अनुमान ज्ञान

ભાવાર્થ:—જેમાં રૂપ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શનો સદ્ભાવ હોય છે, તેનું નામ પુદ્ગલ છે. તે પુદ્ગલના બે ભેદ કહ્યા છે—(૧) આણુ અને (૨) સ્કન્ધ ભેદે. બંને તેટલા પ્રકારના પુદ્ગલો હોય પણ તે બધાનો આ બે ભેદોમાં સમાવેશ થઈ જાય છે.

જે પુદ્ગલ દ્રવ્ય અતિ સૂક્ષ્મ હોય છે, જેના વિભાગ થઈ શકતા નથી, અને તે કારણે જે પોતે જ પોતાના આદિરૂપ, પોતાના અન્તરૂપ અને પોતાના મધ્યરૂપ હોય છે, જે બે સ્પર્શ, એક રસ, એક ગંધ અને એક વર્ણથી યુક્ત હોય છે, એવાં પુદ્ગલ દ્રવ્યને પરમાણુ કહે છે. જો કે પુદ્ગલ સ્કન્ધમાં સ્નિગ્ધ અને કઠોર આ બે સ્પર્શોમાંનો એક સ્પર્શ, શીત અને ઉષ્ણ, આ બેમાંથી એક, મૃદુ અને કઠોર આ બે સ્પર્શોમાંથી એક લઘુ અને ગુરુ, આ બેમાંથી એક, એમ ચાર સ્પર્શોનો સદ્ભાવ હોય છે, પરન્તુ પરમાણુ અતિ સૂક્ષ્મ હોવાને લીધે તેમાં મૃદુ, કઠોર, લઘુ અને ગુરુ, આ ચાર સ્પર્શોના સદ્ભાવનો તો ગ્રન્થ જ ઉદ્ભવતો નથી. તેથી તેમાં માત્ર બે સ્પર્શોનો જ સદ્ભાવ માનવામાં આવ્યો છે. તે પરમાણુમાંથી અન્ય દ્રવ્યણુક (બે આણુવાળા) આદિ સ્કન્ધ બને છે. તેથી સ્કન્ધો બનાવવામાં તે કારણભૂત બને છે—કાર્યભૂત બનતું નથી. જો કે દ્રવ્યણુક આદિ સ્કન્ધોનો વિભાગ થવાથી પરમાણુની ઉત્પત્તિ થતી બેવામાં આવે છે, તેથી તે પણ ક્યારેક કાર્યરૂપ બને છે. પરન્તુ મૌલિક રૂપે પુદ્ગલની તે સ્વાભાવિક દશા છે, તેથી વસ્તુતઃ તે કોઈના કાર્યરૂપ નથી. તે પરમાણુનું જ્ઞાન ઇન્દ્રિયોથી થતું નથી, પરન્તુ કાર્યલિંગ

મૂલમ્—નામદ્વવળાઓ પુઢ્વભણિયાણુક્રમેણ ભાણિયવ્વાઓ ॥સૂ. ૪૬॥

ટીકા—નામસ્થાપને પૂર્વભણિતાનુક્રમેણ ભણિતવ્યે ॥ સૂ. ૪૬ ॥

ટીકા—‘નામદ્વવળાઓ’ इत्यादि—

નામસ્કન્ધઃ સ્થાપનાસ્કન્ધશ્ચ નામઆવશ્યકસ્થાપનાઽવશ્યક—પ્રતિપાદકઃ
સૂત્રાઽનુસારેણ વક્તવ્યૌ । इति ॥સૂ. ૪૬॥

સે બોધ હોતા હૈ । સ્કન્ધ દો ઘાં દો સે અધિક પરમાણુઓં કે સંશ્લેષ સે
બનતા હૈ । દ્વયણુક તો પરમાણુઓં કે સંશ્લેષ સે હી બનતા હૈ—પરંતુ ત્ર્યણુક
આદિ સ્કન્ધ પરમાણુઓં કે સંશ્લેષ સે મી બનતે હૈ તથા પરમાણુ ઓર સ્કન્ધ
કે સંશ્લેષ સે યા વિવિધ સ્કન્ધોં કે સંશ્લેષ સે મી બનતે હૈ । ઇસલિયે અ
ન્યસ્કન્ધ કે સિંગા શેષ સબ સ્કન્ધ પરસ્પર કાર્ય મી હૈ ઓર કારણ મી । જિન
સ્કન્ધોં સે બનતે હૈ ઉનકે કાર્ય હૈ ઓર જિन्हૈં બનાતે હૈ ઉનકે કારણ મી ॥સૂત્ર ૪૫॥

“નામ દ્વવળાઓ પુઢ્વભણિયાણુક્રમેણ ભાણિય વ્વાઓ” इत्यादि ॥ સૂત્ર ૪૬ ॥

શબ્દાર્થ—(નામ મદ્વવળાઓ પુઢ્વભણિયાણુક્રમેણ ભાણિયવ્વાઓ) નામ
સ્કન્ધ ઓર સ્થાપનાસ્કન્ધ કા સ્વરૂપ નામ આવશ્યક ઓર સ્થાપના આવશ્યક કે
સ્વરૂપ કા પ્રતિપાદન કરનેવાલે સૂત્રોં કે અનુસાર જાનના ચાહિયે । વિશેષતા
કેવલ ઇતની હી હૈ । કિ નામ આવશ્યક કી જગહ નામસ્કન્ધ ઓર સ્થાપના આવશ્યક
કિ જગહ સ્થાપના સ્કન્ધ લગાકર સૂત્રોં કા અનુગમ કરના ચાહિયે ॥સૂત્ર ૪૬॥

દાસ તેનો અનુમાન જાનથી બોધ થાય છે. બે અથવા બેથી વધારે પરમાણુઓના
સંશ્લેષથી સ્કન્ધ બને છે, દ્વયણુક સ્કન્ધ તો પરમાણુઓના સંશ્લેષથી જ બને છે,
પણ ત્ર્યણુક (ત્રણ આણુવાળો) આદિ સ્કન્ધો પરમાણુઓના સંશ્લેષથી પણ બને છે
અથવા વિવિધ સ્કન્ધોના સંશ્લેષથી પણ બને છે. તેથી દ્વયણુક સ્કન્ધ સિવાયના
બાકીના બધાં સ્કન્ધો પરસ્પર કાર્ય પણ છે અને કારણ પણ છે—જે સ્કન્ધોમાંથી
તેઓ બને છે તે સ્કન્ધોના કાર્યરૂપ અને જે સ્કન્ધોને તેઓ બનાવે છે તેમના
કારણરૂપ છે, એમ સમજવું. ॥ સૂ. ૪૫ ॥

“નામદ્વવળાઓ પુઢ્વભણિયાણુક્રમેણ ભાણિયવ્વાઓ” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(નામદ્વવળાઓ પુઢ્વભણિયાણુક્રમેણ ભાણિયવ્વાઓ) નામસ્કન્ધ
અને સ્થાપનાસ્કન્ધના સ્વરૂપનું નિરૂપણ નામ આવશ્યક અને સ્થાપના આવશ્યકના
સ્વરૂપનું પ્રતિપાદન કરનારાં સૂત્રો પ્રમાણે જ સમજવું નહીં. એટલી જ વિશેષતા
સમજવાની છે કે નામ આવશ્યકને બદલે નામસ્કન્ધ અને સ્થાપના સ્કન્ધ સૂત્રોનું
કથન થવું જોઈએ. ॥ સૂત્ર ૪૬ ॥

અથ દ્રવ્યસ્કન્ધં નિરૂપયતિ—

મૂળમ્—સે કિં તં દઽવ્વસ્થંધે ? દઽવ્વસ્થંધે દુવિહે પળ્લત્તે, તં જહા
આગમઓ ય નોઆગમઓ ય । સે ક ત આગમઓ દઽવ્વસ્થંધે ?
આ મઓ દઽવ્વસ્થંધે—જસ્સ ણં સ્થંધેત્તિ પ સિલ્લિસ્યં, સેસં જહા
દ વાવસ્સણ તહા માણિયવ્વં । નવર સ્થધાભિલાવો જાવ સે કિં તં
જાણયસરીરભવિયસરીર ઇરિત્તે દઽવ્વસ્થંધે ! જાણયતરીરવઠ્ઠિત્તે દઽવ્વ-
સ્થંધ તિવિહે પળ્લત્તે, તં જહા—સચ્ચિત્ત અચ્ચિ મીસણ ॥સૂ. ૪૭॥

છાયા—અથ કોઽસૌ દ્રવ્યસ્કન્ધઃ ? દ્રવ્યસ્કન્ધો દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથા—
આગમતશ્ચ નોઆગમતશ્ચ । અથ કોઽસૌ આગમતો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ ? આગમતો દ્રવ્ય-
સ્કન્ધઃ—યસ્ય સ્થલુ સ્કન્ધેતિ પદં શિક્ષિતમ, શેષં યથા દ્રવ્યાવશ્યકે તથા

અવ સૂત્રકાર દ્રવ્યસ્કંધ કા નિરૂપણ કરતે હૈ—

“સે કિં તં દઽવ્વસ્થંધે” ઇત્યાદિ ॥ સૂત્ર ૪૭ ॥

શબ્દાર્થઃ—(સે) હે મદન્ત ! (તં) પૂર્વપ્રક્રાન્ત (દઽવ્વસ્થંધે) દ્રવ્યસ્કંધ (કિં)
કયા હૈ ?

ઉત્તર—(દઽવ્વસ્થંધે દુવિહે પળ્લત્તે) દ્રવ્યસ્કંધ દો પ્રકાર કા કહા ગયા
હૈ । (તંજહા) જૈસે (આગમઓ ય નોઆગમઓ ય) ? એક આગમ કો લેકર ઓર
દૂસરા નોઆગમ કો લેકર । (સે કિં તં આગમઓ દઽવ્વસ્થંધે) આગમ સે દ્રવ્ય
સ્કંધકા વપા સ્વરૂપ હૈ ? (આગમઓ દઽવ્વસ્થંધે જસ્સ ણં સ્થંધેત્તિ પયં

હવે સૂત્રકાર દ્રવ્યસ્કન્ધનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં દઽવ્વસ્થંધે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (તં) પૂર્વ પ્રસ્તુત (દઽવ્વ-
સ્થંધે) દ્રવ્યસ્કન્ધનું (કિં) કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—(દઽવ્વસ્થંધે દુવિહે પળ્લત્તે) દ્રવ્યસ્કન્ધ બે પ્રકારના કહ્યા છે (તંજહા)
તે બે પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે—(૧) (આગમઓ ય, નોઆગમઓય) (૧) આગ-
મની અપેક્ષાએ દ્રવ્યસ્કન્ધ અને (૨) નોઆગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યસ્કન્ધ.

(સે કિં તં આગમઓ દઽવ્વસ્થંધે ?) હે ભગવન્ ! આગમને આશ્રિત કરીને
દ્રવ્યસ્કન્ધનું કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—(આગમઓ દઽવ્વસ્થંધે જસ્સ ણં સ્થંધે તિ પયં સિલ્લિસ્યં સેસં
જહા દઽવાવસ્સણ તહા માણિયવ્વં) આગમની અપેક્ષાએ આગમને આશ્રિત કરીને

भणितव्यम् । नवरं स्कन्धाभिलाषो यावत्-अथ कोऽसौ ज्ञायकशरीरभव्यशरीर-
व्यतिरिक्तो द्रव्यस्कन्धः ? ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तो द्रव्यस्कन्धस्त्रिविधः
प्रपञ्चः, तद्यथा-सचित्तः अचित्तो मिश्रकः ॥ ४७ ॥

टीका—‘से किं तं’ इत्यादि । व्याख्या निगदसिद्धा ॥सू० ४७॥

सिक्खियं सेसं जहा दव्वावस्सए तहा भाणियव्वं) उत्तर-आगम से-आगम को
आश्रित करके— द्रव्यस्कन्ध का स्वरूप इस प्रकार से है, जिस साधु आदि ने
स्कन्ध इस पदके अर्थ को गुरु के मुख से सीख लिया है यहां से लेकर “ठियं-
जियं” आदि शेष पदों को यहां कहना चाहिये और उनका अर्थ जिस
प्रकार से द्रव्यावश्यक के वर्णन में कहा गया है वैसा ही अर्थ यहां पर उस
पाठका लगा लेना चाहिये । इस तरह स्कन्ध संवन्धी आलाप “अथ कोऽसौ
ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तो द्रव्यस्कन्धः” यहां तक समझलेना चाहिये ।
(जाणयसरीरभवियसरीरवहरित्ते दव्वखंधे तिविहे पणत्ते) ज्ञायकशरीर भव्य-
शरीर से व्यतिरिक्त द्रव्यस्कन्ध तीन प्रकार का कहा गया है । (तंजहा)
वे प्रकार ये हैं (सचित्तं अचित्तं भीसए) सचित्त, अचित्त और मिश्र ।

भावार्थः—शिष्य ने गुरुमहाराज से पूछा है कि हैं भदन्त ! द्रव्य स्कन्ध का
क्या स्वरूप है ? तब गुरु महाराज ने उसे समझाने के लिये ऐसा कहा कि
हे शिष्य । द्रव्य स्कन्ध का स्वरूप दो प्रकार से निर्धारित किया गया है—१-

द्रव्यस्कन्धनुं स्वइय आ प्रकारनु छे—“ जे साधुओ ‘स्कन्ध, आ पढना अर्थ’ने गुरुनी
सभीये शीभी दीधो छे,” अहीथी शङ्क करीने “ठियं जियं” आदि द्रव्यावश्यक
सूत्रमां आवेदा पढोने अही पणु अहुणु करवा जेधओ. ते पढोने जे प्रकारनो
अर्थ द्रव्यावश्यक सूत्रमां करवामां आव्यो छे, ते प्रकारनो अर्थ अही पणु
अहुणु थवो जेधओ. आ प्रकारे स्कन्ध संवन्धी “अथ कोऽसौ ज्ञायकशरीर-
भव्यशरीरव्यतिरिक्तो द्रव्यस्कन्धः” अही सुधीनु अहुणु थवु जेधओ.

(जाणयसरीरभवियसरीरवहरित्ते दव्वखंधे तिविहे पणत्ते) ज्ञायकशरीर
अने लव्यशरीर व्यतिरिक्त (थी लित्त) द्रव्यस्कन्ध त्रणु प्रकारनो कह्यो छे-
(तं जहा) ते प्रकारे आ प्रमाणे छे—

(सचित्तं अचित्तं भीसए) (१) सचित्त (२) अचित्त अने (३) मिश्र.

भावार्थ—शिष्य गुरु महाराजने जेवो प्रश्न पूछि छे के ‘हे लगवन् ! द्रव्यस्कन्ध-
नुं स्वइय केवुं छे?’ त्वारे गुरु तेने ते समजववा भाटे लेह प्रलेहपूर्वक तेना
स्वइयनुं नीये प्रमाणे निरूपणु करे छे.

तेजो तेने कहि छे के द्रव्यस्कन्धनुं स्वइय जे प्रकारे निर्धारित करी शक्य छे

આગમ કો આશ્રિત કરકે ઓર દૂમરા નાઆગમ કો આશ્રિત કરકે । इनमें आगम को आश्रित करके द्रव्यस्कंध का स्वरूप जैसा पीछे १४ वें सूत्र में आगम को आश्रित करके द्रव्यावश्यक का स्वरूप कहा गया है—वैसा ही जानना चाहिये । जिसका तात्पर्य यह है कि जिस साधु आदि ने स्कंध के स्वरूप को प्रतिपादन करनेवाले शास्त्र को अच्छी तरह से जान तो लिया है परन्तु वह उसमें उपयाग से वर्जित है ऐसा वह साधु आगम की अपेक्षा द्रव्यस्कंध ज्ञायकशरीर द्रव्यस्कंध, भव्यशरीर द्रव्यस्कंध, और इन दोनों से व्यतिरिक्त द्रव्यस्कंध इस तरह से ३ तीन प्रकार का है । इनमें पहिले पदों का स्वरूप १६, १७, १८, इन तीन सूत्रों द्वारा पीछे स्पष्ट किया गया है । वहां आवश्यक पद की जगह स्कंध पद लगाकर इसे समझलेना चाहिये । इसका सारांश यह है कि स्कंधशास्त्र के ज्ञाता का जो निर्जिव शरीर है वह नोआगम की अपेक्षा ज्ञायकशरीर है । तथा आगे जिस शरीर से स्कंधशास्त्र को वह

(૧) આગમને આશ્રિત કરીને અને (૨) નો આગમને આશ્રિત કરીને.

આગમનો આધાર લઇને દ્રવ્યસ્કન્ધનું કેવું સ્વરૂપ છે તે હવે સમજાવવામાં આવે છે. ૧૪માં સૂત્રમાં આગમનો આધાર લઇને દ્રવ્યાવશ્યકનું જેવું સ્વરૂપ કહેવામાં આવ્યું છે. એવું જ આગમને આશ્રિત કરીને દ્રવ્યસ્કન્ધનું સ્વરૂપ સમજવું. આ કથનનો સંક્ષિપ્ત સારાંશ નીચે પ્રમાણે સમજવો.

જે સાધુ આદિએ સ્કન્ધના સ્વરૂપનું પ્રતિપાદન કરનારા શાસ્ત્રને સારી રીતે જાણી લીધું છે, પરન્તુ તે તેમાં ઉપયોગ પરિણામથી રહિત છે, એવો તે સાધુ આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યસ્કન્ધ રૂપ છે. નોઆગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યસ્કન્ધના ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે (૧) જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યસ્કન્ધ, (૨) ભવ્યશરીર દ્રવ્યસ્કન્ધ અને (૩) ઉપયુક્ત બન્નેથી વ્યતિરિક્ત (લિપ્ત એવો) દ્રવ્યસ્કન્ધ આ ત્રણ પ્રકારોમાંના પહેલા એ પ્રકારોનું સ્વરૂપ સૂત્ર ૧૭ ૧૮ અને ૧૯માં સૂત્રમાં કહ્યા અનુસાર જ સમજવું જોઇએ. ત્યાં ‘આવશ્યક’ શબ્દની જગ્યાએ ‘સ્કન્ધ’ શબ્દ મૂકવાથી સ્કન્ધ વિષયક કથન બની જશે. તે સૂત્રોનો સારાંશ નીચે પ્રમાણે છે સ્કન્ધશાસ્ત્રના જ્ઞાતાનું જે નિર્જીવ શરીર છે તે નોઆગમની અપેક્ષાએ જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યસ્કન્ધ રૂપ છે, તથા જે જીવ ગૂંહીત શરીર દ્વારા ભવિષ્યમાં સ્કન્ધશાસ્ત્રનો જ્ઞાતા બનવાનો છે, તેના શરીરને નોઆગમ ભવ્યશરીર દ્રવ્યસ્કન્ધ રૂપ સમજવું.

હવે આ બન્નેથી વ્યતિરિક્ત (લિપ્ત) જે દ્રવ્યસ્કન્ધ છે, તેનું સ્વરૂપ સમજાવ-

તત્ર સચિત્તરૂપં પ્રથમં ભેદં પ્રરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં સચિત્તે દઢ્વસ્વંધે ? સચિત્ત દઢ્વસ્વંધે અળેગ-
વિહે પળ્ણત્તે, તં જહા—હયસ્વંધે ગયસ્વંધે કિન્નરસ્વંધે કિંપુરિસ્વંધે મહો-
રગસ્વંધે ગંધઢ્વસ્વંધે ઉસમસ્વંધે । સે તં સચિત્તે દઢ્વસ્વંધે ॥સૂ. ૪૮॥

છાયા—અથ કોઽસૌ સચિત્તો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ ? સચિત્તો દ્રવ્યસ્કન્ધોઽનેકવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ,
ત યથા—હયસ્કન્ધો ગજસ્કન્ધઃ કિન્નરસ્કન્ધઃ કિમ્પુરુષસ્કન્ધો મહોરગસ્કન્ધો ગન્ધર્વ-
સ્કન્ધ વૃષભસ્કન્ધઃ । સ ઇષ સચિત્તો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ ॥સૂ. ૪૮॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ । અથ કોઽસૌ સચિત્તો
દ્રવ્યસ્કન્ધઃ ? ઇતિ । ઉત્તરમાહ—‘સચિત્તે દઢ્વસ્વંધે’ ઇત્યાદિ । ચિત્તં ચેતના-
સંજ્ઞાનમુપયોગોઽવધાનં મનોવિજ્ઞાનમિતિ પર્યાયાઃ, ચિત્તેન સહ વર્તતે સચિત્તઃ,
દ્રવ્યસ્કન્ધઃ અનેકવિધઃ=વ્યક્તિભેદાત્ અનેકપ્રકારકઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથા—હયસ્કન્ધઃ
હયઃ=અશ્વઃ, સ ઇવ વિશિષ્ટૈકપરિણામપરિણતત્વાત્ સ્કન્ધો હયસ્કન્ધઃ, ઇવ
ગજસ્કન્ધઃ, કિન્નરાદયો ગન્ધર્વાન્તાઃ વ્યન્તરવિશેષાઃ । વૃષભસ્કન્ધઃ—વૃષભઃ—

સીંચેગા વહ મવ્યશરીર દ્રવ્યસ્કંધ હૈ ।—અવ ઇન દોનોં સે વ્યતિરિક્ત જો દ્રવ્યસ્કંધ
હૈ વહ સચિત્ત, અચિત્ત ઓર મિત્ર કે ભેદ સે ૩ ત્રીન પ્રકાર કાહૈ ॥સૂત્ર ૪૭॥

અવ સૂત્રકાર સચિત્ત રૂપ પ્રથમ ભેદ કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

“સે કિં તં સચિત્તે દઢ્વસ્વંધે” ઇત્યાદિ । ॥ સૂત્ર ૪૮ ॥

શબ્દાર્થઃ—(સે કિં તં સચિત્તે દઢ્વસ્વંધે) હે ભદન્ત ! પૂર્વપ્રકાન્ત
(પ્રારંભ ક્રિયા હુઆ) સચિત્ત દ્રવ્યસ્કંધ કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તરઃ—(સચિત્તે દઢ્વસ્વંધે અળેગવિહે પળ્ણત્તે) સચિત્ત દ્રવ્યસ્કંધ
અનેક પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । (તંજહા) જૈસે—(હયસ્વંધે, ગયસ્વંધે કિન્નર-

વવામાં આવે છે તેના નીચે પ્રમાણે ત્રણ ભેદ કહ્યા છે (૧) સચિત્ત, (૨) અચિત્ત
અને (૩) મિશ્ર. ॥ સૂ. ૪૭ ॥

હવે સૂત્રકાર સચિત્ત રૂપ પહેલા ભેદની પ્રરૂપણા કરે છે.

“સે કિં તં સચિત્તે દઢ્વસ્વંધે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થઃ—(સે કિં તં સચિત્તે દઢ્વસ્વંધે?)

શિષ્ય ગુરુ મહારાજને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભદન્ત ! નોઆગમ શાયક-
શરીર અને લબ્યશરીર વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યસ્કન્ધના પ્રથમ ભેદરૂપ સચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધનું
કેવું સ્વરૂપ કહ્યું છે.

ઉત્તર—(સચિત્તે દઢ્વસ્વંધે અળેગવિહે પળ્ણત્તે) સચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ અનેક
પ્રકારનો કહ્યો છે. (તંજહા) જેમ કે (હયસ્વંધે, ગયસ્વંધે, કિન્નરસ્વંધે, કિંપુરિસ-

બલીવર્દઃ સ એવ સ્કન્ધઃ વૃષભસ્કન્ધઃ । જીવાનાં શરીરૈઃ સહ વથંચિદમેદે સત્યપિ
સચિત્તસ્કન્ધાધિકારાત્ જીવાનામેવ ચ પરમાર્થતઃ સચેતનત્વાદિહ હયાદિસમ્બન્ધિનો
જીવા એવ વિવક્ષિતા નતુ તદધિષ્ઠિતશરીરાણીતિ વોધ્યમ્ । નનુ જીવાનાં સ્કન્ધ-
ત્વં નોપપદ્યતે, પુદ્ગલપ્રચયસ્યૈવ સ્કન્ધત્વાદિતિ ચેન, જીવાનાં પ્રત્યેકમસંખ્યેય-

સ્કન્ધે, કિંપુરિસસ્કન્ધે, મહોરગસ્કન્ધે, ગંધવ્વસ્કન્ધે, ઉસમસ્કન્ધે) હયસ્કન્ધ, ગજ-
સ્કન્ધ, કિન્નરસ્કન્ધ, કિંપુરુષ સ્કન્ધ, મહોરગસ્કન્ધ, ગંધર્વસ્કન્ધ, વૃષભસ્કન્ધ । ચેતના,
સંજ્ઞાન, ઉપયોગ, અવધાન, મન ઓર વિજ્ઞાન યે સવ ચિત્ત કે પર્યાયવાચી શબ્દ હૈં ।

આ સચિત્ત સે જો યુક્ત હોવા હૈ, ઉસકા નામ સચિત્ત હૈ । યહ સચિત્ત
સ્કન્ધ વ્યક્તિભેદ કી અપેક્ષા અનેક પ્રકાર કા હૈ । હય નામ અશ્વ
ઘોડા—કા યહ પુદ્ગલ પરમાણુઓં કી એક વિશિષ્ટ પર્યાય હૈ । અતઃ યહ
સ્કન્ધ રૂપ હૈ । ઈસી તરહ સે ગજાદિ સ્કન્ધોં કે વિષય મેં મિ જાનના ચાહિયે ।
કિન્નર સે લેકર ગંધર્વ તક કે સ્કન્ધ વ્યન્તરદેવ કે ભેદ હે । વૃષભ નામ
બૈલ કા હૈ જીવોં કા ગૃહીત શરીર કે સાથ વથંચિત્ અમેદ હૈં તો મી
સચિત્તસ્કન્ધ કા અધિકાર હોને સે યહાં ઉન ૨ પર્યાયોં મેં રહે હુએ જીવોં મેં
હી પરમાર્થતઃ સચેતનતા હોને કે કારણ વે હયાદિ સંબન્ધી જીવ હી વિવક્ષિત
હુએ હૈં । તદધિષ્ઠિત શરીર નહીં ।

શંકાઃ—યહાં આપ જીવોં મેં સ્કન્ધતા કો કથન કર રહે હૈ—સો યહ

સ્કન્ધે, મહોરગસ્કન્ધે, ગંધવ્વસ્કન્ધે, ઉસમસ્કન્ધે,) હયસ્કન્ધ, ગજસ્કન્ધ, કિન્નરસ્કન્ધ.

કિંપુરુષસ્કન્ધ, મહોરગસ્કન્ધ, ગંધર્વસ્કન્ધ, અને વૃષભસ્કન્ધ.

ચેતના, સંજ્ઞાન, ઉપયોગ, અવધાન, મન, અને વિજ્ઞાન આ બધા ચિત્તના
પર્યાયવાચી શબ્દો છે. આ ચિત્તથી જે યુક્ત હોય છે તેને સચિત્ત કહે છે. આ
સચિત્તસ્કન્ધ વ્યક્તિભેદની અપેક્ષાએ અનેક પ્રકારના છે. હય એટલે ઘોડો તે પુદ્ગલ
પરમાણુઓની એક વિશિષ્ટ પર્યાય રૂપ છે. તેથી તે સ્કન્ધરૂપ છે. એજ પ્રમાણે
ગજાદિ સ્કન્ધોના વિષયમાં સમજવું.

કિન્નરથી લઈને વ્યન્તર પર્યાન્તના સ્કન્ધો વ્યન્તર દેવોના ભેદરૂપ છે. વૃષભ
એટલે બળદ. જીવોનો ગૃહીત શરીરની સાથે અમુક રૂપે અભેદ છે, છતાં પણ
સચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધનો અધિકાર આવતો હોવાથી અહીં તે તે પર્યાયામાં રહેલા જીવોમાં
જ પરમાર્થઃ (સ્વભાવતઃ) સચેતનતા હોવાને લીધે તે હયાદિ સંબન્ધી જીવો જ
વિવક્ષિત થયા છે તેમાં અધિષ્ઠિત (તદધિષ્ઠિત) શરીરની વિવક્ષા અહીં થઈ નથી.

શંકા—આપ અહીં જીવોમાં જે સ્કન્ધતાનું પ્રતિપાદન કરતું કથન કરી રહ્યા

પ્રદેશાત્મકત્વેન તેષાં સ્કન્ધત્વસ્ય સુપ્રતીતત્વાત્ । નનુ હયસ્કન્ધાદીનામન્યતરેણ
કેનાપ્યુદાહરણેન સિદ્ધં કિમેતૈર્બહુભિરુદાહરણૈરિતિચેત્, ઉચ્યતે—આત્માઽદ્વૈતવાદ—
નિરાકર્તું મિન્નસ્વરૂપવિજાતીયસ્કન્ધબહુવમાશ્રિત્ય ઉદાહરણં પ્રદર્શિતમ્ । અ-
તવાદાગ્રીકારે સિદ્ધસંસારિવ્યવહારોચ્છેદપ્રસંગાત્ । પ્રકૃત્ત્વમુપસંહરન્નાહ-સ એવ
સચિત્તો દ્રવ્યસ્કન્ધ इति ॥સૂ૦ ૪૮॥

કથન જવતા નહીં હૈ । ક્યોંકિ જો પુદ્ગલ પ્રચયરૂપ હોતા હૈ ઉસમૈં હી સ્ક-
ન્ધતા ઘટિત હોતી હૈ । જીવ મૈં નહીં ક્યોંકિ યહ પુદ્ગલ પ્રચયરૂપ નહીં હૈ ।—

ઉત્તર:—ઠીક હૈ પરન્તુ યહ એકાન્તિક વાત નહીં હૈ, કિ પુદ્ગલપ્રચય
મૈં હી સ્કન્ધતા ઘટિત હોતી હૈ । હરેક જીવ અસંખ્યાત પ્રદેશ હૈ । ઇસ અપેક્ષા
ઉનમૈં સ્કન્ધતા સુપ્રતીત હૈ । અતઃ પુદ્ગલપ્રચય રૂપ નહીં હોને પરમી અસં-
ખ્યાત પ્રદેશાત્મકતા રૂપ પ્રચયવાલા હોને સે જીવ મૈં સ્કન્ધતા સુઘટિત હૈ ।

શંકા:—સચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધકી સિદ્ધિ હયસ્કન્ધ આદિ મૈં સે કિસી
એક મી ઉદાહરણ સે જવ હો જાતી હૈ । તવ ફિર ઇન અનેક ઉદાહરણોં કો
યહાં પ્રાટ કરને કી કયા આવશ્યકતા હુઈ? ઉત્તર:— આત્મા દ્વૈતવાદ કો
નિરાકરણ કરને કે લિયે મિન્ન ૨ સ્વરૂપાલે વિજાતીય સ્કન્ધોં કી અનેકતા
લેકર સૂત્રકારને ઇન ઉદાહરણોં કો દિશ્વલાયા હૈ ।

યદિ કેવલ અદ્વૈતવાદ કો અંગીકાર કિયા જાવે તો સિદ્ધ ઓર સંસારી

એવે કથન ઉચિત લાગતું નથી, કારણ કે જે પુદ્ગલપ્રચય રૂપ હોય તેમાં જ
સ્કન્ધતા ઘટાવી શકાય છે જીવમાં સ્કન્ધતા ઘટાવી શકાતી નથી કારણ કે તે
પુદ્ગલપ્રચય રૂપ નથી.

ઉત્તર “પુદ્ગલપ્રચયમાં જ સ્કન્ધતા ઘટિત થાય છે, એવી કોઈ એકાસ્તિક વાત
જ અહીં પ્રતિપાદિત થઈ નથી. પ્રત્યેક જીવ અસંખ્યાત પ્રદેશયુક્ત હોય છે. તે
દૃષ્ટિએ વિચાર કરવામાં આવે તો તેમાં સ્કન્ધતા સુપ્રતીત થાય છે. તેથી પુદ્ગલ-
પ્રચય રૂપ નહીં હોવા છતાં પણ અસંખ્યાત પ્રદેશાત્મકતા રૂપ પ્રચયવાળો હોવાને
કારણે જીવમાં સ્કન્ધતા સુઘટિત જ છે ?

શંકા—હયસ્કન્ધ આદિ સ્કન્ધોમાંથી કોઈ પણ એક સ્કન્ધના ઉદાહરણ દ્વારા
સચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધનું પ્રતિપાદન કરી શકાય એમ છે. છતાં અહીં અનેક ઉદાહરણો
આપવા પાછળ સૂત્રકારનો શો હેતુ રહેલો છે.

ઉત્તર—આત્માદ્વૈતવાદનું નિરાકરણ કરવાને માટે લિન્ન લિન્ન સ્વરૂપવાળા
વિજાતીયસ્કન્ધોની અનેકતાની અપેક્ષાએ સૂત્રકારે આ ઉદાહરણો પાતાવ્યા છે. જો
માત્ર અદ્વૈતવાદનો જ સ્વીકાર કરવામાં આવે, તો સિદ્ધ અને સંસારીનો જે વ્યવ-
હાર છે તેના ઉચ્છેદનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થશે.

अचित्तद्रव्यस्कन्धं निरूपयति—

मूलम्—से किं तं अचित्ते दव्वखंधे ? अचित्तं दव्वखंधे अणेगविहे पणत्तं, तं जहा—दुपएसिए तिपएसिए जाव दसपएसिए संखिज्जपएसिए असंखिज्जपएसिए अणंतपएसिए । से तं अचित्ते दव्वखंधे ॥ सू० ४९ ॥

ज्ञाया—अथ कोऽसावचित्तो द्रव्यस्कन्धः ? अचित्तो द्रव्यस्कन्धः—अनेकविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—द्विप्रदेशिः त्रिप्रदेशिको यावत् दशप्रदेशिकः संख्येयप्रदेशिकः असंख्येयप्रदेशिकः अनन्तप्रदेशिकः । स एषः अचित्तो द्रव्यस्कन्धः । ४९।

का जो व्यवहार है उसके उच्छेद का प्रसंग प्राप्त होगा । (से तं सचित्तं दव्वखंधे) इस प्रकार से यह सचित्त द्रव्यस्कन्ध है । ॥ सूत्र ४८ ॥

अब सूत्रकार अचित्त द्रव्यस्कन्धों का निरूपण करते हैं—

“से किं तं अचित्ते दव्वखंधे” इत्यादि । ॥ सूत्र ४९ ॥

शब्दार्थः—(से किं तं अचित्ते दव्वखंधे) हे भदन्त ! अचित्त द्रव्यस्कन्ध का क्या स्वरूप है ? (अचित्ते दव्वखंधे अणेगविहे पणत्ते) उत्तर—अचित्त द्रव्यस्कन्ध अनेक प्रकार का कहा गया है । (तं जहा) जैसे—(दुपएसिए तिपएसिए जाव दसपएसिए संखेज्जपएसिए असंखेज्जपएसिए अणंतपसिए) दो प्रदेशवाला अचित्त द्रव्यस्कन्ध, तीन प्रदेशवाला अचित्तद्रव्यस्कन्ध, यावत् दश प्रदेशवाला अचित्तद्रव्यस्कन्ध, संख्यात प्रदेशवाला अचित्तद्रव्यस्कन्ध, असंख्यात प्रदेशवाला अचित्त द्रव्यस्कन्ध, और अनन्तप्रदेश-

(से तं दव्वखंधे) आ प्रकारे सचित्त द्रव्यस्कन्धना स्वइपत्तुं वल्लुत्तं अह्मीं समाप्तं थाय छे ॥ सू० ४८ ॥

इवे सूत्रकार अचित्त द्रव्यस्कन्धना स्वरेपत्तुं निइपत्तुं करे छे—

“से किं तं अचित्त दव्वखंधे” इत्यादि—

शब्दार्थः—(से किं तं अचित्ते दव्वखंधे ?) शिष्य गुरुने ओवे प्रश्न करे छे के छे लगवन्त ! पूर्वप्रस्तुत अचित्त द्रव्यस्कन्धत्तुं स्वइप केवुं छे ?

उत्तर—(अचित्ते दव्वखंधे अणेगविहे पणत्ते) अचित्तद्रव्यस्कन्ध अनेक प्रकारेना कथ्यो छे. (तं जहा) जेम के...

(दुपएसिए, तिपएसिए जाव दसपएसिए, संखेज्जपएसिए, असंखेज्जपएसिए, अणंतपएसिए) जे प्रदेशवाणे अचित्त द्रव्यस्कन्ध, तेषु प्रदेशवाणे अचित्त द्रव्यस्कन्ध. ओज्ज प्रमाणे हस सुधीना प्रदेशवाणे अचित्त द्रव्यस्कन्ध, संख्यात

દીના—“સે કિ તં” ઇત્યાદિ—

શિષ્યઃ પૂછતિ—અથ કોઽસાવચિત્તો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ ? ઉત્તરમાહ—અચિત્તો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ—અનેકવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ, તથા—દ્વિપ્રદેશિકઃ—પ્રકૃષ્ટઃ પુદ્ગલાસ્તિકાય-દેશઃ પ્રદેશઃ પ્રદેશઃ પરમાણુરિત્યર્થઃ, ઠૌ પ્રદેશૌ યત્ર સ દ્વિપ્રદેશિકઃ—સ્કન્ધઃ । એવં યાવત્—અનન્તપ્રદેશિકઃ સ્કન્ધઃ । સ એવોઽચિત્તો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ ॥ સૂ. ૪૯ ॥

જાણી અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ । યહ “પ્રકૃષ્ટઃ દેશઃ પ્રદેશઃ” હસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુ-સાર સવ સે અલ્પ પરિમાણવાળા પુદ્ગલાસ્તિકાય કા જો દેશ હૈ ઉસકા નામ પ્રદેશ—પરમાણુ—હૈ । સંખ્યાત, અસંખ્યાત ઔર અનન્ત પ્રદેશવાલા પુદ્ગલાસ્તિકાય કા દેશ સ્થાન મૂલરૂપ મૈ પરમાણુ હૈ ।

અનેક પરમાણુઓં કે મેલ સે ત્રયાદિ પ્રદેશો સ્કન્ધ બનતે હૈ । ૧ પુદ્ગલ પરમાણુ મી અસ્તિકાય હસીલિય હૈ કિ વહ નાના સ્કન્ધોં કા ઉત્પાદક હૈ—

ભાવાર્થ—યહાં પર સૂત્રકારને અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ કા સ્વરૂપ કહા હૈ । ઉસમૈં દો પ્રદેશી સ્કન્ધ સે લેકર અનન્તપ્રદેશી સ્કન્ધ તક કે જિતને પુદ્ગલસ્કન્ધ હૈં વે સવ અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ મૈ પરિગણિત હુય હૈં । દો પરમાણુ મિલકર દ્વિપ્રદેશી સ્કન્ધ, ત્રીન પરમાણુ મિલકર ત્રીન પ્રદેશી સ્કન્ધ યાવત્ અનન્ત પરમાણુ મિલકર અનન્ત પ્રદેશી સ્કન્ધ બને હૈં । યે સવ અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ હૈં । ॥ સૂત્ર ૪૯ ॥

પ્રદેશવાળો અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ, અસંખ્યાત પ્રદેશવાળો અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ, અને અનન્ત પ્રદેશવાળો અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ ‘પ્રકૃષ્ટઃ દેશઃ પ્રદેશઃ’ આ વ્યુત્પત્તિ અનુ-સાર સૌથી અલ્પ પરિમાણવાળો પુદ્ગલાસ્તિકાયનો જે દેશ છે તેનું નામ પ્રદેશ પરમાણુ છે સંખ્યાત, અસંખ્યાત અને અનન્ત પ્રદેશવાળા પુદ્ગલાસ્તિકાયનો દેશ (અંશ) મૂળરૂપે પરમાણુ છે.

અનેક પરમાણુઓના મેળથી (સંયોગથી) ત્રયાદિ પ્રદેશી સ્કન્ધ બને છે. એક પુદ્ગલ પરમાણુ પણ વિવિધ સ્કન્ધોનું ઉત્પાદક હોવાને કારણે અસ્તિકાય રૂપ જ છે.

ભાવાર્થ—અહીં સૂત્રકારે અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કર્યું છે. જે પ્રદેશી સ્કન્ધથી લઇને અનન્ત પ્રદેશી સ્કન્ધ પર્યાન્તના જેટલા પુદ્ગલ સ્કન્ધો છે, તે બધાંને અહીં અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ રૂપે ગણાવવામાં આવ્યાં છે. જે પરમાણુ મળીને દ્વિપ્રદેશી સ્કન્ધ, ત્રણ પરમાણુ મળીને ત્રિપ્રદેશી સ્કન્ધ, અને એજ પ્રમાણે ચાર, પાંચ આદિ અનન્ત પર્યાન્તના પરમાણુ મળીને ચાર પ્રદેશી, પાંચ પ્રદેશી આદિ અનન્ત પ્રદેશી પર્યાન્તના સ્કન્ધો બને છે. તે બધાં સ્કન્ધો અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધો છે. ॥ સૂ. ૪૯ ॥

અથ મિશ્રદ્રવ્યસ્કન્ધં નિરૂપયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં મીસણ દવ્વચ્ચંધે ? મીસણ દવ્વચ્ચંધે અણેગ-
વિહે પળણત્ત, તં જહા—મેણાણ અગ્ગિમે ચ્ચંધે, સેણાણ મજ્ઞિમે ચ્ચંધે,
સેણાણ પચ્છિમે ચ્ચંધે, સે તં મીસણ દવ્વચ્ચંધે ॥સૂ. ૫૦

છાયા—અથ કોઽસૌ મિશ્રકો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ ? મિશ્રકો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ—
અનેકવિધઃ પ્રજ્ઞેસઃ, તદ્યથા—સેનાયા અગ્નિમઃસ્કન્ધઃ સેનાયા મધ્યમઃ—સ્કન્ધઃ,
સેનાયાઃ પશ્ચિમઃ સ્કન્ધઃ । સ એવ મિશ્રકો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ ॥સૂ. ૫૦॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि—

અથ કોઽસૌ મિશ્રકો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ ? इति शिष्य प्रश्नः । उत्तरमाह—मिश्रकः—
सचेतनाचेतन संकीर्णो मि :, स एव मिश्रकः, एवंविधो द्रव्यस्कन्धः अनेक

અવ સૂત્રકાર મિશ્રદ્રવ્યસ્કંધ કા વર્ણન કરતે હૈં,—

‘સે કિં તં મીસણ’ इत्यादि । ॥ सूत्र ५०॥

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં મીસણ દવ્વચ્ચંધે) હે ભદ્રન્ત । મિશ્ર દ્રવ્યસ્કંધ કા
કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(મીસણ દવ્વચ્ચંધે અણેગવિહે પળણત્ત) મિશ્રદ્રવ્યસ્કંધ અનેક પ્રકાર
કા કહા ગયા હૈ । (તં જહા) જૈસે—(સેણાણ અગ્ગિમેચ્ચંધે, સેણાણ મજ્ઞિમેચ્ચંધે
સેણાણ પચ્છિમેચ્ચંધે, સે તં મીસણ દવ્વચ્ચંધે) સેના કા અગ્નિમ સ્કંધ, સેના
કા મધ્યમસ્કંધ, સેના કા પશ્ચિમસ્કંધ) ઇસ પ્રકાર સે યહ મિશ્ર દ્રવ્યસ્કંધ હૈ
સચેતન ઓર અચેતન ઇન દોનોં કા મિશ્રણ જહાં હોતા હૈ ડસકા નામ મિશ્ર

હવે સૂત્રકાર મિશ્ર દ્રવ્યસ્કંધનું નિરૂપણ કરે છે—

‘સે કિં તં મીસણ’ इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં મીસણ દવ્વચ્ચંધે) હે ભદ્રન્ત । મિશ્ર દ્રવ્યસ્કંધનું
સ્વરૂપ કેવું છે.

ઉત્તર—(મીસણ દવ્વચ્ચંધે અણેગવિહે પળણત્ત) મિશ્ર દ્રવ્યસ્કંધના અનેક પ્રકાર
કહ્યા છે. (તંજહા) જેમ કે.....

સેણાણ અગ્ગિમે ચ્ચંધે, સેણાણ મજ્ઞિમે ચ્ચંધે, સેણાણ પચ્છિમે ચ્ચંધે, સે તં
મીસણ દવ્વચ્ચંધે) (૧) સેનાનો અગ્નિમ સ્કંધ, (૨) સેનાનો મધ્યમસ્કંધ અને (૩)
સેનાનો પશ્ચિમ (અન્તિમ) સ્કંધ આ પ્રકારનું આ મિશ્ર દ્રવ્યસ્કંધનું સ્વરૂપ છે.

प्रकारकः प्ररूपितः, तद्यथा—सेनाया अग्रिमः स्कन्धः—हस्त्यश्वरथपदातिकवचखड्ग-
कुन्तधानुर्बाणादिसमुदायरूपासेना तस्या अग्रिमः स्कन्धः=अग्रभागो मिश्रकः
स्कन्धः । तथा—सेनाया मध्यमः स्कन्धः पश्चिमः=पृष्ठवर्ती स्कन्धश्च मिश्रकःस्कन्धः ।
हस्त्यादयश्चात्र सचेतनाः, कवचादयश्चाचेतनाः । इत्थं सचेतनाचेतनवत्त्वादत्र मिश्र-
कत्वं बोध्यम् । प्रकृतमुपसंहरन्नाह—स एष मिश्रको द्रव्यस्कन्ध इति सू० ५० ॥

अथ प्रकारान्तरेण ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तं द्रव्यस्कन्धं निरूपयति—

मूलम्—अहवा जाणयसरीरभवियसरीरवइरित्ते दव्वखंधे तिविहे
पणत्ते, तं जहा-कसिणखंधे, अकसिणखंधे अणेगदवियखंधे । सू० ५१ ॥

छाया—अथवा ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तो द्रव्यस्कन्धस्त्रिविधः
प्रज्ञप्तः, तद्यथा—कृत्स्नस्कन्धः, अकृत्स्नस्कन्धः, अनेकद्रव्यस्कन्धः ॥ ५१ ॥

टीका—‘अहवा’ इत्यादि—व्याख्यानिगदसिद्धा ॥ ५१ ॥

है । सेना इन दोनों की संमिश्रणरूप अवस्था है । इसमें हस्ती, अश्व, रथ,
प्यादे, कवच, तलवार, भाला, धनुष, और बाण आदि का संबन्ध रहना है ।
इनका समुदाय ही तो सेना है इसमें हस्ती आदि सचेतन पदार्थ हैं । इन
दोनों का संमिश्रण इसमें रहता है । इसलिये इसे मिश्र द्रव्यस्कन्ध कहा है । सू. ५० ॥

अब दूसरी तरह सूत्रकार ज्ञायकशरीर भव्यशरीर से व्यतिरिक्त द्रव्यस्कंध
का निरूपण करते हैं—“अहवा जाणयसरीरभवियसरीर” इत्यादि । ॥ सूत्र ५१ ॥

शब्दार्थ—(अथवा ज्ञायकशरीर भव्यशरीर से व्यतिरिक्त द्रव्यस्कन्ध तीन
प्रकार कहा गया है । (तं जहा) जैसे कृत्स्नस्कंध, अकृत्स्नस्कंध और अनेक
द्रव्यस्कंध । इसकी व्याख्या पहिले जैसी जाननी चाहिये ॥ सूत्र ५१ ॥

सचेतन અને અચેતન, આ બન્નેનું મિશ્રણ જેમાં થયેલું હોય છે તેને મિશ્ર
કહે છે. સેના આ બન્નેના સંમિશ્રણરૂપ અવસ્થાથી સંપન્ન હોય છે. તેમાં હાથી,
ઘોડા રથ, પાયદળ, કવચ, તલવાર, ભાલા, ધનુષ અને બાણ આદિ સચિત્ત અચિત્ત
પદાર્થોના સદ્ભાવ રહે છે, તેના સમુદાયને જ સેના કહે છે. તેમાં હાથી, ઘોડા,
સૌનિકો આદિ સચેતન પદાર્થો હોય છે, અને તલવાર, કવચ, ભાલા આદિ અચે-
તન પદાર્થો પણ હોય છે. તેમાં સચેતન અને અચેતન, બન્નેનું સંમિશ્રણ રહે છે.
તે કારણે તેને મિશ્ર દ્રવ્યસ્કન્ધ રૂપે અહીં પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે ॥ સૂ. ૫૦ ॥

હવે સૂત્રકાર જ્ઞાયકશરીર અને ભવ્યશરીરથી ભિન્ન એવા તદ્વ્યતિરિક્ત દ્રવ્ય-
સ્કન્ધનું નિરૂપણ બીજી રીતે કરે છે—‘અહવા જાણયસરીરભવિયસરીર’ ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—અથવા જ્ઞાયકશરીર અને ભવ્યશરીરથી ભિન્ન એવા દ્રવ્યસ્કન્ધના
ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે. (તંજહા) તે ત્રણ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(૧) કૃત્સ્નસ્કંધ,
અકૃત્સ્નસ્કંધ અને અनेक द्रव्यस्कन्ध તે ત્રણના સ્વરૂપનું નિરૂપણ હવે પછીના સૂત્રોમાં
કરવામાં આવશે. ॥ સૂ. ૫૧ ॥

તત્રાથભેદં નિરૂપયતિ—

મૂલમ—સે કિં તં કસિણસ્કંધે ? કસિણસ્કંધે સે ચેવ હયસ્કંધે, ગયસ્કંધે । સે ત કસિણસ્કંધે સૂ૦ ૫૨

છાયા--અથ કોઽસૌ કૃત્સ્નસ્કન્ધઃ ? કૃત્સ્નસ્કન્ધઃ સ એવ હયસ્કન્ધો ગજસ્કન્ધો યાવદ્ વૃષભસ્કન્ધઃ । સ એષ કૃત્સ્નસ્કન્ધઃ ॥૫૨॥

ટીકા--શિષ્યઃપૃચ્છતિ--‘સે કિં તં’ इत्यादि ।

અથ કોઽસૌ કૃત્સ્નસ્કન્ધઃ ? ઉત્તરમાહ--કૃત્સ્નસ્કન્ધઃ--જીવાપેક્ષયાં પ્રદેશનાં પરિપૂર્ણત્વાત્ કૃત્સ્નઃ પરિપૂર્ણઃ, સ ચાસૌ સ્કન્ધઃ, અયં તુ સ એવ=પૂર્વોક્ત એવ હયસ્કન્ધો--ગજસ્કન્ધો યાવદ્ વૃષભસ્કન્ધો વિજ્ઞેયઃ ।

નનુ--હયસ્કન્ધાદીનામે ત્રાપિ ઉદાહરણત્વેન નિર્દિષ્ટત્વાત્ સચિત્તસ્કન્ધસ્યૈવ સંજ્ઞાન્તરેણ પ્રકારાન્તરત્વમુક્તમ્, નત્વત્ર જ્ઞાયકશરીરભવઃશરીરવ્યતિરિક્ત

‘સે કિં તં કસિણસ્કંધે’ इत्यादि ॥સૂત્ર ૫૨॥

શબ્દાર્થ--(સે કિં તં કસિણસ્કંધે) હે ભદન્ત કૃત્સ્નદ્રવ્યસ્કંધકા કયા સ્વરૂપ હૈ ? (કસિણસ્કંધે સે ચેવ હયસ્કંધે ગયસ્કંધે જાવ ઉસભસ્કંધે) ઉત્તર--હયસ્કંધ ગજસ્કંધ સે લેકર વૃષભસ્કંધ તક જો સચિત્તસ્કંધ ૪૮ વેં સૂત્ર મેં પ્રકટ કિયા ગયા હૈ--વહી કૃત્સ્નસ્કંધ હૈ । પરિપૂર્ણસ્કંધ કા નામ કૃત્સ્નસ્કંધ હૈ । ઇસ સ્કંધ મેં જીવ કી અપેક્ષા પ્રદેશોં કી પરિપૂર્ણતા રહતી હૈ ।

શંકા--સૂત્રકારને ઇસ કૃત્સ્નસ્કંધ મેં ભી હયાદિકોં કો હી ઉદાહરણરૂપ સે નિર્દિષ્ટ કિયા હૈ । ઓર સચિત્ત દ્રવ્યસ્કંધ મેં ભી ઉન્હેં હી ઉદાહરણરૂપ સે કહા હૈ તો ઇન્કે ઇસ વચન સે યહી જ્ઞાત હોતા હૈ કિ સચિત્ત દ્રવ્યસ્કંધ હી

‘સે કિં તં કસિણસ્કંધે’ इत्यादि—

શબ્દાર્થ--(સે કિં કસિણસ્કંધે?) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભગવન્ ! કૃત્સ્ન દ્રવ્યસ્કંધનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર--(કસિણસ્કંધે સે ચેવ હયસ્કંધે ગયસ્કંધે જાવ ઉસભસ્કંધે) હયસ્કંધ, ગજસ્કંધ આદિ વૃષભસ્કંધ પર્યાન્ના જે સચિત્ત ૪૮માં સૂત્રમાં પ્રકટ કરવામાં આવ્યા છે, એ સચિત્ત સ્કંધો જ કૃત્સ્ન દ્રવ્યસ્કંધ રૂપ છે પરિપૂર્ણ સ્કંધનું નામ કૃત્સ્ન સ્કંધ છે. આ સ્કંધમાં જીવની અપેક્ષાએ પ્રદેશોની પરિપૂર્ણતા રહે છે.

શંકા--સૂત્રકારે આ કૃત્સ્નસ્કંધમાં પણ અશ્વ વિગેરેના ઉદાહરણરૂપથી બતાવેલ છે, અને અચિત્ત દ્રવ્યસ્કંધમાં પણ તેમને જ ઉદાહરણરૂપે પ્રકટ કર્યા છે. તેમના આ કથનથી એજ વાત બાજુવા મળે છે કે સચિત્ત દ્રવ્યસ્કંધને જ અહીં

द्रव्यस्कन्धस्य भेदांतरत्वम् अतः कृत्स्नस्कन्धत्वादेना पुनरभिधानमनर्थकमिति चे
दुर्वाते-पूर्वं सचित्त-द्रव्यस्कन्धाधिकात् तथाऽसम्भविनोऽपि बुद्ध्या निष्कृष्य
उक्ता, इहतु जीवतदधिष्ठित शरीरावयवबलक्षणः समुदायः कृत्स्नस्कन्धत्वेन विव-
क्षित इत्यतोऽभिधेयभेदात् सिद्धं भेदान्तरत्वम् । अस्त्येवं, तथापि हयस्कन्धस्य
कृत्स्नत्वं नोपपद्यते, तदपेक्षया गजस्कन्धस्य बृहत्तरत्वादिति चेन्मैवम्, असंख्येय
प्रदेशात्मको जीवस्तदधिष्ठिताश्चशरीरावयवा इत्येवं रूपः समुदायो हयादिस्कन्धत्वेन
विवक्षित इति जीवस्यासंख्येयप्रदेशात्मकत्वेन सर्वत्र तुल्यतया गजादि स्कन्ध
स्य बृहत्तरत्वासिद्धेः । प्रकृतमुपसहरन्नाह—‘से तं’ इति । स एष कृत्स्नस्कन्ध इति ॥ ५२ ॥

नामान्तर से प्रकारान्तररूप में बहे गये हैं । अतः इस तरह से कृत्स्नस्कन्ध आदि
रूप से—पुनः बथन करना—सचित्त द्रव्यस्कन्ध का विवेचन करना ठीक नहीं है ?

उत्तर सचित्तद्रव्यस्कन्ध में हयादि संबन्धी जीवों की ही उनके शरीर से
उन्हें अपनी बुद्धि द्वारा पृथक् निकालकर विवक्षा हुई है—उन्के शरीर की नहीं
परन्तु इस कृत्स्नस्कन्ध में जीव और जीवाधिष्ठित शरीरावयव इन दोनों रूप जो
समुदाय है उसकी विवक्षा हुई है । इस तरह अभिधेय के भेद से सचित्त
द्रव्यस्कन्ध में और इस कृत्स्नस्कन्ध में परस्पर में भेद है ।

शंका—इस तरह भेद भले रहे—तो भी हय स्कन्ध में कृत्स्नता नहीं
बनती है । क्यों कि हयस्कन्ध की अपेक्षा गजरस्कन्ध बहुत बड़ा होता है ।

उत्तर—ऐसा नहीं है क्योंकि हयादिस्कन्धों में असंख्यातप्रदेश जीव और
इस जीव से अधिष्ठित शरीरावयव इन दोनोंरूप समुदाय विवक्षित है—एक

नामान्तर द्वारा (कृत्स्नस्कन्ध रूप अन्य नाम द्वारा) प्रकट करवाया आवेद छे, तो
सचित्त द्रव्यस्कन्धतुं अही इरीथी कृत्स्नद्रव्यस्कन्धने नामे विवेचन करवुं ते योग्य
गणाय नहीं.

उत्तर—सचित्त द्रव्यस्कन्धमां अश्वदि संबन्धी जिवोनी ज तेमना शरीरथी
तेमने पोतानी (सूत्रकारनी) बुद्धि द्वारा पृथक् (अलग) करी नाणीने-विवक्षा थछ
छे-तेमनां शरीरनी विवक्षा थछ नहीं. परन्तु आ कृत्स्नस्कन्धमां जव अने जवा-
धिष्ठित शरीरावयव आ जने रूप जे समुदाय छे. तेनी विवक्षा थछ छे. आ रीते
अभिधेयना लेहनी अपेक्षाओ सचित्त द्रव्यस्कन्ध अने आ कृत्स्न द्रव्यस्कन्धमां पर-
स्पर लेह छे.

शंका—आ प्रकारने लेह लले होय, छतां पणु हयस्कन्धमां कृत्स्नता घटित
थती थी, कारण के हयस्कन्ध (अश्वस्कन्ध) करतां गजरस्कन्ध घणो मोटो होय छे.

उत्तर—ओवुं कथन योग्य नहीं, कारण के हयादिस्कन्धोमां असंख्यात जव
प्रदेशो अने ते जव वडे अधिष्ठित शरीरावयवो जने रूप समुदाय विवक्षित छे.

અથ—અકુસ્ત્રસ્કન્ધં નિરૂપયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં અકસિણસ્કન્ધે ? અકસિણસ્કન્ધે સો ચેવ દુપ્પ-
સિયાઇસ્કન્ધે જાવ અણંતપ્પેસિણસ્કન્ધે । સે તં અકસિણસ્કન્ધે । સૂ. ૫૩ ॥

જીવ મેં અસંખ્યાત પ્રદેશ હોતા હૈ । ઇસ પ્રકાર અસંખ્યાત પ્રદેશરૂપ સે જીવ
કી સર્વત્ર તુલ્યતા હૈ । અતઃ ગજોદસ્કન્ધો મેં વૃહત્તરતા કી અસિદ્ધિ હૈ ।
(સે તં કસિણસ્કન્ધે) ઇત્થ તરહ યહ કૃત્સ્નસ્કન્ધ કા સ્વરૂપ હૈ ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકારને ઇસ સૂત્ર દ્વારા દૂસરી તરહ સે તદ્વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ
કે ભેદોં કા વચન બિયા હૈ । ઇન મેં જો કૃત્સ્નસ્કન્ધ હૈ ઇસ મેં તત્ ? જીવ ઓર
તત્તર જીવાધિષ્ઠિતશરીરાવયવરૂપસમુદાય વિવક્ષિત હુઆ હૈ । ઇસ તરહ હૃદયસ્કન્ધ
અપને રૂપ સે ગજાદિસ્કન્ધ અપને રૂપ સે અપને ૨ મેં પૂર્ણ હૈ । ઇસલિયે યે
સ્કન્ધ કૃત્સ્નસ્કન્ધ હૈ । આત્મા કો શાસ્ત્રકારોંને અસંખ્યાત પ્રદેશી કહા હૈ ।
યે પ્રદેશ ચાહે હૃદયસ્કન્ધ હો ચાહે ગજસ્કન્ધ હો સબ મેં પૂર્ણ રહતે હૈ । યહી
ઇન્કી અપને-અપને સ્કન્ધ મેં પૂર્ણતા હૈ । સચિત્તદ્રવ્યસ્કન્ધ મેં તત્તત્ જીવાધિ-
ષ્ઠિતશરીર વિવક્ષિત નહી હૈ વહાં તો કેવલ ઇસ શરીર મેં વર્તમાન જીવ હી
વિવક્ષિત હૈ । ઇસ પ્રકાર કૃત્સ્નસ્કન્ધ મેં ઓર—સચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ મેં અન્તર જાનના
ચાહિયે । ॥ સૂ. ૫૨ ॥

એક જીવમાં અસંખ્યાત પ્રદેશો હોય છે. આ પ્રકારે અસંખ્યાત પ્રદેશીરૂપે જીવની
સર્વત્ર તુલ્યતા (સમાનતા) છે. તેથી ગજાદિ સ્કન્ધોમાં અશ્વાદિ સ્કન્ધો કરતાં
અધિકતા સિદ્ધ થતી નથી. (સે તં કસિણસ્કન્ધે) આ પ્રકારનું સ્કન્ધનું સ્વરૂપ છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા તદ્વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યસ્કન્ધના ભેદોનું બીજી
રીતે કથન કર્યું છે. તેમાંથી જે કૃત્સ્નસ્કન્ધ છે તેમાં તે તે જીવ અને તે તે (હૃદય,
ગજાદિ) જીવાધિષ્ઠિત શરીરાવયવ રૂપ સમુદાય વિવક્ષિત થયો છે. આવી રીતે હૃદ-
યસ્કન્ધ અને ગજાદિ સ્કન્ધ પોતપોતાને રૂપે પરિપૂર્ણ છે. તેથી તે સ્કન્ધને કૃત્સ્નસ્કન્ધ
કહેવામાં આવેલ છે. આત્માને શાસ્ત્રકારોએ અસંખ્યાત પ્રદેશી કહ્યો છે તે પ્રદેશ
ભલે હૃદયસ્કન્ધ હોય અથવા ભલે ગજસ્કન્ધ હોય બધામાં પૂર્ણ રહે છે એજ તેમની
પોતપોતાના સ્કન્ધમાં પૂર્ણતા છે. સચિત્તદ્રવ્યસ્કન્ધમાં તે તે (અશ્વ, ગજ આદિ પ્રત્યેક)
જીવાધિષ્ઠિત શરીર વિવક્ષિત થયું નથી, ત્યાં તો કેવળ તે તે શરીરમાં રહેલા જીવના
જ વિવિધતા થઈ છે. આ પ્રકારનું કૃત્સ્નસ્કન્ધ અને સચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ વચ્ચેનું અંતર
(તદ્વ્યતિ) સમજવું. ॥ સૂ. ૫૨ ॥

છાયા-અથ કોઽસૌ અકૃત્સ્નસ્કન્ધઃ ? અકૃત્સ્નસ્કન્ધઃ સ એવ દ્વિપ્રદેશિકાદિસ્કન્ધો યાવત્ અનન્તપ્રદેશિકઃ સ્કન્ધઃ । સ એવ અકૃત્સ્નસ્કન્ધઃ ॥૫૩॥

ટીકા--શિષ્યઃ પૃચ્છતિ--‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ-

અથ કોઽસૌ અકૃત્સ્નસ્કન્ધઃ ? ઇતિ શિષ્યપ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ-અકૃત્સ્નસ્કન્ધઃ -ન કૃત્સ્નઃ-અકૃત્સ્નઃ, સ ચાસૌ સ્કન્ધશ્ચેતિ, અકૃત્સ્નસ્કન્ધઃ-ય માદન્યોઽપિ બૃહત્તરઃ સ્કન્ધોઽસ્તિ સોઽપરિપૂર્ણત્વાદકૃત્સ્નસ્કન્ધ ઇત્યર્થઃ, સ તુ સ એવ પૂર્વોક્ત દ્વિપ્રદેશિકાદિ સ્કન્ધો યાવત્ અનન્તપ્રદેશિકઃ સ્કન્ધઃ । દ્વિપ્રદેશિકઃ સ્કન્ધાન્ત્રિપ્રદેશિકાપેક્ષયાઽકૃત્સ્નઃ, ત્રિપ્રદેશિકશ્ચતુઃ પ્રદેશિકાપેક્ષયાઽકૃત્ ન ઇત્યુત્તરોત્તરાપેક્ષયા

અથ સૂત્રકાર અકૃત્સ્નસ્કન્ધ કા કથન કરતે હૈ-

“સે કિં તં અકસિણસ્કન્ધે ?” ઇત્યાદિ । ॥સૂત્ર ૫૩॥

શબ્દાર્થ--(સે કિં તં અકસિણસ્કન્ધે સો ચેવ દુપણસિયાસ્કન્ધે જાવ અણંતપણસિણ સ્કન્ધે) અકૃત્સ્નસ્કન્ધ કા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર સે હૈ-કિ જો દ્વિપ્રદેશિકા આદિ સ્કન્ધ સે લેકર અનન્તપ્રદેશિક તક કે સ્કન્ધ હૈ વે સર્વ અકૃત્સ્નસ્કન્ધ હૈ । જિસ સ્કન્ધ સે ઓર મી કોઈ દૂસરા વહુત વડા સ્કન્ધ હોતા હૈ-વહ અપરિપૂર્ણ હોને કે કારણ અકૃત્સ્નસ્કન્ધ હૈ । એસે અપરિપૂર્ણ યે સર્વ દ્વિપ્રદેશવાલે સ્કન્ધ સે લેકર અનન્ત પ્રદેશ તક કે સ્કન્ધ હૈ । ઇનમે અપરિપૂર્ણતા ઇસ પ્રકાર સે હૈ કિ જો દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ હોતા હૈ વહ ત્રિપ્રદેશિકસ્કન્ધ કી અપેક્ષા ન્યૂન હોને સે અપરિપૂર્ણ હાતા હૈ, ત્રિપ્રદેશિકસ્કન્ધ ચતુઃ પ્રદેશિક સ્કન્ધ કી અપેક્ષા ન્યૂન હોને સે અપરિપૂર્ણ હોતા હૈ । ઇસ તરહ ઉત્તરોત્તર કી

હવે સૂત્રકાર અકૃત્સ્નસ્કન્ધનું નિરૂપણ કરે છે-

“સે કિં તં અકસિણસ્કન્ધે” ઇત્યાદિ-

શબ્દાર્થ--(સે કિં તં અકસિણસ્કન્ધે ?) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ગુરુમહારાજ ! અકૃત્સ્ન સ્કન્ધનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર--(અકસિણસ્કન્ધે સો ચેવ દુપણસિયાસ્કન્ધે જાવ અણંતપણસિણ સ્કન્ધે) અકૃત્સ્નસ્કન્ધનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે જે દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કન્ધોથી લઈને અનન્તપ્રદેશિક પર્યન્તના સ્કન્ધો છે, તે બધાં અકૃત્સ્નસ્કન્ધો છે. જે સ્કન્ધ કરતાં વધારે મોટો હોય, બીજો સ્કન્ધ હોઈ શકે છે, તે સ્કન્ધ અપરિપૂર્ણ હોવાને કારણે અકૃત્સ્ન સ્કન્ધ ગણાય છે. દ્વિપ્રદેશીથી લઈને અનન્ત પ્રદેશી પર્યન્તના સમસ્ત સ્કન્ધો આ રીતે અપરિપૂર્ણ જ હોય છે. તેમાં અપરિપૂર્ણતા આ પ્રકારે સમજવી જોઈએ જે દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ હોય છે તે ત્રિપ્રદેશિક સ્કન્ધ કરતાં ન્યૂન હોવાથી અપરિપૂર્ણ હોય છે, ત્રિપ્રદેશિક સ્કન્ધ ચતુઃપ્રદેશિક સ્કન્ધ કરતાં ન્યૂન હોવાથી અપરિપૂર્ણ હોય છે. એજ પ્રમાણે ઉત્તરોત્તર સ્કન્ધો કરતાં પ્રત્યેક પૂર્વના (આગળના) સ્કન્ધમાં ન્યૂન-

પૂર્વપૂર્વોઽકૃત્સ્નો બોધ્યો યાવત્કૃત્સ્નતા નાયાતિ ! પૂર્વદ્વિપ્રદેશિકાદિઃ સર્વોઽકૃષ્ટ-
પ્રદેશશ્ચ સ્કન્ધાઃ સામાન્યેનાચિત્તતયા પ્રોક્તઃ, ઇહ તુ સર્વોઽકૃષ્ટસ્કન્ધાદધોવર્તિત્તિ એવા-
ચિત્તસ્કન્ધા ઉત્તરોત્તરોત્તરોપેક્ષયા પૂર્વપૂર્વતરા અકૃત્સ્નસ્કન્ધત્વેનોક્તા ઇં યુમ્મોર્મેદઃ ॥૫૨॥

અપેક્ષા સે પૂર્વ ૨ કા સ્કન્ધ અકૃત્સ્ન કથ જાનના ચાહિયે । યહ અકૃત્સ્નતા તવતક ચલતી હૈ કિ જવ તક કૃત્સ્નતા નહીં આતી હૈ ।— દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કન્ધ ઔર સમસ્ત ઔર સમસ્ત ઉત્કૃષ્ટ પ્રદેશવાલે સ્કન્ધ પહિલે સામાન્ય રૂપ સે અચિત્ત કહે ગયે હૈં । પરંતુ ઇસ અકૃત્સ્ન દ્રવ્ય સ્કન્ધ કે પ્રવરણ મેં સર્વો-
ત્કૃષ્ટ સ્કન્ધા સે પહિલે કે હી સ્કન્ધ ઉત્તરોત્તર કી અપેક્ષા સે અકૃત્સ્નસ્કન્ધરૂપ સે કહે ગયે હૈં । યહી ઇન દોનોં મેં ભેદ હૈ—

ભાવાર્થ—સૂત્રકારને ઇસ સૂત્રદ્વારા અકૃત્સ્નસ્કન્ધ કા વરૂપ ઔર અકૃ-
ત્સ્નસ્કન્ધ મેં તથા અચિત્તસ્કન્ધ મેં કયા અન્તર હૈ યહ પ્રવટ કિયા હૈ । આપે-
ક્ષિક અચિત્ત સ્કન્ધોં કી અપરિપૂર્ણતા કા નામ અકૃત્સ્નતા હૈ । ઇહ અકૃત્સ્નતા દ્વિપ્રદેશી આદિ સ્કન્ધો મેં ત્રિપ્રદેશી આદિ સ્કન્ધોં કી અપેક્ષા આતી હૈ । ઔર યહ આપેક્ષિક અકૃત્સ્નતા તવતક માની જાતી હૈ કિ જવતક અન્ત મેં કૃત્સ્નતા નહીં આ જાતી હૈ । ઇસકે આતે હી અન્ત કા સ્કન્ધ કૃત્સ્ન હોને સે ફિર આંગે કે લિયે અકૃત્સ્નતા કી દ્વારા રુ જાતાં હૈં । ઇસ પ્રકાર કૃત્સ્નતાં

તાની અપેક્ષાએ તેમાં અપરિપૂર્ણતા સમજવી આ અપરિપૂર્ણતાને કારણે જ તેમને અકૃત્સ્નસ્કન્ધ કહેવામાં આવ્યા છે. આ અકૃત્સ્નતા ત્યાં સુધી ચાલુ રહે છે કે જ્યાં સુધી કૃત્સ્નતા (પરિપૂર્ણતા) આવતી નથી.

દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કન્ધ અને સમસ્ત ઉત્કૃષ્ટ પ્રદેશવાળા સ્કન્ધોને પહેલાં સામાન્યરૂપે અચિત્ત કહેવામાં આવ્યા છે. પરંતુ આ અકૃત્સ્ન દ્રવ્યસ્કન્ધના પ્રકરણમાં સર્વોત્કૃષ્ટ સ્કન્ધથી આગળના સ્કન્ધોને ઉત્તરોત્તરની અપેક્ષાએ અકૃત્સ્નસ્કન્ધરૂપે કહેવામાં આવ્યા છે. એટલે જ અચિત્તસ્કન્ધ અને અકૃત્સ્નસ્કન્ધ વચ્ચે તફાવત છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા અકૃત્સ્નસ્કન્ધના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કયું છે, તથા અકૃત્સ્નસ્કન્ધ અને અચિત્ત સ્કન્ધ વચ્ચે શો તફાવત છે તે પણ પ્રકટ કયું છે. આપેક્ષિક અચિત્તસ્કન્ધોની અપરિપૂર્ણતાનું નામ જ અકૃત્સ્નતા છે. દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કન્ધોમાં ત્રિપ્રદેશી આદિ સ્કન્ધો કરતાં અકૃત્સ્નતા (અપરિપૂર્ણતા) રહેલી હોય છે. આ આપેક્ષિક અકૃત્સ્નતાનો સદ્ભાવ રહે છે કે જ્યાં સુધી અન્તે કૃત્સ્નતા (પરિપૂર્ણતા) આવી જતી નથી આ પ્રકારે જ્યારે કૃત્સ્નતા આવી જાય છે ત્યારે આન્તમ સ્કન્ધ (ઉત્કૃષ્ટ પ્રદેશોવાળો સ્કન્ધ) કૃત્સ્ન સ્કન્ધ થઈ જવાને કારણે ત્યારબાદ અકૃત્સ્નતાની ધારા અટકી જાય છે. આ રીતે કૃત્સ્નસ્કન્ધો કરતાં પહેલાંના સ્કન્ધો

મૂલમ—સે કિં તં અણેગદવિચ્છેદે ? અણેગદવિચ્છેદે—તસ્સ
ચેવ દેસે અવચિણ્ણે તસ્સ ચેવ દેસે ઉવચિણ્ણે, સે તં અણેગદવિચ્છેદે
સે તં જાણયસરીરભવિચ્છેદે સરીરવહિરિત્થં દવ્વચ્છેદે, સે તં ની આગમઓ
દવ્વચ્છેદે, સે તં દવ્વચ્છેદે ॥ સૂ. ૫૪ ॥

છાયા—અથ કોઽસૌ અનેકદ્રવ્યસ્કન્ધઃ ? અનેકદ્રવ્યસ્કન્ધઃ—તસ્યૈવ દેશોઽપચિત્તઃ
ત યૈવ દેશોપચિત્તઃ । સ એષઃ અનેકદ્રવ્યસ્કન્ધઃ સ એષ જ્ઞાયમાણસરીરભવસરીરવ્યતિ-
રિત્તો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ, સ એષ નો આગમતો દ્રવ્યસ્કન્ધઃ । સ એષ દ્રવ્યસ્કન્ધઃ ॥ ૫૪ ॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि—

અથ કોઽમૌ અનેકદ્રવ્યસ્કન્ધઃ ? इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरमाह अनेक-
द्रव्यस्कन्धः—अनेकद्रव्यश्चासौ स्कन्धश्चेति कर्मधारयः, स तु यदुपस्तथोच्यते ‘तस्स

સે પહિલે ૨ કે સ્કન્ધોં મેં પૂર્વ ૨ કી અપેક્ષા કૃત્સ્નતા ઓર ઉત્તર ૨ કી
અપેક્ષા અકૃત્સ્નતા સાપેક્ષિક સધ જાતી હૈ । અંત કે કૃત્સ્નસ્કંધ મેં કૃત્સ્નતા
સાપેક્ષિક નહીં હૈ કિંતુ સ્વાભાવિક હોતી હૈ । અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધ મેં દ્વિ-
પ્રદેશી આદિ સમસ્ત અચિત્ત સ્કંધોં મેં સામાન્યરૂપ સે અચિત્તતા પ્રકટ કી
ગઈ હૈ ઓર અકૃત્સ્નસ્કંધ મેં સર્વોત્કૃષ્ટ સ્કંધ સે પહિલે પહિલે કે સ્કંધોં મેં
અપરિપૂર્ણતા । હમ પ્રવાર હન દોનોં મેં અ તર વહા ગયા હૈ ॥ સૂત્ર ૫૩ ॥

अब सूत्रकार अनेक द्रव्यस्कंध को कहते हैं—

“से किं तं” इत्यादि । ॥ सूत्र ५४ ॥

માં તેમના પૂર્વ પૂર્વના (આગળ-આગળના) સ્કન્ધોની કરતાં કૃત્સ્નતા અને ઉત્તરોત્તર
(પાછળ-પાછળના) સ્કન્ધોની અપેક્ષા અકૃત્સ્નતા સાપેક્ષિક રીતે ઘટિત થઈ જાય છે.
અન્તિમ કૃત્સ્નસ્કન્ધમાં કૃત્સ્નતા સાપેક્ષિક હોતી નથી, પણ સ્વાભાવિક હોય છે,
કારણ કે તેના કરતાં મોટો કોઈ સ્કન્ધ જ હોતો નથી, પણ તેના કરતાં નાના તેની
આગળના સ્કન્ધો હોય છે.

અચિત્ત દ્રવ્યસ્કન્ધમાં—દ્વિપ્રદેશી આદિ સમસ્ત અચિત્ત સ્કન્ધોમાં સામાન્યરૂપે
અચિત્તતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે. અને અકૃત્સ્નસ્કન્ધમાં સર્વોત્કૃષ્ટ સ્કન્ધથી આગ-
ળના (પહેલાંના) સ્કન્ધોમાં અપરિપૂર્ણતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે. આ પ્રકારનું તે
બંને વચ્ચેનું અ તર (તફાવત) કહેવામાં આવ્યું છે. ॥ સૂ. ૫૩ ॥

હવે સૂત્રકાર અને દ્રવ્યસ્કન્ધોના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે.

‘સે કિં તં અણેગદવિચ્છેદે’ इत्यादि—

ચેવ' इत्यादिना । तस्यैव=सकन्धस्यैव यो देशः=नखदन्तवेशादिलक्षणो भागः
अपचितः=जीवप्रदेशैर्विरहितो भवति, तथा-तस्यैव=सकन्धस्यैव यो देशः=पृष्ठी-
दरकरचरणादिलक्षणो भाग उपचितः=जीवा दशैर्व्याप्तो भवति, सोऽनेकद्रव्यस्वन्धो
बोध्यः । अयं भावः-तयोर्द्वयोस्त देशयोर्विशिष्टैकपरिणामपरिणतयो र्यो देहाख्यः
समुदायः सोऽनेकद्रव्यस्कन्धः, सचेतनाचेतनानेकद्रव्यात्मकत्वादिति । अयमनेक
द्रव्यस्कन्धः सामर्थ्यात्तुरगादिस्कन्ध एव प्रतीयते ।

ननु तर्हि कृत्स्नस्वन्धादस्य वो विशेषः ? इति चे दुच्यते-कृत्स्नस्कन्धस्तु

शब्दार्थ—(સે કિં તં ડ.પે.ગ.દ.વિ.સ્વ.ધે) હે મદન્ત ! અનેક દ્રવ્યસ્કંધ કા
કયા સ્વરૂપ હૈ । (અળેગદવિયસ્વધે) ઉત્તર—અનેક દ્રવ્યસ્કંધ કા સ્વરૂપ જૈસા
હૈ—વૈસા—હમ કહતે હૈ (તસ્સ ચેવ દેસે અવચિણ તસ્સ ચેવ દેસે ઉવચિણ) સ્કંધ
કા જો નખ વેશ દન્ત, આદિરૂપ ભાગ હૈ, વહ અપચિત—જીવપ્રદેશોં સે
રહિત—હોતા હૈ, તથા ઉસી સ્કંધ કા જો પૃષ્ઠ, ઉદર, કર, ચરણ આદિરૂપ
ભાગ હૈ, વહ ઉપચિત—જીવપ્રદેશોં સે વ્યાપ્ત રહતા હૈ (સે તં અળેગદવિય-
સ્વધે) વહ અનેક દ્રવ્યસ્કંધ હૈ । ઇસ્કા તાત્પર્ય યહ હૈ કિં ઇન દોનોં ભાગોં
કા કિં જો ઇક વિશિષ્ટ આકાર મેં પરિણત રહતે હૈ. દેહરૂપ સમુદાય અનેક
દ્રવ્યસ્કંધ હૈ ।

क्योंकि यह समुदाय सचेतन और अचेतनरूप अनेक द्रव्यात्मक है ।
यह अनेक द्रव्यद्रस्कंध सामर्थ्य से तुरगादिस्कंध—हयादिस्कंध ही प्रतीत होता है ।

शंका—जब यह अनेक द्रव्यस्कंध हयादिस्कंधरूप प्रतीत होता है तो

શબ્દાર્થ (સે કિં તં અળેગદવિયસ્વધે ?) શિષ્ય ગુરૂને એવો પ્રશ્ન કરે
છે કે હે ગુરૂ મહારાજ ! અનેક દ્રવ્યસ્કંધનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(અળેગદવિયસ્વધે) અનંત દ્રવ્યસ્કંધનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું કહ્યું છે—
(તસ્સ ચેવ દેસે અવચિણ તસ્સ ચેવ દેસે ઉવચિણ) સ્કંધનો જે નખ, કેશ, દાંત
આદિરૂપ ભાગ હોય છે તે અપચિત—જીવપ્રદેશોમાંથી રહિત—હોય છે, તથા જે
સ્કંધના જે પૃષ્ઠ, ઉદર, હાથ, પગ આદિરૂપ ભાગો છે તેઓ ઉપચિત—જીવપ્રદેશોથી
વ્યાપ્ત—રહે છે. (સે તં અળેગદવિયસ્વધે) આ પ્રકારનું અન્ય દ્રવ્યસ્કંધનું સ્વરૂપ
છે. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે તે બન્ને ભાગો (અપચિત અને ઉપચિત ભાગો)
કે જે એક વિશિષ્ટ આકારે પરિણત થઈને તેમનો જે દેહરૂપ સમુદાય બને છે તેને
અનેકદ્રવ્યસ્કંધ કહેવામાં આવે છે કારણ કે તે સમુદાય સચેતનરૂપ અને અચેતન
રૂપ અનેક દ્રવ્યાત્મક હોય છે આ અનેક દ્રવ્યસ્કંધ તુરગાદિસ્કંધ (અશ્વાદિસ્કંધ)
સમાન જ લાગે છે.

जीवप्रदेशानुगतो यावान् देशस्तावानेव विवक्षितो न तु जीवप्रदेशाव्याप्तनखादि सहितः, अत्र तु नखादि सहितोऽपि अनेकद्रव्यस्कन्धत्वेन विवक्षितः।

ननु पूर्वोक्तमिश्रस्कन्धादस्य को विशेषः ? इति चेदुच्यते—पूर्वत्र पृथगपृथ-
गवस्थितानां सचेतनानां हस्यादीनामचेतनानां कवचादीनां च समूहत्वेन परि-
कल्पनया मिश्रस्कन्धत्वम्, अत्र तु विशिष्ट परिणाम परिणतानां सचेतनाचेतनद्रव्याणा-
मनेकद्रव्यस्कन्धत्वम्, इत्यनयोर्विशेषः। मूले 'तस्स' शब्देनात्र प्रकरणस्वारस्यात्
स्कन्धमात्रं विवक्षितम्। सम्प्रति प्रकृतमुपसंहर्तुमाह—से तं' इत्यादि। स एषः

फिर कृत्स्नस्कंध से इसमें अंतर क्या है ?

उत्तर—कृत्स्नस्कंध में तो जीव के प्रदेशों से व्याप्त जितना शरीरावयवरूप
देश है वही विवक्षित हुआ है, जीवप्रदेशों से अव्याप्त नखादि सहित प्रदेश
नहीं। परन्तु इस अनेक द्रव्यस्कंध में नखादि सहित भी देश अनेकद्रव्य-
स्कंधरूप से विवक्षित हुआ है।

शंका—तो फिर मिश्रद्रव्यस्कंध से इसमें क्या विशेषता आई ? उत्तर—
मिश्रद्रव्यस्कन्धा में पृथक् और अपृथक् रूप से व्यवस्थित हुए हस्ती आदिको
के समुदाय को मिश्रस्कंधरूप से कहा गया है, परन्तु उस अनेक द्रव्यस्कंध
में विशिष्ट परिणामरूप से परिणत हुए सचेतन अचेतन द्रव्यों को अनेक
द्रव्यस्कंधरूप से कथित किया गया है। यही इन दोनों में विशेषता है।
मूलमें "तस्स" शब्द यहाँ पर प्रकरण की स्वरसता से स्कंध मात्र विवक्षित
हुआ है। अब इस प्रकरण का उपसंहार करने के निमित्त सूत्रकार कहते हैं

शंका—ले आ अनेक द्रव्यस्कन्ध हुआदिस्कन्धउप न प्रतीत थाये छे, तो
तेमां कृत्स्नस्कन्ध करतां शी विशिष्टता छे ?

उत्तर—कृत्स्नस्कन्धमां तो जवना प्रदेशोथी व्याप्त जेटवो शरीरावयवरूप देश
(अंश-भाग) छे, तेनी न विवक्षा थछ छे, जवप्रदेशोथी अव्याप्त नखादि सहित
ना प्रदेशोनी विवक्षा थछ नथी. परन्तु आ अनेक द्रव्यस्कन्धमां तो नखादि सहित
जवप्रदेशोथी व्याप्त शरीरावयवरूप देशोनी अनेक द्रव्यस्कन्धउपे विवक्षा थछ छे,

शंका—मिश्र द्रव्यस्कन्ध करतां अनेक द्रव्यस्कन्धमां शी विशिष्टतां छे ?

उत्तर—मिश्र द्रव्यस्कन्धमां पृथक् अने अपृथक् रूपे व्यवस्थित थयेला हाथी
आदि सचेतन पदार्थोना अने कवच, तलवार आदि अचेतन पदार्थोना समुदायेने
मिश्रस्कन्धउप कहेव मां आव्यो छे परन्तु आ अनेक द्रव्यस्कन्धमां विशिष्ट परिणाम
उपे परिणत थयेला सचेतन अचेतन द्रव्योने अनेकद्रव्यस्कन्धउप कहेवमां आवेल
छे. जेटवो न जे जन्ने वन्ने तदावत छे. भूणमां "तस्स" शब्द प्रउ. अही प्रक
रणोनी स्वरसतानी अपेक्षाओ स्कन्ध मात्र विवक्षित थयेल छे. हुवे आ अकस्मिन्

અનેકવિધો દ્રવ્યસ્કન્ધ इति । ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तो द्रव्यस्कन्धो निरूपित इति सूचयितुमाह—‘से तं’ इत्यादि । स एष ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तो द्रव्यस्कन्ध इति । नो आगमतो द्रव्यस्कन्धो निरूपित इति सूचयितुमाह—‘से तं’ इत्यादि । स एष नोआगमतो द्रव्यस्कन्ध इति । द्रव्यस्कन्धोऽपि निरूपित इति सूचयितुमाह—‘से तं’ इत्यादि । स एष द्रव्यस्कन्ध इति ॥ ५४ ॥

अथ भावस्कन्धं निरूपयितुमाह—

मूलम्—से किं तं भावखंधे ? भावखंधे दुविहे पणत्ते, तं जहा आगमओ य नोआगमओ य ॥ सू० ५५ ॥

હાયા—અથ કોડસૌ ભાવસ્કન્ધઃ ? ભાવસ્કન્ધો દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તદ્વથા આગમતશ્ચ નોઆગમતશ્ચ ॥ ૫૫ ॥

કિ (સે તં અણેગદવિયસ્કંધે) હસ પ્રકાર યહ અનેકવિધ દ્રવ્યસ્કંધ હૈ । (સે તં જાણયસરીરભવિયસરીરવહરિત્તે દવ્વસ્કંધે—સે તં નો આગમઓ દવ્વસ્કંધે, સે તં દવ્વસ્કંધે) હમ પ્રકાર સે જ્ઞાયકશરીરભવ્યશરીરવ્યતિરિક્ત દ્રવ્યસ્કંધકા નિરૂપણ સમાપ્ત હુઆ—ઔર હસકી સમાપ્તિ સે નોઆગમ કી અપેક્ષા લેકર દ્રવ્યસ્કંધ કા કથન મી પૂર્ણ હુઆ હસકી પૂર્ણતા સે દ્રવ્યસ્કંધ નિક્ષેપ કા સ્વરૂપ વિષયક વર્ણન મી પૂર્ણ હો ચુકા । ॥સૂત્ર ૫૪॥

अब सूत्रकार भावस्कन्ध का निरूपण करते हैं—

“से किं तं भावखंधे” । इत्यादि ॥ सूत्र ५५ ॥

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ભાવસ્કંધે) હે મદન્ત । ભાવસ્કંધ કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉપસંહાર કરવા નિમિત્તે સૂત્રકાર કહે છે કે—(સે તં અણેગદવિયસ્કંધે) આ પ્રકારનું અનેકદ્રવ્યસ્કન્ધનું સ્વરૂપ છે (સે તં જાણયસરીર, ભવિયસરીરવહરિત્તે દવ્વસ્કંધે—સે તં નોઆગમઓ દવ્વસ્કંધે, સે તં દવ્વસ્કંધે) આ પ્રકારે જ્ઞાયકશરીર અને ભવ્યશરીર વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યસ્કન્ધનું નિરૂપણ અહીં સમાપ્ત થાય છે. તેના નિરૂપણની સમાપ્તિ થવાથી નોઆગમદ્રવ્યસ્કન્ધના બધા ભેદોના નિરૂપણની પણ અહીં સમાપ્તિ થઈ જાય છે, આ રીતે નોઆગમદ્રવ્યસ્કન્ધનું નિરૂપણ સમાપ્ત થઈ જવાથી દ્રવ્યસ્કન્ધનિક્ષેપના સ્વરૂપ વિષયક કથન પણ અહીં પૂરું થઈ જાય છે. ॥સૂ૦ ૫૪॥

હવે સૂત્રકાર ભાવસ્કન્ધના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

સે કિં તં ભાવસ્કંધે ?” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(તં કિં તં ભાવસ્કંધે ?) શિષ્ય શુરને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે શુરમહારાજ! ભાવસ્કન્ધનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि—व्याख्या निगदसिद्धा ॥५५॥

अथ—आगमतो भावस्कन्धमाह—

मूलम्—‘से किं तं आगमओ भावखंधे ? आगमओ भावखंधे
जाणए उवउत्ते । से तं आगमओ भावखंधे ॥सू० ५६॥

छाया—अथ कोऽसौ आगमतो भावस्कन्धः ? आगमतो भावस्कन्धो ज्ञायक
उपयुक्तः । स एष आगमतो भावस्कन्धः ॥५६॥

टीका—‘से किं तं’ इत्यादि । व्याख्या निगदसिद्धा ॥५६॥

उत्तर—(भावखंधे दुविहे पणत्ते) भावस्कंध दो प्रकार का है (तं जहा)
वे प्रकार ये हैं—(आगमओ य नोआगमओ य) एक आगम भावस्कंध और
दूसरा नोआगम भावस्कंध । इसकी व्याख्या आगम भावावश्यक की व्याख्या
जैसी ही जाननी चाहिये । ॥सू० ५५॥

अब सूत्रकार आगमभावस्कंध का कथन करते हैं—

“से किं तं आगमओ” इत्यादि । ॥ सूत्र ५६ ॥

शब्दार्थ—(से कિં તં આગમઓ ભાવખંધે ?) હે મદંત ! આગમ કો
આશ્રિત કરકે જાયમાન આગમભાવસ્કંધ કા કયા સ્વરૂપ હૈ ? (આગમઓ ભાવ-
ખંધે જાણએ ઉવઉત્તે) ઉત્તર—આગમ નો આશ્રિત કરકે સ્કંધ પદાર્થ કા ઉપયુક્ત
જ્ઞાતા આગમ ભાવસ્કંધ હૈ । (સે તં આગમઓ ભાવખંધે) યહ આગમ કો

ઉત્તર—(ભાવખંધે દુવિહે પણત્તે) ભાવસ્કન્ધના બે પ્રકાર કહ્યા છે. (તં જહા)
તે પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે—(આગમઓ ય નોઆગમઓ ય) (૧) આગમભાવસ્કન્ધ
અને (૨) નોઆગમભાવસ્કન્ધ ભાવસ્કન્ધની વ્યાખ્યા ભાવઆવશ્યકની વ્યાખ્યા જેવી
જ સમજવી ॥ સૂ. ૫૫ ॥

હવે સૂત્રકાર આગમભાવસ્કન્ધના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં આગમઓ ભાવખંધે ?” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં આગમઓ ભાવખંધે ?) શિષ્ય શુરુને એવા પ્રશ્ન પૂછે
છે કે શુરુ મહારાજ ! આગમને આશ્રિત કરીને જાયમાન એવા આગમભાવસ્કન્ધનું
કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર (આગમઓ ભાવખંધે જાણએ ઉવઉત્તે) આગમને આધારે સ્કન્ધપદાર્થના
ઉપયુક્ત (ઉપયોગ પરિણામ યુક્ત) જ્ઞાતાને આગમ ભાવસ્કન્ધ કહે છે (સે તં
આગમઓ ભાવખંધે) આ પ્રકારનું આગમને આશ્રિત કરીને આગમભાવસ્કન્ધનું

અથ નો આગમતો ભાવસ્કન્ધમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં નોઆગમઓ ભાવસ્કન્ધે? નોઆગમઓ ભાવ-
સ્કન્ધે એસિં ચેવ સામાઈયમાઈયાણં છળહં અજ્ઞયણાણં સમુદય-
સમિહસમાગમેણં આવસ્સયસુયસ્કન્ધે ભાવસ્કન્ધેત્તિ લબ્ભઈ. સે તં
નોઆગમઓ ભાવસ્કન્ધે, સે તં ભાવસ્કન્ધે ॥સૂ. ૫૭॥

છાયા—અથ કોઽસૌ નોઆગમતો ભાવસ્કન્ધઃ? નોઆગમતો, ભાવસ્કન્ધઃ
એતેષામેવ સામાયિકાદીનાં પળ્લામધ્યયનાનાં સમુદયસમિતિસમાગમેન આવશ્યક-
શ્રુતસ્કન્ધો ભાવસ્કન્ધ इति લભ્યતે । સ. એવ નોઆગમતો ભાવસ્કન્ધઃ । સ એવ
ભાવસ્કન્ધઃ ॥૫૭॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં’ इत्यादि—અથ કોઽસૌ નોઆગમતો
ભાવસ્કન્ધઃ? इति । उत्तरमाह—नो आगमतो भावस्कन्ध एवं विज्ञेयः—एतेषां
प्रस्तुतानामेव सामायिकादीनां पणाम् ‘अध्ययनानां’ समुदयसमितिस्समागमेन—

આશ્રિત કરકે આગમ ભાવસ્કન્ધ કા સ્વરૂપ હૈ । इसकी व्याख्या, आगमभावा-
वश्यक प्रतिपादक सूत्र की व्याख्या जैसी जाननी चाहिये । ॥सूत्र ५७॥

અથ સૂત્રકાર નોઆગમ કો આશ્રિત કરકે ભાવસ્કન્ધ કા સ્વરૂપ કહતે હૈ—

‘સે કિં તં નોઆગમઓ इत्यादि । ॥सूत्र ५७॥

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નોઆગમઓ ભાવસ્કન્ધે) હે મદન્ત । નોઆગમ સે
ભાવસ્કન્ધ કયા હૈ । (નો આગમઓ ભાવસ્કન્ધે) નો આગમ સે ભાવસ્કન્ધ એસા
હૈ—(એસિં ચેવ સામાઈયમાઈયાણં છળહં અજ્ઞયણાણં સમુદયસમિહં સમાગમેણં

સ્વરૂપ છે. આ સૂત્રની વ્યાખ્યા આગમભાવાવશ્યકનું પ્રતિપાદન કરનારા સૂત્રની વ્યાખ્યા
પ્રમાણે જ સમજવી. ॥સૂ. ૫૬॥

હવે સૂત્રકાર નોઆગમ ભાવસ્કન્ધના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

‘સે કિં તં નોઆગમઓ ભાવસ્કન્ધે’ इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નોઆગમઓ ભાવસ્કન્ધે?) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન
પૂછે છે કે હે ગુરુ મહારાજ ! નોઆગમને આશ્રિત કરીને જે ભાવસ્કન્ધ કહ્યો છે
તે નોઆગમભાવસ્કન્ધનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(નોઆગમઓ ભાવસ્કન્ધે) નોઆગમભાવસ્કન્ધનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે.

(એસિં ચેવ સામાઈયમાઈયાણં છળહં અજ્ઞયણાણં સમુદયસમિહં સમા-
ગમેણં આવસ્સયસુયસ્કન્ધે ભાવસ્કન્ધેત્તિ લબ્ભઈ) પરસ્પર પ્રસ્તુત થયેલા સામા-

સમુદયસ્ય=આવશ્યકાદિ ષડધ્યયનસમુદાયસ્ય યા સમિતિઃ=નૈરન્તર્યેણ મીલનં તમ્યાઃ સમાગમઃ=પરસ્પરં સંબદ્ધતયા એવોપયોગસ્તેન નિષ્પન્નો ય આવશ્યક-શ્રુતસ્કન્ધઃ સ ભાવસ્કન્ધ ઇતિ લભ્યતે=ભવતિ । અયં ભાવઃ—પરસ્પરસમ્બદ્ધસામાયિકાદિષડધ્યયનસમૂહનિષ્પન્નઆવશ્યકશ્રુતસ્કન્ધઃ સદોરકમુખવસ્ત્રિકા રજોહરણાદિવ્યાપારલક્ષણક્રિયાયુક્તતયા વિવક્ષિતો નોઆગમતો ભાવસ્કન્ધઃ । સ્કન્ધપદાર્થ જ્ઞાનંત્વાગમઃ । તદુપયોગો ભાવઃ, ક્રિયા નોઆગમઃ । ક્રિયાલક્ષણસ્ય દેશ્યાનાગમત્વાદ્ નોશબ્દોઽત્ર દેશનિષેધપરો વોદ્ધવ્ય ઇતિ । પૃથગ્ભૂતાનામપિ સામાયિકાદિ ષડધ્યયનનાં સ્કન્ધઃ રયાદત ઉક્તમ્—‘સમુદયસમિદ્’ ઇતિ । સમુદયસમિ-

અવસ્તય સુદ્યસ્થે ભાવસ્થે તિલભઃ) આત્મા મેં પરસ્પર પ્રસ્તુત હુએ સામાયિક આદિ છહ અધ્યયનોં કે નિરન્તર સેવન સે જો આત્મા મેં એક ઉપયોગરૂપ પરિણામ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, ઉસ પરિણામ સે નિષ્પન્ન આવશ્યક શ્રુતસ્કન્ધ-ભાવસ્કન્ધ હૈ । તાત્પર્ય ઇસમા યહ હૈ—પરસ્પર મેં સંબદ્ધ હુએ સામાયિક આદિ છહ અધ્યયનોં કે સમૂહ સે નિષ્પન્ન હુઆ આવશ્યક શ્રુતસ્કન્ધ, સદોરકમુખ-વસ્ત્રિકા રજોહરણ આદિ વ્યાપારરૂપ ક્રિયા સે સહિત જબ વિવક્ષિત હોતા હૈ—તબ વહ નોઆગમસ્કન્ધ હૈ । સ્કન્ધ પદાર્થ કા જ્ઞાન આગમ હૈ । ઓર ઉસ આગમ મેં હુઆ જ્ઞાતા કા ઉપયોગ ભાવ હૈ । તથા રજોહરણ આદિરૂપ જો ક્રિયા હૈ, વહ નોઆગમ હૈ । ઇસ તરહ ક્રિયારૂપ એકદેશ મેં અનાગમતા હોને સે નો શબ્દ યહાં દેશનિષેધ પરક જાનના ચાહિયે । સૂત્રકાર “સમુદયસમિદ્” પદ કા “આવશ્યક આદિ છહ અધ્યયનોં કે સમૂહ કા નિરન્તર મિલના” યહ અર્થ હૈ તથા “સમાગમ” કા ષટ્પ્રદેશીસ્કન્ધ કી તરહ આવશ્યકશ્રુતસ્કન્ધ કા

યિક આદિ છ અધ્યયનોના નિરન્તર સેવનથી આત્મામાં જે એક ઉપયોગરૂપ પરિણામ નિષ્પન્ન (ઉત્પન્ન) થાય છે, તે પરિણામથી નિષ્પન્ન (જન્યમાન) આવશ્યક શ્રુતસ્કન્ધનું નામ ભાવસ્કન્ધ છે. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—પરસ્પરની સાથે સંબદ્ધ થયેલા એવા સામાયિક આદિ છ અધ્યયનોના સમૂહથી નિષ્પન્ન થયેલા આવશ્યક શ્રુતસ્કન્ધ, સદોરક મુદ્ધપત્તી રજોહરણ આદિ વ્યાપારરૂપ ક્રિયા સહિત જ્યારે વિવક્ષિત થાય છે, ત્યારે તે નોઆગમભાવસ્કન્ધરૂપ બની જાય છે. સ્કન્ધપદાર્થના જ્ઞાનને આગમરૂપે, તથા તે આગમમાં જ્ઞાતાના ઉપયોગરૂપ પરિણામને ભાવરૂપે અહીં પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે. તથા રજોહરણ આદિરૂપ જે ક્રિયા છે તેને નોઆગમ કહી છે. આ રીતે ક્રિયારૂપ એક દેશમાં અનાગમતા હોવાથી “નો” શબ્દ અહીં દેશનિષેધનું સૂચન કરે છે, એમ સમજવું. આ સૂત્રમાં “સમુદય સમીદ્” આ પદનો “સામાયિક આદિ છ અધ્યયનોનું નિરન્તર મળવું” એવો અર્થ થાય છે, તથા “સમાગમ” આ પદનો “છ પ્રદેશી સ્કન્ધની જેમ આવશ્યક શ્રુતસ્કન્ધનું

તિસ્તુ નૈરન્તર્યવસ્થાપિતલોહશલાકાનામિવ પરસ્પરનિરપેક્ષાણામપિ સ્યાદત આહ—
‘સમાગમ’ इति । पट्टप्रदेशिकस्कन्धवत् एकीभूतोयमावश्यकश्रुतस्कन्धः । प्रकृत-
मुपसंहरन्नाह—सोऽसौ नोआगमतो भावस्कन्धः, इति । भावस्कन्धः सर्वतोऽपि
निरूपित इहि सूचयितुमाह—सोऽसौ भावस्कन्धः, इति ॥सू० ५७

આત્મા મેં એકરૂપ હોના” યહ હૈ । इस तरह सूत्रकारने इस समागमपद से यह स्पष्ट किया है कि नैरन्तर्यरूप में अवस्थापित लोह शलाकाओं के समान परस्पर निरपेक्ष सामायिक आदि पद आवश्यकों की समुदयसमिति नोआगम से भावस्कंध नहीं है । (से तं नोआगमओ भावस्कंधे) इस तरह यह नोआगम से भावस्कंध है । (से तं भावस्कंधे) इस प्रकार भावस्कंध का वर्णन किया ।

भावार्थ—सूत्रकारने इस सूत्र द्वारा नोआगम को आश्रित करके भावस्कंध का स्वरूप प्रकट किया है । इसमें उन्होंने यह कहा है कि परस्पर संश्लिष्ट सामायिक आदि छह अध्ययनों के निरन्तर सेवन करने से जो आत्मा में तल्लीनता होनेरूप उपयोग परिणाम होता है और उस परिणाम से जो आवश्यकश्रुतस्कंध निष्पन्न होता है उसका नाम भावस्कंध है । यही भावस्कंध जब सदोरकमुखवस्त्रिका आदि व्यापाररूप क्रिया से विवक्षित किया जाता है । तब वह नोआगम भावस्कंध है । स्कंध पदार्थ का ज्ञान आगम उसमें ज्ञाता का उपयोग भाव और जो रजोहरण आदि द्वारा किं

આત્મામાં એકરૂપ થવું”, એવો અર્થ થાય છે. આ રીતે સૂત્રકારે આ સમાગમ પદના પ્રયોગ દ્વારા એ વાત સ્પષ્ટ કરી છે કે નૈરન્તર્ય રૂપે અવસ્થાપિત લોહશલાકાઓની (લોહાની સળીઓની) જેમ પરસ્પર નિરપેક્ષ સામાયિક આદિ છ આવશ્યકોની સમુદયસમિતિ નોઆગમની અપેક્ષાએ ભાવસ્કન્ધ નથી. (સે તં નોઆગમઓ ભાવસ્કંધે) નોઆગમની અપેક્ષાએ ભાવસ્કન્ધતું આ પ્રકારતું સ્વરૂપ છે. (સે તં ભાવસ્કંધે) આ રીતે ભાવસ્કન્ધના બંને લેહોતું વર્ણન અહીં સમાપ્ત થાય છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા નોઆગમને આશ્રિત કરીને ભાવસ્કન્ધના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કર્યું છે. તેમાં તેઓએ એ વાત પ્રતિપાદિત કરી છે કે પરસ્પર સંશ્લીઠ (સંબદ્ધ) સામાયિક આદિ ૬ અધ્યયનોના નિરન્તર સેવનથી આત્મામાં જે તલ્લીનતા થવા રૂપ ઉપયોગ પરિણામ થાય છે અને તે પરિણામથી જે આવશ્યકશ્રુત સ્કન્ધ નિષ્પન્ન થાય છે, તેનું નામ ભાવસ્કન્ધ છે. એજ ભાવસ્કન્ધને જ્યારે સદોરક મુહુર્તી રજોહરણ આદિ વ્યાપારરૂપ ક્રિયાથી વિવક્ષિત કરવામાં આવે છે, ત્યારે તે નોઆગમભાવસ્કંધ કહેવાય છે. સ્કન્ધ પદાર્થના જ્ઞાનનું નામ આગમ છે, તેમાં જ્ઞાતાના ઉપયોગ પરિણામનું નામ ભાવ છે, અને જે રજોહરણ આદિવડે થતી ક્રિયા

इदानीं स्कन्धस्य पर्यायान् विवक्षुराह—

મૂલમૂ—તસ્સ ણં ઇમે એગટ્ઠિયા ણાણાઘોસા ણાણાવંજણા એગટ્ઠિયા નામધેજ્ઞા ભવંતિ, તં જહા—ગણકાએય નિકાએ, સ્વંધે વગ્ગે તહેવ રાસી ય । પુંજે પિંડે નિગરે, સંઘાએ આઉલસમૂહ ॥૧॥ સે તં સ્વંધે ॥ સૂ. ૫૮ ॥

છા.યા—તસ્ય સ્વલુ ઇમાનિ એકાર્થિકાનિ નાનાર્થેષાણિ નાનાઘ્યજ્ઞનાનિ એકાર્થિકાનિ નામધેયાનિ ભવન્તિ, તદ્યથા—ગણઃકાયશ્ચ નિકાયઃ સ્કન્ધો વર્ગસ્તથૈવ રાશિશ્ચ । પુજ્જઃપિણ્ડો નિકરઃ સંઘાત આકુલઃ સમૂહઃ ॥૧॥ સ એષ સ્કન્ધઃ ॥૫૮॥

જાનેવાલી પ્રમાર્જના આદિ ક્રિયાઈ હૈં વે નોઆગમ હૈં । યહાં નો શબ્દ સર્વથા આગમાભાવ કા નિષેધક નહીં હૈં કિન્તુ એકદેશ આગમ કા નિષેધક હૈં ? સ્કંધ પદાર્થ વા જ્ઞાન આગમ ઔર ક્રિયા અનાગમ નોઆગમ હૈં । યહ નોઆગમ કો લેકર ભાવસ્કંધ કા સ્વરૂપ હૈં । સૂત્ર ૫૭ ।

અવ સૂત્રકાર સ્કંધા કી પર્યાયો વા કથન કરતે હૈં—

तरसणं इमे एगट्ठिया इत्यादि ! ॥सूत्र ५८॥

શબ્દાર્થ—(તસ્સ) ઇસ સ્કંધ કે (ઇમે) યે (ણાણાઘોસા) ઉદાત્ત આદિ નાના ઘોષવાલે (ણાણાવંજણા) કકારઆદિ અનેક ઘ્યંજનાવાલે (એગટ્ઠિયા)—એકાર્થિક પર્યાયવાચી (નામધેજ્ઞા ભવંતિ) નામ હૈં । (તં જહા) જો ઇમ પ્રકાર સે હૈં—(ગણકાએ ય નિકાએ સ્વંધે, વગ્ગે તહેવ રાસી ય પુંજે પિંડે નિગરે સંઘાએ આઉલસમૂહે ॥૧॥ સે તં સ્વંધે) ગણકાય, નિકાય, સ્કંધ, વર્ગ, રાશિ, પુંજ,

ઓ છે તે નોઆગમ છે. અહીં 'નો' શબ્દ સર્વથા આગમાભાવનો નિષેધક નથી, પરંતુ એક દેશતઃ આગમનો નિષેધક છે. સ્કન્ધ પદાર્થનું જ્ઞાન આગમરૂપ છે અને ક્રિયા અનાગમ—નોઆગમરૂપ છે. નોઆગમભાવસ્કન્ધનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે. ।સૂ.૫૭। હવે સૂત્રકાર સ્કન્ધના પર્યાયવાચી શબ્દોનું કથન કરે છે—

“तस्स णं इमे एगट्ठिया” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(તસ્સ) તે સ્કન્ધના (ઇમે) આ (ણાણા ઘોસા) ઉદાત્ત આદિ વિવિધ ઘોષવાળાં (ણાણાવંજણા) કકાર આદિ અનેક ઘ્યંજનોવાળાં (એગટ્ઠિયા) એકાર્થિક પર્યાયવાચી (નામધેજ્ઞા ભવંતિ) નામો કહ્યાં છે. (તં જહા) જે નામો નીચે પ્રમાણે છે—(ગણકાએ ય નિકાએ સ્વંધે, વગ્ગે તહેવ રાસીય પુંજે પિંડે નિગરે, સંઘાએ આઉલ સમૂહે ॥૧॥ સે તં સ્વંધે) ગણ, કાય, નિકાય, સ્કન્ધ, વર્ગ, રાશિ, પુંજ, પિંડ,

ટીકા—‘તસ્મ જ્ઞ’ इत्यादि—

तस्य=स्कन्धस्य खलु इमानि=वक्ष्यमाणानि एकार्थिकानि नानाधापाण
नानाव्यञ्जनानि नामधेयानि भवन्ति । तद्यथा-गणः=महादिगणवद् गणः, कायः=
पृथिवीकायादिवत्कायः, निकायः=पटुजीवनिकायवन्निकायः, स्कन्धः=द्विप्रदेशिका
दिस्कन्धवत् स्कन्धः, वर्गः=गोवर्गवद् वर्गः, राशिः=शालिधान्यादिवद् राशिः, पुञ्जः=
विप्रकीर्णपुञ्जीकृतधान्यादिवत् पुञ्जः, पिण्डः=गुडादि पिण्डवत् पिण्डः, हिरण्य-
द्रव्यादिनिकरवद् निकरः, सङ्घातः=महोत्सवादि सम्मिलितजनसङ्घातवत् सङ्घातः,

પિણ્ડ, નિકર, સંઘાત, આકુલ ઓર સમૂહ ! યે જો ગણ સે લેકર સમૂહ તક
કે શબ્દ હૈ, વે સ્થાવસ્કંધ કે વાચક પર્યાય હૈ । એસા જાનનાં ચાહિયે । એકાર્થિક
આદિ પદોં કી વ્યાખ્યા પહિલે કી તરહ જાનની ચાહિયે । ઇમ પ્રકાર સે
યહાં તક સ્કંધ કે સ્વરૂપ કા વર્ણન સૂત્રકારને કિયા હૈ ।

જિસ પ્રકાર મલ્લ આદિકોં કા ગણ હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર સે સ્કંધ
બી અનેક પરમાણુઓં વા સંશ્લિષ્ટરૂપ એક પરિણામ હોતા હૈ-ઇસલિયે ઇસ
કા નામ ગણ હૈ । પૃથિવીકાય આદિ કે સમાન યહ સ્કંધ કાય હૈ । પટુજીવ
નિકાય કી તરહ યહ સ્કંધ નિકાય હૈ । દ્વિપ્રદેશિક આદિસ્કંધ કેજેસા યહસ્કંધ
હૈ । ગોવર્ગ કી તરહ યહ વર્ગરૂપ હૈ । શાલિધાન્ય આદિ કી તરહ યહ રાશિ-
રૂપ હૈ ।-ફેલાફર ઇકઠે-કિયે ગયે ધાન્યાદી કી તરહ યહ પુંજરૂપ હૈ । ગુડ
આદિ કે પિણ્ડ કી તરહ યહ પિંડરૂપ હૈ । ચાંદી આદિ કે સમૂહ કી તરહ

નિકર, સંઘાત, આકુલ અને સમૂહ આ જે ગણથી લઈને સમૂહ પર્વતના શબ્દો
છે તે ભાવસ્કન્ધના વાચક છે, એમ સમજવું. એકાર્થિક આદિ પદોની વ્યાખ્યા
આગળ દેહ્યા અનુસાર સમજવી આ પ્રકારે સૂત્રકારે અહીં સુધી સ્કન્ધના સ્વરૂપનું
વર્ણન કર્યું છે. અહીં સ્કન્ધનું વર્ણન પૂરું થાય છે.

હવે આ ગણ આદિ પદોનો અર્થ સમજાવવામાં આવે છે—

“ગણ”-જેમ મલ્લ આદિનું ગણ હોય છે એજ પ્રમાણે સ્કન્ધ પણ અનેક
પરમાણુઓના એક સંશ્લિષ્ટ પરિણામરૂપ હોય છે, તેથી તેનું નામ ગણ પડ્યું છે.

“કાય”-પૃથ્વીકાય આદિની જેમ આ સ્કન્ધ કાયરૂપ છે.

“નિકાય”-પટુજીવનિકાયની જેમ આ સ્કન્ધ નિકાયરૂપ છે.

“સ્કંધ”-દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધની જેમ તે સ્કન્ધરૂપ છે.

“વર્ગ”-ગો વર્ગની જેમ તે સ્કન્ધરૂપ છે.

“રાશિ” શાલિધાન્ય (ચોખા) આદિની જેમ તે રાશિરૂપ છે.

“પુંજ” એકત્ર કરેલા ધાન્યપુંજની જેમ તે પુંજરૂપ છે.

“પિંડ” ગોળ આદિના પિંડની જેમ તે પિંડરૂપ હોય છે.

आकुलः=राजगृहाङ्गणजनाकुलवदाकुलः, समूहः=पुरादिजनसमूहवत् समूहः । एते गणादि समूहान्ताः शब्दा भावस्कन्धस्य वाचका बोध्याः । एकार्थिकादिपदानां व्याख्या पूर्ववद् बोध्या । सम्प्रति स्कन्धमुपसंहरन्नाह—स एष स्कन्ध इति॥सू५८॥

इत्थं स्कन्धाधिकार उक्तः, सम्प्रति आवश्यकस्य षडध्ययनानि विव्रियन्ते—

मूलम्—आवस्सगस्स णं इमे अत्थाहिगारा भवंति, तं जहा-

सावज्जजोगविरई, उक्कित्तण गुणवओ य पडिवत्ती ।

खलियस्स निंदणावणचिगिच्छा गुणधारणा चेव ।१। ॥सू० ५९॥

छाया—आवश्यकस्य खलु इमे अर्थाधिकारा भवन्ति, तद्यथा—

सावद्ययोगविरतिः उत्कीर्त्तनं गुणव्रतश्च प्रतिपत्तिः ।

स्खलितस्य निन्दना व्रणचिकित्सा गुणधारणा चैव । सू० ५९॥

यह निक्करूप है । महोत्सव आदि में सम्मिलित जनसमुदाय के समान यह संघातरूप है । राजगृह के आंगन में हुए व्याप्त जनसमूहरूप यह आकुल है । पुर आदि के जनसमूह की तरह यह समूहरूप है ॥सूत्र ५८॥

स्कन्धाधिकार का कथनकर अब सूत्रकार आवश्यक के छह अध्ययनों का विवेचन करते हैं—‘आवस्सगस्स’ इत्यादि । ॥सूत्र ५९॥

शब्दार्थ—हे भदन्त ! आवश्यक संबन्धी छह अध्ययन कौन २ से हैं ?

इस प्रकार से पूछे जाने पर सूत्रकार अर्थाधिकार को आश्रित करके उन अध्ययनों को कहते हैं—(आवस्सगस्स इत्यादि) (आवस्सगस्स णं इमे

“निक्क” थांही आदिना समूहनी जेम ते निक्कइय छे.

“संघात” महोत्सव आदिमां अेकत्र थयेला जनसमुदायनी जेम ते संघातइय छे.

“आकुल” राजगृह आदिना आंगणुमां जमा थयेला व्याप्त जनसमूहनी जेम ते आकुलइय छे.

“समूह” पुर आदिना जनसमूहनी जेम ते समूहइय छे. ॥ सू० ५८ ॥

स्कन्धाधिकारुं वणुंन पूइं थयुं, हवे सूत्रकार आवश्यकना ६ अध्ययनोनुं,

विवेचन करे छे—आवस्सगस्स” इत्यादि—

शब्दार्थ—शिष्य गुरुने अेवो प्रश्न पूछे छे के छे गुरु भडारज ! आवश्यकना क्या क्या छ अध्ययन छे ?

उत्तर—आ प्रकारना प्रश्ननी उत्तर इपे सूत्रकार अर्थाधिकारने आश्रय लधने ते अध्ययनो छे छे—(आवस्सगस्स णं इमे अत्थाहिगारा भवंति) अर्थाधिकारने—

ટીકા—‘આવસગસ્સ ણં’ इत्यादि—

आवश्यकसम्बन्धीनि षडध्ययनानि कानि ? इति तान्यर्थाधिकारमाश्रित्योच्यन्ते—आवसगस्स’ इत्यादिना । आवश्यकस्य खलु इमे=वक्ष्यमाणा अर्थाधिकारः—अर्थेन अधिकाराः—अर्थमाश्रित्य प्रस्तावा भवन्ति, तद्यथा—सावधयोगविरतिः=सामायिकलक्षणो प्रथमेऽध्ययने प्राणातिपातादि सर्वसावधयोगविरतिरर्थाधिकारः ? उत्कीर्तनम्=द्वितीये चतुर्विंशतिस्तवाध्ययने कर्मक्षयप्रधानकारणत्वात् लब्धबोधिविशुद्धिहेतुत्वात् पुनर्वोदिलाभफलत्वात् सावधयोगविरत्युपदेशकत्वेनोपकारित्वाच्च तीर्थकृतां गुणोत्कीर्तनरूपोऽर्थाधिकारः २ । तृतीये वन्दनाध्ययने गुणव्रतश्च प्रतिपत्तिः—गुणाः=मूलोत्तरगुणरूपा व्रतपिण्डविशुद्ध्यादयो विद्यन्ते

अत्थाहिगारा भवंति) आवश्यक के ये वक्ष्यमाण अर्थाधिकार-अर्थ को आश्रित करके कथन हैं । (तं जहा) जो इस प्रकार से हैं—

(सावज्जजोगविरई उविकत्तणं गुणवओ य पडिचत्ती । खलियस्स निंदणा वणतिभिच्छा गुणधारणा चेव) सामાયिकरूप प्रथम अध्ययन में, प्राणातिपात आदिरूप सर्व सावधयोग से विरति हेना यह अर्थाधिकार है । द्वितीय चतुर्विंशतिस्तवरूप अध्ययन में कर्मों के क्षय करने में प्रधानकारण होने से लब्धबोधिबी विशुद्धि से हेतु होने से, तथा पुनर्वोधि के लाभरूप फल की प्राप्ति में कारणभूत होने से और सावधयोग से विरति के उपदेशक होने के कारण अत्यंत उपकारी होने से, तीर्थंकरों के गुणों का उत्कीर्तनरूप अर्थाधिकार है, तृतीय वन्दनाध्ययन में मूलगुण और उत्तर गुणरूप व्रत, पिण्डविशुद्धि

અર્થને આશ્રિત કરીને આવશ્યકનું નીચે પ્રમાણે કથન છે. (તંજહા) તે છ અધ્યયનોમાં આ પ્રકારના અર્થની (વિષયની) પ્રસ્પષ્ટા કરી છે—

(સાવજ્જજોગવિરઈ ઉવિકત્તણગુણવઓ ય પડિચત્તી । સ્વલિયસ્સ નિંદનાવણતિગિચ્છા ગુણધારણા ચેવ) સામાયિકરૂપ પહેલા અધ્યયનમાં આદિરૂપ સાવધ યોગોની વિરતિનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે. બીજા ચતુર્વિંશતિસ્તવરૂપ (૨૪ તીર્થંકરોના કીર્તનસ્તવનરૂપ) જે અધ્યયન છે તેમાં તીર્થંકરોની સ્તુતિ શુણોના ઉત્કીર્તનરૂપ અર્થાધિકાર છે તે તીર્થંકરોની સ્તુતિ કરવાનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે—કર્મોનો ક્ષય કરવામાં પ્રધાન કારણભૂત હોવાથી, લબ્ધબોધિની વિશુદ્ધિમાં કારણભૂત હોવાથી અને પુનર્બોધિના લાભરૂપ ફળની પ્રાપ્તિમાં કારણભૂત હોવાથી, સાવધ-યોગોમાંથી વિરતિના ઉપદેશક હોવાને કારણે અત્યંત ઉપકારી હોવાથી તીર્થંકરોના શુણોની સ્તુતિ થવી જ જોઈએ. ૨૪ તીર્થંકરોના શુણોના ઉત્કીર્તનરૂપ અર્થથી સંપન્ન આ બીજું અધ્યયન છે. ત્રીજા વંદણા અ. ૬૨૨ માં ૨૭ રૂ. અને ૯ રશુરૂપ વ્રત

યસ્ય સ ગુણવાંસ્તસ્ય પ્રતિપત્તિઃ=વન્દનાદિકા કર્તવ્યા, - એંરૂપોઽર્થાધિકારઃ ।
 ચ શબ્દઃ પુનરર્થે ૩। તથા-ચતુર્થે પ્રતિક્રમણાધ્યયને-સ્વલિતસ્ય=સાધુકૃત્યાચ્ચ-
 લિતસ્ય નિન્દના=નિન્દા કર્તવ્યા । અયં ભાવઃ-મૂલોત્તરગુણેષુ પ્રમાદાચીર્ણસ્ય
 પ્રત્યાગતસંવેગસ્ય જન્તોર્વિશુદ્ધમાનાધ્યવસાયસ્ય અકાર્યમિદ-મિત્યેવં રૂપેણ નિન્દા-
 રૂપોઽર્થાધિકારઃ ૪। તથા પઞ્ચમે કાર્યોત્સર્ગાધ્યયને-વ્રણચિકિત્સા-વ્રણસ્ય ચિ-
 કિત્સા=ભૈષજ્યમ્ । અયં ભાવઃ-ચારિત્રરૂપપુરુષસ્ય યોઽયમતિચારરૂપો ભાવ-
 વ્રણસ્તસ્ય દશવિધપ્રાયશ્ચિત્તરૂપા ચિકિત્સા કર્તવ્યેતિ, એવંરૂપોર્થાધિકારઃ
 પ્રોચ્યતે ૫। તથા-ષષ્ઠે પ્રત્યાખ્યાનાધ્યયને-ગુણધારણા-ગુણાનાં=મૂલોત્તરગુણાનાં

આદિ ગુણ જિસમેં હૈ એસે ગુણવાન્ સાધુકો વન્દના આદિ કરનેરૂપ
 અર્થાધિકાર હૈ । ચૌથે પ્રતિક્રમણ અધ્યયન મેં સાધુકૃત્ય સે સ્વલિત હુએ કી
 નિન્દાકારને-અર્થાત્ અતિચારોં કી નિગ્રહણા કરને આદિરૂપ અર્થાધિકાર હૈ ।
 ઇસકા ભાવ યહ હૈ કિ જો સાધુ મૂલગુણોં એવં ઉત્તરગુણોં મેં પ્રમાદ પતિ-
 તતો હો રહા હૈ, પરંતુ વૈરાગ્યભાવ ઉસકા નષ્ટ નહીં હુઆ હૈ, ઓર પરિણામ
 મેં જિસકો વિશુદ્ધિ બઢતી રહતી હૈ-એસે ઉસ સાધુ કો “યહ કામ કરને
 યોગ્ય નહીં હૈ” ઇસ પ્રકાર કા નિંદારૂપ અર્થાધિકાર હૈ ।—

પાંચવાં જો કાર્યોત્સર્ગ નામકા અધ્યયન હૈં ઉસમેં વ્રણ (ફાડા) ચિકિ-
 ત્સારૂપ અર્થાધિકાર હૈ નાપર્ય ઇસકા યહ હૈ કિં ચારિત્રરૂપ પુરુષ કા જો
 અતિચારરૂપ ભાવવ્રણ હૈં ઉસકી દશ પ્રકાર પ્રાયશ્ચિત્તરૂપ ચિકિત્સાકરની
 ચાહિયે એસા ઉસમેં અર્થાધિકાર હૈ । તથા છઠા પ્રત્યાખ્યાન નામ કા જો

પિંડ વિશુદ્ધિ આદિથી સંપન્ન હોય એવા ગુણવાન્ સાધુને વંદણા આદિ કરવારૂપ
 અધિકાર છે. એવા પ્રતિક્રમણ અધ્યયનમાં સાધુકૃત્યથી સ્વલિત થયેલાની નિન્દા
 કરવાનો એટલે કે પોતાના દ્વારા જે આતચારોનું સેવન થઈ ગયું હોય તેની
 નિગ્રહણા આદિ કરવારૂપ અર્થાધિકાર છે. આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે જે સાધુ
 મૂળગુણો અને ઉત્તરગુણોની આરાધના કરવામાં પ્રમાદને કારણે દોષો કરતો હોય
 છે, પરંતુ તેનો વૈરાગ્યભાવ નષ્ટ થયો નથી અને જેના પાશુભામાં વિશુદ્ધિની
 વૃદ્ધિ જ થતી રહે છે, એવા સાધુ દ્વારા પોતાના દોષની આ પ્રકારે નિંદા કરાય
 છે. “આ કામ કરવા યોગ્ય નથી, છતાં પ્રમાદને કારણે મારાથી એવું થઈ ગયું.”
 આ પ્રકારની નિંદારૂપ અધિકારથી યુક્ત એથું અધ્યયન છે. (૫) પાંચમું કાર્યોત્સર્ગ
 નામનું અધ્યયન છે, તેમાં વ્રણચિકિત્સારૂપ અર્થાધિકારનું પ્રતિપાદન કર્યું છે. એટલે
 કે ચારિત્રરૂપ પુરુષનો અતિચારરૂપ જે ભાવવ્રણ છે તેની દસ પ્રકારના પ્રાયશ્ચિત્ત
 રૂપ ધલાને વડે ચિકિત્સા કરવી જોઈએ, એ વિષયનું તેમાં પ્રતિપાદન કર્યું છે.
 છઠું પ્રત્યાખ્યાન નામનું અધ્યાય છે. તેમાં મૂળગુણો અને ઉત્તરગુણોને ધારણ કરવા

ટીકા—‘આવસ્સગસ્સ ણં’ इत्यादि—

आवश्यकसम्बन्धीनि पडध्ययनानि कानि ? इति तान्यर्थाधिकारमाश्रित्योच्यन्ते—आवस्सगस्स’ इत्यादिना । आवश्यकं य खलु इमे=वक्ष्यमाणा अर्थाधिकारः—अर्थेन अधिकाराः—अर्थमाश्रित्य प्रस्तावा भवन्ति, तद्यथा—सावधयोगविरतिः=सामायिकलक्षणो प्रथमेऽध्ययने प्राणातिपातादि सर्वसावधयोगविरतिरर्थाधिकारः ? उत्कीर्तनम्=द्वितीये चतुर्विंशतिस्तवाध्ययने कर्मक्षयप्रधानकारणत्वात् लब्धबोधिविशुद्धिहेतुत्वात् पुनर्वोदिलाभफलत्वात् सावधयोगविरत्युपदेशकत्वेनोपकारित्वाच्च तीर्थकृतां गुणोत्कीर्तनरूपोऽर्थाधिकारः २ । तृतीये वन्दनाध्ययने गुणव्रतश्च प्रतिपत्तिः—गुणाः=मूलोत्तरगुणरूपा व्रतपिण्डविशुद्ध्यादयो विद्यन्ते

अत्थाहिगारा भवंति) आवश्यक के ये वक्ष्यमाण अर्थाधिकार-अर्थ को आश्रित करके कथन हैं । (तं जहा) जो इस प्रकार से हैं—

(सावज्जजोगविरई उविकत्तणं गुणवओ य पडिवत्ती । खलियस्स निंदणा वणतिगिच्छा गुणधारणा चेव) सामાયिकरूप प्रथम अध्ययन में, प्राणातिपात आदिरूप सर्व सावधयोग से विरति हेना यह अर्थाधिकार है । द्वितीय चतुर्विंशतिस्तवरूप अध्ययन में कर्मों के क्षय करने में प्रधानकारण होने से लब्धबोधिनी विशुद्धि से हेतु होने से, तथा पुनर्वोधि के लाभरूप फल की प्राप्ति में कारणभूत होने से और सावधयोग से विरति के उपदेशक होने के कारण अत्यंत उपकारी होने से, तीर्थकरों के गुणों का उत्कीर्तनरूप अर्थाधिकार है, तृतीय वन्दनाध्ययन में मूलगुण और उत्तर गुणरूप व्रत, पिण्डविशुद्धि

અર્થને આશ્રિત કરીને આવશ્યકનુ નીચે પ્રમણે કથન છે. (તંજહા) તે છ અધ્યયનોમાં આ પ્રકારના અર્થની (વિષયની) પ્રશ્નણા કરી છે—

(સાવજ્જજોગવિરઈ ઉવિકત્તણગુણવઓ ય પડિવત્તી । રાલિયસ્સ નિંદનાવણતિગિચ્છા ગુણધારણા ચેવ) સામાયિકરૂપ પહેલા અધ્યયનમાં આદિરૂપ સાવધયોગોની વિરતિનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે. બીજા ચતુર્વિંશતિસ્તવરૂપ (૨૪ તીર્થકરોના કીર્તનસ્તવનરૂપ) જે અધ્યયન છે તેમાં તીર્થકરોની સ્તુતિ શુણોના ઉત્કીર્તનરૂપ અર્થાધિકાર છે તે તીર્થકરોની સ્તુતિ કરવાનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે—કર્મોના ક્ષય કરવામાં પ્રધાન કારણભૂત હોવાથી, લબ્ધબોધિની વિશુદ્ધિમાં કારણભૂત હોવાથી અને પુનર્બોધિના લાભરૂપ ફળની પ્રાપ્તિમાં કારણભૂત હોવાથી, સાવધયોગોમાંથી વિરતિના ઉપદેશક હોવાને કારણે અત્યંત ઉપકારી હોવાથી તીર્થકરોના શુણોની સ્તુતિ થવી જ જોઈએ. ૨૪ તીર્થકરોના શુણોના ઉત્કીર્તનરૂપ અર્થથી સંપન્ન આ બીજું અધ્યયન છે. ત્રીજા વાદણા અ.૧૨૨ માં ૨૭૨ અને ૯૨ શુણરૂપ વ્રત

યસ્ય સ ગુણવૉંસ્તસ્ય પ્રતિપત્તિઃ=વન્દનાદિકા કર્તવ્યા, - એવંરૂપોઽર્થાધિકારઃ ।
 ચ શબ્દઃ પુનરર્થે ૩ । તથા-ચતુર્થે પ્રતિક્રમણાધ્યયને-સ્વલિતસ્ય=સાધુકૃત્યાચ્ચ-
 લિતસ્ય નિન્દના=નિન્દા કર્તવ્યા । અયં ભાવઃ-મૂલોત્તરગુણેષુ પ્રમાદાચીર્ણસ્ય
 પ્રત્યાગતસંવેગસ્ય જન્તોર્વિશુદ્ધ્યમાનાધ્યવસાસ્ય અકાર્યમિદ-મત્યેવં રૂપેણ નિન્દા-
 રૂપોઽર્થાધિકારઃ ૪ । તથા પઞ્ચમે કાર્યોત્સર્ગાધ્યયને-વ્રણચિકિત્સા-વ્રણસ્ય ચિ-
 કિત્સા=ભૈષજ્યમ્ । અયં ભાવઃ-ચારિત્રરૂપપુરુષસ્ય યોઽયમતિચારરૂપો ભાવ-
 વ્રણસ્તસ્ય દશવિધપ્રાયશ્ચિત્તરૂપા ચિકિત્સા કર્તવ્યેતિ, એવંરૂપોઽર્થાધિકારઃ
 પ્રોચ્યતે ૫ । તથા-ષષ્ઠે પ્રત્યાખ્યાનાધ્યયને-ગુણધારણાં-ગુણાનાં=મૂલોત્તરગુણાનાં

આદિ ગુણ જિસમેં હૈ એસે ગુણવાન્ સાધુકો વન્દના આદિ કરનેરૂપ
 અર્થાધિકાર હૈ । ચૌથે પ્રતિક્રમણ અધ્યયન મેં સાધુકૃત્ય સે સ્વલિત હુએ કી
 નિન્દાકારને-અર્થાત્ અતિચારોં કી નિગ્રહણા કરને આદિરૂપ અર્થાધિકાર હૈ ।
 હસકા ભાવ યહ હૈ કિ જો સાધુ મૂલગુણોં એવં ઉત્તરગુણોં મેં પ્રમાદ પતિ-
 તતો હો રહા હૈ, પરંતુ બૈરાગ્યભાવ ઉસકા નષ્ટ નહીં હુઆ હૈ, ઓર પરિણામોં
 મેં જિસકો વિશુદ્ધિ બઢતી રહતી હૈ-એસે ઉસ સાધુ કો “યહ કામ કરને
 યોગ્ય નહીં હૈ” હસ પ્રકાર કા નિંદારૂપ અર્થાધિકાર હૈ ।—

પાંચવાં જો કાર્યોત્સર્ગ નામકા અધ્યયન હૈં ઉસમેં વ્રણ (ફાડા) ચિકિ-
 ત્સારૂપ અર્થાધિકાર હૈ તાત્પર્ય હસકા યહ હૈ કિં ચારિત્રરૂપ પુરુષ કા જો
 અતિચારરૂપ ભાવવ્રણ હૈં ઉસકી દશ પ્રકાર પ્રાયશ્ચિત્તરૂપ ચિકિત્સાકરની
 ચાહિયે એસા ઉસમેં અર્થાધિકાર હૈ । તથા છઠા પ્રત્યાખ્યાન નામ કા જો

પિંડ વિશુદ્ધિ આદિથી સંપન્ન હોય એવા ગુણવાન્ સાધુને વંદણા આદિ કરવારૂપ
 અધિકાર છે. એવા પ્રતિક્રમણ અધ્યયનમાં સાધુકૃત્યથી સ્વલિત થયેલાની નિન્દા
 કરવાનો એટલે કે પોતાના દ્વારા જે આતચારોનું સેવન થઈ ગયું હોય તેની
 નિગ્રહણા આદિ કરવારૂપ અર્થાધિકાર છે. આ કથનનો ભાવર્થ એ છે કે જે સાધુ
 મૂળગુણો અને ઉત્તરગુણોની આરાધના કરવામાં પ્રમાદને કારણે દોષો કરતો હોય
 છે, પરંતુ તેનો વૈરાગ્યભાવ નષ્ટ થયો નથી અને જેના પાંચગુણોમાં વિશુદ્ધિની
 વૃદ્ધિ જ થતી રહે છે, એવા સાધુ દ્વારા પોતાના દોષની આ પ્રકારે નિંદા કરાય
 છે. “આ કામ કરવા યોગ્ય નથી, છતાં પ્રમાદને કારણે મારાથી એવું થઈ ગયું.”
 આ પ્રકારની નિંદારૂપ અધિકારથી યુક્ત થાયું અધ્યયન છે. (૫) પાંચમું કાર્યોત્સર્ગ
 નામનું અધ્યયન છે, તેમાં વ્રણચિકિત્સારૂપ અર્થાધિકારનું પ્રતિપાદન કર્યું છે. એટલે
 કે ચારિત્રરૂપ પુરુષનો અતિચારરૂપ જે ભાવવ્રણ છે તેની દસ પ્રકારના પ્રાયશ્ચિત્ત
 રૂપ ઇલાજો વડે ચિકિત્સા કરવી જોઈએ, એ વિષયનું તેમાં પ્રતિપાદન કર્યું છે.
 છઠું પ્રત્યાખ્યાન નામનું અધ્યાય છે. તેમાં મૂળગુણો અને ઉત્તરગુણોને ધારણ કરવા

ધારણા=પ્રતિપત્તિઃ, એવરૂપોઽર્થાધિકારઃ પ્રરૂપયિષ્યતે । મૂળોત્તરગુણાનાં નિરતિ
ચારં સન્ધારણં યથા ભવાંત તથા પ્રત્યાખ્યાનાધ્યયનં પ્રરૂપયિષ્યતે इत्यर्थः ।
'चैव' इति 'च' शब्दादन्येऽप्यवान्तरार्थाधिकारा विज्ञेयाः । 'एव' शब्दाऽव-
धारणे बोध्यः ।

અધ્યયન હૈ । ઉસમેં મૂળગુણ ઓર ઉત્તરગુણોં કો ધારણ કરનેરૂપ અર્થાધિ-
કાર હૈ । મૂળગુણ ઉત્તરગુણોં કો અતિચાર રહિત અચ્છી તરહ ધારણ કરતા
હૈ વૈસી પ્રરૂપણા સૂત્રકાર પ્રત્યાખ્યાન અધ્યયન મેં કરેંગે । “ચ” શબ્દ સે
સૂત્રકારને યહ પ્રકટ ક્રિયા હૈ કિ આવશ્યક કે ઓર અવાન્તર અર્થાધિકાર
હૈ । “એવ” શબ્દ અવધારણ અર્થ મેં આયા હૈ ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકારને ઇસ સૂત્રદ્વારા આવશ્યક કે છ અર્થાધિકારોં કો
વર્ણન ક્રિયા હૈ । (૧) સામાયિક (૨) ચતુર્વિંશતિસ્તવ, (૩) વંદના, (૪) પ્રતિક્રમણ,
(૫) કાયોત્સર્ગ ઓર (૬) પ્રત્યાખ્યાન । ઇન સર્વ સાવચયોગોં સે વિરક્ત હોના
સામાયિક અધ્યયન મેં, ચૌવીસ તીર્થકરોં કી સ્તુતિ કરના દ્વિતીય ચતુર્વિ-
શતિસ્તવ અધ્યયન મેં, ગુણવાન સાધુ કો વંદના આદિ કરના વંદનાધ્યયન
મેં સાધુકૃત્ય સે સ્વલિત હુએ સાધુ કો અપની નિંદા કરના પ્રતિક્રમણ અધ્યયન
મેં, ચારિત્ર મેં લગે હુએ અતિચારોં કી દશવિધ પ્રાયશ્ચિત સે શુદ્ધિ કરના ત ત્ર્યો-
ત્સર્ગ અધ્યયન મેં, મૂળગુણ ઓર ઉત્તરગુણોં કો ધારણ કરના પ્રત્યાખ્યાન
અધ્યયન મેં અર્થાધિકાર હૈ ।

इय अर्थाधिकार छे प्रत्याख्यान द्वारा ते भूणगुणु अने उत्तरगुणुने अतिचार रहित
सम्यक्इपे धारणु करे छे, એવી પ્રરૂપણા સૂત્રકાર આગળ જતાં પ્રત્યાખ્યાન અધ્ય-
યનમાં કરશે. ‘ચ’ શબ્દ દ્વારા સૂત્રકારે એ પ્રકટ કર્યું છે કે આવશ્યકના આ
સિવાયના બીજાં પણ અવાન્તર અર્થાધિકાર છે. “એવ” આ પદ અવધારણ
અર્થમાં વપરાયું છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા આવશ્યકના છ અર્થાધિકારોં વર્ણન કર્યું
છે—(૧) સામાયિક (૨) ચતુર્વિંશતિસ્તવ (૨૪ તીર્થકરોની સ્તુતિ), (૩) વંદના,
(૪) પ્રતિક્રમણ, (૫) કાયોત્સર્ગ અને (૬) પ્રત્યાખ્યાન.

પહેલા અધ્યયનમાં સમસ્ત સાવધ યોગોથી વિરક્ત થવાનો, બીજા અધ્યયનમાં
૨૪ તીર્થકરોની સ્તુતિ કરવાનો, ત્રીજા વંદના અધ્યયનમાં ગુણવાન સાધુને વંદણા
આદિ કરવાનો, ચોથા પ્રતિક્રમણ અધ્યયનમાં સાધુકૃત્યથી સ્વલિત થયેલા સાધુએ
પોતાની નિંદા કરવાનો, પાંચમાં કાયોત્સર્ગ અધ્યયનમાં ચારિત્રમાં લાગેલા અતિ-
ચારોની દસ પ્રકારના પ્રાયશ્ચિત્તોથી શુદ્ધિ કરવાનો અને છઠ્ઠા પ્રતિક્રમણ અધ્યયનમાં
મૂળગુણુ અને ઉત્તરગુણુને ધારણ કરવાનો અર્થાધિકાર છે. આગળ સૂત્રકારે આ
પ્રમાણુ કથન કર્યું હતું—

પૂર્વમ્ 'આવસ્સયં નિર્વિસ્વિસ્સામિ, સુયં નિર્વિસ્વિસ્સામિ, સ્વંધં નિર્વિસ્વિસ્સામિ, અજ્ઞયણં નિર્વિસ્વિસ્સામિ' इत्युक्तम् । तत्र-आवश्यकदीनि त्रीणि पदानि निक्षिप्तानि । अध्ययनस्य निक्षेपः सम्प्रति क्रमप्राप्तोऽपि न क्रियते । यतस्तस्य निक्षेपः वक्ष्यमाणनिक्षेपानुयोगद्वारे ओघनिष्पन्ननिक्षेपे करिष्यते।सू० ५९।

આધુનાઽઽવશ્યકસ્ય યદ્ વ્યાખ્યાનં, યત્ચ વ્યાખ્યેયં તદુભયમુપદર્શયન્નાહ—
મૂલમ્—આવસ્સયસ્સ एसो पिण्डत्थो वणिणओ समासेणं ।

एत्तो एक्केकं पुण, अज्झयणं कित्तइस्सामि ॥१॥

तं जहा—सोमाइयं, चउवीसत्थओ वन्दणयं पडिक्रमणं काउ-
स्सगो पच्चक्खाणं । तत्थ पढमं अज्झयणं सामाइयं, तस्स ण इमे

पूर्व में आवस्सयं निर्विस्विस्सामि, सुयं निर्विस्विस्सामि, स्वंधं निर्विस्व-
विस्सामि अज्झयणं निर्विस्वविस्सामि" ऐसा सूत्रकारने कहा है। सो इनमें से
आवश्यक आदि तीन पद तो सूत्रकार द्वारा निक्षिप्त किये जा चुके। अब अध्य-
यन का निक्षेप क्रम प्राप्त है—सो क्रम प्राप्त होने पर भी उसका निक्षेप सूत्रकार
यहां नहीं कर रहे हैं क्यों कि वक्ष्यमाण निक्षेपअनुयोगद्वार में आघनिष्पन्न
निक्षेप में वे उसका निक्षेप करेंगे। ॥ सूत्र ५९ ॥

अब सूत्रकार आवश्यक का जो विषय—व्याख्यात हो चुका है तथा
आगे जो विषय व्याख्यात हो चुका है यह दिखलाते हैं:—

आवस्सयस्स एसो इत्यादि । ॥ सूत्र ६० ॥

शब्दार्थ—(आवस्सयस्स) आवश्यक इसनाम से प्रसिद्ध शास्त्र का (एसो)
यह पूर्वोक्तरूप (पिण्डत्थो) पिण्डार्थ (समासेणं) संक्षेपसे (वणिणओ) कहा है।

“आवस्सयं निर्विस्वविस्सामि, सुयं निर्विस्वविस्सामि,
स्वंधं निर्विस्वविस्सामि, अज्झयणं निर्विस्वविस्सामि”

આ કથન અનુસાર આવશ્યક, શ્રુત અને સ્કન્ધ આ ત્રણનો નિક્ષેપ તો થઈ
ચુકયો છે હવે અનુક્રમ પ્રમાણે અધ્યયનનો નિક્ષેપ થવો જોઈએ. છતાં પણ સૂત્રકાર
અહીં ક્રમ પ્રાપ્ત અધ્યયનનો નિક્ષેપ કરતા નથી, કારણ કે આ વિષયનો નિક્ષેપ અનુ-
યોગ દ્વારમાં—ઓઘનિષ્પન્ન નિક્ષેપમાં તેઓ તેનો નિક્ષેપ કરશે. ॥ સૂ. ૫૯ ॥

હવે સૂત્રકાર આવશ્યકનો જે વિષય વ્યાખ્યાત થઈ ચુકયો છે અને આગળ જે
વિષય વ્યાખ્યાત થવાનો છે, તે બતાવે છે. “આવસ્સયસ્સ एसो” ઇત્યાદિ—

ચત્તારિ અણુઓગદારા ભવંતિ, તં જહા-ઉવક્રમે ૧, નિક્ષેવે ૨,
અણુગમે ૩, નણ ૪ ॥૬૦॥

છાયા—આવશ્યકસ્ય એપિ પિંડાર્થો વર્ણિતઃ સમાસેન ।

અતઃ એકૈકં પુનરધ્યયનં કીર્તયિષ્યામિ ॥૧॥

તથા—સામાયિકં ચતુર્વિંશતિસ્તવો વન્દનકં પ્રતિક્રમણં કાયોત્સર્ગઃ પ્રત્યાખ્યા-
નમ્ । તત્ર પ્રથમમધ્યયનં સામાયિકમ્ । તસ્ય ચલુ ઇમાનિ ચત્વારિ અનુયાગ-
દ્વારાણિ ભવન્તિ, તથા-ઉપક્રમો નિશ્લેષઃ અનુગમો નયઃ ॥૬૦॥

તાત્પર્ય વહેને કા યહ હૈ—ઇસ શાસ્ત્ર વા આવશ્યકશ્રુતસ્કંધ એસા નામ સાર્થક
હૈ । અતઃ સાર્થક નામ હોને સે અવશ્ય કરણીય સાવધયોગવિરતિ આદિ કા
પ્રતિપાદન સૂત્રકાર આગે કરે ગે । (એતો) ઇસલિયે આવશ્યક કા સંક્ષેપ સે
સમુદાય અર્થ વર્ણન કરને કે વાદ (પુણ) પુનઃ (એકૈકં અજ્ઞયણં) એક એક
અધ્યયન કા (કિત્તિસ્સામિ) કથન મેં કરુંગા । (ત જહા) વે અધ્યયન ઇસ
પ્રકાર સે હૈ—(સામાઈયં ચતુર્વીસત્થઓવન્દનયં પડિક્રમણં, કાઉત્સર્ગો પચ્ચક્ષણં)
૧ સામાયિક, ૨ ચતુર્વિંશતિસ્તવ, ૩ વન્દનક, ૪ પ્રતિક્રમણ ૫ કાયોત્સર્ગ
૬, પ્રત્યાખ્યાન । (તત્થ પદમં અજ્ઞયણં સામાઈયં) ઇન ૬ અધ્યયનો મેં સે ૧
પહિલા અધ્યયન સામાયિક હૈ । સમઃ આયઃ—સમાયઃ સમાયઃ પ્રયોજનમસ્યેતિ
સામાયિકમ્ ઇસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુમાર રાગદ્વેષ સે રહિત એસા આત્મા કા-

શબ્દાર્થ—(આવસસયસ્સ) આવશ્યક આ નામે પ્રસદ્ધિ એવા શાસ્ત્રમે (એસો)
આ પૂર્વોક્ત પ્રકારનો (પિંડત્થો) પિંડાર્થ (સમાસેજં) સંક્ષિપ્તમાં (વણિઓ) કહેવામાં
આવ્યો છે. આ કથનનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—આ શાસ્ત્રનું આવશ્યક શ્રી
સ્કન્ધ એવું નામ સાર્થક છે. આ રીતે આ શાસ્ત્રનું નામ સાર્થક હોવાથી, અવશ્ય
કરણીય સાવધયોગ વિરતિ આદિનું પ્રતિપાદન સૂત્રકાર આગળ કરવાના છે. (એતો)
તેથી આવશ્યકના સમુદાય અર્થનું સંક્ષિપ્તમાં વર્ણન કરીને (પુણ) હવે (એકૈકં અજ્ઞયણં)
એક એક અધ્યયનનું (કિત્તિસ્સામિ) વર્ણન હું કરીશ, એવું સૂત્રકાર વચન આપે
છે (તંજહા) આવશ્યકના તે અધ્યયનોનાં નામ આ પ્રમાણે છે (સામાઈયં, ચત-
વીસત્થઓ વન્દનયં પડિક્રમણં, કાઉત્સર્ગો પચ્ચક્ષણં) (૧) સામાયિક, (૨) ચતુ
ર્વિંશતિસ્તવ (૨૪ તીર્થકરોની રતુતિ). (૩) વન્દનક, (૪) પ્રાતક્રમણ, (૫) કાયોત્સર્ગ
અને (૬) પ્રત્યાખ્યાન. (તત્થ પદમં અજ્ઞયણં સામાઈયં) આ છ અધ્યયનોમાં પહેલું
સામાયિક નામનું અધ્યયન છે. જેના દ્વારા યોધ આદિકોના અધિક અધિક પ્રાપ્તિ
થતી રહે તેનું નામ અધ્યયન છે. “સમઃ આયઃ=સમાયઃ સમાયઃ પ્રયોજનમસ્યેતિ

टीका—‘आवस्यस्स’ इत्यादि—

आवश्यकस्य=आवश्यक इति नाम्ना प्रसिद्धस्य शास्त्रस्य एव=पूर्वोक्तरूपः
पिण्डार्थः=समुदायार्थः समासेन=संक्षेपेण वर्णितः=वर्णितः । अस्य शास्त्रस्यावश्यक
श्रुतस्कन्ध इति-अवर्थनाम । नाम्नोऽन्वर्थत्वात् अवश्यं करणीयं सावद्ययोगविर-
त्यादिकं प्रतिपादयिष्यते, इति-अभिप्रायः । उत्तरार्धं गाथाऽर्थमाह-अतः=आव-
श्यकस्य संक्षेपेण समुदायार्थं वर्णनानन्तरं पुनः=भूयः एकैकम् अध्ययनं कीर्त्त-
यिष्यामि=कथयिष्यामीति ।

एकैकमध्ययनं कीर्त्तयिष्यामीति प्रतिज्ञानुसारेण तन्निरूपयितुमाह—
‘त जहा’ इत्यादि । तत्रथा-सामायिकं चतुर्विंशतिस्तवो वन्दनकं प्रतिक्रमणं
कायोत्सर्गः प्रत्याख्यानम् । तत्र-तेषु षट्सु अध्ययनेषु प्रथमम्=आद्यम् अध्ययनम्-
अधि-अधिकम् अयनं=प्रापणं बोधादेर्येन तदध्ययनम्, सामायिकम्-समः=राग-
द्वेषवियुक्तः स्वात्मवत्सर्वभूतेषु दृष्टिसम्पन्नरतस्य आयः=प्रतिक्षणं ज्ञानादि-गुणोत्क-

समभावश्च परिणामं किं जो सर्वभूतों में स्वात्मवत् दृष्टि से सम्पन्न होता है
उसका नाम सम है । इस सम की जो आय प्राप्ति है-ज्ञानादिगुणोत्कर्ष के
साथ लाभ है-उसका नाम समाय है । यह सम प्रतिक्षण अपूर्व भवाटवी में
भ्रमण कराने के कारणभूत संक्षेप भाव के विच्छेदक और निरूपम सुख के
हेतु ऐसे ज्ञान, दर्शन और चारित्ररूप पर्यायों से जो संयुक्त हो जाता है
उसका नाम समाय हैं यह समायशब्द का निष्कर्षार्थ है । यह समाय ही
जिस ज्ञान क्रियारूप अध्ययन का प्रयोजन है उसका नाम सामायिक है । अथवा
समाय एव सामायिकम्” समाय ही सामायिक है । इसका जो सबसे पहिले
कथन किया है-उसका कारण यह है कि यह सामायिक समस्त चारित्रादि
गुणों का आधार होने के कारण मुक्ति का प्रधान हेतु है । कहा है-जैसे सर्व

सामायिकम्” आ व्युत्पत्ति रागद्वेषादी रक्षित एवा आत्मानं समलावश्य परिणाम
के जे सर्वभूतोभां स्वात्मवत् दृष्टिती संपन्न होय छे, तेनु नाम ‘सम’ छे. ते
समनी जे आय (प्राप्ति) छे-ज्ञानादि गुणोत्कर्ष रूप जे लाभ छे, तेनु नाम समाय
छे प्रतिक्षण अपूर्व भवाटवीभां भ्रमण करववाने कारणभूत संक्षेप भावना विच्छेदक
अने अनुपम सुभना हेतु एवां ज्ञान, दर्शन अने चारित्ररूप पर्यायोधी जे संयु-
क्त (संपन्न) थछ जाय छे तेनु नाम समाय छे आ प्रकारेनो ‘समाय’ पदने
निष्कर्षार्थ थाय छे. आ समाय जे जे ज्ञान क्रिया रूप अध्ययननु प्रयोजन छे,
तेनु नाम सामायिक छे. अथवा-“समाय एव सामायिकम्” समाय ज सामायिक रूप
छे आ सामायिकनु साथी प्रथम कथन करवानु कारण ए छे के आ सामायिक
समस्त चारित्रादि गुणोना आधार रूप होवाथी मुक्तिप्राप्तिना प्रधान कारण रूप छे.

ર્ષપ્રાપ્તિઃ—સમાયઃ, સમો હિ પ્રતિક્ષણમપૂર્વેઃ જ્ઞાનદર્શનચરણપર્યાયૈર્ભવાટવીશ્રમણહેતુ-
સંક્રેશવિચ્છેદકૈર્નિરૂપમસુખહેતુભિઃ સંયુજ્યતે इति भावः, સમાયઃ પ્રયોજનમાય
જ્ઞાનક્રિયામુદાયરૂપસ્વાધ્યયમસ્યેતિ સામાયિકમ્ । યદ્વા-સમાય એવ સામાયિ-
કમ્ । સમસ્તચરણાદિગુણાધારત્વેન પ્રધાનમુક્તિધારણત્વાદસ્ય પ્રથમમુખન્યાસઃ । ઉક્તં ચ-
“સામાયિકં ગુણાનામાધારઃ, સ્વમિવ સર્વભાવાનામ્ ।

નહિ સામાયિકં હીનાશ્રયણાદિ ગુણાન્વિતા યેન ॥૧॥

તન્માઙ્ગગાદ ભગવાન્ સામાયિકમેવ નિરૂપમાપાયમ્ ।

શારીરમાનસાનેકદુઃસ્વનાશસ્ય મોક્ષસ્ય ॥૨॥” इति ॥

તસ્યૈવંભૂતસ્ય સામાયિકસ્ય સ્વલુ ઇમાનિ વક્ષ્યમાણાનિ ચ-ચારિ અનુ-
યોગદ્વારાણિ—અનુયોગઃ=અધ્યયનાર્થકથનવિધિસ્તસ્ય દ્વારાણીવ દ્વારાણિ—મહા-
પુરસ્યેવ સામાયિકસ્યાનુયોગાર્થઃ=વ્યાખ્યાનાર્થ દ્વારાણિ=પ્રવેશમાર્ગા ભવન્તિ ।
મહાનગરદૃષ્ટાન્તઃ પૂર્વે સપ્તપञ्च ઉપદર્શિતસ્તત્ત એવ વિજ્ઞેયઃ ।

ભાવોં કા આધાર આત્મા હોતા હૈં ઉસી તરહ સમસ્ત ગુણોં કા આધાર સામાયિક
હૈં—સામાયિક રહિત પુરુષ ચારિત્રાદિગુણોં સે યુક્ત નહીં હો સકતે હૈં । ઇસલિયે
ભગવાન્ને શારીરિક માનસિક અનેક દુઃસ્વોં કે ન શવાલે મોક્ષ કા નિરૂપમ
ઉપાય સામાયિકકો હી કહા હૈં । (તસ્ય ણં ઇમે ચત્તારિ અણુઓગદારા હવંતિ)
ઉસ સામાયિક કે વે ચાર અનુયોગદ્વાર હૈં । જિસ પ્રકાર પ્રવેશ કે ચાર પ્રધાન
દ્વાર હોતે હૈં । ઉસી પ્રકાર પ્રવેશ કે ચાર પ્રધાન દ્વાર હોતે હૈં । ઉન્હોં કા
નામ અનુયોગ દ્વાર અધ્યયન કે અર્થ કે કહને કી વિધિ કા નામ અનુયોગ હૈં ।
મહાનગર કા દૃષ્ટાન્ત પ્રથમ સૂત્ર કી વ્યાખ્યા કરને કે પહિલે કહદિયા હૈં—
અતઃ વહાં સે ઉસે જાન લેના ચાહિયે ।—

કહ્યું છે કે—જેમ સત્તસ્ત ભાવોના આધાર આત્મા હોય છે, તેમ સમસ્ત ગુણોના
આધાર સામાયિક છે.” સામાયિકરહિત પુરુષ ચારિત્ર આદિ ગુણોથી સંપન્ન હોઈ
શકતા નથી. તેથી જ ભગવાને શારીરિક અને માનસિક દુઃખોનો નાશકર્તા મોક્ષ
પ્રાપ્તિનો શ્રેષ્ઠ ઉપાય સામાયિક જ કહ્યો છે. (તસ્ય ણં ઇમે ચત્તારિ અણુઓગદારા
હવંતિ) તે સામાયિકના આ ચાર અનુયોગ દ્વાર છે જેમ કેઈ મહાનગરમાં પ્રવેશ
કરવાને માટે ચારે દિશામાં ચાર મુખ્ય દરવાજા હોય છે, એજ પ્રમાણે આ મહા-
નગરરૂપ સામાયિકના અનુયોગને (વ્યાખ્યાનને) માટે ચાર દ્વાર કહે છે. અધ્યયનના
અર્થને (વિષયને) કહેવાની વિધિનું નામ અનુયોગ છે મહાનગરના દ્વારોનું દૃષ્ટાન્ત
પ્રથમ સૂત્રની વ્યાખ્યા કરતાં, પહેલાં પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે તો તે દૃષ્ટાન્ત પહેલા
સૂત્રમાંથી વાંચી લેવું જોઈએ.

તાનિ અનુયોગદ્વારાણિ દર્શયતિ—‘તં જહા’ ઇત્યાદિ । તથા ઉપક્રમઃ-
 ઉપક્રમણમ્-ઉપક્રમઃ-દૂરસ્થસ્ય વસ્તુનસ્તસ્તૈઃ પ્રતિપાદનપ્રકારૈઃ સમીપમાનીય
 નિક્ષેપયોગ્યતાકરણમિત્યર્થઃ । ઉપક્રાન્તં હિ ઉપક્રમાન્તર્ગતૈર્મેદૈર્વિચારિતં સદ્
 નિશ્ચિપ્યતે નાન્યથેતિ ભાવઃ । યદ્વા-ઉપક્રમ્યતે=નિક્ષેપયોગ્યં ક્રિયતેડનેત્ત ગુરુ-
 વાગ્યોગેનેત્યુપક્રમઃ । અથવા-ઉપક્રમ્યતેડસ્મિન્ શિષ્યશ્રવણભાવે સતિ ગુરુણેત્યુપક્રમઃ,
 કિંવા-ઉપક્રમ્યતેડમાદૃ વિનીતવિનયવિનયાદિ-યુપક્રમઃ । એવં વિવક્ષાભેદેન કરણ-
 ધિકરણા પાદાનકારકૈર્ગુરુવાગ્યોગાદયોડર્થા ઉક્તાઃ । યદિત્વેવોડ્યન્યન્તરોડર્થઃ
 કરણાદિકારકવાચ્યત્વેન વિવક્ષ્યતે તથાપિ ન દોષઃ ।

(તં જહા) સૂત્રમાર-અહીં અનુયોગદ્વારોં કો કહતે હૈં—(ઉવક્રમે, નિવ્રક્ષેવે,
 અણુગમે, નય) ૧ ઉપક્રમ, નિક્ષેપ, અનુગમ, ઓર નય । દૂરસ્થવસ્તુ કો ઉન ૨
 પ્રતિપાદન પ્રકારોં સે સમીપ મેં લાકરકે નિક્ષેપ કી યોગ્યતાવાલી બનાના
 હસકા નામ ઉપક્રમ હૈ । ઉપક્રાન્ત વસ્તુ હી ઉપક્રમાન્નર્ગત મેદોં સે વિચારિત
 હોતી હુઈ નિશ્ચિત યોગ્ય હોતી હૈ । અન્યથા નહીં । અથવા—જિસ ગુરુ કે વચન
 કે વ્યાપાર સે વસ્તુ નિક્ષેપ યોગ્ય કી જાતી હૈં ઉસકા નામ ઉપક્રમ હૈ ।
 શિષ્યજનોં કો સુનને કા ભાવ હોને પર વસ્તુ જિસમેં નિક્ષેપયોગ્ય કી જાતી
 હૈં ઉસકા નામ ઉપક્રમ હૈ । જિસ વિનીત-વિનયશીલ શિષ્ય કે વિનયાદિ
 ગુણોં સે વસ્તુ નિક્ષેપ યોગ્ય કી જાતી હૈં ઉસકા નામ ઉપક્રમ હૈ । હસ
 પ્રકાર વિવક્ષા કે ભેદ સે હન પૂર્વોક્ત કરણ અધિકરણ અપાદાન આદિ તારા
 ગુરુવાગ્યોગ આદિ અર્થ ઉપક્રમ કા કોઈ એક મી અર્થકરણ આદિ દ્વારા
 વાચ્યત્વેન વિવક્ષિત હુઆ લિયા જાય તો મી ઉસમેં કોઈ દોષ નહીં હૈં ।

(તંજહા) તે અનુયોગદ્વારે નીચે પ્રમાણે છે—

(ઉવક્રમે, નિવ્રક્ષેવે, અણુગમે, નય) (૧) ઉપક્રમ, (૨) નિક્ષેપ, (૩) અનુગમ
 અને (૪) નય.

દૂરની વસ્તુઓને આ પ્રતિપાદન પ્રકારોની સમીપમાં લાવીને નિક્ષેપને યોગ્ય
 બનાવવી તેનું નામ ઉપક્રમ છે. ઉપક્રાન્ત વસ્તુ જ ઉપક્રમાન્ત ગતિભેદોથી વિચારતાં
 વિચારતાં નિશ્ચિતયોગ્ય થાય છે—અન્ય પ્રકારે નિશ્ચિતયોગ્ય થતી નથી.

અથવા—જે ગુરુના વચનના વ્યાપારથી વસ્તુને નિયતયોગ્ય કરાય છે, તેનું
 નામ ઉપક્રમ છે. શિષ્યોને સાંભળવાનો ભાવ થાય ત્યારે વસ્તુ જેમાં નિક્ષેપયોગ્ય
 કરાય છે તેનું નામ ઉપક્રમ છે. જે વિનીત શિષ્યના વિનયાદિ શુભોથી વસ્તુને
 નિક્ષેપયોગ્ય કરાય છે તેનું નામ ઉપક્રમ છે. આ પ્રમાણે વિવક્ષાના ભેદથી આ
 પૂર્વોક્ત કરણ, અધિકરણ, અપાદાન આદિદ્વારા ગુરુવાગ્યોગ આદિ ઉપક્રમના અર્થ
 કહેવામાં આવ્યા છે. જે આ બધામાંથી ઉપક્રમના કોઈ એક પણ અર્થકરણ આદિ
 દ્વારા વાચ્યત્વે જે વિવક્ષિત થયે છે તે લેવામાં આવે, તો પણ તેમાં કોઈ દોષ નથી.

निक्षेपः=निक्षेपः। निक्षेपः-नामस्थापनादिभेदः शास्त्रादेर्न्यसने व्यवस्थापनमिति यावत् । निक्षिप्यतेऽनेनास्मिन् अस्मादिति वा निक्षेपः । गुरुवाग्योऽगार्थ अत्रापि पूर्ववद् बोध्याः ।

अनुगमः-अनुगमनम्, अनुगमः-गन्तव्यलालार्थकथनम् । अनुगम्यते-व्याख्यायते सूत्रमनेनास्मिन् यस्मादिति-अनुगमः । वाच्यार्थविवक्षार्थपूर्ववद् बोध्या ।

नयः-नयनं नयः, नीयते=परिनिष्ठते निर्णीयते वस्तुरवरूपम्-अनेनास्मिन् अस्मादिति नयः । अनन्तधर्माध्यासिते वस्तुनि एकांशग्राहको बोध इत्यर्थः । अयमेवार्थो भावसाधने वरणादि साधने चापि बोध्यः । इदमत्र बोध्यम्-उप-

खने का नाम निक्षेप है-नाम स्थापना आदि के भेद से शास्त्र आदि का न्याय-व्यवस्थापन करना इसका नाम निक्षेप है । जिसके द्वारा अथवा जिसमें अथवा जिससे वस्तु निक्षेपकी जाती-समझाई जाती हैं इसका नाम निक्षेप है । गुरुवाग्योऽग आदि अर्थ यहां पर भी पहिले की तरह करण आदि साधनोंद्वारा किये गये जानना चाहिये । सूत्र के अनुकूल अर्थ कहना इसका नाम अनुगम है । जिसके द्वारा सूत्रका व्याख्यान किया जावे अथवा जिसमें सूत्रका व्याख्यान किया जाय अथवा जिससे सूत्रका व्याख्यान किया जावे उसका नाम अनुगम है । यहां पर भी करणादिकारकों द्वारा वाच्य अर्थ की विवक्षा पहिले की तरह जान लेनी चाहिये । जिसके द्वारा, अथवा जिसमें, अथवा जिससे वस्तु का स्वरूप जाना जावे उसका नाम नय है । इसका तात्पर्य यह कि वस्तु में अनन्त धर्म हैं-उनमें से किसी एक अंश का ग्रहण करनेवाला जो बोध है उसका नाम नय

रागवुं अथवा स्थापन करवुं तेनुं नाम नि य छे. ओटवे के नाम, स्थापना आदिना लेटो । रा शास्त्र न्यास (व्यवस्थापन) करवो तेनुं नाम नि य छे. नेना द्वारा अथवा नेमां अथवा नेना वडे वस्तु नि य कराय छे-वस्तुनुं प्रतिपादन कराय छे-वस्तुनुं स्वइय समजववामां आवे छे तेनुं नाम नि य छे. गुरुवाग्योऽग आदि अर्थ पणु अही पड़ेलांना नेवांज करणु आदि साधनो द्वारा करवामां आव्या छे, ओम समजवुं. सूत्रने अनुगम ओवो अर्थ कहेवो तेनुं नाम अनुगम छे. नेना द्वारा वस्तु व्याख्यान करवामां आवे, अथवा नेमां सूत्रनुं व्याख्यान करवामां आवे, अथवा ने वडे सूत्रनुं व्याख्यान करवामां आवे, तेनुं नाम अनुगम छे. अही पणु करणु आदि साधनो द्वारा वाच्य अर्थनी विवक्षा पड़ेलांनी नेमज समजवी.

नेना द्वारा अथवा नेनाथी वस्तुनुं स्वइय जणववामां आवे छे तेनुं नाम नय छे. तेनुं ता पय नीये प्रमाणे छे-वस्तुमां अनन्त धर्म छे तेमांथी केछ ओक अंशने ग्रहणु करनावे ने बोध होय छे तेनुं नाम नय छे. नयने आ

ક્રાન્તમેવ=નિક્ષેપયોગ્યતામાનીતમેવ વસ્તુ નિક્ષિપ્યતે, અત આદાવુપક્રમમભિધાય પશ્ચાદ્ નિક્ષેપ ઉક્તઃ નામાદિમેવૈર્નિર્ણિતમેવ અનુગમવિષયં ભવતિ, અતો નિક્ષેપા-નન્તરમનુગમ ઉચ્યતે । અનુગમ્યમાનમેવ ચ નયૈર્વિચાર્યતે નાન્યથાત તદનન્તરં નય ઉક્તઃ ॥સૂ. ૬૦॥

તત્ર-ઉપક્રમો દ્વિવિધઃ શાસ્ત્રીયો લૌકિકશ્ચ । તત્ર લૌકિકમુપક્રમમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં ઉવક્કમે ? ઉવક્કમે છવિવહે પળણત્તે, ત જહા

ળામોવક્કમે ઠવળોવક્કમે દવ્વોવક્કમે ચેત્તોવક્કમે કાલોવક્કમે ભાવોવ-ક્કમે । નામઠવળાઓ ગયાઓ । સે કિં તં દવ્વોવક્કમે ? દવ્વોવક્કમે દુવિવહે પળણત્તે, તં જહા—આગમઓ ય નો આગમો ય જોવ જાણય-સરીરભવિયસરીર વઙ્ગરિત્તે દવ્વોવક્કમે તિવિવહે પળણત્તે તં જહા—સચિત્તે અચિત્તે મીસણ ॥સૂ. ૬૧॥

હૈ । નય કા યહી અર્થ ભાવભાધન મેં ઔર કરણ આદિ સાધનોં મેં મી જાનના ાહિયે । યહાં ફલ પ્રકાર સમજના ાહિયે ઉપક્રાન્ત હી—નિક્ષેપ કી યોગ્યતા મેં આઈ હુઈ હી વસ્તુ નિક્ષેપ હોતી હૈ, ફલિયે સવ સે પહિલે ઉપ ક્રમ કો કહ કરકે પશ્ચાત્ સૂત્રકારને નિક્ષેપ કા પાઠ કિયા હૈ । નામ આદિ મેદોં સે નિક્ષેપ હુઈ વસ્તુ હી અનુગમ કી વિષયભૂત બનતી હૈ—ફલિયે નિક્ષેપ કે અનન્તર અનુગમ કહા હૈ । અનુગમ સે યુક્ત હુઈ હી વસ્તુ નયોં દ્વારા વિચાર કોટિ મેં આતી હૈ, અન્યથા નહીં ફલિયે અનુગમ કે બાદ નય કા પાઠ કિયા હૈ । ॥સૂત્ર ૬૦॥

અર્થ જ ભાવસાધનમાં અને કરણ આદિ સાધનોમાં પણ સમજવો જોઈએ. અહીં આ પ્રમાણે સમજવું જોઈએ. ઉપક્રાન્ત જ—નિક્ષેપની યોગ્યતામાં આવેલી વસ્તુ જ નિક્ષિપ્ત થાય છે, તેથી સૂત્રકારે સૌથી પહેલાં ઉપક્રમનું કથન કરીને ત્યારબાદ નિક્ષેપનું કથન કર્યું છે.

નામ આદિ લેખોથી જેનો નિક્ષેપ કરવામાં આવ્યો હોય એવી વસ્તુ જ અનુગમ કરવાને યોગ્ય બને છે. તેથી નિક્ષેપનું કથન કર્યા બાદ સૂત્રકારે અનુગમનું કથન કર્યું છે. અનુગમથી યુક્ત એવી વસ્તુ જ નયો દ્વારા વિચારણીય બને છે, તેથી અનુગમના સ્વરૂપનું કથન કર્યાબાદ સૂત્રકારે નયના સ્વરૂપનું કથન કર્યું છે. ॥સૂ. ૬૦॥

છાયા—અથ કોઽસૌ ઉપક્રમઃ ? ઉપક્રમઃ પર્વિધઃ પ્રજ્ઞસઃ, તદ્યથા—નામોપ-
ક્રમઃ સ્થાપનોપક્રમઃ દ્રવ્યોપક્રમઃ ક્ષેત્રોપક્રમઃ કાલોપક્રમો ભાવોપક્રમઃ નામસ્થાપને
ગતૈ । અથ કોઽસૌ દ્રવ્યોપક્રમઃ ? દ્રવ્યોપક્રમો દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ, તદ્યથા—આગમતશ્ચ
નોઆગમતશ્ચ ભવ્યશરીરવ્યતિરિક્તો દ્રવ્યોપક્રમસ્ત્રિવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ તદ્યથા—સચિત્તઃ,
અચિત્તઃ મિશ્રકઃ ॥૬૧॥

ઉપક્રમ શાસ્ત્રીય ઉપક્રમ ઓર લૌકિક ઉપક્રમ કે ભેદ સે દો પ્રકાર
કા હૈ—ઇનમેં લૌકિક ઉપક્રમ કા યા સ્વરૂપ હૈ ચહ સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—

“સે કિં તં ઉવક્કમે” ઇત્યાદિ ॥સૂત્ર ૬૧॥

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ઉવક્કમે) હે મદન્ત ! ઉપક્રમ કા વ્યા તાત્પર્ય હૈ ?
ઉત્તર—(ઉવક્કમે છવ્વિહે પણ્ણ) ઉપક્રમ છ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ ।
(તંજહા) જૈસે (નામોવક્કમે, ઠવણોવક્કમે, દવ્વોવક્કમે, સેત્તોવક્કમે, કાલોવ-
ક્કમે, ભાવોવક્કમે) નામ ઉપક્રમ, સ્થાપના ઉપક્રમ દ્રવ્ય ઉપક્રમ, ક્ષેત્રઉપક્રમ, કાલ-
ઉપક્રમ ઓર ભાવઉપક્રમ । (નામઠવણાઓ ગધાઓ) નામ ઉપક્રમ ઓર સ્થાપના
ઉપક્રમ કા સ્વરૂપ નામ આવશ્યક ઓર સ્થાન આવશ્યક કે સમાન જાનના
ચાહિયે । (સે કિં તં દવ્વોવક્કમે) હે મદન્ત ! દ્રવ્યોપક્રમ કા વ્યા સ્વરૂપ
હૈ ? (દવ્વોવક્કમે દુવિહે પણ્ણત્તે) દ્રવ્યોપક્રમ સ દો પ્રકાર કા કહા ગયા
હૈ । (તં જહા) જૈસે (આગમઓ ય નોઆગમઓ ય જાવ જાણયસરીર ભવિયસરીર-

ઉપક્રમના શાસ્ત્રીય ઉપક્રમ અને લૌકિક ઉપક્રમ નામના બે ભેદ કહ્યા છે.
તેમાંથી લૌકિકઉપક્રમનું સૂત્રકાર હવે નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં ઉવક્કમે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ઉવક્કમે ?) શિષ્ય શુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે
શુરુભહારાજ ! ઉપક્રમનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ઉવક્કમે છવ્વિહે પણ્ણત્તે) ઉપક્રમ ૬ પ્રકારનો કહ્યો છે—(તંજહા)
તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે.

(નામોવક્કમે, ઠવણોવક્કમે, દવ્વોવક્કમે, સેત્તોવક્કમે, કાલોવક્કમે, ભાવોવક્કમે)
(૧) નામ ઉપક્રમ, સ્થાપના ઉપક્રમ, (૩) દ્રવ્યઉપક્રમ, (૪) ક્ષેત્રઉપક્રમ (૫) કાળ-
ઉપક્રમ અને (૬) ભાવઉપક્રમ. (નામઠવણાઓ ગયાઓ) નામઉપક્રમ અને સ્થાપના
ઉપક્રમનું સ્વરૂપ નામ આવશ્યક અને સ્થાપના આવશ્યક બેવું સમજવું.

(સે કિં તં દવ્વોવક્કમે ?) પ્રશ્ન—હે શુરુભહારાજ ! દ્રવ્યોપક્રમનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(દવ્વોવક્કમે દુવિહે પણ્ણત્તે) દ્રવ્યોપક્રમ બે પ્રકારનો કહ્યો છે. (તં જહા)
જેનકે....(આગમઓ ય, નોઆગમઓ ય જાવ જાણયસરીર ભવિયસરીરવરિત્તે દવ્વો-

टीका—शिष्यः पृच्छति—‘से किं तं’ इत्यादि—अथ कोऽसौ उपक्रमः ? इति ।

उत्तरमाह—उपक्रमः षा ईधः प्रज्ञप्तः—नामोपक्रमोपक्रमादिरूपः । तत्र नामोपक्रमोपक्रमादिरूपो नामावश्यकथापनावश्यकवद् विज्ञेयौ । सम्प्रति द्रव्योपक्रमं प्रश्नपूर्वकं प्रस्तौति—अथ कोऽसौ द्रव्योपक्रमः ? द्रव्योपक्रमो द्विविधः प्रज्ञप्तः, तद् यथा—आगमतश्च नो आगमतश्च, यावत् ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तो द्रव्योपक्रमः । इह यावच्छब्देन द्रव्यावश्यकवद् द्रव्योपक्रमव्याख्या बोध्या । तत्र ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तो द्रव्योपक्रमो द्विविधः प्रज्ञप्तः । तद् यथा—सचित्तः, अचित्तः, मिश्रकः । तत्र सचित्तद्रव्यविषयः सचित्तः, अचित्तद्रव्यविषयोऽचित्तः, मिश्रद्रव्यविषयो मिश्रकः ॥ सू० ६१ ॥

वहरित्तं द्रव्योपक्रमे तिविहे पण्णत्ते—तं जहा—सचित्ते अचित्ते मीसए) आगम द्रव्योपक्रम—नोआगम द्रव्योपक्रम । नोआगम द्रव्योपक्रम ३ तीन प्रकार का है—ज्ञायकशरीर द्रव्योपक्रम, भव्यशरीर द्रव्योपक्रम और ज्ञायकशरीर भव्यशरीर व्यतिरिक्त द्रव्योपक्रम । इनमें ज्ञायक शरीर, भव्यशरीर से व्यतिरिक्त जो द्रव्योपक्रम है वह तीन प्रकार का है । सचित्त, अचित्त और मिश्र । जिस उपक्रम का विषय सचित्त द्रव्य है वह तद्व्यतिरिक्त सचित्तद्रव्योपक्रम है । जिस उपक्रम का विषय अचित्त द्रव्य है वह तद्व्यतिरिक्त अचित्तद्रव्योपक्रम है । और जिसका विषय सचित्त अचित्त दोनों प्रकार का द्रव्य है । वह तद्व्यतिरिक्त मिश्र द्रव्योपक्रम है । इस द्रव्योपक्रम की व्याख्या द्रव्यावश्यक की तरह जाननी चाहिये ।

भावार्थ—सूत्रकारने यहां पर उपक्रम के ६ भेदों को प्रकट करते हुए

वक्रमे तिविहे पण्णत्ते—तं जहा—सचित्ते, अचित्ते मीसए)

(१) ज्ञायकशरीर द्रव्योपक्रम અને (२) नोआगमद्रव्योपक्रम. नोआगमद्रव्योपक्रम नीचे प्रमाणे त्रणु प्रकारનો કહ્યો છે—(૧) જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યોપક્રમ, (૨) ભવ્યશરીર દ્રવ્યોપક્રમ અને (૩) જ્ઞાયકશરીર અને ભવ્યશરીરથી વ્યતિરિક્ત (ભિન્ન) દ્રવ્યોપક્રમ તેમાનો જે જ્ઞાયકશરીર ભવ્યશરીર વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યોપક્રમ છે તેના નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર છે. (૧) સચિત્ત, (૨) અચિત્ત અને (૩) મિશ્ર જે ઉપક્રમનો વિષય સચિત્ત દ્રવ્ય છે, તેને તદ્વ્યતિરિક્ત સચિત્તદ્રવ્યોપક્રમ કહે છે. જે ઉપક્રમનો વિષય અચિત્તદ્રવ્ય છે તે ઉપક્રમને તદ્વ્યતિરિક્ત અચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ કહે છે. અને જેનો વિષય સચિત્ત અચિત્ત બન્ને પ્રકારનું દ્રવ્ય છે. તે ઉપક્રમને તદ્વ્યતિરિક્ત મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમ કહે છે. આ દ્રવ્યોપક્રમની વ્યાખ્યા દ્રવ્યાવશ્યકના જેવી જ સમજવી.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં ઉપક્રમના ૬ ભેદોને પ્રકટ કર્યા છે. તેમાંથી

અથ સચિત્તં દ્રવ્યોપક્રમં નિરૂપયતિ—

મૂઠ્ઠા—સે કિં તં સચિત્તં દ્રવ્યોપક્રમે ? સચિત્તે દ્રવ્યોપક્રમે તિ-
વિદ્યે પપ્પણ્ણત્તે, તં જહા—દુપ્પણ્ણ ચઉપ્પણ્ણ અપણ્ણ । એકિ પુણ્ણ દુવિદ્યે
પપ્પણ્ણત્તે, તં જહા—પપ્પણ્ણમે ય વત્થુવિણાસે ય ॥ સૂ. ૬૨ ॥

નામ સ્થાપના ઓર દ્રવ્ય કા ઉપક્રમ કા સ્વરૂપ પ્રકટ કિયા હૈ । ઇસમેં કિસી ચેતન અચેતન પદાર્થ વા ઉપક્રમ એસા નામ રલ્લેના યહ નામ ઉપક્રમ હૈ । કિસી પદાર્થ મેં ઉપક્રમ વા આરોપ કરના યહ સ્થાપના ઉપક્રમ હૈ । ભૂત મેં હુઈ અથવા ભવિષ્યત્ કાલ મેં હોનેવાલી ઉપક્રમ કી પર્યાય કો વર્ત-
માન મેં ઉપક્રમરૂપ સે હના યહ દ્રવ્ય ઉપક્રમ હૈ । ઇસકે આગમ ઓર નો
આગમ કો આશ્રિત કરકે દો ભેદ હૈ । ઉપક્રમશાસ્ત્ર કા અનુપયુક્ત જ્ઞાતા આગમ-
કી અપેક્ષા સે દ્રવ્યોપક્રમ હૈ । નોઆગમ કો આશ્રિત કરકે દ્રવ્યોપક્રમ કે
૩ ભેદ હૈ—જ્ઞાયકશરીર, ભવ્યશરીર ઓર ઇન દોનોં સે વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યોપક્રમ ।
ઇનમેં ઉપક્રમ શાસ્ત્ર કે અનુપયુક્ત જ્ઞાતા કા નિર્જીવ શરીર નોઆગમ સે જ્ઞાયક
શરીર દ્રવ્યોપક્રમ હૈ । જિસ પ્રાપ્ત શરીર મેં જીવ આગે ઉપક્રમ શાસ્ત્ર કો
સીલેગા વહ ભવ્યશરીર દ્રવ્યોપક્રમ હૈ । ઇન દોનોં સે વ્યતિરિક્ત જો નો-
આગમદ્રવ્યોપક્રમ હૈ વહ સચિત્ત, અચિત્ત ઓર મિશ્રદ્રવ્યોપક્રમ કે ભેદ સે
ત્રીન ૩ પ્રકાર વા હૈ । ॥મુત્ર. ૬૧॥

નામ, સ્થાપના અને દ્રવ્યોપક્રમનું નિરૂપણ આ સૂત્રમાં કયું છે કોઈ ચેતન-અચે-
તન પદાર્થનું ‘ઉપક્રમ’ એવું નામ રાખવું તે ‘નામઉપક્રમ’ છે. કોઈ પદાર્થમાં
ઉપક્રમનો આરોપ કરવો તેનું નામ સ્થાપના ઉપક્રમ’ છે. ભૂતકાળમાં પ્રાપ્ત થયેલી
અથવા ભવિષ્યમાં થનારી ઉપક્રમની પર્યાયને વર્તમાનમાં ઉપક્રમરૂપે કહેવી તેનું
નામ દ્રવ્યઉપક્રમ છે. તેના આગમ અને નોઆગમને આશ્રિત કરીને ત્રે ભેદ છે.
ઉપક્રમશાસ્ત્રનો અનુપયુક્ત જ્ઞાતા આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યોપક્રમ છે, નોઆગમને
આશ્રિત કરીને દ્રવ્યોપક્રમના ત્રણ ભેદ પડે છે. (૧) જ્ઞાયકશરીર, (૨) ભવ્યશરીર
અને (૩) તે બન્નેથી લિન્ન એવો તદ્વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યોપક્રમ.

ઉપક્રમશાસ્ત્રના અનુપયુક્ત જ્ઞાતાના નિર્જીવ શરીરને નોઆગમની અપેક્ષાએ
જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યોપક્રમ કહે છે. જે પ્રાપ્ત શરીરથી જીવ આગમ જતાં ઉપક્રમશાસ્ત્ર
શીખશે, તેનું નામ ભવ્યશરીર દ્રવ્યોપક્રમ છે. આ બન્નેથી લિન્ન એવો જે નો-
આગમ દ્રવ્યોપક્રમ છે, તે સચિત્ત, અચિત્ત, અને મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમના ભેદથી ત્રણે
પ્રકારનો કહ્યો છે. ॥ સૂ. ૬૧ ॥

છાયા—અથ કોડસૌ સચિત્તો દ્રવ્યોપક્રમઃ ? સચિત્તો દ્રવ્યોપક્રમસ્ત્રિવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તદ્વથા—દ્વિપદશ્ચતુષ્પદોપદઃ । એકૈકઃ પુનર્દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તદ્વથા—પરિકર્મણિ ચ વતુવિનાશે ચ ॥ સૂત્ર ૬૨ ॥

અર્થ સૂત્રકાર સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ ના સ્વરૂપ પ્રકટ કરતે હૈ—

“સે કિં તં સચિત્તે દ્રવ્યોપક્રમે” इत्यादि । ॥ સૂત્ર ૬૨ ॥

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સચિત્તે દ્રવ્યોપક્રમે) હે મદન્ત ! સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

(સચિત્તે દ્રવ્યોપક્રમે તિવિહે પળ્લત્તે) ઉત્તર—સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ ઇતીન પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । (તં જહા) જૈસે (દુષ્ણ ચુષ્ણ અપ્ણ) દ્વિપદ, ચતુષ્પદ ઓર અપદ । ઇન મેં સે નટ નર્તક આદિરૂપ દ્વિપદ સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ હૈ । હસ્તી અથ આદિરૂપ ચતુષ્પદ સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ હૈ । તથા આમ્રાદિ-વૃક્ષરૂપ અપદ સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ હૈ । (એકિકે પુળ દુવિહે પળ્લત્તે) ઇનેમે મી એક એક દો ૨ પ્રકારકા કહા ગયા હૈ । (તં જહા) જૈસે—(પરિક્રમે ય વત્થુ-વિનાસેય) પરિકર્મ મેં ઓર વતુ વિનાશ મેં અવશિત્ત વસ્તુ મેં ગુણ વિશેષ કા આધાન કરના પરિકર્મ હૈ । ઇસ પરિકર્મ મેં પરિકર્મ વિષયવાલા દ્રવ્યોપક્રમ હોતા હૈ । દ્વિપદવાલે નટ—નર્તક આદિ જન ઘૃત આદિ દ્રવ્ય કે ઉપયોગ સે જો અપને બલ આદિ કી વૃદ્ધિ કરતે હૈ અથવા ઓર અનેક સાધનો સે કર્ણ એવં સ્કન્ધોં કો બઢાતે હૈ વહ પરિકર્મ કો આશ્રિત કરકે સચિત્ત દ્રવ્યો

હવે સૂત્રકાર સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમે” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સચિત્તે દ્રવ્યોપક્રમે ?) शिष्य गुरुने अथवा प्रश्न पूछे છે કે હે ભગવન્ ! સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમનું કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—(સચિત્તે દ્રવ્યોપક્રમે તિવિહે પળ્લત્તે) સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ ત્રણ પ્રકારનો દેહો છે (તં જહા) તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે.

(દુષ્ણ, ચુષ્ણ, અપ્ણ) (૧) દ્વિપદ, (૨) ચતુષ્પદ અને (૩) અપદ નટ, નર્તક આદિરૂપ દ્વિપદ સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ છે, ગજ, અથ આદિરૂપ ચતુષ્પદ સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ છે, તથા આમ્રાદિ વૃક્ષરૂપ અપદ સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ છે.

એકિકે પુળ દુવિહે પળ્લત્તે) એ પ્રત્યેકના પણ ગળ્ળે પ્રકાર દેહા છે. (તં જહા) જેમકે (પરિક્રમે ય વત્થુવિનાસેય) (૧) પરિકર્મનો આશ્રિત કરીને ગુણવિશેષનું આધાન કરવું તેનું નામ પરિકર્મ છે. આ પરિકર્મમાં પરિકર્મવિષયવાળો દ્રવ્યોપક્રમ છે. દ્વિપદવાળા (જે પગવાળા) નટ, નર્તક આદિજન ધી આદિદ્રવ્યના ઉપયોગથી પોતાના ગળ આદિની જે વૃદ્ધિ કરે છે, અથવા બીજા અનેક સાધનોથી કણુ અને સ્કન્ધોને

ટીકા—શિષ્યઃ પૃच्छति—‘સે કિં ત’ इत्यादि—

अथ कोऽसौ सचित्तो द्रव्योपक्रमः ? इति । उत्तरमाह—सचित्तो द्रव्यो-
पक्रमस्त्रिविधः प्रज्ञप्तः । तद्वयथा—द्विपदः, चतुष्पदः, अपद इति । तत्र-द्विपदः=
नदनर्तकादिरूपः, चतुष्पदः=हस्त्यश्वादिरूपः, अपदः=आम्नादिवृक्षरूपः । तत्र
द्विपदादिषु पुनरेकैका द्विविधः—परिकर्मणि च वस्तुविनाशे च । तत्रावस्थितस्य च
वस्तुनो गुणविशेषाधानपरिकर्म, तत्र परिकर्मणि—परिकर्मविषयो द्रव्योपक्रमः ।

પક્રમ છે । કહા મી છે કિ ક્રિયા સે વસ્તુઓં કા જા ગુણ વિશેષરૂપ પરિણામ છે—
ઉસકા નામ પરિકર્મ છે । વસ્તુ કે વિનાશ કો વિષય કરનેવાલા દ્રવ્યોપક્રમ
તવ હોતા છે કિ જવ ઉપાય વિશેષોં સે વસ્તુ કે વિનાશ કા હી ઉપક્રમ હોતા છે ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકારને હસ સૂત્રદ્વારા સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ કો ૩ રૂપ મેં
વિભક્ત કિયા છે । ૧ દ્વિપદ ૨ ચતુષ્પદ ઓર તીસરા અપદ । દ્વિપદ દો
ચરણવાલે ગ્રાણી ચતુષ્પદ—ચાર ચરણવાલે જાનવર, અપદ—જિનકે ચરણ નહીં
એસે એકેન્દ્રિય વૃક્ષ આદિ અપદ છે । હન સબ મેં જીવ હોને સે યે સબ સચિત
છે । હન તીનોં પ્રકાર કે સચિત્તોં કે વિષય મેં પરિકર્મ ઓર વિનાશ કો
લેકર દ્વિપદાદિ દ્રવ્યોપક્રમ દો ૨-૨ પ્રકાર કા ઓર હોતા છે । ઘૃત આદિ
શક્તિવર્ધક પદાર્થોં કે સેવન સે જો યે દ્વિપદ આદિ અપને મેં વલ આદિ
કી વૃદ્ધિ કરતે છે વહ પરિકર્મ વિષયવાલા, ઓર ઉપાય વિશેષોં સે વસ્તુ કો
વિનાશ કરનેવાલા જો ઉપક્રમ કિયા જાતા છે વહ વિનાશ વિષયવાલા દ્રવ્યો

(ખલાઓને) વૃદ્ધિયુક્ત કરે છે, તે પરિકર્મને આશ્રિત કરીને જે ઉપક્રમ છે તેનું નામ
સચિત્તદ્રવ્યોપક્રમ છે. કહું પણ છે કે કિયાની અપેક્ષાએ વસ્તુઓનું જે ગુણવિશેષ-
રૂપ પરિણામ છે તેનું નામ પરિકર્મ છે. વસ્તુના વિનાશને વિષય કરનારો યોગ-
ક્રમ ત્યારે જ થાય છે કે જ્યારે ઉપાયવિશેષો દ્વારા વસ્તુના વિનાશનો જ ઉપક્રમ થાય છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર ૧૨૧ સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમના ત્રણ ભેદો બતાવ્યા છે.
(૧) દ્વિપદ, (૨) ચતુષ્પદ અને (૩) અપદ. દ્વિપદ એટલે બે પગવાળા જીવો, ચતુષ્પદ
એટલે ચાર પગવાળા જાનવરો અને અપદ એટલે જેને પગ નથી એવા એકેન્દ્રિય
વૃક્ષાદિને શ્રદ્ધા કરવા ભેદ છે. આ બધામાં જીવ હોવાથી તેઓ સચિત્ત છે. આ
ત્રણ પ્રકારના સચિત્તોના વિષયમાં પરિકર્મ અને વિનાશની અપેક્ષાએ દ્વિપદાદિ પ્રત્યેક
દ્રવ્યોપક્રમના બળે પ્રકાર પડે છે. ઘી આદિ શક્તિવર્ધક પદાર્થોના સેવનથી જે
આ દ્વિપદ આદિ સચિત્ત જીવો પોતાના બળ આદિની વૃદ્ધિ કરે છે, તે પરિકર્મ
વિષયવાળો દ્રવ્યોપક્રમ છે, અને ઉપાયવિશેષો દ્વારા વસ્તુનો વિનાશ કરનારો જે
ઉપક્રમ કરવામાં આવે છે તે વિનાશ વિષયવાળો દ્રવ્યોપક્રમ છે. આ કથનનો

દ્વિપદાનાં નટનર્તકાદીનાં ઘૃતાદ્યુપયોગેન ચદ્ બલચર્ણાદિકરણં કર્ણરક્ત્ત્વર્ધના-
દિક્રિયા વા સ સચિત્તદ્રવ્યોપક્રમઃ । ઉક્તં ચ--

“પરિક્રમ્મં કિરિયાણ, વત્થૂણં ગુણવિસેસ પરિણામો” ।

છાયા--પરિક્રમ ક્રિયા વસ્તૂનાં ગુણવિશેષપરિણામઃ ॥૬૨॥

વસ્તુવિનાશવિષયો દ્રવ્યોપક્રમશ્ચ-યદા ઉપાયવિશેષૈર્વસ્તુનો વિનાશ એવો
પક્રમ્યતે તદા ભવતિ ॥સૂ૦ ૬૨॥

દ્વિવિધમપ્યેતદુપક્રમં વત્તુમુપક્રમતે--

મૂલમ્--સે કિં તં દુપણ ઉવક્રમે ? દુપણ ઉવક્રમે નડાણં નચ્ચ-
ગાણં જલ્લાણં મલ્લાણં મુટ્ઠિયાણં બેલંબગાણં વહગાણં પવગાણં લાસ-
ગાણં આઙ્કિચગાણં લંઘાણં મંઘાણં તૂળહલ્લાણં તુંબવીણિયાણં કા-
વડિયાણં માગહાણં । સે તં દુપણ ઉવક્રમે ॥ સૂ૦ ૬૩ ॥

છાયા--અથ કોઽસૌ દ્વિપદ ઉપક્રમઃ ? દ્વિપદ ઉપક્રમો નટાનાં નર્તકાનાં
જલ્લાનાં મલ્લાનાં મૌષ્ટિકાનાં વિડમ્બકાનાં કથકાનાં પ્લવકાનાં લાસકાનામ્

પક્રમ હૈં । તાત્પર્ય કહને કાં યહ હૈં કિં સચિત્ત દ્વિપદોં ચતુષ્પદોં ઔર અપદોં
કોં પરિક્રમ ઔર વિનાશ કો લેકર જો ઘૃતાદિદ્રવ્યોં કા ઉપક્રમ આયોજન
સેવન ક્રિયા જાતા હૈં વહ પરિક્રમ ઔર વિનાશવિષયવાલા સચિત્ત દ્વિપદાદિ
દ્રવ્યોપક્રમ હૈં । ॥સૂ૦ ૬૨॥

હસી વિષય કો સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરતે હૈં--

“સે કિં તં દુપણ ઉવક્રમે” ઇત્યાદિ ॥સૂત્ર ૬૩॥

શબ્દાર્થ--(સે કિં તં દુપણ ઉવક્રમે) હે ભદન્ત ! દ્વિપદ સંબંધી દ્રવ્યો-
પક્રમ કા કયા સ્વરૂપ હૈં । ? (દુપણ ઉવક્રમે નડાણં નચ્ચગાણં જલ્લાણં

ભાવાર્થ એ છે કે દ્વિપદો, ચતુષ્પદો અને અપદોના પરિક્રમ અને વિનાશની અપે-
ક્ષાએ જે ધી આદિ દ્રવ્યોનો ઉપક્રમ (આયોજન-સેવન) કરવામાં આવે છે, તે પરિ-
ક્રમ અને વિનાશરૂપ વિષયવાળો સચિત્ત દ્વિપદાદિ દ્રવ્યોપક્રમ છે. ॥ સૂ૦ ૬૨ ॥

આ દ્વિપદ સંબંધી દ્રવ્યોપક્રમના વિષયમાં સૂત્રકાર વિશેષ સ્પષ્ટીકરણ કરે છે--

“સે કિં તં દુપણ ઉવક્રમે” ઇત્યાદિ--

શબ્દાર્થ--(સે કિં તં દુપણ ઉવક્રમે ?) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે
ભગવન્ ! દ્વિપદ સંબંધી દ્રવ્યોપક્રમનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

आख्यायकानां लङ्घानां मङ्घानां तूणिकानां तुम्बवीणिकानां कावडिकानां माग-
धानाम् । स एष पिपद उपक्रमः ॥मृ० ६३॥

टीका—शिष्यः पृच्छति—‘से किं त’ इत्यादि । अथ कोऽसौ द्विपद-
उपक्रमः ? उत्तरमाह—यद् नटानां-नाट्यकर्तृणां, नर्तकाणां नृत्यविधायिनां,
जल्लानां-जल्लाः-वस्त्रमादाय क्रीडाकारकाः, विरुदावली वा, तेषाम्, मल्लानां=
मल्लाः प्रसिद्धास्तेषां, मुष्टिकानां मुष्टिभिर्योद्धारो मल्लविशेषा मौष्टिकारतेषाम्,
विडम्बकानाम्=नानादेवधारिणां विदूषकानाम्, कथकानाम्-कथकाः=वथाकारका-
स्तेषाम्, प्लवकानां-प्लवः ते ये ते प्लवकाः=गर्त्ताद्बृहद्भारितारो नद्यादितारका
वा तेषाम्, लासकानाम्-रासकान् गायन्ति ये ते लासकाः, जयशब्द प्रयोगेकारे
मण्डाग, तेषाम्, आख्यायकानाम्-आख्यायकाः=शुभशुभाख्यायिन-
स्तेषाम् लङ्घानाम्-महतो वंशस्याग्रभागं ये धिरं दन्ति ते लङ्घारतेषाम्, मङ्घानाम्
ये चित्रपटादिहरता भिक्षा चरन्ति ते मङ्घास्तेषाम्, तूणिकानाम्=तूणवाद्यवादिनाम्,

मल्लानां मुष्टियाणं बेलंबगाणं वहगाणं पवगाणं लासगाणं आङ्गस्वगाणं लंखाणं
मंखाणं तूणइल्लाणं तुम्बवीणियाणं कावडियाणं मागहाणं) नाट्य करनेवाले नटों
का नृत्यकरनेवालों का, वस्त्र को पकड़कर क्रीडा करनेवाले जल्लों का, अथवा
विरुदावली पढ़नेवालों का पहलवानों का, मुष्टियों से युद्धकरनेवाले मल्लविशेषों
का, अनेक मेषों का धारण करनेवाले विदूषकों का, कथाओं को कहनेवालों
का, गर्त्त आदि को लांघने की अथवा नदी से पार उतारने की क्रिया में
अभ्यस्त बने हुए प्लवकों का रासलीला करनेवालों का अथवा जयशब्द का
प्रयोग करनेवाले भांडों का शुभ और अशुभ को कहनेवाले अख्यायकों का,
बड़े भारी वांस के अग्रभाग पर आरोहण करनेवाले लंखों का, चित्रपट आदि
को हाथ में लेकर भीख मांगनेवाले मंखों का, तूणवाद्य को बजानेवाले तूणिकों

उत्तर—(दुपए उपक्रमे नटानां नचगाणं जल्लाणं मल्लाणं, मुष्टियाणं बेलंबगाणं
वहगाणं पवगाणं लासगाणं आङ्गस्वगाणं, लंखाणं मंखाणं, तूणइल्लाणं तुम्बवीणि-
याणं कावडियाणं मागहाणं) नाटके करना नटोंने, नृत्य करनेवाले नर्तकोंने, वस्त्रने
पकड़ने क्रीडा करनेवाले जल्लोंने अथवा विरुदावली पढ़नेवाले जल्लोंने, पहलवा-
ने, मुष्टिकोंने (मुष्टियों से युद्ध करनेवाले मल्लविशेषोंने), अनेक मेषों का धारण करनेवाले
विदूषकों ने, कथाकारोंने, गर्त्त आदिने पार करवाली अथवा नदीने पार कराववाली
क्रियाओं में अभ्यस्त रहते थे वे प्लवकों ने, रासलीला करनेवाले अथवा जय शब्द
उच्चारण करनेवाले भांडों ने, शुभ अथवा अशुभ कहनेवाले अख्यायकों ने, घण्टा मोटा
वांस पर आरोहण करनेवाले लंखों ने (लंघनीयाओं ने), चित्रपट आदिने हाथ में
लेकर तेनी भिक्षा लेने भागता मंखों ने, तंतूवाद्यने बजानेवाले तूणिकों ने,

तुम्बवीणिकानाम् तुम्बनिर्मिता या वीणा सा तुम्बवीणा, तद्वादनं शिल्पं येषां तुम्बवीणिकास्तेषाम्, कावडिकानाम्—‘कावडि’ इति भाषाप्रसिद्धभारवाहकानाम् मंगलानाम्—मंगलाः=मङ्गल पाठकास्तेषाम्, एषां सर्वेषामपि घृताद्युपयोगेन बलवर्णाधिकरणं कर्णसन्धादिवर्द्धनं वा स द्विपद उपक्रमः । एष परिकर्मविषयः सचित्तो द्विपद उपक्रमः यस्तु नटादीनां खङ्गादिभिर्नाश एवोपक्रम्यते—सम्प्राप्ते स वस्तुविनाशविषयः सचित्तो द्विपदो द्रव्योपक्रमः इति वाक्यमपि प्रकरणवशादोक्षेत्तव्यम् । स एष द्विपद उपक्रमः ॥सू० ६३॥

का, तूंबडी की वीणा बनाकर उसे बजानेवाले तुंबवीणिकों का, कावड से भार ढोनेवालों कावडिकों का, और मंगल पाठकों का जो अपने शरीर में घृतादिक द्रव्य के सेवन से शक्ति आदि के संबर्द्धन करने का उपक्रम किया जाता है, अथवा जिन २ और साधनों से बानों को और स्कंधों को बढ़ाया एवं बलिष्ठ किया जाता है वह सब प्रयत्न द्विपद संबन्धी उपक्रम है । यह जो द्विपदों का उपक्रम है वह परिकर्म को विषय करनेवाला है इसलिये यह सचित्त द्विपद उपक्रम है । तथा उन्हीं नट आदिकों का जो खङ्गादि से विनाश करने का उपक्रम किया जाता है वह वस्तु के विनाश से संबन्धित होने के कारण वस्तु विनाश विषयवाला सचित्त द्विपद द्रव्योपक्रम है । इस तरह का वस्तु विनाश विषयक सचित्त द्विपद द्रव्योपक्रम का पाठ सूत्र में नहीं आया है—तो भी प्रकरण के वश से उसे यहां समझ लेना चाहिये । इस प्रकार से यह द्विपद उपक्रम संबन्धी कथन है ।

तुम्बवीणी वीणा बनावीने तेने वगाडनारा तुम्बवीणिकोनो, कावडनी महदथी लार वहन करनार कावडीयाओनो अने मंगलपाठकेनो जे पोताना शरीरमां धी आदिना सेवन वडे शक्ति आदिना संबर्धननो जे उपक्रम करवामां आवे छे. अथवा जे जे भीजां साधनो ।रा कछुनि अने भजाने वृद्धियुक्त अने भदिष्ठ करवामां आवे छे, ते भधां प्रयत्नने द्विपद विषयक उपक्रमकडे छे. आ जे द्विपदोनो उपक्रम छे ते परिकर्मने विषय करनारे छे, तेथी ते सचित्त द्विपद उपक्रम छे. तथा ओज नट आदिकेनो तलवार आदिथी जे विनाश करवानो उपक्रम करवामां आवे छे, ते वस्तुना विनाशरूप विषयवाणो सचित्त द्विपद द्रव्योपक्रम छे. आ प्रकारनो वस्तु-विनाश विषयक सचित्त द्विपद द्रव्योपक्रमनो पाठ सूत्रमां आव्यो नथी, तो पछु आ प्रकारणुमां तेनो समावेश करवानुं जरूरी लागवाथी, तेहुं कथन अही थवुं जेधओ. आ प्रकारनुं द्विपद सचित्त उपक्रमनुं स्वरूप समजवुं.

અથ ચતુષ્પદવિષયં દ્વિવિધમપ્યુપક્રમં વર્ણયતિ-

મૂલમ્--સે કિં તં ચઉપ્પણ ઉવક્રમે ? ચઉપ્પણ ઉવક્રમે ચઉપ્પ-
યાણં આસાણં હત્થીણં ઇચ્છાઈ । સે ત ચઉપ્પણ ઉવક્રમે ॥સૂ૦ ૬૪॥

છાયા--અથ કોડસૌ ચતુષ્પદ ઉપક્રમઃ ? ચતુષ્પદ ઉપક્રમશ્ચતુષ્પદાનામ્
અશ્વાનાં હસ્તિનામ્, इत्यादि । स एष चतुष्पद उपक्रमः ॥ ॥प्र० ६४॥

ભાવાર્થ--સૂત્રકારને જો સચિત્ત કે ભેદરૂપ દ્વિપદ આદિ કા પરિકર્મ
ઔર વિનાશ વિષયક દ્રવ્યોપક્રમ કહા है-उसी के द्विपदरूप आद्यभेद के
स्वरूप का वर्णन संक्षेप में इस सूत्रद्वारा किया गया है-नट, नर्तक आदिजनों
का जो अपने में शक्ति बढ़ाने वाले घृत आदि पदार्थ हैं उन पदार्थों के
सेवन आदि करने का जो उनका उपक्रम प्रयत्न-है वह परिकर्म विषयक
द्विपद उपक्रम है । तथा विनाश के साधनभूत तलवार आदि से जो इनके
विनाशकर दिये जाने का उपक्रम होता है, वह विनाश विषयक द्विपद
उपक्रम है । ॥सू० ६३॥

अब चतुष्पद विषयक दोनों प्रकार के उपक्रम का वर्णन सूत्रकार करते हैं-

“से किं तं चउप्पण” इत्यादि । ॥सूत्र ६४॥

શબ્દાર્થ--(સે કિં તં ચઉપ્પણ ઉવક્રમે) हे भदन्त ! चतुष्पद उपक्रम
का क्या स्वरूप हैं--(चउप्पण उवक्रमे चउप्पयाणं आसाणं हत्थीणं इच्छाई)
चतुष्पद अश्व, गज आदि जानवरों को अच्छी चालचलने आदि की शिक्षा

ભાવાર્થ--સૂત્રકારે જે સચિત્તના ભેદરૂપ દ્વિપદ આદિના પરિકર્મ અને વિનાશ
વિષયક દ્રવ્યોપક્રમ કહ્યો છે, તેના જ દ્વિપદરૂપ પ્રથમ ભેદના સ્વરૂપનું વર્ણન અહીં
સંક્ષિપ્તમાં કરવામાં આવ્યું છે--

નટ, નર્તક આદિજનો પોતાની શક્તિ વધારવાને ધી આદિ પદાર્થોનું સેવન
કરવાનો જે ઉપક્રમ-પ્રયત્ન કરે છે તેને પરિકર્મ વિષયક દ્વિપદ ઉપક્રમ કહે છે. તથા
તલવાર આદિ સાધનો વડે તે નટ, નર્તક આદિજનોના વિનાશ કરી નાખવાનો જે
ઉપક્રમ (પ્રયત્ન) થાય છે તેને વિનાશ વિષયક દ્વિપદ ઉપક્રમ કહે છે. ॥ સૂ૦ ૬૩ ॥

હવે સૂત્રકાર ચતુષ્પદ વિષયક બન્ને પ્રકારતા ઉપક્રમનું વિષયકનું નિરૂપણ કરે છે-

“સે કિં તં ચઉપ્પણ” ઇત્યાદિ--

શબ્દાર્થ--(સે કિં તં ચઉપ્પણ ઉવક્રમે ?) शिष्य गुरुने એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે
હે ભગવન્ ! ચતુષ્પદ ઉપક્રમનું કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર--(ચઉપ્પણ ઉવક્રમે ચઉપ્પયાણં આસાણં હત્થીણં ઇચ્છાઈ) ચોપગાં અશ્વ,
ગજ આદિ જાનવરોને સારી ચાલ ચલાવવા આદિ શિક્ષા દેવારૂપ જે ઉપક્રમ છે.

टीका—शिष्यः पृच्छति—‘से किं त’ इत्यादि । अथ कोऽसौ चतुष्पदानाम्
अथानां हस्तनामित्यादि—अश्वगजप्रभृति चतुष्पदजीवानां शिक्षागुणविशेषकरण-
परिकर्मणि—सचित्तद्रव्योपक्रमः, खड्गादिभिस्त्वेषां विनाशकरण च, वस्तुविनाशे
सचित्तद्रव्योपक्रमः, इति वाक्यशेषः । एतन्निगमयन्नाह—स एष उपक्रम इति ॥सू.६४॥

अथापदविषयं द्विविधमप्युपक्रममाह—

लम्—से किं तं अपए उवक्रमे ? अपए उणक्रमे अपयाणं
अंवाणं अंवाडगाणं इच्छाह । से तं अपओवक्रमे । से तं सचित्त-
दवओवक्रमे ॥सू० ६५॥

छाया—अथ कोऽसौ अपद उपक्रमः ? अपद उपक्रमः—अपदानाम् आम्नाणाम् आम्ना-
तकानाम् इत्यादि । स एष अपदोपक्रमः । स एष सचित्त द्रव्योपक्रमः ॥६४॥

टीका—शिष्यः पृच्छति—‘से किं त’ इत्यादि । अथ कोऽसौ अपद
उपक्रमः ? इति । उत्तरमाह—अपद उपक्रमो हि—अपदानां=स्थावरनामकर्मो-
दयात् चञ्चनक्रियावर्जितानाम् आम्नाणाम्=आम्रवृक्षाणाम्, तत्फलानां च, तथा—

देना यह परिकर्म की अपेक्षा सचित्त द्रव्योपक्रम है । तथा इन्हीं जानवरों को
तलवार आदि से मार डालना यह विनाश की अपेक्षा सचित्त द्रव्योपक्रम है ।
इस प्रकार यह सचित्त के भेदरूप चतुष्पद का दोनों प्रकार के द्रव्योपक्रम
का कथन है । ॥सूत्र ६४॥

अब सूत्रकार अपद विषयक दोनों प्रकार के उपक्रम का कथन करते हैं—

“से किं तं अपए” इत्यादि । ॥सूत्र ६५॥

शब्दार्थ—(से किं तं अपए उवक्रमे) हे भदन्त ! अपद—जो आम्र एवं
आम्नातक आदि वृक्ष और उन के फल हैं कि जिनमें स्थावर नामकर्म के

ते परिक्रमणी अपेक्षाએ સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ છે. તથા એજ જાનવરોને તલવાર
આદિ વડે મારી નાખવાનો જે ઉપક્રમ છે, તેને વિનાશની અપેક્ષાએ સચિત્ત દ્રવ્યો-
પક્રમ કહે છે. આ પ્રકારે સચિત્તના ભેદરૂપ ચતુષ્પદના બન્ને પ્રકારના દ્રવ્યોપક્રમનું
અહીં વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. ॥ સૂ. ૬૪ ॥

હવે સૂત્રકાર અપદ (ચરણ વિહીન જીવો) વિષયક બન્ને પ્રકારના ઉપક્રમનું
નિરૂપણ કરે છે. “સે કિં તં અપએ ઉવક્રમે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં અપએ ઉવક્રમે ?) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે
કે હે ભગવન્ ! અપદ ઉપક્રમનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે ?

આમ્રાતકાનામ—આમ્રાતકદૃક્ષાણાં તત્ફલાનાં ચ, ઇત્યાદિ । અયં ભાવઃ—આમ્રાદિ-
વૃક્ષાણાં દૃક્ષાયુર્વેદોક્તપદ્ધત્યા વૃદ્ધિકરણં, તત્ફલાનાં ચ ગતે પલારાદૌ સ્થાપ-
નાદિના જ્ઞાતિતિ પવવાવસ્થાપાદનં તત્ પરિકર્મવિષયઃ અપદ ઉપક્રમઃ । શસ્ત્રાદિના
ચ યદેષાં વિનાશકરણં તદ્ વસ્તુ વિનાશવિષયઃ અપદ ઉપક્રમ ઇતિ । સ એષઃ
અપદોપક્રમઃ । સ એષ સચિત્તદ્રવ્યોપક્રમ ઇતિ ॥મૂ૦ ૬૫॥

અથ—અચિત્તદ્રવ્યોપક્રમં નિરૂપયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં અચિત્તદ્રવ્યોપક્રમે ? અચિત્તદ્રવ્યોપક્રમે
સ્વંડાઈણં ગુડાઈણં મચ્છંડીણં । સે તં અચિત્તદ્રવ્યોપક્રમે ॥ સૂ૦ ૬૬॥

છાયા—અથ કોઽસૌ અચિત્તદ્રવ્યોપક્રમઃ ? અચિત્તદ્રવ્યોપક્રમઃ સ્વંડા-
દીનાં ગુડાદીનાં મત્સ્યણ્ડીનામ્ । સ એષઃ અચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમઃ ॥૬૬॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—અથ કોઽસૌ અચિત્ત-
દ્રવ્યોપક્રમઃ ? ઇતિ । ઉત્તરમાહ—અચિત્તદ્રવ્યોપક્રમઃ—સ્વંડાદીનાં=‘સ્વંડ’ ઇતિ

ઉદય સે સ્વયં ચલન ક્રિયા નહીં હોતી હૈં ઉનકી વૃક્ષાયુર્વેદોક્ત પદ્ધતિ સે
વૃદ્ધિ કરના—સ્વાત આદિ ડાઠકર ઉન્હેં વઢાને કા ઉપક્રમ કરના ઉનકે ફલોં
કો સ્વંડો આદિ મેં ભરકર પલાર આદિ સે ઉન્હેં દવાકર કે જલ્દી પકા લેના
યહ સર્વ પરિકર્મ કો વિષય કરનેવાલા અપદ ઉપક્રમ હૈં । તથા શસ્ત્ર આદિ
સે ઉનકા વિનાશ કરના યહ વસ્તુ વિનાશ વિષયક અપદ ઉપક્રમ હૈં । ઇસપ્રકાર
યહ દોનોં પ્રકારકા ઉપક્રમ અપદ કા દ્રવ્યોપક્રમ હૈં । ઇન તરહ યહાં તક યહ
સચિત્ત દ્રવ્ય સંબન્ધી ઉપક્રમ કા કથન હૈં । ॥મૂ૦ ૬૫॥

ઉત્તર—આમ્ર (આંબો) આદિ જે વૃક્ષો અને તેમનાં જે જે ફળો છે, જેમના
સ્થાવર નામ કર્મના ઉદયને લીધે જેઓ અલન ક્રિયાથી રહિત હોય છે, તેમની
વૃક્ષાયુર્વેદોક્ત પદ્ધતિથી વૃદ્ધિ કરવી—ખાતર આદિ નાખીને તેમની સારી રીતે વૃદ્ધિ
થાય એવો પ્રયત્ન કરવો, તેમના ફળોને ખાડા આદિમાં ભરીને તેના પર પરાળ
આદિ દળાવીને તેમને જલ્દી પકાવવાનો પ્રયત્ન કરવો, તેને પરિકર્મની અપેક્ષાએ
અપદ ઉપક્રમ કહેવાય છે. તથા શસ્ત્ર આદિ વડે તે વૃક્ષાદિનો વિનાશ કરવો તેને
વસ્તુ વિનાશવિષયક અપદ ઉપક્રમ કહે છે. આ પ્રકારે બન્ને પ્રકારના અપદ ઉપ-
ક્રમનું નિરૂપણ અહીં પૂરું થાય છે, અને સચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમના બધાં લેદોનું વર્ણન
પણ અહીં સમાપ્ત થાય છે. ॥સૂ. ૬૫॥

ભાષાપ્રસિદ્ધપ્રભૃતીનાં, ગુહાદીનાં=ગુહપ્રભૃતીનાં, મત્સ્યખંડીનામ્—પ્રતલગુહાદીનાં, ‘રાવ’ इति ભાષાપ્રસિદ્ધાનાં વિજ્ઞેયઃ । અયં ભાવઃ—અચિત્તાનાં સ્વલ્પગુહ મત્સ્ય-
ખંડીનાં દ્રવ્યાણામુપાય—વિશેષેણ યન્માધુર્યાધિક્યકરણં તત્પરિકર્મવિષયઃ અચિત્ત-
દ્રવ્યોપક્રમઃ । એષામેવ યત્સર્વથા વિનાશકરણં તદ્ વસ્તુવિનાશવિષયઃ અચિત્ત-
દ્રવ્યોપક્રમઃ । એતન્નિગમદન્નાહ—‘સે તં’ इत्यादि । સ એષ અચિત્ત દ્રવ્યોપ-
ક્રમ इति ॥સૂ. ૬૬॥

અથ મિશ્રદ્રવ્યોપક્રમમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં મીસણ દબ્બોવક્રમે ? મીસણ દબ્બોવક્રમે સે
ચેવ થાસગ આયંસગાઈમંડિણ આસાઈ । સે તં મીસણ દબ્બોવક્રમે ।
સે તં જાણયસરીર ભવિયસરીર વડરિત્તે દબ્બોવક્રમે । સ તં નોઆગમઓ
દબ્બોવક્રમે । સે કિં તં દબ્બોવક્રમે સૂ. ૬૭॥

અથ સૂત્રકાર અચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ કા કથન કરતે હૈ—

“સે કિં તં અચિત્ત દબ્બોવક્રમે” इत्यादि ॥સૂ. ૬૬॥

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં અચિત્તદબ્બોવક્રમે) હે મદત ! અચિત્ત દ્રવ્યોપ-
ક્રમ કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(સ્વલ્પગુહાદીનાં ગુહાદીનાં મચ્છંડીણં, અચિત્તદબ્બોવક્રમે) સ્વલ્પ, ગુહ
ઔર રાવ इन पदार्थों में उपाय विशेष से जो मधुरता की अधिकता करदी
जाती है वह परिकर्म विषयवाला अचित्त द्रव्योपक्रम है तथा इन्हीं पदार्थों
का जो सर्वथा विनाश करदिया जाता है, वह विनाश विषयक अचित्तद्रव्योपक्रम
है । (से तं अचित्तदब्वोवकमे) इस तरह से अचित्त द्रव्योपक्रम का यह
स्वरूप है । ॥सू. ६६॥

હવે સૂત્રકાર અચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં અચિત્તદબ્બોવક્રમે” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં અચિત્તદબ્બોવક્રમે?) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે
હે ભગવન્ ! અચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(સ્વલ્પગુહાદીનાં ગુહાદીનાં મચ્છંડીણં અચિત્તદબ્બોવક્રમે) ખાંડ, ગોળ,
ઇત્યાદિ પદાર્થોમાં ઉપાય વિશેષો દ્વારા મધુરતાની વૃદ્ધિ કરવા રૂપ જે ઉપક્રમ
થાય છે, તેને પરિકર્મ વિષયનો અચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ કહે છે. તથા એજ પદાર્થોનાં
જે સર્વથા વિનાશ કરી નાખવા રૂપ ઉપક્રમ થાય છે તેને વિનાશ વિષયક અચિત્ત
દ્રવ્યોપક્રમ કહે છે. (સે તં અચિત્તે દબ્બોવક્રમે) આ પ્રકારનું અચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમનું
સ્વરૂપ છે. ॥ સૂ. ૬૬ ॥

છાયા—અથ કોઽસૌ મિશ્રકો દ્રવ્યોપક્રમઃ સ એવ સ્થાસકાદર્શકાદિ-
મણ્ડિતઃ અશ્વાદિઃ । સ એષ મિશ્રકો દ્રવ્યોપક્રમઃ । સ એષ જ્ઞાયકશરીરભવ્યશરીર-
વ્યતિરિક્તોદ્રવ્યોપક્રમઃ । સ એષ આગમતો દ્રવ્યોપક્રમઃ । સ એષ દ્રવ્યોપક્રમ ॥મૂ० ૬૭॥

ટીકા—શિષ્ય પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં’ इत्यादि । અથ વેાઽસૌ મિશ્રકો
દ્રવ્યોપક્રમઃ ? इति । उत्तरमाह- मिश्रकः=सचित्ताचित्तात्मको द्रव्योपक्रमः-स्थास-
कादर्शकादि मण्डितः-स्थासकः=अश्वाभरणविशेषः, आदर्शः=दृपभग्रीवाभरण
विशेषः, आदि शब्दात् कुङ्कुमादयः, एषां समासः, तैर्मण्डितः=भूषितः अश्व-

અવ સૂત્રકાર મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમ કા કથન કરતે હૈ—

‘સે કિં તં મીસણ દવ્વોવક્રમે’ इत्यादि । ॥મૂ० ૬૭॥

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં મીસણ દવ્વોવક્રમે) હે ભદ્રન્ત ! મિશ્ર દ્રવ્યોપ-
ક્રમ કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(મીસણ દવ્વોવક્રમે સે ચેવ થાસગઆયંસગાઈમંડિણ આસાઈ—સે તં
મીસણ દવ્વોવક્રમે) સચિત્તાત્મક—મિશ્ર—દ્રવ્યોપક્રમ કા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર સે
હૈ—કિ અચિત્ત સ્થાસક ઔર આદર્શ આદિ સે વિભૂષિત હુણ ઘોડે સે લેકર
વૈલ તક કે જાનવરોં મેં જો શિક્ષા આદિ ગુણ કી વિશેષતા કરને કા ઉપક્રમ
કિયા જાતા હૈ વહ પરિાર્મ વિષયક મિશ્રદ્રવ્યોપક્રમ હૈ । સ્થાસક યહ ઘોડે
કા આભરણ વિશેષ હૈ । આદર્શ યહ વૈલ કા આભરણ વિશેષ હૈ । एडक शब्द
का अर्थ मेष हैं । સ્થાસક—આદર્શ ઔર આદિ પદ સે ગૃહીત કુંકુમ કા લેપ

હવે સૂત્રકાર મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

‘સે કિં તં મીસણ દવ્વોવક્રમે’ इत्यादि

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં મીસણ દવ્વોવક્રમે?) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે
—કે હે ભગવાન્ ! મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(મીસણ દવ્વોવક્રમે સે ચેવ થાસગઆયંસગાઈમંડિણ આસાઈ—સે
તં મીસણ દવ્વોવક્રમે)

સચિત્તાત્મક મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે— અચિત્ત સ્થાસક,
દર્પણ આદિની વિભૂષિત થયેલા ઘોડાથી લઈને બળદ પર્યન્તના જાનવરોમાં જે
શિક્ષા આદિ ગુણની વિશેષતા કરવાનો ઉપક્રમ કરવામાં આવે છે, તેને પરિકર્મ
વિષયક મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમ કહે છે. ‘સ્થાસક’ આ ઘોડાનું એક ખાસ આભરણ છે
અને દર્પણની ખાસ બળદનું આભરણ વિશેષ છે. ‘एडक’ આ શબ્દ મેષ (ધે.)
નો વાચક છે. સ્થાસક, દર્પણ, કુંકુમનો લેપ આદિ અચિત્ત દ્રવ્યો છે તથા અશ્વ,

દિઃ=અશ્વપ્રભૃત્યેકાન્તો વિજ્ઞેયઃ । અયં માત્રઃ—સ્થાસકાદર્શકાદિ ભૂપિતાનાં કૃત
કુકુમાનાં તેષામશ્વાઘેડકાન્તાનાં યચ્છિદ્રાદિ ગુણવિશેષદર્શનં પરિકર્મવિષયઃ
મિશ્રદ્રવ્યોપક્રમઃ । તેષાં સ્વરૂપાદિભિર્દિનાશસ્તુ દસ્તુવિનાશવિષયો મિશ્રદ્રવ્યો-
પક્રમ इति । અત્ર—અશ્વાદીનાં સચેતનત્વાત્ સ્થાસકાદીનામ્ અચેતનત્વાત્ મિશ્ર
દ્રવ્યત્વં વોધ્યમ્ । एतदुपसंहरन्नाह—‘से तं’ इत्यादि । स एष मिश्रका द्रव्यो-
पक्रम इति । જ્ઞાયકશરીરભવ્યશરીરવ્યતિરિક્તો દ્રવ્યોપક્રમઃ સ્વકલોઽપિ નિરૂપિત
इति सूचयितुमाह—‘से तं’ इत्यादि । स एष ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तो
द्रव्योपक्रम इति । નોઆગમતઃ સર્વોઽપિ દ્રવ્યોપક્રમો નિરૂપિત इति सूचयितुमाह—
‘से तं’ इत्यादि । स एष नोआगमतो द्रव्योपक्रम इति । द्रव्योपक्रमः सर्वो
निरूपित इति सूचयितुमाह—‘से तं’ इत्यादि । स एष द्रव्योपक्रम इति । सू० ६७॥

ये सब अचित्त द्रव्य है । तथा अश्व वगैरह सचित्त द्रव्य है । इनं से जब इन
सचित्त पदार्थों को विभूषित किया जाता है—तब ये मिश्र द्रव्य कहलाते हैं । इन
में जो शिक्षा गुण से विशेषता का आपादन होता है यही मिश्र द्रव्योपक्रम
का स्वरूप परिकर्म की अपेक्षा लेकर कहा गया है । तथा जब इनका खड्ग
आदि विनाशक कारणों से विनाश हो जाता है तब वह विनाश को लेकर
मिश्र द्रव्योपक्रम का स्वरूप कहा जाता है । यही मिश्रद्रव्योपक्रम
है । (से तं जाणयसरीरभवियसरीरवद्विरिक्तं द्रव्योपक्रमे) इस
प्रकार ज्ञायकशरीर द्रव्योपक्रम और भव्यशरीर द्रव्योपक्रम से व्यतिरिक्त द्रव्यो-
पक्रम का स्वरूप कहा है । (से तं नोआगमओ द्रव्योपक्रमे—से तं द्रव्यो-
पक्रमे) नोआगम की अपेक्षा लेकर यह द्रव्योपक्रम का स्वरूप पूर्णरूप से निरूपित ।

બળદ, ઘેટાં આદિ સચિત્ત દ્રવ્યો છે. આ સચિત્ત અશ્વ આદિ જનવરોને જ્યારે
ઉપર્યુક્ત સ્થાસક, દર્પણ આદિ અચિત્ત દ્રવ્યો વડે વખૂાપત કરવામાં આવે છે,
ત્યારે તેઓ મિશ્ર દ્રવ્ય રૂપ બની જાય છે. એવાં મિશ્ર દ્રવ્ય રૂપ સ્થાસકથી
વિભૂષિત અશ્વાદિમાં જે શિક્ષા આદિ ગુણની વિશેષતા કરવાનો ઉપક્રમ થાય છે
તેનું નામ જ પરિકર્મ વિષયક મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમ છે. અને તેમનો તલવાર આદિ
શસ્ત્રો વડે વિનાશ કરવાનો જે ઉપક્રમ થાય છે, તે ઉપક્રમને વિનાશ વિષયક મિશ્ર
દ્રવ્યોપક્રમ કહે છે. આ પ્રકારનું મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમનું સ્વરૂપ છે.

(से तं जाणयसरीरभवियसरीरवद्विरिक्तं द्रव्योपक्रमे)

આ પ્રકારે જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યોપક્રમ અને ભવ્યશરીર દ્રવ્યોપક્રમથી વ્યતિરિક્ત
(લિન્ન) એવા દ્રવ્યોપક્રમના સ્વરૂપનું નિરૂપણ અહીં પૂરું થાય છે. (સે તં નો
આગમઓ દ્રવ્યોપક્રમે સે તં દ્રવ્યોપક્રમે) આ રીતે નોઆગમ દ્રવ્યોપક્રમના બધા

અથ ક્ષેત્રોપક્રમ નિરૂપણતિ—

મૂલમૂ—સે કિં તં ચેત્તોવક્રકમે ? ચેત્તોવક્રકમે જણં હલકુલિયા-
ઈહિં ચેત્તાઈં ઉવક્રમિજ્જંતિ । સે તં ચેત્તોવક્રકમ ॥સૂ૦ ૬૮॥

છાયા—અથ કોઽસૌ ક્ષેત્રોપક્રમઃ ? ક્ષેત્રોપક્રમો યત્તલ્લ હલકુલિકાદિભિઃ
ક્ષેત્રાણ્યુપક્રમ્યન્તે । સ એપ ક્ષેત્રોપક્રમઃ ॥૬૮॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—સે કિં તં 'ઇત્યાદિ । અથ કોઽસૌ ક્ષેત્રોપક્રમઃ ? ઇતિ ।

ઉત્તરમાહ—ક્ષેત્રોપક્રમઃ-ક્ષેત્રાણામુપક્રમઃ-ક્ષેત્રસમ્બન્ધ્યુપક્રમઃ યત્તલ્લ હલ-

હો ચુકા । ઇસકે નિરૂપણ હાંને સે દ્રવ્યોપક્રમ કા સમસ્ત સ્વરૂપ મી નિરૂપિત
હો ગયા એસા જાનના ચાહિયે ।

ભાવાર્થ—સચિત્તાચિત્ત દ્રવ્ય મેં જો વિશેષતા વા આપાદન કિયા જાતા
હૈ વહ પરિકર્મ વિષયવાલા મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમ હૈં ઓર સચિત્તાચિત્તરૂપ મિશ્ર
દ્રવ્ય વા જો સ્વર્જાદિ વિનાશક કારણોં સે વિનાશ કિયા જાતા હૈ, વહ વિનાશ વિષયક
સચિત્તાચિત્ત દ્રવ્યોપક્રમ હૈ—ઇસ પ્રકાર યહાં તક દ્રવ્યોપક્રમ સે સંબન્ધિત જિતના
મા વર્ણન હૈ વહ સવ સૂત્રકાર ને કર દિયા હૈ । ॥સૂત્ર ૬૭॥

અવ સૂત્રકાર ક્ષેત્રોપક્રમ કા સ્વરૂપ પ્રવટ કરતે હૈ—

“સે કિં તં ચેત્તોવક્રકમે” ઇત્યાદિ । સૂત્ર ॥૬૮॥

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ચેત્તોવક્રકમે) હે મદન્ત ! ક્ષેત્રોપક્રમ કા વ્યા
સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(ચેત્તોવક્રકમે જણં હલકુલિયાઈહિં ચેત્તાઈં ઉવક્રમિજ્જંતિ—સે

લેદોના સ્વરૂપનું નિરૂપણ અહિં સંપૂર્ણ થાય છે, અને તેનું નિરૂપણ થઈ જવાને લીધે
દ્રવ્યોપક્રમના બધા લેદો અને પ્રલેદોનું નિરૂપણ પણ સંપૂર્ણ થઈ જાય છે એમ સમજવું.

ભાવાર્થ—સચિત્તાચિત્ત દ્રવ્યમાં (મિશ્ર દ્રવ્યમાં) જે વિશેષતાનું આપાદન
કરવામાં આવે છે, તે પરિકર્મ વિષયક મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમ છે. અને સચિત્તાચિત્ત
રૂપ મિશ્ર દ્રવ્યોનો જે શસ્ત્રાદિ રૂપ વિનાશક કારણો વડે વિનાશ કરવામાં આવે છે,
તેને વિનાશ વિષયક મિશ્ર દ્રવ્યોપક્રમ કહેવાય છે. આ રીતે અહીં સુધીમાં દ્રવ્યો-
પક્રમ સાથે સંબંધ રાખનારું એવું સમસ્ત વર્ણન સૂત્રકારે સમાપ્ત કર્યું છે. ॥ સૂ૦ ૬૭॥

હવે સૂત્રકાર ક્ષેત્રોપક્રમના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“(સે કિં તં ચેત્તોવક્રકમે)” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—“સે કિં તં ચેત્તોવક્રકમે” હે ભગવન્ ક્ષેત્રોપક્રમનું શું સ્વરૂપ
છે ? (ચેત્તોવક્રકમે જણં હલકુલિયાઈહિં ચેત્તો ઉવક્રમિજ્જંતિ સે તં

कुलिकादिभिः—हलं प्रसिद्धम्, कुलिकं=हलविशेषः तत् लघुतरं काष्ठं खलु तृणादि-
च्छेदनार्थमुपयुज्यते । तदादिभिः क्षेत्राणि उपक्रम्यन्ते—बीजवपनयोग्यानि क्रियन्ते।
अयं भावः—हलकुलिकादिभिः क्षेत्राणां यद्बीजवपनयोग्यताः रणं तत्परिकर्मविषयः
क्षेत्रोपक्रमः । तथा—गजवन्धनादिभिर्धत् क्षेत्राणि उपक्रम्यन्ते=विनाश्यन्ते, तद् वस्तु
विनाशविषयः क्षेत्रोपक्रमः । गजमूत्रपुरिष दिना क्षेत्रगतबीजप्ररोहणशक्ति विनाश्यते,
इति विनष्टानि क्षेत्राण्युच्यन्ते । इत्थं द्विविधः क्षेत्रोपक्रमो बोध्य इति ।

ननु क्षेत्रगत पृथिव्यादि द्रव्याणामेव एतौ परिकर्मविनाशौ । इत्थं च

तं खेत्तोपक्रमे) क्षेत्रोपक्रम का स्वरूप इस प्रकार से है कि जो हल एवं कुलिका—
तृणादिको खेत में से दूर करने के लिये काम में लिये गये एक प्रकार का हल
जैसा लघुतर काष्ठ—आदि से जोतकर खेत बीज वपन (बोने) के योग्य बनाये जाते
हैं वह क्षेत्रोपक्रम का स्वरूप है । यह क्षेत्रोपक्रम परिषदर्म और विनाश
को लेकर दो प्रकार का है—इनमें जो हल आदि से जोतकर क्षेत्र की
बीजोत्पादन की योग्यतावाला बनाना यह परिकर्म विषयक क्षेत्रोपक्रम है
तथा खेतों में हाथी आदि कों को बांधकर उन्हें बीजवपन (बोने) के अयोग्य
बना देना यह वस्तु विनाश विषयक क्षेत्रोपक्रम है । हाथी की मूत्र और
लिङ्गों से खेत में बीजोत्पादन करने की शक्ति का नाश हो जाता है । इस
प्रकार यह दोनों प्रकार का क्षेत्रोपक्रम जानना चाहिये ।

शंका—परिकर्म और विनाश जो होते हैं वे क्षेत्रगत पृथिवी आदि
द्रव्यों के ही होते हैं—

खेत्तोपक्रमे) क्षेत्रोपक्रमं स्वल्प आ प्रकारं तु छि जे हुण अने कुलिक (जेतरमांथी
तृणुदिकेने दूर करवाने भाटे अेक प्रकारं तु हुण जेवुं लघुतर काष्ठ विशेष वपराय
छे तेनुं नाम कुलिक छे.) आदि वडे जेडीने जेतरने भीज वाववाने योग्य अनाववानुं
कार्य थाय छे तेने क्षेत्रोपक्रम कहे छे. ते क्षेत्रोपक्रमना परिकर्म अने विनाशनी
अपेक्षाये जे लेह पडे छे हुण आदि वडे जेडीने जेतरने जे भीजेत्पादननी योग्य-
तावाणुं अनाववाने उपक्रम (प्रयत्न) थाय छे, तेने परिकर्म विषयक क्षेत्रोपक्रम कहे
छे. तथा जेतरमां हाथी आदिने बांधीने तेने भीजेत्पादनने भाटे अयोग्य अनाव-
वाने जे उपक्रम थाय छे तेने विनाश विषयक क्षेत्रोपक्रम कहे छे. जेवुं मानवांमां
आवे छे के हाथीना मूत्र, मण आदि जे जेतरमां पड्युं होय ते जेतरनी भीजे-
त्पादन शक्तिने नाश थछ जय छे आ प्रकारे आहीं अने प्रकारना क्षेत्रपरिकर्मं तु
स्वल्प प्रकट करवामां आण्युं छे.

शंका—परिकर्म अने विनाश जे थाय छे ते तो क्षेत्रगत पृथ्वी आदि
द्रव्योंने ज थाय छे. तेथी तेने क्षेत्रोपक्रम कहेवाने जहवे द्रव्योपक्रम ज कहेयो

દ્રવ્યોપક્રમ एवायं न तु क्षेत्रोपक्रमः, तर्हि कथं क्षेत्रोपक्रमः ? इति चेत्, उच्यते—
 क्षेत्रं हि आकाशमुच्यते, तस्य चामूर्तत्वात्तदुपक्रमो न संभवति, तथापि तदा-
 धेयत्वेन स्थितानां पृथिव्यादि द्रव्याणां य उपक्रमः स क्षेत्रोऽप्युपचर्यते । लोके-
 ऽपि यथा ‘मञ्चाः क्रोशन्ती’—त्यादौ आधेयतधर्माणांमाधारे उपचारो भवति । उक्तंचापि
 “खेत्तमरूवे निचं. न तस्स परिकम्मणं न य विणासे ।
 आहेयगयवसेण उ, करणविणासेवयारो उ” ॥ १ ॥

इसलिये यह क्षेत्रोपक्रम न होकर द्रव्योपक्रम ही हुआ फिर इसे क्षेत्रोप-
 क्रम कैसे कहा—

उत्तर—क्षेत्र शब्द का अर्थ आकाश है । और यह आकाशरूप क्षेत्र
 अमूर्त है—अतः इसका उपक्रम नहीं होसकता है । फिर भी इस में आधेय
 रूप से वर्तमान जो पृथिविव्यादि द्रव्य है, उनका तो उपक्रम होता है इसलिये
 उनका उपक्रम आधाररूप आकाश में उपचरितकर लिया जाता है । इसलिये
 क्षेत्रोपक्रम बन जाता है । लोक में भी जैसे “मञ्चाः क्रोशन्ति” मंचबोलते हैं ।
 खेत रक्षा के लिये खेत के लिये खेत के पाली पर जो घरविशेष बनाते हैं
 उसको मंच कहते हैं, मंच बोलते हैं ऐसा जो कह दिया जाता है—इह आधेय
 रूप पुरुषादिकों के धर्मों को आधार में उपचरित करके ही कहा जाता
 है—कहा भी है—‘खेत्तमरूवे’ इत्यादि—उस का अर्थ यही है—कि क्षेत्र तो
 अरूपी और नित्य है । उसका न परिकर्म हो सकता है और न विनाश,

જોઈએ. છતાં અહીં તેને ક્ષેત્રોપક્રમ રૂપે શા માટે પ્રતિપાદિત કરવામાં આવ્યો છે?

ઉત્તર—ક્ષેત્રા શબ્દનો અર્થ આકાશ થાય છે, અને આ આકાશરૂપ ક્ષેત્ર
 અમૂર્ત છે તેથી તેનો ઉપક્રમ થઈ શકતો નથી. છતાં પણ તેમાં આધેય રૂપે વર્ત-
 માન જે પૃથ્વી આદિ દ્રવ્ય છે તેમનો તો ઉપક્રમ થાય છે. તેથી તેમનો ઉપક્રમ
 આધાર રૂપ આકાશમાં ઉપચરિત કરી લેવામાં આવે છે. તેથી ક્ષેત્રોપક્રમ ઘટિત થઈ
 બને છે. લોકોમાં પણ “મઝ્ચાઃ ક્રોશન્તિ” “મંચ બોલે છે,” એવું કહેવામાં
 આવતું હોય છે. ખેતરની રક્ષા માટે એક માંચડો બનાવ્યો હોય છે. ત્યાં બેઠો
 બેઠો કોઈ પુરુષ ખેતરની રખવાળી કરે છે મંચ પર બેઠેલો પુરુષ બોલતો હોય
 ત્યારે કંટેલીક વખતે “મંચ બોલે છે,” આ પ્રકારનો પણ વ્યવહાર થતો બેવામાં
 આવે છે. આધેય રૂપ પુરુષના ધર્મોને આધાર રૂપ મંચમાં ઉપચરિત કરીને આ
 પ્રમાણે કહેવામાં આવે છે. કહ્યું પણ છે કે “ખેત્તમરૂવે” ઇત્યાદિ—આ સુત્રપા-
 ઠનો પણ એવો જ અર્થ છે કે ક્ષેત્ર તો અરૂપી અને નિત્ય છે, તેનું પરિકર્મ

છ.યા—ક્ષેત્રમરૂપં નિત્યં ન તસ્ય પરિહર્મ ન ચ વિનાશ. ।

આધેયગતવશેનૈવ કરણવિનાશોપચારોઽત્ર ॥ ૬૮ ॥

इत्थं चे 'क्षेत्रोपक्रमः' उक्तापि न दोषः । सम्प्रति प्रकृतमुपसंहरन्नाह—
'से तं' इत्यादि । स एष क्षेत्रोपक्रम इति ॥ सू० ६८ ॥

अथ कालोपक्रमं निरूपयति—

मूलम्—से किं तं कालोवक्कमे ? कालोवक्कमे जण्णं नालियाई हिं
कालस्सोवक्कमणं कीरइ । से तं कालोवक्कमे ॥ सू० ६९ ॥

छाया—अथ कोऽसौ कालोपक्रमः ? कालोपक्रमो यत्खलु नालिकादिभिः कालस्यो-
पक्रमणं क्रियते । स एष कालोपक्रमः ॥ ६९ ॥

टीका—शिष्यः पृच्छति—‘से किं तं’ इत्यादि ? इति । उत्तरमाह—
कालोपक्रमो हि स भवति, यत्खलु नालिकादिभिः—नालिया=ताम्रादिमय घटिका,

परन्तु क्षेत्र में जो करण और विनाश का व्यवहार होता है वह आधेयगत-
वस्तु के वरण और विनाश के उपचार से होता है । इस प्रकार क्षेत्रोपक्रम
कहने में कोई दोष नहीं है । इस तरह यह क्षेत्रोपक्रम का स्वरूप है ॥ सू० ६८ ॥

अब सूत्रकार कालोपक्रम का स्वरूप प्रकट करते हैं—

‘से किं तं कालोवक्कमे’ इत्यादि । ॥ सूत्र ६९ ॥

शब्दार्थ—(से किं तं कालोवक्कमे) हे भद्रन्त ! कालोपक्रम का क्या स्वरूप है ?

(कालोवक्कमे जण्णं नालियाई हिं कालस्सोवक्कमणं कीरइ । से तं
कालोवक्कमे) कालोपक्रम का स्वरूप इस प्रकार से है—जो नालिका
तथा घटी आदि से कालका यथावत् स्वरूप परिज्ञात हो
जाता है—वह कालोपक्रम है । ताम्रआदि का एक छोटी सी घटी

પણ થઈ શકતું નથી અને તેના વિનાશ પણ થઈ શકતો નથી. પરન્તુ ક્ષેત્રમાં જે
કરણ અને વિનાશનો વ્યવહાર થાય છે. તે આધેયગત વસ્તુના કરણ અને વિના-
શના ઉપચારની અપેક્ષાએ થાય છે. આ પ્રકારે તેને 'ક્ષેત્રોપક્રમ' કહેવામાં કોઈ દોષ
નથી. આ પ્રકારનું 'ક્ષેત્રોપક્રમનું' સ્વરૂપ છે ॥ સૂ० ૬૮ ॥

‘સે કિં તં કાલોવક્કમે’ ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં કાલોવક્કમે?) શિષ્ય શુરને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે
ભગવન્ ! કાલોપક્રમનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(કાલોવક્કમે જણ્ણં નાલિયાઈ હિં કાલસ્સોવક્કમણં કીરइ—સે તં
કાલોવક્કમે) કાલોપક્રમનું સ્વરૂપ આ પ્રકારે કહ્યું છે—નાલિકા આદિ વડે કાળના
યથાવત્ સ્વરૂપનું જે પરિજ્ઞાન થાય છે તેનું નામ કાલોપક્રમ છે. તામ્ર આદિની

इयं हि दाडिमपुष्पाकाराऽधच्छिद्रा भवति। अधश्छिद्रेण नालिका मध्ये जलं प्रविशति। जलेन भूतायां नालिकायां कालमानो निश्चीयते। आदि पदात् शंकुच्छाया नक्षत्रचारादयोऽपि बोध्याः। एभिरपि कालो मीयते। एतैः—कालमापकसाधनैः कालस्योपक्रमं क्रियते। अयं भावः—नालिकाशंकुच्छायानक्षत्रचारादिभिर्वत् 'एतावान् पौरुषादिकालोऽतिक्रान्तः' इति परिज्ञायते स परिकर्मविषयः कालोपक्रमः। अत्र कालस्य यथावत्परिज्ञानमेव परिकर्म बोध्यम्। तथा—नक्षत्रादि चारैः कालस्य यद् विनाशनं स वस्तुविनाशविषयः कालोपक्रमः। श्रूयते हि लोके

बनाई जाती है। उसका आकार दाडिम—अनाके पुष्प जैसा होता है? इनके नीचे एक छेद होता है? नीचे के छेद से इसमें जल प्रविष्ट होता है। जब यह जल से भरा जाती है तो इससे काल का मान निश्चित किया जाता है। यहां पर आदि पद से शंकुच्छाया और नक्षत्रों की चाल आदि ग्रहण हुई है। इन से भी काल का मान जाना जाता है। इस तथे इन कालमापक साधनों से काल का उपक्रम किया जाता है।

तात्पर्य कहने का यह है कि इन नालिका—शंकुच्छाया और नक्षत्रचाल आदि से जो “इतना पौरुषा आदिकाल व्यतीत हो चुका” सा जाना जाता है वह परिकर्म विषयवाला कालोपक्रम है। काल का यथावत् परिज्ञान होना ही यहां परिकर्म जानना चाहिये। तथा नक्षत्र आदिकों की चाल से जो काल का विनाश होता है वह वस्तुविनाश विषयक कालोपक्रम है। लोक में ऐसा

એક નાની સરખી ઘડિયાળ બનાવવામાં આવે છે. તેનો આકાર દાડમના પુષ્પ જેવો હોય છે. તેની નીચે એક છિદ્ર હોય છે. આ સાધનને પાણીથી ભરેલા કોઈ પાત્રમાં મૂકવામાં આવે છે. તે છિદ્ર દ્વારા તેમાં પાણી દાખલ થવા માંડે છે. બ્યારે તે સાધન (નાલિકા) જળઘડી પાણીથી ભરાઈ જાય છે ત્યારે તેની મદદથી કાળનું માપ નિશ્ચિત કરવામાં આવે છે. અહીં ‘આદિ’ પદ વડે શંકુચ્છાયા અને નક્ષત્રોની ચાલ આદિ ગ્રહણ થયેલ છે. તેમની મદદથી પણ કાળનું માપ નીકળી શકે છે. આ પ્રકારે આદિ કાલમાપક સાધનો વડે કાળનો ઉપક્રમ કરવામાં આવેલ છે. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે આ નાલિકા (જળઘડી) શંકુચ્છાયા (સૂર્ય ઘડી) અને નક્ષત્રોની ચાલ આદિ દ્વારા “આટલા પહોર આટલી ઘડી આદિ વ્યતીત થઈ ગયા આ પ્રકારનું કાળવિષયક જે જ્ઞાન થાય છે તેને પરિકર્મ કાલોપક્રમ કહે છે. કાળનું યથાવત્ પરિજ્ઞાન થવું તેનું નામ અહીં પરિકર્મ સમજવું. તથા નક્ષત્ર આદિકોની ચાલથી કાળનો જે વિનાશ થાય છે, તે વસ્તુવિનાશવિષયક કાલોપક્રમ સમજવો. લોકોમાં એવી વાત થતી સાંભળે

‘અનેન ગ્રહનક્ષત્રાદિચારેણ કાલો વિનાશિતઃ, ન ભવિષ્યન્ત્યધુના ધાન્યાનિ’—
 इति । उक्तं च—

‘છાયાં નાલિયાં, વ પરિકર્મ’ સે જહત્થં વિન્નાણે ।

रिक्खाइयचारे हि य, तस्म विणासो विवज्जासो ॥१॥

છાયા—છાયયા નાલિકયા વા પરિકર્મ તસ્ય યથાર્થવિજ્ઞાનમ્ ।

ऋक्षादिकचारैश्च, तस्य विनाशो विपर्यासः ॥१॥

इत्थं वस्तु विनाशविषयः कालोपक्रमो बोध्यः । प्रकृतमुपसंहरन्नाह—‘से
 तं’ इति । स एषकालोपक्रम इति ॥६९॥

अथ भावोपक्रमं निरूपयति—

શ્લૃ—સે કિં તં ભાવોવક્રમે ? ભાવોવક્રમે દુવિહે પળણત્તે,
 તં જહાં આગમઓ ય નોઆગમઓ ય । આગમઓઃ ભાવોવક્રમો
 નાળાં ઉવવત્તે । નોઆગમઓ ભાવોવક્રમે દુવિહે પળણત્તે, તં જહા
 પસત્થે, ય અપસત્થે ય । તત્થ અપસત્થે ડોડિગિગણિયા અમચ્ચા-
 ઈણં । પસત્થે ગુરુમાઈણં । સે તં નોઆગમઓ ભાવોવક્રમે । સે તં
 ભાવોવક્રમ । સે તં ઉવક્રમ ॥સૂ. ૭૦॥

सुना जाता है कि इस ग्रह नक्षत्र आदि की चाल से काल नष्ट हो गया—
 अब अनाज पैदा नहीं होगा । वहा भी है—‘छायया’ इत्यादि उसका अर्थ
 इस प्रकार से हैं कि छाया से अथवा नालिका से जो काल का यथार्थ परि-
 ज्ञान है वह परिकर्म है । तथा नक्षत्रादिकों की गति से उसमें जो विपरीत
 ता है वह काल का यह वस्तु विनाश विषयक कालोपक्रम है । इस तरह से
 यह कालोपक्रम का स्वरूप वर्णन है । ॥सू. ६९॥

વામાં આવે છે કે આ નક્ષત્રની ચાલ આદિથી કાળ નષ્ટ થઈ ગયો—હવે અનાજ
 પેદા નહીં થાય. કહ્યું પણ છે કે— ‘છાયા’ ઇત્યાદિ—આ સૂત્રપાઠનો ભાવાથ નીચે
 પ્રમાણે છે—છાયાથી અથવા નાલિકા આદિથી જે કાળનું યથાર્થ પરિજ્ઞાન થાય છે
 તેનું નામ પરિકર્મ છે, તથા નક્ષત્રાદિકોની ગતિથી તેમાં જે વિપરીતતા આવે છે,
 તે કાળના વિનાશરૂપ છે. આ પ્રકારના કાળના વસ્તુવિનાશ વિષયક આ કાળોપક્રમ
 છે. આ પ્રકારે કાલોપક્રમના વિષયનું નિરૂપણ અહીં સંપૂર્ણ થાય છે. ॥ સૂ. ૬૯ ॥

છાયા—અથ કોઽસૌ ભાવોપક્રમઃ ? ભાવોપક્રમો દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ, તદ્યથા—
આગમતથ નોઆગમતથ । આગમતો ભાવોપક્રમો જ્ઞાયક ઉપયુક્તઃ । નોઆગમતા
ભાવોપક્રમો દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ, તદ્યથા—પ્રજ્ઞસ્તથાપ્રજ્ઞસ્તથ । તત્ર-અપ્રજ્ઞસ્તો ડોહિણિ
ગણિકાઽમાત્યાદીનામ્ । પ્રજ્ઞસ્તો ગુર્વાદીનામ્ । સ એવ નોઆગમતો ભાવોપક્રમઃ ।
સ એવ ભાવોપક્રમઃ । સ એવ ઉપક્રમઃ ॥૭૦॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં’ इत्यादि । અથ કોઽસૌ ભાવોપક્રમઃ
? इति । ઉત્તરમાહ—ભાવોપક્રમો દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ, તદ્ યથા—આગમતથ નોઆગમ-
તથ । તત્ર—આગમતઃ । આગમમાશ્રિત્ય ઉપક્રમો હિ જ્ઞાયકઃ=ઉપક્રમ
શબ્દાર્થજ્ઞઃ ઉપયુક્ત=ઉપક્રમે ઉપયોગવાંશ્ચ વોધ્યઃ । અયં ભાવઃ—ઉપક્રમ—

અવ સૂત્રકાર ભાવોપક્રમ કા નિરૂપણ કરતે હૈ—

“સે કિં તં ભાવોપક્રમે इत्यादि । ॥સૂ૦ ૭૦॥

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ભાવોપક્રમે) હે મદન્ત ! ભાવોપક્રમ કા કયા
સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(ભાવોપક્રમે દુવિદ્ધે પળ્લત્તે) ભાવોપક્રમ દો પ્રકાર વા કહા ગયા
હૈ । (તં જહા) ઉસકે વે પ્રકાર વે હૈ—(આગમઓ ય નોઆગમઓ ય) ? આગમ
કો આશ્રિત કરકે ભાવોપક્રમ હોતા હૈ ઓર દુસરા નોઆગમકો આશ્રિત કરકે
ભાવોપક્રમ હોતા હૈ. (જાણે ઉવઉત્તે આગમઓ ભાવોપક્રમે) જો ઉપક્રમ
શબ્દ કે અર્થ વો જાનતા હૈ ઓર ઉસમેં ઉપયોગ સે યુક્ત હૈ વહ આગમ સે
ભાવોપક્રમ હૈ ।—

હવે સૂત્રકાર ભાવોપક્રમનું નિરૂપણ કહે છે—

“સે કિં તં ભાવોપક્રમે” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ભાવોપક્રમે?) શિષ્ય ગુરુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે
હે ભગવન્ ! ભાવોપક્રમનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ભાવોપક્રમે દુવિદ્ધે પળ્લત્તે) ભાવોપક્રમના બે પ્રકાર કહ્યા છે. (તં જહા)
તે બે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે.

(આગમઓ ય, નોઆગમઓ ય) (૧) આગમને આશ્રિત કરીને જે ભાવોપક્રમ
થાય છે તેને ‘આગમ ભાવોપક્રમ’ કહે છે. (૨) નોઆગમનો આશ્રિત કરીને થતા
ભાવોપક્રમને—‘નોઆગમ ભાવોપક્રમ’ કહે છે (જાણે ઉવઉત્તે આગમઓ ભાવોપક્રમે)
જે ઉપક્રમ શબ્દના અર્થને બાળે છે અને તેમાં ઉપયોગથી યુક્ત છે, તે આગમની
અપેક્ષાએ ભાવોપક્રમ છે. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—ઉપક્રમ અને ઉપાય,
આ બન્ને એકાર્થક શબ્દો છે. ભગવાન તીર્થંકર દ્વારા કથિત અનુશાસનના જ્ઞાનના

ઉપાયઃ, સ ચેહ—ભગવદનુશાસનજ્ઞાનસાધનરૂપો ગ્રાહ્યઃ । ઉક્ત ચ—

“સોચ્ચા ભગવાણુસાસનં, સચ્ચે તત્થ કરેજ્જુવકમં ॥”

છાયા—શ્રુત્વા ભગવદનુશાસનં સત્યં તત્ર કુર્યાદુપક્રમમ્—ઇતિ—

વ્યાખ્યા—સત્યં=યથાર્થં ભગવતા તીર્થંકરેણ પ્રોક્તમનુશાસનં શ્રુત્વા તત્ર=

અનુશાસને ઉપક્રમં=તત્પ્રાપ્ત્યુપાયં કુર્યાત્—ઇત્યર્થઃ ।

ઇત્યં ચ ભગવદુક્તાનુશાસનપ્રાપ્ત્યુપાયજ્ઞસ્તત્રોપક્રમે ઉપયુક્તશ્ચ આગમતો ભાવોપક્રમ ઇતિ ।

નોઆગમતો ભાવોપક્રમોઽપિ દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ । તદ્ યથા પ્રશસ્તશ્ચ, અપ્રશસ્તશ્ચ । इह भावशब्दः—अभिप्रायाख्यो जीवद्रव्यपर्यायोऽभिमतः । उक्तं च—भावाभिख्याः पञ्च स्वभावसत्ताऽऽत्मयोऽन्यभिप्राया इति । ततश्च—भावस्य

इसका भाव यह है कि उपक्रम और उपाय ये एकार्थक शब्द हैं— भगवान् तीर्थंकर द्वारा कथित अनुशासन के ज्ञान का साधनरूप वह उपक्रम यहां ग्राह्य हुआ है । अन्यत्र ऐसा ही कहा है—(सोच्चा) इत्यादि । कि भगवान् के द्वारा कथित अनुशासन बिल्कुल सत्य है—उसे श्रवणकर श्रोता का कर्तव्य है कि वह उसकी प्राप्ति का उपाय करें । इस प्रकार भगवदुक्त अनुशासन की प्राप्ति का उपाय जानने वाला ज्ञाता उस उपक्रम में उपयुक्त होता हुआ आगम से भावोपक्रम है । (नोआगमओ भावोपक्रमे दुविहे पणत्ते—तं जहा) नो आगमको आश्रित करके भावोपक्रम दो प्रकारका कहा गया है । जैसे (पसत्थे य अपसत्थे य) एक प्रशस्त और दूसरा अप्रशस्त । यहां पर भाव शब्द का अर्थ अभिप्राय है और यह जीव द्रव्य का पर्यायरूप से माना गया है । कहा भी है (भावाभिख्याः) भावके पांच नाम हैं स्वभाव १, सत्ता २, आत्मा ३, योनि ४, और अभिप्राय ५ । इस तरह

સાધનરૂપ તે ઉપક્રમ અહીં ગ્રાહ્ય થયો છે. અન્યત્ર ‘પણુ એવું’ જ કહ્યું છે કે ‘સોચ્ચા’ ઇત્યાદિ—તીર્થંકર ભગવાન દ્વારા કથિત અનુશાસન સર્વથા સત્ય છે. તેને શ્રવણ કરનાર શ્રાવકનું તેની પ્રાપ્તિનો ઉપાય કરવાનું કર્તવ્ય થઈ પડે છે. આ પ્રકારે ભગવદુક્ત અનુશાસનની પ્રાપ્તિનો ઉપાય જાણનાર જ્ઞાતા તે ઉપક્રમમાં ઉપયુક્ત (ઉપયાગ પ્રિણામથી યુક્ત) હોવાને કારણે આગમની અંપેક્ષાએ ભાવોપક્રમરૂપ હોય છે.

(નોઆગમઓ ભાવોપક્રમે દુવિહે પણત્તે) નોઆગમ ભાવોપક્રમ બે પ્રકારનો કહ્યો છે. (તં જહા) તે બે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે— (પસત્થે ય અપસત્થે ય) (૧) પ્રશસ્ત અને (૨) અપ્રશસ્ત અહીં ભાવ શબ્દનો અર્થ અભિપ્રાય છે, અને તે જીવ દ્રવ્યનો પર્યાયરૂપ માનવામાં આવ્યો છે. કહ્યું પણ છે કે “ભાવાભિખ્યાઃ” ભાવના પાંચ નામ નીચે પ્રમાણે છે—(૧) સ્વભાવ, (૨) સત્તા, (૩) આત્મા, (૪) યોનિ

परकीयाभिप्रायस्य उपक्रमणं=यथावत्परिज्ञानं भावोपक्रम इति । तत्र=द्विविधे नोआगमतो भावोपक्रमे, अप्रशस्ता भावोपक्रमः—डोडिणि गणिकाऽमात्यादीनां बोध्यः । अयमाशयः—डोडिणिनाम्न्या ब्राह्मण्या गणिकया अमात्येन च यत् पराभिप्रायरूपस्य भावस्य यथावत् उपक्रमः—परिज्ञानं कृतं तद् नोआगमतोऽप्रशस्त भावोपक्रमः । अप्रशस्तत्वं चास्य संसारफलत्वात्, इति । डोडिण्यादि मिथ्या पराभिप्रायः परिज्ञातः प्रसङ्गवशात्तदुच्यते—

आसीत्काऽपि डोडिणि नाम्नी ब्राह्मणी । तस्या आसंस्तित्वो दुहितरः । सा ताः परिणायैवं चिन्तितवती-जामातृणामभिप्रायं परिज्ञाय दुहितरः शिक्षणीयाः

परकीय भाव अभिप्रायका यथावत् परिज्ञान हेतुना इस का नाम भावोपक्रम है । (तत्थ) नोआगम की अपेक्षा से द्विविध हुए भावोपक्रम में जो अप्रशस्त भावोपक्रम है—वह डोडिणि ब्राह्मणी गणिका, और अमात्य आदि कों में जानना चाहिये । डोडिणि नाम की ब्राह्मणी एक वेध्या और एक अमात्य था सब पर के अभिप्राय का जो यथावत् परिज्ञात कर लिया करते थे वह उनका नोआगम से अप्रशस्त भावोपक्रम था । अप्रशस्तता इस में इसलिये है कि यह संसाररूप फल का जनक होता है।—डोडिणि आदि ने जिस प्रकार से पर का अभिप्राय जाना—प्रसंगवश उसे यहां दर्शाया जाता है—

एक कोई डोडिणी नामकी ब्राह्मणी थी । उसकी ३ तीन लड़किया थीं । उनका उसने विवाह करदिया ! विवाह करने के बाद उसने सोचा कि मैं जामाताओं के अभिप्राय का ज्ञात कर अपनी इन पुत्रियों को शिक्षित कर

अने (प) अलिप्राय. आ रीते परकीय लावनुं (अलिप्रायनुं) यथार्थं परिज्ञानं यत् तेनुं नाम लावोपक्रम छे. (तत्थ) नोआगमलावोपक्रमना ने छे प्रकारे. कडेवाभां आवा तेमाने ने अप्रशस्त लावोपक्रम कहे छे तेने सदृश लाव डोडिणि ब्राह्मणी, गणिका अने अमात्य वगेरेभां जलुवे. हुवे आ डोडिणि ब्राह्मणी आदिना अप्रशस्त लावोपक्रमने समजववाने भाटे अही तेमनी कथा आपवाभां आवी छे. ते त्रणे पधांना अलिप्रायने परिज्ञात करवाने समर्थ हुता. तेमने ते लावोपक्रम नोआगमनी अपेक्षाछे अप्रशस्त लावोपक्रमरूप हुता. तेमने लावोपक्रम अप्रशस्त ते करले हुता के ते संसाररूप इलने जनक हुता. डोडिणि आदिछे ने प्रकारे अन्यने अलिप्राय जलुवे हुता ते प्रकारनुं अही प्रसंगवश कथन करवाभां आवे छे—कोई एक गामभां डोडिणी नामनी एक ब्राह्मणी रहती हुती. तेने त्रणे पुत्रीओ हुती. तेणे ते त्रणेना विवाह करी नाभ्या. पुत्रीओने विवाह कर्या बाद तेने ओवा पचार आये के त्रणे जमार्थओने अलिप्राय (स्वलाव) जलुवे लधने, भारे भारी पुत्रीओने ओवा प्रकारनी शिक्षा आपवी लेधछे के ते शिक्षाने अनुत्तर एवम

यथैताः सुखिताः स्युः इति विचिन्त्य तथा सर्वा दुहितर एवमुक्ताः=युष्माकं पतयों
यदा स्व स्व शयनागारे समागच्छेयुस्तदा युष्माभिः—कंचि दोष मुद्गाव्य स्व स्वपतिः
शिरसि पादप्रहारेण ताडनीयः। तदा युष्मत्पतयो यत्कुर्युस्तन्मह्यं निवेदयत।
एवं जनन्या प्रोक्ते सति ताः सर्वाः पुत्रिकाः स्व शयनागारे स्वीयं स्वीयं पतिं
प्रतीक्षमाणाः स्थिताः।

अथ ज्येष्ठायाः पतिः शयनागारे समागतः ततः सा कमपि दोषमुद्गाव्य
तच्छिरसि चरणेन प्रहृतवती। प्रहारसमनन्तरमेव तस्याः पतिस्तदीयं चरणं
हस्तेन गृहीत्वा सस्नेहमिदमब्रवीत्—अयि प्रिये ! पाषाणादपि कठोरे मम शिरसि
त्वया चरणः पातितः। मन्ये केतकीकुसुमादपि कोमलतरस्त्वदीयश्चरणः पीडितो

हूँ कि जिससे इन का जीवन सुखी बन सके। इस प्रकार विचार करके
उसने अपनी ३ तीनों पुत्रियों से कहा कि देखों जब तुम्हारे पति अपने
२ शयन भवन में आवे तब तुम लोग किसी दोष को कल्पित कर उन्हें
लाते मारना। जब वे तुम लोगों से इसके प्रतिकार स्वरूप में जो कुछ करें
वह हम से कहना। इस प्रकार माता के कहने पर उन सब पुत्रियों ने वैसा
ही किया। वे सब अपने २ शयनागार में चली गईं और वहाँ अपने २
पतिओं की प्रतीक्षा करतीं हुई बैठ गईं। इतने में बड़ी लड़की का पति
आगया। पति के आने पर उसने उसे दोष दिखाकर एक लात शिर में
जमा दी। लात के लगते ही उसने उसके उसी पग को पकड़कर बड़े भारी
स्नेह के साथ कहा अयि प्रिये ! पाषाण से भी कठोरतर मेरे शिर पर तुमने
अपने चरण को रखा है—सो मैं समझता हूँ कि केतकी के कुसुम से भी

लुचीने तेज्या पोताना लुवनने सुणी जनावी शके. आ प्रकारने विचार करीने
तेल्ले पोतानी त्रल्ले पुत्रीज्याने जेलावीने आ प्रभाणु सदाहु आपी—

“आले ज्यारे तभारा पति तभारा शयनभंडमां आवे त्यारे तभारे कोर्ध
कल्पित दोष जतावीने तेभना भस्तक पर दातो मारवी. त्यारे प्रतिकारइये तेज्या
तभने जे कंर्ध कडे अथवा जे कंर्ध करे ते सवारमां मने कडेवानुं छे.

ते त्रल्ले पुत्रीज्याने मातानी सदाहु प्रभाणु ज कथुं—तेज्या पोतपोताना शयन-
भंडमां जाली गध अने पोतपोताना पतिनी प्रतीक्षा करवा लागी. सौथी मोटी
पुत्रीने पति ज्यारे शयनभंडमां आव्यो, त्यारे तेल्ले तेना पर कोर्धदोषनुं आदे-
पणु करीने तेना भस्तक पर जेक दात लगावी दीधी. दात जातानी साथे ज तेना
पतिज्या तेना पग पकडीने तेने आ प्रभाणु कहुं—“प्रिये ! पथथरथी पणु कठोर
जेवां मारा भस्तकपर तभे केतकीना पुष्पसमान कोमल पग वडे जे दात भारी छे

जातः। एवं ब्रुवाणः स तस्याश्चरणसंवाहनमकरोत्। प्रभाते सा सर्वं वृत्तं मात्रं निवेदितवती। सहर्षया मात्रा सा प्रोक्ता-वत्से ! त्वया स्वगृहे यथेच्छं कर्तव्यम्, तव पतिं स्त्वदाज्ञावर्ती भविष्यति। अथ द्वितीययाऽपि तथैव स्वपत्युःशिरसि चरणप्रहारः कृतः। तयाः पतिः किञ्चिद्रोषमुपदर्शयन्नुवाच-कुलवधूनामनुचितोऽयं व्यवहारः। इत्युक्त्वा कोपान्निवृत्तः। प्रभाते साऽपि मात्रे सर्वं वृत्तं निवेदितवती। ततः सा मात्रा सहर्षं प्रोक्ता-वत्से ! त्वमपि स्वगृहे यथेच्छ-

अधिक सुकुमार यह तुम्हारा चरण दुखने लगा होगा। इस प्रकार कहने के साथ ही उसने उसके उस चरण को दाबना प्रारंभ कर दिया। प्रातःकाल उस लड़की ने यह सब कृत्य अपनी माता से कह दिया। माता को इसे सुनकर बड़ा हर्ष हुआ। उसने पुत्री से कहा-वत्से ! तुम अपने घर में जो कुछ करना चाहो सो कर सकती हो-क्योंकि पति के इस व्यवहार से यह पता पड़ता है कि वह तुम्हारा आज्ञावशवर्ती रहेगा।

दूसरी पुत्री ने भी अपने पति के साथ ऐसा ही व्यवहार किया-उसके शयनागार में पति के आने पर उसने उसके मस्तक पर ज्यों ही चरण प्रहार किया कि उसे कुछ रोष आ गया। अपना रोष प्रकट करते हुए उसने उससे कहा यह व्यवहार कुलवधुओं के योग्य नहीं है-जो तुमने मेरे साथ किया है। ऐसा कहकर वह फिर शांत हो गया। प्रातःकाल उस पुत्री ने रात्रि के पति के इस व्यवहार को माता से प्रकट किया। तब उसकी माताने हर्षित

तेनें दीधे तभारा नाब्जुक चरणु दुणवा मांडया दुशे,” आ प्रभाणे कहीने तेणे तेना ते पगने हाणवा मांडये, णीजे दिवसे ते मोटी पुत्रीचे आ सभस्त वात तेनी माताने कही संलणावी. ते वात सांलणीने माताने (डाडिणी आदाणीने) धण्णे न आनंद थये. न मांथना आ प्रहारना वर्तनथी तेना स्वलावने ते सभल गध. तेणे तेनी मोटी पुत्रीने आ प्रभाणे सलाह आपी. “तुं तारा घरमां ने करवा धारे ते करी शकीश, कारणु के तारा पतिना आ व्यवहारथी जेवुं लागे छे के ते तारी आज्ञाने अधीन रहेशे.”

भील पुत्रीचे पण पोताना पति साथे न जेवो न वर्ताव जाताये-जेवो ते शयनअंडमां प्रवेशये के तुरत न कोर्ध होपनुं आरोपणु करीने तेणे तेना मस्तक पर ओक दात लगावी दीधी. त्यारे तेना पतिने थोडा रोष उभलये. तेणे पोताना रोष मात्र आ शण्डे द्वारा न प्रकट कये-“भारी सांथे ते न जे वर्ताव कये छे, ते कुणवधुजोने योग्य वर्ताव न गणाय तारे आवुं करवुं जेधजे नही” आ प्रभाणे कहीने ते शान्त थध गये. प्रातःकाणे भील पुत्रीचे पण आ अधी वात संलणावी

कुरु रुष्टोऽपि पतिः क्षणमात्रेण तुष्टो भविष्यति ! अथ तृतीययाऽपि स्व-
पतिं स्तथैव ग्रहतः ततः स क्रोधाध्मातचित्तो रोषारुणलोचन उच्चैः स्वरेण तां
निर्मत्स्यन्नेवमुवाच-अयि दुष्टे ! कुलकन्यकानुचितमिदं कृत्यं कथं त्वया कृतम् ?
इत्युक्त्वा मुष्ट्यादिभिस्तां ताडयित्वा गृहान्निष्कासितवान् । ततः सा मातुः समीपे
गत्वा सर्वं वृत्तं निवेदितवती । जामातुः स्वभावमवगत्य सा ब्राह्मणी । तत्स-
मीपे गत्वा तत्क्रोधमुपसान्त्वयितुं मधुरया गिरा प्रोवाच-वत्स ! अस्मत्कुलाचा-
रोऽयं यत् प्रथमसमागमे वध्वा वरस्य शिरसि चरणप्रहारः कर्तव्य इति, अतो मम

होकर उसे कहा कि हे बेटी ! तुमभी अपने घर में अपनी इच्छानुसार सब
कुछ करो ! तुम्हारे व्यवहार से रुष्ट भी तुम्हारापति क्षणमात्र में तुष्ट हो
जावेगा । जब तीसरी लडकी का पति अपने शयनागार में आया—तो उसने
भी अपनी माता के कहे अनुसार वैसा ही व्यवहार अपने पति के साथ किया ।
तब वह क्रोध से भर गया और रोष से लाल २ आँखें करके बड़े जोर से
उससे डाटकर कहने लगा—अयि दुष्टे ! कुलकन्या के अयोग्य यह कृत्य तूने
मेरे साथ क्यों किया ? ऐसा कहकर उसने उसे खूब मुक्कों से मारा पीटा
और मार पीट कर फिर उसे घर से बाहिर निकाल दिया । तब वह अपने
माता के पास गई और सब वृत्तान्त कहने लगी । पुत्री के कथनानुसार वह
अपने जामाता के स्वभाव को जानकर उसके पास गई—और जाकरके मीठी
रवाणी से उसके क्रोध को शांत करती हुई कहने लगी—वत्स ! यह हमारे
कुल का आचार है कि सुहागरात में प्रथम समागम के समय वधू अपने पति

त्यारे तेनी माताये सन्तोष पाभीने तेने आ प्रभाण्डे कहुं—“जेटी ! तुं पणु तारा
घरमां तारी छच्छा प्रभाण्डे वर्ताव करी शके छे. तारा पतिनो स्वभाव ओवो
छे के ते गमे तेटवो, इष्ट थये होय तो पणु क्षणमात्रमां तुष्ट थय जय ओवोछे.”

त्रीण पुत्रीये पणु कोध होपनु आरोपणु करीने तेना पतिने भस्तक पर
लात लगावी दीधी. त्यारे तेना कोधनो पारो धण्डो उंचो चडी गये, तेनी आंजे
कोधथी लात थय गध अने तेणु तेने आ प्रभाण्डे कहुं, “अरे नीथ ! कुलकन्याये
न करवा योग्य आ प्रकारनुं कार्य ते शा भाटे क्युं ?” आ प्रभाण्डे कहीने तेणु
तेने गडदा, पाटु आदि भारी भारीने घरमांथी धक्को भारीने गडार काढी मूकी. त्यारे
ते पुत्री तेनी माता पासे गध अने तेमने सर्व हुकीकत कही संलग्गावी. पुत्रीनी
आ वात द्वारा डोडिणी ब्राह्मणीने तेनी त्रीण पुत्रीना पतिना स्वभावने पणु ज्वाल
आवी गये. तुरत न ते तेनी (त्रीण पुत्रीना पतिनी) पासे पछोंची गध अने भीठी
वाणी द्वारा तेना कोधने शान्त पाडवाने प्रयत्न करवा लागी. तेणु तेने आ प्रभाण्डे
कहुं—“जभाधराज ! अमारा कुणमां सुहागराते प्रथम समागम वधते पतिना

પુત્ર્યા ભવાંસ્તાહિતો ન તુ દૌર્જન્યેન । અતો મવાન્ સ્વરોપં નિવર્તયતુ । શ્વશ્રૂ
વચનં નિશમ્ય સ રોષાન્નિવૃત્તઃ । સા સ્વપુત્રીમુક્તશાન્-વત્સે ! દુરારાધ્યસ્તે પાત
અતોઽયં ત્વયા પરમપાવધાનતયા મહતા પ્રયત્નેન સમારાધનીયઃ । इत्थं डोडिणि
ब्राह्मण्या स्व जामातृणामभिप्रायो ज्ञातः । ११)

અથ ગણિકયા યથા પરાભિપ્રાયો જ્ઞાતસ્તથોચ્યતે

આસીત્ કર્મશ્ચિન્નગરે ચતુષ્પષ્ટિકલાચતુરા વિલાસિની નામ ગણિકા ।
તયા હિ પરાભિપ્રાયપરિજ્ઞાનાર્થં રતિભવનભિત્તૌ સ્વ સ્વ ક્રિયાં કુર્વન્તો રાજપુત્રા
દયશ્ચિત્રિતાઃ । તસ્યા ગૃહે યજ્ઞાતીયો જનઃ સમાયાતિ સ સ્વજાતીયોચિતચિત્ર-

કે મસ્તકપર ચરણ પ્રહાર કરે । इसी बात से मेरी पुत्री ने तुम्हें तोड़ित
किया है—दुर्जनता से नहीं । इसलिये आप अपने रोष की शांति कर लें ।
इस प्रकार से साम्र के वचन को सुनकर उसने क्रोध छोड़ दिया । तब
डोडिणि ने अपनी पुत्री से कहा—वत्से । तेरा पति दुराराध्य है । इसलिये
तू इसकी बड़ी सावधानी के साथ बहुत ही यत्न पूर्वक सेवा करना । इस
प्रकार डोडिणि ब्राह्मणी ने अपने जामाताओं का अभिप्राय जान लिया ।

અથ ગણિકા ને જિસ પ્રકાર સે પર કા અભિપ્રય જાના વહ કહા જાતા
હૈ—કિસી નગર મેં ૬૪ કલાઓ મેં નિપુણ વિલાસવતી નામ કી એક ગણિકા
રહતી થી । उसने दूसरों के जभिप्राय को जानने के निमित्त अपने रति-
भवन की दीवाल पर अपनी २ क्रियाओं को करते हुए राजपुत्र आदिकों

મસ્તક પર ચરણપ્રહાર કરવાનો આચાર આદ્યો આવે છે. તે કારણે મારી પુત્રીએ
તમારી સાથે એવો અવહાર કર્યો છે, હુટતાને કારણે એવું કરવામાં આવ્યું નથી.
માટે આપે ક્રોધ છોડીને તેના વર્તન માટે તેને માફી આપવી જોઈએ.” સાસૂના
આ પ્રકારના વચનો સાંભળીને તેનો શુસ્સો ઉતરી ગયો. ત્યારબાદ તે ડોડિણી
બ્રાહ્મણીએ તેની ત્રીજી પુત્રીને આ પ્રમાણે સલાહ આપી—“એટી ! તારા પતિ દુરા-
રાધ્ય છે. માટે તારે તેમની આજ્ઞાનું બરાબર પાલન કરવું અને ખૂબ જ સાવધાની
પૂર્વક તેમની સેવા કરવી.

આ પ્રકારે ડોડિણી બ્રાહ્મણીએ પોતાના જમાઈઓના અભિપ્રાયને ઉપર
દર્શાવેલી યુક્તિ વડે બાણી લીધી.

હવે પરનો અભિપ્રાય બાણવાને સમર્થ એવી એક વિલાસવતી નામની શુષ્ણિકાનું
દૃષ્ટાંત આપવામાં આવે છે. કેઈ એક નગરમાં કેઈ એક ગણિકા રહેતી હતી. તે
૬૪ કલાઓમાં નિપુણ હતી. તેણે પરનો અભિપ્રાય બાણવાને માટે આ પ્રકારની
પદ્ધતિ અપનાવી હતી. તેણે પોતાના રતિભવનની ભીતો પર બુદ્ધા બુદ્ધા પ્રકારની
ક્રિયાઓ કરતાં વિવિધ ભતિના પુરૂષોનાં ચિત્રો દોરાવ્યાં હતાં. જે પુરૂષ

दर्शने समासज्जते । ततः सा तं परिचितम् तदुचितव्यवहारेण तं सत्कुरुते । तस्या व्यवहारेण संतुष्टा जनारतस्यै यथेष्टमर्थं जातं प्रयच्छन्ति । इत्थं गणिकया पराभिप्रायो ज्ञातः । २)

अथाऽमात्येन यथा पराभिप्रायो ज्ञातस्तथोच्यते—

आसीत् कस्मिंश्चिन्नगरे भद्रबाहुर्नाम राजा । तस्यासीन्नीति-शास्त्रचतुरो झटिति पराभिप्रायसंबादनशीलः सुशीलो नामाऽमात्यः । अथैकदा स राजाऽमात्येन सहाश्ववाहनिकार्या गतः । पथि गच्छता राजतुरङ्गमेण काऽपि खिलप्रदेशे (बिनजोता-पडतल प्रदेश) स्थित्वा मूर्खितम् । तच्च मूर्खं बहुतरकालपर्यन्तं तत्र

के चित्रों को अंकित कर दिया । उसके घरमें जिस जाति का मनुष्य आता वह अपने जातीयोचित चित्र के देखने में तल्लीन हो जाता । इस तरह उसे पहिचान कर उसके योग्य व्यवहार से उसका सत्कार करने लगती । इस प्रकार उसके व्यवहार से संतुष्ट हुए मनुष्य उसे इच्छानुकूल पैसा दे दिया करते ।

अमात्य जिस पद्धति से पर का अभिप्राय जान लेता वह बात यहाँ प्रकट की जाती है—

त्रिसी नगर में भद्रबाहु नामक राजा था । उसके अमात्य का नाम सुशील था । वह नीतिशास्त्र में बड़ा चतुर था, पर के अभिप्राय को जल्दी से जल्दी जान लेता था । एक दिन की बात है कि राजा अमात्यके साथ अश्वक्रीडा करने के लिये बाहर निकला—मार्ग में चलते हुए राजा के घोड़े ने किसी पडतल प्रदेश में खड़े होकर पेशाबकर दिया पेशाब वहीं पर

त्यां आवतो, ते पोताना जतीथोयित चित्रं निरीक्षणं करवामां तन्मयं यथं जतो । तेनां आ प्रकारना वर्तनथी तेनी जति, स्वभाव, रुचि आदिने ते विदासवती समल जती होती अने ते पुष्पनी साथे तेनी जति, रुचि आदिने योग्य वर्ताव जतावीने तेने सत्कार आदि द्वारा शुशुभुश करी नाजती । तेना वर्तत आदिथी शुशु यधने तेने त्यां जनारा पुष्पे जूग धन आपीने पोताने संतोष प्रकट करता होता ।

हुवे अमात्यनुं दृष्टान्त आपवामां आवे छे अने ओ बात प्रकट करवामां आवे छे के ते अमात्य केवी रीते, अन्यना अभिप्रायने जल्दी लेतो होता—

कोई एक नगरमां लद्रबाहु नामे राजा राज्य करतो होता । तेने सुशील नामे एक अमात्य होता । ते नीतिशास्त्रमां धरो ज नियुक्त होता । परना अभिप्रायने धरो ज उडपथी जल्दी लेवाने ते समर्थ होता । हुवे एक दिवस ते राजा ते अमात्यने साथे लडने अश्वक्रीडा करवा निमित्ते नगरनी गडार निकला पडयो । आलतां आलतां मार्गना कोई एक पडतर (जेती न थती डोय ओवे प्रदेश) पर जला रहने घोडाओ पेशाब कर्यो । ते पेशाब सूकाई गयो नही पथु त्यां ते जमीनमां

स्थितमेवासीत् । निवर्त्तमानेन राज्ञोऽश्वमूत्रं तथैवावस्थितं दृष्टम् । ततो राज्ञा चिन्तितम् यद्यत्र सरो भवेत्तर्हि तदगाधजलं भवेत्, न कदापि परिशुष्येत् । इत्थं चिन्तयन् राजा तं भूभागं चिरं निरीक्षितवान् । ततोऽमात्येन सह राजा स्वभवनं समागतः । राज्ञो मनोगतभावं परिज्ञाय तेनामात्येन तदनु तत्र महत्सरः कारितम्, परितः सरोवरपालिषु च सर्वकुसुमफला विविध जातीया वृक्षाः समारोपिताः । ततोऽन्यथाऽमात्येन सह तत्र प्रदेशे गच्छता तेन राज्ञा तरुगजिशोभितं तत् सरोवरं विलोक्य पृष्टम्—अहो ! केनेदमति रमणीयं सरः कारितम् ? आमात्येनोक्तम्—भवद्भिरेव, ततो विस्मितमना राजा

भरा रहा—सूखा नहीं जब अश्वकीड़ा करके राजा वापिस लौटा तो उसने उस घोड़े के पेशाब को वहीं पर भरा हुआ देखा—तब राजाने मन में विचार किया—कि यदि यहाँ पर तालाब खुदवाया जावे तो वह अगाध जल से भरा रहेगा । कभी भी सूखेगा नहीं । इस प्रकार विचार करते-र उस राजा ने बहुत समय तक उस भूभाग को देखा इसके बाद वह राजा अमात्य के साथ राजमहल में आगया । राजा के मनोगत भाव को जानने वाले उस अमात्यने कुछ समय बाद वहाँ एक बड़ा भारी तालाब खुदवा दिया । उसके चारों ओर उसने तट पर सब ऋतुओं के कुसुम और फलवाले अनेक जाति के वृक्ष लगा दिये । किसी समय अमात्य के साथ राजा उसी मार्ग से होकर निकले । वृक्षके झुण्डों से शोभित उस सरोवर को देखकर उन्होंने मंत्री से पूछा अहो ! यह अति रमणीय तालाब यहाँ किसने बनवाया है ?

એમને એમ પડ્યો રહ્યો. થોડીવાર પછી રાજા અને અમાત્ય એજ રસ્તેથી પાછા ફર્યા. તે પડતર જગ્યામાં થોડાના પેશાબને હજી પણ વિના સૂકાયેલો. એમને રાજાના મનમાં આ પ્રકારનો વિચાર આવ્યો—“જો આ જગ્યાએ તળાવ ખોદાવવામાં આવે, તો તે તળાવ કાયમ અગાધ જળથી ભરપૂર રહેશે. તેનું પાણી સૂકાશે નહીં આ પ્રકારનો વિચાર કરતો કરતો તે રાજા તે ભૂમિભાગ સામે ઘણીવાર સુધી તાકી રહ્યો. ત્યારબાદ તે રાજા તે અમાત્યની સાથે રાજમહેલ તરફ રવાના થઈ ગયો. તે ચતુર અમાત્ય તે રાજાના મનોગત ભાવને બરાબર સમજી ગયો. તેણે રાજાને પૂછ્યા વિના જ તે જગ્યાએ એક વિશાળ તળાવ ખોદાવ્યું અને તેના કિનારે વિવિધ પ્રકારના અને વિવિધ ઋતુઓના ફલ-ફૂલથી સંપન્ન વૃક્ષો રોપાવી દીધાં. ત્યારબાદ ફરી કોઈ દિવસે તે રાજા તે અમાત્યની સાથે એજ રસ્તે થઈને ફરવા નીકળ્યો. પેલી જગ્યાએ વૃક્ષોના ઝુડોથી સુશોભિત તે જળાશયને એમને રાજાએ તે અમાત્યને પૂછ્યું—અરે ! આ અતિશય રમણીય જળાશય અહીં કોણે ખંદાવ્યું છે ?

પૃષ્ટવાન્—મયા કદા કારિત્ત્વ ? इति नो स्मरामि । एवं नृपेणोक्तोऽमात्यः सर्वं वृत्तं कथितवान् । राजाऽपि सचिवस्य परचित्ताभिप्रायज्ञानशक्तिं विलोक्य तं प्रशस्य तज्जीविकां वर्द्धयामास । इत्थममात्येन पराभिप्रायो ज्ञातः । ३।

एतेषां सर्वेषां भावोपक्रमाणां संसारफलत्वाः प्रशस्तत्वम् । नो आगमतः प्रशस्तो भावोपक्रमश्च गुर्वादीनाम् । श्रुतादिपरिज्ञानार्थं यद् गुर्वादीनां भावोप-

તવ અમાત્ય ને કહા મહારાજા ! આપને હી બનવાયા હૈ, તવ રાજાં કે મન મેં વડા આશ્ચર્ય હુઆ ઓર ઉસને મંત્રી સે પૂછા મૈને યહ કરવાયા હૈ ? ઇસ બાત કી તો મુઝે યાદ હી નહીં હૈ । ઇસ પ્રકાર રાજા સે કહે ગયે અમાત્ય ને સબ યથા સ્થિતવૃત્તાન્ત ઉનસે કહ દિયા ! રાજા ને તવ મંત્રા કી પરકે ચિત્ત કે અભિપ્રાય કો જાનને કી શક્તિ દેખકર ઉસકી બડી પ્રશંસા કી ઓર ઉસકે વેતનકી વૃદ્ધિ કરદી ઓર ડનકા પદ બઢા દિયા ઇસ પ્રકાર યહ પરચિત કે અભિપ્રાય કો જાનનેવાળે અમાત્ય કી વથા હૈ । કિ જિસમેં ઇસ પ્રકાર સે અમાત્ય ને પરચિત્તાભિપ્રાય કો જાના યહ કહા ગયા હૈ । ઇન સબ ભાવોપક્રમણોં મેં સંસારરૂપ ફલ જનકતા હોને કે કારણ અપ્રશસ્તતા હૈ । (પસત્થે ગુરુમાઈણં) ગુરુ આદિકોં કે અભિપ્રાય કો યથાવત્ જાનના યહ નોઆગમ કો આશ્રિત કરકે પ્રશસ્ત ભાવોપક્રમ હૈ । અર્થાત્ શ્રુત આદિકોં કે પરિજ્ઞાન કે

ત્યારે અમાત્યે જવાબ આપ્યો—“હે મહારાજા આપે પોતે જ આ જળાશય બંધાવ્યું છે.” ત્યારે રાજાના આશ્ચર્યનો પાર ન રહ્યો. તેણે અમાત્યને કહ્યું. “આ જળાશય શું મેં બંધાવ્યું છે ? આ જળાશય બંધાવવાનો કોઈ આદેશ ક્યાંતું મને યાદ નથી !” ત્યારે અમાત્યે આ પ્રમાણે ખુલાસો કર્યો—“હે મહારાજા ! ઘણા સમય સુધી આ જગ્યાએ ઘોડાના મૂત્રને વિના સુકાયે પડ્યું રહેલું જોઈને આપે આ જગ્યાએ જળાશય બંધાવવાનો વિચાર કરેલો. આપે માનેલું કે આ જગ્યાએ જળાશય ખોદાવવાથી તેમાં પાણી કદી સુકાશે નહીં. આપના આ મનોગત વિચારને આપ અશ્વકીડા કરીને પાછા ફરતી વખતે જે દૃષ્ટિથી તે અશ્વમૂત્રની સામે મિરખી રહ્યા હતા-તે દૃષ્ટિ દ્વારા જાણી જોઈને મેં આ જળાશય અહીં બંધાવ્યું છે.” પરના ચિત્તને સમજવાની પોતાના અમાત્યની તે શક્તિ જોઈને રાજાને ઘણું હર્ષ થયો. તેણે તેની ખૂબ પ્રશંસા કરી અને તેનું વેતન અને હોદ્દો વધારી દઈને તેની કદર કરી. આ પ્રકારની અન્યના મનોગત લાવોને જાણનાર તે અમાત્યની કથા છે. આ ત્રણે લાવોપક્રમણનાં દૃષ્ટાન્તો છે. આ લાવોપક્રમણમાં સંસારરૂપ ફલજનકતાનો સદ્ભાવ હોવાથી તેમને અપ્રશસ્ત કહેવામાં આવેલ છે.

(પસત્થે ગુરુમાઈણં) ગુરુ આદિનાં અભિપ્રાયને યથાર્થરૂપે જાણવા તે પ્રશસ્ત ભાવોપક્રમ છે. એટલે કે શ્રુત આદિનું પરિજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવા ઈચ્છતા શિષ્યોદિકોને

ક્રમણં સ પ્રશસ્તભાવોપક્રમ इत्यर्थः । नन्वत्रानुयोगद्वारविचारः प्रकृतः, अनु-
योगश्च व्याख्यानम्, एवं च यदेवानुयोगद्वारव्याख्यानोपयोगि तदेवात्र वक्तव्यम् ।
गुरुभावोपक्रमस्तु व्याख्यानानुपयोगित्वादवक्तव्य एवेति चे दुच्यते
व्याख्यानं हि गुर्वयत्तं भवति । अतो व्याख्यानोपलब्धये
शिष्याणां गुरोरभिप्रायज्ञानं परमावश्यकम् । गुर्वभिप्रायज्ञो हि तदनुकूलाचरणेन
गुरुं प्रसादयति, प्रसादितो गुरुस्तस्मै सरहस्यं शास्त्रं प्ररूपयति । एवं गुरुभावो
पक्रमोऽपि व्याख्यानसयाङ्गमेव, अतो गुरुभावोपक्रम उचित एव । उक्तं च—
“गुर्वयत्ता यस्माच्छास्त्रारम्भा भवन्ति सर्वेऽपि ।

तस्माद् गुर्वाराधनपरेण हितकाङ्क्षिणा भाव्यम् ॥१॥

લિયે જો શિષ્યાદિકો ગુરુ આદિ કોં કે ભાવ કા યથાવત્ પરિજ્ઞાન હોતા
હૈ—વહ પ્રશસ્ત ભાવોપક્રમ હૈ ।

શંકા—યહાં તો અનુયોગદ્વારકા વિચાર ચલ રહા હૈ । અનુયોગ કા
અર્થ વ્યાખ્યાન હૈ । ઇસલિયે જો અનુયોગદ્વાર કે વ્યાખ્યાન કરને મેં ઉપયોગી
હો વહી યહાં કહના ચાહિયે । ગુરુ ભાવોપક્રમ તો વ્યાખ્યાન મેં અનુપયોગી
હૈ । ઇસલિયે ઉસે યહાં નહી કહના ચાહિયે ।—

ઉત્તર—વ્યાખ્યાન ગુરુ કે આધીન હોતા હૈ । અતઃ ઉસ વ્યાખ્યાન કી
પ્રાપ્તિ કે લિયે ગુરુ કે અભિપ્રાય કા જ્ઞાન કરના શિષ્યોં કો પરમ આવશ્યક
હૈ । ગુરુ કે અભિપ્રાય કો જાનને ચાલા શિષ્ય ઉનકો અપને ઉપર અનુકૂલ
આચરણ સે પ્રસન્ન કરતા હૈં ઓર પ્રસાદિત હુએ વે ગુરુજન ઉસકે લિયે રહસ્ય
યુક્ત શાસ્ત્ર કી પ્રરૂપણા કરતે હૈં । ઇસ પ્રકાર ગુરુકે ભાવકા શિષ્ય કો યથાવત્
પરિજ્ઞાન હોના યહ બી વ્યાખ્યાન કા અંગ હી હૈ । ઇસલિયે ઉસકા કથન
યહાં ઉચિત હી હૈ । કહા બી હૈ (ગુર્વાયત્તા) ઇત્યાદિ । શાસ્ત્રોં કા પઢનાદિ—

ગુરુઆદિકેના લાવનું જે યથાર્થ પરિજ્ઞાન થાય છે, તેનું નામ નો
આગમની અપેક્ષાએ પ્રશસ્ત ભાવોપક્રમ છે.

શંકા—અહીં તો અનુયોગદ્વારની પ્રરૂપણા ચાલી રહી છે. અનુયોગનો અર્થ
વ્યાખ્યાન થાય છે. તેથી અનુયોગદ્વારનું વ્યાખ્યાન કરવામાં ઉપયુક્ત હોય તેમનું
જ કથન અહીં થવું જોઈએ. ગુરુભાવોપક્રમ તો વ્યાખ્યાનમાં અનુપયોગી છે, તેથી
અહીં તેનું કથન થવું જોઈએ નહીં.

ઉત્તર—વ્યાખ્યાન ગુરુને આધીન હોય છે. તેથી તે વ્યાખ્યાનની પ્રાપ્તિને
માટે ગુરુના અભિપ્રાયને જાણી લેવાનું જ્ઞાન શિષ્યોને માટે પરમ આવશ્યક ગણાય
છે. ગુરુના અભિપ્રાયને જાણનારો શિષ્ય તેમને અનુકૂળ થઈ પડે એવા પોતાના
આચરણથી તેમને ખુશ કરે છે, અને તેના વર્તનથી સંતુષ્ટ થયેલા તે ગુરુ તેની
સમક્ષ રહસ્યયુક્ત શાસ્ત્રની પ્રરૂપણા કરે છે. આ રીતે ગુરુના લાવનું શિષ્યને યથા-
વત્ પરિજ્ઞાન થવું એ પણ વ્યાખ્યાનના એક અંગરૂપ જ છે. તે કારણે સૂત્રકારનું
ઉપયુક્ત કથન ઉચિત જ છે. કહું પણ છે કે—(ગુર્વાયત્તાઈત્યાદિ) શાસ્ત્રોનું પઢન

અન્યચ્—“જુત્તં ગુરુમળગહણં નાઝ્ઞણ તયં જહઙ્ઘિયં તત્તો ।

જહ હોઙ્ સુપ્પસન્નં, તહ જહ્યવ્વં ગુણત્થીહિં” ॥૧॥

છાયા—યુક્તં ગુરુમનોગ્રહણં, જ્ઞાત્વા તદા યથાસ્થિતં તતઃ ।

યથા ભવતિ સુપ્રસન્નં, તથા યતિતવ્યં ગુણાર્થિભિઃ ॥૧॥

પુનઃ

“ગુરુચિતાયત્તોઙ્, વક્ષવાળંગાઙ્ જેણ સવ્વાઙ્ ।

તેણ સહ સુપ્પસન્નં, હોઙ્ તયં તં સહા કુઙ્ઞા” ॥૨॥

છાયા—ગુરુચિતાયત્તાનિ, વ્યાખ્યાનાઙ્ઞાનિ યેન સર્વાણિ ।

તેન યથા સુપ્રસન્નં, ભવતિ તદા તત્ તથા કુર્યાત્ ॥૨॥

રૂપ સમસ્ત અધ્યયન ગુરુ મહારાજ કે સમીપ મેં હી હોતા હૈં इसलिये समस्त शास्त्रारम्भ गुरुमहाराज के आधीन है । अतः अपने हित की अभिलाषा रखने वाले शिष्य का कर्तव्य है कि वह गुरु महाराज की आराधना करने में तत्पर रहे ।

૧॥—और भी गुरुमहाराज के मनका-अभिप्राय -शिष्य को जानना उचित है । तब ही वह उनसे यथार्थ में शास्त्र का रहस्य ज्ञात कर सकता है । इसलिये गुणार्थी-विनीत शिष्य को चाहिये कि जिस प्रकार से गुरु महाराज सुप्रसन्न रहें ऐसा यत्न उसे करते रहना चाहिये ।

૨॥—फिर भी कहा है ‘गुरु चित्ताङ्’ इत्यादि । व्याख्यान के समस्त अंग गुरु महाराज के चित्ताधीन रहा करते हैं । इसलिये जिस प्रकार से वे सुप्रसन्न रहें वैसा सब काम शिष्य को अवश्य कर्तव्य है । ૩॥—और भी

આદિરૂપ સમસ્ત અધ્યયન ગુરુ મહારાજની સમીપે જ થાય છે, તેથી સમસ્ત શાસ્ત્રારંભ ગુરુને આધીન છે. તેથી પોતાના હિતની ખેવના રાખનાર શિષ્યનું એ કર્તવ્ય થઈ પડે છે કે તેણે ગુરુમહારાજની આરાધના કરવાના કાર્યમાં તત્પર રહેવું જોઈએ.

(૧) ગુરુમહારાજના મનોભાવને (અભિપ્રાયને) બાણી લેવો તે શિષ્યને માટે અતિ આવશ્યક છે. ત્યારબાદ જ તે તેમની પાસેથી શાસ્ત્રના યથાર્થ રહસ્યને બાણી શકે છે. તેથી જે પ્રકારે ગુરુ રાજી રહે એ પ્રકારનો પ્રયત્ન ગુણાર્થી વિનીત શિષ્યે કરવો જોઈએ.

(૨) કહ્યું છે કે—“ગુરુચિત્તાઙ્” ઇત્યાદિ-વ્યાખ્યાનના સમસ્ત અંગો ગુરુ મહારાજના ચિત્તાધીન રહે છે. તેથી જે પ્રકારે તેઓ પ્રસન્ન રહે તે પ્રકારનો કામો શિષ્યોએ અવશ્ય કરવા જોઈએ.

પુનઃ

“આગારિંગિયકુસલં, જહ્ સેયં વાયસં વણ પુજ્ઞા ।

તહવિ ય સે નવિ કૂડે, વિરહમ્મિ ય કારણં પુચ્છે” ॥૩॥

છાયા—આકારેઙ્ગિતકુસલં (શિષ્ય) યદિ શ્વેતં વાયસં વદેયુઃ પૂજ્યાઃ

તથાપિ ચ તેષાં (વચનં) નાપિ કૂટયેત્, વિરહે ચ કારણં પૃચ્છે ॥૩॥

તેષાં પૂજ્યાનાં વચનં નાપિ કૂટયેત્=અસત્યં ન કુર્યાત્, તથેતિ કુર્યાદિત્યર્થઃ
વિરહે=વિજને એકાન્તે इत्यर्थः, કારણં=થેતવાયસકથનપ્રયોજનં પૃચ્છેત્ શેષં સુગમમ્ ॥

સ એવ નોઆગમતો ભાવોપક્રમઃ । સ એવ ભાવોપક્રમઃ । સ એવ
ઉપક્રમઃ ॥સૂ૦ ૭૦॥

‘ગુરુમાદ્દણં’ इत्यत्रादिशब्देन सूचितं शास्त्रभाવोपक्रमं निरूपयितुमाह—

મૂલમ્—અહવા—ઉવક્રમે છવિવહે પળણત્તે, તંજહા—આણુપુઠ્ઠી૧,
નામં૨, પળાસં૩ વત્તઠ્ઠવયા૪ અત્થાહિગારે૫ સમોયારે૬ ॥સૂ૦ ૭૧॥

કહા છે ‘આગારિંગિયકુસલં, इत्यादि आकार और इंगित (अभिप्राय) के जानने में कुशल शिष्य यदि पूज्य गुरुमहाराज काले कौवे को यदि सफेद कौवा भी कह दें, तो भी गुरुजन के वचन को उसे विना किसी तर्क के स्वीकार कर लेना चाहिये । बाद में एकान्त में काले कौवे को सफेद कहने के प्रयोजन—का कारण पूछना चाहिये । (से तं नोआगमओ भावोवक्रमे—से तं भावोवक्रमे—से तं उवक्रमे) ब्रह्म यह नोआगमको आश्रित करके भावोपक्रम है । इस तरह आगम और नोआगमको आश्रित करके भावोपक्रम का यहाँ तक स्वरूप वर्णन किया । इस स्वरूप से उपक्रम का स्वरूप ज्ञात हो जाता है । सूत्र ७० ।

(૩) કહ્યું પણ છે કે “આગારિંગિયકુસલં” ઇત્યાદિ—આકાર અને ઇંગિતને જાણવામાં નિપુણ એવો શિષ્ય ગુરુનાં વચનને તર્ક અથવા દલીલ કર્યા વિના સ્વીકારી લે છે. ધારે કે ગુરુ કહે કે “કાગડાનો વણ ઘોળો હોય છે,” તો તેમના તે કથનને પણ તે શિષ્ય દલીલ કર્યા વિના સ્વીકારી લે છે. ત્યારબાદ એકાન્તમાં તેણે ગુરુને પૂછ્યું નેઈએ કે “આપ કાગડાનો વણ ઘોળો કહો છો તેનું કાશ્ચ કૃપા કરીને સમજાવો.”

(સે તં નોઆગમઓ ભાવોવક્રમે) આ નોઆગમને આશ્રિત કરીને ભાવોપક્રમનું સ્વરૂપ સમજવું. (સે તં ભાવોવક્રમે) આગમ ભાવોપક્રમ અને નોઆગમ ભાવોપક્રમરૂપ ભાવોપક્રમના અન્ને લેદોનું નિરૂપણ અહીં સમાપ્ત થાય છે. (સે તં ઉવક્રમે) આ રીતે ઉપક્રમના સમસ્ત લેદોનું વર્ણન અહીં સમાપ્ત થાય છે. ॥સૂ૦ ૭૦॥

છાયા—અથવા—ઉપક્રમઃ પદ્ધિઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથા—આનુપૂર્વી ૧. નામ ૨, પ્રમાણ ૩, વક્તવ્યતા ૪, અર્થાધિકાર ૫, સમવતાર ૬ ॥મુ. ૭૧॥

ટીકા—અહવા—ઇત્યાદિ—

પૂર્વે ગુરુભાવોપક્રમઃ પ્રદર્શિતઃ સંપ્રતિ શાસ્ત્રભાવોપક્રમઃ પ્રરૂપ્યતે—‘અથવે’—તિ, અથવા—અનન્તરં=ગુરુભાવોપક્રમવર્ણનાનન્તરમ્ ઉપક્રમઃ—શાસ્ત્રભાવોપક્રમઃ પદ્ધિઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ । ‘તં જહા’ ઇત્યાદિ, તથા—યથા તસ્ય ભાવોપક્રમસ્ય પદ્ધિત્વં તદુચ્યતે ‘આણુપુર્વી’ ઇત્યાદિના । તત્ર પ્રથમ ઉપક્રમ આનુપૂર્વી ૧, દ્વિતીયો નામ ૨, તૃતીયઃ પ્રમાણમ્ ૩, ચતુર્થો વક્તવ્યતા ૪, પચ્ચમઃ—અર્થાધિકાર ૫, ષષ્ઠઃ સમવતાર ૬ ઇતિ । ॥મુ. ૭૧॥

અવ સૂત્રકાર “ગુરુમાર્ઙ્ગ” ઇસ પદ મેં આદિ પદ સે સૂચિત શાસ્ત્રભાવોપક્રમ કા નિરૂપણ કરને કે લિયે “અહવા” ઇત્યાદિ સૂત્ર કહતે હૈં —

“અહવા ઉવક્રમે છન્વિહે” ઇત્યાદિ । ॥મુત્ર ૭૧॥

શબ્દાર્થ—(અહવા) અથવા (ઉવક્રમે) ઉપક્રમ (છન્વિહે) છહ પ્રકાર કા (પણત્તે) કહા ગયા હૈ । (તંજહા) વે પ્રકાર યે હૈં—(આણુપુર્વી ૧, નામ ૨, પ્રમાણ ૩, વક્તવ્યતા ૪, અર્થાધિકાર ૫, સમવતાર ૬,) આનુપૂર્વી ૧, નામ ૨, પ્રમાણ ૩, વક્તવ્યતા ૪, અર્થાધિકાર ૫, ઓર સમવતાર ૬, પહિલે ગુરુભાવોપક્રમ કા કથન સૂત્રકારને કરદિયા હૈ । અવ વે આદિપદ સે સૂચિત શાસ્ત્ર ભાવોપક્રમ કા નિરૂપણ કરતે હૈં—યહાં ઉપક્રમ પદ સે શાસ્ત્રભાવોપક્રમ લિયા ગયા હૈ । અતઃશાસ્ત્રોક્ત ભાવોપક્રમ પૂર્વોક્તરૂપ સે ૬ પ્રકાર કા હૈ એસા સૂત્ર કા સંક્ષિપ્તાર્થ હૈ । ॥મુત્ર ૭૧॥

હવે સૂત્રકાર “ગુરુમાર્ઙ્ગ” આ પદમાં આદિ પદથી સૂચિત શાસ્ત્રભાવોપક્રમનું નિરૂપણ કરવાને માટે “અહવા” ઇત્યાદિ સૂત્રોનું કથન કરે છે—

“અહવા ઉવક્રમે છન્વિહે”—ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(અહવા) અથવા (ઉવક્રમે છન્વિહે) ઉપક્રમ છ પ્રકારનો કહ્યો છે. (તંજહા) તે છ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(આનુપુર્વી, નામ, પ્રમાણ, વક્તવ્યતા, અર્થાધિકાર, સમવતાર) (૧) આનુપૂર્વી, (૨) નામ, (૩) પ્રમાણ, (૪) વક્તવ્યતા (૫) અર્થાધિકાર અને ૬ સમવતાર.

પહેલાં ગુરુભાવોપક્રમનું પ્રતિપાદન સૂત્રકારે કરી લીધું. હવે તેઓ આદિપદથી સૂચિત શાસ્ત્રભાવોપક્રમનું નિરૂપણ કરે છે— આ વાત “અહવા” અથવા પદથી સૂચિત થાય છે. અહીં ઉપક્રમ પદથી શાસ્ત્રભાવોપક્રમ ગૃહીત થયો છે. તેથી શાસ્ત્રોક્તભાવોપક્રમ પૂર્વોક્તરૂપે છ પ્રકારનો હોય છે, એવો આ સૂત્રનો સંક્ષિપ્તાર્થ છે. ॥મુ. ૭૧॥

અથાનુપૂર્વાદીનાં સ્વરૂપં નિરૂપયિતુમાહ;

મૂલમ—સે કિં તં આણુપુર્વી૧, આણુપુર્વી દસવિહા, પળ્લણ્ણા, તંજહા નામાણુપુર્વી૧, ઠવળાણુપુર્વી૨, દવ્વાણુપુર્વી૩, સ્વેત્તાણુપુર્વી૪, કાલાણુપુર્વી૫, ઉક્કિત્તણાણુપુર્વી૬, ગળળાણુપુર્વી૭, સંઠાણાણુપુર્વી૮, સામાયારીઆણુપુર્વી૯, ભાવાણુપુર્વી૧૦ ॥સૂ. ૭૨॥

છાયા—અથ કાઽસૌ આનુપૂર્વી ? આનુપૂર્વી દશવિધા પ્રજ્ઞા, તથા—નામાનુપૂર્વી૧, સ્થાપનાનુપૂર્વી૨, દ્રવ્યાનુપૂર્વી૩, ક્ષેત્રાનુપૂર્વી૪, કાલાનુપૂર્વી૫, ઉત્કીર્ત્તાનુપૂર્વી૬, ગળળાનુપૂર્વી૭, સંસ્થાનાનુપૂર્વી૮, સામાચાર્યાનુપૂર્વી૯, ભાવાનુપૂર્વી૧૦ ॥સૂ. ૭૨॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં’ इत्यादि । अथ कौऽसौ आनूपूर्वी ? इति । उत्तरमाह—आनूपूर्वी—इह हि पूर्वं प्रथमम् आदिः इति पर्यायाः । पूर्वस्य—अनु=

અવ. સૂત્રકાર આનુપૂર્વી આદિ કોં કે સ્વરૂપં કા કથન પ્રારંભ કરતે હૈં—
इस में सब से प्रथम वे आनूपूर्वी कितने प्रकार की है यह स्पष्ट करते हैं—
“से किं तं” इत्यादि । ॥सूत्र ७२॥

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં આણુપુર્વી) હે મદન્ત ! પૂર્વ પ્રકાન્ત આનુપૂર્વી કયા હૈ—(આણુપુર્વી દસવિહા પળ્લણ્ણા) ઉત્તર—આનુપૂર્વી દસ પ્રકાર કી વહી ગઈ હૈ । (તં જહા) જો ઇસ પ્રકાર સે હૈ—(નામાણુપુર્વી) એક નામાનુપૂર્વી (ઠવળાણુપુર્વી) દસરી સ્થાપનાનુપૂર્વી (દવ્વાણુપુર્વી) તીસરી દ્રવ્યાનુપૂર્વી (સ્વેત્તાણુપુર્વી) ચૌથી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી (કાલાણુપુર્વી) પાંચવી કાલાનુપૂર્વી (ઉક્કિત્તણાણુપુર્વી) છઠી ઉત્કીર્ત્તાનુપુર્વી (ગળળાણુપુર્વી) સાતવીં ગળળાનુપૂર્વી (સંઠાણાણુપુર્વી) આઠવી—સંસ્થાનાનુપૂર્વી (સામાયારીઆ) નવવીં સમાચાર્યાનુપૂર્વી (ભાવાણુપુર્વી) ઔર દશમી ભાવાનુપૂર્વી । પૂર્વ, પ્રથમ ઔર આદિ ચે સબ પર્યાય

હવે સૂત્રકાર આનુપૂર્વી આદિકોના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવાનો પ્રારંભ કરે છે. તેમાં સૌથી પહેલાં તે એ વાત પ્રકટ કરે છે કે આનુપૂર્વી કેટલા પ્રકારની છે ?

“સે કિં તં આણુપુર્વી” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં આણુપુર્વી) શિષ્ય ગુરૂને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે હે ભગવન ! પૂર્વપ્રકાન્ત (પૂર્વ પ્રસ્તુત) આનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—આણુપુર્વી દસવિહા પળ્લણ્ણા—તંજહા) આનુપૂર્વીના નીચે પ્રમાણે દશ પ્રકાર કહ્યા છે—

(નામાણુપુર્વી (૧) નામાનુપૂર્વી, (ઠવળાણુપુર્વી) (૨) સ્થાપનાનુપૂર્વી, (દવ્વાણુપુર્વી) (૩) દ્રવ્યાનુપૂર્વી, (સ્વેત્તાણુપુર્વી) (૪) ક્ષેત્રાનુપૂર્વી, (કાલાણુપુર્વી) (૫)

પ્રશ્નાત્-અનુપૂર્વ, તસ્ય ભાવઃ આનુપૂર્વી-ત્ર્યાદિવસ્તુ સંહતિઃ, આનુપૂર્વી-અનુક્રમઃ
પરિપાટીત્યેતે શબ્દાઃ સમાનાર્થકાઃ । ત્ર્યાદિવસ્તુ સંહતિરૂપા एषाऽऽનુપૂર્વી
નામાનુપૂર્વ્યાદિભેદૈર્દશવિધા વિज्ञेयेति ॥સૂ. ૭૨॥

સમ્પ્રતિ નામાધાનુપૂર્વીનિરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ્—નામ ઠવળાઓ ગયાઓ ।

સે કિ તં દઢ્વાળુપુઢ્વી ? દઢ્વાળુપુઢ્વી ઢુવિહા પળળત્તા, ત-
જહા-આગમઓ ય નોઆગમઓ ય ।

સે કિં તં આગમઓ દઢ્વાળુપુઢ્વી જસ્સ ણં આળુપુઢ્વિત્તિ પયં
સિઢ્ધિઢ્યં ઠિયં જિયં મિયં પરિજિયં જાવ નો અળુપ્પેહાए, કમ્હા ?
અળુવઓગો દઢ્વમિતિ કટ્ટુ । ણેગમસ્સ ણં ંગો અળુવઁત્તો આગમ-
ઓ ંગા દઢ્વાળુપુઢ્વી જાવ કમ્હા ? જઙ્ઙ જાળए અળુવઁત્તે નં ભવઙ્ઙ
જઙ્ઙ અળુવઁત્તે જાળए નં ભવઙ્ઙ તમ્હા ણત્થિ આગમઓ દઢ્વાળુપુઢ્વી ।
સે તં આગમઓ દઢ્વાળુપુઢ્વી ।

વાંચી શબ્દ હૈં । પૂર્વસ્ય અનુ અનુપૂર્વ—પૂર્વ કે પીછે ંસા અનુપૂર્વ શબ્દ કા
અર્થ હોતા હૈં । અનુપૂર્વ કા જો ભાવ હૈં વહ આનુપૂર્વી હૈં । અર્થાત્ ત્રીન આદિ
વસ્તુઓં કા જો સમુદાય હૈં વહ આનુપૂર્વી હૈં । આનુપૂર્વી અનુક્રમ, પરિપાટી
યે સઢ્ઢ આનુપૂર્વી કે પર્યાયવાંચી શબ્દ હૈં । ત્રીન આદિ વસ્તુઓં કી સંહતિ
રૂપ યહ આનુપૂર્વી પૂર્વોક્ત પ્રકાર સે દશ ભેદવાલી હૈં ંસા જાનના ઢાહિયે । ॥સૂત્ર ૭૨॥

કાલાનુપૂર્વી, (ઁક્તિજાળુપુઢ્વી) (૬) ઉત્કીર્તનાનુપૂર્વી, (ગળળાળુપુઢ્વી) (૭)
ગળુનાનુપૂર્વી, (સંઠાળાનુપુઢ્વી) (૮) સંસ્થાનાનુપૂર્વી (સામાયારી આળુપુઢ્વી) (૯)
સમાચાર્યાનુપૂર્વી અને (ભાવાળુપુઢ્વી) (૧૦) લાવાનુપૂર્વી.

પૂર્વ, પ્રથમ અને આદિ આ ત્રણે પર્યાયવાંચી શબ્દો છે. “પૂર્વસ્ય અનુ
અનુપૂર્વ” “પૂર્વ (પ્રથમ)ની પાછળ”, ંવેઁ અનુપૂર્વ શબ્દનો અર્થ થાય છે. આ
અનુપૂર્વનો જે લાવ છે તેનું નામ અનુપૂર્વી છે. ંટ્ટેઁ કે આદિ વસ્તુઓનો જે
સમુદાય છે તેનું નામ આનુપૂર્વી છે. આનુપૂર્વી, અનુક્રમ અને પરિપાટી, આ ત્રણે
આનુપૂર્વીના પર્યાયવાંચી શબ્દો છે. ત્રણ આદિ વસ્તુઓના સમૂહરૂપ આ આનુપૂર્વી
પૂર્વોક્ત દસ લેઢવાળી કંઢી છે, ંમ સમજવું. ॥સૂ. ૭૨॥

સે કિં તં નો આગમઓ દ્વાણપુઁવી ? નો આગમઓ દ્વાણ-
પુઁવી તિવિહા પળ્ણત્તા, તં જહા—જાણયસરીરદ્વાણપુઁવી, ભવિય-
સરીરદ્વાણપુઁવી, જાણયસરીરભવિયસરીરવહરિત્તા દ્વાણપુઁવી ।
સે કિં તં જાણયસરીરદ્વાણપુઁવી ? જાણયસરીરદ્વાણપુઁવી
આણપુઁવી પયત્થાહિગારજાણયસ્સ જં સરીરયં વવગયચુયચાવિયચત્ત-
દેહં સેસં જહા દ્વાવસ્સણ જાવ સે તં જાણયસરીરદ્વાણપુઁવી ।
સે કિં તં ભવિયસરીરદ્વાણપુઁવી ? ભવિયસરીરદ્વાણપુઁવી જે
જીવે જોળીજમ્મણિવંસંતે સેસં જહા દ્વાવસ્સણ જાવ સે તં
ભવિયસરીરદ્વાણપુઁવી ।

સે કિં તં જાણયસરીરભવિયસરીરવહરિત્તા દ્વાણપુઁવી ?
જાણયસરીરભવિયસરીરવહરિત્તા દ્વાણપુઁવી દુવિહા પળ્ણત્તા,
તં જહા—ઓવણિહિયા ય અણોવણિહિયા ય । તત્થ ણં જા સા
ઓવણિહિયા સો ઠપ્પા । તત્થ ણં જા સા અણોવણિહિયા સા દુવિહા
પળ્ણત્તા, તં જહા—નેગમવવહારાણં, સંગહસ્સ ય ॥સૂ. ૭૩॥

હોય !—નામસ્થાપને ગતે ।

અથ કાઽસૌ દ્રવ્યાનુપૂર્વી ? દ્રવ્યાનુપૂર્વી દ્વિવિધા પ્રજ્ઞમા; તથા—આગમતથ
નોઆગમતથ ।

અવ સુત્રકાર નામાનુપૂર્વી કો નિરૂપણ કરતે હૈં—

“નામ ઠવણાઓ ગયાઓ” ઇત્યાદિ । ॥સૂ. ૭૨॥

શબ્દાર્થ—(નામઠવણાઓ ગયાઓ) નામાનુપૂર્વી ઓર સ્થાપનાનુપૂર્વી કા
સ્વરૂપ નામાવશ્યક ઓર સ્થાપનાવશ્યક કે જૈસા જાનનાં ચાહિયે । (સે કિં

હવે સુત્રકાર નામાનુપૂર્વી નિરૂપણ કરે છે—

“નામઠવણાઓ ગયાઓ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(નામઠવણાઓ ગયાઓ) નામાનુપૂર્વી અને સ્થાપનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ
નામાવશ્યક અને સ્થાપના આવશ્યકના પૂર્વોક્ત સ્વરૂપ અનુસાર જ સમજવું : (સે કિં
ત દ્વાણપુઁવી ?) હે ભગવન ! દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

અથ કાઽસૌ આગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વી? આગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વી યસ્ય સ્વલ્પ આનુપૂર્વીતિ પદં શિક્ષિતં સ્થિતં જિતં મિતં પરિજિતં યાવદ્ નોઅનુપ્રેક્ષ્યા, કસ્માત્? અનુપયોગો દ્રવ્યમિતિ કૃત્વા । નૈગમસ્ય સ્વલ્પ એકોઽનુપયુક્તઃ આગમત એકા દ્રવ્યાનુપૂર્વી યાવત્, કસ્માત્? યદિ જ્ઞાયકઃ અનુપયુક્તો ન ભવતિ, યદિ અનુપયુક્તો જ્ઞાયકો ન ભવતિ, તસ્માદ્ નાસ્તિ આગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વી । સૈષા આગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વી ।

અથ કાઽસૌ નોઆગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વી? નોઆગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વી ત્રિવિધા પ્રજ્ઞસા, તદ્યથા—જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યાનુપૂર્વી, ભવ્યશરીરદ્રવ્યાનુપૂર્વી, જ્ઞાયકશરીર-ભવ્યશરીરવ્યતિરિક્તા દ્રવ્યાનુપૂર્વી । અથ કાઽસૌ જ્ઞાયકશરીરદ્રવ્યાનુપૂર્વી? જ્ઞાયક-શરીરદ્રવ્યાનુપૂર્વી—આનુપૂર્વીપદાર્થાધિકારજ્ઞાયકસ્ય યત્ શરીરકં વ્યપગતચ્યુતવ્યાવિતત્યક્તદેહં શેષં યથા દ્રવ્યાવશ્યકે તથા મણિતવ્યમ્, યાવત્ સૈષા જ્ઞાયક-શરીરદ્રવ્યાનુપૂર્વી ।

અથ કા સા ભવ્યશરીરદ્રવ્યાનુપૂર્વી? ભવ્યશરીરદ્રવ્યાનુપૂર્વી—યો જીવો યોનિ-જન્મનિષ્ક્રાન્તઃ શેષં યથા દ્રવ્યાવશ્યકે ૦ યાવત્ સૈષા ભવ્યશરીરદ્રવ્યાનુપૂર્વી । અથ કાઽસૌ જ્ઞાયકશરીરભવ્યશરીરવ્યતિરિક્તા, દ્રવ્યાનુપૂર્વી? જ્ઞાયકશરીરભવ્યશરીર-વ્યતિરિક્તા, દ્રવ્યાનુપૂર્વી દ્વિવિધા પ્રજ્ઞસા, તદ્યથા—ઔપનિધિકી ચ અનૌપનિધિકી ચ । તત્ર સ્વલ્પ યા સા ઔપનિધિકી સા સ્થાપ્યા । તત્ર સ્વલ્પ યા સા અનૌપનિધિકી સા દ્વિવિધા પ્રજ્ઞસા, તદ્યથા—નૈગમવ્યવહારયોઃ, સંગ્રહસ્ય ચ ॥સૂ૦ ૭૩॥

ટીકા—‘નામ ઠવળાઓ’ ઇત્યાદિ—

નામસ્થાપને=નામાનુપૂર્વી—સ્થાપનાનુપૂર્વી ગતે=ગત=ગતપ્રાપ્તિ ઉક્તપ્રાપ્તિ ઇત્યર્થઃ । અયં ભાવઃ—નામાનુપૂર્વી સ્થાપનાનુપૂર્વી ચૈતદ્વયં નામાવશ્યકવત્ સ્થાપનાવશ્યકવદ્ વિજ્ઞેયમિતિ ।

અથ દ્રવ્યાનુપૂર્વી નિરૂપયિતુમાહ—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ ।

અથ કાઽસૌ દ્રવ્યાનુપૂર્વી? ઇતિ શિષ્યપ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—‘દ્રવ્યાનુપૂર્વી’ ઇત્યાદિ । દ્રવ્યાનુપૂર્વી દ્વિવિધા પ્રજ્ઞસા । તદ્ યથા—આગમતશ્ચ, નોઆગમતશ્ચ । તં દ્રવ્યાનુપૂર્વી) હે ભદન્ત ! દ્રવ્યાનુપૂર્વી કયા સ્વરૂપ હૈ? (દ્રવ્યાનુ-પૂર્વી દુવિધા પળગત્તા) ઉત્તર—દ્રવ્યાનુપૂર્વી દો પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ (તંજહા) વે પ્રકાર વે હૈ (આગમઓય નોઆગમઓય) એક આગમ સે-

ઉત્તર—(દ્રવ્યાનુપૂર્વી દુવિધા પળગત્તા—તંજહા) દ્રવ્યાનુપૂર્વીના નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર કહ્યા છે. (આગમઓય નોઆગમઓય) (૧) આગમની અપેક્ષાએ અને (૨) નોઆગમની અપેક્ષાએ આગમનો આશ્રિત કરીને બે દ્રવ્યાનુપૂર્વી

તત્ર-આગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વીં यस્ય સાધોઃ સ્વલુ આનુપૂર્વીંતિ પદં શિક્ષિતં સ્થિતં
જિતં મિતં પરિજિતં યાવત્-इह यावच्छब्दात्-નામસમં ઘોષસમમ્ અહીનાક્ષરમ્
અત્યક્ષરમ્ અવ્યાવિદ્ધાક્ષરમ્ અસ્ત્વલિતમ્ અમિલિતમ્ અવ્યત્યાગ્રેડિતં પ્રતિપૂર્ણં પ્રતિ-

ઔર દૂસરી નોઆગમ સે । આગમ કો આશ્રિત કરકે જો દ્રવ્ય આનુપૂર્વીં
હોતી હૈ વહ આગમ દ્રવ્યાનુપૂર્વીં હૈ । (સે કિં તં આગમઔ દ્રવ્યાનુપુર્વવી)
હે ભદન્ત । આગમ કો આશ્રિત કરકે જો દ્રવ્યાનુપૂર્વીં હોતી હૈ ? ઉસકા
કયા સ્વરૂપ હૈ ? (આગમઔ દ્રવ્યાનુપુર્વવી) આગમ કો આશ્રિત કરકે જો
દ્રવ્યાનુપૂર્વીં હોતી હૈ ઉસકા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈ-(જસ્સ ણં આણુ-
પુર્વવિત્તિ પયં સિક્ષિતયં) જિસ સાધુ આદિને આનુપૂર્વીં હસ પદ વાચ્ય
અર્થ કો વિનયપૂર્વક ગુરુમુખ સે સીખ લિયા હૈ (ઠિયં) ઉસે અચ્છી
તરહ સે અપને સ્મૃતિ પથ મેં ઉતાર લિયા હૈ (જિયં) શબ્દ ઔર અર્થ
કી અપેક્ષા સે જિસને ઉસે ભલિ ભાંતિ જાન લિયા હૈ (મિયં) ઉસકે
પદાદિકોં કી સંખ્યા કા પરિમાણ જિસને ભલી પ્રકાર સે અભ્યાસ કર
લિયા હૈ । (પરિજિયં) જિસને ઉસે સબ તરફ સે ઔર સય પ્રકાર સે પરા-
વર્તિત કરલિયા હૈ । વહ આગમ કો આશ્રિત કરકે દ્રવ્યાનુપૂર્વીં હૈ ।
યહાં યાવત્ શબ્દ સે “ નામસમ, ઘોષસમ અહીનાક્ષર અત્યક્ષર અવ્યા-
વિદ્ધાક્ષર, અસ્ત્વલિત, અમિલિત, અવ્યત્યાગ્રેડિત, પ્રતિપૂર્ણ પ્રતિપૂર્ણઘોષ

થાય છે તેનું નામ આગમદ્રવ્યાનુપૂર્વીં છે અને નો આગમને આશ્રિત કરીને
જે આનુપૂર્વીં થાય છે તેનું નામ નોઆગમદ્રવ્યાનુપૂર્વીં છે. (સે કિં તં આગ-
મઔ દ્રવ્યાનુપુર્વવી) ? હે ભગવન્ ! આગમનો આશ્રિત કરીને જે અનુપૂર્વીં છે
તેનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

(આગમઔ દ્રવ્યાનુપુર્વવી) આગમને આશ્રિત કરીને જે દ્રવ્યાનુપૂર્વીં થાય
છે તેનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે-

(જસ્સ ણં આણુપુર્વવીતિ પયં સિક્ષિતયં) જે સાધુ આદિએ “ આનુપૂર્વીં ”
આ પદના વાચ્યાર્થને વિનયપૂર્વક શુદ્ધને મુખેથી સારી રીતે શીખી લીધો છે,
(ઠિયં) તેને સારી રીતે પોતાના સ્મૃતિપટલ પર ઉતારી લીધો છે, (જિયં)
શબ્દ અને અર્થની અપેક્ષાએ જેણે તેને સારી રીતે જાણી લીધેલ છે, (મિયં)
તેના પદાદિકોની સંખ્યાનું પરિણામ જેણે સારી રીતે સમજી લીધું છે,
(પરિજિયં) જેણે તેને બધી તરફથી અને બધા પ્રકારે પરાવર્તિત કરી લીધું
છે, તે આગમનો આશ્રિત કરીને દ્રવ્યાનુપૂર્વીં છે. અહીં ‘ યાવત્ ’ પદથી
“ નામસમ, ઘોષસમ, અહીનાક્ષર, અત્યક્ષર, અવ્યાવિદ્ધાક્ષર, અસ્ત્વલિત,

પૂર્ણઘોષં કંઠોષ્ઠવિપ્રમુક્તં ગુરુવાચનોપગતં ભવતિ । સ ચ્છલુ તત્ર-આનુપૂર્વીતિપદે
વાચનયા પ્રચ્છનયા પરિવર્તનયા ધર્મકથયા ચ વર્તમાનો ભવતિ, ન તુ અનુપ્રેક્ષયા
વર્તમાનો ભવતિ । એવંવિધઃ સ સાધુરાગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વી પદેऽનુપ્રેક્ષયાઽવર્તમાનઃ
સાધુઃ આગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વી કથં ભવતીત્યાહ-‘કમ્હા’ इत्यादिना-कस्मात्
कंठोष्ठाविप्रमुक्तः गुरुवाचनोपगतः ” इन पदों का संग्रह किया गया है ।
इन पदों का अर्थ १४ वे सूत्र में स्पष्ट कर दिया है । ऐसा वह व्यक्ति
“ आनुपूर्वी ” इस पद में वाचना पृच्छना, परिवर्त्तना और धर्मकथा
इन से वर्तमान माना जाता है । परन्तु अनुप्रेक्षा से वर्तमान-नहीं माना
जाता है । इस प्रकार का वह साधु व्यक्ति आगम से द्रव्यानुपूर्वी
जानना चाहिये ।

શંકા-(કમ્હા) આનુપૂર્વી પદ મેં અનુપ્રેક્ષા સે અવર્તમાન સાધુ
આગમ સે દ્રવ્યાનુપૂર્વી કેસે માના જાતા હૈ ?

ઉત્તર-“ અનુપયોગો દ્રવ્યમિતિ કૃત્વા ” અનુપયોગ-જીવ જિસકે
દ્વારા વસ્તુ કા પરિચ્છેદ કરતા હૈ ઉસકા નામ ઉપયોગ હૈ । ઇસ ઉપ-
યોગકા અભાવ અનુપયોગ હૈ । ઇસ સે યુક્ત હોને કે કારણ આનુપૂર્વી
કા વહ જ્ઞાતા આગમ સે દ્રવ્યાનુપૂર્વી માના જાતા હૈ । એસા શાસ્ત્ર કા
વચન હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ જિસ સાધુને આનુપૂર્વી કો

અમિલિત, અવ્યત્યાગ્રેડિત, પ્રતિપૂર્ણ, પ્રતિપૂર્ણઘોષ, કંઠોષ્ઠવિપ્રમુક્ત. ગુરુવા-
ચનોપગત ” આ પદોને ગૃહણ કરવામાં આવ્યા છે. તે પદોનો અર્થ ૧૪માં
સૂત્રમાં સ્પષ્ટ કરવામાં આવ્યો છે. આ બધાં વિશેષણોથી યુક્ત સાધુ આદિને
‘આનુપૂર્વી’ આ પદમાં વાચના, પૃચ્છના, પરિવર્તના અને ધર્મકથા દ્વારા
વર્તમાન માનવામાં આવે છે, પરન્તુ અનુપ્રેક્ષા દ્વારા વર્તમાન માનતો નથી.
આ પ્રકારના તે સાધુને આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાનુપૂર્વી સમજવો.

શંકા-(કમ્હા) આનુપૂર્વી પદમાં અનુપ્રેક્ષા દ્વારા અવર્તમાન સાધુ આગ-
મની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાનુપૂર્વી કેવી રીતે મનાય છે ?

ઉત્તર-“ અનુપયોગો દ્રવ્યમિતિ કૃત્વા ” એવ જોના દ્વારા વસ્તુનો પરિ-
ચ્છેદ (ભાષ) કરે છે તેનું નામ ઉપયોગ છે. તે ઉપયોગના અભાવનું નામ
અનુપયોગ છે. આ અનુપયોગથી યુક્ત હોવાને કારણે અનુપૂર્વીનો તે જ્ઞાતા
આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાનુપૂર્વી મનાય છે, એવું શાસ્ત્રનું વચન છે. આ
કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે-જે સાધુએ આનુપૂર્વીને સારી રીતે જાણી લીધી
છે-શીખી લીધી છે-એટલે કે તે તેનો પરિપૂર્ણરૂપે જ્ઞાતા થઈ ગયો છે, તે

અનુપ્રેક્ષયા વર્તમાનઃ સાધુરાગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વી ભવતિ? ઉત્તરયતિ-અણુવઓગો દ્વવમિતિકદ્દુ' અનુપયોગો દ્રવ્યમિતિ કૃત્વા । અનુપયોગો હિ દ્રવ્યં ભવતિ, અતોડનુ-પ્રેક્ષયાડ્વર્તમાનઃ સાધુરાગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વી ભવતિ ।

નૈગમાદિ ભેદેન દ્રવ્યાનુપૂર્વી ભેદાસ્ત્વેવં વિજ્ઞેયાઃ-નૈગમસ્ય ચલુ ઁકોડનુપયુક્ત આગમત ઁકા દ્રવ્યાનુપૂર્વી, યાવત્ યાવચ્છવ્દાત્ દ્વાવનુપયુક્તો આગમતો દ્વે આનુ-પૂર્વ્યોં । ત્રયોડનુપયુક્તા આગમતસ્તિસો દ્રવ્યાનુપૂર્વ્યઃ । ઁવમેવ વ્યવહારસ્યાપિ ।

સમ્યક્ પ્રકાર સે જાન લિયા હૈ-સીચ લિયા હૈ-વહ ડસકા પૂર્ણરૂપ સે જ્ઞાતા વન ચુકા હૈ, અતઃ વહ સાધુ ડસ આનુપૂર્વી મેં વાચના પૃચ્છના આદિ સે વર્તમાન હોને પર મી ડસમેં ડપયોગ સે રહિત હોને કે કારણ વહ આગમ સે દ્રવ્યાનુપૂર્વી કહલાતા હૈ । (પેગમસસ ણં ઁગો અણુવડત્તો આગમઓ ઁગા દ્વવાણુપુવ્વી, જાવ કમ્હા? જહ જાણઁ અણુવડત્તે ન ભવહ, જહ અણુવડત્તે જાણઁ ન ભવહ, તમ્હા ણત્થિ આગમઓ દ્વવા-ણુપુવ્વી સે ત્તં આગમઓ દ્વવાણુપુવ્વી)

અવ સૂત્રકાર નૈગમનય આદિ કે ભેદ સે દ્રવ્યાનુપૂર્વી કે ભેદોં કો કહતે હૈ-ઇન મેં નૈગમનય કી દૃષ્ટિ સે ઁક અનુપયુક્ત આત્મા-સાધુ આગમ સે ઁક દ્રવ્યાનુપૂર્વી હૈ । યહાં યાવત્ શબ્દ સે ઁસા જાનના ચાહિયે-કિ ડો અનુપયુક્ત સાધુ આગમ સે ડો દ્રવ્યાનુપૂર્વી હૈં । તીન અનુપયુક્ત સાધુ, આગમ સે તીન દ્રવ્યાપૂર્વી હૈં । હસ પ્રકાર જિતને અનુ-પયુક્ત સાધુ હૈં આગમ સે ડતની હી દ્રવ્યાનુપૂર્વીયાં હૈં । હસી પ્રકાર સે વ્યવહારનય કી દૃષ્ટિ સે દ્રવ્યાનુપૂર્વી મેં ઁકત્વ ઁનેકત્વ કા કથન

સાધુ આનુપૂર્વીમાં વાચના, પૃચ્છના, આદિ વડે વર્તમાન હોવા છતાં પણ તેમાં ડપયોગથી રહિત હોવાને કારણે આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાનુપૂર્વી કહેવાય છે.

(પેગમસસ ણં ઁગો અણુવડત્તો આગમઓ ઁગા દ્વવાણુપુવ્વી જાવ કમ્હા ? જહ જાણઁ અણુવડત્તે ન ભવહ, જહ અણુવડત્તે જાણઁ ન ભવહ, તમ્હા ણત્થિ આગમઓ દ્વવાણુપુવ્વી-સે ત્તં આગમઓ દ્વવાણુપુવ્વી)

હવે સૂત્રકાર નૈગમનય આદિના ભેદથી દ્રવ્યાનુપૂર્વીના ભેદોનું કથન કરે છે-નૈગમ નયની દૃષ્ટિએ ઁક અનુપયુક્ત આત્મા (સાધુ) આગમની અપેક્ષાએ ઁક દ્રવ્યાનુપૂર્વી છે. અહીં “ યાવત્ ” પદથી નીચેનો પૂર્વોક્ત સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરવો.

નૈગમનયની દૃષ્ટિએ ઁ અનુપયુક્ત સાધુ આગમની અપેક્ષાએ ઁ દ્રવ્યાનુપૂર્વી છે, તથા અનુપયુક્ત સાધુ આગમની અપેક્ષાએ તથા દ્રવ્યાનુપૂર્વી છે. ઁજ પ્રમાણે જેટલા અનુપયુક્ત સાધુ છે એટલા જ આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાનુપૂર્વી છે. ઁજ પ્રમાણે વ્યવહારનયની અપેક્ષાએ પણ દ્રવ્યાનુપૂર્વીમાં

સંગ્રહસ્ય સ્વલુ એકોઽનુપયુક્તઃ, અનેકેવાઽનુપયુક્તા આગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વી દ્રવ્યાનુપૂર્વો વા એકૈવ દ્રવ્યાનુપૂર્વી વોધ્યા । ઋજુસૂત્રસ્ય એકોઽનુપયુક્ત આગમત એકા દ્રવ્યાનુપૂર્વી, પૃથક્ત્વં નેચ્છતિ । ત્રયાણાં શબ્દનયાનાં જ્ઞાયકોઽનુપયુક્તોઽવસ્તુ, કસ્માત્ ? યદિ જ્ઞાયકઃ, અનુપયુક્તો ન ભવતિ, યદિ અનુપયુક્તઃ, જ્ઞાયકો ન ભવતિ તસ્માદ્ નાસ્તિ તન્મતે આગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વી । અત્રોક્તાનાં શિક્ષિતાદિ પદાનાં વ્યાખ્યા પૂર્વવદ્ વોધ્યા । એતદુપસંહરન્નાહ-સૈવાઽઽગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વીતિ ।

જાનના ચાહિયે સંગ્રહનય કી એસી માન્યતા હૈ ફિ એક દ્રવ્યાનુપૂર્વી હૈ । નૈગમ ઓર વ્યવહાર નય કી માન્યતા કે અનુસાર દ્રવ્યાનુપૂર્વી જો એક ઓર અનેકરૂપ હૈ-સો યહ નય એસા કથન કરતા હૈ કિ સામાન્યતત્ત્વ કે આધાર પર સમસ્ત દ્રવ્યાનુપૂર્વિયાં એક હી હૈ-ભિન્ન ૨ અનેક નહીં । ઋજુસૂત્રનય કી માન્યતાનુસાર વર્તમાન ક્ષણ મેં એક અનુપયુક્ત સાધુ આગમ કી અપેક્ષા એક આનુપૂર્વી હૈ । યહ નય આનુપૂર્વી મેં ભિન્નતા-અનેકતા નહીં માનતા હૈ । ત્રીન શબ્દનય કી માન્યતાનુસાર-જ્ઞાયક હોકર મી જો અનુપયુક્ત હોતા હૈ વહ અવસ્તુ સ્વરૂપ હૈ । ક્યોં કિ જો જ્ઞાયક હોગા વહ અનુપયુક્ત નહીં હોગા, જો અનુપયુક્ત હોગા વહ જ્ઞાયક નહીં હોગા । ફસલિયે આગમ કી અપેક્ષા લેકર જો દ્રવ્યાનુપૂર્વી બનતી હૈ વહ નહીં હૈ । યહાં પર જો શિક્ષિત આદિ પદ આયે હૈં ડનકી વ્યાખ્યા પહિલે કી વ્યાખ્યા કે સમાન સમજની

એકત્વ અનેકત્વનું કથન સમજવું જોઈએ. સંગ્રહનયની એવી માન્યતા છે કે એક જ દ્રવ્યાનુપૂર્વી છે. નૈગમનય અને વ્યવહાર નયની માન્યતા અનુસાર દ્રવ્યાનુપૂર્વી જે એક અને અનેકરૂપ છે તેનું કારણ એ છે કે આ નય એવું કથન કરે છે કે સામાન્ય તત્ત્વના આધાર પર સમસ્ત દ્રવ્યાનુપૂર્વીઓ એક જ છે-લિપ્ત લિપ્ત અનેક-નથી. ઋજુસૂત્ર નયની માન્યતા અનુસાર વર્તમાન ક્ષણે એક અનુપયુક્ત સાધુ આગમની અપેક્ષાએ એક આનુપૂર્વી છે. આ નય આનુપૂર્વીમાં ભિન્નતા (અનેકતા)ને માનતો નથી. ત્રણે શબ્દનયોની માન્યતા અનુસાર જ્ઞાયક હોવા છતાં પણ જે અનુપયુક્ત હોય છે તે અવસ્તુસ્વરૂપ છે. કારણ કે જે જ્ઞાયક હશે તે અનુપયુક્ત અહીં હોય અને જે અનુપયુક્ત હશે તે જ્ઞાયક નહીં હોય, આ પ્રકારની તે ત્રણે શબ્દ નયોની માન્યતા છે. તેથી આગમની અપેક્ષાએ જે દ્રવ્યાનુપૂર્વી બને છે તેનો આ ત્રણે શબ્દનયોની માન્યતા અનુસાર સહભાવ જ હોતો નથી. અહીં જે શિક્ષિત આદિ પદો આવ્યાં છે તેમની વ્યાખ્યા આગળ આપ્યા પ્રમાણે જ સમજવી. આ પ્રકારનું આગમ દ્રવ્યાનુપૂર્વી સ્વરૂપ છે.

અથ નોઆગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વીતિજિજ્ઞાસયા શિષ્યઃ પૃચ્છતિ-‘સે કિં તં’
 इत्यादि । अथ काऽसौ नोआगमतो द्रव्यानुपूर्वी ? इति । उत्तरयति-‘नोआगमओ
 द्रव्यानुपूर्वी’ इत्यादि । नोआगमतो द्रव्यानुपूर्वी त्रिविधा मज्ञप्ता-ज्ञायकशरीर-
 द्रव्यानुपूर्वी १ भव्यशरीर-द्रव्यानुपूर्वी २ ज्ञायकशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तद्रव्या-
 नुपूर्वी ३ । ज्ञायकशरीरद्रव्यानुपूर्वी जिज्ञासमानः शिष्यः पृच्छति-अथ काऽसौ
 ज्ञायकशरीरद्रव्यानुपूर्वी ? उत्तरयति-‘जाणयसरीर’ इत्यादि । ज्ञायकशरीरद्रव्यानु-
 पूर्वी हि-आनुपूर्वी पदार्थाधिकारज्ञायकस्य यत् शरीरकं व्यपगतच्युतच्यावितत्य-
 क्तदेहं जीवविप्रमुक्तं शय्यागतं वा संस्तारगतं वा सिद्धशिलातलगतं वा दृष्ट्वा खलु

चाहिये । इस प्रकार यह आगम से द्रव्यानुपूर्वी का स्वरूप है । (से किं
 तं नोआगमओ द्रव्यानुपूर्वी) हे भदन्त ! नो आगम को आश्रित करके
 द्रव्यानुपूर्वी का क्या स्वरूप है ? (नोआगमओ द्रव्यानुपूर्वी त्रिविहा
 पणत्ता) नोआगम को आश्रित करके होनेवाली द्रव्यानुपूर्वी तीन
 प्रकार की कही गई है । (तं जहा) जैसे-(जाणयसरीरद्रव्यानुपूर्वी,
 भवियसरीरद्रव्यानुपूर्वी, जाणयसरीरभवियसरीरवहरित्ता द्रव्यानुपूर्वी)
 ज्ञायकशरीरद्रव्यानुपूर्वी, भव्यशरीरद्रव्यानुपूर्वी और ज्ञायकशरीर
 भव्यशरीर व्यतिरिक्त द्रव्यानुपूर्वी । (से किं तं जाणयसरीरद्रव्यानु-
 पुर्वी) हे भदन्त ! पूर्वप्रक्रान्त ज्ञायशरीर द्रव्यानुपूर्वी क्या है ?

(जाणयसरीरद्रव्यानुपूर्वी) ज्ञायकशरीर द्रव्यानुपूर्वी इस प्रकार से
 है । (आनुपूर्वीपयत्थाहिगारजाणयस्स जं सरीरं ववगयच्युचावियचत्त-

(સે કિં તં નોઆગમઓ દ્રવ્યાનુપૂર્વી ?) હે ભગવન ! નોઆગમને આશ્રિત
 કરીને દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(નોઆગમઓ દ્રવ્યાનુપૂર્વી ત્રિવિહા પણત્તા) નોઆગમને આશ્રિત
 કરીને ભયમાન દ્રવ્યાનુપૂર્વી ત્રણ પ્રકારની કહી છે-(તંજહા) તે ત્રણ પ્રકારો
 નીચે પ્રમાણે છે-

(જાણયસરીરદ્રવ્યાનુપૂર્વી, ભવિયસરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વી જાણયસરીરભવિયસરીર-
 વહરિત્તા દ્રવ્યાનુપૂર્વી) (૧) જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વી, (૨) ભવ્યશરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વી
 અને (૩) જ્ઞાયકશરીર ભવ્યશરીર વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાનુપૂર્વી.

પ્રશ્ન-સે કિં તં જાણયસરીરદ્રવ્યાનુપૂર્વી ? હે ભગવાન ! પૂર્વ પ્રક્રાન્ત
 (પૂર્વ પ્રસ્તુત) જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(જાણયસરીરદ્રવ્યાનુપૂર્વી) જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ
 પ્રકારનું છે-(આનુપૂર્વી પયત્થાહિગારજાણયસ્સ જં સરીરં વવગયચ્યુચાવિય-
 ચત્તદેહ) ‘આનુપૂર્વી’ આ પદના અર્થાધિકારને ભણનાર સાધુનું હૃદયે પ્રાણેથી

કોઽપિ મળેત્ અહો ! સ્વલ્પ અનેન શરીરસમુચ્છ્રયેણ જિનદૃષ્ટેન ભાવેન આનુપૂર્વીતિ પદમ્ આગૃહીતં પ્રજ્ઞાપિતં પ્રરૂપિતં દર્શિતં નિદર્શિતમ્ । યથા કોઽત્ર દૃષ્ટાન્તઃ ? અયં મધુકુમ્ભ આસીદિતિ । ‘જીવ વિપ્રમુક્તમ્’ इत्यारभ्य एतत्पर्यन्तः पाठः ‘શેષં યથા દ્રવ્યાવશ્યકે તથા મણિતવ્યં યાવત્’ इत्यनेन संग्राह्यः एषां पदानां व्याख्या द्रव्यावश्यके द्रष्टव्या । एतन्निगमयन्नाह—सैषा ज्ञायकशरीरद्रव्यानुपूर्वीति ।

દેહં) આનુપૂર્વી' હસ પદ કે અર્થાધિકાર કો જાનને વાલે સાધુ કા જો વ્યપગત ચ્યુત, ચ્યાવિત ઓર ત્યક્ત દેહવાલા શરીર અર્થાત્ આહાર પરિણતિ જનિત વૃદ્ધિ સે રહિત શરીર હૈ વહ જ્ઞાયકશરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વી' હૈ । (સેસં જહા દવ્વાવસ્સે જાવ સે તં જાણયસરીરદવ્વાનુપુર્વવી) યહાં પર " જીવવિપ્રમુક્તં શચ્યાગતં વા સંસ્તારગતં વા નૈષેધિકીગતં વા, સિદ્ધં શિલાતલગતં વા દૃષ્ટ્વા સ્વલ્પ કોઽપિ મળેત્ અહો ! સ્વલ્પ અનેન શરીરસમુચ્છ્રયેણ જિનદૃષ્ટેન ભાવેન આનુપૂર્વીતિ પદં આગૃહીતં, પ્રજ્ઞાપિતં, પ્રરૂપિતં, દર્શિતં, નિદર્શિતં । યથા કોઽત્ર દૃષ્ટાન્તઃ ? અયં મધુકુમ્ભ-આસીત્ અયં ઘૃતકુમ્ભ આસીત્ " યહ (સેસં) અવશિષ્ટ પાઠ (જહા દવ્વાવસ્સે જાવ) જૈસા દ્રવ્યાવશ્યક મેં કહા હૈ વૈસા લગા લેના ચાહિયે । હન સમસ્ત પદોં કી વ્યાખ્યા દ્રવ્યાવશ્યક કે પ્રકરણ મેં કહ દી ગઈ હૈ—અતઃ વહાં સે જાન લેની ચાહિયે । હસ પ્રકાર નોઆગમ કી અપેક્ષા સે દ્રવ્યાનુપૂર્વી' કા સ્વરૂપ હૈ ।

રહિત ચ્યુત, ચ્યાવિત અને ત્યક્ત દેહવાળું જે નિર્જીવ શરીર છે—એટલે કે આહાર પરિણતિ જનિત વૃદ્ધિથી રહિત જે શરીર છે તે જ્ઞાયક શરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વી' છે. (વ્યપગત, ચ્યુત, ચ્યાવિત આદિ પદોનો ભાવર્થ આગળ આવી ગયો છે.)

(સેસં જહા દવ્વાવસ્સે જાવ સે તં જાણયસરીરદવ્વાનુપુર્વવી) અહીં “જીવવિપ્રમુક્તં શચ્યાગતં વા, નૈષેધિકીગતં વા, સિદ્ધશિલાતલગતં વા દૃષ્ટ્વા સ્વલ્પ કોઽપિ મળેત્ અહો ! સ્વલ્પ અનેન શરીરસમુચ્છ્રયેણ જિનદૃષ્ટેન ભાવેન આનુપૂર્વીતિ પદં આગૃહીતં, પ્રજ્ઞાપિતં, પ્રરૂપિતં, દર્શિતં, નિદર્શિતં યથા કોઽત્ર દૃષ્ટાન્તઃ ? અયં મધુકુમ્ભ આસીત્, અયં ઘૃતકુમ્ભ આસીત્ ” આ (સેસં) બાકીનો સૂત્રપાઠ (જહા દવ્વાવસ્સે જાવ) દ્રવ્યાવશ્યકમાં કહ્યા અનુસાર અહીં કરવો જોઈએ. આ સઘળાં પદોની વ્યાખ્યા દ્રવ્યાવશ્યકના પ્રકરણમાં આપવામાં આવી છે. તેથી જિજ્ઞાસુ પાઠકોએ તે ત્યાંથી વાંચી લેવી. આ પ્રકારનું નોઆગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાનુપૂર્વી'નું સ્વરૂપ છે.

શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ । અથ કાઽસૌ ભવ્યશરીરદ્રવ્યાનુપૂર્વી ? ભવ્યશરીરદ્રવ્યાનુપૂર્વીં હિ—યો જીવો યોનિ જન્મનિષ્ક્રાન્તોઽનેનૈવ આત્તકેન શરીર-સમુચ્છયેણ જિનોપદિષ્ટેન ભાવેન આનુપૂર્વીતિ પદમ્ આગામિકાલે શિક્ષિષ્યતે, ન તાવત્ શિક્ષતે । યથા કો દૃષ્ટાન્તઃ ? અયં મધુકુમ્ભો ભવિષ્યતિ, અયં ઘૃતકુમ્ભો ભવિષ્યતીતિ અનેનૈવ આત્તકેન’ ઇત્યારમ્ય એતત્પર્યન્તઃ પાઠઃ શેષં યથા ‘દ્રવ્યા-વશ્યકે યાવત્’ ઇત્યનેન સંગ્રાહઃ । વ્યાખ્યા ચ દ્રવ્યાવશ્યકે દ્રષ્ટવ્યા । સમ્પ્રત્યેતદુપ-સંહરન્નાહ—સૈવા ભવ્યશરીરદ્રવ્યાનુપૂર્વીતિ ।

(સે કિં તં ભવિયસરીરદ્રવ્યાનુપુર્વી) હે ભદન્ત ! પૂર્વપ્રક્રાન્ત ભવ્ય-શરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વીકા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(ભવિયસરીરદ્રવ્યાનુપુર્વી) ભવ્યશરીરદ્રવ્યાનુપૂર્વીં કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈ—(જે જીવે જોળીજમ્મણનિકલંતે સેસં જહા દવ્વાવસ્સણ જાવ—સે તં ભવિયસરીરદ્રવ્યાનુપુર્વી) જો જીવ જન્મકાલ મેં અપના પૂર્ણ નૌમાસ કા સમય સમાસકર ઉત્પન્ન હુઆ—ચીચ મેં નહીં, એસા મનુષ્ય ડસ પ્રાપ્ત શરીર સે જો ભવિષ્યત્કાલમેં આનુપૂર્વીં કા અનુપયુક્ત જ્ઞાતા બનેગા ડસકા વહ પ્રાપ્ત શરીર નો આગમસે ભવ્યશરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વીં હૈ । યહાં પર “ અનેનૈવ આત્તકેન ” હસ પાઠ સે લેકર “ શરીરસમુચ્છયેણ જિનોપદિષ્ટેન ભાવેન આનુપૂર્વીતિપદં આગામિ-કાલે શિક્ષિષ્યતે ન તાવત્ શિક્ષતે । યથા કો દૃષ્ટાન્તઃ અયં મધુકુમ્ભો ભવિષ્યતિ અયં ઘૃતકુમ્ભો ભવિષ્યતિ ” યહાં તક કા પાઠ “ શેષં યથા દ્રવ્યાવશ્યકે યાવત્ ” હસ પાઠ સે ગ્રહણ કરલેના ચાહિયે । હસ

પ્રશ્ન—સે કિં તં ભવિયસરીરદ્રવ્યાનુપુર્વી ? હે ભગવન્ ! ભવ્યશરીર દ્રવ્યા-નુપૂર્વીંનું કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—(જે જીવે જોળિજમ્મણનિકલંતે સેસં જહા દવ્વાવસ્સણ જાવ સે તં ભવિયસરીરદ્રવ્યાનુપુર્વી) જે જીવ માતાના ગર્ભમાં પૂરાં નવ માસ રહીને એટલે કે પૂર્ણકાળ વ્યતીત કરીને ઉત્પન્ન થયો છે—અપૂર્ણ કાળ વ્યતીત ઉત્પન્ન થયો નથી. એવો જીવ ભવિષ્યકાળમાં અનુપૂર્વીને અનુભવયુક્ત બનશે—વર્ત-માનકાળે તો અનુપૂર્વીનો જ્ઞાતા નથી, તો એ જીવને તે પ્રાપ્ત શરીર નો આગમની અપેક્ષાએ ભવ્યશરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વીં છે. અહીં “ અનેનૈવ આત્તકેન ” આ સૂત્રપાઠથી લઈને “ શરીરસમુચ્છયેણ જિનોપદિષ્ટેન ભાવેન આનુપૂર્વીતિપદં આગામિ કાલે શિક્ષિષ્યતે ન તાવત્ શિક્ષતે । યથા કો દૃષ્ટાન્તઃ ? અયં મધુકુમ્ભો ભવિષ્યતિ અયં ઘૃતકુમ્ભો ભવિષ્યતિ ” અહીં સુધીનો સૂત્રપાઠ દ્રવ્યાવશ્યક સૂત્રમાં કહ્યો અનુસાર ગ્રહણ કરવાનું સૂત્રકારે

શિષ્ય: પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ । અથ કાઽસૌ જ્ઞાયકશરીરભવ્યશરીર-
વ્યતિરિક્તા દ્રવ્યાનુપૂર્વી ? ઇતિ । ઉત્તરમાહ—‘જાણયસરીર’ ઇત્યાદિ । જ્ઞાયક-
શરીરભવ્યશરીરવ્યતિરિક્તા દ્રવ્યાનુપૂર્વી હિ દ્વિવિધા પ્રજ્ઞા, તદ્યથા—ઔપનિધિકી
અનૌપનિધિકી ચ । તત્ર=ભેદદ્વયમધ્યે યા સા ઔપનિધિકી ઇહ નિધિશબ્દસ્ય
નિક્ષેપોઽર્થઃ, નિધાનં, નિધિઃ નિક્ષેપઃ, ન્યાસઃ, સ્થાપનેતિ શબ્દાઃ પર્યાયાઃ । ઉપ=
સામીપ્યેન નિધિઃ—ઉપનિધિઃ—एकस्मिन् विविक्षितेऽर्थे पूर्वं व्यवस्थापिते तत्समीपे
પાઠ કી શંકાસમાધાન પૂર્વક જૈસી વ્યાખ્યા દ્રવ્યાવશ્યક કે સ્વરૂપકો
નિરૂપણ કરતે સમય કી હૈ વૈસી હી વ્યાખ્યા ઇસકી જાનની ચાહિયે ।
ઇસ પ્રકાર થહ નોઆગમ કો લેકર દ્રવ્યાનુપૂર્વી કા સ્વરૂપ હૈ । (સે કિં
તં જાણયસરીરભવિયસરીરવદ્દરિક્તા દ્રવ્યાનુપુવ્વી) હે ભદન્ત ! પૂર્વોક્ત
જ્ઞાયક શરીર ભવ્ય શરીર ઇન દોનોં સે વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાનુપૂર્વી
કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(જાણયસરીરભવિયસરીરવદ્દરિક્તા દ્રવ્યાનુપુવ્વી દુવિહા
પણ્ણત્તા) જ્ઞાયકશરીર ભવ્યશરીર ઇન દોનોં સે ભિન્ન દ્રવ્યાનુપૂર્વી દો
પ્રકાર કી કહી હૈ (તંજહા) જૈસે (ઓવણિહિયા, ય અણોવણિહિયા ય)
ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી ઔર અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી । (તત્થ ણં
જા સા ઓવણિહિયા સા ઠપ્પા) ઇનમેં જો ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી હૈ
વહ સ્થાપ્ય હૈ । ક્યોંકિ અલ્પ વિષયવાલી હોને સે વહ ઇસ સમય
વ્યાખ્યા કરને યોગ્ય નહીં હૈ । નિધિશબ્દ કા અર્થ યહાં નિક્ષેપ હૈ ।

સૂચન કથું છે દ્રવ્યાવશ્યકતા પ્રકરણમાં શંકાઓના સમાધાન પૂર્વક લવ્ય-
શરીર દ્રવ્યાવશ્યકતા સ્વરૂપનું એવું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે એવું જ
અહીં લવ્યશરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું નિરૂપણ થવું જોઈએ આ પ્રકારનું નોઆગ-
મની અપેક્ષાએ લવ્યશરીર દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ સમજવું.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં જાણયસરીરભવિયસરીરવદ્દરિક્તા દ્રવ્યાનુપુવ્વી ?) છે
ભગવન્ ! પૂર્વપ્રકાન્ત જ્ઞાયકશરીર અને લવ્યશરીર આ બન્નેથી ભિન્ન એવી
દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(જાણયસરીરભવિયસરીરવદ્દરિક્તા દ્રવ્યાનુપુવ્વી દુવિહા પણ્ણત્તા)
જ્ઞાયકશરીર અને લવ્યશરીરથી ભિન્ન એવી દ્રવ્યાનુપૂર્વી બે પ્રકારની કહી છે.
(તંજહા) તે પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે—ઓવણિહિયા ય અણોવણિહિયા ય) (૧)
ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી અને (૨) અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી (તત્થ ણં જા
સા ઓવણિહિયા સા ઠપ્પા) તેમાં જે ઔપનિધિકી આનુપૂર્વી છે તે સ્થાપ્ય

एवापरापरस्य वक्ष्यमाणपूर्वानुपूर्व्यादिक्रमेण यन्निक्षेपणं स उपनिधिरित्यर्थः
उपनिधिः प्रयोजनं यस्या आनुपूर्व्याः सा-औपनिधिकी । सामायिकादि-षडध्य-
यनानां पूर्वा पूर्व्यादिना निक्षेप एव उपनिधिः स प्रयोजनं यस्याः आनुपूर्व्याः
सा, औपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी स्थाप्या=सम्प्रति न व्याख्यातव्या-अल्पविषयत्वे-
नात्र नोच्यते, किंत्वग्रे वक्ष्यते इति भावः । सम्प्रति बहुवक्तव्यत्वेन पश्चान्निर्दिष्टा-
ऽपि अनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्व्यैव व्याख्यायते । तत्र खलु या सा अनौपनिधिकी

निधान, निधि निक्षेप, न्यास स्थापना ये सब निधिशब्द के पर्याय
वाची शब्द हैं । उपशब्दका अर्थ समीप है और निधि शब्दका अर्थ
रखना है । एक कोई विवक्षित पदार्थ पहिले व्यवस्थापित कर देने पर
फिर उसके पास ही और २ दूसरे पदार्थों के वक्ष्यमाण पूर्वानुपूर्वी के
क्रम से जो रखा जाता है उसका नाम उपनिधि है । यह उपनिधि जिस
आनुपूर्वी का प्रयोजन हो वह औपनिधिकी आनुपूर्वी है । इसमें सामा-
यिक आदि छह अध्ययनों का पूर्वानुपूर्वी से निक्षेप किया जाता है ।
इनका यह निक्षेप ही उपनिधि है । औपनिधिकी आनुपूर्वी में यह उप-
निधि ही प्रयोजनभूत होती है । अल्प विषय वाली होने से जो यहां
उसे व्याख्यातव्य नहीं कहा गया है उसका तात्पर्य यह नहीं है कि
उस सूत्र में सूत्रकार उसका कथन नहीं करेंगे । किन्तु आगे वे उसे
कहेगे-अभी यहां नहीं । अनौपनिधिकी आनुपूर्वी का जो सूत्रकार

છે, કારણકે અદ્ય વિષયવાળી હોવાના કારણે અત્યારે અહીં તેનું પ્રતિપાદન
કરવાની જરૂર નથી ' નિધિ ' પદનો અર્થ અહીં ' નિક્ષેપ ' સમજવો નિધાન,
નિધિ, નિક્ષેપ, ન્યાસ અને સ્થાપના આ બધા નિધિશબ્દના પર્યાયવાચી
શબ્દો છે. ' ઉપ ' શબ્દનો અર્થ ' સમીપ ' થાય છે અને ' નિધિ ' શબ્દ
' રાખવાના અર્થનો સૂચક છે હવે ઉપનિધિ શબ્દનો આ પ્રમાણે અર્થ
થાય છે-કોઈ એક વિવક્ષિત પદાર્થને પહેલાં વ્યવસ્થાપિત કરી દીધાં પછી
તેની પાસે જ અન્ય પદાર્થોને પૂર્વાનુપૂર્વીના ક્રમથી જે રાખવામાં (સ્થાપિત
કરવામાં) આવે છે તેનું નામ ઉપનિધિ છે. " આ ઉપનિધિ જે અનુપૂર્વીનું
પ્રયોજન છે તે આનુપૂર્વીને ઔપનિધિકી આનુપૂર્વી કહે છે તેમાં સામાયિક
આદિ ૬ અધ્યયનોનો પૂર્વાનુપૂર્વીથી નિક્ષેપ કરવામાં આવે છે. તેમનો આ
નિક્ષેપ જ ઉપનિધિ રૂપ છે. ઔપનિધિકી આનુપૂર્વીમાં આ ઉપનિધિ જ
પ્રયોજનભૂત હોય છે. અદ્યવિષયવાળી હોવાને કારણે તેને અહીં વ્યાખ્યાત
કરવા યોગ્ય નહીં કહેવાનું તાત્પર્ય એવું નથી કે આ સૂત્રમાં સૂત્રકાર

દ્રવ્યાનુપૂર્વી સા દ્વિવિધા પ્રજ્ઞપ્તા । ‘અનૌપનિધિકી’ इत्यस्यायमर्थः अनुपनिधिः= वक्ष्यमाणपूर्वानुपूर्व्यादिक्रमेण अनिक्षेपः—अव्यवस्थापनं, स प्रयोजनं यस्याः सा अनौपनिधिका । पूर्वानुपूर्व्यादिक्रमेण व्यवस्थापनं न क्रियते सा ज्यादि परमाणु- निष्पन्नस्कन्धविषया आनुपूर्वी अनौपनिधिकीत्युच्यते इति भावः ।

औपनिधिकी आनुपूर्वी के पहिले यहीं विवेचन कर रहे हैं ! उसका कारण यह है कि उस आनुपूर्वी के विषय में वक्तव्यता बहुत है। (तत्थ णं जा सा अणोवणिहिया सा दुविहा) इन औपनिधिकी अनौपनिधिकी आनुपूर्वी में जो यह दूसरी अनौपनिधिकी आनुपूर्वी है वह दो प्रकार की है। (तंजहा) जैसे (नेगमववहाराणं संगहस्सय) एक नैगम व्यवहार नय संमत और दूसरी संग्रह नय संमत । “अनौपनिधिकी” इसका अर्थ इस प्रकार से है कि वक्ष्यमाण पूर्वानुपूर्वी क्रम से जहां पदार्थों की स्थापना नहीं होती है—उसका नाम अनुपनिधि है यह अनुपनिधि जिस आनुपूर्वी का विषय है उसका नाम अनौपनिधिकी आनुपूर्वी है। जिस आनुपूर्वी में पूर्वानुपूर्वी आदि के क्रम से पदार्थों की स्थापना व्यवस्था न हो और जो ज्यादिपरमाणु से निष्पन्न हुए स्कंध को विषय करती हो ऐसी आनुपूर्वी अनौपनिधिकी आनुपूर्वी है।

તેનું નિરૂપણ કરવા માગતા નથી તેઓ અહીં તેનું નિરૂપણ કરવાના નથી પણ આ ગ્રન્થમાં (સૂત્રમાં) જ તેનું નિરૂપણ આગળ કરવામાં આવશે.

અનૌપનિધિકી આનુપૂર્વીનું અહીં સૂત્રકારે ઔપનિધિકી આનુપૂર્વી પહેલાં જે વિવેચન કર્યું છે તેનું કારણ એ છે કે અનૌપનિધિકી આનુપૂર્વી વિષેની વક્તવ્યતા ઘણી જ લાંબી છે. (તત્થણં જા સા અણોવણિહિયા સા દુવિહા) આ બન્ને પ્રકારની આનુપૂર્વીઓમાંની જે અનૌપનિધિકી આનુપૂર્વી છે તે બે પ્રકારની કહી છે. (તંજહા) તે બે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(નેગમ-વવહારાણં સંગહસ્સય) (૧) નૈગમ અને વ્યવહાર નય સંમત અને (૨) સંગ્રહનય સંમત “અનૌપનિધિકી” આ પદનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે વક્ષ્યમાણ પૂર્વાપૂર્વીના ક્રમે જ્યાં પદાર્થોની સ્થાપના થતી નથી તેનું નામ અનુપનિધિ છે. આ અનુપનિધિ જે આનુપૂર્વીનો વિષય છે તે આનુપૂર્વીનું નામ અનૌપનિધિકી આનુપૂર્વી છે. આનુપૂર્વીમાં પૂર્વાનુપૂર્વી આદિના ક્રમપૂર્વક પદાર્થોની સ્થાપના વ્યવસ્થા ન હોય અને જે ત્રણ આદિ પરમાણુથી નિષ્પન્ન થયેલા (ઉત્પન્ન થયેલા) સ્કન્ધને વિષય કરતી હોય (સ્કન્ધનું પ્રતિપાદન કરતી હોય) એવી આનુપૂર્વીનું નામ અનૌપનિધિકી આનુપૂર્વી છે.

નચ સ્કન્ધવિષયેऽનૌપનિધિકીત્વં નોપપદ્યતે, યતઃ કથિત્ સ્કન્ધત્રિપ્રદેશિકઃ, કથિચ્ચતુઃપ્રદેશિકઃ કથિત્ પ્રશ્નપ્રદેશિકઃ, इत्युत्तरोत्तरं सर्वे स्कन्धाः क्रमपूर्वकमेव भवन्ति ततश्च पूर्वानुपूर्व्या व्यवस्थापनस्य सद्भावादनौपनिधिकीत्वमेव तत्रास्ति, नत्वनौपनिधिकीત્વં તત્ર સંભવતીતિ ચેત્.

અત્રોચ્યતે—તત્ર કસ્યચિત્ સ્કન્ધસ્ય પૂર્વાનુપૂર્વ્યાદિ ક્રમેણ વ્યવસ્થાપનં નાન્યેન કેનચિત્ ક્રિયતે, સર્વેષાં સ્કન્ધાનાં વિસ્રસાપરિણામપરિણતત્વાત્ અતઃ સ્કન્ધવિષયે-
 ઽનૌપનિધિકીત્વમુપપદ્યતે। યત્ર તુ તીર્થંકરાદિના પૂર્વાનુપૂર્વ્યાદિક્રમેણ વસ્તુનાં

શંકા—સ્કંધ મેં અનૌપનિધિ કી પના નહીં બનતા હૈ। ક્યોંકિ કોઈ સ્કંધ ત્રીન પ્રદેશ વાલા હોતા હૈ, કોઈ ચાર પ્રદેશવાલા હોતા હૈ, કોઈ પાંચ પ્રદેશવાલા હોતા હૈ। હસ પ્રકાર ઉત્તરોત્તર સમસ્ત સ્કંધ ક્રમ પૂર્વક હી હોતે હૈં હસ પ્રકાર હનમેં પૂર્વાનુપૂર્વી કે ક્રમ સે સ્થાપના કી વ્યવસ્થા કા સદ્ભાવ આને સે ઔપનિધિ કી પના હી આતા હૈ, અનૌપનિધિકીપના નહીં।

ઉત્તર—સ્કંધો મેં જો ત્રિપ્રદેશિકતા આદિ હૈ વહ કિસી કે દ્વારા વહાં કી હુઈ નહીં હૈ—અર્થાત્ એસા નહીં હૈ કિ ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ હૈ ઉસે કિસી ને ત્રીન પરમાણુ પૂર્વાનુપૂર્વી ક્રમ સે રચકર બનાયા હો। ઉસમેં ત્રિપ્રદેશિકતા તો સ્વભાવ સે હી હૈ। ક્યોંકિ જિતને બી સ્કંધ હૈં વે સર્વ સ્વાભાવિક પરિણામ સે પરિણત હોતે રહતે હૈં। હસલિયે સ્કંધ મેં અનૌપનિધિકીપના હી આતા હૈ। જહાં પર તીર્થંકર આદિકોં દ્વારા પૂર્વા-

શંકા—સ્કન્ધમાં અનૌપનિધિકીપણું સંભવી શકતું નથી, કારણ કે કોઈ સ્કંધ ત્રણ પ્રદેશવાળો હોય છે, કોઈ ચાર પ્રદેશવાળો હોય છે, કોઈ પાંચ પ્રદેશવાળો હોય છે. આ પ્રકારે ઉત્તરોત્તર સમસ્ત સ્કન્ધ ક્રમપૂર્વક જ હોય છે. તેથી તેમાં પૂર્વાનુપૂર્વીના ક્રમપૂર્વક સ્થાપનાની વ્યવસ્થાનો સદ્ભાવ હોવાથી ઔપનિધિકી પણું હોઈ શકતું નથી.

ઉત્તર—સ્કંધોમાં જે ત્રિપ્રદેશિકતા આદિ છે તે કોઈના દ્વારા ત્યાં કરાયેલ નથી એટલે કે એવી કોઈ વાત નથી કે ત્રિપ્રદેશી જે સ્કંધ છે તેને કોઈએ ત્રણ પરમાણુ પૂર્વાનુપૂર્વી ક્રમપૂર્વક રાખીને બનાવ્યો છે. તેમાં તો સ્વભાવથી જ ત્રિપ્રદેશિકતા હોય છે, કારણ કે જેટલાં સ્કન્ધ છે તે બધાં સ્વાભાવિક પરિણામ દ્વારા જ પરિણત થતા રહે છે. તેથી સ્કંધમાં અનૌપનિધિપણું જ ઘટાવી શકાય છે જ્યાં તીર્થંકર આદિકો દ્વારા પૂર્વાનુપૂર્વી આદિના ક્રમથી વસ્તુ-

व्यवस्थापनं भवति, तत्रौपनिधिकी आनुपूर्वी, यथा-धर्माधर्मादिषु द्रव्येषु, सामायिकादि षडध्ययनेषु च ।

नन्वेवं पूर्वानुपूर्व्यादिक्रमेण व्यवस्थापनं यत्र नास्ति तत्रानौपधिकीति स्वीकारे आनुपूर्वीत्वमेव नोपपद्यते, पूर्वानुपूर्व्यादिक्रमस्यैवानुपूर्वीरूपत्वात्, पूर्वानुपूर्व्यादि क्रमेण व्यवस्थापनस्याऽभावे आनुपूर्व्या एव नास्ति संभवः? इति चेत्.

अत्रोच्यते-यद्यपि स्कन्धगतत्रयादि परमाणूनां स्कन्धरूपेण विशिष्टौक्यपरिणामपरिणतत्वात्, तथापि-योग्यतामाश्रित्यानुपूर्वीत्वं संभवति । तथाहि-त्रयादि-परमाणूनामादिमध्यावसानभावेन नियतक्रमेण व्यवस्थापनयोग्यताऽस्तीत्यतस्तां योग्यतामाश्रित्यात्राप्यानुपूर्वीत्वं न विरम्यते ।

नुपूर्वी आदि के क्रम से वस्तुओं की व्यवस्था होती है वहां पर औपनिधिकी आनुपूर्वी होती है । जैसे धर्म अधर्म आदि ६ द्रव्यों में और सामायिक आदि ६ अध्ययनों में है ।—

शंका-यदि ऐसा ही स्वीकार किया जावे कि जहां पर पूर्वानुपूर्वी आदि के क्रम से व्यवस्थापन नहीं है वहां अनौपनिधिकी आनुपूर्वी है सो इस कथन में-ऐसी मान्यता में-आनुपूर्वीपना ही नहीं आता है । क्यों कि पूर्वानुपूर्वी आदि के क्रममें ही आनुपूर्वी रूपता है । जहां पूर्वानुपूर्वी आदि के क्रम से व्यवस्थापन का अभाव है वहां आनुपूर्वी का ही संभव नहीं होता है ।

उत्तर-यद्यपि स्कन्धगत तीन आदि परमाणुओं का नियतक्रम नहीं है क्यों कि वे परमाणुओं स्कन्धरूपसे विशिष्टौक्य परिणाम में परिणत रहा करते हैं । तो भी योग्यता को आश्रित करके उनमें आनुपूर्वीपना

ओनी व्यवस्था थाय छे, त्यां औपनिधिकी आनुपूर्वी थाय छे. जेम के धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय आदि ६ द्रव्योभां अने सामायिक आदि ६ अध्ययनोभां शंका-जे ओवुं ज मानी देवाभां आवे के जयां पूर्वानुपूर्वी आदिना कमथी व्यवस्थापन नथी पणु अनौपनिधिकी आनुपूर्वीना कमथी व्यवस्थापन छे, तो ओ प्रकारनी मान्यताभां तो आनुपूर्वीता ज संलवी शकती नथी, कारण के पूर्वानुपूर्वी आदिना कमभां ज आनुपूर्वीरूपता छे. जयां पूर्वानुपूर्वी आदिना कमपूर्वक व्यवस्थापननो अभाव छे, त्यां आनुपूर्वीना संलव ज होतो नथी.

उत्तर-जे के स्कन्धगत त्रय आदि परमाणुओनो नियतक्रम होतो नथी, कारण के ते परमाणुओ स्कन्धरूपे ओक विशिष्ट परिणामभां परिणत थया करे छे. छतां पणु योग्यताने आश्रित करीने आनुपूर्वीता आ प्रकारे

સમ્પ્રતિ અસ્યા દ્વિવિધ્યમાહ-તદ્વથા-નૈગમવ્યવહારયોઃ, સંગ્રહસ્ય ચ । નૈગમ-
વ્યવહારસંમતા સંગ્રહસંમતા ચેતિ દ્વિવિધાઽનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીત્યર્થઃ । इदमत्र
बोध्यम्-ओघनो हि नैगमसंग्रहव्यवहारः ऋजुसूत्रशब्दसमभिरुद्धैवंभूताः सप्त नया
भवन्ति एतेषां हि द्रव्यार्थिकपर्यायार्थिकवृक्षणे नयद्वयेऽन्तर्भावो भवति ।
'द्रव्यमेव परमार्थतोऽस्ति न पर्यायाः' इत्यभ्युपगमपरो नयो द्रव्यार्थिक-
नयः, 'पर्याया एव वस्तुतः सन्ति न द्रव्य'-मित्यभ्युपगमपरो नयः पर्याया-
र्थिकनयः । तत्र नयेषु-नैगमसंग्रहव्यवहारा द्रव्यार्थिकनयाः, ऋजुसूत्रशब्दसमभि-

माना गया है । और वहां इस प्रकार से-कि-तीन आदि परमाणुओं में
आदि मध्य और अवसानभावरूप जो नियतक्रम है उस क्रम से व्यव-
स्थापनकी योग्यता है । इसलिये उस योग्यता को आश्रित करके उन
तीन आदि परमाणुओं में भी आनुपूर्वीपन विरुद्ध नहीं होता ।

अनૌપનિધિકી આનુપૂર્વીમાં જે દ્વિવિધતા કહી ગઈ છે તેનું
અભિપ્રાય એ છે કે સામાન્ય સે નય સાત છે, નૈગમ, સંગ્રહ, વ્યવહાર,
ઋજુસૂત્ર શબ્દ, સમભિરુદ્ધ અને એવંભૂત । इन सातों का द्रव्यार्थिक
और पर्यायार्थिक, इन दो नयों में अन्तर्भाव हो जाता है । द्रव्य ही पर-
मार्थतः-वास्तविक रूप से-हैं पर्याये नहीं-इस प्रकार द्रव्य को ही स्वीकार-
करने वाला नय द्रव्यार्थिक नय है । और पर्याये ही वास्तविक सत् हैं
द्रव्य नहीं इस प्रकार पर्यायों को ही वास्तविक रूप में मानने वाला नय
पर्यायार्थिक नय है । नैगम, संग्रह, और व्यवहार ये तीन द्रव्य को ही

માનવામાં આવી છે-ત્રણ આદિ પરમાણુઓમાં, આદિ, મધ્ય અને અવસાન
(અન્ત) ભાવરૂપ જે નિયતક્રમ છે તે ક્રમની અપેક્ષાએ વ્યવસ્થાપનની યોગ્યતા
છે. તેથી તે યોગ્યતાની અપેક્ષાએ તે ત્રણ આદિ પરમાણુઓમાં આનુપૂર્વી-
તાનો સદ્ભાવ માનવામાં કેઈ વાંધો રહેતો નથી.

અનૌપનિધિકી આનુપૂર્વીમાં જે દ્વિવિધતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે
તેનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે-સામાન્ય રીતે તો આ સાત નય છે-નૈગમ,
સંગ્રહ, વ્યવહાર, ઋજુસૂત્ર, શબ્દ, સમભિરુદ્ધ અને એવંભૂત તે સાતે નયને
મુખ્ય જે પ્રકારમાં વહેંચી શકાય છે-(૧) દ્રવ્યાર્થિક અને (૨) પર્યાયાર્થિક
દ્રવ્ય જ પરમાર્થતઃ (વાસ્તવિક રૂપે) છે-પર્યાયો નથી, આ રીતે દ્રવ્યને
જ સ્વીકાર કરનારા નયોને દ્રવ્યાર્થિક નય કહે છે.

પર્યાયો જ વાસ્તવિક સત્ છે-દ્રવ્ય વાસ્તવિક સત્ (વિદ્યમાન વસ્તુ)
નથી, આ રીતે પર્યાયોને જ વાસ્તવિક રૂપે સ્વીકારનારા નયોને પર્યાયાર્થિક
નય કહેવામાં આવે છે. નૈગમ નય, સંગ્રહ નય અને વ્યવહાર નય, આ ત્રણે

રૂઢેવંભૂતાશ્ચત્વારઃ પર્યાયાર્થિકનયાઃ । તત્ર દ્રવ્યાર્થિકો હિ સામાન્યતો દ્વિવિધો
ભવતિ—વિશુદ્ધોઽવિશુદ્ધશ્ચ । તત્ર નૈગમવ્યવહારરૂપઃ—અવિશુદ્ધઃ । સંગ્રહરૂપસ્તુ વિશુદ્ધઃ ।
નૈગમવ્યવહારૌ હિ અનન્તપરમાણ્વનન્તદ્વયણુકાદ્યનેકવ્યક્ત્યાત્મકં કૃષ્ણાદ્યનેકગુણા-
ધારં ત્રિકાલવિષયં વા અવિશુદ્ધં દ્રવ્યં વિષયીકુરુતઃ, ઇતિ હેતોરનયોરવિશુદ્ધત્વમ્ ।
સંગ્રહશ્ચ પરમાણ્વાદિકં પરમાણ્વાદિ સામ્યાદેકં તિરોભૂતગુણકલાપમવિદ્યમાનપૂર્વાપર-
વિભાગં નિત્યં સામાન્યમેવ દ્રવ્યં વિષયીકુરુતે । સામાન્યં ચ—અનેકત્વાદિ દોષ-
વર્જિતત્વાત્ શુદ્ધમ્ । તત્તથ્ચ સામાન્યરૂપશુદ્ધદ્રવ્યામ્યુપગમપરત્વાદયં સંગ્રહનયઃ શુદ્ધઃ ।

વિષય કરને વાળે હોને સે દ્રવ્યાર્થિક નય હૈં । ઋજુ સૂત્ર, શબ્દ, સમભિ-
રૂઢ ઓર એવંભૂત યે ચાર નય પર્યાયોં કો હી વિષય કરને વાળે હોને સે
પર્યાયાર્થિક નય હૈં । સામાન્ય સે દ્રવ્યાર્થિક નય દો પ્રકાર કા હોતા હૈ
એક વિશુદ્ધ ઓર દૂસરા અવિશુદ્ધ । નૈગમ ઓર વ્યવહાર યે દો નય
અવિશુદ્ધ હૈં । સંગ્રહ નય વિશુદ્ધ હૈ । નૈગમ ઓર વ્યવહાર યે દો નય
અનન્ત પરમાણુ, અનન્ત દ્વયણુક આદિ અનેક વ્યક્તિસ્વરૂપ, ઓર કૃષ્ણ
આદિ અનેક ગુણોં કે આધારભૂત અથવા ત્રિકાલવર્તી એસે અવિરૂદ્ધ
દ્રવ્ય કો વિષય કરતે હૈં । ઇસલિયે યે અવિશુદ્ધ હૈં । તથા સંગ્રહ નય
જાતિકી અપેક્ષા સે પરમાણુ આદિ એક સામાન્ય રૂપ દ્રવ્ય કો હી વિષય
કરતા હૈ ઉસકી દૃષ્ટિ મેં અનેક ભિન્ન ૨ પરમાણુ ઓ પરમાણુ આદિ રૂપ
સે સમાનતા વાળે હોને કે કારણ એક હૈં । ગુણ સમૂહ પર ઉસકી

નયો દ્રવ્યનુ' જ પ્રતિપાદન કરનારા હોવાથી દ્રવ્યાર્થિક નયમાં તેમને સમાવી
લેવામાં આવ્યા છે ઋજુસૂત્રનય, શબ્દનય, સમભિરૂઢ નય અને એવંભૂત નય,
આ ચારે નયો પર્યાયોનુ' જ પ્રતિપાદન કરનારા હોવાથી તેમને પર્યાયાર્થિક
નયમાં સમાવી શકાય છે. સામાન્ય રૂપે દ્રવ્યાર્થિક નય બે પ્રકારનો છે—(૧)
વિશુદ્ધ અને (૨) અવિશુદ્ધ નૈગમ અને વ્યવહાર, આ બન્ને નય અવિશુદ્ધ
છે અને સંગ્રહનય વિશુદ્ધ છે. નૈગમ અને વ્યવહાર નય અનંત પરમાણુ,
અનંતદ્વયણુક આદિ અનેક વ્યક્તિસ્વરૂપ (વસ્તુસ્વરૂપ) અને કૃષ્ણ આદિ અનેક
ગુણોના આધારભૂત અથવા ત્રિકાલવર્તી એવા અવિશુદ્ધ દ્રવ્યને વિષય કરે
છે (પ્રતિપાદન કરે છે) તેથી તે બન્ને નયને અવિશુદ્ધ કહ્યા છે. સંગ્રહનયને
વિશુદ્ધ કહેવાનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે સંગ્રહનય જાતિની અપેક્ષાએ પર-
માણુ આદિ એક સામાન્ય રૂપ દ્રવ્યને જ વિષય કરે છે તે નયની માન્યતા
અનુસાર તો અનેક ભિન્ન ભિન્ન પરમાણુઓ પણ પરમાણુ આદિ રૂપ સમા-
નતાવાળા હોવાને લીધે એક જ છે. ગુણસમૂહ તરફ તેની દૃષ્ટિ જતી નથી,

અત્ર ચ દ્રવ્યાનુપૂર્વ્યાઃ પ્રક્રાન્તત્વાત્ દ્રવ્યાર્થિકમતેનૈવ તસ્યાઃ શુદ્ધાઽશુદ્ધસ્વરૂપં દર્શયિષ્યતે, ન તુ પર્યાયાર્થિકમતેન, પર્યાયવિચારસ્યાપ્રક્રાન્તત્વાદિતિ ॥સૂ૦૭૩॥

સમ્પતિ નૈગમવ્યવહારસમ્પતામનોપનિધિકીં દ્રવ્યાનુપૂર્વીં દર્શયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં અળોવણિહિયા દઠ્ઠવાણુ-
પુઠ્ઠવી ? નૈગમવ્યવહારાણં અળોવણિહિયા દઠ્ઠવાણુપુઠ્ઠવી પંચવિહા
પળણત્તા, તં જહા—અટ્ટપયપરૂવળયા૧, મંગસમુક્ષિત્તળયા૨, મંગો-
વદંસળયા૩, સમોયારે૪, અળુગમે૫ ॥સૂ૦૭૪॥

દૃષ્ટિ નહીં જાતી હૈ । ક્યોંકિ યુળ મો ઇક પ્રકાર કી પર્યાય હૈ । ઓર યહ વસ્તુ કી સહમાવી પર્યાય હૈ દ્રવ્યગત પૂર્વાપરવિભાગ કો મો યહ નહીં માનતા હૈ । અતઃ હન સ્વચ્ચાતોં કો ગોળ કરકે વહ નય સિર્ફ ઇક નિત્ય સામાન્ય ધર્માત્મક વિશુદ્ધ દ્રવ્ય કો હી વિષય કરનેવાલા હોને સે વિશુદ્ધ માના ગયા હૈ । ક્યોંકિ હસ નય કા વિષય અનેકત્વઆદિ નહીં હૈ । સામાન્ય રૂપ દ્રવ્યત્વ મેં અનેકત્વઆદિ તો ઉસકી દૃષ્ટિ મેં દૂષળ હૈ । અતઃ અનેકત્વઆદિ દોષોં સે વર્જિત સામાન્યરૂપ શુદ્ધ દ્રવ્ય કો વિષય કરને કે કારણ યહ નય વિશુદ્ધ હૈ । યહાં પર દ્રવ્યાનુપૂર્વીં કા પ્રકરણ ચલ રહા હૈ હસલિયે દ્રવ્યાર્થિકનય કે મત સે હી ઉસ દ્રવ્યાનુપૂર્વીં કા શુદ્ધ અશુદ્ધ સ્વરૂપ સૂત્રકાર દિખલા-વેગે પર્યાયાર્થિકનય કે મત સે નહીં । ॥સૂ૦૭૩॥

કારણ કે યુળ પળ એક પ્રકારની પર્યાય જ છે. દ્રવ્યગત પૂર્વાપર વિભાગને પળ તે માનતો નથી તેથી આ બધી બાબતોને ગોળરૂપ ગણીને તે નય માત્ર નિત્ય સામાન્ય ધર્માત્મક વિશુદ્ધ દ્રવ્યનું જ પ્રતિપાદન કરનારો હોવાથી તેને વિશુદ્ધનય માનવામાં આવ્યો છે, કારણ કે આ નયનો વિષય અનેકત્વ આદિ નથી સામાન્યરૂપ દ્રવ્યત્વમાં અનેકત્વ આદિ તો તે નયની માન્યતા પ્રમાણે દૂષણરૂપ છે. તેથી અનેકત્વ આદિ દોષોથી વિહીન સામાન્યરૂપ શુદ્ધ દ્રવ્યનું પ્રતિપાદન કરનારો હોવાને કારણે સંગ્રહનયને વિશુદ્ધ નય કહેવામાં આવ્યો છે અહીં દ્રવ્યાનુપૂર્વીંનો અધિકાર આલી રહ્યો છે, તેથી સૂત્રકાર અહીં દ્રવ્યાર્થિક નયની માન્યતા અનુસાર જ દ્રવ્યાનુપૂર્વીંના શુદ્ધ અશુદ્ધ સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરશે—પર્યાયાર્થિક નયના મત અનુસાર અહીં તેનું નિરૂપણ કરશે નહીં ॥સૂ૦૭૩॥

છાયા—અથ કા સા નૈગમવ્યવહારયોઃ અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી? નૈગમ-
વ્યવહારયોઃ અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી પંચવિધા પ્રજ્ઞપ્તા, તદ્યથા-અર્થપદપ્રરૂપ-
ણતા૧, ભંગસમુત્કીર્તનતા૨, ભંગોપદર્શનતા૩, સમવતાર૪, અનુગમ૫ ॥મૂ.૦૭૪॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

અથ કા સા નૈગમવ્યવહારસમ્મતા અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી? ઇતિ શિષ્ય
પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—‘નૈગમવ્યવહારાણં’ ઇત્યાદિ । નૈગમવ્યવહારયોરનૌપનિધિકી
દ્રવ્યાનુપૂર્વી પંચવિધા પ્રજ્ઞપ્તા । તદ્ યથા—અર્થપદપ્રરૂપણતા—અર્થઃ=ત્ર્યણુકસ્કન્ધા-
દિરૂપસ્તદ્યુક્તં તદ્વિષયં વા પદમ્=આનુપૂર્વ્યાદિકમ્—અર્થપદમ્, તસ્ય પ્રરૂપણં=કથનં

અથ સૂત્ર કા નૈગમ-વ્યવહાર નય સંમત અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુ-
પૂર્વી કો પ્રકટ કરતે હે—‘સે કિં તં ઇત્યાદિ’ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં અણોવણિહિયા દ્વાણુપુન્વી?)
હે ભદન્ત । નૈગમ ઓર વ્યવહાર ઇન દો નયોં કો સંમત જો અનૌપનિ-
ધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી હૈ ઉસકા કયા સ્વરૂપ હૈ?

ઉત્તરઃ—(નૈગમવ્યવહારાણં અણોવણિહિયા દ્વાણુપુન્વી પંચવિદ્યા
પણ્ણત્તા) નૈગમ વ્યવહારનય સંમત અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી પાંચ
પ્રકારકી કહી હુઈ હૈ । (તંજહા) વે પ્રકાર વે હૈ—(અટ્ટપયપરૂવણયા, ભંગ-
સમુક્તિત્તળયા, ભંગોવદંસળયા, સમોચારે અણુગમે) અર્થપદપ્રરૂપણતા૧,
ભંગસમુત્કીર્તનતા૨, ભંગોપદર્શનતા૩, સમવતાર૪, ઓર અનુગમ૫, ।
અર્થપદપ્રરૂપણતા—ત્ર્યણુકસ્કંધ આદિરૂપ અર્થ સે યુક્ત અથવા—ત્ર્યણુકસ્કંધ
ત્રીન પરમાણુવાલા સ્કંધ આદિરૂપ અર્થ કો વિષય કરનેવાલા જો પદ હૈ

હવે સૂત્રકાર નૈગમ અને વ્યવહારનય સંમત અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુ-
પૂર્વીનું સ્વરૂપ પ્રકટ કરે છે—“સે કિં તં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં અણોવણિહિયા દ્વાણુપુન્વી?)
શિષ્ય શુરને એવેા પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભગવાન! નૈગમ અને વ્યવહાર, આ
બે નયોને સંમત જે અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી છે તેનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર—(નૈગમવ્યવહારાણં અણોવણિહિયા દ્વાણુપુન્વી પંચવિદ્યા પળ્ણત્તા)
નૈગમ અને વ્યવહારનય સંમત અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી પાંચ પ્રકારની
કહી છે. (તંજહા) તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(અટ્ટપયપરૂવણયા, ભંગ સમુક્તિ-
ત્તળયા, ભંગોવદંસળયા, સમોચારે અણુગમે) (૧) અર્થપદ પ્રરૂપણતા, (૨) ભંગ-
સમુત્કીર્તનતા, (૩) ભંગોપદર્શનતા, (૪) સમવતાર અને (૫) અનુગમ
અર્થપદપ્રરૂપણતા—ત્ર્યણુક (ત્રણ પરમાણુવાળો) સ્કંધ આદિ રૂપ અર્થથી યુક્ત
અથવા ત્ર્યણુકસ્કંધ આદિરૂપ અર્થને વિષય કરવાવાળું જે પદ છે તેનું નામ

તદેવ, અર્થપદપ્રરૂપણતા । આનુપૂર્વ્યાદિકા સંજ્ઞા, તદ્વાચ્યસ્વયણુકાદિરર્થઃ સંજ્ઞી । સંજ્ઞાસંઘ્નિસમ્બન્ધકથનમાત્રં પ્રથમં કર્તવ્યમિતિ ભાવઃ । इति प्रथमो भेदः १ ।
અવ્ર સ્વાર્થે તલ્ પ્રત્યયો બોધ્યઃ । તથા-ભંગસમુત્કીર્તનતા-ભગ્યન્તે=વિકલ્પ્યન્તે
इति भङ्गा=तेषामेव आनुपूर्व्यादिपदानां समुदितानां वक्ष्यमाणन्यायेन संभविनो
વિકલ્પાઃ, તેષાં સમુત્કીર્તનં=સમુચ્ચારેણ, તદેવ, ભંગસમુત્કીર્તનતા, આનુપૂર્વ્યાદિ-
पदनिष्पन्नानां प्रत्येकभङ्गानां द्रव्यादिसंयोगभङ्गानां च समुच्चारणमित्यर्थः । इति
द्वितीयो भेदः २ । તથા-ભંગોપદર્શનતા-તેષામેવ સૂત્રમાત્રતયાऽનન્તરસમુત્કી-
र्तितानां भङ्गानां प्रत्येकं स्वाभिधेयेन व्यणुकाद्यर्थेन सह उपदर्शनम्-भङ्गोपदर्शनं,
તદેવ ભંગોપદર્શનતા । इति तृतीयोभेदः ३ ।

उसका नाम अर्थपद है । इस अर्थपद की प्ररूपणा करना यही अर्थपद प्ररूपणता है । आनुपूर्वी आदि यह संज्ञा है-नाम है । इन नाम का वाच्यार्थ जो व्यणुक आदि है वह संज्ञी है । संज्ञा संज्ञी के संबन्धका कथन मात्र सब से प्रथम करना यही अर्थपद प्ररूपणता है । तथा-भंग समुत्कीर्तनता-जो भेदरूप हो उसका नाम भंग है । समुदित उन्हीं आनुपूर्वी आदि पदों के संभवित विकल्पों-भेदों-का अच्छी प्रकार से उच्चारण करना अर्थात् आनुपूर्वी आदि के पदों से निष्पन्न हुए प्रत्येक भंगों का और संयोगज दो आदि भंगों का बोलना यही भंग समुत्कीर्तनता है । भंगोपदर्शनता-सूत्र मात्र होने के कारण अनन्तरूप से उच्चरित हुए उन्ही-भंगों में से प्रत्येक भंग का अपने अभिधेयरूप कथन व्यणुकादि अर्थ के साथ जो उपदर्शन-बोलना है-वही भंगोपदर्शनता है ।

અર્થપદ છે. આ અર્થપદની પ્રરૂપણા કરવી તેનું નામ જ 'અર્થપદ પ્રરૂપ-
ણતા' છે. આનુપૂર્વી આદિ આ સંજ્ઞા (નામ) છે. આ નામોનો જે ત્રિઅણુક
આદિ વાચ્યાર્થ છે સંજ્ઞી છે. સંજ્ઞા સંજ્ઞીના સંબંધનું કથન જ સૌથી પહેલાં
કરવું એજ અર્થપદપ્રરૂપણતા છે.

ભંગસમુત્કીર્તનતા-જે ભેદ રૂપ હોય તેનું નામ ભંગ છે. સમુદિત
એજ આનુપૂર્વી આદિ પદોના સંભવિત ભેદોનું (વિકલ્પોનું) સારી રીતે
ઉચ્ચારણ કરવું એટલે કે આનુપૂર્વી આદિના પદો વડે નિષ્પન્ન (ઉત્પન્ન)
થયેલા પ્રત્યેક ભંગોનું અને સંયોગજનિત જે આદિ ભંગોનું કથ કરવું તેનું
નામ જ ભંગસમુત્કીર્તનતા છે.

ભંગોપદર્શનતા-સૂત્રમાત્ર હોવાને કારણે અનન્તરરૂપે ઉચ્ચરિત થયેલા
એજ ભંગોમાંથી પ્રત્યેક ભંગનું યોતાના અભિધેય રૂપ ત્રિઅણુક આદિ અર્થની
સાથે જે ઉપદર્શન (ઉચ્ચારણ) કરવું તેનું નામ જ ભંગોપદર્શનતા છે.

નનુ મંગ્લસમુત્કીર્તનમંગ્લોપદર્શનયોઃ કો મેદઃ ? इति चेत् उच्यते—मङ्गलसमु-
ત્कीर्तने मङ्गलविषयकं सूत्रमेवोच्चारणीयम् । मङ्गलोपदर्शने तु तदेव स्वविषयभूतेना-
र्थेन सहोच्चारयितव्यमिति । तथा-समवतारः=तेषामेवानुपूर्व्यादि द्रव्याणां
स्वस्थानपरस्थानान्तर्भावचिन्तनप्रकारः । इति चतुर्थो भेदः ४ । तथा-अनुगमः—
अनुगमनम् , अनुगमः=तेषामेवानुपूर्व्यादिद्रव्याणां सत्पदप्ररूपणादिभिरनुयोग-
द्वारैर्विचारणम् । इति पञ्चमो भेदः ५ । एभिः पञ्चभिः प्रकारैर्नैगमव्यवहारनयमतेन
अनौपनिधिक्याः द्रव्यानुपूर्व्याः स्वरूपं निरूप्यत इति भावः ॥ सू० ७४ ॥

તત્ર પ્રથમં ભેદમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં નેગમવવહારાણં અટ્ટપયપરૂવણયા ? નેગમ-
વવહારાણં અટ્ટપયપરૂવણયા—તિપણસિણ આણુપુઠ્ઠી, ચુપ્પણ-
સિણ આણુપુઠ્ઠી જાવ દસપણસિણ આણુપુઠ્ઠી, સંખેજ્જપણસિણ

શંકાઃ—મંગલસમુત્કીર્તન ઓર મંગ્લોપદર્શન इन दोनों में क्या भेद
है ? मङ्गलसमुत्कीर्तन में मङ्गल विषयक सूत्र का ही केवल उच्चारण करना
होता है और मङ्गलोपदर्शन में वही सूत्र अपने विषयभूत अर्थ के साथ
बोला जाता है । उन्हीं आनुपूर्वी आदि द्रव्यों का स्वस्थान और परस्थान
में अन्तर्भाव होने के विचारों का जो प्रकार है उसका नाम समवतार
है । उन्हीं आनुपूर्वी आदि द्रव्यों का जो सत्पदकी प्ररूपणा आदि वाले
अनुयोगद्वारों से विचार करना होता है वह अनुगम है । इन पांच
प्रकारों से नैगमव्यवहार नय के मत से मान्य अनौपनिधिकी द्रव्यानु-
पूर्वीका स्वरूप निरूपित होता है । ॥ सू० ७४ ॥

શંકા-ભંગ સમુત્કીર્તન અને ભંગોપદર્શન વચ્ચે શો ભેદ છે ?

ઉત્તર-ભંગ સમુત્કીર્તનમાં ભંગવિષયક સૂત્રનું જ કેવળ ઉચ્ચારણ કર-
વાનું હોય છે. પરંતુ ભંગોપદર્શનમાં એજ સૂત્ર પોતાના વિષયભૂત અર્થની
સાથે ઉચ્ચારિત થાય છે.

સમવતાર-એજ આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોનો સ્વસ્થાન અને પરસ્થાનમાં
અન્તર્ભાવ થવાના વિચારોનો જે પ્રકાર છે તેનું નામ 'સમવતાર' છે.

અનુગમ-એજ આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોના જેને સત્પદની પ્રરૂપણા આદિ
વાળા અનુયોગ દ્વારાથી વિચાર કરાય છે તેનું નામ અનુગમ છે.

આ પાંચ પ્રકારે નૈગમ અને વ્યવહાર નયના મતસંમત અનૌપનિધિકી
દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ નિરૂપિત થાય છે, ॥સૂ० ૭૪॥

આણુપુઘ્વી, અસંખિજ્ઞપણસિષ્ આણુપુઘ્વી, અણંતપણસિષ્ આણુ-
પુઘ્વી, પરમાણુપોગ્ગલે અણાણુપુઘ્વી, દુષણસિષ્ અવત્તવણ, તિષ-
ણસિયા આણુપુઘ્વીઓ જાવ અણંતપણસિયાઓ આણુપુઘ્વીઓ,
પરમાણુપોગ્ગલા અણાણુપુઘ્વીઓ, દુષણસિયાઈ અવત્તવયાઈ. સે
તં નૈગમવ્યવહારાણં અટ્ટપયપરૂવણયા ॥સૂ. ૭૫॥

છાયા—અથ કા સા નૈગમવ્યવહારયોઃ અષ્ટપદમરૂપણતા ? નૈગમવ્યવહારયોઃ
અષ્ટપદમરૂપણતા—ત્રિપ્રદેશિક આનુપૂર્વી, ચતુષ્પ્રદેશિક આનુપૂર્વી, યાવદ્ દશપ્રદે-
શિક આનુપૂર્વી, સંખ્યેયપ્રદેશિક આનુપૂર્વી, અસંખ્યેયપ્રદેશિક આનુપૂર્વી, અનન્ત-
પ્રદેશિક આનુપૂર્વી, પરમાણુપુદ્ગલ અનાનુપૂર્વી, દ્વિપ્રદેશિકઃ અવત્તવ્યકઃ । ત્રિપ્રદે-
શિકા આનુપૂર્વ્યો યાવત્ અનન્તપ્રદેશિકા આનુપૂર્વ્યઃ । પરમાણુપુદ્ગલાઃ અનાનુપૂર્વ્યઃ ।
દ્વિપ્રદેશિકાદીનિ અવત્તવ્યકાનિ । સૈષા નૈગમવ્યવહારયો અર્થપદમરૂપણા ॥સૂ. ૭૫॥

ટીકા—શિષ્ય : પૃચ્છતિ—અથ કા સા નૈગમવ્યવહારસમ્મતા અર્થપદમરૂપણ-
તારૂપાઽઽનુપૂર્વી ? इति । उत्तरमाह—नैगमव्यवहारसम्मतार्थपदमरूपणतारूपा-
ઽઽનુપૂર્વી एवं विज्ञेया, तथाहि—त्रिप्रदेशिकः—त्रयःप्रदेशाः=परमाणुलक्षणा विभागा
यस्मिन् स त्रिप्रदेशिकः=प्रदेशत्रयात्मकः स्कन्धः आनुपूर्वी बोध्या । एवं चतुष्प्रदे-

અથ સૂત્રકાર પ્રથમ ભેદકા વર્ણન કરતે હૈં—

‘સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં હત્યાદિ’ ।

શબ્દાર્થઃ—(સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં અટ્ટપયપરૂવણયા) હે ભદ્રન્ત !
પૂર્વકથિત નૈગમ વ્યવહારનયસંમત અર્થપદ પ્રરૂપણતારૂપ આનુપૂર્વી કા
કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તરઃ—(નૈગમવ્યવહારાણં અટ્ટપયપરૂવણયા) નૈગમ વ્યવહારનય
સંમત અર્થપદ પ્રરૂપણતારૂપ આનુપૂર્વીકા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈ (તિ-
પણસિષ્ આણુપુઘ્વી, ચત્તપણસિષ્ આણુપુઘ્વી, જાવ દસપણસિષ્ આણુ-

હવે સૂત્રકાર પ્રથમ ભેદનું વર્ણન કરે છે—

“ સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં અટ્ટપયપરૂવણયા ?) હે ભગવન્ !
પૂર્વકથિત નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અર્થપદ પ્રરૂપણતા રૂપ આનુપૂર્વીનું
સ્વરૂપ કયું છે ?

ઉત્તર—(તિપણસિષ્ આણુપુઘ્વી, ચત્તપણસિષ્ આણુપુઘ્વી, જાવ દસપણસિષ્

શિકઃસ્કન્ધો યાવત્ દશપ્રદેશિકઃ આનુપૂર્વીં बोध्या યાવત્ સંખ્યાતપ્રદેશિક આનુપૂર્વીં, અસંખ્યાતપ્રદેશિકઃ આનુપૂર્વીં, અનન્તપ્રદેશિકઃ આનુપૂર્વીં बोध्या ।

પરમાણુપુદ્ગલઃ=૧કઃ પરમાણુસ્તુ અનાનુપૂર્વીં बोध्या । પરમાણુવન્તરા-સંસ્પૃષ્ટત્વાત્, દ્વિપ્રદેશિકઃ=પરમાણુદ્વયવિભાગવાન્ સ્કન્ધસ્તુ આનુપૂર્વિતયા અનાનુપૂર્વિતયા વા વક્તુમશક્યઃ, અતઃ સોઽવક્તવ્યકઃ । યસ્માદેવં તસ્માત્-ત્રિપ્રદેશિકાઃ સર્વેઽપિ સ્કન્ધા આનુપૂર્વ્યો ભવન્તિ, યાવત્ અનન્તપ્રદેશિકાઃ સર્વેઽપિ સ્કન્ધા આનુપૂર્વ્યો ભવન્તિ ।

પુઁવી સંખેજ્જપણસિણ આણુપુઁવી, અસંખિજ્જપણસિણ આણુપુઁવી, અણંત-પણસિણ આણુપુઁવી) ત્રીન પ્રદેશોવાળા ત્ર્યણુક સ્કંધ આનુપૂર્વીં હૈ ચાર પ્રદેશોવાળા ચતુષ્પ્રદેશિક સ્કંધ આનુપૂર્વીં હૈ । યાવત્ દશ પ્રદેશોવાળા સ્કંધ આનુપૂર્વીં હૈ યાવત્ સંખ્યાતપ્રદેશોવાળા સ્કંધ આનુપૂર્વીં હૈ, અસંખ્ય પ્રદેશોવાળા સ્કંધ આનુપૂર્વીં હૈ । એસા જાનના ચાહિયે ।

(પરમાણુપોગલે આણાણુપુઁવી, દુપણસિણ અવક્તવ્વણ) પરન્તુ જો ૧ક પરમાણુ હૈ વહ આનુપૂર્વીં નહીં હૈ । ક્યોંકિ વહ ઔર કિસી દૂસરે પરમાણુ સે સંસ્પૃષ્ટ નહીં હૈ । દ્વિપ્રદેશવાળા જો સ્કંધ હૈ વહ આનુપૂર્વીરૂપ સે ઔર અનાનુપૂર્વીરૂપ સે વક્તું અશક્ય હૈ હસલિયે વહ અવક્તવ્ય હૈ । જવ એસી બાત હૈ તો (તિપણસિયા આણુપુઁવીઓ જાવ અણંતપણસિયાઓ આણુપુઁવીઓ) ત્રીન પ્રદેશવાળે સમસ્તસ્કંધ આનુપૂર્વીં હૈ—યાવત્ અનન્ત પ્રદેશવાળે જિતને ઔ સ્કંધ હૈ વે સવ આનુપૂર્વિયાં હૈ । (પરમાણુ

આણુપુઁવી, સંખેજ્જપણસિણ આણુપુઁવી, અસંખિજ્જપણસિણ આણુપુઁવી, અણંત-પણસિણ આણુપુઁવી) ત્રણ પ્રદેશોવાળો ત્ર્યણુક સ્કંધ આનુપૂર્વીં છે, ચાર પ્રદેશોવાળો ચતુષ્પ્રદેશિક સ્કંધ આનુપૂર્વીં છે, દસ પર્યન્તના પ્રદેશોવાળો સ્કંધ આનુપૂર્વીં છે, સંખ્યાત પ્રદેશોવાળો સ્કંધ આનુપૂર્વીં છે, અસંખ્યાત પ્રદેશોવાળો સ્કંધ આનુપૂર્વીં છે અને અનંત પ્રદેશોવાળો સ્કંધ આનુપૂર્વીં છે, એમ સમજવું

(પરમાણુપોગલે આણાણુપુઁવી, દુપણસિણ અવક્તવ્વણ) પરન્તુ જે કેવળ એક પરમાણુ છે તે આનુપૂર્વીં રૂપ નથી, કારણ કે તે કેમ બીજા પરમાણુ વડે સંસ્પૃષ્ટ હોતું નથી જે પ્રદેશવાળો જે સ્કંધ છે તે આનુપૂર્વીં રૂપે અને અનાનુપૂર્વીં રૂપે વ્યક્ત થવો અશક્ય છે તેથી તે અવક્તવ્ય છે જો એવી વાત છે તો (તિપણસિયા આણુપુઁવીઓ જાવ અણંતપણસિયાઓ આણુપુઁવીઓ) ત્રણ પ્રદેશોવાળા સમસ્ત સ્કંધો આનુપૂર્વીંઓ રૂપ છે, અને અનંત પર્યન્તના પ્રદેશોવાળા જેટલા સ્કંધો છે તેઓ પણ આનુપૂર્વીંઓ રૂપ છે.

પરમાણુપુદ્ગલારતુ અનાનુપૂર્વ્યો ભવન્તિ । દ્વિપ્રદેશિકાનિ=દ્વયણુકસ્કન્ધદ્રવ્યાણિ
આનુપૂર્વિતયાઽનાનુપૂર્વિતયા વા અવક્તવ્યકાનિ ભવન્તિ ।

અત્રેદં बोध्यम्—આનુપૂર્વી પરિપાટીત્યુચ્યતે । સા ચ યત્રૈવાદિ મધ્યાન્તલક્ષણઃ
સમ્પૂર્ણો ગણનાનુક્રમોઽસ્તિ તત્રૈવોપપદ્યતે, નાન્યત્ર । एवं च यत्र स्कन्ध आदिर्मध्यो-
ऽन्तश्च भवति स स्कन्ध आनुपूर्वीत्युच्यते । આદિશ્ચ યસ્માત્પરમસ્તિ પૂર્વં નાસ્તિ સ
બોધ્યઃ । મધ્યશ્ચ યસ્માત્ પૂર્વમસ્તિ પરમપ્યસ્તિ સ બોધ્યઃ । અન્તશ્ચ યસ્માત્પૂર્વ-
મસ્તિ પરં નાસ્તિ સ બોધ્યઃ । एतत्त्रितयं तु त्रिप्रदेशिकाद्यनन्तप्रेदेशिकान्तेषु

પોગલા અણાણુપુઞ્વીઓ, દુપણ્ણિયાઈ(અવક્તવ્યયાઈ) જો ભિન્ન ૨ અસંબદ્ધ
અવસ્થાવાલે—પુદ્ગલ પરમાણુ હૈં વે આનુપૂર્વિયાં નહીં હૈં । (દુપણ્ણિયાઈ
અવક્તવ્યયાઈ) ઔર જો દો પ્રદેશવાલે પુદ્ગલ સ્કંધ હૈં વે આનુપૂર્વીરૂપ
સે ઔર અનાનુપૂર્વી રૂપ સે વક્તવ્ય નહીં હોને કે કારણ અવક્તવ્ય હૈં ।

यहां यह समझना चाहिये—कि आनुपूर्वी नाम परिपाटी का है।
यह परिपाटीरूप आनुपूर्वी वहीं पर होती है कि जहां पर आदि मध्य
और अन्त रूप गणना का संपूर्ण अनुक्रम होता है । अन्यत्र नहीं होती ।
इस प्रकार जहां स्कंध में आदि, मध्य और अंत होता है । वह स्कंध
आनुपूर्वी ऐसा कहलाता है । जिससे पर है और पूर्व नहीं है वह आदि
शब्द का वाच्यार्थ—पदका अर्थ है । जिससे पूर्व है और पर भी है वह मध्य
शब्द का वाच्यार्थ है । और जिससे पूर्व है परन्तु पर नहीं है—वह अन्त

(પરમાણુપોગલા અણાણુપુઞ્વીઓ, દુપણ્ણિયાઈ અવક્તવ્યયાઈ) જે ભિન્ન
ભિન્ન—અસંબદ્ધ અવસ્થાવાળા પુદ્ગલ પરમાણુઓ છે તેઓ આનુપૂર્વીઓ રૂપ
નથી, અને જે બે પ્રદેશોવાળા પુદ્ગલસ્કંધો છે તેમને આનુપૂર્વી રૂપે અને
અનાનુપૂર્વી રૂપે વ્યક્ત કરી શકાય એવાં ન હોવાથી અવક્તવ્ય છે.

અહીં આનુપૂર્વીનો અર્થ પરિપાટી સમજવો તે પરિપાટી રૂપ આનુ-
પૂર્વીનો ત્યાં જ સદ્ભાવ હોય છે કે જ્યાં આદિ, મધ્ય અને અન્ત રૂપ ગણ-
નાનો સંપૂર્ણ અનુક્રમ શક્ય હોય છે—જ્યાં આ અનુક્રમ સંભવિત હોતો
નથી ત્યાં આનુપૂર્વી પણ સંભવી શકતી નથી આ પ્રકારે જે સ્કંધમાં આદિ,
મધ્ય અને અન્ત હોય છે, તે સ્કંધને આનુપૂર્વીરૂપ કહી શકાય છે. જેની
પૂર્વે કંઈ ન હોય પણ પછી કંઈક હોય, એવો 'આદિ' પદનો વાચ્યાર્થ
છે. જેની પૂર્વે કંઈક હોય અને પછી પણ કંઈક હોય, એવો 'મધ્ય' પદનો
વાચ્યાર્થ છે. જેની પૂર્વે કંઈક હોય પણ પછી કંઈ પણ ન હોય, એવો

સ્કન્ધેષ્વસ્તિ, અતસ્તેષુ પ્રત્યેકં સ્કન્ધઃ આનુપૂર્વીં ભવતિ । પરમાણુપુદ્ગલે તુ એત-
ત્રિતયં નાસ્તિ, અતઃ સોઽનાનુપૂર્વીં બોધ્યઃ । દ્વિપ્રદેશિકસ્તુ અવક્તવ્યકો ભવતિ ।
યદ્યપિ તત્ર પરમાણુદ્વયસ્ય સદ્ભાવાદન્યોઽન્યાપેક્ષયા પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવોઽસ્તિ, અતસ્તત્ર
પૂર્વસ્ય અનુ-અનુપૂર્વં તસ્ય ભાવ આનુપૂર્વીં इत्येवंरूपाऽऽनुपूर्वीं सुतरां सिध्यति, तथापि
મધ્યાભાવાત્ સમ્પૂર્ણગણનાનુક્રમો નાસ્તિ, અતઃ સ આનુપૂર્વીત્વેન વક્તુમશક્યઃ ।

નનુ માઽસ્તુ સમ્પૂર્ણગણનાનુક્રમસ્તથાપિ પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવરૂપાયા આનુપૂર્વીં
વિદ્યમાનત્વાદયમાનુપૂર્વીં ભવિતુ મર્હતિ ? इति चेदुच्यते, यथा मेरुपर्वतादौ कचित्

શબ્દ કા વાચ્યાર્થ છે । એ ત્રીનો આદિ મધ્ય ઓર અન્ત ત્રિપ્રદેશિક
આદિ સ્કંધ સે લેકર અનન્ત પ્રદેશતક કે સ્કંધોં મેં હોતે હેં । इसलिये
इनमें प्रत्येक स्कंध आनुपूर्वीरूप होता है । परन्तु जो एक परमाणु है
उसमें ये तीनों नहीं होते हैं । इसलिये वह आनुपूर्वी नहीं होता है ।
द्विप्रदेशिक पुद्गलस्કંધ અવક્તવ્ય હોતા છે । यद्यपि द्विप्रदेशिक स्कंध में दो
परमाणु संश्लिष्ट रहते हैं इसलिये वहां अन्योन्यापेक्षा से पूर्व पश्चाद्भाव
है । अतः पूर्वस्य अनु-पूर्व के पीछे-अनुपूर्व है और इस अनुपूर्व का जो
भाव है वह आनुपूर्वी है । इत्येवं रूपा आनुपूर्वीं सुतरां वहां सिद्ध हो
जाती है, तो भी मध्य का अभाव होने से सम्पूर्ण गणनानुक्रम वहां
नहीं बनता है । इसलिये वह गणनानुक्रम आनुपूर्वीं रूप से वक्तुं अशक्य है ।

‘અન્ત’ પદનો વાચ્યાર્થ છે. આ ત્રણેનો (આદિ, મધ્ય અને અન્તનો)
સદ્ભાવ ત્રિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધથી લઇને અન્ત પ્રદેશિક પર્યન્તના સ્કંધોમાં
હોય છે. તેથી તે પ્રત્યેક સ્કંધ આનુપૂર્વીં રૂપ હોય છે. પરન્તુ જે એક
પરમાણુ છે તેમાં આદિ, મધ્ય અને અન્ત, આ ત્રણેનો અભાવ હોય છે,
તેથી એક પરમાણુ આનુપૂર્વીં રૂપ હોતું નથી દ્વિપ્રદેશિક સ્કંધને આનુપૂર્વીં
રૂપે અથવા તો અનાનુપૂર્વીં રૂપે વ્યક્ત કરી શકતો નથી તેથી તેને અવ-
ક્તવ્ય કહ્યો છે જે કે દ્વિપ્રદેશિક સ્કંધમાં જે પરમાણુ સંશ્લિષ્ટ રહે છે, તે
કારણે તેમાં અન્યોન્યની અપેક્ષાએ પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવનો (આદિ અને અન્તનો)
સદ્ભાવ હોય છે, પરન્તુ ત્યાં મધ્યનો સદ્ભાવ હોતો નથી અનુપૂર્વની
વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે થાય છે-“પૂર્વસ્ય અનુ અનુપૂર્વઃ” “પૂર્વની પાછળનું
એટલે અનુપૂર્વ” આ અનુપૂર્વનો જે ભાવ છે તેનું નામ આનુપૂર્વીં છે. આ
પ્રકારની આનુપૂર્વીં તો અહીં (દ્વિપ્રદેશી સ્કંધમાં) સરળતાથી સિદ્ધ થઈ જાય
છે, છતાં પણ મધ્યનો અભાવ હોવાથી ત્યાં સંપૂર્ણ ગણનાનુક્રમ સંભવી
શકતો નથી તેથી તે ગણનાનુક્રમ આનુપૂર્વીં રૂપે વ્યક્ત થવો અશક્ય છે.

કમપિ પદાર્થ મધ્યત્વેનાવધીકૃત્ય પૂર્વાદિવિભાગો લોકૈઃ ક્રિયતે, તથૈવાઽપિ
યદિ સ્યાત્તર્હિ સ્યાદેવમ્ । નચૈવમસ્તિ । અત્ર તુ મધ્યે કોઽપિ નાસ્તિ, યમવધી-
કૃત્યાઽસાઢ્ઠ્યેણ પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવઃ પરસ્પરાનપેક્ષયા સંભવેત્ । અર્થાત્-યત્રાઘચરમપર-
માણ્વોર્મધ્યેઽન્યઃ પરમાણુવિંચતે, તત્ર-મધ્યગતં પરમાણુમાશ્રિત્ય યઃ પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવો
ભવતિ સ एवानુપૂર્વી ભવતિ, નાન્યઃ અતોઽયમાનુપૂર્વીત્વેન વક્તુમશક્યઃ ।

શંકાઃ-સંપૂર્ણ ગણનાક્રમ ભલે ન હો-પરંતુ પૂર્વ પશ્ચાદ્ભાવરૂપ આનુ-
પૂર્વી' કે વિદ્યમાન હોને સે યહ દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ આનુપૂર્વી' હો સકતા હૈ ।

ઉત્તરઃ-જિસ પ્રકાર મેરુ પર્વત આદિ મેં કિસી સ્થલ પર કિસી મી
પદાર્થ કો મધ્યરૂપ સે મર્યાદિત કરકે લોગ હસસે પૂર્વ પશ્ચિમપર કાં
વિભાગ કરતે હૈ, હસી પ્રકાર યહાં પર મી-દ્વિપ્રદેશિક સ્કંધ મેં મી યદિ
એસા હોતા તો એસા હો સકતા અર્થાત્ આનુપૂર્વિત્વ આ સકતા । પરંતુ
એસા તો હૈ નહીં । ક્યોં કિ યહાં દ્વિપ્રદેશિક સ્કંધ મેં મધ્ય મેં કોઈ મી
નહીં હૈ કિ જિસે મર્યાદિત કરકે હસ સ્કંધ મેં પૂર્વ પર ભાવ પરસ્પર કી
અનપેક્ષા કે સમગ્ર ભાવ સે બન જાવે । તાત્પર્ય કહનેકા યહ હૈ કિ જહાં
પર આદિ અંતકે દો પરમાણુઓ કે બીચ મેં એક તીસરા પરમાણુ મૌજૂદ
રહતા હૈ વહાં પર મધ્ય ગત પરમાણુ કો અવધિભૂત માન કર જો પૂર્વ
પશ્ચાદ્ભાવ હોતા હૈ વહી આનુપૂર્વી' હોના હૈ । અન્ય દૂસરા નહીં । હસલિયે
દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ આનુપૂર્વીરૂપ સે વક્તું અશક્ય હૈ ।

શંકા-સંપૂર્ણ ગણનાનુક્રમ ભલે ન હોય પણ આદિ અને અન્તરૂપ-
પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવ રૂપ આનુપૂર્વી' વિદ્યમાન હોવાથી આ દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ આનુ-
પૂર્વી' રૂપ સંભવી શકે છે તો તેને આનુપૂર્વી' રૂપ કહેવામાં શો વાંધો નડે છે?

ઉત્તર-જે રીતે મેરુ પર્વત આદિ સ્થળની મધ્યમાં આવેલા કોઈ
પદાર્થને મધ્યભાગ રૂપે મર્યાદિત કરીને લોકો તેના પૂર્વ પશ્ચિમ રૂપ વિભાગ
પાડે છે અને મધ્યસ્થ સ્થળની પૂર્વે આવેલા ભાગોને પૂર્વના ભાગો રૂપે
અને પશ્ચિમે આવેલા સ્થળોને પશ્ચિમના ભાગો રૂપે ઓળખે છે, એજ
પ્રમણે દ્વિપ્રદેશી સ્કંધમાં પણ મધ્યભાગનો સદ્ભાવ હોતો એવું થઈ શકત
બનત-તેના પૂર્વ-પશ્ચિમરૂપ વિભાગ પડી શકત-અને તો તેમાં આનુપૂર્વીત્વ
સંભવી શકત, પરંતુ એવું તો તેમાં શક્ય નથી, કારણ કે દ્વિપ્રદેશિક
સ્કંધમાં મધ્યમાં એવું કંઈ પણ નથી કે જેને મર્યાદિત કરીને તે સ્કંધમાં
પૂર્વ પર ભાવ પરસ્પરની અનપેક્ષા પૂર્વક સમગ્રરૂપે શક્ય બને આ કથનનો
ભાવાર્થ એ છે જ્યાં આદિ અને અન્તના બે પરમાણુઓની વચ્ચે એક ત્રીજું
પરમાણુ મૌજૂદ હોય છે, ત્યાં મધ્યના પરમાણુને અવધિભૂત (મર્યાદારૂપ)
માનીને પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવ શક્ય બને છે અને ત્યારે જ અનુપૂર્વી' સંભવી શકે
છે-તે સિવાય આનુપૂર્વીત્વ શક્ય બનતું નથી. તે કારણે દ્વિપ્રદેશી સ્કંધને
આનુપૂર્વીરૂપે વ્યક્ત કરી શકતો નથી.

નનુ તર્હિ પરમાણુપુદ્ગલત્ અનાનુપૂર્વીત્વેન કયં નોચ્યતે ? इति चेदाह-
परस्परापेक्षया पूर्वपश्चाद्भावमात्रस्य सद्भावादयमनानुपूर्वीत्वेनापि वक्तुं न शक्यते ।
इत्थमानुपूर्वीत्वेन अनानुपूर्वीत्वेन च वक्तुमशक्यत्वादवक्तव्यक एव द्वयणुकस्कन्धः ।
अनेन चेद्रमायांतं-यत् त्रिप्रदेशिकादौ आदिमध्यान्तभावस्य विद्यमानतयाऽसा-
ङ्ग्येण पूर्वपश्चाद्भावस्य सत्त्वात् त्रिप्रदेशिकादिः स्कन्ध एवानुपूर्वी, परमाणुपुद्गल-
स्त्वनानुपूर्वी, द्वयणुकस्त्ववक्तव्यक इति । एवं चात्र संज्ञासंज्ञिसम्बन्धकथनरूपाऽ-
र्थपदप्ररूपणा कृता भवति ।

શંકા-જયે યહ દ્વિપ્રદેશિકસ્કંધ આનુપૂર્વીરૂપ સે નહીં કહા જા
સકતા હૈ તો ફિર હસે પુદ્ગલપરમાણુ કી તરહ અનાનુપૂર્વીરૂપ સે કયો
નહીં કહ દેતે હૈ ?

ઉત્તર-પરસ્પર કી અપેક્ષા સે હસમેં પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવ માત્ર કા જયે
સદ્ભાવ હૈ તો ફિર હસે અનાનુપૂર્વીરૂપ સે બી કૈસે કહા જા સકતા હૈ ? । હસ
પ્રકાર આનુપૂર્વી ઓર અનાનુપૂર્વીરૂપ સે યહ દ્વિપ્રદેશિકસ્કંધ વક્તું અશ-
ક્ય હોને સે અવક્તવ્ય કોટિ મેં માનલિયા ગયા હૈ । હસ કથન સે યહ
બાત આઈ કિ ત્રિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધ મેં આદિ, મધ્ય ઓર અન્ત-ભાવ
કી વિદ્યમાનતા હોને સે સમગ્ર રૂપમેં પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવ મૌજુદ હૈ । યહ
ત્રિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધ હી આનુપૂર્વી હૈ । ઓર પરમાણુ પુદ્ગલ અનાનુ-
પૂર્વી હૈ તથા દ્વયણુકસ્કંધ અવક્તવ્ય હૈ । હસ પ્રકાર યહાં પર સંજ્ઞાસંજ્ઞિ
સમ્બન્ધરૂપ અર્થ પદ કી પ્રરૂપણા હો જાતી હૈ ।

શંકા-જો દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ આનુપૂર્વી રૂપ કહી શકાતા નથી, તો તેને
પુદ્ગલ પરમાણુની જેમ અનાનુપૂર્વી રૂપ કહેવામાં શો વાંધો છે ?

ઉત્તર-પરસ્પરની અપેક્ષાએ તેમાં પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવ માત્રનો જ જો સદ્-
ભાવ છે તો તેને અનાનુપૂર્વી રૂપ પણ કેવી રીતે કહી શકાય ? આ રીતે
આ દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ આનુપૂર્વી રૂપ પણ કહી શકાય તેમ નથી અને અનાનુ-
પૂર્વી રૂપ પણ કહી શકાય તેમ નથી, તે કારણે તેને અવક્તવ્ય કોટિમાં
ગણાવવામાં આવ્યો છે. આ કથન દ્વારા એજ વાત સિદ્ધ થાય છે કે ત્રિપ્ર-
દેશિક આદિ, સ્કંધમાં આદિ મધ્ય અને અન્ત ભાવની વિદ્યમાનતા હોવાથી તેમાં
સમગ્રરૂપે પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવ મૌજુદ છે. તેથી આ ત્રિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધજ
આનુપૂર્વી રૂપ છે, અને પરમાણુ પુદ્ગલ અનાનુપૂર્વી રૂપ છે તથા દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ
અવક્તવ્ય કોટિનો છે. આ પ્રકારે અહીં સંજ્ઞા સંજ્ઞી સંબંધ રૂપ
અર્થપદની પ્રરૂપણા થઈ ગય છે.

નનુ 'ત્રિપ્રદેશિક આનુપૂર્વી' ઇત્યાદ્યેકવચનપ્રદર્શનેનૈવ સંજ્ઞાસંજ્ઞીસમ્બન્ધ-
કથનં સિદ્ધમ્, કથં પુનસ્ત્રિપ્રદેશિકા આનુપૂર્વ્યઃ ઇત્યાદિ બહુવચનાન્તનિર્દેશઃ
કૃતઃ? ઇતિ ચેદુચ્યતે-આનુપૂર્વ્યાદિ દ્રવ્યાણાં પ્રતિભેદમનન્તવ્યક્તિરુપાપનાર્થ-
નૈગમવ્યવહારયોરિત્થંભૂતાઽમ્યુપગમપ્રદર્શનાર્થ ચ બહુવચનનાન્તત્ત્વેન નિર્દેશઃ કૃત ઇતિ
નાસ્તિ કશ્ચિદ્ દોષઃ ।

શંકા-“ત્રિપ્રદેશિક આનુપૂર્વી” ઇત્યાદિ એકવચન કે કથન સે
હી સંજ્ઞા સંજ્ઞી સમ્બન્ધકા કથન જવ સિદ્ધ હો જાતા હૈ તવં ફિર કયો
સૂત્રકાર ને “ત્રિપ્રદેશિકા આનુપૂર્વ્યઃ” ત્રીન ઇત્યાદિ બહુવચનાન્ત
પદ કા નિર્દેશ કિયા ?

ઉત્તર-આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યો કા હરેક ભેદ અનન્ત વ્યક્તિરૂપ હૈ
હસ બાત કો રૂપાપનકરને કે લિયે ઓર નૈગમ એવં વ્યવહાર નય કા
એસા સિદ્ધાન્ત હૈ હસ બાત કો પ્રદર્શિત કરને કે લિયે બહુવચનકા
પ્રયોગ કિયા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ “ત્રિપ્રદેશાં આનુપૂર્વ્યઃ”
એસા જો સૂત્રકારને કથન કિયા હૈ ઉસસે વેં યહ કહના માહતે હૈ કિ
ત્રિપ્રદેશિક એક દ્રવ્યરૂપ એક હી આનુપૂર્વી નહીં હૈ કિન્તુ ત્રિપ્રદેશિક
દ્રવ્ય અનન્ત હૈ-અતઃ અનન્ત આનુપૂર્વિયાં હૈ । હસલિયે ત્રિપ્રદેશિકરૂપ
ભિન્ન ૨ અનન્ત આનુપૂર્વિયોં કી સત્તા સૂચિત કરનેકે લિયે “ત્રિપ્રદે-
શિકા આનુપૂર્વ્યઃ” એસા બહુવચનાન્ત પદ કા પ્રયોગ કિયા ગયા હૈ ।

શંકા-‘ત્રિપ્રદેશિક ઇત્યાદિ એક વચનના કથન દ્વારા જ સંજ્ઞા સંજ્ઞી
સંબંધનું કથન ને સિદ્ધ થઈ જાય છે તો સૂત્રકારે “ત્રિપ્રદેશિકા આનુપૂર્વ્યઃ”
‘ત્રિપ્રદેશિક આનુપૂર્વીઓ’ ઇત્યાદિ બહુવચનાન્ત પદનો નિર્દેશ શા
કારણે કર્યો છે ?

ઉત્તર-‘આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોનો પ્રત્યેક ભેદ અનન્ત વ્યક્તિરૂપ
(પદાર્થરૂપ) છે,’ એ વાતનું પ્રતિપાદન કરવાને માટે અને નૈગમ તથા
વ્યવહાર નયનો એવો સિદ્ધાન્ત છે એ વાતને પ્રદર્શિત કરવા માટે બહુવચ-
નનો પ્રયોગ પણ કરવામાં આવ્યો છે આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે “ત્રિપ્ર-
દેશાઃ આનુપૂર્વ્યઃ” આ પ્રકારનું સૂત્રકારે જે કથન કર્યું છે તેના દ્વારા તેઓ
એ વાત પ્રકટ કરવા માગે છે કે ત્રિપ્રદેશિક એક દ્રવ્યરૂપ એક જ આનુપૂર્વી
નથી પરન્તુ ત્રિપ્રદેશિક દ્રવ્ય અનન્ત હોવાને લીધે અનન્ત આનુપૂર્વીઓ છે.
તેથી ત્રિપ્રદેશિક રૂપ જુદી જુદી અનન્ત આનુપૂર્વીઓની સત્તા (અસ્તિત્વ)
સૂચિત કરવાને માટે “ત્રિપ્રદેશિકા આનુપૂર્વ્યઃ” “ત્રિપ્રદેશિક આનુપૂર્વીઓ”
એવાં બહુવચનાન્ત પદનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે. એજ પ્રમાણે આજે

નનુ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યમેકેન પરમાણુના નિષ્પન્નતે, અવક્તવ્યકદ્રવ્યં તુ પરમાણુ-
દ્રવ્યેન, આનુપૂર્વીદ્રવ્યં તુ જઘન્યતોઽપિ પરમાણુત્રયેણ, एवं દ્રવ્યવૃદ્ધ્યા પૂર્વાનુપૂર્વી-
ક્રમમાશ્રિત્ય પ્રથમમનાનુપૂર્વીદ્રવ્યં વક્તવ્યમ્, તતોઽવક્તવ્યકદ્રવ્યમ્, તતશ્ચાનુપૂર્વી-
દ્રવ્યમ્ । પશ્ચાનુપૂર્વીક્રમમાશ્રિત્ય તુ પ્રથમમાનુપૂર્વી દ્રવ્યં વક્તવ્યમ્, તતોઽવક્તવ્યક-
દ્રવ્યમ્, તતશ્ચાનુપૂર્વીદ્રવ્યમ્ । અત્ર પુનઃ ક્રમદ્વયમુલ્લઙ્ઘ્ય નિર્દેશઃ કથં કૃત ?
इति चेदुच्यते—

इसी प्रकार से चार प्रदेशोंवाला एक स्कंध एक आनुपूर्वी है—इस प्रकार
से चार प्रदेशोंवाले स्कंध भी अनन्त हैं अतः वे अनन्तानुपूर्वियों हैं ।
अन्यत्र भी इसी प्रकार से उद्भावित कर लेना चाहिये ।

शंका—अनानुपूर्वी जो द्रव्य है वह एक परमाणु से निष्पन्न होता
है अर्थात् एक परमाणु अनानुपूर्वी है, और अवक्तव्य द्रव्य परमाणुद्रव्य
के सम्बन्ध से निष्पन्न होता है । अर्थात् संश्लिष्ट परमाणुद्रव्यस्कंध
अवक्तव्य है, तथा कम से कम भी आनुपूर्वी द्रव्य परमाणुत्रय से निष्पन्न
होता है, अर्थात् परमाणुत्रय के संश्लेष से सब से जघन्य आनुपूर्वी
निष्पन्न होती है इस प्रकार द्रव्य की वृद्धि से पूर्वानुपूर्वी क्रम को लेकर
सूत्रकार को चाहिये था कि वे पहिले अनानुपूर्वी द्रव्य का कथन करते,
इसके बाद अवक्तव्य द्रव्यका कथन करते और इसके बाद आनुपूर्वी द्रव्य
का कथन करते हैं । यदि पश्चानुपूर्वी के क्रम को लेकर उन्हें कथन करना

પ્રદેશોવાળો એક સ્કંધ એક આનુપૂર્વી રૂપ છે અને ચાર પ્રદેશોવાળા જે
અનંત સ્કંધો છે તેઓ અનંત આનુપૂર્વી રૂપ છે એજ પ્રમાણે અનંત પ્રદેશી
પર્યન્તના સ્કંધો વિષે પણ સમજી લેવું.

શંકા—અનાનુપૂર્વા જે દ્રવ્ય છે તે એક પરમાણુમાંથી નિષ્પન્ન થાય છે—
એટલે કે એક પરમાણુ અનાનુપૂર્વી રૂપ છે, અને અવક્તવ્ય દ્રવ્ય જે પરમા-
ણુના સંબંધથી નિષ્પન્ન થાય છે—એટલે કે સંશ્લિષ્ટ પરમાણુ દ્વયસ્કંધ અવ-
ક્તવ્ય છે—એટલે કે દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ આનુપૂર્વી રૂપ પણ નથી અને અનાનુ-
પૂર્વી રૂપ પણ નથી આનુપૂર્વીદ્રવ્ય ઓછામાં ઓછા ત્રણ પરમાણુ પેઠે
નિષ્પન્ન થાય છે એટલે કે ત્રણ પરમાણુના સંશ્લેષથી જઘન્યમાં જઘન્ય રૂપ
આનુપૂર્વી નિષ્પન્ન થાય છે. આ રીતે દ્રવ્યની વૃદ્ધિ દ્વારા પૂર્વાનુપૂર્વી ક્રમની
અપેક્ષાએ સૂત્રકારે પહેલાં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યનું કથન કરવું જોઈતું હતું ત્યાર
પછી અવક્તવ્ય દ્રવ્યનું કથન કરવું જોઈતું હતું અને ત્યાર બાદ આનુપૂર્વી
દ્રવ્યનું કથન કરવું જોઈતું હતું ને પશ્ચાનુપૂર્વીના ક્રમથી કથન કરવું હોય

આનુપૂર્વીદ્રવ્યાપેક્ષ્યાઽનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ અલ્પાનિ, અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાપેક્ષ્યાઽ-
વત્કવ્યકદ્રવ્યાણિ અલ્પેતરાણિ, इत्येव' દ્રવ્યહાન્યા પૂર્વાનુપૂર્વીક્રમનિર્દેશ એવા
વર્તે, इति नास्ति कश्चिदोषः । सम्प्रति प्रकृतमुपसंहरन्नाह-सैषा नैगमव्यवहार-
सम्मतार्थपदप्ररूपणतारूपाऽनौपनिधिकी आनुपूर्वी ॥ सू० ७५ ॥

થા તો-પહિલે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કા કથન કરતે ઘાડ મેં અવત્તવ્ય દ્રવ્ય
કા કથન કરતે ઓર ફિર ઘાડ મેં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કા કથન કરતે ।
પરન્તુ ઉન્હોને इन दोनों क्रमों का उल्लंघन कर निर्देश किया है सो
इसका क्या कारण ?

ઉત્તર-સૂત્રકાર કો હસ પ્રકાર કે નિર્દેશ સે યહ બતલાના इष्ट
है कि आनुपूर्वी द्रव्य की अपेक्षा अनानुपूर्वी द्रव्य थोड़े हैं, और अना-
नुपूर्वी द्रव्य की अपेक्षा अवतत्तव्यक द्रव्य और भी कम हैं । इस प्रकार
द्रव्य की हानि से सूत्रकारने यहां पूर्वानुपूर्विक्रम को लेकर उसी का
निर्देश वक्तव्यरूप से इष्ट किया है । अतः इस प्रकार निर्देश में कोई
दोष नहीं है । (से तं नैगमव्यवहाराणं अदृष्यपरूपणया) इस प्रकार से
नैगम व्यवहारनय संमत यह पूर्वप्रकान्त अर्थ पदप्ररूपणतारूप का
अनौपनिधिकी आनुपूर्वी है ।

ભાવાર્થ-સૂત્રકારને હસ સૂત્ર દ્વારા અર્થપદ પ્રરૂપણા કાં કયા સ્વરૂપ
હૈ यह विषय स्पष्ट किया है । त्र्यणुकस्कंध से लेकर अनन्त प्रदेशवाले

તો પહેલાં આનુપૂર્વીદ્રવ્યનું, ત્યાર બાદ અવત્ત-દ્રવ્યનું અને ત્યાર બાદ
અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યનું કથન કરવું જોઈતું હતું. પરન્તુ આ બે ક્રમમાંથી એક
પણ ક્રમને અનુસરવાને બદલે તેમણે પહેલાં આનુપૂર્વીદ્રવ્યનું, ત્યાર બાદ
અનાનુપૂર્વીનું દ્રવ્યનું અને છેલ્લે અવત્તવ્ય દ્રવ્યનું કથન કર્યું છે. તો આમ
કરવ.નું શું કારણ હશે ?

ઉત્તર-સૂત્રકાર આ પ્રકારના ક્રમ દ્વારા એ બતાવવા માંગે છે આનુપૂ-
ર્વીદ્રવ્ય કરતાં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય થોડું છે, અને અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કરતાં
અવત્તવ્ય થોડું છે આ રીતે સૂત્રકારે અહીં દ્રવ્યની હાનિની અપેક્ષાએ પૂર્વા-
નુપૂર્વી ક્રમનો આધાર લઈને ઉપયુક્ત ક્રમે તેની પ્રરૂપણા કરી છે. તેથી
આ પ્રકારના નિર્દેશમાં કોઈ દોષ નથી.

(से तं नैगमव्यवहाराणं अदृष्यपरूपणया) આ પ્રકારનું નૈગમ અને
વ્યવહારનય સંમત પૂર્વપ્રસ્તુત અર્થપદ પ્રરૂપણતા રૂપ અનૌપધિકી
આનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ છે.

ભાવાર્થ-સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા અર્થપદ પ્રરૂપણાનું કેવું સ્વરૂપ છે તે
વિષયને સ્પષ્ટ કર્યા છે. ત્રણ આણવાળા (ત્રપ્રદેશી) સ્કંધથી લઈને અનંત

અસ્યાઃ પ્રયોજનં કિમ્ ? इति दर्शयितुमाह—

મૂલમ્—एयाए णं नेगमववहाराणं अट्टपयपरूवणयाए किं पओयणं? एयाए णं नेगमववहाराणं अट्टपयपरूवणयाए भंग-समुक्कित्तणया कज्जइ ॥सू० ७६॥

જિતને બી સ્કંધ હૈં વે સબ યહાં “ અર્થ ” શબ્દ સે ગૃહીત હુઅ હૈં । હસ અર્થ સે યુક્ત અથવા હસ અર્થ કો વિષય કરનેવાલા જો પદ હૈં ઉસકા નામ અર્થપદ હૈં । હસકી પ્રરૂપણા કા નામ અર્થ પદ પ્રરૂપણા હૈં । હસ પ્રરૂપણા મેં પુદ્ગલ પરમાણુ ઓર દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ વર્જિત હો જાતે હૈં । કયોં કિ—એકપુદ્ગલપરમાણુ આનુપૂર્વીરૂપ નહીં હૈં ઓર દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ અવક્તવ્ય હૈં । સબ સે જઘન્ય આનુપૂર્વી કા પ્રારંભ ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ સે હોતા હૈં । કયોં કિ યહીં સે ક્રમ કી સમ્પૂર્ણ ગણના ચલતી હૈં । ગણના કા તાત્પર્ય ગિન્તી સે હૈં । આદિ, મધ્ય ઓર અંત હસ પ્રકાર સે ગણના જહાં હોતી હૈં વહોં પર આનુપૂર્વીરૂપ પરિપાટી મોજૂદ રહતી હૈં । યહ અર્થ પદ પ્રરૂપણારૂપ આનુપૂર્વી નૈગમનય ઓર વ્યવહારનય હન દોનોં નયોં કો સંમત હૈં । યે અર્થ પદ પ્રરૂપણારૂપ આનુપૂર્વિયાં એક સે લેકર અનન્ત હૈં । હસકા કારણ યહ હૈં કિ ત્રિપ્રદેશી આદિ સ્કંધ સે લેકર અનન્ત-પ્રદેશી સ્કંધ તક કે જિતને બી સ્કંધ હૈં વે સબ અનન્ત હૈં । ॥સૂ० ૭૫॥

પર્યન્તના પ્રદેશવાળો જેટલા સ્કંધ છે, તે બધાને લેઈને અહીં “ અર્થ ” પદથી શરૂ કરવામાં આવેલ છે. આ અર્થથી યુક્ત અથવા આ અર્થનું પ્રતિપાદન કરનાર—જે પદ છે તેનું નામ ‘ અર્થપદ ’ છે. તેની પ્રરૂપણાનું નામ ‘ અર્થપદ પ્રરૂપણા ’ છે. આ પ્રરૂપણામાં પુદ્ગલ પરમાણુ અને દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ વર્જિત થઈ જાય છે—એટલે કે તેમની પ્રરૂપણા થતી નથી, કારણ કે એક પુદ્ગલ પરમાણુ આનુપૂર્વી રૂપ નથી અને દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ અવક્તવ્ય છે. જઘન્યમાં જઘન્ય આનુપૂર્વીનો પ્રારંભ ત્રિપ્રદેશી સ્કંધથી થાય છે, કારણ કે ત્યાંથી જ કેમની સંપૂર્ણ ગણના ચાલુ થાય છે. (ગણના એટલે ગણતરી) આદિ, મધ્ય અને અન્ત, આ પ્રકારની ગણના જ્યાં સંલવિત હોય છે, ત્યાં જ આનુપૂર્વી રૂપ પરિપાટી મોજૂદ રહે છે. આ અર્થપદ પ્રરૂપણા રૂપ આનુપૂર્વી નૈગમનય અને વ્યવહારનય, આ બંને નયો દ્વારા સંમત (માન્ય) છે. આ અર્થપદ પ્રરૂપણારૂપ આનુપૂર્વીઓ એકથી લઈને અનન્ત પર્યન્તની છે, કારણ કે ત્રિપ્રદેશીથી લઈને અનન્ત પ્રદેશી સુધીના જેટલા સ્કંધ છે, તે બધાં અનન્ત છે. ॥સૂ० ૭૫॥

છાયા—એતયા खलु नैगमव्यवहारस्योर्थपदप्ररूपणतया किं प्रयोजनम् ?
एतया खलु नैगमव्यवहारस्योर्थपदप्ररूपणतया भङ्गसमुत्कीर्तनता क्रियते ॥ सू० ७६ ॥

टीका—‘ एयाए णं ’ इत्यादि—

एतया नैगमव्यवहारसम्मतया अर्थपदप्ररूपणतया किं प्रयोजनम् = किं फलम् ?
इति शिष्यः पृच्छति । अथ—उत्तरयति—एतया नैगमव्यवहारसम्मतयाऽर्थपदप्र-
रूपणतया भङ्गसमुत्कीर्तनता क्रियते । अयं भावः—अर्थपदप्ररूपणतायां संज्ञासंज्ञि-
व्यवहारो निरूपितः । संज्ञासंज्ञिव्यवहारे सत्येव भङ्गकाः समुत्कीर्तयितुं शक्यन्ते,
तान्यथा, संज्ञामन्तरेण निर्विषयाणां भङ्गानां प्ररूपणताया असंभवात् । तस्मात्

इसका प्रयोजन क्या है ? इस बात को सूत्रकार अब प्रदर्शित
करते हैं—‘ एयाए णं ’ इत्यादि ।

शब्दार्थ—हे भदन्त ! (एयाए णं नैगमव्यवहाराण अट्टपयपरूवण-
याए किं पओयणं) नैगम व्यवहारनय समत इस अर्थ पद प्ररूपणता
रूप आनुपूर्वी से क्या प्रयोजन सधता—निकलता—है ।

उत्तर—(एयाए णं नैगमव्यवहाराण अट्टपयपरूवणयाए भङ्गसमु-
क्त्तिणया कज्जइ) इस नैगमव्यवहारनय समत अर्थ पद प्ररूपणतारूप
आनुपूर्वी से भङ्ग समुत्कीर्तनता की जाती है । तात्पर्य यह कि पहिले
जो यह कहा गया है कि अर्थ पद प्ररूपणता में संज्ञा संज्ञि व्यवहार
निहित है । क्यों कि उसी से संज्ञा संज्ञि व्यवहार चलता है । और इस
व्यवहार के होने पर ही भङ्गों का समुत्कीर्तन (उत्पत्ति) हो सकता है ।
अन्यथा नहीं हो सकता है । कारण—संज्ञा—नाम—के विना निर्विषय हुए

હવે આ અર્થ પદ પ્રરૂપણા રૂપ આનુપૂર્વીક પ્રયોજન પ્રકટ કરવા
નિમિત્તે સૂત્રકાર કહે છે કે—“ એયાએ ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન—હે ભગવન ! (એયાએ નૈગમવ્યવહારાણ અટ્ટપયપરૂવણ-
યાએ કિં પઓયણ ?) નૈગમ અને વ્યવહારનય સમત આ અર્થ પદ પ્રરૂપણતા
રૂપ આનુપૂર્વી દ્વારા કયું પ્રયોજન સિદ્ધ થાય છે ?

ઉત્તર—(એયાએ નૈગમવ્યવહારાણ અટ્ટપયપરૂવણયાએ ભંગસમુક્તિણયા
કજ્જઈ) આ નૈગમનય અને વ્યવહારનય સમત અર્થ પદ પ્રરૂપણતા રૂપ
આનુપૂર્વી વડે ભંગસમુત્કીર્તનતા કરાય છે આ કથનનું તાત્પર્ય નાચે પ્રમાણ છે—

પહેલાં એવું કહેવામાં આવ્યું છે કે અર્થ પદ પ્રરૂપણતામાં સંજ્ઞા સંજ્ઞિ
વ્યવહાર ચાલે છે, અને તે વ્યવહારમાં સદ્ભાવ હોય તો જ ભંગોનું
સમુત્કીર્તન (ભંગોની ઉત્પત્તિ) થઈ શકે છે—તેમો અભાવ હોય તો થઈ
શકતું નથી. કારણ કે સંજ્ઞા (નામ) વિના નિર્વિષય થયેલા ભંગો (વિકલ્પો,

મંગલસમુત્કીર્તનતૈવ એતસ્યા નૈગમવ્યવહારસમ્પત્ત્યા અર્થપદપ્રરૂપણતાયાઃ ફલં
બોધ્યમિતિ ॥સૂ. ૭૬॥

અર્થાનોપનિધિવ્યા દ્વિતીયભેદરૂપામર્થપદપ્રરૂપણતાયાઃ ફલધૂતાં મંગલસમુત્કી-
ર્તનતા નિરૂપયતિ-

મૂલ્ય-સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં મંગલસમુક્તિત્તળયા ?
નૈગમવ્યવહારાણં મંગલસમુસમુક્તિત્તળયા અતિથિ આણુપુઁવી૧,
અતિથિ અણાણુપુઁવી૨, અતિથિ અવત્તવ્વણ૩, અતિથિ આણુપુઁવીઓ૪,
અતિથિ અણાણુપુઁવીઓ૫, અતિથિ અવત્તવ્વયાઈ૬, । અહવા-અતિથિ
આણુપુઁવી ય અણાણુપુઁવી ય ૧ । અહવા-અતિથિ આણુપુઁવીય
અણાણુપુઁવીઓ૨ । અહવા અતિથિ આણુપુઁવીઓ ય અણાણુપુઁવીઓ
ય૩ । અહવા-અતિથિ આણુપુઁવીઓ ય અણાણુપુઁવીઓ ય૪ । અહવા-
અતિથિ અણાણુપુઁવી ય અવત્તવ્વણ ય ૫ । અહવા-અતિથિ આણુ-
પુઁવીઓ ય અવત્તવ્વયાઈ ય ૬ । અહવા-અતિથિ આણુપુઁવીઓ ય
અવત્તવ્વણ ય ૭ । અહવા-અતિથિ આણુપુઁવીઓ ય અવત્તવ્વયાઈ
ય ૮ । અહવા-અતિથિ અણાણુપુઁવી ય અવત્તવ્વણ ય ૯ । અહવા
અતિથિ અણાણુપુઁવી ય અવત્તવ્વયાઈ ય ૧૦ । અહવા-અતિથિ
અણાણુપુઁવીઓ ય અવત્તવ્વણ ય ૧૧ । અહવા-અતિથિ અણાણુ-

મંગલો કી પ્રરૂપણા કા હોના અસંભવ હૈ । ફસલિયે મંગલ સમુત્કીર્તનતા
હી ફસ નૈગમ વ્યવહાર સંમત અર્થપદપ્રરૂપણતા કા ફલ હૈ । ફસા
જાનના યાહિયે ॥સૂ. ૭૬॥

ભાગ્યભાગ્યની પ્રરૂપણા ફરવાનું કારણ જ અસંભવિત બની નાય છે તેથી ભાગ્ય-
સમુત્કીર્તનતા જ આ નૈગમવ્યવહારનય સંમત અર્થપદ પ્રરૂપણતાનું ફલ છે
એમ અમરજી નોંધજો ॥સૂ. ૭૬॥

पुन्वीओ य अवत्तव्याइं य १२। अहवा-अत्थि आणुपुन्वी य
 अणानुपुन्वी य अवत्तव्याइं य १। अहवा-अत्थि आणुपुन्वी य
 अणानुपुन्वी य अवत्तव्याइं य २। अहवा-अत्थि आणुपुन्वी य
 अणानुपुन्वीओ य अवत्तव्याइं य ३। अहवा-अत्थि आणुपुन्वी य
 अणानुपुन्वीओ य अवत्तव्याइं य ४। अहवा-अत्थि आणु-
 पुन्वीओ य अणानुपुन्वी य अवत्तव्याइं य ५। अहवा-अत्थि
 आणुपुन्वीओ य अणानुपुन्वी य अवत्तव्याइं य ६। अहवा-अत्थि
 आणुपुन्वीओ य अणानुपुन्वीओ य अवत्तव्याइं य ७। अहवा-अत्थि
 आणुपुन्वीओ य अणानुपुन्वीओ य अवत्तव्याइं य ८ एए अट्ठ
 भंगा। एवं सव्वे वि छव्वीसं भंगा। से तं नेगमववहाराणं
 भंगसमुक्कित्तणया ॥सू० ७७॥

छाया—अथ का सा नैगमव्यवहारयोर्भेदसमुत्कीर्तनता? नैगमव्यवहारयो-
 र्भेदसमुत्कीर्तनता-अस्ति आनुपूर्वी १, अस्ति अनानुपूर्वी २, अस्ति अवक्तव्यकम् ३,
 सन्ति आनुपूर्व्यः ४, सन्ति अनानुपूर्व्यः ५, सन्ति अवक्तव्यकानि ६।

अथवा-स्तः आनुपूर्वी च अनानुपूर्वी च १, अथवा सन्ति आनुपूर्वी च अनानु-
 पूर्व्यश्च २, अथवा सन्ति आनुपूर्व्यश्च अनानुपूर्वी च ३, अथवा सन्ति आनुपूर्व्यश्च
 अनानुपूर्व्यश्च ४, अथवा-स्तः आनुपूर्वी च अवक्तव्यकं च ५, अथवा सन्ति आनु-
 पूर्वी च अवक्तव्यकानि च ६, अथवा सन्ति आनुपूर्व्यश्च अवक्तव्यकं च ७, अथवा
 सन्ति आनुपूर्व्यश्च अवक्तव्यकानि च ८, अथवा-स्तः अनानुपूर्वी च अवक्तव्यकं च ९,
 अथवा सन्ति अनानुपूर्वी च अवक्तव्यकानि च १०, अथवा सन्ति अनानुपूर्व्यश्च
 अवक्तव्यकं च ११, अथवा सन्ति अनानुपूर्व्यश्च अवक्तव्यकानि च १२।

अथवा-सन्ति आनुपूर्वी च अनानुपूर्वी च अवक्तव्यकं च १, अथवा सन्ति
 आनुपूर्वी च अनानुपूर्वी च अवक्तव्यकानि च २, अथवा सन्ति आनुपूर्वी च अनानु-
 पूर्व्यश्च अवक्तव्यकं च ३, अथवा सन्ति आनुपूर्वी च अनानुपूर्व्यश्च अवक्तव्यकानि
 च ४, अथवा सन्ति आनुपूर्व्यश्च अनानुपूर्वी च अवक्तव्यकं च ५, अथवा सन्ति आनु-
 पूर्व्यश्च अनानुपूर्वी च अवक्तव्यकानि च ६, अथवा सन्ति आनुपूर्व्यश्च अनानुपूर्व्यश्च

અવક્તવ્યકં ચ૭, અથવા સન્તિ આનુપૂર્વ્યશ્ચ અનાનુપૂર્વ્યશ્ચ અવક્તવ્યકાનિ ચ૮, એતેઽષ્ટૌ મજ્ઞાઃ । એવં સર્વેઽપિ ષડ્વિંશતિર્મજ્ઞાઃ । સૈષા નૈગમવ્યવહારયોર્મહાસમુત્કીર્તનતા ॥ સૂ૦ ૭૭ ॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

અથ કા સા નૈગમવ્યવહારસમ્મતા મહાસમુત્કીર્તનતા ? ઇતિ શિષ્ય પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—નૈગમવ્યવહારસમ્મતા મહાસમુત્કીર્તનતા એવં વિજ્ઞેયા, તદ્વથા—અસ્તિ આનુપૂર્વી, અસ્તિ અનાનુપૂર્વી, અસ્તિ અવક્તવ્યકમિત્યાદિ । અસ્ય સૂત્રસ્ય વ્યાખ્યા સ્પષ્ટા । અત્રેદં બોધ્યમ્—અગાધનાન્તેન આનુપૂર્વ્યાદિપદત્રયેણ ત્રયો મજ્ઞા, વહુવચ-

અવ સૂત્રકાર ઇસી ભંગ સમુત્કીર્તનતા કા કિં જો અનોપનિધિકી અર્થપદપ્રરૂપણતાની ફલભૂત હૈ નિરૂપણ કરતે હૈ—

“સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં ભંગસમુક્ષિત્તણયા” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં ભંગસમુક્ષિત્તણયા) હે મદન્ત ! નૈગમ વ્યવહારનય સંમત એસી વહ ભંગસમુત્કીર્તનતા કયા હૈ ?

ઉત્તર—(નૈગમવ્યવહારાણં ભંગસમુક્ષિત્તણયા) નૈગમ વ્યવહારનય સંમત વહ ભંગસમુત્કીર્તનતા ઇસ પ્રકાર સે હૈ (અત્થિ આણુપુર્વી) આનુપૂર્વી હૈ (અત્થિ અણાણુપુર્વી) અનાનુપૂર્વી હૈ (અત્થિ અવક્તવ્ય) અવક્તવ્ય હૈ (અત્થિ આણુપુર્વીઓ) આનુપૂર્વીયાં હૈ । (અત્થિ અણાણુપુર્વીઓ) અનાનુપૂર્વીયાં હૈ (અત્થિ અવક્તવ્યયાઈ) અવક્તવ્યક હૈ ઇત્યાદિ । ઇસ સૂત્ર કી વ્યાખ્યા સ્પષ્ટ હૈ । યહાં ઇસ પ્રકાર સે જાનના વાહિયે—કિં જો યે આનુપૂર્વી આદિ ત્રીન પદ એકવચનાન્ત હૈ એન સે

હે સૂત્રકાર અનોપનિધિકી અર્થપદ પ્રરૂપણતાના જે ફલરૂપ છે એવી ભંગ સમુત્કીર્તનતાનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં ભંગસમુક્ષિત્તણયા ?” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં ભંગસમુક્ષિત્તણયા) હે મદન્ત ! નૈગમવ્યવહારનય સંમત એવી તે ભંગસમુત્કીર્તનતાનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(નૈગમવ્યવહારાણં ભંગસમુક્ષિત્તણયા) નૈગમનય અને વ્યવહારનય સંમત તે ભંગસમુત્કીર્તનતા આ પ્રકારની છે (અત્થિ આણુપુર્વી) આનુપૂર્વી છે, (અત્થિ અણાણુપુર્વી) અનાનુપૂર્વી છે, (અત્થિ અવક્તવ્ય) અવક્તવ્ય છે, (અત્થિ આણુપુર્વીઓ) આનુપૂર્વીઓ છે, (અત્થિ અણાણુપુર્વીઓ) અનાનુપૂર્વીઓ છે, (અત્થિ અવક્તવ્યયાઈ) અને અવક્તવ્ય છે, ઇત્યાદિ રૂપ ભંગોની સમુત્કીર્તનતા (ઉત્પત્તિ) સમજવી.

આ સૂત્રની વ્યાખ્યા સ્પષ્ટ છે. અહીં ભંગોની રચના આ પ્રમાણે સમજવી. આનુપૂર્વી આદિના જે ત્રણ પદો એકવચનાન્ત છે, તેમના ત્રણ

નાન્તેન ચ ત્રયો મજ્ઞાઃ, इत्येवमसंयोगपक्षे षड् मज्ज्ञा भवन्ति ६। संयोगपक्षे तु पद-
त्रयस्यास्य त्रयो द्विकसंयोगाः। एकैकस्मिन्स्तु द्विकसंयोगे एकवचन-बहुवचनाभ्यां
चतुर्भङ्ग्याः सद्भावाद् त्रिष्वपि द्विकयोगेषु द्वादश मज्ज्ञाः सम्पद्यन्ते। १२।
त्रिकयोगस्त्वत्र एक एव। तत्र च एकवचनबहुवचनाभ्यामष्टौ मज्ज्ञा भवन्ति।
सर्वेऽप्यष्टौ षड्विंशतिः। २६। मज्ज्ञानां स्थापना चैवम्—

। षड्विंशतिमज्ज्ञानां कोष्ठकमिदम्।

असंयोगे મજ્ઞાઃ ૬	દ્વિકસંયોગે પ્રથમા ચતુર્મજ્ઞી ૧	ત્રિકસંયોગે મજ્ઞાઃ ૮
*આનુપૂર્વી ૧	આનુપૂર્વી-અનાનુપૂર્વી ૧	આનુપૂર્વી-અનાનુપૂર્વી-અવક્તવ્યકઃ ૧
અનાનુપૂર્વી ૨	આનુપૂર્વી-અનાનુપૂર્વી ૨	આનુપૂર્વી-અનાનુપૂર્વી-અવક્તવ્યકઃ ૨
અવક્તવ્યકઃ ૩	આનુપૂર્વી-અનાનુપૂર્વી ૩	આનુપૂર્વી-અનાનુપૂર્વી-અવક્તવ્યકઃ ૩

ત્રીન ભંગ બનતે હૈં ઓર જો આનુપૂર્વી આદિ ત્રીન પદ બહુવચનાન્ત હૈં
उनसे भी ३ भंग बनते हैं। इस प्रकार असंयोग पक्षमें ये छह ६ भंग
हो जाते हैं ६। और संयोग पक्षमें इन त्रिन पदों के द्विसंयोगी भंग ३
होते हैं। इन में एक एक भंग में दो दो का संयोग होने पर एकवचन
और बहुवचन को लेकर चार २ भंग हो जाते हैं इस प्रकार त्रिन भंग
के द्विक संयोगी भंग चार २ होने से ये १२ भंग बन जाते हैं। तथा त्रिक
संयोग में एक वचन और बहुवचन को लेकर ८ भंग बनते हैं। इस प्रकार
सब भंग मिलकर २६ भंग होते हैं। इन भंगोंका क्रम इस प्रकार से है—

આનુપૂર્વી ૧, અનાનુપૂર્વી ૨, અવક્તવ્યક ૩, ये तीन भंग एक वच-
नान्त हैं। आनुपूर्वि १, अनानुपूर्वि २, और अनेक अवक्तव्यक ३,
ये ३ भंग बहुवचनान्त हैं, ऐसे असंयोगी भंग हुए ६। दो के संयोग
से तीनचतुर्भङ्गियां बनती हैं, उनमें प्रथम चतुर्भङ्गी इस प्रकार
से बनती है—आनुपूर्वी अनानुपूर्वी १, आनुपूर्वी अनानुपूर्वि २,

ભાંગા બને છે અને બે આનુપૂર્વી આદિના ત્રણ પદો બહુવચનાન્ત છે
તેમના પણ ત્રણ ભાંગાઓ બને છે. આ રીતે કુલ ૬ અસંયોગી ભાંગાઓ
બને છે. આ ત્રણ પદોના (આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યકના) દ્વિક-
સંયોગી ભાંગા ત્રણ થાય છે પ્રત્યેક ભાંગામાં બન્નેનો સંયોગ થવાથી એક વચન
અને બહુવચનની અપેક્ષાએ પ્રત્યેક પદની સાથે ચાર-ચાર ભાંગા બને છે. આ
રીતે ત્રણ પદોની સાથે કુલ ૧૨ દ્વિકસંયોગી ભાંગા બને છે. ત્રિકસંયોગી
કુલ ૮ ભાંગા બને છે. આ રીતે બધા મળીને ૬+૧૨+૮=૨૬ ભાંગા બને છે.
આ ૨૬ ભાંગાઓનો ક્રમ આ પ્રમાણે સમજવો—(૧) આનુપૂર્વી, (૨)
અનાનુપૂર્વી, (૩) અવક્તવ્યક, આ ત્રણ ભાંગા એકવચનાન્ત છે.

(૧) આનુપૂર્વીઓ, (૨) અનાનુપૂર્વીઓ (૩) અનેક અવક્તવ્યકો, આ
ત્રણ ભાંગા બહુવચનાન્ત છે. એવી રીતે અસંયોગી છ ભાંગા થયા ૬

બહુવચનાન્તા- સ્થયઃ	આનુપૂર્વ્યઃ-અનાનુપૂર્વ્યઃ ૪ દ્વિકસંયોગે દ્વિતીયા ચતુર્ભંગીર	આનુપૂર્વી-અનાનુપૂર્વ્યઃ-અવક્તવ્યકઃ ૪ આનુપૂર્વ્યઃ-અનાનુપૂર્વી-અવક્તવ્યકઃ ૫
આનુપૂર્વ્યઃ ૧	આનુપૂર્વી- અવક્તવ્યકઃ ૧	આનુપૂર્વ્યઃ-અનાનુપૂર્વી-અવક્તવ્યકઃ ૬
અનાનુપૂર્વ્યઃ ૨	આનુપૂર્વી- અવક્તવ્યકઃ ૨	આનુપૂર્વ્યઃ-અનાનુપૂર્વ્યઃ-અવક્તવ્યકઃ ૭
અવક્તવ્યકઃ ૩	આનુપૂર્વ્યઃ- અવક્તવ્યકઃ ૩	આનુપૂર્વ્યઃ-અનાનુપૂર્વ્યઃ-અવક્તવ્યકઃ ૮
અસંયોગે ૬૬	આનુપૂર્વ્યઃ-અવક્તવ્યકઃ ૪	એતે ત્રિકસંયોગે અષ્ટૌ મહાઃ ૮
મહાઃ ૬	દ્વિકસંયોગે તૃતીયા ચતુર્ભંગીર અનાનુપૂર્વી-અવક્તવ્યકઃ ૧ અનાનુપૂર્વી-અવક્તવ્યકઃ ૨ અનાનુપૂર્વ્યઃ-અવક્તવ્યકઃ ૩ અનાનુપૂર્વ્યઃ-અવક્તવ્યકઃ ૪ એતે દ્વિકસંયોગે દ્વાદશ મહાઃ ૧૨	

આનુપૂર્વિયાં અનાનુપૂર્વીર, આનુપૂર્વિયાં અનાનુપૂર્વિયાં ૪ । દ્વિતીય ચતુર્ભંગી
હસ પ્રકાર સે હૈ—

આનુપૂર્વી, અવક્તવ્યક ૧, એક આનુપૂર્વી બહુ અવક્તવ્યક ૨, આનુપૂર્વિયાં
એક અવક્તવ્યક, ૩, આનુપૂર્વિયાં બહુ અવક્તવ્યક ૪ । તૃતીય ચતુર્ભંગી હસ
પ્રકાર સે હૈ—અનાનુપૂર્વી અવક્તવ્યક ૧, અનાનુપૂર્વી બહુ અવક્તવ્યક
૨, અનાનુપૂર્વિયાં એક અવક્તવ્યક ૩ અનેક આનુપૂર્વિયાં અનેક અવક્ત-
વ્યક ૪ । इन तीन चतुर्भंगियोंको मिलानेसे द्विकसंयोगी बारह भंग होते
है १२ । तीन तीनके संयोग से जो आठभंग बनते हैं—वे इस प्रकार
से हैं—एक आनुपूर्वी एक अनानुपूर्वी एक अवक्तव्यक १, एक आनुपूर्वी
एक अनानुपूर्वी અનેક અવક્તવ્યક ૨, એક આનુપૂર્વી અનેક અનાનુ-

એ પદોના સંયોગથી ત્રણ ચતુર્ભંગીઓ બને છે, તેમાં પ્રથમ ચતુર્ભંગી
આ પ્રમાણે બને છે—(૧) આનુપૂર્વી-અનાનુપૂર્વી, (૨) આનુપૂર્વી-અનાનુપૂર્વીઓ,
(૩) આનુપૂર્વીઓ-અનાનુપૂર્વી (૪) આનુપૂર્વીઓ અનાનુપૂર્વીઓ.

બીજી દ્વિકસંયોગી ચતુર્ભંગી આ પ્રમાણે ત્રણ ચતુર્ભંગીઓ બને છે. તેમાં
બને છે—(૧) આનુપૂર્વી-એક અવક્તવ્યક, (૨) આનુપૂર્વી-બહુ અવક્તવ્યકો,
(૩) આનુપૂર્વીઓ-એક અવક્તવ્યક, (૪) આનુપૂર્વીઓ બહુ અવક્તવ્યકો.

ત્રીજી ચતુર્ભંગી આ પ્રમાણે બને છે—(૧) અનાનુપૂર્વી-એક અવક્ત-
વ્યક, (૨) અનાનુપૂર્વી-બહુ અવક્તવ્યકો (૩) અનાનુપૂર્વીઓ-એક અવક્ત-
વ્યક અને (૪) અનાનુપૂર્વીઓ-અનેક અવક્તવ્યકો. આ ત્રણ ચતુર્ભંગીઓને
મેળવવાથી દ્વિકસંયોગી બાર લાંગ બને છે. ૧૨

ત્રણ પદોના સંયોગથી નીચે પ્રમાણે આઠ લાંગા બને છે—(૧) એક
આનુપૂર્વી, એક અનાનુપૂર્વી એક અવક્તવ્યક (૨) એક આનુપૂર્વી, એક
અનાનુપૂર્વી, અનેક અવક્તવ્યક (૩) એક આનુપૂર્વી, અનેક અનાનુપૂર્વીઓ,

एवमेते षड्विंशतिर्भेदा विज्ञेयाः। ननु किमर्थं भङ्गकसमुत्कीर्तनं क्रियते? इति चेदु-
च्यते—इहैकवचनान्तबहुवचनान्तरानुपूर्व्यादिभिस्त्रिभिः पदैरसंयोगपक्षे संयोगपक्षे
च मिलिताः षड्विंशति भेदाः संभवन्ति । तेषु च मध्ये येन केनचिद् भङ्गेन वक्ता

पूर्वियां एक अवक्तव्यક ૩, एक आनुपूर्वी अनेक अनानुपूर्वियां, अनेक
अवक्तव्यક ૪, अनेक आनुपूर्वियां एक अनानुपूर्वी एक अवक्तव्यક ૫,
अनेक आनुपूर्वियां एक अनानुपूर्वी अनेक अवक्तव्यક ૬, अनेक आनु-
पूर्वियां अनेक अनानुपूर्वियां एक अवक्तव्यક ૭, अनेक आनुपूर्वियां
अनेक अनानुपूर्वियां अनेक अवक्तव्यક, ૮, ऐसे त्रिकसंयोगी आठ भंग
होते हैं ८ इस प्रकार ये स्वतन्त्र रूप से विना संयोग के एक वचन
और बहुवचन, को लेकर ६, तथा इन छहों के दो दो के संयोग से
१२, और तीन २ के संयोग से ८ भंग हो जाते हैं। ऐसे सब मिलकर
कुल छहस भंग होते हैं।

શંકા— ભંગોંં કા સમુત્કીર્તન વર્ણન કિસ લિષ ક્રિયા ગયા હૈ?

ઉત્તર—યહાં પર એકવચનાન્ત ઓર બહુવચનાન્ત જો આનુપૂર્વી
આદિ ત્રીન ૨ પદ હૈં કિ જિનકે અસંયોગ પક્ષ સે ૬ ઓર સંયોગ પક્ષમેં
૨૦ હસ તરહ ૨૬ ભંગ બન જાતે હૈં—

એક અવકતવ્યક. (૪) એક આનુપૂર્વી, અનેક અનાનુપૂર્વીઓ, અનેક અવ-
કતવ્યકો (૫) અનેક આનુપૂર્વીઓ, એક અનાનુપૂર્વી, એક અવકતવ્યક.
(૬) અનેક આનુપૂર્વીઓ, એક અનાનુપૂર્વી, અનેક અવકતવ્યકો. (૭)
અનેક આનુપૂર્વીઓ, અનેક અનાનુપૂર્વીઓ, એક અવકતવ્યક. (૮) અનેક
આનુપૂર્વીઓ, અનેક અનાનુપૂર્વીઓ, અનેક અવકતવ્યકો આ રીતે ત્રિક
સંયોગી આઠ ભંગ બને છે. આ રીતે સ્વતંત્ર રૂપે—વિના સંયોગવાળા ૬
ભાંગા એક વચન અને બહુવચનવાળાં પદોથી બને છે. તથા તે છએના
દ્વિકસંયોગથી ૧૨ ભાંગા બને છે, અને ત્રણ ત્રણના સંયોગથી ત્રિકસંયોગી
૮ ભાંગા બને છે. આ રીતે કુલ ભાંગા $૬ \times ૧૨ \times ૮ = ૨૬$ થઈ જાય છે.

પ્રશ્ન—ભંગોનું (ભાંગાઓનું) સમુત્કીર્તન (ઉત્પત્તિ) શા માટે કરવામાં આવ્યું છે?

ઉત્તર—અહીં જે એકવચનાન્ત અને બહુવચનાન્ત જે આનુપૂર્વી, અના-
નુપૂર્વી અને અવકતવ્યક, આ ત્રણ ત્રણ પદો છે તેમના અસંયોગ પક્ષે ૬,
અને સંયોગપક્ષે (દ્વિકસંયોગ અને ત્રિકસંયોગની અપેક્ષાએ) ૨૦ ભાંગા
બને છે. આ રીતે કુલ ૨૬ ભાંગા બને છે, આ સઘળા ભાંગાઓમાંથી વકતા

દ્રવ્યં વિવક્ષતે, તેન મજ્જેન વક્તા વિવક્ષિતદ્રવ્યં વદતુ इति हेतो नैगमव्यवहारनया-
भ्युपगमेन सर्वानपि भङ्गान् प्रतिपादयितु मज्जसमुत्તીर्तनं कृतमिति । सम्प्रति
प्रकृतमुपसंहरन्नाह—सैषा मज्जसमुत्तીर्तनतेति ॥सू० ७७॥

अस्याः प्रयोजनं किम्? इति प्रश्नपूर्वकं कारणं प्रतिपादयितुमाह—

मूलम्—एयाए णं नेगमववहाराण भंगसमुक्कित्तणयाए किं
पयोयणं? एयाए णं नेगमववहाराणं भंगसमुक्कित्तणयाए भंगो-
वदंसणया कौरइ ॥सू० ७८॥

छाया—एतया खलु नैगमव्यवहारयो मज्जसमुत्तીर्तनतया किं प्रयोजनम्?
एतया खलु नैगमव्यवहारयोः मज्जसमुत्तીर्तनतया भङ्गोपदर्शनता क्रियते ॥सू० ७८॥

टीका—शिव्यः पृच्छति—‘एयाए णं’ इत्यादि—एतया नैगमव्यवहारसम्मतया
मज्जसमुत्तીर्तनतया किं प्रयोजनं—फलं किम्? इति । उत्तरयति—एतया नैगमव्यव-

उनके बीच में वक्ता जिस किसी भंग से द्रव्य की विवक्षा करना
चाहता है, वह उस भंग से विवक्षित द्रव्य को कहे इस कारण नैगम
और व्यवहारनय संमत समस्त भी भंगों को कहने के लिये सूत्रकार
ने इन भंगों का समुत्तकीर्तन किया है । (से तं नेगमववहाराणं भंग
समुक्कित्तणया) इस प्रकार यह पूर्व प्रक्रान्त नैगम व्यवहारनय संमत
भंग समुत्तकीर्तनता है । ॥सू० ७७॥

इसका क्या प्रयोजन है इस बात को सूत्रकार स्पष्ट करते हैं

“एयाएणं नेगमववहाराणं भंगसमुक्कित्तणयाए किं पयोयणं” इत्यादि ।

शब्दार्थ— हे भदन्त ! नैगम व्यवहारनय संमत इस भंग समुत्तकी-
र्तनता का क्या प्रयोजन है ?

જે કોઈ ભાંગા (વિવક્ષ)ની અપેક્ષાએ દ્રવ્યની વિવક્ષા (પ્રતિપાદન) કરવા
માગતા હોય, તે ભાંગાની અપેક્ષાએ વિવક્ષિત દ્રવ્યનું પ્રતિપાદન કરે, તે
હેતુને ધ્યાનમાં લઈને નૈગમ અને વ્યવહારનય સંમત સમસ્ત ભાંગાઓનું
કથન કરવાને માટે સૂત્રકારે આ ભાંગાઓનું સમુત્તીર્તન (રચના) કર્યું છે.
(સે તં નૈગમવવહારાણં ભંગસમુક્કિત્તણયા) આ પ્રકારનું નૈગમ અને વ્યવહાર-
નય સંમત પૂર્વોક્ત ભંગ સમુત્તીર્તનતાનું સ્વરૂપ છે. ॥સૂ० ૭૭॥

હવે સૂત્રકાર નૈગમવ્યવહાર નયસંમત ભંગસમુત્તીર્તનતાનું શું પ્રયોજન
છે તે પ્રકટ કરે છે—“એયાએણં નૈગમવવહારાણં ભંગસમુક્કિત્તણયાએ કિં પયોયણં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન—હે ભગવાન! નૈગમવ્યવહાર નયસંમત આ ભંગસમુત્તી-
ર્તનતાનું શું પ્રયોજન છે ?

હારસમ્પત્તયા મજ્ઞસમુત્કીર્તનતયા મજ્ઞોપદર્શનતા ક્રિયતે इति મજ્ઞોપદર્શનતૈવ મજ્ઞ-
સમુત્કીર્તનતાયાઃ પ્રયોજનમિતિ। અયં ભાવઃ—મજ્ઞસમુત્કીર્તનતાયાં મજ્ઞ સમુત્ક્રમ્, મજ્ઞોપદર્શનતાયાં તસ્યૈવ વાચ્યં ઝ્યણુકસ્કન્ધાદિકં વક્ષ્યતે, તદ્ધ મજ્ઞકમૂત્રે સમુ-
ત્કીર્તિતે સત્યેવ વક્તું શક્યતે। વાચકકથનમાત્રેણ વાચ્યકથનસ્ય સર્વથૈવાસમ્ભ-
વાત્, અતઃ મજ્ઞોપદર્શનતૈવ મજ્ઞસમુત્કીર્તનતાયાઃ ફલં વોધ્યમ્।

ઉત્તર—(एयाएण नेगमववहाराणं भंगसमुक्कित्तणयाए भंगोवदंस-
णया कीरइ) નૈગમ વ્યહારનય સંમન હસ ભંગ સમુત્કીર્તનતા સે ભંગો
કો દિશ્વાયા જાતા હૈં ઉનકી પ્રરૂપણા કી જાતી હૈં। ફસલિયે ભંગસમુ-
ત્કીર્તનતા કા ભંગો કો દિશ્વલાના પ્રયોજન હૈં। ફસકા તાત્પર્ય યહ હૈં
ભંગો કી સમુત્કીર્તનતા મેં ભંગો કો કહને વાલા ઉનકી પ્રરૂપણતા કરને
વાલા મૂત્ર કહા ગયા હૈં ઓર ભંગોપદર્શનતા મેં ઉસી કે વાચ્ય ઝ્યણુક
સ્કન્ધઆદિ પ્રદર્શિત ક્રિયે જાવેંગે કહે-જાવેંગે।

સો ઝ્યણુક સ્કન્ધ આદિકોં કા યહ પ્રદર્શનરૂપ કથન જય તક ભંગો
કોદિશ્વાને વાલા સૂત્ર નહીં કહા જાવેંગા-તવ તક નહીં હો સકતા હૈં ઉસી
પ્રદર્શક સૂત્ર કે સમુત્કીર્તન હોનેપર હી વહ વક્તું શક્ય હો સકતા હૈં।
કયોં કિ યહ નિયમ હૈં કિ વાચક સૂત્ર-કે કથન કે વિના વાચ્યરૂપ અર્થ
કા કથન કરના સર્વથા અસંભવ હૈં। ફસલિયે ભંગોપદર્શનતા હી
ભંગસમુત્કીર્તનતા કા ફલ હૈં—એસા જાનના ચાહિયે।

ઉત્તર—(एयाएणं नेगमववहाराणं भंगसमुक्कित्तणयाए भंगोवदंसणया कीरइ)
નૈગમવ્યવહાર નયસંમન આ ભંગસમુત્કીર્તનતા વડે ભંગો (ભાંગાએ) બતા-
વવામાં આવે છે-તેમની પ્રરૂપણા કરવામાં આવે છે તેથી ભાંગાને બતાવવાનું
જ ભંગસમુત્કીર્તનતાનું પ્રયોજન છે આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે-
ભંગોની સમુત્કીર્તનતામાં ભંગોને કહેનારા તેમની પ્રરૂપણા કરનારા-ભંગોને
પ્રકટ કરનારાં સૂત્રે નું કથન કરવામાં આવ્યું છે, અને ભંગોપદર્શનતામાં
તેના જ વાચ્ય એવાં ઝ્યણુક (ત્રિપ્રદેશી-ત્રણ અણુવાળા) સ્કન્ધ આદિ પ્રદર્શિત
કરવામાં આવશે.

જ્યાં સુધી ભંગોને પ્રકટ કરનારું સૂત્ર કહેવામાં ન આવે, ત્યાં સુધી
ત્રિઅણુક સ્કન્ધ અદિકોના પ્રદર્શન રૂપ કથન થઈ શકતું નથી એજ પ્રદર્શક
સૂત્રનું સમુત્કીર્તન થતાં જ તે કથન કરવું શક્ય બને છે, કારણ કે એવો
નિયમ છે કે વાચક સૂત્રનું કથન કર્યા વિના વાચ્યરૂપ અર્થનું કથન કરવાનું
કાર્ય સર્વથા અસંભવિત હોય છે. તેથી ભંગોપદર્શનતા (ભંગોને પ્રકટ
કરના તે) જ ભંગ સમુત્કીર્તનતાના ફલસ્વરૂપ છે એમ સમજવું જોઈએ.

નનુ ભંગોપદર્શનતાયાં વાચ્યસ્ય ડ્યણુકસ્કન્ધાદેઃ કથનકાલે આનુપૂર્વ્યાદિ-
સૂત્રં પુનરપ્યુત્કીર્તયિષ્યતે, તત્કથં પુનર્ભંગસમુત્કીર્તનં ક્રિયતે? इति चेदुच्यते—
यथा हि—

संहिया य पयं चेव, पयत्थो पयविग्गहो ।

चालणा य पसिद्धी य छव्विहं विद्धि लक्खणं ॥१॥

छाया—संहिता च पदं चैव, पदार्थः पदसंग्रहः ।

चालना च पसिद्धिश्च, पद्विधं विद्धि लक्षणम् ॥१॥

इति व्याख्याक्रमे संहिताया व्याख्यानकाले सूत्रंसमुच्चारितमपि पदार्थकथन-
काले पुनरप्यर्थकथनार्थं तदुच्चार्यते, तद्वदत्रापि भङ्गसमुત્કીર્તनतासिद्धस्यैव सूत्र-
स्य भङ्गोपदर्शनतायां वाच्यवाचकभावस्य प्रतिपत्त्यर्थं प्रमङ्गतः पुनरपि समुत्कीर्तनं
करिष्यते न मुख्यतयेति न कश्चिद् दोष इति ॥सू० ७८॥

શંકા—ભંગોપદર્શનતામાં વાચ્ય જો ડ્યણુક સ્કન્ધ આદિ હૈં ઉનકે
કથન કાલ મેં આનુપૂર્વી-આદિ પ્રદર્શક સૂત્ર સૂત્રકાર-ફીર કહેંગે-તો
ફિર યહ કથન કૈસે સંગત હો સકતા કિ પહિલે ભંગસમુત્કીર્તન કિયા
જાતા હૈં બાદ મેં ભંગો પદર્શન ?

ઉત્તર—“ સંહિયા ય પયં ચેવ પયત્થો પયવિગ્ગહો, ચાલણા ય
પસિદ્ધી ય છવ્વિહં વિદ્ધિ લક્ખણં ” હસ પ્રકાર વ્યાખ્યાન કે સમય મેં
સૂત્ર સમુચ્ચારિત હોતા હુઆ મી પદાર્થ કથન કે અવસર પર ઉસકા
પુનઃ મી અર્થપ્રતિપાદન કે લિયે ઉચ્ચારણ કિયા જાતા હૈં । ઉસી પ્રકાર
સે યહાં પર મી ભંગસમુત્કીર્તનતા સે સિદ્ધ હુઅ હી સૂત્ર કા ભંગોપદ-
ર્શનતા મેં વાચ્યવાચક ભાવ કી સુખપૂર્વક પ્રતિપત્તિ કે નિમિત્ત

શંકા-ભંગોપદર્શનતામાં વાચ્ય જે ત્રિઆણુક આદિ સ્કન્ધ છે તેમના
કથનકાળે (તેમનું કથન કરતી વખતે) આનુપૂર્વી આદિ પ્રદર્શક સૂત્ર સૂત્રકાર
ફરી કહેશે તો આ કથન કેવી રીતે સંગત બની શકશે કે પહેલાં ભંગસ-
મુત્કીર્તન કરાય છે અને ત્યાર બાદ ભંગોપદર્શન કરાય છે ?

ઉત્તર—“ સંહિયા ય પયં ચેવ પયત્થો પયવિગ્ગહો । ચાલણા ય પસિદ્ધી ય
છવ્વિહં વિદ્ધિ લક્ખણં ” આ સૂત્રમાં કહ્યા પ્રમાણેના વ્યાખ્યાનેના ક્રમ છે.
જેમ સંહિતાના વ્યાખ્યાનકાળે સૂત્ર સમુચ્ચારિત થયેલું હોવા છતાં પણ
પદાર્થકથનને અવસરે અર્થનું પ્રતિપાદન કરવા નિમિત્તે ફરીથી પણ તેનું
ઉચ્ચારણ કરવામાં આવે છે, એજ પ્રમાણે અહીં પણ ભંગસમુત્કીર્તનતાથી
સિદ્ધ થયેલા સૂત્રનું જ ભંગોપદર્શનતામાં વાચ્યવાચક ભાવની સુખપૂર્વક પ્રતિ-

અથ ભંગોપદર્શનતાં પ્રતિપાદયિતુમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં નેગમવવહારાણં ભંગોવદંસણયા? નેગમ-
વવહારાણં ભંગોવદંસણયા—તિપ્પણસિણ આણુપુઠ્ઠવી ૧, પરમાણુ-
પોગ્ગલે અણાણુપુઠ્ઠવી ૨, દુપ્પણસિણ અવત્તવ્વણ ૩। અહવા તિપ્પ-
ણસિયા આણુપુઠ્ઠવીઓ ૧, પરમાણુપોગ્ગલા અણાણુપુઠ્ઠવીઓ ૨, દુપ્પ-
ણસિયા અવત્તવ્વયાઈ ૩।

અહવા તિપ્પણસિણ ૧ય પરમાણુપુગ્ગલે ૨ય આણુપુઠ્ઠવી ૩ય
અણાણુપુઠ્ઠવી ૪ય ચઉભંગો। અહવા—તિપ્પણસિણ ૧ય દુપ્પણસિણ ૨ય
આણુપુઠ્ઠવી ૩ય અવત્તવ્વણ ૪ય ચઉભંગો ૮। અહવા પરમાણુપોગ્ગલે

પ્રસંગવશ ફિર સે મી સમુત્કીર્તન ક્રિયા જાવેગા મુખ્ય રૂપ સે નહીં।
અતઃ ઉસ મેં કોઈ દોષ નહીં હૈ।

ભાવાર્થ—ભંગસમુત્કીર્તનતા કા કયા પ્રયોજન હૈ યહ ઘાત સૂત્રકાર
ને હસ સૂત્ર દ્વારા સ્પષ્ટ કી હૈ। વે કહ રહે હૈં કિ ભંગસમુત્કીર્તનતા કા
ફલ ભંગોપદર્શનતા હૈ। ભંગસમુત્કીર્તનતા મેં ભંગો કા નામ નિર્દેશ
ક્રિયા જાતા હૈ। તથા ભંગ કિતને હોતે હૈં, યહ પ્રકટ ક્રિયા જાતા હૈ।
ભંગોપદર્શનતા મેં જો ભંગ કહે ગયે હૈં ઉનકા વાચ્યાર્થ ‘યહ હૈ’ યહ પ્રકટ
ક્રિયા જાતા હૈ। હસ પ્રકર ભંગસમુત્કીર્તનતા મેં કથિત ભંગો કા ભંગોપ-
દર્શનતા-ભંગો કા દિશાને કા વાચ્યાર્થ યહ હૈ યહ પ્રકટ ક્રિયા ગયા હોને સે
ભંગસમુત્કીર્તનતા કા ફલ ભંગોપદર્શનતા હૈ યહ ઘાત ચન જાતી હૈ।મૂ૦૭૮।

પત્તિ (અહણુ-બોધ) કરાવવાને માટે પ્રસંગવશ ફરીથી પણ સમુત્કીર્તન
કરવામાં આવશે—મુખ્ય રૂપે નહીં તેથી તેમા કોઈ દોષની સંભાવના નથી.

ભાવાર્થ—ભંગસમુત્કીર્તનતાનું શું પ્રયોજન છે, એ વાતનું સૂત્રકારે
આ સૂત્ર દ્વારા સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે—તેમણે એ વાત બહીં સમજાવી છે કે
ભંગસમુત્કીર્તનતાનું ફલ ભંગોપદર્શનતા છે. ભંગસમુત્કીર્તનતામાં ભંગોનો
વાચ્યાર્થ પ્રકટ કરવામાં આવે છે. આ પ્રકારે ભંગસમુત્કીર્તનતામાં જે જે
ભંગો કહેવામાં આવ્યા હોય તે તે ભંગોનો વાચ્યાર્થ પ્રકટ કરવાનું કાર્ય
ભંગોપદર્શનતામાં કરવામાં આવે છે તે કારણે ભંગસમુત્કીર્તનતાનું ફલ
ભંગોપદર્શનતા છે, એ વાત સિદ્ધ થઈ ગય છે. ॥મૂ૦૭૮।

य दुष्पसि ए य अणुपुष्पी य अवत्तव्व ए य चउभंगो १२। अहवा
 तिप्पसि ए य परमाणुपोग्गले य दुष्पसि ए य आणुपुष्पी य
 अणुपुष्पी य अवत्तव्व ए य १। अहवा तिप्पसि ए य परमाणु-
 पोग्गले य दुष्पसिया य आणुपुष्पी य अणुपुष्पी य अवत्त-
 व्वयाइं च २। अहवा तिप्पसि ए य परमाणुपुग्गला य दुष्पसि ए
 य आणुपुष्पी य अणुपुष्पीओ य अवत्तव्व ए य ३। अहवा
 तिप्पसि ए य परमाणुपोग्गला य दुष्पसिया य आणुपुष्पी य
 अणुपुष्पीओ य अवत्तव्वयाइं च ४। अहवा तिप्पसिया य पर-
 माणुपोग्गले य दुष्पसि ए य आणुपुष्पीओ य अणुपुष्पी य अव-
 त्तव्व ए य ५। अहवा तिप्पसिया य परमाणुपोग्गले य दुष्पसिया
 य आणुपुष्पीओ य अणुपुष्पी य अवत्तव्वयाइं च ६। अहवा-
 तिप्पसिया य परमाणुपोग्गला य दुष्पसि ए य आणुपुष्पीओ य
 अणुपुष्पीओ य अवत्तव्व ए य ७। अहवा—तिप्पसिया य परमा-
 णुपोग्गला य दुष्पसिया य आणुपुष्पीओ य अणुपुष्पीओ य
 अवत्तव्वयाइं च ८। से तं नेगमववहारणं भंगोवदंसणया॥सू० ७९॥

छाया—अथ का सा नैगमव्यवहारयोः भङ्गोपदर्शनता ? नैगमव्यवहारयोः
 भङ्गोपदर्शनता—त्रिप्रदेशिक आनुपूर्वी १ परमाणुपुद्गलः अनानुपूर्वी २
 द्विप्रदेशिकः अवक्तव्यश्च ३, अथवा त्रिप्रदेशिका आनुपूर्व्यः परमाणुपुद्गला
 अनानुपूर्व्यः द्विप्रदेशिकाः अवक्तव्यकानि ३। अथवा त्रिप्रदेशिकश्च परमाणुपुद्गलश्च
 आनुपूर्वी च अनानुपूर्वी च ४ चत्वारो भङ्गाः, अथवा त्रिप्रदेशिकश्च
 द्विप्रदेशिकश्च आनुपूर्वी च अवक्तव्यकं च ४, चत्वारो भङ्गाः, अथवा परमाणु-
 पुद्गलश्च, द्विप्रदेशिकश्च अनानुपूर्वी च अवक्तव्यकं च ४ चत्वारो भङ्गाः १२। अथवा
 त्रिप्रदेशिकश्च परमाणुपुद्गलश्च द्विप्रदेशिकश्च आनुपूर्वी च अनानुपूर्वीश्च य
 अवक्तव्यकं च १, अथवा त्रिप्रदेशिकश्च परमाणुपुद्गलश्च द्विप्रदेशिकाश्च आनुपूर्वी च
 अनानुपूर्वी च अवक्तव्यकानि च २, अथवा त्रिप्रदेशिकश्च परमाणुपुद्गलाश्च द्विप्रदे-

શિક્ષ આનુપૂર્વીં ચ અનાનુપૂર્વ્યશ્ચ અવક્તવ્યકં ચ ૩, અથવા ત્રિપ્રદેશિકશ્ચ પરમાણુ-
પુદ્ગલાશ્ચ દ્વિપ્રદેશિકાશ્ચ આનુપૂર્વીં ચ અનાનુપૂર્વ્યશ્ચ અવક્તવ્યકાનિ ચ ૪, અથવા
ત્રિપ્રદેશિકાશ્ચ પરમાણુપુદ્ગલશ્ચ દ્વિપ્રદેશિકશ્ચ આનુપૂર્વ્યશ્ચ અનાનુપૂર્વીં ચ અવક્તવ્યકં
ચ ૫, અથવા ત્રિપ્રદેશિકાશ્ચ પરમાણુપુદ્ગલશ્ચ દ્વિપ્રદેશિકાશ્ચ આનુપૂર્વ્યશ્ચ અનાનુ-
પૂર્વીં ચ અવક્તવ્યકાનિ ચ ૬। અથવા ત્રિપ્રદેશિકાશ્ચ પરમાણુપુદ્ગલાશ્ચ દ્વિપ્રદેશિકશ્ચ
આનુપૂર્વ્યશ્ચ અનાનુપૂર્વ્યશ્ચ અવક્તવ્યકં ચ ૭, અથવા ત્રિપ્રદેશિકાશ્ચ પરમાણુપુદ્ગલાશ્ચ
દ્વિપ્રદેશિકાશ્ચ આનુપૂર્વ્યશ્ચ અનાનુપૂર્વ્યશ્ચ અવક્તવ્યકાનિ ચ ૮ સૈવા નૈગમવ્યવહાર-
યોઃ મજ્ઞોપદર્શનતા ॥ સુ. ૭૯ ॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘ સે કિં તં ’ इत्यादि। अथ का सा नैगमव्यवहा-
सम्पत्ता मज्ज्ञोपदर्शनता ? इति। उत्तरयति—नैगमव्यवहारसम्पत्ता मज्ज्ञोपदर्शनता
एवं विज्ञेया, तथाहि त्रिप्रदेशिक आनुपूर्वीं—त्रिप्रदेशिकोऽर्थ आनुपूर्वीत्युच्यते—
त्रिप्रदेशिकस्कन्धलक्षणेनार्थेनानुपूर्वीति प्रथमो मज्ज्ञको निष्पद्यते इत्यर्थः १। पर-

અવ સૂત્રકાર उसी भंगोपदर्शनता का प्रतिपादन करते हैं—

“સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં” इत्यादि।

શબ્દાર્થ— (સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં ભંગોવદંસણયા ?) હે મદન્ત
નૈગમ વ્યવહારનય સંમત વહ ભંગોપદર્શનતા કયા હૈ ? (નૈગમવ્યવહાર-
ણં ભંગોવદંસણયા)

ઉત્તર— નૈગમવ્યવહારનય સંમત વહ ભંગોપદર્શનતા इस प्रकार
से हैं। (तिप्पएसिए आणुपुव्वी १ परमाणुपुगले अणणुपुव्वी २,
दुप्पएसिये अवत्तव्वए ३) त्रिप्रदेशिकस्कंधरूप पदार्थ आनुपूर्वी इस
शब्द का वाच्यार्थ है—अर्थात् तीन प्रदेश वाला पदार्थ आनुपूर्वी इस
नाम से कहा जाता है इसलिए त्रिप्रदेशिक स्कंध रूप अर्थ से आनुपूर्वी

હવે સૂત્રકાર એજ ભંગોપદર્શનતાનું પ્રતિપાદન કરે છે—

“ સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં ” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન—(સે કિં તં નૈગમવ્યવહારાણં ભંગોવદંસણયા ?) હે ભગવન્ !
નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત તે ભંગોપદર્શનતાનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(નૈગમવ્યવહારાણં ભંગોવદંસણયા) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત તે
ભંગોપદર્શનતાનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે—(तिप्पएसिए आणुपुव्वी १, परमा-
णुपुगले अणणुपुव्वी २, दुप्पएसिये अवत्तव्वए ३,) त्रिप्रदेशिक स्कंध इय
पदार्थ आनुपूर्वी शब्देनो वाच्यार्थ છે. એટલે કે ત્રણ પ્રદેશવાળા સ્કંધ રૂપ
પદાર્થને ‘ આનુપૂર્વી ’ આ નામે ઓળખાય છે. તેથી ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ રૂપ
અર્થ (પદાર્થ) વડે ‘ આનુપૂર્વી ’ આ પ્રથમ ભંગ અને છે. પરમાણુ પુદ્ગલ

માણુપુદ્ગલઃ અનાનુપૂર્વી પરમાણુપુદ્ગલલક્ષણોઽર્થઃ અનાનુપૂર્વીત્યુચ્યતે, ઇતિ દ્વિતીયો મજ્ઞઃ । દ્વિપ્રદેશિકઃ અવક્તવ્યકમ્—દ્વિપ્રદેશિકસ્કન્ધલક્ષણોઽર્થોઽવક્તવ્યકમુચ્યતે । ઇતિ તૃતીયો મજ્ઞઃ ૩ । એકવચનપક્ષે ત્રયો મજ્ઞા ઉક્તાઃ ૩ । એવં બહવસ્ત્રિપ્રદેશિકસ્કન્ધલક્ષણા અર્થા આનુપૂર્વ્યઃ, વહવઃ પરમાણુપુદ્ગલરૂપા અર્થા અનાનુપૂર્વ્યઃ વહવો દ્વિપ્રદેશિકસ્કન્ધરૂપા અર્થા અવક્તવ્યકાનિ । ઇતિ બહુવચનપક્ષે ત્રયો મજ્ઞાઃ ૬ । ઇત્યમસંયોગપક્ષે ષણ્ણાં મજ્ઞાનામર્થકથનં બોધ્યમ્ । એવં સંયોગપક્ષે પ્રથમદ્વિક-

યહ પ્રથમ ભંગ બનતા હૈ । પરમાણુપુદ્ગલ અનાનુપૂર્વી અર્થાત્ પરમાણુ પુદ્ગલ રૂપ અર્થ અનાનુપૂર્વી કહલાતા હૈ—હસલિયે પુદ્ગલ પરમાણુ અર્થ સે અનાનુપૂર્વી યહ દ્વિતીય ભંગ બનતા હૈ । દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ અવક્તવ્યક હસ શબ્દ કા વાચ્યાર્થ હૈ—અર્થાત્ દ્વિપ્રદેશવાલા પદાર્થ અવક્તવ્યક હસ નામ સે કહા જાતા હૈ હસલિયે વહ અવક્તવ્યક કહલાતા હૈ । યહ તીસરાભંગ હૈ યે ૩ ભંગ એક વચન પક્ષ સે કહે હૈ । (અહવા તિપ્પ-એસિયા આણુપુઁવીઓ ૧, પરમાણુપોગલા અણાણુપુઁવીઓ ૨, દુપ્પએસિયા અવક્તવ્વયાઈ ૩,) હસી પ્રકાર બહુત ત્રિપ્રદેશિક સ્કન્ધરૂપ પદાર્થ આનુપૂર્વીયાં હૈ । બહુત ૧ પરમાણુ પુદ્ગલ રૂપ પદાર્થ અનાનુપૂર્વીયાં હૈ । બહુતદ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ રૂપ પદાર્થ બહુત અવક્તવ્યક હૈ । હસ પ્રકાર બહુવચન પક્ષમ્ યે ૩ ત્રીન ભંગ હૈ । હસ પ્રકાર સે અસંયોગ પક્ષ મ્ ઉક્ત ૬ ભંગો કા યહ અર્થ

અનાનુપૂર્વી ૩૫ છે—એટલે કે પરમાણુ પુદ્ગલ ૩૫ અર્થ (પદાર્થ) ને અનાનુ-પૂર્વી કહે છે. તેથી પુદ્ગલપરમાણુ ૩૫ પદાર્થથી “અનાનુપૂર્વી” આ નામનો ખીજો ભંગ (ભાંગો) બને છે દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ ‘અવક્તવ્યક’ ૩૫ શબ્દનો વાચ્યાર્થ છે. (દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ આનુપૂર્વી ૩૫ પક્ષ વ્યક્ત થઈ શકતો નથી અને અનાનુપૂર્વી ૩૫ પક્ષ વ્યક્ત થઈ શકતો નથી, તે કારણે તેને અવક્તવ્યક કહ્યો છે) એટલે કે દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધને “અવક્તવ્યક” આ નામે ઓળખવામાં આવે છે, તે કારણે તેને ‘અવક્તવ્યક’ આ નામના ત્રીજા ભંગ ૩૫ ગણાવ્યો છે આ ત્રણે ભંગ એકવચનાન્ત પદની અપેક્ષાએ બનાવવામાં આવ્યા છે.

(અહવા—તિપ્પએસિયા આણુપુઁવીઓ ૧, પરમાણુપોગલા અણાણુપુઁવીઓ ૨, દુપ્પએસિયા અવક્તવ્વયાઈ ૩,) એજ પ્રમાણે ઘણા ત્રિપ્રદેશિક સ્કન્ધ ૩૫ પદાર્થ આનુપૂર્વીઓ ૩૫ છે, અને ઘણા પરમાણુ પુદ્ગલ ૩૫ પદાર્થો અનાનુપૂર્વીઓ ૩૫ છે, અને ઘણા દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ પદાર્થો ઘણા અવક્તવ્યક ૩૫ છે. આ રીતે બહુવચન પક્ષમાં આ ત્રણ ભાંગો બને છે આ પ્રકારનું અસંયોગ પક્ષમાં ભાંગાઓનું કથન સમજવું એટલે કે અસંયોગી કુલ ૬ ભાંગો બને

સંયોગેઽપિ ત્રિપ્રદેશિકઃ સ્કન્ધઃ પરમાણુપુદ્ગલશ્ચાનુપૂર્વ્યનાનુપૂર્વીત્વેનોચ્યતે । એત-
દેવ દર્શયતિ-અથવા ત્રિપ્રદેશિકશ્ચ પરમાણુપુદ્ગલશ્ચ આનુપૂર્વીચ અનાનુપૂર્વી ચ
ચત્વારો મજ્ઞાઃ ૪ । અયં ભાવઃ-યદા ત્રિપ્રદેશિકસ્કન્ધઃ પરમાણુપુદ્ગલશ્ચ પ્રતિ-
પાદયિતુમશીષ્ટો ભવતિ, તદા 'અતિ આણુપુર્વી ચ અણાણુપુર્વી ચ' હત્યેવં મજ્ઞો
નિષ્પદ્યતે । એવમન્યેઽપિ ત્રયો મજ્ઞા અર્થકથનપુરસ્સરા વક્તવ્યાઃ । इत्थं प्रथम-

કથન જનનાં चाहिये । संयोग पक्षमें-एकवचन और बहुवचन संबन्धी
प्रथम और द्वितीय भंग को संयुक्त करने पर त्रिप्रदेशिक- एक स्कंध
एक आनुपूर्वी और एक परमाणुपुद्गल एक अनानुपूर्वी का
वाच्यार्थ जानना चाहिये । यही बात (अहवा तिप्पसिए य परमाणुपुग्गले
य आणुपुर्वी य अणाणुपुर्वी य चउभंगो) इन पदों द्वारा स्पष्ट की गई
है । यह प्रथम चतुर्भंगी का प्रथम भंग है । “आनुपूर्वी अनानु-
पूर्व्यः” इस द्वितीय भंग में त्रिप्रदेश वाला १, एक स्कंध और एक
प्रदेश वाले अनेक पुद्गलपरमाणु वाच्यार्थरूप से विवक्षित हुए हैं ।
“आनुपूर्व्यः अनानुपूर्वी”, इस तृतीय भंग में तीन आदि प्रदेश वाले
बहुत स्कंध और १ एक प्रदेशवाला १ एक पुद्गलपरमाणु विवक्षित हुआ
है । “आनुपूर्व्यः अनानुपूर्व्यः” इस चतुर्थ भंग में अनेक त्र्यादि प्रदेश
वाले स्कंध और अनेक एक प्रदेश वाले पुद्गल परमाणु वाच्यार्थरूप से
विवक्षित हुए हैं । इस प्रकार से यह दो भंगों के संयोग से उत्पन्न हुई

છે, એમ સમજવું સંયોગપક્ષમાં એકવચન અને બહુવચન સંબંધી પડેલા
અને બીજા ભાંગાને સંયુક્ત કરવાથી ત્રિપ્રદેશિક એક સ્કંધ એક આનુપૂર્વી
૩૫ અને એક પરમાણુપુદ્ગલ એક અનાનુપૂર્વીના વાચ્યાર્થ ૩૫ સમજવો
જોઈએ એજ વાત “ અહવા તિપ્પસિએ ચ પરમાણુપુગ્ગલે ચ આણુપુર્વી ચ
અણાણુપુર્વી ચ ચઉભંગો ” આ સૂત્રપાઠ દ્વારા સ્પષ્ટ કરવામાં આવી છે. આ
પહેલી ચતુર્ભંગીને પહેલો ભાંગો છે. “ આનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વ્યઃ ” આ બીજા
ભાંગામાં ત્રિપ્રદેશવાળો એક સ્કંધ અને એક પ્રદેશવાળા અનેક પુદ્ગલપર-
માણુ વાચ્યાર્થ ૩૫ વિવક્ષિત થયા છે. “ આનુપૂર્વ્યઃ અનાનુપૂર્વી ” આ ત્રીજા
ભાંગામાં ત્રણ આદિ પ્રદેશવાળા ઘણા સ્કંધો અને એક પ્રદેશવાળું એક
પુદ્ગલ પરમાણુ વિવક્ષિત થયેલ છે. “ આનુપૂર્વ્યઃ અનાનુપૂર્વ્યઃ ” આ ચોથા
ભાંગામાં અનેક ત્રિપ્રદેશી આદિ સ્કંધો અને અનેક એક પ્રદેશવાળા પુદ્ગ-
લપરમાણુ વાચ્યાર્થ ૩૫ વિવક્ષિત થયા છે. આ પ્રકારની બે ભંગો
(ભાંગાઓના) ના સંયોગથી ઉત્પન્ન થયેલી આ પહેલી ચતુર્ભંગી છે. તેમાં

નનુ-આનુપૂર્વીદિપદાનાં ડ્યણુકસ્કન્ધાદિકોડ્યર્થઃ અર્થપદપ્રરૂપણતાલક્ષણે પ્રથમદ્વારે ઉક્ત એવ તત્કિમનેન પુનરુક્તેન? इति चेत्, उच्यते-तत्र पदार्थमात्रमुक्तम्, इह तु तेषामेवानुपૂર્વીદિपદાનાં મજ્જકરચના સમાદિષ્ટાનામર્થઃ પ્રોચ્યતે इति नास्ति कश्चिद् दोषः। यद्वा-नयमतवैचित्र्यप्रदर्शनार्थं वा पुनरर्थोपदर्शनं कृतमिति नास्ति कश्चिद् दोष इत्यलमधिकोक्त्या। प्रकृतमुपसंहरन्नाह-‘से तं’ इत्यादि। सैषा नैगमव्यवहारसम्मतता भङ्गोपदर्शनतेति ॥ सू० ७९ ॥

શંકા—હન આનુપૂર્વી આદિ પદોં કા ડ્યણુક આદિ રૂપ વાચ્યાર્થ અર્થ પદ પ્રરૂપણતા રૂપ પ્રથમ દ્વાર મેં કહ હી દિયા ગયા હૈ। ફિર હસ પુનરુક્ત કથન સે કયા લાભ ?

ઉત્તર—અર્થપદપ્રરૂપણતા મેં પદાર્થમાત્ર કહા ગયા હૈ—તબકિ યહાં પર ડન્હી આનુપૂર્વી આદિ પદોંકા કી જો અંગરચના દ્વારા સ્પષ્ટ કિયે ગયે હૈં અર્થ કહા ગયા હૈ। અતઃ—યહાં પુનરુક્તિ દોષ નહીં હૈ। અથવા નય મત કી વિચિત્રતા દિલ્લલને કે લિયે પુનઃઅર્થ કથન કિયા ગયા હૈ। હસ પ્રકાર યહ કથન સર્વથા નિર્દોષ હૈ। હસ વિષય મેં અષ અધિક કયા કહેં। (સે તં નેગમવ્યવહારાણં અંગોવદંસણયા) હસ પ્રકાર સે નૈગમ વ્યવહારનય સંમત યહ અંગોપદર્શનતા હૈ

ભાવાર્થ—અંગસમુત્કીર્તનતા દ્વારા નિર્દિષ્ટ હુઅ અંગો કા હસ અંગોપદર્શનતા મેં અર્થ કા કથન કિયા જાતા હૈ। હનકા કૌનર વાચ્યાર્થ હૈ યહ વાત

શંકા—આ આનુપૂર્વી આદિ પદોનો ત્રિઅણુક આદિ રૂપ વાચ્યાર્થ અર્થપદ પ્રરૂપણતા રૂપ પહેલા દ્વારમાં કહી દેવામાં આવ્યો છે. છતાં અહીં તેનું ફરીથી કથન શા માટે કરવામાં આવ્યું છે ?

ઉત્તર—અર્થપદપ્રરૂપણતામાં માત્ર પદાર્થનું જ પ્રતિપાદન કરાયું છે. પરંતુ અહીં તે અંગરચના દ્વારા સ્પષ્ટ કરાયેલા એજ આનુપૂર્વી આદિ પદોનો અર્થ કહેવામાં આવ્યો છે તેથી અહીં પુનરુક્તિદોષનો સંભવ રહેતો નથી અથવા નયમતની વિચિત્રતા બતાવવાને માટે અર્થનું ફરીથી કથન કરવામાં આવ્યું છે આ રીતે આ કથન બિલકુલ નિર્દોષ જ છે આ વિષયમાં હવે અધિક કહેવાની જરૂર રહેતી નથી. (સે તં નેગમવ્યવહારાણં અંગોવદંસણયા) આ પ્રકારની નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત આ અંગોપદર્શનતા છે.

ભાવાર્થ—અંગસમુત્કીર્તનતા દ્વારા નિર્દિષ્ટ થયેલા અંગોના અર્થનું કથન આ અંગોપદર્શનતામાં કરવામાં આવ્યું છે તેમનો કયો કયો વાચ્યાર્થ થાય છે એ વાત બાખ્યામાં સ્પષ્ટ કરવામાં આવી છે. અર્થપદપ્રરૂપણતામાં

अथ क्रमप्राप्तं समवतारं प्ररूपयति-

मूलम्-से किं तं समोयारे? समोयारे-नेगमववहाराणं
आणुपुवीदवाइं कहिं समोयरंति? किं आणुपुवीदवेहिं समोयरंति?
अणाणुपुवीदवेहिं समोयरंति? अवत्तवयदवेहिं समोयरंति?
नेगमववहाराणं आणुपुवीदवाइं अणाणुपुवीदवेहिं समोयरंति
नो आणुपुवीदवेहिं समोयरंति णो अवत्तवयदवेहिं
समोयरंति । नेगमववहाराणं अणाणुपुवीदवाइं कहिं
समोयरंति? किं आणुपुवीदवेहिं समोयरंति? अणाणुपुवी
दवेहिं समोयरंति? अवत्तवयदवेहिं समोयरंति?, नो आणु-
पुवीदवेहिं समोयरंति अणाणुपुवीदवेहिं समोयरंति, नो अव-
त्तवयदवेहिं समोयरंति । नेगमववहाराणं अवत्तवयदवाइं कहिं
समोयरंति? किं आणुपुवीदवेहिं समोयरंति? अणाणुपुवीदवेहिं
समोयरंति? अवत्तवयदवेहिं समोयरंति? नो आणुपुवीदवेहिं
समोयरंति, णो अणाणुपुवीदवेहिं समोयरंति अवत्तवयदवेहिं
समोयरंति । से तं समोयारे ॥सू०८०॥

छाया—अथ कोऽसौ समवतारः? समवतारः-नैगमव्यवहारयोः आनुपूर्वी-
द्रव्याणि कुत्र समवतरन्ति?, किम् आनुपूर्वीद्रव्येषु समवतरन्ति? अनानुपूर्वीद्रव्येषु
समवतरन्ति? अवक्तव्यकद्रव्येषु समवतरन्ति? नैगमव्यवहारयोः आनुपूर्वीद्रव्याणि
आनुपूर्वीद्रव्येषु समवतरन्ति, नो अनानुपूर्वीद्रव्येषु समवतरन्ति, नो अवक्तव्यक-
द्रव्येषु समवतरन्ति । नैगमव्यवहारयोः अनानुपूर्वीद्रव्याणि कुत्र समवतरन्ति?

व्याख्या में स्पष्ट की गई है । अर्थपद प्ररूपणता में केवल अर्थपदरूप पदार्थ
का कथन है-तब कि इसमें भिन्न २ रूपसे कथित भंगोका अर्थ है ।
इसलिए पुनरुक्ति दोष के लिये यहां स्थान नहीं है । सू० ७९॥

तो केवल अर्थपद रूप पदार्थानुं न कथन थयुं छे, परन्तु ल'गोपददर्शनतामां
तो भिन्न भिन्न रूपे कथित ल'गोना अर्थानुं कथन थयुं छे तेथी अह्मी
पुनरुक्ति दोषनो संभव नथी. ॥ सू०७९॥

કિમ્ આનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ ? અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ ? અવક્તવ્યક દ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ ? નો આનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ, અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ, નો અવક્તવ્યકદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ । નૈગમવ્યવહારયોઃ અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ કુત્ર સમવતરન્તિ ? કિમ્ આનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ ? અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ ? અવક્તવ્યકદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ ? નો આનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ, નો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ, અવક્તવ્યકદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ । સ ઇષ સમવતારઃ ॥મૂ૦૮૦॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

અથ કોઽસૌ સમવતારઃ ? ઇતિ શિષ્ય પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—સમવતારઃ—સમવતરણં સમવતારઃ=સમાવેશઃ તેપામેવાનુપૂર્વીદ્રિદ્રવ્યાણાં સ્વસ્થાનપરસ્થાનાન્તર્ભાવચિન્તનપ્રકારઃ, સ એવં વિજ્ઞેયઃ—તથા—નૈગમવ્યવહારયોઃ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કુત્ર સમવતરન્તિ ?=નૈગમવ્યવહારસમ્યક્તાનિ આનુપૂર્વી દ્રવ્યાણિ કુત્ર સમાવિશન્તિ ? કિમ્ આનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ ? કિમનાનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ ? કિમ્ અવક્તવ્યક દ્રવ્યેષુ ?

અવ સૂત્રકાર સમવતાર કી પ્રસ્થપના કરતે હૈ—

“સે કિં તં સમોયારે” ઇત્યાદિ ।

(સે કિં તં સમોયારે) હે મદંત ! પૂર્વ પ્રક્રાન્ત સમવતાર કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(સમોયારે) પૂર્વ પ્રક્રાન્ત સમવતાર કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈ—સમવતાર કા તાત્પર્ય સમાવેશ હૈ—અર્થાત્ અનેક આનુપૂર્વી આદિ જો દ્રવ્ય હૈંં ઇનકા અન્તર્ભાવ સ્વસ્થાન મેં હોતા હૈંં યા પરસ્થાન મેં હોતા હૈંં હસ પ્રકાર કે ચિન્તન પ્રકાર કા—વિચાર કા જો ઉત્તર હૈંં યહી સમાવેશ—યા સમવતાર હૈંં । યહ વિચાર હસ પ્રકાર સે હોતા હૈંં કિં—(નૈગમવ્યવહારાણં આણુપુન્વી દ્રવ્યાઈ—કહિંં સમોયરંતિ, કિં આણુપુન્વી દ્રવ્યેઈ સમોયરંતિ અણાણુપુન્વી દ્રવ્યેઈ સમોયરંતિ ?)

હવે સૂત્રકાર સમવતારની પ્રશ્નપૂછા કરે છે—

“સે કિં તં સમોયારે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સમોયારે ?) હે ભગવન્ ! પૂર્વ પ્રસ્તુત સમવતારનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(સમોયારે) સમવતારનું સ્વરૂપ નીચે પ્રમાણે છે—સમવતાર એટલે સમાવેશ એટલે કે અનેક આનુપૂર્વી આદિ જે દ્રવ્યો છે તેમનો અંતર્ભાવ સ્વસ્થાનમાં થાય છે કે પરસ્થાનમાં થાય છે, આ પ્રકારના ચિન્તનનો—વિચારનો જે ઉત્તર છે તેને જ સમવતાર અથવા સમાવેશ કહે છે તે વિચાર આ પ્રમાણે થાય છે—(નૈગમવ્યવહારાણં આણુપુન્વી દ્રવ્યાઈ કહિંં સમોયરંતિ ? કિં આણુપુન્વી

इति त्रिविधः प्रश्नः। उत्तरमाह—‘नेगमव्यवहारणं’ इत्यादि। नेगमव्यवहारसम्मतानि आनुपूर्वीद्रव्याणि आनुपूर्वीद्रव्येषु समवतरन्ति, नो अनानुपूर्वीद्रव्येषु, न वाऽवक्तव्यकद्रव्येषु। अयं भावः—आनुपूर्वीद्रव्याणि आनुपूर्वीद्रव्यलक्षणायां स्वजातावेव वर्तन्ते, न ततोऽन्यत्र। यतः समवतारः—सम्यगविरोधेन अवतरणं=वर्तनम्—अविरोधवृत्तिता प्रोच्यते। अविरोधवृत्तिता च स्वजातावेव स्यात्, न तु परजातौ। तस्याः परजातिवृत्तित्वे विरोधात्। ततश्च नानादेशवृत्तीनि सर्वाण्य-

नैગમ और व्यवहारनय-संमत जो आनुपूर्वी द्रव्य हैं वे कहाँ समाविष्ट होते हैं? क्या आनुपूर्वी द्रव्यों में समाविष्ट होते हैं या अनानुपूर्वी द्रव्यों में? या (अवक्तव्यद्वेहिं समोयरन्ति) अवक्तव्यक द्रव्यों में समाविष्ट होते हैं? (नेगमव्यवहारणं आणुपुन्वी दब्बाइं अणानुपुन्वी दब्बेहिं समोयरन्ति)

उत्तर— नैगम व्यवहारनय संमत जो आनुपूर्वी द्रव्य हैं वे आनुपूर्वी द्रव्यों में ही समाविष्ट होते हैं (नो अणानुपुन्वीदब्बेहिं समोयरन्ति नो अवक्तव्यदब्बेहिं समोयरन्ति) अनानुपूर्वी द्रव्यों में समाविष्ट नहीं हैं और न अवक्तव्यक द्रव्यों में समाविष्ट होते हैं। इसका भाव यह है—कि समस्त आनुपूर्वी द्रव्य, बिना किसी विरोध के अपनी जाति में ही रहते हैं। दूसरी जाति में नहीं। बिना विरोध के अपनी जाति में रहना इसी का नाम समवतार समावेश, अविरोधवृत्तिता है। यह

દ્વેહિં સમોયરન્તિ, અણાણુપુન્વી દબ્બેહિં સમોયરન્તિ) નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત જે આનુપૂર્વી દ્રવ્યો છે તેમનો કયાં સમાવેશ થાય છે? શું આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં સમાવેશ થાય છે, કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં સમાવેશ થાય છે? અથવા (અવક્તવ્યદબ્બેહિં સમોયરન્તિ) અવક્તવ્યક દ્રવ્યોમાં સમાવેશ થાય છે? (નેગમવ્યવહારણં આણુપુન્વીદબ્બાઈં અણાણુપુન્વીદબ્બેહિં સમોયરન્તિ) ઉત્તર—નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત જે આનુપૂર્વી દ્રવ્યો છે, તેમનો આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં જ સમાવેશ થાય છે, (નો અણાણુપુન્વી દબ્બેહિં સમોયરન્તિ, નો અવક્તવ્યદબ્બેહિં સમોયરન્તિ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં સમાવેશ પણ થતો નથી અને અવક્તવ્ય દ્રવ્યોમાં પણ સમાવેશ થતો નથી આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—

સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો કોઈ પણ જાતના વિરોધ (અવરોધ) વિના પોતાની જાતિમાં રહે છે—ખીજી જાતિમાં રહેતા નથી કોઈ પણ પ્રકારના વિરોધ વિના પોતાની જાતિમાં રહેવું તેનું જ નામ સમવતાર અથવા સમા-

અવિરોધ વૃત્તિતા અપની જાતિ મેં હી હો સક્તી હૈ દૂસરી જાતિ મેં નહીં । આનુપૂર્વી દ્રવ્યોંકા સમવતાર યદિ પર જાતિ મેં મી માના જાવેગા તો હસ પ્રકાર પરજાતિ મેં રહને પર ઉનમેં સ્વજાતિ મેં રહને કી અવિરોધ વૃત્તિતા નહીં બન સકેગી । હસલિયે યહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ-કિ નાના દેશવર્તી સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય આનુપૂર્વી દ્રવ્યરૂપ અપની જાતિ મેં હી રહતે હૈં । પરજાતિ મેં નહીં । (નૈગમવ્યવહારાણં અણાણુપુઞ્વાઈ કહિં સમોયરંતિ કિં આણુપુઞ્વીદઞ્વેહિં સમોયરંતિ ? અણાણુપુઞ્વી દઞ્વેહિં સમોયરંતિ ? અવત્તવ્યવદઞ્વેહિં સમોયરંતિ) નૈગમ વ્યવહારનય સંમત સમસ્ત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કહાં પ્રવિષ્ટ હોતે હૈં ? કયા આનુપૂર્વી દ્રવ્યોંમેં સમાવિષ્ટ હોતે હૈં, યા અવત્તવ્યવ દ્રવ્યોં મેં સમાવિષ્ટ હોતે હૈં ?

ઉત્તર—(નો આણુપુઞ્વીદઞ્વેહિં સમોયરંતિ, અણાણુપુઞ્વીદઞ્વેહિં સમોયરંતિ, નો અવત્તવ્યવદઞ્વેહિં સમોયરંતિ) જિતને મી અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય હૈ—વે સબ ન તો આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં રહતે હૈં, ઓર ન અવત્તવ્યવ દ્રવ્યોં મેં રહતે હૈં, કિન્તુ અપની જાતિ રૂપ જો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય હૈ ઉનમેં હી રહતે હૈં । હસી પ્રકાર સે જિતને મી નૈગમવ્યવહાર નય સંમત અવત્ત-

વેશ અથવા અવિરોધવૃત્તિતા છે. આ અવિરોધવૃત્તિતાને સદ્ભાવ પોતાની જાતિમાં જ હોઈ શકે છે-અન્ય જાતિમાં હોઈ શકતો નથી આનુપૂર્વી દ્રવ્યોને સમવતાર (સમાવેશ) જો પર જાતિમાં પણ માનવામાં આવે તો આ રીતે પર જાતિમાં રહેવાથી તેમનામાં સ્વજાતિમાં રહેવાની અવિરોધવૃત્તિતા સંભવી નહીં શકે તેથી એવો નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે કે વિવિધ દેશવર્તી સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ પોતાની જાતિમાં જ રહે છે-પરજાતિમાં રહેતું નથી.

(નૈગમવ્યવહારાણં અણાણુપુઞ્વાઈ કહિં સમોયરંતિ કિં આણુપુઞ્વી દઞ્વેહિં સમોયરંતિ ? અણાણુપુઞ્વી દઞ્વેહિં સમોયરંતિ ? અવત્તવ્યવદઞ્વેહિં સમોયરંતિ ?) નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત સમસ્ત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો કયાં પ્રવિષ્ટ થાય છે ? શું તેઓ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં સમાવિષ્ટ થાય છે કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં સમાવિષ્ટ થાય છે, કે અવત્તવ્યવ દ્રવ્યોમાં સમાવિષ્ટ થાય છે ?

ઉત્તર—(નો આણુપુઞ્વીદઞ્વેહિં સમોયરંતિ, અણાણુપુઞ્વીદઞ્વેહિં સમોયરંતિ, નો અવત્તવ્યવદઞ્વેહિં સમોયરંતિ) બેટલાં આનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો છે, તેઓ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં પણ રહેતાં નથી, અવત્તવ્યવ દ્રવ્યોમાં પણ રહેતાં નથી, પણ તેમની જાતિ રૂપ જો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો હોય છે તેમાં જ રહે છે. એજ પ્રમાણે નૈગમવ્યવહારનય સંમત બેટલાં અવત્તવ્યવ દ્રવ્યો છે તેઓ

પ્યાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યેષ્વેવ વર્તન્તે નાન્યત્રેતિ । एवं नैगमव्यवहारसम्मतानि अनानुपूर्वी द्रव्याणि अनानुपूर्वीद्रव्येष्वेव वर्तन्ते, नैगमव्यवहारसम्मतानि अवक्तव्यकद्रव्याणि च अवक्तव्यकद्रव्येष्वेव वर्तन्ते, इत्यपि भावनीयम् । प्रकृतमुपसंहरन्नाह—स एष समवतार इति ॥सू० ८०॥

अथानुगमं निरूपयितुमाह—

મૂલમ્—સે કિં તં અણુગમે? અણુગમે નવવિહે પળ્લત્તે? તં જહા સંતપયપરૂવળયા? દવ્વપ્પમાણં ૨ ચ સ્વિત્ત ૩ ફુસળા ય ૪ । કાલો ય ૫ અંતરં ૬ ભાગ ૭ ભાવ ૮ અપ્પાવહું ૯ ચેવ ॥૧॥ સે તં અણુગમે ॥સૂ૦ ૮૧॥

છાયા—અથ કોડસો અનુગમઃ? અનુગમો નવવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથા—સત્પદ-પરૂપણતા ૧ દ્રવ્યપ્રમાણં ચ ૨ ક્ષેત્રં ૩ સ્પર્શના ચ ૪ । કાલશ્ચ ૫ અંતરં ૬ ભાગો ૭ ભાવઃ ૮ અલ્પબહુત્વં ચૈવ ॥૧॥ સ ઇષોડનુગમઃ ॥સૂ૦ ૮૧॥

વ્યક દ્રવ્ય હૈં વે સબ અપની જાતિરૂપ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં મેં હી રહતે હૈં । એસા અર્થ અવશિષ્ટ પાઠ કો લગા લેના ચાહિયે । હસ પ્રકાર યહ સમવતાર કા સ્વરૂપ હૈ ?

ભાવાર્થ—આનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વી ઓર અવક્તવ્યક જિતને મી દ્રવ્ય હૈં ઉનકે વિષય મેં યે ત્રીન પ્રશ્ન હો વક્તે હૈં—કિ આનુપૂર્વી આદિ સમસ્ત દ્રવ્ય કહાં રહતે હૈં ? । અપની જાતિવાલોં મેં હી રહતે હૈં—યા ભિન્ન જાતિ વાલોં મેં રહતે હૈં । હનકા હી સમાધાન સૂત્રકાર ને હસ સૂત્રદ્વારા કિયા હૈ । ઉસમેં યહ કહા ગયા હૈ કિ નૈગમવ્યવહારસંમત સમસ્ત આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્ય અપની ૨ જાતિ મેં હી રહતે હૈં—ભિન્ન જાતિ મેં નહીં । ॥સૂ૦ ૮૦॥

પણુ પોતાની જાતિ રૂપ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોમાં જ રહે છે; એવો અર્થ બાકીના પાઠના વિષયમાં સમજી લેવો જોઈએ આ પ્રકારનું સમવતારનું સ્વરૂપ છે.

ભાવાર્થ—આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક રૂપ જેટલાં દ્રવ્યો છે, તેમને વિષે આ ત્રણ પ્રશ્ન સંભવી શકે છે—આનુપૂર્વી આદિ સમસ્ત દ્રવ્ય ક્યાં રહે છે ? શું તેઓ પોતાની જાતિવાળામાં જ રહે છે, કે ભિન્ન જાતિવાળામાં રહે છે ? સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં આ પ્રશ્નોનું જ સમાધાન કર્યું છે. તેમણે આ સૂત્રમાં એ વાતનું પ્રતિપાદન કર્યું છે કે નૈગમવ્યવહારનય-સંમત સમસ્ત આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્ય પોતપોતાની જાતિમાં જ રહે છે—ભિન્ન જાતિમાં રહેતાં નથી. ॥સૂ૦ ૮૦॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં’ इत्यादि । अथ कोऽसौ अनुगमः ? इति । अनुगमः—सूत्रार्थस्य अनुकूलम् अनुरूपं वा गमनं=व्याख्यानम्—अनुगमः । स नवविधः=नवप्रकारकः प्रज्ञप्तः=प्ररूपितः, तद्यथा—सत्पदप्ररूपणता—सन् विद्यमानो योऽर्थः=भावस्तद्विषयं पदं सत्पदं तस्य प्ररूपणं=प्रज्ञापनं तदेव सत्पदप्ररूपणता प्रथमं कर्तव्या । अयं भावः—स्तम्भकुम्भादीनि पदानि सदर्थविषयाणि दृश्यन्ते, शशशृङ्गगनकुसुमादीनि पदानि त्वसदर्थविषयाणि दृश्यन्ते । तत्रानु-

अब सूत्रकार अनुगम का निरूपण करते हैं—

“से किं तं अणुगमे ?” । इत्यादि ।

शब्दार्थ—(से किं तं अणुगमे ?) हे भदन्त ! अनुगम का क्या स्वरूप है ? उत्तर—(अणुगमे नवविधे पण्णत्ते) अनुगम नौ प्रकार का कहा गया है । (तं जहा) जैसे—(संतपयपरूवणया) १ सत्पद-प्ररूपणता (द्वन्द्वपमानं च) २ द्रव्यप्रमाण (खित्त ३ फुसणाय ४) ३ क्षेत्र ४ स्पर्शन (कालोय, अंतर, भाग भाव अप्पाबहुं चेव) ५ काल ६ अन्तर, ७ भाग ८ भाव और ९ अल्पबहुत्व । (से तं अणुगमे) इस प्रकार यह अनुगम का स्वरूप है । सूत्र के अनुकूल अथवा अनुरूप व्याख्यान करना इसका नाम अनुगम है । यह पूर्वोक्त रूप से नौ प्रकार का कहा गया है । सत्पद-प्ररूपणतारूप १ प्रथम अनुगम के भेद में यह प्ररूपित किया जाता है कि जिस प्रकार से शशशृङ्ग आदि पद असदर्थ को विषय करने वाले

હેવે સૂત્રકાર અનુગમનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં અણુગમે ?” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં અણુગમે ?) હે ભગવન્ ! પૂર્વપ્રસ્તુત અનુગમનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(અણુગમે નવવિધે પણ્ણત્તે—તં જહા) અનુગમના નીચે પ્રમાણે નવ પ્રકાર કહ્યા છે—(સંતપયપરૂવણયા) (૧) સત્પદ પ્રરૂપણતા, (દ્વન્દ્વપમાણં ચ) (૨) દ્રવ્યપ્રમાણ, (ખિત્ત ૩ ફુસણા ય ૪) (૩) ક્ષેત્ર, (૪) સ્પર્શન, (કાલો ય, અંતર, ભાગ, ભાવ, અપ્પાબહુંચેવ) (૫) કાળ, (૬) અન્તર, (૭) ભાગ, (૮) ભાવ, અને (૯) અલ્પબહુત્વ.

(સે તં અણુગમે) આ પ્રકારનું અનુગમનું સ્વરૂપ છે સૂત્રને અનુકૂળ અથવા અનુરૂપ વ્યાખ્યાન કરવું તેનું નામ અનુગમ છે તેના ઉપર મુજબ નવ પ્રકાર કહ્યા છે. સત્પદપ્રરૂપણતા રૂપ અનુગમના પ્રથમ ભેદમાં વિદ્યમાન પદાર્થવિષયક પદની પ્રરૂપણા કરવામાં આવે છે સસલાને શિંગડાં હોવાની

પૂર્વાદિપદાનિ સ્તમ્ભાદિ પદાનીવ સદર્થવિષયાણિ, કિંવા શશશૃંગાદિપદાનીવ
અપદર્થવિષયાણિ ? इति पर्यालोचनीयमिति । १। तथा-द्रव्यप्रमाणम्=आनुपूर्व्यादि-
पदवाच्यानां द्रव्याणां प्रमाणं=संख्यास्वरूपं पर्यालोचनीयम् । २। च पुनः क्षेत्रम्=
आनुपूर्व्यादिपदवाच्यद्रव्याणाम् आधारस्वरूपं वक्तव्यम् । कियति क्षेत्रे तानि
भवन्तीति चिन्तनीयमिति भावः । ३। तथा-स्पर्शना च पर्यालोचनीया । तानि
द्रव्याणि कियत् क्षेत्रं स्पृशन्तीति चिन्तनीयमिति भावः । ४। तथा-कालश्च वक्तव्यः-

होते हैं, उस प्रकार से ये आनुपूर्वी आदि पद असदर्थ विषयक नहीं हैं
किन्तु जिस प्रकार स्तम्भ आदि पद स्तम्भ आदिरूप अपने वास्तविक
अर्थ को विषय करने वाले होते हैं उसी प्रकार से आनुपूर्वी आदि पद
यथार्थरूपसे अपने सदर्थ को विषय करने वाले हैं । इस प्रकार विद्य-
मान पदार्थ विषयकपद की प्ररूपणा का नाम सत्पदप्ररूपणता है । यह
सत्पदप्ररूपणा अनुगम करते समय प्रथम कर्तव्य होती है । इसलिये उसे
अनुगम के सेदों में प्रथम स्थान दिया गया है । द्रव्य प्रमाण में आनु-
पूर्वी आदि पदों के द्वारा जिन द्रव्यों को कहा जाता है उनकी संख्या
कितनी है इसका विचार होता है ? क्षेत्र में-आनुपूर्वी आदि पदों द्वारा
कथित द्रव्यों का आधाररूप क्षेत्र विचारित होता है-अर्थात् ये आनुपूर्वी
आदि द्रव्य कितने प्रमाण क्षेत्र में होते हैं ऐसा विचार किया जाता है ।
स्पर्शन में ये आनुपूर्वी आदि द्रव्य कितने क्षेत्र को स्पर्श करते हैं

પ્રરૂપણા કરવી તે અસદ્ધર્થ પ્રરૂપણા છે, કારણ કે તેને શિંગડાં જ હોતાં
નથી પરંતુ આનુપૂર્વી આદિ પદ અસદ્ધર્થ વિષયક હોતા નથી પણ સદ્ધર્થ
વિષયક હોય છે. જેવી રીતે સ્તમ્ભ આદિ પદ સ્તમ્ભ આદિ રૂપ પોતાના
વાસ્તવિક અર્થને વિષય કરનારા (પ્રતિપાદન કરનારા) હોય છે, એજ પ્રમાણે
આનુપૂર્વી આદિ પદ યથાર્થ રૂપે પોતાના સદ્ધર્થને વિષય કરનારા હોય છે.
આ રીતે વિદ્યમાન પદાર્થવિષયક પદની પ્રરૂપણાનું નામ ‘સત્પદપ્રરૂપણતા’
છે, આ સત્પદપ્રરૂપણા અનુગમ કરતી વખતે પહેલાં કરવા યોગ્ય હોય છે.
તેથી તેને અનુગમના ભેદોમાં પહેલું સ્થાન આપવામાં આવ્યું છે. ૧

દ્રવ્યપ્રમાણમાં એ વિચાર કરવામાં આવે છે કે આનુપૂર્વી આદિ પદો
દ્વારા જે દ્રવ્યોનું કથન કરવામાં આવે છે તેમની સંખ્યા કેટલી છે. ૨

ક્ષેત્રમાં-આનુપૂર્વી આદિ પદો દ્વારા કથિત દ્રવ્યોના આધાર રૂપક્ષેત્રનો
વિચાર કરવામાં આવે છે-એટલે કે એ આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્ય કેટલા પ્રમા-
ણવાળા ક્ષેત્રમાં હોય છે, એવો વિચાર કરવામાં આવે છે. ૩

તેષાં દ્રવ્યાણાં સ્થિતિલક્ષણઃ કાલશ્ચ પ્રરૂપણીયઃ ॥૨॥ તથા-અન્તરં વક્તવ્યમ્ । વિવક્ષિતસ્વભાવપરિત્યાગે સતિ પુનસ્તદ્ભાવપ્રાપ્તિવિરહલક્ષણમન્તરં પ્રરૂપણીયમિતિ ભાવઃ । દ્રવ્યસ્ય વિવક્ષિતસ્વભાવપરિત્યાગે સતિ પુનસ્તદ્ભાવપ્રાપ્તૌ ચ મધ્યે યઃ કાલઃ સોઽન્તરમુચ્યતે, इति बोध्यम् ॥૬॥ તથા-ભાગશ્ચ વક્તવ્યઃ । આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ શેષદ્રવ્યાણાં કસ્મિન્ ભાગે વર્તન્તે, इत्येवं भागः प्ररूपणीय इति भावः ॥૭॥ તથા ભાવઃ પ્રરૂપણીયઃ । આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કસ્મિન્ ભાવે વર્તન્તે इत्येवं रूपो भावो वक्तव्य इत्यर्थः ॥૮॥ તથા-અલપવહુત્વં ચૈવ=ચાપિ વક્તવ્યમ્ । આનુપૂર્વ્યાદિદ્રવ્યાણાં

ऐसी पर्यालोचना होती है । क्षेत्र में केवल आधारभूत आकाश ही लिया जाता है और स्पर्शनता में आधार क्षेत्र के चारों तरफ के आकाश प्रदेश जो आधेय के द्वारा छुये गये हों वे भी लिये जाते हैं । आनुपूर्वी आदि द्रव्यों की स्थिति का विचार यह काल है । अनुगम में आनुपूर्वी आदि द्रव्यों की स्थिति कितनी है इस बात की पर्यालोचना की जाती है अन्तर नाम विरह काल का है । विवक्षित पर्याय के परित्याग हो जाने पर पुनः उसी पर्याय की प्राप्ति होने में जो बीच में अन्तर पड़ता है उसका नाम विरह काल है । अनुगम में इस अन्तर की प्ररूपणा करना आवश्यक माना गया है । आनुपूर्वी द्रव्यशेष द्रव्यों के किस भाग में रहते हैं इस प्रकार के भाग की भी प्ररूपणा अनुगम में कर्तव्य होती है आनुपूर्वी आदि द्रव्य किस भाव में रहते हैं इस प्रकार की प्ररूपणा का नाम भाव है । न्यूनाधिकता

સ્પર્શન અનુગમમાં એવો વિચાર કરવામાં આવે છે કે તે આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્ય કેટલા ક્ષેત્રનો સ્પર્શ કરે છે ક્ષેત્રમાં કેવળ આધારભૂત આકાશ જ લેવામાં આવે છે અને સ્પર્શનામાં આધાર ક્ષેત્રની ચારે તરફના જે આકાશ પ્રદેશો આધેય દ્વારા સ્પૃષ્ટ થયા હોય, તેમને પણ લેવામાં આવે છે આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોની સ્થિતિનો વિચાર કરવો તેનું નામ 'કાળઅનુગમ' છે. કાળઅનુગમમાં આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોની સ્થિતિ કેટલી છે, એ વાતની પર્યાલોચના (વિચારણા) કરવામાં આવે છે વિરહકાળને અન્તર કહે છે. વિવક્ષિત (અમુક) પર્યાયનો પરિત્યાગ થઈ ગયા બાદ ફરીથી એજ પર્યાયની પ્રાપ્તિ થવામાં વચ્ચે જેટલું અન્તર પડે છે તેટલા અન્તરને વિરહકાળ કહે છે. અનુગમમાં આ અન્તરની પણ પ્રરૂપણા કરવાનું આવશ્યક ગણાય છે.

આનુપૂર્વી દ્રવ્યો શેષ (બાકીના) દ્રવ્યોના કયા ભાગમાં રહે છે, તે પ્રકારના ભાગની પણ પ્રરૂપણા અનુગમમાં કરવી પડે છે. ૭ આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યો કયા ભાવમાં રહે છે, તે પ્રકારની પ્રરૂપણાનું નામ ભાવઅનુગમ છે. ન્યૂનાધિકતાનું નામ અલપબહુત્વ છે દ્રવ્યાર્થિક નયને આધારે, પ્રદેશાર્થતાને

દ્રવ્યાર્થતાઽઽશ્રયણેન પ્રદેશાર્થતાઽઽશ્રયણેન તદુભયાર્થતાઽઽશ્રયણેન ચ પરસ્પરં
સ્તોકબહુત્વચિન્તાલક્ષણમ્ અલ્પબહુત્વં ચાઽપિ પ્રરૂપણીયમિતિ ભાવઃ ॥૯૧॥ પ્રકૃત-
મુપસંહરન્નાહ—‘સે તં’ ઇત્યાદિ । સ એવ અનુગમ ઇતિ ॥સૂ૦ ૮૧॥

ઇત્થં સંક્ષેપતોઽર્થમભિધાય વિસ્તરેણાર્થમભિધાતુકામઃ સૂત્રકારોઽનુગમસ્ય નવસુ
ભેદેષુ સત્પદપ્રરૂપણારૂપં પ્રથમં ભેદમાહ—

મૂલમ્—નેગમવવહારાણં આણુપુઠ્વીદઠ્વાઈં કિં અતિથિ નતિથિ ?
ગિયમા અતિથિ, નેગમવવહારાણં અણાણુપુઠ્વીદઠ્વાઈં કિં અતિથિ
ણતિથિ ?, ગિયમા અતિથિ, નેગમવવહારાણં અવત્તઠ્વગદઠ્વાઈં કિં
અતિથિ ણતિથિ ? ગિયમા અતિથિ ॥સૂ૦ ૮૨॥

કા નામ અલ્પબહુત્વ હૈ । દ્રવ્યાર્થિકનય કે આશ્રય સે પ્રદેશાર્થતા કે
આશ્રય સે ઓર તદુભય—દ્રવ્યાર્થિક પ્રદેશાર્થિક इन दोनों के आश्रय
से इन आनुपूर्वी आदि द्रव्यों में जो स्तोक बहुत का विचार है वही अल्प-
बहुत्व है । अनुगम में इस अल्पबहुत्व की भी प्ररूपणा कर्तव्य होती
है । (से तं अणुगमे) इस प्रकार यह अनुगम का स्वरूप है ।

ભાવાર્થ—સૂત્રાર્થ કે અનુકૂલ અથવા અનુરૂપ વ્યાખ્યાન કા નામ
અનુગમ હૈ । હસ અનુગમ મેં इन नौ ९, विषयों का विचार किया जाता
है । इसलिये वह अनुगम सत्पद प्ररूपणा आदि के भेद से नौ प्रकार
का कहा गया है । इन सत्पद प्ररूपणता आदि का क्या स्वरूप है इसे
स्वयं सूत्रकार विस्तार से आगे सूत्रों द्वारा स्पष्ट करते हैं । ॥ सू० ८१॥

આધારે અને તદુભય (તે બન્ને)—દ્રવ્યાર્થિક અને પ્રદેશાર્થિક એ બન્નેને
આધારે આ આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોમાં જે અલ્પત્વ અને બહુત્વનો વિચાર
કરવામાં આવે છે તેનું નામ જ અલ્પબહુત્વ છે અનુગમમાં આ અલ્પબહુ-
ત્વની પ્રરૂપણા પણ કરવા યોગ્ય ગણાય છે (સે તં અણુગમે) આ પ્રકારનું
અનુગમનું સ્વરૂપ છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રાર્થને અનુકૂળ અથવા અનુરૂપ વ્યાખ્યાનનું નામ અનુગમ
છે. તે અનુગમમાં ઉપર્યુક્ત નવ વિષયોનો વિચાર કરવામાં આવે છે, તેથી
તે અનુગમમાં સત્પદ પ્રરૂપણા આદિ નવ ભેદ કહ્યા છે આ સત્પદ પ્રરૂપણા
આદિના સ્વરૂપનું વિસ્તાર પૂર્વકનું નિરૂપણ સૂત્રકાર પોતે જ આગળના સૂત્રોમાં
કરવાના છે, તેથી અહીં તેનો ભાવાર્થ સંક્ષિપ્તમાં આપવામાં આવ્યો છે. ॥સૂ૦ ૮૧॥

છાયા—નૈગમવ્યવહારયોઃ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કિં સન્તિ ન સન્તિ ? નિયમાત્ સન્તિ । નૈગમવ્યવહારયોઃ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યાણિ કિં સન્તિ ન સન્તિ ? નિયમાત્ સન્તિ । નૈગમવ્યવહારયોઃ અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ કિં સન્તિ ન સન્તિ ? નિયમાત્ સન્તિ ॥ સૂ. ૦૮૨ ॥

ટીકા—‘ નૈગમવ્યવહારાણં ’ इत्यादि । व्याख्या निगदसिद्धा ॥ सू. ०८२ ॥

इस प्रकार संक्षेप से सत्पदप्ररूपणा आदि का अर्थ कहकर अब सूत्रकार विस्तार से उनका अर्थ करने की इच्छा से अनुगम के नौ भेदों का कथन करते हैं—‘नैगमव्यवहाराणं’ इत्यादि ।

शब्दार्थ—(नैगमव्यवहाराणं अणुपुर्वीदव्वाइं किं अत्थि नत्थि ?) नैगमव्यवहारनयसंमत आनुपूर्वी द्रव्य क्या है या नहीं है ?

(णियमा अत्थि) उत्तर—अवश्य हैं । (नैगमव्यवहाराणं अणुपुर्वी दव्वाइं किं अत्थि णत्थि ?) नैगम व्यवहारनयसंमत अनानुपूर्वी द्रव्य हैं या नहीं हैं ? उत्तर—(णियमा अत्थि) नियम से हैं—अवश्य २ हैं—(नैगमव्यवहाराणं अवक्तव्यागदव्वाइं किं अत्थि ? णत्थि ?—णियमा अत्थि) नैगम व्यवहारनय संमत अवक्तव्यक द्रव्य हैं या नहीं हैं ?

उत्तर—नियमतः हैं ।

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्रद्वारा नैगम व्यवहारनय संमत आनुपूर्वी आदि द्रव्य हैं ? यह बात नियमपद से जोर के साथ प्रकट की है

આ પ્રમાણે અનુગમના સત્પદપ્રરૂપણુ. આદિ ભેદોનો અર્થ સંક્ષિપ્તમાં સમજાવીને હવે સૂત્રકાર તે નવે ભેદોનો અર્થ વિસ્તારપૂર્વક સમજાવવા માગે છે. તેથી તેઓ સત્પદપ્રરૂપણુતા રૂપ તેના પ્રથમ ભેદનું નીચેના સૂત્ર દ્વારા નિરૂપણુ કરે છે—“ નૈગમવ્યવહારાણં ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન—(નૈગમવ્યવહારાણં અણુપુર્વવી દવ્વાઈં કિં અત્થિ નત્થિ ?) નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો છે કે નથી ?

ઉત્તર—(ણિયમા અત્થિ) અવશ્ય છે જ.

પ્રશ્ન—(નૈગમવ્યવહારાણં અણુપુર્વવી દવ્વાઈં કિં અત્થિ ણત્થિ ?) નૈગમવ્યવહારનયસંમત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો શું છે કે નથી ?

ઉત્તર—(ણિયમા અત્થિ) નિયમથી જ એટલે કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ પણ અવશ્ય છે જ.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા નૈગમવ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ હોવાનું પ્રતિપાદન કર્યું છે. “તેમનું અસ્તિત્વ નિયમથી જ છે,” આ પ્રકારના કથન દ્વારા તેમણે આ વાતને ભારપૂર્વક

અથ દ્રવ્યપ્રમાણરૂપં દ્વિતીયભેદમાહ—

મૂલમ્—નેગમવ્યવહારાણં આણુપુઠ્વીદઢ્વાઈં કિં સંખિજ્જાઈં
અસંખિજ્જાઈં અણંતાઈં ?, નો સંખિજ્જાઈં નો અસંખિજ્જાઈં અણંતાઈં ।
એવં અણાણુપુઠ્વીદઢ્વાઈં અવત્તઢ્વગદઢ્વાઈં ચ અણંતાઈં માણિ-
યઢ્વાઈં ॥ સૂ. ૦૮૩ ॥

છાયા—નેગમવ્યવહારયોરાનુપૂર્વીં દ્રવ્યાણિ કિં સંખ્યેયાનિ અસંખ્યેયાનિ
અનન્તાનિ ? નો સંખ્યેયાનિ નો અસંખ્યેયાનિ અનન્તાનિ । એવમ્ અનાનુપૂર્વીં
દ્રવ્યાણિ અવત્તવ્યકદ્રવ્યાણિ ચ અનન્તાનિ મણિતઢ્વાનિ ॥ સૂ. ૦૮૩ ॥

ટીકા—‘નેગમવ્યવહારાણં’ इत्यादि ।

નેગમવ્યવહારસમ્પત્તાનિ આનુપૂર્વીંદ્રવ્યાણિ કિં સંખ્યેયાનિ સન્તિ ? કિમ-
સંખ્યેયાનિ સન્તિ ? કિંવાડનન્તાનિ સન્તિ ? इति પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—આનુપૂર્વીં-
દ્રવ્યાણિ નો સંખ્યેયાનિ સન્તિ, નો અસંખ્યેયાનિ સન્તિ । અપિ તુ અનન્તાનિ સન્તિ ।

અર્થાત્ વે જોર દેકર યહ કહ રહે હૈં કિં યે આનુપૂર્વીં આદિ દ્રવ્ય સંસ્થા
વિશિષ્ટ હૈં । એસે નહીં હૈં, કિં યે નહીં હૈં । ॥ સૂત્ર ૦ ૮૨ ॥

‘નેગમવ્યવહારાણં’ इत्यादि ।

શબ્દાર્થ—(નેગમવ્યવહારાણં આણુપુઠ્વી દઢ્વાઈં કિં સંખિજ્જાઈં અસં-
ખિજ્જાઈં અણંતાઈં ?) નેગમવ્યવહારનય સંમત અનેક આનુપૂર્વીં દ્રવ્ય-
સંખ્યાત હૈં ? યા અસંખ્યાત હૈં ? યા અનન્ત હૈં ?

ઉત્તર—(નો સંખિજ્જાઈં નો અસંખિજ્જાઈં) નેગમવ્યવહારનય સંમત
આનુપૂર્વીં દ્રવ્ય ન સંખ્યાત હૈં ઓર ન અસંખ્યાત હૈં કિંન્તુ (અણંતાઈં)

મુકટ કરી છે એટલે કે તેઓ ભારપૂર્વક એવું કહે છે કે આનુપૂર્વીં આદિ
દ્રવ્યો સત્તાવિશિષ્ટ છે—તે દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ અવશ્ય છે. જ. તેઓ અવિ-
ધમાન નથી એમ સમજવું ॥ સૂ. ૦૮૨ ॥

“નેગમવ્યવહારાણં આણુપુઠ્વી ” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(નેગમવ્યવહારાણં આણુપુઠ્વી દઢ્વાઈં કિં સંખિજ્જાઈં, અસંખિ-
જ્જાઈં અણંતાઈં ?) નેગમવ્યવહાર નય સંમત અનેક આનુપૂર્વીં દ્રવ્યો શું
સંખ્યાત છે, કે અસંખ્યાત છે, કે અનંત છે ?

ઉત્તર—(નો સંખિજ્જાઈં નો અસંખિજ્જાઈં, અણંતાઈં) નેગમ અને વ્યવ-
હારનયસંમત આનુપૂર્વીં દ્રવ્યો સંખ્યાત પણ નથી, અસંખ્યાત પણ નથી,

एवम् अनानुपूर्वीद्रव्याणि अवक्तव्यकद्रव्याणि च अनन्तानि विज्ञेयानि । इदमत्र बोध्यम्—इहानुपूर्व्यनानुपूर्व्यवक्तव्यकद्रव्येषु प्रत्येकमनन्तान्यनन्तानि एकैकस्मिन् अक्षाकाशप्रदेशे लभ्यन्ते, किं पुनः सर्वलोके । अतः संख्येयांसंख्येयप्रकारद्वयं निषिध्य त्रिष्वपि स्थानेष्वनन्त्यमेवोच्यते । असंख्येये लोके कथमनन्तानि द्रव्याणि तिष्ठन्तीति न शङ्कनीयम् ? पुद्गलपरिणामस्य अचिन्त्यत्वात्, दृश्यते हि—एक प्रदीपप्रभा परमाणुव्याप्त्येषु एकगृहान्तर्वर्त्याकाशप्रदेशेषु अनेकापरप्रदीपप्रभा-

અનન્તહૈં । (એવં અણાણુપુર્વ્વીદ્રવ્વાઈં અવક્તવ્યગદ્રવ્વાઈં ચ અણંતાઈં ભાણિ-ગદ્રવ્વાઈં) इसी प्रकार से यह भी जानना चाहिये कि अनानुपूर्वीद्रव्य और अवक्तव्यकद्रव्य भी अनन्त हैं । संख्यात-असंख्यात नहीं हैं । इस कथन का यह भाव है कि आनुपूर्वी और अवक्तव्यक इन द्रव्यों में प्रत्येक आनुपूर्वी आदि द्रव्य अनन्त २ हैं । और प्रत्येक ये एक २ भी आकाश के प्रदेश में अनन्त अनन्त पाये जाते हैं । सर्वलोक की तो बात ही क्या है । इसलिये ये न संख्यात हैं और न असंख्यात हैं इसलिये इन तीनों में दोनों प्रकारता का निषेध कर अनन्तता की स्थापना की गई है । यहाँ ऐसी शंका नहीं करनी चाहिये कि असंख्यात प्रदेशी आकाश रूप क्षेत्र में अनन्त आनुपूर्वी आदिद्रव्य कैसे ठहर सकते हैं क्योंकि पुद्गल का परिणामन अचिन्त्य होता है । यह तो हम अपनी आंखों से देखते हैं कि एक प्रदीप की प्रभा से व्याप्त एक गृहान्तर्वर्ती-आकाश के प्रदेशों में

પરન્તુ અનંત છે (એવં અણાણુપુર્વ્વીદ્રવ્વાઈં અવક્તવ્યગદ્રવ્વાઈં ચ અણંતાઈં ભાણિગદ્રવ્વાઈં) એજ પ્રમાણે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો પણ અનંત છે અને અવક્ત-વ્યક દ્રવ્યો પણ અનંત છે, એમ સમજવું જોઈએ તે બન્ને પ્રકારના દ્રવ્યો સંખ્યાત પણ નથી અને અસંખ્યાત પણ નથી આ કથનનો સાવાથ એ છે કે આનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક આ દ્રવ્યોમાંના આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યો અનંત-અનંત છે. તે પ્રત્યેકનો એક એક આકાશપ્રદેશમાં પણ અનંત અનંત રૂપે સદ્ભાવ હોય છે. તો પછી સર્વલોકની તો વાત જ શી કરવી ! તે કારણે તેઓને સંખ્યાત પણ કહ્યા નથી અને અસંખ્યાત પણ કહ્યા નથી આ રીતે ત્રણેમાં બન્ને પ્રકારતાનો નિષેધ કરીને અનંતતાનું જ પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે.

અહીં એવી શંકા કરવી ન જોઈએ કે અસંખ્યાત પ્રદેશી આકાશ રૂપ ક્ષેત્રમાં અનંત આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યો કેવી રીતે રહી શકે છે, કારણ કે પુદ્ગલનું પરિણમન અચિન્ત્ય હોય છે. એ તો આપણે આપણી આંખો વડે જોઈ શકીએ છીએ કે એક પ્રદીપ (દીપક) ની પ્રભાથી વ્યાપ્ત એક ગૃહાન્તર્વર્તી—(બરતી અંદર)

પરમાણુનામવ્યવસ્થાનમ્ । ન ચાક્ષિદૃષ્ટેऽપ્યર્થેऽનુવપત્તિઃ, અતિપ્રસંગાત્ । અતઃ
આનુપૂર્વ્યાદિ દ્રવ્યાણામાનન્ત્યે ન કશ્ચિદ્ દોષ इति ॥સૂ૦ ૮૩॥

દૂસરે ઓર ખી અનેક પ્રદીપોં કી પ્રભા કે પરમાણુઓં का अवस्थान हो जाता है । आखों देखे हुये अर्थ में शंका करने जैसी कोई बात ही नहीं होती है । नहीं तो, अतिप्रसंग नाम का दोष आता है । इसलिये आनुपूर्वी आदि अनन्त द्रव्यों को असंख्यात प्रदेशी आकाश में अवस्थित होने में कोई बाधा नहीं आती है । और न आनुपूर्वी आदि द्रव्यों को अनन्त मानने में कोई आपत्ति आती है ।

भावार्थ— સૂત્રકાર ને અનુગમ કા દ્વિતીય ભેદ જો દ્રવ્ય પ્રમાણ હૈ, ઉસંકે વિષય મેં યહ નિર્ણય કિયા હૈ ઉસમેં આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોં કા પ્રમાણ અનન્ત હૈ એસા નિર્દેશ કર એસા સ્પષ્ટ કિયા હૈ કિ અસંખ્યાત પ્રદેશી આકાશ લોકાકાશ-મેં દ્વનકા અવગાહન બાધિત નહીં હો સકતા હૈ ક્યોંકિ પૌદ્ગલિક પરિણામ અચિન્ત્ય હોના હૈ । એકહી ઘર કે મીતર મેં રહે હુયે આકાશ મેં હમ દેખતે હૈં કિ અનેક પ્રદીપ પ્રભા કે પરમાણુ સમા જાતે હૈં । इसी प्रकार से अवगाहन शक्ति के योग से और परिणामन की विचित्रता से एक भी आकाश के प्रदेश में अनन्त आनुपूर्वी आदि द्रव्यों का अवगाहन बाधित नहीं होता है । ॥ સૂ૦ ૮૩ ॥

રહેલ આકાશના પ્રદેશોમાં ખીજાં પણ અનેક પ્રદીપોની પ્રભાના પરમાણુઓનું અવસ્થાન (નિવાસ) થઈ જાય છે. આંખો વડે જોયેલા વિષયમાં શંકાનો કોઈ અવકાશ જ રહેતો નથી નહીં તો, અતિપ્રસંગ નામનો દોષ આવે છે. તેથી આનુપૂર્વી આદિ અનન્ત દ્રવ્યોનું અસંખ્યાત પ્રદેશી આકાશમાં અવસ્થાન થવામાં કોઈ બાધા (મુશ્કેલી, અવરોધ) રહેતી નથી અને આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોને અનન્ત માનવામાં પણ કોઈ વાધો સંભવતો નથી.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે અનુગમના દ્રવ્યપ્રમાણ નામના ખીજા ભેદનું આ સૂત્ર દ્વારા નિરૂપણ કર્યું છે. તેમાં એવું કહેવામાં આવ્યું છે કે આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યો અનન્ત છે. આ પ્રકારનું પ્રતિપાદન કરીને એવી સ્પષ્ટતા કરવામાં આવી છે કે અસંખ્યાતપ્રદેશી આકાશમાં-લોકાકાશમાં તેમની અવગાહના હોવાની વાત સ્વીકારવામાં કોઈ પણ પ્રકારનો વાધો સંભવી શકતો નથી, કારણ કે પૌદ્ગલિક પરિણામ અચિન્ત્ય હોય છે. એક જ ઘરની અંદર રહેલા આકાશમાં (અવકાશમાં) અનેક પ્રદીપોની પ્રભાના પરમાણુઓનો સમાવેશ થઈ જાય છે, એ વાત તો આપણે આપણી આંખો વડે જ જોઈ શકીએ છીએ. એજ પ્રમાણે અવગાહનશક્તિના યોગથી અને પરિણમનની વિચિત્રતાથી આકાશનાં એક પ્રદેશમાં પણ અનન્ત આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોનું અવગાહન (સમાવેશ) માનવામાં કોઈ આપત્તિ સંભવી શકતી નથી. ॥સૂ૦ ૮૩॥

सम्प्रति क्षेत्ररूपं तृतीयभेदमाह—

मूलम्—नेगमववहाराणं आणुपुर्वी दव्वाइं लोगस्त किं संखि-
ज्जइभागे होज्जा, असंखिज्जइभागे होज्जा, संखेज्जेसु भागेसु
होज्जा, असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा, सव्वलोए होज्जा? एगं
दव्वं पडुच्च संखेज्जइभागे वा होज्जा, असंखेज्जइभागे वा
होज्जा संखेज्जेसु भागेसु वा होज्जा, असंखिज्जेसु भागेसु वा
होज्जा, सव्वलोए वा होज्जा। णाणादव्वाइं पडुच्च नियमा सव्व-
लोए होज्जा। नेगमववहाराणं अणानुपुर्वीदव्वाइं किं लोयस्स
संखिज्जइभागे होज्जा जाव सव्वलोए वा होज्जा? एगं दव्वं
पडुच्च नो संखेज्जइ भागे होज्जा असंखिज्जइभागे होज्जा नो
संखेज्जेसु भागेसु होज्जा नो असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा नो
सव्वलोए होज्जा। एवं अवत्तव्वगदव्वाइं भाणियव्वाइं ॥सू०८४॥

छाया—नैगमव्यवहारयोः आनुपूर्वीद्रव्याणि लोकस्य किं संख्येयतमभागे
भवन्ति, असंख्येयतमभागे भवन्ति, संख्येयेषु भागेषु भवन्ति, सर्वलोके भवन्ति?
एकं द्रव्यं प्रतीत्य संख्येयेषु भागेषु वा भवन्ति, असंख्येयतमभागे वा भवन्ति,
संख्येयेषु भागेषु वा भवन्ति, असंख्येयेषु वा भवन्ति, सर्वलोके वा भवन्ति। नाना-
द्रव्याणि प्रतीत्य नियमात् सर्वलोके भवन्ति। नैगमव्यवहारयोः अनानुपूर्वीद्रव्याणि
किं लोकस्य संख्येयतमभागे भवन्ति यावत् सर्वलोके वा भवन्ति? एकं द्रव्यं
प्रतीत्य नो संख्येयतमभागे भवन्ति असंख्येयेषु भागेषु भवन्ति, नो असंख्येयेषु
भागेषु भवन्ति, नो सर्वलोके भवन्ति, नानाद्रव्याणि प्रतीत्य नियमात् सर्वलोके
भवन्ति। एवमेव क्तव्यकद्रव्याणि भणितव्यानि ॥सू०८४॥

टीका—‘नेगमववहाराणं’ इत्यादि—

अब सूत्रकार—तृतीय भेद के विषय में कहते हैं—

“नेगम ववहाराणं” इत्यादि।

इसे सूत्रकार अनुगमना त्रीन लेद ३५ क्षेत्रता विषयमा नीम
प्रमाणे कथन करे छे—‘नेगमववहाराणं’ इत्यादि—

નૈગમવ્યવહારસમ્ભતાનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કિં લોકસ્ય એકસ્મિન્ સંખ્યેય-
તમે ભાગે ભવન્તિ=અવગાહન્તે? ૧ કિં વા એકસ્મિન્ અસંખ્યેયતમે ભાગેડવગાહન્તે? ૨
અથવા-કિં સંખ્યેયભાગેષુ ભવન્તિ અવગાહન્તે? ૩ કિમસંખ્યેયભાગેષુ ભવન્તિ-
અવગાહન્તે? ૪ અથવા-કિં સર્વલોકે ભવન્તિ? ૫ इति पञ्चमश्नाः। उत्तरमाह-
आनुपूर्वीद्रव्याणि=व्यणुकस्कन्धादीनि अनन्ताणुकस्कन्धान्तानि, तत्र-एकं द्रव्यं
प्रतीत्य=सामान्यत एकं द्रव्यमाश्रित्य किमपि लोकस्य संख्येयतमभागे भवति,

શબ્દાર્થ—(નૈગમવ્યવહારાણં આણુપુલ્લી દ્રવ્વાઈં) નૈગમ વ્યવહાર નય
સંમત અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય (લોગસસ) લોક કે (કિં) વ્યા (સંલિ-
જ્જઈ ભાગે) ૧ સંખ્યાતવેં ભાગ મેં (હોજ્જા) અવગાહિત હેં ? યા
(અસંલિજ્જઈ ભાગે હોજ્જા ૨) અસંખ્યાતવેં ભાગ મેં અવગાહિત હેં ?
(સંલેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) યા ૩ સંખ્યાત ભાગોં મેં અવગાહિત
હેં ? યા ૪ (અસંલેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) અસંખ્યાત ભાગોં મેં અવ-
ગાહિત હેં ? યા (સવ્વલોઈ હોજ્જા ?) ૫ સમ્પૂર્ણ લોકમેં અવગાહિત હેં ?

ઉત્તર—(એકં દ્રવ્યં પહુલ્લ સંલેજ્જઈ ભાગેં વા હોજ્જા, અસંલેજ્જઈ
ભાગે વા હોજ્જા સંલેજ્જેસુ ભાગેસુ વા હોજ્જા; અસંલેજ્જેસુ ભાગેસુ
વા હોજ્જા સવ્વલોઈ વા હોજ્જા) વ્યણુકાદિ અનન્તાણુ સ્કંધોં મેં સે
સામાન્ય રૂપ સે કિસી એક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા કરકે કોઈ એક આનુપૂર્વી
લોક કે સંખ્યાતવેં ભાગ મેં તથા કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોક કે
અસંખ્યાતવેં ભાગ મેં રહતા હૈ તથા કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકકે

શબ્દાર્થ—(નૈગમવ્યવહારાણં આણુપુલ્લીદ્રવ્વાઈં) નૈગમ અને વ્યવહાર.
નયસંમત અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય (લોગસસ કિં સંલિજ્જઈ ભાગે હોજ્જા) શું
લોકના સંખ્યાતમાં ભાગમાં અવગાહિત છે ? કે લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં
અવગાહિત છે, કે (અસંલિજ્જઈ ભાગે હોજ્જા ૨) લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં
અવગાહિત છે, કે (સંલેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા ૩) સંખ્યાત ભાગોમાં અવગાહિત
છે, કે (સવ્વલોઈ હોજ્જા ?) સંપૂર્ણ લોકમાં અવગાહિત હોય છે ?

ઉત્તર—(એકં દ્રવ્યં પહુલ્લ સંલેજ્જઈ ભાગેં વા હોજ્જા, અસંલેજ્જઈ ભાગે
વા હોજ્જા, સંલેજ્જેસુ ભાગેસુ વા હોજ્જા, અસંલેજ્જેસુ ભાગેસુ વા હોજ્જા, સવ્વ-
લોઈ વા હોજ્જા) ત્રણ પરમાણુવાળા (ત્રિપ્રદેશી) થી અનંત પર્યંતનાં અણુવાળા
સ્કંધો (અનંત પ્રદેશી સ્કંધો) માંથી સામાન્ય રૂપે કોઈ એક દ્રવ્યની અપે-
ક્ષાએ કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાતમાં ભાગમાં અવગાહિત
થઈને રહે છે, કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં રહે

લોકસ્ય સંખ્યાતતમભાગમવગાહ્ય તિષ્ઠતીત્યર્થઃ ૧ । તથા—કિમપિ લોકસ્ય અસં-
ખ્યેયતમે ભાગે ભવતિ—તિષ્ઠતિ ૨ । તથા—કિમપિ તુ લોકસ્ય સંખ્યેયેષુ ભાગેષુ
ભવતિ ૩ । તથા—લોકસ્યાऽસંખ્યેયેષુ ભાગેષુ ભવતિ ૪ । તથા કિમપિ સર્વલોકે
ભવતિ=સર્વલોકમવગાહ્ય તિષ્ઠતિ ।

અર્થ મતઃ—અનન્તાનન્તપરમાણુપદ્યનિષ્પન્નમચિત્તમહાસ્કન્ધલક્ષણમ્ આનુ-
પૂર્વીદ્રવ્યમેકં સમયં સકલલોકમવગાહતે । નતુ કથમયમચિત્તમહારક્ત્ત્વઃ સકલ-
લોકમવગાહતે ? इति चेदाह—यथा—समुद्धातवर्तिकेवली सकललोकमवगાહતે
તથૈવાચિત્તમહાસ્કન્ધોऽપિ । તથાહિ—લોકમધ્યવ્યવસ્થિતઃ સમુદ્ઘાતવર્તિકેવલી
પ્રથમસમયે તિર્યગ્સંખ્યાતયોજનવિસ્તરં સંખ્યાતવિસ્તરં વા ઝંઝાંચિસ્તુ ચતુર્દશ-

સંખ્યાત ભાગોં મેં તથા કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય, લોક કે અસંખ્યાત
ભાગોં મેં ઓર કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સમસ્ત લોક મેં અવગાહિત
હોકર રહતા હૈ । જૈસે કિ અનન્તાનન્ત પુદ્ગલ પરમાણુઓં કે સમૂહ સે
નિષ્પન્ન હુઆ અચિત્ત મહાસ્કન્ધ । યહ અચિત્ત મહા સ્કન્ધરૂપ આનુ-
પૂર્વી દ્રવ્ય એક સમય મેં સકલ લોક કો અવગાહિત કરતા રહતા હૈ ।

શંકા—યહ અચિત્ત મહાસ્કન્ધ સકલલોક મેં કેસે અવગાહિત
હૈ જાતા હૈ ?

ઉત્તર—જૈસે સમુદ્ઘાતવર્તી કેવલી સકલ લોક મેં સમા જાતે હૈ—
ઉસી પ્રકાર સે અચિત્ત મહાસ્કન્ધ સ્ત્રી સકલ લોક મેં અવગાહિત હો-
જાતા હૈ— સમા જાતા હૈ । અર્થાન્ લોક કે મધ્ય મેં વ્યવસ્થિત હુઆ
કેવલી જબ સમુદ્ઘાત કરતા હૈ તો ચહ પ્રથમ સમય મેં આત્મા કે પ્રદેશોં
કો દળડાકાર રૂપ મેં પરિણમાતા હૈ । યહ દળડાકાર રૂપ પરિણમન

છે, તથા કેઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાત ભાગોમાં રહે છે,
કેઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના અસંખ્યાત ભાગોમાં રહે છે, અને કેઈ
એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સમસ્ત લોકમાં અવગાહિત થઈને રહે છે જેમ કે
અનન્તાનન્ત પુદ્ગલ પરમાણુઓના સમૂહમાંથી નિષ્પન્ન થયેલા અચિત્ત
મહાસ્કન્ધ તે અચિત્ત મહાસ્કન્ધ રૂપ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય એક સમયમાં સકળ
લોકને અવગાહિત કરી શકે છે.

પ્રશ્ન—તે અચિત્ત મહાસ્કન્ધ સકલ લોકમાં કેવી રીતે અવગાહિત થઈ જાય છે.

ઉત્તર—જેવી રીતે સમુદ્ઘાતવર્તી કેવલી સકળ લોકમાં સમાઈ જાય છે—
અવગાહિત થઈ જાય છે, એજ પ્રમાણે અચિત્ત મહાસ્કન્ધ પણ સકલ લોકમાં
અવગાહિત થઈ જાય છે—સમાઈ જાય છે એટલે કે લોકની મધ્યમાં રહેલા
કેવળી જ્યારે સમુદ્ઘાત કરે છે, ત્યારે પ્રથમ સમયે આત્મપ્રદેશને દળડાકાર

જ્જ્વાયતં ત્રિશ્રસાપરિણામેન વૃત્તં દણ્ડં કરોતિ, દ્વિતીયે કપાટં કરોતિ, તૃતીયે મન્થાનં કરોતિ, ચતુર્થેઽન્તરાલપૂરણેન સકલલોકવ્યાપ્તિં કરોતિ, પશ્ચમેઽન્તરાણિ સંહરતિ, ષષ્ઠે મન્થાનં, સપ્તમે કપાટમ્, અષ્ટમે પુનર્દણ્ડં સંહરતિ । તતઃ સ્વાવસ્થાં પ્રતિપદ્યતે । એવમચિત્તમહાસ્કન્ધોઽપિ સમયમેકં સકલલોકમવગાહતે इति ।

તથા-નાનાદ્રવ્યાણિ=આનુપૂર્વીપરિણામયુક્તાનિ અનન્તાનિ દ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય= આશ્રિત્ય દ્રવ્યાણિ નિયમાત્=નિયમતઃ સર્વલોકે ભવન્તિ=સકલલોકમવગાહન્તે ।

उनका तिर्यक् में संख्यात योजन तक अथवा असंख्यात योजन तक विस्तृत होता है । तथा ऊर्ध्व और नीचे में १४राज्जु प्रमाण लंबा होता है । आत्मप्रदेशों का यह दण्डाकार रूप परिणामन स्वाभाविक होता है द्वितीय समय में उनके वे आत्मप्रदेश कपाट के आकार में परिणम जाते हैं । तृतीय समय में मन्थान रूप हो जाते हैं । और चौथे समय में अन्तराल की पूर्ति कर वे सकल लोक में व्याप्त होजाते हैं पांचवें समय में अंतरालों को संकुचित कर छठवें समय में मन्थान का सातवें समय में कपाट का आठवें समय में दण्ड का संकोच कर अपने आप में समाजाते हैं- पूर्वावस्थापन्न हो जाते हैं । इसी प्रकार अचित्त महा-स्कन्ध भी एक समय में सकल लोक को व्याप्त कर लेता है । (णाणादव्वाइं पडुच्च नियमा सब्वलोए होज्जा) तथा आनुपूर्वी परिणाम युक्त अनंतद्रव्यों को आश्रित करके वे द्रव्य नियम से सर्वलोक में

રૂપે પરિણમાવે છે. તેમનું આ ઢંડાકાર રૂપ પરિણમન તિર્યક્ લોકમાં સંખ્યાત યોજન સુધી અથવા અસંખ્યાત યોજન સુધી વિસ્તૃત થયેલું હોય છે, તથા ઉર્ધ્વ અને અધોભાગમાં ૧૪ ચૌદ રાજ્જુપ્રમાણ લાંબું હોય છે. આત્મ-પ્રદેશોનું આ ઢંડાકાર રૂપ પરિણમન સ્વાભાવિક હોય છે. બીજા સમયમાં તેમના તે આત્મપ્રદેશો કપાટના આકારમાં પરિણમન પામે છે ત્રીજા સમયમાં મન્થાનરૂપ થઈ જાય છે, અને ચોથા સમયમાં અન્તરાલની પૂર્તિ કરીને સકળ લોકમાં વ્યાપ્ત થઈ જાય છે. પાંચમા સમયમાં અંતરાલોને સંકુચિત કરીને છઠ્ઠા સમયમાં મન્થાનને સંકુચિત કરીને, સાતમાં સમયમાં કપાટને અને આઠમાં સમયમાં ઢંડાને સંકુચિત કરીને પોતાના શરીરમાં જ સમાઈ જાય છે એટલે કે પૂર્વાવસ્થામાં આવી જાય છે એજ પ્રમાણે અચિત્ત મહાસ્કન્ધ પણ એક સમયમાં સકળ લોકને વ્યાપ્ત કરી લે છે. (ણાણાદવ્વાઈં પડુચ્ચ નિયમા સવ્વલોએ હોજ્જા) તથા આનુપૂર્વી પરિણામ યુક્ત અનંત દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચર કરવામાં આવે તો તે દ્રવ્યો સમસ્ત લોકમાં અવગાહિત છે. આ કથનનું

અર્થ માત્ર:-સર્વલોકાકાશસ્ય નાસ્તિ કોઽપિ પ્રદેશો યત્ર સૂક્ષ્મપરિણામપરિણતાનિ અતન્તાનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ ન સન્તિ, કિન્તુ સર્વત્ર સન્તિ । નસ્ત્વેતાંપિ નાનાદ્રવ્યાણિ સંખ્યેયતમાદિપ્રદેશેષુ સન્તીતિ । એવં નૈગમવ્યવહારસમ્મતાઽનાનુ-પૂર્વ્યવક્તવ્યકદ્રવ્યવિષયેઽપિ પશ્ચ પશ્ચ પ્રશ્નાઃ । ઉત્તરસ્ત્વેવં વિજ્ઞેય:-એકં દ્રવ્ય માશ્રિત્યાનાનુપૂર્વીદ્રવ્યમ્ અવક્તવ્યકદ્રવ્યં ચ લોકસ્ય અસંખ્યેયતમભાગે ભવતિ,

અવગાહિત છે । તાત્પર્યે હસકા યહ છે-કિ સમસ્ત લોકાકાશ કા કોઈ મી પ્રદેશ એસા નહીં છે કિ જહાં પર સૂક્ષ્મ પરિણામ સે પરિણત હુણ અનંત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ન હો । અર્થાત્ લોક મેં સર્વત્ર આનુપૂર્વી દ્રવ્ય છે । યે આનુપૂર્વી અનેક દ્રવ્ય લોક કે સંખ્યાતવે અથવા અસંખ્યાતવે ભાગ મેં નહીં છે । હસી પ્રકાર સે નૈગમ ઓર વ્યવહારનય સંમત અનાનુ-પૂર્વી ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કે વિષય મેં મી પાંચ ૨ પ્રશ્ન હોતે છે જો (નૈગમવ્યવહારાણં અણાણુપુઠ્ઠી દવ્વાઈ કિં લોચસ્સ સંખિજ્જહ ભાગે, હોજ્જા જાહ સવ્વલોપ વા હોજ્જા ?) હન પદોં દ્વારા વ્યક્ત કિયે ગયે છે । હન પ્રશ્નોં કા ઉત્તર મી (એગં દવ્વં પહુચ્ચ નો સંખેજ્જહ ભાગે, હોજ્જા, અસંખિજ્જહ ભાગે હોજ્જા નો સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા, નો અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા નો સવ્વલોપ હોજ્જા) હનસૂત્રાંશોં દ્વારા હસપ્રકાર દિયા ગયા છે-કિ એક દ્રવ્ય કો આશ્રિત કરકે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્ય લોક કે અસંખ્યાતવે ભાગ મેં અવગાહિત

તાત્પર્ય એ છે કે સમસ્ત લોકાકાશનો કોઈ પણ પ્રદેશ એવો નથી કે જ્યાં સૂક્ષ્મ પરિણામથી પરિણત થયેલાં અનંત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો ન હોય એટલે કે લોકમાં સર્વત્ર આનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ છે તે અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યો લોકના સંખ્યાતમાં અથવા અસંખ્યાતમાં ભાગમાં નથી પણ સમસ્ત લોકમાં છે, એમ સમજવું એજ પ્રમાણે નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોના વિષયમાં પણ પાંચ-પાંચ પ્રશ્નો પૂછી શકાય છે. જે પ્રશ્નો નીચેના સૂત્ર દ્વારા પૂછવામાં આવ્યા છે. (નૈગમવ્યવહારાણં અણાણુપુઠ્ઠી દવ્વાઈ કિં લોચસ્સ સંખિજ્જહ ભાગે હોજ્જા, જાહ સવ્વલોપ વા હોજ્જા ?) નૈગમ અને વ્યવહાર નય સંમત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો શું ? લોકના સંખ્યાતમાં ભાગમાં, કે સંખ્યાત ભાગોમાં કે અસંખ્યાત ભાગોમાં કે સમસ્ત લોકમાં અવગાહિત થઈને રહે છે ?

ઉત્તર-“એગં દવ્વં પહુચ્ચ નો સંખેજ્જહ ભાગે, હોજ્જા, અસંખેજ્જહ ભાગે હોજ્જા નો સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા, નો અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા નો સવ્વલોપ હોજ્જા ” એ એક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અને અવક્તવ્યક દ્રવ્ય લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં જે અવગાહિત થઈને રહે છે, સંખ્યાતમાં ભાગમાં, સંખ્યાત ભાગોમાં, અસંખ્યાત

ન તુ સંખ્યેયતમભાગે । અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યં हि परमाणुरुच्यते स चैकैकाकाशप्रदेशा-
वगाढ एव भवति, अवक्तव्यद्रव्यं च द्रव्यणुकस्कन्धः, स चैकप्रदेशावगाढो द्वि-
प्रदेशावगाढो वा स्यादित्यनयोरसंख्येयभागवृत्तित्वमेव । नानाद्रव्याणि प्रतीत्य
नियमात्सर्वलोकावगाहना पूर्ववद् बोध्या ॥ सू० ८४ ॥

હોકર રહતે હૈં । સંખ્યાતવેં ભાગ મેં નહીં । પરમાણુ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય
હૈ । વહ આકાશ કે એકપ્રદેશ મેં હી અવગાહિત- હોકર રહતા હૈ ।
કયોં કિ વહ સ્વયં એકપ્રદેશી હૈ । દ્રવ્યણુક જો સ્કંધ હૈ । વહ અવક્ત-
વ્યક દ્રવ્ય હૈ । વહ લોકાકાશ કે એક પ્રદેશ મેં બી રહતા હૈ ઓર દો
પ્રદેશ મેં બી રહતા હૈ । હસ પ્રકાર હન દોનોં કી વૃત્તિ લોક કે અસં-
ખ્યાતવેં ભાગ મેં હી હૈ, નાના અનાનુપૂર્વી ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કો
આશ્રિત કરકે નાના અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય ઓર અવક્તવ્યક નિયમ સે સમસ્ત
લોકાકાશ મેં રહતે હૈં । કયોં કિ આકાશ કા કોઈ પ્રદેશ એસા નહીં હૈ
કિ જહાં પર હનકા સદ્ભાવ ન હો ।

ભાવાર્થ-સૂત્રકારને હસ સૂત્ર દ્વારા આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોં કે રહને કે
વિષય મેં કિયે ગયે પાંચ પ્રશ્નોં કા ઉત્તર એક ઓર નાના દ્રવ્યોં કો ઠેકર
દિયા ગયા હૈ-વે પાંચ પ્રશ્ન હસ પ્રકાર સે હૈ-૧ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કયા
લોક કે સંખ્યાતવેં ભાગ મેં રહતે હૈં ? ૨ યા અસંખ્યાતવેં ભાગ મેં
રહતે હૈં ૩ યા લોક કે સંખ્યાત ભાગોં મેં રહતે હૈં ? યા ૪ અસંખ્યાત

ભાગોમાં કે સર્વલોકમાં અવગાહિત થઈને રહેતાં નથી પરમાણુ અનાનુપૂર્વી
દ્રવ્યરૂપ છે. તે આકાશના એક પ્રદેશમાં જ અવગાહિત થઈને રહે છે એ
અણુવાળો જે સ્કંધ છે તે અવક્તવ્યક દ્રવ્યરૂપ છે. તે લોકાકાશના એક
પ્રદેશમાં પણ રહે છે અને જે પ્રદેશમાં પણ રહે છે આ રીતે તે બન્નેની
અવગાહના લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં જ છે. વિવિધ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો
અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો તેઓ સમસ્ત
લોકાકાશમાં રહે છે, એમ સમજવું જોઈએ, કારણ કે આકાશનો કોઈ પણ
પ્રદેશ એવો નથી કે જ્યાં તેમનો સદ્ભાવ ન હોય.

ભાવાર્થ-સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોની અવગાહના
વિષે પૂછવામાં આવેલા પાંચ પ્રશ્નોનો ઉત્તર એક દ્રવ્ય અને અનેક દ્રવ્યોને
અનુલક્ષીને આપ્યો છે તે પાંચ પ્રશ્નો નીચે પ્રમાણે છે-(૧) આનુપૂર્વી
દ્રવ્યો શું લોકના સંખ્યાતમાં ભાગમાં રહે છે ? અથવા (૨) અસંખ્યાતમાં

ભાગોં મેં રહતે હૈં ૪ યા સંમસ્ત લોક મેં રહતે હૈં ? ૫

ઉત્તર- પુદ્ગલ દ્રવ્ય કા આધાર યદ્યપિ સામાન્ય રૂપ સે લોકાકાશ હીં નિયત હૈ તથાપિ-વિશેષ રૂપ સે ભિન્ન ૨ પુદ્ગલ દ્રવ્ય કે આધાર ક્ષેત્ર કે પરિમાણ મેં અન્તર હોતા હૈ, વહી અન્તર હસ ઉત્તર મેં પ્રકટ કિયા ગયા હૈ- ક્યોંકિ ભિન્ન ૨ વ્યક્તિ હોતે છુપ્ત મી પુદ્ગલોં કે પરિમાણ મેં વિવિધતા હૈ એક રૂપતા નહીં હૈ । હસલિયે યહાં ઉનકે આધાર કા પરિમાણ અનેક રૂપ સે કહા ગયા હૈ-સારાંશ યહ હૈ કિ આધાર ભૂત ક્ષેત્ર કે પ્રદેશોં કી સંખ્યા આધેયભૂત પુદ્ગલ દ્રવ્ય કે પરમાણુઓં કી સંખ્યા સે ન્યૂન યા ઉસકે બરાબર હો સકતી હૈ અધિક નહીં । હસલિયે એક પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વો દ્રવ્ય આકાશ કે એકહી પ્રદેશ મેં સ્થિત રહતા હૈ । પર દ્વયણુક એક પ્રદેશ મેં મી ઠહર સકતા હૈ ઓર દો પ્રદેશ મેં મી । હસી પ્રકાર ઉત્તરોત્તર સંખ્યા બઢતે બઢતે ત્ર્યણુક, ચતુરણુક, યાવત્ સંખ્યાતાણુક સ્કન્ધ એક પ્રદેશ, દો પ્રદેશ, ત્રીન પ્રદેશ યાવત્ સંખ્યાત પ્રદેશ ક્ષેત્ર મેં ઠહર સકતે હૈં । સંખ્યાતાણુ દ્રવ્ય કી સ્થિતિ કે લિયે અસંખ્યાત પ્રદેશ વાલે ક્ષેત્ર કી આવશ્યકતા નહીં-પડતી ।

ભાગમાં રહે છે ? (૩) અથવા શું લોકના સંખ્યાત ભાગોમાં રહે છે ? (૪) અથવા શું લોકના અસંખ્યાત ભાગોમાં રહે છે ? (૫) અથવા શું સમસ્ત લોકમાં રહે છે.

ઉત્તર-પુદ્ગલ દ્રવ્યોનો આધાર જો કે સામાન્ય રૂપે લોકાકાશ જ નિયત છે, છતાં પણ વિશેષ રૂપે ભિન્ન ભિન્ન પુદ્ગલદ્રવ્યના આધારક્ષેત્રના પરિમાણમાં અન્તર હોય છે, એજ અન્તર આ ઉત્તરમાં પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે-કારણ કે ભિન્ન ભિન્ન પદાર્થ હોવા છતાં પણ પુદ્ગલોના પરિમાણમાં વિવિધતા છે, એકરૂપતા નથી તેથી અહીં તેમના આધારનું પરિમાણ (પ્રમાણ) અનેક રૂપે કહેવામાં આવ્યું છે. આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે આધારભૂત ક્ષેત્રના પ્રદેશોની સંખ્યા આધેયભૂત પુદ્ગલદ્રવ્યના પરમાણુઓની સંખ્યા કરતાં ન્યૂન અથવા તેના જેટલી જ હોઈ શકે છે, પણ અધિક હોઈ શકતી નથી તેથી એક પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વો દ્રવ્ય આકાશના એક જ પ્રદેશમાં રહે છે, પણ જો અણુવાળું અવકાશવ્યક દ્રવ્ય આકાશના એક પ્રદેશમાં પણ રહી શકે છે અને જો પ્રદેશમાં પણ રહી શકે છે. આ રીતે ઉત્તરોત્તર પરમાણુઓની અથવા પ્રદેશોની વૃદ્ધિ થતાં થતાં ત્રણઅણુવાળા, ચાર અણુવાળા યાવત્ સંખ્યાતાણુક સ્કન્ધ એક પ્રદેશમાં, બે પ્રદેશમાં, ત્રણ પ્રદેશમાં યાવત્ સંખ્યાત પ્રદેશ રૂપ ક્ષેત્રમાં રહી શકે છે. સંખ્યાત અણુવાળા

सम्पत्ति स्पर्शनाद्वाररूपं चतुर्थभेदमाह—

मूलम्—नेगमववहाराणं आणुपुर्वीदव्वाइं लोगस्स किं संखे-
ज्जइभागं फुसंति? असंखेज्जइभागं फुसंति? संखेज्जे भागे
फुसंति? असंखेज्जे भागे फुसंति? सव्वलोगं फुसंति?। एगं
दव्वं पडुच्च लोगस्स संखेज्जइभागं वा फुसइ जाव सव्वलोगं वा
फुसइ। णाणादव्वाइं पडुच्च नियमा सव्वलोगं फुसंति। नेगम-
ववहाराणं अणुपुर्वीदव्वाइं लोगस्स किं संखिज्जइभागं फुसंति

असंख्याताणुक स्कंध एक प्रदेश से लेकर अधिक से अधिक अपने बरा-
बर की असंख्यात संख्यावाले प्रदेशों के क्षेत्र में ठहर सकता है।
अनंताणुक और अनंतानंताणुक स्कंध भी एक प्रदेश, दो प्रदेश इत्यादि
क्रम से बढ़ते २ संख्यात प्रदेश और असंख्यात प्रदेश वाले क्षेत्र में
ठहर सकते हैं उनकी स्थिति के लिये अनन्त प्रदेशात्मक क्षेत्र की जरू-
रत नहीं है। पुण्ड्र द्रव्य का सबसे बड़ा स्कंध जिसे अचित्त महास्कंध
कहते हैं और जो अनंतानंत अणुओं का बना हुआ होता है वह भी
असंख्यात प्रदेश लोकाकाश में ही ठहर जाता है। इस प्रकार आनु
पूर्वी आदि एक द्रव्य की अपेक्षा इस कथन को हृदय में धारण करके
इस सूत्र को लगाना चाहिये। नाना द्रव्य की अपेक्षा इन समस्त द्रव्यों
का अवगाहन समस्त लोकाकाश में है ॥ सू० ८४ ॥

द्रव्यने रडेवा भाटे असंख्यात प्रदेशोवाणा क्षेत्रनी जर पडती नथी असं-
ख्यात आणुवाणो स्कंध ओक प्रदेशथी लधने वधारेभां वधारे पोताना जेटली
ज असंख्यात संख्यावाणा प्रदेशोना क्षेत्रभां रडी शके छे अनंत आणुवाणो
अथवा अनंतानंत आणुवाणो स्कंध पणु ओकथी लधने संख्यात पर्यन्तना
प्रदेशवाणा अने असंख्यात प्रदेशोवाणा क्षेत्रभां रडी शके छे, तेने रडेवाने
भाटे अनंत प्रदेशोवाणा क्षेत्रनी आवश्यकता रडेती नथी पुद्गल द्रव्यने
सौधी मोटो स्कंध के जेने अचित्त महास्कंध डडे छे अने जे अनंतानंत
आणुओने अनेलो डोय छे, ते पणु लोकाकाशना असंख्यात प्रदेशोभां ज
रडी शके छे. आ प्रमाणे अनानुपूर्वी आदि स्कन्धद्रव्यनी अपेक्षाओ आ
कथनने हृदयभां धारणु करीने आ सूत्रने अर्थ समजवे जेधओ विविध द्रव्योनी
अपेक्षाओ आ समस्त द्रव्योनु अवगाहन समस्त लोकाकाशभां छे. ॥सू० ८४॥

જાવ સર્વલોગં ફુસંતિ ? એગં દર્બં પડુચ્ચ નો સંખિજ્જહ ભાગં
ફુસહ, અસંખિજ્જહ ભાગં ફુસહ નો સંખિજ્જે ભાગે ફુસહ,
નો અસંખિજ્જે ભાગે ફુસહ, નો સર્વલોગં ફુસહ । નાણાદર્વાહં
પડુચ્ચ નિયમા સર્વલોગં ફુસંતિ । એવં અવત્તર્વગદર્વાહં
ભાણિયર્વાહં ॥સૂ૦ ૮૫॥

છાયા—નૈગમવ્યવહારયોઃ આનુપૂર્વી દ્રવ્યાણિ લોકસ્ય કિં સંખ્યેયતમભાગં
સ્પૃશન્તિ ? અસંખ્યેયતમભાગં સ્પૃશન્તિ ? સંખ્યેયાન્ ભાગાન્ સ્પૃશન્તિ ? અસંખ્યે-
યાન્ ભાગાન્ સ્પૃશન્તિ ? સર્વલોકં સ્પૃશન્તિ ? । એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય લોકસ્ય સંખ્યે-

અવ સૂત્રકાર સ્પર્શનાદ્વાર નામક ચતુર્થ ભેદ કા કથન કરતે હૈં—
“ નૈગમવવહારાણં ” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(નૈગમવવહારાણં આણુપુર્વી દર્વાહં લોગસ્સ કિં સંખે-
જ્જહ ભાગં ફુસંતિ ?) નૈગમવ્યવહારનય સંમત અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય
કયા લોક કે સંખ્યાતવે ભાગ કા સ્પર્શ કરતે હૈં ? (અસંખેજ્જહ ભાગં
ફુસંતિ) યા અસંખ્યાતવે ભાગ કા સ્પર્શ કરતે હૈં (સંખેજ્જે ભાગે
ફુસંતિ) યા સંખ્યાત ભાગોં કા સ્પર્શ કરતે હૈં ? (અસંખેજ્જે ભાગે
ફુસંતિ) યા અસંખ્યાત ભાગોં કા સ્પર્શ કરતે હૈં ? (સર્વલોગં ફુસંતિ)
સમસ્ત લોક કા સ્પર્શ કરતે હૈં— ?

ઉત્તર—(એગં દર્બં પડુચ્ચ લોગસ્સ સંખેજ્જહ ભાગં વા ફુસહ
જાવ સર્વ લોગં વા ફુસહ) વ્યણુક સ્કંધ સે લેકર અનન્તાણુ સ્કંધ

હવે સૂત્રકાર અનુગમના સ્પર્શના નામના ચોથા દ્વારનું નિરૂપણ કરે છે—
“ નૈગમવવહારાણં ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(નૈગમવવહારાણં આણુપુર્વી દર્વાહં લોગસ્સ કિં સંખેજ્જહ ભાગં
ફુસંતિ ?) નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યો શું લોકના
સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? (અસંખેજ્જહ ભાગં ફુસંતિ ?) કે અસં-
ખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? (સંખેજ્જે ભાગે ફુસંતિ ?) કે સંખ્યાત
ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે ? (અસંખેજ્જે ભાગે ફુસંતિ ?) કે અસંખ્યાત ભાગોનો
સ્પર્શ કરે છે ? (સર્વલોગં ફુસંતિ ?) કે સમસ્ત લોકનો સ્પર્શ કરે છે ?

ઉત્તર—(એગં દર્બં પડુચ્ચ લોગસ્સ સંખેજ્જહ ભાગં વા ફુસહ જાવ સર્વ-
લોગં વા ફુસહ) ત્રિઅણુક સ્કંધથી લઈને અનન્તાણુ સ્કંધ પર્યંતના આનુ-

યતમભાગં વા સ્પૃશતિ યાવત્ સર્વલોકં વા સ્પૃશતિ । નાના દ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય નિય-
માત્ સર્વલોકં સ્પૃશન્તિ । નૈગમવ્યવહારયોરનાનુપૂર્વી દ્રવ્યાણિ લોકસ્ય કિં સંખ્યે-
યતમભાગં સ્પૃશન્તિ । યાવત્ સર્વલોકં સ્પૃશન્તિ ? એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય નો સંખ્યેય-
તમભાગં સ્પૃશતિ, અસંખ્યેયતમભાગં સ્પૃશતિ, નો સંખ્યેયાન્ ભાગાન્ સ્પૃશતિ, નો
અસંખ્યેયાન્ ભાગાન્ સ્પૃશતિ, નો સર્વલોકં સ્પૃશતિ । નાના દ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય
નિયમાત્ સર્વલોકં સ્પૃશન્તિ । એવમ્ અવક્તવ્યક દ્રવ્યાણિ મણિતવ્યાનિ ॥સૂ.૮૫॥

તક કે આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં સે સામાન્યતઃ કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય-
લોક કે સંખ્યાતવેં ભાગ કી કોઈ એક લોક કે અસંખ્યાતવેં ભાગ કી
કોઈ એક સંખ્યાત ભાગોં કી કોઈ એક અસંખ્યાત ભાગોં કી ઓર કોઈ
એક સર્વ લોક કી સ્પર્શના કરતે હૈં (ળાળા દવ્વાઈં પડુચ્ચ નિયમા સવ્વ-
લોગં ફુસંતિ) તથા નના આનુપૂર્વી દ્રવ્ય-અનન્ત આનુપૂર્વી પરિણામયુક્ત
દ્રવ્ય નિયમ સે સર્વલોક કી સ્પર્શના કરતે હૈં । (ળેગમવવહારાણં અળા-
ળુગ્ગ્વી દવ્વાઈં લોયસ્સ કિં સંખેજ્જહ ભાગં ફુસંતિ, જાવ સવ્વલોગં
ફુસંતિ ?) નૈગમ વ્યવહાર નય સંમત સમસ્ત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં કોઈ
એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય વ્યા લોક કે સંખ્યાતવેં ભાગ કી સ્પર્શના કરતે હૈં ?

ઉત્તર- (એગં દવ્વં પડુચ્ચ નો સંખિજ્જહ ભાગં ફુસહ, અસંખિ
જ્જહ ભાગં ફુસહ નો સંખિજ્જે ભાગે ફુસહ, નો અસંખિજ્જે ભાગે
ફુસહ, નો સવ્વલોગં ફુસહ) એક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા લેકર અનાનુપૂર્વી

પૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, કોઈ એક આનુપૂર્વી
દ્રવ્ય લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય
લોકના સંખ્યાત ભાગોનો, કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના અસંખ્યાત
ભાગોનો અને કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સમસ્ત લોકનો સ્પર્શ કરે છે.
(ળાળા દવ્વાઈં પડુચ્ચ નિયમા સવ્વલોગં ફુસંતિ) તથાવિવિધ આનુપૂર્વી
દ્રવ્ય-અનન્ત આનુપૂર્વી પરિણામયુક્ત દ્રવ્ય નિયમથી સર્વલોકની સ્પર્શના કરે છે.

(ળેગમવવહારાણં ળાળાળુગ્ગ્વી દવ્વાઈં લોગસ્સ કિં સંખેજ્જહ ભાગં
ફુસંતિ, જાવ સવ્વલોગં ફુસંતિ ?) નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત સમસ્ત
અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાંનું કોઈ એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય શું લોકના સંખ્યાતમાં
ભાગની કે અસંખ્યાતમાં ભાગની, કે સંખ્યાત ભાગોની, કે અસંખ્યાત
ભાગોની કે સમસ્ત લોકની સ્પર્શના કરે છે ?

ઉત્તર- (એગં દવ્વં પડુચ્ચ નો સંખિજ્જહ ભાગં ફુસહ, અસંખિજ્જહ
ભાગં ફુસહ, નો સંખિજ્જે ભાગે ફુસહ, નો અસંખિજ્જે ભાગે ફુસહ, નો સવ્વ-

ટીકા—‘નેગમત્રવહારાણં’ इत्यादि ।

ક્ષેત્રદ્વારવત્ અત્રાઽપિ પ્રશ્નોત્તરપ્રકારો બોધ્યઃ । ક્ષેત્રસ્પર્શનયો સ્ત્વયં વિશેષઃ ।
પરમાણુદ્રવ્યસ્યાવગાહના-એકરિમન્નાકાશપ્રદેશે ભવતિ તત્ ક્ષેત્રમ્, સ્પર્શના તુ
પરમાણુદ્રવ્યસ્ય સપ્તમ્ પ્રદેશેષુ. ષડ્ દિગ્વ્યવસ્થિતાન્ ષટ્પ્રદેશાન્ યત્ર ચ સ્વાવ-
ગાહના તમપિ પ્રદેશં સ્પૃશતિ પરમાણુદ્રવ્યમ્ ।

દ્રવ્ય લોક કે સંખ્યાત ભાગ કી સ્પર્શનતા નહીં કરતા હૈ । કિન્તુ અસં-
ખ્યાત ભાગ કી હી સ્પર્શના કરતા હૈ । લોક કે સંખ્યાત ભાગોં કી
વહ સ્પર્શના નહીં કરતા હૈ, અસંખ્યાત ભાગોં કી વહ સ્પર્શના નહીં
કરતા હૈ ઓર ન વહ સર્વલોક કી સ્પર્શના કરતા હૈ । (નાના દ્રવ્યાઈ
પહુન્ચ નિયમા સર્વલોયં ફુસંતિ) નાના દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા વે અનાનુ-
પૂર્વી દ્રવ્ય નિયમતઃ સમસ્ત લોક કી સ્પર્શના કરતે હૈ । (એવં અવત્ત-
વગદ્રવ્યાઈ ભાણિયદ્રવ્યાઈ) હસી પ્રકાર સે નાના અવત્તવ્યક દ્રવ્યોં કે
વિષય મેં બી જાનના ચાહિયે ।

ભાવાર્થ- ક્ષેત્રદ્વાર કી તરહ યહાં પર બી પ્રશ્નોત્તર કા પ્રકાર
જાનના ચાહિયે । ક્ષેત્ર કે સ્પર્શન મેં યહ ભેદ હૈ કિ પરમાણુદ્રવ્ય કી જો
અવગાહના એક આકાશ પ્રદેશ મેં હોતી હૈ વહ ક્ષેત્ર હૈ, તથા પરમાણુ
કી જો નિવાસસ્થાન રૂપ આકાશ કે ચારોં ઓર કે પ્રદેશોં કો છૂના
હોતા હૈ વહ સ્પર્શના હૈ યહ ઉત્કૃષ્ટ સ્પર્શ-છૂના પરમાણુ કા આકાશ

લોગં ફુસડ) એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો
આ પ્રમાણે કથન સમજવું-એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાતમાં
ભાગની સ્પર્શના કરતું નથી, સંખ્યાત ભાગોની સ્પર્શના પણ કરતું નથી,
અસંખ્યાત ભાગોની સ્પર્શના પણ કરતું નથી, અને સમસ્ત લોકની પણ
સ્પર્શના કરતું નથી, પણ અસંખ્યાતમાં ભાગની જ સ્પર્શના કરે છે.
(નાનાદ્રવ્યાઈ પહુન્ચ નિયમા સર્વલોયં ફુસંતિ) વિવિધ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ
વિચાર કરવામાં આવે તો તે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો નિયમથી જ સમસ્ત લોકની
સ્પર્શના કરે છે (એવં અવત્તવગદ્રવ્યાઈ ભાણિયદ્રવ્યાઈ) એજ પ્રમાણે અવ-
ત્તવ્યક દ્રવ્યોની સ્પર્શના વિષે પણ સમજવું.

ભાવાર્થ-ક્ષેત્રદ્વારના જેવા જ અહીં પણ પ્રશ્નોત્તરના પ્રકાર સમજવા
ક્ષેત્ર અને સ્પર્શનમાં એ ભેદ છે કે પરમાણુદ્રવ્યની અવગાહના જે એક
આકાશપ્રદેશમાં થાય છે તે ક્ષેત્રરૂપ છે, તથા પરમાણુ વડે તેના નિવાસસ્થાન
રૂપ આકાશના ચારે તરફના પ્રદેશોનો જે સ્પર્શ થાય છે તેનું નામ સ્પર્શના
છે. પરમાણુનો તે ઉત્કૃષ્ટ સ્પર્શ આકાશના સાત પ્રદેશોમાં થાય છે. તે સાત

यत्तु सौगताः-परमाणुद्रव्यमादिमध्यान्त्यादिविभागरहितं निरंशमेकस्वरूप-
मिष्यते तस्य परमाणुद्रव्यस्य पृथग्दिक्स्पर्शनाऽभ्युपगमे तदेकत्वसिद्धान्तो-
नोपपद्यते-यदि येनैव स्वरूपेण परमाणुः पूर्वाद्यन्यतरदिशया सम्बद्धस्तेनैवान्य-
दिग्भिरित्युच्यते, तर्हि-अयं पूर्वदिक्सम्बद्धः, अयं चापरदिक्सम्बद्ध इत्यादि
विभागो न स्यात्, एकस्वरूपत्वात्, यदि विभागाभाव एक इष्ट इत्युच्यते, तर्हि-

के सात प्रदेशों में होता है चारों दिशाओं के चार प्रदेश और ऊपर
नीचे के दो एवं जहां उसकी अपनी अवगाहना है एक वह प्रदेश इस
प्रकार ये सात प्रदेश हैं। 'इस स्पर्शना के विषय में जो बौद्धों का
ऐसा कहना है कि परमाणु द्रव्य तो आदि मध्य, और अन्त आदि के
विभाग से निरंश एक रूप है। फिर वह छह दिशाओं को स्पर्श करता
है, ऐसा स्वीकार कैसे किया जा सकता है? यदि ऐसा स्वीकार किया जावे
तो उसमें एकत्व का सिद्धान्त घटित नहीं हो सकता है क्योंकि जिस-
स्वरूप से परमाणु पूर्वआदि किसी एक दिशा से सम्बद्ध है यदि वह
उसी स्वरूप से अन्य दिशाओं से भी सम्बद्ध है तो इस मान्यता में
फिर ऐसा विभाग नहीं बन सकता कि यह परमाणु का पूर्व दिग् सम्बद्ध
प्रदेश है यह अपर दिक्सम्बद्ध प्रदेश है। क्योंकि वह एकरूप स्वीकार
किया गया है। अतः यह मानना चाहिये कि परमाणु जब सप्त प्रदेशों
को छूता है तो उसमें विविध रूपता होने से वह एक रूप नहीं हो

प्रदेश नीचे प्रमाणे छे-चारै दिशाओना चार प्रदेश, उपरने। ओक प्रदेश, अने
नीचेने। ओक प्रदेश अने ज्यां तेनी पोतनी अवगाहना छे ते ओक प्रदेश-
आ रीते ते वधारेमां वधारे सात आकाशप्रदेशोने। स्पर्श करे छे। आ
स्पर्शना विषयमां औद्घोनी ओवी जे मान्यता छे के परमाणु द्रव्य तो आदि,
मध्य अने अन्त आदिना विभागथी रहित निरंश (अंश रहित)-ओकइप
ज छे तो पछी ओवे। स्वीकार केवी रीते करी शकय के ते छ दिशाओने।
स्पर्श करे छे? जे ओवे। सिद्धांत स्वीकारामां आवे तो तेमां ओकत्वने।
सिद्धांत घटित थछ शकतो नथी, कारण के स्वइपे परमाणु पूर्वादि केछ ओक
दिशामां संभद्ध छे, ओवां ज स्वइपे जे ते अन्य दिशाओ साथे पछु
संभद्ध होय, तो आ मान्यतामां ओवे। विभाग संभवी शकतो नथी के
परमाणुने। आ प्रदेश पूर्वादिभाग साथे संभद्ध छे अने आ प्रदेश पश्चिम
दिग्भाग साथे संभद्ध छे, कारण के तेने तो निरंश इपे (ओक इपे) स्वीका-
रवामां आव्यो छे। तेथी ओबुं मानवुं जेछओ के परमाणु सात प्रदेशोने।
स्पर्श करतुं होवाथी तेमां विविध रूपता होवाथी ते ओकइप होछ शकतुं

ષટ્કદિક્સમ્બન્ધકથનં વિરુદ્ધયતે, યદિ યેન સ્વરૂપેણ પરમાણુઃ પૂર્વાઘન્યતરદિશયા સમ્બદ્ધસ્તદ્વિન્નમિન્નસ્વરૂપેણાપરદિગ્મિઃ સંવધ્યતે इत्युच्यते તર્હિ પરમાણોઃ-ષટ્ સ્વરૂપાવચ્યા એકત્વં હીયતે, ઇતિ વદન્તિ તન્ન સમ્યક્.

પરમાણુર્દ્રવ્યતયા નિરંશ એવ, એક એવ, તથાપિ પરમાણોઃ પરિણામશક્તિ-રચિન્ત્યાઽસ્તીતિ તથાવિધપરિણામસદ્ભાવાદ્ દિક્ષટ્ટકેન સહ નૈરન્તર્યેણાવસ્થાનં સંભવતીતિ તસ્ય સપ્તસુ પ્રદેશેષુ સ્પર્શના કથનં નાનુપપન્નમિતિ ॥ સૂ૦ ૮૫ ॥

સકતા છે. યદિ એક રૂપના માનને કે લિધે વિવિધ રૂપતારૂપ વિભાગ કા અભાવ હી ઇષ્ટ રહ્યા જાવે તો ફિર ઉસમેં ષટ્કદિક છ દિશાઓંકા સંબંધ કથન વિરુદ્ધ પડતા છે. તાત્પર્ય હસકા યહ છે કે પરમાણુ જિસ સ્વરૂપ સે પૂર્વ આદિ કિસી એક દિશા કે સાથ સંબદ્ધ છે ઉસકા વહ નિજરૂપ ભિન્ન છે ઓર અપર આદિ દિશાઓં કે સાથ સંબદ્ધ સ્વરૂપ ભિન્ન છે તો ફિર હસ પ્રકાર સ્વરૂપ મેં ભિન્નતા આને કે કારણ-છહ સ્વરૂપતા કી આપત્તિ કા પ્રસંગ-હો જાને કે કારણ-ઉસમેં એકત્વ કી હીનતા હી આતી છે.

અતઃ બૌદ્ધોં કા એસા કથન ઠીક નહીં છે-ક્યોં કે પરમાણુ દ્રવ્ય-રૂપ હોને કે કારણ નિરંશ હી છે એક હી છે ફિરભી પરમાણુ કી પરિમાણ શક્તિ અચિન્ત્ય છે હસકા કારણ ઉસ પ્રકાર કે પરિણામ કે સદ્ભાવ સે છહ દિશાઓં કે સાથ ઉસકા નિરન્તર રૂપ અવસ્થાન સંભવિત છે. હસલિયે સાત પ્રદેશોં મેં સ્પર્શ ના કથન અઘટિત નહીં છે ॥ સૂ૦ ૮૫ ॥

નથી જો એકરૂપતા માનવાને માટે વિવિધ રૂપતા રૂપ વિભાગનો અભાવ જ ઇષ્ટ માનવામાં આવે, તો તેમાં છ દિશાઓ સાથે સંબદ્ધ હોવાનું કથન વિરુદ્ધ પડે છે આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે પરમાણુ જે સ્વરૂપે પૂર્વાદિ કોઈ એક દિશાની સાથે સંબદ્ધ છે, તેનું તે નિજરૂપ ભિન્ન છે અને પશ્ચિમ આદિ દિશાઓની સાથે સંબદ્ધ સ્વરૂપ પણ ભિન્ન હોય તો આ રીતે સ્વરૂપમાં ભિન્નતા આવવાને કારણે છ પ્રકારના સ્વરૂપો માનવાનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થશે અને તે કારણે તેમાં એકત્વનો અભાવ આવવાનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થશે.

તેથી બૌદ્ધોની એ પ્રકારની માન્યતા સાચી નથી, કારણ કે પરમાણુ દ્રવ્ય રૂપ હોવાને કારણે નિરંશ જ છે-એક જ છે, છતાં પણ પરમાણુની પરિણામશક્તિ અચિન્ત્ય છે. તે કારણે તે પ્રકારના પરિણામના સદ્ભાવમાં છ દિશાઓની સાથે તેનું નિરંતર રૂપ અવસ્થાન સંભવિત છે. તેથી સાત દિશાઓમાં તેના સ્પર્શનું કથન અઘટિત (અનુચિત) નથી. ॥સૂ૦ ૮૫॥

ઉક્તં સ્પર્શનાદારમ્, રૂદાનીં પશ્ચમં કાલદ્વારમાહ—

મૂલમ્—નેગમવવહારાણં આણુપુઁવી દવ્વાઈં કાલઓ કેવ-
ચ્ચિરં હોઈ? ઇગં દવ્વં પહુચ્ચ જહ્ણણેણં ઇગં સમયં ઉક્કોસેણં
અસંખેજ્જં કાલં, ણાણાદવ્વાઈં પહુચ્ચ ણિયમા સવ્વદ્ધા । અણા-
ણુપુઁવી દવ્વાઈં અવત્તવ્વગ દવ્વાઈંચ ઇવંચેવ માણિયવ્વાઈં । સૂ. ૮૬।

જાયા—નેગમવવહારયોરાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કાલતઃ કિયચ્ચિરં ભવન્તિ? એકં
દ્રવ્યં પ્રતીત્ય જઘન્યેન ઇવં સમયમ્, ઉત્કર્ષેણ અસંખ્યેયં કાલમ્ । નાના દ્રવ્યાણિ
પ્રતીત્ય નિયમાત્ સર્વાદ્ધા । અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિઅવત્તવ્યક દ્રવ્યાણિ ચ ઇવમેવ
મણિતન્યાનિ ॥સૂ. ૮૬॥

સ્પર્શના દ્વાર કો કહ કર અવ સૂત્રકાર પાંચવેં કાલદ્વાર કા કથન
કરતે હૈં—“નેગમવવહારાણં આણુપુઁવી દવ્વાઈં” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(નેગમવવહારાણં આણુપુઁવી દવ્વાઈં) નેગમ ઓર વ્યવ-
હાર ઇન દો નય સંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય (કાલઓ) કાલ કી અપેક્ષા સે
(કેવચ્ચિરં) કિતને કાલ તક (હોઈ) આનુપૂર્વી રૂપ સે રહતે હૈં? (ઇગં
દવ્વં પહુચ્ચ જહ્ણણેણં ઇગં સમયં)

ઉત્તર—આનુપૂર્વી દ્રવ્ય એક આનુપૂર્વી કી અપેક્ષા કો લેકર કમ
સે કમ એક સમય ઓર (ઉક્કોસેણં અસંખેજ્જં કાલં) અધિક સે
અધિક અસંખ્યાત કાલ તક આનુપૂર્વી રૂપ સે રહતા હૈ । (ણાણા-
દવ્વાઈં પહુચ્ચ ણિયમા સવ્વદ્ધા) તથા નાના આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કી અપે-

સ્પર્શનાદારનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર અનુગમના પાંચમાં બેઠ
રૂપ કાળદ્વારનું કથન કરે છે—

“ નેગમવવહારાણં આણુપુઁવી દવ્વાઈં ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(નેગમવવહારાણં આણુપુઁવી દવ્વાઈં) નેગમ અને વ્યવહાર,
આ બે નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો (કાલઓ) કાળની અપેક્ષાએ (કેવચ્ચિરં)
કેટલા કાળ સુધી (હોઈ) આનુપૂર્વી રૂપે રહે છે ?

ઉત્તર—(ઇગં દવ્વં પહુચ્ચ જહ્ણણેણં ઇગં સમયં) એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યની
અપેક્ષાએ વિચારવામાં આવે તો એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ઓછામાં ઓછા એક
સમય સુધી અને (ઉક્કોસેણં અસંખેજ્જં કાલં) વધારેમાં વધારે અસંખ્યાત કાળ
સુધી આનુપૂર્વી રૂપે રહે છે, (ણાણાદવ્વાઈં પહુચ્ચ ણિયમા સવ્વદ્ધા) તથા વિવિધ
આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો અનેક આનુપૂર્વી
દ્રવ્યોની સ્થિતિ સર્વકાળની હોય છે આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે,

ટીકા—‘ જોગમવવહારાણં ’ ઇત્યાદિ—

નૈગમવ્યવહારસમ્મતાનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કાલતઃ=કાલમાશ્રિત્ય કિયચિરં= કિયન્તં કાલં ભવન્તિ? । આનુપૂર્વીત્તરપર્યાયેણ કિયત્કાલમ્ અવતિષ્ઠન્તે? ઇતિ પ્રશ્નુરાશયઃ । સૂત્રે ‘ હોઈ ’ ઇત્યેકવચનમાર્પત્વાત્ ઉત્તરમાદ-આનુપૂર્વીદ્રવ્યમ્ એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય=આશ્રિત્ય જઘન્યત એકં સમયનવતિષ્ઠતે, ઉત્કર્ષતઃ અસંખ્યેય કાલ-મવતિષ્ઠતે । નાનાદ્રવ્યાણિ=વહૂનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય=આશ્રિત્ય તુ નિયમત ઇવાં સર્વાદા=સાર્વકાલિકી સ્થિતિર્ભવતિ । અયં ભાવઃ—પરમાણુદ્વયાદૌ અપરૈકા-દિપરમાણુમીલને સતિ અપૂર્વં કિંચિદાનુપૂર્વીદ્રવ્યમુત્પદ્યતે, તતઃ સમયાદૃશ્વં પુનરણ્યે-

ક્ષા લેકર અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કી સ્થિતિ સાર્વકાલિકી હૈ તાત્પર્યે હસકા યહ હૈ કિ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કા આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ મેં રહને કાં જો એક સમય રૂપ કાલ કહા ગયા હૈ, વહ હસ પ્રકાર સે હૈ કિ—પર-માણુદ્વય આદિ મેં દૂસરે એક આદિ પરમાણુઓં કે મિલને પર એક કોઈ અપૂર્વ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ વાદ મેં એક સમય કે અનન્તર ઉસમેં સે એક આદિ પરમાણુ કે છૂટ જાને પર વહ આનુ-પૂર્વી દ્રવ્ય ઉસ રૂપ સે અપગત (નષ્ટ) હો જાતા હૈ । હસલિયે એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કી, અપેક્ષા સે આનુપૂર્વી રૂપ મેં રહને કા કાલ જઘન્ય સે એક સમય કહા ગયા હૈ । ઓર જબ વહી એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય અસંખ્યાત કાલ તક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ મેં રહકર એક આદિ પરમાણુ સે વિયુક્ત હોના હૈ તવ ઉસકી અવસ્થિતિકા ઉકૃષ્ટ સમય અસંખ્યાત કા કહા ગયા હૈ । અવસ્થિતિકાલ કિસી બી એક

આનુપૂર્વી દ્રવ્યનો આનુપૂર્વી દ્રવ્યરૂપે રહેવાનો જે એક સમય રૂપ કાળ કહ્યો છે તે આ પ્રકારે કહ્યો છે—

પરમાણુ દ્વયણુઆદિમાં (જે પરમાણુમાં) કેઈ એક આદિ અન્ય પરમાણુ મળવાથી કેઈ એક અપૂર્વ દ્રવ્ય ઉત્પન્ન થઈ જાય છે ત્યાર બાદ એક સમય પછી તેમાંથી એક આદિ પરમાણુ વિયુક્ત (અલગ) થઈ જવાથી તે આનુ-પૂર્વી દ્રવ્ય તે રૂપમાંથી અપગત (નષ્ટ) થઈ જાય છે એટલે કે તે રૂપે રહેતું નથી તે કારણે એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી રૂપે રહેવાનો કાળ ઓછામાં ઓછો એક સમયનો કહ્યો છે. અને જ્યારે એજ એક આનુ-પૂર્વીદ્રવ્ય અસંખ્યાત કાળ સુધી આનુપૂર્વી દ્રવ્યરૂપે રહીને એક આદિ પર-માણુ રૂપે વિયુક્ત (અલગ) થઈ જાય છે ત્યારે તેની અવસ્થિતિનો ઉકૃષ્ટ સમય અસંખ્યાત કાળનો કહ્યો છે. કેઈ પણ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યનો અવ-

કાઘણૌ વિયુક્તે સતિ તદાનુપૂર્વીદ્રવ્યમપગતં ભવતિ, અતઃ એકમાનુપૂર્વીદ્રવ્યમધિકૃત્ય જઘન્યતઃ એકઃ સમયોઽવસ્થિતિકાલઃ । યદા તુ તદેવૈકમાનુપૂર્વીદ્રવ્યમસંસ્થિતકાલં તદ્વાવેન સ્થિત્વાઽનન્તરોક્તસ્વરૂપેણ વિયુજ્યતે, તદા તસ્ય ઉત્કૃષ્ટતો ઽસંખ્યેયોઽવસ્થિતિકાલઃ, નત્વનન્તોઽવસ્થિતિકાલઃ, ઉત્કૃષ્ટાયા અપિ પુદ્ગલસંયોગસ્થિતેરસંખ્યેયકાલત્વાત્ । બહૂનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ આશ્રિત્ય તુ ણમાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણાં નિયમતઃ સર્વાદ્વા સ્થિતિર્વૌધ્યા । યતો નાસ્તિ કશ્ચિત્તાદ્દશઃ કાલો યત્ર કાલેઽયં લોક આનુપૂર્વીદ્રવ્યરહિતો ભવેદિતિ ।

આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કા આનુપૂર્વીરૂપ મેં રહને કા કાલ અનન્ત નહીં હોતા હૈ । ક્યોંકિ ઉત્કૃષ્ટ મી પુદ્ગલ સંયોગસ્થિતિ અસંખ્યાત કાલ કી હી હોતી હૈ । અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા તો इन આનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કી સ્થિતિ નિયમતઃ સર્વ કાલકી હૈ । ક્યોંકિ લોક મેં એસા કોઈ કાલ નહીં હૈ કિ જિસમેં યે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય નહીં હોં । (અણાણુપુન્વી દવ્વાઈં અવત્તવ્વગદવ્વાઈં ચ એવં ચેવ માણિયવ્વાઈં) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં ઔર અવક્તવ્યક દ્રવ્યાં મેં મી જઘન્ય ઔર ઉત્કૃષ્ટ રૂપ કાલ એક દ્રવ્ય ઔર અનેક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા લેકર પૂર્વોક્ત રૂપસે હી જાનના ચાહિયે । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ કોઈ એક પરમાણુ એક સમય તક અકેલા રહકર બાદ મેં કિસી દૂસરે પરમાણુ સે સંશ્લિષ્ટ હો જાતા હૈ । ઇસલિયે એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે ડસ અનાનુપૂર્વી રૂપ એક દ્રવ્ય કા અવસ્થિતિ કાલ જઘન્ય સે એક સમય કા ઔર જબ વહી એક પરમાણુ

સ્થિતિકાળ (આનુપૂર્વી રૂપે રહેવાનો કાળ) અનન્ત હોતો નથી, કારણ કે ઉત્કૃષ્ટ પુદ્ગલસંયોગ સ્થિતિ પણ અત્રાપ્યાત કાળની જ હોય છે. અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ તો તે આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની સ્થિતિ નિયમથી જ સર્વાકાલીન હોય છે, કારણ કે લોકમાં એવો કોઈ કાળ નથી કે જ્યારે આનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ જ ન હોય.

(અણાણુપુન્વીદવ્વાઈં અવત્તવ્વગદવ્વાઈં ચ એવં ચેવ માણિયવ્વ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોમાં પણ એક દ્રવ્ય અને અનેક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ પૂર્વોક્ત જઘન્ય કાળ અને ઉત્કૃષ્ટ કાળ સમજી લેવો આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે. કેઈ એક પરમાણુ એક સમય સુધી એકલું રહીને ત્યાર બાદ કોઈ બીજા પરમાણુ સાથે સંશ્લિષ્ટ થઈ જાય છે તેથી એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યનો અવસ્થિતિકાળ (અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપે રહેવાનો કાળ) આજમાં એવો એક સમયનો કહ્યો છે, અને જ્યારે એજ એક પરમાણુ

एवमेव—अनानुपूर्वीद्रव्याणि अवक्तव्यकद्रव्याणि च वक्तव्यानि । आनु-
पूर्वीद्रव्येषु अवक्तव्यद्रव्येषु च जघन्यत उत्कृष्टतश्चापि पूर्वोक्त एवावस्थानकालः ।

अयं भावः—कश्चित्परमाणुरेकं समयमेकाकी स्थित्वा ततोऽन्येन परमाणुना
संश्लिष्टो भवति । अत एकमनानुपूर्वीद्रव्यमधिकृत्य जघन्यत एकः समयोऽवस्थिति-
कालः । स एवैकः परमाणु र्यदा असंख्यातं कालं तद्भावेन स्थित्वाऽन्येन परमाणुना
संश्लिष्यति, तदा उत्कृष्टतोऽसंख्येयोऽवस्थितिकालो भवति । नानाद्रव्याण्याश्रित्य
तु पूर्ववदेव सर्वाद्धा स्थितिर्बोद्ध्या ।

परमाणुद्वयलक्षणमवक्तव्यकद्रव्यमपि यदा समयमेकं संयुक्तं स्थित्वा ततो
वियुज्यते, तदवस्थमेव वा पुनरन्येन परमाणुना संयुज्यते, तदा तस्यावक्तव्यक
द्रव्यतया, एकमयलक्षणः कालस्तस्य जघन्यतोऽवस्थितिकालो बोध्यः । यदा तु

અસંખ્યાત કાલ તક અકેલે રહને કી સ્થિતિ મેં રહકર બાદ મેં કિસી
દૂસરે પરમાણુ સે સંશ્લિષ્ટ હો જાના હૈ તચ उसका अवस्थितिकाल
उत्कृष्ट से असंख्यात काल माना जाता है नाना द्रव्यों की अपेक्षा
से इन अनानु पूर्वी द्रव्यों की अवस्थिति का समय सर्वकाल माना
गया है क्योंकि लोक में ऐसा कोईसामी समय नहीं है कि जिसमें
ये अनानुपूर्वी द्रव्य न हों । एक परमाणुरूप द्रवरूप अवक्तव्यक द्रव्य
भी जब एक समय तक संयुक्त रह कर फिर वियुक्त हो जाता है तब
उसका अवस्थिति काल जघन्य से एक समय माना गया है, अथवा
जब वह उसी स्थिति में एक समय तक रहते हुए किसी और दूसरे
परमाणु से संयुक्त हो जाता है तब उसका अवस्थितिकाल जघन्य से एक
समय का माना गया है । और जब वही अवक्तव्यक द्रव्य असंख्यात

અસંખ્યાત કાળ સુધી એકલું રહીને ત્યાર બાદ કોઈ બીજા પરમાણુની સાથે
સંશ્લિષ્ટ થઈ જાય છે, ત્યારે તેનો અવસ્થિતિ કાળ અધિકમાં અધિક અસં-
ખ્યાત કાળનો મનાય છે વિવિધ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચારવામાં આવે તો
તે અનુપૂર્વી દ્રવ્યોનો અવસ્થિતિકાળ સર્વકાલીન માનવામાં આવ્યો છે,
કારણ કે લોકમાં એવો કોઈ સમય નથી કે જ્યારે આ અનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું
અસ્તિત્વ જ ન હોય.

જે પરમાણુ રૂપ એક અવક્તવ્યક દ્રવ્ય પણ જ્યારે એક સમય સુધી
સંયુક્ત રહીને ત્યાર બાદ વિલક્ત થઈ જાય છે, ત્યારે તેનો જઘન્ય અવસ્થિતિ
કાળ એક સમયનો માનવામાં આવે છે અથવા જ્યારે તે એજ સ્થિતિમાં
એક સમય સુધી રહીને ત્યાર બાદ કોઈ એક બીજા પરમાણુ સાથે સંશ્લિષ્ટ

તદેવાવક્તવ્યકદ્રવ્યં અસંખ્યાતં કાલં તદ્ભાવેન સ્થિત્વા વિષટતે, તદવસ્થમેવ વા પુનરન્યેન પરમાણુના સંશ્લિષ્યતિ, તદા ઉત્કૃષ્ટતો અવક્તવ્યકદ્રવ્યતયા અસંખ્યાત-કાલસ્તદવસ્થિતિકાલો बोध्यः । नानाद्रव्याभ्याश्रित्य तु पूर्ववत् सर्वाद्वाऽव-स्थितिकालो बोध्यः ॥सू० ८६॥

સમ્પ્રતિ પઠમન્તરદ્વારમાહ—

મૂલમ્—ળેગમવવહારાણં આણુપુર્વીદવ્વાણં અંતરં કાલઓ કેવચ્ચિરં હોર્ઈ? ઇગં દવ્વં પહુચ્ચ જહન્નેણં ઇગં સમયં ઉક્કોસેણં અણંતં કાલં, નાણાદવ્વાઈં પહુચ્ચ ણત્થિ અંતરં । ળેગમવવહારાણં અણાણુપુર્વીદવ્વાણં અંતરં કાલઓ કેવચ્ચિરં હોર્ઈ? ઇગં દવ્વં પહુચ્ચ જહંણેણં ઇગં સમયં ઉક્કોસેણં અસંસેજ્જં કાલં, નાણાદવ્વાઈં પહુચ્ચ ણત્થિ અંતરં । ળેગમવવહારાણં અવત્તગ-

કાલ તક તદ્ભાવ સે સ્થિત રહકર ફિર વિષટિત હો જાતા હૈ, અથવા જબ ઘહ-ઉસી સ્થિતિ મેં અસંખ્યાત કાલ તક રહતા હુઆ ઘાદ મેં કિસી દૂસરે પરમાણુ સે સંશ્લિષ્ટ હો જાતા હૈ તબ ઉત્કૃષ્ટ સે ઉસકા અવક્તવ્યક દ્રવ્ય રૂપ સે અવસ્થિતિ કાલ અસંખ્યાત કાલ પ્રમાણ માના જાતા હૈ । નાના અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા હન અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કા અવસ્થિતિ કાલ સર્વકાલિક માના ગયા હૈ । વર્ષોંકિ લોક મેં ઇસા કોઈં બી સમય નહીં હૈ કિ જિસમેં હનકી અવસ્થિતિ ન હો ॥સૂ० ૮૬॥

થઈ જાય છે ત્યારે તેનો અવસ્થિતિ કાળ જઘન્યની અપેક્ષાએ એક સમયનો ગણાય છે, અને જ્યારે તે અવક્તવ્યક દ્રવ્ય અસંખ્યાત કાળ સુધી એજ સ્થિતિમાં રહીને ત્યાર બાદ વિષટિત (વિલક્ષત) થઈ જાય છે, એટલે કે જ્યારે તે એજ સ્થિતિમાં અસંખ્યાત કાળ સુધી રહે છે અને ત્યાર બાદ કોઈ બીજા પરમાણુ સાથે સંશ્લિષ્ટ (સંયુક્ત) થઈ જાય છે, ત્યારે તેનો અવક્તવ્યક દ્રવ્યરૂપે રહેવાનો કાળ (અવસ્થિતિ કાળ) અધિકમાં અધિક અસંખ્યાત કાળ પ્રમાણ માનેવામાં આવ્યો છે.

વિવિધ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ તે અવક્તવ્યક દ્રવ્યોનો અવસ્થિતિ કાળ (અવક્તવ્યક દ્રવ્યરૂપે રહેવાનો સમય) સર્વકાલીન કહ્યો છે. એટલે કે એવો કોઈ પણ સમય નથી કે જ્યારે તેમની અવસ્થિતિ (અસ્તિત્વ) જ ન હોય. ॥ સૂ० ૮૬ ॥

દ્રવ્યાણં અંતરં કાલઑ કેવચ્ચિરં હોઈ ? એગં દ્રવ્યં પદુચ્ચ-
જહન્નેણં એગં સમયં ઉક્કોસેણં અણંતં કાલં, નાનાદ્રવ્વાઈં પદુચ્ચ-
ણત્થિ અંતરં ॥સૂ૦ ૮૭॥

છાયા—નૈગમવ્યવહારયોરનાનુપૂર્વી દ્રવ્યાણામન્તરં કાલતઃ કિયચ્ચિરં ભવતિ ?
એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય જઘન્યેન એકં સમયમ્, ઉત્કર્ષેણ અનન્તં કાલમ્, નાનાદ્રવ્યાણિ
પ્રતીત્ય નાસ્તિ અન્તરમ્ । નૈગમવ્યવહારયોરનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણામ્ અન્તરં કાલતઃ કિય-
ચ્ચિરં ભવતિ ? એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય જઘન્યેન એકં સમયમ્, ઉત્કર્ષેણ અસંખ્યેયં

અવ સૂત્રકાર અન્તરદ્વારકી પ્રરૂપણા કરતે હૈં

“જેગમવ્યવહારાણં” ઇત્યાદિ

શબ્દાર્થ-પ્રશ્ન-(જેગમવ્યવહારાણં આણુપુઘ્વીદ્રવ્વાણં અંતરં કાલઑ
કેવચ્ચિરં હોઈ)

પ્રશ્ન-નૈગમ વ્યવહારનય સંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કા વ્યવધાન
કાલ કી અપેક્ષા કિતને કાલ કા હોતા હૈ ? અર્થાત્ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય
આનુપૂર્વી સ્વરૂપ કા પરિત્યાગ કરકે પુનઃ ઉસ આનુપૂર્વી સ્વરૂપ કો
જિતને કાલ કે વ્યવધાન સે પ્રાપ્ત કરતે હૈં ઉસ કાલ વ્યવધાન કા નામ
અર્થાત્ વિરહ કાલ કા નામ અંતર હૈ । યહાં અંતર યહ કાલ કી અપેક્ષા
સે શિષ્ય ને પૂછા હૈ । ક્યોંકિ અંતર ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા સે બી હોતા હૈ ।
હસીલિયે યહાં ઉસ ક્ષેત્ર ગત અંતર કે પરિહારાર્થ કાલ પદ કા પ્રયોગ
સૂત્રકાર ને કિયા હૈ ।

હવે સૂત્રકાર અન્તરદ્વારની પ્રરૂપણા કરે છે-“જેગમવ્યવહારાણં” ઇત્યાદિ-

શબ્દાર્થ-પ્રશ્ન-(જેગમવ્યવહારાણં આણુપુઘ્વીદ્રવ્વાણં અંતરં કાલઑ કેવ-
ચ્ચિરં હોઈ ?) નૈગમ અને વ્યવહાર, આ બન્ને નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યનું
વ્યવધાન (અંતરવિરહમાળ) કાળની અપેક્ષાએ કેટલા કાળનું હોય છે ?
આનુપૂર્વી દ્રવ્ય આનુપૂર્વી સ્વરૂપને ત્યાગ કર્યા બાદ ફરીથી તે આનુપૂર્વી
દ્રવ્યરૂપ સ્વરૂપને જેટલા કાળના વ્યવધાન (અંતર) બાદ પ્રાપ્ત કરે છે, તે
વ્યવધાન કાળનું નામ અથવા વિરહકાળનું નામ અંતર છે અહીં શિષ્યે
કાળની અપેક્ષાએ તે અંતરના વિષયમાં પ્રશ્ન પૂછ્યો છે. ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ
પણ અંતર હોઈ શકે છે, પણ અહીં ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ અંતર પૂછ્યું નથી
અહીં તે કાળની અપેક્ષાએ અંતર પૂછ્યું છે. તેથી જ અહીં “કાલઑ
કેવચ્ચિરં” આ સૂત્રપાઠ મૂક્યો છે.

कालम्, नानाद्रव्याणि प्रतीत्य नास्ति अन्तरम्। नैगमव्यवहारयोरवक्तव्यद्रव्या-
णाम् अन्तरं कालतः कियच्चिरं भवति ? एकं द्रव्यं प्रतीत्य जघन्येन एकं समयम्,
उत्कर्षेण अनन्तं कालम्, नानाद्रव्याणि प्रतीत्य नास्ति अन्तरम् ॥ सू० ८७ ॥

टीका—‘ नैगमव्यवहाराणं ’ इत्यादि—

नैगमव्यवहारसम्मतानाम् आनुपूर्वीद्रव्याणाम् अन्तरं=व्यवधानं कालतः=
कालमाश्रित्य कियच्चिरं=कियत्कालावधि भवति ? । क्षेत्रतोऽप्यन्तरं भवत्यतस्त-
द्रव्यवच्छेदाय प्राह—‘ कालो केवच्चिरं ’ इति । आनुपूर्वीद्रव्याणाम् आनुपूर्वी
स्वरूपतां परित्यज्य पुनस्तत्प्राप्ति र्थावता कालेन भवति स किं परिमाणः कोलो
भवतीति प्रश्नः । उत्तरमाह—एकं द्रव्यं प्रतीत्य=आश्रित्य जघन्यत एकं समयमन्त-
रम्, उत्कर्षतस्तु अनन्तं कालमन्तरम् । नानाद्रव्याणि प्रतीत्य तु अन्तरं नास्ति ।
अयं भावः—व्यणुकचतुरणुकादीनां मध्ये किमप्यानुपूर्वीद्रव्यं विश्रसापरिणामात्
प्रयोगपरिणामाद् वा खण्डशो विद्युज्य परित्यक्तानुपूर्वीभावं संजातम् । पुनस्तत्
एकसमयाद्धर्मे विश्रसादिपरिणामात् पुनस्तैरेव परमाणुभिस्तथैव निष्पन्नम् । इत्थं

उत्तर—(एगं दव्वं पडुच्च जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोसेणं अणंतं-
कालं) एक आनुपूर्वी द्रव्य की अपेक्षा जघन्य अंतर एक समय का
और उत्कृष्ट अंतर अनंत काल का है (नाणा दव्वाइं पडुच्च णत्थि
अंतरं) तथा नाना द्रव्यों की अपेक्षा अंतर नहीं है । इस कथन का
भाव यह है कि व्यणुक, चतुरणुक आदि आनुपूर्वी द्रव्य में से कोई
एक आनुपूर्वी द्रव्य स्वाभाविक अथवा प्रायोगिक परिणामन से खंड
खंड होकर आनुपूर्वी पर्याय से रहित हो गया अब पुनः वही द्रव्य
एक समय के बाद स्वाभाविक आदि परिणाम के निमित्त से उन्हीं

उत्तर—(एगं दव्वं पडुच्च जहण्णेणं एगं समयं उक्कोसेणं अणंतं कालं)
एक आनुपूर्वी द्रव्यनी अपेक्षाओ ओछांभां ओछुं अंतर (विरुद्धाण) ओक
समयनुं अने वधारेभां वधारे अंतर अनंत कालनुं डेय्ये छे. (नाणा दव्वाइं
पडुच्च णत्थि अंतरं) तथा विविध द्रव्योनी अपेक्षाओ विचारवामां आवे तो
ओवा अंतरने। सहभाव नथी. आ कथनने। लोवार्थ नीचे प्रभाषे छे—
त्रसु अलुवाणुं, चार अलुवाणु आदि आनुपूर्वी द्रव्योभांथी केछि ओक आनु-
पूर्वी द्रव्य स्वाभाविक अथवा प्रायोगिक परिणामन वडे अंड अंड थछ नधने
आनुपूर्वी पर्यायथी रहित थछ गयेलुं डवे ओन द्रव्य ओक समय पाड करीथी
स्वाभाविक आदि परिणामन द्वारा ओन परमाणुओना संयोगथी ओन आनुपूर्वी

ચ એકં દ્રવ્યમાશ્રિત્યાનુપૂર્વીત્વસ્ય પરિત્યાગે પુનર્ભાવે ચ સતિ મધ્યે યોઽન્તરઃ સ જઘન્યત એકસમયાત્મકો બોધ્યઃ, ઉત્કૃષ્ટતસ્તુ અન્તરમનન્તકાલં ભવતિ। તથાહિ તદેવ વિવક્ષિતં કિમપ્યાનુપૂર્વીદ્રવ્યં પૂર્વવદેવ ભિન્નમ્, તતસ્તે પરમાણ્વોઽન્યેષુ પરમાણુદ્વચણુકત્રયણુકપ્રભૃતિષુ અનન્તાણુકસ્કન્ધપર્યન્તેષુ પ્રતિસ્થાનમુત્કૃષ્ટાં સ્થિતિમનુભવન્તઃ પર્યટન્તિ। इत्थं पर्यटनं कृत्वा कालस्यानन्तत्वाद् विश्रसादिपरिणामतः पुनर्यदा तैरेव परमाणुभिस्तदेव विवक्षितमानुपूर्वीद्रव्यं जायते तदा उत्कृष्टतोऽनन्त

પરમાણુઓં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન હો ગયા-વિવક્ષિત આનુપૂર્વી રૂપ ઘન ગયા। इस प्रकार एक आनुपूर्वी द्रव्य को आश्रित करके आनुपूर्वी स्वरूप के परित्याग हो जाने पर और पुनः उसी स्वरूप में आने पर बीच में जो अन्तर पड़ा वह जघन्य से एक समय का पड़ा-इस प्रकार यह एक समय का अन्तर जानना चाहिये। तथा उत्कृष्ट से अन्तर अनंत काल का, इस प्रकार से अजाता है कि कोई एक विवक्षित आनुपूर्वी द्रव्य पूर्वोक्त रूप से आनुपूर्वी पर्याय से रहित हो गया। इस प्रकार निर्गत वे परमाणु अन्य द्व्यणुक त्र्यणुक आदि से लेकर अनन्त स्कंध पर्यन्त रूप अनन्त स्थानों में प्रत्येक उत्कृष्ट काल की स्थिति का अनुभव करते हुए संश्लिष्ट रहे। इस प्रकार प्रत्येक द्व्यणुक आदि अनन्त स्थानों में अनंत काल तक संश्लिष्ट होते २ अनन्त काल समाप्त होने पर जब उन्हीं परमाणुओं द्वारा वही विवक्षित आनुपूर्वी द्रव्य पुनः निष्पन्न हो जावे तब यह अनंत काल का उत्कृष्ट अंतर

રૂપ બની જાય છે. આ રીતે એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યના આનુપૂર્વી સ્વરૂપનો પરિત્યાગ થઈ ગયા બાદ ફરીથી એજ સ્વરૂપમાં આવી જવામાં જે કાળનો આંતરો પડે છે તે કાળના આંતરો રૂપ જઘન્ય અંતર એક સમયનું સમજવું ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ જે અનંત કાળનું અંતર કહ્યું છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે-ધારો કે કોઈ એક વિવક્ષિત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય પૂર્વોક્ત રૂપે આનુપૂર્વી પર્યાયથી રહિત થઈ ગયું છે. આ રીતે વિભક્ત થયેલાં તે પરમાણુઓ અન્ય જે આણુવાળા, ત્રણ આણુવાળા વગેરેથી લઈને અનંત પર્યન્તના આણુવાળા સ્કન્ધ રૂપ અનંત સ્થાનોમાંની પ્રત્યેક સ્થાનમાં ઉત્કૃષ્ટ કાળની સ્થિતિનો અનુભવ કરતાં થકા સંશ્લિષ્ટ રહ્યા. આ પ્રમાણે પ્રત્યેક દ્વ્યણુક આદિ અનંત સ્થાનોમાં અનંત કાળ સુધી સંશ્લિષ્ટ રહ્યા બાદ એટલે કે એ સ્વરૂપમાં રહેતાં રહેતાં અનંત કાળ વ્યતીત થઈ ગયા બાદ એજ પરમાણુઓ દ્વારા બ્યારે વિવક્ષિત આનુપૂર્વી દ્રવ્યનું ફરીથી નિર્માણ થઈ જાય છે, ત્યારે એમ

કાલમન્તરં ભવતિ । નાનાદ્રવ્યાણ્યાશ્રિત્ય ત્વન્તરં ન ભવતિ । યતો નાસ્તિ કશ્ચિત્
સ કાલો યત્ર સર્વાણ્યાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ યુગપદાનુપૂર્વીભાવં પરિત્યજન્તિ, લોકેऽનન્તા-
નન્તાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણાં સર્વદા વિદ્યમાનત્વાત્, અતો નાનાદ્રવ્યાપેક્ષયાઽન્તરં નાસ્તીતિ ।

તથા-નૈગમવ્યવહારસમ્મતાનામનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણાં કાલતઃ કિયચ્ચિરમન્તરં
ભવતીતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ-‘एगं द्रव्यं’ इत्यादि । एकं द्रव्यमाश्रित्य जघन्यत एकं
समयमनानुपूर्वीद्रव्याणामन्तरं भवति, उत्कर्षतोऽसंख्येयं कालमन्तरं भवति । नाना-

હોતા હૈ । નાના આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા જો કાલ કા અન્તર નહીં
કહા ગયા હૈ, સો ડસકા કારણ યહ હૈ કિ લોક મેં ંસા કોઈ સા મી
કાલ નહીં, કિ જિસ મેં સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અપને આનુપૂર્વી સ્વભાવ
કા ંક સાથ પરિત્યાગ કહ દેતે હો । ક્યોં કિ લોક મેં અનંતાનંત
આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સર્વદા વિદ્યમાન રહતે હૈં । હસલિયે નાના આનુપૂર્વી
દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા સે અન્તર નહીં આ સકતા હૈ । (જેગમવવહારણં અણા
ણુપુઁવીદવ્વાણં અન્તરં કાલઔ કેવચ્ચિરં હોઈ ?)

પ્રશ્ન- નૈગમ વ્યવહારનય સંમત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કા વ્યવધાન
કાલ કી અપેક્ષા કિતને કાલ કા હોતા હૈ ?

ઉત્તર-(एगं द्रव्यं पडुच्च जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं
कालं नाणादव्वाहं पडुच्च णत्थि अंतरं) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કા વિરહ
કાલ ંક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે જઘન્ય ંક સમય કા ંર

થવામાં અનંત કાળનું ઉત્કૃષ્ટ અંતર પડી જાય છે. એટલે કે આનુપૂર્વી
પર્યાયનો પરિત્યાગ કર્યા બાદ ફરી આનુપૂર્વી પર્યાયમાં આવી જવામાં અનંત
કાળનું વ્યવધાન (અંતરો) પડી જાય છે. “વિવિધ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ કાળનું
અંતર છે જ નહીં,” આ પ્રકારના કથનનું કારણ એ છે કે ઢોકમાં એવો
કોઈ પણ સમય નથી કે જ્યારે સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો પોતાના આનુપૂર્વી
સ્વભાવનો એક સાથે પરિત્યાગ કરી દેતા હોય, કારણ કે ઢોકમાં અનંતાનંત
આનુપૂર્વી દ્રવ્યો સર્વદા વિદ્યમાન રહે છે, તેથી વિવિધ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની
અપેક્ષાએ કાળનો અંતરો જ પડી શકતો નથી.

પ્રશ્ન-(જેગમવવહારાણ અણાણુપુઁવી દવ્વાણં અંતરં કાલઔ કેવચ્ચિરં હોઈ ?)
નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું વ્યવધાન (અંતર-વિરહ-
કાળ) કાળની અપેક્ષાએ કેટલા કાળનું હોય છે ?

ઉત્તર-(एगं द्रव्यं पडुच्च जहण्णेणं एगं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं
नाणादव्वाहं पडुच्च णत्थि अंतरं) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યનો વિરહકાળ એક

દ્રવ્યાળ્યાશ્રિત્ય તુ નાસ્તિ અંતરમિતિ । અયમાશયઃ—યદા પરમાણુસ્વરૂપં કિમપ્ય-
નાનુપૂર્વીદ્રવ્યમ્, અન્યેન પરમાણુના દ્વચણુકત્ર્યણુકાદિના વા એકં સમયં સંશ્લિષ્ય
સમયાદૂર્ધ્વં પુનર્વિશ્લિષ્ટં ભવતિ, તદૈકદ્રવ્યાપેક્ષયા જઘન્યત એકં સમયમન્તરં ભવતિ ।
યદા તુ તદેવાનાનુપૂર્વીદ્રવ્યં પરમાણુદ્વચણુકત્ર્યણુકાદિના કેનચિદ્ દ્રવ્યેણ સહ
સંયુજ્યતે, સંયુક્તં ચાસંખ્યેયં કાલં સ્થિત્વા તતો વિયુજ્ય પુનઃ પૂર્વવદનાનુપૂર્વીત્વં
લભતે । इत्थमेकं द्रव्यमाश्रित्य उत्कृष्टतोऽसंख्येयकालमन्तरं भवतीति ।

ઉત્કૃષ્ટ અન્તર અસંખ્યાત કાલ કા હોતા હૈ । નાના અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો
કી અપેક્ષા સે કોઈ અન્તર નહીં હૈ । તાત્પર્ય હસકા હસ પ્રકાર સે હૈ કિ
જબ કોઈ ભી પરમાણુરૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અન્ય કિસી દૂસરે પરમાણુ
કે સાથ અથવા દ્વચણુક ત્ર્યણુક આદિ કે સાથ એક સમય તક સંશ્લિષ્ટ
હોકર બાદ મેં ડસસે વિયુક્ત વિશ્લિષ્ટ-હો જાતા હૈ તથ એક અનાનુ-
પૂર્વી દ્રવ્ય કી અપેક્ષા જઘન્ય એક સમય કા અન્તર હોતા હૈ । ઓર જબ
વહી અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ પરમાણુ કિસી દ્વચણુક ત્ર્યણુક આદિ કે સાથ
સંયુક્ત હો જાતા હૈ ઓર અસંખ્યાત કાલ તક સંયુક્ત રહ કર ફિર
ડસસે વિયુક્ત હોતા હૈ, તો હસ પ્રકાર પુનઃ ડસે અનાનુપૂર્વી રૂપ મેં આને
પર યહ દ્રવ્ય કી અપેક્ષા ઉત્કૃષ્ટ અસંખ્યાત કાલ કા અન્તર હોતા હૈ ।

અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ઝોછામાં ઝોછા એક સમયનો અને વધારેમાં
વધારે અસંખ્યાત કાળનો હોય છે વિવિધ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ
વિચાર કરવામાં આવે તો વ્યવધાન (વિરહકાળ-અંતર)નો સદ્ભાવ જ નથી.
આ કથનનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે—જ્યારે કોઈ પરમાણુ રૂપ અનાનુ-
પૂર્વી દ્રવ્ય કોઈ બીજા પરમાણુની સાથે અથવા દ્વચણુક, ત્રિચણુક આદિ
સ્કંધોની સાથે એક સમય સુધી સંશ્લિષ્ટ (સંયુક્ત) રહીને તેનાથી વિયુક્ત
(અલગ) થઈ જાય છે ત્યારે એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ઝોછામાં
ઝોછા સમયનું અંતર (વ્યવધાન) પડી જાય છે. અને એજ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય
રૂપ પરમાણુ જ્યારે કોઈ દ્વચણુક, ત્રિચણુક આદિ સ્કંધોની સાથે સંશ્લિષ્ટ
થઈને અસંખ્યાત કાળ સુધી એજ સ્થિતિમાં રહીને ફરીથી તેમાંથી વિયુક્ત
(વિલક્ષ્ણ) થઈ જાય છે, અને ફરીથી અનાનુપૂર્વી રૂપે નિબપ્ત થઈ જાય છે,
તો આ પ્રકારે અનાનુપૂર્વીના પરિત્યાગથી લઈને અનાનુપૂર્વીના પુનઃ નિર્મા-
ણમાં વધારેમાં વધારે અસંખ્યાત કાળનું અંતર પડે છે આ ઉત્કૃષ્ટ અંતર
એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ કહ્યું છે, એમ સમજવું.

નનુ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યં યદાડનન્તાનન્તપરમાણુપ્રચિતસ્કન્ધેન સહ સંયુજ્યતે, તત્સંયુક્તં ચાસંખ્યેયં કાલમવતિષ્ઠતે, તતોડપ્તૌ સ્કન્ધોભિદ્યતે । મિન્ને ચ તસ્મિન્ સ્કન્ધે યસ્તસ્માલ્લઘુઃસ્કન્ધો ભવતિ, તેનાપિ સહ સંયુક્તમસંખ્યાતં કાલમવતિષ્ઠતે, પુનસ્તસ્મિન્નપિ સ્કન્ધે મિદ્યમાને યસ્તસ્માલ્લઘુતરઃ સ્કન્ધો ભવતિ તેનાપિ લઘુતરેણ સ્કન્ધેન સહ સંયુક્તમસંખ્યેયં કાલમવતિષ્ઠતે, इत्येवं क्रमेण पुनस्तस्मिन्नपि મિદ્યમાને સ્કન્ધે યસ્તસ્માલ્લઘુતમઃ સ્કન્ધો ભવતિ, તેનાપિ સંયુક્તમસંખ્યેયં કાલમવતિષ્ઠતે, इत्येवं तत्र મિદ્યમાને ક્રમેણ કદાવિદનન્તા અપિ સ્કન્ધા સંભ-

શંકા-જય એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અનંતાનંત પરમાણુઓં કે પ્રચય રૂપ સે સંયુક્ત હોતા હૈ ઓર વહ ઉસકે સાથ સંયુક્ત અવસ્થા મેં અસં-
ખ્યાત કાલ તક રહતા હૈ ઓર વાદ મેં જય વહ સ્કંધ ભેદ કો પ્રાપ્ત
હોતા હૈ-અર્થાત્ દૂટતા હૈ-તવ ઉસસે જો લઘુસ્કંધ ઉત્પન્ન હોતા હૈ,
ઉસકે સાથ મી યહ પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અસંખ્યાત કાલ તક
સંયુક્ત રહતા હૈ । વાદ મેં જય વહ મી સ્કંધ ભેદ કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ-
તવ ઉસસે મી એક લઘુતર સ્કંધ ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ । ઓર ઉસ લઘુ-
તર સ્કંધ કે સાથ મી યહ અસંખ્યાત કાલ તક સંયુક્ત રહતા હૈ । ઇસ
પ્રકાર કે ક્રમ સે જય વહ લઘુતર સ્કંધ મી ભેદ પ્રાપ્ત હો જાતા હૈ-તથ
ઉસસે મી એક લઘુતમ સ્કંધ ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ । ઓર યહ પરમાણુ
રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય ઉસ લઘુતર સ્કંધ કે સાથ મી અસંખ્યાત કાલ

શંકા-જ્યારે એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અનંતાનંત પરમાણુઓના પ્રચય
રૂપ સ્કંધ સાથે સંયુક્ત થાય છે અને તે તેની સાથે સંયુક્ત અવસ્થામાં
અસંખ્યાત કાળ સુધી રહ્યા બાદ જ્યારે તે સ્કંધ વિલકત થઈ જાય
છે, ત્યારે તેમાંથી કેઈ લઘુસ્કંધ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે. તે
લઘુસ્કંધની સાથે પણ તે પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અસંખ્યાત કાળ
સુધી સંયુક્ત રહે છે. ત્યારબાદ જ્યારે તે સ્કંધ પણ વિલકત થઈ જાય
છે ત્યારે તેમાંથી કેઈ લઘુસ્કંધ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે તે લઘુસ્કંધની સાથે
પણ તે પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અસંખ્યાત કાળ સુધી સંયુક્ત રહે
છે. ત્યાર બાદ જ્યારે તે સ્કંધ પણ વિલકત થઈ જાય છે ત્યારે તેમાંથી પણ
એક લઘુતર સ્કંધ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે, અને તે લઘુતર સ્કંધ સાથે પણ તે
પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અસંખ્યાત કાળ સુધી સંયુક્ત રહે છે ત્યાર
બાદ તે લઘુતર સ્કંધ પણ વિલકત થઈ જાય છે અને તેમાંથી પણ એક
લઘુતમ સ્કંધ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે. આ પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય તે
લઘુતમ સ્કંધની સાથે પણ અસંખ્યાત કાળ સુધી સંપ્રિદ્ધ (સંયુક્ત) રહે

વેયુઃ, તત્ર પ્રત્યેકસ્મિન્ સ્કન્ધે સંયુક્તમનાનુપૂર્વીદ્રવ્યં યદા યથોક્તામસંખ્યેયકાલં સ્થિતિમનુભૂય એકાકિ ભવતિ, તદા તસ્ય યથોક્તાનન્તસ્કન્ધસ્થિત્યપેક્ષ્યાઽનન્તમપિ કાલમન્તરં ભવતિ । તતઃ કથમુક્તમસંખ્યેયં કાલમેવાન્તરમ્ ? इति चेत्, उच्यते—

यदि संयुक्तः परमाणुरनन्तं कालं तिष्ठेत्तदा भवदुक्तमुचितं स्यात्, परन्तु वैवं नास्ति, एतत्सूत्रप्रामाण्यात् व्याख्याप्रज्ञप्त्यादि सूत्रप्रामाण्याच्च परमाणुसंयोग-

તક સંશ્લિષ્ટ રહતા હૈ । હસ પ્રકાર ક્રમ ૨ સે ડન ૨સ્કંધોં કૈ ઢૂટને પર કદાચિત્ અનંત ઢી સ્કંધ સંભવિત હોતૈ હૈ—હસ પ્રકાર અનંત સ્કન્ધોં મૈ સે પ્રત્યેક સ્કંધ કૈ સાથ સંયુક્ત વહ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય, જવ અસંખ્યાત કાલ કી અપની સ્થિતિ કો સમાસ કર એકાકી રૂપ મૈ આજાતા હૈ—અર્થાત્ પૂર્વ કી અનાનુપૂર્વી રૂપ એક પરમાણુ અવસ્થા કો પ્રાપ્તકર લેતા હૈ—તવ ડસકા હન પૂર્વોક્ત અનન્ત સ્કંધોં મૈ રહને રૂપ સ્થિતિ કી અપેક્ષા સે અનન્ત કાલ કા ઢી અન્તર હો જાતા હૈ । તવ ફિર સૂત્રકાર ને યહાં પર એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યકા કાલ કી અપેક્ષા લેકર અસંખ્યાત કાલ કા હી અન્તરવ્યોં કહા હૈ ?

ઉત્તર—યહ શંકાકાર કૈ દ્વારા પ્રદર્શિત અનન્ત કાલ કા અન્તરતવ સંગત વૈઠ સકતા હૈ કિ જવ પરમાણુ સંયુક્ત હોકર અનંત કાલ તક દ્રવ્યણુકાદિ અનંત સ્કંધોં કૈ સાથ રહતા હો । પરન્તુ હસ સૂત્ર કી પ્રમા-

છે—આ રીતે ક્રમે ક્રમે તે તે સ્કંધો વિભક્ત થતા રહે છે. આ પ્રકારે તો ક્યારેક અનંત સ્કંધ પણ સંભવી શકે છે આ અનંત સ્કંધોમાંના પ્રત્યેક સ્કંધની સાથે અસંખ્યાત—અસંખ્યાત કાળ સુધી સંયુક્ત રહીને જ્યારે તે પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય પૂર્વની પોતાની સ્થિતિમાં આવી જાય છે—એટલે કે અનાનુપૂર્વી રૂપ પરમાણુ અવસ્થાને ફરી પ્રાપ્ત કરે છે, ત્યારે તો પૂર્વોક્ત અનંત સ્કંધોમાં રહેલા રૂપ સ્થિતિની અપેક્ષાએ તો અનંત કાળનું અંતર પણ પડી જાય છે છતાં સૂત્રકારે અહીં શા માટે એવું કથન કર્યું છે કે એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યનો વિરહકાળ અસંખ્યાત કાળનો હોય છે ? એટલે કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ અવસ્થાનો ત્યાગ કર્યા બદ ફરી એજ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરવામાં અસંખ્યાત કાળનું, અંતર પડે છે એમ શા માટે કહ્યું છે ? અનંત કાળનું અંતર પડે છે, એવું કેમ કહ્યું નથી ?

ઉત્તર—શંકાકર્તા દ્વારા પ્રદર્શિત અનંત કાળનું અંતર ત્યારે જ સંગત બની શકે કે જ્યારે તે પરમાણુ દ્રવ્યણુક આદિ અનંત સ્કંધોની સાથે સંયુક્ત થઈને અનંત કાળ સુધી રહેતું હોય, પરન્તુ આ સૂત્રની પ્રમાણુતાથી અને

સ્થિતેરુત્કૃષ્ટતોઽસંખ્યેયકાલત્વાવગમાત્, અતોઽસંખ્યેયં કાલમન્તરં વોધ્યમ્ ।
નાનાદ્રવ્યાણ્યાશ્રિત્ય તુ અન્તરં ન ભવતીતિ ।

તથા—નૈગમવ્યવહારસમ્મતાનાં દ્વિપ્રદેશિકસ્કન્ધરૂપાણામવક્તવ્યકદ્રવ્યાણાં
કાલતઃ કિયચ્ચિરમન્તરં ભવતીતિ પ્રશ્નઃ ।

ઉત્તરમાહ—‘एगं दव्व’ इत्यादि। एकं द्रव्यमाश्रित्य जघन्यत एकं
समयमन्ताम्, उत्कृष्टतोऽनन्तं कालमन्तरं भवति । नानाद्रव्याण्यश्रित्य तु
अन्तरं नास्तीति ।

જાતા સે ઔર વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞસિ આદિ સૂત્રોં કી પ્રમાણતા સે પરમાણુ કી
સંયુક્ત અવસ્થા કી સ્થિતિ ઉત્કૃષ્ટ રૂપ સે અસંખ્યાત કાલ તક કી હી
કહી ગઈ હૈ । અતઃ સૂત્ર કથિત અસંખ્યાત કાલ કા હી ઉત્કૃષ્ટ અન્તર-
જાનના ચાહિયે । તથા નાના અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા અન્તર નહીં
હોતા હૈ । ક્યોં કિ લોક મે એમા કોઈ મી કાલ નહીં હૈ કિ જિસ કાલ
મેં કોઈ ન કોઈ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય ન રહે । ‘ નૈગમવ્યવહારાણં અવત્તગ-
દવ્વાણં અંતરં કાલો કેવચ્ચિરં હોઈ ? ’

પ્રશ્ન—નૈગમવ્યવહારનયસંમત અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં અપની અવક્ત-
વ્યક અવસ્થા કા પરિત્યાગ કરદેનેપર ઔર પુનઃ ડસી સ્થિતિ મેં આને
પર કાલકી અપેક્ષા કિતના વિરહ કાલ હૈ । ?

ઉત્તર—(एगं दव्वं पडुच्च जहन्नेणं एगं समयं उक्कोसेणं अणंतं कालं-

વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞસિ, આદિ સૂત્રોની પ્રમાણતાથી પરમાણુની સંયુક્ત અવસ્થામાં
રહેવાની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ અસંખ્યાત કાળ પર્યન્તની જ કહી છે તેથી સૂત્રક-
થિત અસંખ્યાત કાળનું જ ઉત્કૃષ્ટ અંતર સમજવું જોઈએ.

“વિવિધ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ અંતર હોતું નથી,”
આ પ્રકારના કથનનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે—

લોકમાં એવો કોઈ પણ કાળ નથી કે જે કાળે કોઈને કોઈ અનાનુ-
પૂર્વી દ્રવ્યનું અસ્તિત્વ જ ન હોય એટલે કે કોઈને કોઈ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યનું
અસ્તિત્વ તો લોકમાં સદા કાળ રહે છે જ.

પ્રશ્ન—(નૈગમવ્યવહારાણં અવત્તગદવ્વાણં અંતરં કાલો કેવચ્ચિરં હોઈ ?)
નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત અવક્તવ્યક દ્રવ્યોને પોતાની તે અવક્તવ્યક
અવસ્થાનો પરિત્યાગ કર્યા બાદ ફરીથી અવક્તવ્યક અવસ્થામાં આવી જવામાં
કેટલો કાળનું અંતર પડે છે ? એટલે કે દ્વચ્છુક સ્કંધ રૂપ અવક્તવ્યક
દ્રવ્યોનો વિરહકાળ કાળની અપેક્ષાએ કેટલો કલો છે ?

ઉત્તર—(एगं दव्वं पडुच्च जहन्नेणं एगं समयं, उक्कोसेणं अणंतं कालं,

અર્થ ભાવ:-દ્વિપ્રદેશિકસ્કન્ધરૂપમવત્કવ્યકદ્રવ્યં વિઘટિતં સ્વતન્ત્રં પરમાણુદ્વયં જાતમ્ । સમયમેકં વિઘટિતમેવ સ્થિત્વા પુનઃ એતદેવ પરમાણુદ્વયં પરસ્પરં મિલિત્વા દ્વિપ્રદેશિકઃ સ્કન્ધો જાતઃ । યદ્વા-વિઘટિત એવ દ્વિપ્રદેશિકઃ સ્કન્ધઃ સ્વતન્ત્ર પરમાણુરૂપતાં પ્રાપ્ય, અન્યેન પરમાણ્વાદિના સમયમેકં સંયુજ્ય-સમયાદૃધ્વં તતો વિયુજ્ય પુનસ્તદેવ પરમાણુદ્વયં પરસ્પરં મિલિત્વા દ્વિપ્રદેશિકઃ સ્કન્ધો નિષ્પન્નઃ, इत्थमवत્कव्यकद्रव्याणां जघन्यत एकं समयमन्तरं बोध्यम्,

નાનાદ્વાદ્ પડુચ્ચ ણસ્થિ અંતરં) એક અવત્કવ્યક દ્રવ્યની અપેક્ષા જઘન્ય અંતર એક સમય કા, ઓર ઉત્કૃષ્ટ અંતર અનંત કાલ કા હૈ । તથા નાના અવત્કવ્યક દ્રવ્યોની અપેક્ષા અંતર નહીં હૈ । હસ કથન કા તત્પર્ય હસ પ્રકાર સે હૈ-કિ એક દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ દ્રવ્ય વિઘટિત હો ગયા ઓર વહ સ્વતંત્રરૂપ સે દો પરમાણુ રૂપ બન ગયા । અથ વે દો પરમાણુ એક સમય તક પરસ્પર જૂદે ર રહે । ફિર એક સમય બાદ આપસ મેં સંશ્લિષ્ટ હો ગયે ઓર ઉનકે શ્લેષ સે વહી દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ પુનઃ ઉત્પન્ન હો ગયા । અથવા-દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ વિઘટિત હો ગયા ઓર ઉસસે દો પરમાણુ ઉત્પન્ન હો ગયે । વે પરમાણુ અન્ય પરમાણુ આદિ કે સાથ એક સમય તક સંયુક્ત રહે ઓર બાદ મેં ઉસસે વિઘટિત હોકર વે હી પરમાણુ પરસ્પર મિલકર ઉસી દ્વિપ્રદેશિક સ્કંધ રૂપ મેં પરિણત હો

નાનાદ્વાદ્ પડુચ્ચ ણસ્થિ અંતરં) એક અવત્કવ્યક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જઘન્ય (એ છ.માં એ છ.) અંતર એક સમયનું અને ઉત્કૃષ્ટ (વધારેમાં વધારે) અંતર અનંત કાળનું છે, તથા વિવિધ અવત્કવ્યક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ અંતરનો સદ્ભાવ જ નથી આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-કોઈ એક દ્વિપ્રદેશી સ્કન્ધ રૂપ અવત્કવ્યક દ્રવ્ય ધારે કે વિઘટિત (વિભક્ત) થઈને એ સ્વતંત્ર પરમાણુ રૂપ અસ્થાને પ્રાપ્ત કરે છે. ત્યાર બાદ એ છ.માં એ છ. એક સમય સુધી તે તે બંને પરમાણુ એક બીજાથી અલગ જ રહે છે, પણ ત્યાર બાદ તેઓ એક બીજાની સાથે સંશ્લિષ્ટ (સંયુક્ત) થઈ જઈને ફરીથી દ્વિપ્રદેશી સ્કન્ધ રૂપ બની જાય છે અથવા-દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ વિઘટિત થઈ જઈને તેમાંથી એ પરમાણુ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે તે પરમાણુઓ અન્ય પરમાણુ આદિની સાથે એક સમય સુધી સંશ્લિષ્ટ રહે છે, પણ ત્યાર બાદ તેઓ તેનાથી વિયુક્ત થઈને પરસ્પરની સાથે સંયુક્ત થઈ થઈને ફરીથી દ્વિપ્રદેશિક સ્કંધ રૂપે પરિણત થઈ જાય છે. આ રીતે એજ દ્વિપ્રદેશી સ્કંધનું તેમના દ્વારા નિર્માણ થઈ જાય છે. આ પ્રકારે દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ રૂપ અવસ્થાનો

યદા ચ તદેવ વિઘટિતં સ્વતન્ત્રં પરમાણુભિરનન્તૈર્દ્વચ્ચણુકઞ્ચણુક યાવદનન્તા-
ણુકસ્કન્ધૈઃ સહ ક્રમેણ સંયોગમાસાધ્ય પ્રત્યેકસ્મિન્ સ્કન્ધેઽસકૃદુત્કૃષ્ટાં સ્થિતિમનુ-
ભૂય કાલસ્યાનન્ત્યાત્પુનરપિ તથૈવ દ્વચણુકસન્ધતયા પરિણતં ભવતિ, તદાઽવક્ત-
વ્યકદ્રવ્યત્વં પ્રતિપદ્યતે । इत्थं वियोगानन्तरं पूर्वस्वरूपप्राप्तौ अनन्तकालः प्राप्यते,

ગયે-હસ પ્રકાર વહી પ્રથમ સ્કંધ બન ગયા । હસ પ્રકાર દ્વિપ્રદેશી
સ્કંધ અવસ્થા વિઘટિત હોને સે પુનઃ વહી દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ બનને કે
બીચ મેં યહ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કાં એક સમય કા અન્તર જઘન્ય જનના
ચોહિયે । તથા જઘ વહી દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ વિઘટિત હોતે હી દોં પરમાણુ
રૂપ મેં આજાતા હૈ ઓર વે પરમાણુ સ્વતંત્ર રૂપ સે અનંત પરમાણુઓ
કે સાથ અનંત દ્વચણુકો, ત્ર્યણુકો યાવત્ અનન્તાણુક સ્કંધોં કે સાથ ક્રમર
સે સંયોગ કો પ્રાપ્ત કરકે, જઘ પ્રત્યેક સ્કંધ મેં બાર ૨ અપની ઉત્કૃષ્ટ
સ્થિતિ કો સમાપ્ત કર દેતે હૈં તો હસ પ્રકાર કાલ કી અનંતતાં કે બાદ
જઘ વે અપની ડસી પૂર્વ અવસ્થા રૂપ દ્વિપ્રદેશિક સ્કંધ રૂપ મેં પરિણત
હો જાતે હૈં, તો હસકે બીચ મેં યહ અનંત કાલ કા ઉત્કૃષ્ટ સમય
નિકલ આતા હૈ । નાના અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા કાલ કા અંતર
નહીં હૈ એસા જો કહા ગયા હૈ ડસકા ભાવ યહ હૈ કિ લોક મેં એસા

પરિત્યાગ કરીને-દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ રૂપ અવસ્થામાંથી વિઘટિત થઈને ફરીથી
એજ દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ રૂપ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરવામાં એક સમયપ્રમાણુ કાળનું
જઘન્ય અંતર પડે છે. તેથી જ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય રૂપ અવસ્થા પુનઃ પ્રાપ્ત
કરવામાં તેને ઓછામાં ઓછો એક સમય લાગતો. હોવાથી જઘન્ય અંતર
એક સમયનું કહ્યું છે.

ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ તે અંતર અનંતકાળનું કેવી રીતે થાય છે? તે હવે
સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે-

એજ દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ વિઘટિત થઈને બે પરમાણુ રૂપ બની જાય છે તે
બન્ને પરમાણુ સ્વતંત્ર રૂપે અનંત પરમાણુઓની સાથે અનંત દ્વચણુક સ્કંધો,
ત્રિચણુક સ્કંધો આદિ અનંત આણુક પર્યન્તના સ્કંધો સાથે ક્રમે ક્રમે સંયોગ
પ્રાપ્ત કરીને જ્યારે પ્રત્યેક સ્કંધમાં વારંવાર પોતાની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સમાપ્ત
કરી નાખે છે, અને આ રીતે અનંત કાળ બાદ જ્યારે તે પોતાની એજ પૂર્વ
અવસ્થા રૂપ દ્વિપ્રદેશિક સ્કંધ રૂપે પરિણત થઈ જાય છે, તો આમ થવામાં
અનંત કાળનો ઉત્કૃષ્ટ સમય વ્યતીત થઈ જાય છે આ રીતે ઉત્કૃષ્ટ અંતર
(વિરહકાળ) અનંત કાળનો થાય છે.

અતઃ ઉત્કૃષ્ટતોઽનન્તં કાઞ્મન્તરં ભવતિ । નાનાદ્રવ્યાણ્યાશ્રિત્ય પૂર્વોક્તવદેવાન્તરં
ન ભવતીતિ ॥સૂ૦ ૮૭॥

અથ સપ્તમં ભાગદ્વારમાહ—

મૂલમ્—જોગમવવહારાણં આણુપુર્વીદઢ્વાઈં સેસદઢ્વાણં કઈ-
ભાગે હોજા? કિં સંખિજ્જઈભાગે હોજા? અસંખિજ્જઈભાગે
હોજા? સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજા? અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજા?
નો સંખિજ્જઈભાગે હોજા, નો અસંખિજ્જઈભાગે હોજા, નો
સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજા, નિયમા અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજા।
જોગમવવહારાણં અજાણુપુર્વી દઢ્વાઈં સેસદઢ્વાણં કઈભાગે
હોજા? કિં સંખિજ્જઈભાગે હોજા? અસંખિજ્જઈભાગે હોજા?
સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજા? અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજા? નો
સંખેજ્જઈભાગે હોજા, અસંખેજ્જઈભાગે હોજા, નો સંખેજ્જેસુ
ભાગેસુ હોજા, નો અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજા। એવં અવત્ત-
ઢ્વગદઢ્વાણિ વિ ભાણિયઢ્વાણિ ॥સૂ૦ ૮૮॥

છાયા—જોગમવવહારયોરાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ શેષદ્રવ્યાણાં કિયદ્ભાગે ભવન્તિ?

કોઈ સામી સમય નહીં હૈ કિ જિસમે કોઈ ન કોઈ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય
કી સત્તા ન બની રહતી હો । ॥ સૂ૦ ૮૭ ॥

અવ સપ્તમ ભાગ નામક દ્વાર કા સૂત્રકાર કથન કરતે હૈ—

“જોગમવવહારાણં” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(જોગમવવહારાણં) જોગમવવહારાણં સંમત સંમસ્ત આનુ-

“વિવિધ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ કાળનું અંતર નથી,” આ
કથનનો ભાવાર્થ એવો છે કે લોકમાં એવો કોઈ પણ સમય હોતો નથી કે
જ્યારે લોકમાં કોઈને કોઈ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય વિદ્યમાન ન હોય એટલે કે
કોઈને કોઈ અવક્તવ્ય દ્રવ્ય તો લોકમાં સર્વદા વિદ્યમાન હોય છે જ. ॥સૂ૦ ૮૭॥

હવે સૂત્રકાર અનુગમના ભાગદ્વાર નામના સાતમાં લોકનું નિરૂપણ કરે છે.

“જોગમવવહારાણં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(જોગમવવહારાણં) જોગમ અને વ્યવહાર નયસંમત સમસ્ત

કિં સંખ્યેયતમભાગે ભવન્તિ ? અસંખ્યેયતમભાગે ભવન્તિ ? સંખ્યેયેષુ ભાગેષુ ભવન્તિ ? અસંખ્યેયેષુ ભાગેષુ ભવન્તિ ? નો સંખ્યેયતમભાગે ભવન્તિ, નો અસંખ્યેયતમભાગે ભવન્તિ, નો સંખ્યેયેષુ ભાગેષુ ભવન્તિ, નિયમાત્ અસંખ્યેયેષુ ભાગેષુ ભવન્તિ । નૈગમવ્યવહારયોરનાનુપૂર્વી દ્રવ્યાણિ શેષદ્રવ્યાણાં કિયદ્ભાગે ભવન્તિ ? કિં સંખ્યેયતમભાગે ભવન્તિ ? અસંખ્યેયતમભાગે ભવન્તિ ? સંખ્યેયેષુ ભાગેષુ પૂર્વી દ્રવ્ય (સેસદઘ્વાણં) શેષ દ્રવ્યોં મેં (કદ્દભાગે) કિતને ભાગ મેં (હોજ્જા) હૈ । (કિં) કયા (સંખેજ્જહ ભાગે હોજ્જા) સંખ્યાતવેં ભાગ મેં હૈ ? (સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) અથવા સંખ્યાત ભાગો મેં હૈ ? અથવા (અસંખિજ્જહ ભાગે હોજ્જા) યા અસંખ્યાતવેં ભાગ મેં હૈ (અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) યા સંખ્યાત ભાગો મેં હૈ ? (નો સંખિજ્જહ ભાગે હોજ્જા નો અસંખિજ્જહ ભાગે હોજ્જા) ન સંખ્યાતવેં ભાગ મેં હૈ ન અસંખ્યાતવેં ભાગ મેં હૈ (નો સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) ઔર ન સંખ્યાત ભાગો મેં હૈ, કિન્તુ (નિયમા) નિયમ સે વે (અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) અસંખ્યાત ભાગો મેં હૈ । (યોગમવહારાણં અણાણુપુઘ્વી દઘ્વાઈ) નૈગમ વ્યવહારનથ સંમત સમસ્ત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય (સેસદઘ્વાણં કદ્દભાગે હોજ્જા) શેષ દ્રવ્યોં કી કિતને ભાગ મેં હૈ ? (કિં) કયા (સંખિજ્જહ ભાગે હોજ્જા) સંખ્યાતવેં ભાગ મેં હૈ ?

આનુપૂર્વી દ્રવ્ય (સેસદઘ્વાણં) બાકીના દ્રવ્યોના (કદ્દભાગે હોજ્જા ?) કેટલા ભાગમાં છે ? (કિં સંખેજ્જહ ભાગે હોજ્જા ?) શું સંખ્યાતમાં ભાગમાં છે ? (અસંખેજ્જહ ભાગે હોજ્જા) કે અસંખ્યાતમાં ભાગમાં છે ? (સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) કે સંખ્યાત ભાગોમાં છે ? (અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા ?) કે અસંખ્યાત ભાગોમાં છે ?

ઉત્તર- (નો સંખિજ્જહ ભાગે હોજ્જા, નો અસંખિજ્જહ ભાગે હોજ્જા, નો સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય બાકીના દ્રવ્યોના સંખ્યાતમાં ભાગમાં પણ હોતું નથી, અસંખ્યાતમાં ભાગમાં પણ હોતું નથી, સંખ્યાત ભાગોમાં પણ હોતું નથી, પરન્તુ (નિયમા અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) નિયમથી જ તે સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો બાકીના દ્રવ્યોના અસંખ્યાત ભાગોમાં હોય છે.

(યોગમવહારાણં અણાણુપુઘ્વી દઘ્વાઈ) નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત સમસ્ત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય (સેસદઘ્વાણં કદ્દભાગે હોજ્જા ?) બાકીના દ્રવ્યોના કેટલામાં ભાગનું હોય છે ? (કિં સંખિજ્જહ ભાગે હોજ્જા) શું સંખ્યાતમાં ભાગમાં હોય છે ? (અસંખિજ્જહ ભાગે હોજ્જા) કે અસંખ્યાતમાં

भवन्ति ? असंख्येयेषु भागेषु भवन्ति ? नो संख्येयतमभागे भवन्ति, असंख्येय-
तमभागे भवन्ति, नो संख्येयेषु भागेषु भवन्ति, नो असंख्येयेषु भागेषु भवन्ति ।
एवमवक्तव्यकद्रव्याण्यपि भणितव्यानि ॥सू० ८८॥

टीका—‘ नैगमव्यवहाराणं ’ इत्यादि—

नैगमव्यवहारसम्मतानि आनुपूर्वीद्रव्याणि=त्र्यणुकस्कन्धप्रभृत्यनन्ताणुकस्क-
न्धपर्यन्तानि सर्वाण्यपि आनुपूर्वीद्रव्याणि शेषद्रव्याणाम्=अनानुपूर्व्यवक्तव्यक-
द्रव्यलक्षणानां कियति भागे भवन्ति ? किं संख्येयतमभागे भवन्ति, यथा—अस-

યા(અસંખિજ્જહામે હોજ્જા) અસંખ્યાતવેં ભાગ મેં હૈં ? યા (સંખે-
જ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) સંખ્યાત ભાગોં મેં હૈં ? યા (અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ
હોજ્જા) અસંખ્યાત ભાગોં મેં હૈં !

ઉત્તર—(નો સંખેજ્જહામે હોજ્જા) સંખ્યાતવેં ભાગ મેં નહીં
હૈ—(અસંખેજ્જહામે હોજ્જા) કિન્તુ અસંખ્યાતવેં ભાગ મેં હૈં । (નો
સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા નો અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) સંખ્યાત
ભાગોં મેં નહીં હૈં ’ ઓર ન અસંખ્યાત ભાગોં મેં હૈં । (એવં અવત્તવગ-
દવ્વાણિ વિ ભાણિયવ્વાહ) હસી પ્રકાર સે અવત્તવ્યક દ્રવ્યોં કે વિષય
મેં ભી એસા હી કથન જાનના ચાહિયે

ભાવાર્થ —ત્ર્યણુક સ્કંધ આદિ સે લેકર અનન્ત પરમાણુ સ્કંધ પર્ય-
ન્ત જિતને ભી સ્કંધ હૈં વે સબ આનુપૂર્વીદ્રવ્ય હૈં । અનંત એક ૨ પરમા-
ણુ ઓર અનંત દ્વ્યણુક સ્કંધ ક્રમશઃ અનાનુપૂર્વી ઓર અવત્તવ્યક દ્રવ્ય
હૈં । પૂછને વાલે કા યહ અભિપ્રાય હૈં કિ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અનાનુપૂર્વી ઓર

ભાગમાં હોય છે ? (સંખિજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) કે સંખ્યાત ભાગોમાં હોય છે ?
(અસંખિજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) કે અસંખ્યાત ભાગોમાં હોય છે ?

ઉત્તર—(નો સંખિજ્જહામે હોજ્જા, અસંખેજ્જહામે હોજ્જા) સંખ્યા-
તમાં ભાગમાં નથી, પણ અસંખ્યાતમાં ભાગમાં છે, (નો સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા,
નો અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) સંખ્યાત ભાગોમાં પણ નથી અને અસંખ્યાત
ભાગોમાં પણ નથી. (એવં અવત્તવગદવ્વાણિ વિ ભાણિયવ્વાહ) અવક્રતવ્યક
દ્રવ્યોના વિષયમાં પણ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોના જેવું જ કથન
અહીં થઈ શકે છે.

ભાવાર્થ—ત્રણથી લઈને અનંત પરમાણુવાળા જેટલા સ્કંધો છે, તેમને
આનુપૂર્વી દ્રવ્યો કહે છે જે અનંત એક એક સ્વતંત્ર પરમાણુ છે તેમને અના-
નુપૂર્વી દ્રવ્ય કહે છે. એ પરમાણુવાળા જે અનંત સ્કંધો છે તેમને અનાનુપૂર્વી અને
અવક્રતવ્યક દ્રવ્યો કહે છે આ સૂત્રમાં પ્રશ્નકર્તા એ પ્રશ્ન પૂછે છે કે આનુપૂર્વી

ત્કલ્પનયા શતસ્ય વિંશતિમિતાઃ?, કિમસંખ્યાતતમે ભાગે ભવન્તિ, યથા શતસ્યૈવ દશ?, કિં સંખ્યેયેષુ ભાગેષુ ભવન્તિ, યથા શતસ્યૈવ ચત્વારિંશત્ ષષ્ટિર્વા?, કિમ-સંખ્યેયેષુ ભાગેષુ ભવન્તિ, યથા શતસ્યૈવ અશીતિઃ?, इति प्रश्नः। उत्तरमाह-आनुपूर्वीद्रव्याणि अनानुपूर्व्यवक्तव्यकद्रव्यापेक्षया हीनानि न भवन्ति, प्रत्युत अधिकान्येव भवन्ति, अधिकत्वं चाप्येषां नो संख्येयतमभागेन, नो असंख्येयत-मभागेन, नापि संख्येयैर्भागैः, अपि तु असंख्येयैर्भागैरधिकानि भवन्तीति बोध्यम्,

અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં સે અધિક હૈં યા કમ ? તવ સિદ્ધાન્તકારોં ને હસકા ઉત્તર અધિક રૂપ મેં દિયા હૈં । તવ પુનઃ શંકાકાર ને પૂછા કિ યદિ યે શેષ દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા અધિક હૈં, તો ઉનકે કિસ ભાગ સે અધિક હૈં । કયા સંખ્યાતવેં ભાગ સે અધિક હૈં ? યા અસંખ્યાતવેં ભાગ સે અધિક હૈં ? યા સંખ્યાત અસંખ્યાત ભાગોં સે અધિક હૈં ? તવ સૂત્રકાર ને ઉસે સમજાયા કિ યે શેષ દ્રવ્યોં કે અસંખ્યાત ભાગોં સે હી અધિક હૈં इतर तीन भागों से नहीं । क्योंकि ये आनुपूर्वीद्रव्य अनानुपूर्वी और अव-क्तव्यक द्रव्यों की अपेक्षा हीन नहीं हैं । किन्तु अधिक ही हैं । यह अधिकता इनमें शेष द्रव्यों के संख्यातवें असंख्यातवें एवं संख्यात भागों से मानी गई है । इसका तात्पर्य यह है कि सब आनुपूर्वी-द्रव्य अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यों की अपेक्षा असंख्यात

દ્રવ્ય, અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અને અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કરતાં અધિક પ્રમાણમાં છે કે અલ્પપ્રમાણમાં છે ? ત્યારે તેના ઉત્તર રૂપે સિદ્ધાન્તકારોએ કહ્યું છે કે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય, અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કરતાં અધિક પ્રમાણમાં છે.

વળી પ્રશ્નકર્તા એવો પ્રશ્ન કરે છે કે જો તે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય બાકીના દ્રવ્યો કરતાં અધિક છે, તો કેટલામાં લાગ જોટલું અધિક છે ? શું સંખ્યા-તમાં લાગ જોટલું અધિક છે ? કે સંખ્યાત લાગો જોટલું અધિક છે ? કે અસંખ્યાત લાગો જોટલું અધિક છે ?

ત્યારે સૂત્રકારે તેનો એવો ઉત્તર આપ્યો છે કે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય બાકીના દ્રવ્યોના અસંખ્યાત લાગો પ્રમાણ જ અધિક છે, સંખ્યાતમાં લાગ પ્રમાણ અધિક નથી, કારણ કે તે આનુપૂર્વી દ્રવ્યો, અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અવ-ક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં ન્યૂન પ્રમાણમાં હોતાં નથી—પણ અધિક પ્રમાણમાં જ હોય છે તે આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં આ અધિકતા બાકીના દ્રવ્યોના સંખ્યાતમાં લાગપ્રમાણ પણ કહી નથી, અસંખ્યાતમાં લાગપ્રમાણ પણ કહી નથી, સંખ્યાત લાગોપ્રમાણ પણ કહી નથી, પરંતુ અસંખ્યાત લાગો પ્રમાણ જ

અર્થ માત્ર:—આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ શેષદ્રવ્યાપેક્ષયા અસંખ્યેયગુણાનિ સન્તિ, યથા શતસ્યાઽશીતિઃ । આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ, અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ, અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ, एतत्त्रयमसत्कल्पनया શતસ્વરૂપં, તન્નાઽઽનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ-અશીતિસંખ્યાતુલ્યાનિ, શેષદ્રવ્યાણિ=અનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકરૂપાણિ મત્યેકં દશ-દશ ગણનયા ત્રિંશતિસંખ્યા-તુલ્યાનીતિ ।

નનુ શેષદ્રવ્યાપેક્ષયાઽઽનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ સ્તોકાન્યપિ ભવન્તુ, કા હાનિઃ ? ઇતિ ચેદુચ્યતે-અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ પરમાણુરૂપાણ્યેવ, અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ તુ દ્વયણુક-

ગુણે-અધિક-હૈ । જૈસે માન લિયા જાવે કિ યે તીનોં દ્રવ્ય ૧૦૦, સંખ્યા કેસ્થાનાપન્ન હૈં । इनमें अस्सी संख्या के तुल्य आनुपूर्वी द्रव्य हैं । और शेष संख्या २०, बीस के तुल्य अर्थात् १०-१० दस संख्या के बराबर-अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्य हैं । शेष द्रव्यों के संख्यातवे' असं-ख्यातवे' भाग से अथवा संख्यात भागों की अपेक्षा आनुपूर्वी द्रव्यों को अधिक मानने पर उनमें अखंख्यात गुणी अधिकता नहीं आसकने से हीनता आती है ।

શંકા-યદિ શેષ દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યસ્તોક-અલ્પ કમ મી માનલિયે જાવેં તો હસમે કયા હાનિ હૈ ?

કહી છે એટલે કે સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અવકતવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાત ગણાં વધારે છે. ધારે કે આ ત્રણે દ્રવ્યો મળીને ૧૦૦નું પ્રમાણ થાય છે, તેમાંથી ૮૦ ભાગ પ્રમાણ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો હોય અને ૧૦-૧૦ ભાગ પ્રમાણ અનાનુપૂર્વી અને અવકતવ્યક દ્રવ્યો હોય તો બાકીના દ્રવ્યો ૨૦ ભાગપ્રમાણ હોવાથી તેમના કરતાં આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ચાર ગણું હોવાથી તેમાં અસંખ્યાતગણી અધિકતા ગણી શકાય નહીં પરંતુ સૂત્રકારે તેમાં અપ્રખ્યાતગણી અધિકતા કહી છે તેથી આ પ્રકારનું કથન કરવામાં અસંખ્યાત ગણી અધિકતા નહીં આવી શકવાને કારણે હીનતા આવી જાય છે. કારણ કે આનુપૂર્વી દ્રવ્યોને બાકીના દ્રવ્યો કરતાં સંખ્યાતમાં ભાગપ્રમાણ પણ કહ્યા નથી, અસંખ્યાતમાં ભાગપ્રમાણ પણ કહ્યા નથી, સંખ્યાત ભાગોપ્રમાણ (સંખ્યાત ગણાં) પણ કહ્યાં નથી, પણ અસંખ્યાત ભાગોપ્રમાણ (અસંખ્યાત ગણાં જ) કહ્યાં છે.

શંકા-જો બાકીનાં દ્રવ્યો કરતાં સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યને અલ્પ માનવામાં આવે તો તેમાં શી હરકત છે ?

રૂપાણ્યેવ, આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ તું ડ્યણુકચતુરણુકપ્રમૃત્યનન્તાણુકપર્યન્તાનિ, અતઃ
શેષદ્રવ્યાપેક્ષ્યાડ્ડનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ અસંખ્યેયમાગૈરધિકાનિ બોધ્યાનિ। ઉક્તં ચાપિ—
“एएसि णं भंते ! परमाणुयोगलाणं संखेज्जपएसियाणं असंखेज्जपएसियाणं
अणंतपएसियाणं अणंतपएसियाण य खंधाणं कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुया
वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थो वा अणंतपएसिया खंधा,
परमाणुयोगला अणंतगुणा, संखेज्जपएसिया खंधा संखेज्जगुणा, असंखेज्जप
सिया खंधा असंखेज्जगुणा”

છાયા-एतेषां खलु भदन्त ! परमाणुपुद्गलानां संख्येयप्रदेशिकानाम् असं-
ख्येयप्रदेशिकानाम् अनन्तप्रदेशिकानां च स्कन्धानां के केभ्योऽस्या वा बहुका
वा तुल्या वा विशेषाधिका वा ?, गौतम ! सर्वस्तोका अनन्तप्रदेशिकाः स्कन्धाः,

ઉત્તર-अनानुपूर्वीं द्रव्य परमाणुरूप ही है और अवक्तव्यक द्रव्य
द्रव्यणुक रूप ही है। तथा आनुपूर्वीं द्रव्य ड्यणुक आदि स्कंध से
लेकर अनन्ताणुक स्कंध पर्यन्त है—इसलिये ये आनुपूर्वीं द्रव्य शेष
द्रव्यों की अपेक्षा असंख्यातभागों से अधिक है ऐसा जानना चाहिये।
अन्यत्र भी इसी बात को यों कहा है—हे भदन्त ! परमाणु रूप पुद्गलों
में संख्यात प्रदेश वाले स्कंधों में, असंख्यात प्रदेश वाले स्कंधों में और
अनन्त प्रदेश वाले स्कंधों में कौन किनसे अल्प है ? कौन किनसे-
बहुत है ? कौन किनसे तुल्य है ? अथवा कौन किनसे विशेष अधिक है ?

ઉત્તર-हे गौतम सबसे कम अनन्तप्रदेशी स्कंध है, परमाणु पुद्-
गल इनसे अनन्त गुणित है संख्यात प्रदेशी स्कंध संख्यात गुणित है।

ઉત્તર-अनानुपूर्वीं द्रव्य परमाणु इय न छे अने अपक्तव्यक द्रव्य
द्रव्यणुक स्कंध इय न छे परंतु आनुपूर्वीं द्रव्य त्रिआणुक, आदि अनन्त
आणुक पर्यन्तना स्कंध इय छे. ते कारणे ते आनुपूर्वीं द्रव्य भाझीना द्रव्ये
करतां असंख्यात गणुं वधारे डोय छे, ते कारणे तेने भाझीना द्रव्ये करतां
अल्प कही शकय नही वणी अन्यत्र पणु अपुं न कहुं छे કે—“ हे
ભગવન્ ! પરમાણુરૂપ પુદ્ગલો, સંખ્યાત પ્રદેશોવાળા સ્કંધો, અસંખ્યાત
પ્રદેશોવાળા સ્કંધો અને અનંત પ્રદેશોવાળા સ્કંધોમાં કેણુ કેનાથી અલ્પ
છે, કેણુ કેનાથી અધિક છે, કેણુ કેની બરાબર છે અને કેણુ કેના
કરતાં વિશેષાધિક છે ?

ઉત્તર-હે ગૌતમ ! અનંતપ્રદેશી સ્કંધ સૌથી અલ્પપરમાણુમાં છે,
પરમાણુપુદ્ગલ તેમનાં કરતાં અનંત ગણાં છે, સંખ્યાત પ્રદેશી સ્કંધ

પરમાણુપુદ્ગલ અનન્તગુણાઃ, સંખ્યેયપ્રદેશિકાઃ સ્કન્ધાઃ સંખ્યેયગુણાઃ, અસંખ્યેય-
પ્રદેશિકાઃ સ્કન્ધા અસંખ્યેયગુણાઃ, ઇતિ ।

અત્ર સૂત્રે સર્વસ્યા અપિ પુદ્ગલજાતેરપેક્ષયાઽસંખ્યાતપ્રદેશિકાઃ સ્કન્ધા અસં-
ખ્યાતગુણા ઉક્તાઃ । અસંખ્યાતપ્રદેશિકાઃ સ્કન્ધાસ્તુ આનુપૂર્વ્યામેવાન્તર્ભવન્તિ,
અતસ્તદપેક્ષયા આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ શેષસમસ્તદ્રવ્યેભ્યોઽપિ અસંખ્યાતગુણાનિ કિં
પુનરનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકદ્રવ્યમાત્રાત્ । ‘અધિકાની’તિ અર્થસ્વારસ્યાદાક્ષિપ્યતે ।

તથા-નૈગમવ્યવહારસમ્મતાનિ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ=પરમાણુરૂપાણિ દ્રવ્યાણિ
શેષદ્રવ્યાણામ્=આનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકદ્રવ્યાણામપેક્ષયા કિયતિભાગે ભવન્તિ ? કિં સંખ્યે-
યેષુ ભાગેષુ ભવન્તિ ? કિમસંખ્યેયેષુ ભાગેષુ ભવન્તિ ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ-નો
સંખ્યેયતમભાગે ભવન્તિ, કિંતુ અસંખ્યેયતમભાગે ભવન્તિ, નો સંખ્યેયેષુ ભાગેષુ
ભવન્તિ, નો અસંખ્યેયેષુ ભાગેષુ ભવન્તિ । અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ-શેષદ્રવ્યાણામ્

और असंख्यात प्रदेशी स्कंध असंख्यात गुणित है । इस सूत्र में सम-
स्त पुद्गल जाति की अपेक्षा से उसके असंख्यात प्रदेशी स्कंध असं-
ख्यात गुणे कहे हैं । सो ये असंख्यात प्रदेशी स्कंध आनुपूर्वी में ही
अन्तर्भूत हो जाते हैं । इसलिये इस अपेक्षा से सब आनुपूर्वी द्रव्य
शेष समस्त द्रव्यों से भी जब असंख्यात गुणित हैं तो कि अनानुपूर्वी
और अवक्तव्यक द्रव्यों की अपेक्षा से ये असंख्यात गुणे हैं इसमें तो
कहना ही क्या है । सूत्र में “ अधिक ” पद नहीं कहा गया है फिर
भी यहां उसका आक्षिप्त अर्थ के अनुसार किया गया है । तथा
नैगमव्यवहारनय संमत जो अनानुपूर्वी द्रव्य-परमाणु रूप द्रव्य हैं वे
आनुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यों की अपेक्षा से उनके असंख्यात हैं

અસંખ્યાત ગણાં છે. અને અસંખ્યાત પ્રદેશી સ્કંધ અસંખ્યાતગણા છે.
આ સૂત્રમાં સમસ્ત પુદ્ગલ જાતિની અપેક્ષાએ તેના અસંખ્યાત પ્રદેશી સ્કંધો
અસંખ્યાત ગણાં કહ્યા છે. તે અસંખ્યાત પ્રદેશી સ્કંધોનો આનુપૂર્વીમાં જ
સમાવેશ થઈ જાય છે આ રીતે વિચાર કરતાં, જે સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય
બાકીના સમસ્ત દ્રવ્યો કરતાં પણ અસંખ્યાત ગણું છે, તો અનાનુપૂર્વી અને
અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં તો તે અસંખ્યાત ગણું હોય એમાં શંકા કરવા
જેવું જ નથી. સૂત્રમાં “ અધિક ” પદ વાપર્યું નથી, છતાં પણ અહીં તેના
અર્થનો સ્પષ્ટ ખ્યાલ આપવા માટે તે પદનો પ્રયોગ કર્યો છે.

તથા નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત જે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય (પરમાણુ
દ્રવ્ય) છે તે આનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાતમાં ભાગ-
પ્રમાણ છે. તે બાકીના દ્રવ્યોના સંખ્યાતમાં ભાગપ્રમાણ નથી, સંખ્યાત

અસંખ્યેયતમમાગે ભવન્તિ-સન્તિ, ન તુ શેષમાગેષુ ત્રિષુ । અસત્કલ્પનયા યથા શતસ્ય દશ, ભવન્તિ । ન તુ શેષેષુ ત્રિષુ માગેષુ ભવન્તિ । તદેવાહ-‘એવં અવત્તઠ્ઠગ-દઠ્ઠાણિ ત્રિ’ ઇતિ । એવમવત્તઠ્ઠગદ્રઘ્યાણ્યપિ મણિતઘ્યાણિ=અવત્તઠ્ઠગદ્રઘ્યાણ્યપિ અનાનુપૂર્વીવદેવ શતસ્ય દશવદ્ વિજ્ઞેયાણિ ॥સૂ૦ ૮૮॥

અથાષ્ટમં માધદ્વારમાહ—

મૂળમ્—ળેગમવવહારાણં આણુપુઠ્ઠીદઠ્ઠાઈં કતરમ્મિ માવે હોજ્જા ? કિં ઉદ્દિષ્ઠ માવે હોજ્જા ? ઉવસમિષ્ઠ માવે હોજ્જા ? યદ્દિષ્ઠ માવે હોજ્જા ? યદ્દિષ્ઠ માવે હોજ્જા પારિણામિષ્ઠ માવે હોજ્જા ? સંનિવાદિષ્ઠ માવે હોજ્જા ? ણિયસા સાદિપારિ-
ણામિષ્ઠ માવે હોજ્જા । અણાણુપુઠ્ઠીદઠ્ઠાણિ અવત્તઠ્ઠગદઠ્ઠાણિ ય એવં ચેવ માણિયઠ્ઠાણિ ॥સૂ૦ ૮૯॥

છાયા — નૈગમવ્યવહારયોરાનુપૂર્વીદ્રઘ્યાણિ કતમસ્મિન્ માવે ભવન્તિ ? કિમૌદ-
યિકે માવે ભવન્તિ ? ઔપશમિકે માવે ભવન્તિ ? ક્ષાયિકે માવે ભવન્તિ ?

માગ હૈં । શેષ ત્રીન માગોં સે અધિક નહીં હૈં । જૈસે માંન લિયા જાવે કિ યે ત્રીનોં દ્રઘ્ય ૧૦૦ સંખ્યાત રૂપ મેં હૈં—ઇનમેં શેષ દ્રઘ્યોં કી અપેક્ષા સે આનુપૂર્વી દ્રઘ્ય ૮૦’ ઔર અનાનુપૂર્વી દ્રઘ્ય ૧૦, દશ હૈં । હસી પ્રકાર અવત્તઠ્ઠગ દ્રઘ્ય મી આનુપૂર્વી ઔર અનાનુપૂર્વી દ્રઘ્ય કી અપેક્ષા સૌ કે દશ કી તરહ ઉનકે અસંખ્યાતવેં માગ જાનના ચાહિયે શેષ ત્રીન માગોં સે નહીં । ॥ સૂ૦ ૮૮ ॥

ગણું પણ નથી અને અસંખ્યાત ગણું પણ નથી. ધારો કે આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી અને અવક્રતત્ત્વક, આ ત્રણે દ્રઘ્યો મળીને ૧૦૦ સો ની સંખ્યા રૂપે છે. તેમાં બાકીના દ્રઘ્યોની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી દ્રઘ્ય ૮૦ અને અનાનુપૂર્વી દ્રઘ્ય દશની સંખ્યા રૂપ છે એજ પ્રમાણે અવક્રતત્ત્વક દ્રઘ્ય પણ આનુપૂર્વી અને અનાનુપૂર્વી દ્રઘ્યોની અપેક્ષાએ ૧૦માંથી ૧૦૦ ની જેમ તેમના અસં-
ખ્યાતમાં ભાગરૂપ જ સમજવું તેને તેમના સંખ્યાતમાં ભાગરૂપ અથવા તેમના કરતાં સંખ્યાત ગણું કે અસંખ્યાત ગણું સમજવું બેધએ નહીં. ॥સૂ૦ ૮૮॥

ક્ષાયોપશમિકે ભાવે ભવન્તિ? પારિણામિકે ભાવે ભવન્તિ? સાન્નિપાતિકે ભાવે ભવન્તિ? નિયમાત્ સાદિ પારિણામિકે ભાવે ભવન્તિ । અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ ચ એવમેવ મણિતવ્યાનિ ॥સૂ૦ ૮૧॥

અથ સૂત્રકાર અષ્ટમ જો ભાવદ્વાર છે—ઉસકા કથન કરતે છે—

“જેગમવવહારાણં” ઇત્યાદિ

શબ્દાર્થ—(જેગમવવહારાણં આણુપુર્વીદવાઈં કતરમ્મિ ભાવે હોજ્જા)

પ્રશ્ન—નૈગમવવહારનય સંમત સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કિસ ભાવ મેં વર્તતે છે? (કિં ઉદ્દાહ ભાવે હોજ્જા?) કયા ઔદયિક ભાવ મેં વર્તતે છે? (ઉવસમિયે ભાવે હોજ્જા) યા ઔપશમિક ભાવ મેં વર્તતે છે? (સ્વદાહ ભાવે હોજ્જા?) યા ક્ષાયિક ભાવ મેં વર્તતે છે? (સ્વઓવસમિયે ભાવે હોજ્જા?) યા ક્ષાયોપશમિક ભાવ મેં વર્તતે છે? (પારિણામિયે ભાવે હોજ્જા) યા પારિમાણિક ભાવ મેં વર્તતે છે? (સંનિવાદાહ ભાવે હોજ્જા) યા સાન્નિપાતિક ભાવ મેં વર્તતે છે? (નિયમા સાદ પરિણામિયે ભાવે હોજ્જા)

સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય નિયમ સે સાદિ પારિણામિક ભાવ મેં વર્તતે છે । દ્રવ્ય કા ઉસ-ઉસ રૂપસે જો પરિણામન હોતા છે ઉસકા નામ પરિણામ છે । ઇસ પરિણામ કા નામ હી પારિણામિક છે । અથવા પરિણામ હોતા હો યા પરિણામ સે જો બનતા હો ઉસકા નામ પારિણામિક છે ।

હવે સૂત્રકાર અનુગમના અઠમાં લેદ રૂપ ભાવદ્વારનું કથન કરે છે—

“જેગમવવહારાણં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(જેગમવવહારાણં આણુપુર્વી દવાઈં કતરમ્મિ ભાવે હોજ્જા?)

પ્રશ્ન—નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો કયા ભાવમાં રહે છે? (કિં ઉદ્દાહ ભાવે હોજ્જા) શું ઔદયિક ભાવમાં રહે છે? (ઉવસમિયે ભાવે હોજ્જા?) કે ઔપશમિક ભાવમાં રહે છે? (સ્વદાહ ભાવે હોજ્જા?) કે ક્ષાયિક ભાવમાં રહે છે? (સ્વઓવસમિયે ભાવે હોજ્જા?) કે ક્ષાયોપશમિક ભાવમાં રહે છે? (પારિણામિયે ભાવે હોજ્જા?) કે પારિમાણિક ભાવમાં રહે છે? (સંનિવાદાહ ભાવે હોજ્જા?) કે સાન્નિપાતિક ભાવમાં રહે છે?

ઉત્તર—(નિયમા સાદપરિણામિયે ભાવે હોજ્જા) સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય નિયમથી જ સાદિપારિણામિક ભાવમાં રહે છે દ્રવ્યનું તે તે રૂપે જે પરિણામન થાય છે તેનું નામ પરિણામ છે એ પરિણામનું નામ જ પારિણામિક

यह परिणाम दो प्रकार का होना है—एक सादि और दूसरा अनादि । धर्मास्तिकाय आदि जो अरूपी द्रव्य हैं उसका जो उस-उस रूप से स्वाभाविक परिणमन है वह अनादि परिणाम है । क्योंकि अनादि काल से ही इन द्रव्यों का परिणमन इसी रूप से होता चला आ रहा है । तात्पर्य कहने का यह है कि इन द्रव्यों का जो स्वाभाविक स्वरूप परिणमन है वही अनादि परिणाम है । परन्तु जो रूपी द्रव्य—पुद्गल द्रव्य है उनका उस उस प्रकार का जो परिणमन होता है वह सादि परिणाम है । क्योंकि अन्न, इन्द्रधनुष आदि पौद्गलिक द्रव्यों के उस उस प्रकार के परिणमन में अनादिता होती है । इसलिये समस्त आनुपूर्वी द्रव्य सादि पारिणामिक भाव में वर्तते हैं । अर्थात् आनुपूर्वी द्रव्यों में जो आनुपूर्वी रूप विशिष्ट परिणाम है वह अनादि कालीन नहीं है । कारण—पुद्गलों का जो एक विशिष्ट रूप से परिणाम होता है वह उत्कृष्ट की अपेक्षा असंख्यात कालतक ही स्थायी माना गया है । इसी प्रकार से समस्त आनुपूर्वी द्रव्य और समस्त अवक्तव्य भी सादि पारिणामिक भाव में ही रहते हैं । औदयिक भावों की व्याख्या आगे की जावेगी इसलिये यहां नहीं की गई है ।

छे. ते परिणाम जे प्रकारनुं होय छे—(१) सादि परिणाम, (२) अनादि परिणाम. धर्मास्तिकाय आदि जे अरूपी द्रव्यो छे तेमनुं ते ते इपे जे स्वाभाविक परिणमन थाय छे तेनुं नाम अनादि परिणाम छे, कारण के अनादि कालधी जे ते द्रव्योनुं आ इपे परिणमन थतुं आवे छे. आ कथननो भावार्थ जे छे के आ द्रव्योनुं जे स्वाभाविक स्वरूप परिणमन छे, जेअ अनादि परिणाम छे. परंतु जे रूपी द्रव्य (पुद्गल द्रव्य) छे तेमनुं ते ते प्रकारनुं जे परिणमन थाय छे ते सादि परिणाम छे, कारण के वादणां, मेघधनुष आदि पौद्गलिक द्रव्योंना ते ते प्रकारना परिणमनमां अनादिता होती नथी तेथी जेबुं कडेवामां आब्युं छे के समस्त आनुपूर्वी द्रव्यो सादिपरिणामिक भावमां रडे छे. जेटवे के आनुपूर्वी द्रव्योमां जे आनुपूर्वी रूप विशिष्ट परिणाम छे ते अनादि कालिन नथी कारण के पुद्गलोनुं जे जेक विशिष्ट रूपे परिणमन थाय छे ते वधारमां वधारे असंख्यात काल सुधी जे स्थायी रडे छे, जेम मानवामां आवे छे. जेअ प्रमाणे समस्त अनानुपूर्वी द्रव्य अने समस्त अवक्तव्यके द्रव्य पथु सादिपरिणामिक भावमां जे रडे छे औदयिक आदि भावोनुं स्पष्टीकरण आगण करवामां आवशे.

ટીકા—‘જેગમવવહારાણં’ इत्यादि—

નૈગમવ્યવહારસમ્મતાનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કતમસ્મિન્ ભાવે ભવન્તિ? इति सामान्यतः पृष्ट्वा विशेषतः पृच्छति—किमौपशमिके भावे भवन्ति? किमौपशमिके भावे भवन्ति? क्षાયिके भावे भवन्ति क्षायोपशमिके भावे भवन्ति? पारिणामिके भावे भवन्ति?, साक्षिपातिके भावे भवन्ति? इति उत्तरमाह—नियमात्=अवश्यतया—आनુપૂર્વીદ્રव्याणि सादिपारिणामिके—भावे—भवन्ति। तत्र—परिणमनं द्रव्यस्य तेन तेन रूपेण भवनं परिणामः, स एव पारिणामिकः, परिणामे भवः, परिणामेन निवृत्त इति वा पारिणामिकः। स च द्विविधः—सादिरनादिश्च तत्र—धर्मास्तिकायाधरूपिद्रव्याणामनादिः परिणामः। अनादिकाळात् तत्तद्रव्यत्वेन तेषां परिणतत्वात्। रूपिद्रव्याणां तु सादिः परिणामः, अभ्रेन्द्रधनुरादीनां तथा परिणामस्यानादित्वाभावात्। सादिश्चासौ पारिणामिकश्च सादि पारि-

ભાવોર્થ— આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્ય કૌન સે ભાવ વાલે હૈં યહ યહાં પ્રશ્ન કિયા ગયા હૈ તબ હસકા ઉત્તર સૂત્રકાર ને યૌં દિયા હૈ કિ યે સવ આનુપૂર્વી આદિ પૌદ્ગલિક દ્રવ્ય સાદિ પારિમાણિક ભાવ વાલે હૈં। પારિમાણિક ભાવ દ્રવ્ય કા વહ પરિણામ હૈ જો સિર્ફ દ્રવ્ય કે અસ્તિત્વ સે આપ હી આપ હુઆ હૈ। ઔપશમિકભાવ કર્મોં કે ઉપશમ સે હોતા હૈ। જૈસે મલ કે નીચે બેઠ જાને પર જલમેં સ્વચ્છતા હોતી હૈ। ક્ષાયિક ભાવ કર્મોં કે ક્ષય સે પૈદા હોતા હૈ। જૈસે કીચડ કે સર્વથા નષ્ટ હો જાને પર જલ મેં સ્વચ્છતા આતી હૈ। ક્ષય ઔર ઉપશમ इनदोनो के संबन्ध से जो भाव उत्पन्न होते हैं वे क्षायोपशमिक भाव हैं—जैसे कोढ़ो—कोढ़कर्म धोने पर कुछ मादक शक्ति नष्ट हो जाती है और कुछ

ભાવોર્થ—આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યો કયા ભાવવાળાં હોય છે, એવો અહીં પ્રશ્ન પૂછવામાં આવ્યો છે આ પ્રશ્નનો સૂત્રકારે એવો ઉત્તર આપ્યો છે કે સમસ્ત આનુપૂર્વી આદિ પૌદ્ગલિક દ્રવ્યો સાદિપારિણામિક ભાવવાળાં હોય છે. પારિણામિક ભાવદ્રવ્યનું એ પરિણામ છે કે જે માત્ર દ્રવ્યના અસ્તિત્વમાં જ આવે. આપ થયા કરે છે. ઔપશમિક ભાવ કર્મોના ઉપશમથી ઉત્પન્ન થાય છે. જેમ પાણીમાં રહેલો કચરો નીચે બેસી જઈને પાણી સ્વચ્છ થાય છે એજ પ્રમાણે કર્મોના ઉપશમથી ઔપશમિક ભાવ પેદા થાય છે. કર્મોના ક્ષયથી ક્ષાયિક ભાવ પેદા થાય છે જેમ કાદવનો સર્વથા નાશ થઈ જવાથી પાણી સ્વચ્છ બની જાય છે એજ પ્રમાણે કર્મોના ક્ષય થવાથી ક્ષાયિક ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે. ક્ષય અને ઉપશમ, આ બન્નેના સંબંધથી જે ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે તેમને ક્ષાયોપશમિક ભાવ કહે છે. જેમ કાદરોને પાણીમાં ધોવાથી તેની થોડી માદકશક્તિ નષ્ટ થઈ જાય છે અને થોડી

નામિકઃ, તસ્મિન્ ભાવે ભવન્તિ, આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણામાનુપૂર્વીત્વેન પરિણામસ્યાના-
દિત્વાઽસંભવાત્, ઉત્કર્ષતો ત્રિશિષ્ટૈરુપરિણામેન પુદ્ગલાનામસંખ્યેયકાલમેવાવસ્થા-
નાત્ । એવમનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ ચ સાદિપારિણામિકે ભાવે, એવ
ભવન્તિ । ઔદયિકાદીનાં વ્યાખ્યાઽન્ન ન કૃતા, અગ્રે કરિષ્યમાણત્વાત્ ॥ સૂ૦ ૮૯ ॥

મૂલમ્—એસિ ણં મંતે ! ણેગમવવહારાણં આણુપુઘીદઘાણં
અણાણુપુઘીદઘાણં અવત્તઘગદઘાણં ય દઘટ્ટયાણ પપ્પસટ્ટયાણ
દઘટ્ટપપ્પસટ્ટયાણ કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા બહુયા વા તુલ્લા વા
વિસેસાહિયા વા ? ગોયમા ! સઘ્વત્થોવાઈં ણેગમવવહારાણં અવત્ત-
ઘગદઘાઈં દઘટ્ટયાણ, અણાણુપુઘીદઘાઈં દઘટ્ટયાણ વિસેસાહિયાઈં,
આણુપુઘીદઘાઈં દઘટ્ટયાણ અસંખેજ્જગુણાઈં ૧ । પપ્પસટ્ટયાણ સઘ્વ-
ત્થોવાઈં ણેગમવવહારાણં અણાણુપુઘીદઘાઈં અપપ્પસટ્ટયાણ ।
અવત્તઘગદઘાઈં પપ્પસટ્ટયાણ વિસેસાહિયાઈં । આણુપુઘીદઘાઈં
પપ્પસટ્ટયાણ અણંતગુણાઈં ૨ । દઘટ્ટપપ્પસટ્ટયાણ સઘ્વત્થોવાઈં ણેગ-
મવવહારાણં અવત્તઘગદઘાઈં દઘટ્ટયાણ । અણાણુપુઘીદઘાઈં દઘ-

શેષ બચી રહતી હૈ । કર્મોં કે ઉદય સે હોને વાલે ભાવ ઔદયિક ભાવ
હૈ । જૈસે કીચડ કે સંબન્ધ સે જલમૈં મલિનતા હોતી હૈ । પારિણામિક
ભાવ કે દો ભેદ હૈ ૧ એક સાદિ પારિણામિક ભાવ ઔર-દૂસરા અનાદિ
પારિણામિક ભાવ । અનાદિ પારિણામિક ભાવ ધર્માસ્તિકાયાદિક અમૂ-
ર્ત પદાર્થોં મૈં હોતા હૈ । ઔર મૂર્ત પૌદ્ગલિક દ્રવ્યોં મૈં સાદિ પારિણામિક
ભાવ હોતા હૈ । ॥ સૂ૦ ૮૯ ॥

ખાડી રહી જાય છે એજ પ્રમાણે ક્ષય અને ઉપશમને કારણે પણ કર્મોની
સ્થિતિ થાય છે કર્મોના ઉદયથી ઉત્પન્ન થનાં ભાવને ઔદયિક ભાવ કહે છે
જેમ કાઢવને લીધે પાણી મલિન બને છે, એજ પ્રમાણે કર્મોના ઉદયથી
આત્મા પર કર્મોંથી ભેદ જામે છે પારિણામિક ભાવના નીચે પ્રમાણે બે
ભેદ છે—(૧) સાદિ પારિણામિક ભાવનો સદ્ભાવ ધર્માસ્તિકાય આદિ અમૂર્ત
દ્રવ્યોમાં હોય છે અને મૂર્ત પૌદ્ગલિક દ્રવ્યોમાં સાદિપારિણામિક ભાવનો
સદ્ભાવ હોય છે. ॥ સૂ૦ ૮૯ ॥

દ્વયાએ અપેક્ષાદ્વયાએ વિશેષાહિયાઈં । અવત્તવગદ્વાઈં પેક્ષાદ્વયાએ વિશેષાહિયાઈં । આણુપુત્રીદ્વાઈં દ્વદ્વયાએ અસંલેખજગુણાઈં, તાઈં ચેવ પેક્ષાદ્વયાએ અણંતગુણાઈં ૩ । સે તં અણુગમે, સે તં નેગમવ્યવહારાણં અણોવણિહિયા દ્વાણુપુત્રી ॥સૂ૦ ૧૦॥

છાયા—એતેષાં સ્વલ્પ ભદન્ત । નેગમવ્યવહારયોરાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણામનાનુપૂર્વી-દ્રવ્યાણામવક્તવ્યકદ્રવ્યાણાં ચ દ્રવ્યાર્થતયા પ્રદેશાર્થતયા દ્રવ્યાર્થપ્રદેશાર્થતયા કાનિ કેમ્બોઽલ્પાનિ વા બહુકાનિ વા તુલ્યાનિ વા વિશેષાધિકાનિ વા ? ગૌતમ ! સર્વસ્તોકાનિ નેગમવ્યવહારયોરવક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ દ્રવ્યાર્થતયા, અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ

અથ સૂત્રકાર નવવેં અલ્પ બહુત્વ દ્વાર કી પ્રરૂપણા કરતે હૈં—

“એસિં ણં મંતે ।” ઇત્યાદિ

શબ્દાર્થ—(મંતે ! નેગમવ્યવહારાણં એસિં આણુપુત્રી દ્વાણં અણુપુત્રીદ્વાણં અવત્તવગદ્વાણં ય દ્વદ્વયાએ પેક્ષાદ્વયાએ, દ્વદ્વપેક્ષાદ્વયાએ કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા બહુયા વા તુલ્લા વા વિશેષાહિયા વા ?) હે ભદન્ત ! નેગમ વ્યવહારનય સંમત દ્વન આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કે, ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કે બીચ મેં દ્રવ્યાર્થતા પ્રદેશાર્થતા ઓર દ્રવ્યાર્થ પ્રદેશાર્થતા કી અપેક્ષા કરકે કૌન ૨ દ્રવ્ય કિન ૨ દ્રવ્યોં સે અલ્પ હૈં ? કૌન ૨ દ્રવ્યોં સે અધિક હૈં ? કૌન ૨ કિન-૨ કે સમાન હૈં ? કૌન ૨ કિન ૨ દ્રવ્યોં સે વિશેષ અધિક હૈં ?

હવે સૂત્રકાર નવમાં અલ્પબહુત્વ દ્વારની પ્રરૂપણા કરે છે—

“ એસિં ણં મંતે ! ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(મંતે ! નેગમવ્યવહારાણં એસિં આણુપુત્રીદ્વાણં અણુપુત્રીદ્વાણં અવત્તવગદ્વાણં ય દ્વદ્વયાએ પેક્ષાદ્વયાએ, દ્વદ્વપેક્ષાદ્વયાએ કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા બહુયા વા તુલ્લા વા વિશેષાહિયા વા ?) હે ભગવન્ ! નેગમ અને વ્યવહાર નયસંમત આ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં, અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોંની દ્રવ્યાર્થતા, પ્રદેશાર્થતા અને દ્રવ્યાર્થપ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ સરખામણી કરવામાં આવે, તો કયા કયા દ્રવ્યોં કરતાં ન્યૂન છે ? કયા કયા દ્રવ્યોં કયા કયા દ્રવ્યોં કરતાં અધિક છે ? કયા કયા દ્રવ્યોં કયા કયા દ્રવ્યોંની બરાબર છે ? અને કયા કયા દ્રવ્યોં કયા કયા દ્રવ્યોંથી વિશેષાધિક છે ?

દ્રવ્યાર્થતયા વિશેષાધિકાનિ । આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ દ્રવ્યાર્થતયા અસંખ્યેયગુણાનિ ।
પ્રદેશાર્થતયા સર્વસ્તોકાનિ નૈગમવ્યવહારયોઃ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ અપ્રદેશાર્થતયા

ઉત્તર—(ગોયમા દવ્વટ્ટયાણે નૈગમવવહારાણં અવત્તવ્વગદવ્વાહં
સવ્વત્થોવાહં) હે ગૌતમ ! દ્રવ્યાર્થતા કી અપેક્ષા સે નૈગમ વ્યવહારનય
સંમત અવત્તવ્યક દ્રવ્ય સર્વસ્તોક હૈ—અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો સે મી અલ્પ
હૈ । (અણાણુપુઠ્ઠી દવ્વાહં દવ્વટ્ટયાણે વિસેસાહિયાહં) તથા અનાનુ-
પૂર્વી દ્રવ્ય દ્રવ્યાર્થતા કી અપેક્ષા સે વિસેષાધિક હૈ—અવત્તવ્યક દ્રવ્યો
સે કુછ અધિક હૈ । વિસેષાધિકતાં હનમેં વસ્તુસ્થિતિ કે સ્વભાવ સે
હૈ । “તદુક્તમ્” હન પરમાણુ પુદ્ગલોં કે ઔર દ્વિપ્રદેશી સ્કંધોં કે બીચ મેં
કૌન કિસસે અધિક હૈ ? ગૌતમ ! દ્વિપ્રદેશિક સ્કંધોં સે પરમાણુ પુદ્ગલ-
અધિક હૈ । હસ કથન કે અનુસાર અવત્તવ્યક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા પર-
માણુરૂપ પુદ્ગલ અધિક પ્રમાણિત હોતે હૈ । (દવ્વટ્ટયાણે આણુપુઠ્ઠી દવ્વા-
હં અસંખેજ્જગુણાહં) તથા દ્રવ્યાર્થતા કી અપેક્ષા સે આનુપૂર્વીદ્રવ્ય અસં-
ખ્યાત ગુણિત હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ જો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય હૈ
ઊનમેં પરમાણુરૂપ એક એક હી સ્થાન લભ્ય હૈ, એવં જો અવત્તવ્યક દ્રવ્ય
હૈ ઊનમેં મી દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ રૂપ એક એક સ્થાન હી લભ્ય હૈ પરંતુ જો

ઉત્તર—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (દવ્વટ્ટયાણે નૈગમવવહારાણં અવત્તવ્વગ-
દવ્વાહં સવ્વત્થોવાહં) દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ નૈગમ અને વ્યવહાર નય-
સંમત અવત્તવ્યક દ્રવ્ય સૌથી અલ્પ છે—એટલે કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોથી પણ તે
અલ્પપ્રમાણમાં હોય છે. (અણાણુપુઠ્ઠીદવ્વાહં, દવ્વટ્ટયાણે વિસેસાહિયાહં)
તથા દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ અવત્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો
વિશેષાધિક છે. તેમાં આ વિશેષાધિકતા વસ્તુસ્થિતિના સ્વભાવની અપેક્ષાએ
સમજવી. “તદુક્તમ્” કહ્યું પણ છે કે “હે ભગવન્ ! પરમાણુ પુદ્ગલો
અને દ્વિપ્રદેશી સ્કંધો, આ બંનેમાંથી કોણ કોના કરતાં અધિક છે? ઉત્તર—
હે ગૌતમ ! દ્વિપ્રદેશીક સ્કંધો કરતાં પરમાણુ પુદ્ગલો અધિક હોય છે.”
આ કથન અનુસાર દ્વિપ્રદેશી સ્કંધો રૂપ અવત્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં પરમાણુ-
પુદ્ગલો રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અધિક છે, એ વાત પ્રમાણિત થાય છે.
(દવ્વટ્ટયાણે આણુપુઠ્ઠીદવ્વાહં અસંખેજ્જગુણાહં) તથા દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ
આનુપૂર્વી દ્રવ્યો, અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાત ગણાં છે. આ કથનનું
સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે જે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો છે તેમાં પરમાણુ રૂપ
એક એક સ્થાન જ લભ્ય હોય છે, અને જે અવત્તવ્યક દ્રવ્યો છે તેમાં
પણ દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ રૂપ એક એક જ સ્થાન લભ્ય હોય છે. પરંતુ જે

અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ પ્રદેશાર્થતયા વિશેષાધિકાનિ । આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ પ્રદેશાર્થતયા
 5નન્તગુણાનિ ૨ । દ્રવ્યાર્થપ્રદેશાર્થતયા સર્વસ્તોકાનિ નૈગમવ્યવહારયોરવક્તવ્યદ્રવ્યાણિ
 દ્રવ્યાર્થતયા । અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ દ્રવ્યાર્થતયા, અપ્રદેશાર્થતયા વિશેષાધિકાનિ । અવ-
 ક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ પ્રદેશાર્થતયા વિશેષાધિકાનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ દ્રવ્યાર્થતયા
 અસંખ્યેયગુણાનિ, તાન્યેવ પ્રદેશાર્થતયા અનન્તગુણાનિ । સ एषોऽनुगमः । सैषा
 नैगमव्यवहारयोः अनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी ॥ सू० ९० ॥

આનુપૂર્વી દ્રવ્ય હૈં ઉનમૈં વ્યણુક સ્કંધ સે લગાકર ઇકોત્તર વૃદ્ધિ સે ઇક
 ઇક પ્રદેશ કી ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિ હોને સે અનંતાણુક સ્કંધ પર્યન્ત અન-
 ન્ત સ્થાન હૈં હસલિયે સ્થાન કી બહુત વિવક્ષા સે આનુપૂર્વીદ્રવ્ય અનાનુ-
 પૂર્વી ઔર અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા અસંખ્યાતગુણે કહે ગયે હૈં ।

શંકા— યદિ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કે સ્થાન પૂર્વ કી અપેક્ષા અનન્ત હૈં
 હસલિયે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અસંખ્યાત ગુણે પૂર્વ કી અપેક્ષા લેકર કે કહે
 ગયે હૈં, સો યે કહના ઠીક નહીં હૈં ક્યોં કિ હસ પ્રકાર કે કથન સે તો
 ઉન આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મૈં ઉનકી અપેક્ષા અસંખ્યાતગુણતા ન આકર
 અનન્ત ગુણતા હીં આતી હૈં ?

ઉત્તર—અનંતાણુક જો સ્કંધ હૈં વે તો અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કી અપેક્ષા સે
 અનન્ત ભાગવર્તી હોને કે કારણ સ્વભાવતઃ હીં સ્તોક-ક્રમ-હૈં । હસલિયે
 અનન્તાણુક સ્કંધોં કો લેકર આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મૈં-આનુપૂર્વી કે સ્થાનોં મૈં
 કુછ વૃદ્ધિ નહીં હોતી હૈં । હસલિયે યથાર્થરૂપ મૈં ઉનમૈં-આનુપૂર્વીદ્રવ્યોં

આનુપૂર્વી દ્રવ્યો છે તેમાં તો ત્રિઆણુક સ્કંધથી લઇને ક્રમે ક્રમે એક એક
 પ્રદેશની ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિ થતાં થતાં અનંતાણુક સ્કંધ પર્યન્તનાં અનંત
 સ્થાન હોય છે તેથી સ્થાનના બહુતવની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો, અનાનુ-
 પૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાત ગણાં કહેવામાં આવ્યાં છે

શંકા—જો આનુપૂર્વી દ્રવ્યોના સ્થાન અનંત હોય, અને અનાનુપૂર્વી
 દ્રવ્યોના તથા અવક્તવ્યક દ્રવ્યોનાં સ્થાન એક એક હોય તો અહીં આનુપૂર્વી
 દ્રવ્યોને અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અનંત ગણાં કહેવા
 જોઇતા હતાં છતાં અહીં તેમને અસંખ્યાત ગણાં શા કારણે કહ્યાં છે ?

ઉત્તર—અનંતાણુક જે સ્કંધો છે તેઓ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં અન-
 તમાં ભાગપ્રમાણ હોવાને કારણે સ્વાભાવિક રીતે જ સ્તોક (ઓછાં, ન્યૂન)
 છે. તેથી અનંતાણુક સ્કંધોને લીધે આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં-આનુપૂર્વી દ્રવ્યોનાં
 સ્થાનોમાં ખાસ કોઈ વૃદ્ધિ થતી નથી. તેથી યથાર્થ રૂપે તો તે આનુપૂર્વી

ટીકા—‘एएसि णं’ इत्यादि—

हे भदन्त ! नैगमव्यवहारसम्मतानामेतेषामानुपूर्वीद्रव्याणामनानुपूर्वी द्रव्याणामवक्तव्यकद्रव्याणां च मध्ये द्रव्यार्थतया=द्रव्यमेवार्थो द्रव्यार्थस्तस्यभावो द्रव्यार्थता तया, द्रव्यत्वेनेत्यर्थः, द्रव्यत्वमपेक्ष्य, प्रदेशार्थतया=प्रदेशत्वमपेक्ष्य, द्रव्यार्थप्रदेशार्थतया=द्रव्यत्वं-प्रदेशत्वं-चापेक्ष्य-कानि केभ्यः अल्पानि विशेषहीनत्वादिनां स्तोकानि वा भवन्ति ? बहुकानि=असंख्येयगुणत्वादिनाधिकानि वा भवन्ति ? तुल्यानि=समसंख्यत्वेन समानि वा, किञ्चिदाधिक्येन विशेषाधिकानि वा भवन्ति ? इति प्रश्नः । उत्तरयति—हे गौतम ! द्रव्यार्थतया=द्रव्यार्थत्वमपेक्ष्य नैगमव्यवहारसम्मतानि अवक्तव्यकद्रव्याणि सर्वस्तोकानि=अनानुपूर्वीद्रव्येभ्य आनुपूर्वीद्रव्येभ्यश्च अल्पानि । अनानुपूर्वीद्रव्याणि तु द्रव्यार्थतया विशेषाधिकानि=अवक्तव्यकद्रव्येभ्यः किञ्चिदधिकानि । विशेषाधिक्यं तस्य वस्तुस्थितिस्वभावात् । तदुक्तम्—

‘एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं दुप्पएसियाणं खंधाणं कयरे कयरेहिं तो बहुया ? गोयमा ! दुप्पएसिएहिं तो खंधेहिं तो परमाणुपोग्गला बहुया ॥

छाया—एतेषां खलु भदन्त ! परमाणुपुद्गलानां द्विप्रदेशिकानां स्कन्धानां मध्ये के केभ्यो बहुकाः; ३ गौतम ! द्विप्रदेशिकेभ्यः स्कन्धेभ्यः परमाणुपुद्गला बहुकाः ० ३ इति ।

में- असंख्यात गुणित ही स्थान बनते हैं और उन्हीं स्थानों को लेकर उनमें असंख्यात गुणता आती है । अनंतगुणता नहीं । यह सब विषय अनुगम के भाग नाम के सप्तमद्वार में कथित “एएसि णं भंते !” इत्यादि सूत्रपाठ से जान लेना चाहिये ॥ इस प्रकार द्रव्यार्थता की अपेक्षा लेकर बहुत्व का कथन करके अब सूत्रकार प्रदेशत्व की अपेक्षा से आनुपूर्वी आदि

દ્રવ્યોમાં અસંખ્યાત ગણના જ સ્થાન બને છે, અને એજ સ્થાનોની અપેક્ષાએ તેમનામાં (આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં) અસંખ્યાત ગુણિતતા જ સંભવી શકે છે—અનંત ગુણિતા સંભવી શકતી નથી. ૮૮માં સૂત્રમાં અનુગમના ભાગદ્વાર નામના સાતમાં ભેદનું પ્રતિપાદન કરતી વખતે સૂત્રકારે “एएसि णं” ઇત્યાદિ સૂત્રપાઠ દ્વારા આ વિષયનું વિશેષ વર્ણન કર્યું છે. તે તે સૂત્રમાંથી તે વાંચી લેવું. આ રીતે દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો આદિની અલ્પબહુતાનું કથન કરીને હવે સૂત્રકાર પ્રદેશત્વની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોના અલ્પબહુત્વનું કથન કરે છે—

તથા-દ્રવ્યાર્થતયા આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ અસંખ્યેયગુણાનિ ।

અર્થ ભાવઃ-અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ પરમાણુલક્ષણં સ્થાનમેકેકમેવ લભ્યતે, અવક્તવ્યકદ્રવ્યેષુ દ્વચણુકસ્કન્ધલક્ષણં સ્થાનમેકેકમેવલભ્યતે । આનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ તુ ત્ર્યણુકસ્કન્ધપ્રભૃતીનિ ઇકોત્તરવૃદ્ધ્યાઽનન્તાણુકસ્કન્ધપર્યન્તાનિ અનન્તાનિ સ્થાનાનિ

દ્રવ્યોં મેં અલ્પ વહુત્વ કા કથન કરકે અવ સૂત્રકાર પ્રદેશત્વ કી અપેક્ષા સેં આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોં મેં અલ્પ વહુત્વકા કથન કરતે હૈં-(જેગમવવહારણં અણાણુપુઠ્વીદવ્વાઈં પપસદ્વ્યાપ સવ્વત્થોવાઈં) નૈગમ વ્યવહારનય સંમત સમસ્ત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય પ્રદેશત્વ કી અપેક્ષા કરકે અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં સેં ઇત્થં આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં સેં અલ્પ હૈં । ક્યોં કિ (અપપસદ્વ્યાપ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં પ્રદેશરૂપ અર્થકા અભાવ હૈં । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈં કિ પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં ઓ યદિ દ્વિતીય આદિ પ્રદેશ હોં તો દ્રવ્યાર્થતા કી તરહ પ્રદેશાર્થતા મેં ઓ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા સેં ડનકી અધિકતા હો જાવે પરન્તુ ઇસા તો હૈં નહીં ક્યોં કિ પરમાણુ અપ્રદેશી હોતા હૈં-ઇસા સિદ્ધાન્ત કા વચન હૈં । ઇસલિયે પ્રદેશાર્થતા કી અપેક્ષા સેં યે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સર્વસ્તોક-થોડે કહે ગયે હૈં । નિઃકર્ષાર્થ ઇસકા યહ હૈં કિ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય દ્રવ્યાર્થતા કી અપેક્ષા લેકર અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં સેં કુછ અધિક કહે ગયે હૈં ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્ય ઇનસે કમ । સો યદિ પરમાણુરૂપ ઇન અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં ઓ યદિ દ્વિતીયાદિક પ્રદેશ માન લિયે જાવે

(જેગમવવહારણં અણાણુપુઠ્વીદવ્વાઈં પપસદ્વ્યાપ સવ્વત્થોવાઈં) નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત સમસ્ત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો પ્રદેશત્વની અપેક્ષાએ અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અને આનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં અલ્પ હોય છે, કારણ કે (અપપસદ્વ્યાપ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં પ્રદેશ રૂપ અર્થનો અભાવ હોય છે, આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે જો પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં પણ દ્વિતીય આદિ પ્રદેશોનો સદ્ભાવ હોત તો દ્રવ્યાર્થતાની જેમ પ્રદેશાર્થતામાં પણ અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં તેમની અધિકતા જ હોત પરન્તુ એવી કોઈ વાતનો તો સદ્ભાવ જ નથી, કારણ કે પરમાણુ અપ્રદેશી હોય છે, એવું સિદ્ધાંતનું વચન છે. તે કારણે પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોને સૌથી અલ્પ કહેવામાં આવેલ છે આ સમસ્ત કથનનો ભાવ, થર્થ એ છે કે દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ તો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં વિશેષાધિક કહેવામાં આવેલ છે. એટલે કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં અવક્તવ્યક દ્રવ્યો અલ્પ કહેવામાં આવ્યાં છે. પણ પ્રદેશત્વની અપેક્ષાએ તો આનુપૂર્વી

પ્રાપ્યન્તે, અતઃ સ્થાનબહુત્વાત્ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યેભ્યોઽવક્તવ્યક-
દ્રવ્યેભ્યઃસંસ્થાયેયગુણાનિ ।

નનુ-આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણાં સ્થાનાનિ યદ્યનન્તાનિ, તર્હિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ
પૂર્વાપેક્ષયાઽનન્તગુણાનિ ભવન્તીતિવક્તવ્યમ્, કથનમસંસ્થાતગુણાનીત્યુક્તમ્ ? इति
चेत्, उच्यते-अनन्ताणुकस्कन्धास्तु अनानुपूर्व्यपेक्षयाऽनन्तभागवर्तित्वात् स्व-
भावादेव स्तोका इति-अनन्ताणुकस्कन्धैरानुपूर्वीद्रव्येषु न किंचिद् वर्धते, अतो
वस्तुवक्ष्या असंख्यातान्येव तेषु स्थानानि प्राप्यन्ते । तदपेक्षया तु असंख्यात-
गुणान्येव तानि भवन्ति, नन्वनन्तगुणानीति । एतच्चानुगमस्य सप्तमे भागनामके द्वारे
प्रदर्शितात्-‘एएसि णं भंने’ इत्यादिकान् सूत्रपाठान् सर्वभावनीयम् १ । इत्थं
द्रव્યार्थतयाऽल्पबहुत्वमभिधाय सम्प्रति प्रदेशार्थतया तदाह-‘एएसड्डयाए, इत्यादि ।
नैगमव्यवहारसम्मतानि अनाનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ प्रदेशार्थतया=प्रदेशत्वमपेक्ष्य सर्वस्तो-
कानि=अवक्तव्यद्रव્યેभ્ય આનુપૂર્વીદ્રવ્યેભ્યઃપ્રાપ્તાનિ । एषां सर्वस्तोकत्वे हेतुमाह-
‘अपएसड्डयाए’ इति । अप्रदेशार्थतया=अप्रदेशार्थत्वात्, अनानુपूर्वी દ્રવ્યેષુ પ્રદે-
શરૂપસ્યાર્થસ્ય અભાવાત્ । અયં ભાવઃ-યદિ હિ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યેષ્વપિ પ્રદેશઃ સ્યુ-
સ્તદા દ્રવ્યાર્થતાયામિવ પ્રદેશાર્થતાયામપિ અવક્તવ્યકદ્રવ્યાપેક્ષયા તેવામાધિક્યં
સ્યાત્, નચૈતદસ્તિ, ‘પરમાણુપ્રદેશઃ’ इति वचनात्, अतः सर्वस्तोकानि एतानि ।

ननु यद्यनानुपूर्वीद्रव्येषु प्रदेशार्थता नास्ति, तर्हि अत्र तस्या विचारोऽनुपयुक्त
एवे? ति चेत्, उच्यते-‘प्रदेश’ शब्दस्य प्रकृष्टः-सर्वश्वक्षमः देशः=पृष्ठगलास्ति-

तो प्रदेशार्थता से भी उनकी अवक्तव्यकद्रव्यों की अपेक्षा अधिकता
मानी जानी चाहिये । परन्तु ऐसा नहीं है । क्योंकि परमाणु अप्रदेशी
है । अतः अनानુપૂર્વી દ્રવ્ય સર્વસ્તોક હિં યહી સિદ્ધાન્ત યુક્તિયુક્ત હૈ ।

શંકા-—યદિ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં પ્રદેશાર્થતા નહીં હૈ, તો યહાં પર
પ્રદેશાર્થતા કો લેકર ઉનકા વિચાર કરના અનુપયુક્ત હી હૈ ?

દ્રવ્યોને અવક્તવ્ય દ્રવ્યો કરતાં પણ અલ્પ માનવામાં આવેલા છે, કારણ કે
પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અપ્રદેશી હોય છે ને આ પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી
દ્રવ્યોમાં પણ દ્વિતીય આદિ પ્રદેશોનો સદ્ભાવ માનવામાં આવે, તો
પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ પણ અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની
અધિકતા સંભવી શકે છે. પરન્તુ પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોને સર્વસ્તોક
(સૌથી અલ્પ) માનવાનો સિદ્ધાન્ત જે યુક્તિયુક્ત લાગે છે.

શંકા-—જો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં પ્રદેશાર્થતાનો સદ્ભાવ જ ન હોય, તો
અહીં પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ તેમનો વિચાર કરવો એ વાત જ શું
અનુચિત લાગતી નથી ?

કાયસ્ય નિરંશો ભાગઃ, ઇતિ વ્યુત્પત્ત્યા પરમાણુદ્રવ્યેઽપિ પ્રદેશત્વમસ્ત્યેવ, અતઃ પ્રદેશાર્થતયા एषां વિचारો નાનુપયુક્ત ઇતિ । તથા—અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ પ્રદેશાર્થ- તયાઽનાનુપૂર્વીદ્રવ્યેભ્યો વિશેષાધિકાનિ અવક્તવ્યકદ્રવ્યેષુ એકૈકસ્ય દ્વિપ્રદેશત્વાત્ । અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાપેક્ષયાઽવક્તવ્યકદ્રવ્યાણાં પ્રદેશાર્થત્વમાશ્રિત્ય વિશેષાધિક્યં- વોદ્યમિતિ । આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ તુ પ્રદેશાર્થતયા અવક્તવ્યકદ્રવ્યેભ્યોઽનન્તગુણાનિ ।

ઉત્તર—એસા નહીં હૈ—કયોંકિ ‘પ્રકૃષ્ટદેશઃ પ્રદેશઃ’ હસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર સર્વ સૂક્ષ્મદેશ કા નામ પ્રદેશ, અર્થાત્ પુદ્ગલાસ્તિકાય કા નિરં- શ ભાગ હૈ વહ પ્રદેશ હૈ । એસા પ્રદેશપન પરમાણુ દ્રવ્ય હૈ હી । હસ- લિયે પ્રદેશાર્થતા કી અપેક્ષા હનકા વિચાર અનુપયુક્ત નહીં હૈ તથા— (અવક્તવ્યગદ્વાઈં પપ્સદ્વ્યાપ વિસેસાદિયાઈં) અવક્તવ્યક દ્રવ્ય પ્રદે- શાર્થતા કી અપેક્ષા અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં સે વિશેષાધિક—કુહ અધિક— હૈં । અર્થાત્ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં મેં એક ૨ અવક્તવ્યકદ્રવ્ય દ્વિપ્રદેશવાલા હોતા હૈ ઓર અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં એક એક અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય એક પ્રદેશ વાલા હોતા હૈ હસી કારણ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં સે અવક્તવ્યક દ્રવ્ય પ્રદે- શાર્થતા કો લેકર કુહ અધિક કહે ગયે હૈં । (આણુપુન્વીદ્વાઈં પપ્સ- દ્વ્યાપ અણંતગુણાઈં) જો આનુપૂર્વી દ્રવ્ય હૈં સે અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા અનંતગુણે હૈં । કયોં કિ હનકે પ્રદેશ અવક્તવ્યકદ્રવ્યોં કે પ્રદેશોં

ઉત્તર—એ વાત બરાબર નથી, કારણ કે “પ્રકૃષ્ટદેશઃ પ્રદેશઃ” આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર સૌથી સૂક્ષ્મ દેશનું નામ પ્રદેશ છે એટલે કે પુદ્ગલાસ્તિકા- કાયનો જે નિરંશ ભાગ છે તે પ્રદેશરૂપ જ છે. એવું પ્રદેશત્વ તો પરમાણુ દ્રવ્યમાં જ હોય છે. તેથી પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ તેમનો વિચાર કરવામાં અનુપયુક્તતા જણાતી નથી.

તથા—(અવક્તવ્યગદ્વાઈં પપ્સદ્વ્યાપ વિસેસાદિયાઈં) અવક્તવ્યક દ્રવ્ય પ્રદેશાર્થત્વની અપેક્ષાથી વિશેષાધિક હોય છે. એટલે કે અવક્તવ્યક દ્રવ્યોમાના પ્રત્યેક અવક્તવ્યક દ્રવ્ય અળે પ્રદેશવાળાં હોય છે, અને અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાંનું પ્રત્યેક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય એક એક પ્રદેશવાળું હોય છે. તે કારણે પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં અવક્તવ્યક દ્રવ્યોને વિશેષાધિક (અમુક પ્રમાણમાં વધારે) કહ્યાં છે.

(આણુપુન્વીદ્વાઈં પપ્સદ્વ્યાપ અણંતગુણાઈં) પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અનંત ગણાં હોય છે, કારણ કે

દ્રવ્યાર્થતયાઽઽનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યેભ્યોઽવક્તવ્યકદ્રવ્યેભ્યશ્ચાઽસંખ્યાત-
ગુણાન્યુક્તાનિ, તદપેક્ષયાઽઽનુપૂર્વીદ્રવ્યસ્કન્ધાનામસંખ્યાતગુણત્વાત્ । પ્રદેશાર્થતાઽ-
પેક્ષયાં તુ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણ્યનન્તગુણાનિ સન્તિ, તત્પ્રદેશાનાં પૂર્વાપેક્ષયાઽનન્તગુણ-
ત્વાદિતિ ૨ । इत्थं प्रदेशार्थतयाऽल्पबहुत्वमुक्त्वा, इदानीमुभयार्थतामाश्रित्य तदुच्यते-
'द्वन्द्वपणसद्वयाए' इत्यादि । नैगमव्यवहारसम्मतानि अवक्तव्यकद्रव्याणि द्रव्यार्थ-
प्रदेशार्थतया सर्वस्तोकानि, सर्वस्तोकत्वे हेतुमाह—'द्वन्द्वयाए' इति । अवक्तव्यक-
द्रव्याणां—द्रव्यार्थतया—द्रव्यार्थत्वात् सर्वस्तोकत्वं बोध्यम् । तथा अनानुपूर्वीद्रव्याणि

સે અનંત ગુણે હૈં । यह पहिले कहा जा चुका है कि आनुपूर्वीद्रव्या-
र्थता को आश्रित करके अनानुपूर्वी द्रव्यों से अवक्तव्यकद्रव्यों से असं-
ख्यातगुणें हैं क्योंकि इनकी अपेक्षा आनुपूर्वी द्रव्य स्कंध असंख्यात
गुणें होते हैं । परन्तु प्रदेशों की अपेक्षा आनुपूर्वी द्रव्य अनन्त गुणें हैं ।
क्यों कि इनके प्रदेश पूर्व की अपेक्षा अनन्तगुणें कहे गये हैं । इस प्रकार
प्रदेशार्थता की अपेक्षा अल्प बहुत्व का कथन करके अब सूत्रकार उभ-
यार्थता की अपेक्षा लेकर अल्प बहुत्व का कथन करते हैं—

(જોગમવ્યવહારાણં અવક્તવ્યગદ્વાઈં દ્વન્દ્વપણસદ્વયાણ સર્વવત્થો-
વાઈં) નૈગમવ્યવહારનય સંમત અવક્તવ્યક દ્રવ્ય દ્રવ્યાર્થતા ઓર પ્રદે-
શાર્થતા રૂપ ઉભયાર્થતા કી અપેક્ષા લેકર સર્વસ્તોક હૈં । क्योंकि (द्वन्-
द्वयाए) अवक्तव्यक द्रव्यों में द्रव्यार्थता की अपेक्षा लेकरके पहिले सर्व-

તેમના પ્રદેશો અવક્તવ્યક દ્રવ્યોના પ્રદેશો કરતાં અનંત ગણાં હોય છે.
પહેલાં એ વાત તો પ્રકટ કરવામાં આવી ચુકી છે કે દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ
અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અસંખ્યાત
ગણાં છે, કારણ કે તેમના કરતાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યસ્કંધ અસંખ્યાત ગણાં હોય
છે પરન્તુ પ્રદેશોની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અનંત ગણાં છે, કારણ કે
તેમના પ્રદેશો અવક્તવ્યક દ્રવ્યોના પ્રદેશો કરતાં અનંત ગણાં કહ્યાં છે આ
રીતે પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોના અલ્પ-બહુત્વનું કથન
કરીને હવે સૂત્રકાર ઉભયાર્થતા (દ્રવ્યાર્થતા અને પ્રદેશાર્થતા)ની અપેક્ષાએ
તેમના અલ્પબહુત્વનું કથન કરે છે—(જોગમવ્યવહારાણં અવક્તવ્યગદ્વાઈં દ્વન્દ્વ-
પણસદ્વયાણ સર્વવત્થોવાઈં) નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત અવક્તવ્યક દ્રવ્ય
દ્રવ્યાર્થતા અને પ્રદેશાર્થતા રૂપ ઉભયાર્થતાની અપેક્ષાએ સર્વસ્તોક સૌથી ઓછું—
છે, કારણ કે (દ્વન્દ્વયાણ) દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોમાં સર્વસ્તોક-
તાનું પ્રતિપાદન પહેલાં કરવામાં આવ્યું છે, તથા (અગાણુપૂર્વી દ્વન્દ્વાઈં દ્વન્દ્વયાણ

ઉભયાર્થત્વમાશ્રિત્યાવક્તવ્યકદ્રવ્યાપેક્ષયા વિશેષાધિકાનિ બોધ્યાનિ । અત્ર હેતુમાહ—
 'દબ્બદ્વયાપ અપસદ્વયાપ' इति । દ્રવ્યાર્થતયાપ્રદેશાર્થતયા ચ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યા-
 ણામવક્તવ્યકદ્રવ્યાપેક્ષયા વિશેષાધિક્યં બોધ્યમ્ । 'અવત્તવગદ્વાઈ' इत्यादि,
 અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણાં ત્વિહ પ્રત્યેકં દ્વિપ્રદેશત્વાદ્વિગુણિતાનાં તેષામન્યેભ્યઃ=અનાનુ-
 પૂર્વીદ્રવ્યેભ્યઃ પ્રદેશાર્થતયા વિશેષાધિકત્વં બોધ્યમ્ । ઉભયાર્થત્વમાશ્રિત્યાનુપૂર્વી
 દ્રવ્યાણિ અસંખ્યેયગુણાન્યનન્તગુણાનિ ચ સન્તીતિ સૂચયિતુમાહ—'આણુપુઞ્વીદ્વાઈ'
 इत्यादि । આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ દ્રવ્યાર્થતયા અસંખ્યેયગુણાનિ બોધ્યાનિ, ચ=પુનઃ
 તાન્યેવ=આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણ્યેવ પ્રદેશાર્થતયા અનન્તગુણાનિ બોધ્યાનિ । પ્રત્યેકચિન્તા-
 સ્તોકતા કહી ગઈ છે । તથા “અણાણુપુઞ્વીદ્વાઈ દબ્બદ્વયાપ અપસદ્વ-
 યાપ વિસેસાહિયાઈ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય ઉભયાર્થત્વ કો આશ્રિત કરકે
 અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે કુછ અધિક હૈં । યહાં કુછ અધિકતા
 દ્રવ્યાર્થતા ઓર અપ્રદેશાર્થતા સે જાનની ચાહિયે । (અવત્તવગદ્વાઈ
 પસદ્વયાપ વિસેસાહિયાઈ) તથા અવક્તવ્યક દ્રવ્ય પ્રદેશાર્થતા કી અપે-
 ક્ષા લેકર અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં સે વિશેષાધિક હૈ । સો યહ વિશેષાધિકતા
 इनमें प्रत्येक अवक्तव्यकद्रव्य द्विप्रदेशी होने के कारण जाननी चाहिये ।
 क्यों कि ये प्रत्येक अनानुपूर्वी द्रव्यों के प्रदेशों की अपेक्षा द्विगुणित
 प्रदेशवाले हैं । तब कि अनानुपूर्वी द्रव्यों में प्रदेश एक एक है । इस
 प्रकार इनमें द्विगुणिता जानना चाहिये । (आणुपुञ्जीदद्वाइं दब्बद्वयाप
 असंखेज्जगुणाइं ताइं चेव पसद्वयाप अणंतगुणाइं) उभयार्थता
 को आश्रित करके द्रव्यार्थता की अपेक्षा से आनुपूर्वी द्रव्य असंख्यात

અપસદ્વયાપ વિસેસાહિયાઈ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય ઉભયાર્થત્વની અપેક્ષાએ અવ-
 ક્તવ્યક દ્રવ્ય કરતાં વિશેષાધિક હોય છે અહીં દ્રવ્યાર્થતા અને અપ્રદેશાર્થ-
 તાની અપેક્ષાએ આ અધિકતા સમજવી. (અવત્તવગદ્વાઈ પસદ્વયાપ
 વિસેસાહિયાઈ) તથા અવક્તવ્યક દ્રવ્યો પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ અનાનુપૂર્વી
 દ્રવ્યો કરતાં વિશેષાધિક છે. તેમની આ વિશેષાધિકતા પ્રત્યેક અવક્તવ્યક
 દ્રવ્ય દ્વિપ્રદેશી હોવાને કારણે સમજવી, કારણ કે પ્રત્યેક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય
 કરતાં પ્રત્યેક અવક્તવ્યક દ્રવ્ય બમણા પ્રદેશવાળું હોય છે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય
 એક એક પ્રદેશવાળું હોય છે અને અવક્તવ્યક દ્રવ્ય બમણે પ્રદેશવાળું હોય
 છે, તે કારણે અવક્તવ્યક દ્રવ્યને અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કરતાં બમણા પ્રદેશવાળું કહ્યું છે.

(આણુપુઞ્વીદ્વાઈ દબ્બદ્વયાપ અસંખેજ્જગુણાઈ તાઈં ચેવ પસદ્વયાપ
 અણંતગુણાઈ) ઉભયાર્થતાની અપેક્ષાએ હવે તેમના અલ્પમહુત્વનો વિચાર

યશ્વાદુભયાર્થતયા ચિન્તાયામયમેવ વિશેષઃ—અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ દ્રવ્યાર્થતામાશ્રિત્ય
અવ્યવહારદ્રવ્યાપેક્ષયા વિશેષાધિકાનિ ભવન્તિ, તત્ર પ્રદેશરહિતત્વાત્ પ્રદેશાર્થતાયા
અસંભવાત્ સર્વસ્તોકત્વં ન ગૃહીતમ્ । પ્રત્યેકચિન્તાયાં તુ પ્રદેશાર્થતાપક્ષે તદપિ
ગૃહીતમ્ । एतदर्थमेव उभयार्थता पक्षोपादानम् । इत्थं नवविधमनुगममुक्त्वा सम्प्रति
પ્રકરણમુપસંહરન્નાહ—‘સે તં’ ઇત્યાદિ । સ ણ્ણોડનુગમઃ । સૈષા નૈગમવ્યવહાર-
યોરનોપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીતિ ॥મૂ૦ ૧૦॥

ગુણે હૈં ઓર પ્રદેશાર્થતા કી અપેક્ષા કરકે આનુપૂર્વીદ્રવ્ય અનન્તગુણા હૈં ।
હસ પ્રકાર પ્રત્યેક પક્ષ સે વિચાર કરને કી અપેક્ષા જો યહ ઉભયાર્થ
પક્ષ કી અપેક્ષા લેકર વિચાર કરને મેં આયા હૈં ઉસમેં યહી વિશેષતા
હૈં —કિ જૈસે હસ પક્ષ મેં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય, દ્રવ્યાર્થતા કો આશ્રિત
કરકે અવ્યવહાર દ્રવ્યો કી અપેક્ષા વિશેષાધિક કહે ગયે હૈં । વૈસે વે
પ્રદેશ હોને કે—કારણ સર્વસ્તોક પ્રદેશાર્થતા અસંભવતા સે નહીં
લાયે ગયે હૈં । પરન્તુ જબ પ્રત્યેક પક્ષકો લેકર હનકા વિચાર હોતા હૈં
તથ યહ સર્વસ્તોકતા મી ઉનમેં પ્રકટ કી જાતી હૈં । હસી નિમિત્ત સે
યહાં યહ તૃતીય પક્ષરૂપ ઉભયાર્થતા ગૃહીત કી ગઈ હૈં । હસ પ્રકાર નવ-
વિધ અનુગમ કહ કરકે અવ સૂત્રકાર હસ પ્રકરણ કા ઉપસંહાર કર-
ને કે અભિપ્રાય સે (સે તં અણુગમે, સે તં નૈગમવ્યવહારાણં અણોવણિ-
હિયા દ્રવ્યાનુપુર્વી) હન પંદોં દ્વારા યહ પ્રકટ કર રહે હૈં કિ હસ પ્રકાર

કરવામાં આવે છે—દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અસંખ્યાત ગણું
અને પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અનંત ગણું છે. આ પ્રકારે
પ્રત્યેક પક્ષને અનુલક્ષીને વિચાર કરવાની અપેક્ષાએ જે અહીં ઉભયાર્થપક્ષની
અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવ્યો છે તેમાં એજ વિશેષતા છે કે—જેમ
દ્રવ્યાર્થિકતાની દૃષ્ટિએ વિચાર કરીને અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અવ્યવહાર દ્રવ્યો
કરતાં વિશેષાધિક પ્રકટ કરવામાં આવ્યા છે, એ પ્રમાણે પ્રદેશાર્થતાની અપે-
ક્ષાએ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોને વિશેષાધિક બતાવવામાં આવ્યા નથી, કારણ કે
તેઓ પ્રદેશરહિત હોવાને કારણે અવ્યવહાર દ્રવ્યો કરતાં અલ્પપ્રમાણવાળા છે.
પરન્તુ જે પ્રત્યેક પક્ષની અપેક્ષાએ તેમનો વિચાર કરવામાં આવે તો આ
સર્વસ્તોકતા (સૌ કરતાં અલ્પપ્રમાણતા) પણ તેમનામાં પ્રકટ કરી શકાય છે.
એજ નિમિત્તને લીધે અહીં તૃતીય પક્ષ રૂપ ઉભયાર્થતા ગૃહીત કરવામાં
આવી છે આ પ્રમાણે નવ પ્રકારના અનુગમનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર
આ પ્રકરણનો ઉપસંહાર કરતા કહે છે કે—(સે તં અણુગમે સે તં નૈગમવ્યવ-
હારાણં અણોવણિહિયા દ્રવ્યાનુપુર્વી) અનુગમનું આ પ્રકારનું ૨૦૩૫ છે. આ

इत्थं नैगमव्यवहारनयमतेन अनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी व्याख्याय संग्रह-
नयमतेन सम्प्रति तामेव व्याख्यातुमाह—

मूलम्—से किं तं संग्रहस्स अणोवणिहिया द्वाणुपुव्वी ?
संग्रहस्स अणोवणिहिया द्वाणुपुव्वी पंचविहा पणत्ता, तं जहा-
अट्ठपयपरूवणया१, भंगसमुक्कित्तणया२ भंगोवदंसणया३ समो-
यारे४ अणुगमे५॥सू० ९१॥

छाया—अथ का सा संग्रहस्य अनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी ? संग्रहस्य अनौ-
पनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी पञ्चविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा—अर्थपदप्ररूपणता१, भङ्गसमुक्ती-
र्तनता२, भङ्गोपदर्शनता३, समवतारः४, अनुगमः५ ॥सू० ९१॥

टीका—‘से किं तं’ इत्यादि—

व्याख्या निगद सिद्धा ॥सू० ९१॥

સે યહ અનુગમ કા સ્વરૂપ હૈ । હસ પ્રકાર યહાં તક નૈગમ વ્યવહારનય
સંમત અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી કા કથન કિયા ॥ સૂ० ૯૦ ॥

अथ सूत्रकार संग्रहनय के मतानुसार इस अनौपनिधि की द्रव्या-
नुपूर्वी का कथन करते हैं—‘से किं तं’ इत्यादि ।

शब्दार्थ— हे भदन्त ! (से किं तं संग्रहस्स अणोवणिहिया द्वाणु-
पुव्वी) ‘संग्रहनय संमत अनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी का क्या स्वरूप है ?

उत्तर—(संग्रहस्स अणोवणिहिया द्वाणुपुव्वी पंचविहा पणत्ता)
संग्रहनय संमत अनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी पांच प्रकार कही गई है । (तं
जहा) उसके वे प्रकार ये हैं— (अट्ठपयरूपवणया १ भंगसमुक्कित्तणया ५
भंगोवदंसणया ३ समोयारे ४, अणुगमे ५,) अर्थपद प्ररूपणता १, भंग

પ્રકારે અહીં સુધીમાં સૂત્રકારે નૈગમવ્યવહારનયસંમત અનૌપનિધિકી
દ્રવ્યાનુપૂર્વીના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કર્યું છે. ॥સૂ० ૯૦॥

હવે સૂત્રકાર સંગ્રહનયના મતાનુસાર આ અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીના
સ્વરૂપનું કથન કરે છે—“ સે કિં તં ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન—(સે કિં તં સંગ્રહસ્સ અણોવણિહિયા દ્વાણુપુવ્વી ?) હે
ભગવન્ ! સંગ્રહનયસંમત અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(સંગ્રહસ્સ અણોવણિહિયા દ્વાણુપુવ્વી પંચવિહા પણત્તા) સંગ્રહ-
નયસંમત અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી પાંચ પ્રકારની કહી છે. (તં જહા)
તે પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે—(અટ્ઠપયપરૂવણયા ૧, ભંગસમુક્કિત્તણયા ૨, ભંગોવદંસ
ણયા ૩, સમોચારે ૪ અણુગમે ૫) (૧) અર્થપદપ્રરૂપણતા, (૨) ભંગસમુક્તીર્તનતા

અથ સંગ્રહનયેનાર્થપદપ્રરૂપણતામાહ—

મૂલ્—સે કિં તં સંગહસ્સ અટ્ટપયપરૂવણયા ? સંગહસ્સ અટ્ટ-
પયપરૂવણયા તિપ્પણસિણ આણુપુઘ્વી ચઉપ્પણસિણ આણુપુઘ્વી
જાવ દસપણસિણ આણુપુઘ્વી સંઘિજ્જપણસિણ આણુપુઘ્વી અસં-
ઘિજ્જપણસિણ આણુપુઘ્વી અણંતપણસિણ આણુપુઘ્વી પરમાણુ-
પોગ્ગલે અણાણુપુઘ્વી, દુપ્પણસિણ અવત્તવ્વણ. । સે તં સંગહસ્સ
અટ્ટપયપરૂવણયા ॥સૂ. ૧૨॥

છાયા—અથ કા સા સંગ્રહસ્ય અર્થપદપ્રરૂપણતા ? સંગ્રહસ્ય અર્થપદપ્રરૂપણતા—ત્રિપ્ર-
દેશિક આનુપૂર્વી ચતુષ્પ્રદેશિક આનુપૂર્વી યાદ્દ દશપ્રદેશિક આનુપૂર્વી સંખ્યેયપ્રદેશિક

સમુત્કીર્તનતાર ૨ ભંગોપદર્શનતાર ૩ સમવતાર ૪ ઓર અનુગમ ૫ । इस सूत्र
की व्याख्या ७४ वे सूत्रकीव्याख्या के अनुसार जाननी चाहिये ॥सू. ११॥

સંગ્રહનય કે મતાનુસાર અર્થપદપ્રરૂપણતા કા કયા સ્વરૂપ હૈ ? इस
बात को सूत्रकार प्रकट करते हैं । “से किं तं संगहस्स” इत्यादि ..

शब्दार्थ—हे भदन्त ! (से किं तं संगहस्स अट्टपयपरूवणया) पूर्व प्रकान्त
उस संग्रहनय मान्य अर्थपदप्ररूपणता का क्या स्वरूप है ?

उत्तर—(संगहस्स अट्टपयपरूवणया) संग्रहनय मान्य अर्थपद
प्ररूपणता का स्वरूप इस प्रकार से है—(तिप्पणसिण आणुपुघ्वी चउप्प-
णसिण आणुपुघ्वी, जाव दसपणसिण आणुपुघ्वी संघिज्जपणसिण

(૩) ભંગોપદર્શનતા, (૪) સમવતાર અને (૫) અનુગમ આ સૂત્રની
વ્યાખ્યા ૭૪ માં સૂત્રની વ્યાખ્યા પ્રમાણે સમજવી. ॥સૂ. ૧૧॥

સંગ્રહનયના મતાનુસાર અર્થપદપ્રરૂપણતાનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે તે
હવે સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે—“સે કિં તં સંગહસ્સ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન—(સે કિં તં સંગહસ્સ અટ્ટપયપરૂવણયા ?) હે ભગવન્ !
પૂર્વપ્રસ્તુત સંગ્રહનયસંમત અર્થપદપ્રરૂપણતાનું સ્વરૂપ કેવું કહ્યું છે ?

ઉત્તર—(સંગહસ્સ અટ્ટપયપરૂવણયા) સંગ્રહનયસંમત અર્થપદપ્રરૂપણતાનું
સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—

(તિપ્પણસિણ આણુપુઘ્વી, ચઉપ્પણસિણ આણુપુઘ્વી, જાવ દસ પણસિણ
આણુપુઘ્વી, સંઘિજ્જપણસિણ આણુપુઘ્વી, અસંઘિજ્જપણસિણ આણુપુઘ્વી, અણંતપ-

ક આનુપૂર્વી અસંખ્યેયપ્રદેશિક આનુપૂર્વી, અનંતપ્રદેશિક આનુપૂર્વી પરમાણુપુદ્ગલઃ
અનાનુપૂર્વી, દ્વિપ્રદેશિકઃ અવક્તવ્યકમ્ । સૈષા સંગ્રહસ્ય અર્થપદપ્રરૂપણતા ॥ સૂ. ૦૯૨ ॥

આણુપુઘ્વી અસંખિજ્જપણસિણ આણુપુઘ્વી, અણંતપણસિણ આણુપુઘ્વી,
પરમાણુપુગ્ગલે અણાણુપુઘ્વી; દુપ્પણસિણ અવક્તવ્વણ) ત્રિપ્રદેશવાલા સ્કંધ
આનુપૂર્વી હૈ, ચાર પ્રદેશવાલા સ્કંધ આનુપૂર્વી હૈ, યાવત્ દશ પ્રદેશવાલા
સ્કંધ આનુપૂર્વી હૈ' સંખ્યાત પ્રદેશવાલા સ્કંધ આનુપૂર્વી હૈ, અસંખ્યાત
પ્રદેશ વાલા સ્કંધ આનુપૂર્વી હૈ, અનન્ત પ્રદેશ વાલા સ્કંધ આનુપૂર્વી હૈ,
પરમાણુપુદ્ગલ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય હૈ, દ્વિપ્રદેશ વાલા સ્કંધ અવક્તવ્યક
વ્ય હૈ યહી સંગ્રહનય માન્ય અર્થપદ પ્રરૂપણતા કા સ્વરૂપ હૈ । તાત્પર્ય
હસકા યહ હૈ કિ પહિલે નેગમ ઓર વ્યવહાર નયની અપેક્ષા કરકે
ઁક ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ ઁક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય હૈ, અનેક ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ
અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય હૈ હસ પ્રકાર આનુપૂર્વી મેં ઁકત્વ ઓર અને-
કત્વ કા નિર્દેશ કિયા ગયા હૈ । પરન્તુ સમાન્યત્વવાદી હોને કે કારણ
હસ સંગ્રહનય કે મતાનુસાર સમસ્ત ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ ઁક હી આનુ-
પૂર્વી હૈ । હસ નયની માન્યતા હસ વિષય મેં ઁસી હૈ કિ જિતને ભી
ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ હૈ વે યદિ અપને ત્રિપ્રદેશિકત્વ રૂપ સામાન્ય સે ભિન્ન
હૈ તો દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધની તરહ વે ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ હી નહીં

વેંચિણ આણુપુઘ્વી, પરમાણુપુગ્ગલે અણાણુપુઘ્વી, દુપ્પણસિણ અવક્તવ્વણ) ત્રણ
પ્રદેશવાળો સ્કંધ આનુપૂર્વી છે, ચાર પ્રદેશવાળો સ્કંધ આનુપૂર્વી છે, એજ
પ્રમાણે હસ પર્યાન્તના પ્રદેશવાળો સ્કંધ આનુપૂર્વી છે સંખ્યાત પ્રદેશવાળો
સ્કંધ આનુપૂર્વી છે, અસંખ્યાત પ્રદેશવાળો સ્કંધ આનુપૂર્વી છે અને અનંત
પ્રદેશવાળો સ્કંધ આનુપૂર્વી છે. પરમાણુ પુદ્ગલ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય છે અને
જે પ્રદેશવાળો સ્કંધ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય છે. સંગ્રહનય દ્વારા માન્ય અર્થપદ
પ્રરૂપણતાનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—
નેગમ અને વ્યવહાર નયની માન્યતાને આધારે પહેલાં એવું કથન કરવામાં
આવ્યું છે કે એક ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ છે, અને અનેક
ત્રિપ્રદેશી સ્કંધો અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યો રૂપ છે. આ રીતે આનુપૂર્વીમાં
એકત્વ અને અનેકત્વનો ત્યાં નિર્દેશ કરવામાં આવ્યો છે. પરન્તુ સામાન્ય
તત્ત્વવાદી હોવાને કારણે આ સંગ્રહનયની માન્યતા અનુસાર સમસ્ત ત્રિપ્ર-
દેશી સ્કંધ એક જ આનુપૂર્વી રૂપ છે. આ વિષયને અનુલક્ષીને આ નયની

टीका—‘से किं तं’ इत्यादि—

अथ का सा संग्रहनयसम्मतता अर्थप्ररूपणता ? इति प्रश्नः । उत्तरमाह—संग्रह-

नयसम्मतता अर्थपदप्ररूपणता तु त्रिप्रदेशिकः स्कन्ध आनुपूर्वी चतुष्प्रदेशिकः स्कन्ध आनुपूर्वी यावद् दशप्रदेशिकः स्कन्ध आनुपूर्वी, संख्येयप्रदेशिकः स्कन्ध आनुपूर्वी, असंख्येयप्रदेशिकः स्कन्ध आनुपूर्वी, अनन्तप्रदेशिकः स्कन्ध आनुपूर्वी, परमाणुपुद्गलः आनुपूर्वी, द्विप्रदेशिकः स्कन्धः अवक्तव्यकमिति । अत्रेदं बोध्यम्—पूर्वत्र नैगमव्यवहारनयात्रपेक्ष्य ‘त्रिप्रदेशिक आनुपूर्वी—त्रिप्रदेशिका आनुपूर्व्यः’ इत्येवमेकत्वेन बहुत्वेन च निर्देशः कृतः । संग्रहनये तु संग्रहस्य सामान्यवादित्वात् सर्वेऽपि त्रिप्रदेशिकाः स्कन्धा एकैकानुपूर्वी । अत्र को हेतुः ?—त्रिप्रदेशिकाः स्कन्धाः त्रिप्रदेशिकत्वसामान्याद् भिन्नाः, अभिन्ना वा ? । यदि भिन्नास्तर्हि त्रिप्रदेशिकाः स्कन्धास्त्रिप्रदेशिका एव न स्युः, द्विप्रदेशिकादिवत् । अथऽभिन्नास्तर्हि यावन्तस्त्रिप्रदेशिकाः सन्ति, ते सर्वेऽप्येक स्वरूपा एव च सर्वेऽपि त्रिप्रदेशिकाः स्कन्धा एकैकानुपूर्वी । तथा चतुष्प्रदेशिकतया सर्वेऽपि चतुष्प्रदेशिकाः स्कन्धा एकैकानुपूर्वी । एवं पञ्चप्रदेशिकादयः स्कन्धा अपि एका-एका आनुपूर्वी बोध्या । इदं च अविशुद्धसंग्रहनयमतेन बोध्यम् । विशुद्धसंग्रहनयमतेन तु सर्वेषां त्रिप्रदे-

कहला सकते हैं । यदि त्रिप्रदेशिकत्व रूप सामान्य से वे अभिन्न हैं, तो वे सब त्रिप्रदेशिक स्कन्ध एक स्वरूप ही हैं । इस प्रकार सब भी त्रिप्रदेशिक स्कन्ध एक ही आनुपूर्वी हैं अनेक आनुपूर्वी नहीं । इसी प्रकार चतुष्प्रदेशिकत्व रूप सामान्य की अपेक्षा समस्त चतुष्प्रदेशिक स्कन्ध एक ही आनुपूर्वी हैं । इसी प्रकार से पञ्च प्रदेशिक आदि स्कन्ध भी एक एक आनुपूर्वी हैं ऐसा जानना चाहिये । यह कथन अविशुद्ध संग्रहनय के मत से हैं । परन्तु जो विशुद्ध संग्रहनय हैं उसके मतानुसार तो

मान्यता ओवी छे के जेटला त्रिप्रदेशी स्कंधो छे तेओ लो पोताना त्रिप्रदेशिकत्व रूप सामान्यथी भिन्न डोय तो तेमने त्रिप्रदेशिक स्कंधो न ठही शक्य नही लो तेओ त्रिप्रदेशिकत्व रूप सामान्यथी अभिन्न डोय, तो ते भधा त्रिप्रदेशिक स्कंधो ओक रूप न छे आ रीते भधा त्रिप्रदेशिक स्कंधो ओक न आनुपूर्वी रूप छे—अनेक आनुपूर्वी रूप नथी ओन प्रमाणे चतुष्प्रदेशिकत्व रूप सामान्यनी अपेक्षाओ समस्त चतुष्प्रदेशिक स्कंध ओक न आनुपूर्वी रूप छे, ओन प्रमाणे पांच आदि प्रदेशोवाणा स्कंधो पण ओक ओक आनुपूर्वी रूप छे, ओम समजवुं आ कथन तो अविशुद्ध संग्रहनयनी मान्यता प्रकट करे छे. परन्तु विशुद्ध संग्रहनयनी मान्यता अनुसार तो

શિકાઘનન્તપ્રદેશિકપર્યન્તાનાં સ્કન્ધાનામ્ આનુપૂર્વીત્વસામાન્યાઽમેદાત્ સર્વા-
 ઽપ્યાનુપૂર્વીં એકૈવ । એવમનાનુપૂર્વીત્વસામાન્યાવ્યતિરેકાત્ સર્વેઽપિ પરમાણુપુદ્ગલા
 એકૈવાનાનુપૂર્વી, અવક્તવ્યકત્વરૂપસામાન્યાવ્યતિરેકાત્ સર્વે દ્વિપ્રદેશિકાઃ સ્કન્ધા
 અપિ એકમેવાવક્તવ્યકમ્, અતોઽન્ન-‘તિપ્પણસિણ આણુપુઞ્વી’ इत्यादि एकत्वेनैव
 निर्दिष्टम्, न तु बहुत्वेनेति । प्रकृतमुपसंहरन्नाह-‘से तं’ इत्यादि । सैषा संग्रह-
 नयसम्मतार्थपदप्ररूपणतेति १ ॥सू० ९२॥

સમસ્ત ત્રિપ્રદેશિકાદિ સ્કંધ સે લેકર અનંત પ્રદેશિક સ્કંધ પર્યન્ત કે
 સ્કંધોં કી જીતની મી આનુપૂર્વિયાં હૈં વે સબ આનુપૂર્વીત્વ રૂપ સામાન્ય
 સે અભિન્ન હોને કે કારણ એકહી અનાનુપૂર્વીરૂપ હૈ । હસી પ્રકાર અનાનુ-
 પૂર્વીત્વ રૂપ સામાન્ય સે અભિન્ન હોને કે કારણ સમસ્ત પરમાણુ પુદ્ગલ
 રૂપ અનાનુપૂર્વીયાં એકહી અનાનુપૂર્વી રૂપ હૈં । હસી પ્રકાર સે અવક્તવ્યક
 ત્વરૂપ સામાન્ય સે અવ્યતિરિક્ત હોને કે કારણ સમસ્ત દ્વિપ્રદેશિક
 સ્કંધ મી એકહી અવક્તવ્યકરૂપ હૈં । હસલિયે યહાં સૂત્ર મેં “તિપ્પણસિણ
 આણુપુઞ્વી” इत्यादि रूप से एकत्व का निर्देश सूत्रकारने किया है ।
 बहुत्व का नहीं । (से तं संग्रहस्स अट्ठपयपरूवणया) इस प्रकार यह
 संग्रहनय मान्य अर्थपद प्ररूपणता का स्वरूप है ।

ભાવાર્થ—સંગ્રહનય દો પ્રકાર કા હૈ— ૧ અવિશુદ્ધ સંગ્રહનય ઓર
 દૂસરા વિશુદ્ધ સંગ્રહનય । અવિશુદ્ધ સંગ્રહનય કી માન્યતાનુસાર જિતને
 મી ત્રિપ્રદેશિક વાલે સ્કંધ હૈં વે એક આનુપૂર્વી હૈં તથા જિતને મી

સમસ્ત ત્રિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધથી લઈને અનંત પ્રદેશિક પર્યન્તના સ્કંધોની
 જેટલી આનુપૂર્વીઓ છે, તે બધી આનુપૂર્વીઓ પણ આનુપૂર્વીત્વ રૂપ સામા-
 ન્યની અપેક્ષાએ અભિન્ન હોવાથી એક જ આનુપૂર્વી રૂપ છે. એજ પ્રમાણે
 અનાનુપૂર્વીત્વ રૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ અભિન્ન હોવાને કારણે સમસ્ત
 પરમાણુ પુદ્ગલરૂપ અનાનુપૂર્વીઓ પણ એક જ અનાનુપૂર્વી રૂપ છે. એજ
 પ્રમાણે અવક્તવ્યક રૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ અભિન્ન હોવાને કારણે સમસ્ત
 દ્વિપ્રદેશી સ્કંધો પણ એક જ અવક્તવ્યક રૂપ છે. તેથી જ સૂત્રકારે આ
 સૂત્રમાં “તિપ્પણસિણ આણુપુઞ્વી” ત્રિપ્રદેશિક આનુપૂર્વી ઇત્યાદિ રૂપે એકત્વનો
 નિર્દેશ કર્યો છે, પણ બહુત્વનો નિર્દેશ કર્યો નથી. (સે તં સંગ્રહસ્સ અટ્ઠપય-
 પરૂવણયા) આ પ્રકારનું સંગ્રહનયસંમત અર્થપદપ્રરૂપણતાનું સ્વરૂપ છે.

ભાવાર્થ—સંગ્રહનય બે પ્રકારનો છે—(૧) અવિશુદ્ધ સંગ્રહનય અને (૨)
 વિશુદ્ધ સંગ્રહનય અવિશુદ્ધ સંગ્રહનયની માન્યતા અનુસાર સમસ્ત ત્રિપ્રદેશી
 સ્કંધો એક આનુપૂર્વી રૂપ છે, એજ પ્રમાણે જેટલા ચાર પ્રદેશીથી લઈને

સમ્પતિ મંજસમુત્કીર્તનતાં નિરૂપયતિ—

મૂળમ્—અથાએ ણં સંગહસ્સ અટ્ટપયપરૂવણયાએ કિં પઓયણં?
 અથાએ ણં સંગહસ્સ અટ્ટપયપરૂવણયાએ સંગહસ્સ મંગસમુક્કિત્ત-
 ણયા કજ્જહ. સે કિં તં સંગહસ્સ મંગસમુક્કિત્તણયા? સંગહસ્સ
 મંગસમુક્કિત્તણયા—અતિથ આણુપુઠ્ઠી ૧ અતિથ અણાણુપુઠ્ઠી ૨
 અતિથ અવત્તઠ્ઠવણ ૩, અહવા અતિથ આણુપુઠ્ઠી ય અણાણુપુઠ્ઠી
 ય ૪, અહવા અતિથ આણુપુઠ્ઠી ય અવત્તઠ્ઠવણ ય ૫, અહવા અતિથ
 અણાણુપુઠ્ઠી ય અવત્તઠ્ઠવણ ય ૬, અહવા અતિથ આણુપુઠ્ઠી ય

ચતુષ્પ્રદેશિક યાચત્ અનન્તાણુક સ્કંધ હિં વે સઘ સ્વતંત્ર ૨ મિન્ન ૨
 ચતુષ્પ્રદેશી આદિ આનુપૂર્વિયાં હિં. પરન્તુ વિશુદ્ધ સંગ્રહનયની માન્ય-
 તાનુસાર યે સઘ જુદી ૨ અનેક આનુપૂર્વિયાં મી એક આનુપૂર્વિત્વ રૂપ
 સામાન્યની અપેક્ષા સે એક હી હિં. હસી વાત કો પ્રદર્શિત કરને કેલિયે
 સૂત્રકાર ને હસ સૂત્ર મેં ત્રિપ્રદેશિક આનુપૂર્વી આદિ પદોં મેં એકવચન
 કા પ્રયોગ કિયા હૈ. ઝ્યણુક સ્કંધ આદિરૂપ અર્થ સે યુક્ત અથવા ઝ્યણુક
 સ્કંધ આદિ રૂપ અર્થ કો વિષય કરને વાલે પદની પ્રરૂપણા કરના યહી
 અર્થપદપ્રરૂપણતા હૈ. નૈગમ ઓર વ્યવહારનય માન્ય અનેકત્વ કા યહ
 નય આનુપૂર્વી મેં નિષેધ કરકે એકત્વ સ્થાપન કરતા હૈ. ॥સૂ. ૧૨॥

અનંત પ્રદેશી પર્યન્તના સ્કંધો છે તે પ્રત્યેક પણ એક એક સ્વતંત્ર ચતુ-
 ષ્પ્રદેશી, પંચપ્રદેશી આદિ આનુપૂર્વી રૂપ છે. વિશુદ્ધ સંગ્રહનયની માન્યતા
 અનુસાર તો ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ રૂપ આનુપૂર્વીથી લઈને અનંત પ્રદેશિક સ્કંધ
 રૂપ આનુપૂર્વી પર્યન્તની સમસ્ત આનુપૂર્વીઓ પણ આનુપૂર્વિત્વ રૂપ
 સામાન્યની અપેક્ષાએ એક જ આનુપૂર્વી રૂપ છે. આ વાતને પ્રદર્શિત
 કરવાને માટે સૂત્રકારે ત્રિપ્રદેશિક આનુપૂર્વી આદિ પદોમાં એકવચનનો
 પ્રયોગ કર્યો છે. ત્રિઅણુક સ્કંધ આદિ રૂપ અર્થથીયુક્ત ત્રિઅણુક સ્કંધ આદિ
 રૂપ અર્થનું પ્રતિપાદન કરનારા પદની પ્રરૂપણા કરવી તેનું જ નામ અર્થપદ
 પ્રરૂપણતા છે. નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત અનેકત્વનો આ નય (સંગ્રહ
 નય) આનુપૂર્વીઓમાં નિષેધ કરી એકત્વનું પ્રતિપાદન કરે છે. ॥સૂ. ૧૨॥

અણાણુપુઁવી ય અવત્તવ્વણ ય ૭। એવં સત્ત મંગા। સે તં સંગહસ્સ મંગસમુક્કિત્તણયા ॥સૂ. ૧૩॥

છાયા—એતયા સ્વલુ સંગ્રહસ્ય અર્થપદપ્રરૂપણતયા કિં પ્રયોજનમ્? એતયા સ્વલુ સંગ્રહસ્ય અર્થપદપ્રરૂપણતયા સંગ્રહસ્ય મજ્જસમુત્ત્કીર્તનતા ક્રિયતે। અથ કા સા સંગ્રહસ્ય મજ્જસમુત્ત્કીર્તનતા? સંગ્રહસ્ય મજ્જસમુત્ત્કીર્તનતા-અસ્તિ આનુપૂર્વી^૧, અસ્તિ અનાનુપૂર્વી^૨ અસ્તિ અવત્તવ્યકમ્^૩, અથવા-અસ્તિ આનુપૂર્વી^૧ ચ અનાનુ-

અથ સૂત્રકાર સસમમંગસમુત્ત્કીર્તનતા કા નિરૂપણ કરતે હૈ—

“એયાએ ણં સંગહસ્સ” ઇત્યાદિ।

શબ્દાર્થ—(એયાએ સંગહસ્સ અટ્ઠપયપરૂવણયાએ કિં પઓયણં?) હે મદન્ત! સંગ્રહનય માન્ય હસ અર્થપદપ્રરૂપણતા સે કૌનસાં પ્રયોજન સિદ્ધ હોતા હૈ?

ઉત્તર—(એયાએ ણં સંગહસ્સ અટ્ઠપયપરૂવણયાએ સંગહસ્સ મંગસમુક્કિત્તણયા કજ્જહ) સંગ્રહનય માન્ય હસ અર્થપદ પ્રરૂપણતા સે સંગ્રહનય માન્ય મંગસમુત્ત્કીર્તનતા કી જાતી હૈ। “સે કિં તં સંગહસ્સ મંગસમુક્કિત્તણયા?” સંગ્રહનય માન્ય વહ મંગસમુત્ત્કીર્તનતા કયા હૈ?

ઉત્તર—(સંગહસ્સ મંગસમુક્કિત્તણયા) સંગ્રહનય માન્ય વહ મંગસમુત્ત્કીર્તનતા હસ પ્રકાર સે હૈ—(અત્થિ આણુપુઁવી’ અત્થિ અણાણુપુઁવી) ? એક આનુપૂર્વી હૈ, દૂસરા અનાનુપૂર્વી હૈ (અત્થિ અવત્તવ્વણ) તીસરા અવત્તવ્યક હૈ (અથવા અત્થિ આણુપુઁવીય અણાણુપુઁવીય) ચૌથા

હવે સૂત્રકાર સાતમા ભંગ, ભંગસમુત્ત્કીર્તનતાનું નિરૂપણ કરે છે—

“એયાએ સંગહસ્સ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(એયાએ સંગહસ્સ અટ્ઠપયપરૂવણયાએ કિં પઓયણં?) હે ભગવન્! સંગ્રહનયમાન્ય આ અર્થપદપ્રરૂપણતા વડે કયું પ્રયોજન સિદ્ધ થાય છે?

ઉત્તર—(એયાએ સંગહસ્સ અટ્ઠપયપરૂવણયાએ સંગહસ્સ મંગસમુક્કિત્તણયા કજ્જહ) સંગ્રહનય સંમત આ અર્થપદપ્રરૂપણતા વડે સંગ્રહનયમાન્ય ભંગસમુત્ત્કીર્તનતાનું સ્વરૂપ જાણી શકાય છે.

“સે કિં તં સંગહસ્સ મંગસમુક્કિત્તણયા” સંગ્રહનય માન્ય ભંગસમુત્ત્કીર્તનતાનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર—(સંગહસ્સ મંગસમુક્કિત્તણયા) સંગ્રહનયસંમત તે ભંગસમુત્ત્કીર્તનતા આ પ્રકારની કહી છે—

(અત્થિ આણુપુઁવી, અત્થિ અણાણુપુઁવી) (૧) એક આનુપૂર્વી છે. (૨) એક અનાનુપૂર્વી છે, (અત્થિ અવત્તવ્વણ) (૩) એક અવત્તવ્યક છે. (અથવા-અત્થિ આણુપુઁવી ય, અણાણુપુઁવી ય) (૪) આનુપૂર્વી છે, અનાનુપૂર્વી છે,

પૂર્વી ચ ૪, અથવા-અસ્તિ આનુપૂર્વી ચ અવક્તવ્યકં ચ ૫, અથવા-અસ્તિ અનાનુ-
પૂર્વી ચ અવક્તવ્યકં ચ ૬, અથવા-અસ્તિ આનુપૂર્વી ચ અનાનુપૂર્વી ચ અવક્તવ્યકં
ચ ૭। एवं सप्त भङ्गाः। सैषा संग्रहस्य भङ्गसमुत्कीर्तनता ॥सू० १३॥

આનુપૂર્વી છે. અનાનુપૂર્વી છે (અહવા-અત્થિ આણુપુન્વીય અવક્તવ્યકં)
અથવા ૫ આનુપૂર્વી છે અવક્તવ્યક છે (અહવા-અત્થિ અણાણુપુન્વીય
અવક્તવ્યકં) અથવા-૬ અનાનુપૂર્વી છે અવક્તવ્યક છે, (અહવા-
અત્થિ આણુપુન્વીય અણાણુપુન્વી અવક્તવ્યકં) અથવા ૭ આનુપૂર્વી છે
અનાનુપૂર્વી છે અવક્તવ્યક છે । (एवं सप्त भङ्गा) इस प्रकार ये सात
भङ्ग हैं । (से तं संग्रहस्य भङ्गसमुत्कीर्तनता) इस प्रकार संग्रहनय
मान्य भङ्गसमुत्कीर्तनता है ।

ભાવાર્થ-સંગ્રહનય માન્ય અર્થપદ પ્રરૂપણતા સે કયા પ્રયોજન સધતાં
હૈ? यह बात सूत्रकार ने इस सूत्रद्वारा स्पष्ट की है। इसमें उन्होंने ने भङ्ग
समुत्कीर्तनता का प्रयोजन कहा है, इस भङ्गसमुत्कीर्तनता में मूल में
३ पद हैं १ आनुपूर्वी, २ अनानुपूर्वी और तीसरा अवक्तव्यक।
आनुपूर्वी का वाच्यार्थ क्या है? यह सब पहिले स्पष्ट कर दिया गया है।

(અહવા-અત્થિ આણુપુન્વીય અવક્તવ્યકં) અથવા (૫) આનુપૂર્વી છે. અવ-
ક્તવ્યક છે. (અહવા-અત્થિ અણાણુપુન્વીય અવક્તવ્યકં) અથવા (૬) અના-
નુપૂર્વી છે, અવક્તવ્યક છે. (અહવા-અત્થિ આણુપુન્વીય, અણાણુપુન્વીય,
અવક્તવ્યકં) અથવા (૭) આનુપૂર્વી છે, અનાનુપૂર્વી છે અને અવક્તવ્યક
છે. (एवं सप्त भङ्गा) આ પ્રકારે અહીં સાત ભાગા (વિકલ્પો) બને છે. (से तं
संग्रहस्य भङ्गसमुत्कीर्तनता) આ પ્રકારનું સંગ્રહનયસંમત ભંગસમુત્કી-
ર્તનતાનું સ્વરૂપ છે.

ભાવાર્થ-સંગ્રહનયસંમત અર્થપદપ્રરૂપણતાનું પ્રયોજન. આ સૂત્રદ્વારા
સૂત્રકારે પ્રકટ કર્યું છે. તેમણે આ સૂત્રમાં એવું પ્રતિપાદન કર્યું છે કે
અર્થપદ પ્રરૂપણતા વડે ભંગસમુત્કીર્તનતા રૂપ પ્રયોજન સિદ્ધ થાય છે.
આ ભંગસમુત્કીર્તનામાં મૂળ ત્રણ પદ છે. તે ત્રણ પદ આ પ્રમાણે છે-
(૧) આનુપૂર્વી, (૨) અનાનુપૂર્વી અને (૩) અવક્તવ્યક આનુપૂર્વી આદિનો
વાચ્યાર્થ પહેલાં સ્પષ્ટ કરવામાં આવ્યો છે. આ ત્રણે પદોને સ્વતંત્ર રૂપે

ટીકા—‘એયાણં’ इत्यादि—

અત્ર—એકપદમાશ્રિત્ય ત્રયો મજ્ઞાઃ, પદદ્વયસંયોગમાશ્રિત્ય ત્રયો મજ્ઞાઃ, પદત્રય-સંયોગમાશ્રિત્ય એકો મજ્ઞાઃ । इत्थं सप्त मज्ज्ञा बोद्धव्याः । मज्ज्ञस्यापना मूलोक्तक्रमेणैव बोद्धव्या । अस्य सूत्रस्य व्याख्या कृतमाया ॥सू० ९३॥

મજ્ઞોપદર્શનતાં પ્રદર્શયતિ—

મૂલમ્—એયાણં સંગહસ્સ મંગસમુક્કિત્તણયાણં કિં પઓ-યણં? એયાણં સંગહસ્સ મંગસમુક્કિત્તણયાણં સંગહસ્સ મંગો-વદંસણયા કીરડ્ઠ । સે કિં તં સંગહસ્સ મંગોવદંસણયા? સંગહસ્સ મંગોવદંસણયા-તિપ્પણસિયા આણુપુઠ્ઠી? પરમાણુપોગ્ગલા અણા-ણુપુઠ્ઠી? દુપ્પણસિયા અવત્તઠ્ઠવણ ૩ । અહવા તિપ્પણસિયા ય પર-માણુપોગ્ગલા ય આણુપુઠ્ઠી ય અણાણુપુઠ્ઠી ય ૪ । અહવા તિપ્પ-ણસિયા ય દુપ્પણસિયા ય આણુપુઠ્ઠી ય અવત્તઠ્ઠવણ ય ૫ । અહવા પરમાણુપોગ્ગલા ય દુપ્પણસિયા ય અણાણુપુઠ્ઠી ય અવત્તઠ્ઠવણ ય ૬ । અહવા—તિપ્પણસિયા ય પરમાણુપોગ્ગલા ય દુપ્પણસિયા ય આણુ-પુઠ્ઠી ય અણાણુપુઠ્ઠી ય અવત્તઠ્ઠવણ ય ૭ । સે તં સંગહસ્સ મંગોવદંસણયા ॥સૂ० ૯૪॥

इनमें १ एक आनुपूर्वी २ अनानुपूर्वी और तीसरा अवक्तव्यक इन तीन पदों को स्वतंत्ररूप से आश्रित हो करके ३ भंग हो जाते हैं । तथा आनुपूर्वी अनानुपूर्वी, आनुपूर्वी अवक्तव्यक और अनानुपूर्वी अवक्तव्यक ये तीन भंग दो दो पदों के संयोग को लेकर बने हैं । और आनुपूर्वी, अनानुपूर्वी अवक्तव्यक यह सातवां भागा तीन पदों के संयोग से बना है । इस प्रकार तीन पदों के स्वतंत्रता और संयोग से ये ७ भंग बने हुए हैं । ॥ सू० ९३ ॥

લધને ત્રણ ભાંગા બને છે. દ્વિસંયોગી ત્રણ ભાંગા નીચેના બળે પડેલા સંયોગથી બને છે—આનુપૂર્વી અને અનાનુપૂર્વી, આનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક, ત્રણ પડેલા સંયોગી સાતમે ભાંગે બને છે. આ રીતે ત્રણ પડેલા અસં-યોગી ત્રણ ભાંગા, દ્વિસંયોગી ત્રણ ભાંગા અને ત્રિસંયોગી એક ભાંગે મળીને કુલ સાત ભાંગા બને છે. ॥સૂ० ૯૩॥

છાયા—एतया खलु संग्रहस्य भङ्गसमुत्कीर्तनतया किं प्रयोजनम्? एतया खलु संग्रहस्य भङ्गसमुत्कीर्तनतया संग्रहस्य भङ्गोपदर्शनता क्रियते। अथ का सा संग्रहस्य भङ्गोपदर्शनता? संग्रहस्य भङ्गोपदर्शनता त्रिप्रदेशिका आनुपूर्वी^१ परमाणुपुद्गला अनानुपूर्वी^२, द्विप्रदेशिका अवक्तव्यम्^३। अथवा—त्रिप्रदेशिकाश्च पर-

अथ सूत्रकार भङ्गोपदर्शनता का कथन करते हैं—

“एयाएणं संगहस्स” इत्यादि।

शब्दार्थ—(एयाएणं संगहस्स भંગसमुत्कीर्तनयाए किं पओयणं) हे भदन्त संग्रहनय मान्य इस भंगसमुत्कीर्तनता से क्या प्रयोजन सिद्ध होता है ?

उत्तर—(एयाएणं संगहस्स समुत्कीर्तनयाए भङ्गोवदंसणया कीरइ) संग्रहनय मान्य इस भंग समुत्कीर्तनता से संग्रहनय मान्य भङ्गोपदर्शनता दिखलाह जाती है। (से किं तं संगहस्स भङ्गोवदंसणया ?) हे भदन्त ! संग्रहनय मान्य भङ्गोपदर्शनता क्या है ?

उत्तर—(संगहस्स भङ्गोवदंसणया) संग्रहनय मान्य भङ्गोपदर्शनता यह है (तिप्पएसिए आणुपुब्बी) यावन्मात्र त्रिप्रदेशी स्कन्ध है वे एक ? आनुपूर्वी हैं। इस प्रकार आनुपूर्वी इस शब्द के वाच्यार्थ से यावन्मात्र त्रिप्रदेशी स्कन्ध हैं वे सब संगृहीत हो जाते हैं। (परमाणुपोग्गला अणाणुपुब्बी) यावन्मात्र परमाणु पुद्गल हैं वे एक अनानुपूर्वी हैं— इस प्रकार

હવે સૂત્રકાર ભંગોપદર્શનતાનું નિરૂપણ કરે છે—

“ एयाएणं संगहस्स ” इत्यादि—

शब्दार्थ—(एयाएणं संगहस्स भङ्गसमुत्कीर्तनयाए किं पओयणं ?) हे भगवन् ! संग्रहनयमान्य आ भङ्गसमुत्कीर्तनता वडे कथुं प्रयोजन सिद्ध थाय છે?

ઉત્તર—(એયાએણં સંગહસ્સ ભંગસમુક્કિત્તણયાએ સંગહસ્સ ભંગોવદંસણયા કીરઇ) સંગ્રહનયમાન્ય આ ભંગસમુત્કીર્તનતા વડે સંગ્રહનય માન્ય ભંગોપદર્શનતા બતાવવામાં આવે છે. (સે કિં તં સંગહસ્સ ભંગોવદંસણયા ?) હે ભગવન્ ! સંગ્રહનયમાન્ય ભંગોપદર્શનતાનું કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—(સંગહસ્સ ભંગોવદંસણયા) સંગ્રહનયમાન્ય ભંગોપદર્શનતાનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—

(તિપ્પેસિયા આણુપુઠ્ઠી) જેટલા ત્રિપ્રદેશી સ્કંધો છે, તેઓ એક જ આનુપૂર્વી રૂપ છે. આ રીતે જેટલા ત્રિપ્રદેશી સ્કંધો છે તેમને અહીં આનુપૂર્વી શબ્દના વાચ્યાર્થ રૂપે ગ્રહણ કરવા બોધ્યો. (પરમાણુપોગ્ગલા અણાણુ-

માણુપુદ્ગલાશ્ચ આનુપૂર્વીંચ અનાનુપૂર્વીંચ ૪ । અથવા-ત્રિપ્રદેશિકાશ્ચ દ્વિપ્રદેશિકાશ્ચ આનુપૂર્વીંચ અવક્તવ્યકંચ ૫ । અથવા-પરમાણુપુદ્ગલાશ્ચ દ્વિપ્રદેશિકાશ્ચ અનાનુપૂર્વીંચ અવક્તવ્યકંચ ૬ । અથવા-ત્રિપ્રદેશિકાશ્ચ પરમાણુપુદ્ગલાશ્ચ દ્વિપ્રદેશિકાશ્ચ આનુપૂર્વીંચ અનાનુપૂર્વીંચ અવક્તવ્યકંચ ૭ । સૈવા સંગ્રહસ્ય મજ્ઞોપદર્શનતા ॥ સૂ. ૯૪ ॥

ટીકા—‘અયાણં’ इत्यादि ।

અત્રાપિ સત્ત મજ્ઞા વોધ્યાઃ । અસ્ય સૂત્રસ્ય વ્યાખ્યાકૃતપ્રાયા ૩ ॥ સૂ. ૯૪ ॥

અથ સમવતારં પ્રદર્શયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં સંગ્રહસ્સ સમોયારે? સંગ્રહસ્સ સમોયારે—સંગ્રહસ્સ આણુપુઘ્વીદઘ્વાઈં કહિં સમોયરંતિ? કિં આણુપુઘ્વીદઘ્વેહિં સમોયરંતિ? અણાણુપુઘ્વીદઘ્વેહિં સમોયરંતિ? અવક્તવ્યગદઘ્વેહિં સમોયરંતિ? સંગ્રહસ્સ આણુપુઘ્વીદઘ્વાઈં આણુપુઘ્વીદઘ્વેહિં સમોયરંતિ નો અણાણુપુઘ્વીદઘ્વેહિં સમોયરંતિ નો

અનાનુપૂર્વીંકે શબ્દ કે વાચ્યાર્થ સે યાવન્માત્ર પરમાણુ પુદ્ગલ હૈં વે સઘ અનાનુપૂર્વીંકે એક પદ સે સંગૃહીત હો જાતે હૈં । (દુષ્પણસિયા અવક્તવ્ય) હસી પ્રકાર યાવન્માત્ર દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ હૈં વે એક અવક્તવ્યક હૈં હસ પ્રકાર અવક્તવ્યક હસ શબ્દ કે વાચ્યાર્થ સે યાવન્માત્ર દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ હૈં વે સઘ અવક્તવ્યક હસ એક શબ્દ સે સંગૃહીત હો જાતે હૈં । હસી પ્રકાર સે દ્વિસંયોગી ત્રીન પદોંકા ઓર ત્રિસંયોગી ૧ એક પદ કા ઓ વાચ્યાર્થ સમજ લેના ચાહિયે । હસી વિષય કો સૂત્રકાર ને ‘અહવા’ આદિ પદોં દ્વારા કહા હૈં હન સમસ્ત પદોં કી વ્યાખ્યા પહિલે કી જા ચુકી હૈં । ॥ સૂ. ૯૪ ॥

પુઘ્વી) જેટલાં પરમાણુ પુદ્ગલો છે, તેઓ એક અનાનુપૂર્વીંકે રૂપ છે. આ રીતે સમસ્ત પરમાણુ પુદ્ગલોને અહીં અનાનુપૂર્વીંકે પદના વાચ્યાર્થ રૂપે ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે. (દુષ્પણસિયા અવક્તવ્ય) જેટલાં દ્વિપ્રદેશી સ્કંધો છે, તેઓ એક અવક્તવ્યક રૂપ છે. આ રીતે “અવક્તવ્યક” આ પદનો વાચ્યાર્થ સમસ્ત દ્વિપ્રદેશી સ્કંધો છે તેથી “અવક્તવ્યક” આ એક પદના પ્રયોગ દ્વારા સમસ્ત દ્વિપ્રદેશી સ્કંધો ગ્રહણ થઈ જાય છે. એજ પ્રમાણે દ્વિસંયોગી ત્રણ ભાગાઓનો અને ત્રિસંયોગી એક ભાગાનો વાચ્યાર્થ પણ સમજ લેવો જોઈએ. આ વિષયનું સૂત્રકારે “અહવા” આદિ પૂર્વોક્ત પદો દ્વારા કથન કર્યું છે. આ બધા પદોની વ્યાખ્યા પહેલાં આપવામાં આવી ચુકી છે. ॥ સૂ. ૯૪ ॥

અવત્તવ્વગદ્વેહિં સમોયરંતિ । एवं दोन्नि वि सट्ठणे सट्ठणे
સમોયરંતિ । સે તં સમોયારે ॥સૂ૦ ૧૫॥

છાયા—અથ કઃ સ સંગ્રહસ્ય સમવતારઃ? સંગ્રહસ્ય સમવતાર-સંગ્રહસ્ય
આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કુત્ર સમવતરન્તિ? કિમાનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ? અનાનુપૂર્વી-
દ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ? અવક્તવ્યકદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ? સંગ્રહસ્ય આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ

અથ સૂત્રકાર સંગ્રહનય માન્ય સમવતાર કા સ્વરૂપ કહતે હૈ—

“સે કિં તં” इत्यादि ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સંગ્રહસ્સ સમોયારે) હે મદન્ત સંગ્રહનય માન્ય
સમવતાર કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર— (સંગ્રહસ્સ સમોયારે) સંગ્રહનય માન્ય સમવતાર કા સ્વ-
રૂપ્પ્ત્વે પ્રકાર સે હૈ સમવતાર કા અર્થ સમાવેશ- મિલના હૈ । અર્થાત્
આનુપૂર્વી આદિ જો દ્રવ્ય હૈ ઊનકા અન્તર્ભાવ મિલના સ્વસ્થાન મેં હોતા
હૈ યા પરસ્થાન મેં હોતા હૈ ? હસ પ્રકાર ચિન્તન પ્રકાર કા જો ઉત્તર
હૈ વહ સમાવેશ હૈ । યહ વિચાર પ્રકાર હસ પ્રકાર સે હોતા હૈ કિ સંગ્રહ
નય સંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કહાંપર સમાવિષ્ટ હોતે હૈ ? (કિં આણુપુવ્વેહિં
સમોયરંતિ ? અણાણુપુવ્વેહિં-સમોયરંતિ, અવત્તવ્વગદ્વેહિં સમોય-
રંતિ ?) કયા આનુપૂર્વી દ્રવ્યો મેં સમાવિષ્ટ હોતે હૈ ? યા અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યો
મેં સમાવિષ્ટ હોતે હૈ યા અવક્તવ્યક દ્રવ્યો મેં સમાવિષ્ટ હોતે હૈ ।

હવે સૂત્રકાર સંગ્રહનયસંમત સમવતારના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સંગ્રહસ્સ સમોયારે) હે ભગવન્ ! સંગ્રહનય
સંમત સમવતારનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—“સંગ્રહસ્સ સમોયારે” સંગ્રહનયમાન્ય સમવતારનું સ્વરૂપ
આ પ્રકારનું છે—(સમવતાર એટલે સમાવેશ અથવા મિલન) એટલે કે
“આનુપૂર્વી આદિ જે દ્રવ્યો છે તેમનો અન્તર્ભાવ (સમાવેશ) સ્વસ્થાનમાં
થાય છે કે પરસ્થાનમાં થાય છે ?” આ પ્રકારની વિચારધારાનો જે ઉત્તર
છે, તેનું નામ સમવતાર છે અ. વિચારધારા આ પ્રમાણે આલે છે—સંગ્રહનયસંમત
આનુપૂર્વી દ્રવ્યોનો કયા સમાવેશ થાય છે ? (કિં આણુપુવ્વી દ્વેહિં સમોયરંતિ ?
અણાણુપુવ્વીદ્વેહિં સમોયરંતિ ? અવત્તવ્વગદ્વેહિં સમોયરંતિ ?) શું આનુપૂર્વી
દ્રવ્યોમાં સમાવિષ્ટ થઈ જાય છે—મળી જાય છે ? કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં
સમાવિષ્ટ થઈ જાય છે ? કે અવક્તવ્યક દ્રવ્યોમાં સમાવિષ્ટ થઈ જાય છે.

આનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ, નો અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ નો અવક્તવ્યક-
દ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ । एवं द्वावपि स्वस्थाने स्वस्थाने समवतरतः । स एष
समवतारः ॥ सू० ९५ ॥

टीका—‘से किं तं’ इत्यादि—

अस्य सूत्रस्य व्याख्या कृतमायैवेति ४ ॥ सू० ९५ ॥

अथ पञ्चमं भेदमनुगमं निरूपयति—

मूलम्—से किं तं अणुगमे ? अणुगमे अद्वિहे पणत्ते, तं
जहा—‘संतपयपरुवणया, दव्वप्पमाणं च खित्तं फुसणा य । कालो
य अंतरं भाग भावे अप्पाबहुं नत्थि ॥ १ ॥’ संगहस्स आणुपुव्वी-
दव्वाइं किं अत्थि णत्थि ? नियमा अत्थि, एवं दोन्नि वि ॥ १ ॥
संगहस्स आणुपुव्वીदव्वाइं किं संखिज्जाइं असंखिज्जाइं अणंताइं ?
नो संखिज्जाइं नो असंखिज्जाइं नो अणंताइं, नियमा एगो

उत्तर—संगहस्स आणुपुव्वीदव्वाइं आणुपुव्वीदव्वेहिं समोयरंति, नो
अणुपुव्वીदव्वेहिं समोयरंति, नो अवत्तव्वगदव्वेहिं समोयरंति) संग्रह-
नय संमत समस्त आनुपूर्वीद्रव्य स्वस्थान रूप आनुपूर्वीद्रव्यों में ही
समाविष्ट होते हैं । परस्थान रूप अनानुपूर्वीद्रव्यों में या अवक्तव्यक
द्रव्यों में समाविष्ट नहीं होते हैं । (एवं दोन्नि वि सट्ठाणे सट्ठाणे समोय-
रंति) इसी प्रकार से संग्रहनय संमत अनानुपूर्वीद्रव्य और अवक्तव्यक
द्रव्य भी क्रमशः अपने अपने स्थानरूप अनानुपूर्वीद्रव्यों में और अव-
क्तव्यकद्रव्यों में समाविष्ट होते हैं । इसकी व्याख्या ८० सूत्र के समा-
नजाननी चाहिये ॥ सू० ९५ ॥

ઉત્તર—(સંગહસ્સ આણુપુવ્વીદવ્વાઈં આણુપુવ્વીદવ્વેહિં સમોયરંતિ, નો
અવત્તગદવ્વેહિં સમોયરંતિ નો અણાણુપુવ્વીદવ્વેહિં સમોયરંતિ) સંગ્રહનયસંમત
સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો સ્વસ્થાન રૂપ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં જ સમાવિષ્ટ થાય
છે, પરસ્થાન રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં કે અવક્તવ્યક દ્રવ્યોમાં સમાવિષ્ટ
થતાં નથી. (એવં દોન્નિ વિ સટ્ઠાણે સટ્ઠાણે સમોયરંતિ) એજ પ્રમાણે સંગ્ર-
હનયસંમત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અને અવક્તવ્યક દ્રવ્ય પણ અનુક્રમે ચોતપો-
તાના સ્થાનરૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોમાં સમાવિષ્ટ
થાય છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ ૮૦માં સૂત્રમાં કહ્યા પ્રમાણે સમજવું. ॥સૂ.૦૬૫॥

रासी, एवं दोन्नि वि ॥२॥ संगहस्स आणुपुव्वीदव्वाइं लोगस्स
 कइभागे होज्जा ? किं संखेज्जइभागे होज्जा असंखेज्जइभागे
 होज्जा संखेज्जेसु भागेषु होज्जा असंखेज्जेसु भागेषु होज्जा ?
 सव्वलोए होज्जा ? नो संखेज्जइभागे होज्जा नो असंखेज्जइ
 भागे होज्जा नो संखेज्जेसु भागेषु होज्जा नो असंखेज्जेसु
 भागेषु होज्जा, नियमा सव्वलोए होज्जा, एवं दोन्नि वि ॥३॥
 संगहस्स आणुपुव्वीदव्वाइं लोगस्स किं संखेज्जइभागं फुसंति ?
 असंखेज्जइभागं फुसंति ? संखिज्जे भागे फुसंति ? असंखिज्जे
 भागे फुसंति ? सव्वलोगे फुसंति ? नो संखेज्जइभागं फुसंति
 जाव नियमा सव्वलोगं फुसंति । एवं दोन्नि वि ॥४॥ संगहस्स
 आणुपुव्वीदव्वाइं कालओ केवच्चिरं होति ? सव्वद्धा । एवं दोण्णि
 वि ॥५॥ संगहस्स आणुपुव्वीदव्वाणं कालओ केवच्चिरं अंतरं होई ?
 नत्थि अंतरं, एवं दोण्णि वि ॥६॥ संगहस्स आणुपुव्वीदव्वाइं
 सेसदव्वाणं कइभागे होज्जा ? किं संखेज्जइभागे होज्जा ?
 असंखेज्जइभागे होज्जा ? संखेज्जेसु भागेषु होज्जा ? असंखे-
 ज्जेसु भागेषु होज्जा ? नो संखेज्जइभागे होज्जा, नो असंखे-
 ज्जइभागे होज्जा नो संखेज्जेसु भागेषु होज्जा नो असंखेज्जेसु
 भागेषु होज्जा, नियमा तिभागे होज्जा । एवं दोन्नि वि ॥७॥
 संगहस्स आणुपुव्वीदव्वाइं कयरंमि भावे होज्जा ? नियमा साइ-
 पारिणामिए भावे होज्जा । एवं दोन्नि वि ॥८॥ अप्पावहुं नत्थि ।
 से तं अणुगमे । से तं संगहस्स अणोदणिहिया दव्वाणुपुव्वी ।
 से तं अणोवणिहिया दव्वाणुपुव्वी ॥सू० ९६॥

भाषा—अथ कोऽसौ अनुगमः ? अनुगमः षष्ठविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—‘सत्पद-
प्ररूपणता द्रव्यप्रमाणं च क्षेत्रं स्पर्शना च । कालश्च अन्तरं भागो भावः, अल्प-
बहुत्व नास्ति ॥१॥’ संग्रहस्य आनुपूर्वीद्रव्याणि किं सन्ति न सन्ति ? नियमात्
सन्ति । एवं द्वे अपि ॥१॥ संग्रहस्य आनुपूर्वीद्रव्याणि किं संख्येयानि असंख्येयानि
अनन्तानि ? नो संख्येयानि नो असंख्येयानि नो अनन्तानि । नियमात् एको
राशिः । एवं द्वे अपि ॥२॥ संग्रहस्य आनुपूर्वीद्रव्याणि लोकस्य कतिभागे भवन्ति ?
किं संख्येयतमभागे भवन्ति ? असंख्येयतमभागे भवन्ति ? संख्येयेषु भागेषु
भवन्ति ? असंख्येयेषु भागेषु भवन्ति ? सर्वलोके भवन्ति ? नो संख्येयतमभागे,
भवन्ति नो असंख्येयतमभागे भवन्ति, नो संख्येयेषु भागेषु भवन्ति, नो असं-
ख्येयेषु भागेषु भवन्ति । नियमात् सर्वलाकं भवन्ति । एवं द्वे अपि ॥३॥ संग्रहस्य
आनुपूर्वीद्रव्याणि लोकस्य किं संख्येयतमभागं स्पृशन्ति ? असंख्येयतमभागं स्पृ-
शन्ति ? संख्येयान् भागान् स्पृशन्ति ? असंख्येयान् भागान् स्पृशन्ति ? सर्वलोकं
स्पृशन्ति ? नो संख्येयतमभागं स्पृशन्ति यावत् नियमात् सर्वलोकं स्पृशन्ति । एवं
द्वे अपि ॥४॥ संग्रहस्य आनुपूर्वीद्रव्याणि कालतः कियच्चिरं भवन्ति ? सर्वाद्धा ।
एवं द्वे अपि ॥५॥ संग्रहस्य आनुपूर्वीद्रव्याणां कालतः कियच्चिरमन्तरं भवति ?
नास्ति अन्तरम् । एवं द्वे अपि ॥६॥ संग्रहस्य आनुपूर्वीद्रव्याणि शेषद्रव्याणां कति-
भागे भवन्ति ? किं संख्येयतमभागे भवन्ति ? असंख्येयतमभागे भवन्ति ? संख्येयेषु
भागेषु भवन्ति ? असंख्येयेषु भागेषु भवन्ति ? नो संख्येयतमभागे भवन्ति, नो असं-
ख्येयतमभागे भवन्ति नो संख्येयेषु भागेषु भवन्ति, नो असंख्येयेषु भागेषु भवन्ति,
नियमात् त्रिभागे भवन्ति । एवं द्वे अपि ॥७॥ संग्रहस्य आनुपूर्वीद्रव्याणि कतर-
स्मिन् भावे भवन्ति ? नियमाम् सादिपारिणामिके भावे भवन्ति । एवं द्वे अपि ॥८॥
अल्पबहुत्वं नास्ति । स एषोऽनुगमः । सैषाऽनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी ॥सू० ९६॥

टीका—‘से किं तं’ इत्यादि—

अथ कोऽसौ अनुगमः ? = संग्रहनयसम्मतोऽनुगमः कः ? इति प्रश्नः । उत्तर-
माह—अनुगमोऽष्टविधः प्रज्ञप्तः । तद्यथा—सत्पदप्ररूपणता, द्रव्यप्रमाणं क्षेत्रं स्पर्शना-

अथ सूत्रकार पांचवे भेद अनुगम का निरूपण करते हैं—

“से किं तं अणुगमे” इत्यादि ।

शब्दार्थ—(से किं तं अणुगमे) हे भदन्त ! संग्रहनय सम्मत अनु-
गम का क्या स्वरूप है ?

इसे सूत्रकार संग्रहनय सम्मत अनुगमना स्वरूपतुं निरूपण करते हैं—

“से किं तं अणुगमे” इत्यादि

शब्दार्थ—(से किं तं अणुगमे ?) हे भगवन् ! संग्रहनयमान्य अनुगमनुं
स्वरूप तेषु कस्युं छे ?

કાલઃ અન્તરં ભાગો ભાવશ્ચેતિ । અલ્પબહુત્વરૂપોઽનુગમસ્તુ સંગ્રહનયમતે નાસ્તિ, અસ્ય નયસ્ય સામાન્યવાદિત્વાત્ । સમ્પ્રતિ સત્પદપ્રરૂપણતાં પ્રરૂપયતિ—‘સંગ્રહસ્સ આણુપુન્ઘ્વી દન્વાઈં કિં અત્થિ નત્થિ’ ઇત્યાદિ । સંગ્રહસમ્મતાનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ

ઉત્તર—(અણુગમે અટ્ટવિહે પળગત્તે) અનુગમ આઠ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ (તં જહા) વે પ્રકાર ચે હૈ—(સંતપયપરુવળયા દન્વપમાણં ચ ચ્ચિત્તં ફુસળા ય, કાલોય અંતરં ભાગ ભાવે અપ્પાબહું નત્થિ) સત્પદપ્રરૂપણતાં ૧, દ્રવ્યપ્રમાણ ૨, ક્ષેત્ર ૩, સ્પર્શના ૪, કાલ ૫, અન્તર ૬, ભાગ ૭ ઓર ભાવ ૮ અલ્પબહુત્વ અનુગમ કા પ્રકાર યહાં નહીં હૈ ક્યોકિ સંગ્રહનય સામાન્યવાદી હૈ । “સંગ્રહસ્સ આણુપુન્ઘ્વી દન્વાઈં કિં અત્થિ નત્થિ ણિયમા અત્થિ એવં દોન્નિ વિ” સત્પદપ્રરૂપણતા કે નિમિત્ત સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ હસ સત્પદ પ્રરૂપણા મૈં યહ પ્રરૂપિત કિયા જાતા હૈ કિ જિસ પ્રકાર સે શશશ્રૃંગ આદિપદ અસદર્થ કો વિષય કરને વાલે હોતે હૈં ઉસ પ્રકાર સે ચે આનુપૂર્વી આદિ પદ અસદર્થ વિષયક નહીં હૈં, કિન્તુ જૈસે સ્તંભ આદિ પદ સ્તંભ રૂપ અપને વાસ્તવિક અર્થ કો વિષય કરતે હૈં ઉસી પ્રકાર સે ચે આનુપૂર્વી આદિપદ મી વાસ્તવિક આનુપૂર્વી આદિ કો વિષયક કરતે હૈં, હસલિયે (સંગ્રહસ્સ આણુપુન્ઘ્વી દન્વાઈં કિં અત્થિ ન-

ઉત્તર—(અણુગમે અટ્ટવિહે પળગત્તે) અનુગમ આઠ પ્રકારનો કહ્યો છે. (તંજહા) તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—

(સંતપયપરુવળયા, દન્વપમાણં ચ ચ્ચિત્તં ફુસળા ય, કાલો ય અંતરં ભાગ ભાવે અપ્પાબહું નત્થિ) (૧) સત્પદપ્રરૂપણતા, (૨) દ્રવ્યપ્રમાણ, (૩) ક્ષેત્ર, (૪) સ્પર્શના, (૫) કાળ, (૬) અન્તર, (૭) ભાગ અને (૮) ભાવ. અલ્પબહુત્વ રૂપ અનુગમનો પ્રકાર અહીં નથી, કારણ કે સંગ્રહનય સામાન્યવાદી છે. (સંગ્રહસ્સ આણુપુન્ઘ્વી દન્વાઈં કિં અત્થિ નત્થિ ? ણિયમા અત્થિ એવં દોન્નિ વિ) હવે સૂત્રકાર સત્પદપ્રરૂપણતાનું સ્વરૂપ સમજાવે છે— સત્પદપ્રરૂપણતામાં એ વાતની પ્રરૂપણ કરવામાં આવે છે કે જે પ્રકારે શશશ્રૃંગ (સસલાના શિંગડાં) આદિ પદ અસદર્થ (અવિદ્યમાન પદાર્થ)નું પ્રતિપાદન કરનારા હોય છે, એ પ્રકારે આ આનુપૂર્વી આદિ પદો અસદર્થનું પ્રતિપાદન કરનારા નથી પરંતુ જેમ સ્તંભ આદિ પદો સ્તંભરૂપ પોતાના વાસ્તવિક અર્થને પ્રતિપાદિત કરે છે, એજ પ્રમાણે આનુપૂર્વી આદિ પદ પણ વાસ્તવિક આનુપૂર્વી આદિ સદર્થનું (વિદ્યમાન પદાર્થ) પ્રતિપાદન કરે છે. તેથી (સંગ્રહસ્સ આણુપુન્ઘ્વી દન્વાઈં કિં અત્થિ નત્થિ ?) “સંગ્રહનયસંભત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય છે કે નહીં?”

કિં સન્તિ ? ન વા સન્તિ ? इति प्रश्नः । उत्तरमाह-नियमात् सन्ति=आनुपूर्वी-द्रव्याणां सद्भावः संग्रहनयमतेऽस्त्येवेत्यर्थः ।

નનુ સંગ્રહવિચારે પ્રક્રાન્તે 'આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ' इति बहुत्वेन निर्देशोऽनुपपन्नः, संग्रहनयमते आनुपूर्वीसामान्यस्यैवाऽभ्युपगमादिति चेत्, उच्यते-संग्रहनयमते मुख्यतया सामान्यमेवाभ्युपगम्यते, तथापि गौणरीत्या व्यवहारनयमते द्रव्यबहुत्वमपेक्ष्य बहुत्वेन निर्देशः कृत इति नास्ति कश्चिद् दोषः । एवं संग्रहनयमते द्वयोरनानुपूर्व्यवक्तव्यकयोर्विषयेऽपि बोध्यम् । अनानुपूर्व्यवक्तव्यकद्रव्याणां सद्भावो नियमादस्तीत्यर्थः । अथ द्रव्यप्रमाणं निरूपयितुमाह-'संगहस्स आणुपुव्वीदव्वाइ' किं संखिज्जाइ' इत्यादि-संग्रहनयसम्मतानि आनुपूर्वीद्रव्याणि किं संख्येयानि सन्ति ? किमसंख्येयानि सन्ति ? किंवा-अनन्तानि सन्ति ? इति प्रश्नः । उत्तरमाह-

अतिथि" संग्रहनय संमत आनुपूर्वी द्रव्य हैं या नहीं हैं, इस प्रकार की शंका का समाधान यह है कि ये (नियमा अतिथि) नियम से हैं । इसी प्रकार से अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यों के विषय में भी यही समझना चाहिये कि ये दोनों द्रव्य नियम से हैं । द्रव्यप्रमाण में आनुपूर्वी आदि पदों द्वारा जिन द्रव्यों को कहा गया है उनकी संख्या का निर्धारण होता है-जैसे (संगहस्स आणुपुव्वीदव्वाइ किं संखिज्जाइ असंखिज्जाइ अणंताइ ?) संग्रहनय संमत आनुपूर्वीद्रव्य क्या संख्यात हैं या असंख्यात या अनंत हैं ?

उत्तर (नो संखिज्जाइ नो असंखिज्जाइ नो अणंताइ) न संख्यात हैं न असंख्यात हैं, और न अनंत हैं किन्तु (नियमा एगो रासी) नियम से एक राशिरूप हैं

આ પ્રશ્નનો આ પ્રમાણે ઉત્તર આપી શકાય. (નિયમા અતિથિ) “ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અવશ્ય છે જ એજ પ્રમાણે અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોના વિષયમાં પણ એવું સમજવું જોઈએ કે એ બંને દ્રવ્યો પણ અવશ્ય વિદ્યમાન છે.

દ્રવ્યપ્રમાણમાં એ વાતનો વિચાર કરવામાં આવે છે કે આનુપૂર્વી આદિ પદો દ્વારા જે દ્રવ્યોનું કથન કરવામાં આવે છે તે દ્રવ્યોની સંખ્યા કેટલી છે. જેમ કે (સંગહસ્સ આણુપુવ્વીદવ્વાઈ કિં સંખિજ્જાઈ અસંખિજ્જાઈ અણંતાઈ ?) હે ભગવન્ ! સંગ્રહનયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો શું સંખ્યાત છે, કે અસંખ્યાત છે કે અનંત છે ?

ઉત્તર-(નો સંખિજ્જાઈ, નો અસંખિજ્જાઈ નો અણંતાઈ) સંગ્રહનયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો સંખ્યાત પણ નથી, અસંખ્યાત પણ નથી અને અનંત પણ નથી, પરંતુ (નિયમા એગો રાસી) નિયમથી એક જ રાશિરૂપ છે.

સંગ્રહનયે આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ નો સંખ્યેયાનિ નો અસંખ્યેયાનિ નો અનન્તાનિ સન્તિ ।
કિન્તુ નિયમાત્ ઇકો રાશિરસ્તિ ।

નનુ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણાં સંખ્યેયાદિત્વાભાવાદેકરાશિત્વમપિ નોપપદ્યતે, દ્રવ્ય-
બાહુલ્યે સત્યેવ તસ્યોપપદ્યમાનત્વાત્, દૃશ્યતે ચ લોકે વ્રીહિબાહુલ્યે ‘વ્રીહિરાશિઃ’
ઇતિ વ્યવહારઃ, ? ઇતિચેત્, ઉચ્યતે—સંખ્યેયાદિત્વાભાવેऽપિ સ્વ સ્વરૂપાત્ આનુપૂર્વી-
દ્રવ્યબાહુલ્યં વિદ્યતે । તેષામાનુપૂર્વીત્વસામાન્યમાશ્રિત્ય યદેકત્વં તદપેક્ષયા ઇક-
રાશિત્વમિતિ ‘ઇકોરાશિઃ’ ઇત્યસ્યાભિપ્રાયઃ, ઇતિ નાસ્તિકશ્ચિદ્ દોષઃ । યદ્વા—

શંકા—જબ આનુપૂર્વીદ્રવ્ય સંખ્યાત આદિરૂપ નહીં હૈં તો ઉત્તરમાં ઇક-
રાશિ રૂપતા ખી કૈસે બનસકતી હૈ ? ક્યોંકિ યહ રાશિરૂપતા દ્રવ્ય બહુ-
લતા મેં હી હોતી હૈ । લોક મેં ખી ઇસા હી દેખા જાના હૈ કી જબ ધાન્ય
બહુત હોતા હૈ તથ “યહ વ્રીહિરાશિ” હૈ ઇસા વ્યવહાર હોતા હૈ ।

ઉત્તર—સંખ્યાત આદિ રૂપતા કે અભાવ મેં ખી અપને સ્વરૂપ કો
લેકર આનુપૂર્વીદ્રવ્યોં મેં બહુલતા હૈ । અતઃ આનુપૂર્વીત્વ સામાન્ય કા
આશ્રય કરકે ઇનમેં જો ઇકતા હૈ ઉસકી અપેક્ષા યે ઇક રાશિરૂપ હૈ
ઇસા કહને કા અભિપ્રાય સૂત્રકાર કા હૈ । ઇસમેં કોઈ દોષ નહીં હૈ ।
તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ ત્રિપ્રદેશિક ઇક આનુપૂર્વી હૈ, ચતુષ્પ્રદે-
શિક ઇક આનુપૂર્વી હૈ પંચપ્રદેશિક ઇક આનુપૂર્વી હૈ ઇત્યાદિ અનંત
પ્રદેશિક ઇક આનુપૂર્વી હૈ । ઇસ પ્રકાર સે સઘ આનુપૂર્વીઓં કે સ્વરૂપ

શંકા—જો આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સંખ્યાત આદિ રૂપ ન હોય તો તેમાં ઇક
રાશિરૂપતા કેવી રીતે સંભવી શકે છે ? કારણ કે આ રાશિરૂપતા તો દ્રવ્યની
બહુલતામાં જ સંભવી શકે છે. લોકમાં પણ એવું જ જોવામાં આવે છે
કે જ્યારે ધાન્ય ઘણું જ હોય છે ત્યારે એમ કહેવામાં આવે છે કે “આ
ચોખાનો ઢગલો (રાશિ) છે.”

ઉત્તર—સંખ્યાત આદિ રૂપતાનો અભાવ હોવા છતાં પણ ચોખાના
સ્વરૂપની દૃષ્ટિએ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં બહુલતા (વિપુલતા) છે. તેથી આનુ-
પૂર્વીત્વ સામાન્યની અપેક્ષાએ તે દ્રવ્યોમાં જે ઇકતા છે તે ઇકતાને અનુ-
લક્ષીને સૂત્રકારે અહીં એવું કહ્યું છે કે “આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં ઇકરાશિરૂ-
પતા છે.” તેથી આ પ્રકારના કથનમાં કોઈ દોષ નથી આ કથનનું તાત્પર્ય
એ છે કે ત્રિપ્રદેશિક ઇક આનુપૂર્વી ચાર પ્રદેશિક ઇક આનુપૂર્વી છે, પાંચ
પ્રદેશિક પર્યંતના સ્કંધોની ઇક ઇક આનુપૂર્વી છે. આ પ્રકારે બધી
આનુપૂર્વીઓના સ્વરૂપ ભિન્ન ભિન્ન છે, પરંતુ તે સઘની આનુપૂર્વીઓમાં

યથા-યથા વિશિષ્ટૈકપરિણામપરિણતે સ્કન્ધે તદારમ્ભકપરમાણૂનાં બાહુલ્યેઽપિ તદ્ગતૈકત્વમેવ મુખ્યતયા વિવક્ષ્યતે, તથૈવાત્નાઽપિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યબાહુલ્યેઽપિ એકમાનુપૂર્વીત્વસામાન્યમાશ્રિત્ય એકત્વમેવ મુખ્યતયા વિવક્ષિતમ્, અતો મુખ્યમેકત્વમાશ્રિત્યૈવ સંખ્યેયત્વાદયો નિષિધ્યતે । ગુણભૂતાનિ દ્રવ્યાણ્યાશ્રિત્ય તુ રાશિત્વમપિ ન વિરુદ્ધ્યતે ।તિ ન કશ્ચિદ્ દોષઃ । એવમનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકદ્રવ્યવિષયેઽપિ બોધ્યમ્ ।

મિન્ન ૨ હૈ-સો इन सब में आनुपूर्वीत्वरूप सामान्य की अपेक्षा करके एकता मान ली जाती है-इस अपेक्षा इनमें एकराशिरूपता मानी गई है ? अथवा-जैसे विशिष्ट एक परिणाम स्कंध द्रव्य में तदारमभक परमाणुओं की बहुलता होने पर भी तद्गत एकता ही मुख्य रूप से विवक्षित रूप से होती है, उसी प्रकार यहांपर भी राशिरूपता में भी आनुपूर्वीद्रव्यों की बहुलता होने पर भी एक आनुपूर्वीत्व रूप सामान्य को आश्रित करके एकत्व ही मुख्यतया विवक्षित हुआ है । और इसी कारण इस मुख्य एकत्व को लेकर के संख्येयत्व आदि निषिद्ध हुए हैं । अतः आनुपूर्वीद्रव्य में एक राशिरूपता विरुद्ध नहीं है । तथा गौण हुए व्यक्तिरूप द्रव्यों को आश्रित करके एक राशिपना भी विरुद्ध नहीं होता है । (एवं दोन्निवि) इसी प्रकार से आनुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्य में भी एकराशिता का उद्भवन कर लेना चाहिए ।

આનુપૂર્વીત્વરૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ એકતા માની લેવામાં આવી છે. તેથી તે અપેક્ષાએ આનુપૂર્વીઓમાં એકરાશિરૂપતા માની લેવામાં આવી છે. અથવા:-જેમ કોઈ એક વિશિષ્ટ પરિણામ સ્કંધદ્રવ્યમાં તદારંભક (તેના આરંભ કરનારા) પરમાણુઓની બહુતા હોવા છતાં પણ તદ્ગત એકતા જ મુખ્ય રૂપે વિવક્ષિત થાય છે, એજ પ્રમાણે અહીં પણ-રાશિરૂપતામાં પણ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની બહુતા હોવા છતાં પણ એક આનુપૂર્વીત્વ રૂપ સામાન્યને આધારે એકત્વ જ મુખ્યત્વે વિવક્ષિત થયું છે, અને એજ કારણે આ મુખ્ય એકત્વને લીધે સંખ્યેયત્વ, અસંખ્યેયત્વ આદિનો નિષેધ થયો છે. તેથી આનુપૂર્વી દ્રવ્યમાં એકરાશિરૂપતા માનવામાં કોઈ દોષ નથી. તથા ગૌણ પદાર્થ રૂપ દ્રવ્યોને આશ્રિત કરીને એકરાશિત્વ પણ વિરુદ્ધ પડતું નથી. (એવં દોન્નિ વિ) એજ પ્રમાણે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યમાં પણ એકરાશિત્વ શક્ય કરવું જોઈએ અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યમાં પણ એકરાશિત્વ સમજી લેવું જોઈએ હવે સૂત્રકાર સંશ્લેષનયસંમત ક્ષેત્રનું નિરૂપણ કરે છે—

अथ क्षेत्रं निरूपयितुमाह—‘संगहस्त आणुपुव्वीदव्वाहं लोगस्स कहभागे होज्जा?’
इत्यादि—संग्रहनयसम्मतानि आनुपूर्वीद्रव्याणि लोकस्य कतिभागे=कियद्भागे
भवन्ति? किं संख्येयतमभागे भवन्ति? किमसंख्येयतमभागे भवन्ति? किं संख्ये-
येषु भागेषु भवन्ति? किमसंख्येयेषु भागेषु भवन्ति? किं सर्वलोके भवन्ति? इति
प्रश्नः। उत्तरमाह—संग्रहनयसम्मतानि आनुपूर्वीद्रव्याणि लोकस्य संख्येयतमभागे
नो भवन्ति, असंख्येयतमभागे नो भवन्ति, संख्येयेषु भागेषु नो भवन्ति, असंख्ये-
येषु भागेषु चापि नो भवन्ति, किन्तु नियमात् सर्वलोके भवन्ति। आनुपूर्वी-
सामान्यस्यैकत्वात् सर्वलोकव्यापित्वाच्च नियमात् सर्वलोके तत्सत्ता बोध्या।

अब सूत्रकार क्षेत्र का निरूपण करते हैं—

प्रश्न—(संगहस्त आणुपुव्वी दव्वाहं लोगस्स कहभागे होज्जा?)
संग्रहनय समस्त समस्त आनुपूर्वीद्रव्य लोक के कितने भाग में हैं?
(किं संखेज्जइभागे होज्जा, असंखेज्जइभागे होज्जा, संखेज्जेसु भा-
गेसु होज्जा? असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा? सव्वलोए होज्जा?) क्या
लोक के संख्यातवे भाग में हैं? या लोक के असंख्यातवे भाग में हैं?
या लोक के संख्यात भागों में हैं? या लोक के असंख्यात भागों में हैं
या सर्वलोक में हैं?

उत्तर—(नो संखेज्जइभागे होज्जा, नो असंखेज्जइभागे होज्जा,
नो संखेज्जेसु भागेसु होज्जा, नो असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा, निय-
मा सव्वलोए होज्जा, एवं दोन्नि वि) समस्त आनुपूर्वी द्रव्य लोक के
न संख्यातवे भाग में हैं न असंख्यातवे भाग में हैं, न संख्यात भागों
में हैं और न असंख्यात भागों में हैं किन्तु नियम से समस्त लोक में है।

प्रश्न—(संगहस्त आणुपुव्वीदव्वाहं लोगस्स कहभागे होज्जा?) डे भग-
वन्! संग्रहनयमान्य आनुपूर्वी द्रव्यो लोकना डेट्ठा भागमां छे? (किं संखे-
ज्जइभागे होज्जा, असंखेज्जइभागे होज्जा, संखेज्जेसु भागेसु होज्जा, असं-
खेज्जेसु भागेसु होज्जा, सव्वलोए होज्जा? शुद्धोक्कना संख्यातमां भागमां छे?
डे असंख्यातमां भागमां छे? डे लोकना संख्यातभागोमां छे? डे लोकना
असंख्यात भागोमां छे? डे सर्व लोकमां छे?

उत्तर—(नो संखेज्जइभागे होज्जा, नो असंखेज्जइभागे होज्जा, नो
संखेज्जेसु भागेसु होज्जा, नो असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा, नियमा सव्वलोए होज्जा,
एवं दोन्नि वि) समस्त आनुपूर्वी द्रव्य लोकना संख्यातमां भागमां पणु नथी,
असंख्यातमां भागमां पणु नथी, संख्यात भागोमां पणु नथी, असंख्यात
भागोमां पणु नथी, परन्तु नियमथी न समस्त लोकमां छे, कारण डे आनु-

અનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકદ્રવ્યવિષયેऽપ્યેવમેવ બોધ્યમ્ । સ્પર્શનાદ્વારેऽપિ એવમેવ બોધ્યમ્ । કાલદ્વારે તુ-કાલતઃ આનુપૂર્વીત્વાનાનુપૂર્વીત્વાવક્તવ્યત્વાનામવ્યવચ્છિન્નત્વેન સર્વદાઽવસ્થાયિત્વાત્ કાલત્રયેઽપ્યેષાં સર્વાદ્વાઽવસ્થાનં બોધ્યમ્ । અત એવૈષાં કાલ-તોઽન્તરમપિ ન ભવતિ, આનુપૂર્વીત્વાદીનાં કાલત્રયેઽપિ સત્ત્વેન વ્યવચ્છેદાભાવાત્, ઇત્યન્તરદ્વારે ભાવનીયમ્ । ભાગદ્વારે ત્વેવં વિજ્ઞેયમ્-આનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ પ્રત્યેકદ્રવ્યાણિ=

કર્થોંકિ આનુપૂર્વીત્વરૂપ સામાન્ય એક છે અને તે સર્વલોક વ્યાપી છે, તેથી નિયમથી જ આનુપૂર્વી દ્રવ્યની સત્તા (અસ્તિત્વ) સર્વ લોકમાં છે. આ પ્રકારનું કથન અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્ય વિષે પણ સમજવું એટલે કે તે બન્નેનું અસ્તિત્વ પણ નિયમથી જ સમસ્ત લોકમાં છે. સ્પર્શનાને અનુલક્ષીને પણ એવું જ કથન સમજી લેવું. એટલે કે આનુપૂર્વી આદિ સમસ્ત દ્રવ્ય નિયમથી જ સર્વલોકને સ્પર્શ કરે છે. એજ વિષયનું સૂત્રકારે નીચેના પ્રશ્નોત્તરો દ્વારા સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે—

પ્રશ્ન-સંગ્રહનય માન્ય સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કાલ કો આશ્રિત કરકે કિતને સમય તક આનુપૂર્વી રૂપ સે રહતે છે ।

પૂર્વીત્વ ઇય સામાન્ય એક છે અને તે સર્વલોકવ્યાપી છે, તેથી નિયમથી જ આનુપૂર્વી દ્રવ્યની સત્તા (અસ્તિત્વ) સર્વ લોકમાં છે. આ પ્રકારનું કથન અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્ય વિષે પણ સમજવું એટલે કે તે બન્નેનું અસ્તિત્વ પણ નિયમથી જ સમસ્ત લોકમાં છે. સ્પર્શનાને અનુલક્ષીને પણ એવું જ કથન સમજી લેવું. એટલે કે આનુપૂર્વી આદિ સમસ્ત દ્રવ્ય નિયમથી જ સર્વલોકને સ્પર્શ કરે છે. એજ વિષયનું સૂત્રકારે નીચેના પ્રશ્નોત્તરો દ્વારા સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે—

(સંગ્રહસસ આણુપુર્વીદવાઈ લોગસસ કિં સંલેઝ્જહભાગં ફુસંતિ ? અસંલેઝ્જહ ભાગં ફુસંતિ, સંલેઝ્જે ભાગે ફુસંતિ, અસંલેઝ્જે ભાગે ફુસંતિ, સવ્વલોગં ફુસંતિ ? નો સંલેઝ્જહભાગં ફુસંતિ, જાવ નિયમા સવ્વલોગં ફુસંતિ, એવં દોઝિ વિ.)

પ્રશ્ન-હે ભગવન્ ! સંગ્રહનયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો શું લોકના સંખ્યા-તમાં ભાગને સ્પર્શે છે કે, અસંખ્યાતમાં ભાગને સ્પર્શે છે, કે સમસ્ત લોકને સ્પર્શે છે ?

ત્રિપ્રદેશિકચતુષ્પ્રદેશિકાદીનિ-અનન્તપ્રદેશિકપર્યન્તાનિ, નિયમાત્ શેષદ્રવ્યાણામ્= અનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકદ્રવ્યાણાં ત્રિભાગે=ત્રયાણાં રાશીનામેકો રાશિરૂપો ભાગસ્ત્રિ-ભાગસ્તસ્મિન્ ભવન્તિ । અયમર્થઃ-અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણાં સર્વેષાં સંકલનેન યાવત્

ઉત્તર-આનુપૂર્વીત્વ અનાનુપૂર્વીત્વ ઓર અવક્તવ્યકત્વ સામાન્ય કા કમી મી વિચ્છેદ નહીં હોતા હૈં ફસલિયે ફનકા અવસ્થાન સર્વાદ્વા=સાર્વ કાલિક- હૈં । ફસીલિયે કાલ કી અપેક્ષા ફનકા વિરહ કાલ મી નહીં હૈં । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈં કિ આનુપૂર્વીત્વ આદિકોં કા કાલ-ત્રય મેં મી સત્વ હોને કે કારણ વ્યવચ્છેદ નહીં હોતા હૈં, ફસ કારણ ફનમેં અન્તર નહીં માના જાતા હૈં ઁસા વિચાર અન્તરદ્વાર મેં કિયા ગયા જાનના ચાહિયે । યહી બાત સૂત્રકારજે (સંગહસ્સ આનુપુર્વીદવ્વા-ણ કાલઓ કેવચ્ચિરં અંતરં હોઈ ? નત્થિ અંતરં) ફન પદોં દ્વારા કહી ગઈ હૈં (સંગહસ્સ આનુપુર્વી દવ્વાઈં સેસદવ્વાણં કહભાગે હોજ્જા)

પ્રશ્ન-સંગ્રહનયમાન્ય સમસ્ત આનુપૂર્વીદ્રવ્ય શેષ દ્રવ્યોં કે કૌન સે ભાગ મેં હૈં ? (કિં સંખેજ્જહભાગે હોજ્જા ? અસંખેજ્જહભાગે હોજ્જા

ઉત્તર-આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સમસ્ત લોકને જ સ્પર્શે છે, લોકના સંખ્યા-તમાં ભાગને, અસંખ્યાતમાં ભાગને, સંખ્યાત ભાગોને કે અસંખ્યાત ભાગોને સ્પર્શતું નથી આ પ્રકારનું કથન અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની સ્પર્શના વિષે પણ સમજવું.

(સંગહસ્સ આનુપુર્વીદવ્વાઈં કાલઓ કેવચ્ચિરં હોતિ ? સવ્વદ્ધા, ઇવં દોન્નિ વિ) પ્રશ્ન-હે ભગવન્ ! સંગ્રહનયમાન્ય સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કાળની અપેક્ષાએ કેટલા સમય સુધી આનુપૂર્વી રૂપે રહે છે ?

ઉત્તર-આનુપૂર્વીત્વ, અનાનુપૂર્વીત્વ અને અવક્તવ્યકત્વસામાન્યનો કદિ પણ વિચ્છેદ થતો નથી તેથી તેમનું અવસ્થાન (અસ્તિત્વ) સાર્વકાલિક હોય છે તે કારણે કાળની અપેક્ષાએ તેમનો વિરહકાળ પણ નથી. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે આનુપૂર્વી આદિનો ત્રણે કાળમાં સદ્ભાવ હોવાને કારણે વ્યવચ્છેદ (વિનાશ) સંભવી શકતો નથી. તે કારણે કાળની અપેક્ષાએ તેમના અન્તર (વિરહકાળ) નો પણ સદ્ભાવ હોતો નથી. આ પ્રકારે સૂત્રકારે અંતરદ્વારની પ્રશ્નણા કરી છે, એમ સમજવું એજ વાત સૂત્રકારે નીચેના સૂત્રપાઠ દ્વારા વ્યક્ત કરી છે—

(સંગહસ્સ આનુપુર્વીદવ્વાણં કાલઓ કેવચ્ચિરં અંતરં હોઈ ? નત્થિ અંતરં) આ સૂત્રપાઠનો ભાવાર્થ ઉપર આપ્યા પ્રમાણે સમજવો.

હવે ભાગદ્વારનું નિરૂપણ કરવામાં આવે છે—(સંગહસ્સ આનુપુર્વીદવ્વાઈં

રાશિર્ભવતિ તસ્ય ભાગત્રયકરણેન યસ્તૃતીયો ભાગઃ સંપદ્યતે તત્સંખ્યકાનિ આનુ-
પૂર્વીદ્રવ્યાણાં પ્રત્યેકદ્રવ્યાણિ ભવન્તિ, સંગ્રહસ્યાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કસ્મિન્ ભાવે
ભવન્તિ ?, इति प्रश्नः । उत्तरमाह—नियमात् सादिपारिणामिके भावे भवन्ति ।

સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા ? અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા ?) કયા સંખ્યાતવે
ભાગ મેં હૈં યા અસંખ્યાતવે ભાગ મેં હૈં ?—યા સંખ્યાત ભાગોં મેં હૈં ? યા
અસંખ્યાત ભાગોં મેં હૈં ? —

ઉત્તર—(નો સંખેજ્જહાગે હોજ્જા, નો અસંખેજ્જહાગે હોજ્જા,
નો સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા, નો અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા, નિયમા
તિભાગે હોજ્જા) સંગ્રહનય માન્ય સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં સે પ્રત્યેક
આનુપૂર્વીદ્રવ્ય—ત્રિપ્રદેશિક, ચતુષ્પ્રદેશિક આદિ અનન્ત પ્રદેશિક દ્રવ્ય—
નિયમ સે શેષ દ્રવ્યોં કે ત્રિભાગ મેં હૈં । અર્થાત્ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં ઓર
અવક્તવ્યકદ્રવ્યોં કો મિલાકર જો રાશિ ઉત્પન્ન હો ઉસ રાશિ કે ૩
ભાગ કરો—ઇનમેં જો તૃતીય ભાગ આવે તત્પ્રમાણ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં
પ્રત્યેક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય હૈં । (એવં દોન્નિવિ)—હસી પ્રકાર આનુપૂર્વી ઓર
અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કે વિષય મેં જાનનાં ચાહિયે । (સંગ્રહસ્સ આનુપૂર્વી

સેસદવ્યાણં કદ્ભાગે હોજ્જા ?) પ્રશ્ન—હે ભગવાન્ ! સંગ્રહનયસંમત સમસ્ત
આનુપૂર્વી દ્રવ્ય બાકીના દ્રવ્યોના કેટલાંમાં ભાગપ્રમાણ હોય છે ? (કિં સંખે-
જ્જહાગે હોજ્જા ? અસંખેજ્જહાગે હોજ્જા ? સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા ? અસં-
ખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા ?) શું સંખ્યાતમાં ભાગપ્રમાણ છે ? કે અસંખ્યાતમાં
ભાગપ્રમાણ છે ? કે સંખ્યાત ભાગપ્રમાણ સંખ્યાત ગણું છે ? કે અસંખ્યાત
ભાગપ્રમાણ—અસંખ્યાત ગણું છે ?

ઉત્તર—(નો સંખેજ્જહાગે હોજ્જા, નો અસંખેજ્જહાગે હોજ્જા, નો
સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા, નો અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા, નિયમા તિભાગે હોજ્જા)
સંગ્રહનયમાન્ય સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાંથી પ્રત્યેક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય—ત્રિપ્રદે-
શિક ચતુષ્પ્રદેશિક પંચપ્રદેશિક આદિ અનન્ત પ્રદેશિક પર્યન્તના પ્રત્યેક આનુ-
પૂર્વી દ્રવ્ય—નિયમથી જ બાકીના દ્રવ્યોના ત્રીજા ભાગ પ્રમાણ જ હોય છે.
એટલે કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોને એકત્ર કરવાથી જે
રાશિ બને છે તે રાશિના જે ત્રણ ભાગ કરવામાં આવે તેા તે પ્રત્યેક
ભાગપ્રમાણ (તે બાકીના દ્રવ્યોની રાશિના રાશિના ત્રીજા ભાગપ્રમાણ)
આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાંના પ્રત્યેક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય હોય છે (એવં દોન્નિવિ) એજ
પ્રમાણે અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોના વિષયમાં પણ સમજવું.

दब्बाइं कयरंमि भावे होज्जा ?) संग्रहनय मान्य आनुपूर्वी द्रव्य किस भाव वाले हैं ?

उत्तर- (नियमा साद्वारिणामए भावे होज्जा) संग्रहनय मान्य आनुपूर्वीद्रव्य नियम से साद्वारिणामिक भाववाले हैं । (एवं दोन्निवि) इसीप्रकार से दोनों आनुपूर्वी और अवक्तव्यकद्रव्यों के विषय में जानना चाहिये । (अप्पा बहुनत्थि) राशिगत द्रव्यों में अल्प बहुत्व नहीं माना गया है । क्योंकि इस संग्रहनय में राशिगत द्रव्यों का अस्तित्व व्यवहारनयरूप कल्पना मात्र से ही मान्य हुआ है । तात्पर्य कहने का यह है कि संग्रहनय की दृष्टि आनुपूर्वी द्रव्यों में अनेकत्व काल्पनिक है । क्योंकि व्यवहारनय इस बात को स्वीकार करता है कि आनुपूर्वी द्रव्य प्रत्येक अनेक हैं । इसलिये यह अनेकत्व सामान्यरूप आनुपूर्वीत्व की दृष्टि में विलीन के कारण है ही नहीं ।

शंका-यदि यही बात है तो फिर सूत्रकार ने इस संग्रहनय मान्य अनुगमके प्रकरण में “संग्रहस्य आनुपूर्वी द्रव्याणि किं संख्येयानि ” आदि बहुवचनान्त पद में आनुपूर्वीद्रव्य को क्यों रखा है ? “आनुपूर्वी-

प्रश्न-(संग्रहस्य आनुपूर्वी दब्बाइं कयरंमि भावे होज्जा ?) संग्रहनय-मान्य आनुपूर्वी द्रव्यो क्या भावथी युक्त होय छे ?

उत्तर-(नियमा साद्वारिणामिए भावे होज्जा) संग्रहनयसंभत आनुपूर्वी द्रव्यो नियमथी न स द्वावारिणामिक भाववाणां होय छे. (एवं दोन्नि वि) ओन प्रमाणे संग्रहनयसंभत अनानुपूर्वी द्रव्यो अने अवक्तव्यक द्रव्यो पणु नियमथी न साद्वारिणामिक भाववाणां होय छे (अप्पा बहु नत्थि) राशिगत द्रव्योमां अल्पबहुत्व मानवामां आयु नथी, कारण के आ संग्रहनयमां राशिगत द्रव्योनु अस्तित्व व्यवहार नयरूप कल्पना मात्रथी न मान्य थयुं छे. आ कथननु तात्पर्य ओ छे के संग्रहनयनी दृष्टिओ आनुपूर्वी द्रव्योमां अनेकत्व काल्पनिक छे, कारण के व्यवहार नय ओ वातनो स्वीकार करे छे, के प्रत्येक आनुपूर्वी द्रव्य अनेक छे. अने ते अनेकत्व सामान्य रूप आनुपूर्वीत्वनी दृष्टिमां विलीन थछ नवाने कारणे छे न नही.

शंका-ओ ओवी उकीकत होय तो सूत्रकारे आ संग्रहनयमान्य अनुगमना प्रकरणमां “संग्रहस्य आनुपूर्वी द्रव्याणि किं संख्येयानि ” इत्यादि बहुवचनान्त पदमां आनुपूर्वी द्रव्यने केन भूकयुं छे ? “ “ आनुपूर्वी द्रव्य ”

અન્યદ્ દ્વયમપિ પૂર્વવદ્ બોધ્યમ્ । રાશિગતદ્રવ્યાણાં પૂર્વોક્તમલ્પવહુત્વમત્ર નાશ્રી-
યતે, દ્રવ્યાણાં પ્રસ્તુતનયે વ્યવહારસંવૃત્તિમાત્રેણૈવ સત્ત્વાદિતિ । એવમનાનુપૂર્વ્યવક્ત-
વ્યકદ્રવ્યવિપયેઽપિ બોધ્યમ્ । અનુગમં સમાપયન્નાહ—‘ સે તં અણુગમે ’ ઇતિ । સ

દ્રવ્યમ્” એસા એક વચનાન્ત પદ પ્રયુક્ત કરના ચાહિયે । કયોંકિ સંગ્રહનય મુખ્યતયા સામાન્યત્વ હી માનતા હૈ ।

ઉત્તર—શંકા ઠીક હૈ—પરન્તુ સૂત્રકારને જો બહુવચનાન્ત આનુપૂર્વી પદ કો રખા હૈ ડસકા કારણ યહ હૈ કિ વે યહ પ્રકટ કરના ચાહતે હૈ વ્યવહારનય સે દ્રવ્યબહુત્વ મી હૈ । હસી વાત કી અપેક્ષા કરકે ડન્હોને યહાં આનુપૂર્વી મેં બહુવચન કા નિર્દેશ કિયા હૈ ।

શંકા—વ્યવહારનય કી અપેક્ષા સૂત્રકારને જબ નૈગમ વ્યવહારસંમત અનુગમ કા પ્રકરણ પ્રારંભ કિયા હૈ તબ વહાં દ્રવ્યબહુત્વ દિખલા હી દિયા હૈ ફિર હસે યહાં હસ એકત્વ કે પ્રકરણ મેં પ્રદર્શિત કરને કી વ્યા આવશ્યકતા થી ?

ઉત્તર—ઠીક હૈ—નહીં દિખલના ચાહિયે, પરન્તુ જો શિષ્ય વિસ્મરણ શીલ હૈ ડન્હે હસ વિષય કો પુનઃ સ્મૃત કરના કોઈ પુનરુક્તિ દોષ કી યાત નહીં હૈ । અતઃ સૂત્રકારને એસા કિયા હૈ । શિષ્યજન જિસ પ્રકાર સે વસ્તુ કા સ્વરૂપ સમજ સકે ડસી પ્રકાર સે ડન્હે સમજાના ગુરુકા કર્ત-

આ એક વચનાન્ત પદનો પ્રયોગ કેમ કર્યો નથી ? સંગ્રહનય મુખ્યત્વે સામાન્યત્વને જ માને છે તેથી અહીં એકવચનના પદનો પ્રયોગ થવો જોઈતો હતો.

ઉત્તર—શંકાકર્તાની શંકા બ્યાજબી છે. પરંતુ સૂત્રકારે જે બહુવચનાન્ત પદનો પ્રયોગ કર્યો છે—‘ આનુપૂર્વી’ દ્રવ્યો ’ એવો પ્રયોગ કર્યો છે—તેનું કારણ એ છે કે તેઓ એ વાત પ્રકટ કરવા માગે છે કે વ્યવહાર નયની અપેક્ષાએ દ્રવ્યબહુત્વ પણ છે. એજ વાતને અનુલક્ષીને સૂત્રકારે અહીં આનુપૂર્વી પદમાં બહુવચનનો નિર્દેશ કર્યો છે.

શંકા—નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અનુગમના પ્રકરણમાં જ સૂત્રકારે વ્યવહારનયની અપેક્ષાએ દ્રવ્યબહુત્વ પ્રકટ કર્યું છે. છતાં અહીં ફરીથી તેને એકત્વના પ્રકરણમાં પ્રદર્શિત કરવાની શી આવશ્યકતા હતી ?

ઉત્તર—વિસ્મરણશીલ શિષ્યને આ વિષયનું ફરી સ્મરણ કરાવવા માટે સૂત્રકારે અહીં તેનો ફરી ઉલ્લેખ કર્યો છે તેથી આ પ્રમાણે કરવામાં પુનરુક્તિ દોષની સંભાવના રહેતી નથી શિષ્યો જે પ્રકારે વસ્તુના સ્વરૂપને સમજી શકે એ પ્રકારે તેમને સમજાવવાનું તો શુરુનું કર્તવ્ય થઈ પડે છે.

एषोऽनुगमः । इत्थं संग्रहसम्मतोऽनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी समाप्तेति सूचयितुमाह—
'से तं संग्रहस्स' इत्यादि । सैषा संग्रहसम्मतोऽनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी । अनौप-
निधिकी द्रव्यानुपूर्वी समाप्तेति सूचयितुमाह—'से तं अणोवणिहिया' इत्यादि—
सैषाऽनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वीति ॥सू० ९६॥

इत्थमनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी निरूप्य सम्प्रति प्राङ्निर्दिष्टामौपनिधिकीं
द्रव्यानुपूर्वीं प्राह—

मूलम्—से किं तं ओवणिहिया दव्वाणुपुव्वी ? ओवणिहिया
दव्वाणुपुव्वी तिविहा पणत्ता, तं जहा—पुव्वाणुपुव्वી १, पच्छा-
णुपुव्वી २, अणाणुपुव्वી ३ ॥सू० ९७॥

व्य हो जाता है । (से तं अणुगमे । से तं संग्रहस्स अणोवणिहिया
दव्वाणुपुव्वी, से तं अणोवणिहिया दव्वाणुपुव्वी) इस प्रकार अनुगम के
प्रकरण को समाप्त करते हुये सूत्रकार कहते हैं कि यह पूर्वोक्तरूप से
संग्रहनय मान्य अनुगम का स्वरूप है । इसकी समाप्ति में संग्रहनय
संमत अनौपनिधि की द्रव्यानुपूर्वी का कथन समाप्त हो चुका । यही प्र-
क्रान्त अनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी का स्वरूप है । इसका विशेषरूप से
खुलाशा अर्थ नैगम व्यवहारनय संमत अनुगम के प्रकरण में लिखा
जा चुका है । ॥ सू० ९६ ॥

इस प्रकार से अनौपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वी का निरूपण करके अब
सूत्रकार पूर्व कथित औपनिधि की द्रव्यानुपूर्वी का कथन करते हैं

(से तं અણુગમે ! સેતં સંગ્રહસ્સ અણોવણિહિયા દવ્વાણુપુવ્વી, સે તં
અણોવણિહિયા દવ્વાણુપુવ્વી) હવે અનુગમના પ્રકરણનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્ર-
કાર કહે છે કે આ પ્રકારનું (ઉપર વર્ણવ્યા પ્રમાણેનું) સંગ્રહનયમાન્ય અનુ-
ગમનું સ્વરૂપ છે. અનુગમના સ્વરૂપનું નિરૂપણ થઈ જવાથી સંગ્રહનયમાન્ય
અનુગમનું સ્વરૂપ છે. અનુગમના સ્વરૂપનું નિરૂપણ થઈ જવાથી સંગ્રહનય-
સંમત અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું કથન અહીં પૂરું થાય છે. આ પ્રકારનું
પૂર્વપ્રસ્તુત અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ છે. તેનો વિશેષ ખુલાસો
નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અનુગમના પ્રકરણમાં આપવામાં આવેલો છે, ॥સૂ૬૬॥

આ પ્રમાણે અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર
પૂર્વકથિત ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું નિરૂપણ કરે છે—

છાયા—અથ કા સાં ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી? ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી ત્રિવિધા પ્રજ્ઞતા, તદ્યથા—પૂર્વાનુપૂર્વી૧, પશ્ચાનુપૂર્વી૨, અનાનુપૂર્વી૩૨૩ ॥મૂ૦ ૧૭॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

અથ કા સાં ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી? ઇતિ શિષ્ય પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—
ઔપનિધિકી=ઉપનિધિઃ=સ્થાપનં નિર્માણમિત્યર્થઃ, સ પ્રયોજનમસ્યા સા, દ્રવ્યા-
નુપૂર્વી=દ્રવ્યવિષયાઽઽનુપૂર્વી ત્રિપ્રકારા પ્રોક્તા । તદ્યથા—પૂર્વાનુપૂર્વી=વિવક્ષિત-
ધર્માસ્તિકાયાદિદ્રવ્યવિશેષસમુદાયે યઃ પૂર્વઃ=પ્રથમસ્તસ્માદારભ્ય યા આનુપૂર્વી=
અનુક્રમઃ પરિપાટી ત્રા નિશ્ચિન્યતે સા પૂર્વાનુપૂર્વી? । પશ્ચાનુપૂર્વી=તત્રૈવ દ્રવ્યવિશેષ-

“સે કિં તં ઔવણિહિયા” ઇત્યાદિ

શબ્દાર્થ—સે કિં તં ઔવણિહિયા દ્રવ્યાનુપૂર્વી) હે ભદન્ત ! ઔ-
પનિધિ દ્રવ્યાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(ઔવણિહિયા દ્રવ્યાનુપૂર્વી ત્રિવિધા પળ્લતા) ઔપનિધિ
દ્રવ્યાનુપૂર્વી ત્રીન પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ । (તંજહા) વે ઉસકે ૩ પ્રકાર યે
હૈ—(પુવ્વાણુપુવ્વી ૧, પચ્છાણુપુવ્વી ૨, અણાણુપુવ્વી ૩ ય) ૧ પૂર્વાનુપૂર્વી ૨
પશ્ચાનુપૂર્વી ઔર ૩, અનાનુપૂર્વી ઉપનિધિ કા અર્થ સ્થાપન યા નિર્માણ
હૈ । યહ જિસકા પ્રયોજન હો ઉસકા નામ ઔપનિધિકી હૈ । યહ દ્રવ્ય
વિષયક ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી-પૂર્વોક્તરૂપ સે ૩ ત્રીન પ્રકાર કી હૈ ।
વિવક્ષિત ધર્માસ્તિકાયાદિ દ્રવ્ય વિશેષ કે સમુદાય મેં જો પૂર્વ પ્રથમ
દ્રવ્ય હૈ ઉસસે લેકર જો આનુપૂર્વી-અનુક્રમ-પરિપાટી નિશ્ચિત કી

“સે કિં તં ઔવણિહિયા” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ઔવણિહિયા દ્રવ્યાનુપૂર્વી ?) હે ભગવન ! ઔપ-
નિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ઔવણિહિયા દ્રવ્યાનુપૂર્વી ત્રિવિધા પળ્લતા) ઔપનિધિકી દ્રવ્યા-
નુપૂર્વી ત્રણ પ્રકારની કહી છે. (તંજહા) તે ત્રણ પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે—
(પુવ્વાણુપુવ્વી, પચ્છાણુપુવ્વી, અણાણુપુવ્વી ય) (૧) પૂર્વાનુપૂર્વી, (૨) પશ્ચાનુ-
પૂર્વી, અને (૩) અનાનુપૂર્વી.

ઉપનિધિ એટલે સ્થાપના અથવા નિર્માણ તે સ્થાપના અથવા નિર્માણ
નેનું પ્રયોજન હોય છે તેને ઔપનિધિકી કહે છે. આ દ્રવ્યવિષયક ઔપ-
નિધિકીના ઉપર મુજબ ત્રણ પ્રકાર છે. વિવક્ષિત ધર્માસ્તિકાયાદિ દ્રવ્ય-
વિશેષના સમુદાયમાં જે પૂર્વ (પ્રથમ દ્રવ્ય) છે ત્યાંથી શરૂ કરીને જે આનુ-
પૂર્વી (અનુક્રમ, પરિપાટી) નિશ્ચિત કરવામાં આવે છે—રાખવામાં આવે છે

સમુદાયે યઃ પાશ્ચાત્યઃ=અન્તિમસ્તસ્માદારમ્ય વ્યતિક્રમેણ યા ઽઽનુપૂર્વીનિશ્ચિપ્તે
સા પશ્ચાનુપૂર્વી૨ । અનાનુપૂર્વી-પૂર્વાનુપૂર્વીપશ્ચાનુપૂર્વીમ્યાં મિન્નસ્વરૂપા યાઽઽનુ-
પૂર્વી સાઽનાનુપૂર્વી ॥ સૂ૦ ૯૭ ॥

પૂર્વાનુપૂર્વાદિભેદત્રયં નિરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં પુઞ્વાનુપુઞ્વી ? પુઞ્વાણુપુઞ્વી—ધમ્મત્થિકાયે
અધમ્મત્થિકાયે, આગાસત્થિકાયે, જીવત્થિકાયે, પોગ્ગલત્થિ-
કાયે, અદ્ધાસમયે । સે તં પુઞ્વાણુપુઞ્વી । સે કિં તં પચ્છાણુ-
પુઞ્વી ? પચ્છાણુપુઞ્વી—અદ્ધાસમય, પોગ્ગલત્થિકાણ, જીવત્થિ-
કાણ, આગાસત્થિકાણ, અહમ્મત્થિકાણ, ધમ્મત્થિકાણ । સે તં
પચ્છાણુપુઞ્વી । સે કિં તં અણાણુપુઞ્વી ? અણાણુપુઞ્વી—एयाए
એવ एगाइयाए एगुत्तरियाए छगच्छगयाए सेढीए अण्णमण्ण-
कभासो दुरुवूणो । સે તં અણાણુપુઞ્વી ॥સૂ૦ ૯૮॥

છાયા—અથ કા સા પૂર્વાનુપૂર્વી ? પૂર્વાનુપૂર્વી—ધર્માસ્તિકાયઃ અધર્માસ્તિ-
કાયઃ આકાશસ્તિકાયો જીવાસ્તિકાયઃ પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ અદ્ધાસમયઃ । સૈવા પૂર્વા-

ની જાતી છે—રહી જાતી છે વહ પૂર્વાનુપૂર્વી છે । તથા ડસી દ્રવ્ય વિશેષ
કે સમુદાય મેં જો પાશ્ચાત્ય-અન્તિમદ્રવ્ય છે—ડસસે લેકર વ્યત્તિક્રમ સે
જો આનુપૂર્વી નિશ્ચિત્ત કી જાતી છે વહ પશ્ચાનુપૂર્વી છે । પૂર્વાનુપૂર્વી ઇવં
પશ્ચાનુપૂર્વી ઇન ડોનોં સે મિન્ન સ્વરૂપ વાલી જો આનુપૂર્વી છે વહ
અનાનુપૂર્વી છે । ॥ સૂ૦ ૯૭ ॥

પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ જો ત્રીન ભેદ હેં ડનકા સ્વરૂપ કયા છે ઇસ વાત
કો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હેં—“સે કિં તં પુઞ્વાનુપુઞ્વી” ઇત્યાદિ ।

તેનું નામ પૂર્વાનુપૂર્વી છે. તથા એજ દ્રવ્યવિશેષના સમુદાયમાં જે પાશ્ચાત્ય-
અન્તિમ દ્રવ્ય છે, ત્યાંથી શરૂ કરીને એટલે કે ઉલટા ક્રમથી જે આનુપૂર્વી
રાખવામાં આવે છે તેને પશ્ચાનુપૂર્વી કહે છે. પૂર્વાનુપૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વી, આ
અન્નેથી ભિન્ન સ્વરૂપવાળી જે આનુપૂર્વી છે તેને અનાનુપૂર્વી કહે છે. ॥સૂ૦ ૯૭॥

હવે સૂત્રકાર પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ ત્રણ બેદોના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં પુઞ્વાનુપુઞ્વી” ઇત્યાદિ—

પૂર્વી. અથ કા સા પશ્ચાનુપૂર્વી? પશ્ચાનુપૂર્વી-અદ્દાસમયઃ, પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ, જીવાસ્તિકાયઃ, આકાશાસ્તિકાયઃ, અધર્માસ્તિકાયઃ, ધર્માસ્તિકાયઃ. સૈષા પશ્ચાનુપૂર્વી. અથ કા સા અનાનુપૂર્વી? અનાનુપૂર્વી-एतस्यामेव एकादिकायामेको-त्तरिकायां षड्गच्छतायां श्रेण्यामन्योन्याभ्यासो द्विरूपोनः। सैषाऽनानुपूर्वी॥सू. ९८॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

અથ કા સા પૂર્વાનુપૂર્વી? ઇતિ શિષ્ય પ્રશ્નઃ। ઉત્તરમાહ—‘પુવ્વાણુપુવ્વી’ ઇત્યાદિ। પૂર્વાનુપૂર્વી-ધર્માસ્તિકાયઃ ૧, અધર્માસ્તિકાયઃ ૨, આકાશાસ્તિકાયઃ ૩, જીવાસ્તિકાયઃ ૪, પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ ૫, અદ્દાસમયઃ ૬। ધર્માસ્તિકાયાદીનાં વ્યા-
ख्याऽऽचाराङ्गसूत्रस्य प्रथमश्रुतस्कन्धे मत्कृताचारचिन्तामणिटीकायां द्रष्टव्या।
तथा-अद्दासमयः-अद्दारूपः समय इति समासः। अद्दाशब्दः कालबीचकः।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં પુવ્વાણુપુવ્વી?) હે ભદન્ત । પૂર્વાનુપૂર્વી કા
કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(પુવ્વાણુપુવ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈ—
(ધમ્મત્થિકાયે, અધમ્મત્થિકાયે, આગાસત્થિકાયે જીવત્થિકાયે, પોગ્ગલત્થિકાયે’ અદ્દાસમયે) ૧ ધર્માસ્તિકાય, ૨ અધર્માસ્તિકાય, ૩ આકાશાસ્તિકાય, ૪ જીવાસ્તિકાય ૫ પુદ્ગલાસ્તિકાય ઓર ૬ અદ્દા સમય હસ પ્રકાર કી પરિપાટી સે હન હહ દ્રવ્યો કા નિક્ષેપણ કરના યહ પૂર્વાનુપૂર્વી હૈ। હન ધર્માસ્તિકાય આદિ કો કા કયા સ્વરૂપ હૈ હસ વાત કો જાનને કે લિયે આચારાંગ-સૂત્ર કે પ્રથમ સ્કંધ મેં મત્કૃત આચારચિન્તામણિ ટીકા દેખની ચાહિ-
યે। અદ્દારૂપ જો સમય હૈ ઉસકા નામ અદ્દા સમય હૈ। અદ્દા શબ્દ

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં પુવ્વાણુપુવ્વી?) હે ભગવન્ । પૂર્વાનુપૂર્વીનું
સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(પુવ્વાણુપુવ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે. (ધમ્મત્થિકાયે, અધમ્મત્થિકાયે, આગાસત્થિકાયે, જીવત્થિકાયે, પોગ્ગલત્થિકાયે, અદ્દાસમયે) (૧) ધર્માસ્તિકાય, (૨) અધર્માસ્તિકાય, (૩) આકાશાસ્તિકાય, (૪) જીવાસ્તિકાય, (૫) પુદ્ગલાસ્તિકાય અને (૬) અદ્દાસમય (કાળ), આ પ્રકારની પરિપાટીથી (અનુક્રમથી) છ દ્રવ્યોનું નિક્ષેપણ કરવું તેનું નામ પૂર્વાનુપૂર્વી છે.

આચારાંગ સૂત્રની આચારચિન્તામણિ નામની મેં જે ટીકા લખી છે તેના પહેલા સ્કંધમાં ધર્માસ્તિકાય આદિના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે તેા જિજ્ઞાસુ પાઠકોએ ત્યાંથી તે વાંચી લેવું. અદ્દા રૂપ જે સમય છે તેનું નામ અદ્દાસમય છે, અદ્દા શબ્દ કાળવાચક છે, અને સમય શબ્દ

समयशब्दोऽनेकार्थकः शपथादिष्वपि वर्तते, अतः कालमर्थं बोधयितुम्—‘अद्धा’ इति विशेषणोपादानम् । पट्टसाटिकादिपाटनदृष्टान्तसिद्धः सर्वसूक्ष्मः पूर्वापरकोटि-विप्रमुक्तो वर्तमानः एकः कालांश इति ‘अद्धासमय’ शब्दार्थो बोध्यः, अत एवात्र अस्तिकायत्वाभावः, बहुप्रदेशवति द्रव्य एव तस्य सद्भावात् । इह तु नास्ति प्रदेशबाहुल्यम्,—अतीतानागतयोर्विनष्टानुत्पन्नत्वेन एकमात्रस्य वर्तमानरूपस्य समयस्य प्रदेशस्य सद्भावात् । ननु समयबहुत्वाभावे ‘समया वलियमुहुत्ता

काल वाचक है और समय शब्द अनेकार्थक है । क्योंकि समय शब्द का प्रयोग शपथ आदि अनेक अर्थों में भी होता है । अतः कालरूपार्थ का वह यहाँ बोधक है, इस बात को बोध कराने के निमित्त सूत्रकार ने उसका विशेष अद्धापद रखा है । वर्तमान एक कालांश का नाम अद्धा समय है । यह अत्यंत सूक्ष्म है । पूर्व और अपर कोटि से यह रहित होता है । इसकी सिद्धि पट्ट साटिकादि के फाड़ने रूप दृष्टान्त से होती है । अर्थात् सर्व सूक्ष्मातिसूक्ष्म जो वर्तमान कालांश है वही अद्धा समय का वाच्यार्थ है । इसे अस्तिकाय में परिगणित नहीं किया गया है । क्यों कि इसमें बहुप्रदेशत्व का अभाव है । जो बहुप्रदेश वाले-होते हैं उन्हें ही अस्तिकाय कहा गया है । अतीतकाल विनष्ट हो जाने के और भविष्यत् काल अनुत्पन्न होने के कारण एकमात्र वर्तमानरूपसमय प्रदेश का सद्भाव है इसलिये उसमें प्रदेशबाहुल्य नहीं है ।

शंका—समय की बहुता के आभाव में “समयावलियमुहुत्ता दिव-

अनेकार्थक છે, કાશ્ણ કે સમય શબ્દનો પ્રયોગ શપથ આદિ અनेક અર્થોમાં પણ થાય છે. તેથી તે પદ અહીં કાળરૂપ અર્થનું બોધક છે, તે વાતને સમજાવવાને માટે સૂત્રકારે તેનું વિશેષ અદ્ધાપદ રાખ્યું છે. વર્તમાન એક સમયનું નામ અદ્ધાસમય છે. તે અત્યંત સૂક્ષ્મ છે. પૂર્વ અને અપર કોટિથી તે રહિત હોય છે. તેની સિદ્ધિને માટે પટ્ટ સાટિકા આદિ ફાડવાનું દૃષ્ટાન્ત આપવામાં આવે છે એટલે કે સર્વસૂક્ષ્માતિસૂક્ષ્મ જે વર્તમાન કાલાંશ છે એજ અદ્ધાસમયના વાચ્યાર્થ રૂપ છે. તેને અસ્તિકાયમાં ગણાવવામાં આવેલ નથી કારણ કે તેમાં બહુ પ્રદેશત્વનો અભાવ છે. જે બહુ પ્રદેશવાળાં હોય છે તેમને જ અસ્તિકાય કહેવાય છે. અતીતકાળ (અતીત થઈ ગયેલો કાળ) વિનષ્ટ થઈ જવાને કારણે અને ભવિષ્યકાળ અનુત્પન્ન હોવાને કારણે એક માત્ર વર્તમાન રૂપ સમયપ્રદેશનો જ સદ્ભાવ છે, તેથી તેમાં પ્રદેશબાહુલ્ય નથી.

શંકા—સમયની બહુતાનો જે અભાવ માનવામાં આવે, તે “સમયાવ-

દિવસમહોરત્તપક્ષમાસાય' इत्यागमसिद्ध आवलिकादिकालः कथमुपपद्येत ? इति चेत्, उच्यते-व्यवहारनयमाश्रित्य-आवलिकादिसत्ता स्वीक्रियते । निश्चय-नयमते तु तदसत्त्वमेव । नहि पुद्गलस्कन्धे परमाणुसङ्घात इवावलिकादिषु समय-सङ्घातः कश्चिदवस्थितोऽस्ति, अतो व्यवहारनयमतेन तत्कथनमस्तीति न कश्चिद्-दोष इति । तदेतदुपसंहरन्नाह-'से तं' इत्यादि, सैषा पूर्वानुपूर्वीति । अय-पश्चानुपूर्वी' निरूपयितुमाह-'से किं तं' इत्यादि । अर्थ का सा पश्चानुपूर्वी ? इति शिष्य प्रश्नः । उत्तरमाह-'पच्छानुपुर्वी' इत्यादिना । पश्चानुपूर्वीहि- 'अद्धासमयः, पुद्गलास्तिकायः, जीवास्तिकायः, आकाशास्तिकायः, अधर्मास्ति-

स महोरत्तपक्खमासाय" इत्यादि आवलिकारूप काल जो कि आगम सिद्ध है कैसे संगत माना जा सकता है ?

उत्तर—व्यवहारनय को लेकर ही आवलिकारूप की सत्ता स्वी-कृत हुई है । निश्चयनय के मत को लेकर नहीं । क्योंकि इस मत में तो आवलिकादि रूप कालका सत्त्व नहीं माना गया है । जिस प्रकार से पुद्गलस्कंध में परमाणुओं का संघात अवस्थित है उस प्रकार से आव-लिकादिकों में कोई समय संघात अवस्थित नहीं है । इसलिये मानना चाहिये यह आवलिकारूप काल का कथन व्यवहारनय के मत से है । इसलिये इसमें कोई दोष नहीं है । (से तं पुंव्वानुपुर्वी) इस प्रकार यह पूर्वानुपूर्वी का स्वरूप है । “से किं तं पच्छानुपुर्वी” पश्चानुपूर्वी क्या है ?

उत्तर—(पच्छानुपुर्वी) पश्चानुपूर्वी इस प्रकार से हैं—(अद्धासमय

લિયમુદ્દત્તા દિવસમહોરત્તપક્ષમાસાય યં” આવલિકા, મુહૂર્ત, દિવસ, રાત, પક્ષ, માસ આદિ રૂપ કાળ કે જે આગમ દ્વારા સિદ્ધ થયેલ છે, તેને કેવી રીતે સંગત માની શકાય ?

ઉત્તર—વ્યવહાર નયની દૃષ્ટિએ જ આવલિકાદિ રૂપ કાળની સત્તા (સમયનું અસ્તિત્વ) સ્વીકૃત થઇ છે—નિશ્ચયનયની માન્યતા અનુસાર તો આવ-લિકા આદિ રૂપ કાળનું અસ્તિત્વ જ સ્વીકારવામાં આવ્યું નથી જે પ્રકારે પુદ્ગલસ્કંધમાં પરમાણુઓનો સંઘાત (સંયોગ) અવસ્થિત (વિદ્યમાન) છે, એ પ્રમાણે આવલિકાદિકોમાં કોઈ સમયનો સંઘાત અવસ્થિત નથી તેથી એવું માનવું જોઈએ કે આ આવલિકાદિ રૂપ કાળનું કથન વ્યવહાર નયના મતાનુસારનું કથન છે. તે કારણે આ પ્રકારના કથનમાં કોઈ દોષ નથી. (સે તં પુવ્વાનુપુર્વી) આ પ્રકારનું ‘પૂર્વાનુપૂર્વી’નું સ્વરૂપ છે.

પ્રશ્ન—હે ભગવન્ ! પશ્ચાનુપૂર્વી’નું કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—(પચ્છાણુપુર્વી) પશ્ચાનુપૂર્વી આ પ્રકારની કહી છે—(અદ્ધાસમય,

કાયઃ, ધર્માસ્તિકાયઃ, इति व्युत्क्रमेण निर्दिष्टा । तदेतदुपसंहरन्नाह-‘ से तं ’
 इत्यादि, सैषा पश्चानुपूर्वीति । अथानानुपूर्वीं निरूपयति-‘ से किं तं ’ इत्यादिना ।
 अथ का सा अनानुपूर्वी ?-न विद्यते आनुपूर्वी=पूर्वानुपूर्वी पश्चानुपूर्वीद्वयरूपा
 यस्यां सा तथा विवक्षितपदानामनन्तरोक्तक्रमद्वयमुमुल्लङ्घ्य परस्परसादृशैः
 संभवद्भिर्भेदकैर्यस्यां विरचना क्रियते साऽनानुपूर्वीत्यर्थः । सा हि-एतस्याम्=अन-
 न्तराधिकृतधर्मास्तिकायादिसम्बन्धिन्याम्, एकादिकायाम्=एक आदिर्यस्यां सा
 तथा तस्याम्, पुनः-एकोत्तरिकायाम्-एकैक उत्तरः प्रवर्धमानो यस्यां सा तथा
 पागलस्थिकाए, जीवस्थिकाए आगासस्थिकाए, अहमस्थिकाए धम्मस्थि-
 काए) अद्वासमय, पुद्गलास्तिकाय, जीवास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, अध-
 र्मास्तिकाय, धर्मास्तिकाय । इस प्रकार जो धर्मादिक દ્રવ્યોં का व्युत्क्रम
 से निर्देश है (से तं पच्छाणुपुव्वी) वह पश्चानुपूर्वी है । (से किं अणाणु-
 पुव्वी) हे भदन्त ! अनानुपूर्वी का क्या स्वरूप है ? (अणाणुपुव्वी)

उत्तर- अनानुपूर्वी का स्वरूप इस प्रकार है- (एयाए चेव एगाइ-
 याए एगुत्तरियाए छ गच्छगयाए सेढीए अणमण्णव्भासो दूरूवूणो) जिस
 में-पूर्वानुपूर्वी और पश्चानुपूर्वी ये दोनों नहीं हैं उसका नाम अनानुपूर्वी
 है । इसमें विवक्षित धर्मादिक पदों के अनन्तरोक्त क्रमद्वय को उल्लं-
 घन करके परस्पर सम्भवित भंगों से उन पदों की विरचना की जाती है
 इस अनानुपूर्वी में जो श्रेणी स्थापित की जाती है उसमें सबसे पहिले
 एक संख्या रखी जाती हैं । बाद में एक एक की उत्तरोत्तर वृद्धि

पागलस्थिकाए, जीवस्थिकाए, आगासस्थिकाए, अहम्मस्थिकाए, धम्मस्थिकाए)
 અદ્વાસમય (કાળ), પુદ્ગલાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, અધર્મા-
 સ્તિકાય અને ધર્માસ્તિકાય, આ પ્રકારે ધર્માસ્તિકાય આદિ દ્રવ્યોના જે
 ઉલ્લાસમૂર્વક નિર્દેશ થાય છે, (સે તં પચ્છાણુપુવ્વી) તેનું નામ પશ્ચાનુપૂર્વી છે ?

પ્રશ્ન-(સે કિં અણાણુપુવ્વી) હે ભગવન્ ! અનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(અણાણુપુવ્વી) અનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે-(એયાએ ચેવ
 એગાહયાએ એગુત્તરિયાએ છગચ્છગયાએ સેઢીએ અણમણ્ણવ્ભાસો દૂરૂવૂણો) જેમાં
 પૂર્વાનુપૂર્વી અને પશ્ચાનુપૂર્વી એ બન્ને નથી, તેનું નામ અનાનુપૂર્વી છે.
 તેમાં ધર્માસ્તિકાય આદિ પદોના ઉપયુક્ત બન્ને ક્રમનું ઉલ્લંઘન કરીને
 પરસ્પર સંભવિત ભંગો વડે તે પદોની વિરચના કરાય છે. આ અનાનુપૂ-
 ર્વીમાં જે શ્રેણી સ્થાપિત કરવામાં આવે છે તેમાં સૌથી પહેલાં એક સંખ્યા
 રાખવામાં આવે છે, ત્યાર બાદ છ સંખ્યા સુધી ઉત્તરોત્તર એકની વૃદ્ધિ

તસ્યામ્, પુનઃ-પદ્મગચ્છગતાયામ્-ષણ્ણાં ગચ્છઃ=સમુદાયઃ-પદ્મચ્છસ્તં ગતા=માત્રા
 પદ્મચ્છગતા તસ્યાં-ધર્માસ્તિકાયાદિદ્રવ્યષટ્કવિષયાયાં, શ્રેણ્યાં=પદ્મકૌ અન્યોન્યા-
 મ્યાસઃ-અન્યોઽન્યં પરસ્પરમ્-અભ્યાસો=ગુણનમ્, અન્યોઽન્યામ્યાસઃ-પરસ્પરગુણ-
 નરૂપઃ, તથા-દ્વિરૂપોનઃ=આદ્યન્તવિવક્ષારહિતઃ, એવંરૂપાઽનાનુપૂર્વીં બોધ્યા।
 અયમભિપ્રાયઃ-પ્રથમં વ્યવસ્થાપિતૈકકાયા અન્તે ચ સ્થાપિતષટ્સંખ્યાયાઃ
 (૧-૨-૩-૪-૫-૬) ધર્માસ્તિકાયાદિ દ્રવ્યષટ્કવિષયાયાઃ પદ્મે યાં પરસ્પર-
 ગુણને મદ્મકસંખ્યા ભવતિ, સા આદ્યન્તમદ્મકદ્વયરહિતા અનાનુપૂર્વીં બોધ્યેતિ।
 અસ્ય સૂત્રસ્યેદં તાત્પર્યમ્-પૂર્વાનુપૂર્વ્યાં દ્વિ-પ્રથમં તાવદ્ ધર્માસ્તિકાયઃ સ્થાપયિ-
 તવ્યઃ, તદનુ-અધર્માસ્તિકાયઃ તત આકાશાસ્તિકાયઃ, इत्येवं क्रमेण 'अद्धासमयः'
 इत्येतत्पर्यन्तं स्थापना कर्तव्या। पश्चानुपूर्व्यां तु प्रथमम् अद्धासमयो व्यवस्थापनीयः,
 तदनु पुद्गलास्तिकायः, ततो जीवास्तिकायः, इत्येवं व्युत्क्रमेण 'धर्मास्तिकायः'

છહ સંખ્યા તક હોતી ચલી જાતી હૈ, જૈસે ૧-૨-૩-૪-૫-૬, ફિર इनमें
 परस्पर में गुणा क्रिया जाता है जैसे $1 \times 2 = 2 \times 3 = 6$, $6 \times 4 = 24$, $24 \times 5 = 120$,
 $120 \times 6 = 720$, इस प्रकार अन्योन्याभ्यस्तराशि बन जाती है। इसमें से
 आदि अन्त के दो भंग करने पर अनानुपूर्वीं बन जाती है इस सूत्र का
 तात्पर्य यह है कि पूर्वानुपूर्वीं में पहिले धर्मास्तिकाय स्थापित हो जाता
 है, उसके बाद अधर्मास्तिकाय, उसके बाद आकाशास्तिकाय' उसके
 बाद जीवास्तिकाय, फिर पुद्गलास्तिकाय और फिर अद्धा समय। इस
 क्रमसे यहां छह द्रव्यों का स्थापन होता है। तथा पश्चानुपूर्वीं में पहिले अद्धा
 समय 'फिर पुद्गलास्तिकाय, बाद में जीवास्तिकाय, फिर आकाशास्तिकाय

થતી રહે છે, જેમ કે ૧-૨-૩-૪-૫-૬ ત્યાર બાદ તેમાં પરસ્પરનો ગુણકાર
 કરવામાં આવે છે. જેમ કે $1 \times 2 = 2$, $2 \times 3 = 6$, $6 \times 4 = 24$, $24 \times 5 = 120$,
 $120 \times 6 = 720$ આ રીતે અન્યોન્યાભ્યસ્ત રાશિ બની જાય છે. તેમાંથી શરૂ-
 આતનો એક ભાગ અને અન્ત્ય એક ભાગ બોલો કરી નાખવાથી અનાનુ-
 પૂર્વીં બની જાય છે આ સૂત્રનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—

પૂર્વાનુપૂર્વીંમાં પહેલાં ધર્માસ્તિકાય સ્થાપિત થાય છે, ત્યાર બાદ
 અધર્માસ્તિકાય, ત્યારબાદ આકાશાસ્તિકાય, ત્યાર બાદ જીવાસ્તિકાય, ત્યાર
 બાદ પુદ્ગલાસ્તિકાય અને ત્યાર બાદ અદ્ધાસમય (કાળ) સ્થાપિત થાય છે.
 આ ક્રમે છ દ્રવ્યોનું પૂર્વાનુપૂર્વીંમાં સ્થાપન થાય છે.

પશ્ચાનુપૂર્વીંમાં પહેલાં અદ્ધા સમય, ત્યાર બાદ પુદ્ગલાસ્તિકાય, ત્યાર
 બાદ જીવાસ્તિકાય, ત્યાર બાદ આકાશાસ્તિકાય, ત્યાર બાદ અધર્માસ્તિકાય

इत्येतत्पर्यन्तं स्थापना कर्तव्या । अनानुपूर्व्यां तु पूर्वानुपूर्वीपश्चानुपूर्वीस्थक्रम-
व्युत्क्रमोभयं परित्यज्य यथारुचि स्थापनाकर्तव्येति । प्रस्तुतसूत्रमुपसंहरन्नाह—
'से तं' इत्यादि । सैषाऽनानुपूर्वीति ॥सू० ९८॥

इत्थं धर्मास्तिकायादीनि षडपि द्रव्याणि पूर्वानुपूर्वादित्वेनोदाहृतानि ।
सम्प्रत्येकं पुद्गलास्तिकायमधिकृत्याह—

मूलम्—अहवा ओवणिहिया दव्वाणुपुव्वी तिविहा पणत्ता,
તં જહા—પુવ્વાણુપુવ્વી પચ્છાણુપુવ્વી અણાણુપુવ્વી । સે કિં તં
પુવ્વાણુપુવ્વી ? પુવ્વાણુપુવ્વી પરમાણુપોગ્ગલે દુપ્પણ્ણસિણ તિપ્પ-
ણ્ણસિણ જાવ દસપણ્ણસિણ સંઘિજ્જપણ્ણસિણ અસંઘિજ્જપણ્ણસિણ
અણંતપણ્ણસિણ । સે તં પુવ્વાણુપુવ્વી । સે કિં તં પચ્છાણુપુવ્વી ?
પચ્છાણુપુવ્વી અણંતપણ્ણસિણ અસંઘિજ્જપણ્ણસિણ સંઘિજ્જપણ્ણસિણ
જાવ દસપણ્ણસિણ જાવ તિપ્પણ્ણસિણ દુપ્પણ્ણસિણ પરમાણુપોગ્ગલે ।
સે તં પચ્છાણુપુવ્વી । સે કિં તં અણાણુપુવ્વી ? અણાણુપુવ્વી ણ્યાણ
ચેવ ણગાઢ્યાણ ણુત્તરિયાણ અણંતગચ્છગયાણ સેઢીણ અણ-
મણ્ણબ્ભાસો દુરૂવ્વુણો । સે તં અણાણુપુવ્વી । સે તં ઓવણિહિયા
દવ્વાણુપુવ્વી । સે તં જાણયસરીરંભવિયસરીરવઢરિત્તા

बाद अधर्मास्तिकाय और फिर धर्मास्तिकाय इस व्युत्क्रम से ६ द्रव्यों
का स्थापन किया जाता है । परन्तु अनानुपूर्वी में इन दोनों प्रकार के
पूर्वानुपूर्वी पश्चानुपूर्वीरूप क्रम व्युत्क्रम का परित्यागकर यथारुचि ६ द्रव्य
स्थापित किये जाते हैं । (से तं अणाणुपुव्वी) इस प्रकार यह अनानुपूर्वी
का स्वरूप है । ॥ सू० ९८ ॥

અને ત્યાર બાદ ધર્માસ્તિકાય, આ પ્રકારના ઉદ્ઘટા ક્રમથી ૬ દ્રવ્યોનું સ્થાપન
કરાય છે પરન્તુ અનુપૂર્વીમાં તો પૂર્વાનુપૂર્વીની જેમ છ દ્રવ્યોના સીધા
ક્રમનો અને પશ્ચાનુપૂર્વીની જેમ તેમના ઉદ્ઘટા ક્રમનો અને યથારુચિ
(મનને ગમે તે રીતે) છ દ્રવ્યોનું સ્થાપન કરવામાં આવે છે (સે તં અણાણુ-
પુવ્વી) આ પ્રકારનું અનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ છે. ॥સૂ.૦૬૮॥

દઘ્વાણુપુઘ્વી । સે તં નો આગમઓ દઘ્વાણુપુઘ્વી । સે તં
દઘ્વાણુપુઘ્વી ॥સૂ૦ ૧૧॥

ઢાયા—અથવા—ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી ત્રિવિધા મજ્ઞતા, તથા—પૂર્વાનુ-
પૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વી । અથ કા સા પૂર્વાનુપૂર્વી? પૂર્વાનુપૂર્વી-પરમાણુ-
પુદ્ગલો દ્વિપ્રદેશિકઃ ત્રિપ્રદેશિકો યાવત્ દશપ્રદેશિકઃ સંખ્યેયપ્રદેશિકઃ અસંખ્યેય-
પ્રદેશિકઃ અનન્તપ્રદેશિકઃ । સૈવા પૂર્વાનુપૂર્વી । અથ કા સા પશ્ચાનુપૂર્વી? પશ્ચાનુ-

અથ સૂત્રકાર ઁક પુદ્ગલાસ્તિકાય કે ઉપર તીનોંકી ઘટના કરતે હૈ—
“અહવા ઓવણિહિયા” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(અહવા) અથવા—(ઓવણિહિયા દઘ્વાણુપુઘ્વી) ઔપનિધિ
કી દ્રવ્યાનુપૂર્વી (તિવિહા પળ્ળતા) તીન પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ । (તં જહા)
વે પ્રકાર યે હૈ—(પુઘ્વાણુપુઘ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી (પચ્છાણુપુઘ્વી) પશ્ચાનુપૂર્વી
(અણાણુપુઘ્વી) ઔર અનાનુપૂર્વી । (સે કિં તં પુઘ્વાણુપુઘ્વી?) હે મદન્ત !
પૂર્વ પ્રકાન્ત પૂર્વાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ ? (પુઘ્વાણુપુઘ્વી)

ઉત્તર—પૂર્વાનુપૂર્વી ઇસ પ્રકાર સે હૈ—(પરમાણુપુગ્ગલે દુષ્પણસિણ તિષ્પ-
ણસિણ જાવ દસપણસિણ સંસ્થિજ્જપણસિણ અસંસ્થિજ્જપણસિણ અણંત-
પણસિણ) પરમાણુપુદ્ગલ, દ્વિપ્રદેશી, ત્રિપ્રદેશી યાવત્ દશપ્રદેશી, સંખ્યા-
તપ્રદેશી, અસંખ્યાત પ્રદેશી, અનન્તપ્રદેશી સ્કંધ—ઇસ ક્રમસે યહ પુદ્ગલા-

હવે સૂત્રકાર ઁક પુદ્ગલાસ્તિકાય ઉપર આ ત્રણેની ઘટના (સ્થાપના) કરે હે—

“અહવા ઓવણિહિયા” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(અહવા) અથવા (ઓવણિહિયા દઘ્વાણુપુઘ્વી) ઔપનિધિકી
દ્રવ્યાનુપૂર્વી (તિવિહા પળ્ળતા) ત્રણ પ્રકારની કહી હે. (તંજહા) તે ત્રણ પ્રકારની
પ્રમાણે હે—(પુઘ્વાણુપુઘ્વી, પચ્છાણુપુઘ્વી અણાણુપુઘ્વી) (૧) પૂર્વાનુપૂર્વી (૨)
પશ્ચાનુપૂર્વી (૩) અનાનુપૂર્વી.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પુઘ્વાણુપુઘ્વી?) હે ભગવન્ ! પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું હે?

ઉત્તર—(પુઘ્વાણુપુઘ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું પણ કહ્યું હે—
(પરમાણુપુગ્ગલે, દુષ્પણસિણ તિષ્પણસિણ જાવ દસપણસિણ, સંસ્થિજ્જપણસિણ, અસંસ્થિ-
જ્જપણસિણ, અણંતપણસિણ) પરમાણુ પુદ્ગલ, દ્વિપ્રદેશીસ્કંધ, ત્રિપ્રદેશીસ્કંધ,
ઇસ પ્રદેશી પચન્તના સ્કંધ, સંખ્યાત પ્રદેશીસ્કંધ, અસંખ્યાત પ્રદેશી સ્કંધ
અને અનન્ત પ્રદેશી સ્કંધ આ કમપૂર્વકની પુદ્ગલાસ્તિકાય સંબંધી ને આનુ-
પૂર્વી હે, (સે તં પુઘ્વાણુપુઘ્વી) તેને પૂર્વાનુપૂર્વી કહે હે.

પૂર્વી-અનન્તપ્રદેશિકઃ અસંખ્યેયપ્રદેશિકઃ સંખ્યેયપ્રદેશિકો યાવદ્ દશપ્રદેશિકો યાવત્ ત્રિપ્રદેશિકો દ્વિપ્રદેશિકઃ પરમાણુપુદ્ગલઃ । સૈષા પશ્ચાનુપૂર્વી । અથ કા સા અનાનુપૂર્વી ? અનાનુપૂર્વી એતસ્યામેવ એકાદિકાયામેકોત્તરિકાયામનન્તગચ્છગતાયાં શ્રેણ્યામ્ અન્યોઽન્યાશ્યાસો દ્વિરૂપોનઃ । સૈષાઽનાનુપૂર્વી । સૈષા ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી । સૈષા જ્ઞાયકશરીરભવ્યશરીરવ્યતિરિક્તા દ્રવ્યાનુપૂર્વી । સૈષા નોઆગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વી । સૈષા દ્રવ્યાનુપૂર્વી ॥સૂ. ૧૯॥

ટીકા—‘અહવા’ ઇત્યાદિ—

અથવા=પુનઃ પુદ્ગલાસ્તિકાયમાશ્રિત્ય ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી પૂર્વાનુપૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વ્યનાનુપૂર્વીભેદૈસ્ત્રિવિધા પ્રજ્ઞપ્તા । તત્ર-પરમાણુપુદ્ગલો દ્વિપ્રદેશિક ઇત્યાદિક્રમેણ—‘અનન્તપ્રદેશિકઃ’ ઇતિ પર્યન્તં પૂર્વાનુપૂર્વી । તથા-વ્યુત્ક્રમેણ ‘અનન્તપ્રદેશિકઃ’ ઇત્યારભ્ય ‘પરમાણુપુદ્ગલઃ’ ઇતિ પર્યન્તં પશ્ચાનુપૂર્વી । અનાનુ-

સ્તિકાય સંબંધી (સે તં પુઞ્છાણુપુઞ્ચી) પૂર્વાનુપૂર્વી હૈ । (સે કિં તં પચ્છાણુપુઞ્ચી) હે ભદન્ત ! પશ્ચાનુપૂર્વી કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(પચ્છાણુપુઞ્ચી) પશ્ચાનુપૂર્વી હસ પ્રકાર સે હૈ—(અણંતપણસિણ અસંખિજ્જપણસિણ, સંખિજ્જપણસિણ જાવ દસપણસિણ જાવ તિપ્પણસિણ દુપ્પણસિણ પરમાણુપોગલે) જવ પુદ્ગલાસ્તિકાય અનંત પ્રદેશિક, અસંખ્યાત પ્રદેશિક, સંખ્યાત પ્રદેશિક, યાવત્ દશપ્રદેશિક યાવત્ ત્રિપ્રદેશિક દ્વિપ્રદેશિક ઓર પરમાણુપુદ્ગલ હસ વ્યુત્ક્રમ સે પરિગણિત હો તવ (સે તં પચ્છાણુપુઞ્ચી) વહ પશ્ચાનુપૂર્વી હૈ । (સે કિં તં અણાણુપુઞ્ચી) હે ભદન્ત ! અનાનુપૂર્વી કયા હૈ ?

ઉત્તર—(અણાણુપુઞ્ચી) અનાનુપૂર્વી હસ પ્રકાર સે હૈ—(ણાણેવ ણાણાણાણ પગુત્તરિયાણ અણંતગચ્છગયાણ સેદીણ-અણમણભાસો દુક-

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પચ્છાણુપુઞ્ચી?) હે ભગવન્ ! પશ્ચાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(પચ્છાણુપુઞ્ચી) પશ્ચાનુપૂર્વીનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે—(અણંત-પણસિણ, અસંખિજ્જપણસિણ, સંખિજ્જપણસિણ જાવ દસપણસિણ જાવ તિપ્પણસિણ, દુપ્પણસિણ, પરમાણુપોગલે) ન્યારે પુદ્ગલાસ્તિકાયને અનંત પ્રદેશિક, અસંખ્યાત પ્રદેશિક, સંખ્યાતપ્રદેશિક, દસપ્રદેશિક, નવપ્રદેશિક આદિ ત્રણ પ્રદેશિક પર્યન્તના સ્કન્ધરૂપે અને દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ અને પરમાણુ પુદ્ગલ, આ પ્રકારે ઉદ્ભા કમથી પરિગણિત થાય છે, ત્યારે (સે તં પચ્છાણુપુઞ્ચી તેને પશ્ચાનુપૂર્વી કહેવાય છે.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં અણાણુપુઞ્ચી?) હે ભગવન્ ! અનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે ?

ઉત્તર—(અણાણુપુઞ્ચી) અનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—(ણાણેવ

પૂર્વી તુ એકાદિકાયમેકોત્તરિકાયામ્ અનન્તગચ્છગતાયામ્-एकोत्तरवृद्धिमत्स्कन्धानामनन्तत्वात् स्कन्धा अनन्तास्तेषां गच्छः समुदायस्तं गता=माप्ता तस्यां तथाभूतायाम् एतस्यां=परमाणुपुद्गलादारभ्य अनन्तप्रदेशपर्यन्तायामेव श्रेण्यां=पंक्तौ, सा अन्योऽन्याभ्यासः=परस्परगुणनरूपा द्विरूपोनः=आद्यन्तस्थभङ्गद्वय-रहिता च बोध्या ।

નુ યથૈકઃ પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ પૂર્વાનુપૂર્વ્યાદિત્વૈનોદાહૃતઃ, તથૈવાન્યેઽપિ કથં નોદાહૃતાઃ ? इति चेत्, उच्यते-इह पूर्वानुपूर्व्यादिविचारे परमाण्वादिद्रव्याणां

વૃણો) जिसमें पुर्वानुपूर्वी और पश्चानुपूर्वी ये दोनों नहीं हैं उसका नाम अनानुपूर्वी है यह बात पहिले कह दी गई है । इसमें विवक्षित पदों के अनन्तरोक्त क्रमद्वय को उलंघन करके परस्पर संभवित भंगां से उन पदों की विरचना की जाती है । उसमें सबसे पहिले एकप्रदेशी परमाणुपुद्गल की स्थापना की जाती है । फिर बादमें द्विप्रदेशी स्कंध आदि की । इस प्रकार एक एक २ प्रदेश की वृद्धि करते २ जब अनन्त प्रदेशी स्कंधतक स्थापना हो चुकती है-तब इन सबकी श्रेणी बन जाती है । इस श्रेणी-पंक्ति में एकोत्तर वृद्धिवाले स्कंध अनन्त हो जाते हैं । फिर इनमें परस्पर में गुणा किया जाता है । जो महाराशिरूप संख्या आती है उसमें आदि और अन्त के दो भंग करनेपर अनानुपूर्वी बन जाती है ।

શંકા-જૈસે એક પુદ્ગલાસ્તિકાય પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ રૂપસે ઉદાહૃત

एगाइयाए एगुत्तरियाए अणंतगच्छगयाए सेढीए अण्णमण्णज्जासो दुरूवूणो) જેમાં પૂર્વાનુપૂર્વી અને પશ્ચાનુપૂર્વી, એ બન્ને નથી, તેનું નામ અનાનુપૂર્વી છે, એ વાત પહેલાં પ્રકટ કરવામાં આવી ચુકી છે તેમાં વિવક્ષિત પદોના (પરમાણુ પુદ્ગલ આદિના) ઉપયુક્ત બન્ને ક્રમનો પરિત્યાગ કરીને પરસ્પર સંભવિત ભંગો વડે તે પદોની વિરચના કરવામાં આવે છે. તેમાં સૌથી પહેલાં એક પ્રદેશી પરમાણુ પુદ્ગલની સ્થાપના કરવામાં આવે છે અને ત્યારબાદ દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ આદિની સ્થાપના કરાય છે. આ રીતે એક એક પ્રદેશની વૃદ્ધિ કરતાં કરતાં જ્યારે અનંત પ્રદેશી સ્કંધ સુધીની સ્થાપના થઈ જાય છે, ત્યારે તે બધાની એક શ્રેણી બની જાય છે. આ શ્રેણી-પંક્તિમાં ઉત્તરોત્તર એકની વૃદ્ધિવાળા સ્કંધ અનેક થઈ જાય છે. ત્યાર બાદ પરસ્પરનો ગુણાકાર કરવામાં આવે છે. આ આ રીતે જે મહારાશિ રૂપ સંખ્યા આવે છે તેમાંથી પહેલો અને છેલ્લો, એ બે ભંગ કરી કરવાથી અનાનુપૂર્વી બની જાય છે.

પ્રશ્ન-જે રીતે એક પુદ્ગલાસ્તિકાયને ઉદાહરણ રૂપે લઈને તેની પૂર્વા-

પરિપાટયાદિલક્ષણઃ ક્રમઃ પ્રક્રાન્તઃ । સ ચ દ્રવ્યબાહુલ્યે સત્યેવ સંભવતિ । ન
ચાસ્તિ ધર્માસ્તિકાયે, અધર્માસ્તિકાયે, આકાશાસ્તિકાયે ચ પુદ્ગલાસ્તિકાયવદ્
દ્રવ્યબાહુલ્યમ્, એકૈક દ્રવ્યત્વાત્તેષામ્ । જીવાસ્તિકાયે ત્વનન્તજીવદ્રવ્યાણાં સત્ત્વાદ
ચાપ્યસ્તિ દ્રવ્યબાહુલ્યમ્, તથાપિ પરમાણુદ્વિપ્રદેશિકાદિષુ યથા પૂર્વાનુપૂર્વીત્વા-
દિદેતુઃ પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવો વિદ્યતે, ન તથા જીવદ્રવ્યેષુ, પ્રત્યેકજીવસ્યાસંખ્યેયપ્રદેશ-
વત્ત્વેન સર્વજીવાનાં તુલ્યપ્રદેશત્વાત્ । પરમાણુદ્વિપ્રદેશિકાદિદ્રવ્યાણાં તુ વિષમ-
પ્રદેશિકત્વાત્ પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવો વિદ્યતે । તથા—અદ્વાસમયસ્યાપિ એકસમયરૂપત્વાદેવ

હુઆ હૈ—ઉદાહરણ સે ઉપસ્થિત ક્રિયા ગયા—હૈ વૈસે હી અન્ય ધર્માસ્તિ
કાય આદિ દ્રવ્ય ક્યોં નહીં ઉદાહૃત ક્રિયે ગયે હૈં ।

ઉત્તર—યહાં પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ કે વિચાર મેં પરમાણુ આદિ દ્રવ્યોંકા
પરિપાટીરૂપક્રમ પ્રક્રાન્ત કથન મેં ચલરહા—હૈ, સો વહ ક્રમ દ્રવ્યકી બહુ-
લતા મે સંભવિત હોતા હૈ—બન સકતા હૈ ધર્માસ્તિકાય મેં, અધર્માસ્તિ-
કાય મેં ઓર આકાશાસ્તિકાય મેં પુદ્ગલાસ્તિકાય કી તરહ યહ દ્રવ્યબા-
હુલ્ય નહીં હૈ ક્યોંકિ સબ એકએક દ્રવ્યરૂપ માને ગયે હૈં । યહ યદ્યપિ જીવા-
સ્તિકાય મેં અનંત જીવદ્રવ્યોં કી સત્તા હોને કે કારણ દ્રવ્યબાહુલ્ય
હૈ, પરન્તુ ફિરમી પરમાણુઓં મેં એવં દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ આદિકોં મેં જૈસા
પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ કારણભૂત પૂર્વ પશ્ચાદ્ભાવ વિદ્યમાન હૈ વૈસા જીવ-
દ્રવ્યોં મેં નહીં હૈ । ક્યોંકિ પ્રત્યેક જીવ અસંખ્યાત પ્રદેશવાલા હૈ । ઇસ-
લિયે સમસ્ત જીવોં મેં તુલ્ય પ્રદેશના હૈ પરમાણુઓં એવં દ્વિપ્રદેશિક

નુપૂર્વી આદિતું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે, એજ પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાય
આદિ અન્ય દ્રવ્યોને ઉદાહરણરૂપે કેમ લેવામાં આવ્યાં નથી ?

ઉત્તર—અહીં પૂર્વાનુપૂર્વી આદિનો વિચાર કરતાં પરમાણુ આદિ દ્રવ્યોને
પરિપાટી રૂપ ક્રમ (અનુક્રમ) પ્રસ્તુત કથનમાં પ્રતિપાદિત થઈ રહ્યો છે. તેથી આ
કથન દ્રવ્યની બહુતામાં જ સંભવી શકે છે ધર્માસ્તિકાય અધર્માસ્તિકાય અને
આકાશાસ્તિકાયમાં પુદ્ગલાસ્તિકાયની જેમ આ દ્રવ્યબાહુલ્યનો સદ્ભાવ નથી.
કારણ કે તેમને તો એક એક દ્રવ્યરૂપ માનવામાં આવેલ છે જો કે જીવા-
સ્તિકાયમાં અનંત જીવદ્રવ્યોની સત્તા (અસ્તિત્વ) હોવાને કારણે દ્રવ્યબાહુલ્ય
છે, પરન્તુ પરમાણુઓમાં અને દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ આદિકોમાં જેવો પૂર્વાનુપૂર્વી
આદિના કારણભૂત પૂર્વપશ્ચાત્ ભાવ વિદ્યમાન છે, એવો જીવ દ્રવ્યોમાં નથી,
કારણ કે પ્રત્યેક જીવ અસંખ્યાત પ્રદેશવાળો છે તેથી સમસ્ત જીવોમાં તુલ્ય
(સમાન) પ્રદેશતા છે. પરમાણુઓ અને દ્વિપ્રદેશિક આદિ દ્રવ્યોમાં તો વિષમ

પૂર્વાનુપૂર્વીત્વાદ્યસંભવઃ, અતોऽત્ર પુદ્ગલાસ્તિકાય એવ પૂર્વાનુપૂર્વીત્વાદિકોદાહતઃ, નત્વન્યે ધર્માસ્તિકાયાદય इति ।

તદેતદુપસંહરન્નાહ-‘સે તં’ इत्यादि । સૈવા અનાનુપૂર્વીતિ । ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી સંપૂર્ણેતિ સૂચયિતુમાહ-‘સે તં ઓવણિહિયા’ इत्यादि । સૈવા ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીતિ । જ્ઞાયકશરીરભવ્યશરીરવ્યતિરિક્તા દ્રવ્યાનુપૂર્વીસંપૂર્ણેતિ સૂચયિતુમાહ-‘સે તં જાણયસરીરભવિયસરીર વહરિત્તા’ इत्यादि-સૈવા જ્ઞાયક-

આદિ દ્રવ્યોં મેં તો વિષમપ્રદેશિકતા હૈ । હસલિયે વહાં પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવ હૈ । તથા જો અદ્વાસમય હૈ વહ એકસમયરૂપ હૈ । હસલિયે ઉસમેં બી પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ સંભવિત નહીં હૈ । હસલિયે પુદ્ગલાસ્તિકાય હી પૂર્વાનુપૂર્વી આદિરૂપ સે ઉદાહૃત કિયે ગયે હૈં અન્ય ધર્માસ્તિકાય આદિ દ્રવ્ય નહીં । (સે તં અણાણુપુવ્વી) હસ પ્રકાર યહ અનાનુપૂર્વી હૈ । (સે તં ઓવણિ-હિયા દવ્વાણુપુવ્વી) યહાંતક પૂર્વ પ્રક્રાન્ત ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી કા કથન કિયા ગયા હૈ । (સે તં જાણયસરીરભવિયસરીરવહરિત્તા દવ્વાણુપુવ્વી) હસ પ્રકાર ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી કા કથન સમાસ હોતે હી જ્ઞાયક શરીર ભવ્ય શરીરવ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાનુપૂર્વી સમાસ હો જાતી હૈ । (સે તં નો આગમઓ દવ્વાણુપુવ્વી-સે તં દવ્વાણુપુવ્વી) હસ કથન કી સમાસિ હોતે હી નોઆગમ કો આશ્રિત કરકે જાયમાન દ્રવ્યાનુપૂર્વીકા સ્વરૂપ સમાસ હો જાતા હૈ । હસપ્રકાર યહ દ્રવ્યાનુપૂર્વી હૈ ।

પ્રદેશિકતા છે, તેથી ત્યાં પૂર્વપશ્ચાદ્ભાવ છે. તથા જે અદ્વા સમય સંભવિત નથી તેથી પુદ્ગલાસ્તિકાયનું જ પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ રૂપે ઉદાહરણ આપવામાં આવ્યું છે, અન્ય ધર્માસ્તિકાય આદિ દ્રવ્યોનું તે પ્રકારે ઉદાહરણ આપવામાં આવ્યું નથી (સે તં અણાણુપુવ્વી) આ પ્રકારનું અનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ છે. (સે તં ઓવણિહિયા દવ્વાણુપુવ્વી) અહીં સુધીમાં પૂર્વપ્રસ્તુત ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું કથન કરવામાં આવ્યું છે. (સે તં જાણયસરીરભવિયસરીર-વહરિત્તા દવ્વાણુપુવ્વી) આ રીતે ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું કથન પૂરું થતાં જ, જ્ઞાયક શરીર અને ભવ્યશરીરથી ભિન્ન એવી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું વર્ણન પણ અહીં સમાપ્ત થાય છે.

(સે તં નોઆગમઓ દવ્વાણુપુવ્વી-સે તં દવ્વાણુપુવ્વી) આ કથનની સમાપ્તિ થઈ જવાથી નોઆગમને આધારે જે દ્રવ્યાનુપૂર્વી અને છે તેના સ્વરૂપના નિરૂપણની પણ સમાપ્તિ થઈ જાય છે. આ પ્રકારનું આ દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ છે.

શરીરભવ્યશરીરવ્યતિરિક્તા દ્રવ્યાનુપૂર્વીતિ । નોઆગમતો દ્રવ્યાનુપૂર્વી સંપૂર્ણેતિ
સૂચયિતુમાહ-‘ સે તં નો આગમતો ’ इत्यादि-सैषा नो आगमतो द्रव्यानुपूर्वीति ।
द्रव्यानुपूर्वी सम्पूर्णेति सूचयितुमाह-‘ सै तं ’ इत्यादि-सैषा द्रव्यानुपूर्वीति॥सू.११॥

ભાવાર્થ-હસ સૂત્રદ્વારા સૂત્રકારને પુદ્ગલ દ્રવ્ય કો લક્ષ્ય કરકે ઔપનિ-
ધિકી દ્રવ્યાનુ પૂર્વી કી ત્રિવિધતા ઉસપર ઘટિત કી હૈ । યહ તો પહિલે સે
હી જ્ઞાત હો ચુકા હૈ કિ વિવક્ષિત દ્રવ્ય વિશેષ કે સમુદાય મેં જો પ્રથમ
દ્રવ્ય હૈ ઉસસે લેકર ક્રમશઃ અન્તિમ દ્રવ્યતક જો પરિપાટી સ્થાપિત કી
જાતી હૈ વહ આનુપૂર્વી હૈ । યહાં પુદ્ગલદ્રવ્ય કે ઉપર સૂત્રકાર કો યહ
ઘટિત કરની હૈ, અતઃ વે ઉસકે એકપ્રદેશ સે લેકર ક્રમશઃ અનન્ત
પ્રદેશી સ્કંધ તક બનાતે હૈં । હસ પ્રકાર એકપ્રદેશી પુદ્ગલપરમાણુ યહ
પુદ્ગલાસ્તિકાય દ્રવ્ય કા પ્રથમ દ્રવ્ય જાનના ચાહિયે । હસકે બાદ
એક પ્રદેશોત્તર વૃદ્ધિ કરતે ચલા જાના ચાહિયે । હસસે દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ
ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ, ચતુષ્પ્રદેશી સ્કંધ પંચ પ્રદેશી સ્કંધ, આદિ અનંત પ્રદે-
શી સ્કંધ તક અનંત પૌદ્ગલિક સ્કંધ બન જાતે હૈં । તથા હનકી સ્થાપના
હસ પ્રકાર સે કી જાતી હૈ-એક પ્રદેશી પરમાણુ પુદ્ગલ, દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ
દ્વયણુક, ત્રિપ્રદેશી ત્ર્યણુક ચતુષ્પ્રદેશી સ્કંધ ચતુરણુક इत्यादि । હસ
પ્રકાર કી યથાક્રમ કી ગર્હ યહ સ્થાપના પૂર્વાનુપૂર્વી હૈ । તથા હસી સ્થાપના

ભાવાર્થ-આ સૂત્રમાં સૂત્રકારે પુદ્ગલ દ્રવ્યને અનુલક્ષીને ઔપનિધિકી
દ્રવ્યાનુપૂર્વીની ત્રિવિધતાનું પ્રતિપાદન કર્યું છે એ વાત તો પહેલાં પ્રકટ
થઈ ચુકી છે કે વિવક્ષિત દ્રવ્યસમુદાયમાં જે પહેલું દ્રવ્ય હોય તે દ્રવ્યથી
શરૂ કરીને અનુક્રમે છેલ્લા દ્રવ્ય સુધીની જે પરિપાટી (અનુક્રમ) સ્થાપિત
કરવામાં આવે છે, તેનું નામ આનુપૂર્વી છે. અહીં પુદ્ગલ દ્રવ્ય સાથે સૂત્રકાર
તે આનુપૂર્વીને ઘટાવવા માગે છે તેથી તેમણે તેના એક પ્રદેશથી લઈને
અનંતપ્રદેશ સુધીના અનંત સ્કંધ બનાવ્યાં છે. આ રીતે એક પ્રદેશી
પુદ્ગલ પરમાણુને પુદ્ગલાસ્તિકાયનું પ્રથમ દ્રવ્ય સમજવું જોઈએ ત્યાર બાદ
એક એક પ્રદેશની વૃદ્ધિ કરતાં કરતાં આગળ વધવું જોઈએ. આ રીતે દ્વિપ્ર-
દેશી સ્કંધ, ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ, ચાર પ્રદેશી સ્કંધ, પાંચ પ્રદેશી સ્કંધ આદિ
અનંત પ્રદેશી પર્યાન્તના અનંત પૌદ્ગલિક સ્કંધ બની જાય છે. ત્યારે તેમની
સ્થાપના આ પ્રમાણે કરવામાં આવે છે-એક પ્રદેશીપરમાણુ પુદ્ગલ, દ્વિપ્રદેશી
સ્કંધ દ્વયણુક, ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ ત્રિઅણુક, ચતુષ્પ્રદેશી સ્કંધ ચતુરણુક, ઇત્યાદિ.

આ પ્રકારના સીધા ક્રમપૂર્વક જે સ્થાપના કરવામાં આવે છે તેનું નામ
પૂર્વાનુપૂર્વી છે. એજ સ્થાપનામાં છેલ્લા દ્રવ્યને (અનંતપ્રદેશી સ્કંધને) પહેલો

મેં જ્ય અન્તિમાદિ દ્રવ્ય કો પ્રાથમિક રૂપ દેકર વ્યુત્ક્રમ સે સ્થાપિત કિયા જાતા હૈ તો વહી પશ્ચાનુપૂર્વી કહલાતી હૈ તથા સ્વેચ્છાનુસાર ક્રમ-વ્યુત્ક્રમ કા ઉત્લંચન કરકે પુદ્ગલાસ્તિકાય કે દ્રવ્યોં કા જો સ્થાપના કરના હોતા હૈ વહ અનાનુપૂર્વી હૈ । જૈસે હસે યોં સમજના ચાહિયે કિ ચતુરણુક કે બાદ એકપ્રદેશીપુદ્ગલ પરમાણુ કા, હસકે બાદ ષટ્પ્રદેશી પુદ્ગલસ્કંધ કા હસકે બાદ અસંખ્યાત પ્રદેશી સ્કંધ આદિ કા સ્થાપન કરના આદિ । જ્ઞાયકશરીરભવ્યશરીર વ્યતિરિક્ત દ્રવ્યાનુપૂર્વી પહિલે દો પ્રકાર કી સૂત્રકાર ને કહી હૈ હસમેં અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી કે વિષય મેં સૂત્રકાર ને બહુત અધિક વિસ્તૃત વિવેચન કિયા હૈ । ઔપનિધિ કી દ્રવ્યાનુપૂર્વી પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ કે મેદ સે યહ ત્રીન પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ । એક પુદ્ગલાસ્તિકાય કે ઉપર જો પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ કી ઘટના સૂત્રકાર ને કહી હૈ હસકા કારણ યહ હૈ કિ હનમેં હી દ્રવ્યબહુલતા હૈ । “આકાશાદેકદ્રવ્યાણિ” અર્થાત્-આકાશ પર્યન્તકે ત્રીન દ્રવ્ય-અર્થાત્ ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય, ઔર આકાશાસ્તિકાય યે ત્રીનોં દ્રવ્ય એક દ્રવ્ય વાલે હોતે હૈ, તદનુસાર ધર્માસ્તિકાય આદિ ત્રીન

મૂકીને ઉલ્લટા કમથી જ્યારે દ્રવ્યોને સ્થાપિત કરવામાં આવે છે, ત્યારે તેને પશ્ચાનુપૂર્વી કહે છે તથા ઉપરના બંને કમનું ઉલ્લંઘન કરીને પોતાની ઈચ્છાનુસાર પુદ્ગલાસ્તિકાયના દ્રવ્યોની જે સ્થાપના કરવામાં આવે છે તેને અનાનુપૂર્વી કહે છે. જેમ કે ચતુરણુક સ્કંધની પહેલાં સ્થાપના કરવી, ત્યાર બાદ એક પ્રદેશી પુદ્ગલ પરમાણુની, ત્યાર બાદ છ પ્રદેશી પુદ્ગલ સ્કંધની સ્થાપના કરવી, ત્યાર બાદ અસંખ્યાત પ્રદેશી સ્કંધ આદિની સ્થાપના કરવી તેનું નામ અનાનુપૂર્વી છે. જ્ઞાયક શરીર અને ભવ્યશરીરથી ભિન્ન એવી દ્રવ્યાનુપૂર્વીના સૂત્રકારે જે પ્રકાર પહેલાં પ્રકટ કર્યા છે. તેમાંના અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી નામના બીજા પ્રકારનું તો ખૂબજ વિસ્તારપૂર્વક પહેલાં વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે.

ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીના પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ ત્રણ ભેદોનું નિરૂપણ પણ પહેલાં સૂત્રોમાં કરવામાં આવ્યું છે. ત્યાર બાદ સૂત્રકારે એક પુદ્ગલાસ્તિકાયના પૂર્વાનુપૂર્વી આદિ સ્વરૂપોનું નિરૂપણ કર્યું છે, પણ ધર્માસ્તિકાય આદિ દ્રવ્યોમાં જે પ્રમાણે કરવામાં આવ્યું નથી, કારણ કે પુદ્ગલાસ્તિકાયમાં જ દ્રવ્યબાહુલ્યનો સદ્ભાવ-ધર્માસ્તિકાય આદિમાં દ્રવ્યબાહુલ્ય નથી. “આકાશાદેકદ્રવ્યાણિ” આ કથન અનુસાર ધર્માસ્તિકાય આદિ ત્રણ દ્રવ્યોમાં

इत्थं द्रव्यानुपूर्वीमुक्त्वा सम्प्रति क्षेत्रानुपूर्वीमाह—

मूलम्—से किं तं खेत्ताणुपुर्वी ? खेत्ताणुपुर्वी दुविहा पण-
त्ता, तं जहा—ओवणिहिया य अणोवणिहिया य । तत्थ णं जा सा
ओवणिहिया सा ठप्पा । तत्थ णं जा सा अणोवणिहिया सां दुविहा
पणत्ता, तं जहा—णैगमेववहाराणं १, संगहस्स २ य ॥सू० १००॥

छाया—अथ का सा क्षेत्रानुपूर्वी ? क्षेत्रानुपूर्वी द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा—
औपनिधिकी च अनौपनिधिकी च । तत्र खलु या सा औपनिधिकी सा स्थाप्या ।

द्रव्यों में द्रव्य बहुलता नहीं है । जीवास्तिकाय में यद्यपि द्रव्य बाहुल्य है—
परन्तु पुद्गल की तरह वह द्रव्य बाहुल्य एक २ जीव द्रव्य में क्रमशः नहीं
है, क्योंकि प्रत्येक जीवद्रव्य असंख्यात प्रदेशी हैं । इस प्रकार इस कथन
के समास होते ही नो आगम की अपेक्षा लेकर द्रव्यानुपूर्वी का स्वरूप
कथन समास हो जाता है ॥ सू० ९९ ॥

अथ सूत्रकार क्षेत्रानुपूर्वी का कथन करते हैं—

“से किं तं खेत्ताणुपुर्वी” इत्यादि ।

शब्दार्थ—(से किं तं खेत्ताणुपुर्वी) हे भदन्त ! क्षेत्रानुपूर्वी का
क्या स्वरूप है ?

उत्तर—(खेत्ताणुपुर्वी दुविहा पणत्ता) क्षेत्रानुपूर्वी दो प्रकार की कही
गई है । (तं जहा) जैसे (ओवणिहिया य अणोवणिहिया य) ? औपनिधिकी

द्रव्यबाहुल्यनो अभाव છે. જીવાસ્તિકાયમાં નો કે દ્રવ્યબાહુલ્ય છે ખરું,
પરન્તુ પુદ્ગલની જેમ તે દ્રવ્યબાહુલ્ય એક એક જીવદ્રવ્યમાં ક્રમશઃ નથી,
કારણ કે જીવદ્રવ્ય અસંખ્યાત પ્રદેશી છે. આ રીતે આ કથન
સમાસ થઈ જતા નો આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યાનુર્વીના સ્વરૂપનું કથન
સમાસ થઈ જાય છે. ॥સૂ. ૯૯॥

હવે સૂત્રકાર ક્ષેત્રાનુર્વીનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં ક્ષેત્તાણુપુર્વી” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ક્ષેત્તાણુપુર્વી ?) હે ભગવન્ ! ક્ષેત્રાનુર્વીનું
સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ક્ષેત્તાણુપુર્વી દુવિહા પણત્તા) ક્ષેત્રાનુર્વી બે પ્રકારની કહી છે—
(તં જહા) તે બે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(ઓવણિહિયા ય અણોવણિહિયા) (૧)

तत्र खलु या सा अनौपनिधिकी सा द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा-नैगमव्यवहारयोः१,
संग्रहस्य २ च ॥सू० १००॥

टीका—‘से किं तं’ इत्यादि—

व्याख्या पूर्ववद् बोध्या ॥सू० १०७॥

क्षेत्रानुपूर्वी, दूसरी अनौपनिधि की क्षेत्रानुपूर्वी। (तत्थ णं जा सा ओवणि-
हियासा ठप्पा) इनमें जो औपनिधि की क्षेत्रानुपूर्वी है वह अल्प विषय-
वाली होने के कारण अर्थात् उसका विषय विशेष विवेचना करने के योग्य
न होने से—इस समय व्याख्या नहीं की जाती है। तात्पर्य कहने का यह
है कि प्रथम नंबर की होने के कारण सूत्रकार को सबसे पहिले औप-
निधि की क्षेत्रानुपूर्वी का विवेचन करना कर्तव्य है। परन्तु ऐसा न
करके वे पहिले अनौपनिधि की क्षेत्रानुपूर्वी का जो विवेचन करेंगे
उसका कारण यह है कि औपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वी का विषय विशेष
वस्तु के योग्य नहीं है। क्यों कि उसका विषय अल्प है। इसलिये
(तत्थ णं जा सा अणोवणिहिया सा दुविहा पणत्ता) इन दोनों आनुपूर्वियों
में जो अनौपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वी है उसका विस्तृत विवेचन करने के
अभिप्राय से सूत्रकार कहते हैं कि वह दो प्रकार की कही गई है। (तं
नहा) वे उसके प्रकार ये हैं—(जेगमववहाराणं १ संगहस्स २) एक

ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી, અને (૨) અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી (તત્થળં જા સા ઓઘણિહિયા સા ઠપ્પા) તેમાંથી જે ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી છે તે અદ્ય વિષમવાણી હોવાને કારણે એટલે કે તેના વિષય, વિશેષ વિવેચન કરવા યોગ્ય નહીં હોવાને કારણે, તેનું નિરૂપણ સૂત્રકાર આ સૂત્રમાં કરશે નહીં પણ પાછળના સૂત્રમાં કરશે જે કે કમ અનુસાર તો તે પહેલી હોવાથી તેનું નિરૂપણ પહેલાં થવું જોઈએ પરંતુ સૂત્રકારે અહીં અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું નિરૂપણ પહેલાં કર્યું છે કારણ કે ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનો વિષય અદ્ય હોવાથી તેનું વિશેષ વક્તવ્ય કરવાનું નથી, પરંતુ અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનો વિષય વિસ્તૃત વિવેચન કરવા યોગ્ય છે. તેથી સૂત્રકાર અહીં પહેલાં અનૌપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું નિરૂપણ કહે છે કે—(તત્થળં જા સા અજોઘણિ-હિયા સા ડુવિહા પળ્લત્તા) તે બન્ને આનુપૂર્વીઓમાંની જે અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી છે તેના બે પ્રકાર કહ્યા છે. (તંજહા) તે પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે—(જેગમવહારાણ, સંગહરહ) (૧) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રા-

તત્ર નૈગમવ્યવહારસમ્મતાં ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનિરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં જૈગમવવહારાણં અણોવણિહિયા ચેત્તાણુ-
પુઘી? જૈગમવવહારાણં અણોવણિહિયા ચેત્તાણુપુઘી પંચવિહા
પણ્ણત્તા, તંજહા—અત્થપયરૂવણયા૧, ભંગસમુક્કિત્તણયા૨, ભંગો-
વદંસણયા૩, સમોયારે૪, અણુગમે ॥સૂ.૦ ૧૦૧॥

છાયા—અથ કા સા નૈગમવ્યવહારયોઃ અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી? નૈગમ-
વ્યવહારયોઃ અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી પંચવિધા પ્રજ્ઞપ્તા, તદ્વથા—અર્થપદપ્રરૂપ-
ણતા૧, ભંગસમુત્કીર્તનતા૨, ભંગોપદર્શનતા૩, સમવતારઃ૪, અનુગમઃ૫॥સૂ.૧૦૧॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि—

અથ કા સા નૈગમવ્યવહારસમ્મતા અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી? इति शिष्य
प्रश्नः । उत्तरमाह—‘नैगमववहाराणं अणोवणिहिया’ इत्यादि । नैगमव्यवहारयोः

नैगमव्यवहारनयसंमत अनौपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वी और दूसरी
संग्रहनयसंमत अनौपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वी । इस सूत्र की व्याख्या
पहिले की तरह जाननी चाहिये ॥ सू० १०० ॥

अब नैगमव्यवहारनयसंमत क्षेत्रानुपूर्वी का कथन सूत्रकार करते हैं—
“से किं तं जैगमववहाराणं” इत्यादि ।

शब्दार्थ—हे अद्वन्त ! नैगम और व्यवहारनय संमत अनौपनिधि
की क्षेत्रानुपूर्वी का क्या स्वरूप है ?

उत्तर—(अणोवणिहिया ચેત્તાણુપુઘી) અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુ-
પૂર્વીકા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર સે હૈ—(પંચવિહા પણ્ણત્તા) યહ નૈગમવ્યવ-
હારનયસંમત અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી પાંચ પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ ।
(તં જહા) વે પ્રકાર વે હૈ—(અત્થપયપરૂવણયા ૧ ભંગસમુક્કિત્તણયા

નુપૂર્વી (૨) સંગ્રહનયસંમત અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી આ સૂત્રની વ્યાખ્યા
આગળ કહ્યા પ્રમાણે સમજવી. ॥સૂ.૦૧૦૦॥

હવે સૂત્રકાર નૈગમવ્યવહારસંમત ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં જૈગમવવહારાણં” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન—હે ભગવન્ ! નૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત અનૌપનિ-
ધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(અણોવણિહિયા ચેત્તાણુપુઘી) અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ
આ પ્રકારનું છે—(પંચવિહા પણ્ણત્તા) આ નૈગમ અને વ્યવહારનયસંમત
અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી પાંચ પ્રકારની કહી છે. (તંજહા) તે પ્રકારો નીચે
પ્રમાણે છે—(અત્થપયપરૂવણયા, ભંગસમુક્કિત્તણયા, ભંગોવદંસણયા, સમોયારે, અણુ-

અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી=ક્ષેત્રવિષયા આનુપૂર્વી પંચવિધા મજ્ઞતા, તદ્વથા-અર્થ-
પદપ્રરૂપણતા ૧, મજ્ઞસમુત્કીર્તનતા ૨, મજ્ઞોપદર્શનતા ૩, સમાવતારઃ ૪, અનુ-
ગમ ૫, इति ॥સૂ૦ ૧૦૧॥

મૂળ—સે કિં તં જૈગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયા ? જૈગમ-
વવહારાણં અટ્ટપયપરૂવણયા તિપ્પણસોગાઢે આણુપુઠ્ઠી જાવ
દસપણસોગાઢે આણુપુઠ્ઠી જાવ સંઘિજ્જપણસોગાઢે આણુપુઠ્ઠી
અસંઘિજ્જપણસોગાઢે આણુપુઠ્ઠી । ઇગપણસોગાઢે અણાણુપુઠ્ઠી ।
દુપ્પણસોગાઢે અવત્તવ્વણ તિપ્પણસોગાઢા આણુપુઠ્ઠીઓ જાવ
દસપણસોગાઢા આણુપુઠ્ઠીઓ જાવ અસંઘિજ્જપણસોગાઢા આણુ-
પુઠ્ઠીઓ । ઇગપણસોગાઢા અણાણુપુઠ્ઠીઓ । દુપ્પણસોઢા અવત્ત-
વ્વયાહં । સે તં જૈગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયા ॥સૂ૦ ૧૦૨॥

છાયા—અથ કા સાં જૈગમવ્યવહારાણામ્ અર્થપદપ્રરૂપણતા ? જૈગમવ્યવહાર-
ાણામ્ અર્થપદપ્રરૂપણતા—ત્રિપ્રદેશાવગાઢ આનુપૂર્વી યાવદ્ દશપ્રદેશાવગાઢ આનુ-
૨, મંગોવદંસજ્ઞયા ૩, સમોચારે ૪, અણુગમે) અર્થપદપ્રરૂપણતા મંગસ-
સમુત્કીર્તનતા, મંગોપદર્શનતા, સમાવતાર ઓર અણુગમ હન સઘ શબ્દો
કી વ્યાખ્યા પીછે ૭૪ વેં સૂત્રમેં કી જા ચુકી હૈ ॥ સૂ૦ ૧૦૧ ॥

અથ સૂત્રકાર જૈગમવ્યવહારનય સંમત અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કા
જો પ્રથમ ભેદ અર્થપદપ્રરૂપણતા હૈ ઉસકા કથન કરતે હૈ—

“સે કિં તં જૈગમવવહારાણં” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—‘સે કિં તં જૈગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયા ?’ હે મદન્ત !
જૈગમવ્યવહારનય સંમત અર્થપદપ્રરૂપણતા કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ગમે) (૧) અર્થપદ પ્રરૂપણતા, (૨) મંગસમુત્કીર્તનતા, (૩) મંગોપદર્શનતા,
(૪) સમાવતાર, અને (૫) અણુગમ આ પાંચે શબ્દોની વ્યાખ્યા આગળ ૭૪માં
સૂત્રમાં આપવામાં આવી છે તો ત્યાંથી વાંચી લેવી. ॥સૂ૦ ૧૦૧॥

હવે સૂત્રકાર જૈગમવ્યવહારનયસંમત અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીના
અર્થપદપ્રરૂપણતા નામના પહેલા ભેદનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં જૈગમવવહારાણં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં જૈગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયા ?) હે ભગવન્ !
જૈગમ અને વ્યવહાર નયસંમત અર્થપદપ્રરૂપણતાનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

પૂર્વી યાવત્સંખ્યેયપ્રદેશાવગાઢઃ—આનુપૂર્વી અસંખ્યેયપ્રદેશાવગાઢ આનુપૂર્વી । એક-
પ્રદેશાવગાઢઃ અનાનુપૂર્વી । દ્વિપ્રદેશાવગાઢઃ અવક્તવ્યકમ્ । ત્રિપ્રદેશાવગાઢા આનુ-
પૂર્વ્યો યાવદ્ દશપ્રદેશાવગાઢા આનુપૂર્વ્યો યાવદ્ અસંખ્યેયપ્રદેશાવગાઢા આનુપૂર્વ્યઃ ।

(યોગમવવહારાણં અત્યપયપરૂવણયા)

ઉત્તર-નૈગમવ્યવહારનયસંમત અર્થપદ પ્રરૂપણતા કા સ્વરૂપ હિસ
પ્રકાર સે હૈ—(તિપ્પણસોગાઢે આણુપુર્વી, જાવ દસપણસોગાઢે
આણુપુર્વી જાવ સંલિજ્જપણસોગાઢે આણુપુર્વી, અસંલિજ્જપણસો-
ગાઢે આણુપુર્વી) ત્ર્યણુક સ્કંધ આદિ રૂપ અર્થ સે યુક્ત અથવા ત્ર્યણુક
સ્કંધ આદિરૂપ અર્થ કો વિષય કરનેવાલા જો પદ હૈ ઉત્તકા નામ અર્થ-
પદ હૈ । હિસ અર્થકી પ્રરૂપણતા કરને કા નામ અર્થપદપ્રરૂપણા હૈ । ત્રીન
આકાશ પ્રદેશ મેં સ્થિત દ્રવ્યસ્કંધ આનુપૂર્વી હૈ । યાવત્ દશ આકાશ
પ્રદેશો મેં સ્થિત દ્રવ્યસ્કંધ આનુપૂર્વી હૈ યાવત્ સંખ્યાત આકાશ પ્રદેશો
મેં સ્થિત દ્રવ્યસ્કંધ આનુપૂર્વી હૈ । અસંખ્યાત આકાશ પ્રદેશો મેં સ્થિત
દ્રવ્યસ્કંધ આનુપૂર્વી હૈ । (એગપણસોગાઢે અણાણુપુર્વી, દુપ્પણસોગાઢે-
અવક્તવ્ય) એક પ્રદેશ મેં સ્થિત પરમાણુ દ્રવ્ય અનાનુપૂર્વી હૈ । દો પ્રદેશ
મેં સ્થિત ત્ર્યણુક સ્કંધ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય હૈ । (તિપ્પણસોગાઢા આણુપુર્વી-
ઓ જાવ દસપણસોગાઢા આણુપુર્વીઓ જાવ અસંલિજ્જપણસોગાઢા
આણુપુર્વીઓ) ત્રીન આકાશ પ્રદેશો મેં સ્થિત સમસ્ત દ્રવ્યસ્કંધ ત્રીન

ઉત્તર—(યોગમવવહારાણં અત્યપયપરૂવણયા) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અર્થ-

પદપ્રરૂપણાનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—

(તિપ્પણસોગાઢે આણુપુર્વી, જાવ દસપણસોગાઢે આણુપુર્વી જાવ સંલિજ્જ-
પણસોગાઢે આણુપુર્વી, અસંલિજ્જપણસોગાઢે આણુપુર્વી) ત્રિઆણુક સ્કંધ આદિ
રૂપ અર્થ (વિષય) થી યુક્ત અથવા ત્રિઆણુક સ્કંધ આદિ રૂપ અર્થનું પ્રતિ-
પાદન કરનાર જે પદ છે તેનું નામ અર્થપદપ્રરૂપણતા છે. ત્રણ આકાશ
પ્રદેશોમાં રહેલો દ્રવ્યસ્કંધ આનુપૂર્વી રૂપ છે. એજ પ્રમાણે દશ પર્યંતના,
સંખ્યાત પર્યંતના અને અસંખ્યત પર્યંતના આકાશપ્રદેશોમાં રહેલો દ્રવ્ય-
સ્કંધ પણ આનુપૂર્વી રૂપ છે. (એગપણસોગાઢે અણાણુપુર્વી, દુપ્પણસોગાઢે અવક્ત-
વ્ય) એક આકાશપ્રદેશોમાં સ્થિત પરમાણુ દ્રવ્ય અનાનુપૂર્વી રૂપ છે. જે
આકાશપ્રદેશોમાં સ્થિત પરમાણુ સ્કંધ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય રૂપ છે.

(તિપ્પણસોગાઢા આણુપુર્વી જાવ દસપણસોગાઢા આણુપુર્વીઓ, જાવ અસં-
લિજ્જપણસોગાઢા આણુપુર્વીઓ) ત્રણ આકાશપ્રદેશોમાં રહેલા સમસ્ત દ્રવ્ય-

एकप्रदेशावगाढा अनानुपूर्व्यः। द्विप्रदेशावगाढा अवक्तव्यकानि। सैषा नैगमव्यवहारयोः अर्थपदप्ररूपणता ॥सू० १०२॥

टीका-तत्रार्थपदप्ररूपणतां निरूपयितुमाह-‘से किं तं’ इत्यादि-अथ का सा नैगमव्यवहारसम्मतार्थपदप्ररूपणता? इति। उत्तरमाह-‘नेगमव्यवहाराणं’ इत्यादि। नैगमव्यवहारयोरर्थपदप्ररूपणता-‘त्रिप्रदेशावगाढ आनुपूर्वी यावद् दशप्रदेशावगाढ आनुपूर्वी’ इत्यारभ्य ‘द्विप्रदेशावगाढा अवक्तव्यकानि’ इत्यन्ता बोधया। द्रव्यानुपूर्वीवदत्रापि व्याख्या विज्ञेया। अयमत्र विशेषः-त्रिप्रदेशावगाढः= त्रिषु नभः प्रदेशेषु अवगाढः=स्थितः, त्रिप्रदेशावगाढः-त्रिप्रदेशावगाही द्रव्यस्कन्धः। स त्र्यणुकादिकोऽनन्ताणुरूप्यन्तो द्रव्यस्कन्ध आनुपूर्वी।

ननु यदि द्रव्यस्कन्ध एवानुपूर्वी, कथं तर्हि तस्य क्षेत्रानुपूर्वीत्वम्? इति चेत्, उच्यते-क्षेत्रप्रदेशत्रयावगाढपर्यायविशिष्टोऽसौ द्रव्यस्कन्धो गृह्यते, न तु आनुपूर्वी है। यावत् दश प्रदेशों में स्थित समस्त द्रव्यस्कंध दश आनुपूर्वियां हैं। यावत् असंख्यात प्रदेशों में स्थित द्रव्यस्कंध असंख्यात आनुपूर्वियां हैं। (एगपएसोगाढा अणाणुपुव्वीओ! दुप्पएसोगाढा अवत्तव्वयाइं) आकाश के एक २ प्रदेश में स्थित एक पुद्गलपरमाणु संधात आदि अनानुपूर्वियां हैं। दो प्रदेश में स्थित त्र्यणुक द्रव्यस्कंध आदि अवक्तव्यक द्रव्य हैं। यह सूत्रपदों का अर्थ है इनकी व्याख्या के लिये देखो ७५ वां सूत्र।

शंका-त्रिप्रदेशावगाही द्रव्यस्कंध से लेकर अनन्ताणुक पर्यन्त स्कंध-द्रव्य आदि अनानुपूर्वी रूप है तो उसमें क्षेत्रानुपूर्वी रूपता कैसे बन

સ્કંધો ત્રણ આનુપૂર્વીઓ રૂપ હોય છે, એજ પ્રમાણે દસ પર્યન્તના પ્રદેશોમાં સ્થિત સમસ્ત દ્રવ્યસ્કંધો દશ પર્યન્તની આનુપૂર્વીઓ રૂપ હોય છે, સંખ્યાત પ્રદેશોમાં સ્થિત સમસ્ત દ્રવ્યસ્કંધો સંખ્યાત આનુપૂર્વીઓ રૂપ અને અસંખ્યાત આકાશપ્રદેશોમાં સ્થિત સમસ્ત દ્રવ્યસ્કંધો અસંખ્યાત આનુપૂર્વીઓ રૂપ હોય છે. (એગપેસોગાઢા અણાણુપુવ્વીઓ, દુપ્પેસોગાઢા અવત્તવ્વયાઈ) આકાશના એક એક પ્રદેશમાં સ્થિત પ્રત્યેક પુદ્ગલપરમાણુ રૂપ સમુદાય અનાનુપૂર્વીઓ રૂપ છે. એ આકાશપ્રદેશોમાં રહેલા દ્રવ્યણુક દ્રવ્ય સ્કંધો અવક્તવ્યક દ્રવ્યો રૂપ છે. આ પ્રકારનો સૂત્રપદોનો અર્થ થાય છે. તેમની વ્યાખ્યા ૭૫માં સૂત્રમાં આપી છે.

શંકા-ત્રિપ્રદેશાવગાહી દ્રવ્યસ્કંધથી લઈને અનંતાણુક પર્યન્તના દ્રવ્ય-સ્કંધો આનુપૂર્વી રૂપ હોય તો તેમાં ક્ષેત્રાનુપૂર્વી રૂપતા કેવી રીતે સંભવી

तदविशिष्टः, अतोऽत्र क्षेत्रानुपूर्व्यधिकारात् क्षेत्रावगाहपर्यायस्य प्राधान्यात् सोऽपि क्षेत्रानुपूर्वीति न दोषः । अयं भावः-क्षेत्रानुपूर्व्यधिकारादेवात्र प्रदेशत्रयलक्षणस्य क्षेत्रस्यैव मुख्यं क्षेत्रानुपूर्वीत्वम् । एवं च तदवगाहं द्रव्यमपि तत्पर्यायस्य प्राधान्येन विवक्षितत्वात् क्षेत्रानुपूर्वीत्वेन न विरुध्यते, इति ।

सकती है ? क्योंकि क्षेत्रानुपूर्वी रूपता तो प्रदेश ज्यादिरूप क्षेत्रके साथ संबन्ध रखती है ज्यणुकादि पुद्गल स्कंधों के साथ नहीं । शंकाकार का अभिप्राय यह है क्षेत्रानुपूर्वीका जब यहां प्रकरण चल रहा है तो उसमें पुद्गल द्रव्यानुपूर्वी के विचार करने की क्या आवश्यकता है ?

उत्तर-यहां जो त्रिप्रदेशावगाह द्रव्यस्कंध को अनानुपूर्वी कहा है । सो उसका तात्पर्य आकाश के तीन प्रदेशों में अवगाहरूप पर्याय से विशिष्ट द्रव्यस्कंध से हैं । तीन पुद्गलपरमाणुवाले द्रव्यस्कंध अकाशरूप क्षेत्र के तीन प्रदेशों को रोक कर रहते हैं । अतः आकाशके तीन प्रदेश-में अवगाही द्रव्यस्कंध आनुपूर्वी है, ऐसा जानना चाहिये । वैसे तो क्षेत्रानुपूर्वी का अधिकार चला आ रहा है इसलिये मुख्य रूप से क्षेत्रानुपूर्वी तो तीन प्रदेशरूप क्षेत्र ही है । इस प्रकार मुख्यरूप से क्षेत्रानुपूर्वी रूपता तीन प्रदेशरूप क्षेत्र में विवक्षित होने पर भी जो तदवगाह-तीन प्रदेश रूप क्षेत्रावगाही-द्रव्य को क्षेत्रानुपूर्वी कहा है वह क्षेत्रावगाह रूप पर्याय

शके छे ? क्षेत्रानुपूर्वीरूपता तो प्रदेशत्रयादिरूप क्षेत्रनी साथे संबन्ध राखे छे-त्रिअणुक पुद्गलस्कंधोनी साथे संबन्ध राखती नथी शंकाकर्ताने। ओवो अभिप्राय छे के अही' न्यारे क्षेत्रानुपूर्वीने अधिकार आली रह्यो छे, त्यारे पुद्गल द्रव्यानुपूर्वीने विचार करवानी शी आवश्यकता छे ?

उत्तर-अही' ने त्रणु प्रदेशनी अवगाहनावाणा द्रव्यस्कंधने आनुपूर्वी' रूप कहेवामां आंव्यो छे, तेनो अर्थ अही' आ प्रमाणे समजवो जेधअ-त्रणु प्रदेशोमां अवगाहना रूप पर्यायथी युक्त द्रव्यस्कंधने अही' आनुपूर्वी' रूप कहेल छे-त्रणु पुद्गल परमाणुवाणा द्रव्यस्कंधने नही' ते त्रणु पुद्गल परमाणुवाणा द्रव्यस्कंधो आकाश रूप क्षेत्रना त्रणु प्रदेशोने रोकने रहे छे. तेथी आकाशना त्रणु प्रदेशोमां अवगाही (रहेलो) द्रव्यस्कंध आनुपूर्वी' रूप छे, ओम समजवुं. जे के अत्यारे तो अही' क्षेत्रानुपूर्वीने अधिकार आली रह्यो छे, अने मुख्यत्वे क्षेत्रानुपूर्वी' तो त्रणु प्रदेशरूप क्षेत्र न छे. आ रीते क्षेत्रानुपूर्वी' रूपता मुख्यत्वे त्रणु प्रदेश रूप क्षेत्रमां विवक्षित होवा छतां पणु ने त्रणु प्रदेशरूप क्षेत्रावगाही द्रव्यने क्षेत्रानुपूर्वी' रूप कहेवामां आंव्युं छे, ते

નનુ યદિ ક્ષેત્રસ્યૈવ મુખ્યં ક્ષેત્રાનુપૂર્વીત્વં તર્હિ કથં તત્ પરિત્યજ્ય તદવગાઢ દ્રવ્યસ્યાનુપૂર્વીત્વાદિકં ચિન્ત્યતે ? इति चेत्, उच्यते—‘संतपयपरुषणया’ इत्यादि वक्ष्यमाणबहुतरविचारविषयत्वेन द्रव्यस्य शिष्यमतिव्युत्पादनार्थत्वात्, क्षेत्रस्य तु नित्यत्वेन सदावस्थितमानत्वादचलत्वाच्च प्रायस्तत्रानुपूर्व्यादिकल्पनाकरणे शिष्यबुद्धेः सम्यक् प्रवेशाभावात् तत्रानुपूर्वीत्वादिकं न चिन्तयते, अतोऽत्र क्षेत्रावगाढद्रव्यमेव क्षेत्रानुपूर्वीत्वेनोक्तमिति नास्ति कश्चिद् दोषः । एवं चतुष्प्रदेशाऽवगाढद्रव्यादिवपि बोध्यम् । ‘असंख्येयप्रदेशावगाढ आनुपूर्वी’ इत्यस्य असंख्येय-

को प्रधानता से विवक्षित होनेके कारण से कहा है । अतः द्रव्य में भी उपचार से क्षेत्रानुपूर्वी रूपता विरुद्ध नहीं पड़ती है ।

શંકા-જ્ય ક્ષેત્ર મેં હી મુખ્ય રૂપ સે ક્ષેત્રાનુપૂર્વી રૂપતા હૈ તો ફિર ક્યા એસા કારણ હૈ જો હસ મુખ્ય રૂપતા કા પરિત્યાગ કર ઉપચાર કો શરણ કરકે તદવગાહી દ્રવ્ય મેં ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કા વિચાર કિયા જારહા હૈ ?

ઉત્તર (સંતપયપરુષણયા) આદિ રૂપ વક્ષ્યમાણ બહુતર વિચાર કા વિષય દ્રવ્ય હોતા હૈ ઓર હસી કે વિચાર સે શિષ્યોં કી મતિ વ્યુત્પન્ન બનતી હૈ । ક્ષેત્ર તો નિત્ય હૈ તથા સદા અવસ્થિત હૈ અચલ હૈ હસલિયે પ્રાયઃ કરકે હસમેં આનુપૂર્વી આદિ કી કલ્પના કરને મેં શિષ્યજન કી બુદ્ધિકા અઠ્ઠી તરહ પ્રવેશ નહીં હો સકતા હૈ । હસલિયે વહાં પર આનુપૂર્વી આદિ કા વિચાર નહીં કિયા હૈ । અતઃ યહાં પર ક્ષેત્રાવગાહી દ્રવ્ય

ક્ષેત્રાવગાહી રૂપ પર્યાય મુખ્યત્વે વિવક્ષિત હોવાને કારણે કહ્યું છે. તેથી દ્રવ્યમાં પણ ઔપચારિક રૂપે ક્ષેત્રાનુપૂર્વી રૂપતા વિરુદ્ધ પડતી નથી.

શંકા-જો ક્ષેત્રમાં જ મુખ્યત્વે ક્ષેત્રાનુપૂર્વીતાનો સંદ્રભાવ હોય તો શા કારણે આ મુખ્યરૂપતાનો પરિત્યાગ કરીને ઔપચારિકતાનો આધાર લઈને તદવગાહી (તેમાં અવગાહિત થયેલા-રહેલા) દ્રવ્યમાં ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનો વિચાર કરવામાં આવી રહ્યો છે ?

ઉત્તર-સત્પદપ્રરૂપતા આદિ રૂપ નીચે દર્શાવેલા ઘણા વિચારોનો વિષય દ્રવ્ય હોય છે, અને તેના જ વિચારથી શિષ્યોની મતિ વ્યુત્પન્ન બને છે. ક્ષેત્ર તો નિત્ય છે તથા સદા અવસ્થિત છે, અને અચલ છે. તેથી સામાન્યતઃ તેમાં આનુપૂર્વી આદિની કલ્પના કરવાથી એ વાત શિષ્યોના મગજમાં સારી રીતે ઉતરી શકતી નથી તેથી તેને અનુલક્ષીને આદિનો વિચાર કરવામાં આવ્યો નથી અહીં તો ક્ષેત્રાવગાહી દ્રવ્યને ક્ષેત્રાનુપૂર્વી રૂપે પ્રકટ કરવામાં

प्रदेशेषु अवगाढोऽसंख्येयाणुकोऽनन्ताणुको वा द्रव्यस्कन्धः, इत्यर्थो बोद्धव्यः । अत्रेदं बोध्यम्—एकः परमाणुः आकाशस्य एकस्मिन्नेव प्रदेशेऽवगाहते, द्विप्रदेशिका-दयोऽसंख्यातप्रदेशिकान्तास्तु स्कन्धाः प्रत्येकं जघन्यत एकस्मिन्नाकाशप्रदेशे-ऽवगाहन्ते, उत्कृष्टतस्तु यत्र स्कन्धे यावन्तः परमाणवो भवन्ति स स्कन्धस्ताव-त्स्वेव नभः प्रदेशेष्ववगाहते । अनन्ताणुकस्कन्धोऽपि जघन्यत एकस्मिन्नभःप्रदेशे-ऽवगाहते, उत्कृष्टतस्तु—असंख्येयेष्वेव आकाशप्रदेशेष्ववगाहते, नत्वनन्तेषु, लोकाकाशस्यासंख्येयप्रदेशत्वात्, अलोकाकाशे च द्रव्यस्यावगाहाभावादिति । तथा

ही क्षेत्रानुपूर्वी से कहा है । इसमें कोई दोष नहीं है । इसी प्रकार से चतुष्प्रदेशावगाढ द्रव्य आदिकों के विषयमें भी ऐसा ही जानना चाहिये ।

“असंख्येयप्रदेशावगाढ आनुपूर्वी” इस पद का अर्थ आकाश के असंख्यात प्रदेशों में असंख्यात अणुवाला अथवा अनन्त अणुवाला द्रव्य-स्कन्ध आनुपूर्वी है ऐसा जानना चाहिये । तात्पर्य इसका यह है कि एक पुद्गलपरमाणु आकाश के एकही प्रदेश में अवगाही होता है । परन्तु दो प्रदेशवाले पुद्गलस्कन्ध से लेकर असंख्यात प्रदेशवाले जो पुद्गलस्कन्ध है उनमें प्रत्येक पुद्गल स्कन्ध कमसे कम एक आकाश प्रदेश में रहता है और अधिक से अधिक जिस स्कन्ध में जितने प्रदेश हैं—जितने परमा-णुओं का बना हुआ है—वह उतने ही आकाश के प्रदेशों में ठहरता है । अनन्त आकाश प्रदेशों में नहीं । क्योंकि द्रव्यों का अवगाह असंख्यात प्रदेशवाले लोकाकाश में ही है । अनन्त प्रदेश वाले अलोकाकाश में

आवेद છે તેથી તે કથનમાં કોઈ દોષ નથી એજ પ્રમાણે ચાર પ્રદેશાવગાઢ-
દ્રવ્ય વગેરેના વિષયમાં પણ એમ જ સમજવું જોઈએ.

“અસંખ્ય પ્રદેશાવગાઢ આનુપૂર્વી” આ પદનો અર્થ નીચે પ્રમાણે
સમજવો—આકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં અસંખ્યાત અણુવાળો અથવા
અનંત અણુવાળો દ્રવ્યસ્કંધ આનુપૂર્વી છે એમ સમજવું આ કથનનો
ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—એક પુદ્ગલપરમાણુ આકાશના એક જ પ્રદેશમાં
અવગાહી હોય છે. પરન્તુ જે પ્રદેશવાળા પુદ્ગલસ્કંધથી લઈને અસંખ્યાત
પ્રદેશવાળા જે પુદ્ગલ સ્કંધો છે, તેમાંના પ્રત્યેક પુદ્ગલ સ્કંધ ઓછામાં
ઓછા એક આકાશપ્રદેશમાં રહે છે અને વધારેમાં વધારે તે સ્કંધના જેટલા
પ્રદેશો હોય—જેટલા પરમાણુઓનો તે સ્કંધ બનેલો હોય—એટલાજ આકાશ-
પ્રદેશોમાં તે રહે છે, અનંત આકાશપ્રદેશોમાં તે રહેતો નથી, કારણ કે
દ્રવ્યોનો અવગાહ અસંખ્યાત પ્રદેશવાળા લોકાકાશમાં જ છે—અનંત પ્રદેશ-

एकप्रदेशावगाढः-एकस्मिन्नेव नभःप्रदेशे अवगाढः=स्थितः परमाणुसङ्घातः स्कन्धसङ्घातश्च क्षेत्रतोऽनानुपूर्वीति । तथा-द्विप्रदेशावगाढः-आकाशस्य प्रदेश-द्वयेऽवगाढः=स्थितो द्विप्रदेशिकादिस्कन्धः क्षेत्रतोऽवक्तव्यकमिति । प्रकृतमुपसंहरन्नाह-‘से तं’ इत्यादि । सैषा नैगमव्यवहारयोरर्थप्ररूपणतेति ॥ सू० १०२ ॥

नहीं । तात्पर्य यह है कि आधारभूत क्षेत्र के प्रदेशों कि संख्या आधेय-पुद्गल द्रव्य के परमाणुओं की संख्या से न्यून या उसके बराबर हो सकती है, अधिक नहीं । इसलिये एक परमाणु एकही आकाश प्रदेश स्थित रहता है पर द्रव्यणुक एक प्रदेश में भी ठहर सकता है और दो में भी इसी प्रकार उत्तरोत्तर संख्या बढ़ते २ द्रव्यणुक चतुरणुक-यावत् संख्याताणुक स्कंध एक प्रदेश दो प्रदेश तीन प्रदेश यावत् संख्यात प्रदेश क्षेत्र में ठहर सकते हैं संख्याताणुक द्रव्य की स्थिति के लिए असंख्यात प्रदेश वाले क्षेत्र की आवश्यकता नहीं पड़ती । असंख्याताणुक स्कंध एक प्रदेश से लेकर अधिक से अधिक अपने बराबर की अधिक संख्यावाले प्रदेश के क्षेत्र में ठहर सकता है । अनन्ताणुक और अनन्तान्ताणुक स्कंध भी एकप्रदेश दो प्रदेश इत्यादि क्रम से बढ़ते २ संख्यात प्रदेश और असंख्यात प्रदेशवाले क्षेत्र में ठहर सकते हैं, उनकी स्थिति के लिये अनंत प्रदेशात्मक क्षेत्र जरूरी नहीं है । तथा एकही आकाश-

વાળા અલોકાકાશમાં નથી આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે આધારભૂત ક્ષેત્રના પ્રદેશોની સંખ્યા આધેયભૂત પુદ્ગલદ્રવ્યના પરમાણુઓની સંખ્યા કરતાં ઓછી પણ હોઈ શકે છે અને બરાબર પણ હોઈ શકે છે, પરંતુ અધિક હોઈ શકતી નથી તેથી એક પરમાણુ એક જ આકાશપ્રદેશમાં રહી શકે છે પણ બે આણુવાળો સ્કંધ એક આકાશપ્રદેશમાં પણ રહી શકે છે અને બે આકાશપ્રદેશોમાં પણ રહી શકે છે એજ પ્રમાણે ઉત્તરોત્તર આણુઓની સંખ્યા વધતાં વધતાં બે ત્રિઆણુક, ચતુરણુક આદિ સંખ્યાતાણુક પર્યંતના સ્કંધો પણ એક પ્રદેશમાં, બે પ્રદેશમાં, ત્રણપ્રદેશમાં અને સંખ્યાત સુધીના આકાશપ્રદેશોમાં રહી શકે છે. સંખ્યાતાણુક દ્રવ્યને રહેવાને માટે અસંખ્યાત પ્રદેશોવાળા ક્ષેત્રની જરૂર પડતી નથી, અસંખ્યાતાણુક સ્કંધ એક પ્રદેશથી લઈને વધારેમાં વધારે પોતાના બરાબરની અધિક સંખ્યાવાળા પ્રદેશના ક્ષેત્રમાં રહી શકે છે. અનંતાણુક સ્કંધ અને અનંતાનતાણુક સ્કંધ પણ એક પ્રદેશમાં, બે પ્રદેશમાં, ત્રણ પ્રદેશમાં અને એજ ક્રમે વધતાં વધતાં સંખ્યાત પ્રદેશવાળા ક્ષેત્રમાં રહી શકે છે. તેમની સ્થિતિને માટે (તેમને રહેવાને માટે) અનંત પ્રદેશવાળા ક્ષેત્રની જરૂર પડતી નથી તથા એક જ આકાશપ્રદેશમાં

મૂલમ્—(एयाए णं णेगमववहाराणं अत्थपयपरूवणयाए किं पओयणं?) एयाए णं णेगमववहाराणं अत्थपयपरूवणयाए णेगम-
ववहाराणं भंगसमुक्कित्तणया कज्जइ ॥सू० १०३॥

છાયા—(एतया खलु नैगमव्यवहारयोः अर्थपदप्ररूपणतया किं प्रयोजनम्?) एतया खलु नैगमव्यवहारयोरर्थपदप्ररूपणताया नैगमव्यवहारयोः भङ्गसमुत्कीर्त्तनता क्रियते ॥सू० १०३॥

ટીકા—‘एयाए णं’ इत्यादि—

નૈગમવ્યવહારસમ્મતયા એતયા અર્થપદપ્રરૂપણતયા કિં પ્રયોજનમ્? ઇતિ પ્રશ્નઃ ।
એતયા હિ ભંગસમુત્કીર્તનતા ક્રિયતે ઇત્યુત્તરમ્ ॥સૂ० ૧૦૩॥

પ્રદેશ મેં સ્થિત પરમાણુ સંઘાત ઓર સ્કંધ સંઘાત ક્ષેત્રકી અપેક્ષા અના-
નુપૂર્વી હૈ તથા દ્વિપ્રદેશાગાઢ-આકાશકે દો પ્રદેશોં મેં સ્થિત-દ્વિપ્રદેશિક
આદિ સ્કંધ, ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા અવક્તવ્યક હૈ । ઇસ પ્રકાર ઘહ નૈગમવ્યવ-
હારનય સંમત અર્થપદ પ્રરૂપણતા હૈ ॥ સૂ० ૧૦૨ ॥

“एयाएणं णेगमववहाराणं” इत्यादि ।

શબ્દાર્થ—(एयाएणं णेगमववहाराणं अत्थपयपरूवणयाए किं पओयणं?)
હે ભદન્ત ! નૈગમ વ્યવહારનય સંમત અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કે પ્રથમ
ભેદ રૂપ ઇસ અર્થપદપ્રરૂપણતા સે કયા પ્રયોજન સિદ્ધ હોતા હૈ ?

ઉત્તર—(एयाएणं णेगमववहाराणं अत्थपयपरूवणयाए णेगमववहा-
राणं भंगसमुक्कित्तणया कज्जइ) નૈગમવ્યવહારનયસંમત અનૌપ-
નિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કે પ્રથમ ભેદ રૂપ ઇસ અર્થપદ પ્રરૂપણતા સે ભંગ-

સ્થિત પરમાણુ સંઘાત અને સ્કંધ સંઘાતક્ષેત્રની અપેક્ષાએ અનાનુપૂર્વી છે
તથા દ્વિપ્રદેશાવગાઢ (આકાશના બે પ્રદેશોમાં રહેલા) દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધ
ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ અવક્તવ્યક છે, એમ સમજવું નૈગમવ્યવહાર નયસંમત
અર્થપદપ્રરૂપણતાનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે. ॥સૂ० ૧૦૨॥

“एयाएणं णेगमववहाराणं” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(एयाएणं णेगमववहाराणं अत्थपयपरूवणयाए किं पओयणं?) હે
ભગવન્ ! નૈગમ વ્યવહારનયસંમત અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીના પ્રથમ ભેદ
રૂપ આ અર્થપદપ્રરૂપણતાથી કયું પ્રયોજન સિદ્ધ થાય છે ?

ઉત્ત—(एयाए णं णेगमववहाराणं अत्थपयपरूवणयाए णेगमववहाराणं भंगस-
मुक्कित्तणया कज्जइ) નૈગમવ્યવહારનયસંમત અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીના
પ્રથમ ભેદ રૂપ આ અર્થપદપ્રરૂપણતા વડે ભંગસમુત્કીર્તનતા રૂપ પ્રયોજન

મૂલમ્—સે કિં તં જેગમવવહારાણં મંગસમુક્તિત્તળયા ? જેગ-
મવવહારાણં મંગસમુક્તિત્તળયા—અત્થિ આણુપુઘ્વી, અત્થિ અણા-
ણુપુઘ્વી, અત્થિ અવત્તવ્વણ્ણ. એવં દ્વાણુપુઘ્વિગમેણં સેત્તાણુપુઘ્વીણ
વિ તે ચેવ છવ્વીસં મંગા માણિયવા, જાવ સે તં મંગસમુક્તિ-
ત્તળયા ॥સૂ૦ ૧૦૪॥

છાયા—અથ કા સા નૈગમવ્યવહારયોઃ મજ્જસમુત્કીર્તનતા ? નૈગમવ્યવહારયોઃ
મજ્જસમુત્કીર્તનતા—અસ્તિ આનુપૂર્વી, અસ્તિ અનાનુપૂર્વી, અસ્તિ અવક્તવ્યકમ્ ।
એવં દ્રવ્યાનુપૂર્વીગમેન ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યામપિ ત એવ ષટ્ત્રિંશતિર્મજ્જા મણિતવ્યાઃ, યાવત્
સૈવા નૈગમવ્યવહારયોઃ મજ્જોપદર્શનતા ॥સૂ૦ ૧૦૪॥

ટીકા—અથ મજ્જસમુત્કીર્તનતાં પ્રરૂપયિતુમાહ—‘ સે કિં તં ’ ઇત્યાદિ । અથ
કા સા નૈગમવ્યવહારસમ્મતા મજ્જસમુત્કીર્તનતા ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—‘ જેગમ-
વવહારાણં ’ ઇત્યાદિ । નૈગમવ્યવહારસમ્મતા મજ્જસમુત્કીર્તનતા—અસ્તિ આનુપૂર્વી,

સમુત્કીર્તનતા રૂપ પ્રયોજન સિદ્ધ હોતા છે । ઇસકે ભાવાર્થ કે લિયે પીછે
૭૬ વેં સૂત્ર કે ભાવર્થ કો દેખો । ॥ ૧૦૩ ॥

અવ સૂત્રકાર ઇસી મંગસમુત્કીર્તનતા કા નિરૂપણ કરતે હૈ—
“સે કિં તં જેગમવવહારાણં” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં જેગમવવહારાણં મંગસમુક્તિત્તળયા ?) હે
મદન્ત ! નૈગમવ્યવહારનયસંમત વહ મંગ સમુત્કીર્તનતા કયા હૈ ?

ઉત્તર—(જેગમવવહારાણં મંગસમુક્તિત્તળયા અત્થિ આણુપુઘ્વી અત્થિ
અણાણુપુઘ્વી, અત્થિ અવત્તવ્વણ્ણ) નૈગમવ્યવહારનયસંમત વહ મંગ-
સમુત્કીર્તનતા ઇસ પ્રકાર સે હૈ—આનુપૂર્વી હૈ, અનાનુપૂર્વી હૈ અવક્ત-

સિદ્ધ થાય છે આ પદના ભાવાર્થ માટે આગળના ૭૬માં સૂત્રનો
ભાવાર્થ વાંચી જવો. ॥સૂ૦ ૧૦૩॥

હવે સૂત્રકાર એજ મંગસમુત્કીર્તનતાનું નિરૂપણ કરે છે—

“ સે કિં તં જેગમવવહારાણં ” ઇત્યાદિ—

ઉત્તર—(જેગમવવહારાણં મંગસમુક્તિત્તળયા અત્થિ આણુપુઘ્વી, અત્થિ
અણાણુપુઘ્વી, અત્થિ અવત્તવ્વણ્ણ) નૈગમવ્યવહારનયસંમત તે મંગસમુત્કીર્તનતાનું
આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે—આનુપૂર્વી છે, અનાનુપૂર્વી છે, અને અવક્તવ્યક છે,

અસ્તિ અનાનુપૂર્વી, અસ્તિ અવક્તવ્યકમ્ । એવં દ્રવ્યાનુપૂર્વીગમેન=દ્રવ્યાનુપૂર્વીપાઠવત્
ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમપિ ત એવ=દ્રવ્યાનુપૂર્વીપ્રકરણે ૭૭-૭૮ સૂત્રે પ્રોક્તા એવ, પદ્મવિંશતિ
ભક્તા મણિતવ્યાઃ । કિમવધિ મણિતવ્યાઃ ? ઇત્યાહ-‘ જાવ સે તં ’ ઇત્યાદિ । યાવત્
સૈષા નૈગમવ્યવહારસમ્પત્તા મજ્જસમુત્કીર્તનતેતિ ॥ સૂ૦ ૧૦૪ ॥

મૂલમ્-એયાએળં નેગમવવહારાણં મંગસમુક્તિત્તળયાએ કિં-
પઓયણં ? એયાએળં નેગમવવહારાણં મંગસમુક્તિત્તળયાએ નેગમ-
વવહારાણં મંગોવેદંસળયા કજ્જહ ॥ સૂ૦ ૧૦૫ ॥

છાયા-એતયા સ્વલ્લ નૈગમવ્યવહારયોઃ મજ્જસમુત્કીર્તનતયા કિં પ્રયોજનમ્ ?
એતયા સ્વલ્લ નૈગમવ્યવહારયોઃ મજ્જસમુત્કીર્તનતયા નૈગમવ્યવહારયો મજ્જોપદર્શનતા
ક્રિયતે ॥ સૂ૦ ૧૦૫ ॥

વ્યકત્ત્વે । (એવં દ્રવ્યાણુપુલ્લિગમેણં સ્વેત્તાણુપુલ્લીએ વિ તે ચેવ છલ્લીસં મંગા-
માણિયલ્લા અલ્લિ સે તં મંગસમુક્તિત્તળયા) હસ પ્રકાર દ્રવ્યાનુપૂર્વી કે
પાઠ કી તરહ ક્ષેત્રાનુપૂર્વી મેં મી દ્રવ્યાનુપૂર્વી કે પ્રકરણ મેં કહે ગયે ૨૬
મંગ જાનના ચાહિયે । હનમંગો કે વિષય કો સ્પષ્ટ કરનેલા પાઠ ૭૭
-૭૮ સૂત્રોં મેં પીછે કહા ગયા હૈ-સો વહાંતક હસમંગ વિષયક પાઠ કો
ગ્રહણ કરના ચાહિયે । યહ પાઠ “સે તં મંગસમુક્તિત્તળયા” યહીં તક
હૈ । હસ સૂત્ર કી વ્યાખ્યા કે લિયે હન્હીં સૂત્રોં કી વ્યાખ્યા કો દેલ્લની
ચાહિયે । ॥ સૂ૦ ૧૦૪ ॥

અલ્લ સૂત્રકાર હસ મંગસમુત્કીર્તનતા કા કયા પ્રયોજન હૈ ? હસવાત કો
સ્પષ્ટ કરતે હૈ-‘ એયાએ ણં નેગમવવહારાણં મંગસમુક્તિત્તળયાએ ’ ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ-(એયાએ ણં નેગમવવહારાણં મંગસમુક્તિત્તળયાએ કિં પઓ-

(એવં દ્રવ્યાણુપુલ્લિગમેણં સ્વેત્તાણુપુલ્લીએ વિ તે ચેવ છલ્લીસં મંગા માણિયલ્લા
જાવ સે તં મંગસમુક્તિત્તળયા) આ પ્રકારે દ્રવ્યાનુપૂર્વીના પાઠની જેમ ક્ષેત્રાનુ-
પૂર્વીમાં પણ દ્રવ્યાનુપૂર્વીના પ્રકરણમાં કહેવામાં આવેલા ૨૬ ભાગાઓ કહેવા
જોઈએ. આ ભાગોના (ભાગાઓના) વિષયની સ્પષ્ટતા ૭૭ તથા ૭૮ માં
સૂત્રોમાં કરવામાં આવી ચુકી છે, “સે તં મંગસમુક્તિત્તળયા” આ સૂત્રપાઠ
પર્યન્તનો સૂત્રપાઠ ત્યાંથી ગ્રહણ કરવો જોઈએ. આ સૂત્રની વ્યાખ્યાને માટે
ઉપર્યુક્ત બંને સૂત્રોની વ્યાખ્યા વાંચી લેવી. ॥ સૂ૦ ૧૦૪ ॥

“એયાએળં નેગમવવહારાણં મંગસમુક્તિત્તળયાએ” ઇત્યાદિ-

શબ્દાર્થ-(એયાએ ણં નેગમવવહારાણં મંગસમુક્તિત્તળયાએ કિં પઓયણં ? હે
ભગવન્ ! નૈગમ અને વ્યવહારનયસંભત આ ભંગસમુત્કીર્તનતાનું શું પ્રયોજન છે ?

ટીકા—‘एयाए णं’ इत्यादि । व्याख्या सुगमा सा अष्ट सप्ततितम ७८ सूत्रे विलोकनीया ॥सू. १०५॥

મૂલમ્—સે કિં તં નેગમવવહારાણં મંગોવદંસણયા ? નેગમ-વવહારાણં મંગોગદંસણયા તિપ્પણસોગાઢે આણુપુઘ્વી, ઇગપણસો-ગાઢે અણાણુપુઘ્વી, દુપ્પણસોગાઢે અવત્તવણ, તિપ્પણસોગાઢા આણુપુઘ્વીઓ, ઇગપણસોગાઢા અણાણુપુઘ્વીઓ, દુપ્પણસોગાઢા અવત્તવયાઈ ॥સૂ૦ ૧૦૬॥

છાયા—અથ કાં સા નૈગમવ્યવહારયોઃ મજ્ઞોપદર્શનતા ? નૈગમવ્યવહારયોર્મજ્ઞોપ-દર્શનતા—ત્રિપ્રદેશાવગાઢ આનુપૂર્વી, એકપ્રદેશાવગાઢઃ અનાનુપૂર્વી, દ્વિપ્રદેશાવગાઢઃ યણં ?) હે મદન્ત ! નૈગમવ્યવહારનય સંમત હસ મંગસમુત્કીર્તનતા કા કયા પ્રયોજન હૈ ?

ઉત્તર—(एयाएणं नैगमववहाराणं मंगसमुक्कित्तणयाए नैगमववहाराणं मंगोवदंसणया कज्जइ) नैगमव्यवहारनय संमत हस मंगसमुत्कीर्तनता से नैगमव्यवहारनय संमत मंगों को दिखाया जाता है—अर्थात् उनकी प्ररूपणा की जाती है । इसलिये मंगसमुत्कीर्तनताका मंगों को दिखलाना यही प्रयोजन है । इसकी व्याख्या के लिये पीछे का ७८ अठहत्तर वां सूत्र देखो । ॥ सू० १०५ ॥

“સે કિં તં નેગમવવહારાણં” इत्यादि ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નેગમવવહારાણં મંગોવદંસણયા) હે મદન્ત ! નૈગમવ્યવહારનય સંમત વહ મંગોપદર્શનતા કયા હૈ ?

ઉત્તર—(नैगमववहाराणं मंगोवदंसणया) नैगमव्यवहारनय संमत

ઉત્તર—(एयाएणं णं नैगममहाराणं मंगसमुक्कित्तणयाए नैगमववहाराणं मंगोवदंसणया कज्जइ) नैगमव्यवहारनयसंमत आ मंगसमुत्कीर्तनता वडे नैगमव्यवहारनयसंमत लांगाओ जाताववाभां आवे छे, ओटले के तेमनी प्ररूपणा करवाभां आवे छे. तेथी लंगोने (लांगाओने) प्रकट करवानुं न प्रयोजन छे. आ सूत्रनी व्याख्याने भाटे आगणतुं ७८मुं सूत्र वांछी नतुं. ॥सू० १०५॥

“સે કિં તં નેગમવવહારાણં” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નેગમવવહારાણં મંગોવદંસણયા?) હે ભગવન્ ! નૈગમવ્યવહાર નયસંમત તે લંગોપદર્શનતાતું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર—(नैगमववहाराणं मंगोवदंसणया) नैगमव्यवहारनयसंमत लंगोपदर्श-नतातुं स्वरूप आ प्रकारतुं छे—

અવક્તવ્યકમ્ । ત્રિપ્રદેશાવગાઢા આનુપૂર્વ્યઃ, એકપ્રદેશાવગાઢા અનાનુપૂર્વ્યઃ, દ્વિપ્રદેશાવગાઢા અવક્તવ્યકાનિ ॥સૂ૦ ૧૦૬॥

ટીકા—સમ્પતિ મંગ્ગોપદર્શનતાં નિરૂપયિતુમાહ—‘સે કિં તં’ इत्यादि । ટીકા સુગમા ॥સૂ૦ ૧૦૬॥

મંગ્ગોપદર્શનતા હસ પ્રકાર સે હૈ—(તિષ્પણ્સોગાઢે ઓણુપુન્વી એગપણ્સોગાઢે અણાણુપુન્વી દુષ્પણ્સોગાઢે અવક્તવ્વણ) આકાશ કે ત્રીન પ્રદેશોં મેં રહા હુઆ ઝ્યણુક આદિ સ્કંધ આનુપૂર્વી હસ શબ્દકા વાચ્યાર્થ હૈ । એકપ્રદેશ મેં સ્થિત પરમાણુ સંઘાત, ઓર સ્કંધ સંઘાત ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા અનાનુપૂર્વી હૈ તથા આકાશ કે દો પ્રદેશોં મેં સ્થિત દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધ ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા અવક્તવ્યક હૈ । (તિષ્પણ્સોગાઢા ઓણુપુન્વીઓ, એગપણ્સોગાઢા અણાણુપુન્વીઓ, દુષ્પણ્સોગાઢા અવક્તવ્વયાઈ) આકાશ કે ત્રીન પ્રદેશોં મેં રહે હુએં બહુત સે ઝ્યણુક આદિ સ્કંધ આનુપૂર્વિયાં હસ બહુવચનાન્ત શબ્દ કે વાચ્યાર્થ હૈ । આકાશકે એક પ્રદેશ મેં રહે હુએ અનેક પરમાણુ સંઘાત આદિ દ્રવ્ય, અનાનુપૂર્વિયાં હસ શબ્દકે વાચ્યાર્થ હૈ । તથા દ્વિપ્રદેશ મેં સ્થિત અનેક દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધ અવક્તવ્યક હસ બહુવચનાન્ત શબ્દ કે વાચ્યાર્થ હૈ । હસકી વ્યાખ્યા કે લિયે પીછે ૭૯ વેં સૂત્ર કી વ્યાખ્યા દેખની ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧૦૬ ॥

(તિષ્પણ્સોગાઢે ઓણુપુન્વી એગપણ્સોગાઢે અણાણુપુન્વી દુષ્પણ્સોગાઢે અવક્તવ્વણ) આકાશના ત્રણ પ્રદેશોમાં રહેલા ઝ્યણુક (ત્રણ અણુનાળા) આદિ સ્કંધ ‘આનુપૂર્વી’ આ શબ્દના વાચ્યાર્થ રૂપ છે. એકપ્રદેશમાં સ્થિત પરમાણુ સંઘાત, અને સ્કંધ સંઘાત ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ અનાનુપૂર્વી છે તથા આકાશના બે પ્રદેશોમાં રહેલ દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધ ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ અવક્તવ્યક છે (તિષ્પણ્સોગાઢા ઓણુપુન્વીઓ એગપણ્સોગાઢા અણાણુપુન્વીઓ, દુષ્પણ્સોગાઢા અવક્તવ્વયાઈ) ઘણાં જ ત્રિઅણુક આદિ સ્કંધો “આનુપૂર્વીઓ” આ બહુવચનાન્ત શબ્દના વાચ્યાર્થ રૂપ છે. આકાશના એક પ્રદેશમાં રહેલા અનેક પરમાણુ સંઘાત આદિ દ્રવ્યો “અનાનુપૂર્વીઓ” આ પદના વાચ્યાર્થ રૂપ છે. બે પ્રદેશોમાં સ્થિત અનેક દ્વિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધો “અવક્તવ્યકો” આ બહુવચનાન્ત પદના વાચ્યાર્થ રૂપ છે. આ સૂત્રની વ્યાખ્યા સમજવા માટે ૭૬ માં સૂત્રની વ્યાખ્યા વાંચી લેવી. ॥ સૂ. ૧૦૬ ॥

મૂલમ્—અહવા તિપ્પણસોગાઢે ય ઇગપણસોગાઢે ય આણુપુઘ્વી
ય અણાણુપુઘ્વી ય, એવં તહા ચેવ દઘ્વાણુપુઘ્વિગમેણં છઘ્વીસં મંગા
માણિયઘ્વા જાવ સે તં ણેગમવઘ્વાહારાણં મંગોવદંસણયા ॥સૂ૦ ૧૦૭॥

છાયા—અથવા—ત્રિપ્રદેશાવગાઢશ્ચ એકપ્રદેશાવગાઢશ્ચ આનુપૂર્વી ચ અનાનુપૂર્વી
ચ । એવં તથાચેવ દ્રઘ્યાનુપૂર્વીગમેન ષઢ્વિંશતિર્મજ્ઞા મણિતઘ્વા યાઘ્વત્ સૈષા
નૈગમવઘ્વાહારયોઃ મજ્ઞોપદર્શનતા ॥સૂ૦ ૧૦૭॥

ટીકા—‘અહવા’ ઇત્યાદિ । ઘ્યાઘ્વા સુગમા ॥સૂ૦ ૧૦૭॥

“અહવા તિપ્પણસોગાઢે ય” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(અહવા તિપ્પણસોગાઢે ય ઇગપણસોગાઢે ય આણુપુઘ્વીય)
અણાણુપુઘ્વીય) અથવા—ત્રિપ્રદેશાવગાઢ સ્કંધ ઓર એકપ્રદેશાવગાઢ
સ્કંધ એક આનુપૂર્વી ઓર એક અનાનુપૂર્વી હૈં । (એવં તહાચેવ દઘ્વાણુપુ-
ઘ્વિગમેણં છઘ્વીસં મંગા માણિયઘ્વા જાવ સે તં ણેગમવઘ્વાહારાણં મંગોવ
દંસણયા) ઇસ તરહ દ્રઘ્યાનુપૂર્વી કે પાઠ કી તરહ ૨૬, મંગ સમજ્ઞ લેના
ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર યહ નૈગમ વઘ્વાહારનયસંમત મંગોપદર્શનતા હૈ ।

સૂત્રકારને યહ ઘાત પહિલે દ્રઘ્યાનુપૂર્વી કે પ્રકરણ મૈં સ્પષ્ટ કરદી
હૈ કિ એકવચનાન્ત ઓર ઘુવચનાન્ત આનુપૂર્વી આદિ-૩-૩ પદોં કે
અસંયોગ ઓર સંયોગપક્ષ મૈં ૨૬, મંગ કિસ પ્રકાર સે ઘનતે હૈં ઓર ઇન
સઘકા ઘાઘ્યાર્થ ઘ્યા ૨ હૈ । ઁસ દ્રઘ્યાનુપૂર્વી કે પ્રકરણગત આનુપૂર્વી,

“અહવા તિપ્પણસોગાઢે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(અહવા તિપ્પણસોગાઢે ય ઇગપણસોગાઢે ય આણુપુઘ્વી ય અણા-
ણુપુઘ્વી ય) અથવા—ત્રિપ્રદેશાવગાઢ સ્કંધ (આકાશના ત્રણ પ્રદેશોમાં રહેલો
સ્કંધ) અને એક પ્રદેશાવગાઢ સ્કંધ એક આનુપૂર્વી અને એક અનાનુપૂર્વી છે.
(એવં તહાચેવ દઘ્વાણુપુઘ્વિગમેણં છઘ્વીસં મંગા માણિયઘ્વા જાવ સે તં ણેગમ-
વઘ્વાહારાણં મંગોવદંસણયા) એજ પ્રમાણે દ્રઘ્યાનુપૂર્વીના પાઠની જેમ ૨૬
ભાંગાઓ સમજ્ઞ લેવા લેઘએ.

આ પ્રકારનું નૈગમવઘ્વાહાર નયસંમત ભંગોપદર્શનતાનું સ્વરૂપ છે.

સૂત્રકારે પહેલાં દ્રઘ્યાનુપૂર્વીના પ્રકરણમાં એ ઘાત સ્પષ્ટ કરી છે કે એકવચ-
નાન્ત અને ઘુવચનાન્ત આનુપૂર્વી આદિ ત્રણ-ત્રણ પદોના અસંયોગ અને
સંયોગ પક્ષે ૨૬ ભાંગાઓ કેવી રીતે ઘને છે, અને તેમનો ઘાઘ્યાર્થ શો ઘાય છે.

તે દ્રઘ્યાનુપૂર્વીના પ્રકરણમાં ઘતાવેલાં આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી અને
અઘક્તઘ્યક આદિ પદોના ઘાઘ્યાર્થમાં ત્રિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધ, એક પ્રદેશી

અનાનુપૂર્વીં ઓર અવક્તવ્યક આદિ પદોં કે વાચ્યાર્થ મેં ત્રિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધ એક પ્રદેશી પુદ્ગલ પરમાણુ ઓર દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ આદિ આતે હેં । તથા કિ હસ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીં કે પ્રકરણ ગત અંગોપદર્શનતા મેં આકાશ કે ત્રીન પ્રદેશોં મેં સ્થિત ત્રિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધ હી આનુપૂર્વીં શબ્દ કે વાચ્યાર્થ માને ગયે હેં । એક દો આકાશ કે પ્રદેશોં મેં સ્થિત ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ આનુપૂર્વીં શબ્દકે વાચ્યાર્થ નહીં માને ગયે હેં । કયોંકિ યહ પહિલે કહા જા ચુકા હેં કિ ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ આકાશકે એકપ્રદેશ મેં બી અવગાહી હો સકતા હે, દો પ્રદેશ મેં બી અવગાહી હો સકતા હે ઓર ત્રીન પ્રદેશોં મેં બી ઠહર સકતા હે । ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ કે લિયે આકાશ કે ચાર પ્રદેશોં કી ઠહરને કે લિયે આવશ્યકતા નહીં હે । હસી પ્રકાર જો ચતુષ્પ્રદેશિક સ્કંધ હોગા હસે અપને કો અવગાહિત હોને કે લિયે આકાશ કે એક દો, ત્રીન, એવં ચાર પ્રદેશ આપેક્ષિક હોંગે । પાંચ પ્રદેશ નહીં । હસલિયે ક્ષેત્રાનુપૂર્વીં મેં યદિ ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ આકાશ કે એક પ્રદેશ મેં અથવા દો પ્રદેશ મેં સ્થિત હે, તો વહ ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા અનાનુપૂર્વીં ઓર અવક્તવ્યક શબ્દ કા વાચ્યાર્થ હોગા । ક્ષેત્રકી અપેક્ષા આનુપૂર્વીં ત્રીનપ્રદેશ સે હી પ્રારંભ હોતી હે । હસી તરહ જો અસંખ્યાત પ્રદે-

પુદ્ગલપરમાણુ અને દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ આદિ આવે છે. પરંતુ આ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીંના પ્રકરણગત અંગોપદર્શનતામાં આકાશના ત્રણ પ્રદેશોમાં સ્થિત ત્રિપ્રદેશિક આદિ સ્કંધ જ આનુપૂર્વીં શબ્દના વાચ્યાર્થ રૂપે માનવામાં આવેલ છે. એક પ્રદેશમાં કે બે પ્રદેશોમાં સ્થિત ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધને અહીં આનુપૂર્વીં શબ્દના વાચ્યાર્થ રૂપે માનવામાં આવેલ નથી, કારણ કે એ વાત તો આગળ પ્રકટ કરવામાં આવી ચુકી છે કે ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ આકાશના એકપ્રદેશમાં પણ અવગાહી થઈ શકે છે—રહી શકે છે, બે પ્રદેશોમાં પણ અવગાહી થઈ શકે છે અને ત્રણ પ્રદેશોમાં પણ અવગાહી થઈ શકે છે. ત્રિપ્રદેશી સ્કંધને રહેવા માટે આકાશના ચાર પ્રદેશોની આવશ્યકતા રહેતી નથી. એજ પ્રમાણે ચાર પ્રદેશિક સ્કંધને રહેવા માટે આકાશના એક બે, ત્રણ અથવા ચાર પ્રદેશોની આવશ્યકતા રહે છે. તેને રહેવા માટે પાંચ પ્રદેશોની જરૂર પડતી નથી. તેથી જ એવું કહેવામાં આવ્યું છે કે ‘જો ત્રિપ્રદેશિક સ્કંધ આકાશના એક પ્રદેશમાં અથવા બે પ્રદેશોમાં રહેલો હોય, તો ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ તેને અનાનુપૂર્વીં અને અવક્તવ્યક શબ્દના વાચ્યાર્થ રૂપ જ ગણવે. જોઈએ ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વીંના પ્રારંભ ત્રણ પ્રદેશોથી જ થાય છે, એજ પ્રમાણે જે

મૂલ્મ-સે કિં તં સમોયારે? સમોયારે ણેગમવવહારાણં
આણુપુઘીદવાઈં કહિં સમોયરંતિ? કિં આણુપુઘીદવેહિં સમો-
યરંતિ અણાણુપુઘીદવેહિં સમોયરંતિ? અવત્તવગદવેહિં સમોય-
રંતિ?, આણુપુઘીદવાઈં આણુપુઘીદવેહિં સમોયરંતિ નો અણાણુ-
પુઘીદવેહિં નો અવત્તવયદવેહિં સમોયરંતિ । एवं तिणिण वि
सट्ठाणे समोयरंतित्ति भाणियव्वं । से तं समोयारे ॥સૂ૦ ૧૦૮॥

છાયા—અથ કોઽસૌ સમવતારઃ? સમવતારો નૈગમવ્યવહારયોઃ આનુપૂર્વી
દ્રવ્યાણિ કુત્ર સમવતરન્તિ? કિમ્ આનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ? અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ

શવાલા-સ્કંધ હોગા-વહ મ્હી આકાશકે એક, દો, ત્રીન આદિ પ્રદેશોં મેં
અવગાહી હો સકતા હૈં ઓર અસંખ્યાત પ્રદેશોં મેં મ્હી અવગાહી હો સ-
કતા હૈં । અતઃ ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા યહ અસંખ્યાતાણુક સ્કંધ મ્હી એકપ્રદેશ
મેં સ્થિત હોનેપર અનાનુપૂર્વી ઓર દો પ્રદેશ મેં અવત્તવ્યક અવગાહિત
હોને પર માના જાવેગા । તથા ત્રીન આદિ અસંખ્યાત પ્રદેશોં મેં સ્થિત
હોનેપર આનુપૂર્વી માના જાવેગા । હસ પ્રકાર સે ચિત્તમેં અવધારિત કર
૨૬ ભંગોં કા વાચ્યાર્થ ક્ષેત્રકી અપેક્ષા આનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વી ઓર અવત્ત-
વ્યક હન એકવચનાન્ત બહુવચનાન્ત પદોં કે અસંયોગ ઓર સંયોગ પક્ષ મેં
દ્રવ્યાનુપૂર્વી કે ભંગોપદર્શન કી તરહ કર લેનાં ચાહિયે । ॥સૂ૦ ૧૦૭॥

અસંખ્યાત પ્રદેશવાળો સ્કંધ હશે તે પણ આકાશના એક, બે, ત્રણ આદિ
પ્રદેશોમાં પણ અવગાહી હોઈ શકે છે, અને અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં પણ
અવગાહી હોઈ શકે છે, જ્યારે તે અસંખ્યાતાણુક સ્કંધ આકાશના એક જ
પ્રદેશમાં રહેલો હોય ત્યારે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ તેને અનાનુપૂર્વી રૂપ ગણવે
જોઈએ, પરંતુ જ્યારે તે ત્રણથી વધુને અસંખ્યાત પર્યાન્તના આકાશનાં
પ્રદેશોમાં રહેલો હોય ત્યારે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ તેને આનુપૂર્વી રૂપ ગણવે
જોઈએ, આ પ્રકારનો અર્થ મનમાં ધારણ કરીને ૨૬ ભંગોનો વાચ્યાર્થ
સમજી લેવો જોઈએ, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી અને અવ-
ત્તવ્યક આ એકવચનાન્ત અને બહુવચનાન્ત પદોના અસંયોગ અને સંયોગ
પક્ષે દ્રવ્યાનુપૂર્વીના ભંગોપદર્શનની જેમ અહીં પણ ૨૬ ભાગોનો
સમજી લેવો જોઈએ. ॥ સૂ૦ ૧૦૭ ॥

સમવતરન્તિ ? અવક્તવ્યકદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ ? આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ, નો અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ નો અવક્તવ્યકદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ । એવં ત્રીણ્યપિ સ્વસ્થાને સમવતરન્તીતિ મણિતવ્યમ્ । સ એષ સમવતારઃ ॥સૂ૦ ૧૦૮॥

ટીકા—અથ સમવતારં પ્રરૂપયિતુમાહ—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ । અથ કોઽસૌ સમવતારઃ ? ઇત્યારમ્બ ‘સ એષ સમવતારઃ’ ઇતિ પર્યન્તસ્ય પાઠસ્ય વ્યાખ્યા અશીતિસૂત્રવદ્ દ્રવ્યાનુપૂર્વોત્તરં વોઘ્યા ॥સૂ૦ ૧૦૮॥

અથ સૂત્રકાર સમવતાર કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

“સે કિં તં સમોયારે ?” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—હે ભદ્રન્ત ! (સે કિં તં સમોયારે) પૂર્વપ્રક્રાન્ત સમવતાર કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(સમોયારે) પૂર્વપ્રક્રાન્ત સમવતાર કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈ—(નેગમવ્યવહારાણં આણુપુન્વીદવ્વાઈં કહિં સમોયરંતિ ?) શિષ્ય પૂછતા હૈ કિ નૈગમવ્યવહારનયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કહાં સમાવિષ્ટ હોતે હૈ (કિં આણુપુન્વી દવ્વેહિં સમોયરંતિ ? અણાણુપુન્વીદવ્વેહિં સમોયરંતિ) કયા આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં સમાવિષ્ટ હોતે હૈ ? યા અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં સમાવિષ્ટ હોતે હૈ ? યા (અવક્તવ્યગદવ્વેહિં સમોયરંતિ) અવક્તવ્યકદ્રવ્યોં મેં સમાવિષ્ટ હોતે હૈ ?

ઉત્તર—(આણુપુન્વીદવ્વાઈં આણુપુન્વીદવ્વેહિં સમોયરંતિ) નૈગમવ્યવહારનય સંમત આનુપૂર્વીદ્રવ્ય આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં હી સમાવિષ્ટ હોતે હૈ ।

હવે સૂત્રકાર સમવતારની પ્રરૂપણા કરે છે—

“સે કિં તં સમોયારે ?” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સમોયારે ?) હે ભગવન્ ! આગળ જે સમવતાર નામનો પ્રકાર કહ્યો છે તેનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(સમોયારે) સમવતારનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—(નેગમવ્યવહારાણં આણુપુન્વી દવ્વાઈં કહિં સમોયરંતિ ?)

શિષ્યનો પ્રશ્ન—નૈગમવ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો કયાં સમાવિષ્ટ થાય છે ? (કિં આણુપુન્વીદવ્વેહિં સમોયરંતિ ? અણાણુપુન્વીદવ્વેહિં સમોયરંતિ, અવક્તવ્યગદવ્વેહિં સમોયરંતિ ?) શું આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં સમાવિષ્ટ થાય છે ? કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં સમાવિષ્ટ થાય છે ? કે અવક્તવ્યકદ્રવ્યોમાં સમાવિષ્ટ થાય છે ?

ઉત્તર—(આણુપુન્વીદવ્વાઈં આણુપુન્વીદવ્વેહિં સમોયરંતિ) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં જ સમાવિષ્ટ થાય છે, (નો

મૂલ્મ—સે કિં તં અણુગમે? અણુગમે નવવિહે પળ્લત્તે, તં જહા—સંતપયપરૂવળયા જાવ અપ્પાવહું ચેવ ॥સૂ૦ ૧૦૯॥

છાયા—અથ કોઽસૌ અનુગમઃ? અનુગમો નવવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તદ્વથા—સત્પદ-પરૂવળતા યાવત્ અલ્પબહુત્વં ચૈવ ॥સૂ૦ ૧૦૯॥

ટીકા—અથ અનુગમં પ્રરૂપયિતું પ્રાહ—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ । અથ કોઽસૌ અનુગમઃ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । અનુગમો નવવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તદ્વથા—સત્પદપરૂવળતા ૧,

(નો અણાણુપુવ્વીદવ્વેહિં નો અવત્તવ્વગદવ્વેહિં સમોયરંતિ) અના-નુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં એવં અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં મેં સમાવિષ્ટ નહીં હોતે હૈં । (એવં તિણિણ વિ સદ્ધાણે સમોયરંતિ ત્તિભાણિયવ્વં—સે તં સમોયારે) ઇસી પ્રકાર સે યહ સમજ્ઞના ચાહિયે કિ અવક્તવ્યક ઓર અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય મી આનુપૂર્વીદ્રવ્ય કી તરહ અપની ૫ જાતિરૂપ કી અવક્તવ્યક ઓર અના નુપૂર્વી દ્રવ્યરૂપ સ્વસ્થાન મેં હી અન્તર્ભૂત હોતે હૈં ઇસ પ્રકાર સે યે તીનોં હી સ્વ સ્વ સ્થાન મેં હી સમાવિષ્ટ હોતે હૈં, । પરસ્થાન મેં નહીં યહી સમવતાર કા સ્વરૂપ હૈ ઇસ સૂત્ર કી વ્યાખ્યા પહિલે ૮૦ સૂત્ર કી વ્યાખ્યા કી તરહ જાનની ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧૦૮ ॥

અથ સૂત્રકાર અનૌપનિધિ કી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કે પંચમ ભેદરૂપ અનુ-ગમ કે સ્વરૂપ કા કથન કરતે હૈં—“સે કિં તં અણુગમે?” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં અણુગમે?) હે ભદન્ત ! અનુગમ કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(અણુગમે નવવિહે પળ્લત્તે) અનુગમ નૌ પ્રકાર કહા હૈ (તંજ-

અણાણુપુવ્વી દવ્વેહિં, નો અવત્તવ્વગદવ્વેહિં સમોયરંતિ) ૫થુ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોંમાં અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોંમાં સમાવિષ્ટ થતાં નથી. (એવં તિણિણ વિ સદ્ધાણે સમોયરંતિ ત્તિ ભાણિયવ્વં—સે તં સમોયારે) એજ પ્રમાણે અવક્તવ્યક અને અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં ૫થુ પોતપોતાની જાતિના દ્રવ્યોંમાં જ (અનુક્રમે અવક્તવ્યક અને અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં ૩૫ સ્વસ્થાનમાં જ) અંતર્ભૂત થાય છે. અન્ય સ્થાનમાં અંતર્ભૂત થતાં નથી આ પ્રકારનું સમવતારનું સ્વરૂપ છે. આ સૂત્રની વ્યાખ્યા ૮૦ માં સૂત્રની વ્યાખ્યા પ્રમાણે સંમજ્જવી. ॥સૂ૦ ૧૦૮॥

હે સૂત્રકાર અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીના પાંચમાં ભેદ ૩૫ અનુગમના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—“સે કિં તં અણુગમે?” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં અણુગમે?) હે ભગવન્ ! અનુગમનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર—(અણુગમે નવવિહે પળ્લત્તે) અનુગમના નવ પ્રકાર કહ્યા છે,

યાવત્ અલ્પબહુત્વં૧ ચૈવેતિ । इह-यावच्छब्देन-द्रव्यप्रमाणं २, क्षेत्रं ३, स्पर्शना ४, कालः ५, अन्तरं ६, भागः ७, भावः ८ इति बोध्यम् । व्याख्या एकाशीति सूत्रवत् द्रव्यानुपूर्वी १ इति बोध्या ॥सू० १०९॥

મૂલમ્—જેગમવવહારાણં આણુપુઞ્વીદવ્વાઈં કિં અત્થિ નત્થિ ? નિયમા અત્થિ । એવં દુણિ વિ ॥સૂ૦ ૧૧૦॥

છાયા—નૈગમવવહારયોઃ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કિં સન્તિ ન સન્તિ ? નિયમાત્ સન્તિ । એવં દ્વે અપિ ॥સૂ૦ ૧૧૦॥

ટીકા—તત્ર-સત્પદપ્રરૂપણતાદ્વારં પ્રરૂપયતિ—‘ જેગમવવહારાણં ’ ઇત્યાદિ । અસ્ય દ્વારસ્ય વ્યાख्या દ્વયતીતિ સૂત્રવત્ દ્રવ્યાનુપૂર્વીત્વદ્ બોધ્યા ॥સૂ૦ ૧૧૦॥

હા) જૈસે—(સંતપયપરૂવણયા જાવ અપ્પાવહું' ચેવ) સત્પદપ્રરૂપણતા યાવત્ અલ્પ બહુત્વ , । યહાં યાવત્ શબ્દ સે હસ અનુક્તપાઠકા સંગ્રહ હુઆ હૈ— “દ્રવ્યપ્રમાણં ચિત્ત, ફુલ્લગા, કાલોય, અંતરં, ભાગ, ભાવ,” દ્રવ્ય પ્રમાણ ક્ષેત્ર સ્પર્શના, કાલ, અંતર, ભાગ ઓર ભાવ, હસ સૂત્ર કી વ્યાખ્યા કે લિયે દેલો પીછેકા ૮૧, વાં સૂત્ર ॥ ૧૦૯ ॥

અવ સૂત્રકાર અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીકે અનુગમ કે ભેદરૂપ પ્રથમ સત્પદપ્રરૂપણતા કા કથન કરતે હૈ—

“જેગમવવહારાણં” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(જેગમવવહારાણં આણુપુઞ્વીદવ્વાઈં કિં અત્થિ નત્થિ ? નિયમા અત્થિ । એવં દુણિવિ) નૈગમવવહારનય સંમત આનુપૂર્વીદ્રવ્ય હૈં યા નહીં ?

(તંજહા) તે પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે—(સંતપયપરૂવણયા જાવ અપ્પાવહું' ચેવ) સત્પદપ્રરૂપણતાથી લઈને અલ્પબહુત્વ પર્યંતના નવ પ્રકારે અહીં પર્યંત પદ દ્વારા “ દ્રવ્યપ્રમાણં ચિત્ત, ફુલ્લગા, કાલોય, અંતરં, ભાગ, ભાવ ” દ્રવ્ય-પ્રમાણ, ક્ષેત્ર, સ્પર્શના, કાળ, અંતર, ભાગ અને ભાવ, આ સાત પ્રકારે ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે. આ સૂત્રની વ્યાખ્યા માટે ૮૧મું સૂત્ર વાંચી જુવું ॥સૂ૦૧૦૯॥

હવે સૂત્રકાર અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીના અનુગમના પ્રથમ ભેદ રૂપ સત્પદપ્રરૂપણતાનું નિરૂપણ કરે છે—

“ જેગમવવહારાણં,” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(જેગમવવહારાણં આણુપુઞ્વીદવ્વાઈં કિં અત્થિ નત્થિ ? નિયમા અત્થિ, એવં દુણિ વિ)

પ્રશ્ન—નૈગમવવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો છે કે નહીં ?

મૂલ્મ—નેગમવ્યવહારાણં આણુપુઘ્વીદઘ્વાઈં કિં સંખિજ્જાઈં
અસંખિજ્જાઈં અણંતાઈં ? નો સંખિજ્જાઈં અસંખિજ્જાઈં નો અણં-
તાઈં । એવં દુણિણ વિ ॥સૂ૦ ૧૧૧॥

છાયા—નેગમવ્યવહારયોઃ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કિં સંખ્યેયાનિ અસંખ્યેયાનિ
અનન્તાનિ ? નો સંખ્યેયાનિ, અસંખ્યેયાનિ, નો અનન્તાનિ । એવં દ્વે અપિ ॥મૂ૦ ૧૧૧॥

ટીકા—અથ દ્રવ્યપ્રમાણદ્વારં પ્રરૂપયિતુમાહ—‘નેગમવ્યવહારાણં’ इत्यादि ।
નેગમવ્યવહારસમ્મતાનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કિં સંખ્યેયાનિ ભવન્તિ ? કિં વા અસં-
ખ્યેયાનિ ભવન્તિ ? ઉત વા અનન્તાનિ ભવન્તિ ? इति त्रिविधः प्रश्नः । उत्तरमाह—
‘નો સંખિજ્જાઈં’ इत्यादि । नो संख्येयानि भवन्ति, नो अनन्तानि भवन्ति, अपि
तु असंख्येयानि भवन्तीत्यर्थः । इति । अयं भावः—त्रिप्रदेशावगाढादीनि द्रव्याणि

उत्तर—नियमतः हैं । इसी प्रकार नैगमव्यवहारनयसंमत अनानु-
पूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्य भी नियम से हैं । इस सूत्र की व्याख्या
के लिये देखो पीछे का ८२, वां ॥ सू० ११० ॥

“નેગમવ્યવહારાણં આણુપુઘ્વી દઘ્વાઈં” इत्यादि ।

શબ્દાર્થ—(નેગમવ્યવહારાણં આણુપુઘ્વીદઘ્વાઈં કિં સંખિજ્જાઈં, અસં-
ખિજ્જાઈં, અણંતાઈં ?) હે મંદન્ત ! નેગમવ્યવહારનયસંમત આનુપૂર્વી
દ્રવ્ય કયા સંખ્યાત હૈં ? યા અસંખ્યાત હૈં ? યા અનંત હૈં ?

उत्तर—(नो संखिज्जाइं, असंखिज्जाइं, नो अणंताइं । एवं दुण्णिणवि)
नेगमव्यवहारनय संमत आनुपूर्वीद्रव्य न संख्यात हैं न अनंत हैं किन्तु
असंख्यात हैं । इसका तात्पर्य यह है—आकाश के तीन प्रदेश में स्थित

उत्तर—अवश्य છે જ એજ પ્રમાણે નેગમવ્યવહાર નયસંમત અનાનુ-
પૂર્વી અને અવકતવ્યક દ્રવ્યો પણ અવશ્ય છે જ આ સૂત્રની વ્યાખ્યા સમ-
જવા માટે ૮૨માં સૂત્રની વ્યાખ્યા વાંચી લેવી. ॥સૂ૦૧૧૦॥

“નેગમવ્યવહારાણં આણુપુઘ્વીદઘ્વાઈં” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(નેગમવ્યવહારાણં આણુપુઘ્વીદઘ્વાઈં કિં સંખિજ્જાઈં, અસંખિ-
જ્જાઈં, અણંતાઈં ?) હે ભગવન્ ! નેગમવ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો
શુ સંખ્યાત છે, કે અસંખ્યાત છે, કે અનંત છે ?

उत्तर—(नो संखिज्जाइं असंखिज्जाइं, नो अणंताइं, एवं दुण्णिणवि)
नेगमव्यवहार नयसंमत आनुपूर्वी द्रव्यो संख्यातं पणु नथी, अनंत
पणु नथी, परन्तु असंख्यातं ज છે.

क्षेत्रत आनुपूर्वीत्वेन निर्दिष्टानि, त्रिप्रदेशादि स्कन्धाधारभूताः क्षेत्रविभागाश्च असंख्येयप्रदेशात्मके लोकेऽसंख्याता भवन्ति, अतो द्रव्यतया बहूनामप्यानुपूर्वी-
द्रव्याणां क्षेत्रावगाहमपेक्ष्य क्षेत्रैक्यमाश्रित्य तुल्यप्रदेशावगाढानामेकत्वात् क्षेत्रानुपूर्-
व्यामसंख्यातान्येवानुपूर्वी द्रव्याणि भवन्तीति । अथानानुपूर्व्यवक्तव्यकद्रव्यविषये
ग्राह—‘ एवं ’ इत्यादि । एवम्=आनुपूर्वीद्रव्यवत् द्वे अपि=अनानुपूर्व्यवक्तव्यक
द्रव्याणि असंख्येयानि बोध्यानि । अयं भावः—एकैकप्रदेशावगाढं बहूपि द्रव्यं
क्षेत्रत एकैवानुपूर्वी । लोकस्य प्रदेशा असंख्याताः सन्ति, अतस्तत्तुल्यमसंख्य-

हुए द्रव्य क्षेत्र की अपेक्षा आनुपूर्वीरूप से कहे गए हैं । तीन आदि प्र-
देशवाले स्कन्धों के आधारभूत क्षेत्र विभाग असंख्यात प्रदेशी लोक में
असंख्यात हैं । इसलिये द्रव्य की अपेक्षा बहुत भी आनुपूर्वीद्रव्य तुल्य
प्रदेशवाले क्षेत्र में अवगाह की अपेक्षा करके एक मान लिये जाते हैं—
अर्थात् आकाशरूप क्षेत्र के तीन प्रदेशों में त्रिप्रदेशवाले, चार प्रदेश-
वाले, पांच प्रदेशवाले छह आदि अनन्त प्रदेशवाले अनेक आनुपूर्वीद्रव्य
अवगाहित होकर रहते हैं । परन्तु ये सब द्रव्य तुल्यप्रदेशावगाही होने
के कारण एक हैं । क्षेत्रानुपूर्वी में लोक के ऐसे त्रिप्रदेशात्मक विभाग
असंख्यात हैं । इसलिये आनुपूर्वीद्रव्य भी तत्तुल्य संख्यावाले होने के
कारण असंख्यात होते ही हैं । इसी प्रकार—आनुपूर्वी द्रव्य की तरह—
अनानुपूर्वी, अवक्तव्यक द्रव्य भी असंख्यात ही हैं । तात्पर्य कहने का
यह है कि लोक के एक एक प्रदेश में अवगाही अनेक द्रव्य क्षेत्र की

આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—આકાશના ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં
રહેલા દ્રવ્યોને ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી રૂપ કહેવામાં આવે છે. ત્રણ
આદિ પ્રદેશોવાળા સ્કન્ધોના આધારભૂત ક્ષેત્રવિભાગો અસંખ્યાત પ્રદેશી લોકમાં
અસંખ્યાત છે. તેથી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ઘણાં જ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોને તુલ્ય-
પ્રદેશવાળા ક્ષેત્રમાં અવગાહની અપેક્ષાએ એક માનવામાં આવેલ છે એટલે
કે આકાશરૂપ ક્ષેત્રના ત્રણ પ્રદેશોમાં ત્રણ પ્રદેશવાળાં, ચાર પ્રદેશવાળાં, પાંચ
પ્રદેશવાળાં અને છ આદિ અનંત પ્રદેશવાળાં અनेક આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અવગા-
હિત થઈને રહે છે, પરંતુ તે સઘળાં દ્રવ્યો તુલ્યપ્રદેશાવગાહી હોવાને
કારણે એક છે. ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં લોકના એવાં ત્રિપ્રદેશાત્મક વિભાગ અસંખ્યાત
છે. આનુપૂર્વી દ્રવ્યો પણ તેના જેટલી જ સંખ્યાવાળા હોવાથી અસંખ્યાત
જ હોય છે. એજ પ્રમાણે (આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની જેમ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો
અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો પણ અસંખ્યાત જ છે. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે
કે લોકના એક એક પ્રદેશમાં અવગાહી અनेક દ્રવ્યો પણ ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ

ત્વાદનાનુપૂર્વી દ્રવ્યાણ્યપિ અસંખ્યેયાનિ ભવન્તિ । તથા-પ્રદેશદ્વયેઽવગાઠં બહુપિ દ્રવ્યં
ક્ષેત્રતઃ એકમેવાવક્તવ્યકદ્રવ્યમ્ । લોકસ્ય દ્વિપ્રદેશાત્મકા વિભાગા અસંખ્યાતાઃ સન્તિ,
અતો દ્વિપ્રદેશાત્મકાન્યવક્તવ્યકદ્રવ્યાણ્યપ્યસંખ્યાતાનિ ભવન્તીતિ ॥મુ૦ ૧૧૧॥

અપેક્ષા એક હી અનાનુપૂર્વીરૂપ હૈં । યે અસંખ્યાત હસલિયે માને ગયે હૈં
કિ હસ પ્રકાર સે અસંખ્યાત પ્રદેશવાલે લોક મેં એક એક પ્રદેશ મેં યે
એક ર રહતે હૈં । તથા આકાશ કે દો પ્રદેશોં મેં સ્થિત બહુન મી દ્રવ્ય
ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા એક હી અવક્તવ્યક દ્રવ્ય હૈં । આકાશ કે દો પ્રદેશ
રૂપ વિભાગ અસંખ્યાત હોતે હૈં હસલિયે તદવગાહીદ્રવ્ય મી અસંખ્યાત હૈં ।

ભાવાર્થ-નૈગમવ્યવહારનય સંમત આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી ઓર અવ-
ક્તવ્યક દ્રવ્ય કિતને હૈં ? સૂત્રકારને હસ સૂત્રદ્વારા હન પ્રશ્નોં કા સમા-
ધાન કિયા હૈં । ડન્હોંને કહા હૈં કિ-આકાશ કે ત્રિપ્રદેશાત્મક,
દ્વિપ્રદેશાત્મક ઓર એકપ્રદેશાત્મક વિભાગ અસંખ્યાત હૈં । ક્યોંકિ
આકાશ સ્વયં અસંખ્યાત પ્રદેશ વાલા હૈં । યદ્યપિ આકાશ કે પ્રદેશ
અલોકાકાશ કી અપેક્ષા અનંત કહે ગયે હૈં, ફિર મી હસ અનંત અલો-
કાકાશ મેં કોઈ દ્રવ્ય નહીં રહતા હૈં । અસંખ્યાત પ્રદેશવાલે લોકા-
કાશ-મેં હી દ્રવ્યોંકા અવગાહ હૈં । લોકાકાશકે ડન વિભાગોં મેં આનુ-
પૂર્વી, અનાનુપૂર્વી, ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્ય પ્રત્યેક અસંખ્યાત ર રહતે હૈં ।

એક જ અનાનુપૂર્વી રૂપ છે. તેમને અસંખ્યાત માનવાનું કારણ એ છે કે
આ પ્રકારે અસંખ્યાત પ્રદેશવાળા લોકના એક એક પ્રદેશમાં એક એક
અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય રહે છે. તથા આકાશના બે પ્રદેશોમાં સ્થિત ઘણાં દ્રવ્યો
પણ ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ એક જ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય રૂપ છે. આકાશના બે પ્રદેશ
રૂપ વિભાગ અસંખ્યાત હોય છે, તે કારણે તેમાં અવગાહી દ્રવ્યો પણ અસંખ્યાત છે.

ભાવાર્થ-સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા એ પ્રશ્નનું સમાધાન કયું છે કે
નૈગમવ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો
કેટલાં છે. સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં એ વાતનું પ્રતિપાદન કયું છે કે આકાશના
ત્રિપ્રદેશાત્મક, દ્વિપ્રદેશાત્મક અને એક પ્રદેશાત્મક વિભાગ અસંખ્યાત છે,
કારણ કે આકાશ પોતે જ અસંખ્યાત પ્રદેશવાળું છે. બે કે અલોકાકાશની
અપેક્ષાએ આકાશના પ્રદેશો અનંત કહ્યા છે, પરંતુ આ અનંત અલોકાકા-
શમાં તો કોઈ પણ દ્રવ્યનો સદ્ભાવ જ નથી અસંખ્યાત પ્રદેશવાળા લોકા-
કાશમાં જ દ્રવ્યોનો અવગાહ છે. લોકાકાશના તે વિભાગોમાં અસંખ્યાત
આનુપૂર્વી દ્રવ્યો, અસંખ્યાત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અસંખ્યાત અવક્તવ્યક

કર્ણોંકિં યહાંપર ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા-આનુપૂર્વી આદિ કા વિચાર ચલ રહા હૈ । અતઃ એક પ્રદેશાત્મક અસંખ્યાત વિભાગોં મેં એક એક વિભાગોં મેં એક ૨ આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્ય રહતા હૈ । યદ્યપિ એક પ્રદેશ મેં દ્રવ્ય કી અપેક્ષા અનેક આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્ય રહતે હૈં-પરન્તુ વે સબ એક પ્રદેશ મેં આધારભૂત હોને કે કારણ એક માને જાતે હૈં । અતઃ હસ પ્રકાર સે એક પ્રદેશરૂપ વિભાગ મેં રહે હુએ યે અનેક દ્રવ્ય એક પ્રદેશરૂપ આધાર કી અપેક્ષા એક પ્રદેશાવગાહી હોને કે કારણ એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ પડતે હૈં । હસ પ્રકાર લોક કે એકપ્રદેશાત્મક અસંખ્યાત વિભાગોં મેં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અસંખ્યાત હી હો જાતે હૈં । હસી પ્રકાર સે અવક્તવ્યક દ્રવ્ય ઓર અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય મી અસંખ્યાત સબ જાતે હૈં । કર્ણોંકિં લોક કે દ્વિપ્રદેશાત્મક વિભાગ જબ અસંખ્યાત હૈં તો હનમેં જિતને મી દ્વિપ્રદેશી આદિ દ્રવ્ય રહેંગે વે સબ દ્વિપ્રદેશાવગાહી હોને કે કારણ એક દ્વિપ્રદેશાત્મક વિભાગ મેં એક અવક્તવ્યક દ્રવ્ય રૂપ સે સ્વીકૃત માને જાવેંગે । હસ દ્વિપ્રદેશાત્મક એક વિભાગ મેં જબ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય રહતા હૈ તો દ્વિપ્રદેશાત્મક અસંખ્યાત વિભાગોં મેં અસંખ્યાત હી અવક્તવ્યક દ્રવ્ય રહેંગે ।

દ્રવ્યો રહે છે. અહીં ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી આદિનો વિચાર ચાલી રહ્યો છે, તેથી એકપ્રદેશાત્મક અસંખ્યાત વિભાગોમાંના પ્રત્યેક વિભાગમાં એક એક આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્ય રહે છે. જો કે પ્રત્યેક પ્રદેશમાં દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અનેક આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યો રહે છે, પરન્તુ તેઓ બધાં એક પ્રદેશમાં આધારભૂત હોવાને કારણે તેમને એક માનવામાં આવેલ છે. આ રીતે એકપ્રદેશ રૂપ વિભાગમાં રહેલાં અનેક દ્રવ્યો એક પ્રદેશરૂપ આધારની અપેક્ષાએ એક પ્રદેશાવગાહી હોવાને કારણે એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ ગણવાને યોગ્ય બને છે. આ રીતે લોકના એક પ્રદેશાત્મક અસંખ્યાત વિભાગોમાં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અસંખ્યાત હોવાની વાત સિદ્ધ થઈ જાય છે. એજ પ્રમાણે અવક્તવ્યક દ્રવ્યો અને આનુપૂર્વી દ્રવ્યો પણ અસંખ્યાત હોવાની વાત સિદ્ધ થઈ જાય છે, કારણ કે લોકના દ્વિપ્રદેશાત્મક વિભાગ અસંખ્યાત હોવાથી તેમાં જેટલા દ્વિપ્રદેશી આદિ દ્રવ્યો રહેશે તે સૌ પણ દ્વિપ્રદેશાવગાહી હોવાને કારણે એક દ્વિપ્રદેશાત્મક વિભાગમાં એક અવક્તવ્યક દ્રવ્ય રૂપે સ્વીકૃત થયેલાં માની શકાશે. આ દ્વિપ્રદેશાત્મક એક વિભાગમાં જો એક અવક્તવ્યક દ્રવ્ય રહેતું હોય, તો દ્વિપ્રદેશાત્મ અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં અસંખ્યાત અવક્તવ્યક દ્રવ્યો રહી શકે, એ વાત પણ સિદ્ધ થઈ જાય છે. આ રીતે અવક્તવ્યક દ્રવ્યો અસંખ્યાત હોવાનું કથન પણ સિદ્ધ થઈ જાય છે.

મૂલ્ય-ળેગમવવહારાણં ચેત્તાણુપુવ્વીદવ્વાઈં લોગસ્સ કિં
સંચિજ્જઇમાગે હોજ્જા ? અસંચિજ્જઇમાગે હોજ્જા ? જાવ સઠવ-
લોણ હોજ્જા ?, ઇમં દવ્વં પહુચ્ચ લોગસ્સ સંચિજ્જઇમાગે વા હોજ્જા,
અસંચિજ્જઇમાગે વા હોજ્જા, સંચેજ્જેસુ માગેસુ વા હોજ્જા,
અસંચેજ્જેસુ માગેસુ વા હોજ્જા, દેસૂળે વા લોણ હોજ્જા । નાણા-
દવ્વાઈં પહુચ્ચ નિયમા સઠવલોણ હોજ્જા । ળેગમવવહારાણં
અણાણુપુવ્વીદવ્વાણં પુચ્છા ઇમદવ્વં પહુચ્ચ નો સંચેજ્જઇમાગે
હોજ્જા, અસંચેજ્જઇમાગે હોજ્જા, નો સંચેજ્જેસુ માગેસુ હોજ્જા નો
અસંચેજ્જેસુ માગેસુ હોજ્જા નો સઠવલોણ હોજ્જા, નાણાદવ્વાઈં
પહુચ્ચ નિયમા સઠવલોણ હોજ્જા । ઇવં અવત્તવગદવ્વાણિ વિ
માણિયવ્વાણિ ॥સૂ૦ ૧૧૨॥

इसी प्रकार अवक्तव्यकद्रव्य भी असंख्यात-सधजाते हैं । इसी प्रकार
से लोक के जय त्रिप्रदेशात्मक विभाग असंख्यात हैं तो इनमें जितने
भी त्रिप्रदेशी आदि द्रव्य रहेंगे वे सब त्रिप्रदेशावगाही होने के कारण
एक त्रिप्रदेशात्मक विभाग में एक आनुपूर्वी द्रव्य रूप से स्वीकृत हुए
माने जावेंगे । इस त्रिप्रदेशात्मक एक विभाग में जब एक आनुपूर्वी-
द्रव्य रहता है तो लोक के त्रिप्रदेशात्मक असंख्यात विभागों में द्रव्य
कितने आनुपूर्वी रहेंगे । इस प्रकार गणना के अनुसार आनुपूर्वी द्रव्य
असंख्यात सध जाते हैं ॥ सू० १११ ॥

એજ પ્રમાણે લોકના ત્રિપ્રદેશી વિભાગો પણ ને અસંખ્યાત હોય
તો તેમાં જેટલાં ત્રિપ્રદેશી આદિ દ્રવ્યો રહેશે તેઓ બધાં પણ ત્રિપ્રદેશાવ-
ગાહી હોવાને કારણે એક ત્રિપ્રદેશાત્મક વિભાગમાં એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપે
સ્વીકૃત થયેલા મનાશે આ ત્રિપ્રદેશાત્મક એક વિભાગમાં ને એક આનુપૂર્વી
દ્રવ્ય રહેતું હોય, તો લોકના ત્રિપ્રદેશાત્મક અસંખ્યાત વિભાગોમાં અસં-
ખ્યાત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો રહેતા હશે આ પ્રકારે આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની સંખ્યા
પણ અસંખ્યાત હોવાની વાત સિદ્ધ થઈ બચ છે. ॥સૂ૦ ૧૧૧॥

छाया—नैगमव्यवहारयोः क्षेत्रानुपूर्वीद्रव्याणि लोकस्य किं संख्येयतमभागे भवन्ति ? असंख्येयभागे भवन्ति यावत् सर्वलोके भवन्ति ? । एकं द्रव्यं प्रतीत्य लोकस्य संख्येयतमभागे वा भवति, असंख्येयतमभागे वा भवति, संख्येयेषु भागेषु वा भवति, असंख्येयेषु भागेषु वा भवति, देशोने वा लोके भवति । नाना द्रव्याणि प्रतीत्य नियमात् सर्वलोके भवन्ति । नैगमव्यवहारयोः अनानुपूर्वीद्रव्याणां पृच्छा-यामेकद्रव्यं प्रतीत्य नो संख्येयतमभागे भवति, असंख्येयतमभागे भवति, नो संख्येयेषु भागेषु भवति, नो सर्वलोके भवति । नाना द्रव्याणि प्रतीत्य नियमात् सर्वलोके भवन्ति । एवम् अवक्तव्यकद्रव्याण्यपि भणितव्यानि ॥मू० ११२॥

टीका—अथ क्षेत्रद्वारं निरूपयितुमाह—‘ नैगमव्यवहाराणं ’ इत्यादि ।

नैगमव्यवहारसम्मतानि क्षेत्रानुपूर्वीद्रव्याणि लोकस्य किं संख्येयतमभागे भवन्ति ? असंख्येयतमभागे भवन्ति ? यावत् सर्वलोके भवन्ति ? इति प्रश्नः । उत्तरमाह—एकं द्रव्यं प्रतीत्य आनुपूर्वी द्रव्यं लोकस्य संख्येयतमभागे वा भवति, असंख्येयतमभागे वा भवति, संख्येयेषु वा भागेषु भवति, असंख्येयेषु वा भागेषु भवति ।

(नैगमव्यवहाराणं खेत्ताणुपुर्वी) इत्यादि ।

शब्दार्थ—(नैगमव्यवहाराणं खेत्ताणुपुर्वी—दब्बाहं लोगस्स किं संखिज्जइभागे होज्जा ?)

प्रश्न—नैगमव्यवहारनय संमत क्षेत्रानुपूर्वी द्रव्यं क्या लोक के संख्यातवे भाग में होते हैं ? (असंखिज्जइभागे होज्जा ?) या असंख्यातवे भागमें रहते हैं ? (जाव सव्वलोए होज्जा) यावत् समस्त लोकमें होते हैं ?

उत्तर—(एगं दब्बं पडुच्च लोगस्स संखिज्जइभागे वा होज्जा असंखेज्जइभागे वा होज्जा संखेज्जेसु भागेषु वा होज्जा, असंखेज्जेसु भागेषु वा होज्जा देसूणे वा लोए होज्जा) एकद्रव्यकी अपेक्षा लेकर आनुपूर्वीद्रव्य लोक के संख्यातवे भाग में भी रहता है असंख्यातवे

“ नैगमव्यवहाराणं खेत्ताणुपुर्वी ” इत्यादि—

शब्दार्थ—(नैगमव्यवहाराणं खेत्ताणुपुर्वी—दब्बाहं लोगस्स किं संखिज्जइभागे होज्जा) हे भगवन् । नैगमव्यवहार नयसंमत क्षेत्रानुपूर्वी द्रव्ये। शुं दोकना संख्यातमां लागमां छे ? के (असंखिज्जइभागे होज्जा ?) असंख्यातमां लागमां छे ? (जाव सव्वलोए होज्जा ?) के समस्त लोकमां छे ?

उत्तर—(एगं दब्बं पडुच्च लोगस्स संखिज्जइभागे वा होज्जा, असंखिज्जइभागे वा होज्जा, संखेज्जेसु भागेषु वा होज्जा, असंखेज्जेसु भागेषु वा होज्जा, देसूणे वा लोए होज्जा) ओक द्रव्यनी अपेक्षाये विचार करवामां आवे तो आनुपूर्वी द्रव्य दोकना संख्यातमां लागमां पणु रडे छे, असंख्यातमां

સ્કન્ધદ્રવ્યાણાં વિચિત્રપરિણમનશક્તિમત્વાત્ સંખ્યેયાદિપ્રદેશાવગાહિત્વં बोध्यम् ।
વિશિષ્ટક્ષેત્રાવગાહોપલક્ષિતાનાં સ્કન્ધદ્રવ્યાણામેવ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીત્વેનોક્તત્વાત્ । તથા
एकं द्रव्यं प्रतीत्य देशोने वा लोके आनुपूर्वीद्रव्यं भवति ।

નનુ-અચિત્તમહાસ્કન્ધસ્ય સર્વલોકવ્યાપકત્વં પૂર્વમુક્તમ્ । તસ્ય ચ સમસ્ત-
લોકવર્ત્યસંખ્યેયપ્રદેશલક્ષણાયાં ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યામવગાહત્વાત્ પરિપૂર્ણસ્યાપિ ક્ષેત્રાનુ-
પૂર્વીત્વં ન કિંચિદ્ વિરુદ્ધયતે, અતસ્તદપેક્ષયા ક્ષેત્રતોડપ્યાનુપૂર્વીદ્રવ્યં સર્વલોકવ્યાપિ

भाग में भी रहता है, संख्यात भागों में भी रहता है असंख्यात भागों
में भी रहता है । क्योंकि स्कंध द्रव्यों की परिणमन शक्ति विचित्र
प्रकार की है । अतः विचित्रप्रकार की परिणमन शक्तिवाले होने के
कारण स्कंध द्रव्योंका अवगाहलोक के संख्यातवें आदि भागों में होता
है । क्यों कि विशिष्ट क्षेत्र में अवगाह से उपलक्षित हुए स्कंध द्रव्यों
को ही क्षेत्रानुपूर्वीरूप से कहा गया है । तथा एक द्रव्य की अपेक्षा लेकर
आनुपूर्वी द्रव्य कुछ कम-देशोन लोक में भी अवगाहित होता है ।

शंका-पहिले द्रव्यानुपूर्वी में अचित्त महास्कंध, कि जो पुद्गलद्रव्य
सबसे बड़ा स्कंध होता है और जो अनंतानंत परमाणुओं से निष्पन्न
होता है । सर्व लोक व्यापी कहा है । इस प्रकार अचित्त महास्कंध की
अपेक्षा एक आनुपूर्वी द्रव्य समस्त लोक में व्यापक होकर जब रहता
है-तब यह बात आपकी कैसे मानी जा सकती है कि आनुपूर्वी द्रव्य

ભાગમાં પણ રહે છે, સંખ્યાત ભાગોમાં પણ રહે છે, અસંખ્યાત ભાગોમાં
પણ રહે છે, કારણ કે સ્કંધ દ્રવ્યોની પરિણમનશક્તિ વિચિત્ર હોય છે.
વિચિત્ર પ્રકારની પરિણમનશક્તિવાળા હોવાને કારણે સ્કંધ દ્રવ્યોનો અવગાહ
લોકના સંખ્યાતમાં આદિ ભાગોમાં હોય છે. કારણ કે વિશિષ્ટ ક્ષેત્રમાં
અવગાહથી ઉપલક્ષિત થયેલાં સ્કંધદ્રવ્યોને જ ક્ષેત્રાનુપૂર્વી રૂપે ગણવામાં
આવે છે. તથા એક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો આનુપૂર્વી
દ્રવ્ય અમુક ન્યૂન દેશપ્રમાણ-દેશોન-લોકમાં પણ અવગાહિત હોય છે.

શંકા-દ્રવ્યાનુપૂર્વીનું નિરૂપણ કરતાં પહેલાં આપે એવું કહ્યું છે કે
“પુદ્ગલ દ્રવ્યનો સૌથી મોટો સ્કંધ કે જે અનંતાનંત પરમાણુઓમાંથી બને
છે, અને જેને અચિત્ત મહાસ્કંધ કહેવામાં આવે છે, તે સર્વલોકવ્યાપી છે.”
આ પ્રકારે આ અચિત્ત મહાસ્કંધની અપેક્ષાએ એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય જે
સમસ્ત લોકમાં વ્યાપક હોય તો આપની એ વાત કેવી રીતે માની શકાય
કે આનુપૂર્વી દ્રવ્યનો એક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો તે
અમુક દેશોન (દેશ ન્યૂન) લોકમાં વ્યાપીને રહે છે ? કારણ કે સમસ્ત લોક-

प्राप्यते, कथं तर्हि देशोनलोकव्यापिता प्रोच्यते ? इति चेत्, उच्यते— अयं लोक आनुपूर्व्यनानुपूर्व्यवक्तव्यकद्रव्यैः सर्वदैवाशून्य एव भवतीति सिद्धान्तः । यदिचात्राऽऽनुपूर्व्याः सर्वलोकव्यापिता निर्दिश्येत, तदाऽनानुपूर्व्यवक्तव्यकद्रव्याणां निरवकाशतयाऽभावः प्रतीयेत, अतश्च—अचित्तमहास्कन्धपूरितेऽपि लोके जघन्यतोऽप्येकः प्रदेशोऽनानुपूर्वीविषयत्वेन विवक्षितः । प्रदेशद्वयं चावक्तव्यकद्रव्यविषय-

एक द्रव्य की अपेक्षा करके कुछ कम लोक में व्यापक होकर रहता है । क्योंकि समस्त लोकवर्ती असंख्यात प्रदेशरूप क्षेत्रानुपूर्वी है सो उसमें अवगाढ-अवगाही होने से- परिपूर्ण अचित्त महास्कन्ध का क्षेत्रानुपूर्वीपना भी कुछ भी विरुद्ध नहीं पड़ता है । इसलिये आनुपूर्वी द्रव्य में एक आनुपूर्वी, द्रव्य की अपेक्षा करके जो देशोन लोक में अवगाहिता प्रकट की है वह ठीक नहीं है ।

उत्तर-यह सिद्धान्त है कि यह लोक आनुपूर्वी अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यों से सदा ही अशून्य है । यदि आनुपूर्वी द्रव्य को-सर्वलोक व्यापी माना जावे तो फिर अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यों को ठहरने के लिये स्थान नहोने के कारण उनका अभाव प्रसक्त होगा । और जब देशोन लोक में एक आनुपूर्वीद्रव्य व्यापक होकर रहता है । ऐसा माना जाता है तो इस प्रकार से अचित्त महास्कन्ध से पूरित हुए भी लोक में कम से कम एक प्रदेश ऐसा भी आजाता है कि जो अनानुपूर्वीद्रव्य का विषय रूप से विवक्षित हो जाता है । तथा दो प्रदेश

वर्ती असंख्यात प्रदेशरूप क्षेत्रानुपूर्वी छे, अने तेमां अवगाही (रहेलो) होवाथी परिपूर्ण अचित्त महास्कन्धमां पण क्षेत्रानुपूर्वीत्व मानवामां कोर्ध पण वांधो जणुतो नथी.

उत्तर-એવો સિદ્ધાંત છે કે આ લોક આનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોથી રહિત કદી હોતો નથી ને આનુપૂર્વી દ્રવ્યને સર્વલોકવ્યાપી માનવામાં આવે, તો અનનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોને રહેવાનું સ્થાન જ બાકી ન રહે ! અને તે કારણે તેમનો અસાવ જ માનવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થશે ને એવું માનવામાં આવે કે દેશોન (દેશ ન્યૂન) લોકમાં એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય વ્યાપીને રહે છે, તો અચિત્ત મહાસ્કન્ધ વડે પૂરિત થયેલા લોકમાં પણ ઓછામાં ઓછો એક પ્રદેશ એવો પણ બાકી રહેશે કે જેમાં અનનુપૂર્વી દ્રવ્યનો સદ્ભાવ હોઈ શકે, તથા તે લોકમાં બે પ્રદેશ એવા

ત્વેન વિવક્ષિતમ્, આનુપૂર્વીદ્રવ્યસ્ય તત્ર સત્ત્વેऽપિ તસ્યાઽપ્રાધાન્યેન વિવક્ષણાત્, અનાનુ-
પૂર્વ્યવક્તવ્યકયોસ્તુ પ્રાધાન્યેન વિવક્ષણાદિતિ, અતોઽત્ર દેશેનો લોકોઽત્ર વિવક્ષિતઃતિ।
ઉક્તં ચ—

“મહાસંધાપુણે વિ ય અવત્તવગઽણુપુવ્વિદન્વાઈ।

જદેસોગાઢાઈ તદેસેણં સ લોગૂણો” ॥૧॥

છાયા—મહાસ્કન્ધાઽઽપૂર્ણેઽપિ ચ અવત્તવ્યકાઽનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ।

યદેશાદગાઢાણિ તદેશેન સ લોકોનઃ ॥૨૩૬૧૥

નનુ યદ્યેવં તર્હિ દ્રવ્યાનુપૂર્વ્યામપિ સર્વલોકવ્યાપિત્વમાનુપૂર્વીદ્રવ્યસ્ય યદુક્તં
તદ્ વિરુદ્ધયતે, અનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકદ્રવ્યાણામનવકાશત્વેન તત્રાપ્યભાવ પ્રતીતિ-

એસે મી આ જાતે હૈં કિ જો અવત્તવ્યક દ્રવ્ય કે વિષયરૂપ સે વિવ-
ક્ષિત હો જાતે હૈં । ઇન એક ઓર દો પ્રદેશોં મેં આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કા મી
સદ્ભાવ રહતા હૈ તો મી અપ્રધાન હોને સે ડસકી વહાં વિવક્ષા નહીં
હોતી હૈ । અનાનુપૂર્વી ઓર અવત્તવ્યક ઇન દ્રવ્યોં કી હી પ્રધાનતા હોને
સે વિવક્ષા કી જાતી હૈ । ઇસલિયે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય
કી અપેક્ષા સે દેશેન લોકમેં અવગાહિત કહા ગયા હૈ । યહી બાત ઉક્તંચ—
“મહાસંધા પુણેવિય ઇત્યાદિ” કરકે ઇસ ગાથા દ્વારા પ્રકટ કી ગઈ હૈ ।

શંકા—યદિ યહી બાત હૈ કિ એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય ક્ષેત્રાનુપૂર્વી મેં
દેશેન લોક વ્યાપી હૈ ફિર દ્રવ્યાનુપૂર્વીમેં મી યહી બાત માનની ચાહિયે-
પરન્તુ વહાં એસી બાત નહીં માની ગઈ હૈ વહાં તો આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કો સર્વ
લોક વ્યાપી કહા ગયા હૈ । ક્ષેત્રાનુપૂર્વી મેં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કો સર્વ-

પણુ બાકી રહેશે કે જેમાં અવત્તવ્યક દ્રવ્યનો અવગહ સંભવી શકશે તે
એક અને જે પ્રદેશોમાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યનો પણ સદ્ભાવ રહે છે, છતાં પણ
તે ત્યાં અપ્રધાન હોવાને કારણે તેની વિવક્ષા અહીં કરી નથી અનાનુપૂર્વી
અને અવત્તવ્યક, આ જે દ્રવ્યોની જ ત્યાં પ્રધાનતા હોવાથી તેમની જ
વિવક્ષા કરવામાં આવી છે. તેથી જ એવું કહેવામાં આવ્યું છે કે આનુપૂર્વી
દ્રવ્યનો એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો તેની
અવગાહના દેશોન લોકમાં છે. એજ વાતને “મહાસંધા પુણેવિય”
ઈત્યાદિ સૂત્રપાઠ દ્વારા અહીં પ્રકટ કરવામાં આવી છે.

શંકા—જો એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં દેશેન (દેશ ન્યૂન)
લોકવ્યાપી હોય, તો દ્રવ્યાનુપૂર્વીમાં પણ એવી જ વાતનો સ્વીકાર થવો
જોઈએ પરન્તુ દ્રવ્યાનુપૂર્વીમાં એવી વાતનો સ્વીકાર કરવાને બદલે આનુપૂર્વી
દ્રવ્યને સર્વલોકવ્યાપી કહેવામાં આવેલ છે. ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યને

प्रसङ्गात्, सर्वकालं च तेषामप्यवस्थितिप्रतिपादना? इति चेत्? उच्यते-
द्रव्यानुपूर्व्यां हि द्रव्याणामेवानुपूर्व्यादिभाव उक्तः, न तु क्षेत्रस्य, तस्य तत्रानधि-
कृतत्वात्। आनुपूर्व्यादिद्रव्याणां परस्परभेदेऽपि एकस्मिन्नपि क्षेत्रे तदवस्थानं न
किञ्चिद् विरुध्यते, यथा एकापवरकान्तर्गतानेक प्रदीपप्रमाणामवस्थितिर्न विरुध्यते।
इत्थं च द्रव्यानुपूर्व्यामानुपूर्व्यद्रव्याणां समस्तलोके विद्यमानत्वेऽपि न तत्र कस्या

लोक व्यापी मानने में जो आपने अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यको
ठहरने के लिये स्थान होने के कारण उनमें अभाव के प्रसंग प्राप्त होने
का कथन किया है, सो वही अभाव के प्रसंग प्राप्त होने के कारण उन
अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्योंके लिये द्रव्यानुपूर्वी में भी आनुपूर्वी
द्रव्य को सर्वलोकव्यापी मानने पर उपस्थित होता है। परन्तु ऐसा तो
है नहीं-क्योंकि सर्वकाल उन दोनों का भी अवस्थान माना गया है।

उत्तर-द्रव्यानुपूर्वी में द्रव्यों के ही आनुपूर्वी आदि भाव का कथन
किया गया है। आकाश रूप क्षेत्र को आनुपूर्वी आदि भाव का नहीं।
क्योंकि वहाँ पर द्रव्यानुपूर्वी में-आकाश रूप क्षेत्र का विचार अधिकृत
नहीं है। आनुपूर्वी आदि द्रव्यों का परस्पर में भेद होने पर भी उनका
अवस्थान एक भी आकाश प्रदेश रूप क्षेत्र में थोड़ा सा भी विरुद्ध नहीं
पड़ता है, जैसे एक कोठे के अन्तर्गत अनेक प्रदीपप्रमाणों की अवस्थिति
में कोई विरोध नहीं होता है। इस प्रकार द्रव्यानुपूर्वी से आनुपूर्वीद्रव्यों

सर्वलोकव्यापी मानवामां आवे अवे। प्रसंग प्राप्त धवाने। लय गताव्ये। छे
के अे प्रकारनी मान्यताने। स्वीकार करवामां आवे तो अनानुपूर्वी अने
अवक्तव्यक द्रव्य ने रडेवाना स्थानने। न अलाव रडेवाने कारणे ते द्रव्ये।
अलाव मनवाने। प्रसंग प्राप्त धशे। तो आनुपूर्वी द्रव्यने सर्वलोकव्यापी
मानवामां आवे तो अनानुपूर्वी अने अवक्तव्यक द्रव्ये। पण अलाव
मानवानुं कारण अही। पण उपस्थित धशे परन्तु अेवी बात तो संलवित
नथी, कारण के ते अनने। सद्भाव सदा मानवामां आवेले। न छे।

उत्तर-द्रव्यानुपूर्वीमां द्रव्ये। न आनुपूर्वी आदि लावनुं कथन करवामां
आव्युं छे-आकाशरूप क्षेत्रना आनुपूर्वी आदि लावनुं कथक धयुं नथी,
कारण के द्रव्यानुपूर्वीमां आकाश रूप क्षेत्रने। विचार अधिकृत नथी। आनु-
पूर्वी आदि द्रव्ये। परस्परमां भेद होवा छतां पण तेमनुं अवस्थान अेक
पण आकाशप्रदेश रूप क्षेत्रमां सडेन पण विरुद्ध पडतुं नथी। नेवी रीते
अेक कोठानी अंदर प्रदीपो (दीवा) नी प्रलाओनी अवस्थितिमां कोछ विरोध
पडतो नथी, अेन प्रमाणे द्रव्यानुपूर्वीमां आनुपूर्वी द्रव्ये। समस्त लोकमां

અનવકાશ इति, न कश्चिद् दोषः । क्षेत्रानुपूर्व्यां तु द्रव्याणामौपचारिक एवानु-
पूर्व्यादिभावः, मुख्यतस्तु क्षेत्रस्यैवानुपूर्व्यादिभावो विवक्षितः, तस्यैवात्राधिकारात् ।
तस्मादत्र यदि सर्वेऽपि लोकप्रदेशा आनुपूर्व्या व्याप्ता भवेयुस्तर्हि अनानुपूर्व्यवक्त-
व्यकतया किमन्यत् क्षेत्रं क्षेत्रानुपूर्व्या स्यात् ? । येषु नमःप्रदेशेष्वानुपूर्व्यस्तेष्वेवाना-
नुपूर्व्यवक्तव्यययोरपि सद्भाव स्यादिति तु न वक्तुं शक्यते, द्रव्यावगाहभेदेन

को समस्त लोक में व्यापक मानने पर भी वहां अनानुपूर्वी और अव-
क्तव्यक द्रव्यों के ठहरने में अनवकाश रूप दोष की आपत्ति का प्रसंग
प्राप्त थोड़ा भी नहीं होता है । परन्तु क्षेत्रानुपूर्वी में जो द्रव्यों का आनु-
पूर्वी आदि भाव कहा गया है वह तो औपचारिक ही हैं । क्योंकि इस
क्षेत्रानुपूर्वी में क्षेत्र में, ही आनुपूर्वी आदि रूप भाव मुख्य रूप से विव-
क्षित हुआ है, इसका कारण यह है कि उसका यहां अधिकार चल रहा है,
इसलिये क्षेत्रानुपूर्वी में यदि सब भी लोक के प्रदेश आनुपूर्वी से व्या-
प्त हो जावे तो फिर अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक रूप से और कौन से
दूसरे प्रदेशरूपी क्षेत्र क्षेत्रानुपूर्वी रूप से व्यवहृत होंगे कि जिससे जिन
आकाश के प्रदेशों में आनुपूर्वियों का सद्भाव है उन्हींमें अनानुपूर्वी
और अवक्तव्यकों का सद्भाव हो सके ? नहीं हो सकेगा । अतः फिर
यह कैसे कहा जा सकता है, कि जिन आकाश प्रदेशों में आनुपूर्वी का
सद्भाव है उन्हींमें अनानुपूर्वियों और अवक्तव्यकों का भी सद्भाव है ।
यदि इसपर यों कहा जावे कि इस प्रकार से मानने में कि जिन आकाश

વ્યાપક માનવા છતાં પણ ત્યાં અનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોને રહેવામાં
અવકાશ રૂપ દોષની આપત્તિનો પ્રસંગ બિલકુલ પ્રાપ્ત થતો નથી. પરન્તુ
ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં દ્રવ્યોના જે આનુપૂર્વી આદિ ભાવ કહેવામાં આવ્યા છે તે તો
ઔપચારિક જ છે, કારણ કે આ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં ક્ષેત્રમાં જ આનુપૂર્વી આદિ.
રૂપ ભાવ મુખ્ય રૂપે વિવક્ષિત થયા છે તેનું કારણ એ છે કે તેનો જ
અધિકાર અહીં ચાલી રહ્યો છે તેથી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં જે લોકના સમસ્ત પ્રદેશો
આનુપૂર્વી વડે વ્યાપ્ત થઈ જાય, તો અનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોનો
જેમાં સદ્ભાવ હોય એવાં અન્ય પ્રદેશો રૂપ ક્ષેત્રનો સદ્ભાવ જ
કયાથી રહે ! આ પ્રકારની પરિસ્થિતિમાં એવું કેવી રીતે કહી શકાય કે જે
આકાશપ્રદેશોમાં આનુપૂર્વીઓનો સદ્ભાવ છે, એજ આકાશપ્રદેશોમાં અનુપૂર્વીઓ
અને અવક્તવ્યકોનો પણ સદ્ભાવ છે ! જે આ બાબતને અનુલ-

क्षेत्रभेदस्य विवक्षणात् । तस्मादनानुपूर्व्यवक्तव्यकयो विषयं प्रदेशत्रयं विहाय शेष-
प्रदेशा एवानुपूर्व्या विषयो भवतीति प्रदेशत्रयलक्षणेन देशेन लोकस्योनता विव-
क्षिता, अतः क्षेत्रानुपूर्व्यामेकं द्रव्यं प्रतीत्य आनुपूर्वीद्रव्यं देशोने लोके भवति ।

प्रदेशों में आनुपूर्वी द्रव्य अवगाहित होते हैं, उन्हीं प्रदेशों में शेष दो
द्रव्य भी अवगाहित होते हैं। अतः अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यों
से अधिष्ठित वे कुछ प्रदेश अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक रूप से कहे
जावेंगे। सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं है कारण इस प्रकार के कथन
से द्रव्य के अवगाह की भिन्नता से क्षेत्र में भेद आजाता है। जिसकी
यहां विवक्षा है। तात्पर्य कहने का यह है कि द्रव्यानुपूर्वी में आनुपूर्वी
द्रव्यों का समस्त लोक में अवस्थान न होने पर भी अनानुपूर्वी और
अवक्तव्यक द्रव्यों के अवस्थान होनेपर वहां कोई दोष नहीं आता है।
परन्तु क्षेत्रानुपूर्वी में यदि आनुपूर्वीद्रव्य को समस्त लोक व्यापी माना
जावे अर्थात् लोक के समस्त प्रदेश आनुपूर्वी रूप मान लिये जावें तो
इस स्थिति में अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक प्रदेश कौनसे माने जावेंगे
कि जिनमें अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्य ठहर सकें। अतः यह
मानना चाहिये कि इस क्षेत्रानुपूर्वी में एक प्रदेश अनानुपूर्वी क्षेत्रानु-
पूर्वी का विषय है और दो प्रदेश अवक्तव्यक क्षेत्रानुपूर्वी के विषय

क्षीने એવી દલીલ કરવામાં આવે કે “જે આકાશપ્રદેશોમાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યો
અવગાહિત હોય છે, એજ પ્રદેશોમાં બાકીના બંને દ્રવ્યો અવગાહિત હોય
છે, અને તે કારણને લીધે અનાનુપૂર્વી અને અવકતવ્યક દ્રવ્યોથી અધિષ્ઠિત
એવાં એજ અમુક પ્રદેશોને અનાનુપૂર્વી અને અવકતવ્યક રૂપે કહી શકાશે. ”
આ પ્રકારની માન્યતા પણ બરાબર નથી, કારણ કે આ પ્રકારની માન્યતાને
સ્વીકાર કરવાથી દ્રવ્યના અવગાહની ભિન્નતાને લીધે ક્ષેત્રમાં પણ ભિન્નતા
આવી જાય છે. તેની જ અહીં વિવક્ષા ચાલી રહી છે આ સમસ્ત કથનનું
તાત્પર્ય એ છે કે દ્રવ્યાનુપૂર્વીમાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું સમસ્ત લોકમાં અવસ્થાન
હોવા છતાં પણ અનાનુપૂર્વી અને અવકતવ્યક દ્રવ્યોનું ત્યાં અવસ્થાન
માનવામાં કોઈ દોષ નથી પરન્તુ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં જે આનુપૂર્વી સમસ્ત લોક-
વ્યાપી માનવામાં આવે એટલે કે લોકના સમસ્ત પ્રદેશોને જે આનુપૂર્વી રૂપ
માનવામાં આવે, તો અનાનુપૂર્વી અને અવકતવ્યક દ્રવ્યો જેમાં અવગાહિત
થઈ શકે એવાં અનાનુપૂર્વી પ્રદેશો કેને માનવા ? તેથી એવું જ માનવું
પડશે કે આ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં એકપ્રદેશ અનાનુપૂર્વી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનો
વિષય છે અને બે પ્રદેશ અવકતવ્યક ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનો વિષય છે. આ

તથા-નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ નિયમાત્ સર્વલોકે ભવન્તિ ।
 ય્યાદિપ્રદેશાવગાદ ભેદતો નાનાવિધૈઃ=વિભિન્નપ્રકારૈરાનુપૂર્વીદ્રવ્યૈઃ સર્વોઽપિ
 લોકો વ્યાપ્ત इति भावः ।

હैं । इस प्रकार अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यों को ठहरने के लिये ये
 तीन प्रदेश लोक के हैं । इन प्रदेशों में यद्यपि आनुपूर्वीद्रव्य भी अवगा-
 हित होकर रहता है-परन्तु उसकी यहाँ गौणता है, और शेष दो द्रव्यों
 की मुख्यता है, इस प्रकार अवगाहिषों के भेद से अवगाहरूप आकाश
 में भेद आजाता है । अतः अनानुपूर्वी और अवक्तव्यकद्रव्यों के विषय-
 भूत प्रदेशत्रय को छोड़ कर बाकी के समस्त प्रदेश लोक के आनुपूर्वी
 रूप हैं । तथा एकप्रदेश अनानुपूर्वी और दो प्रदेश अवक्तव्यक हैं ।
 इसी कारण तीन प्रदेशरूप देशरूप देश से न्यूनता लोक में विवक्षित की
 गई है । अर्थात् लोक के ये ३ प्रदेश आनुपूर्वी नहीं हैं और बाकी के
 समस्त प्रदेश आनुपूर्वीरूप हैं । इस प्रकार क्षेत्रानुपूर्वी में एक आनुपूर्वी
 द्रव्य को आश्रित करके तीन प्रदेश न्यून समस्त लोक में आनुपूर्वी
 द्रव्य अवगाही हैं । यह कथन सिद्ध हो जाता है । तथा (नाणादव्वाइं
 पंडुच्च नियमा) नाना द्रव्यों की अपेक्षा लेकर समस्त आनुपूर्वी द्रव्य
 नियम से सर्वलोक में अवगाही है । अर्थात् लोक के य्यादिप्रदेशों में

રીતે અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોને રહેવા માટે લોકના આ ત્રણ
 પ્રદેશો છે. તે પ્રદેશોમાં જો કે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય પણ અવગાહિત થઇને
 રહે છે, પરન્તુ તેની ત્યાં ગૌણતા છે અને બાકીના બે દ્રવ્યોની
 પ્રધાનતા છે. આ પ્રકારે અવગાહિત દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ અવગાહરૂપ આકા-
 શમાં પણ ભેદ આવી જાય છે. તેથી અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોના
 વિષય રૂપ ત્રણ પ્રદેશો સિવાયના લોકના બાકીના સમસ્ત પ્રદેશો આનુપૂર્વીરૂપ
 છે. તથા એક પ્રદેશ અનાનુપૂર્વી રૂપ અને બે પ્રદેશો અવક્તવ્યક રૂપ છે.
 આ કારણે ત્રણ પ્રદેશરૂપ દેશની અપેક્ષાએ લોકમાં ન્યૂનતા પ્રકટ કરવામાં
 આવી છે. એટલે કે લોકના તે ત્રણ પ્રદેશો આનુપૂર્વી રૂપ નથી અને બાકીના
 સમસ્ત પ્રદેશો આનુપૂર્વી રૂપ છે. આ રીતે એ કથન સિદ્ધ થાય છે કે
 ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યને આશ્રિત કરીને ત્રણ પ્રદેશ ન્યૂન
 સમસ્ત લોકમાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યની અવગાહના છે.

તથા (નાનાદવ્વાઈં પંડુચ્ચ નિયમા) વિવિધ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર
 કરવામાં આવે તો સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય નિયમથી જ સર્વલોકમાં અવગાહી

તથા-નૈગમવ્યવહારસમ્મતાનામ્ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણાં પૃચ્છાર્યામશ્ચે તુ एवं વિજ્ઞેયમ્-एकं द्रव्यं प्रतीत्य अनानुपूर्वीद्रव्यं नो संख्येयतमभागे भवति, नो संख्ये-
येषु भागेषु भवति, नो असंख्येयेषु भागेषु भवति, नापि च सर्वलोके भवति,
किन्तु-असंख्येयतमभागे भवति। अयं भावः-एकं द्रव्यमाश्रित्यानानुपूर्वीद्रव्यं

स्थित आनुपूर्वी દ્રવ્યોં કે ભેદ સે વિભિન્ન પ્રકાર કે આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં સે સમસ્ત લોક વ્યાપ્ત હૈં । (નેગમવ્યવહારાણં) નેગમ વ્યવહારનયસંમત (અણાણુપુર્વીદ્રવ્યાણં) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કે (પુચ્છાણ) પ્રશ્નોં મેં તો હસ પ્રકાર સમજના ચાહિયે (एगं द्रव्यं) एक द्रव्य की (पडुच्च) प्रतीति करके अर्थात् एक अनानुपूर्वीद्रव्य की अपेक्षा करके-(नो संखेज्जइभागे होज्जा) अनानुपूर्वी द्रव्य लोक के संख्यातवे भाग में अवगाही नहीं हैं (नो संखेज्जेसु भागेषु होज्जा संख्यात भागों में अवगाही नहीं हैं)(नो-असंखेज्जेसु भागेषु होज्जा)असंख्यात भागों में अवगाही नहीं हैं(नो सर्वलोए होज्जा)और न सर्वलोक मे अवगाही हैं किन्तु (असंखेज्जइ भागे होज्जा) लोक के असंख्यातवे भाग में अवगाही हैं । अयं भावः-एक आनानुपूर्वीद्रव्य को लेकर जब यह विचार किया जाता है कि अनानु-पूर्वीद्रव्य लोक के कौन से भाग में अवगाहित है ? तब यह उत्तर मिलता है कि असंख्यातवे भाग में ही अवगाही है । क्योंकि अनानुपूर्वी द्रव्य

(રહેલુ) છે. એટલે કે લોકના ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં રહેલા આનુપૂર્વી દ્રવ્યોના લેહથી વિભિન્ન પ્રકારના આનુપૂર્વી દ્રવ્યો વડે સમસ્ત લોક વ્યાપ્ત છે. (નેગમ-વ્યવહારાણં) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત (અણાણુપુર્વી દ્રવ્યાણં) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોના (પુચ્છાણ) પ્રશ્નોમાં (વિષયમાં) તો આ પ્રમાણે સમજવું જોઈએ- (एगं द्रव्यं पडुच्च) ને એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો (નો સંખિજ્જइभागे होज्जा) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાતમાં ભાગમાં અવગાહી નથી, (નો સંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા), લોકના સંખ્યાત ભાગોમાં પણ અવગાહી નથી, (નો અસંખેજ્જેસુ ભાગેસુ હોજ્જા) અસંખ્યાત ભાગોમાં પણ અવગાહી નથી, (નો સર્વલોએ હોજ્જા) અને સમસ્ત લોકમાં પણ અવગાહી નથી, પરંતુ (असंखेज्जइभागे होज्जा) લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં અવગાહી છે. આ સઘળા કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે એક અનાનુ-પૂર્વી દ્રવ્યની યાબતમાં એવો વિચાર કરવામાં આવે કે “એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના કેટલા ભાગમાં અવગાહી છે ? આ પ્રશ્નનો ઉત્તર એ છે કે તે લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં જ અવગાહી છે. કારણ કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય

લોકસ્ય સંખ્યેયતમે ભાગ એવ વર્તે, એકપ્રદેશાવગાઢસ્યૈવાનાનુપૂર્વીત્વેન વિવક્ષણાત્, એકપ્રદેશસ્ય ચ લોકાઃસંખ્યેયભાગવર્તિત્વાદિતિ । નાનાદ્રવ્યાણ્યશ્રિત્ય તુ અનાનુ-પૂર્વીદ્રવ્યાણિ નિયમાત્ સર્વલોકવ્યાપીનિ ભવન્તિ, એકૈકપ્રદેશાવગાઢદ્રવ્યભેદાનાં સમસ્તલોકવ્યાપિત્વાદિતિ ભાવઃ ।

અર્થ=અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યવત્ અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણ્યપિ મણિતવ્યાનિ=વક્તવ્યાનિ । અર્થ ભાવઃ—એકં દ્રવ્યમાશ્રિત્યાવક્તવ્યકદ્રવ્યમપિ અસંખ્યેયતમભાગે એવ ભવતિ, દ્વિપ્રદેશાવગાઢસ્યૈવાવક્તવ્યકદ્રવ્યત્વેનાભિધાનાત્ પ્રદેશદ્વયસ્ય ચ લોકાસંખ્યેય-

રૂપ સે વહી દ્રવ્ય વિવક્ષિત હુઆ હૈ, જો લોક કે એકપ્રદેશ મેં હી-અવગાઢ હોતા હૈ । લોક કા એકપ્રદેશ લોક કે અસંખ્યાતવેં ભાગ મેં રહને વાલા હૈ । ફસલિયે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોક કે અસંખ્યાતવેં ભાગ મેં હી અવગાહી માના ગયા હૈ । (નાના દ્રવાઈ) નાના અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કી(પ-હુચ્ચ) અપેક્ષા લેકર અનેક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય (ણિયમા) નિયમ સે (સવ્વ-લોપ હોજ્જા) સર્વલોક વ્યાપી માને ગયે હૈં । ક્યોંકિ એક એકપ્રદેશ મેં અવગાઢ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કે ભેદ સમસ્ત લોક કો વ્યાપ્ત કિયે હુપ રહતે હૈં । (એવં અવક્તવ્યકદ્રવાણિ વિ ભાણિયવ્વાણિ) ફસી પ્રકાર અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કી તરહ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કે વિષય મેં ભી જાનના ચાહિયે । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ એક અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે એક અવક્તવ્યકદ્રવ્ય ભી લોક કે અસંખ્યાતવેં ભાગ મેં હી અવગા-હી રહતા હૈ, ક્યોંકિ લોક કે પ્રદેશદ્વય મેં અવગાઢહુપ દ્રવ્ય કો અવક્ત-

રૂપે એજ દ્રવ્ય વિવક્ષિત થયું છે કે જે લોકના એક પ્રદેશમાં જ રહેલું હોય છે લોકના એક પ્રદેશ લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં રહેલો હોય છે. તે કારણે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યને લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં જ અવગાહી માનવામાં આવ્યું છે.

(નાનાદ્રવાઈ પહુચ્ચ) વિવિધ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો (ણિયમા સવ્વલોપ હોજ્જા) તો તેમને નિયમથી જ સર્વલોકવ્યાપી માનવામાં આવેલ છે, કારણ કે એક એક પ્રદેશમાં અવગાઢ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોના ભેદો સમસ્ત લોકને વ્યાપ્ત કરીને રહેલાં હોય છે. (એવં અવક્તવ્યકદ્રવાણિ વિ ભાણિયવ્વાણિ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોના જેવું જ કથન અવક્તવ્યક દ્રવ્યો વિષે પણ અહીં ગ્રહણ કરવું જોઈએ એટલે કે એક અવક્તવ્યક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો એમ કહેવું જોઈએ કે એક અવક્તવ્યક દ્રવ્ય લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં જ અવગાહી હોય છે, કારણ કે લોકના જે પ્રદેશોમાં જ અવગાહિત થયેલા દ્રવ્યને અવક્તવ્યક

ભાગવર્તિત્વાત્ । નાનાદ્રવ્યાણ્યાશ્રિત્ય તુ અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ સર્વલોકે સન્તિ, નાના-
દ્રવ્યાપેક્ષ્યા દ્વિપ્રદેશાવગાદાનામવક્તવ્યકદ્રવ્યાણાં સમસ્તલોકવ્યાપિત્વાદિતિ ભાવઃ ।

નનુ—આનુપૂર્વાદીનિ ત્રીણ્યપિ દ્રવ્યાણિ સર્વલોકવ્યાપીનિ પ્રોચ્યન્તે, इत्थं च
येष्वाकाशप्रदेशेषु आनुपूर्वी, तेष्वेवाकाशप्रदेशेषु अनानुपूर्व्यवक्तव्यद्रव्ययोरपि
सद्भावः प्रतिपादितो भवति, एवं च कथमेकस्यैव क्षेत्रस्य परस्परविरुद्धं भिन्न-
विषयम् आनुपूर्व्यादिव्यपदेशत्रयं स्यात् ? इति चेत्, अत्रोच्यते—व्यादिप्रदेशाव-

વ્યક દ્રવ્યરૂપ સે કહા ગયા હૈ । લોક કે અસંખ્યાત પ્રદેશોં કી અપેક્ષા
સે અસંખ્યાતવેં ભાગ રૂપ પડતે હૈં । इसलिये अवक्तव्यक द्रव्य को लोक
के असंख्यातवें भागवर्ती माना गया है । तथा नाना अवक्तव्यकद्रव्यों
की अपेक्षा से जितने भी अवक्तव्यक द्रव्य हैं, वे सब लोक के दो २
प्रदेशों में व्यापक रहने के कारण सर्वलोकव्यापी माने गये हैं ।

શંકા—આનુપૂર્વી આદિ જો દ્રવ્ય હૈં વે સબ હી લોકવ્યાપી હૈં એસા
આપ કહતે હૈં । सो जिन आकाश प्रदेशों में आनुपूर्वी द्रव्य रहते हैं ।
उन्हीं आकाश प्रदेशों में इतर दो अनानुपूर्वी अवक्तव्यक द्रव्य भी रहते
हैं । यही बात इस कथन से प्रतिपादित होनी है । अतः इस प्रकार के
कथन से एक ही क्षेत्र में परस्पर विरुद्ध आनुपूर्वी आदि व्यपदेशत्रय
जो कि भिन्न भिन्न विषय से संबंधित है, कैसे संगत हो सकता है ?

દ્રવ્ય કહેવામાં આવે છે. લોકના તે બે પ્રદેશોને લોકના અસંખ્યાત પ્રદેશોની
સાથે સરખાવવામાં આવે તો લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગની બરાબર જ હોય
છે. તે કારણે જ એક અવક્તવ્યક દ્રવ્યને લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં જ
રહેલું માનવામાં આવ્યું છે. વિવિધ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર-
વામાં આવે તો તે સઘળાં અવક્તવ્યક દ્રવ્યો લોકના બખબે પ્રદેશોમાં વ્યાપ્ત
હોવાને કારણે તેમને સર્વલોકવ્યાપી માનવામાં આવ્યાં છે.

શંકા—આપે અહીં એવું પ્રતિપાદન કર્યું છે કે આનુપૂર્વી આદિ જે
દ્રવ્યો છે તેઓ સમસ્ત લોકવ્યાપી છે આપના આ કથન વડે તો એવું
પ્રતિપાદિત થાય છે કે જે આકાશપ્રદેશોમાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યો રહે છે, એજ
પ્રદેશોમાં અનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો પણ રહે છે, આ પ્રકારનું
કથન સંગત લાગતું નથી, કારણ કે એક જ ક્ષેત્રમાં પરસ્પરથી વિરુદ્ધ એવાં
આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોનો અવગાહ કેવી રીતે સંભવી શકે ? ભિન્ન ભિન્ન
વિષયો સાથે સંબંધિત આ ત્રણેનો એક જ ક્ષેત્રમાં કેવી રીતે સદ્ભાવ હોઈ

ગાઢાદ્ દ્રવ્યાદ્ ભિન્નમેવ તાવદેકપ્રદેશાવગાઢમ્, તાભ્યાં ચ ભિન્નં દ્વિપ્રદેશાવગાઢમ્ । इत्थं च आधेयस्यावगाहकद्रव्यस्य भेदादाधारस्याप्यवगाहस्य क्षेत्रस्य भेदः

શંકાકાર કી હસ શંકા કા ભાવ યહ હૈ કિ ઇકહી ક્ષેત્ર મેં આનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વી ઓર અવક્તવ્યક હન તીનોં કી સંગતિ કૈસે હો સકતી હૈ? ક્યોંકિ યહ આનુપૂર્વી આદિકા ભાવ ઇક દૂમરે સે સર્વથા વિરુદ્ધ હૈ । ક્યોંકિ હનકા વિષય અપના ૨ ભિન્ન ૨ હૈ । યદિ યે તીનોં વ્યાપ્ત રૂપ હોતે તો ઇક ક્ષેત્ર મેં ઘટિત બી હો જાતે-પરન્તુ ઇસે તો યે-નહીં હૈ । યે તો તીનોં વ્યાપક દ્રવ્ય હૈ । હસ પ્રકાર જો આકાશપ્રદેશ આનુપૂર્વી રૂપ સે કહેં જાવેગેં વે હી અનાનુપૂર્વી ઓર અવક્તવ્યકરૂપ સે કૈસે વ્યપદિષ્ટ હો સકતે હૈ? હસલિયે અનાનુપૂર્વી આદિભાવ કો વ્યાપક માનને પર ઇક હી આકાશરૂપ ક્ષેત્ર મેં આનુપૂર્વી આદિ વ્યપદેશ ભિન્ન વિષયવોલા હોને કે કારણ પરસ્પર વિરુદ્ધ પડતા હૈ ।

ઉત્તર-આકાશરૂપ ક્ષેત્ર યદિ ઇકહી માના જાતા તો હસ પ્રકાર કી શંકા સંગત હો સકતી-પરન્તુ ઇસાં નહીં હૈ । ક્યોંકિ વ્યાપ્તિપ્રદેશોં મેં અવગાઢ જો આનુપૂર્વીદ્રવ્ય હૈ ડસસે ઇક પ્રદેશાગાઢ દ્રવ્ય ભિન્ન હૈ, ઓર હન દોનોં સે દ્વિપ્રદેશાવગાઢ દ્રવ્ય ભિન્ન હૈ । હસ પ્રકાર આધેય રૂપ જો

શકે? શંકાકારની શંકાનો ભાવર્થ એવો છે કે આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ એક જ ક્ષેત્રમાં કેવી રીતે સંભવી શકે? આ આનુપૂર્વી આદિ ભાવો પરસ્પરથી બિલકુલ-વિરુદ્ધ ગુણધર્મો ધરાવે છે, તે પ્રત્યેકનો વિષય પરસ્પરથી ભિન્ન ભિન્ન છે, છતાં તેમને આપ સર્વલોક વ્યાપી કેવી રીતે કહો છો? જો તે ત્રણે વ્યાપ્ય રૂપ હોત તો એક ક્ષેત્રમાં તેમનો સદ્ભાવ માની શકાત, પરન્તુ તેઓ વ્યાપ્ય રૂપ નથી તે ત્રણે વ્યાપક દ્રવ્ય રૂપ છે. આ પરિસ્થિતિમાં જો આકાશપ્રદેશોને આનુપૂર્વી રૂપે ઓળખવામાં આવશે, એજ આકાશપ્રદેશોને આનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક રૂપે કેવી રીતે કહી શકાશે? તેથી અનાનુપૂર્વી આદિ ભાવોને વ્યાપક માનવામાં આવે તો એક જ આકાશરૂપ ક્ષેત્રમાં આનુપૂર્વી આદિ વ્યપદેશ ભિન્ન વિષયવાળો હોવાને કારણે પરસ્પરથી વિરુદ્ધ પડે છે.

ઉત્તર—આકાશ રૂપ ક્ષેત્ર જો એક જ માનવામાં આવ્યું હોત તો આ પ્રકારની શંકા સંગત ગણી શકાત. પરન્તુ એવું નથી કારણ કે ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં અવગાઢ જો આનુપૂર્વી દ્રવ્ય છે, તેના કરતાં એક પ્રદેશાવગાઢ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય ભિન્ન છે અને તે બન્ને કરતાં દ્વિપ્રદેશાવગાઢ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય ભિન્ન છે. આ રીતે આધેય રૂપ જો અવગાહક દ્રવ્ય છે, તેના ભેદથી

સ્યાદેવ । તથા ચ વ્યપદેશભેદો યુક્ત એવ । દૃશ્યતે ચાનન્તધર્માધ્યાસિતે વસ્તૂનિ તત્સહકારિ સન્નિધાનાત્તત્તદ્ધર્માભિવ્યક્તૌ સમકાલં વ્યપદેશભેદઃ, યથા સ્વદ્ગુન્ત-કવચાદિયુક્તે દેવદત્તે સ્વદ્ગ્ની કુન્તી કવચીત્યાદિવ્યપદેશભેદ इति नास्ति कश्चिद् दोषः । इति क्षेत्रद्वारम् ॥સૂ૦ ૧૧૨॥

અથ સ્પર્શનાદ્વારં પ્રરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ્—ળેગમવવહારાણં આણુપુઠ્વીદઢ્વાઈં લોગસસ કિં સંઘે-જ્જઇભાગં ફુસંતિ ? અસંઘિજ્જઇભાગં ફુસંતિ ? સંઘેજ્જે ભાગે ફુસંતિ જાવ સઠ્વલોયં ફુસંતિ ? ઇગં દઢ્વં પઢુચ્ચ સંઘિજ્જઇભાગં વા ફુસઇ, અસંઘિજ્જઇભાગં વા સંઘેજ્જે ભાગે વા અસંઘેજ્જે ભાગે વા દેસૂણં વા લોગં ફુસઇ । નાળાદઢ્વાઈં પઢુચ્ચ ણિયમા સઠ્વલોયં ફુસંતિ । અણાણુપુઠ્વીદઢ્વાઈં અવત્તઠ્વગદઢ્વાઈં ચ જહા સેત્તં નઢ્વરં ફુસળા ભાણિયઢ્વા ॥સૂ૦ ૧૧૩॥

અવગાહકદ્રવ્ય હૈં ઉસકે ભેદ સે આધારરૂપ અવગાહ્ય ક્ષેત્રમેં ભેદ હો જાતા હી હૈં । ઇસપ્રકાર હોને સે વ્યપદેશ ભેદ વહાં હોના યુક્ત હી હૈં । અસં-ગત નહીં । ધિન્ન ૨ સહકારિયોં કી સન્નિધાનતા સે તત્તદ્ધર્મ કી અભિ-વ્યક્તિ હોનેપર અનન્ત ધર્માત્મક ઇક હી વસ્તુ મેં યુગપત્ વ્યપદેશ ભેદ હોના દેઘાં જાતા હૈં । જૈસે સ્વદ્ગ, કુન્ત, કવચ, આદિ સે યુક્ત ઇક હી-દેવદત્ત વ્યક્તિ મેં સ્વદ્ગ્ની, કુન્તી કવચી ઇત્યાદિ વ્યપદેશ ભેદ દેઘાં જાતા હૈં । અતઃ અનાનુપૂર્ઘી આદિ ભાવ કો ઇક ક્ષેત્ર મેં વ્યાપક માનનેપર ઉસમેં આનુપૂર્ઘી આદિરૂપ સે વ્યપદેશ નિર્દોષ હૈં । ॥ સૂ૦ ૧૧૨ ॥

આધારરૂપ અવગાહ્ય ક્ષેત્રમાં લેદ આવી જ જાય છે. આ પ્રમાણે થવાથી ત્યાં વ્યપદેશ લેદ થવો તે યુક્ત જ લાગે છે—અસંગત લાગતો નથી જુદા જુદા સહકારીઓની સન્નિધાનતા વડે તે તે ધર્મની અભિવ્યક્તિ થાય ત્યારે અનન્ત ધર્માત્મક ઇક જ વસ્તુમાં યુગપત્ (ઇક સાથે) વ્યપદેશ લેદ થતો જોવામાં આવે છે, જેમકે ખડ્ગ, કુન્ત, કવચ આદિ વડે યુક્ત ઇક જ દેવદત્ત આદિ વ્યક્તિમાં ખડ્ગી, કુન્તી, કવચી ઇત્યાદિ વ્યપદેશ—લેદ જોવામાં આવે છે. તેથી અનાનુપૂર્ઘી આદિ ભાવોને ઇક ક્ષેત્રમાં વ્યાપક માનવામાં આવે તો તેમાં આનુપૂર્ઘી આદિ રૂપે વ્યપદેશ નિર્દોષ છે. ॥ સૂ૦ ૧૧૨ ॥

છાયા — નૈગમવ્યવહારયોઃ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ લોકસ્ય કિં સંખ્યેયતમભાગં સ્પૃશન્તિ ? અસંખ્યેયતમભાગં સ્પૃશન્તિ ? સંખ્યેયાન્ ભાગાન્ સ્પૃશન્તિ ? યાવત્ સર્વલોકં સ્પૃશન્તિ ? એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય સંખ્યેયતમભાગં વા સ્પૃશતિ, અસંખ્યેયતમ-ભાગં વા સંખ્યેયાન્ ભાગાન્ વા અસંખ્યેયાન્ ભાગાન્ વા દેશોનં વા લોકં સ્પૃશતિ । નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય નિયમાત્ સર્વલોકં સ્પૃશન્તિ । અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ અવક્તવ્ય-કદ્રવ્યાણિ ચ યથાક્ષેત્રં નવરં સ્પર્શના ભણિતવ્યા ॥મૂ૦ ૧૧૩॥

ટીકા — ‘જેગમવ્યવહારાણં’ इत्यादि । નૈગમવ્યવહારસમ્મતાનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કિં લોકસ્ય સંખ્યેયતમભાગં સ્પૃશન્તિ ? અસંખ્યેયતમભાગં સ્પૃશન્તિ ? इत्येवं पूर्व-वदेन प्रश्ना विज्ञेयाः । उत्तरमाह—‘एकं द्रव्यं’ इत्यादि । એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સંખ્યેયતમભાગં વા સ્પૃશતિ, અસંખ્યેયતમભાગં વા સ્પૃશતિ, સંખ્યેયાન્ વા ભાગાન્, અસંખ્યેયાન્ વા ભાગાન્ સ્પૃશતિ, દેશોનં વા

અવ સૂત્રકાર સ્પર્શનાદ્વાર કી પ્રપરુણા કરતે હૈ

“જેગમવ્યવહારાણં” इत्यादि ।

શબ્દાર્થ-પ્રશ્ન-(જેગમવ્યવહારાણં આણુપુઞ્વી દઁવાઈ લોગસસ કિં સંખેજ્જહભાગં ફુસંતિ ?) નૈગમવ્યવહારનય સંમત સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કયા લોક કે સંખ્યાતવેં ભાગ કા સ્પર્શ કરતે હૈ ? (અસંખેજ્જહભાગં ફુસંતિ ?) યા અસંખ્યાતવેં ભાગ કા સ્પર્શ કરતે હૈ ? (સંખેજ્જેભાગે ફુસંતિ) યા સંખ્યાત ભાગોં કા સ્પર્શ કરતે હૈ ? (જાવ સઁવલોયં ફુસંતિ) યા યાવત્ સર્વલોક કા સ્પર્શ કરતે હૈ ? (એગં દઁવં પડુચ્ચ)

ઉત્તર-એક દ્રવ્ય કો આશ્રિત કરકે (સંખિજ્જહભાગં વા) આનુ-પૂર્વી દ્રવ્ય લોક કે સંખ્યાતવેં ભાગ કો (ફુસહ) સ્પર્શ કરતા હૈ— (અસંખિજ્જહભાગં વા) અસંખ્યાતવેં ભાગ કા સ્પર્શ કરતા હૈ (સંખિજ્જે

હવે સૂત્રકાર સ્પર્શનાદ્વારની પ્રરૂપણા કરે છે—

“જેગમવ્યવહારાણં” इत्यादि—

શબ્દાર્થ-પ્રશ્ન-(જેગમવ્યવહારાણં આણુપુઞ્વીદઁવાઈ લોગસસ કિં સંખેજ્જહ ભાગં ફુસંતિ, અસંખિજ્જહભાગં ફુસંતિ, સંખેજ્જે ભાગે ફુસંતિ, જાવ સઁવલોયં ફુસંતિ ?) નૈગમવ્યવહારનયસંમત સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યેા શું લોકના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? કે અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? કે સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે ? કે અસંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે ? કે સમસ્ત લોકનો સ્પર્શ કરે છે ?

ઉત્તર-(એગં દઁવં પડુચ્ચ) એક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો (સંખિજ્જહભાગં વા ફુસહ) આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાતમાં ભાગનો પણ સ્પર્શ કરે છે, (અસંખિજ્જહભાગં વા) અસંખ્યાતમાં ભાગનો પણ

લોકં સ્પૃશતિ । અનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકદ્રવ્યોર્નિરવકાશતાપ્રસજ્ઞાત્ પૂર્વવત્ લોકસ્ય
દેશોનાનુપૂર્વોદ્રવ્યસ્પર્શના બોધ્યેતિ ભાવઃ । નાનાદ્રવ્યાણ્યાશ્રિત્ય તુ આનુપૂર્વોદ્રવ્યાણિ
નિયમાત્ સર્વલોકં સ્પૃશન્તિ । અનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકદ્રવ્યાણાં સ્પર્શના તુ અત્રૈવાવ્યવ-
હિતપૂર્વોક્તક્ષેત્રદ્વારવદ્ બોધ્યા ॥ સૂ૦ ૧૧૩ ॥

भागों वा असंखेज्जे भागे वा) संख्यात भागों को स्पर्श करता है, असं-
ख्यात भागों को स्पर्श करता है' (देसूणं वा लोगं फुसइ) देशोन लोक का
भी स्पर्श करता है । (नाणादव्वाइं पडुच्च णियमा सव्वलोयं फुसंति)
नाना द्रव्यों की अपेक्षा करके तो आनुपूर्वोद्रव्य नियम से सर्वलोक का
स्पर्श करते हैं (अणाणुपुव्वीदव्वाइं अवत्तव्वगदव्वाइं च जहा खेत्तं नवरं
फुसणा भाणियव्वा) अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यों की स्पर्शना
तो यहीं पर अव्यवहित पूर्वोक्त क्षेत्रद्वार की तरह जानना चाहिये ।

भावार्थ—नैगमव्यवहारनय संमत आनुपूर्वी द्रव्य लोक के संख्या-
तवे भाग की कोई एक लोक के असंख्यातवे भाग की कोई एक लोक
के संख्यात भागों की, कोई एक असंख्यात भागों की, और कोई एक
देशोन सर्वलोक की स्पर्शना करते हैं । यहां पर जो कोई एक आनुपूर्वी
द्रव्य को देशोन लोक की स्पर्शना करने का कथन किया है सो उसका
कारण यह है कि यदि आनुपूर्वी द्रव्य समस्त लोक की स्पर्शना करें तो
अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यों को अवकाश प्राप्ति का अभाव होगा ।

સ્પર્શ કરે છે, (સંખેજ્જે ભાગે વા, અસંખેજ્જે ભાગે વા) સંખ્યાત ભાગોનો પણ
સ્પર્શ કરે છે, અસંખ્યાત ભાગોનો પણ સ્પર્શ કરે છે, (દેસૂણં વા લોગં ફુસઇ)
અને દેશોન લોકનો પણ સ્પર્શ કરે છે. (નાણાદવ્વાઈં પડુચ્ચ ણિયમા સવ્વલોયં
ફુસંતિ) વિવિધ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો આનુપૂર્વી
દ્રવ્યો નિયમથી સર્વલોકનો સ્પર્શ કરે છે. (અણાણુપુવ્વી દવ્વાઈં અવત્તવ્વગદવ્વાઈં
ચ જહાં ખેત્તં નવરં ફુસણા ભાણિયવ્વા) અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની
સ્પર્શના વિષેનું કથન પૂર્વોક્ત ક્ષેત્રદ્વારના કથન મુજબ જ સમજવું જોઈએ.

ભાવાર્થ—નૈગમવ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાંનું કોઈ એક
આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાતમાં ભાગની, કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય
લોકના સંખ્યાત ભાગોની, કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના અસંખ્યાત
ભાગોની અને કોઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય દેશોન સર્વલોકની સ્પર્શના કરે
છે. અહીં “એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય દેશોન સર્વલોકની સ્પર્શના કરે છે.” આ
પ્રકારનું જે કથન થયું છે તેનું કારણ એ છે કે જો એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય
સમસ્ત લોકની સ્પર્શના કરતું હોય, તો અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક

અથ કાલદ્વારપ્રરૂપયતિ—

મૂલ્મ—‘જેગમવવહારાણં આણુપુર્વીદ્વાઈં કાલઓ કેવચ્ચિરં’
હોઈ ? એગં દઢવં પડુચ્ચ જહન્નેણં એગં સમયં ઉક્કોસેણં અસં-
ચિજ્જં કાલં । નાનાદઢ્વાઈં પડુચ્ચ ણિયમા સઠ્ઠ્ઠા । એવં
દોણિણ વિ ॥સૂ૦ ૧૧૪॥

છાયા—‘જેગમવવહારયોઃ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કાલતઃ કિયચ્ચિરં ભવન્તિ ?
એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય જઘન્યેન એકં સમયમ્, ઉત્કર્ષેણ અસંખ્યેયં કાલમ્ । નાના-
દ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય નિયમાત્ સર્વાદ્ધા । એવં દ્વે અપિ ॥મૂ૦ ૧૧૪॥

ટીકા—‘જેગમવવહારાણં’ ઇત્યાદિ ।

જેગમવવહારસમ્મતાનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કાલતઃ કિયચ્ચિરં ભવન્તિ ? ઇતિ
પ્રશ્નઃ । ક્ષેત્રાવગાહપર્યાયસ્ય પ્રાધાન્યવિવક્ષયા ત્ર્યાદિપ્રદેશાવગાહદ્રવ્યાણામેવાનુ-

અતઃ દ્વિતીયો દ્રવ્યોનો કો ઓ અવકાશ પ્રાપ્ત હો ઇસલિયે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય
કો સ્પર્શના દેશોન લોક કો કહી ગઈ હૈ । નાના દ્રવ્યોનો કો અપેક્ષા યે
ત્રીનો હી દ્રવ્ય નિયમ સે સર્વલોક કો સ્પર્શના કરતે હૈ ॥સૂ૦ ૧૧૩॥

અથ સૂત્રકાર કાલદ્વાર કો પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

‘જેગમવવહારાણં આણુપુર્વી’ ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(જેગમવવહારાણં) જેગમવવહારનયસંમત (આણુપુર્વી-
દઢ્વાઈં) સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય (કાલઓ) કાલકો અપેક્ષા (કેવચ્ચિરં
હોઈ) કિતને સમયતરુ આનુપૂર્વી રૂપ સે રહતે હૈ ? પૂછને વાલે કા યહ
આશય હૈ કિ અનાનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યો કા ક્ષેત્ર મેં ત્ર્યાદિ પ્રદેશો મેં અવ-

દ્રવ્યોને સ્પર્શના કરવા માટેના ક્યાનનો અવકાશ જ ન રહે. તે બંને દ્રવ્યની
સ્પર્શના પણ અવકાશ મળી રહે તે માટે આનુપૂર્વી દ્રવ્યની સ્પર્શના સમસ્ત
લોકમાં કહેવાને બદલે દેશોન લોકમાં કહી છે. વિવિધ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ
વિચાર કરવામાં આવે, તો આનુપૂર્વી આદિ ત્રણે દ્રવ્યો નિયમથી જ
સર્વલોકની સ્પર્શના કરે છે. ॥સૂ૦ ૧૧૩॥

હવે સૂત્રકાર કાળદ્વારની પ્રરૂપણા કરે છે—

‘જેગમવવહારાણં આણુપુર્વી’ ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(જેગમવવહારાણં) જેગમવવહાર નયસંમત (આણુપુર્વીદઢ્વાઈં)
સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો (કાલઓ) કાળની અપેક્ષાએ (કેવચ્ચિરં હોઈ ?) કેટલા
સમય સુધી આનુપૂર્વી રૂપે રહે છે ? એટલે કે આનુપૂર્વી દ્રવ્યોનો ક્ષેત્રમાં—
ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં અવગાહિત થઈને રહેવાનો કાળ કેટલો છે ? કારણ કે

पूर्व्यादिभावः पूर्वमुक्तः, तेषामानुपूर्व्यादिद्रव्याणामवगाहस्थितिकालः कियान् भवतीति प्रभुराशयः । उत्तरमाह—‘एगं द्रव्यं’ इत्यादि । एकं द्रव्यं प्रतीत्य कालतः= कालमाश्रित्य आनुपूर्वीद्रव्यं जघन्येन एकं समयं वर्तते । इह द्विप्रदेशावगाहस्य वा एक प्रदेशावगाहस्य वा द्रव्यस्य परिणामवैचित्र्यात् प्रदेशत्रयावगाहभवने आनुपूर्वीद्रव्यप्रदेशः संजातः । एकं समयं तद्भावेन स्थित्वा पुनः पूर्ववदेव द्विप्रदेशावगाहमेकप्रदेशावगाहं वा तद् द्रव्यं संजातम्, अतो जघन्यत आनुपूर्वीद्रव्याणामेकं समयमवस्थितिं बोधयेति भावः । तथा—उत्कर्षेण असंख्येयं कालं भवति । अयं

गाह रूप से रहने का समय कितना है ? क्यों कि यह पहिले कहा जा चुका है कि क्षेत्र में अवगाह पर्याय की प्रधानता रूप से विवक्षा है । और इसलिये ज्वादि प्रदेशोंमें अवगाह हुए द्रव्योंमें ही आनुपूर्वी आदि भाव का कथन क्षेत्रानुपूर्वी में किया गया है । अतः पूछने वाले ने यहाँ यह पूछा है कि वे आनुपूर्वी आदि द्रव्य ज्वादि प्रदेश रूप क्षेत्रमें कितने समय तक आनुपूर्वी आदि रूप से अवगाहित रहते हैं ?

उत्तर—(एगं) एक द्रव्य की (पहुच्च) अपेक्षा लेकर (जहन्नेणं) कम से कम (एगं समयं) एकसमय तक और (उक्कोसेणं) उत्कृष्ट-ज्वादा से ज्वादा (असंखिज्जं कालं) असंख्यात काल तक एक आनुपूर्वीद्रव्य क्षेत्र में अवगाहित रहता है । तात्पर्य कहने का यह है कि द्विप्रदेश में अवगाहित या एक प्रदेश में अवगाहित हुआ द्रव्य परिणामन की विचित्रता से जब प्रदेश आदि में अवगाहित होता है उस समय उसमें आ-

એ વાત તો પહેલાં જ પ્રકટ કરવામાં આવી ચુકી છે કે ક્ષેત્રમાં અવગાહ પર્યાયની પ્રધાન રૂપે વિવક્ષા છે. અને તેથી જ ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં અવગાહિત થયેલાં દ્રવ્યોમાં જ આનુપૂર્વી આદિ ભાવનું કથન ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં કરવામાં આવ્યું છે. તેથી આદી પ્રશ્નકર્તાનો એવો પ્રશ્ન છે કે તે આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્ય ત્રણ આદિ પ્રદેશરૂપ ક્ષેત્રમાં કેટલા સમય સુધી આનુપૂર્વી આદિ રૂપે અવગાહિત રહે છે ?

ઉત્તર—(એગં દ્રવ્યં પહુચ્ચ) એક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો (જહન્નેણં એગ સમયં) એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ઓછામાં ઓછા એક સમય સુધી અને (ઉક્કોસેણં અસંખિજ્જં કાલં) વધારેમાં વધારે અસંખ્યાત કાળ સુધી ક્ષેત્રમાં અવગાહિત રહે છે. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—જે પ્રદેશોમાં અવગાહિત થયેલું અથવા એક પ્રદેશમાં અવગાહિત થયેલું દ્રવ્ય પરિણમનની વિચિત્રતાથી જ્યારે ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં અવગાહિત થાય છે,

ભાવઃ—યદા તદેવ દ્રવ્યમસંખ્યેયં કાલં તદ્ભાવેન સ્થિત્વા પુનસ્તથૈવ દ્વિપ્રદેશાવ-
ગાદમેકપ્રદેશાવગાદં વા જાયતે તદાઽઽનુપૂર્વીદ્રવ્યસ્ય ઉત્કર્ષતોઽસંખ્યેયં કાલં
સ્થિતિર્ભવતિ । અનન્તં કાલં તુ સ્થિતિર્ન ભવતિ, એકપ્રદેશાવગાદસ્યૈકદ્રવ્યસ્ય
ઉત્કર્ષતોઽસંખ્યેયકાલમેવાવસ્થાનાત્ । તથા નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ
નિયમાત્ સર્વાદ્વા=સર્વકાલમેવ ભવન્તિ-વર્તન્તે इत्यर्थः ય્યાદિપ્રદેશાવગાદદ્રવ્ય-

નુપૂર્વી એસા વ્યપદેશ હો જાતા હૈ । સો વહ દ્રવ્ય એક સમય તક આનુ-
પૂર્વી રૂપ સે વહાં અવગાહિત રહકર વાદ મેં પહિલે કી તરહ હી યા તો
દ્વિપ્રદેશ મેં અવગાહિત હો જાતા હૈ યા એક પ્રદેશ મેં અવગાહિત હો
જાતા હૈ હસલિયે આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કી ય્યાદિ પ્રદેશોં મેં રહને કી સ્થિતિ
એક સમય કી કહી ગઈ હૈ । હસી પ્રકાર સે જબ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય—
અસંખ્યાત કાલ તક તદ્ભાવ સે સ્થિત રહકર પુનઃ દ્વિપ્રદેશાવગાહી બન
જાતા હૈ તવ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કી ઉત્કૃષ્ટ રૂપ સે અસંખ્યાત કાલ કી સ્થિતિ
હોતી હૈ એસા જાનના ચાહિયે । અનન્ત કાલ તક વહાં પર રહને કી,
ઉસકી સ્થિતિ નહીં હોતી હૈ । ક્યોંકિ એક અવગાહમેં એક દ્રવ્ય અસં-
ખ્યાત કાલ તક હી જ્યાદા સે જ્યાદા રહ સકતા હૈ । તથા (જાણા-
દવ્વાઈં પડુઠ્ઠ) અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા સે આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં
કા અવસ્થાન (જિયમા સબ્દદ્વા) નિયમ સે સાર્વકાલિક હૈ । અર્થાત્

ત્યારે તેમાં ‘આનુપૂર્વી’ પદનો વ્યપદેશ થાય છે—તેને આનુપૂર્વી રૂપે કહી
શકાય છે. તે દ્રવ્ય ઓછામાં ઓછું એક સમય સુધી ત્યાં આનુપૂર્વી રૂપે
અવગાહિત રહીને ત્યાર બાદ પહેલાની જેમ જ બે પ્રદેશોમાં કે એક પ્રદેશમાં
અવગાહિત થઈ જાય છે. તેથી આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં
રહેવાની જરૂર નથી સ્થિતિ એક સમયની કહી છે. એજ પ્રમાણે આનુપૂર્વી
દ્રવ્ય અસંખ્યાત કાળ સુધી આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપે અવગાહિત રહીને ત્યાર
બાદ બે પ્રદેશાવગાહી કે એક પ્રદેશાવગાહી બની જાય છે. આ પ્રકારે
આનુપૂર્વી દ્રવ્યની આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપે રહેવાની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ અસંખ્યાત
કાળની થઈ જાય છે. તે અનંત કાળ સુધી ત્યાં આનુપૂર્વી દ્રવ્ય—રૂપે રહી
શકતું નથી, કારણ કે એક દ્રવ્ય એક અવગાહમાં વધારેમાં વધારે અસંખ્યાત
કાળ સુધી જ રહી શકે છે.

તથા (જાણાદવ્વાઈં પડુઠ્ઠ) અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ
વિચાર કરવામાં આવે, તો આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની આનુપૂર્વી દ્રવ્યો રૂપે રહે-
વાની સ્થિતિ (જિયમા સબ્દદ્વા) નિયમથી સાર્વકાલિક કહી છે. એટલે કે

ભેદાનાં સર્વદૈવાવસ્થાનાત્ । एवं द्वे अपि । अयं भावः—यदा एकं द्रव्यमेकस्मिन् प्रदेशेऽवगाढमेकं समयं स्थित्वा ततो द्रव्यादिप्रदेशावगाढं भवति, तदा अनानुपूर्वी-द्रव्यस्य जघन्यत एकं समयं स्थितिः । यदा तु तदेवासंख्यातं कालं तद्रूपेण स्थित्वा ततो द्रव्यादिप्रदेशावगाढं भवति, तदा—उत्कर्षतोऽसंख्येयोऽवगाहस्थितिकालः ।

ઢ્યાદિપ્રદેશોં મેં અવગાઢ આનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કે જો ભેદ હેં ડનકા અવસ્થાન સર્વદા હી રહતા હે । (અવં દોણિવિ) ઇસી પ્રકાર સે જવ ઇક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય ઇક પ્રદેશ મેં ઇક સમય તક અવગાઢ રહકર બાદ મેં દ્રવ્યાદિપ્રદેશોં મેં અવગાઢ હો જાતા હે તવ ડસ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કી જઘન્ય સે ઇક સમય કી સ્થિતિ માની જાતી હે । તથા જવ વહી અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય અસં-ખ્યાત સમય તક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યરૂપ સે ઇક પ્રદેશ મેં અવગાઢ રહકર બાદ મેં દ્રવ્યાદિ પ્રદેશોં મેં અવગાઢ-સ્થિત-હો જાતા હે તવ ઉત્કૃષ્ટ સે અસંખ્યાત કાલ તક હી ડસ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યકી ડસ ઇક પ્રદેશ મેં રહને કી સ્થિતિ માની જાતી હે, તથા અનેક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોંકી અપેક્ષા અના-નુપૂર્વી દ્રવ્યોં કી સ્થિતિ કા કાલ ઇકપ્રદેશ મેં અવગાઢ હુઅ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યકે ભેદોં કા સર્વદા હી સદ્ભાવ હોને સે સાર્વકાલિક માના ગયા હે । દ્વિપ્રદેશ મેં અવગાઢ અવક્તવ્યકદ્રવ્ય કા ઇક સમય કે બાદ ઇક પ્રદેશ મેં અથવા ઢ્યાદિ પ્રદેશોં મેં અવગાહિત હો જાને પર જઘન્ય સે અવગાહ

ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં અવગાહિત જે આનુપૂર્વી દ્રવ્યોના ભેદો છે તેમનું અસ્તિત્વ સદા રહે છે જ (અવં દોણિ વિ) એજ પ્રમાણે એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની જઘન્ય સ્થિતિ પણ એક સમયની કહી છે. એટલે કે એક અનાનુ-પૂર્વી દ્રવ્ય ઓછામાં ઓછું એક સમય સુધી એક પ્રદેશમાં અવગાહિત રહીને ત્યાર બાદ બે આદિ પ્રદેશોમાં અવગાહિત થઈ જાય છે. તેથી જ એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની જઘન્ય સ્થિતિ એક સમયની કહી છે. પરંતુ જ્યારે એજ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અસંખ્યાત સમય સુધી એક પ્રદેશમાં અવગાહિત રહીને ત્યાર બાદ બે આદિ પ્રદેશોમાં અવગાઢ (સ્થિત) થઈ જાય છે, ત્યારે તે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની તે એક પ્રદેશમાં રહેવાની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ અસંખ્યાત કાળની મનાય છે. જે અનેક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો અનેક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની સ્થિતિનો કાળ એક પ્રદેશમાં અવગાહિત થયેલા અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યના ભેદોનો સર્વદા સદ્ભાવ હોવાથી સાર્વકાલિક માનવામાં આવ્યો છે

જે પ્રદેશોમાં અવગાઢ (સ્થિત) અવક્તવ્યક દ્રવ્ય એક સમય પછી એક પ્રદેશમાં અથવા ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં અવગાહિત થઈ જાય, તો જઘન્યની

નાનાદ્રવ્યાણ્યાશ્રિત્ય તુ સર્વકાલમ્, એક પ્રદેશાવગાહદ્રવ્યભેદાનાં સર્વદૈવ સદ્ભાવાત્ ।

અવક્તવ્યકદ્રવ્યસ્ય તુ દ્વિપ્રદેશાવગાહસ્ય સમયાદૂર્ઘ્વમેકસ્મિન્ પ્રદેશે ય્યાદિષુ
વા પ્રદેશેષ્વવગાહપ્રતિપત્તૌ જઘન્યત એકઃ સમયોઽવગાહસ્થિતિકાલઃ અસંખ્યેય-
કાલાદૂર્ઘ્વ દ્વિપ્રદેશાવગાહં પરિત્યજતસ્તસ્યાવક્તવ્યકદ્રવ્યસ્ય ઉત્કર્ષતોઽસંખ્યેયો-
ઽવગાહસ્થિતિકાલઃ સિધ્યતિ । નાના દ્રવ્યાણ્યાશ્રિત્ય તુ સર્વકાલં, દ્વિપ્રદેશાવગાહ-
દ્રવ્યભેદાનાં સદૈવ સદ્ભાવાદિતિ । સમાનવક્તવ્યત્વાદાહ—‘એવં દોષિણિ વિ’—ત્તિ—એવં
દ્વે અપિ વોધ્યે ॥સૂ. ૧૧૪॥

સ્થિતિ કા કાલ એક સમય હૈ । તથા અસંખ્યાત કાલ કે બાદ દ્વિપ્રદેશો
મેં અપને અવગાહ કો છોડને વાલે ઉસ અવક્તવ્યકદ્રવ્ય કા ઉત્કૃષ્ટ રૂપ
સે અવગાહ સ્થિતિ કા કાલ અસંખ્યાતકાલ હૈ । તથા નાના અવક્તવ્યક
દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા દ્વિપ્રદેશ મેં અવગાહ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કે ભેદોં કા
સર્વદા હી સદ્ભાવ રહને કે કારણ उनका अवगाह—स्थितिका काल सर्व-
काल माना गया है । इसप्रकार आनुपूर्वी द्रव्य की तरह इन दोनों द्रव्य
की अवगाह—स्थिति का समय जानना चाहिये ।

ભાવાર્થ—ઈસ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકાર ને યહ સ્પષ્ટ કિયા હૈ કિ આનુ-
પૂર્વી આદિ દ્રવ્ય ય્યાદિ પ્રદેશરૂપ ક્ષેત્ર મેં અપને ૨ રૂપ મેં કલ્પ તક સ્થિત
રહતે હૈ । ઇન બાતોં કા ઉત્તર ઉન્હોંને એક દ્રવ્ય ઔર અનેક દ્રવ્ય કો
આશ્રિત કરકે દિયા હૈ । જિસકા નિષ્કર્ષાર્થ યહ હૈ કિ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય
ય્યાદિ પ્રદેશોં મેં એક સમય તુક સ્થિત રહકર યદિ એક યા દ્વિપ્રદેશ

અપેક્ષાએ તેની અવગાહસ્થિતિનો કાળ એક સમયનો કહ્યો છે. તથા અસં-
ખ્યાત કાળ બાદ બે પ્રદેશોમાંના પોતાના અવગાહને છોડનારા તે અવક્ત-
વ્યક દ્રવ્યની વધારેમાં વધારે અવગાહસ્થિતિ અસંખ્યાતકાળની કહી છે. તથા
અનેક અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો બે પ્રદે-
શોમાં અવગાહ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોના લેદોનો સર્વદા સદ્ભાવ જ રહેવાને
કારણે તેમની અવગાહસ્થિતિ સાર્વકાલિક માનવામાં આવી છે. આ પ્રકારે
આ બંને દ્રવ્યોની અવગાહસ્થિતિનો કાળ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અવગાહસ્થિતિ
કાળ પ્રમાણે જ સમજવો જોઈએ.

ભાવાર્થ—આ સૂત્રમાં સૂત્રકારે એ વાત સ્પષ્ટ કરી છે કે આનુપૂર્વી
આદિ દ્રવ્યો ત્રણ આદિ પ્રદેશોરૂપ ક્ષેત્રમાં પોતપોતાના મૂળ રૂપે કેટલા કાળ
સુધી અસ્તિત્વમાં રહે છે? આ વાતનો ઉત્તર સૂત્રકારે એક દ્રવ્ય અને અનેક
દ્રવ્યોને અનુલક્ષીને આપ્યો છે. આ સમસ્ત સૂત્રનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે
છે—આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં એક સમય સુધી આનુપૂર્વી દ્રવ્ય-

અથાન્તરદ્વારં પ્રતિપાદયિતુમાહ—

મૂલમ્—ળેગમવવહારાણં આણુપુર્વીદ્વાણમન્તરં કાલઑ કેવચ્ચિરં
હોઈ? તિળહંપિ ઇગં દઠ્ઠં પહુચ્ચ જહન્નેણં ઇક્રં સમયં ઉક્કોસેણં
અસંખેજ્જં કાલં, નાણાદઢ્ઠ્ઠાઈં પહુચ્ચ ણત્થિ અન્તરં ॥સૂ૦ ૧૧૫॥

મેં અવગાહિત હો જાતા હૈ તો વર્હા પર ઇક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કી અપેક્ષા
આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કા સ્થિતિ કાલ માના જાતા હૈ । ઓર યહી ઇક આનુપૂ-
ર્વીદ્રવ્ય ડન ડ્યાદિ પ્રદેશોં મેં અસંખ્યાત કાલ તક અવગાહિત રહકર
ઘાદ મેં ઇકપ્રદેશ યા દો પ્રદેશ મેં અવગાહિત હો જાતા હૈ તો ઇસ સ્થિતિ
મેં ઇસકા સમય અસંખ્યાત કાલ કા માના જાતા હૈ । યહ સંખ્યાત
કાલ કા સમય ઉત્કૃષ્ટ હૈ । ઓર ઇક સમય કા કાલ જઘન્ય હૈ, નાના
આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા સે યહ સમય સર્વદા કા હૈ ક્યોંકિ ડ્યાદિ
મેં ઇસા કોઈ સા ધી સમય નહીં હૈ કિ જિસમેં કોઈ ન કોઈ આનુપૂર્વી
દ્રવ્ય કા ભેદ અવગાહિત ન હો । ઇસી પ્રકાર સે અનાનુપૂર્વી ઓર
અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કે વિષય મેં ધી ઇસા હી વક્તવ્ય નિર્ધારિત
કર લેના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧૧૪ ॥

રૂપે સ્થિત રહીને ળે ઓક પ્રદેશમાં અથવા ળે પ્રદેશોમાં અવગાહિત થઈ
જાય છે, તો ળે પરિસ્થિતિમાં ઓક આનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાળે આનુપૂર્વી
દ્રવ્યનો સ્થિતિકાળ ઓક સમયનો ગણાય છે. પરન્તુ ળેજ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય
ળે તે ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં અસંખ્યાત કાળ સુધી અવગાહિત રહીને ત્યાર
બાદ ઓક પ્રદેશમાં અથવા ળે પ્રદેશોમાં અવગાહિત થઈ જાય, તો ળેવી
પરિસ્થિતિમાં તેનો સ્થિતિકાળ અસંખ્યાતકાળનો માનવામાં આવે છે આ
અસંખ્યાતકાળના સમયને તેનો ઉત્કૃષ્ટ કાળ સમજવો. અને ઓક સમયના
પૂર્વેકિત કાળને તેનો જઘન્ય કાળ સમજવો. અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની
અપેક્ષાળે વિચાર કરવામાં આવે તો તે સમય સાર્વકાલિક છે, કારણ કે
ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં ળેવો કોઈ પણ સમય નથી કે જેમાં કોઈને કોઈ
આનુપૂર્વી દ્રવ્યનો ભેદ અવગાહિત ન હોય અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક
દ્રવ્યોના ઓક અને ળે પ્રદેશોમાં રહેવાના કાળના સંબંધમાં પણ આનુપૂર્વી
દ્રવ્યોના કાળના જેવું જ કથન સમજવું ॥સૂ૦ ૧૧૪॥

છાયા—નૈગમવ્યવહારયોઃ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણામન્તરં કાલતઃ કિયચ્ચિરં ભવતિ ? ત્રયાણામપિ એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય જઘન્યેન એકં સમયમ્, ઉત્કર્ષેણ અસંખ્યેયં કાલમ્ । નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય નાસ્તિ અન્તરમ્ ॥સૂ૦ ૧૧૫॥

ટીકા—‘જેગમવ્યવહારાણં’ ઇત્યાદિ । નૈગમવ્યવહારસમ્મતાનામાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણામ્ અન્તરં કાલતઃ કિયચ્ચિરં ભવતિ ? ઇતિ શિષ્ય પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—‘તિષ્ઠં પિ’ ઇત્યાદિ । ત્રયાણામ્=આનુપૂર્વ્યનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકદ્રવ્યાણામ્ એકં સમયં પ્રતીત્ય જઘન્યેન એકં સમયમન્તરમ્ । ઉત્કર્ષેણ અસંખ્યેયં કાલમન્તરમ્ । નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય તુ નાસ્તિ અન્તરમ્ । પ્રશ્નકોટૌ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણ્યાશ્રિત્ય પ્રશ્નઃ ક્રિયતે

અથ સૂત્રકાર અન્તરદ્વાર કા પ્રતિપાદન કરતે હૈં—

“જેગમવ્યવહારાણં” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(જેગમવ્યવહારાણં) નૈગમ વ્યવહારસંમત (આણુપુઞ્વી-દ્રવ્યાણં) આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કા (અંતરં) અન્તર-વ્યવધાન-(કાલઔ) કાલકી અપેક્ષા (કિયચ્ચિરં હોઈ) કિતને સમય કા હોતા હૈ ?

ઉત્તર—(તિષ્ઠં પિ એગં દ્રવ્યં પડુચ્ચ) આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી, ઔર અવક્તવ્યક ઇન દ્રવ્યોં કૈ એક સમય કો આશ્રિત કરકૈ (જહન્ને ણં) જઘન્ય સૈ (એકં સમયં) એક સમયકા અંતર હૈ (ઉક્કોસેણં) ઉત્કૃષ્ટ સૈ (અસંખેજ્જં કાલં) અસંખ્યાતકાલ કા અંતર હૈ । (નાણા દ્રવ્વાઈ પડુચ્ચ) તથા નાના દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા કરકૈ (ણત્થિ અંતરં) કોઈ અન્તર નહીં હૈ ।

શંકા—પ્રશ્ન કોટિ મૈં આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કો આશ્રિત કરકૈ પ્રશ્ન કિયા ગયા

હવે સૂત્રકાર અન્તરદ્વારનું નિરૂપણ કરે છે—

“જેગમવ્યવહારાણં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(જેગમવ્યવહારાણં) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત (આણુપુઞ્વી દ્રવ્યાણં) આનુપૂર્વી દ્રવ્યોંનું (અન્તરં) અન્તર (વ્યવધાન, આંતરૌ) (કાલઔ કિયચ્ચિરં હોઈ) કાળની અપેક્ષાએ કેટલા સમયનું હોય છે ?

ઉત્તર—(તિષ્ઠં પિ એગં દ્રવ્યં પડુચ્ચ) આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક આ ત્રણેના એક એક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો (જહન્નેણં એકં સમયં) એાછામાં એાછું એક સમયનું અને (ઉક્કોસેણં અસંખેજ્જં કાલં) ઉત્કૃષ્ટથી અસંખ્યાત કાળનું અંતર હોય છે. (નાણાદ્રવ્વાઈ પડુચ્ચ) અનેક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો (ણત્થિ અંતરં) કોઈ અન્તર નથી.

શંકા—પ્રશ્નમાં તો આનુપૂર્વી દ્રવ્યો વિષે પ્રશ્ન પૂછવામાં આવ્યો છે.

પરન્તુ ત્રયાણામપિ દ્રવ્યાણાં સમાનાન્તરત્વેન પ્રતિપાદ્યતા ઉત્તરકોટી 'તિષ્ઠં પિ' ઇતિ પ્રોક્તમ્ । અસ્ય દ્વારસ્યાયં ભાવઃ—યદા ગ્ર્યાદિપ્રદેશાવગાઢં કિમપ્યાનુપૂર્વી-દ્રવ્યમ્ એકસ્માદ્ વિવક્ષિતક્ષેત્રાત્ સમયમેકમ્ અન્યત્ ક્ષેત્રમવગાહ્ય પુનરપિ કેવલમ્, અન્યદ્રવ્યસંયુક્તં વા ભૂત્વા તમેવ વિવક્ષિતગ્ર્યાધાકાશપ્રદેશમ્ અવગાહતે, તદૈકાનુ-પૂર્વી દ્રવ્યસ્ય સમયમેકં જઘન્યતોઽન્તરકાલો બોધ્યઃ । તથા—તદવ દ્રવ્યં યદાઽન્યેષુ ક્ષેત્રપ્રદેશેષુ અસંલ્લેયં કાલં પરિભ્રમ્ય કેવલમ્, અન્યદ્રવ્યસંયુક્તં વા ભૂત્વા પ્રથમ-મેવ ક્ષેત્રપ્રદેશમવગાહતે, તદા ઉત્કૃષ્ટતોઽસંલ્લેયં કાલમન્તરં ભવતિ । ન ચ પુન-

હૈ, પરન્તુ ઉત્તરકોટિ મેં “તિષ્ઠં પિ” ત્રીનોં દ્રવ્યોં કો વર્ષોં પકડા ગયા હૈ ?

ઉત્તર—હસકા કારણ યહ હૈ કિ હન ત્રીનોં દ્રવ્યોં કા અન્તર સમાન હૈ । હસ દ્વાર કા ભાવ હસ પ્રકાર સે હૈ—જિસ સમય કોઈ એક ગ્ર્યાદિ પ્રદેશાવગાઢ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કિસી એક વિવક્ષિત ક્ષેત્ર સે એક સમય તક કિસી દૂસરે ક્ષેત્ર મેં અવગાહિત હોકર પુનઃ અકેલા યા કિસી દૂસરે દ્રવ્ય સે સંયુક્ત હોકર ઉસી વિવક્ષિત ગ્ર્યાદિ આકાશરૂપ પ્રદેશ મેં અવગાઢ હોતા હૈ તો ઉસ સમય ઉસ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કા અન્તર કાલ—વિરહકાલ જઘન્ય સે એક સમય કા હૈ—એસા જાનના ચાહિયે । તથા જબ વહી દ્રવ્ય અન્ય ક્ષેત્ર પ્રદેશો મેં અસંલ્લેયાતકાલ તક ધૂમકર કેવલ યા અન્ય દ્રવ્યોં સે સંયુક્ત હોકર પહિલે કે હી અવગાહિત પ્રથમ ક્ષેત્ર પ્રદેશ મેં અવગાહિત હોતા હૈ તબ વિરહકાલ ઉત્કૃષ્ટ સે અસંલ્લેયાત

પરન્તુ ઉત્તર રૂપે તો ત્રણે દ્રવ્યોની વાત કરવામાં આવી છે તેનું કારણ શું છે ?

ઉત્તર—તે ત્રણે દ્રવ્યોનું અન્તર સમાન હોવાથી ત્રણે દ્રવ્યોના અન્તરની વાત સાથે જ કરવામાં આવી છે.

ઉત્તર—આ અન્તરદ્વારનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—આ સૂત્રમાં અન્તર એટલે વિરહકાળ થઈ જાય કરવો જોઈએ કોઈ એક ત્રણ આદિ પ્રદેશાવગાઢ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કોઈ એક વિવક્ષિત (અમુક) ક્ષેત્રમાંથી નીકળીને એક સમય સુધી કોઈ બીજા ક્ષેત્રમાં અવગાહિત થઈને ફરીથી પોતે એકલું અથવા કોઈ અન્ય દ્રવ્યની સાથે સંયુક્ત થઈને એજ વિવક્ષિત ત્રણ આદિ આકાશ રૂપ પ્રદેશોમાં અવગાઢ થાય, તો તે પરિસ્થિતિમાં તે એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યનું અન્તર કાળની અપેક્ષાએ (વિરહકાળ) એક સમયનું ગણાય છે, આ અન્તરને કાળની અપેક્ષાએ જઘન્ય અન્તર સમજવું તથા એજ દ્રવ્ય અન્ય ક્ષેત્ર પ્રદેશોમાં અસં-ખ્યાતકાળ સુધી ફરીને પોતે એકલું અથવા અન્ય દ્રવ્યો સાથે સંયુક્ત થઈને પહેલાં જે ક્ષેત્રમાં અવગાહિત થયું હતું એજ ક્ષેત્રમાં અવગાહિત થઈ જાય, તો તે પરિસ્થિતિમાં તેનો ઉત્કૃષ્ટ વિરહકાળ અસંખ્યાતકાળનો ગણાય

દ્રવ્યાનુપૂર્વ્યામિવ અનન્તં કાલમન્તરં ભવતિ, યતો દ્રવ્યાનુપૂર્વ્યાં વિવક્ષિતદ્રવ્યાદન્યે દ્રવ્યવિશેષા અનન્તા ભવન્તિ । તૈશ્ચ સદ્ ક્રમેણ તસ્ય સંયોગે પુનઃસ્વરૂપપ્રાપ્તૌ અનન્તં કાલમન્તરં ભવતિ । અત્ર તુ ત્રિવક્ષિતાવગાહક્ષેત્રાદન્યત્ ક્ષેત્રમસંખ્યેયમેવ । પ્રતિસ્થાનં ચ અવગાહનામાશ્રિત્ય અસંખ્યેયકાલં સંયોગસ્થિતિઃ । તતશ્ચાસંખ્યેયે ક્ષેત્રે પરિભ્રમદ્ દ્રવ્યં પુનરપિ કેવલમ્, અન્યસંયુક્તં વાઽસંખ્યેયકાલાનન્તરં તસ્મિન્ વિવક્ષિતપ્રદેશ એવાવગાહનાં કુર્યાત્ ।

કાલ કા માના જાતા હૈ । જિસ પ્રકાર દ્રવ્યાનુપૂર્વી મેં વિરહકાલ માના ગયા હૈ उस प्रकार से यहां विरहकाल अनन्त कालका नहीं माना गया है । क्योंकि कि द्रव्यानुपूर्वी में विवक्षित द्रव्य से दूसरे जो द्रव्य हैं वे अनन्त हैं । अतः उनके साथ क्रम क्रम से उसका संयोग होने पर फिर से अपने स्वरूप की प्राप्ति में उसे अनन्त काल लग जाता है । इस प्रकार पुनः स्वरूप प्राप्ति में अन्तर अनंत काल का सध जाता है । परन्तु यहां विवक्षित-अवगाह क्षेत्र से अन्य क्षेत्र असंख्यातप्रदेश प्रमाण ही है, अनंत प्रदेश प्रमाण नहीं । इसलिये प्रतिस्थान में, अवगाहना को आश्रित करके जो उसकी संयोग स्थिति है वह असंख्यातकाल की है । अतः विवक्षित प्रदेश से अन्य असंख्यात क्षेत्र में परिभ्रमण करता हुआ द्रव्य पुनः उसी विवक्षित प्रदेश में अन्य द्रव्य से संयुक्त होकर या एकाकी ही असंख्यातकाल के बाद अवगाहित हो जाता है ।

છે. અહીં એ વાત ધ્યાનમાં રાખવા જેવી છે કે દ્રવ્યાનુપૂર્વીમાં ઉત્કૃષ્ટ (વધારેમાં વધારે) અનન્ત કાળનો વિરહકાળ કહ્યો છે, પરન્તુ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં ઉત્કૃષ્ટ વિરહકાળ અનન્તકાળનો કહેવાને બદલે અસંખ્યાતકાળનો કહ્યો છે. તેનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે—

દ્રવ્યાનુપૂર્વીમાં વિવક્ષિત દ્રવ્ય સિવાયના જે અન્ય દ્રવ્યો છે તે અનંત છે. તેથી તેમની સાથે તેનો ક્રમશઃ સંયોગ થઈને ફરીથી પોતાના સ્વરૂપની પ્રાપ્તિ થવામાં તેને અનંતકાળનું અન્તર પડી જાય છે. આ પ્રકારે પુનઃ સ્વરૂપ પ્રાપ્તિમાં અનન્તકાળનું અન્તર પડવાની વાત સિદ્ધ થઈ જાય છે. પરન્તુ અહીં (ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં) વિવક્ષિત અવગાહક્ષેત્ર સિવાયનાં અન્યક્ષેત્રો તો અસંખ્યાતપ્રદેશ પ્રમાણે જ છે-અનંત પ્રદેશપ્રમાણ નથી તેથી પ્રત્યેક સ્થાનમાં અવગાહનાને આશ્રિત કરીને જે તેની સંયોગસ્થિતિ છે, તે અસંખ્યાતકાળની જ છે તેથી કોઈ વિવક્ષિત પ્રદેશમાંથી નીકળીને અન્ય અસંખ્યાત ક્ષેત્રોમાં પરિભ્રમણ કરીને તે દ્રવ્ય પોતે એકલું અથવા અન્ય દ્રવ્યની સાથે સંયુક્ત થઈને તે વિવક્ષિત પ્રદેશમાં અસંખ્યાતકાળ વ્યતીત થયા બાદ જ અવગાહિત થઈ જાય છે.

નનુ ભવત્વસંખ્યેયઃ પ્રદેશઃ, પરન્તુ તત્રૈવ પ્રદેશે દ્રવ્યસ્ય પુનઃ પુનઃ પરિભ્રમણેન અનન્તકાલાન્તર્યમપિ પ્રાપ્યતે, તદેહ કથમનન્તકાલમન્તરં નોચ્યતે ? इति चेत्, उच्यते, विवक्षितप्रदेशादसंख्येयप्रदेशे क्षेत्रेऽसंख्येयकालमेव द्रव्यं परिभ्रमति, तदनन्तरं पुनर्विवक्षितक्षेत्र एव तद् द्रव्यं नियमादागच्छति, वस्तुस्थितिस्वभाव्यादिति । अतो नास्ति कश्चिद्दोषः । यद्वा ज्यादि प्रदेशलक्षणाद् विवक्षितक्षेत्रात् तदानुपूर्वीद्रव्यमन्यत्रगतं, ततस्तत् क्षेत्रम् असंख्येयकालादूर्ध्वं स्वभावादेव तेनैव आनुपूर्वीद्रव्येण, वर्णगन्धरसस्पर्शसंख्यादिधर्मैः सर्वथा तुल्येन अन्येन वा आनुपूर्वी-

શંકા—અવગાહના ક્ષેત્ર સે અન્યક્ષેત્ર ખલે હી અસંખ્યાતપ્રદેશ-
વાળા હો-હવ્સ મેં કોઈ બાધા નહીં હૈ। પરન્તુ ઉસી પ્રદેશોં મેં વારં
પરિભ્રમણ કરને સે દ્રવ્ય કો હવ્સ પરિભ્રમણ મેં અનન્ત કાલ કા બી
અન્તર લગ સકતા હૈ। અતઃ સૂત્રકારને યહાં અનન્તકાલ કા અન્તર
કયોં નહીં કહ્યા ?

ઉત્તર—વિવક્ષિત પ્રદેશરૂપ ક્ષેત્ર સે અન્ય અસંખ્યાત પ્રદેશરૂપ
ક્ષેત્ર મેં દ્રવ્ય કા પરિભ્રમણ અસંખ્યાતકાલ તક હી હોતા હૈ। હવ્સકે
બાદ બહુ દ્રવ્ય નિયમ સે ફિર વિવક્ષિત ક્ષેત્ર મેં હી આજાતા હૈ। કયોં
કિ એસા હી વસ્તુસ્થિતિ કા સ્વભાવ હૈ। અથવા—જબ જ્યાદિ પ્રદેશરૂપ
વિવક્ષિત ક્ષેત્ર સે બહુ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અન્ય પ્રદેશ મેં ખલા જાતા હૈ’
બાદ મેં વહુ ક્ષેત્ર સ્વભાવ સે હી અસંખ્યાતકાલ કે પશ્ચાત્ ઉસી આનુ-
પૂર્વી દ્રવ્ય સે યા વર્ણ, ગંધ, રસ, સ્પર્શ, એવં સંખ્યા આદિ ધર્મોં સે

શંકા—અવગાહના ક્ષેત્ર સિવાયનું જે અન્ય ક્ષેત્ર છે તે બંને અસંખ્યાત
પ્રદેશોવાળું હોય તે વાત માનવામાં અમને કોઈ વાંધા નથી પરન્તુ એજ
પ્રદેશોમાં વારંવાર પરિભ્રમણ કરવામાં તે દ્રવ્યને અનન્તકાળનું અન્તર પણ
લાગી શકે છે. છતાં સૂત્રકારે અહીં અનન્તકાળના અન્તરને બંદે અસં-
ખ્યાતકાળનું અન્તર શા માટે કહ્યું છે ?

ઉત્તર—વિવક્ષિત પ્રદેશરૂપ ક્ષેત્રમાંથી નીકળીને અન્ય અસંખ્યાત પ્રદેશ
રૂપ ક્ષેત્રમાં દ્રવ્યનું પરિભ્રમણ અસંખ્યાત કાળ સુધી જ થાય છે. ત્યાર બાદ
તે દ્રવ્ય નિયમથી જ તે વિવક્ષિત ક્ષેત્રમાં જ આવી જાય છે, કારણ કે તેનો
એવો જ સ્વભાવ છે.

અથવા—ત્રણ આદિ પ્રદેશો રૂપ કોઈ વિવક્ષિત ક્ષેત્રમાંથી નીકળીને તે
આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અન્ય પ્રદેશમાં ચાલ્યું જાય છે, અને ત્યારબાદ તે ક્ષેત્ર
સ્વભાવથી જ અસંખ્યાતકાળ બાદ એજ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સાથે, અથવા વધુ,

દ્રવ્યેણ સંયુજ્યતે इति नियमात् असंख्येयकालोत्तरं, तथाविधानुपूर्वीद्रव्येण तत्क्षेत्रं
 संयुज્યતે एवेति असंख्येयकालमेव अन्तरं भवतीति नास्ति कश्चिद् दोषः । तथा-
 नानाद्रव्याणि प्रतीत्य नास्ति अन्तरम् । व्यादिप्रदेशावगाढानि सर्वाण्यपि आनु-
 पूर्वीद्रव्याणि युगपत् स्वभावं विहाय पुनस्तथैव जायन्ते इति तु न कदाचिदपि संभ-
 वति, असंख्येयानां तेषां सर्वदैव विद्यमानत्वादिति नानाद्रव्याश्रयपक्षे नास्ति अन्तर-
 मिति भावः । एवमनानुपूर्व्यवक्तव्यक द्रव्यविषयेऽपि अन्तरभावेना कर्तव्या । सू. ११५।

उसी के तुल्य किसी दूसरे आनुपूर्वी द्रव्य से संयुक्त हो जाता है। ऐसा
 नियम है। इस नियम के अनुसार असंख्यात काल का ही अन्तर होता
 है। नाना द्रव्यों की अपेक्षा से अन्तर नहीं है ऐसा जो कहा गया है
 उसका तात्पर्य यह है कि व्यादिप्रदेशों में अवगाढ हुए समस्त भी
 आनुपूर्वी द्रव्य एक साथ अपने स्वभाव को छोड़कर पुनः उन्हीं व्यादि-
 प्रदेशों में अवगाहित हो जाते हों ऐसी बात किसी भी समय में संभ-
 वित नहीं होती है। क्यों कि असंख्यात आनुपूर्वी द्रव्य सदा ही विद्य-
 मान रहते हैं। इसलिये नाना द्रव्यों की अपेक्षा अन्तर नहीं है। इसी
 प्रकार से अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्य के विषय में भी अन्तर
 भावना जाननी चाहिये ॥सू० ११५॥

ગંધ, રસ, સ્પર્શ અને સંખ્યા આદિ ધર્મોની અપેક્ષાએ તેના જેવાં જ કેાઈ
 બીજા આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સાથે સંયુક્ત થઈ જાય છે એવો નિયમ છે. આ
 નિયમ પ્રમાણે અસંખ્યાતકાળનું અન્તર બ્યતીત થયા બાદ તે પ્રકારના
 આનુપૂર્વી દ્રવ્ય વડે તે ક્ષેત્ર અવશ્ય સંયુક્ત થઈ જાય છે. આ રીતે અસં-
 ખ્યાતકાળનું જ અન્તર પડવાની વાત સિદ્ધ થઈ જાય છે.

અનેક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો કાળની અપેક્ષાએ
 કેાઈ અન્તર જ પડતું નથી, આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે=ત્રણ
 આદિ પ્રદેશોમાં અવગાહિત થયેલાં સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો એક સાથે
 પોતાના સ્વભાવને છોડીને ફરી એજ ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં અવગાહિત થઈ
 જતાં હોય એવી વાત કેાઈ પણ સમયે સંભવી શકતી નથી, કારણ કે
 અસંખ્યાત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો સદા વિદ્યમાન રહે જ છે. તે કારણે અનેક
 દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ અન્તરનો અભાવ કહ્યો છે. એજ પ્રમાણે અનાનુપૂર્વી અને
 અવકતવ્યક દ્રવ્યોના વિષયમાં પણ અન્તર (વિરહકાળ)નું કથન
 સમજ લેવું જોઈએ. ॥સૂ. ૦૧૧૫॥

इत्थमन्तरद्वारं व्याख्याय सम्प्रति भागद्वारं व्याख्यातुमाह—

मूलम्—जेगमववहाराणं आणुपुव्वीदव्वाइं सेसदव्वाणं कइ-
भागे होज्जा ? तिणिण वि जहा दव्वाणुपुव्वीए ॥सू० ११६॥

छाया—नैगमव्यवहारयोः आनुपूर्वीद्रव्याणि शेषद्रव्याणां कियद् भागे
भवन्ति ? त्रीण्यपि यथा द्रव्यानुपूर्व्याम् ॥सू० ११६॥

टीका—‘ जेगमववहाराणं ’ इत्यादि—

नैगमव्यवहारसम्मतानि आनुपूर्वीद्रव्याणि शेषद्रव्याणाम्=अनानुपूर्व्यवक्तव्यક
द्रવ્યાणाં કતિભાગે=કિયતિ ભાગે ભવન્તિ ? इति प्रश्नः । उत्तरयति—त्रीण्यपि यथा
द्रव्यानुपूर्व्याम् । यथा द्रव्यानुपूर्व्यां भागद्वारे प्रतिपादितं तथैवान्नापि त्रयाणामपि
द्रव्याणां विषये बोध्यम् । अर्थ भावः—आनुपूर्वीद्रव्याणि अनानुपूर्व्यवक्तव्यकरूप-
शेषद्रव्येभ्योऽसंख्येयैर्भागैरधिकानि । शेषद्रव्याणि तु तेषामसंख्येयभागे वर्तन्ते ।

अब सूत्रकार भागद्वार का व्याख्यान करते हैं—

“जेगमववहाराणं इत्यादि”

शब्दार्थ— (जेगमववहाराणं) नैगमव्यवहारनय संमत (आणुपुव्वी-
दव्वाइ) समस्त आनुपूर्वीद्रव्य (सेसदव्वाणं) शेष द्रव्यों के—अनानुपूर्वी
और अवक्तव्यक द्रव्यों के (कइभागे) कितने भागों में हैं ? (तिणिणवि-
जहा दव्वाणुपुव्वीए)

उत्तर—जिस प्रकार द्रव्यानुपूर्वी में भागद्वार में प्रतिपादन किया है
उसी प्रकार से यहां पर तीनों ही द्रव्यों के विषय में जानना चाहिये ।
इसका भाव यह है—अनानुपूर्वी और अवक्तव्यक द्रव्यों की अपेक्षा
आनुपूर्वी द्रव्य उनके असंख्यात भागों से अधिक है । तथा शेष द्रव्य
आनुपूर्वीद्रव्यों के असंख्यातवे भाग प्रमाण है ।

હવે સૂત્રકાર ભાગદ્વારનું નિરૂપણ કરે છે—

(जेगमववहाराणं) नैगमव्यवहार नयसंमत (आणुपुव्वीदव्वाइं) समस्त
आनुपूर्वी द्रव्ये (सेसदव्वाणं) भागीनां द्रव्येना (अनानुपूर्वी) अने अवक्त-
व्यक द्रव्येना (कइभागे) કેટલામાં ભાગપ્રમાણ હોય છે ?

ઉત્તર—(તિણિ વિ જહા દવ્વાણુપુવ્વીએ) દ્રવ્યાનુપૂર્વી ભાગ દ્વારમાં જેવું
પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે, એવું જ કથન અહીં પણ ત્રણે દ્રવ્યે વિષે
સમજવું એટલે કે અનાનુપૂર્વી અને અવકતવ્યક દ્રવ્યે કરતાં આનુપૂર્વી
દ્રવ્ય તેમના અસંખ્યાતમાં ભાગપ્રમાણ વધારે છે તથા ભાગીના દ્રવ્યે આનુ-
પૂર્વી દ્રવ્યે કરતાં અસંખ્યાતમાં ભાગપ્રમાણ છે.

નનુ 'ઢ્યાદિપ્રદેશવગાઢાનિ દ્રવ્યાણિ આનુપૂર્વ્યઃ, ંકૈકપ્રદેશવગાઢાનિ દ્રવ્યાણિ અનાનુપૂર્વ્યઃ, દ્વિ દ્વિ પ્રદેશવગાઢાનિ દ્રવ્યાણિ અવક્તવ્યકાનિ' ઇતિ પૂર્વ પ્રતિપાદિતમ્ । તાન્યેતાનિ ત્રિવિધાન્યપિ દ્રવ્યાણિ સર્વલોકવ્યાપીનિ । તેષાં મધ્યે યુત્તથા વિચારણાયાં કૃતાયામાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણાં સર્વસ્તોકતા પ્રાપ્યતે । તથાદિ-લોકે કિલ અસત્કલ્પનયા ત્રિશત્પ્રદેશઃ કલ્પ્યન્તે । તેષુ ત્રિશત્પ્રદેશેષુ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ ત્રિશત્સંખ્યકાનિ ભવન્તિ ંકૈકપ્રદેશવગાઢત્વાત્ । અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ તુ પચ્ચદશ, દ્વિ દ્વિ પ્રદેશવગાઢત્વાત્ । આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ તુ યદિ ત્રિપ્રદેશનિષ્પન્નાન્યેવ ગણ્યન્તે

શંકા-યહ પહિલે હી કહા જા ચુકા હૈ । કિ ઢ્યાદિપ્રદેશોં મેં સ્થિત દ્રવ્ય આનુપૂર્વી હૈં ંક ંક પ્રદેશોં મેં સ્થિત અનાનુપૂર્વી હૈં, ંરોંર દો દો પ્રદેશોં મેં સ્થિત દ્રવ્ય અવક્તવ્યક દ્રવ્ય હૈં । યે તીનોં હી દ્રવ્ય સર્વલોક વ્યાપી હૈં । ઇનકે બીચ મેં, યુક્તિ સે વિચારણા હોને પર આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સઑસે થોઢે આતે હૈં । ઇસકા ઁલુલાસા ઇસ પ્રકાર સે હૈ-
“લોક અસંખ્યાત પ્રદેશી હૈ-સો અસંખ્યાત પ્રદેશ કો અસત્કલ્પના સે ૩૦, માનકર ંનપ્રદેશોં કે સ્થાનપર ૩૦,તીસ રલ્લેના ચાહિયે-ઇન ૩૦, પ્રદેશોં મેં ંક ંક પ્રદેશ પર અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અવગાહિત હૈં ઇસલિયે અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય ૩૦ હો જાતે હૈં । તથા અવક્તવ્યક દ્રવ્ય લોક કે દો દો પ્રદેશોં મેં ંકર અવગાઢ હોને કે કારણ ૧૫,આતે હૈં । તથા આનુપૂર્વીદ્રવ્ય લોક કે ૩-૩ તીન ૨ પ્રદેશોં મેં અવગાઢ હૈં ઇસલિયે ંનકી સંખ્યા ૧૦

શંકા-આગળ ંવેલું પ્રતિપાઢન કરવામાં આંબું છે કે ત્રણ, ચાર આદિ પ્રદેશોમાં સ્થિત દ્રવ્યને આનુપૂર્વી કહે છે, ંક ંક પ્રદેશમાં સ્થિત દ્રવ્યને અનાનુપૂર્વી કહે છે ંને ગળ્મે પ્રદેશોમાં સ્થિત દ્રવ્યને અવક્તવ્યક કહે છે. આ ત્રણે દ્રવ્ય સર્વલોક વ્યાપી છે જો બુદ્ધિપૂર્વક વિચાર કરવામાં આવે તો તે ત્રણે દ્રવ્યોમાંથી આનુપૂર્વી દ્રવ્યનું પ્રમાણ સૌથી ંછું હોવું જોઈએ તેનો ખુલાસો આ પ્રમાણે છે-“લોક અસંખ્યાત પ્રદેશોવાળો છે.” હવે અહીં અસત્કલ્પનાનો આધાર લઈને ંવેલું માની લઈએ કે લોકના ૩૦ પ્રદેશો છે. આ ૩૦ પ્રદેશોમાંના પ્રત્યેક પ્રદેશ પર અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અવગાહિત છે. તેથી ૩૦ પ્રદેશોમાં ૩૦ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અવગાહના માની લઈએ. લોકના ગળ્મે પ્રદેશોમાં ંક ંક અવક્તવ્યક દ્રવ્ય અવગાહિત હોવાથી ૩૦ પ્રદેશોમાં અવગાહિત અવક્તવ્ય દ્રવ્યોની સંખ્યા ૧૫ માની લઈએ તથા આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના ંછામાં ંછા ત્રણ ત્રણ પ્રદેશોમાં અવગાહિત હોવાથી ૩૦ પ્રદેશોમાં અવગાહિત આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની

તાનિ દશસંખ્યકાન્યેવ ભવન્તિ ત્રિપ્રદેશાવગાઢત્વાત્ । અત એવ તાનિ સર્વસ્તોકા-
ન્યેવ વાચ્યાનિ । इति चेदाह—यदि ये नमःप्रदेशा एरुस्मिन्ननुपूर्वीद्रव्ये उपयुक्ता
भवन्ति ते यद्यस्मिन्नोपयुक्ता भवेयुस्तदैवं स्यात्, नचैवमस्ति, यतः त्रिभिःप्रदेशैः
सम्पद्यमाने एकस्मिन् अनुपूर्वीद्रव्ये ये त्रयः प्रदेशा उपयुक्ता भवन्ति, त एव त्रयः
प्रदेशा अन्यान्यरूपतया परिणतैरन्यैरप्यानुपूर्वीद्रव्यैरुपयुज्यन्ते । अत एकैकः प्रदे-
शोऽनेकेषां त्रिक संयोगानामानुपूर्वीद्रव्याणामाधारो भवति । एवं चतुष्कसंयोग-
पञ्चकसंयोग यावत्संख्येयसंयोगानुपूर्वीद्रव्यविषयेऽपि बोध्यम् । ततश्च एकैको नमः

આતી છે । આનુપૂર્વીદ્રવ્ય ત્રીનપ્રદેશોં સે પ્રારંભ હોકર નિષ્પન્ન હોતે છે ।
इसलिये इन्हे त्रिप्रदेशावगाढ माना गया है । इस प्रकार ये अनानुपूर्वी
और अवक्तव्यकद्रव्यों की अपेक्षा पूर्वोक्तरीति से विचार करनेपर कम
ही आते हैं” यदि कोई इस प्रकार से कहे तो इसका उत्तर इस प्रकार
से हैं कि जो आकाशप्रदेश एक आनुपूर्वीद्रव्य में उपयुक्त होते हैं, वे यदि
अन्य आनुपूर्वी द्रव्य में उपयुक्त नहीं होते तो ऐसा कहना बन सकता
था परन्तु ऐसा नहीं है । क्योंकि तीन प्रदेशों से जायमान एक आनुपू-
र्वीद्रव्य में जो तीनप्रदेश उपयुक्त होते हैं, वे ही तीन प्रदेश अन्य अन्य
रूप से परिणत हुए अन्य आनुपूर्वी द्रव्यों द्वारा भी अपने २ उपयोग में
लाये जाते हैं । इसलिये लोक का एक २ प्रदेश अनेक त्रिक संयोगी
आनुपूर्वी द्रव्यों का आधार होता है । इसी प्रकार से चतुष्क संयोगी
यावत् असंख्यात संयोगी आनुपूर्वी द्रव्यों के विषय में भी जानना

સંખ્યા ૧૦ માની લઈએ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ત્રણથી લઈને અસંખ્યાત પર્યંતના
પ્રદેશોમાંથી નિષ્પન્ન થાય છે. તેથી અહીં તેને ત્રિપ્રદેશાવગાઢ માનીને ઉપર
પ્રમાણની ગણતરી કરવામાં આવી છે. આ રીતે વિચાર કરવામાં આવે તો
અનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં તેનું પ્રમાણ ઓછું દેખાય છે.

આ પ્રકારની માન્યતા ખરાબર નથી તે હવે સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—
જે આકાશપ્રદેશો એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યમાં ઉપયુક્ત થાય છે તેઓ જો અન્ય
આનુપૂર્વી દ્રવ્યમાં ઉપયુક્ત થતા ન હોત તો એવું બની શકત. પરન્તુ એવું
તો બનતું નથી કારણ કે ત્રણ પ્રદેશોમાં અવગાહિત એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યમાં
જે ત્રણ પ્રદેશો ઉપયુક્ત થાય છે, એજ ત્રણ પ્રદેશો અન્ય અન્ય રૂપે
પરિણત થયેલા અન્ય આનુપૂર્વી દ્રવ્યો દ્વારા પણ પોતપોતાના ઉપયોગમાં
લેવામાં આવે છે. આ રીતે લોકનો પ્રત્યેક પ્રદેશ અनेक त्रिकसंयोगी आनु-
पूर्वी द्रव्योंનો आधार થાય છે, એજ પ્રમાણે ચતુષ્ક સંયોગીથી લઈને

પ્રદેશઃ અનેકેષુ ય્યાદિ સંયોગાત્મકેષુ આનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ ઉપયુજ્યતે । इत्थं च ज्यादि संयोगात्मकानुपूर्वीद्रव्यरूपाधेयभेदेन प्रतिप्रदेशरूपाधारस्यापि भेदो विवक्षितो भवति । नहि नभःप्रदेशा येन स्वरूपेणैकस्मिन् आधेये उपयुक्ता भवन्ति, तेनैव स्वरूपेण आधेयान्तरेऽपि । तथा सत्येकस्मिन् आधारस्वरूपे तदवगाहनाद आधेयानाम् एकता प्रसज्येत, घटे तत्स्वरूपवत् । ततश्च असंख्येयप्रदेशात्मके स्वस्थित्या व्यवस्थिते लोके यावन्तस्त्रિકसंयोगाद्यसंख्येयसंयोगपर्यन्ता संयोगा जायन्ते तावन्त्याનુपूर्वीद्रव्याणि भवन्ति । तानि च ज्यादि संयोगानां बहुत्वाद् बहुसंख्य-

चाहिये । इस प्रकार एक २ आकाश प्रदेश અનેક જ્યાદિ સંયોગાત્મક આનુપૂર્વીદ્રવ્યોં મેં ઉપયુક્ત હોતા હૈ । अतः ज्यादि संयोगात्मक आनपूर्वी द्रव्य रूप आधेय के भेद से, हर एक प्रदेश रूप आधार का भी भेद, विवक्षित हो जाता है । क्योंकि आकाश प्रदेश जिस स्वरूप से एक आधेय में उपयुक्त होते हैं । उसी स्वरूप से वे दूसरे आधेय में उपयुक्त नहीं होते हैं । यदि ऐसी ही बात मानी जावे कि आकाश प्रदेश जिस स्वरूप से एक आधेय में उपयुक्त होते हैं उसी स्वरूप से वे अन्य आधेय में भी उपयुक्त होते हैं तो एक आधार स्वरूप में उनकी अवगाहना होने से उन અનેક આધેયોં મેં ઘટ મેં ઘટ કે સ્વરૂપ કી તરહ એકતા પ્રસક્ત હોગી । इसलिये अपने स्वरूप की अपेक्षा से असंख्यात प्रदेशी लोक में जितने भी त्रिक संयोगादि रूप असंख्यात संयोग पर्यन्त तक के संयोग हैं उतनेही आनपूर्वीद्रव्य हैं । ये आनपूर्वीद्रव्य ज्यादिसंयोगોં

અસંખ્યાત સંયોગી પર્યન્તના આનુપૂર્વી દ્રવ્યોના વિષયમાં પણ સમજવું આ પ્રકારે પ્રત્યેક આકાશપ્રદેશ અનેક ત્રિઆદિ સંયોગાત્મક આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં ઉપયુક્ત થાય છે. તેથી ત્રિઆદિ સંયોગાત્મક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ આધેયના લેહને લીધે દરેક પ્રદેશ રૂપ આધારનો પણ લેહ પડી જાય છે. કારણ કે જે સ્વરૂપે આકાશપ્રદેશો એક આધેયમાં ઉપયુક્ત થાય છે, એજ સ્વરૂપે તેઓ બીજા આધેયમાં પણ ઉપયુક્ત થતા નથી જો એવી વાત માનવામાં આવે કે આકાશપ્રદેશો જે સ્વરૂપે એક આધેયમાં ઉપયુક્ત થાય છે એજ સ્વરૂપે તેઓ અન્ય આધેય વસ્તુમાં પણ ઉપયુક્ત થાય છે, તો એક આધારસ્વરૂપમાં તેમની અવગાહના હોવાથી તે અનેક આધેયોમાં પણ ઘટમાં ઘટના સ્વરૂપની જેમ એકતા માનવાનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થશે, તેથી પોતાના સ્વરૂપની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત પ્રદેશી લોકમાં ત્રિકસંયોગથી લઈને અસંખ્યાત સંયોગ પર્યન્તના જેટલા સંયોગો છે એટલા જ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો છે ત્રિ

कानि बोध्यानि । अवक्तव्यकद्रव्याणि तु द्विकसंयोगानां स्तोकत्वात् स्तोकानि । अनानुपूर्वीद्रव्याण्यपि लोकप्रदेशसंख्यासमानसंख्यत्वात् स्तोकान्येव । अत्र सुखेनावबोधार्थं किञ्चिन्निर्दिश्यते । तथाहि—लोके किञ्च पञ्चाकाशप्रदेशाः कल्प्यन्ते, तद्यथा— :: इति । अत्र अनानुपूर्वीद्रव्याणि तावत् पञ्चैव भवन्ति ।

यथा— :: इति ।

अवक्तव्यकद्रव्याणि तु अष्टौ, अष्टानामेव द्विकसंयोगानामिहाभ्युपगमात् ।

यथा—  इति ।


आनुपूर्वीद्रव्याणि तु षोडश संभवन्ति । तत्र—दशत्रिकसंयोगाः, पञ्च चतुष्कसंयोगाः,



को बद्धत होने के कारण बहुसंख्यक हैं । और जो अवक्तव्यक द्रव्य हैं वे द्विक संयोगों के कम होने के कारण कम हैं । तथा जो अनानुपूर्वी द्रव्य हैं । वे भी लोक प्रदेशों की संख्या के बराबर होने के कारण—कम ही है । यह बात अच्छी तरह से समझ में आ जावे इसलिये यों समझना चाहिये—लोक में पांच आकाशप्रदेश कल्पित करो, और उसका आकार :: इस प्रकार से करो । प्रत्येक आकाश प्रदेश में एक अनानुपूर्वी द्रव्य है इसलिये इस हिसाब से पांच अनानुपूर्वी द्रव्य हैं । ऐसा मान लो तथा द्विप्रदेश संयोगी जो अवक्तव्यक द्रव्य हैं वे द्विकप्रदेश संयोगों को यहां आठ ही होनेसे आठ आते हैं । जैसे—संस्कृत टीका में आकार देकर कहा गया है । आनुपूर्वीद्रव्य १६, संभवित होते हैं—वे इसप्रकार से १०, त्रिक प्रदेश संयोग के १०, ५ चतुष्प्रदेश संयोग के पांच, और

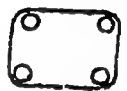
आदि संयोगो ध्या होवाने कारणे ते आनुपूर्वी द्रव्ये अहुसंभ्यक छे, अने द्विकसंयोगो आछां होवाने कारणे अवक्तव्यक द्रव्ये तेना करतां अदप संभ्यामां छे. तथा जे अनानुपूर्वी द्रव्ये छे तेओ पञ्च लोकना प्रदेशोनी संभ्यानी अराअर होवाथी आनुपूर्वी द्रव्ये करतां अदप संभ्यामां छे. आ बातने स्पष्ट रीते समजवा भाटे आ प्रभाछेनी कल्पना करे—धारे के आकाशप्रदेशो पांच छे अने तेमनो आकार आ प्रभाछे छे— :: प्रत्येक प्रदेशमां ओक ओक अनानुपूर्वी द्रव्ये रही शके छे. तेथी पांच प्रदेशोमां पांच अनानुपूर्वी द्रव्ये रही शके ओम मानी हो.

तथा द्विप्रदेश संयोगी जे अवक्तव्यक द्रव्ये छे, तेमनी संभ्या अही आठनी आवे छे, कारण के अही द्विकप्रदेश संयोगो आठ आवे छे ते वात टीकां आपवामां आवेल आकृति द्वारा स्पष्ट करवामां आवी छे.

आ पांच प्रदेशोमां आनुपूर्वी द्रव्ये १६ संभवी शके छे. तेना हिसाब आ प्रभाछे समजवे—त्रिकप्रदेश संयोगना १०, चतुष्प्रदेश संयोगना


પञ्ચકસંયોગસ્ત્વેક इति षोडश । तत्र दशत्रिकसंयोगा एवं बोध्याः—षट् तावत्त्रिक-
संयोगा मध्यव्यवस्थापितेन सह लभ्यन्ते, यथा—  इति ।

तथा मध्यनिरपेक्षैर्दिग्व्यवस्थापितैश्चतुर्भिश्चत्वारस्त्रिकसंयोगाः, यथा— 
इति । इत्थं दश त्रिकसंयोगा भवन्ति ।
पञ्च च चतुष्कसंयोगा एवं विज्ञेयाः—चत्वारस्तावन्मध्यव्यवस्थापितेन सह भवन्ति,
यथा—  इति ।

एकस्तु चतुष्कસંયોગો મધ્યનિરપેક્ષૈર્દિગ્વ્યવસ્થાપિતૈશ્ચતુર્ભિઃ, યથા— 
इति । इत्थं पञ्च चतुष्कसंयोगा भवन्ति ।

एक पांच प्रदेश संयोगका एक । इनमें त्रिकप्रदेश संयोग जो दस हैं—
वे इस प्रकार हैं—मध्य में जो प्रदेश व्यवस्थापित है, उसके साथ त्रिकप्रदेश
संयोग ६ आते हैं—जैसे टीका में आकार देकर कहे गये हैं—तथा मध्य
प्रदेश निरपेक्ष जो दिग्व्यवस्थापित चारप्रदेश हैं उनके साथ त्रिकप्रदेश
संयोग ४ चार आते हैं जो टीका में दिये हुए चित्र द्वारा स्पष्ट किये गये
हैं इस प्रकार से तीन २ प्रदेशों के संयोग दश होते हैं—ये तीन तीन
प्रदेशों के संयोग ही १० अनानुपूर्वी द्रव्यों के आधार क्षेत्र हैं । तथा
चार २ प्रदेशों के संयोग ५ इसप्रकार हैं—मध्य में जो प्रदेश व्यवस्थापित
है उसके साथ चतुष्क संयोगचार होते हैं, ये चतुष्क संयोग ही चार
आनुपूर्वी द्रव्यों के आधाररूप क्षेत्र हैं । जो टीका में दिये हुये चित्र
द्वारा कहे गये हैं । तथा मध्य प्रदेश निरपेक्ष जो चार दिग्व्यवस्थापित
चारप्रदेश हैं उनसे एक चतुष्कसंयोगरूप आधार चारप्रदेशी आनुपूर्वी
द्रव्य निष्पन्न होता है । जो संस्कृत टीका में दिया हुआ चित्रद्वारा स्पष्ट

પ, અને પાંચપ્રદેશ સંયોગનું ૧, આ રીતે કુલ ૧૧ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો થઈ જાય
છે. તેમના જે ૧૦ ત્રિકપ્રદેશ સંયોગ કહ્યા છે તે નીચે પ્રમાણે સમજવા—મધ્યમાં
જે પ્રદેશ વ્યવસ્થાપિત (રહેલો) છે, તેની સાથે ત્રિકપ્રદેશ સંયોગ ૬ આવે
છે. એજ વાત ટીકામાં આપવામાં આવેલ આકૃતિદ્વારા સમજાવવામાં આવી છે.
મધ્યપ્રદેશ સિવાયના જે ચાર પ્રદેશો ચાર દિશામાં આવેલા છે. તેમની સાથે
ત્રિકપ્રદેશસંયોગ ચાર આવે છે તેમને પણ આ આકૃતિ દ્વારા સ્પષ્ટ કર-
વામાં આવેલ છે. આ પ્રકારે આ ત્રણ ત્રણ પ્રદેશોના સંયોગ ૧૦ થાય છે
આ ત્રણ ત્રણ પ્રદેશોના સંયોગ જ ૧૦ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોના આધારક્ષેત્રો છે.
તથા ચાર ચાર પ્રદેશોના પાંચ સંયોગ આ પ્રમાણે થાય છે—મધ્યમાં જે
પ્રદેશ વ્યવસ્થાપિત છે તેની સાથે ચતુષ્કસંયોગ ચાર થાય છે. તે ચતુષ્કસં-
યોગ જ ચાર આનુપૂર્વી દ્રવ્યોના આધારરૂપ ક્ષેત્રો છે. તેમને સંસ્કૃત ટીકામાં
આપવામાં આવેલ આકૃતિ દ્વારા બતાવવામાં આવેલ છે તથા મધ્યપ્રદેશ
સિવાયના ચાર દિશામાં વ્યવસ્થાપિત જે ચાર પ્રદેશો છે તેમના દ્વારા ચાર

પञ्चકસંયોગસ્તુ સુગમ एव यथा—  इति

इत्थं पञ्चप्रदेशप्रस्तारेऽप्यानुपूर्वीद्रव्याणाम् अनानुपूर्व्यवक्तव्यकद्रव्यापेक्षया बाहुल्यं दृश्यते । ततः स्वस्थित्या व्यवस्थितेऽसंख्येयप्रदेशात्मके लोके आनुपूर्वी-द्रव्याणाम् अनानुपूर्व्यवक्तव्यकद्रव्यापेक्षयाऽसंख्यातगुणत्वं स्पष्टमेवेति ॥ सू० ११६ ॥

કિયા ગયા હૈ । હસ પ્રકાર ચતુષ્કસંયોગ રૂપ આધારક્ષેત્ર કે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય પાંચ હોતે હૈ । તથા હન પાંચ પ્રદેશો કે સંયોગ સે જાયમાન એક પાંચ પ્રદેશી આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કા સમજના સુગમ હૈ । જો સંસ્કૃત ટીકા મેં દિયા હુવા ચિત્ર મેં સમજાયા ગયા હૈ । હસ પ્રકાર સે પાંચ પ્રદેશો કે પ્રસ્તાર મેં મી હન આનુપૂર્વી દ્રવ્યો કા અનાનુપૂર્વી ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કી અપેક્ષા બાહુલ્ય દેખા જાતા હૈ । તથા હસસે અપની સ્થિતિ કે અનુસાર સુવ્યવસ્થિત હસ અસંખ્યાત પ્રદેશવાલે લોક મેં આનુપૂર્વી દ્રવ્યો મેં અનાનુપૂર્વી ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કી અપેક્ષા સે અસંખ્યાત-ગુણતા સ્પષ્ટ હી હૈ ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકારને હસ સૂત્રદ્વારા યહ સમજાયા હૈ કિ નૈગમવ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વીદ્રવ્ય અનાનુપૂર્વી ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કી અપેક્ષા અસંખ્યાત ગુણે અધિક હૈ ઓર શેષ દ્રવ્ય આનુપૂર્વીદ્રવ્યો કે અસંખ્યાતવે ભાગ પ્રમાણ હૈ । હસ વાત કો સુનતે હી કિસી શંકાકાર ને હસ-

પ્રદેશી આનુપૂર્વી દ્રવ્યના એક ચતુષ્કસંયોગ રૂપ આધાર નિષ્પન્ન થાય છે, તેને પશ્ચ સંસ્કૃત ટીકામાં આપવામાં આવેલ આકૃતિ દ્વારા સ્પષ્ટ કરવામાં આવેલ છે. આ પ્રકારે ચતુષ્કસંયોગ રૂપ આધાર ક્ષેત્રના આનુપૂર્વી દ્રવ્ય પાંચ થાય છે. તથા તે પાંચ પ્રદેશના સંયોગથી નિષ્પન્ન પાંચપ્રદેશી એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યને સમજવું સુગમ છે. ટીકામાં આપવામાં આવેલ આકૃતિમાં તેને સમજાવવામાં આવેલ છે. આ પ્રકારે પાંચ પ્રદેશોના પ્રસ્તારમાં પશ્ચ અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અધિકતા જોવામાં આવે છે, તે પછી અસંખ્યાત પ્રદેશોવાળા લોકમાં અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અસંખ્યાત ગણાં હોય એમાં નવાઈ પામવા જેવું શું છે ?

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે એ વાતનું પ્રતિપાદન કયું છે કે નૈગમવ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અનેક ગણાં વધારે છે. અને આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સિવાયના દ્રવ્યો આનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાતમાં ભાગપ્રમાણ છે. સૂત્રકારના આ કથન સામે કોઈ વ્યક્તિ એવી શંકા પ્રકટ કરે કે આપણું આ કથન બુદ્ધિગમ્ય

પર શંકા કી-કિ આપકા યહ કથન યુક્તિ સે સંગત નહીં બેઠતા હૈ-
 કારણ અસંખ્યાત પ્રદેશી હસ લોક મેં સબસે અધિક સંખ્યા આનુપૂર્વી
 દ્રવ્યોં કી હી આતી હૈ બાદ મેં હનસે કમ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કી ઓર
 હનસે મી કમ આનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કી । હસ બાત કો હમ હસપ્રકાર સે સમ-
 જ્ઞા સકતે હૈં । લોક અસંખ્યાતપ્રદેશી માના ગયા હૈ-સો લોકકે અસં-
 ઘ્યાત પ્રદેશોં કે સ્થાન મેં ૩૦ સંખ્યા રાઘ લો-યે ૩૦ હી અસંખ્યાત
 પ્રદેશ હૈં । અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય લોકાકાશ કે એક ૨ પ્રદેશ રૂપ આધાર પર
 અવગાહિત હૈં હસ અપેક્ષા સે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કી સંખ્યા ૩૦ આતી
 હૈ । ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્ય જો દ્વિપ્રદેશી હોતા હૈ, વહ દો દો પ્રદેશોં મેં
 અવગાહિત હોતા હૈ-હસલિયે ડસકી સંખ્યા ૧૫ આતી હૈ । તથા આનુ-
 પૂર્વી દ્રવ્ય ત્રિપ્રદેશાવગાહ હોતા હૈ । હસલિયે હનકી સંખ્યા દશ આતી
 હૈ । તથા સિદ્ધાન્તકાર ને હસ શંકા કા ઉત્તર બહુન સુન્દરરીતિ સે કિયા
 હૈ-અન્હોંને ડસે સમજાયા કિ જૈસા તુમ કહ રહે હો વૈસા નહીં હૈ ।
 વયોંકિ આકાશકા એક ૨ પ્રદેશ ભિન્ન ૨ રૂપસે પરિણત અનેક ય્યણુકાદિ
 રૂપ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કા આધારસ્થલ હૈ એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય મેં આકાશ

લાગતું નથી પોતાની શંકાના સમર્થનમાં તે એવી દલીલ કરે કે-અસં-
 ખ્યાત પ્રદેશોવાળા આ લોકમાં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની સંખ્યા સૌથી વધારે
 છે, અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની સંખ્યા અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં ઓછી છે અને
 આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની સંખ્યા તો અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં પણ ઓછી છે.
 નીચેની કલ્પના દ્વારા તે પોતાની આ માન્યતાનું સમર્થન કરે છે. લોકના
 અસંખ્યાત પ્રદેશો માનવામાં આવ્યા છે. ધારો કે લોકના ૩૦ પ્રદેશો છે
 અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકાકાશના એક એક પ્રદેશ રૂપ આધાર પર અવગાહિત છે.
 તેથી ૩૦ પ્રદેશોમાં અવગાહિત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની સંખ્યા ૩૦ ત્રીસ થાય
 છે અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કે જે એપ્રદેશી હોય છે તે લોકાકાશના બધા પ્રદેશોમાં
 અવગાહિત હોય છે. તેથી તેમની સંખ્યા ૧૫ ની થાય છે તથા આનુપૂર્વી
 દ્રવ્ય લોકાકાશના ત્રણ ત્રણ પ્રદેશોમાં અવગાહિત હોવાથી ૩૦ પ્રદેશોમાં
 અવગાહ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની સંખ્યા બાકીના બન્ને દ્રવ્યો કરતાં ઓછી
 થવા છતાં આપ શા કારણે એવું કહો છો કે આનુપૂર્વી દ્રવ્યો બાકીના બન્ને
 દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાત ગણાં હોય છે ?

આ શંકાનું અહીં નીચે પ્રમાણે સમાધાન કરવામાં આવ્યું છે-તમે
 કહો છો એવી વાત નથી, કારણ કે આકાશનો એક એક પ્રદેશ ભિન્ન ભિન્ન
 રૂપે પરિણત થયેલ અનેક ત્રણ આદિ અણુરૂપ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું આધાર-
 સ્થાન છે. એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યમાં આકાશના જે ત્રણ પ્રદેશો ઉપયુક્ત થાય

કે જો ત્રીણ પ્રદેશ ઉપયુક્ત હોતે હૈં વે યદિ અન્ય અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કે ઉપયોગ મેં ન આતે, તો યહ વાત બન ભી જાતી કિ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય શેષ દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા વહુત કમ હૈં, પરન્તુ જો આકાશ કે ત્ર્યાદિ પ્રદેશ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય મેં કામ આતે હૈં, વે હી અન્ય આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કે ભી ઉપયોગ મેં આતે હૈં । જો આકાશ કે ૩ પ્રદેશ જિસ સ્વભાવ સે ત્ર્યણુક રૂપ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કે ઉપયોગ મેં આતે હૈં । વે ત્રીણ પ્રદેશ ડસી સ્વભાવ સે ત્ર્યણુકાદિ એવં ચતુષ્પ્રદેશિક આદિ અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કે ઉપયોગ મેં નહીં આતે હૈં । ડનકે સ્વભાવ સે ભિન્નતા આજાતી હૈ । ઇસલિયે આકાશ કો સ્વભાવ કી ભિન્નતા કે કારણ અસંખ્યાત પ્રદેશી માના ગયા હૈ । ત્ર્યણુકાદિરૂપ આનુપૂર્વીદ્રવ્ય ભી તો એક ૨ કી હી સંખ્યા મેં નહીં હૈં કિન્તુ એક ૨ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અનેક હૈં । તમી તો વે સમસ્ત આનુપૂર્વીયાં લોકવ્યાપી હૈં । અનાનુપૂર્વી ઔર અવક્તવ્યક દ્રવ્ય ભી ઇસી પ્રકાર સે હૈં । ઇનમેં આનુપૂર્વી દ્રવ્ય હી ઇન દો દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા અસંખ્યાત ગુણા હૈ । ક્યોંકિ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કે લિયે એકપ્રદેશ રૂપ આધાર કી ઔર અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કે લિયે દો પ્રદેશરૂપ આધાર કી હી

છે, તે ત્રણ પ્રદેશો જે અન્ય આનુપૂર્વી દ્રવ્યોના ઉપયોગમાં આવી શકતા ન હોત તો એવી વાત સંભવી શકત કે આનુપૂર્વી દ્રવ્યો બાકીના બન્ને દ્રવ્યો કરતાં બહુ જ અલ્પ સંખ્યામાં છે. પરન્તુ પરિસ્થિતિ એવી છે કે આકાશના જે ત્રણ આદિ પ્રદેશો એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યના કામમાં આવે છે, એજ પ્રદેશો અન્ય આનુપૂર્વી દ્રવ્યોના ઉપયોગમાં પણ આવે છે. જે આકાશના ત્રણ પ્રદેશો જે સ્વભાવને લીધે ત્રણ અણુવાળી એક આનુપૂર્વીના ઉપયોગમાં આવ્યા છે, તે ત્રણ પ્રદેશો એજ સ્વભાવથી ત્રણ અણુવાળાં, અને ચાર પ્રદેશવાળાં આદિ અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યોના ઉપયોગમાં આવતાં નથી. તેમના સ્વભાવમાં આધેયની ભિન્નતાને લીધે ભિન્નતા આવી જાય છે. તેથી આકાશને સ્વભાવની ભિન્નતાને કારણે અસંખ્યાત પ્રદેશી માનવામાં આવેલ છે. ત્રિ અણુક આદિ ૩૫ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો પણ એક એકની સંખ્યામાં જ નથી, પરન્તુ પ્રત્યેક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અનેક હોય છે.—ત્રિ અણુક આદિ ૫ આનુપૂર્વી અનેક હોય છે—અને તેથી જ તે સમસ્ત આનુપૂર્વીઓ આઠ, છે. અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો પણ લોકવ્યાપી, પાંચ અને આનુપૂર્વી દ્રવ્ય જ તે બન્ને દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાત ૩૫ આધાર અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યને માટે એક પ્રદેશ ૩૫ આધાર દ્વારા સ્પષ્ટ કરવામાં

આવશ્યકતા પડતી હૈ, તથા કિ આનુપૂર્વીદ્રવ્ય કે લિયે ઁક દો ત્રીન આદિ સમસ્ત રૂપ આધાર કી અપેક્ષા પડતી હૈ-તથા ઁક ૨ પ્રદેશ મેં ઁ ઁનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અવગાહિત હૈં । તથા કિ ઁનેક અનાનુપૂર્વી ઁર ઁનેક અવક્તવ્યકદ્રવ્ય ઁક પ્રદેશ ઁર દો દો પ્રદેશોં મેં હી અવગાહિત હૈં । હસી વિષય કો લોક મેં પાંચપ્રદેશોં કી કલ્પના કર નિર્ણય કિયા ગયો હૈ । હનમેં ચારોં દિશાઓં મેં ચાર પ્રદેશ સ્થાપિત- કરના ચાહિયે ઁર ઁક પ્રદેશ વીચ મેં । અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય જૈસા કી કહા ગયા હૈ, કિ ઁક પ્રદેશાવગાહી હોતા હૈ હસલિયે ઁક ૨ પ્રદેશ મેં ઁક ઁક રહને કે કારણ પાંચપ્રદેશ રૂપ આધાર સંબન્ધી વે ૫ હી જ્ઞાત હોતે હૈં । ન્યૂન ઁર અધિક નહીં । હન પાંચ પ્રદેશોં મેં જથા દો ૨ પ્રદેશોં કા સંયોગ-કિયા જાતા હૈ તો વે દ્વિક સંયોગ યહાં આઠ બનતે હૈ-જૈસે ટીકામેં દિયા હુવા ચિત્ર મેં પ્રદર્શિત કિયે ગયે હૈં । યહાં જો ઁક દો આદિ અંક-લિખે હુઁ હૈં વે દો દો પ્રદેશોં કે સંયોગ કે પ્રદર્શક હૈં । હસ પ્રકાર યે દો દો પ્રદેશોં કે સંયોગરૂપ જો આધાર હૈં વે ઉતને હી અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કે આધાર હૈં ।

માટે ઁ પ્રદેશ રૂપ આધારની આવશ્યકતા પડે છે, પરન્તુ આનુપૂર્વી દ્રવ્યને માટે ઁક, ઁ, ત્રણ આદિ સમસ્ત પ્રદેશરૂપ આધારની આવશ્યકતા રહે છે. તથા ઁક ઁક પ્રદેશમાં પણ ઁનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અવગાહિત છે, ન્યારે ઁનેક અનાનુપૂર્વી ઁને ઁનેક અવક્તવ્યક દ્રવ્યો તો અનુક્રમે ઁક ઁક પ્રદેશમાં ઁને ઁખજે પ્રદેશોમાં જ અવગાહિત છે. હવે સૂત્રકાર લોકના પાંચ પ્રદેશો હોવાની કલ્પના કરીને આ વિષયનુ સ્પષ્ટીકરણ કરે છે-ચાર દિશા-ઓમાં ચાર પ્રદેશની ઁને વચ્ચે ઁક પ્રદેશની સ્થાપના કરવી જોઈઁ. તેની આકૃતિ આ પ્રમાણે બનશે-૦૦૦

અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય ઁક પ્રદેશાવગાહી હોય છે, તેથી ઁક ઁક પ્રદેશમાં ઁક ઁક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય હોવાને કારણે પાંચ પ્રદેશ રૂપ આધારમાં પાંચ જ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો સંભવી શકે છે. તેથી ઁછાં કે વધારે સંભવી શકતાં નથી. આ પાંચ પ્રદેશોમાં જો ઁખજે પ્રદેશોનો સંયોગ કરવામાં આવે, તો ઁવાં દ્વિકસંયોગ અહીં આઠ બને છે તે ઉપરની સંસ્કૃત ટીકામાં આપવામાં આવેલ આકૃતિમાં બતાવવામાં આવેલ છે-

આ આકૃતિમાં જો ઁક, ઁ આદિ અંકો લખ્યા છે, તે ઁખજે પ્રદેશોના સંયોગના પ્રદર્શક છે. આ રીતે તે ઁખજે પ્રદેશોના સંયોગ રૂપ જો આધાર છે, તેઓ ઁટલાં જ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોના આધાર રૂપ છે આ રીતે

इत्थं भागद्वारमभिधाय सम्प्रति भावद्वारमाह—

मूलम्—नेगमववहाराणं आणुपुर्वीदव्वाइं कयरमि भावे होज्जा? णियमा साइपारिणामिए भावे होज्जा। एवं दोणिण वि ॥सू० ११७॥

छाया—नैगमव्यवहारयोरानुपूर्वीद्रव्याणि कतरस्मिन् भावे भवन्ति ? निय-
मात् सादिपारिणामिके भावे भवन्ति । एवं द्वयोरपि ॥सू० ११७॥

इस प्रकार से यहां द्विकप्रदेश संयोगरूप आधारवर्ती ८ अवक्तव्यकद्रव्य हैं । यह बोध हो जाता है । क्योंकि जितने आधार हैं उतने ही वहां अनानुपूर्वी आदि द्रव्य हैं ऐसा यहां कहा गया है । आनुपूर्वी द्रव्य इन पांच प्रदेशों के संयोग रूप आधार १६ होने से १६ होते हैं । चतुष्क-संयोग पांच और पांच प्रदेशों का एक संयोग यहां होता है । इन चतुष्क (चार) संयोग रूप पांच आधारों में पांच आनुपूर्वी द्रव्य और पांच प्रदेशों के संयोगरूप एक आधार में एक पांच प्रदेशवाला आनुपूर्वी द्रव्य रहता है । पांच प्रदेशों में दो दो प्रदेशों के संयोग ८, तीन तीन प्रदेशों के संयोग १०, चार चार प्रदेशों के संयोग—से पांच बनते हैं । और पांच प्रदेशोंका संयोग एक ये सब द्विकादि संयोगरूप आधार कैसे बने यह सब संस्कृत टीकामें दिया हुआ चित्रोंद्वारा स्पष्ट किया गया है ॥सू. ११६॥

અહીં દ્વિકપ્રદેશ સંયોગરૂપ આધારવર્તી આઠ અવકતવ્યક દ્રવ્યો હોવાનો ખોધ થઈ જાય છે, કારણ કે જેટલા આધાર છે એટલા જ ત્યાં આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યો છે એવું અહીં કહેવામાં આવ્યું છે.

આ પાંચ પ્રદેશોના સંયોગરૂપ આધાર ૧૬ હોવાથી આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અહીં ૧૬ હોય છે. ચતુષ્કસંયોગ પાંચ અને પાંચ પ્રદેશોનો એક સંયોગ અહીં થાય છે. આ ચતુષ્કસંયોગ રૂપ પાંચ આધારોમાં પાંચ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને પાંચ પ્રદેશોના સંયોગ રૂપ એક આધારમાં પાંચ પ્રદેશવાળું એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રહે છે. પાંચ પ્રદેશોમાં બળે પ્રદેશોના સંયોગ આઠ, ત્રણ ત્રણ પ્રદેશોના સંયોગ ૧૦, ચાર ચાર પ્રદેશોના સંયોગ પાંચ અને પાંચ પ્રદેશોના સંયોગ એક બને છે, આ બધાં દ્વિકાદિ સંયોગ રૂપ આધાર કેવી રીતે બને છે, તે બધું સૂત્રાર્થમાં આકૃતિઓ દ્વારા સ્પષ્ટ કરવામાં આવ્યું છે ॥સૂ. ૧૧૬॥

ટીકા—‘ જોગમવવહારાણં ’ ઇત્યાદિ—

નૈગમવ્યવહારસમ્મતાનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કતરસ્મિન્ ભાવે ભવન્તિ ? ઇતિ શિષ્ય પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ નિયમાત્ સાદિપારિણામિકે ભાવે ભવન્તિ । एवं द्वे अपि=अनानुपूर्व्यवक्तव्यकद्रव्याण्यपि सादिपारिणामिके भावे भवन्तीति । અયં ભાવઃ—ઞ્યાદિપ્રદેશાવગાહપરિણામસ્ય એકપ્રદેશાવગાહપરિણામસ્ય દ્વિપ્રદેશાવગાહપરિણામસ્ય ચેતિ ત્રયાણામપિ દ્રવ્યાણાં સાદિપારિણામિકત્વાત્ સાદિપારિણામિકભાવવર્તિત્વં बोध्यमिति ॥સૂ૦ ૧૧૭॥

અવ સૂત્રકાર ભાવદ્વાર કા કથન કરતે હૈં—

“ જોગમવવહારાણં ” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(જોગમવવહારાણં આણુપુર્વી દ્રવ્યાઈ) નૈગમ વ્યવહારનય-સંમત સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય—(કયરંમિ ભાવે હોજા) કૌન સે ભાવ મેં વર્તતે હૈં ।

ઉત્તર—(ણિયમા) નૈગમવ્યવહારનયસંમત સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય નિયમ સે (સાદિપારિણામિએ ભાવે હોજા) સાદિ પારિણામિક ભાવ મેં-વર્તતે હૈં । (એવં દોણિયવિ) હસી પ્રકાર સે અનાનુપૂર્વી ઓર અવ-ક્તવ્યક દ્રવ્યોં કે વિષય મેં મી-જાનના ચાહિયે । તાત્પર્ય હસકા યહ હૈં કિ ઞ્યાદિ પ્રદેશોં મેં આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કા અવગાહ, પરિણામ એક પ્રદેશ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કા અવગાહ પરિણામ ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કા દ્વિપ્રદેશોં મેં અવગાહ પરિણામ સાદિ હૈં । હસલિયે—યે સવ દ્રવ્ય સાદિ પારિણામિક ભાવવર્તી—હૈં । ॥ સૂ૦ ૧૧૭ ॥

હવે લાવદ્વારનું કથન કરવામાં આવે છે.—

“ જોગમવવહારાણં ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(જોગમવવહારાણં આણુપુર્વી દ્રવ્યાઈ) નૈગમવ્યવહારનયસંમત સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો (કયરંમિ ભાવે હોજા ?) કયા લાવમાં વર્તમાન હોય છે ? ઉત્તર—(ણિયમા સાદિપારિણામિએ ભાવે હોજા) નૈગમવ્યવહાર નયસં-મત સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો નિયમથી જ સાદિપારિણામિક લાવવર્તી હોય છે (એવં દોણિય વિ) એવું જ કથન અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોના વિષયમાં પણ સમજવું આ કથનનો લાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—ત્રણ આદિ પ્રદેશોમાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું અવગાહપરિણામ, એક પ્રદેશમાં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું અવગાહપરિણામ અને જે પ્રદેશોમાં અવક્તવ્યક દ્રવ્યોનું અવગાહપરિણામ સાદિ (આદિ સહિત) હોય છે. તેથી જ આ ત્રણે દ્રવ્યોને સાદિપારિણામિક લાવવર્તી કહ્યાં છે. ॥સૂ૦ ૧૧૭॥

इत्थं भावद्वारमभिधाय अल्पबहुत्वद्वारं प्ररूपयति—

मूलम्—एएसिणं भन्ते ! नेगमववहाराणं आणुपुर्वीद्व्याणं अणा-
णुपुर्वीद्व्याणं अवत्तव्वगदव्वाणं य दव्वट्टयाए पएसट्टयाए दव्व-
ट्टपएसट्टयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुगा वा तुल्ला वा विसे-
साहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवाइं नेगमववहाराणं अवत्तव्वग-
दव्वाइं दव्वट्टयाए, अणाणुपुर्वीद्व्याइं दव्वट्टयाए विसेसाहियाइं,
आणुपुर्वीदव्वाइं दव्वट्टयाए असंखेज्जगुणाइं । पएसट्टयाए
सव्वत्थोवाइं नेगमववहाराणं आणुपुर्वीदव्वाइं अपएसट्टयाए ।
अवत्तव्वगदव्वाइं पएसट्टयाए विसेसाहियाइं । आणुपुर्वीदव्वाइं
पएसट्टयाए असंखेज्जगुणाइं । दव्वट्टपएसट्टयाए सव्वत्थोवाइं
नेगमववहाराणं अवत्तव्वगदव्वाइं दव्वट्टयाए । अणाणुपुर्वी-
दव्वाइं दव्वट्टयाए अपएसट्टयाए विसेसाहियाइं । अवत्तव्वगदव्वाइं
पएसट्टयाए विसेसाहियाइं । आणुपुर्वीदव्वाइं दव्वट्टयाए असंखे-
ज्जगुणाइं ताइं चेव पएसट्टयाए असंखेज्जगुणाइं । से तं अणुगमे ।
से तं नेगमववहाराणं अणोवणिहिया खेत्ताणुपुर्वी ॥सू० ११८॥

छाया—एतेषां खलु भदन्त ! नैगमव्यवहारयोः आनुपूर्वीद्रव्याणाम् अनानु-
पूर्वीद्रव्याणाम् अवक्तव्यकद्रव्याणां च द्रव्यार्थतया प्रदेशार्थतया कानि केभ्यः
अल्पानि वा बहुकानि वा तुल्यानि वा विशेषाधिकानि वा ? । गौतम ! सर्वस्तो-
कानि नैगमव्यवहारयोः अवक्तव्यकद्रव्याणि द्रव्यार्थतया । अनानुपूर्वीद्रव्याणि
द्रव्यार्थतया विशेषाधिकानि । आनुपूर्वी द्रव्याणि द्रव्यार्थतया असंख्येयगुणानि ।
प्रदेशार्थतया—सर्वस्तोकानि नैगमव्यवहारयोः अनानुपूर्वीद्रव्याणि अप्रदेशार्थतया ।
अवक्तव्यकद्रव्याणि प्रदेशार्थतया विशेषाधिकानि । आनुपूर्वीद्रव्याणि प्रदेशार्थतया
असंख्येयगुणानि । द्रव्यार्थप्रदेशार्थतया सर्वस्तोकानि नैगमव्यवहारयोः अवक्तव्यक
द्रव्याणि द्रव्यार्थतया । अनानुपूर्वी-द्रव्याणि द्रव्यार्थतया अप्रदेशार्थतया

વિશેષાધિકાનિ । અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ પ્રદેશાર્થતયા વિશેષાધિકાનિ । આનુપૂર્વી દ્રવ્યાણિ દ્રવ્યાર્થતયાઽસંખ્યેયગુણાનિ તાન્યેવ પ્રદેશાર્થતયા અસંખ્યેયગુણાનિ । સ ણ્ણોઽનુગમઃ । સૈષા નૈગમવ્યવહારયોઃ અનોપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ॥સૂ૦ ૧૧૮॥

ટીકા—‘एएसि णं’ इत्यादि ।

हे भदन्त ! एतेषां खलु नैगमव्यवहारसम्मतानाम् आनुपूर्वीद्रव्याणाम् अनानुपूर्वीद्रव्याणाम् अवक्तव्यकद्रव्याणां मध्ये कानि द्रव्याणि कतरेभ्यो द्रव्येभ्यो द्रव्यार्थतया प्रदेशार्थतया द्रव्यार्थप्रदेशार्थतया च अल्पानि वा बहुकानि वा तुल्यानि वा विशेषाधिकानि वा भवन्ति ? इति प्रश्नः । उत्तरयति—‘गोयमा’ इत्यादिना । अस्य व्याख्या नवतितमसंख्यकमुत्रवद् बोध्या ।

अब सूत्रकार अल्प बहुत्व द्वार की प्ररूपणा करते हैं—

“एएसि णं भंते” इत्यादि ।

शब्दार्थ—(भंते) हे भदन्त ! (नेगमव्यवहाराणं एएसि आणुपुव्वी दव्वाणं) नैगमव्यवहारनय—संमत इन आनुपूर्वी द्रव्यों के (अणुपुव्वी दव्वाणं) अनानुपूर्वी द्रव्यों के (य) और (अवत्तव्वगदव्वाणं) अवक्तव्यकद्रव्य के बीच (कयरे कयरेहिंतो) कौन कौन से द्रव्यों से (दव्वट्ठयाए, पएसट्ठयाए, दव्वट्ठपएसट्ठयाए) द्रव्यार्थता, प्रदेशार्थता और द्रव्यार्थता प्रदेशार्थता की अपेक्षा (अप्पावा बहुगावा तुल्लावा विसेसाहियावा) अल्प हैं—कौन २ किन २ द्रव्यों से बहुत हैं कौन २ किन २—के समान हैं और कौन २ किन २ द्रव्यों से विशेष अधिक हैं ? (गोयमा) हे गौतम ! (नेगमव्यवहाराणं) नैगमव्यवहारनय संमत (अवत्तव्वगदव्वाइं) अवक्तव्यक

હે સૂત્રકાર અલ્પબહુત્વ દ્વારની પ્રરૂપણા કરે છે—

“एएसि णं भंते !” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(ભંતે !) હે ભગવન્ ! (નેગમવ્યવહારાણં એસિ આણુપુવ્વીદવ્વાણં અણાણુપુવ્વીદવ્વાણં, અવત્તવ્વગદવ્વાણં) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત આ આનુ-પૂર્વી દ્રવ્યો, અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોમાંનાં (કયરે કયરેહિંતો) કે યા કે યા દ્રવ્યો (દવ્વટ્ઠયાએ, પપસટ્ઠયાએ, દવ્વટ્ઠપપસટ્ઠયાએ) દ્રવ્યાર્થતા, પ્રદે-શાર્થતા અને દ્રવ્યાર્થતા પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ (અપ્પા વા બહુગા વા, તુલ્લા વા, વિસેસાહિયા વા ?) કે યા કે યા દ્રવ્યો કરતાં અલ્પ પ્રમાણ છે ? કે યા કે યા દ્રવ્યો કે યા કે યા દ્રવ્યો કરતાં અધિક છે, કે યા કે યા દ્રવ્યો કે યા કે યા દ્રવ્યોના જેટલાં જ છે અને કે યા કે યા દ્રવ્યો કે યા કે યા દ્રવ્યો કરતાં વિશેષાધિક છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (નેગમવ્યવહારાણં) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત (અવત્તવ્વગદવ્વાઈં) અવક્તવ્યક દ્રવ્યો (દવ્વટ્ઠયાએ) દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ

દ્રવ્ય (દ્વવદ્વયાએ) દ્રવ્યાર્થતા કી- અપેક્ષા (સવ્વત્થોવાઈ) સર્વસ્તોક હૈં । (અણાણુપુવ્વીદવ્વાઈ) અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય (દ્વવદ્વયાએ) દ્રવ્યાર્થતા કી અપેક્ષા (વિસેસોહિઆઈ) વિશેષ અધિક હૈં । (આણુપુવ્વીદવ્વાઈ) આનુપૂર્વી- દ્રવ્ય (દ્વવદ્વયાએ) દ્રવ્યાર્થતા કી અપેક્ષા (અસંખેજ્જગુણાઈ) અસંખ્યાત ગુણે હૈં । (પણસદ્વયાએ) પ્રદેશાર્થતાકી અપેક્ષા (ણેગમવવહારાણં) નૈગમ- વ્યવહારનય સંમત (અણાણુપુવ્વી દવ્વાઈ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય (સવ્વત્થો- વાઈ) સર્વસ્તોક હૈં । ક્યોંકિ (અપણસદ્વયાએ) અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય મેં પ્રદેશરૂપ અર્થ કા અભાવ હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ, કિ પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં ભી યદિ દ્વિતીય આદિ પ્રદેશ હો તો દ્રવ્યાર્થતા કી તરહ પ્રદેશાર્થતા મેં ભી અવક્તવ્યકદ્રવ્યોં કી અપેક્ષા સે ડનકી અધિકતા હો જાતી । પરન્તુ એસા તો હૈ નહીં, ક્યોંકિ પરમાણુ અપ્રદેશી હોતા હૈ । એસા સિદ્ધાન્ત કા વચન હૈ હસલિયે પ્રદેશતા કી અપેક્ષા સે યે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય સર્વસ્તોક કહે ગયે હૈં । (અવક્તવ્યકદવ્વાઈ) અવક્તવ્યક દ્રવ્ય (પણસદ્વ- યાએ) પ્રદેશાર્થતા કી અપેક્ષા (વિસેસોહિયાઈ) વિશેષ અધિક હૈં । (આણુ પુવ્વી દવ્વાઈ) આનુપૂર્વી દ્રવ્ય (પણસદ્વયાએ) પ્રદેશાર્થતા કી અપેક્ષા (અસં- સંખેજ્જગુણાઈ) અસંખ્યાત ગુણે હૈં । (દ્વવદ્વપણસદ્વયાએ) દ્રવ્યાર્થતા ઓર-

(સવ્વત્થોવાઈ) સૌથી અલ્પ પ્રમાણમાં છે. (અણાણુપુવ્વી દવ્વાઈ દ્વવદ્વયાએ વિસેસોહિયાઈ) દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં વિશેષાધિક છે. (આણુપુવ્વીદવ્વાઈ દ્વવદ્વયાએ અસંખેજ્જગુણાઈ) અને દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં પણ અત્રંબ્યાત ગણાં છે. (પણસદ્વયાએ) પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો (ણેગમવવહારાણં) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત (અણા- ણુપુવ્વીદવ્વાઈ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો (સવ્વત્થોવાઈ) સૌથી આછાં છે, કારણ કે (અપણસદ્વયાએ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યમાં પ્રદેશરૂપ અર્થનો અભાવ છે. આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે પરમાણુ રૂપ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યમાં પણ જો જો આદિ પ્રદે- શોનો સદ્ભાવ હોત તો દ્રવ્યાર્થતાની જેમ પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ પણ અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અધિકતા જ સંભવી શકત, પરન્તુ એવી વાતનો તો અહીં અવકાશ નથી, કારણ કે પરમાણુ અપ્રદેશી હોય છે, એવું સિદ્ધાન્તનું વચન છે. તેથી જ પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યને સર્વસ્તોક (સૌથી અલ્પ પ્રમાણ) કહ્યું છે. (અવક્તવ્યકદવ્વાઈ) અવક્તવ્યક દ્રવ્યો (પણસદ્વયાએ) પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં વિશેષાધિક છે. (આણુપુવ્વીદવ્વાઈ પણસદ્વયાએ અસંખેજ્જગુણાઈ) પ્રદે-

પ્રદેશાર્થતા इन दोनों की अपेक्षा से (जोगमववहाराणं) नैगम व्यवहारनय संमत-(अवक्तव्यगदव्वाइं) अवक्तव्यक द्रव्य (सव्वत्थोवोइं) सर्वस्तोक हैं। क्योंकि (दव्वट्टयाए) अवक्तव्यक द्रव्यों में द्रव्यार्थता की अपेक्षा पहिले-सर्वस्तोकता प्रकट की गई है। (अणाणुपुव्वी दव्वाइं दव्वट्टयाए अपए-सट्टयाए विसेसाहियाइं) अनानुपूर्वी द्रव्य द्रव्यार्थता से और अप्रदेशार्थता से अवक्तव्यक द्रव्य की अपेक्षा कुछ अधिक हैं। (अवक्तव्यगदव्वाइं पएसट्टयाए विसेसाहियाइं।) अवक्तव्यक द्रव्य प्रदेसार्थता की अपेक्षा-अनानुपूर्वी द्रव्यों से कुछ अधिक हैं। (आणुपुव्वी दव्वाइं दव्वट्टयाए असंखेज्जगुणाइं) उभयार्थता को आश्रित करके द्रव्यार्थता की अपेक्षा से आनुपूर्वी द्रव्य असंख्यात गुणों हैं और (पएसट्टयाए) प्रदेसार्थता की अपेक्षा से भी (ताइंचेव) वे ही आनुपूर्वीद्रव्य (असंखेज्जगुणाइं) असंख्यात गुणों हैं (से तं अणुगमे) इस प्रकार यह अनुगम का स्वरूप है (से तं जोगमववहाराणं अणोवणिहिया खेत्ताणुपुव्वी) इस प्रकार यहां तक नैगम व्यवहारनय संमत अनौपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वी के स्वरूप का कथन किया। सूत्र पदों का यह अर्थ है। इसकी व्याख्या ९० वें सूत्र के

શાર્થતાની અપેક્ષાએ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અવકતવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાત ગણાં છે. (દવ્વટ્ટપપસટ્ટયાએ) દ્રવ્યાર્થતા અને પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો (જોગમવવહારાણં) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત (અવક્તવ્યગ-દવ્વાઈં) અવકતવ્યક દ્રવ્યો સૌથી ઓછાં છે, કારણ કે (દવ્વટ્ટયાએ) દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ અવકતવ્યક દ્રવ્યોમાં પહેલાં સર્વસ્તોકતા (સૌથી અદ્ય પ્રમાણ) ખતાવવામાં આવેલ છે. (અણાણુપુવ્વીદવ્વાઈં દવ્વટ્ટયાએ અપપસટ્ટયાએ વિસેસાહિયાઈં) દ્રવ્યાર્થતા અને અપ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અવકતવ્યક દ્રવ્યો કરતાં વિશેષાધિક છે. (આણુપુવ્વીદવ્વાઈં દવ્વટ્ટયાએ અસં-સેજ્જગુણાઈં) દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અસંખ્યાત ગણાં છે. (પપસટ્ટયાએ) પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો (તાઈં ચેવ) તે આનુપૂર્વી દ્રવ્યો જ (અસંસેજ્જગુણાઈં) અસંખ્યાત ગણાં છે. (સે તં અણુગમે) આ પ્રકારનું અનુગમનું સ્વરૂપ છે. (સે તં જોગમવવહારાણં અણોવણિહિયા લેક્કાણુપુવ્વી) આ રીતે અહીં સુધીનાં સૂત્રોમાં નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીના સ્વરૂપનું કથન કરવામાં આવ્યું છે. સૂત્રપદોનો આ અર્થ છે તેની વ્યાખ્યા ૬૦માં સૂત્ર પ્રમાણે સમજવી.

અત્રેદં બોધ્યમ્-દ્રવ્યગણનં દ્રવ્યાર્થતા, પ્રદેશગણનં પ્રદેશાર્થતા, ઉભય-ગણનં તૂભયાર્થતા। તત્રાનુપૂર્વ્યાં વિશિષ્ટદ્રવ્યાવગાહોપલક્ષિતાસ્ત્યાદિનભઃ-પ્રદેશસમુદાયા દ્રવ્યાણિ, સમુદાયારમ્ભકાસ્તુ પ્રદેશાઃ। અનાનુપૂર્વ્યાં તુ એકૈક-પ્રદેશાવગાહિદ્રવ્યોપલક્ષિતાઃ સકલનભઃપ્રદેશાઃ પ્રત્યેકં દ્રવ્યાણિ, પ્રદેશા-સ્ત્વત્ર ન સંભવન્તિ, એકૈકપ્રદેશદ્રવ્યે હિ પ્રદેશાન્તરાયોગાત્। અવક્તવ્યકેષુ તુ

સમાન જાનની ચાહિયે। “અત્રેદં બોધ્યં-દ્રવ્યોં કી ગિનતી કરના હસકા નામ દ્રવ્યાર્થતા હૈ। પ્રદેશોં કી ગિનતી કરના હસકા નામ પ્રદેશાર્થતા હૈ। દ્રવ્યોં ઓર પ્રદેશોં કી દોનોં કી ગિનતી-ગણના કરના ઉભયાર્થતા હૈ। આનુપૂર્વીં મેં વિશિષ્ટ દ્રવ્યોં કે અવગાહ સે ઉપલક્ષિત હુએ જો નભઃ-પ્રદેશ હૈં ઉન નભઃપ્રદેશોં કે યહ ત્રીન નભઃપ્રદેશોં કા સમુદાય હૈ યહ ચાર નભઃપ્રદેશોં કા સમુદાય હૈ “ઇત્યાદિ જો સમુદાય હૈં-વે સમસ્ત વ્યાદિ નભઃપ્રદેશ સમુદાય દ્રવ્ય હૈં। ઓર હસ સમુદાયોં કે જો આરં-ભક હૈં વે પ્રદેશ હૈં। અનાનુપૂર્વીં મેં, એક એકપ્રદેશ અવગાહી હુએ દ્રવ્ય સે ઉપલક્ષિત જો સકલ આકાશપ્રદેશ હૈં વે અલગ ૨ પ્રત્યેક દ્રવ્ય હૈં। પ્રદેશ યહાં સંભવિત નહીં હૈં। ક્યોંકિ એક ૨ પ્રદેશ રૂપ દ્રવ્ય મેં અન્ય પ્રદેશોં કા રહના અસંભવ હૈ અવક્તવ્યકોં મેં લોક મેં જિતને દ્વિક-દો દો પ્રદેશોં કે યોગ હૈં ઉતને વે પ્રત્યેક દ્રવ્ય હૈં। ઓર હન દ્વિક યોગોં કો

“અત્રેદં બોધ્યં”-અહીં એવું સમજવાનું છે કે દ્રવ્યોની ગણતરી કરવી તેનું નામ દ્રવ્યાર્થતા છે અને પ્રદેશોની ગણતરી કરવી તેનું નામ પ્રદેશાર્થતા છે. દ્રવ્યોની અને પ્રદેશોની (ઉભયની) ગણતરી કરવી તેનું નામ ઉભયાર્થતા છે. આનુપૂર્વીંમાં, વિશિષ્ટ દ્રવ્યોના અવગાહથી ઉપલક્ષિત (યુક્ત) એવાં જે આકાશપ્રદેશોના “આ ત્રણ આકાશપ્રદેશોનો સમુદાય છે, આ ચાર આકા-શપ્રદેશોનો સમુદાય છે,” ઇત્યાદિ રૂપ જે સમુદાયો છે તે સમસ્ત ત્રણ આદિ આકાશપ્રદેશોમાં રહેલાં દ્રવ્યસમુદાયો આવી જાય છે. અને તે સમુદાયોના જે આરંભકો છે તેમનું નામ પ્રદેશ છે.

અનાનુપૂર્વીંમાં, એક એક પ્રદેશમાં અવગાહિત થયેલા દ્રવ્યથી ઉપલક્ષિત જે સમસ્ત આકાશપ્રદેશો છે તેઓ અલગ અલગ પ્રત્યેક દ્રવ્ય છે અહીં પ્રદેશ સંભવિત નથી, કારણ કે એક એક પ્રદેશ રૂપ દ્રવ્યમાં અન્ય પ્રદેશોનું અસ્તિત્વ અસંભવિત છે. અવક્રતવ્યકોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો લોકમાં જેટલાં દ્વિયોગ (બન્ને પ્રદેશોના યોગ) છે, એટલાં તે પ્રત્યેક દ્રવ્ય છે, અને તે દ્વિયોગોનો આરંભ કરનારા પ્રદેશો છે.

યાવન્તો લોકે દ્વિકયોગાઃ સંભવન્તિ તાવન્તિ પ્રત્યેકં દ્રવ્યાણિ, તદારમ્ભ-
કાસ્તુ પ્રદેશા इति। किंच 'सर्व्वत्थोवाइं णेगमववहाराणं अवत्तव्वगदव्वाइं
इत्यादि यदुक्तं तत्रोच्यते-ननु यदा पूर्वोक्तयुक्त्या एकैको नभःप्रदेशोऽनेकेषु
द्विकसंयोगेषूपयुज्यते, तदा अनानुपूर्वी द्रव्येभ्योऽवक्तव्यकद्रव्याणामेव बाहुल्य-
मुपलभ्यते, पञ्चप्रदेशनभःकल्पनायामपि पञ्चसंख्यकेभ्योऽनानुपूर्वीद्रव्येभ्योऽष्ट-
संख्यकानामवक्तव्यकद्रव्याणामेव आधिक्यदर्शनात्, तत् कथमिहोक्तं 'सर्व्वत्थो-
वाइं णेगमववहाराणं अवत्तव्वगदव्वाइं' इति ? अत्रोच्यते-लोकमध्यमात्रमाश्रित्य
अवक्तव्यकद्रव्याणामाधिक्यमुक्तम्। परन्तु लोकपर्यन्तस्थितनिष्कुटगता ये कण्ट-

आरंभ करने वाले प्रदेश हैं। किंच-“ सर्व्वत्थोवाइं णेगमववहाराणं
अवत्तव्वगदव्वाइं” इत्यादि जो कहा है उसके विषय में शंकाकार का
ऐसा कहना है कि पहिले प्रदर्शित युक्तिके अनुसार जब एक एक
आकाशप्रदेश अनेक द्विक संयोगों में उपयुक्त होता है तब
अनानुपूर्वी द्रव्यों से अवक्तव्यक द्रव्यों की ही बहुलता मालुम
देती है जैसा पहिले कहा गया है कि आकाश के कल्पित पांच
प्रदेशों में एक २ प्रदेश पर अनानुपूर्वी द्रव्य रहता है और आठ अवक्त-
व्यक द्रव्य रहते हैं। अतः इस कथन से अनानुपूर्वी द्रव्यों की अपेक्षा
अवक्तव्यक द्रव्यों की बहुलता पाई जाती है। तो फिर यहां ऐसे कैसे
कहा कि नैगमव्यहारनय संमत अवक्तव्यक द्रव्य सर्व्वस्तोक हैं ?

उत्तर-लोकके मध्यभाग मात्र को आश्रित करके अवक्तव्यक द्रव्यों
में अधिकता कही गई है। परन्तु जो एक २ प्रदेश लोक के अन्त तक

શંકા-“ સર્વ્વત્થોવાઈં ણેગમવવહારાણં અવત્તવ્વગદવ્વાઈં ” આપે એવું
જે કહ્યું છે કે નૈગમવ્યવહારનયસંમત અવક્તવ્યક દ્રવ્યો સૌથી ઓછાં છે,
પરન્તુ આપનું આ કથન ખરાખર લાગતું નથી પહેલાં આપે જ એ વાતનું
પ્રતિપાદન કર્યું છે કે એક એક આકાશપ્રદેશ અનેક દ્વિકસંયોગોમાં ઉપયુક્ત
થાય છે, અને તેથી જ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની જ
અધિકતા હોવી જોઈએ આપે પહેલાં એવું કહ્યું છે કે લોકના પાંચ પ્રદેશો
હોય તો દરેક પ્રદેશમાં એક એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની અવગાહના હોય તો
પાંચ પ્રદેશોમાં પાંચ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો હોઈ શકે અને તે પાંચ પ્રદેશોમાં
આઠ અવક્તવ્યક દ્રવ્યો રહી શકે આપના પૂર્વોક્ત આ કથન દ્વારા તો અવ-
ક્તવ્યક દ્રવ્યો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં અધિક હોવાની વાતને જ પુષ્ટિ
મળે છે. છતાં અહીં આપે શા કારણે એવું કથન કર્યું છે કે નૈગમવ્યવહાર
નયસંમત અવક્તવ્યક દ્રવ્યો સર્વસ્તોક છે ?

ઉત્તર-લોકના મધ્યભાગ માત્રને અનુલક્ષીને અવક્તવ્ય દ્રવ્યોની અધિ-
કતા બતાવવામાં આવી છે. પરન્તુ જે એક એક પ્રદેશ લોકના અન્ત પર્યન્ત

કાકૃતયો વિશ્રેણ્યા નિર્ગતા એકાકિનઃ પ્રદેશાસ્તે વિશ્રેણિવ્યવસ્થિતત્વાદવક્તવ્યક-
ત્વાદવક્તવ્યકત્વાયોગ્યા इति तेषामनानुपूर्वीसंख्यायामेवान्तर्भावो भवति । अतो
लोकमध्यस्थितां निष्कुटगतां च अनानुपूर्वीद्रव्यसंख्यां मीलयित्वा यदा केवली
निर्दिशति, तदाऽवक्तव्यकद्रव्याण्येव स्तोकानि, अनानुपूर्वीद्रव्याणि तु ततो विशेष-
षाधिकानि । अत्र निष्कुटस्थापना ४४४ इति । अत्र विश्रેણિલિખિતૌ દ્વૌ અવ-
ક્તવ્યકાયોગ્યૌ દ્રષ્ટવ્યૌ । इत्थम्भूताश्रामी सर्वलोकपर्यन्तेषु तु बहवः सन्ति,
इत्यनानुपूर्वीद्रव्याणाम् अवक्तव्यकद्रव्यापेक्षया बाहुल्यं बोध्यम् । अतएवोक्तम्-
'सर्वतथोवाइं णेगमवसहाराणं अवत्तव्वगदव्वाइं' इति । आनुपूर्वीद्रव्याणां तु तेभ्यो-

સ્થિત એવં નિષ્કુટ સ્થાન મેં હેં ઔર જિનકા આકાર કણ્ટક જૈસા હૈ,
શ્રેણિ સે જો નિકલે હુએ નહીં હેં, એસે વે પ્રદેશ વિશ્રેણિ મેં વ્યવસ્થિત
હોને કે કારણ અવક્તવ્યક કે યોગ્ય નહીં માને ગયે હેં । અતઃ इनका
अन्तर्भाव अनानुपूर्वी की संख्या में ही हुआ है । इसलिये लोक के
मध्य में स्थित और निष्कुट जो अनानुपूर्वी द्रव्यों की संख्या है उसको
मिलाकर जिस समय-केवली भगवान् इसका कथन करते हैं । तब वे-
ऐसा ही कहते हैं कि अवक्तव्यक द्रव्यही स्तोक हैं और अनानुपूर्वीद्रव्य
उनसे कुछ अधिक हैं । निष्कुट की स्थापना यहां ४ ४ ४ इस प्रकार से
है । इसमें विश्रેણિ લિખિત દો અવક્તવ્યક કે અયોગ્ય હેં । इस प्रकार के
तो ये समस्त लोक के अन्त तक बहुत हैं । इसलिये अवक्तव्यक द्रव्यों
की अपेक्षा अनानुपूर्वी द्रव्यों की अधिकता जाननी चाहिये ?

સ્થિત (રહેલો) છે અને નિષ્કુટસ્થાનમાં છે અને જેનો આકાર કંટક (કાંટા) જેવો
છે, શ્રેણિમાંથી જેઓ નીકળેલા નથી, એવા તે પ્રદેશો વિશ્રેણિમાં વ્યવસ્થિત
હોવાને કારણે તેમને અવક્તવ્યક કહેવાને યોગ્ય ગણ્યા નથી તેથી તેમને
સમાવેશ અનુપૂર્વીની સંખ્યામાં જ થયો છે. તેથી લોકની મધ્યમાં સ્થિત
અનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને નિષ્કુટગત અનુપૂર્વી દ્રવ્યોની સંખ્યાનો સરવાળો
કરીને જ્યારે કેવલીભગવાન તેમનું કથન કરે છે ત્યારે તેઓ એવું જ કહે
છે કે અવક્તવ્યક દ્રવ્યો જ એછાં છે અને અનુપૂર્વી દ્રવ્યો તેમના કરતાં
વિશેષાધિક છે નિષ્કુટની સ્થાપના (આકૃતિ) અહીં આ પ્રમાણે છે- '૪૪૪'
તેમાં વિશ્રેણિ લિખિત બે અવક્તવ્યકને યોગ્ય નથી. આમ તો તેઓ સમસ્ત
લોકના અન્ત સુધીમાં ઘણાં જ છે. આ પ્રકારની પરિસ્થિતિને કારણે જ
અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અધિકતા સમજવી લેખ્યો.

ડાંડાત ઘૂણત્વમુક્તેવ । વિશેષસ્વત્ર-ઉભયાર્થતાવિચારે આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ સ્વદ્રવ્યે-
ભ્યઃ પ્રદેશાર્થતયાડસંખ્યેયગુણાનિ, એકેઋસ્ય તાવદ્ દ્રવ્યસ્ય ઝ્યાંદિભિરસંખ્યેયૈર્નમઃ
પ્રદેશૈરારબ્ધત્વાત્, નમઃપ્રદેશાનાં ચ સંમિલિતાનામપિ અસંખ્યેયત્વાદિતિ । પ્રસ્તુત-
વિષયમુપસંહરન્નાહ-‘સે તં’ इत्यादि स एषोऽनुगमः-अनुगमविषयोऽत्रसम्पूर्णः ।
तत्समाप्तौ नैगमव्यवहारसम्मताऽनौपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वी उपसंहृतेति तदुपसंहार-
माह-‘से तं जेगम०’ इत्यादि-सैषा नैगमव्यवहारसम्मताऽनौपनिधिकी क्षेत्रानु-
पूर्वी सम्पूर्णा ॥सू० ११८॥

હસલિયે અવ સૂત્રકારને “સવ્વત્થોવાઈં જોગમવવહારાણં અવત્તવ્વ-
ગદ્વાઈં” એસા કહા હૈ । અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય ઉનસે અસંખ્યાત ગુણે હૈ
યહ બાત પહિલે સ્પષ્ટ કી જા ચુકી હૈ । યહાં હતની વિશેષતા ઓર હૈ
કિ જિસ પ્રકાર આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં સે અસંખ્યાત ગુણે
હૈ । ડસી પ્રકાર વે ઉભયાર્થતા સે વિચરિત હોને પર પ્રદેશાર્થતા કી
અપેક્ષા અપને ૨ દ્રવ્યોં સે મી અસંખ્યાત ગુણે હૈ । કયોંકિ એક ૨ આનુ-
પૂર્વી દ્રવ્ય નીન આદિ અસંખ્યાત નમઃ પ્રદેશોં (આકાશ) સે નિષ્પન્ન
હોતા હૈ ઓર સંમિલિત હુએ મી વે નમઃપ્રદેશ અસંખ્યાત હી હોતે હૈ ।
હસ પ્રકાર અનુગમ કા વિષય સમાસ હોતે હી નૈગમવ્યવહારનયસંમત
અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કા કથન સમાસ હો ગયા-હસ વિષય કી
સૂચના “સે તં”, इत्यादि पदों द्वारा सूत्रकार ने दी है ॥ सू० ११८ ॥

તેથી જ સૂત્રકારે એવું કહ્યું છે કે “ સવ્વત્થોવાઈં જોગમવવહારાણં અવ્વ-
ત્તવ્વગદ્વાઈં ” “ નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અવકતબ્ધકે દ્રવ્યો સૌથી ઓછાં
છે. ” આનુપૂર્વી દ્રવ્યો તેમના કરતાં (અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય કરતાં) અસંખ્યાત
ગણાં છે, એ વાત તો પહેલાં સ્પષ્ટ કરવામાં આવી ચુકી છે. અહીં એટલી
વધુ વિશેષતા છે કે જે પ્રકારે આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં
અસંખ્યાત ગણાં છે, એજ પ્રમાણે ઉભયાર્થતાની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં
આવે તો પણ આનુપૂર્વી દ્રવ્યો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાત ગણાં
જ છે કારણ કે પ્રદેશાર્થતાની અપેક્ષાએ પણ એજ પ્રકારની પરિસ્થિતિ છે
કારણ કે પ્રત્યેક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ત્રણ આદિ અસંખ્યાત આકાશપ્રદેશો વડે
નિષ્પન્ન થાય છે, અને તે આકાશપ્રદેશોની એકંદર સંખ્યા પણ અસંખ્યાત
જ થાય છે. આ પ્રકારે અનુગમનું વિષય નિરૂપણ અહીં સમાપ્ત થાય છે.
અને અનુગમનું વર્ણન સમાપ્ત થવાથી નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અનૌપનિધિકી
ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું કથન પણ પૂરું થાય છે. “ સે તં ” इत्यादि सूत्र द्वारा सूत्रकारે
એજ વાત સૂચિત કરી છે. ॥સૂ० ૧૧૮॥

इत्थं नैगमव्यवहारसम्मतानौपनिधिकीं क्षेत्रानुपूर्वीमुक्त्वा सम्प्रति संग्रहनय-
संमतानौपनिधिकीं क्षेत्रानुपूर्वीमाह—

मूलम्—से किं तं संगहस्स अणोवणिहिया खेत्ताणुपुव्वी ?
संगहस्स अणोवणिहिया खेत्ताणुपुव्वी पंचविहा पणत्ता, तं जहा
अत्थपयपरूवणया१, भंगसमुक्कित्तणया२, भंगोवदंसणया३, समो-
यारे४, अणुगमे५। से किं तं संगहस्स अत्थपयपरूवणया?,
संगहस्स अत्थपयपरूवणया—तिप्पएसोगाढे आणुपुव्वी, चउप्पए-
सोगाढे आणुपुव्वी, जाव दसपएसोगाढे आणुपुव्वी, संखिज्ज-
पएसोगाढे आणुपुव्वी, असंखिज्जपएसोगाढे आणुपुव्वी,
एगपएसोगाढे अणाणुपुव्वी, दुप्पएसोगाढे अवत्तव्वए। से तं
संगहस्स अत्थपयपरूवणया। एयाए णं संगहस्स अत्थपयपरूव-
णयाए किं पओयणं?, संगहस्स अत्थपयपरूवणयाए संगहस्स
भंगसमुक्कित्तणया कज्जइ। से किं तं संगहस्स भंगसमुक्कित्त-
णया?, संगहस्स भंगसमुक्कित्तणया अत्थि आणुपुव्वी, अत्थि
अणाणुपुव्वी अत्थि अवत्तव्वए। अहवा अत्थि आणुपुव्वी
अणाणुपुव्वी य, एवं जहा दव्वाणुपुव्वीए संगहस्स तहा भाणि-
यव्वं जाव से तं संगहस्स भंगसमुक्कित्तणया। एयाए णं संग-
हस्स भंगसमुक्कित्तणयाए किं पओयणं? एयाए णं संगहस्स
भंगसमुक्कित्तणयाए संगहस्स भंगोवदंसणया कज्जइ। से किं
तं संगहस्स भंगोवदंसणया?, संगहस्स भंगोवदंसणया—तिप्पए-
सोगाढे आणुपुव्वी, एगपएसोगाढे अणाणुपुव्वी, दुप्पएसोगाढे
अवत्तव्वए। अहवा तिप्पएसोगाढे य एगपएसोगाढे य आणु-

પુઘ્વી ય અણાણુપુઘ્વી ય, એવં જહા દઘ્વાણુપુઘ્વીણ સંગહસ્સ તહા છેત્તાણુપુઘ્વીણ વિ ભાણિયઘ્વં જાવ સે તં સંગહસ્સ મંગો-વદંસણયા । સે કિં તં સમોયારે ? સમોયારે—સંગહસ્સ આણુ-પુઘ્વીદઘ્વાઈં કહિં સમોયરંતિ ? કિં આણુપુઘ્વીદઘ્વેહિં સમોય-રંતિ ? અણાણુપુઘ્વીદઘ્વેહિં ? અવત્તઘ્વગદઘ્વેહિં ? તિણિણવિ સટ્ટાણે સમોયરંતિ । સે તં સમોયારે । સે કિં તં અણુગમે ? અણુ-ગમે અટ્ટઘ્વિહે પપ્પજ્જે, તં જહા—સંતપ્પપરૂવણયા જાવ અપ્પા-વહું નત્થિ । સંગહસ્સ આણુપુઘ્વીદઘ્વાઈં કિં અત્થિ ણત્થિ ? ણિયમા અત્થિ । એવં તિણિણ વિ । સેસગદારાઈં જહા દઘ્વાણુ-પુઘ્વીણ સંગહસ્સ તહાં છેત્તાણુપુઘ્વીણ વિ ભાણિયઘ્વાઈં જાવ સે તં અણુગમે । સે તં સંગહસ્સ અણોવણિહિયા છેત્તાણુપુઘ્વી । સે તં અણોવણિહિયા છેત્તાણુપુઘ્વી ॥સૂ૦ ૧૧૯॥

છારા—અથ કા સા સંગ્રહસ્ય અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ? સંગ્રહસ્ય અનૌપ-નિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી પશ્ચવિધા પ્રજ્ઞા, તથા—અર્થપદમરૂપણતા ૧, મંગસમુત્કીર્ત-

હસ પ્રકાર નૈગમવ્યવહારનયસંમત અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કા કથન કરકે અથ સૂત્રકાર સંગ્રહનય માન્ય અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કા કથન કરતે હૈં— સે કિં તં ઇત્યાદિ-

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સંગહસ્સ અણોવણિહિયા છેત્તાણુપુઘ્વી ?)

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! પૂર્વપ્રકાન્ત પહિણે પ્રારંભ કી હુઈ હસ સંગ્રહનય માન્ય અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

આ પ્રકારે નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું નિરૂ-પણ કરીને હવે સૂત્રકાર સંગ્રહનયસંમત અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું નિરૂપણ કરે છે—“ સે કિં તં ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સંગહસ્સ અણોવણિહિયા છેત્તાણુપુઘ્વી ?) હે ભગવન્ ! પૂર્વપ્રકાન્ત—પહેલાં જેના પ્રારંભ થઇ ચુકયો છે એવી—સંગ્રહનયસંમત અનૌ-પનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ દેવું છે ?

નતાર, મંગોપદર્શનતાર, સમવતાર:૪, અનુગમ: ૫ । અથ કા સા સંગ્રહસ્ય અર્થપદ-
પ્રરૂપણતા ? સંગ્રહસ્ય અર્થપદપ્રરૂપણતા-ત્રિપ્રદેશાવગાઢ આનુપૂર્વી, ચતુષ્પ્રદેશાવગાઢ-
આનુપૂર્વી, યાવદ્ દશપ્રદેશાવગાઢ આનુપૂર્વી, સંખ્યેયપ્રદેશાવગાઢ આનુપૂર્વી,

ઉત્તર-(સંગ્રહસ્સ અળોવણિહિયા લેત્તાણુપુવ્વી પંચવિહા પળ્ણસા) સંગ્રહનયમાન્ય અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી પાંચ પ્રકાર કી કહી ગઈ છે । (તં જહા) ઉસકે લે પ્રકાર લે હૈં-(અત્થપયપરૂવળયા) ૧ અર્થપદપ્રરૂપ-
ણતા (મંગસમુક્ષિત્તળયા) ૨ મંગસમુત્કીર્તનતા (મંગોવદંસળયા) ૩
મંગોપદર્શનતા (સમોયારે) ૪ સમવતાર (અળુગમે) ઓર અનુગમ ।

પ્રશ્ન-(સે કિં તં સંગ્રહસ્સ અત્થપયપરૂવળયા) સંગ્રહનય માન્ય અર્થ-
પદપ્રરૂપણતા કયા હૈ ?

ઉત્તર (સંગ્રહસ્સ અત્થપયપરૂવળયા) સંગ્રહનયમાન્ય અર્થપદપ્રરૂપણતા
હસ પ્રકાર સે હૈ-(તિપ્પણ્ણસોગાઢે આણુપુવ્વી) ત્રીન પ્રદેશ મેં અવગાઢ-
સ્થિત-ત્ર્યણુક આદિ દ્રવ્ય આનુપૂર્વી હૈ (ચત્તપ્પણ્ણસોગાઢે આણુપુવ્વી)
ચાર પ્રદેશો મેં અવગાઢ ચતુરણુક આદિ આનુપૂર્વી હૈ-

(જાવ દસપણ્ણસોગાઢે આણુપુવ્વી) યાવત્ દશપ્રદેશાવગાઢ દ્રવ્ય
આનુપૂર્વી હૈ (સંલ્લિજ્જપણ્ણસોગાઢે આણુપુવ્વી) સંખ્યાત પ્રદેશાવગાઢ
દ્રવ્ય આનુપૂર્વી હૈ । (અસંલ્લિજ્જપણ્ણસોગાઢે આણુપુવ્વી) અસંખ્યાત પ્રદે-

ઉત્તર-(સંગ્રહસ્સ અળોવણિહિયા લેત્તાણુપુવ્વી પંચવિહા પળ્ણસા) સંગ્રહનય-
સંમત અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી પાંચ પ્રકારની કહી છે. (તંજહા) તે પ્રકારો
નીચે પ્રમાણે છે-(અત્થપયપરૂવળયા) (૧) અર્થપદપ્રરૂપણતા, (મંગસમુક્ષિત્તળયા)
(૨) મંગસમુત્કીર્તનતા, (મંગોવદંસળયા) (૩) મંગોપદર્શનતા, (સમોયારે)
(૪) સમવતાર અને (અળુગમે) (૫) અનુગમ.

પ્રશ્ન-(સંગ્રહસ્સ અત્થપયપરૂવળયા ?) સંગ્રહનયમાન્ય અર્થપદપ્રરૂપણતાનું
સ્વરૂપ કેલું છે ?

ઉત્તર-(સંગ્રહસ્સ અત્થપયપરૂવળયા) સંગ્રહનયમાન્ય અર્થપદપ્રરૂપણતા આ
પ્રકારની છે-(તિપ્પણ્ણસોગાઢે આણુપુવ્વી) ત્રણ પ્રદેશોમાં અવગાઢ (રહેલું) ત્રણ
અણુવાળું દ્રવ્ય આનુપૂર્વી રૂપ છે, (ચત્તપ્પણ્ણસોગાઢે આણુપુવ્વી) ચાર પ્રદેશોમાં
અવગાઢ ચાર અણુવાળું દ્રવ્ય પણ આનુપૂર્વી છે, (જાવ દસપણ્ણસોગાઢે આણુ-
પુવ્વી) દશ પર્યંતના પ્રદેશોમાં અવગાઢ દ્રવ્ય આનુપૂર્વી છે, (સંલ્લિજ્જપણ્ણ-
સોગાઢે આણુપુવ્વી) સંખ્યાત પ્રદેશોમાં અવગાઢ દ્રવ્ય આનુપૂર્વી છે, (અસ-
લ્લિજ્જપણ્ણસોગાઢે આણુપુવ્વી) અને અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં અવગાઢ દ્રવ્ય પણ

અસંખ્યેયપ્રદેશાવગાદ આનુપૂર્વી, એકપ્રદેશાવગાદ અનાનુપૂર્વી, પ્રદેશાવગાદઃ
અવક્તવ્યકમ્ । સૈવા સંગ્રહસ્ય અર્થપદમરૂપણતા । એતસ્યાઃ સ્વલુ સંગ્રહસ્ય અર્થ-
પ્રરૂપણતાયાઃ કિં પ્રયોજનમ્ ? સંગ્રહસ્ય અર્થપ્રરૂપણતાયા સંગ્રહસ્ય ભંગસમુત્કીર્તનતા
ક્રિયતે । કોઽસૌ સંગ્રહસ્ય ભંગસમુત્કીર્તનતા ? ભંગસમુત્કીર્તનતા અસ્તિ આનુપૂર્વી,
અસ્તિ અનાનુપૂર્વી, અસ્તિ અવક્તવ્યકમ્ । અથશ્ચ અસ્તિ આનુપૂર્વી ચ અનાનુપૂર્વી ચ ।

શાવગાદ દ્રવ્ય આનુપૂર્વી હૈ । (એગપ્પસોગાદે અણાણુપુઁવી) એક પ્રદેશાવ-
ગાદ દ્રવ્ય અનાનુપૂર્વી હૈ । (દુપ્પપ્પસોગાદે અવત્તવ્વપ્પ) દો પ્રદેશાવગાદ
દ્રવ્ય અવક્તવ્યક હૈ । (સે તં સંગહસ્સ અત્થપપ્પરૂવણયા) હસ પ્રકાર-
યહ સંગ્રહનય માન્ય અર્થપદમરૂપણતા હૈ । (એયાએણં સંગહસ્સ અત્થપપ્પ-
રૂવણયાએ કિં પઓયણં) હસ સંગ્રહનયમાન્ય અર્થપદમરૂપણતા સે
કયા પ્રયોજન સિદ્ધ હોતા હૈ ? (સંગહસ્સ અત્થપપ્પરૂવણયાએ સંગહસ્સ
ભંગસમુક્કિત્તણયા કજ્જઈ)

ઉત્તર-હસ સંગ્રહનયમાન્ય અર્થપદમરૂપણતા સે સંગ્રહનયમાન્ય ભંગ-
સમુત્કીર્તનતા કી જાતી હૈ । યહી હસકા પ્રયોજન હૈ (સે કિં તં સંગહ-
સ્સ ભંગસમુક્કિત્તણયા) હે ભદન્ત ! સંગ્રહનય માન્ય યહ ભંગસમુત્કીર્ત-
નતા કયા હૈ ? (સંગહસ્સ ભંગસમુક્કિત્તણયા અત્થિ આણુપુઁવી અત્થિ અણા-
ણુપુઁવી અત્થિ અવત્તવ્વપ્પ) સંગ્રહનય માન્ય ભંગસમુત્કીર્તનતા એસી હૈ કિ
આનુપૂર્વી હૈ અનાનુપૂર્વી હૈ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય હૈ । (અહવા અત્થિ આણુ

આનુપૂર્વી છે. (એગપ્પસોગાદે અણાણુપુઁવી) એક પ્રદેશમાં અવગાદ દ્રવ્ય અના-
નુપૂર્વી રૂપ છે, (દુપ્પપ્પસોગાદે અવત્તવ્વપ્પ) બે પ્રદેશોમાં અવગાદ દ્રવ્ય અવ-
ક્તવ્યક છે. (સે તં સંગહસ્સ અત્થપપ્પરૂવણયા) સંગ્રહનયમાન્ય અર્થપદમરૂપણ-
તાનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે.

પ્રશ્ન-(એયાએણં સંગહસ્સ અત્થપપ્પરૂવણયાએ કિં પઓયણં?) આ સંગ્રહનય-
માન્ય અર્થપદમરૂપણતા વડે કયા પ્રયોજનની સિદ્ધિ થાય છે ?

ઉત્તર-(સંગહસ્સ અત્થપપ્પરૂવણયાએ સંગહસ્સ ભંગસમુક્કિત્તણયા કજ્જઈ)
આ સંગ્રહનયસંમત અર્થપદમરૂપણતા દ્વારા સંગ્રહનયમાન્ય ભંગસમુત્કીર્ત-
નતા કરવામાં આવે છે. એટલું જ તેનું પ્રયોજન છે.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં સંગહસ્સ ભંગસમુક્કિત્તણયા ?) હે ભદવન્ ! સંગ્રહનયસં-
મત તે ભંગસમુત્કીર્તનતાનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(સંગહસ્સ ભંગસમુક્કિત્તણયા અત્થિ આણુપુઁવી, અત્થિ અણાણુપુઁવી
અત્થિ અવત્તવ્વપ્પ) સંગ્રહનયસંમત ભંગસમુત્કીર્તનતા આ પ્રકારની છે-આનુ-
પૂર્વી છે, અનાનુપૂર્વી છે અને અવક્તવ્યક દ્રવ્ય છે. (અહવા અત્થિ આણુપુઁવી,

एवं यथा द्रव्याणुपूर्व्याः संग्रहस्य तथा भणितव्यं यावत् सैषा संग्रहस्य भङ्गसमुत्कीर्तनता । एतस्याः खलु संग्रहस्य भङ्गसमुत्कीर्तनतायाः किं प्रयोजनम् ? एतया खलु संग्रहस्य भङ्गसमुत्कीर्तनतया संग्रहस्य भङ्गोपदर्शनता क्रियते । अथ काऽसौ संग्रहस्य भङ्गोपदर्शनता ? संग्रहस्य भङ्गोपदर्शनता-त्रिप्रदेशावगाढः

पुन्वी, अणाणुपुन्वीय एवं जहा दब्बाणुपुन्वीए संग्रहस्स तहा भाणियव्वं जाव से तं संग्रहस्स भंगसमुत्कीर्तणया) अथवा-आनुपूर्वी है अनानुपूर्वी है इस प्रकार जिस रीति से द्रव्याणुपूर्वी के प्रकरण में संग्रहनय मान्य भंगसमुत्कीर्तनता का स्वरूप कहा गया है, उसी प्रकार से इस क्षेत्रानुपूर्वी में भी संग्रहनयमान्य भंगसमुत्कीर्तनता का स्वरूप जानना चाहिये । यह स्वरूप कथन का संग्रह “से तं संग्रहस्स भंगसमुत्कीर्तणया” इसपाठ तक करना चाहिये । (एयाएणं संग्रहस्स भंगसमुत्कीर्तणयाए किं पओयणं ? कज्जइ) इस संग्रहनय मान्य भंगसमुत्कीर्तनता की क्या प्रयोजन है ?

उत्तर—(एयाएणं संग्रहस्स भंगसमुत्कीर्तणयाए संग्रहस्स भंगो वदंसणया कज्जइ) इस संग्रहनय मान्य भंगसमुत्कीर्तनता से संग्रहनय मान्य भंगोपदर्शनता की जाती है । (से किं तं संग्रहस्स भंगोवदंसणया ?) हे भदन्त ! संग्रहनय मान्य वह भंगोपदर्शनता क्या है ?

अणाणुपुन्वी य, एवं जहा दब्बाणुपुन्वीए संग्रहस्स तहा भाणियव्वं जाव से तं संग्रहस्स भंगसमुत्कीर्तणया) अथवा “आनुपूर्वी” छे, अनानुपूर्वी छे” इत्यादि जे प्रकारतुं कथन द्रव्याणुपूर्वीना प्रकारतुं संग्रहनयसंभत भंगसमुत्कीर्तनता विषयभां करवाभां आणुं छे जेज प्रकारतुं कथन आ क्षेत्रानुपूर्वीभां पणु संग्रहनयमान्य भंगसमुत्कीर्तनताना विषयभां पणु समजपुं जेधये आ कथन “से तं संग्रहस्स भंगसमुत्कीर्तणया” आ सूत्रपाठ पर्यन्त करपुं जेधये.

प्रश्न—(एयाएणं संग्रहस्स भंगसमुत्कीर्तणयाए किं पओयणं ?) आ संग्रहनयमान्य भंगसमुत्कीर्तनतानुं प्रयोजन शुं छे ?

उत्तर—(एयाएणं संग्रहस्स भंगसमुत्कीर्तणयाए संग्रहस्स भंगोवदंसणया कज्जइ) आ संग्रहनयमान्य भंगसमुत्कीर्तनता वडे संग्रहनयमान्य भंगोपदर्शनता करवाभां आवे छे.

प्रश्न—(से किं तं संग्रहस्स भंगोवदंसणया ?) छे भगवन् ! संग्रहनयसंभत से भंगोपदर्शनतानुं स्वरूप केवुं छे ?

આનુપૂર્વી, એકપદેશાવગાઢઃ આનુપૂર્વી દ્વિપદેશાવગાઢઃ અવક્તવ્યકમ્ ।
 અથવા—ત્રિપદેશાવગાઢશ્ચ એકપદેશાવગાઢશ્ચ આનુપૂર્વી ચ અનાનુપૂર્વી
 ચ, એવં યથા દ્રવ્યાનુપૂર્વ્યાં સંગ્રહસ્ય તથા ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યામપિ મણિતવ્યં
 યાવત્ સૈષા સંગ્રહસ્ય મજ્જોપદર્શનતા । અથ કોઽસૌ સમવતારઃ ? સમવતારઃ—
 સંગ્રહસ્ય આનુપૂર્વી દ્રવ્યાણિ કુત્ર સમવતરન્તિ ? કિમાનુપૂર્વી દ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ ?
 અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યેષુ ? અવક્તવ્યકદ્રવ્યેષુ ? ત્રીણ્યપિ સ્વસ્થાને સમવતરન્તિ, સોઽસૌ
 સમવતારઃ । અથ કોઽસાવનુગમઃ ? અનુગમઃ અષ્ટવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તદ્યથા—યાવત્
 અલ્પબહુત્વં નાસ્તિ । સંગ્રહસ્ય આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કિં સન્તિ ન સન્તિ ? નિયમાત્
 સન્તિ । એવં ત્રીણ્યપિ । શેષકદ્વારાણિ યથા દ્રવ્યાનુપૂર્વ્યાં સંગ્રહસ્ય તથા ક્ષેત્રાનુ-
 પૂર્વ્યામપિ મણિતવ્યાનિ યાવત્ સ ઈષોઽનુગમઃ । સૈષા સંગ્રહસ્ય અનોપનિધિકી
 ક્ષેત્રાનુપૂર્વી । સૈષા અનોપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ॥ સૂ૦ ૧૧૯ ॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि । संग्रहनयाभिमत द्रव्यानुपूर्वीवदेव प्राय इदमपि
 सूत्रम् । अतो व्याख्यातमायमेव, अस्य व्याख्या चतुर्नवतितमसूत्रादारभ्य सप्त-
 नवतिपर्यन्तसूत्रे विलोकनीया ॥ सू० ११९ ॥

इत्थमनौपनिधिकीं क्षेत्रानुपूर्वीमभिधाय सम्प्रत्यौपनिधिकीं क्षेत्रानुपूर्वीमाह—

मूलम्—से किं तं ओवणिहिया खेत्ताणुपुव्वी ? ओवणिहिया
 खेत्ताणुपुव्वी तिविहा पणत्ता, तं जहा, पुव्वाणुपुव्वी, पच्छाणु-
 पुव्वी, अणाणुपुव्वी । से किं तं पुव्वानुपुव्वी ? पुव्वाणुपुव्वी—
 अहोलोए तिरियलोए उड्डलोए । से तं पुव्वाणुपुव्वी । से किं तं

उत्तर—(संग्रहस्स भंगोवदंसणया) संग्रहनय मान्य भंगोपदर्श-
 नताइस प्रकार से है—(तिप्पएसोगाढे आणुपुव्वी) त्रिपदेषावगाढ आनु-
 पूर्वी इत्यादि आगेके समस्त पदों का अर्थ संग्रहनय मान्य द्रव्यानुपूर्वी
 में कथित भंगसमुत्कीर्तनता आदि के सूत्रों की व्याख्या के अनुसार ही
 है । इसलिये इनमें पदों की व्याख्या के लिये पिछे ९४ वे सूत्र से लेकर
 ९७ वे तक के सूत्रों को देखना चाहिये ॥ सू० ११९ ॥

ઉત્તર—(સંગ્રહસ્સ ભંગોવદંસણયા) સંગ્રહનયમાન્ય ભંગોપદર્શનતાનું
 સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—

(તિપ્પસોગાઢે આણુપુવ્વો) ત્રિપદેશાવગાઢ આનુપૂર્વી ઇત્યાદિ પૂર્વોક્ત
 સમસ્ત પદોનો અર્થ સંગ્રહનયમાન્ય દ્રવ્યાનુપૂર્વીના પ્રકરણમાં કહેવામાં
 આવેલ ભંગસમુત્કીર્તનતા આદિના સૂત્રોની વ્યાખ્યા પ્રમાણે જ છે. તેથી
 તેમાં જે પદો આવે છે તેમની વ્યાખ્યા જાણવા માટે ૯૪ થી ૯૭ સુધીના
 સૂત્રો વાંચી જવાની ભલામણ કરવામાં આવે છે. ॥સૂ૦ ૧૧૯॥

પચ્છાણુપુન્વી? પચ્છાણુપુન્વી ઉઢ્હુલોષ તિરિયલોષ અહોલોષ ।
સે તં પચ્છાણુપુન્વી । સે કિં તં અણાણુપુન્વી? અણાણુપુન્વી
ણ્યાણ ચેવ ણ્ણાઙ્યાણ ણ્ણુત્તરિયાણ તિગચ્છગ્યાણ સેઢીણ
અન્નમન્નન્નાસો દુરૂવૂળો । સે તં અણાણુપુન્વી ॥સૂ૦ ૧૨૦॥

છાયા—અથ કા સા ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી? ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી
ત્રિવિધા પ્રજ્ઞા, તથા—પૂર્વાનુપૂર્વી, પશ્ચાનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી । અથ કા સા પૂર્વાનુ-
પૂર્વી? પૂર્વાનુપૂર્વી—અધોલોકઃ, તિર્યગ્લોકઃ, ઊર્ધ્વલોકઃ । સૈવા પૂર્વાનુપૂર્વી । અથ કા

હસ પ્રકાર અનૌપનિધિ કી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કા કથન કરકે અથ સૂત્ર-
કાર ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કા કથન કરતે હૈં—

“સે કિં તં ઓવણિહિયા” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ઓવણિહિયા લેક્ષણુપુન્વી?) હે ભદ્રન્ત !
સંપ્રહનય માન્ય ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈં?—

ઉત્તર—(ઓવણિહિયા લેક્ષણુપુન્વી તિવિહા પળ્ણત્તા) ઔપનિધિકી
ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ત્રીન પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈં—(તં જહો) વે ઉસકે પ્રકાર વે
હૈં—(પુન્વાણુપુન્વી, પચ્છાણુપુન્વી અણાણુપુન્વી) ૧ પૂર્વાનુપૂર્વી ૨ પશ્ચાનુ-
પૂર્વી (૩) અનાનુપૂર્વી (સે કિં તં પુન્વાણુપુન્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી કયા હૈં ?

ઉત્તર—(પુન્વાણુપુન્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી હસ પ્રકાર સે હૈં—(અહો લોષ,
તિરિયલોષ, ઉઢ્હુલોષ) અધોલોક તિર્યગ્લોક ઊર્ધ્વલોક । (સે તં પુન્વાણુ-
પુન્વી) યહ પૂર્વાનુપૂર્વી હૈં । (સે કિં તં પચ્છાણુપુન્વી) પચ્છાણુપૂર્વી કયા હૈં ?

આ પ્રમાણે અનૌપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું કથન કરીને હવે સૂત્રકાર
ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું કથન કરે છે—“સે કિં તં ઓવણિહિયા” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ઓવણિહિયા લેક્ષણુપુન્વી?) હે ભગવન્ ! સંપ્રહ-
નયમાન્ય ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ઓવણિહિયા લેક્ષણુપુન્વી તિવિહા પળ્ણત્તા) ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુ-
પૂર્વી ત્રણ પ્રકારની કહી છે. (તંજહો) તે પ્રમાણે નીચે પ્રમાણે છે—(પુન્વાણુ-
પુન્વી, પચ્છાણુપુન્વી, અણાણુપુન્વી) (૧) પૂર્વાનુપૂર્વી, (૨) પશ્ચાનુપૂર્વી (૩) અનાનુપૂર્વી.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પુન્વાણુપુન્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી એટલે શું ?

ઉત્તર—(પુન્વાણુપુન્વી) પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—(અહોલોષ,
તિરિયલોષ, ઉઢ્હુલોષ) અધોલોક, તિર્યગ્લોક અને ઊર્ધ્વલોક, (સે તં પુન્વાણુપુન્વી)
આ કમે કહેવું તેનું નામ પૂર્વાનુપૂર્વી છે.

આ પશ્ચાનુપૂર્વી-પશ્ચાનુપૂર્વી ઉર્ધ્વલોકઃ, તિર્યગ્લોકઃ, અધોલોકઃ। સૈષા પશ્ચાનુપૂર્વી।
અજ મા મા અન નુપૂર્વી? અનાનુપૂર્વી-एतस्यायेव एकादिकायामेकोत्तरिकायां
विनच्छगतामं श्रेण्यामन्योन्याभ्यासो द्विरुपन्यूनः। सैषा अनानुपूर्वी ॥ सू० १२०॥

टीका—‘સે કિં તં’ इत्यादि। व्याख्याकृतमाया। उर्ध्वलोकादि लोकत्रय-
विषये किंचिदुच्यते—औपनिधिकी द्रव्यानुपूर्वीप्रस्तावे द्रव्यानुपूर्व्यधिकाराद् धर्मा-

उत्तर—(पञ्चाणुपुर्वी) पश्चानुपूर्वी हसप्रकार से है—उड्डोए तिरि-
यलोए अहोलोए) उर्ध्वलोक, तिर्यग्लोक, अधोलोक, (से तं पञ्चा-
णुपुर्वी) यह पश्चानुपूर्वी है। (से किं तं अणाणुपुर्वी) अनानुपूर्वी क्या है?

(अणाणुपुर्वी) अनानुपूर्वी हस प्रकार से हैं। (एगाएचेव एगइयाए एगु
त्तरियाए तिगच्छगयाए सेढीए अणमणवभासो दुरुवणो—से तं अणा-
णुपुर्वी) जिसमें पूर्वानुपूर्वी और पश्चानुपूर्वी ये दोनों नहीं हैं उसका नाम
अनानुपूर्वी है इसमें विवक्षित अधोलोक आदि क्रमद्वय को उल्लंघनकरके
परस्पर संलवित भंगों से उन पदों की विरचना की जाती है। इस अनानु-
पूर्वी में जो श्रेणी स्थापित की जाती है, उसमें रुब से पहिले १ एक संख्या
स्थापित की जाती है—बाद में एक २ की उत्तरोत्तर वृद्धि तीन संख्या
तक होती चली जाती है। फिर इनमें परस्पर में गुणा किया जाता है।
इन प्रकार अन्योन्याभ्यस्त राशि बन जाती है। इसमें से आदि अंत के

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પંચાણુપુર્વી) પશ્ચાનુપૂર્વી કેને કહે છે?

ઉત્તર—(પંચાણુપુર્વી) પશ્ચાનુપૂર્વી આ પ્રકારની હોય છે—(ઉડ્ડોએ, તિરિ-
યલોએ, અહોહોએ) ઉર્ધ્વલોક, તિર્યગ્લોક અને અધોલોક, આ પ્રમાણે ઊલટા
ક્રમે કહેતું (સે તં પંચાણુપુર્વી?) તેનું નામ, પશ્ચાનુપૂર્વી છે.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં અણાણુપુર્વી) અનાનુપૂર્વી એટલે શું?

ઉત્તર—(અણાણુપુર્વી) અનાનુપૂર્વી આ પ્રકારની હોય છે—(એગાએ ચેવ
એગાઇયાએ એગુત્તરિયાએ તિગચ્છગયાએ સેઢીએ અણમણવભાસો દુરુવૂણો—સે તં અણા-
ણુપુર્વી) જેમાં પૂર્વાનુપૂર્વી અને પશ્ચાનુપૂર્વી એ બન્નેનો અભાવ હોય છે,
એવા ક્રમપૂર્વક કથન કરતું તેનું નામ અનાનુપૂર્વી છે. તેમાં ઉપર્યુક્ત બન્ને
ક્રમનું ઉલ્લંઘન કરીને પરસ્પરની સાથે સંલવિત ભંગો (ભાંગાઓ) વડે તે
પદોની વિરચના કરવામાં આવે છે. આ અનાનુપૂર્વીમાં જે શ્રેણી સ્થાપિત
કરવામાં આવે છે, ત્યાર બાદ ત્રણ સંખ્યા સુધી ઉત્તરોત્તર એક એક
સંખ્યાની વૃદ્ધિ થતી રહે છે. ત્યાર બાદ તેમનો પરસ્પરમાં ગુણાકાર કરાય છે.
આ પ્રકારે અન્યોન્ય અભ્યસ્ત રાશિ બની જાય છે તેમાંથી આદિ અને

સ્તિકાયાદીનિ દ્રવ્યાણિ પૂર્વાનુપૂર્વાદિત્વેન ૯૮ અપ્પન્નતિ રૂપે ઉદાહરતાનિ
અત્ર તુ ક્ષેત્રાનુપૂર્વાઃ પ્રસ્તાવાત્ અધોલોકાદયઃ પૂર્વાનુપૂર્વાદિત્વેનોક્તાઃ । અધો-
લોકાદિવિભાગાસ્તુ-ઊર્ધ્વાધશ્ચતુર્દશરજ્જ્વાયતસ્ય અનિયતવિસ્તારસ્ય યજ્ઞસ્તિ-

દો ભંગ કમ કર ને પર અનાનુપૂર્વી બન જાતી હૈ । યહી અનાનુપૂર્વી હૈ ।
इस सूत्र की व्याख्या के लिये ९८ वां सूत्र देखो । ऊर्ध्वलोक आदि जो
तीन लोक हैं, उनके विषय में यहां कुछ-कहा जाना है ।-औपनिषि-
द्रव्यानुपूर्वी के प्रकरण में द्रव्यानुपूर्वी का अधिकार होने से वहां धर्मा-
स्तिकाय आदि द्रव्यों को पूर्वानुपूर्वी आदिरूप से उदाहृत किया गया
है । परन्तु यहां क्षेत्रानुपूर्वी का प्रकरण चल रहा है इसलिये अधोलोक
आदि पूर्वानुपूर्वी आदि रूप से उदाहृत हुए हैं । लोक के ये जो ऊर्ध्व-
लोक अधोलोक आदि तीन विभाग किये गये हैं लो उसका कारण
यह है कि मध्यलोक के बीचोंबीच मेरु पर्वत है । इसके नीचे का भाग
अधोलोक और ऊपर का भाग ऊर्ध्वलोक है । तथा बराबर देखा में
तिरछा फैला हुआ मध्यलोक है । मध्यलोक का तिरछा विस्तार अधिक
है इसलिये इसे तिर्यग्लोक भी कहते हैं । लोक ऊपर से नीचे मरु-
लंबाई में १४ राजू है । विस्तार इसका अनियत है । यह पांच अस्ति-

અનંતના બે ભાગો આછાં કરી નાખવાથી અનાનુપૂર્વી બની જાય છે. અના-
નુપૂર્વીનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે. આ સૂત્રની વ્યાખ્યા સમજવા માટે ૯૮મું
સૂત્ર વાંચી જવું.

ઉર્ધ્વલોક આદિ બે ત્રણ લોક છે તેમના વિષે હવે અહીં થોડું
કથન કરવામાં આવે છે-

औपनिषिकी द्रव्यानुपूर्वीना प्रकरणमां द्रव्यानुपूर्वीना अधिकार हेतवाशी
त्यां धर्मोस्तिकाय आदि द्रव्येषु पूर्वानुपूर्वी आदि इपे कथन करवाभां आबु-
हतुं. परन्तु अही क्षेत्रानुपूर्वीना अधिकार यादी रह्यो छे तेथी आदी
अधोलोक आदि क्षेत्रानु पूर्वानुपूर्वी आदि इपे कथन करवाभां आबु छे. दोहना
ऊर्ध्वलोक अधोलोक (तिर्यग्लोक) आदि बें त्रण विभाग करवाभां आव्या छे तेनुं
कारणु अे छे के मध्यलोकनी वनसोपत्य मेरुपर्वत छे. तेनी नीचेना भाग
अधोलोक अने उपरना भागने ऊर्ध्वलोक कह्ये छे तथा मध्यलोक तेना
तिरछो फैलायेला मध्यलोक छे. मध्यलोकनो तिरछो विस्तार अधिक कह्ये
कारणु तेने तिर्यग्लोक पद्य कह्ये छे लोकनी उपरथी नीचे सुधीनी लम्बाई
१४ राजूप्रमाणु छे. अने तेनो विस्तार अनियत छे ते पांच अस्तिकायेथी

કાયમવસ્ય ત્રિધા પરિકલ્પનયા સમ્પદ્યન્તે । તત્રાસ્યાં રત્નપ્રમાયાં बहुसमभूभागे
मेरुमध्ये नभःप्रदेशद्वयेऽष्टप्रदेशो रुचकोऽस्ति । तस्य प्रतरद्वयस्य मध्ये एकस्मा-
दधस्तनप्रतरादारभ्याधोऽभिमुखं नव योजनशतानि परिहृत्य परतः सातिरेकसप्त-
रज्ज्वायतोऽधोलोकः । अथवा-अधः शब्दोऽशुभार्थकः तत्र च क्षेत्रप्रभावाद बाहु-
ल्येनाशुभएव द्रव्याणां परिणामो भवति । अशुभपरिणामिद्रव्यवत्त्वादेव स लोकः
अधोलोक इत्युच्यते । उक्तं च-

‘अहव अहोपरिणामो खेत्ताणुभावेण जेण ओसण्णं मायः ।

असुभो अहोत्ति भणिओ दव्वाणं तेणऽहोलोणो ॥”

छाया-अथवा अधः परिणामः क्षेत्रानुभावेन येनोत्सन्नम् ।

अशुभोऽध इति भणितो द्रव्याणां तेनाधोलोकः ॥ इति ॥

કાયોં સે વ્યાસ હૈ લોક કે અધઃ મધ્ય ઔર ઉર્ધ્વ હસ પ્રકાર સે યે
ત્રીન વિભાગ હૈં । હસ રત્નપ્રમા પૃથિવીપર વહુ સમભૂભાગવાલે મેરુ
પર્વત કે મધ્ય મેં આકાશ કે દોપ્રતરોં મેં અર્થાત્ દો દો પ્રદેશોં કે વર્ગ મેં
આઠ રુચક પ્રદેશ હૈં । ઉસ પ્રતરદ્વય મેં સે એક અધસ્તન પ્રતર સે લે
કર નીચે કી નૌ સૌ યોજન કી ગહરાઈ કો છોડકર ઉસકે આગેનીચે
કુછ અધિક સાત રાજૂ વિસ્તારવાલા અધોલોક હૈં । અથવા-અધઃ શબ્દ
અશુભ અર્થ કા વાચક હૈં । ઉસ અધોલોક મેં ક્ષેત્ર કે પ્રમાય સે અધિ-
કતર અશુભ હી દ્રવ્યોં કા પરિણામ હોતા હૈં । હસલિયે અશુભ પરિ-
ણામવાલે દ્રવ્યોં સે યુક્ત હોને સે કહા જાતા હૈં યહી વાત ઉક્તંચ કરકે
“અહવ અહો પરિણામો” રૂપ્યાદિ ગાથા દ્વારા નિર્દિષ્ટ કી ગઈ હૈં ।
તથા ઉસી પ્રકાર દ્રવ્યમેં સે એક ઉપરિતન પ્રતર સે લેકર ઝંચે નૌ સૌ

વ્યાસ છે. લોકના ત્રણ વિભાગ નીચે પ્રમાણે છે-(૧) અધઃ (૨) મધ્ય અને
(૩) ઉર્ધ્વ આ રત્નપ્રમા પૃથ્વી પર બહુસમભૂભાગવાળા મેરુ પર્વતના મધ્યમાં
આકાશના બે પ્રતરોમાં-એટલે કે બન્ને પ્રદેશોના વર્ગમાં આઠ રુચકપ્રદેશ
છે. તે બે પ્રતરમાંના એક અધસ્તન પ્રતરથી લઇને નીચે ૬૦૦ યોજનની
ઊંડાઇને પાર કરવાથી સાત રાજૂ કરતાં અધિક વિસ્તારવાળો અધોલોક આવે
છે અથવા ‘અધઃ’ પદ અશુભ અર્થનું વાચક છે. તે અધોલોકમાં ક્ષેત્રના
પ્રભાવને લીધે અધિકતર અશુભ દ્રવ્યપરિણામ જ હોય છે. આ રીતે અશુભ
પરિણામવાળાં દ્રવ્યોથી યુક્ત હોવાને કારણે તે લોકને અધોલોકને નામે
ઓળખવામાં આવે છે. એજ વાત સૂત્રકારે “અહવ અહો પરિણામો”
રૂપ્યાદિ ગાથા દ્વારા પ્રકટ કરી છે,

તથાચ-તસ્યૈવ રુચક્રપતરદ્વયસ્ય મધ્યે એકસ્માદુપરિતનપતરાદારમ્ગોર્ધ્વં નવ યોજન-
શ્ચતાનિ પરિહૃત્ય પરતઃ કિંચિન્ન્યૂનસપ્તરજ્જ્વાયતઊર્ધ્વલોકઃ । ઊર્ધ્વમ્-ઉપરિ-
વ્યવસ્થાપિતો લોકઃ ઊર્ધ્વલોકઃ । અથવા-ઊર્ધ્વશબ્દઃ શુભપર્યાયઃ । તત્ર ક્ષેત્રપ્રમા-
વાદ દ્રવ્યાણાં પ્રાયઃ શુભાણ્વ પરિણામા ભવન્તિ । અતઃ શુભપરિણામિ દ્રવ્યયો-
ગાદૂર્ધ્વઃ શુભો લોકઃ-

ઉક્તંચ-‘ ઉઢુંતિ ઉવરિ જંચિય સુમસ્વિત્તં સ્વેત્તઓ ય દવ્વગુણા ।

ઉપ્પજ્જંતિ સુમા વા તેણ તઓ ઉઢૂલોગોત્તિ ॥ ”

છાયા-ઊર્ધ્વમિતિ ઉપરિ યદેવ શુભં ક્ષેત્રં ક્ષેત્રતશ્ચ દ્રવ્યગુણાઃ ।

ઉત્પદ્યન્તે શુમા વા તેન સ ઊર્ધ્વલોક ઇતિ ॥ ઇતિ ।

તથાચ-પૂર્વોક્તયોરધોલોકોર્ધ્વલોકયોરન્તરાલેષ્ટાદશ યોજનશ્ચતાનિ તિર્યગ્લોકઃ ।
સમયપરિભાષયા તિર્યગ્ મધ્યે વ્યવસ્થિતો લોકઃ તિર્યગ્લોકઃ । અથવા-તિર્યક્ષબ્દો

યોજન છોઢકર ઝસકે આગેઝપર કુછ કમ સાત રાજૂ લંબા ઊર્ધ્વલોક
હૈ । ઝપર રહા હુઆ જો લોક હૈ ઝસકા નામ ઊર્ધ્વલોક હૈ । અથવા-
ઊર્ધ્વશબ્દ યહાં શુભ અર્થ કા વાચક હૈ । ઝસ ઊર્ધ્વલોક મેં ક્ષેત્ર કે
પ્રમાવ સે દ્રવ્યોં કે પરિણામ પ્રાયઃ શુભ હી હોતે હૈં હસલિયે શુભ
પરિણામવાલે દ્રવ્યોં કે સંવન્ધ સે શુભલોક કા નામ ઊર્ધ્વલોક હૈ ।
યહી બાત યહા ઉક્તંચ કરકે “ ઉઢુંતિ ઉવરિ ” ઇત્યાદિ ગાથા દ્વારા
પ્રકટ કી ગઈ હૈ । ઇન પૂર્વોક્ત અધોલોક ઔર ઊર્ધ્વલોક કે બીચ સે ૧૮
સૌ યોજન પ્રમાણવાલા તિર્યગ્લોક-મધ્યલોક હૈ । સિદ્ધાન્ત કી પરિ-
ભાષા કે અનુસાર યહાં તિર્યગ્ શબ્દ કા અર્થ મધ્ય હૈ । હસલિયે મધ્ય
મેં વ્યવસ્થિત હુઅ લોક કા નામ તિર્યગ્ મધ્ય-લોક હૈ । અથવા-તિર્યગ્

ઉપર જે જે પ્રતરની વાત કરી છે તેમાંના એક ઉપરિતન પ્રતરથી લઈને
૬૦૦ યોજન ઊંચે જવાથી સાત રાજૂ કરતાં સહેજ ઓછા વિસ્તારવાળો
ઉર્ધ્વલોક આવે છે. તે લોક ઊંચે આવેલો હોવાથી તેનું નામ ઉર્ધ્વલોક
છે. અથવા ‘ઉર્ધ્વ’ શબ્દ અહીં શુભ અર્થનો વાચક છે તે ઉર્ધ્વલોકમાં
ક્ષેત્રના પ્રમાવથી દ્રવ્યોનું પરિણામ સામાન્ય રીતે શુભ જ હોય છે આ
રીતે શુભ પરિણામવાળાં દ્રવ્યોથી યુક્ત હોવાને કારણે તે લોકનું નામ
ઉર્ધ્વલોક પડ્યું છે. એજ વાત સૂત્રકારે નીચેની ગાથા દ્વારા વ્યક્ત કરી છે-
“ઉઢુંતિ ઉવરિ” ઇત્યાદિ આ પૂર્વોક્ત અધોલોક અને ઉર્ધ્વલોકની વચ્ચે
૧૮ સૌ યોજનના પ્રમાણવાળો તિર્યગ્લોક-મધ્યલોક છે. સિદ્ધાન્તની પરિભાષા
પ્રમાણે અહીં ‘તિર્યગ્’ પદનો અર્થ ‘મધ્ય’ થાય છે. તેથી મધ્યમાં રહેલા
લોકનું નામ તિર્યગ્ (મધ્ય) લોક પડ્યું છે અથવા ‘તિર્યગ્’ આ પદ

મધ્યમપર્યાયઃ । તત્ર ચ ક્ષેત્રપ્રભાવાત્ પ્રાયો મધ્યમપરિણામવન્ત્યેવ દ્રવ્યાણિ સંજાયન્તે,
અતસ્તદ્યોગાત્ તિર્યક્-મધ્યમો લોકસ્તિર્યગ્લોકઃ । યદ્વાઽસ્ય લોકસ્ય ऊर्ध्वाधो-
ભાગાપેક્ષ્યા તિર્યગ્લોક એવ વિશાલતયા પ્રધાનમ્ । ‘પ્રાધાન્યેન વ્યપદેશા ભવન્તિ’ ।
ઇતિ ન્યાયમનુસૂત્યાયં લોકોઽપિ ‘તિર્યગ્લોકઃ’ ઇત્યુચ્યતે । ઉક્તંચ-

“મજ્જણુભાવં સ્વેતં જં તં તિરિયંતિ વ્યણપજ્જવઓ ।

મણ્ણઇ તિરિયં વિસાલં અતો વ તં તિરિયલોગોત્તિ ॥”

છાયા-મધ્યાનુભાવં ક્ષેત્રં યત્ તત્તિર્યગિતિ વચનપર્યવાત્ ।

મળ્યતે તિર્યગ્ વિશાલમતો વા સ તિર્યગ્લોક ઇતિ ॥ ઇતિ ।

અત્ર જયન્યપરિણામિ દ્રવ્યયોગાત્ જયન્યતયા ચતુર્દશગુણસ્થાનકેષુ મિધ્યાદૃષ્ટે-
રિવ આદાવેવ અધોલોકસ્યોપન્યાસઃ । તતો મધ્યમપરિણામિ દ્રવ્યયોગાન્મધ્યમત્વેન

શબ્દ યહાં મધ્યમ પર્યાય કા વાચક હૈ । ઇસ મધ્યલોક મેં ક્ષેત્ર કે પ્રભાવ સે પ્રાયઃ મધ્ય પરિણામવાલે હી દ્રવ્ય હોતે હૈ । ઇસલિયે હન મધ્યમ પરિણામવાલે દ્રવ્યોં કે સંયોગ સે તિર્યગ્-મધ્યમ-જો લોક હૈ ઉસકા નામ તિર્યગ્લોક હૈ । અથવા-ઇસ લોક મેં અપને ऊर्ध्व और अधो ભાગ કી અપેક્ષા સે તિર્યક્ લોક હી વિશાલ હૈ ઇસલિયે વિશાલતા કી અપેક્ષા વહી પ્રધાન હૈ । ઓર એસા ન્યાય હૈ કિ જો પ્રધાન હોતા હૈ ઉસી કે અનુસાર વ્યપદેશ-નામ ચલતા હૈ । ઇસલિયે ઇસ લોક કો તિર્યગ્ લોક ઇસ નામ સે કહ દિયા ગયા હૈ । ઉક્તંચ કરકે યહી વાત “મજ્જણુભાવં ઇત્યાદિ ગાથા દ્વારા સ્પષ્ટ કિયા ગયા હૈ । યહાં જો સૂત્ર મેં સર્વપ્રથમ અધો-લોક કા ઉપન્યાસ કિયા ગયા હૈ સો ઉસકા કારણ યહ હૈ કિ વહાંપર પ્રાયઃ જયન્ય પરિણામ વાલે દ્રવ્યોં કા હી સંબંધ રહા કરતા-હૈ । ઇસલિયે

મધ્યમપર્યાયનું વાચક છે આ મધ્યલોકમાં ક્ષેત્રના પ્રભાવથી સામાન્ય રીતે મધ્યમ પરિણામવાળાં દ્રવ્યો જ હોય છે. આ મધ્યમ પરિણામવાળાં દ્રવ્યોથી યુક્ત હોવાને કારણે તિર્યગ્-મધ્યમ જે લોક છે તેનું નામ તિર્યગ્લોક પડયું છે. અથવા આ લોકના ऊर्ध्व અને अधोભાગ કરતાં તિર્યગ્લોક જ વધારે વિશાળ છે તે કારણે તિર્યગ્લોકને જ મુખ્ય ગણી શકાય એવો નિયમ છે કે જે પ્રધાન હોય તેને નામે જ વ્યવહાર ચાલે છે. તેથી આ લોકને “તિર્યગ્લોક” આ પ્રકારનું નામ આપવામાં આવ્યું છે. સૂત્રકારે “મજ્જણુ ભાવં” ઇત્યાદિ ગાથા દ્વારા એજ વાત વ્યક્ત કરી છે.

અહીં સૂત્રકારે સૌથી પહેલાં अधोलोकનું કથન કર્યું છે, કારણ કે अधोलोकમાં સામાન્યતઃ જયન્ય પરિણામવાળાં દ્રવ્યોનો જ સદ્ભાવ રહે છે.

तिर्यग्लोकस्योपन्यासः। ततश्च उत्कृष्ट द्रव्यवत्त्वाद्ध्वलोकस्योपन्यासः, इति
पूर्वानुपूर्व्याः क्रमो बोध्यः। पश्चानुपूर्व्यां तु पूर्वानुपूर्व्या व्युत्क्रमो बोध्यः।
अनानुपूर्व्यां तु पदत्रयस्य पङ्क्तिर्भा भवन्ति, ते च पूर्वं दर्शिता एव। शेषभावना
त्विह प्राग्बदेव बोध्या ॥सू० १२०॥

सम्प्रति शिष्यबुद्धिवैशद्यार्थम् अधोलोक क्षेत्रानुपूर्व्यादि दर्शयितुमाह—

मूलम्—अहोलोअ खेत्ताणुपुव्वी तिविहा पणत्ता, तं जहा—
पुव्वाणुपुव्वी पच्छाणुपुव्वी अणाणुपुव्वी। से किं तं पुव्वाणुपुव्वी!
पुव्वाणुपुव्वी—रयणप्पभा सक्करप्पभा वालुअप्पभा पंकप्पभा
धूमप्पभा तमप्पभा तमतमप्पभा। से तं पुव्वाणुपुव्वी?
से किं तं पच्छाणुपुव्वी! पच्छाणुपुव्वी—तमतमा जाव

जिस प्रकार चौदह गुण स्थानों में जघन्य होने से मिथ्यादृष्टि गुणस्थान
का सर्व प्रथम उपन्यास करने में आया है इसीप्रकार यहांपर भी जघ-
न्य होने से अधोलोक का उपन्यास करने में आया है। तथा मध्यम
परिणाम वाले द्रव्यों के संबंध को लेकर मध्यम होने के कारण तिर्यग्
लोक का और उत्कृष्ट द्रव्यवाला होने के कारण ऊर्ध्वलोक का क्रमशः
उपन्यास किया गया है यह पूर्वानुपूर्वी का क्रम है। और जो पश्चानुपूर्वी
है उसमें पूर्वानुपूर्वी का व्युत्क्रम रहा करता है। तथा अनानुपूर्वी में इन
तीन पदों के ६ भंग होते हैं ये पहिले दिखला ही दिये गये हैं। शेष
भावना यहां पहिले की तरह ही जाननी चाहिये ॥ सू० १२०॥

जेवी रीते १४ शुष्मस्थानानुं वणुंन करती वणते जघन्य जेवां मिथ्यादृष्टि
शुष्मस्थानानुं वणुंन सौथी पडेलां करवांमां आवे छे, जेज प्रभावे जघन्य डोवाने
कारवे अधोलोकानुं वणुंन पणु सौथी पडेलां करवांमां आण्युं छे, मध्य परि-
णामवाणां द्रव्येथी युक्त डोवाने कारवे तिर्यग्लोकानुं उपन्यास (वणुंन) तयार भाद
करवांमां आण्ये छे, अने उत्कृष्ट द्रव्यपरिणामवाणा ऊर्ध्वलोकानुं उपन्यास (वणुंन)
तयार भाद करवांमां आण्ये छे, आ पूर्वानुपूर्वीनां क्रम छे पश्चानुपूर्वीमां
पूर्वानुपूर्वीं करतां उदटो क्रम रह्ये छे, तथा अनानुपूर्वीमां आ त्रय पडेला
६ लंग (विकल्पे) थाय छे, ते लंगे पडेला भतापवामां आण्ये छे
आधीनुं कथन पडेलांना कथन प्रभावे ज अहीं समजवुं जेछ्ये ॥सू० १२०॥

રયણપ્પમા । સે તં પચ્છાણુપુવ્વી । સે કિં તં અણાણુપુવ્વી ?
અણાણુપુવ્વી ઇયાણ ચેવ ઇગાઙ્યાંણ ઇગુત્તરિયાણ સત્તગચ્છગયાણ
સેઠીણ અન્નમન્નભાસો દુરૂવૂળો । સે તં અણાણુપુવ્વી ॥સૂ૦ ૧૨૧॥

છાયા—અધોલોક ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ત્રિવિધા મજ્જતા, તથા-પૂર્વાનુપૂર્વી, પશ્ચા-
નુપૂર્વી અનાનુપૂર્વી । અથ કા સા પૂર્વાનુપૂર્વી ? પૂર્વાનુપૂર્વી-રત્નપ્રમા શર્કરાપ્રમા
વાલુકાપ્રમા પંક્રપ્રમા ધૂમપ્રમા તમઃપ્રમા તમસ્તમઃપ્રમા । અથ કા સા પશ્ચાનુ-
પૂર્વી ? પશ્ચાનુપૂર્વી-તમસ્તમા યાવદ્ રત્નપ્રમા સૈવા પશ્ચાનુપૂર્વી । અથ કા સા અના-
નુપૂર્વી ? અનાનુપૂર્વી એતસ્યામેવ એકાદિકાયમેકોત્તરિકાયાં સપ્તગચ્છગતાયાં
શ્રેણ્યામ્ અન્યોઽન્યાભ્યાસો દ્વિરૂપોનઃ ॥સૂ૦ ૧૨૧॥

અવ સૂત્રકાર શિષ્યજનોં કી બુદ્ધિ કી વિશદતા કે નિમિત્ત અધોલોક
ક્ષેત્રાનુપૂર્વી આદિ કો દિશ્વ લાતે હૈં—‘અહોલોએ ચેત્તાણુપુવ્વી’ ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(અહોલોએ ચેત્તાણુપુવ્વી તિવિહા પળ્લતા) અધોલોક
ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ત્રીન પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ—(તંજહા) જૈસે (પુવ્વાણુપુવ્વી,
પચ્છાણુપુવ્વી, અણાણુપુવ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વી ઓર અનાનુપૂર્વી
(સે કિં તં પુવ્વાણુપુવ્વી) હે ભદન્ત ! પૂર્વાનુપૂર્વી કયા હૈ ?

ઉત્તર—(પુવ્વાણુપુવ્વી) અધોલોક પૂર્વાનુપૂર્વી ઇસ પ્રકાર હૈ—(રયણ-
પ્પમા, સક્કરપ્પમા, વાલુઅપ્પમા, પંકપ્રમા, ધૂમપ્પમા, તમપ્પમા,
તમ તમપ્પમા) રત્નપ્રમા, શર્કરાપ્રમા, વાલુકાપ્રમા, પંક્રપ્રમા, ધૂમ-
પ્રમા, તમઃપ્રમા, ઓર તમસ્તમઃપ્રમા, ઇનમે જો પહિલી નરક પૃથ્વી

શિષ્યોને આ વાત બરાબર સમજાય તે ઉદ્દેશથી સૂત્રકાર હવે અધોલોક
ક્ષેત્રાનુપૂર્વી આદિનું નિરૂપણ કરે છે—“અહોલોએ ચેત્તાણુપુવ્વી” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(અહોલોએ ચેત્તાણુપુવ્વી તિવિહા પળ્લતા) અધોલોક ક્ષેત્રાનુપૂર્વી
ત્રણ પ્રકારની કહી છે (તંજહા) તે ત્રણ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(પુવ્વાણુપુવ્વી,
પચ્છાણુપુવ્વી, અણાણુપુવ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી, પશ્ચાનુપૂર્વી, અને અનાનુપૂર્વી.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પુવ્વાણુપુવ્વી?) હે ભગવન્ ! અધોલોક પૂર્વાનુપૂર્વી કેવી છે?

ઉત્તર—(પુવ્વાણુપુવ્વી) અધોલોક પૂર્વાનુપૂર્વી આ પ્રકારની છે—(રયણપ્પમા
સક્કરપ્પમા, વાલુઅપ્પમા, પંકપ્પમા, ધૂમપ્પમા, તમપ્પમા, તમતમપ્પમા) રત્નપ્રમા,
શર્કરાપ્રમા, વાલુકાપ્રમા, પંક્રપ્રમા, ધૂમપ્રમા, તમઃપ્રમા તમસ્તમઃપ્રમા, આ
ક્રમે સાતે પૃથ્વીઓનો ઉપન્યાસ કરવો તેનું નામ અધોલોક પૂર્વાનુપૂર્વી છે.
પહેલી નરકપૃથ્વીનું નામ રત્નપ્રમા પડવાનું કારણ એ છે કે ત્યાં નારકોનાં

ટીકા— ‘અહોલોઅલેક્ષણપૃથ્વી’ इत्यादि ।

અધોલોક ક્ષેત્રાનુપૂર્વો હિ-પૂર્વાનુપૂર્વ્યાદિ ભેદેસ્ત્રિવિધા પ્રજ્ઞપ્તા । તત્ર પૂર્વાનુ-
પૂર્વો-નારકજીવનિવાસસ્થાનાતિરિક્તસ્થાનેષુ ઇન્દ્રનીલાદિ બહુવિધરત્નનાં પ્રમાયાઃ
સત્વાત્ પ્રથમા નરકપૃથિવી રત્નપ્રભેત્યુચ્યતે । દ્વિતીયા શર્કરાપ્રમા । ઇયં હિ શર્ક-
રાણામ્-ઉપલખણાનાં પ્રભાવત્ પ્રભાવત્ત્વેન શર્કરાપ્રભેત્યુચ્યતે । તૃતીયા-વાલુકાપ્રમા ।
વાલુકાયાઃ-સિકતાયાઃ પ્રભાવત્ પ્રભાવત્ત્વેનૈષા વાલુકાપ્રભેત્યુચ્યતે । એવમેવ--
પંક્કસ્ય=‘કીચડ’ इति लोकप्रसिद्धस्य, धूमस्य=‘ધૂઆ’ इति लोकप्रसिद्धस्य,
तमसः=અન્ધકારસ્ય કૃષ્ણદ્રવ્યસ્ય, તમસ્તમસઃ=મહાન્ધકારસ્ય-નિવિડકૃષ્ણવર્ણ-
દ્રવ્યસ્ય ચ પ્રભાવત્ પ્રભાવત્ત્વેન તત્તત્પૃથિવી પંક્કપ્રમા, ધૂમપ્રમા, તમઃપ્રમા, તમ-

है उसका नाम रत्नप्रभा इसलिये हुआ है कि नारक जीवों के निवास
स्थानों के अतिरिक्त स्थानों में वहाँ इन्द्रनील आदि अनेक प्रकार के
रत्नों की कान्तिका सद्भाव है । शर्कराप्रभा, नाम की जो द्वितीय भूमि
है उसकी प्रभा शर्करों-पाषाण खंडों की प्रभा जैसी है । वालुकाप्रभा
नाम की जो तृतीय भूमि है उसकी कान्ति रेत की प्रभा के समान है ।
पंकप्रभा नाम की चौथी भूमि है उसकी प्रभा कीचड़ की प्रभा के समा-
न है । धूमप्रभा नाम की पाँचवीं भूमि की प्रभा धूमां की प्रभा जैसी
है । तमः प्रभा नामकी छठी भूमि की प्रभा कृष्ण द्रव्यरूप जो अंधकार
है उसकी प्रभा के जैसी है । और जो सातवीं भूमि तमस्तमःप्रभा है,
उसकी कान्तिगाढ़ कृष्ण द्रव्यरूप जो महांधकार है उसकी कान्ति जैसी
है इस प्रकार पूर्वानुपूर्वी में रत्नप्रभा शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, पंक

નિવાસસ્થાનો સિવાયનાં સ્થાનોમાં ઇન્દ્રનીલ આદિ અनेक प्रकारનાં રત્નોની
કાન્તિનો સદ્ભાવ છે. બીજી નરકપૃથ્વીની કાન્તિ કાંકરાઓની કાન્તિ
જેવી હોવાથી તેનું નામ શર્કરાપ્રભા છે. ત્રીજી નરકપૃથ્વીની કાન્તિ રેતીની
કાન્તિના જેવી હોવાથી તેનું નામ વાલુકાપ્રભા છે. ચોથી પૃથ્વીની પ્રભા
પંક (કાઢવ)ના જેવી હોવાથી તેનું નામ પંકપ્રભા પડયું છે. પાંચમી પૃથ્વીની
પ્રભા ધુમાડાના જેવી હોવાથી તેનું નામ ધૂમપ્રભા પડયું છે. છઠી પૃથ્વીની
પ્રભા કૃષ્ણદ્રવ્ય રૂપ અંધકારના જેવી હોવાથી તેનું નામ તમઃપ્રભા છે. સાતમી
પૃથ્વીની કાન્તિ ગાઢ-અતિશય કૃષ્ણદ્રવ્ય રૂપ મહાન્ધકારની કાન્તિ જેવી
હોવાથી તેનું નામ તમસ્તમઃપ્રભા છે આનુપૂર્વામાં આ ક્રમે સાતે પૃથ્વીઓનો
ઉપન્યાસ થાય છે.

રત્નમઃ—પ્રમેતિ ક્રમેણ નામ્ના વ્યવદિશ્યતે । एषा पूर्वानुपूर्वी । पश्चानुपूर्व्या तु तम-
स्तमा इत्यारभ्य रत्नप्रमेत्यन्तं व्युत्क्रमेण व्यवस्थापना बोध्या । अनानुपूर्व्या तु
एषां सप्तानां पदानामन्योन्याभ्यासे चत्वारिंशदधिकाः पञ्चसहस्रसंख्यकाः पूर्वानु-
पूर्वी पश्चानुपूर्वीरूपाऽऽद्यन्तभङ्गद्वयविवक्षारहिता भङ्गा बोध्याः ॥ सू० १२१ ॥

મૂલમ્—તિરિયલોય સ્વેતાણુપુઘ્વી તિવિહા પળગત્તા, તં જહા-
પુઘ્વાણુપુઘ્વી પચ્છાણુપુઘ્વી અણાણુપુઘ્વી । સે કિં તં પુઘ્વાણુપુઘ્વી ?
પુઘ્વાણુપુઘ્વી—“જંબુદ્વીપે લવણે, ધાયઈ કાલોય પુઘ્વસરે વરુણે ।
સીર ઘય સ્વોય નંદી, અરુણવરે કુંડલે રુઝગે ॥૧॥ આભરણવત્થ-
ગંધે, ઉપ્પલતિલપ્પ ય પુઠ્ઠવિનિહિરયણે । વાસહરદહનઈઓ,
વિજયાવક્કસારકપ્પિદા ॥૨॥ કુરુમંદર આવાસા, કૂડા નક્કસત્ત-

પ્રમા, ધૂમપ્રમા, તમઃપ્રમા ઓર તમસ્તમઃ પ્રમા, હસ પ્રકાર હન સાત
ભૂમિયોં કા ઉપન્યાસ હોના હૈ । તથા પશ્ચાનુપૂર્વી મેં તમસ્તમઃપ્રમા સે
લેકર રત્નપ્રમા તક વ્યુત્ક્રમ સે હન ભૂમિયોં કા ઉપન્યાસ કિયા જાતા
હૈ । અનાનુપૂર્વી મેં હન સાત પદોં કા ૧-૨-૩-૪-૫-૬-૭ હસ રૂપ સે
ઉપન્યાસ કિયા જાતા હૈ । ફિર બાદ મેં ઓપસ મેં હનકા ગુણા કિયા
જાતા હૈ । હસ પ્રકાર ગુણા કરને પર જો રાશિ ઉત્પન્ન હોતી હૈ ડસમેં સે
આદિ અન્ત દો ભંગ કર દિયે જાતે હૈ । હન સાત પદોં કા પરસ્પર ગુણા
હોને પર ૫૦૪૦ ભંગ હોતે હૈ । હનમેં સે પૂર્વાનુપૂર્વી ઓર પશ્ચાનુપૂર્વીરૂપ
દો આદિ અન્ત કે ભંગ કમ કર દિયે જાતે હૈ । હસ પ્રકાર યહ અધો-
લોક સંબંધી અનાનુપૂર્વી હૈ । ॥ સૂ૦ ૧૨૧ ॥

પશ્ચાનુપૂર્વીમાં તમસ્તમઃપ્રમાથી લઇને રત્નપ્રમા સુધીનાં ઊલટા ક્રમે
સાતે પૃથ્વીઓનો ઉપન્યાસ કરવામાં આવે છે. અનાનુપૂર્વીમાં આ સાત
પદોનો ૧, ૨, ૩, ૪, ૫, ૬, ૭ આ રૂપે વર્ણન કરવામાં આવે છે,
ત્યાર બાદ પરસ્પરમાં તેમનાં ગણાં કરવામાં આવે છે આ પ્રમાણે ગણાં
કરવાથી જે રાશિ ઉત્પન્ન થાય છે તેમાંથી આદિ અને અન્તના બે ભંગો
(વિકલ્પો) બાદ કરવામાં આવે છે આ સાત પદોનો પરસ્પર ગુણાકાર થવાથી
૫૦૪૦ ભંગ થાય છે તેમાંથી પૂર્વાનુપૂર્વી અને પશ્ચાનુપૂર્વી રૂપ આદિ
અન્તના બે ભંગ ઓછાં કરવામાં આવે છે. અધોલોક સંબંધી અનાનુપૂર્વી
આ પ્રકારની છે. ॥ સૂ૦ ૧૨૧ ॥

ચંદસૂરાય । દેવે નાગે જક્ષે ભૂય સયંભૂરમણે ચ ॥૩॥ સે તં
પુઞ્વાણુપુઞ્વી । સે કિં તં પચ્છાણુપુઞ્વી ? પચ્છાણુપુઞ્વી-સયંભૂ-
રમણે ચ જાવ જંબુદ્વીપે । સે તં પચ્છાણુપુઞ્વી । સે કિં તં અણાણુ-
પુઞ્વી ? અણાણુપુઞ્વી ઇયાઐ ચેવ ઇગાઙ્યાઐ ઇગુત્તરિયાઐ અસં-
સ્થેજ્જગચ્છગયાઐ સેઢીઐ અણ્ણમણ્ણભાસો દુરુવૂળો । સે તં
અણાણુપુઞ્વી ॥સૂ૦ ૧૨૨॥

છાયા—તિર્યગ્લોક ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ત્રિવિધા પ્રજ્ઞપ્તા તથા—પૂર્વાનુપૂર્વી, પશ્ચા-
નુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી । અથ કા સા પૂર્વાનુપૂર્વી ? પૂર્વાનુપૂર્વી જમ્બુદ્વીપો લવણો ધાતકી
કાલોદઃ પુષ્કરઃ વરુણઃ । ક્ષીરઃ ઘૃતઃ ક્ષોદઃ નન્દી અરુણવરઃ કુંડલઃ રુચકઃ ।
આમરણવસ્થગંધાઃ ઉત્પલતિલકં ચ પૃથિવીનિહિરત્નમ્ । વર્ષધરહ્રદનદ્યો વિજયા

“તિરિયલોચસ્તેત્તાણુપુઞ્વી” ઇત્યાદિ

શબ્દાર્થ—(તિરિયલોચસ્તેત્તાણુપુઞ્વી તિવિહા પણ્ણત્તા) તિર્યગ્લોક ક્ષેત્રા-
નુપૂર્વી ત્રિવિધ પ્રકારની કહી ગઈ છે । (તં જહા) તે પ્રકારે એ છે—(પુઞ્વાણુ-
પુઞ્વી, પચ્છાણુપુઞ્વી, અણાણુપુઞ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી, પશ્ચાનુપૂર્વી અને અનાનુ-
પૂર્વી । (સે કિં તં પુઞ્વાણુપુઞ્વી ?) હે ભદ્રન્ત ! પૂર્વાનુપૂર્વી કયા છે ?
(પુઞ્વાણુ પુઞ્વી)

ઉત્તર—પૂર્વાનુપૂર્વી હસ પ્રકાર સે છે—જંબુદ્વીપે લવણે, ધાયઈ કાલોચ
પુષ્કરે વરુણે । ક્ષીર-ઘય-લોચ નન્દી-અરુણવરે કુંડલે રુચકે ॥ ૧ ॥

“આમરણવસ્થગંધે, ઉત્પલતિલે ચ પુઢવિ નિહિરયણે । વાસહરદહ-
નઈઓ, વિજયા વક્ષારકપ્પિદા ॥ ૨ ॥ જંબુદ્વીપ, લવણસમુદ્ર ધાતકી

“ તિરિયલોચસ્તેત્તાણુપુઞ્વી ” ઇત્યાદિ

શબ્દાર્થ—(તિરિયલોચસ્તેત્તાણુપુઞ્વી તિવિહા પણ્ણત્તા) તિર્યગ્લોક ક્ષેત્રાનુ-
પૂર્વી ત્રણ પ્રકારની કહી છે. (તંજહા) તે પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે—(પુઞ્વાણુ-
પુઞ્વી પચ્છાણુપુઞ્વી, અણાણુપુઞ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી, પશ્ચાનુપૂર્વી અને અનાનુપૂર્વી.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પુઞ્વાણુપુઞ્વી ?) હે ભગવન્ ! પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(પુઞ્વાણુપુઞ્વી) તિર્યગ્લોક સંબંધી પૂર્વાનુપૂર્વી આ પ્રકારની છે—

(જંબુદ્વીપે લવણે, ધાયઈ કાલોચ પુષ્કરે વરુણે ।

ક્ષીર-ઘયલોચ-નન્દી-અરુણવરે કુંડલે રુચકે ॥૧॥

આમરણવસ્થગંધે, ઉત્પલતિલે ચ પુઢવિનિહિરયણે ।

વાસહર દહનઈઓ, વિજયાવક્ષારકપ્પિદા ॥૨॥

જંબુદ્વીપ, લવણસમુદ્ર, ધાતકી ખંડ, કાલોદસમુદ્ર, પુષ્કરદ્વીપ,

વક્ષસ્કારકલ્પેન્દ્રાઃ । કુરુમન્દરઆવાસા કૂટા નક્ષત્રવન્દ્રસૂર્યાશ્ચ । દેવો નાગો યક્ષો
 ભૂતશ્ચ સ્વયંભૂરમણશ્ચ । સૈવા પૂર્વાનુપૂર્વી । અથ કા સા પશ્ચાનુપૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વી-
 સ્વયંભૂરમણશ્ચ યાવજ્જમ્બૂદ્વીપઃ । સૈવા પશ્ચાનુપૂર્વી । અથ કા સા અનાનુપૂર્વી ?
 અનાનુપૂર્વી-एतस्यामेव एकादिकायामेकोत्तरिकायामसंख्येयगच्छगतायां श्रेण्या-
 मन्योन्याभ्यासो द्विरूपोनः । सैवा अनानुपूर्वी ॥ सू० १२२ ॥

ટીકા — ‘તિરિયલોઅ’ इत्यादि ।

તિર્યંગ્લોકક્ષેત્રાનુપૂર્વી અપિ પૂર્વાનુપૂર્વ્યાદિભેદેન ત્રિવિધા વિજ્ઞેયા । તત્ર
 જમ્બૂદ્વીપેત્યારભ્ય સ્વયંભૂરમણેત્યન્તં પૂર્વાનુપૂર્વી બોધ્યા । તત્ર-જમ્બૂદ્વીપો જમ્બૂ-
 વૃક્ષોપલક્ષિતો દ્વીપો બોધ્યઃ તતસ્તં પરિવેષ્ટય સ્થિતો લઘ્વણસવજ્જલ-
 પૂરિતો લઘ્વણસમુદ્રઃ । લઘ્વણસમુદ્રં પરિવેષ્ટય ધાતકીવૃક્ષોપલક્ષિતો ધાતકી-
 દ્વીપઃ । તતસ્તં પરિવેષ્ટય શુદ્ધજલરસાસ્વાદવાન્ કાલોદઃ સમુદ્રઃ । તં પરિ-
 વેષ્ટય સ્થિતઃ પુષ્કરૈરુપલક્ષિતઃ પુષ્કરદ્વીપઃ । પુષ્કરદ્વીપં પરિવેષ્ટય સ્થિતઃ શુદ્ધ
 જલરસાસ્વાદવાન્ પુષ્કરોદઃ સમુદ્રઃ । તં પરિવેષ્ટય સ્થિતો વરુણો દ્વીપઃ । તતો
 વારુણીરસાસ્વાદો વારુણોદઃ સમુદ્રઃ । તતઃ ક્ષીરદ્વીપઃ । તતશ્ચ ક્ષીરોદઃ સમુદ્રઃ ।
 તતશ્ચ ઘૃતદ્વીપઃ । તતો ઘૃતોદઃ સમુદ્રઃ । તત્ ઇક્ષુદ્વીપઃ । તતશ્ચ ઇક્ષુરસાસ્વાદ ઇક્ષુ-
 રસોદઃ સમુદ્રઃ । તતો નન્દી-નન્દીશ્વરદ્વીપઃ । તતો નન્દીશ્વરસમુદ્રઃ । તતોઽરુણવરો

લ્લંઢ, કાલોદસમુદ્ર પુષ્કરદ્વીપ, પુષ્કરોદસમુદ્ર, વરુણદ્વીપ, વારુણોદસમુદ્ર
 ક્ષીરદ્વીપ, ક્ષીરોદસમુદ્ર, ઘૃતદ્વીપ ઘૃતોદસમુદ્ર, ઇક્ષુદ્વીપ, ઇક્ષુરસોદ-
 સમુદ્ર, નન્દીદ્વીપ નન્દીસમુદ્ર અરુણવરદ્વીપ અરુણવરસમુદ્ર કુણ્ડલદ્વીપ,
 કુણ્ડલસમુદ્ર, રુચ્કદ્વીપ, રુચ્કસમુદ્ર, । इसके बाद असंख्यातद्वीप
 और असंख्यात समुद्र हैं । सब से अन्तिम द्वीप स्वयंभूर-
 मण द्वीप और सबसे अन्तिमसमुद्र स्वयंभूरमण समुद्र हैं । अनुक्त इन
 द्वीपसमुद्रों के नाम आभरण, वस्त्र, गंध, उत्पल तिलक आदि से उप-
 लक्षित हैं अर्थात् स्वयंभूरमणसमुद्र पर्यन्त जो और द्वीप और समुद्र

પુષ્કરોદસમુદ્ર, વરુણદ્વીપ, વારુણોદસમુદ્ર, ક્ષીરદ્વીપ, ક્ષીરોદસમુદ્ર, ઘૃત-
 દ્વીપ, ઘૃતોદસમુદ્ર, ઇક્ષુદ્વીપ, ઇક્ષુરસોદસમુદ્ર, નન્દીદ્વીપ, નન્દીસમુદ્ર, અરુ-
 ણવરદ્વીપ, અરુણવરસમુદ્ર, કુંડલદ્વીપ, કુંડલસમુદ્ર, રુચ્કદ્વીપ, રુચ્કસમુદ્ર,
 ત્યાર બાદ અસંખ્યાત દ્વીપો અને અસંખ્યાત સમુદ્રો છે. સૌથી છેલ્લો દ્વીપ
 સ્વયંભૂરમણદ્વીપ, અને સૌથી છેલ્લો સમુદ્ર સ્વયંભૂરમણસમુદ્ર છે. અનુક્ત
 (જેનાં નામો અહીં કહ્યાં નથી એવા) દ્વીપસમુદ્રોનાં નામ આભરણ, વસ્ત્ર,
 ગંધ, ઉત્પલ, તિલક આદિથી ઉપલક્ષિત છે. એટલે કે રુચ્કસમુદ્રથી લઈને
 સ્વયંભૂરમણ સમુદ્ર સુધીમાં અનુક્રમે આભરણદ્વીપ આભરણસમુદ્ર, વસ્ત્રદ્વીપ,
 વસ્ત્રસમુદ્ર, ગંધદ્વીપ, ગંધસમુદ્ર, ઉત્પલદ્વીપ, ઉત્પલસમુદ્ર, તિલકદ્વીપ, તિલક-

દ્વીપઃ । તતશ્ચારુણવરસમુદ્રઃ । તતઃ કુણ્ડલદ્વીપઃ । તતશ્ચ કુણ્ડલસમુદ્રઃ । તતો રુચક-
દ્વીપઃ । તતશ્ચ રુચકસમુદ્રઃ । તથા-અસંખ્યેયાનામ્ અસંખ્યેયાનામ્ દ્વીપાનામન્તે
આભરણવસ્ત્રગન્ધોત્પલતિલકાદ્યુપલક્ષિતાઃ આભરણવસ્ત્રગન્ધોત્પલતિલકાદિ સ્વયમ્ભૂ-
રમણાન્તાઃ દ્વીપાઃ, તત્તન્નામાનઃ સમુદ્રાશ્ચ સન્તિ । સ્વયમ્ભૂરમણસમુદ્રઃ-શુદ્ધોદક-
રસાસ્વાદઃ । મૂલે પુષ્કરાધારમ્ભ્ય સ્વયમ્ભૂરમણાન્તાઃ શબ્દા દ્વીપસમુદ્રોભયવાચકા

હैं उनके नाम आभरण आदिके ऊपर हैं । जो द्वीप का नाम है वही नाम बेटे हुए समुद्र का है । स्वयंभूरमण समुद्र के जलका स्वाद शुद्धो-
दक रसास्वाद जैसा है मूल में-पुष्कर से लेकर स्वयंभूरमण तक के
शब्द द्वीप और समुद्र के वाचक हैं । तात्पर्य कहनेका यह है । कि रुचक-
द्वीप और रुचकसमुद्र के आगे आभरण द्वीप और आभरणसमुद्र
है । इसके बाद-वस्त्र द्वीप और वस्त्र समुद्र है । इसके आगे गंध द्वीप
और गंध समुद्र है इसी प्रकार से उत्पल, तिलक पृथिवी निधि, रत्न वर्ष-
धर, ह्रद, नदी, विजय वक्षस्कार, कल्पेन्द्र (कुरु मंदर आवासा कूडा-
नक्खत्तचंदसूरा य देवे नागे जक्खे भूए य स्वयंभूरमणे य ३) कुरु, मन्दर
आवासकूट, नक्षत्र, चन्द्र सूर्य देव, नाग यक्ष भूत, और स्वयंभूरमण इन
नामों वाले असंख्यात द्वीप और असंख्यात समुद्र है । जंबूद्वीप नाम का
जो द्वीप है, वह जंबूवृक्ष से युक्त है । इसलिये इसका नाम जंबूद्वीप हुआ है ।
इस जंबूद्वीप को वेष्टित हुए गोल चूड़ी के आकार के आकार जैसा लवण-

સમુદ્ર આદિ અસંખ્યાત દ્વીપસમુદ્રો આવેલા છે. દ્વીપાનાં જે નામો છે,
એજ નામો તેમને વીંટળાયેલા સમુદ્રોના માટે પણ વપરાયાં છે.

સ્વયંભૂરમણ સમુદ્રનું પાણી શુદ્ધ પાણીના જેવાં સ્વાદવાળું છે. પુષ્કરથી
લઈને સ્વયંભૂરમણ પર્યન્તના શબ્દો દ્વીપો અને સમુદ્રો-બંનેનાં વાચક છે
એમ સમજવું આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે રુચકદ્વીપ અને રુચકસમુદ્રથી
આગળ જતાં આભરણદ્વીપ અને આભરણસમુદ્ર આવે છે, ત્યાર બાદ વસ્ત્રદ્વીપ
અને વસ્ત્રસમુદ્ર આવે છે, ત્યાર બાદ ગંધદ્વીપ અને ગંધસમુદ્ર આવે છે,
ત્યાર બાદ ઉત્પલ, તિલક, પૃથ્વીનિધિ, રત્નવર્ષધર, હ્રદનદી, વિજયવક્ષસ્કાર,
કલ્પેન્દ્ર (કુરુમંદર આવાસા કૂડાનક્ખત્તચંદસૂરા ય, દેવે નાગે જક્ખે ભૂએ ય
સ્વયંભૂરમણે ય ॥૩॥) કુરુ, મન્દર, આવાસકૂટ, નક્ષત્ર, ચન્દ્ર, સૂર્ય, દેવ,
નાગ, યક્ષ, ભૂત અને સ્વયંભૂરમણ આ નામોવાળાં અસંખ્યાત દ્વીપો અને
અસંખ્યાત સમુદ્રો આવે છે. જંબૂદ્વીપ નામનો જે દ્વીપ છે તે જંબૂવૃક્ષથી
યુક્ત હોવાને કારણે તેનું નામ જંબૂદ્વીપ છે. આ જંબૂદ્વીપને ઘેરીને વલયના

વોધ્યાઃ નનુ મૂલે અસંખ્યેયાનસંખ્યેયાન દ્વીપસમુદ્રાનુલ્લઙ્ઘ્ય યે યે દ્વીપસમુદ્રાદયઃ સન્તિ, તેષાં નામાનિ નિર્દિષ્ટાનિ, કિન્ત્વન્તરાલ્પસ્થિતા અતિક્રમ્યમાણા યે દ્વીપા ઉક્તાસ્તે કિં નામકાઃ ? इति चेदाह-लोके पदार्थानां शब्दध्वजकलशशस्त्रस्तिक

સમુદ્ર હૈં, इस समुद्र का जल लवण के स्वाद जैसा खारा है । लवणसमुद्र को घेरे हुये धातकी खंडद्वीप है । यह धातकी वृक्ष से उपलक्षित है । इस धातकी द्वीप को घेरे हुए कालोदसमुद्र है । इस जल का स्वाद शुद्ध जल के स्वाद जैसा है, खारा नहीं हैं । इस समुद्र को घेर कर पुष्कर-द्वीप है । यह पुष्करद्वीप को घेर कर उस की चारों ओर पुष्करोद-समुद्र है इसके जल का स्वाद शुद्ध जल के स्वाद जैसा है । इस समुद्र को वेष्टितहुए वरुणद्वीप है । वरुणद्वीप को घेरकर स्थित हुआ वारुणोद समुद्र है । इसके जलका स्वाद वारुणी रस के भास्वाद जैसा है । इसके बाद क्षीरद्वीप है, क्षीरसमुद्र को घेरे हुए घृतद्वीप है । इसके बाद घृतोद-समुद्र है । घृतोदसमुद्र को घेरे हुए इक्षु-द्वीप है । इसके बाद इक्षुरसोद समुद्र है । इक्षुरसोद समुद्र के बाद नन्दीश्वर द्वीप है । और उस द्वीप को घेरे हुए नन्दीश्वरसमुद्र है । फिर अरुणवरद्वीप और अरुणवरसमुद्र है । फिर कुण्डलद्वीप और कुण्डल समुद्र है । बाद में रुचक द्वीप और रुचक समुद्र है । इस प्रकार से आभरण वस्त्र आदि-शुभनाम वाले असंख्यात द्वीप और असंख्यात समुद्र स्वयंभूरमण समुद्र पर्यन्त-तक है ।—

આકારનો લવણસમુદ્ર આવેલો છે. તે સમુદ્રનું પાણી લવણ (મીઠા)ના જેવા ખારા સ્વાદવાળું છે લવણસમુદ્રને ઘેરીને ધાતકીખંડ દ્વીપ આવેલો છે તે ધાતકીદ્વીપ ધાતકી નામના વૃક્ષની યુક્ત હોવાને કારણે તેનું નામ ધાતકીદ્વીપ પડ્યું છે. આ ધાતકીદ્વીપને ઘેરીને કાલોદસમુદ્ર રહેલો છે. તેનું પાણી ખારું નથી પણ શુદ્ધ જળ જેવા સ્વાદવાળું છે લવણસમુદ્રને ઘેરીને પુષ્કર-દ્વીપ આવેલો છે પુષ્કરોથી યુક્ત હોવાને કારણે તેનું નામ પુષ્કરદ્વીપ પડ્યું છે. પુષ્કરદ્વીપને ઘેરીને તેની ચારે તરફ પુષ્કરોદસમુદ્ર આવેલો છે. તેના જળનો સ્વાદ શુદ્ધ જળના સ્વાદ જેવો છે આ સમુદ્રને ઘેરીને વરુણદ્વીપ રહેલો છે અને વરુણદ્વીપને ઘેરીને વારુણોદ સમુદ્ર આવેલો છે. તેના જલનો સ્વાદ વારુણીરસના સ્વાદ જેવો છે ત્યાર બાદ ક્ષીરદ્વીપ છે, તેને ઘેરીને ક્ષીરોદસમુદ્ર આવેલો છે ક્ષીરસમુદ્રને ઘેરીને ઘૃતદ્વીપ આવેલો છે અને ઘૃતદ્વીપને ઘેરીને ઘૃતોદ સમુદ્ર રહેલો છે. ત્યાર બાદ ઘૃતોદ સમુદ્રને ઘેરીને ઇક્ષુદ્વીપ આવેલો છે અને ઇક્ષુદ્વીપને ઘેરીને ઇક્ષુરસોદ સમુદ્ર આવેલો છે. ઇક્ષુ-સોદ સમુદ્રને ઘેરીને નન્દીશ્વર દ્વીપ રહેલો છે અને નન્દીશ્વર દ્વીપની ચોમેર નન્દીશ્વર સમુદ્ર રહેલો છે ત્યાર બાદ અરુણવરદ્વીપ અને અરુણવર સમુદ્ર આવે છે. ત્યાર બાદ કુંડલદ્વીપ અને કુંડલસમુદ્ર આવે છે ત્યાર બાદ રુચકદ્વીપ અને રુચક સમુદ્ર આવે છે ત્યાર બાદ આભરણ દ્વીપ, આભરણ-

શ્રીવત્સાદીનિ યાવન્તિ શુભનામાનિ સન્તિ તૈઃ સર્વૈરપ્યુપલક્ષિતા અન્તરાલસ્થિતા દ્વીપસમુદ્રાઃ સન્તિ ।

ઉક્તંચ—“દીવસમુદાણં મંતે । કેવદ્યા નામધિજ્જેહિં પળ્લતા ? ગોચયા ! જાવ-
દ્યા લોએ સુમા નામા સુમા રુવા સુમા ગંધા સુમા રસા સુમા ફાસા એવદ્યા ણં
દીવસમુદા નામધિજ્જેહિં પળ્લતા । ” (જીવા. ૩ પ્ર. ૪ ઉ.)

છાયા—દ્વીપસમુદ્રાઃ સ્વલુ મદન્ત ! કિયન્તો નામધેયૈઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ ? ગૌતમ ! યાવન્તિ
લોકે શુમાનિ નામાનિ શુમાનિ રૂપાણિ શુમાઃ ગન્ધાઃ શુમા રસાઃ શુમાઃ સ્પર્શાઃ
દ્યન્તો દ્વીપસમુદ્રા નામધેયૈઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ । ઇતિ । એતે હિ—અસંખ્યેયસંખ્યકાઃ અનુપદ-
વશ્યમાણગાથયા પ્રતિપાદિતા દ્રષ્ટવ્યાઃ ।

શંકા—સૂત્ર મેં અસંખ્યાત ૨ દ્વીપ સમુદ્રોં કો ઉલ્લંઘન કરકે જો જો
દ્વીપ ઓર સમુદ્ર આદિ હૈં ઉનકે નામ તો કહે હૈં પરન્તુ જો અન્તરાલ
મેં સ્થિત દ્વીપ કહે હૈં ઉનકે કયા નામ હૈં ?

ઉત્તર—લોક મેં પદાર્થોંકે શંખ, ધ્વજ, કલશ સ્વતિક, શ્રીવત્સ આદિ
જિતને શુભ નામ હૈં—ઉન સ્વસે ઉપલક્ષિત અન્તરાલ મેં સ્થિત હુએ દ્વીપ
ઓર સમુદ્ર હૈં । ઉક્તંચ કરકે “દીવસમુદાણં ઇત્યાદિ” જો સૂત્ર પાઠ
દિયા ગયા હૈં ઉસ્કા યહી ભાવ હૈં—હસમેં યહી કહા ગયા હૈં કિ લોક
મેં જિતને શુભ નામ હૈં જિતને શુભ રૂપ હૈં, જિતને શુભ ગંધ હૈં જિતને
શુભ રસ હૈં ઓર જિતને શુભ સ્પર્શ હૈં જિતને હી દ્વીપ સમુદ્ર જિતને હી

સમુદ્ર, વસ્રદ્વીપ, વસ્રસમુદ્ર, આદિ શુભનામવાળા અસંખ્યાત દ્વીપો અને
સમુદ્રો આવે છે એવટે લવણદ્વીપ અને લવણસમુદ્ર આવે છે.

મન્ન—મૂળમાં અન્નખ્યાત સમુદ્રોને પાર કરિને આગળ વધતાં એવટે
સ્વયંભૂરમણ દ્વીપ અને સ્વયંભૂરમણ સમુદ્ર આવે છે, એવું કહેવામાં આવ્યું
છે તેમાંથી કેટલાક દ્વીપો અને સમુદ્રોનાં નામ આપે આ સૂત્રમાં પ્રગટ કર્યાં
છે. પરન્તુ ત્યાર પછીના સ્વયંભૂરમણદ્વીપ પર્યન્તમાં જે દ્વીપસમુદ્રો છે તેમનાં
નામો આપે અહીં પ્રગટ કર્યાં નથી તેમના નામો જણાવવા કૃપા કરશે ?

ઉત્તર—લોકમાં પદાર્થોનાં શંખ, ધ્વજ, કલશ, સ્વસ્તિક, શ્રીવત્સ આદિ
જેટલાં શુભ નામો છે, એ સઘળાં નામોથી ઉપલક્ષિત (ઓળખાતા) તે અન્ત-
રાલમાં રહેલા દ્વીપો અને સમુદ્રો છે. કહ્યું પણ છેકે—“દીવસમુદાણં”
ઈત્યાદિ આ સૂત્રપાઠ દ્વારા એ વાત પ્રગટ કરવામાં આવી છે કે લોકમાં
જેટલા શુભ નામ છે, જેટલાં શુભ રૂપ છે, જેટલા શુભ ગંધો છે, જેટલાં
શુભ સ્પર્શો છે, તેમનાં વડે આ દ્વીપસમુદ્રો ઉપલક્ષિત છે. તેઓ અસંખ્યાત
હોવાને કારણે પ્રત્યેકનાં નામ અહીં આપી શકાય એમ નથી દ્વીપસમુદ્રો

તથાદિ—“ઉદ્ધારસાગરાણં અઢ્ઢાજ્ઞાણ જત્તિયા સમયા ।

દુગુણાદુગુણપવિત્થર દીવોદદિ રજ્જુ એવદયા ॥”

છાયા—ઉદ્ધારસાગરાણામર્થદ્વતીયાનાં યાવન્તઃ સમયાઃ ।

દ્વિગુણદ્વિગુણપ્રવિસ્તારાઃ દ્વીપોદધયો રજ્જ્વામિયન્તઃ ॥ ઇતિ

તદેવા પૂર્વાનુપૂર્વી । પશ્ચાનુપૂર્વી તુ વ્યુત્ક્રમેણ બોધ્યા । અનાનુપૂર્વી તુ—અમીષામ-
સંખ્યેયાનાં પદાનામન્યોડન્યામ્યાસે યે ડસંખ્યેયા યજ્ઞા ભવન્તિ, તત આઘન્ત
વિવક્ષારહિતા યજ્ઞા બોધ્યાઃ ॥ સૂ૦ ૧૨૨ ॥

નામ વાલે હૈં । તાત્પર્ય કહને કા ઘહ હૈ કિ દ્વીપ ઓર સમુદ્ર અસંખ્યાત
સંખ્યા વાલે હૈં । દ્વીપ સમુદ્ર કિતને હૈં ? હસકા ઉત્તર, ઉદ્ધારસાગરાણં”
ગાથા દ્વારા દિયા ગયા હૈ જિસકા ભાવાર્થ એસા હૈ કિ અઢાઈ ઉદ્ધાર
સાગરોં કે જિતને સમય હોતે હૈં ઉતને એક દૂસરે સે દૂનેવ વિસ્તાર વાલે
દ્વીપ ઓર સમુદ્ર હૈં । હસ પ્રકાર જંબૂદ્વીપ આદિ કે ક્રમ સે સ્વયંભૂ-
રમણ દ્વીપ ઓર સ્વયંભૂરમણ સમુદ્ર પર્યન્ત દ્વીપ સમુદ્રોં કા ઉપન્યાસ
કરના સો પૂર્વાનુપૂર્વી હૈ । તથા હન્હોં દ્વીપસમુદ્રોં કા વ્યુત્ક્રમ સે અર્થાત્
સ્વયંભૂરમણ સે પ્રારંભ કર જંબૂદ્વીપ તક-ન્યાસ-ઉપન્યાસ-કરના
સો પશ્ચાનુપૂર્વી હૈ । ઓર હન્હોં અસંખ્યાત પદોંકા સ્થાપન કરકે ફિર
ઉનકા પરસ્પર મેં ગુણા કરના ઓર પ્રાપ્ત ગુણન રાશિ મેં સે આદિ
અન્ત કે દો ભંગ કસ કર-દેના હસ પ્રકાર કરને સે અસંખ્યાત ભંગ-
હોતે હૈં વહ અનાનુપૂર્વી હૈ । ॥ સૂ૦ ૧૨૨ ॥

કેટલાં છે ? આ પ્રશ્નનો ઉત્તર નીચેની ગાથા દ્વારા આપવામાં આવ્યો છે—
“ઉદ્ધાર સાગરાણં” ઇત્યાદિ— આ ગાથાનો ભાવાર્થ એવો છે કે “અઢી
ઉદ્ધાર સાગરોના જેટલા સમય થાય છે એટલા એક બીજાથી બમણાં બમણાં
વિસ્તારવાળા દ્વીપો અને સમુદ્રો છે.” આ પ્રકારે જંબૂદ્વીપથી શરૂ કરીને
સ્વયંભૂરમણ દ્વીપ અને સ્વયંભૂરમણ સમુદ્ર પર્યન્તના દ્વીપો અને સમુદ્રોનો
ઉપન્યાસ કરવો તેનું નામ તિર્થંગ્રોહ સંબંધી પૂર્વાનુપૂર્વી છે.

ઉપર્યુક્ત દ્વીપસમુદ્રોનો જિલ્લટા ક્રમમાં એટલે કે સ્વયંભૂરમણ સમુદ્રથી
લઈને જંબૂદ્વીપ પર્યન્તના પદોનો ઉપન્યાસ કરવો તેનું નામ પશ્ચાનુપૂર્વી
છે. અને એજ અસંખ્યાત પદોનું સ્થાપન કરીને તેમનો પરસ્પરની સાથે
ગુણાકાર કરવો અને એ રીતે જે ગુણનરાશિ (ગુણાકાર) પ્રાપ્ત થાય તેમાંથી
આદિ અને અન્તના બે ભાગોને કાઢી નાખવા આ પ્રમાણે કરવાથી જે
અસંખ્યાત ભાગો થાય છે તેમને અનાનુપૂર્વી રૂપ સમજવા. ॥ સૂ૦ ૧૨૨ ॥

‘सम्प्रति ऊर्ध्वलोकक्षेत्रानुपूर्वी’ निरूपयति—

मूलम्—उडूलोयखेत्ताणुपुवी तिविहा पणत्ता, तं जहा-पुवाणुपुवी
पच्छाणुपुवी अणाणुपुवी । से किं तं पुवाणुपुवी ? पुवाणुपुवी
सोहम्मे१, ईसाणे२, सणकुमारे३, माहिंदे४, बंभलोए५, लंतए६,
महासुके७, सहस्सारे८, आणए९, पाणए१०, आरणे११ अच्चुए१२,
गेवेज्जगविमाणे१३, अणुत्तरविमाणे१४, ईसिपब्भारा१५, से तं
पुवाणुपुवी । से किं तं पच्छाणुपुवी ? पच्छाणुपुवी ईसिपब्भारा
जाव सोहम्मे । से तं पच्छाणुपुवी । से किं तं अणाणुपुवी ?
अणाणुपुवी—एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए पन्नरसगच्छ-
गयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो दुरूवूणो । से णं अणाणुपुवी ।
अहवा ओवणिहिया खेत्ताणुपुवी तिविहा पणत्ता, तं जहा—
पुवाणुपुवी, पच्छाणुपुवी, अणाणुपुवी । से किं तं पुवाणुपुवी ?
पुवाणुपुवी—एगपएसोगाढे, दुप्पएसोगाढे, दत्तपएसोगाढे संखि-
ज्जपएसोगाढे जाव असंखिज्जपएसोगाढे । से तं पुवाणुपुवी ।
से किं तं पच्छाणुपुवी ? पच्छाणुपुवी—असंखिज्जपएसोगाढे
संखिज्जपएसोगाढे जाव एगपएसोगाढे । से तं पच्छाणुपुवी ।
से किं तं अणाणुपुवी ? अणाणुपुवी—एयाए चेव एगाइयाए
एगुत्तरियाए असंखिज्जगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो दुरू-
वूणो । से तं अणाणुपुवी से तं ओवणिहिया खेत्ताणुपुवी से तं
खेत्ताणुपुवी ॥सू० १२३॥

छाया—ऊर्ध्वलोकक्षेत्रानुपूर्वी त्रिविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा—पूर्वानुपूर्वी पश्चानुपूर्वी,
अनानुपूर्वी । अथ का सा पूर्वानुपूर्वी ? पूर्वानुपूर्वी—सौधर्मः१, ईशानः२, सनत्कु-
मारो३, माहेन्द्रो४, ब्रह्मलोऽः५, छान्दको६, महाशुक्रः७, सहस्रारः८, आनतः९,

પ્રાણતઃ ૧૦, આરણઃ ૧૧, અચ્યુતો ૨, ગ્રેવેયકવિમાનં ૧૩, અનુત્તરવિમાનં ૧૪, ઈષ્વરપ્રાગ્ભારા ૧૫, સૈષા પૂર્વાનુપૂર્વી. અથ કા સા પશ્ચાનુપૂર્વી? પશ્ચાનુપૂર્વી-ઈષ્વરપ્રાગ્ભારા યાવત્સૌધર્મઃ. સૈષા પશ્ચાનુપૂર્વી. અથ કા સા અનાનુપૂર્વી? અનાનુપૂર્વી-એતસ્યામેવ એકાદિકાયામેકોત્તરિકાયાં પચ્ચદશગચ્છગતાયાં શ્રેણ્યામન્યોન્યાભ્યાસો દ્વિરુપોનઃ. સૈષા અનાનુપૂર્વી. અથવા-ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ત્રિવિધા પ્રજ્ઞસા, તથા-પૂર્વાનુપૂર્વી, પશ્ચાનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી. અથ કા સા પૂર્વાનુપૂર્વી? પૂર્વાનુપૂર્વી-એકપ્રદેશાવગાઠો દ્વિપ્રદેશાવગાઠો દશપ્રદેશાવગાઠઃ સંખ્યેયપ્રદેશાવગાઠો યાવત્ અસંખ્યેયપ્રદેશાવગાઠઃ. સૈષા પૂર્વાનુપૂર્વી. અથ કા સા પશ્ચાનુપૂર્વી? પશ્ચાનુપૂર્વી-અસંખ્યેયપ્રદેશાવગાઠઃ સંખ્યેયપ્રદેશાવગાઠો યાવત્ એકપ્રદેશાવગાઠઃ. સૈષા પશ્ચાનુપૂર્વી? અથ કા સા અનાનુપૂર્વી? અનાનુપૂર્વી-એતસ્યામેવ એકાદિકાયામેકોત્તરિકાયામસંખ્યેયગચ્છગતાયાં શ્રેણ્યામન્યોન્યાભ્યાસો દ્વિરુપોનઃ. સૈષા અનાનુપૂર્વી. સૈષા ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી સૈષા ક્ષેત્રાનુપૂર્વી ॥ સૂ. ૧૨૩ ॥

ટીકા—‘ઉદ્દુલોચલેક્ષા’ ઇત્યાદિ.

ઊર્ધ્વલોકક્ષેત્રાનુપૂર્વીં ત્રિ પૂર્વાનુપૂર્વીંદિભેદૈસ્ત્રિવિધા વિજ્ઞેયા. તત્ર-પૂર્વાનુપૂર્વીં સૌધર્મીંદીપન્માગ્ભારાન્તા. પ્રજ્ઞાપકપ્રત્યાસત્ત્વા પ્રથમં સૌધર્મોપન્યાસઃ. તતસ્તત્ત

અથ સૂત્રકાર ઊર્ધ્વલોક ક્ષેત્રાનુપૂર્વીં કા-નિરૂપણ કરતે હૈં—

“ઉદ્દુલોચલેક્ષાણુપુઞ્ચી” ઇત્યાદિ.

શબ્દાર્થ—(ઉદ્દુલોચલેક્ષાણુપુઞ્ચી ત્રિવિધા પળ્ળક્ષા) ઊર્ધ્વલોક ક્ષેત્રાનુપૂર્વીં ત્રીન પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ. (તં જહા) જૈસે—(પુઞ્ચાણુપુઞ્ચી) પૂર્વાનુપૂર્વીં (પચ્છાણુપુઞ્ચી) પશ્ચાનુપૂર્વીં (અણાણુપુઞ્ચી) ઔર અનાનુપૂર્વીં (સૈ કિં તં પુઞ્ચાણુપુઞ્ચી?) હૈ ભદન્ત. પૂર્વાનુપૂર્વીં કયા હૈ?

(પુઞ્ચાણુપુઞ્ચી) પૂર્વાનુપૂર્વીં હસ પ્રકાર સૈ હૈં. (સોહમ્મે ૧) સૌધર્મ ૧ હૈંસાજે ૨, સળંકુમારે ૩, માહિંદે ૪, વંખલોષ ૫, લંતણ ૬, મહાસુ-

હવે સૂત્રકાર ઉર્ધ્વલોક ક્ષેત્રાનુપૂર્વીંનું નિરૂપણ કરે છે—

“ઉદ્દુલોચલેક્ષાણુપુઞ્ચી” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(ઉદ્દુલોચલેક્ષાણુપુઞ્ચી ત્રિવિધા પળ્ળક્ષા) ઉર્ધ્વલોક ક્ષેત્રાનુપૂર્વીં ત્રણ પ્રકારની કહી છે. (તંજહા) તે ત્રણ પ્રકારની ત્રીયે પ્રમાણે છે—(પુઞ્ચાણુપુઞ્ચી, પચ્છાણુપુઞ્ચી, અણાણુપુઞ્ચી) (૧) પૂર્વાનુપૂર્વીં (૨) પશ્ચાનુપૂર્વીં અને (૩) અનાનુપૂર્વીં.

પ્રશ્ન—(સૈ કિં તં પુઞ્ચાણુપુઞ્ચી?) હૈ ભગવન્! પૂર્વાનુપૂર્વીંનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે?

ઉત્તર—ઉર્ધ્વલોક સળંકુમારે પૂર્વાનુપૂર્વીંનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે (સોહમ્મે) (૧) સૌધર્મ, (૨) હૈંસાજે, (૩) સળંકુમારે, (૪) માહિંદે, (૫) વંખલોષ, (૬) લંતણ, (૭) મહાસુક, (૮) સહસ્તારે,

लोकप्रत्यासत्त्या तत्क्षेत्रलोकोपन्यासः । सौधर्मनामकं विमानं हि तत्क्षेत्रविमानेषु सर्वतः श्रेष्ठम्, अतः सः लोकः सौधर्मेति व्यपदिश्यते । एवमेव ईशानाद्यच्युत-विमानानां तत्क्षेत्रोके श्रेष्ठत्वमनस्तत्क्षेत्रास्मात् सः सः लोकौ व्यपदिश्यते । लोकपुरुषस्य ग्रीवाविभागे भवन्ति विमानानि त्रैवेयकविमानानीत्युच्यन्ते । अनुत्तरविमानस्य-लोकापेक्षयाऽन्यानि उत्तराणि विमानानि न सन्तीति तानि विमानानि अनुत्तर-

वके ७, सहस्रारे ८, आणए ९, पाणए १०, आरणे ११, अच्युए १२, गेवेज्जगविमाणे १३, अणुत्तरविमाणे १४, ईसिपव्वमारा १५) ईशान २ सनत्कुमार ३, माहेद्र ४ ब्रह्मलोक ५, लान्तक ६, महाशुक ७, सहस्रार-८, आनत ९, प्राणत १०, आरण ११ अच्युत १२, त्रैवेयकविमान १३, अनुत्तरविमान १४, और ईषत्प्राग्मारा १५ (से तं पुव्वानुपुव्वी) यह पूर्वानुपूर्वी है । यहां पर प्रज्ञापक-की प्रत्यासत्तिसे सबसे पहिले सौधर्म का उपन्यास किया गया है । बाद में तत्क्षेत्र लोक की प्रत्यासत्ति से उन ५ लोगों का उपन्यास हुआ है । सौधर्म नाम का विमान है । यह विमान तत्क्षेत्र सबन्धी विमानों में सर्वश्रेष्ठ है इसलिये उसके संबन्ध से उस लोक का नाम सौधर्मलोक हुआ है । इसी प्रकार ईशान से लेकर अच्युत तक के विमानों में उन २ लोकों में श्रेष्ठता है । इस-लिये उस २ नाम से वह २ लोक कहा गया है । लोक रूप पुरुष की ग्रीवा के स्थानापन्न जो विमान हैं वे त्रैवेयक विमान कहलाते हैं ।

आणए, पाणए, आरणे, अच्युए) (२) ईशान, (३) सनत्कुमार, (४) माहेन्द्र, (५) ब्रह्मलोक, (६) लान्तक, (७) महाशुक, (८) सहस्रार, (९) आनत, (१०) प्राणत, (११) आरण, (१२) अच्युत (गेवेज्जगविमाणे, अणुत्तरविमाणे ईसि-पव्वमारा) (१३) त्रैवेयक विमानो, (१४) ईषत्प्राग्मारा. (से तं पुव्वानुपुव्वी) आ-कुमे ऊर्ध्वलोकगत क्षेत्रानो उपन्यास करवो तेनुं नाम पूर्वानुपूर्वीं छे. अहीं प्रज्ञापकनी वधारे नञ्कमां आवेला ईशानकल्पनो उपन्यास पडेलां करवामां आण्यो छे. त्थार भाद त्यांधी वधारेने वधारे हर आवेलां क्षेत्रानो उपन्यास अनुकमे करवामां आण्यो छे. सौधर्म कल्पमां जे विमानो छे तेमां सर्वश्रेष्ठ सौधर्म नामनुं विमान डोवाथी ते देवलोकनुं नाम सौधर्मकल्प पड्युं छे. ओज प्रमाणे ईशानथो लधने अच्युत पर्यन्तना कल्पोमां पणु ओज नामनां (ईशान, सनत्कुमार) विमानानी श्रेष्ठता छे, ओम समञ्जुं के हारणुं तेमनां नामो पणु ते विमानो जेवां ज राणमां आण्यो छे. लोकपु पुरुषनी ग्रीवाता स्थानमां जे विमानो रडेलां छे तेमने त्रैवेयक विमानो कडे छे.

વિમાનાન્યુચ્યન્તે । ઈષત્પ્રાગ્ભારા-ભારાક્રાન્તપુરુષવદીષન્નતત્વાત્ एषા ઈષત્પ્રાગ્ભારે-
ત્યુચ્યતે । ઇયં સૌધર્મદીષત્પ્રાગ્ભારાન્તા પૂર્વાનુપૂર્વી । તથા-ઈષત્પ્રાગ્ભારા યાવત્
સૌધર્મ ઇતિ પશ્ચાનુપૂર્વી । તથા-અનાનુપૂર્વ્યા તુ સૌધર્મદિપશ્ચદશપદાનામન્યોડન્યા-

અનુત્તરવિમાનસ્થ લોક કી-અપેક્ષા ઓર દૂસરે વિમાન-ઉત્તર-શ્રેષ્ઠ
નહીં હૈ-હસલિયે વે વિમાન અનુત્તર વિમાન કહે ગયે હૈ । ભાર આક્રાન્ત
પુરુષ કી તરહ કુછ ઘૂકી હુઈ હોને-સે યહ ઈષત્પ્રાગ્ભારા હસ નામ સે
કહી ગઈ હૈ । સૌધર્મ સે લેકર ઈષત્ પ્રાગ્ભારા ભૂમિ તક પૂર્વાનુપૂર્વી હૈ ।
(સે કિં તં પચ્છાણુપુર્વવી) હે ભદ્રન્ત પશ્ચાનુપૂર્વી કયા હૈ ?

ઉત્તર-(પચ્છાણુપુર્વવી) પશ્ચાનુપૂર્વી હસ પ્રકાર હૈન-(ઈસિપવ્મારા જાવ
સોહમ્મે) ઈષત્ પ્રાગ્ભારા ભૂમિ સે લેકર જો સૌધર્મ દેવલોક તક વ્યુ-
ત્ક્રમ સે ગણના હૈ । (સે તં પચ્છાણુપુર્વવી) વહ પશ્ચાનુપૂર્વી હૈ । (સે કિં
તં અણાણુપુર્વવી ?) હે ભદ્રન્ત ઝર્ધ્વલોક સબન્ધી અનાનુપૂર્વી કયા હૈ ?

ઉત્તર-(અણાણુપુર્વવી) ઝર્ધ્વલોક સબન્ધી અનાનુપૂર્વી હસ પ્રકાર
સે હૈ । (एयाए चैव एगाइयाए एगुत्तरियाए पन्नरसगच्छगयाए
सेढीए अन्न मन्न व्मासो दूरूवूणो) હસ અનાનુપૂર્વી મેં જો શ્રેણી સ્થા-

અનુત્તર વિમાનસ્થ લોકના કરતાં અન્ય કોઈ પણ વિમાન શ્રેષ્ઠ નથી તે
કારણે તે શ્રેષ્ઠ વિમાનેને અનુત્તર વિમાનો કહ્યાં છે. જેમ કે બારને વડન
કરતો પુરુષ સહેજ ઝૂકી જાય છે એજ પ્રમાણે આ ઈષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વી
પણ સહેજ ઝૂકેલી હોવાને કારણે તેનું નામ ઈષત્પ્રાગ્ભારા પડ્યું છે. સૌધ-
ર્મથી લઇને ઈષત્પ્રાગ્ભારા પર્યન્તનાં પદોનો ક્રમપૂર્વક ઉપન્યાસ કરવો તેનું
નામ પૂર્વાનુપૂર્વી છે

પ્રશ્ન-(સે કિં તં પચ્છાણુપુર્વવી?) હે ભગવન્ ! પશ્ચાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(પચ્છાણુપુર્વવી) પશ્ચાનુપૂર્વી આ પ્રકારની છે-(ઈસિપવ્મારા જાવ
સોહમ્મે) ઈષત્પ્રાગ્ભારા ભૂમિથી શરૂ કરીને સૌધર્મકલ્પ પર્યન્તના ક્ષેત્રોનો
ઉલટા ક્રમમાં જે ઉપન્યાસ કરવામાં આવે છે-ગણતરી કરવામાં આવે છે
(સે તં પચ્છાણુપુર્વવી) તેનું નામ પશ્ચાનુપૂર્વી છે

પ્રશ્ન-(સે કિં તં અણાણુપુર્વવી?) ઝર્ધ્વલોક સંબંધી અનાનુપૂર્વીનું
સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(અણાણુપુર્વવી) ઝર્ધ્વલોક સંબંધી અનાનુપૂર્વી આ પ્રકારની છે-
(एयाए चैव एगाइयाए एगुत्तरियाए पन्नरसगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नव्मासो
दूरूवूणो) આ અનાનુપૂર્વીમાં જે શ્રેણી સ્થાપિત કરવામાં આવે છે તેમાં સૌથી

મ્યાસે યાવન્તો ભક્ષકા ભવન્તિ, તે આગ્રન્તવિવક્ષારહિતા ભક્ષા બોધ્યાઃ સમ્પ્રતિ-
ઔપનિધિકીં ક્ષેત્રાનુપૂર્વીં પ્રકારત્રયેણ પ્રદર્શયિતુમાદ-‘અહવા’ इत्यादि । अथवा-
ઔપનિધિકીક્ષેત્રાનુપૂર્વીં પૂર્વાનુપૂર્વ્યાદિભેદૈસ્ત્રિવિધા વિજ્ઞેયા । તત્ર-પૂર્વાનુપૂર્વીં

પિત્ત કી જાતી છે તેમાં સૌથી પ્રથમ ૧ સંખ્યા રાખી જાતી છે વાદ ૨
૧૫ સંખ્યા તક થતી છે । ફિર તેમાં પરસ્પર ૨માં ગુણા ક્રિયા જાતા છે ।
જો ગુણન ફલ આતા છે તેમાં આદિ અન્ત કે દો ભંગ કમ કર દિયે
જાતે છે । ક્યોંકી આદિકા ભક્ષ આનુપૂર્વીં ૨માં આજાતા છે ઔર અન્તકા
ભક્ષ પશ્ચાનુપૂર્વીં ૨માં આજાતા છે । ફિસલિયે અનાનુપૂર્વીં ૨માં આદિ અન્ત કે
દો ભંગ છોડને કો કહા છે । ફિસ પ્રકાર (સે ણં અણાણુપુર્વી) યહ
ઊર્ધ્વલોક સંબન્ધી અનાનુપૂર્વીં બન જાતી છે । (અહવા) અથવા-ઓવ-
ણિહિયા-લેક્ષાણુપુર્વી તિવિહા પળ્લન્તા) ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વી-ત્રીન
પ્રકાર કી પ્રજ્ઞસ હુઈ છે । (તં જહા) જૈસા-(પુર્વાણુપુર્વી, પચ્છાણુપુર્વી,
અણાણુપુર્વી) પૂર્વાનુપૂર્વીં પશ્ચાનુપૂર્વીં ઔર અનાનુપૂર્વીં (સે કિં તં
પુર્વાણુપુર્વી) પૂર્વાનુપૂર્વીં ક્યા છે ?

ઉત્તર-(પુર્વાણુપુર્વી) પૂર્વાનુપૂર્વીં ફિસ પ્રકાર સે છે-(અગપસોગાદે
દુષ્પસોગાદે દસપસોગાદે સંસ્થિજ્જપસોગાદે જાવ અસંસ્થિજ્જપસોગાદે

પહેલાં એક સંખ્યા રાખવામાં આવે છે, ત્યારબાદ ઉત્તરોત્તર એક
એકની વૃદ્ધિ થતી જાય છે. આ પ્રકારની વૃદ્ધિ અહીં ૧૫ સંખ્યા સુધી
કરાય છે. ત્યાર બાદ તેમાં પરસ્પરના ગુણાકાર આવે છે. જે ગુણનફળ
આવે તેમાંથી આદિનો એક અને અન્તનો એક એમ બે ભંગ બાદ કર-
વામાં આવે છે. કેમકે-આદિનો ભંગ આનુપૂર્વીમાં આવી જાય છે, અને
અન્તનો ભંગ પશ્ચાનુપૂર્વીમાં આવી જાય છે. તેથી અનાનુપૂર્વીમાં આદિ અને
અન્તનો એમ બે ભંગો છોડવાનું કહ્યું છે. (સે ણં અણાણુપુર્વી) આ પ્રકારે
ઊર્ધ્વલોક સંબન્ધી અનાનુપૂર્વીં બની જાય છે. (અહવા) અથવા-(ઓવણિહિયા-
લેક્ષાણુપુર્વી તિવિહા પળ્લન્તા) ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીં ત્રણ પ્રકારની કહી છે.
(તંજહા) તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે-(પુર્વાણુપુર્વી, પચ્છાણુપુર્વી, અણાણુપુર્વી)
(૧) પૂર્વાનુપૂર્વી, (૨) પશ્ચાનુપૂર્વી અને (૩) અનાનુપૂર્વી.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં પુર્વાણુપુર્વી) હે ભગવન્ । પૂર્વાનુપૂર્વીં તું સ્વરૂપ કેવું છે ?
ઉત્તર-(પુર્વાણુપુર્વી) પૂર્વાનુપૂર્વીં આ પ્રકારની છે. (અગપસોગાદે, દુષ્પ
પસોગાદે, દસપસોગાદે, સંસ્થિજ્જપસોગાદે જાવ અસંસ્થિજ્જપસોગાદે) એક

एकप्रदेशावगाढादारभ्यासंख्येयप्रदेशावगाढान्ता बोध्या । पश्चानुपूर्वी तु असंख्ये-
यप्रदेशावगाढमारभ्य एकप्रदेशावगाढान्ता बोध्या । अनानुपूर्वी तु—एकप्रदेशाव-
गाढादारभ्य असंख्येयप्रदेशावगाढानान्योऽन्याभ्यासेऽसंख्येया भङ्गा भवन्ति ।
तेषु आद्यन्तविवक्षा नास्ति, औपनिधिकीक्षेत्रानुपूर्वी समाप्तेति सूचयितुमाह—

गाढे) एक प्रदेशावगाढ, दो प्रदेशावगाढ, दशपण्णावगाढ संख्यात प्रदे-
शावगाढ यावत् असंख्यात प्रदेशावगाढ (से किं तं पच्छाणुपुव्वी)
पश्चानुपूर्वी क्या है ?

उत्तर— (पच्छाणुपुव्वी) पश्चानुपूर्वी इस प्रकार से है । (असंखिज्ज
पण्णो) संखिज्जपण्णो) गाढे जाव एगपण्णो) असंख्यातप्रदे-
शावगाढ, संख्यात प्रदेशावगाढ यावत् एकप्रदेशावगाढ (से तं पच्छा-
णुपुव्वी) इस प्रकार यह पश्चानुपूर्वी है । (से किं तं अण्णुपुव्वी) हे
भदन्त ! अनानुपूर्वी क्या है ?

उत्तर— (अण्णुपुव्वी) अण्णुपूर्वी इस प्रकार से है— (एगाए चेव
एगाइयाए एगुत्तरियाए संखिज्जगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नवभासो
दूखवूणो) इन पदों का अर्थ पहले दिया गया है । तात्पर्य यह है कि
यहां जो श्रेणी सांडी जावेगी वह एक से प्रारंभ कर एक की वृद्धि होते
२ असंख्यात तक होती जावेगी फिर उन सबका परस्पर में गुणा करने
पर जो असंख्यात भंग रूप महाराशि उत्पन्न होगी उससे से आदि

પ્રદેશાવગાઢ, એ પ્રદેશાવગાઢ, કસ પર્યન્તના પ્રદેશાવગાઢ, સંખ્યાત પ્રદેશા-
વગાઢ અને અસંખ્યાત પ્રદેશાવગાઢ (સે-તં પુવ્વાણુપુવ્વી) આ ક્રમની જે
ક્ષેત્રાનુપૂર્વી છે તેને પૂર્વાનુપૂર્વી કહે છે.

પ્રશ્ન—(સે-તં પચ્છાણુપુવ્વી?) હે ભગવન્ ! પશ્ચાનુપૂર્વી કેવી હોય છે?

ઉત્તર—(પચ્છાણુપુવ્વી) પશ્ચાનુપૂર્વી આ પ્રકારની હોય છે—(અસંખિજ્જપ-
ણ્ણો) ગાઢે, સંખિજ્જપણ્ણો) ગાઢે જાવ એગપણ્ણો) અસંખ્યાત પ્રદેશાવગાઢ,
સંખ્યાત પ્રદેશાવગાઢ અને એજ પ્રકારના ઉલ્ટા ક્રમમાં એકપ્રદેશાવગાઢ પર્ય-
ન્તના પદોનો ઉપન્યાસ કરવો (સે-તં પચ્છાણુપુવ્વી) તેનું નામ પશ્ચાનુપૂર્વી છે.

પ્રશ્ન—(સે-તં અણ્ણુપુવ્વી) અનાનુપૂર્વી આ પ્રકારની હોય છે—(એગા
ચેવ એગાઈયાએ એગુત્તરિયાએ અસંખિજ્જગચ્છગયાએ સેઢીએ અન્નમન્નવભાસોદુક્ખૂણો)
આ પદોનો અર્થ પહેલાં આપવામાં આવ્યો છે એટલે કે આહી જે શ્રેણી
સ્થાપિત કરવામાં આવશે તે એકથી શરૂ કરીને એક એકની વૃદ્ધિ કરતાં
કરતાં અસંખ્યાત પર્યન્તની થઈ જશે ત્યાર બાદ તે સૌનો પરસ્પરની સાથે
ગુણકાર કરવાથી જે અસંખ્યાત ભંગરૂપ મહારાશિ ઉત્પન્ન થઈ તેમાંથી

‘સે તં ઓવણિહિયા’ इत्यादि । सैषा औपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वी । इत्थं क्षेत्रानुपूर्वी समाप्तेति सूचयितुमाह-‘सं तं’ इत्यादि । सैषा क्षेत्रानुपूर्वी ॥सू० १२३॥

उक्ता क्षेत्रानुपूर्वी, सम्प्रति पूर्वोद्दिष्टापेक्ष क्रमप्राप्तां कालानुपूर्वीं विवृणोति-
मूलम्-सं किं तं कालानुपूर्वी? कालानुपूर्वी द्विविधा
पणज्जा, तंजहा-ओवणिहिया अणोवणिहियाय ॥सू० १२४॥

छाया—अथ का सा कालानुपूर्वी? कालानुपूर्वी द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा-
औपनिधिकी अनौपनिधिकी च ॥सू० १२४॥

टीका—‘सं किं तं’ इत्यादि । व्याख्या स्पष्टा ॥सू० १२४॥

मूलम्-तत्थ णं जा सा ओवणिहिया सा दृप्पा । तत्थ णं
जा सा अणोवणिहिया सा दुविहा पणज्जा, तं जहा-णैगम-
ववहाराणं संगहस्स य ॥सू० १२५॥

छाया—तत्र खलु या सा औपनिधि सा स्थाप्या । तत्र खलु या सा
अनौपनिधिकी सा द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा-नैगमव्यवहारयोः संग्रहस्य च ॥सू. १२५॥

टीका—‘तत्थ णं’ इत्यादि । व्याख्यातमायमिदं सूत्रम् ॥सू० १२५॥

अंत के दो भंग कम कर दिये जात्रेजे-(सं तं अणानुपूर्वी) इस प्रकार
से क्षेत्र संबन्धी अनानुपूर्वी बनती है । (सं तं ओवणिहिया खेत्ताणु-
पुव्वी) इस प्रकार औपनिधिकी क्षेत्रानुपूर्वी है इस प्रकरण के समाप्त-
होते ही क्षेत्रानुपूर्वी का स्वरूप समाप्त हो जाता है । ॥ सू० १२३ ॥

अब सूत्रकार पूर्वोद्दिष्ट ही क्रमप्राप्त कालानुपूर्वी का कथन करते हैं-
“सं किं तं” इत्यादि ।

शब्दार्थ-इस सूत्र की व्याख्या स्पष्ट की है । ॥ सू० १२४ ॥

આદિનો એક ભંગ અને અન્તનો એક ભંગ એમ બે ભંગ કરવામાં
આવશે (સં કિં તં અણાણુપુવ્વી) આ પ્રકારે ક્ષેત્રસંબંધી અનાનુપૂર્વી બને છે.
(સં તં ઓવણિહિયા ચેત્તાણુપુવ્વી) આ પ્રકારે ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું સ્વ-
રૂપ છે. (સં તં ચેત્તાણુપુવ્વી) ઔપનિધિકી ક્ષેત્રાનુપૂર્વીનું કથન સમાપ્ત થવાથી
ક્ષેત્રાનુપૂર્વીના સ્વરૂપનું નિરૂપણ અહીં પૂરું થાય છે. ॥સૂ. ૦૧૨૩॥

હવે સૂત્રકાર પૂર્વોદ્દિષ્ટ ક્રમપ્રાપ્ત કાલાનુપૂર્વીનું કથન કરે છે—

“સં કિં તં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—આ સૂત્રની વ્યાખ્યા સ્પષ્ટ છે. ॥સૂ. ૦૧૨૪॥

મૂલ્ય—સે કિં તં જોગમવવહારાણં અજોવણિહિયા કાલાણુપુઘ્વી? અજોવણિહિયાકાલાણુપુઘ્વી પંચવિહા પળ્લતા, તં જહા—અત્થ-પયપરૂવળયા, મંગસમુક્કિત્તળયા, મંગોવદંસળયા, સમોયારે, અણુગમે ॥સૂ૦ ૧૨૬॥

છાયા—અથ કા સા નૈગમવ્યવહારયોરનૌપનિધિકી કાલાનુપૂર્વી? અનૌપનિધિકી કાલાનુપૂર્વી પંચવિધા પ્રજ્ઞતા, તથથા—અર્થપદપ્રરૂપળતા, મજ્ઞસમુત્કીર્તનતા, મજ્ઞોપદર્શનતા, સમવતારઃ, અનુગમઃ ॥સૂ૦ ૧૨૬॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि । व्याख्याऽस्य स्पष्टा ॥सू० १२६॥

‘तत्थणं’ इत्यादि ।

શબ્દાર્થ—इन में जो औपनिधि कालानुपूर्वी है वह अल्पवक्तव्य विषय वाली होने से स्थाप्य है—अभी उसका विषय प्रतिपादन करने योग्य नहीं है । तथा जो अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी है वह दो प्रकार की है । एक नैगमव्यवहारनयसंमत अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी और दूसरी संग्रहनयसंमत अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी । यह सूत्र पहले व्याख्यात हो चुका है । ॥ सू० १२५ ॥

“સે કિં તં જોગમવવહારાણં” इत्यादि ।

(સે કિં તં જોગમવવહારાણં અજોવણિહિયા કાલાણુપુઘ્વી ?) हे भदन्त । नैगमव्यवहारनयसंमत अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी क्या है ? (अजोवणिहिया कालाणुपुघ्वी पंचविहा पण्णत्ता)

“ तत्थणं ” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—तेमां जे औपनिधिकी कालानुपूर्वीं छे, ते अल्प वक्तव्यविषय-वाणी होवाथी स्थाप्य छे—अटले के डमछां तेना विषयनुं प्रतिपादन करवुं ते योग्य नथी तेमांनी जे अनौपनिधिकी कालानुपूर्वीं छे तेना छे प्रकार छे—(१) नैगमव्यवहार नयसंमत अनौपनिधिकी कालानुपूर्वीं अने (२) संग्रहनयसंमत अनौपनिधिकी कालानुपूर्वीं आ सूत्रना विषयनी प्रश्नछा पड़ेलां थछे चुकी छे. ॥सू० १२५॥

“ સે કિં તં જોગમવવહારાણં ” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં જોગમવવહારાણં અજોવણિહિયા કાલાણુપુઘ્વી?) हे भगवन् ! नैगमव्यवहार नयसंमत अनौपनिधिकी कालानुपूर्वीं तुं स्वश्च केषुं छे? उत्तर—(अजोवणिहिया कालाणुपुघ्वी पंचविहा पण्णत्ता) अनौपनिधिकी

મૂળ—સે કિં તં ણેગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયા ? ણેગમ-
વવહારાણં અત્થપયપરૂવણયા—તિસમયાટ્ટિફ આણુપુઢ્વી જાવ
દસસમયાટ્ટિફ આણુપુઢ્વી સંઘિજસમયાટ્ટિફ આણુપુઢ્વી,
અસંઘિજસમયાટ્ટિફ આણુપુઢ્વી । એગસમયાટ્ટિફ અણાણુપુઢ્વી ।
દુસમયાટ્ટિફ અવત્તવગં । તિસમયાટ્ટિફયાઓ આણુપુઢ્વીઓ ।
એગસમયાટ્ટિફયાઓ અણાણુપુઢ્વીઓ । દુસમયાટ્ટિફયાઓ અવત્તવ-
ગાઈં । સે તં ણેગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયા । એયા ૧ ણં
ણેગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયાએ કિં પઓયણં ? એયા ૧ ણં
ણેગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયાએ ણેગમવવહારાણં ભંગસમુ-
ક્કિત્તણયા કઙ્ગઈ ॥સૂ૦ ૧૨૭॥

છાયા—અથ કા સા નૈગમવ્યવહારયોઃ અર્થપદપ્રરૂપણતા ? નૈગમવ્યવહારયોઃ
અર્થપદપ્રરૂપણતા—ત્રિસમયસ્થિતિક આનુપૂર્વી યાવદ્ દશસમયસ્થિતિક આનુપૂર્વી,

ઉત્તર—અનૌપનિધિ કી કાલાનુપૂર્વી પાંચ પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ ।
(તં જહા) વે પ્રકાર યે હૈ—(અત્થપયપરૂવણયા ભંગસમુક્કિત્તણયા, ભંગો
વદંસણયા, સમોચારે અણુગમે) અર્થપદપ્રરૂપણતા ભંગસમુત્કીર્તનતા
સમવતાર ઓર અનુગમ । હસ સૂત્ર કી વ્યાખ્યા સ્પષ્ટ હૈ । ॥સૂ૦ ૧૨૬॥

“સે કિં તં ણેગમવવહારાણં” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ણેગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયા ?) હે ભદન્ત !
નૈગમવ્યવહારનયસંમત અર્થપદપ્રરૂપણતા કયાં હૈ ? (ણેગમવવહારાણં
અત્થપયપરૂવણયા)

કાલાનુપૂર્વી પાંચ પ્રકારની કહી છે. (તંજહા) તે પાંચ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે
છે—(અત્થપયપરૂવણયા, ભંગસમુક્કિત્તણયા, ભંગોવદંસણયા સમોચારે અણુગમે) (૧)
અર્થપદપ્રરૂપણતા, (૨) ભંગસમુત્કીર્તનતા, (૩) ભંગોપદર્શનતા, (૪) સમવ-
તાર અને (૫) અનુગમ આ સૂત્રની વ્યાખ્યા સ્પષ્ટ છે. ॥સૂ૦ ૧૨૬॥

“સે કિં તં ણેગમવવહારાણં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ણેગમવવહારાણં અત્થપયપરૂવણયા ?) હે ભગવાન્ !
નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અર્થપદ પ્રરૂપણતાનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

સંખ્યેયસમયસ્થિતિક આનુપૂર્વી, અસંખ્યેયસમયસ્થિતિકઆનુપૂર્વી । એકસમય-
સ્થિતિક અનાનુપૂર્વી । દ્વિસમયસ્થિતિક અવક્તવ્યકમ્ । ત્રિસમયસ્થિતિકા આનુ-
પૂર્વ્યઃ । એકસમયસ્થિતિકા અનાનુપૂર્વ્યઃ । દ્વિસમયસ્થિતિકા અવક્તવ્યકાનિ ।
તૈવા નૈગમવ્યવહારયોઃ અર્થપદપ્રરૂપણતા । એતસ્યાઃ સ્વલ્લુ નૈગમવ્યવહારયોઃ
અર્થપદપ્રરૂપણતાયાઃ કિં પ્રયોજનમ્ ? એતસ્યાઃ સ્વલ્લુ નૈગમવ્યવહારયોરર્થપદપ્રરૂપણ-
તાયા નૈગમવ્યવહારયોર્મંજ્ઞસમુત્કીર્તનતા ક્રિયતે ॥ સૂ. ૧૨૭ ॥

ટીકા—‘સે કિં તે’ इत्यादि—

અથ કા સા નૈગમવ્યવહારસમ્પતા અર્થપદપ્રરૂપણતા ? इति प्रश्नः । उत्तरयति-
इत्थं च पर्यायपर्यायिणोरभेदोपचारमाश्रित्य, तत्र च कालपर्यायस्यैव प्राधान्य-
माश्रित्य कालपर्यायविशिष्टस्य द्रव्यस्यापि कालानुपूर्वीत्वं बोध्यम् । अनन्तसम-
यावधिद्रव्यस्य स्थितिः स्वभावादेव न भवति, अतोऽनन्तसमयस्थितिकः

उत्तर=नैगमव्यवहारनयसंमत अર્થપદપ્રરૂપણતા इस प्रकार से हैं-
(ति समयद्विह ए आणुपुन्वी, जाव दससमयदएद्विह ए आणुपुन्वी) जिस
द्रव्य विशेष की स्थिति तीन समय की हैं—अर्थात् तीन समय की स्थिति-
वाला जो द्रव्य विशेष है—वह त्रिसमयस्थितिक है । ऐसा त्रिसमय स्थिति-
क जो द्रव्य विशेष है वह आनुपूर्वी है, ऐसा द्रव्य विशेष एकपरमाणु
भी हो सकता है द्विपरमाणुक स्कंध भी हो सकता तीन परमाणु वाला
स्कंध भी हो सकता है, चार परमाणु वाला भी स्कंध हो सकता है,
पांच आदि परमाणु वाले स्कंध से लेकर अनंत परमाणुओं वाला स्कंध तक
भी हो सकता है । इस प्रकार एक परमाणु रूप द्रव्य से लेकर द्विपरमा-
णुक त्रिपरमाणुक आदि अनन्त परमाणुक स्कंध पर्यन्त जितने भी द्रव्य

ઉત્તર—(નેગમવ્યવહારાણં અત્યપયપ્રરૂપણયા) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અર્થપ-
દપ્રરૂપણતા આ પ્રકારની છે—(તિસમયદ્વિહ એ આણુપુન્વી, જાવ દસસમયદ્વિહ એ
આણુપુન્વી) જે દ્રવ્યવિશેષની સ્થિતિ ત્રણ સમયની હોય છે, તે દ્રવ્યવિશેષને
ત્રિસમયસ્થિતિ કહે છે એવું ત્રણ સમયની સ્થિતિવાળું જે દ્રવ્યવિશેષ છે,
તેને આડી આનુપૂર્વી રૂપ સપન્નુ નોંધએ એવું દ્રવ્યવિશેષ એક પરમાણુ
પણ હોઈ શકે છે, બે પરમાણુવાળો સ્કન્ધ પણ હોઈ શકે છે, ત્રણ પરમાણુ-
વાળો સ્કન્ધ પણ હોઈ શકે છે, ચાર પરમાણુવાળો સ્કન્ધ પણ હોઈ શકે છે,
અને પાંચથી લઈને અનંત સુધીના પરમાણુઓવાળા સ્કન્ધો પણ હોઈ શકે છે.

આ રીતે એક પરમાણુ રૂપ દ્રવ્યથી લઈને દ્વિપરમાણુક, ત્રિપરમાણુક
અનંત પરમાણુક સ્કન્ધ પર્યન્તના જેટલાં દ્રવ્યવિશેષ છે, તે ત્રણ સમયની સ્થિતિ-

કાલાનુપૂર્વી ન પ્રોક્તા । તથા-એકસમયસ્થિતિકઃ પરમાપ્ત્વાદનન્તપરમાણુકસ્કન્ધ પર્યન્તો દ્રવ્યવિશેષઃ અનાનુપૂર્વી । દ્વિસમયસ્થિતિકઃ પરમાપ્ત્વાદનન્તપરમાણુક-સ્કન્ધપર્યન્તો દ્રવ્યવિશેષઃ અશ્કલ્યકમ્ । તથા ત્રિસમયસ્થિતિકાઃ પરમાપ્ત્વાદનન્ત-પરમાણુકસ્કન્ધાત્મકા દ્રવ્યવિશેષા યાવદસંખ્યેયસમયસ્થિતિકાઃ પૂર્વોક્તદ્રવ્યવિશેષા

વિશેષ ત્રીન સમય કી સ્થિતિ વાલે હૈં વે સત્ર અનૌપનિધિકી કાલાનુ-પૂર્વી કે એદ રૂપ અર્થપદપ્રરૂપણા કે વિષય ભૂત હૈં । ઓર યે સથ એક ૨ અનાનુપૂર્વી હૈં । ઇસી પ્રકાર સે ચાર સમય કી સ્થિતિ વાલા-જિતના ભી દ્રવ્ય હૈં ઉસસે લેકર અસંખ્યાત સમય-કી સ્થિતિ વાલે દ્રવ્યોં તક જિતને દ્રવ્ય વિશેષ હૈં उन में प्रत्येक द्रव्यविशेष आनुपूर्वी हॆ ।

શંકા-યદિ દ્રવ્ય વિશેષ કો હી યહાં આનુપૂર્વી પના હૈ તો ફિર કાલાનુપૂર્વી એસા કહના વિરુદ્ધ પડતા હૈ । ક્યોંકિ કાલાનુપૂર્વી મેં કાલ મેં આનુપૂર્વીપના કહના ચાહિયે દ્રવ્ય વિશેષ મેં નહીં । યહાં તો આનુપૂર્વીપના દ્રવ્યવિશેષોં મેં કહા જારહા હૈ ।

ઉત્તર-યહાં જો દ્રવ્ય વિશેષોં મેં આનુપૂર્વી પના કહાં જારહા હૈ સો કેવલ-દ્રવ્યોં મેં નહીં કહા જારહા હૈ કિન્તુ જો-દ્રવ્ય સમ-યત્રય આદિ રૂપ કાલ પર્યાય સે વિશિષ્ટ હૈ ઉસમેં હી કહા જારહા હૈ । ઇસલિયે-યહાં સમયત્રય આદિરૂપ કાલપર્યાય સે યુક્ત હી દ્રવ્ય ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ । ઇસ પ્રકાર કાલ કી પર્યાય જો સમયત્રય આદિ

વાળાં છે, તે સઘળા અનૌપનિધિકી કાલાનુપૂર્વીના ભેદ રૂપ અર્થપદપ્રરૂપણ-તાના વિષયરૂપ છે. અને તેઓ બધાં એક એક અનાનુપૂર્વી રૂપ છે એજ પ્રમાણે ચાર સમયની સ્થિતિવાળાં બેટલાં દ્રવ્યો છે તે દ્રવ્યોથી લઈને અસંખ્યાત પર્યન્તની સ્થિતિવાળાં બેટલાં દ્રવ્યો છે, તેમાંનું પ્રત્યેક દ્રવ્યવિ-શેષ પણ આનુપૂર્વી રૂપ જ છે.

શંકા-જે દ્રવ્યવિશેષમાં જ આનુપૂર્વીતા માનવામાં આવે, તો “કાલા-નુપૂર્વી” આ પ્રકારનું કથન વિરુદ્ધ પડે છે, કારણ કે કાલાનુપૂર્વીના કથનમાં તો કાળમાં આનુપૂર્વીતા કહેવી જોઈએ-દ્રવ્યવિશેષમાં આનુપૂર્વીતા કહેવી જોઈએ નહીં. અહીં તો આપે દ્રવ્યવિશેષોમાં આનુપૂર્વીતા બતાવી છે. તો આ બાબતનો આપ શો ખુલાસો કરો છો ?

ઉત્તર-અહીં જે દ્રવ્યવિશેષોમાં આનુપૂર્વીતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે, તે કેવળ દ્રવ્યોમાં જ પ્રકટ કરવામાં આવી નથી, પરંતુ જે દ્રવ્ય સમયત્રય આદિ રૂપ કાળપર્યાયથી વિશિષ્ટ (યુક્ત) છે તેમાં જ પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે. તેથી અહીં સમયત્રય આદિ રૂપ કાળપર્યાયથી યુક્ત દ્રવ્ય જ ગ્રહણ કર-

પર્યાયી જો તદ્વિશિષ્ટ દ્રવ્ય હૈં સો इन दोनों में अभेद के उपचारका आश्रय करके और कालपर्यायकी ही प्रधानता-मानकर के काल पर्याय विशिष्ट द्रव्य सें भी कालानुपूर्वीपना जानना चाहिये । अनन्त समय तक रहनेवाले द्रव्य की स्थिति स्वभाव से ही नहीं होती है । अर्थात् कोई भी द्रव्य ऐसा नहीं है कि जिसकी स्थिति स्वभाव से अनन्त समयवाली हो । इसीलिये अनन्त समय की स्थितिवाली कालानुपूर्वी नहीं कही है । (संखिज्जसमयद्विइए आणुपुव्वी असंखिज्जसमयद्विइए आणुपुव्वी) इन पदोंका अर्थ विषयक खुलासा भी इसी कथन में हो चुका है । (एगसमयद्विइए अणानुपुव्वी) तथा जो परमाणुरूप द्रव्य, द्रव्य-णुक द्रव्य, त्र्यणुकद्रव्य यावत् संख्याताणुक द्रव्य, असंख्याताणुक और अनंताणुक द्रव्य एक समय की स्थितिवाला है वह अनानुपूर्वी है । (दुसमयद्विइए अवत्तव्वगं) तथा जो दो समयकी स्थितिवाला परमाणु-रूप द्रव्य, द्रव्यणुक द्रव्य त्र्यणुक द्रव्य यावत् संख्याताणुक द्रव्य, असं-ख्याणुक द्रव्य और अनंताणुक पर्यन्त तक का द्रव्य है वह सब अव-त्तव्यक द्रव्य है । (तिसमयद्विइयाओ आणुपुव्वीओ) तीन समयकी

વામાં આવેલ છે. આ પ્રકારે કાળની ત્રણ પર્યાયો અને તે ત્રણપર્યાયોવાળા દ્રવ્યમાં અભેદનો ઉપચાર કરીને અને કાળપર્યાયની જ પ્રધાનતા માનીને કાળપર્યાયવિશિષ્ટ દ્રવ્યમાં પણ કાલાનુપૂર્વીતા સમજવી જોઈએ દ્રવ્યની અનન્ત સમય મુદ્દી રહેવાની સ્થિતિ સ્વભાવથી જ હોતી નથી એટલે કે કોઈ પણ દ્રવ્ય એવું નથી કે જેની સ્થિતિ સ્વભાવથી જ અનન્ત સમયની હોય તેથી જ અનન્ત સમયની સ્થિતિવાળી કાલાનુપૂર્વી હોતી નથી તે કારણે અનન્ત સમયની સ્થિતિવાળી કાલાનુપૂર્વી અહીં પ્રકટ કરવામાં આવી નથી.

(સંખિજ્જસમયદ્વિइए आणुपुव्वी असंखिज्जसमयद्विइए आणुपुव्वी) આ સૂત્રપાઠનો અર્થ પણ ઉપર્યુક્ત કથનમાં સ્પષ્ટ થઈ ચુક્યો છે.

(एगसमयद्विइए अणानुपुव्वी) तथा જે પરમાણુ રૂપ દ્રવ્ય, જે અણુ-વાળું દ્રવ્ય, ત્રણ અણુવાળું દ્રવ્ય, ચારથી લઈને સંખ્યાત પર્યન્તના અણુ-વાળું દ્રવ્ય, અસંખ્યાત અણુક દ્રવ્ય અને અનંતાણુક દ્રવ્ય એક સમયની સ્થિતિવાળું હોય છે, તેને અનાનુપૂર્વી રૂપ સમજવું. (दुसमयद्विइए अवत्तव्वगं) तथा જે સમયની સ્થિતિવાળું જે પરમાણુ રૂપ દ્રવ્ય, જે અણુવાળું દ્રવ્ય, ત્રણથી લઈને સંખ્યાત પર્યન્તના અણુવાળું દ્રવ્ય, અસંખ્યાત અણુક દ્રવ્ય અને અનંત અણુક દ્રવ્ય હોય છે તેને અવક્તવ્યક દ્રવ્યરૂપ સમજવું.

આનુપૂર્વ્યઃ । એકસમયસ્થિતિકા અનાનુપૂર્વ્યઃ । દ્વિસમયસ્થિતિકા અવક્તવ્યકાનિ ।
સૈવા નૈગમવ્યવહારસમ્મતા-અર્થપદપ્રરૂપણતા । एतस्याः खलु नैगमव्यवहारयोरर्थ
પ્રરૂપણતાયાઃ કિં પ્રયોજનમ્ ? इति प्रश्नः । उत्तरयति-एतया खलु नैगमव्यवहार-
सम्मतयाऽर्थप्ररूपणतया नैगमव्यवहारयोः भङ्गसमुत्कीर्तनता क्रियते ॥सू० १२७॥

સ્થિતિવાલે જિતને બી પરમાણુ આદિ સે લેકર અનંતાણુક પર્યન્ત તક કે
સ્કન્ધાત્મક દ્રવ્ય વિશેષ હૈં વે તથા સંખ્યાત અસંખ્યાતસમયકી સ્થિતિ-
વાલે પરમાણુરૂપ દ્રવ્ય સે લેકર અનંતાણુક પર્યન્ત તક કે જિતને બી
દ્રવ્ય વિશેષ હૈં વે સ્વ બહુવચનાન્ત આનુપૂર્વી શબ્દ કે વાચ્યાર્થ હૈં ।
(एकसमयद्विहयाओ अणानुपुर्व्वीओ) तथा जितने भी एक परमाणुरूप
દ્રવ્ય સે લેકર અનંતાણુક પર્યન્ત તક કે દ્રવ્ય વિશેષ એક સમય કી
સ્થિતિવાલે હૈં વે સ્વ બહુવચનાન્ત અનાનુપૂર્વી શબ્દ કે વાચ્યાર્થ હૈં ।
(दुसमयद्विहयाओ अवक्तव्याहं) तथा दो समय की स्थितिवाले जितने
બી યે પૂર્વોક્ત દ્રવ્ય હૈં વે સ્વ બહુવચનાન્ત અવક્તવ્યક શબ્દ કે વાચ્યાર્થ
હૈં, (से तं नैगमव्यवहाराणं अत्यपयपरूषणया) इस प्रकार नैगमव्यवहार-
नयसंमत अर्थपदप्ररूपणता है । (एयाएणं नैगमव्यवहाराणं अत्यपयपरूष-
णाए किं पओचणं)

પ્રશ્ન-इस नैगमव्यवहारनयसंमत अर्थपदप्ररूपणता का क्या प्रयोजन है ?

(તિ સમયદ્વિહયાઓ અણાણુપુર્વ્વીઓ) તથા સમયની સ્થિતિવાળાં જેટલાં
પરમાણુ આદિથી લઈને અનંતાણુક પર્યન્તના સ્કન્ધાત્મક દ્રવ્યવિશેષો છે,
તેમને તથા સંખ્યાત, અસંખ્યાત સમયની સ્થિતિવાળા પરમાણુરૂપ દ્રવ્યથી
લઈને અનંતાણુક પર્યન્તના જેટલાં દ્રવ્યવિશેષો છે તેઓ બહુવચનાન્ત
આનુપૂર્વી શબ્દના વાચ્યાર્થ રૂપ છે.

(एक समयद्विहयाओ अणानुपुर्व्वीओ) तथा એક પરમાણુરૂપ દ્રવ્યથી
લઈને અનંતાણુક પર્યન્તના જેટલાં દ્રવ્યવિશેષો એક સમયની સ્થિતિવાળા
છે, તેઓ બધાં બહુવચનાન્ત અનાનુપૂર્વી શબ્દના વાચ્યાર્થ રૂપ છે.

(दुसमयद्विहयाओ अवक्तव्याहं) तथा બે સમયની સ્થિતિવાળાં જેટલાં
પૂર્વોક્ત દ્રવ્યો છે, તેઓ બધાં બહુવચનાન્ત અવક્તવ્યક શબ્દના વાચ્યાર્થ
રૂપ છે. (से तं नैगमव्यवहाराणं अत्यपयपरूषणया) नैगमव्यवहार नयसंमत
अर्थपदप्ररूपणतानुं आ प्रकारनुं स्वरूप છે.

પ્રશ્ન-(एयाएणं नैगमव्यवहाराणं अत्यपयपरूषणाए किं पओचणं ?) આ નૈગમ-
વ્યવહાર નયસંમત અર્થપદપ્રરૂપણતાનું પ્રયોજન શું છે ?

ઉત્તર-एयाएणं णेगमववहाराणं अत्थपयपरूवणाए णेगमववहाराणं भंगसमुत्क्रिणया कज्जइ) नैगमव्यवहारनयसंमत इस् अर्थपदप्ररू-
पणता से नैगमव्यवहारनयसंमत भंगसमुत्कीर्तनता की जाती है।

भावार्थ-सूत्रकार यहां कालानुपूर्वी का कथन कर रहे हैं। अतः उस विषयका सांगोपांग वर्णन करने के लिये उन्होंने इस आनुपूर्वी को औपनिधिकी और अनौपनिधिकी इस प्रकार के दो विभागों में विभक्त किया है। इन का शब्दार्थ क्या है? यह सब पीछे द्रव्यानुपूर्वी के प्रकरणमें स्पष्ट कर दिया गया है। औपनिधिकी आनुपूर्वी के स्वरूप आदिका कथन सूत्रकार अनौपनिधिकी आनुपूर्वी के कथन करने के बाद करेंगे। अतः उसे पहिले न कहकर वे अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी का सर्व प्रथम विवेचन करने के अमिप्राय से उसे नैगम-व्यवहारनय संमत अनौपनिधिकी और संग्रहनय संमत अनौपनिधिकी इन दो विभागों में विभक्त कर रहे हैं। इन में जो नैगमव्यवहारनय संमत अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी है वह अर्थपदप्ररूपणता, भंगसमुत्कीर्तनता, भंगोपदर्शनता, समवतार और अनुगम के भेद से ५ पांच प्रकार की है। अर्थपदप्ररूपणता में तीन समय से लेकर असंख्यात

ઉત્તર-(एयाएणं णेगमववहाराणं अत्थपयपरूवणयाए णेगमववहाराणं भंगसमु-
क्रिणया कज्जइ) नैगमव्यवहारनयसंमत आ अर्थपद प्ररूपणताने आधारै
नैगमव्यवहार नयसंमत भंगसमुत्कीर्तनता कराय छे.

ભાવાર્થ-સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં કાલાનુપૂર્વીનું કથન કર્યું છે. આ વિષયનું
સાંગોપાંગ વર્ણન કરવાને માટે સૂત્રકારે કાલાનુપૂર્વીના ઔપનિધિકી અને
અનૌપનિધિકી નામના બે વિભાગ પાડ્યાં છે આ બન્નેનો અર્થ દ્રવ્યાનુપૂ-
ર્વીના પ્રકરણમાં પહેલાં બતાવી દેવામાં આવેલ છે અનૌપનિધિકી આનુપૂ-
ર્વીના સ્વરૂપનું કથન કર્યા બાદ સૂત્રકાર ઔપનિધિકી આનુપૂર્વીના સ્વરૂપનું
કથન કરશે આ પ્રકારે સૂત્રકાર પહેલાં તેા અનૌપનિધિકી આનુપૂર્વીનું નિરૂ-
પણ કરે છે-તે માટે તેમણે અનૌપનિધિકી આનુપૂર્વીને નીચેના બે વિભાગોમાં
વિભક્ત કરી નાખી છે-(૧) નૈગમવ્યવહારનયસંમત અનૌપનિધિકી અને
(૨) સંગ્રહનયસંમત અનૌપનિધિકી તેમાંની જે નૈગમવ્યવહારનયસંમત
અનૌપનિધિકી કાલાનુપૂર્વી છે તેના નીચે પ્રમાણે પાંચ ભેદ પડે છે-(૧)
અર્થપદ પ્રરૂપણતા, (૨) ભંગસમુત્કીર્તનતા, (૩) ભંગોપદર્શનતા, (૪) સમ-
વતાર અને (૫) અનુગમ,

સમય તક કી સ્થિતિવાલા જિતના મી એક પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય હૈ-
 વહ સબ આનુપૂર્વી શબ્દ કા વાચ્યાર્થ હૈ । ક્યોંકિ યહાં કાલાનુપૂર્વીકા
 પ્રકરણ હૈ હસલિયે તીન આદિ સમયોં મેં રહનેવાલે દ્રવ્ય કો હી આનુ-
 પૂર્વી માના ગયા હૈ । એક પરમાણુ મી તીન સમયકી સ્થિતિવાલા હોતા
 હૈ, દો આદિ પરમાણુવાલા દ્રવ્ય મી તીન સમય કી સ્થિતિવાલા હોતા
 હૈ । અતઃ યે સબ આનુપૂર્વી શબ્દ કે વાચ્ય હૈં । હસી પ્રકાર સે ચાર આદિ
 સમયોં સે લેકર સંખ્યાત સમય ઓર અસંખ્યાત સમય તક કી મી
 સ્થિતિવાલે યે પૂર્વોક્ત દ્રવ્ય હોતે હૈં । હસલિયે યે સબ સ્વતંત્ર આનુપૂર્વી
 હૈં । એક સમયકી સ્થિતિવાલા એક પુદ્ગલપરમાણુ દ્રવ્ય ઓર દ્વયણુક
 આદિ અનંત પરમાણુક પર્યંત તક કા દ્રવ્ય અનાનુપૂર્વી હૈ । દો સમયકી
 સ્થિતિવાલા એક પુદ્ગલપરમાણુરૂપ દ્રવ્ય ઓર દ્વયણુક આદિ અનંત
 પરમાણુ યુક્ત તક કા દ્રવ્ય અવક્તવ્યક દ્રવ્ય હૈં । યહાં એક વચનાંત ઓર
 બહુવચનાંત જો આનુપૂર્વી આદિપદ સૂત્રકારને કહે હૈં ઉન કા
 કારણ યહ હૈ કિ તીન આદિ સમયોં કી સ્થિતિવાલે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય
 એક ૨ વ્યક્તિરૂપ મી હૈ ઓર અનેક અનંત-વ્યક્તિરૂપ મી હૈં । હસી

અર્થપદ પ્રરૂપણતામાં ત્રણ સમયથી લઈને અસંખ્યાત સમય પર્યંતની
 સ્થિતિવાળાં જોડલાં એક પરમાણુથી લઈને અનંત પર્યંતના પરમાણુવાળાં
 દ્રવ્યો છે, તે બધા દ્રવ્યોને આનુપૂર્વી રૂપ ગણવામાં આવે છે, કારણ કે અહીં
 કાલાનુપૂર્વીનો અધિકાર આવી રહ્યો છે તેથી ત્રણ આદિ સમયોની સ્થિતિ-
 વાળાં દ્રવ્યોને જ આનુપૂર્વી રૂપ માનવામાં આવ્યાં છે. એક પરમાણુ પણ
 ત્રણ સમયની સ્થિતિવાળું હોઈ શકે છે, બે આદિ પરમાણુવાળું દ્રવ્ય પણ
 ત્રણ સમયની સ્થિતિવાળું હોઈ શકે છે. તેથી એવાં ત્રણ સમયની સ્થિતિ-
 વાળાં દ્રવ્યો આનુપૂર્વી રૂપ છે એજ પ્રમાણે ચારથી લઈને સંખ્યાત સમયો,
 અને અસંખ્યાત પર્યંતના સમયોની સ્થિતિવાળાં એક પરમાણુવાળાં, અને
 બેથી લઈને અનંત પર્યંતના પરમાણુવાળાં દ્રવ્યો પણ હોઈ શકે છે એવાં
 બધાં દ્રવ્યો પણ સ્વતંત્ર આનુપૂર્વી રૂપ જ ગણાય છે. એક સમયની સ્થિતિ-
 વાળું એક પુદ્ગલ પરમાણુ રૂપ દ્રવ્ય અને બે આણુકથી લઈને અનંત આણુક
 પર્યંતનું દ્રવ્ય અનાનુપૂર્વી રૂપ ગણાય છે. બે સમયની સ્થિતિવાળું એક
 પુદ્ગલપરમાણુ રૂપ દ્રવ્ય અને બે આણુવાળાથી લઈને અનંત પર્યંતના
 આણુવાળું દ્રવ્ય અવક્તવ્યક રૂપ ગણાય છે. અહીં સૂત્રકારે જે એકવચનાંત
 અને બહુવચનાંત આનુપૂર્વી આદિ પદ બતાવ્યાં છે તેનું કારણ એ છે કે
 ત્રણ આદિ સમયોની સ્થિતિવાળાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યો એક એક વ્યક્તિ (પદાર્થ)

મૂલ્ય-સે કિં તં ણેગમવવહારાણં મંગસમુક્ષિત્તણયા? ણેગમવવહારાણં મંગસમુક્ષિત્તણયા-અત્થિ આણુપુટ્વી, અત્થિ અજાણુપુટ્વી, અત્થિ અવત્તવ્વગં। एवं दव्वाणुपुट्वीममेणं काला- णुपुट्वीए वि ते चेव छवीसं भंगा भाणियव्वा जाव से तं णेगमववहाराणं मंगसमुक्षित्तणया। एयाएणं णेगमववहाराणं मंगसमुक्षित्तणयाए किं पओयणं? एयाए णं णेगमववहाराणं मंग- समुक्षित्तणयाए णेगमववहाराणं भंगोवदंसणया कज्जइ॥सू० १२८॥

પ્રકાર સે અવત્તવ્યક ઓર અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કે વિષય મેં મી જાનના વાહિયે । ઇસકે છુલાસા કે લિયે દ્રવ્યાનુપૂર્વીં કે પ્રકરણમેં નૈગમવ્યવ- હારનયસંમત અર્થપદપ્રરૂપણતારૂપ આનુપૂર્વીં કા અર્થ દેખના વાહિયે । ઘઠાં દ્રવ્યાનુપૂર્વીં કા પ્રકરણ હોને સે ત્રીન આદિ પ્રદેશવાલે દ્રવ્ય કો આનુપૂર્વીં, એક પ્રદેશવાલે દ્રવ્ય કો અનાનુપૂર્વીં ઓર દો પ્રદેશવાલે દ્રવ્ય કો અવત્તવ્યક દ્રવ્ય કહા હૈ । તવ કિ યઠાં કાલાનુપૂર્વીં કે સબન્ધ સે ત્રીન આદિ સમય સ્થિત દ્રવ્યકો આનુપૂર્વીં, એક સમય સ્થિત દ્રવ્ય કો અનાનુપૂર્વીં ઓર દો સમયસ્થિત દ્રવ્ય કો અવત્તવ્યક દ્રવ્ય કહા હૈ । ઇસ એક વચ્ચનાન્ત ઓર વહુવચ્ચનાન્ત આનુપૂર્વીં આદિ અર્થપદ પ્રરૂપણતા કા પ્રયોજન વ્થા હૈ ? ઇસ વાત કો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ ॥સૂ. ૧૨૭॥

૩૫ પણ હોય છે. એજ પ્રમાણે અવક્રાન્તવ્યક અને અનાનુપૂર્વીં દ્રવ્યોના વિષયમાં પણ સમજવું તેના સ્પષ્ટીકરણ માટે દ્રવ્યાનુપૂર્વીંના પ્રકરણમાં નૈગ- મવ્યવહાર નયસંમત અર્થપદપ્રરૂપણ ૩૫ આનુપૂર્વીંનું પ્રકરણ વાંચી જવાની ભક્ષામણ કરવામાં આવે છે તે પ્રકરણમાં દ્રવ્યાનુપૂર્વીંનું નિરૂપણ કરેલું હોવાથી, ત્રણ આદિ પ્રદેશોવાળાં દ્રવ્યોને આનુપૂર્વીં ૩૫, એક પ્રદેશવાળા દ્રવ્યને અનાનુપૂર્વીં ૩૫ અને બે પ્રદેશવાળા દ્રવ્યને અવક્રાન્તવ્યક ૩૫ કહેવામાં આવેલ છે. પરન્તુ અહીં કાલાનુપૂર્વીંનું કથન ચાલતું હોવાથી ત્રણ આદિ સમયની સ્થિતિવાળા દ્રવ્યને આનુપૂર્વીં ૩૫, એક સમયની સ્થિતિવાળા દ્રવ્યને અના- નુપૂર્વીં ૩૫ અને બે સમયની સ્થિતિવાળા દ્રવ્યને અવક્રાન્તવ્યક ૩૫ કહેવામાં આવેલ છે. આ એકવચ્ચનાન્ત અને બહુવચ્ચનાન્ત અર્થપદપ્રરૂપણતાનું પ્રયોજન શું છે ? તે હવે સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે. ॥સૂ. ૧૨૭॥

છાયા—અથ કા સા નૈગમવ્યવહારયો મંગ્ગસમુત્કીર્તનતા? નૈગમવ્યવહારયો મંગ્ગસમુત્કીર્તનતા—અસ્તિ આનુપૂર્વી, અસ્તિ અનાનુપૂર્વી, અસ્તિ અવક્તવ્યકમ્। एवं सप्तसप्ततिद्वयोक्तद्रव्यानुपूर्वीगमेन कालानुपूर्व्यामपि त एव पङ्क्तिविंशतिर्मङ्गा भणितव्या यावत् सैषा नैगमव्यवहारयोर्मङ्गसमुत्कीर्तनता। एतस्याः खलु मङ्ग-

“સે કિં તં ળેગમવવહારાણં ” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ:- (સે કિં તં ળેગમવવહારાણં મંગસમુક્તિત્તણયા?) હે મદન્ત ! નૈગમવ્યવહારનયસંમત વહ મંગસમુત્કીર્તનતા કયા હૈ?

ઉત્તર:- (ળેગમવવહારાણં મંગસમુક્તિત્તણયા) નૈગમવ્યવહારનય-સંમત મંગસમુત્કીર્તનતા હસ પ્રકાર સે હૈ—(અત્થિ આણુપુઁવી, અત્થિ અણાણુપુઁવી અત્થિ અવક્તવ્યગં) આનુપૂર્વી હૈ, અનાનુપૂર્વી હૈ, અવક્ત-વ્યક હૈ (અંવં દવ્વાણુપુઁવીગમેણં કાલાણુપુઁવીએ વિ તે ચેવ છવ્વીસં મંગા માણિચવ્વા) હસ પ્રકાર દ્રવ્યાનુપૂર્વી મેં કથિત મંગસમુત્કીર્તનતા કે અનુરૂપ હસ કાલાપૂર્વી મેં ઓ વે હી ૨૬ ભંગ વના લેના ચાહિયે । ઓર—હસ પાઠ કો “સે તં ળેગમવવહારાણં મંગસમુક્તિત્તણયા ” હસ પાઠ તક સમાસ હુઆ જાનના ચાહિયે । (અયાએ ણં ળેગમવવહારાણં મંગસમુક્તિત્તણયાએ કિં પઓચણં?) નૈગમવ્યવહારનયસંમત હસ મંગ-સમુત્કીર્તનતા કા કયા પ્રયોજન હૈ?

“સે કિં તં ળેગમવવહારાણં ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ળેગમવવહારાણં મંગસમુક્તિત્તણયા?) હે લગવન્ ! નૈગમવ્યવહાર નયસંમત તે લંગસમુત્કીર્તનતાનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર—(ળેગમવવહારાણં મંગસમુક્તિત્તણયા) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત લંગસમુત્કીર્તનતાનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—

(અત્થિ આણુપુઁવી, અત્થિ અણાણુપુઁવી, અત્થિ અવક્તવ્યગં) આનુપૂર્વી છે, અનાનુપૂર્વી છે અને અવક્તવ્યક છે, (અંવં દવ્વાણુપુઁવીગમેણં કાલાણુપુઁવીએ વિ તે ચેવ છવ્વીસં મંગા માણિચવ્વા) આ પ્રકારે દ્રવ્યાનુપૂર્વીના પ્રકરણમાં જેવાં ૨૬ લંગ (લાંગાઓ) કહેવામાં આવ્યા છે, એવાં જ ૨૬ લાંગાઓ આ કાલાનુપૂર્વીના વિષયમાં પણ કહેવા લેઈએ. “સે તં ળેગમવવહારાણં મંગ-સમુક્તિત્તણયા ” આ સૂત્રપાઠ પર્યન્તનું સમસ્ત કથન અહીં પણ કરવું લેઈએ.

પ્રશ્ન—(અયાએ ળેગમવવહારાણં મંગસમુક્તિત્તણયાએ કિં પઓચણં?) નૈગમ-વ્યવહાર નયસંમત આ લંગસમુત્કીર્તનતાનું શું પ્રયોજન છે?

સમુન્નીર્તનતાયાઃ કિં પ્રયોજનમ્? એતયા સ્વહુ નૈગમવ્યવહારયોઃ મજ્જતમુત્કીર્તન-
તયા નૈગમવ્યવહારયોર્મજ્જોપદર્શનતા ક્રિયતે ॥સૂ૦ ૧૨૮॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि। व्याख्याऽस्य स्पष्टा ॥सू० १२८॥

ઉત્તર—(एयाए णं णेगमववहाराणं भंगसमुक्कित्तणयाए णेगमव-
वहाराणं भंगोवदंसणया कज्जइ) इस नैगमव्यवहारनयसंमत भंगसमु-
त्कीर्तनता से नैगमव्यवहारनयसंमत भंगोपदर्शनता की जाती है।
इस सूत्र की व्याख्या स्पष्ट है।—

भावार्थः—यहां इस प्रकार से जानना चाहिये—कि जो ये आनुपूर्वी
आदि तीन पद एकवचनान्त हैं उनसे तीन भंग बनते हैं। और जो
आनुपूर्वी आदि तीन पद बहुवचनान्त हैं उनसे भी तीन भंग बनते हैं।
इस प्रकार असंयोग पक्ष में ये जुदे २ छ भंग हो जाते हैं। और
संयोग पक्ष में इन तीन पदों के द्विसंयोगी भंग तीन होते हैं। इनमें
एक २ भंग में दो दो का संयोग होने पर एकवचन और बहुवचन को
लेकर चार चार भंग हो जाते हैं। इस प्रकार तीन भंग के द्विकसंयोगी
भंग चार २ होने से ये १२ बन जाते हैं। तथा त्रिकसंयोग में एकवचन
और बहुवचन को लेकर ८ भंग बनते हैं। इस प्रकार सब भंग मिलकर
२६ भंग होते हैं। इन भंगों की स्थापना के लिये द्रव्यानुपूर्वी के प्रकरण
का ७७ वां सूत्र देखना चाहिये। ॥सू० १२८॥

ઉત્તર—(एयाएणं णेगमववहाराणं भंगसमुक्कित्तणयाए णेगमववहाराणं भंगोव-
दंसणया कज्जइ) आ नैगमव्यवहार नयसंमत ભંગસમુત્કીર્તનતાને આધારે
નૈગમવ્યવહાર નયસંમત ભંગોપદર્શનતા કરવામાં આવે છે. આ સૂત્રની
વ્યાખ્યા સ્પષ્ટ છે.

ભાવાર્થ—અહીં ૨૬ ભંગ કેવી રીતે બને છે, તે હવે સમજાવવામાં
આવે છે—આનુપૂર્વી આદિ ત્રણ એકવચનનાંત પદોના ત્રણ ભંગ (ભાંગા)
બને છે. અને જે આનુપૂર્વી આદિ બહુવચનનાંત ત્રણ પદો છે તેમના ત્રણ
ત્રણ ભંગ બને છે આ રીતે કુલ ૬ ભંગ અસંયોગ પક્ષમાં થાય છે.

સંયોગ પક્ષમાં આ ત્રણ પદના દ્વિસંયોગી ભંગ ત્રણ થાય છે. તેમાં
પ્રત્યેક ભંગમાં બળ્લેનો સંયોગ થવાથી એકવચન અને બહુવચનવાળા
ચાર ચાર ભંગ બને છે. આ રીતે ત્રણ ભંગોના દ્વિસંયોગી ચાર ચાર ભંગ
થતા હોવાથી કુલ દ્વિકસંયોગી ભંગ ૧૨ થાય છે. અને ત્રિકસંયોગમાં એક-
વચન અને બહુવચનનાંત પદોનાં કુલ ૮ ભંગ થાય છે. આ પ્રકારે કુલ ૨૬
ભંગ થઈ જાય છે આ ભંગોની રચના સ્પષ્ટ રીતે સમજવા માટે દ્રવ્યાનુ-
પૂર્વીના પ્રકરણનું ૭૭મું સૂત્ર વાંચી લેવાની ભલામણ કરવામાં આવે છે. ॥સૂ૦ ૧૨૮॥

મૂલમ્—સે કિં તં ણેગમવવહારાણં મંગોવદંસણયા ? ણેગમમં
મંગોવદંસણયા—તિસમયદ્વિદ્વિ આણુપુઘ્વી, ઇગસમયદ્વિદ્વિ અણા-
ણુપુઘ્વી, દુસમયદ્વિદ્વિ અવત્તવ્વગં । તિસમયદ્વિદ્વિયા અણાણુપુઘ્વીઓ
ઇગસમયદ્વિદ્વિયા અણાણુપુઘ્વીઓ, દુસમયદ્વિદ્વિયા અવત્તવ્વયાહં,
અહવા—તિસમયદ્વિદ્વિ ય ઇગસમયદ્વિદ્વિ ય આણુપુઘ્વી ય અણા-
ણુપુઘ્વી ય । एवं तथा चैव दब्बाणुपुवी गमेणं छव्वीसं भंगा भाणि-
यव्वा जावसे तं णेगमववहाराणं मंगोवदंसणया ॥सू० १२९॥

છાયા—અથ કા સા નૈગમવ્યવહારયો મંજોપદર્શનતા ? નૈગમ. મંજોપદર્શ-
નતા—ત્રિસમયસ્થિતિક આનુપૂર્વી, એકસમયસ્થિતિક અનાનુપૂર્વી, દ્વિસમયસ્થિતિક
અવક્તવ્યકમ્ । ત્રિસમયસ્થિતિકા આનુપૂર્વ્યઃ । એકસમયસ્થિતિકા આનુપૂર્વ્યઃ ।

“ સે કિં તં ણેગમવવહારાણં ” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થઃ—(ણેગમવવહારાણં) હે મદન્ત ! નૈગમવ્યવહારનયસંમત
(તં) પૂર્વગ્રક્રાન્ત (સે) વહ—(મંગોવદંસણયા) મંગોવપદર્શનતા (કિં) કયા હૈ ?

ઉત્તરઃ—(ણેગમ. મંગોવદંસણયા) નૈગમવ્યવહારનયસંમત મંગોવ-
દર્શનતા હસ પ્રકાર સે હૈ—(તિસમયદ્વિદ્વિ આણુપુઘ્વી) ત્રીન સમય કી
સ્થિતિવાલા એક એક પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય આનુપૂર્વી હૈ । (ઇગસમયદ્વિદ્વિ
અણાણુપુઘ્વી) એક સમય કી સ્થિતિવાલા એક પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય
અનાનુપૂર્વી હૈ । (દુસમયદ્વિદ્વિ અવત્તવ્વગં) દો સમય કી સ્થિતિવાલા
એક પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય અવક્તવ્યક હૈ । (તિસમયદ્વિદ્વિયા આણુપુઘ્વીઓ)

“ સે કિં તં ણેગમવવહારાણં ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(ણેગમવવહારાણં) હે ભગવન્ ! નૈગમવ્યવહાર નયસંમત (તં)
પૂર્વગ્રક્રાન્ત (સે) તે (મંગોવદંસણયા) મંગોવપદર્શનતાનું (કિં) કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—(ણેગમવવહારાણં મંગોવદંસણયા) નૈગમવ્યવહારનયસંમત મંગો-
વપદર્શનતા આ પ્રકારની છે—

(તિસમયદ્વિદ્વિ આણુપુઘ્વી) ત્રણ સમયની સ્થિતિવાળું પ્રત્યેક પરમાણુ
આદિ દ્રવ્ય આનુપૂર્વી રૂપ છે. (ઇગસમયદ્વિદ્વિ અણાણુપુઘ્વી) એક સમયની
સ્થિતિવાળું એક પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય અનાનુપૂર્વી રૂપ છે. (દુસમયદ્વિદ્વિ
અવત્તવ્વગં) બે સમયની સ્થિતિવાળું એક પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય અવક્તવ્યક
રૂપ છે. (તિસમયદ્વિદ્વિયા આણુપુઘ્વીઓ) ત્રણ સમયની સ્થિતિવાળાં અનેક

દ્વિસમયસ્થિતિક્ષ્ણા અવક્તવ્યકાનિ । અથવા-ત્રિસમયસ્થિતિક્ષ્ણા એકસમયસ્થિતિક્ષ્ણા
આનુપૂર્વીચ અનાનુપૂર્વીચ । एवं तथैव द्रव्यानुपूर्वीगमेन षड्विंशतिर्भेदा भणितव्याः,
यावत् सैषा नैगमव्यवहारयो भङ्गोपदर्शनता ॥ सू० १२९॥

टीका-‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ । વ્યાખ્યા દ્રવ્યાનુપૂર્વીવદભ્યુહનીયા । સૂ० ૧૨૯॥

ત્રીન સમય કી સ્થિતિવાલે અનેક અપની ૨ એક સી જાતિવાલે પદાર્થ
આનુપૂર્વિયાં હૈં । (एगसमयद्विइया अणानुपुर्वीओ) एक समय में स्थिति-
वाले अनेक अपनी २ एक सी जातिवाले पदार्थ अनानुपूर्वियां हॆं ।
(दुसमयद्विइया अवक्तव्ययाइं) दो समय की स्थितिवाले अनेक अपनी
२ एक सी जातिवाले पदार्थ अवक्तव्यक हॆं । इस प्रकार ये एकवचनान्त
बहुवचनान्त पक्ष में ३-३ भंग हॆं । इस प्रकार से असंयोग पक्ष में इन
छ भंगों का अर्थ कथन है । संयोगपक्ष में एकवचन और बहुवचन
संपन्धी प्रथम और द्वितीय भंग को संयुक्त करने पर त्रिसमय की
स्थितिवाला पदार्थ एक आनुपूर्वी और एक समय की स्थितिवाला
पदार्थ एक अनानुपूर्वी का वाच्यार्थ जानना चाहिये । यही बात (अहवा
तिसमयद्विइए य एगसमयद्विइए य आणुपुर्वी य अणानुपुर्वी य) इस
पाठ द्वारा स्पष्ट की गई है । यह प्रथम चतुर्भंगी का प्रथम भंग है
(एवं तद्वाचैव द्रव्याणुपूर्वीगमेणं छव्रीसं भंगा भाणियव्वा जाव से तं नेग-
मववहाराणं भंगोवदसणया) इस प्रकार द्रव्यानुपूर्वी के पाठ के

પોતપોતાની એક સરખી જાતિવાળા પદાર્થો અનાનુપૂર્વીઓ ૩૫ છે. (દુસમ-
યદ્વિइया अवक्तव्ययाइं) બે સમયની સ્થિતિવાળા અનેક પોતપોતાની એક
સરખી જાતિવાળા પદાર્થો અવક્તવ્યકો ૩૫ છે. આ પ્રકારે એકવચનનાંત
અસંયોગ પક્ષમાં ત્રણ ભંગ અને બહુવચનનાંત અસંયોગ પક્ષમાં પણ ત્રણ
ભંગ બને છે. આ રીતે અસંયોગપક્ષે કુલ ૬ ભંગ બને છે. સંયોગપક્ષે
એકવચન અને બહુવચન સંબંધી પ્રથમ અને દ્વિતીય ભંગને સંયુક્ત
કરવાથી ત્રણ સમયની સ્થિતિવાળો પદાર્થ એક આનુપૂર્વી ૩૫ અને એક
સમયની સ્થિતિવાળો પદાર્થ એક અનાનુપૂર્વી ૩૫ સમજવો જોઈએ, એજ
વાત નીચેના સૂત્રપાઠ દ્વારા પ્રકટ કરવામાં આવી છે-

(अहवा तिसमयद्विइए य एगसमयद्विइए य आणुपुर्वी य अणानुपुर्वी य)
આ પ્રકારે પહેલી ચતુર્ભંગીનો પહેલો ભંગ ઉપર પ્રકટ કરવામાં આવ્યો છે.
(एवं तद्वाचैव द्रव्याणुपूर्वीगमेणं छव्रीसं भंगा भाणियव्वा जाव से तं नेग-
मववहाराणं भंगोवदसणया) આ પ્રકારે દ્રવ્યાનુપૂર્વીના પાઠમાં દર્શાવ્યા અનુસાર

અનુસાર યહાં પર “ સે તં ણેગમવવહારાણં ભંગોવદંસણયા ” ઇસ પાઠ પર્યન્ત ૨૬ ભંગ જાનના ચાહિયે । યહી ભંગોપદર્શનતા હૈ । યહાં ૨૬ ભંગ ઇસ પ્રકાર સે બનતે હૈ—

(૧) ત્રિસમયસ્થિતિક-એકપરમાણુ આદિ સે લેકર અનંતાણુક સ્કંધ પર્યન્ત દ્રવ્ય વિશેષ આનુપૂર્વી, (૨) એક સમય સ્થિતિક-એક પરમાણુ આદિ સે લેકર અનંતાણુક સ્કંધ પર્યન્ત દ્રવ્યવિશેષ અનાનુપૂર્વી (૩) દ્વિસમયસ્થિતિક-એકપરમાણુ દ્રવ્ય આદિ સે લેકર અનંતાણુક સ્કંધ પર્યન્ત દ્રવ્ય વિશેષ-અવક્તવ્યક યે ૩ ત્રીન ભંગ એકવચનાન્ત હૈ—

(૧) ત્રિસમયસ્થિતિક-અનેક એક ૨ પરમાણુ આદિ સે લેકર અનેક અનંતાણુક સ્કંધદ્રવ્યવિશેષ-આનુપૂર્વિયાં, (૨) એક સમયસ્થિતિક-અનેક એક ૨ પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય સે લેકર અનેક અનંતાણુક સ્કંધ પર્યન્ત અનાનુપૂર્વિયાં, (૩) દ્વિસમયસ્થિતિક-અનેક એક ૨ પરમાણુ આદિ સે લેકર અનેક અનંતાણુક સ્કંધ પર્યન્ત સમસ્ત અવક્તવ્યક યે ત્રીન ભંગ બહુવચનાન્ત હૈ ।

દો ૨ ભંગો કે સંયોગ સે પ્રથમ ચતુર્ભંગી ઇસ પ્રકાર સે બનતી હૈ—

(૧) આનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વી (૨) આનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વિયાં (૩) આનુપૂર્વિયાં

રના ૨૬ ભંગ અહીં પણ સમજવા ભેઠએ. “ સે તં ણેગમવવહારાણં ભંગો-વદંસણયા ” નૈગમચ્ચવહાર નયસંમત ભંગોપદર્શનતાનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે, આ સૂત્રપાઠ પર્યન્તનું સમસ્ત કથન અહીં ગ્રહણ કરવું ભેઠએ. આ પ્રકારનું ભંગોપદર્શનતાનું સ્વરૂપ સમજવું અહીં આ પ્રકારના ૨૬ ભંગ બને છે—

એકવચનાન્ત ત્રણ ભંગો—

(૧) ત્રિસમયસ્થિતિક-એક પરમાણુ દ્રવ્યથી લઈને અનંતાણુક સ્કંધ પર્યન્તના દ્રવ્યવિશેષરૂપ-આનુપૂર્વી (૨) એક સમયસ્થિતિક એક પરમાણુ દ્રવ્ય આદિથી લઈને અનંત આણુક સ્કંધ પર્યન્તના દ્રવ્યવિશેષ રૂપ આનુપૂર્વી (૩) બે સમયની સ્થિતિવાળા એક પરમાણુ દ્રવ્ય આદિથી લઈને અનંતાણુક સ્કંધ પર્યન્તના દ્રવ્યવિશેષ રૂપ અવક્તવ્યક બહુવચનાન્ત ત્રણ ભંગો—

(૧) ત્રણ સમયની સ્થિતિવાળાં અનેક એક એક પરમાણુ રૂપ દ્રવ્યોથી લઈને અનેક અનંતાણુક સ્કંધ પર્યન્તના દ્રવ્યવિશેષ આનુપૂર્વીઓ છે.

(૨) એક સમયની સ્થિતિવાળાં એક એક પરમાણુ રૂપ દ્રવ્યોથી લઈને અનેક અનંતાણુક સ્કંધો પર્યન્તના દ્રવ્યવિશેષો અનાનુપૂર્વીઓ છે.

(૩) બે સમયની સ્થિતિવાળાં અનેક એક એક પરમાણુ રૂપ દ્રવ્યોથી લઈને અનેક અનંતાણુક સ્કંધો પર્યન્તના દ્રવ્યવિશેષો અવક્તવ્યકો રૂપ છે. બે પદોના સંયોગથી પહેલી ચતુર્ભંગી (ચારભાંગા) નીચે પ્રમાણે બને છે—

(૧) આનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વી, (૨) આનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વીઓ, (૩) આનુ-

અનાનુપૂર્વી, (૪) આનુપૂર્વિયાં અનાનુપૂર્વિયાં । દ્વિતીય ચતુર્ભંગી-હસ પ્રકાર સે હૈ (૧) આનુપૂર્વી અવક્તવ્યક (૨) આનુપૂર્વી ઘણુ અવક્તવ્યક (૩) આનુપૂર્વિયાં એક અવક્તવ્યક (૪) અનેક આનુપૂર્વિયાં અનેક અવક્તવ્યક । તૃતીય ચતુર્ભંગી હસ પ્રકાર સે હૈ-(૧) અનાનુપૂર્વી અવક્તવ્યક (૨) અનાનુપૂર્વી ઘણુ અવક્તવ્યક (૩) અનાનુપૂર્વિયાં એક અવક્તવ્યક (૪) અનેક આનુપૂર્વિયાં અનેક અવક્તવ્યક । હસ પ્રકાર દો ૨ કે સંયોગ પક્ષ મેં દ્વિસંયોગી ભંગ હન એકવચનાન્ત ઘણુવચનાન્ત આનુપૂર્વી આદિ પદોં કે ચે ૧૨ ભંગ હૈ । તીન ૨ કે સંયોગ સે જો આઠ ભંગ બનતે હૈ વે હસ પ્રકાર સે હૈ-(૧) એક આનુપૂર્વી એક અનાનુપૂર્વી એક અવક્તવ્યક, (૨) એક આનુપૂર્વી એક અનાનુપૂર્વી અનેક અવક્તવ્યક (૩) એક આનુપૂર્વી અનેક અનાનુપૂર્વિયાં એક અવક્તવ્યક (૪) એક આનુપૂર્વી અનેક અનાનુપૂર્વી અનેક અવક્તવ્યક (૫) અનેક આનુપૂર્વિયાં એક અનાનુપૂર્વી એક અવક્તવ્યક, (૬) અનેક આનુપૂર્વિયાં એક અનાનુપૂર્વી અનેક અવક્તવ્યક (૭) અનેક આનુપૂર્વિયાં અનેક અનાનુપૂર્વિયાં એક અવક્તવ્યક (૮) અનેક આનુપૂર્વિયાં અનેક અનાનુપૂર્વિયાં અનેક અવક્તવ્યક

પૂર્વીઓ અનાનુપૂર્વી અને (૪) આનુપૂર્વીઓ અનાનુપૂર્વીઓ.

જે પદોના સંયોગથી બીજી ચતુર્ભંગી નીચે પ્રમાણે બને છે-

(૧) આનુપૂર્વી અવક્તવ્યક, (૨) આનુપૂર્વી ઘણા અવક્તવ્યકો, (૩) આનુપૂર્વીઓ એક અવક્તવ્યક, (૪) અનેક આનુપૂર્વીઓ અનેક અવક્તવ્યકો.

જે પદોના સંયોગથી ત્રીજી ચતુર્ભંગી આ પ્રમાણે બને છે-

(૧) એક આનુપૂર્વી એક અવક્તવ્યક, (૨) એક અનાનુપૂર્વી ઘણા અવક્તવ્યકો, (૩) ઘણી અનાનુપૂર્વી એક અવક્તવ્યક (૪) ઘણી અનાનુપૂર્વીઓ ઘણા અવક્તવ્યકો.

આ પ્રકારે એકવચનાન્ત અને ઘણુવચનાન્ત આનુપૂર્વી આદિ પદોના સંયોગથી કુલ ૧૨ દ્વિસંયોગી ભંગો થાય છે. હવે ત્રણ પદોના સંયોગથી જે ૮ ભંગો બને છે, તે પ્રકટ કરવામાં આવે છે,

(૧) એક આનુપૂર્વી એક અનાનુપૂર્વી અને એક અવક્તવ્યક (૨) એક આનુપૂર્વી, એક અનાનુપૂર્વી અને ઘણા અવક્તવ્યકો (૩) એક આનુપૂર્વી, અનેક અનાનુપૂર્વીઓ અને એક અવક્તવ્યક (૪) એક આનુપૂર્વી, અનેક અનાનુપૂર્વીઓ અને અનેક અવક્તવ્યકો (૫) અનેક આનુપૂર્વીઓ, એક અનાનુપૂર્વી અને એક અવક્તવ્યક (૬) અનેક આનુપૂર્વીઓ, એક અનાનુપૂર્વી અને અનેક અવક્તવ્યકો (૭) અનેક આનુપૂર્વીઓ, અનેક અનાનુપૂર્વીઓ અને એક અવક્તવ્યક (૮) અનેક આનુપૂર્વીઓ, અનેક અનાનુપૂર્વીઓ

મૂલમ્—સે કિં તં સમોયારે? સમોયારે જેગમવવહારાણં આણુપુત્રીદવ્વાઈં કહિં સમોયરંતિ? કિં આણુપુત્રીદવ્વેહિં સમોયરંતિ? અણાણુપુત્રીદવ્વેહિં સમોયરંતિ? અવત્તવગદવ્વેહિં સમોયરંતિ? એવં તિણિણવિ સદ્ધાણે સમોયરંતિ માણિયદ્વં સે તં સમોયારે ॥સૂ. ૧૩૦॥

છાયા—અથ કોડસૌ સમવતારઃ? નૈગમવ્યવહારયોરાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કુંત્ર સમવતરન્તિ? કિમાનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ? અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ વ્યક । હસ પ્રકાર યે સ્વયં મંગ ૨૬ હો જાતે હિં । હનકી વિશેષ જાનકારી કે લિયે દ્રવ્યાનુપૂર્વી પ્રકરણગત મંગોપદર્શનતા કો દેખના જાહિયે । ॥સૂ. ૧૨૯॥

“ સે કિં તં સમોયારે ? ” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થઃ—(સે કિં તં સમોયારે) હે મદંત । પૂર્વપ્રક્રાન્ત સમવતાર કા વ્યા સ્વરૂપ હિં ?—

ઉત્તર—(સમોયારે) પૂર્વપ્રક્રાન્ત (પહેલે પ્રારંભ કિયા હુવા) સમવતાર કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હિં ।—(જેગમવવહારાણં આણુપુત્રીદવ્વાઈં કહિં સમોયરંતિ) નૈગમવ્યવહારનયસંમત જો અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય હિં ડનકા અન્તર્ભાવ કહાં હોતા હે ? હસ પ્રકાર કે ચિન્તન પ્રકાર કા જો ઉત્તર દેતા હે વહી સમવતાર હે । યહ વિચાર હસ પ્રકાર સે હોના હે કિ

અને અનેક અવક્રતવ્યકે આ પ્રકારે અસંયોગી ૬, દ્વિકસંયોગી ૧૨ અને ત્રિકસંયોગી ૮ લાંગાઓ મળીને કુલ ૨૬ લાંગા થઈ જાય છે. તેમના વિષે વધુ માહિતી મેળવવી હોય તો દ્રવ્યાનુપૂર્વીના પ્રકરણમાં જે ભંગોપદર્શનતાનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે તે વાંચી જવાની ભલામણ કરવામાં આવે છે. ॥સૂ. ૧૨૬॥

“ સે કિં તં સમોયારે ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—પ્રશ્ન—(સે કિં તં સમોયારે?) હે ભગવન્ ! પૂર્વપ્રક્રાન્ત (અનીપનિધિકી કાલાનુપૂર્વીના એક પ્રકાર રૂપ) સમવતારનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(સમોયારે) પૂર્વપ્રક્રાન્ત સમવતારનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—(જેગમવવહારાણં આણુપુત્રીદવ્વાઈં કહિં સમોયરંતિ) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત જે અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યો છે તેમનો અન્તર્ભાવ (સમાવેશ) કયાં થાય છે ? શું સ્વસ્થાનમાં તેમનો સમાવેશ થાય છે કે પરસ્થાનમાં થાય છે ? આ પ્રકારની વિચારધારાનો જે ઉત્તર દેવો તેનું નામ સમવતાર છે. અહીં આ

અવક્તવ્યકદ્રવ્યેષુ સમવતરન્તિ ? एवं त्रीण्यपि स्वस्थाने समवतरन्ति इति भणित-
व्यम् । स एष समवतारः ॥सू० १३०॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ । અશીતિતમસૂત્રે દ્રવ્યાનુપૂર્વીવદસ્ય સૂત્રસ્ય
વ્યાખ્યા વોધ્યા ॥સૂ० ૧૩૦॥

નૈગમવ્યવહારનયસંમત સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય (કિં આણુપુઞ્વીદવ્વેહિં
સમોયરંતિ, અણાણુપુઞ્વી દવ્વેહિં-સમોયરંતિ, અવત્તવ્વગદવ્વેહિં સમો-
યરંતિ) કયા આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં મેં અન્તર્ભૂત હોતે હેં ? યા અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં
મેં અન્તર્ભૂત હોતે હેં ? યા અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં મેં અન્તર્ભૂત હોતે હેં ? (અં
તિણિગવિ સદ્દાણે સમોયરંતિ ઇતિ ભાણિયવં)

ઉત્તર-નૈગમવ્યવહારનયસંમત જો આનુપૂર્વી દ્રવ્ય હેં વે આનુપૂર્વી
દ્રવ્યોં મેં હી સમાવિષ્ટ નહીં હોતે હેં ઓર ન અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં મેં
સમાવિષ્ટ હોતે હેં । હસી પ્રકાર સે જિતને મી નૈગમવ્યવહારનયમાન્ય
અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય હેં વે અપની જાતિ મેં અન્તર્ભૂત હોતે હેં, મિન્ન જાતિ
મેં નહીં । નૈગમવ્યવહારનયસંમત અવક્તવ્યક દ્રવ્ય મી અવક્તવ્યક
દ્રવ્યોં મેં હી અન્તર્ભૂત હોતે હેં અન્ય આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોં મેં નહીં ।
હસ પ્રકાર આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી ઓર અવક્તવ્યક યે તીનોં મી દ્રવ્ય

પ્રકારની વિચારધારા ચાલે છે-નૈગમવ્યવહાર નયસંમત સમસ્ત આનુપૂર્વી
દ્રવ્ય (કિં આણુપુઞ્વીદવ્વેહિં સમોયરંતિ, અણાણુપુઞ્વીદવ્વેહિં સમોયરંતિ, અવત્ત-
વ્વગદવ્વેહિં સમોયરંતિ ?) શું આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં અન્તર્ભૂત થાય છે ? કે અના-
નુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં અન્તર્ભૂત થાય છે ? કે અવક્તવ્યક દ્રવ્યોમાં અન્તર્ભૂત થાય છે ?

ઉત્તર-(અં તિણિ વિ સદ્દાણે સમોયરંતિ ઇતિ ભાણિયવં) નૈગમવ્યવહાર
નયસંમત જે આનુપૂર્વી દ્રવ્યો છે તેઓ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં જ સમાવિષ્ટ
થાય છે, તેઓ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં સમાવિષ્ટ થતાં નથી અને અવક્તવ્યક
દ્રવ્યોમાં પણ સમાવિષ્ટ થતાં નથી. એજ પ્રમાણે નૈગમવ્યવહાર નયસંમત
જેટલાં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો છે, તેઓ પણ પોતાની જાતિમાં જ (અનાનુપૂર્વી
દ્રવ્યોમાં જ) સમાવિષ્ટ થાય છે, તેમનાથી ભિન્ન એવાં આનુપૂર્વી દ્રવ્યોમાં
અથવા અવક્તવ્યક દ્રવ્યોમાં સમાવિષ્ટ થતાં નથી એજ પ્રમાણે નૈગમવ્યવહાર
નયસંમત અવક્તવ્યક દ્રવ્યો પણ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોમાં જ સમાવિષ્ટ થાય
છે-અન્ય આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોમાં સમાવિષ્ટ થતાં નથી આ પ્રકારે આનુ-
પૂર્વી, અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક, આ ત્રણે પ્રકારનાં દ્રવ્યો પોતપોતાના

મૂલમ્—સે કિં તં અણુગમે? અણુગમે ણવવિહે પણ્ણત્તે, તં જહા—સંતપયપરુવણયા જાવ અપ્પાવહું ચેવ । ણેગમવવહારાણં આણુપુઠ્ઠીદઠ્ઠાઈં કિં અત્થિ ણત્થિ ૩? નિયમા તિણિણ વિ અત્થિ । ણેગમવવહારાણં આણુપુઠ્ઠીદઠ્ઠાઈં કિં સંખિજ્જાઈં અસંખિજ્જાઈં અણંતાઈં ૩? તિણિણ વિ નો સંખિજ્જાઈં, અસંખિજ્જાઈં, નો અણંતાઈં ॥ સૂ. ૧૩૧ ॥

છાયા—અથ કોઽસાવનુગમઃ ? અનુગમો નવવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથા—સત્પદ-પ્રરૂપણતા યાવદ્અલ્પવહુત્વં ચૈવ । નૈગમવ્યવહારયોરાનુપૂર્વી દ્રવ્યાણિ કિં સન્તિ ન

અપને ૨ સ્થાન રૂપ જાતિ મેં હીં અન્તર્ભૂત હોતે હેં હસ સૂત્ર કી વ્યાખ્યા કે લિયે દેલો પીછે કા ૮૦ વાં સૂત્ર ॥ ॥ સૂ. ૧૩૦ ॥

“ સે કિં તં અણુગમે ” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં અણુગમે?) હે મદંત ! અનુગમ કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(અણુગમે ણવવિહે પણ્ણત્તે) અનુગમ નૌ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । (તંજહા) જૈસે (સંતપયપરુવણયા, જાવ અપ્પાવહું ચેવ) સંતપદ-પ્રરૂપણતા સે લેકર અલ્પવહુત્વ તક—

અર્થાત્—(૧) સત્પદપ્રરૂપણતા, (૨) દ્રવ્યપ્રમાણ, (૩) ક્ષેત્ર (૪) સ્પર્શના (૫) કાલ (૬) અન્તર, (૭) આગ (૮) ભાવ (૯) અલ્પવહુત્વ । વિદ્યમાન પદાર્થ વિષયક પદ કી પ્રરૂપણા કા નામ સત્પદપ્રરૂપણતા હૈ । હસ મેં (ણેગમવવહારાણં આણુપુઠ્ઠીદઠ્ઠાઈં કિં અત્થિ ણત્થિ ૩) જો

સ્થાન રૂપ જાતિમાં જ અન્તર્ભૂત થાય છે. આ સૂત્રની વ્યાખ્યા માટે પાછળ ૮૦મું સૂત્ર વાંચી જવું જોઈએ ॥ સૂ. ૧૩૦ ॥

“ સે કિં તં અણુગમે ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં અણુગમે?) હે ભગવન્ ! અનુગમનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર—(અણુગમે ણવવિહે પણ્ણત્તે) અનુગમ નવ પ્રકારનો દેલો છે. (તંજહા) તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—

(સંતપયપરુવણયા, જાવ અપ્પાવહું ચેવ) સંતપદ પ્રરૂપણતાથી લઈને અલ્પવહુત્વ પર્યન્તના નવ પ્રકારો અહીં ગ્રહણ કરવા જોઈએ. તે નવ પ્રકારો હવે ગણાવવામાં આવે છે—

(૧) સત્પદ પ્રરૂપણતા, (૨) દ્રવ્યપ્રમાણ, (૩) ક્ષેત્ર, (૪) સ્પર્શના, (૫) કાળ, (૬) અન્તર, (૭) ભાગ (૮) ભાવ અને (૯) અલ્પવહુત્વ.

વિદ્યમાન પદાર્થવિષયક પદની પ્રરૂપણતાનું નામ સત્પદપ્રરૂપણતા છે. તેમાં (ણેગમવવહારાણં આણુપુઠ્ઠીદઠ્ઠાઈં કિં અત્થિ ણત્થિ ?) કોઈ એવો પ્રશ્ન

સન્તિ? નિયમાત્ ત્રીણ્યપિ સન્તિ । નૈગમવ્યવહારયોરાનુપૂર્વી દ્રવ્યાણિ કિં સંખ્યે-
યાનિ અસંખ્યેયાનિ અનન્તાનિ? ત્રીણ્યપિ નો સંખ્યેયાનિ, અસંખ્યેયાનિ, નો
અનન્તાનિ ॥ સૂ. ૧૩૧ ॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि—

શિષ્યઃ પૂછતિ—અથ કોઽસાવનુગમઃ? इति । उत्तरयति—अनुगमो नवविधः
प्रज्ञप्तः, तद्यथा—सत्पदप्ररूपणतेत्याद्यलवहुत्वान्तः । तथाहि—सत्पदप्ररूपणता १,
द्रव्यप्रमाणं २, क्षेत्रं ३, स्पर्शना ४, कालः ५, अन्तरम् ६, भागः ७, भावः ८, अल्प-
बहुत्वं ९ चेति । तत्र—सत्पदप्ररूपणतां निरूपयितुमाह—‘नेगमव्यवहाराणं’ इत्यादि-
नैगमव्यवहारसम्मतान्याऽऽनुपूर्वी द्रव्याणि किं सन्ति? न सन्ति वा? एवमना-
नुपूर्ववक्तव्यकविषयेऽपि प्रश्नो बोध्यः । उत्तरयति—नियमात् त्रીण्यपि=आनु-

कोई ऐसा प्रश्न करते हैं कि “नैगमव्यवहारनयसंमत आनुपूर्वी द्रव्य
हैं या नहीं हैं” इसी प्रकार का प्रश्न अनानुपूर्वी द्रव्यों और अवक्त-
व्यक द्रव्यों के भी विषय में होता है—तब इसका उत्तर—(णियमा तिणिण
वि अत्थि) “नियमतः ये तीनों द्रव्य हैं” ऐसा दिया जाता है । (नेगमवव-
हाराणं आणुपुर्वी दव्वाइं किं संखिज्जाइं असंखिज्जाइं अणंताइं ३?)
द्रव्यप्रमाण में आनुपूर्वी आदि पदों द्वारा जिन द्रव्यों को कहा जाता
है उनकी संख्या कितनी है इसका विचार होता है—जिसे इस पाठ
द्वारा वक्त किया गया है—प्रश्नकर्त्ता पूछता है कि नैगमव्यवहार-
नयसंमत आनुपूर्वी द्रव्य क्या संख्यात हैं, या असंख्यात हैं या
अनंत हैं? इसी प्रकार का प्रश्न प्रश्नकर्त्ता का अनानुपूर्वी और
अवक्तव्यक द्रव्यों के विषय में भी है । इसका उत्तर सूत्रकार ने (तिणिण

પૂછે કે “નૈગમવ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો છે કે નથી? અનાનુ-
પૂર્વી દ્રવ્યો છે કે નથી? અવક્તવ્યક દ્રવ્યો છે કે નથી?” તે તે પ્રશ્નનો
ઉત્તર આ પ્રમણે આપવામાં આવે છે—(ણિયમા તિણિણ વિ અત્થિ) “આ
ત્રણે દ્રવ્યો અવશ્ય વિદ્યમાન છે. આ પ્રકારે આનુપૂર્વી આદિ દ્રવ્યોના
અસ્તિત્વ વિષયક જે પ્રશ્નણ કરવામાં આવે છે તેનું નામ સત્પદપ્રશ્નણતા છે.

હવે દ્રવ્યપ્રમાણનું સ્વરૂપ સમજાવવામાં આવે છે—જે દ્રવ્યોને આનુપૂર્વી
આદિ રૂપે ઓળખવામાં આવે છે, તે દ્રવ્યોની સંખ્યાનો દ્રવ્યપ્રમાણમાં
વિચાર કરવામાં આવે છે એજ વાતને નીચેના સૂત્રપાઠ દ્વારા સ્પષ્ટ કરવામાં આવી છે—

પ્રશ્ન—(નેગમવવહારાણં આણુપુર્વીદવ્વાઈં કિં સંખિજ્જાઈં, અસંખિજ્જાઈં,
અણંતાઈં?), નૈગમવ્યવહાર નયસંમત સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો શું સંખ્યાત
છે, અસંખ્યાત છે, કે અનંત છે? આ પ્રકારનો પ્રશ્ન અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો
અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો વિષે પણ પૂછવો જોઈએ.

પૂર્વ્યનાનુપૂર્વ્યવત્કવ્યકાભિધેયાનિ ત્રીણ્યપિ સન્તિ । અથ દ્રવ્યપ્રમાણં નિરૂપયતિ-
'જોગમવચ્છારાણં' इत्यादि । नैगमव्यवहारसम्मतानि आनुपूर्वीद्रव्याणि किं संख्ये-
यानि असंख्येयानि अनन्तानि ? एवमनानुपूर्वीद्रव्यावक्तव्यकद्रव्यविषयेऽपि
प्रश्नो बोध्यः । उत्तरयति-त्रીण्यपि नो संख्येयानि नो अनन्तानि, किन्तु असं-
ख्येयानि । अत्रेदं बोध्यम्-द्रवादिसमयस्थितिकानि परमाण्वादि द्रव्याणि यद्यपीद
ल्लोके प्रत्येकमनन्तानि, तथापि समयत्रयलक्षणस्थितिरेकैव, कालस्य प्राधान्याद्
द्रव्यबहुत्वस्य गुणीभूतत्वाच्च । एवं च त्रिसमयस्थितिकैरनन्तैरपि एकमेवानुपूर्वी
द्रव्यम् । इत्थमेव चतुःसमयादि स्थितिकानन्तेषु यावदशसमयसंख्येयसमया

वि नो संखिज्जाइं, असंखिज्जाइं, नो अणंताइं) यों दिया हैं । वे कहते हैं
कि ये तीनों ही द्रव्य न संख्यात हैं और न अनंत हैं, किन्तु असं-
ख्यात हैं । तात्पर्य कहने का यह है कि-तीन समय की स्थितिवाले
प्रत्येक परमाणु आदि द्रव्य यद्यपि इसलोक में अनंत हैं तो भी उनकी
समयत्रयरूपस्थिति एक ही है । क्योंकि काल की यहाँ प्रधानता है और
द्रव्यबहुत्व की गौणता है । इसलिये समयत्रय की स्थितिवाले जितने
भी वे परमाणु आदि अनंत द्रव्य हैं वे सब अपनी २ तीन समय की
स्थितिकी अपेक्षा से एक ही आनुपूर्वी द्रव्य रूप हैं । इसी प्रकार से
यद्यपि चार, समय आदि की स्थितिवाले प्रत्येक परमाणु आदि द्रव्य
अनंत हैं, यावत् दश समय की स्थितिवाले, संख्यात समय की

ઉત્તર-(તિણિ વિ નો સંખિજ્જાઈં, અસંખિજ્જાઈં, નો અણંતાઈં) આનુપૂર્વી
આદિ ત્રણે પ્રકારના દ્રવ્યો સંખ્યાત પણ નથી, અનંત પણ નથી, પરંતુ
અસંખ્યાત છે. આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે ત્રણ સમયની સ્થિતિવાળાં
પ્રત્યેક પરમાણુ આદિ દ્રવ્યો ને કે આ લોકમાં અનંત છે, છતાં પણ તેમની
સમયત્રય રૂપ સ્થિતિ એક જ છે, કારણ કે કાળની અહીં પ્રધાનતા શરૂ
કરવાની છે અને દ્રવ્યબહુત્વની ગૌણતા સમજવાની છે તેથી ત્રણ સમયની
સ્થિતિવાળાં જેટલાં પરમાણુથી લઈને અનંત પર્યંતના પુદ્ગલ પરમાણુવાળાં
સ્કન્ધ રૂપ દ્રવ્યો છે, તેઓ બધાં પોતપોતાની ત્રણ સમયની સ્થિતિની
અપેક્ષાએ એક જ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ છે એજ પ્રમાણે ને કે ચાર આદિ
સમયની સ્થિતિવાળાં પ્રત્યેક પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય અનંત છે, દસ સમય
પર્યંતની સ્થિતિવાળાં, સંખ્યાત સમયની સ્થિતિવાળાં અને અસંખ્યાત
સમયની સ્થિતિવાળાં પરમાણુ આદિ દ્રવ્યો અનંત છે, છતાં પણ તેઓ
પોતપોતાની ચાર આદિ સમય, દસ પર્યંતના સમય, સંખ્યાત અને અસં-

સંખ્યેયસમયસ્થિતિકાનન્તેષુ एकैकेषामेकैकानुपूर्वीत्वं बोध्यम् । द्रव्यस्यानन्त-
समयस्थितिरेव न भवति तथाविधस्व-भावत्वात् । एवमेव अनानुपूर्वीं द्रव्याणि
अवक्तव्यकद्रव्याणि चाप्यसंख्येयानि बोध्यानि । ननु एकसमयस्थितिकस्य द्रव्यस्य
अनानुपूर्वीत्वं, द्विसमयस्थितिकस्य द्रव्यस्यावक्तव्यकत्वमुच्यते, तत्र यद्यपि लोके
स्थितिवाले, असंख्यात समय की स्थितिवाले परमाणु आदि द्रव्य अनंत
हैं तो भी वे अपनी २ चार आदि समय, दश समय, संख्यात समय,
और असंख्यात समयरूप स्थिति को एक होने की अपेक्षा से एक एक
आनुपूर्वीरूप हैं । अर्थात् चार आदि समय की स्थितिवाले जितने भी
अनन्त परमाणु द्रव्य एवं अनन्त स्कंध द्रव्य हैं वे अपनी चार समय
की स्थिति को एक होने के कारण एक आनु पूर्वी द्रव्य हैं । इसी प्रकार
से दश आदि समयोंकी स्थितिवाले अनंत परमाणु द्रव्य से लेकर अनंत
परमाणुक्त स्कंधों में भी एक २ को एक २ आनुपूर्वीरूपता अपनी २
स्थितिको एक होने की अपेक्षा से जानना चाहिये । द्रव्य की स्थिति
अनंत समय की नहीं होती है, क्योंकि ऐसा कोई द्रव्य ही नहीं है कि
जिसकी स्थिति अनन्त समय की हो । इसलिये आनुपूर्वी द्रव्यों को
असंख्यात माना गया है । इसी प्रकार से अनानुपूर्वी द्रव्य और अव-
क्तव्यक द्रव्य भी असंख्यात २ हैं ऐसा जानना चाहिये ।

शंका-एक समय की स्थितिवाला द्रव्य अनानुपूर्वी है और दो
समय की स्थितिवाला द्रव्य अवक्तव्यक है । इनमें यद्यपि लोक में एक

જ્યાત સમય રૂપ સ્થિતિ એક સરખી હોવાને કારણે એક એક આનુપૂર્વી
રૂપ છે. એટલે કે ચાર સમયની સ્થિતિવાળાં જેટલાં અનંત પરમાણુ દ્રવ્યો
અને અનંત સ્કન્ધ દ્રવ્યો છે. તેઓ ચાર સમયની એક સરખી સ્થિતિવાળાં
હોવાને કારણે એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યરૂપ છે એજ પ્રમાણે પાંચથી લઈને કશ
પર્યાન્તના સમયની સ્થિતિવાળાં, સંખ્યાત સમયની સ્થિતિવાળાં અને
અસંખ્યાત સમયની સ્થિતિવાળાં અનંત પરમાણુ દ્રવ્યોથી લઈને અનંત
પરમાણુ સ્કંધોમાં પણ, તે પ્રત્યેકની ચોતપોતાની સ્થિતિની એકરૂપતાને
કારણે તે પ્રત્યેકમાં પણ એક એક આનુપૂર્વી રૂપતા સમજવી જોઈએ દ્રવ્યની
સ્થિતિ અનંત સમયની હોતી નથી-એટલે કે એવું કોઈ પણ દ્રવ્ય નથી
કે જેની સ્થિતિ અનંત સમયની હોય તેથી આનુપૂર્વી દ્રવ્યોને અસંખ્યાત
જ માનવામાં આવેલ છે. એજ પ્રમાણે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો પણ અસંખ્યાત
જ છે અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો પણ અસંખ્યાત જ છે એમ સમજવું.

શંકા-એક સમયની સ્થિતિવાળું દ્રવ્ય અનાનુપૂર્વી છે, અને બે સમયની
સ્થિતિવાળું દ્રવ્ય અવક્તવ્યક છે એ કે લોકમાં એક સમયની સ્થિતિવાળાં

एकसमयस्थितिकानि द्विसमयस्थितिकानिच परमाण्वादिव्युत्पत्तिः प्रत्येकमनन्तानि सन्ति, तथापि पूर्वोक्तरीत्या एकसमयलक्षणाया द्विसमयलक्षणायाश्च स्थितिरेकैक-
रूपत्वाद् द्रव्यबाहुल्यस्य च गुणीभूतत्वादेकमेवानानुपूर्वीद्रव्यमेकमेव चावक्तव्यक-
द्रव्यं वक्तुमुचितं, न तु प्रत्येकमसंख्येयम् । ननु यदि च द्रव्यभेदेन भेदोऽङ्गीक्रियते
तर्हि प्रत्येकमनन्तं वक्तुमुचितम्, एकसमयस्थितीनां द्विसमयस्थितीनां च द्रव्याणां

एक समय की स्थितिवाले और दो समय की स्थितिवाले परमाणु आदि प्रत्येक द्रव्य अनन्त हैं, तो भी पूर्वोक्त रीति से एक समय की और दो समय की स्थिति को एक रूप होने से और द्रव्यबाहुल्य को गौण होने से एक ही अनानुपूर्वी द्रव्य और एक ही अवक्तव्यक द्रव्य है ऐसा कथन करना ही उचित है । प्रत्येक असंख्यात है ऐसा कहना उचित नहीं है । शंकाकार का तात्पर्य यह है कि कालानुपूर्वी में द्रव्य बाहुल्य गौण माना गया है और काल प्रधान—इसलिये एकसमय की स्थितिवाले जितने द्रव्य होंगे वे सब अपनी अपनी एक २ समय की स्थिति में एकरूपता होने के कारण एक ही अनानुपूर्वी द्रव्य कहे जावेंगे भिन्न २ असंख्यात अनानुपूर्वी द्रव्य नहीं । इस प्रकार जितने भी दो समय की स्थितिवाले द्रव्य होंगे वे सब अपनी २ दो २ समय की स्थिति को एक रूप होने से एक ही अवक्तव्यक द्रव्य माने जावेंगे भिन्न भिन्न असंख्यात अव-
क्तव्यक द्रव्य नहीं । यदि द्रव्य के भेद से इनमें भेद माना जावे तो फिर

अने બે સમયની સ્થિતિવાળાં પરમાણુ આદિ પ્રત્યેક દ્રવ્ય અનન્ત છે, છતાં પણ પૂર્વોક્ત રીતે એક સમયની અને બે સમયની સ્થિતિની એકરૂપતા હોવાથી અને દ્રવ્યબાહુલ્યની ગૌણતા હોવાથી “ એક જ અનનુપૂર્વી” દ્રવ્ય અને એક જ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય છે, ” એવું કથન કરવું ઉચિત ગણાત પ્રત્યેક અસંખ્યાત છે, એવું કથન કરવું ઉચિત લાગતું નથી શંકાકરનારના કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે— કાલાનુપૂર્વીમાં દ્રવ્યબાહુલ્યને ગૌણ માનવામાં આવ્યું છે અને કાળને પ્રધાન માનવામાં આવેલ છે. તેથી એક સમયની સ્થિતિવાળાં બેટલાં દ્રવ્યો હશે, તેમનામાં એક એક સમયની સ્થિતિ રૂપ એકતા હોવાને કારણે, એક જ અનનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ ગણવા લેઈએ— બિન્ન બિન્ન અસંખ્યાત અનનુપૂર્વી દ્રવ્યો રૂપ ગણવા લેઈએ નહીં એજ પ્રમાણે બે સમયની સ્થિતિવાળાં બેટલાં દ્રવ્યો હશે તે બધાંને પણ, પોતા- પોતાની બળે સમયની સ્થિતિની એકરૂપતાને કારણે, એક જ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય રૂપ માનવા પડશે—બિન્ન બિન્ન અસંખ્યાત અવક્તવ્યક દ્રવ્યો રૂપ માની

પ્રત્યેકમાનન્ટ્યાદિતિચેદાહ-લોકે હિ અસંખ્યેયા અવગાહભેદાઃ સન્તિ । એવં ચ
 એકસમયસ્થિતિકદ્વિસમયસ્થિતિકયોર્દ્રવ્યયોઃ એકૈકસ્ય અવગાહનાભેદેન ભિન્ન-
 તયા વિવક્ષિતત્યાત્પ્રત્યેકમસંખ્યેયં બોધ્યમ્ । પ્રત્યવગાહંચ એકસમયસ્થિતિક-
 દ્વિસમયસ્થિતિકાનેકદ્રવ્યસંભવાદનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકદ્રવ્યાણામાધારક્ષેત્રભેદાત્પ્રત્યેક-
 મસંખ્યેયત્વં ન વિરુદ્ધયતે ॥૩૧॥

હસ પ્રકાર સે તો હનમેં પ્રત્યેક મેં અસંખ્યાતતા ન કહકર યહાં સૂત્રકાર-
 કો અનંતતા પ્રત્યેક મેં કહના ઉચિત થા ક્યોં કિ એક સમય કી
 સ્થિતિવાલે દ્રવ્યોં મેં ઓર દો સમય કી સ્થિતિવાલેદ્રવ્યોં મેં પ્રત્યેક
 દ્રવ્ય અનન્ત હૈ ?

ઉત્તર-લોક મેં અવગાહ ભેદ અસંખ્યાત હૈં । હસલિયે એક સમય
 કી સ્થિતિવાલે જિતને દ્રવ્ય હૈં ઓર દો સમય કી સ્થિતિવાલે જિતને
 દ્રવ્ય હૈં ડનમેં સે એક ૨ દ્રવ્ય મેં અવગાહના કે ભેદ સે ભિન્નતા હૈ ।
 હસ ભિન્નતા કી વિવક્ષા કી વજહ સે પ્રત્યેક દ્રવ્ય અસંખ્યાત હૈ-એસા
 જાનના ચાહિયે । હરએક અવગાહમેં એક સમય કી સ્થિતિવાલે ઓર દો
 સમય કી સ્થિતિવાલે અનેક દ્રવ્યોં કા રહના સંભવિત હોતા હૈ । હસ-
 લિયે અસંખ્ય અવગાહ મેં અનાનુપૂર્વી ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કે રહને
 કે કારણ ડનકે આધારભૂત ક્ષેત્ર મેં ભેદ હો જાતા હૈ । હસલિયે હનમેં

શકાશે નહીં જે દ્રવ્યના લેહને લીધે તેમની વચ્ચે લેહ માનવામાં આવે, તે
 તે પ્રત્યેકમાં અસંખ્યાતતા આવવાને બદલે અનંતતા જ આવવાને પ્રસંગ
 ઉપસ્થિત થશે તેથી સૂત્રકારે અહીં જે અસંખ્ય તતા કહી છે તેને બદલે
 પ્રત્યેકમાં અનંતતા જ કહેવી જોઈતી હતી, કારણ કે એક સમયની સ્થિતિ-
 વાળાં દ્રવ્યોમાં અને બે સમયની સ્થિતિવાળાં દ્રવ્યોમાં-એ પ્રત્યેકમાં-
 અનંતતા જ હોય છે.

ઉત્તર-લોકમાં અવગાહલેહ અસંખ્યાત છે તેથી એક સમયની સ્થિતિ-
 વાળાં જેટલાં દ્રવ્યો છે અને બે સમયની સ્થિતિવાળાં જેટલાં દ્રવ્યો છે,
 તેમાંના પ્રત્યેક દ્રવ્યમાં અવગાહનાના લેહને લીધે ભિન્નતા છે. આ ભિન્નતાની
 અપેક્ષાએ પ્રત્યેક દ્રવ્ય અસંખ્યાત છે, એમ સમજવું જોઈએ. દરેક
 અવગાહમાં એક સમયની સ્થિતિવાળાં અને બે સમયની સ્થિતિવાળાં અનેક
 દ્રવ્યોની વિદ્યમાનતા (રહેવાનું) સંભવિત હોય છે. તેથી અસંખ્ય અવગાહમાં
 અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોના રહેવાને કારણે તેમના આધારભૂત ક્ષેત્રમાં
 ભેદ પડી જાય છે તેથી તે દ્રવ્યોમાં-પ્રત્યેકમાં-અસંખ્યાતતાનું કથન વિરુદ્ધ

અથ ક્ષેત્રદ્વારં સ્પર્શનાદ્વારં ચ વક્તુમાહ—

મૂલપ—ગેગમત્રવહારાણં આણુપુઠ્વીદઘ્વાઈં અણાણુપુઠ્વીદઘ્વાઈં
અવત્તવ્વગદઘ્વાઈં લોગસ્સ કિં સંખિજ્ઞહિમાગે હોજ્જા ? અસંખિ-
જ્ઞહિમાગે હોજ્જા ? સંખેજ્જેસુ માગેસુ વા હોજ્જા ? અસંખેજ્જેસુ માગેસુ
વા હોજ્જા ? સવ્વલોપ વા હોજ્જા ? આણુપુઠ્વીદઘ્વાઈં ઇમં દઘ્વં
પહુચ્ચ સંખેજ્જહિમાગે વા હોજ્જા, અસંખેજ્જહિ માગે વા હોજ્જા,
સંખેજ્જેસુ વા, માગેસુ હોજ્જા, અસંખેજ્જેસુ વા માગેસુ હોજ્જા,
દેસૂળે વા લોપ હોજ્જા ? નાણાદઘ્વાઈં પહુચ્ચ નિયમા સવ્વલોપ
હોજ્જા । એવં અણાણુપુઠ્વીદઘ્વાઈં । આપસંતરેણ વા સવ્વપુચ્છાસુ

પ્રત્યેક મેં અસંખ્યાતતા કા કથન વિરુદ્ધ નહીં હૈ । નિર્દોષ હૈ । તાત્પર્ય
કહને કા યહ હૈં કિ લોક મેં એક સમય કી સ્થિતિવાલે દ્રવ્યોં કો રહને
કે સ્થાન અસંખ્યાત હૈ ક્યોં કિ લોકાકાશ સ્વયં અસંખ્યાત પ્રદેશી હૈ ।
इन द्रव्यों को रहने का एक ही एक प्रदेश रूप या दो प्रदेश रूप आधार
स्थान नहीं है । अतः एक प्रदेश रूप और दो आदि रूप आधार अनेक
होने के कारण उन असंख्यात आधार रूप स्थानों में ये प्रत्येक द्रव्य
असंख्यात रूप में रहते हैं इसलिये ये प्रत्येक असंख्यात हीं हैं अतः
भिन्न २ स्थानों में रहे हुए इन एक समय की और दो समय की स्थिति
वाले द्रव्यों में प्रत्येक में असंख्यातता का कथन निर्दोष है । ॥सू० १३१॥

પડતું નથી, પણ નિર્દોષ કથન રૂપ જ ગણી શકાય છે. આ કથનનો ભાવાર્થ
એ છે કે લોકમાં એક સમયની સ્થિતિવાળાં દ્રવ્યોને તથા બે સમયની
સ્થિતિવાળાં દ્રવ્યોને રહેવાનાં સ્થાન અસંખ્યાત છે, કારણ કે લોકાકાશ પોતે
જ અસંખ્યાત પ્રદેશોવાળું છે આ દ્રવ્યોને રહેવાનું એક જ પ્રદેશ રૂપ
અથવા બે પ્રદેશરૂપ આધારસ્થાન હોતું નથી તેથી એક પ્રદેશરૂપ અને બે
પ્રદેશ આદિ રૂપ આધાર અनेक હોવાને કારણે તે અસંખ્યાત આધાર રૂપ
સ્થાનોમાં તે પ્રત્યેક દ્રવ્ય અસંખ્યાત રૂપે રહે છે. (તેથી તે પ્રત્યેક અસંખ્યાત
જ છે. આ રીતે ભિન્ન ભિન્ન સ્થાનોમાં રહેલા એક સમયની અને બે સમયની
સ્થિતિવાળાં તે પ્રત્યેક દ્રવ્યમાં અસંખ્યાતનું કથન હોયરહિત જ છે) ॥સૂ० ૧૩૧॥

હોજા. । એવં અવત્તવગદ્વાણિ વિ જહા સ્વેત્તાણુપુઠ્વીપ । ફુસણા
કાલાણુપુઠ્વીપ વિ તહા સ્વેવ ભાણિયત્વા ॥સૂ૦ ૧૩૨॥

છાયા— નૈગમવ્યવહારયોઃ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ અવક્તવ્યક-
દ્રવ્યાણિ લોકસ્ય કિં સંખ્યેયમાગે ભવન્તિ ? અસંખ્યેયમાગે ભવન્તિ ? સંખ્યેયેષુ
માગેષુ વા ભવન્તિ ? અસંખ્યેયેષુ માગેષુ વા ભવન્તિ ? સર્વલોકે વા ભવન્તિ ?
આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય સંખ્યેયમાગે વા ભવન્તિ, અસંખ્યેયમાગે
વા ભવન્તિ, સંખ્યેયેષુ વા માગેષુ ભવન્તિ ? અસંખ્યેયેષુ વા માગેષુ ભવન્તિ ?
દેશેને વા લોકે ભવન્તિ । નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય નિયમાત્ સર્વલોકે ભવન્તિ ।
એવમનાનુપૂર્વીદ્રવ્યમ્ । આદેશાન્તરેણ વા સર્વપૃચ્છાસુ ભવન્તિ । એવમવક્તવ્યકદ્રવ્યા-
પ્યપિ યથા ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યામ્ । સ્પર્શનાકાલાનુપૂર્વ્યામપિ તથૈવ મણિતવ્યા ॥સૂ૦ ૧૩૨॥

ટીકા—‘નેગમવ્યવહારાણં’ ઇત્યાદિ—

નૈગમવ્યવહારસમ્પત્તાનિ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ લોકસ્ય કિં સંખ્યેયમાગે ભવન્તિ=
તિષ્ઠન્તિ ? ઇત્યાદિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—‘એકં દ્રવ્યં’ ઇત્યાદિ । આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ એકં

અથ સૂત્રકાર ક્ષેત્રદ્વાર ઓર સ્પર્શનદ્વાર કા કથન કરતે હૈ—

“નેગમવ્યવહારાણં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(નેગમવ્યવહારાણં) નૈગમવ્યવહારનયમાન્ય (આણુપુઠ્વી
દ્વાઈ) સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય (અણાણુપુઠ્વી દ્વાઈ) સમસ્ત અનાનુ-
પૂર્વી દ્રવ્ય (અવત્તવગદ્વાઈ) ઓર સમસ્ત અવક્તવ્યક દ્રવ્ય (લોગસ્સ)
લોક કે (કિં) કયા (સંસ્થિજ્જહમાગે હોજા) સંખ્યાત માગ મેં રહતે હૈ ?
(અસંસ્થિજ્જહમાગે હોજા) યા અસંખ્યાત માગ મેં રહતે હૈ (સંસ્થિજ્જેસુ-
માગેસુ વા હોજા) યા સંખ્યાત માગોં મેં રહતે હૈ ? (અસંસ્થિજ્જેસુ મા-
ગેસુ વા હોજા) યા અસંખ્યાત માગોં મેં રહતે હૈ ? (સવ્વલોપ વા હોજા)
યા સમસ્ત લોક મેં રહતે હૈ ?

હવે સૂત્રકાર ક્ષેત્રદ્વાર અને સ્પર્શનદ્વારનું કથન કરે છે.—

“નેગમવ્યવહારાણં” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(નેગમવ્યવહારાણં) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત (આણુપુઠ્વીદ્વાઈ)
સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યો, (અણાણુપુઠ્વીદ્વાઈ) સમસ્ત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો,
(અવત્તવગદ્વાઈ) અને સમસ્ત અવક્તવ્યક દ્રવ્યો (લોગસ્સ કિં સંસ્થિજ્જહમાગે
હોજા) થું લોકના સંખ્યાતમાં માગમાં રહે છે, (અસંસ્થિજ્જહમાગે
હોજા) કે અસંખ્યાત માગમાં રહે છે, (સંસ્થિજ્જેસુ માગેસુ વા હોજા) કે

દ્રવ્યં પ્રતીત્ય=આશ્રિત્ય લોકસ્ય સંખ્યેયમાગે 'હોજ્જા' ભવન્તિ=તિષ્ઠન્તિ, અસં-
ખ્યેયમાગે વા તિષ્ઠન્તિ, સંખ્યેયેષુ માગેષુ વા તિષ્ઠન્તિ, અસંખ્યેયેષુ માગેષુ વા
તિષ્ઠન્તિ, દેશોને વા લોકે તિષ્ઠન્તિ । અત્ર ઝ્યાદિસમયસ્થિતિકદ્રવ્યસ્ય સંખ્યે-
યાદિમાગવર્તિત્વં તત્તદવગાહસંભવાદ્ બોધ્યમ્ । તથા-યદા ઝ્યાદિસમયસ્થિતિકઃ
સૂક્ષ્મપરિણામઃ સ્કન્ધો દેશોને લોકેઽવગાહતે, તદા એકસ્ય આનુપૂર્વીદ્રવ્યસ્ય

ઉત્તર-(આણુપુવ્વીદવ્વાહં એમં દવ્વં પહુચ્ચ સંખેજ્જહમાગે વા
હોજ્જા, અસંખેજ્જહમાગે વા હોજ્જા, સંખેજ્જેસુ માગેસુ વા હોજ્જા, અસં-
ખેજ્જેસુ વા માગેસુ હોજ્જા, દેસૂળે વા લોએ હોજ્જા) એક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા
કરકે કોઈ એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય લોક કે સંખ્યાત માગ મેં રહતા હૈ, કોઈ
એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય લોક કે અસંખ્યાત માગ મેં રહતા હૈ, કોઈ એક આનુ-
પૂર્વીદ્રવ્ય લોક કે સંખ્યાત માગોં મેં રહતા હૈ ઓર કોઈ એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય
લોક કે અસંખ્યાત માગોં મેં રહતા હૈ । તથા કોઈ એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય
દેશોન લોક મેં રહતા હૈ । યહાં પર જો ઝ્યાદિ સમય કી સ્થિતિવાલે દ્રવ્ય
કા લોક કે હન સંખ્યાત આદિ માગોં મેં રહના કહા ગયા હૈ વહ ઉન ૨
માગોં મેં અવગાહ ઉનકા સંભવિત હૈ હસ અપેક્ષા સે કહા ગયા હૈ એસા
જાનના ચાહિયે । તથા-જિસ સમય ઝ્યાદિ સમય કી સ્થિતિવાલા સૂક્ષ્મ
પરિણામ યુક્ત સ્કન્ધ દેશોન લોક મેં અવગાહિત હોતા હૈ-ઠહરતા હૈ ઉસ
સમય એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય દેશોન લોકવર્તી હોતા હૈ એસા સમજના ચાહિયે ।

સંખ્યાત ભાગોમાં રહે છે, (અસંખેજ્જેસુ માગેસુ વા હોજ્જા) કે અસંખ્યાત
ભાગોમાં રહે છે, (સવ્વલોએ વા હોજ્જા ?) કે સમસ્ત લોકમાં રહે છે ?

ઉત્તર-(આણુપુવ્વીદવ્વાહં એમં દવ્વં પહુચ્ચ સંખેજ્જહમાગે વા હોજ્જા, અસંખે-
જ્જહમાગે વા હોજ્જા, સંખેજ્જેસુ માગેસુ વા હોજ્જા, અસંખેજ્જેસુ વા માગેસુ હોજ્જા,
દેસૂળે વા લોએ હોજ્જા) એક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો કેાઈ
એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાત ભાગમાં રહે છે, કેાઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય
લોકના અસંખ્યાત ભાગમાં રહે છે, કેાઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાત
ભાગોમાં રહે છે, તથા કેાઈ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય દેશોનલોકમાં રહે છે.

અહીં “ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય (ત્રણ આદિ સમયની સ્થિતિવાળું દ્રવ્ય) લોકના
સંખ્યાત આદિ ભાગોમાં રહે છે. ” એવું જે કથન કરવામાં આવ્યું છે તેનું
કારણ એ છે કે તે સંખ્યાત આદિ ઉપયુક્ત ભાગોમાં તેની અવગાહના
સંભવિત હોય છે. તથા જે સમયે ત્રણ આદિ સમયની સ્થિતિવાળો સૂક્ષ્મ
પરિણામયુક્ત સ્કન્ધ દેશોનલોકમાં અવગાહિત થાય છે-રહે છે-તે સમયે
એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય દેશોનલોકવર્તી હોય છે, એવું સમજવું જોઈએ.

દેશોનલોકવર્તિત્વં ભાવનીયમ્ । નનુ સમ્પૂર્ણેઽપિ લોકે કસ્માદિદં ન તિષ્ઠતિ ?
 इति चेदुच्यते—सर्वलोकव्यापी अचित्तमहास्कन्ध एव भवति, स च सर्वलोकव्या-
 पितया एकमेव समयमेव तिष्ठते, ततःपरं तदुपसंहारात् । न चैकसमयस्थितिक-
 मानुपूर्वीद्रव्यं भवति, ज्यादिसमयस्थितिकत्वेनैव तत्संभवात् । तादृशं द्रव्यं तु
 नियमादेकेनापि प्रदेशेनो न एव लोकेऽवगाहते । अतः ज्यादिसमयास्थितिकद्रव्यस्य
 देशो न व्यापित्वं बोध्यम् । ननु—अचित्तमहास्कन्धस्यैकसमयस्थितिकत्वं नोपपद्यते,

શંકા:-આપ જો સૂક્ષ્મ પરિણામ યુક્ત જ્યાદિ સમય કી સ્થિતિવાલે
 રક્કંધ રૂપ એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય કો દેશોન લોક વ્યાપી થતલા રહે હો સો
 યહ સમસ્ત લોક મેં કયોં નહીં રહતા હૈ ?

ઉત્તર:-યહ તો પહિલે હી કહા જા ચુકા હૈ કિ સર્વલોક વ્યાપી
 અચિત્ત મહાસ્કંધ હી હોતા હૈ ઓર યહ અચિત્ત મહાસ્કંધ સર્વલોક મેં
 વ્યાપક રૂપ સે એક હી સમય તક રહતા હૈ—બાદ મેં ડસકા સંકોચ-
 ઉપસંહાર-હો જાતા હૈ । એક સમય કી સ્થિતિવાલા તો આનુપૂર્વીદ્રવ્ય
 હોતા નહીં હૈ । વહ તો જ્યાદિ સમય કી સ્થિતિવાલા હી હોતા હૈ । અતઃ
 એસા જો દ્રવ્ય હોતા હૈ વહ નિયમ સે એક પ્રદેશ ડન હી લોક મેં અવ-
 ગાહિત હોતા હૈ । હસલિયે જ્યાદિ સમય કી સ્થિતિવાલા જો દ્રવ્ય હોતા
 હૈ વહ દેશોનલોક વ્યાપી હોતા હૈ એસા સમજના ચાહિયે ।

શંકા-આપને જો અચિત્ત મહાસ્કંધ કો એક સમય કી સ્થિતિવાલા
 પ્રકટ કિયા હૈ, સો વહ એક સમય કી સ્થિતિકતા ડસમેં ઘટિત નહીં

શંકા-આપ જે સૂક્ષ્મ પરિણામયુક્ત ત્રણ આદિ સમયની સ્થિતિવાળા
 સ્કન્ધ રૂપ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યને દેશોનલોકવ્યાપી કહ્યો છે, તો અમારો
 પ્રશ્ન એ છે કે તે સમસ્ત લોકમાં કેમ વ્યાપેલો (અવગાહિત) નથી ?

ઉત્તર-એ વાત તો પહેલાં સ્પષ્ટ થઈ ચુકી છે કે અચિત્ત મહાસ્કન્ધ
 જ સર્વ લોકવ્યાપી હોય છે, અને તે અચિત્ત મહાસ્કન્ધ સર્વ લોકમાં
 વ્યાપક રૂપે એક સમય સુધી જ રહે છે. ત્યાર બાદ તેનો સંકોચ (ઉપસં-
 હાર) થઈ જાય છે. આનુપૂર્વી દ્રવ્ય એક સમયની સ્થિતિવાળું હોતું નથી.
 તે તો ત્રણ આદિ સમયની સ્થિતિવાળું હોય છે. તેથી એવું જે દ્રવ્ય હોય
 છે તે તો દેશોન લોકમાં (એક પ્રદેશ પ્રમાણ ન્યૂન લોકમાં) જ અવગાહિત
 થાય છે, એવો નિયમ છે. તેથી જ એવું કહેવામાં આવ્યું છે કે ત્રણ આદિ
 સમયની સ્થિતિવાળું જે દ્રવ્ય હોય છે, તે દ્રવ્ય દેશોન લોકમાં અવગાહિત હોય છે.

શંકા-આપે કહ્યું તે અચિત્ત મહાસ્કન્ધની સ્થિતિ એક સમયની હોય
 છે, પરંતુ આપનું તે કથન દોષયુક્ત લાગે છે, કારણ કે દંડ, કપાદ, મન્યાન

દણ્ડકપાટમન્થાનાદ્યવસ્થાગણનેન તસ્યાપ્યષ્ટસમયસ્થિતિત્વાત્ । અસૌ દિ-કેવલિ
સમુદ્ઘાતન્યાયેન વિસ્રસાપરિણામવશાચ્ચતુર્મિઃ સમયૈર્લોકસ્ય પૂરણં કરોતિ । સંહર-
ણમપિ પ્રતિલોમં-તસ્યાચિત્તમહાસ્કન્ધસ્ય તૈરેવ ચતુર્મિઃ સમયૈર્દ્રષ્ટવ્યમ્ । એવં ચ
સત્યષ્ટૌ સમયાન્ કાલમાનેન ભવતીતિ । એવં ચાચિત્તમહાસ્કન્ધસ્યાપ્યાનુપૂર્વીત્વાત્
આનુપૂર્વીદ્રવ્યસ્યાપિ સર્વલોકવ્યાપિત્વં વક્તવ્યં, ન તુ દેશોનલોકવ્યાપિત્વમિતિ
ચેદાહ-અત્ર હિ દણ્ડકપાટમન્થાનાદ્યભિન્ના ભિન્ના અવસ્થાઃ । અવસ્થાભેદેન
વસ્તુનોઽપિ ભેદઃ । इत्थं च दण्डकपाटमन्थानाद्यवस्थद्रव्येभ्यो भिन्न एवाचित्त-

હોતી છે । ક્યોં કિ દણ્ડ, કપાટ ઓર મન્થાન આદિ અવસ્થા કી ગણના
સે ઉસમેં બી આઠ સમય કી સ્થિતિકતા આતી છે । યહ અચિત્ત મહા-
સ્કંધ કેવલિસમુદ્ઘાતન્યાય સે વિસ્રસાપરિણામવશાત્ ચાર સમયોં મેં
લોક કો પૂરિત કરતા છે । અર્થાત્ સકલ લોક કો વ્યાપ્ત કરલેતા છે
ઓર ચાર હી સમયોં મેં ફિર વહ અપના સંહાર કરતા છે-અર્થાત્ અપને
આપમેં સમાજાતા છે । હસ પ્રકાર હસકી સ્થિતિ આઠ સમય કી કાલપ્ર-
માણ સે હોતી છે । ફિર એક સમય કી સ્થિતિ આપ હસકી કેસે કહતે
હો ? તથા યહ અચિત્ત મહાસ્કંધ બી આનુપૂર્વી રૂપ છે ઓર જન્મ યહ
હસ પ્રકાર સે સર્વલોક વ્યાપી છે તો આનુપૂર્વીદ્રવ્ય કો જો આપ દેશોન-
લોક વ્યાપી કહ રહે હો વહ કેસે સંગત માના જા સકના છે ? અતઃ
આનુપૂર્વી દ્રવ્ય સર્વલોક વ્યાપી છે એસા કહના ચાહિયે ?—

ઉત્તર-દણ્ડ, કપાટ ઓર મન્થાન આદિ અવસ્થાએ હૈં વે ભિન્ન ૨ હૈં ।
ઓર અવસ્થાઓં કે ભેદ સે અવસ્થાવાલી વસ્તુ મેં બી ભેદ હોના છે । હસ

આદિ અવસ્થાઓની ગણતરી કરતાં તેની સ્થિતિ આઠ સમયની થાય છે આ
આ અચિત્ત મહાસ્કન્ધ, કેવલિસમુદ્ઘાતને ન્યાયે વિસ્રસાપરિણામને લીધે ચાર
સમયોમાં સકળ લોકને વ્યાપ્ત કરી દે છે, અને ત્યાર બાદ ચાર સમયોમાં
જ તે પોતાનો ઉપસંહાર કરે છે એટલે કે પોતાની અંદર જ સમાઈ જાય
છે. આ રીતે કાળપ્રમાણનો વિચાર કરવામાં આવે તો તેની સ્થિતિ આઠ
સમયની થાય છે. છતાં આપ તેની સ્થિતિ એક સમયની શા કારણે કહો
છો ? આ અચિત્ત સ્કન્ધ આઠ સમયોની સ્થિતિવાળો હોવાથી આનુપૂર્વી રૂપ
જ છે ને આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ આ અચિત્ત સ્કન્ધ સર્વલોકવ્યાપી હોય, તો
આનુપૂર્વી દ્રવ્યને આપ કેવી રીતે દેશોન લોકવ્યાપી બતાવો છો ? આ રીતે
આનુપૂર્વી દ્રવ્યને દેશોન લોકવ્યાપી કહેવું તે સંગત લાગતું નથી. તેને
સર્વલોકવ્યાપી જ કહેવું જોઈએ.

ઉત્તર-દંડ, કપાટ અને મન્થાન આદિ જે અવસ્થાઓ છે તે ભિન્ન ભિન્ન
છે, અને અવસ્થાઓના ભેદને લીધે અવસ્થાવાળી વસ્તુમાં પણ ભિન્નતા આવી

મહાસ્કન્ધઃ । સ ચૈકસમયસ્થિતિક એવ । એવં ચ તસ્યાનુપૂર્વીત્વાભાવાદાનુપૂર્વી-
દ્રવ્યસ્ય દેશોનલોકવ્યાપિત્વં ન વિરુદ્ધયતે, ઇતિ । યદ્વા-યથા ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યં
તથાઽત્રાપિ સર્વલોકવ્યાપિનોઽપ્યચિત્તમહાસ્કન્ધસ્ય વિવક્ષયા એકસ્મિન્નમઃપ્રદેશે-
ઽપાધાન્યાશ્રયણેન દેશોનલોકવર્તિત્વં બોધ્યમ્ । તત્ર પ્રદેશે ઠિ એકસમયસ્થિતિકસ્ય

પ્રકાર દણ્ડ, કપાટ ઓર મન્યાન અવસ્થાવાલે દ્રવ્યોં સે ભિન્ન હી અચિત્ત
મહાસ્કંધ હૈ । એક સમય કી સ્થિતિવાલા દ્રવ્ય આનુપૂર્વી રૂપ નહીં માના
ગયા હૈ । અતઃ હસમેં આનુપૂર્વીત્વ કા અભાવ હૈ । હસલિયે જો આનુ-
પૂર્વીદ્રવ્ય મેં અચિત્ત મહાસ્કંધ કો લક્ષિત કરકે સર્વલોક વ્યાપિતા બન-
લાને કી શંકા ઉઠાઈ હૈ વહ નિર્મૂલ હૈ । અતઃ યહી કથન સત્ય હૈ કિ-
આનુપૂર્વીદ્રવ્ય દેશોનલોકવ્યાપી હોતા હૈ યદ્વા-ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કી તરહ
યહાં પર ભી સર્વલોક વ્યાપી ભી અચિત્ત મહાસ્કંધ કી વિવક્ષા સે એક
આનુપૂર્વીદ્રવ્ય કો એક આકાશ કે પ્રદેશ મેં અપ્રધાનતા કે આશ્રય સે
ઉસે દેશોન લોકવર્તી જાનના ચાહિયે-તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ
અચિત્ત મહાસ્કંધ રૂપ એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય કો દેશોન લોકવ્યાપી ન
માનકર યદિ કેવલ સર્વલોકવ્યાપી હી માનો જાવે તો ફિર અનાનુ-
પૂર્વી ઓર અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કો ઠહરને કે લિયે સ્થાન ન હોને કે કારણ
ઉનકા અભાવ પ્રસક્ત હોગા ઓર જય દેશોન લોક મેં અચિત્ત મહા-
સ્કંધ રૂપ એક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય વ્યાપક હોકર રહતા હૈ એસા માના જાતા

જાય છે. આ પ્રકારે ઢંડ, કપાટ અને મન્યાન અવસ્થાવાળાં દ્રવ્યોથી અચિત્ત
મહાસ્કન્ધમાં ભિન્નતા છે. અને તે એક જ સમયની સ્થિતિવાળો છે. એક
સમયની સ્થિતિવાળા દ્રવ્યને આનુપૂર્વી રૂપ ગણાતું નથી પણ અનાનુપૂર્વી
રૂપ જ ગણાય છે. આ પ્રકારે તે અચિત્ત મહાસ્કન્ધમાં આનુપૂર્વીતાનો અભાવ
જ છે તેથી શંકા કર્તાએ એવી જ શંકા ઉઠાવી છે કે “અચિત્ત મહાસ્કન્ધ
સર્વલોકવ્યાપી હોવાથી આનુપૂર્વી દ્રવ્યને પણ સર્વલોકવ્યાપી કહેવું જોઈએ”
તે વાત ઉચિત નથી તે સાબિત થઈ જાય છે. અચિત્ત મહાસ્કન્ધ અનાનુ-
પૂર્વી રૂપ હોવાથી તેની સર્વલોકવ્યાપિતાનો આધાર લઈને આનુપૂર્વી
દ્રવ્યમાં સર્વલોકવ્યાપિતા માની શકાય નહીં. તેથી એજ કથન સત્ય સિદ્ધ
થાય છે કે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય દેશોનલોકવ્યાપી હોય છે.

અથવા-ક્ષેત્રાનુપૂર્વીની જેમ અહીં પણ સર્વલોકવ્યાપી અચિત્ત મહા-
સ્કન્ધની વિવક્ષાની અપેક્ષાએ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યને એક આકાશના પ્રદેશમાં
અપ્રધાનતાનો આશ્રય લઈને દેશોન લોકવ્યાપી સમજવું જોઈએ આ કથનનું
તાત્પર્ય એ છે કે અચિત્ત મહાસ્કન્ધ રૂપ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્યને દેશોન લોકવ્યાપી
માનવાને બદલે સર્વ લોકવ્યાપી માનવામાં આવે, તો અનાનુપૂર્વી અને
અવક્તવ્યક દ્રવ્યોને રહેવાનું સ્થાન જ ન રહેવાને કારણે તેમનો અભાવ
માનવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થશે અને જો એવું માનવામાં આવે કે અચિત્ત
મહાસ્કન્ધ રૂપ એક આનુપૂર્વી દ્રવ્ય દેશોન લોકમાં વ્યાપ્ત થઈને રહેલું હોય

અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યસ્ય દ્વિસમયસ્થિતિકસ્યાવક્તવ્યકદ્રવ્યસ્ય ચ પ્રાધાન્યાત્ । એવમ-
ન્યદપિ આગમાવિરોધતો વક્તવ્યમ્ । તથા-નાનાદ્રવ્યાણિ=અનેકાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ
પ્રતીત્ય નિયમાત્ સર્વલોકે ભવન્તિ । ય્યાદિસમયસ્થિતિકદ્રવ્યાણાં સર્વલોકેऽપિ
સત્ત્વાન્નાનાદ્રવ્યાણિ નિયમાત્ સર્વલોકવ્યાપીનિ ભવન્તીતિ ભાવઃ । એવમેવ મનાનુ-

હૈ તો હસ પ્રકાર સે અચિત્ત મહા સ્કંધ સે પૂરિત હુએ ઓ લોક મેં કમ સે
કમ એકપ્રદેશ એસા ઓ આજાતા હૈ કિ જિસમેં અનાનુપૂર્વી ઓર અવ-
ક્તવ્યક દ્રવ્ય કો ઠહરને કે લિયે સ્થાન મિલજાતા હૈ યદ્યપિ હસ એક
પ્રદેશ મેં ઓ આનુપૂર્વીદ્રવ્ય રહતા હૈ-તો ઓ ડસકી પ્રધાન રૂપ સે વહાં
ચિવક્ષા નહીં માની જાતી હૈ । વહાં તો એક સમય કી સ્થિતિવાલે અના-
નુપૂર્વીદ્રવ્ય ઓર દો સમય કી સ્થિતિવાલે અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કી હી પ્રધા-
નતા માનીજાતી હૈ હસ પ્રકાર ઓર ઓ વાતેં આગમ મેં વિરોધ ન આવે
હસ પ્રકાર સે સમજ લેની ચાહિયે । તથા-(નાનાદવ્વાઈ પડુચ્ચ નિયમા
સવ્વલોપ હોજ્જા) અનેક આનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કી ચિવક્ષા કરકે નિયમ સે
આનુપૂર્વીદ્રવ્ય સમસ્ત લોક મેં રહતે હૈં અર્થાત્ ય્યાદિ સમય કી સ્થિતિ-
વાલે અનેક આનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કી સત્તા સમસ્ત લોક મેં ઓ પાચી જાતી
હૈ હસલિયે નાના આનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કી અપેક્ષા સે અનેક આનુપૂર્વીદ્રવ્ય
સમસ્ત લોક વ્યાપી હોકર રહતે હૈં । (એવં અણાણુપુવ્વીદ્વં) હસી પ્રકાર

છે, તો આ રીતે અચિત્ત મહાસ્કંધ વડે પૂરિત (વ્યાપ્ત) થયેલા લોકમાં પણ
આછામાં આછો એક પ્રદેશ એવો હોય છે કે જેમાં અનાનુપૂર્વી અને
અવક્તવ્યક દ્રવ્યને રહેવાને માટે સ્થાન મળી નાંચ છે. જો કે તે એક પ્રદેશમાં
પણ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રહે છે, છતાં પણ તેમાં તેમને પ્રધાનરૂપે ગણી શકાય
નહીં તે એક પ્રદેશમાં તો એક સમયની સ્થિતિવાળા અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની
અને બે સમયની સ્થિતિવાળા અવક્તવ્યક દ્રવ્યની જ પ્રધાનતા માનવી પડે
છે. એજ પ્રમાણે બીજી વાતોને પણ આગમની વિરૂદ્ધ ન પડે એવી રીતે
સમજ લેવી જોઈએ.

તથા-(નાનાદવ્વાઈ પડુચ્ચ નિયમા સવ્વલોપ હોજ્જા) અનેક આનુપૂર્વી
દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો તેઓ નિયમથી જ સર્વલોકમાં
રહેલાં હોય છે, એમ સમજવું જોઈએ. એટલે કે ત્રણ આદિ સમયની
સ્થિતિવાળાં અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ સમસ્ત લોકમાં પણ હોય છે.
તેથી જ અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અવગાહના બાબતમાં એવું કથન કરવામાં
આવ્યું છે કે અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યો સમસ્ત લોકમાં વ્યાપ્ત થઈને રહે છે.

પૂર્વી દ્રવ્યમાશ્રિત્ય અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યમાપિ લોકસ્યાસંખ્યેયભાગવ્યાપિ ભવતિ ।
 અત્રેદં વોધ્યમ્—યથા ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યામનાનુપૂર્વીદ્રવ્યં લોકસ્યાસંખ્યેયભાગે ભવતિ,
 તથા કાલાનુપૂર્વ્યામપિ તસ્યાસંખ્યેયભાગવર્તિત્વં વોધ્યમ્ । યતો યત્કાલત્ત એક-
 સમયસ્થિતિકં તત્ક્ષેત્રતોડપ્યેકપ્રદેશાવગાદં ભવતિ । તત્ત્વ લોકસ્યાસંખ્યેયભાગે એક
 ભવતિ । પ્રકારાન્તરમુપશ્રિત્યાહ—‘આપસંતરેણ વા’ इत्यादि । आदेशान्तरेण=प्रका-
 रान्तरमाश्रित्य अनानुपूर्वी द्रव्यं सर्वपृच्छासु=संख्येयभागे, असंख्येयभागे,
 संख्येयभागेषु असंख्येयभागेषु सर्वलोके वा, भवति । अयं भावः—अचित्तमहास्क-

સે અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય કે વિષય મેં બી જાનના ચાહિયે—અર્થાત્ એક અના-
 નુપૂર્વીદ્રવ્ય કો આશ્રિત કરકે એક અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય બી લોક કે અસં-
 ઘ્યાત ભાગ મેં રહતા હૈ—યહાં એસા સમજના ચાહિયે—જૈસે ક્ષેત્રાનુપૂર્વી
 મેં એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોક કે અસંઘ્યાતવે ભાગ મેં રહતા હૈ, ડસી
 પ્રકાર સે કાલાનુપૂર્વી મેં બી વહ લોક કે અસંઘ્યાતવે ભાગ મેં રહતા
 હૈ । ક્યોં કિ કાલકી અપેક્ષા જિસકી એકસમય કી સ્થિતિ હૈ વહ
 ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા બી એક પ્રદેશ મેં સ્થિત હોતા હૈ । યહ એક પ્રદેશ મેં
 રહના હી લોક કે અસંઘ્યાતવે ભાગ મેં ડસકા રહના હૈ । (આપસંતરેણ
 વા સર્વપુચ્છાસુ હોજ્જા) અથવા સૂત્રકાર પ્રકારાન્તર કો આશ્રિત
 કરકે અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય કે વિષય મેં ઇસ પ્રકાર સે કહતે હૈં કિ યદિ કોઈ
 એસા પૂછે કિ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય લોક કે સંઘ્યાત ભાગ મેં અથવા અસં-
 ઘ્યાત ભાગ મેં અથવા સંઘ્યાત ભાગો મેં અથવા સર્વલોક મે રહતા

(एवं अणानुपूर्वी द्रव्यं) એવું જ કથન અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યના વિષયમાં
 પણ સમજવું જોઈએ એટલે કે એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર
 કરવામાં આવે, તો એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય પણ લોકના અસંખ્યાત ભાગમાં
 રહે છે. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે સમજવો—જેવી રીતે ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં
 એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકનાં અસંખ્યાત ભાગમાં રહે છે, એજ પ્રમાણે
 કાલાનુપૂર્વીમાં પણ તે લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં રહે છે, કારણ કે કાળની
 અપેક્ષાએ જેની એક સમયની સ્થિતિ હોય છે, તે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ
 એક પ્રદેશમાં અવગાહિત (રહેલું) હોય છે આ એક પ્રદેશમાં રહેવું, તેનું
 નામ જ લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં રહેવું છે.

(आपसंतरेण वा सर्वपृच्छासु होज्जा) અથવા સૂત્રકાર અન્ય પ્રકારે
 આનુપૂર્વી દ્રવ્યના વિષયમાં નીચે પ્રમાણે કથન કરે છે—જો કોઈ એવો પ્રશ્ન
 પૂછે કે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાત ભાગમાં રહે છે, કે અસંખ્યાત
 ભાગોમાં રહે છે, કે સમસ્ત લોકમાં રહે છે ?

ન્ધસ્ય દણ્ડાદ્યવસ્થાઃ પરસ્પરં ભિન્નાઃ, આકારાદિ ભેદાત્, દ્વિત્રિચતુઃપ્રદેશિકાદિ સ્કન્ધવત્ । તતશ્ચ તા દણ્ડાદ્યવસ્થા એકેકસમયવૃત્તિત્વાત્ પૃથગનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ । તેષુ ચ મધ્યે કિમપિ કિયત્યપિ ક્ષેત્રે વર્ત્તતે, इत्यनया विवक्षया किल एकमनानु-पूर्वीद्रव्यं प्रकारान्तरेण एतत्सૂत्रोक्तसंख्येयभागादिकासु पञ्चस्वपि पृच्छासु लभ्यन्ते । तथा नानાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્યાऽનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ सर्वस्मिन्नपि लोके भवन्ति । एक

હૈ ? तो उसका उत्तर इस प्रकार से है—दो तीन चारप्रदेशवाले स्कंध आदि की तरह अचित्त महास्कंध की दण्ड, कपाट और मन्थान अवस्थाएँ आकार आदि के भेद से परस्पर में भिन्न २ हैं । इस प्रकार वे दण्डादिक अवस्थाएँ एक एक समयवर्ती होने के कारण पृथक् २ अनानुपूर्वी द्रव्य हैं । इनके बीच में कोई एक अनानुपूर्वीद्रव्य लोक के किनारे भी क्षेत्र में रहता है जब इस प्रकार की विवक्षा होती है तब—इस विवक्षा से एक अनानुपूर्वी द्रव्य प्रकारान्तर से इस सूत्रोक्त संख्येय भागादिक पांचों ही पृच्छाओं में लभ्य हो जाता है—तात्पर्य कहने का यह है कि एक समय की स्थितिवाला अनानुपूर्वी द्रव्य होता है और इस अनानुपूर्वी द्रव्य में से कोई एक द्रव्य लोक के संख्यात भाग में रहता है कोई एक द्रव्य असंख्यात भाग में रहता है, कोई एक द्रव्य संख्यात भागों में रहता है । कोई एक असंख्यात भागों में रहता है और कोई एक सर्वलोक में रहता है । तथा नाना अनानुपूर्वीद्रव्यों

તો આ પ્રશ્નનો એવો ઉત્તર આપી શકાય કે બે, ત્રણ, ચાર પ્રદેશવાળાં સ્કન્ધ આદિની જેમ અચિત્ત મહાસ્કન્ધની દંડ, કપાટ અને મન્થાન અવસ્થાઓ આકાર આદિની અપેક્ષાએ એક બીજીથી ભિન્ન ભિન્ન હોય છે. આ પ્રકારે તે દંડાદિક અવસ્થાઓ એક એક સમયવર્તી હોવાને કારણે અલગ અલગ અનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપ હોય છે. તેમાંનું કોઈ એક અનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના કેટલાય ક્ષેત્રમાં રહે છે. બીજાં આ પ્રકારની વિવક્ષા થાય છે, ત્યારે આ વિવક્ષાની અપેક્ષાએ એક અનુપૂર્વી દ્રવ્ય પ્રકારાન્તરની અપેક્ષાએ આ સૂત્રોક્ત સંખ્યેય ભાગાદિ પાંચે પ્રકારના ભાગોમાં ઉપલબ્ધ થાય છે. આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે એક સમયની સ્થિતિવાળા અનુપૂર્વી દ્રવ્યની અવગાહનાનો વિચાર કરવામાં આવે, તો કોઈ એક અનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાત ભાગમાં રહે છે, કોઈ એક અનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના અસંખ્યાત ભાગમાં રહે છે, કોઈ એક અનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાત ભાગોમાં રહે છે, કોઈ એક અનુપૂર્વી દ્રવ્ય લોકના અસંખ્યાત ભાગોમાં રહે છે અને કોઈ એક અનુપૂર્વી દ્રવ્ય સર્વલોકમાં પણ રહે છે, અનેક અનુપૂર્વી દ્રવ્યોની

સમયસ્થિતિકાનાં દ્રવ્યાણાં સર્વત્ર સત્ત્વદિતિ । એવમ્-અવક્તવ્યકદ્રવ્યાણ્યપિ યથા ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યામ્ । અયં ભાવઃ-અવક્તવ્યકદ્રવ્યં ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યામિવ કાલાનુપૂર્વ્યામપિ લોકસ્થાસંખ્યેયભાગે એવ ભવતિ । યતો યત્કાલતો દ્વિસમયસ્થિતિકં તત્ક્ષેત્રતો ઽપિ દ્વિપ્રદેશાશ્ચગાઢમ્, તત્ત્વ લોકસ્થાસંખ્યેયભાગમેવ વ્યાપ્નોતિ । અથવા-દ્વિસમયસ્થિતિકં દ્રવ્યં સ્વભાવાદેવ લોકાસંખ્યેયભાગવ્યાપિ ભવતિ, ન તતોઽધિકવ્યાપિ । તથા-આદેશાન્તરેણ વા-‘મહાસંધવજ્જમન્નદવ્વેસુ આહલ્લચડપુચ્છાસુ હોજ્જા ’’ ઇતિ પ્રોક્તમ્ ।

કી અપેક્ષા કરકે નાના અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય સર્વલોક મેં મી રહતે હેં । કયોંકિ એક સમય કી સ્થિતિવાલે અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કા સર્વત્ર સત્ત્વ રહતા હે । (એવં અવક્તવ્યગદ્વાણિ વિ જહા સ્વેત્તાણુપુર્વીએ) હસી પ્રકાર ક્ષેત્રાનુપૂર્વી કી તરહ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય મી હેં । તાત્પર્ય યહ હે કિ જિસ પ્રકાર સે ક્ષેત્રાનુપૂર્વી મેં અવક્તવ્યક દ્રવ્ય લોક કે અસંખ્યાત ભાગવર્તી બતલાયા ગયા હે ઉસી પ્રકાર સે યહાં કાલાનુપૂર્વી મેં મી વહ લોક કે અસંખ્યાતવેં ભાગ મેં રહનેવાલા બતલાયા ગયા હે । કયોં કિ કાલકી અપેક્ષા જિસકી સ્થિતિ દો સમય કી હોતી હે વહ લોક કે દો પ્રદેશોં મેં હી અવગાઢ હોતા હે । દો પ્રદેશોં મેં અવગાઢ હોના હી લોક કે અસંખ્યાતવેં ભાગ મેં વ્યાપ્ત કરના હે । અથવા દો સમય કી સ્થિતિવાલા દ્રવ્ય સ્વભાવ સે હી લોક કે અસંખ્યાતવેં ભાગ મેં વ્યાપ્ત હોતા હે હસ સે અધિક ભાગ કો

અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો તેઓ સર્વલોકવ્યાપી હોય છે, એમ સમજવું, કારણ કે એક સમયની સ્થિતિવાળાં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ સર્વત્ર હોય છે. (એવં અવક્તવ્યગદ્વાણિ વિ જહા સ્વેત્તાણુપુર્વીએ) ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની અવગાહના વિષે જેવું કથન કરવામાં આવ્યું છે, એવું જ કથન અહીં પણ સમજવું જોઈએ આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે- ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં અવક્તવ્યક દ્રવ્યને લોકના અસંખ્યાત ભાગવર્તી બતાવ્યું છે, એજ પ્રમાણે અહીં કાલાનુપૂર્વીમાં પણ તેને લોકના અસંખ્યાત ભાગમાં રહેવું જ બતાવવામાં આવ્યું છે, કારણ કે કાળની અપેક્ષાએ જેની સ્થિતિ બે સમયની હોય છે, તે દ્રવ્ય લોકના બે પ્રદેશોમાં જ અવગાઢ હોય છે. આ પ્રકારે બે પ્રદેશમાં રહેવું તેનું નામ જ લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગને વ્યાપ્ત કરવો. અથવા બે સમયની સ્થિતિવાળું દ્રવ્ય સ્વભાવથી જ લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગને વ્યાપ્ત કરે છે, તેનાં કરતાં અધિક ભાગને તે વ્યાપ્ત કરતું નથી.

અત્રેદમનુસન્ધેયમ્—કિમપિ દ્વિસમયસ્થિતિકં દ્રવ્યં લોકસ્ય સંખ્યેયતમભાગ-
મવગાદતે, કિમપ્યસંખ્યેયતમભાગમ્ કિમપિ સંખ્યેયાન્ ભાગાન્, કિમપિ તુ
અસંખ્યેયાન્ ભાગાન્ ન તુ સર્વલોકમવગાદતે । સર્વલોકવ્યાપિત્વં તુ મહાસ્કન્ધસ્ય ।
સ ચાષ્ટસમયૈર્નિષ્પદ્યતે, ન તુ દ્વાભ્યાં સમપાભ્યામ્ । અતો દ્વિસમયસ્થિતિકત્વા-
ભાવેન મહાસ્કન્ધસ્યાવક્તવ્યકત્વાભાવાદવક્તવ્યકદ્રવ્ય વિષયે પશ્ચમપૃચ્છા ન ભવતિ ।
અત એવ—‘મહાસંધવજ્જ’ ઇત્યુક્તમ્ । નાનાદ્રવ્યાણિ તુ સર્વલોકવ્યાપીનિ ભવ-
ન્તીતિ । ઇતિ ક્ષેત્રદ્વારમ્ । સ્પર્શનાદ્વારં નિરૂપયિતુમાહ—‘ફુસણા’ ઇત્યાદિ । સ્પર્શના-
દ્વારમપિ તથૈવ=ક્ષેત્રાનુપૂર્ણદેવ વિજ્ઞેયમ્ ॥સૂ૦૧૩૨॥

વહ વ્યાસ નહીં કરતા હૈ । તથા—“આદેશાન્તરેણ વા—મહાસંધવજ્જમન્ન-
દવ્વેસુ આહલ્લચડ પુચ્છાસુ હોજ્જા” એસા જો કહા હૈ ઉસકા ભાવ
હસ પ્રકાર સે હૈ—કિ દો સમય કી સ્થિતિવાલા કોઈ એક અવક્તવ્યક
દ્રવ્ય લોક કે સંખ્યાતવે ભાગ મેં અવગાઢ હોતા હૈ કોઈ અસંખ્યાતવે
ભાગ મેં અવગાઢ હોતા હૈ, કોઈ સંખ્યાત આગોં મેં અવગાઢ હોતા હૈ,
ઑર કોઈ અસંખ્યાત આગોં મેં અવગાઢ હોતા હૈ પરન્તુ સર્વલોક મેં
અવગાઢ નહીં હોતા હૈ । સર્વલોક મેં અવગાઢતો મહાસ્કંધ હોતા હૈ । યહ
મહાસ્કંધ આઠ સમયોં સે નિષ્પન્ન હોતા હૈ । દો સમયોં સે નહીં । હસ-
લિયે હસ મહાસ્કંધ મેં દ્વિસમયસ્થિતિકતા કા અભાવ હોને સે અવક્તવ્યક-
દ્રવ્યત્વ કા અભાવ હૈ । હસલિયે અવક્તવ્યક દ્રવ્ય કે વિષય મેં પાંચવાં
પ્રશ્ન નહીં હોતા હૈ । હસીલિયે “મહાસંધવજ્જ” એસા કહા હૈ । તથા
નાના અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા કરકે નાના અવક્તવ્યક દ્રવ્ય સર્વ-

તથા—“આદેશાન્તરેણ વા—મહાસંધવજ્જમન્નદવ્વેસુ આહલ્લચડપુચ્છાસુ
હોજ્જા” આ પ્રમાણે જે કહ્યું છે તેનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—જે સમયની
સ્થિતિવાળું કોઈ એક અવક્તવ્યક દ્રવ્ય લોકના સંખ્યાત ભાગમાં અવગાઢ
(રહેલું) હોય છે, કોઈ અસંખ્યાતમાં ભાગમાં અવગાઢ હોય છે, કોઈ સંખ્યાત
ભાગોમાં અવગાઢ હોય છે, કોઈ અસંખ્યાત ભાગોમાં અવગાઢ હોય છે,
પરન્તુ કોઈ પણ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય સમસ્ત લોકમાં અવગાઢ હોતું નથી.
મહાસ્કંધ જ સર્વલોકમાં અવગાઢ હોય છે. આ મહાસ્કંધ આઠ સમયોમાં
નિષ્પન્ન થાય છે—જે સમયોમાં નિષ્પન્ન થતો નથી આ રીતે આ મહાસ્કંધમાં
જે સમયની સ્થિતિનો અભાવ હોવાને કારણે તેને અવક્તવ્યક દ્રવ્ય રૂપ ગણી
શકાય નહીં આ રીતે અવક્તવ્યક દ્રવ્યની અવગાહનાની ગાબતમાં પાંચમી
વાત (સર્વલોકવ્યાપતા) સંભવી શકતી નથી તેથી જ “મહાસંધવજ્જ”
આ સૂત્રાંશ મૂકવામાં આવ્યો છે. અનેક અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર
કરવામાં આવે તો એવું કંઈ અડધું કરવું જોઈએ કે—

અથ કાલદ્વારમાહ—

મૂલમ્—જેગમવ્યવહારાણં આણુપુર્વીદ્વાઈ કાલઓ કેવચ્ચિરં હોંતિ ? એગં દ્વં પડુચ્ચ જહણ્ણેણં તિણિણ સમયા ઉક્કોસેણં અસંખેજ્જં કાલં । નાણાદ્વાઈ પડુચ્ચ સવદ્ધા । જેગમવ્યવહારાણં આણુપુર્વીદ્વાઈ કાલઓ કેવચ્ચિરં હોઈ ? એગં દ્વં પડુચ્ચ અજહન્નમણુક્કોસેણં એકં સમયં, નાણાદ્વાઈ પડુચ્ચ સવદ્ધા । અવત્તગદ્વાણં પુચ્છા, એગં દ્વં પડુચ્ચ અજહણ્ણમણુક્કોસેણં દો સમયા, નાણાદ્વાઈ પડુચ્ચ સવદ્ધા ॥સૂ૦ ૧૩૩॥

છાયા—જેગમવ્યવહારયોરાણુપૂર્વી દ્રવ્યાણિ કાલતઃ કિયચ્ચિરં ભવન્તિ ? એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય જઘન્યેન ત્રીન્ સમયાન્ ઉત્કર્ષેણ—અસંખ્યેય કાલમ્ । નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય સર્વાદ્ધા । જૈગમવ્યવહારયોઃ અનાણુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કાલતઃ કિયચ્ચિરં ભવન્તિ ? એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય અજઘન્યાનુત્કર્ષેણ એકં સમયં, નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય સર્વાદ્ધા । અવત્તગદ્વાણાં પૃચ્છા । એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય અજઘન્યાનુત્કર્ષેણ દ્વી સમયો, નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય સર્વાદ્ધા ॥મૂ૦ ૧૩૩॥

ટીકા—‘ જેગમવ્યવહારાણં ’ इत्यादि ।

જૈગમવ્યવહારસમ્મતાણિ આણુપૂર્વી દ્રવ્યાણિ-કાલતઃ કિયચ્ચિરં ભવન્તિ ? इति प्रश्नः । उत्तरयति—एकं द्रव्यं प्रतीत्य आणुपूर्वीद्रव्याणां जघन्यतः त्रीन् लोक व्यापी होते हैं । इस प्रकार यहां तक क्षेत्रद्वार की प्ररूपणा हुई है । (फुमणा कालाणुपुर्वीए वि तहा चेव भाणियव्वा) स्पर्शना द्वार भी इसका कालाणुपूर्वी में क्षेत्रानुपूर्वी की तरह जानना चाहिये ॥सू० १३२॥

અથ સૂત્રકાર કાલદ્વાર કા કથન કરતે હૈં—

‘ જેગમવ્યવહારાણં ’ इत्यादि ।

શબ્દાર્થ—(જેગમવ્યવહારાણં) જૈગમવ્યવહારનયસંમત (આણુપુર્વી-દ્વાઈ) સમસ્ત આણુપૂર્વીદ્રવ્ય (કાલઓ) કાલકી અપેક્ષા કરકે (કેવચ્ચિરં હોઈ) કિતને સમયતક રહતે હૈં ?—

अनेक अवज्ञाव्यक्त द्रव्ये सर्वलोकव्यापी होय છે. આ પ્રકારે આ સૂત્રમાં ક્ષેત્રદ્વારની પ્રરૂપણા કરવામાં આવી છે. (ફુમણા કાલાણુપુર્વીએ વિ તહા-ચેવ ભાણિયવ્વા) આ કાલાણુપૂર્વીમાં સ્પર્શના દ્વારનું કથન પણ ક્ષેત્રાણુપૂર્વીની જેમ જ સમજવું જોઈએ. ॥સૂ૦ ૧૩૨॥

समयान् स्थितिः, उत्कर्षेण चासंख्येयं कालं स्थितिः। अयं भावः आनुपूर्वी
द्रव्याणां मध्ये त्रिसमयस्थितिकं द्रव्यं सर्वतो जघन्यं, तच्च त्रीन् समयानेव
तिष्ठति। अतो जघन्यतस्त्रिसमयं यावदानुपूर्वीद्रव्याणां स्थितिः। उत्कृष्टतस्तु
असंख्येयं कालं स्थितिर्बोद्धव्या। ततः परमेकेन तद्रूपेण परिणामेन द्रव्यावस्थान-

उत्तर—(एगं द्रव्यं पङ्क्त्य) एक आनुपूर्वीद्रव्य की अपेक्षा करके
आनुपूर्वीद्रव्यों की (जहण्णेणं) जघन्य से (तिणिण समया) तीन समयकी
स्थिति है, और (उक्कोसेणं) उत्कृष्ट से (असंखेज्जं कालं) असंख्यात-
काल की स्थिति है। इसका तात्पर्य यह है। आनुपूर्वीद्रव्यों के बीच में
तीन समय की स्थितिवाला द्रव्य सच से कम है यह तीन समय
तक ही ठहरता है-रहता है। इसलिये आनुपूर्वीद्रव्यों की स्थिति
जघन्य से तीन समय तक की कही गई है। और उत्कृष्ट से
जो असंख्यात काल की स्थिति कही गई है उसका तात्पर्य यह है कि
द्रव्य असंख्यात काल के बाद आनुपूर्वीरूप परिणाम से परिणमित

इवे सूत्रकार कालद्वारानुं कथन करे छे—

“नेगमववहारानं” धत्थादि—

शब्दार्थ—(नेगमववहारानं) नेगमववहार नयसंभूत (आनुपूर्वीद्रव्याङ्गं)
संभूत आनुपूर्वी द्रव्ये (कालो) कालनी अपेक्षाये (केवच्चिरं होई ?) कहेवा
समय सुधी रहे छे ?

उत्तर—(एगं द्रव्यं पङ्क्त्य) ओके आनुपूर्वी द्रव्यनी अपेक्षाये विचार
करवाभां आवे, तो आनुपूर्वी द्रव्यनी (जहण्णेणं तिणिण समया) जघन्य
(ओछाभां ओछी) स्थिति त्रसु समयनी कही छे अने (उक्कोसेणं असंखेज्जं
कालं) उत्कृष्ट (वधारेभां वधारे) स्थिति असंख्यात कालनी कही छे. आ
कथनने भावार्थ नीचे प्रम छे छे—जे आनुपूर्वी द्रव्ये छे तेभां त्रसु समयनी
स्थितिवाणुं द्रव्य सौथी ओछुं छे. ते त्रसु समय सुधी न रहे छे, ते कारणे
आनुपूर्वी द्रव्येनी जघन्य स्थिति त्रसु समयनी कही छे. तेनी उत्कृष्ट स्थिति
असंख्यात कालनी कहेवाणुं कारणे छे छे ते द्रव्य असंख्यात काल बाद
आनुपूर्वी रूप परिणाम रूपे परिणमित रहेणुं न नथी.

સ્યૈવાભાવાદિતિ । નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય તુ આનુપૂર્વીદ્રવ્યાણાં સર્વાદ્વા=સર્વકાલં સ્થિતિ ધેવતિ । લોકસ્ય પ્રત્યેકસ્મિન્ પ્રદેશે તેષાં સર્વદા સદ્ભાવાત્ । તથા-નૈગમ-વ્યવહારસમ્મતાનિ અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ કાલતઃ કિયચ્ચિરં ભવન્તિ=તિષ્ઠન્તિ ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ-એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય અજઘન્યાનુત્કર્ષેણ એકં સમયં તિષ્ઠન્તિ ।

રહતા હી નહીં હૈ । (નાનાદ્રવ્યાણં પદુચ્ચ સવ્વદ્વા) તથા નાના આનુપૂર્વી દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા કો આશ્રિત કરકે આનુપૂર્વીદ્રવ્યોંકી સ્થિતિ સાર્વ-કાલિક હૈ । કયોંકિ લોક કે પ્રત્યેક પ્રદેશ મેં નાના આનુપૂર્વી દ્રવ્યોંકા સદ્ભાવ રહતા હૈ (નૈગમવ્યવહારાણં) નૈગમવ્યવહારનયસંમત (અણાણુ-પુન્વીદ્રવ્યાણં) સમસ્ત અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય (કાલઓ) કાલ કી અપેક્ષા સે (કેવચ્ચિરં) કિતને સમય તક રહતે હૈ ।

ઉત્તર—(એકં દ્રવ્યં પદુચ્ચ) એક અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય કી અપેક્ષા કરકે—(અજઘનમણુકોસેણ) અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય અજઘન્ય ઓર અનુત્કર્ષ સે એક સમય તક રહતે હૈ (નાનાદ્રવ્યાણં પદુચ્ચ સવ્વદ્વા) ઓર નાના-દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા કરકે સમસ્ત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય સર્વકાલ રહતે હૈ । કયોંકિ લોક કે હરએક પ્રદેશ મેં ઇનકા સદ્ભાવ રહતા હૈ । (અવત્તવગદ-વ્વાણં પુન્જા) અવત્તવ્યકદ્રવ્યોં કે વિષય મેં સી ઇસી પ્રકાર સે પ્રશ્ન હૈ કિ નૈગમવ્યવહારનયસંમત અવત્તવ્યક દ્રવ્ય કાલ કી અપેક્ષા સે કિતને સમય તક રહતે હૈ ?

(નાનાદ્રવ્યાણં પદુચ્ચ સવ્વદ્વા) અનેક આનુપૂર્વી દ્રવ્યોંની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો આનુપૂર્વી દ્રવ્યોંની સ્થિતિ સાર્વકાલિક છે, કારણ કે લોકના પ્રત્યેક પ્રદેશમાં વિવિધ આનુપૂર્વી દ્રવ્યોંનો સદા સદ્ભાવ જ રહે છે.

પ્રશ્ન—(નૈગમવ્યવહારાણં) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત (અણાણુપુન્વીદ્રવ્યાણં) સમસ્ત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોં (કાલઓ) કાળની અપેક્ષાએ (કેવચ્ચિરં) કેટલા સમય સુધી રહે છે ?

ઉત્તર—(એકં દ્રવ્યં પદુચ્ચ) એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો (અજઘનમણુકોસેણ) અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય અજઘન્ય અને અનુ-ત્કર્ષ કાળની અપેક્ષાએ એક સમય સુધી રહે છે. (નાના દ્રવ્યાણં પદુચ્ચ સવ્વદ્વા) અને અનેક દ્રવ્યોંની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોંની સ્થિતિ સાર્વકાલિક છે, કારણ કે લોકના હરેક પ્રદેશમાં તેમનો સદ્ભાવ રહે છે.

પ્રશ્ન—(અવત્તગદ્વાણં પુન્જા) અવત્તવ્યક દ્રવ્યોંના વિષયમાં પણ એવો પ્રશ્ન પૂછવામાં આવ્યો છે કે નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અવત્તવ્યક દ્રવ્ય કાળની અપેક્ષાએ કેટલા સમય સુધી રહે છે ?

નાનાદ્રવ્યાણિ તુ પ્રતીત્ય સર્વકાલમ્, લોકસ્ય પ્રતિપ્રદેશે તેષાં સદ્ભાવાત્ । અવ-
ક્તવ્યકદ્રવ્યાણિ તુ એકં દ્રવ્યં પ્રતીત્ય અજઘન્યાનુત્કર્ષેણ દ્વૌ સમયૌ તિષ્ઠન્તિ ।
નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય તુ સર્વકાલમ્ । લોકસ્ય પ્રતિપ્રદેશે તેષાં સર્વાદાવસ્થાનાત્ ॥
એકસમયસ્થિતિકસ્યૈવાનાનુપૂર્વીત્વં, દ્વિસમયસ્થિતિકસ્યૈવાવક્તવ્યકત્વમભ્યુપગમ્ય-
તેઽતો નાનયોર્દ્વયોર્વિષયે જઘન્યોત્કૃષ્ટચિન્તાસંભવ इति भावः ॥ સૂ૦ ૧૩૩ ॥

અથાન્તરદ્વારમાહ—

મૂલમ્—ળેગમવવહારાણં આણુપુઘ્વીદઘ્વાણમંતરં કાલઓ કેવ-
ચ્ચિરં હોઈ? એગં દઘ્વં પડુચ્ચ જહન્નેણં એગં સમયં, ઉક્કોસેણં દો
સમયા । નાનાદઘ્વાઈં પડુચ્ચ ણત્થિ અંતરં । ળેગમવવહારાણં
અણાણુપુઘ્વીદઘ્વાણમંતરં કાલઓ કેવચ્ચિરં હોઈ? એગં દઘ્વં
પડુચ્ચ જહન્નેણં દો સમયા, ઉક્કોસેણં અસંખેજ્જં કાલં ણાના-
દઘ્વાઈં પડુચ્ચ ણત્થિ અંતરં । ળેગમવવહારાણં અવત્તઘ્વગદઘ્વાણં

ઉત્તર—(એગં દઘ્વં પડુચ્ચ અજહણ્ણમણુકોસેણં દો સમયા ણાના
દઘ્વાઈં પડુચ્ચ સઘ્વદ્ધા) એક દ્રવ્યની અપેક્ષા કરકે અજઘન્ય ઓર અનુ-
ત્કૃષ્ટ સે અવક્તવ્યક દ્રવ્ય દો સમય તરુ રહતે હૈં । ઓર નાના દ્રવ્યો
કી અપેક્ષાસે સર્વકાલ રહતે હૈં । ક્યોંકિ લોક કે પ્રતિપ્રદેશ મેં હનકા
સર્વદા અવસ્થાન રહતા હૈ । એક સમય કી સ્થિતિ ચાલા દ્રવ્ય અનાનુપૂ-
ર્વી હૈ ઓર દો સમય કી સ્થિતિચાલા દ્રવ્ય અવક્તવ્યક હૈ હસલિયે હન
દોનોં કે વિષય મેં જઘન્ય ઓર ઉત્કૃષ્ટ કો લેકર વિચાર નહીં કિયા
ગયા હૈ ॥ સૂ૦ ૧૩૩ ॥

ઉત્તર—(એગં દઘ્વં પડુચ્ચ અજહણ્ણમણુકોસેણં દો સમયા, ણાના દઘ્વાઈં
પડુચ્ચ સઘ્વદ્ધા) એક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો અજઘન્ય
અને અનુત્કૃષ્ટ કાળની અપેક્ષાએ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય બે સમય સુધી રહે છે.
અને બે અનેક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો અવક્તવ્યક
દ્રવ્યોની સ્થિતિ સાર્વકાલિક છે, કારણ કે લોકના દરેક પ્રદેશમાં તેમનો સદા
સદ્ભાવ રહે છે. એક સમયની સ્થિતિવાળું દ્રવ્ય અનાનુપૂર્વી રૂપ છે અને
બે સમયની સ્થિતિવાળું દ્રવ્ય અવક્તવ્યક રૂપ છે. તે કારણે તે બંને જઘન્ય
અને ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવ્યો નથી. ॥સૂ૦ ૧૩૩॥

पुच्छा, एगं दव्वं पडुच्च जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोसेणं असं-
खेज्जं कालं । णाणादव्वाइं पडुच्च णत्थि अंतरं । भाग भाव
अप्पावहुं चेव जहा खेत्ताणुपुव्वीए तहा भाणियव्वाइं जाव से
तं अणुगमे । से तं णेगमववहारणं अणोवणिहिया काला-
णुपुव्वी ॥सू० १३४॥

छाया—नैगमव्यवहारयोः आनुपूर्वीद्रव्याणामन्तरं कालतः कियच्चिरं भवति ?
एकं द्रव्यं प्रतीत्य जघन्येन एकं समयम्, उत्कर्षेण द्वौ समयौ । नानाद्रव्याणि
प्रतीत्य नास्ति अन्तरम् । नैगमव्यवहारयोरनानुपूर्वीद्रव्याणामन्तरं कालतः किय-
च्चिरं भवति ? एकं द्रव्यं प्रतीत्य जघन्येन द्वौ समयौ उत्कर्षेण असंख्येयं कालम् ।
नानाद्रव्याणि प्रतीत्य नास्ति अन्तरम् । नैगमव्यवहारयोरवक्तव्यकद्रव्याणां पृच्छा ।
एकं द्रव्यं प्रतीत्य जघन्येनैकं समयम्, उत्कर्षेणासंख्येयं कालम् । नानाद्रव्याणि
प्रतीत्य नास्ति अन्तरम् । भागोभावोऽल्पबहुत्वं चैव यथा क्षेत्रानुपूर्वी तथा भणितं-
व्यानि, यावत्सोऽसावनुगमः । सैषा नैगमव्यवहारानौपनिधिकीकालानुपूर्वी । सू. १३४।

टीका—‘ णेगमववहारणं ’ इत्यादि—

नैगमव्यवहारसम्मतानामानुपूर्वीद्रव्याणामन्तरं कालतः कियच्चिरं भवति ?
इति प्रश्नः । उत्तरयति—एकं द्रव्यं प्रतीत्यानुपूर्वीद्रव्याणामन्तरं कालतो जघन्ये-

अब सूत्रकार अन्तरद्वार की प्ररूपणा करते हैं ।

“णेगमववहारणं” इत्यादि ।

शब्दार्थ—(णेगमववहारणं) नैगमव्यवहारनयसंमत (आणुपुव्वी
दव्वाणं) समस्त आनुपूर्वीद्रव्यों का (अंतरं) अंतर (कालओ) कालकी
अपेक्षा से (कियच्चिरं) कितने समयका होता है ?

उत्तर—(एगं दव्वं पडुच्च) एक द्रव्य की अपेक्षा लेकर (जहन्नेणं)
आनुपूर्वीद्रव्यों का अंतर-विरहकाल—जघन्य से (एगं समयं) एक समय का

इसे सूत्रकार अन्तरद्वारनी प्ररूपणा करे छे—

“ णेगमववहारणं ” इत्यादि—

शब्दार्थ (णेगमववहारणं) नैगमव्यवहार नयसंमत (आणुपुव्वी दव्वाणं)
समस्त आनुपूर्वी द्रव्यों का (अंतरं) अंतर (विरहकाल) (कालओ) कालकी
अपेक्षाओ (कियच्चिरं) कितने समयका होता है ?

उत्तर—(एगं दव्वं पडुच्च) एक द्रव्य की अपेक्षाओ विचार करवाभां आवे
तो (जहण्णेणं) आनुपूर्वी द्रव्यों जघन्य अंतर-जघन्य विरहकाल—(एगं

नैकं समयं भवति, उत्कर्षेण तु द्वौ समयौ । नानाद्रव्याणि प्रतीत्य तु नास्ति अन्तरम् । अयं भावः—व्यादिसमयस्थितिकं विवक्षितं किञ्चिदेकमानुपूर्वीद्रव्यं तं परिणामं परित्यज्य परिणामान्तरेण समयमेकं स्थित्वा पुनःपूर्वोक्तनैव परिणामेन व्यादि समयस्थितिकं जायते तदा जघन्यत एकं समयमन्तरं भवति । यदा तदेव द्रव्यं द्वौ समयौ परिणामान्तरेण स्थित्वा पुनस्तेनैव परिणामेन व्यादि समयस्थितिकं जायते तदा तत्रोत्कर्षतो द्वौ समयौ अन्तरं भवति । यदि पुनः परिणामान्तरेण क्षेत्रादिभेदत समयद्वयात् परतोऽपि तिष्ठेत् तदा तत्राऽप्यानु-

और (उक्कोसेणं) उत्कृष्ट से (दो समय) दो समय का होता है । (नाणादव्वाइं षडुच्च) तथा नाना द्रव्यों की अपेक्षा लेकर इनमें (णत्थि अंतरं) अंतर नहीं है) तात्पर्य इसका इस प्रकार से है कि व्यादि समय की स्थितिवाला कोई विवक्षित एक आनुपूर्वीद्रव्य आनुपूर्वीरूप अपने परिणाम को छोड़कर के किसी दूसरे परिणाम से एक समय तक परिणमित रहकर पुनः उसी परिणाम से व्यादिसमय की स्थितिवाला बन जाता है तो ऐसी स्थिति में जघन्य से वहां अंतर एक समय का होता है । और जिस समय वही द्रव्य दो समय तक परिणामान्तर से परिणमित बना रहकर फिर बाद में उसी परिणाम से व्यादिसमय की स्थितिवाला बनता है तो ऐसी दशा में वहां उत्कृष्ट से दो समय का अन्तर माना जाता है । यदि परिणामान्तर से परिणमित बना हुआ वह द्रव्य क्षेत्रादि संबन्ध के भेद से दो समय से अधिक

समयं) એક સમયનું અને (ઉક્કોસેણં) વધારેમાં વધારે અંતર (દો સમયા) બે સમયનું હોય છે. (નાનાદવ્વાઈં ષડુચ્ચ) અનેક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો (ણત્થિ અંતરં) અંતર (વિરહકાળ) નથી આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે ત્રણ આદિ સમયની સ્થિતિવાળું દ્રવ્ય પોતાના આનુપૂર્વી રૂપ પરિણામને છોડીને કોઈ અન્ય પરિણામ રૂપે એક સમય સુધી પરિણમિત રહીને ફરી ત્રણ આદિ સમયની સ્થિતિવાળા આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપે પરિણમિત થઈ જતું હોય, તો એવી પરિસ્થિતિમાં ત્યાં જઘન્ય અન્તર (વિરહકાળ) એક સમયનો ગણાય છે. પણ ત્રણ આદિ સમયની સ્થિતિવાળું કોઈ આનુપૂર્વી દ્રવ્ય પોતાના આનુપૂર્વી રૂપ પરિણામને છોડીને કોઈ અન્ય પરિણામ રૂપે બે સમય સુધી પરિણમિત રહીને ફરી ત્રણ આદિ સમયની સ્થિતિવાળા આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપે પરિણમિત થઈ જતું હોય, તો એવી પરિસ્થિતિમાં ત્યાં ઉત્કૃષ્ટ અન્તર બે સમયનું ગણાય છે. જો અન્ય પરિણામ રૂપે પરિણમિત થયેલું તે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય ક્ષેત્રાદિ સંબંધના ભેદથી બે સમય

પૂર્વીત્વમનુમવેત્, તતોઽન્તરમેવ ન સ્યાત્ । નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય તુ નાસ્ત્યન્તરમ્, ત્રિસમયસ્થિતિકદ્રવ્યાણાં લોકે સર્વદા સદ્ભાવાદિતિ । તથા—નૈગમવ્યવહારસમ્મતાનામનાનુપૂર્વીદ્રવ્યાણાં કાલતઃ ક્રિયચ્ચિરમન્તરં ભવતિ ? इति प्रश्नः । उत्तरयति—एकं द्रव्यं प्रतीत्य जघन्येन द्वौ समयौ अन्तरम्, उत्कर्षतः असंख्येयं कालम् । नानाद्रव्याणि प्रतीत्य तु नास्ति अन्तरम् । अयं भावः—एकं द्रव्यं प्रतीत्य एकसमय-

સમય તક ખી રહતા હૈ તો ઉસ સમય વહ ઉસ સ્થિતિ મેં ખી આનુ-પૂર્વીત્વકા અનુભવન કરતા હૈ ઓર ઇસ સ્થિતિ મેં વહાં અન્તર હી નહીં આતા હૈ । નાના દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા સે જો અન્તર નહીં કહા હૈ ઉસકા કારણ યહ હૈ કિ ત્રિસમય કી સ્થિતિવાલે કોઈ ન કોઈ દ્રવ્ય લોક મેં સર્વદા રહતે હી હૈ ।

પ્રશ્ન—(જોગમવચ્ચહારાણં અણાણુપુઞ્વીદ્રવ્યાણં અંતરં કાલઓ કે વચ્ચિરં હોઈ) નૈગમવ્યવહારનયસંમત અનાનુપૂર્વીદ્રવ્યોં કા અન્તર કાલ કી અપેક્ષા કિતનેક સમય કા હોતા હૈ ?

ઉત્તર—(એકં દ્રવ્ય પદુચ્ચ) એક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા લેકર (જહન્યેન) જઘન્ય સે (દ્વૌ સમયા) દો સમય કા ઓર (ઉક્ષોસેણ) ઉત્કૃષ્ટ સે (અસંખેજ્જં કાલં) અસંખ્યાતકાલ કા અન્તર હોતા હૈ । (ણાણાદ્રવ્યાણં પદુચ્ચ ણત્થિ અંતરં) તથા નાનાદ્રવ્યોં કી અપેક્ષા કરકે અન્તર નહીં

કરતાં અધિક સમય સુધી પણ રહે તો તે પરિસ્થિતિમાં પણ ત્યારે તે આનુ-પૂર્વીત્વનો અનુભવ કરે છે, અને આ સ્થિતિમાં ત્યાં અંતર જ સંભવી શકતું નથી વિવિધ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ અંતર (વિરહકાળ)નો અભાવ જ કહેવાનું કારણ એ છે કે ત્રણ સમયની સ્થિતિવાળાં કાંઈને કાંઈ દ્રવ્યો લોકમાં સર્વદા મોજૂદ જ રહે છે.

પ્રશ્ન—(જોગમવચ્ચહારાણ અણાણુપુઞ્વી દ્રવ્યાણં અંતરં કાલઓ કેવચ્ચિરં હોઈ?) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોનું અંતર કાળની અપેક્ષાએ કેટલા સમયનું હોય છે ?

ઉત્તર—(એકં દ્રવ્યં પદુચ્ચ) એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો (જહન્યેન દો સમયા) જઘન્ય અન્તર (ઓછામાં ઓછો વિરહકાળ) એ સમયનું (ઉક્ષોસેણ અસંખેજ્જં કાલં) ઉત્કૃષ્ટ અંતર (વધારેમાં વધારે વિરહકાળ) અસંખ્યાત કાળનું હોય છે. (ણાણાદ્રવ્યાણં પદુચ્ચ ણત્થિ અંતરં) અનેક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો અંતર (વિરહકાળ) હોતું નથી આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—એક સમયની સ્થિતિ-

स्थितिकान्यनानुपूर्वीद्रव्याणि यदा परिणामान्तरेण समयद्वयमनुभूय पुनः पूर्वामेव स्थितिं लभेरन् तदा जघन्यतः समयद्वयमन्तरं लभ्यते । यदि तु परिणामान्तरेण एकमेव समयं तिष्ठेयुस्तदा अन्तरमेव न भवति, तत्राप्यनानुपूर्वीत्वस्यैव सद्भावात् । अथ समयद्वयात्परतो यदि परिणामान्तरेण तिष्ठेयुस्तदा जघन्यत्वमेव न स्यात् ॥ यदा तु तान्येव द्रव्याणि असंख्येयं कालं परिणामान्तरेण स्थित्वा पुनरेकस्थितिकं परिणामं लभेरन्, तदा उत्कृष्टतोऽसंख्येयं कालमान्तरं भवति । ननु अन्यान्यद्रव्य-क्षेत्रसम्बन्धेऽनन्तमपि कालम् अन्तरं भवितुमर्हति, ततः कथमुक्तम् 'उक्तीसेण

होता है । इसका भाव यह है कि एक समय की स्थितिवाले अनानु-पूर्वीद्रव्य जिस समय दूसरे परिणाम से दो समय तक परिणमित बने रहते हैं और बादमें पुनः उसी अपनी पूर्व स्थिति में आजाते हैं तब वहां जघन्य से दो समय का अन्तर माना जाता है । और यदि वे परिणामान्तर से परिणमित बने हुए एक समय तक ही रहते हैं तो ऐसी दशा में वहां अन्तर ही नहीं होता है क्यों कि उसस्थिति में भी वहां अनानुपूर्वीत्व का सद्भाव है । और यदि वे दो समय के बाद तक भी परिणामान्तर से परिणमित बने रहते हैं तो वहां जघन्यता नहीं मानी जाती है । और जब वे ही द्रव्य असंख्यात काल तक परिणामान्तर से परिणमित रहकर पुनः एक स्थिति वाले अपने परिणाम को पाते हैं— तब उत्कृष्ट से असंख्यात काल अन्तर होता है ।—

વાળું કોઈ એક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય જ્યારે અન્ય પરિણામ રૂપે પરિણમિત થઈને બે સમય સુધી તે પરિણામ રૂપે પરિણમિત થયેલું રહીને ત્યાર બાદ પોતાની એજ પૂર્વસ્થિતિમાં આવી જાય, તો એવી સ્થિતિમાં ત્યાં જઘન્ય વિરહકાળ બે સમયનો ગણાય છે. અને જો તે એક સમય સુધી જ અન્ય પરિણામ રૂપે પરિણમિત થયેલું રહે છે, તો એવી પરિસ્થિતિમાં ત્યાં અંતર જ હોતું નથી, કારણ કે એવી દશામાં તે દ્રવ્યમાં અનાનુપૂર્વીત્વનો સદ્ભાવ જ રહે છે. અને બે સમય બાદ પણ જો અન્ય પરિણામ રૂપે પરિણમિત થયેલું જ રહે, તો ત્યાં જઘન્યતા માનવામાં આવતી નથી પરંતુ જો તે દ્રવ્ય અસંખ્યાત કાળ સુધી અન્ય પરિણામ રૂપે પરિણમિત થયેલું રહીને, ત્યાર બાદ એક સમયની સ્થિતિવાળા પોતાના પૂર્વ પરિણામને પ્રાપ્ત કરે તો એવી પરિસ્થિતિમાં તે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યનો ઉત્કૃષ્ટ વિરહકાળ અસંખ્યાતકાળનો ગણાય છે.

અસંખેજ્જં કાલં' ઇતિ ? ઇતિ ચેદાહ—કાલાનુપૂર્વીપ્રક્રમાત્ કાલસ્યૈવાત્ર પ્રાધાન્યં વિવક્ષિતમ્, યદિ ચાત્ર અન્યાન્યદ્રવ્યક્ષેત્રસંબન્ધાદન્તરકાલબાહુલ્યં ક્રિયતે, તદા તદ્ દ્વારેણૈવાન્તરકાલસ્ય વહુત્વં સ્યાત્, તદા દ્રવ્યક્ષેત્રયોરેવ પ્રાધાન્યં સ્યાત્, ન તુ કાલસ્ય । તસ્માદેકસ્મિન્નેવ પરિણામન્તરે યાવાન્ કશ્ચિદુત્કૃષ્ટઃ કાલો લભ્યતે સ એવાન્તરે ચિન્ત્યતે, સ ચાસંખ્યેય એવ । તતઃ પરમેકેન પરિણામેન વસ્તુનોઽવસ્થાનસ્યૈવ નિષિદ્ધત્વાત્ । इदं च सूत्रस्य विवक्षावैविचित्र्यात् सर्वं पूर्वमुत्तरत्र

શંકા—અન્ય ૨ દ્રવ્ય ઓર ક્ષેત્ર કે સાથ સંબન્ધ હોને પર અનન્ત-કાલ કા મી અન્તર હો સકતા હૈ, તો ફિર સૂત્રકાર ને “ઉત્કોસેણ અસંખેજ્જં કાલં” એસા ક્યોં કહા ?

ઉત્તર—કાલાનુપૂર્વી કે પ્રકરણ સે કાલ મેં હી યહાં પ્રધાનતા વિ-વક્ષિત હુઈ હૈ, યદિ યહાં પર અન્ય ૨ દ્રવ્ય ઓર ક્ષેત્ર કે સંબન્ધ સે અન્તરકાલ મેં બાહુલ્ય ક્રિયા જાતા હૈ તો યહ બાહુલ્ય ઉસમેં દ્રવ્ય ઓર ક્ષેત્ર કે દ્વારા હી આયા માના જાવેગા તથતો દ્રવ્ય ઓર ક્ષેત્ર કી હી પ્ર-ધાનતા હો જાવેગી કાલ કી નહીં । હસલિયે એક હી પરિણામાન્તર મેં જિનના કુછ ઉત્કૃષ્ટ કાલ લભ્ય હોતા હૈ વહી અન્તર મેં વિચારા જાતા હૈ ઓર વહ હસ પ્રકાર સે અસંખ્યાત હી લભ્ય હોતા હૈ । હસકે બાદ વ-સ્તુ કા એક પરિણામ રૂપ સે અવસ્થિત રહના હી નિષિદ્ધ હૈ । યહ સઘ કથન સૂત્ર કી વિવક્ષા કી વિચિત્રતા સે આગે પીછે આગમ મેં વિરોધ ન

શંકા—જુદાં જુદાં દ્રવ્ય અને ક્ષેત્રની સાથે સંબંધ થતો હોય તો અનં-તકાળનું પણ અંતર સંભવી શકે છે. છતાં સૂત્રકારે ઉત્કૃષ્ટ અંતર અસંખ્યા-તકાળનું શા કારણે કહ્યું છે ?

ઉત્તર—કાલાનુપૂર્વીનું પ્રકરણ ચાલતું હોવાને કારણે અહીં કાળમાં જ પ્રધાનતા માનીને કથન કરવામાં આવ્યું છે. જો અહીં જુદાં જુદાં દ્રવ્ય અને ક્ષેત્રના સંબંધને લીધે અંતરકાળમાં બાહુલ્ય માનવામાં આવે, તો તે બાહુલ્ય તેમાં દ્રવ્ય અને ક્ષેત્રના દ્વારા જ આવેલું માનવું પડશે જો એ પ્રમાણે કરવામાં આવે તો કાળની પ્રધાનતાને બદલે દ્રવ્ય અને ક્ષેત્રની જ પ્રધાનતા માનવાનો પ્રસંગ ઉપરિથિત થશે તેથી એક જ પરિણામાન્તરમાં જેટલો ઉત્કૃષ્ટકાળ થાય છે, તેને જ ઉત્કૃષ્ટ અંતર રૂપ માનવામાં આવે છે, અને તે ઉત્કૃષ્ટ અંતર ઉપર બતાવ્યા પ્રમાણે અસંખ્યાતકાળનું જ હોય છે. ત્યાર બાદ (અસંખ્યાત કાળ બાદ) વસ્તુ એક પરિણામ રૂપે અવસ્થિત (ભોજૂદ) રહેવાનો જ નિષેધ છે. આ સમસ્ત કથન, સૂત્રની વિવક્ષાની વિચિત્રતાને લીધે, એવી રીતે અહીં લગાડવું જોઈએ કે આગમના આગળપાછળના કથન

ચાગમાવિરોધેન ભાવનીયમ્ । નાનાદ્રવ્યાણ્યાશ્રિત્ય તુ નાસ્ત્યન્તરમ્, લોકસ્ય પ્રતિપ્રદેશે સર્વદા તસ્ય સદ્ભાવાદિતિ । તથા-નૈગમવ્યવહારસમ્પત્તાનામવક્તવ્યક-
દ્રવ્યાણામપિ અન્તરવિષયે પૃચ્છા=પ્રશ્નોડનાનુપૂર્વીવદ્ બોધ્યઃ । ઉત્તરસ્તુ-એકં દ્રવ્યં
પ્રતીત્ય જઘન્યેનૈકં સમયમન્તરમ્, ઉત્કર્ષેણ અસંખ્યેયં કાલમ્ । નાનાદ્રવ્યાણિ
પ્રતીત્ય નાસ્તિ અન્તરમિતિ । અયં ભાવઃ-દ્વિસમયસ્થિતિકં કિંચિદવક્તવ્યકદ્રવ્યં
પરિણામાન્તરેણ સમયમેકં સ્થિત્વા તતઃ પુનર્દ્વિસમયસ્થિતિકત્વમેવ યદા લભતે તદા

આવે હસ પ્રકાર લગા લેના ચાહિયે । નાનાદ્રવ્યોં કી અપેક્ષા કરકે જો
અન્તર નહીં કહાં ગયા હૈ ઉસકા કારણ યહ હૈ કિ લોક કે પ્રતિ
પ્રદેશ મેં સર્વદા ઉસકા સદ્ભાવ રહા કરતા હૈ । (નૈગમવ્યવહારાણં અવક્ત-
વ્યગદ્વાણં પુચ્છા) નૈગમવ્યવહારનયસંમત અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કે અન્તર
કે વિષય મેં પ્રશ્ન-અનાનુપૂર્વીદ્રવ્ય કી તરહ હી જાનના ચાહિયે ।

ઉત્તર—ઉસકા હસ પ્રકાર સે હૈ—(એગં દર્વ્વં પહુચ્ચ) એક અવક્ત-
વ્યક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા કરકે (જહ્ણેણં) જઘન્ય સે અન્તર (એગં સમયં)
એક સમય કા હૈ ઓર (ઉક્રોસેણં) ઉત્કૃષ્ટ સે અન્તર (અસંખેજ્જં
કાલં) અસંખ્યાત કાલ કા હૈ । તથા (જાણાદ્વાઈ પહુચ્ચ જાસ્થિ અંતરં)
નાના દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા સે અન્તર નહીં હૈ । હસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ
દો સમય કી સ્થિતિવાલા કોઈ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય પરિણામાન્તર સે પરિ-

નમાં કોઈ વિરોધ સંભવે નહીં અનેક અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ અંતર-
વિરહકાળ-નો અભાવ કહેવાનું કારણ એ છે કે લોકના પ્રત્યેક પ્રદેશમાં તેનો
સદા સદ્ભાવ જ રહ્યા કરે છે.

પ્રશ્ન—(નૈગમવ્યવહારાણં અવક્તવ્યગદ્વાણં પુચ્છા) નૈગમવ્યવહાર નયસંમત
અવક્તવ્યક દ્રવ્યોના અંતરના વિષયમાં પણ અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યના જેવો જ
પ્રશ્ન સમજવો.

ઉત્તર—(એગં દર્વ્વં પહુચ્ચ) એક અવક્તવ્યક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વિચાર
કરવામાં આવે, તો (જહ્ણેણં એગં સમયં) જઘન્યની અપેક્ષાએ એક સમયનું,
અને (ઉક્રોસેણ અસંખેજ્જં કાલં) ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત કાળનું અંતર
હોય છે. એટલે કે જોઈમાં જોઈ એક સમયનો અને વધારેમાં વધારે
અસંખ્યાત કાળનો વિરહકાળ હોય છે. (જાણાદ્વાઈ પહુચ્ચ જાસ્થિ અંતરં)
વિવિધ અવક્તવ્યક દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે, તો વિરહકાળ
રૂપ અંતરનો અભાવ હોય છે.

હવે આ કથનનો ભાવાર્થ જતાવવામાં આવે છે, ધારો કે બે સમયની
સ્થિતિવાળું કોઈ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય પોતાના પરિણામનો ત્યાગ કરીને કોઈ

જઘન્યત્ત્વ એકં સમયમન્તરમ્ । યદા ચ પરિણામાન્તરેણાસંખ્યેયં કાલં સ્થિત્વા તતઃ
પુનર્દ્વિમમયસ્થિતિક્ત્વં લભતે તદા ઉત્તરર્ષેણ અસંખ્યેયં કાલમન્તરં ભવતિ ।
અનાનુપૂર્વ્યાં યથાઽઽક્ષેપપરિહારૌ તથાઽત્રાપિ બોધ્યૌ । તથા—નાનાદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય
તુ નાસ્તિ અન્તરમ્, લોકે સર્વદા તેષાં સદ્ભાવાત્ । इत्थमन्तरद्वारमुक्त्वा सम्प्रति—
ભાગદ્વારં ભાવદ્વારમલ્પબહુત્વદ્વારં ચ વક્તુકામ આહ—‘ભાગ—ભાવ અલ્પાબહુ’ ચેવ’
इत्यादि । अयं भावः—अत्रापि भागद्वारं क्षेत्रानुपूर्वीवद् बोध्यम् । क्षेत्रानुपूर्व्यां
યથાઽઽનુપૂર્વીદ્રવ્યાણિ શેષદ્રવ્યાપેક્ષયાઽસંખ્યેયૈર્ભાગૈરધિકાનિ, શેષદ્રવ્યાણિ તદ-
પેક્ષયાઽસંખ્યેયભાગન્યૂનાનિ તથાઽત્રાપિ બોધ્યમ્ । इदमत्र बोध्यम्—अनानुपूर्वीद्रव्यं

ળમિત હુઆ એક સમય તક રહતા હૈ ઓર બાદ મેં ફિર વહ દો સમય
કી અપની પૂર્વસ્થિતિ કો પ્રાપ્ત કરલેતા હૈ તબ હસ સ્થિતિ મેં વિરહકાલ
જઘન્યરૂપ સે એક સમય કા માના જાતા હૈ ઓર જબ દો સમય કી
સ્થિતિવાલા કોઈ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય પરિણામાન્તર સે પરિણમિત અસં-
ખ્યાત કાલ તક બના રહકર ફિર દો સમય કી અપની પૂર્વસ્થિતિ મેં
આ જાતા હૈ તબ હસ દશા મેં વહાં ઉસકા અન્તર અસંખ્યાત કાલ કા
માના જાતા હૈ । અનાનુપૂર્વી મેં જિસ પ્રકાર સે આક્ષેપ ઓર ઉસકા
પરિહાર કિયા ગયા હૈ ઉસી પ્રકાર સે યહીં પર ભી અક્ષેપ ઓર ઉસકા
પરિહાર ઉસી પદ્ધતિ સે કિયા ગયા જાનના ચાહિયે । તથા નાના અવ-
ક્તવ્યક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા જો અન્તર નહીં કહા ગયા હૈ ઉસકા કારણ
યહ હૈ કિ લોક મેં સર્વદા અવક્તવ્યક દ્રવ્યોં કા સદ્ભાવ રહતા હૈ ।
(ભાગ, ભાવ, અલ્પાબહું ચેવ જહાં લેક્ષણપુર્વ્વીએ તહાં ભાણિયવાઈ

અન્ય પરિણામ રૂપે પરિણમિત થઈ જાય છે. ત્યાર બાદ તે એક સમય સુધી
એજ દશામાં રહીને ફરી બે સમયની પોતાની પૂર્વસ્થિતિને પ્રાપ્ત કરી લે છે.
તો એવી પરિસ્થિતિમાં જઘન્ય વિરહકાળ એક સમયનો ગણાય છે. પરંતુ
કોઈ અવક્તવ્યક દ્રવ્ય અન્ય પરિણામ રૂપે પરિણમિત થઈને અસંખ્યાત
કાળ સુધી તે અન્ય પરિણામ રૂપે જ રહીને ત્યાર બાદ બે સમયની પોતાની
પૂર્વસ્થિતિમાં આવી જાય છે, તો એવી પરિસ્થિતિમાં તે અવક્તવ્યક દ્રવ્યનું
ઉત્કૃષ્ટ અંતર અસંખ્યાત કાળનું માનવામાં આવે છે. અનાનુપૂર્વીમાં જે
પ્રકારની શંકા ઉઠાવવામાં આવી છે તે પ્રકારની શંકા અહીં પણ ઉઠાવી
શકાય છે આ શંકાનું ત્યાં જે પ્રકારે નિવારણ કરવામાં આવ્યું છે એજ
પ્રકારે અહીં પણ નિવારણ કરી શકાય છે,

ત્રિવિધ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ અંતરનો અભાવ કહેવાનું કારણ એ છે કે
સ્રોકમાં અવક્તવ્યક દ્રવ્યોનો સદા સદ્ભાવ રહે છે. (ભાગ, ભાવ, અલ્પાબહું

હિ એકસમયસ્થિતિલક્ષણમેકં સ્થાનં લભતે, અવક્તવ્યકદ્રવ્યં તુ દ્વિસમયસ્થિતિલક્ષણમેકં સ્થાનં લભતે । આનુપૂર્વીદ્રવ્યં તુ ત્રિસમયચતુઃસમયપચ્ચસમયસ્થિતિલક્ષણાનિ સ્થાનાન્યારમ્યાસંખ્યેયસ્થિતિલક્ષણપર્યન્તેષુ સ્થાનેષુ एकैकं સ્થાનં લભતે । इत्थं चानुपूर्वीद्रव्यं शेषद्रव्यापेक्षयाऽसंख्येयभागाधिकम् । शेषद्रव्याणि तदपेक्षयाऽसं-

જાવ સે તં અણુગમે) ભાગદ્વાર, ભાવદ્વાર ઔર અલ્પબહુત્વદ્વાર ક્ષેત્રાનુ-પૂર્વી કી તરહ્ યદ્દાં પર મી જાનના ચાહિયે । અર્થાત્ ક્ષેત્રાનુપૂર્વી મેં જૈસે સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય શેષ દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા અસંખ્યાત ભાગોં સે અધિક-અસંખ્યાતગુણિત-માને ગયે હૈં ઔર શેષ દ્રવ્ય-અનાનુપૂર્વી એં અવક્તવ્યક દ્રવ્ય-इनकी अपेक्षा असंख्यातभागन्यून माने हैं उसी प्रकार यहाँ पर भी भागद्वार के विषय में कथन जानना चाहिये । यहाँ ऐसा जानना-अनानुपूर्वी द्रव्य एक समय की स्थितिरूप एक स्थान को प्राप्त करता है और जो अवक्तव्यक द्रव्य है वह द्विसमय की स्थिति-रूप एक स्थान को पाता है, तथा जो आनुपूर्वी द्रव्य है, वह तीन समय, चार समय पांच समय की स्थितिरूप स्थानों से लेकर असंख्यात समय तक की स्थितिरूप स्थानों में एक एक स्थान को प्राप्त करता है । इस प्रकार आनुपूर्वी द्रव्य शेष द्रव्यों की अपेक्षा असंख्यात भागों से अधिक

શેષ જહા ક્ષેત્રાનુપુર્વીય તહા ભાગિયવ્વાહં જાવ સે તં અણુગમે) ભાગદ્વાર, ભાવદ્વાર અને અલ્પબહુત્વદ્વારનું કથન ક્ષેત્રાનુપૂર્વીની જેમ જ અહીં પણ સમજવું લેઈએ એટલે કે ક્ષેત્રાનુપૂર્વીમાં જેવી રીતે સમસ્ત આનુપૂર્વી દ્રવ્યને બાકીનાં દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાતગણું કહેવામાં આવ્યું છે, અને બાકીનાં દ્રવ્યોને (અનાનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યોને) આનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાત ભાગપ્રમાણ કહેવામાં આવેલ છે, એજ પ્રમાણે અહીં પણ ભાગદ્વારના વિષયમાં કથન બહુ થવું લેઈએ આ કથનનું વધુ સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે સમજવું.

અનાનુપૂર્વી દ્રવ્ય એક સમયની સ્થિતિ રૂપ એક સ્થાનને પ્રાપ્ત કરે છે, અને જે અવક્તવ્યક દ્રવ્ય છે તે બે સમયની સ્થિતિ રૂપ એક સ્થાનને પ્રાપ્ત કરે છે, તથા જે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય છે તે ત્રણ, ચાર, પાંચ આદિ સમયની સ્થિતિ રૂપ સ્થાનોથી લઈને અસંખ્યાત સમય પર્યન્તની સ્થિતિ રૂપ સ્થાનોમાંના એક એક સ્થાનને પ્રાપ્ત કરે છે. આ પ્રકારે આનુપૂર્વી દ્રવ્ય બાકીનાં બે દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાતગણું અધિક સંખવી શકે છે અને બાકીના

સંખ્યેયભાગન્યૂનાનીતિ । તથા-ભાવદ્વારે આનુપૂર્વ્યનાનુપૂર્વ્યવક્તવ્યકાનાં ત્રયાણામપિ દ્રવ્યોણાં સાદિપારિણામિકભાવવર્તિત્વં પૂર્વવદ્ બોધ્યમ્ । તથા-एषां त्रयाणां द्रव्याणामल्पबहुत्वद्वारमेवं बोध्यम्-अवक्तव्यकद्रव्याणि हि सर्वस्तोकानि, तेषां स्वभावत एव स्तोक्तत्वात् । अनानुपूर्वीद्रव्याणि तु ततो विशेषाधिकानि, अनानुपूर्वीद्रव्याणामवक्तव्यकद्रव्यापेक्षया विशेषाधिकत्वात् । आनुपूर्वीद्रव्याणि तु उक्तो-भयद्रव्यापेक्षया असंख्येयभागाधिकानि । असंख्येयभागाधिकत्वं त्वेषाम् उपरि-भागद्वारे निर्दिष्टं तथैवात्राऽपि बोध्यम् । भागादि विषये क्षेत्रानुपूर्वीवत् सर्वं बोध्यमिति । इत्थं नैगमव्यवहारसम्मतोऽनौपनिधिकी कालानुपूर्वीवत् उपसंहृतेति

લભ્ય હોતા હૈ । ઓર શેષ દો દ્રવ્ય ડસકી અપેક્ષા અસંખ્યાતભાગન્યૂન લભ્ય હોતે હૈ । ભાવદ્વાર મેં આનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી ઓર અવક્તવ્યક યે ત્રીનોં ભી દ્રવ્ય પૂર્વ કે જૈસે સાદિ પારિણામિક ભાવવર્તી હૈ । તથા-इन तीनों द्रव्यों का अल्पबहुत्वद्वार इस प्रकार से जानना चाहिये-समस्त अवक्तव्यक द्रव्य स्वभाव से ही कम होने से शेष दो द्रव्यों की अपेक्षा से कम हैं । अनानुपूर्वी द्रव्य अवक्तव्यक द्रव्यों की अपेक्षा से कुछ-विशेष अधिक हैं । तथा जो आनुपूर्वी द्रव्य हैं वे इन दोनों द्रव्यों की अपेक्षा असंख्यात गुणा अधिक हैं । असंख्यात भागा-धिकता जिस प्रकार से ऊपर भागद्वार में प्रकट की गई है उसी प्रकार से यहां पर भी जानना चाहिये । तात्पर्य कहने का यह है कि इन भागादिद्वारों के विषय में सब कथन क्षेत्रानुपूर्वी की तरह ही जानना चाहिये । इस प्रकार (जाव से तं अ.) यावत् यह अनुगम का स्वरूप

બે પ્રકારનાં દ્રવ્યો આનુપૂર્વી દ્રવ્યો કરતાં અસંખ્યાત ભાગપ્રમાણુ ન્યૂન હોઈ શકે છે.

ભાવદ્વારમાં આનુપૂર્વી અને અવક્તવ્યક, આ ત્રણે દ્રવ્યોને આગળ કયા પ્રમાણુ સાદિપારિણામિક ભાવવર્તી કયાં છે.

આ ત્રણેના અલ્પબહુત્વદ્વારનું કથન આ પ્રમાણુ સમજવું-સમસ્ત અવક્તવ્યક દ્રવ્ય સ્વાભાવિક રીતે જ ઓછું હોવાને કારણે બાકીનાં બન્ને દ્રવ્યો કરતાં ઓછું છે. અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો વિશેષા-ધિક છે અનાનુપૂર્વી દ્રવ્યો અને અવક્તવ્યક દ્રવ્યો કરતાં આનુપૂર્વી દ્રવ્ય અસંખ્યાત ભાગપ્રમાણુ અધિકતાનું સ્પષ્ટીકરણ ઉપર ભાગદ્વારમાં જે પ્રમાણુ કરવામાં આવ્યું છે તે પ્રમાણુ અહીં પણ સમજી લેવું આ સમસ્ત કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે આ ભાગાદિ દ્વારોના વિષયમાં સમસ્ત કથન ક્ષેત્રાનુપૂર્વીના જેવું જ સમજવું (જાવ સે તં અનુગમે) “ આ પ્રકારનું અનુગમનું સ્વરૂપ

सूचयितुमाह—‘से तं’ इत्यादि। सैषा नैगमव्यवहारसम्भता अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी ॥सू० १३४॥

अथ संग्रहनयमतेन अनौपनिधिकी कालानुपूर्वीमाह—

मूलम्—से किं तं संग्रहस्स अणोवणिहिया कालाणुपुव्वी ? संग्रहस्स अणोवणिहिया कालाणुपुव्वी पंचविहा पणत्ता, तं जहा—अत्थपयपरुवणया, भंगसमुक्कित्तणया, भंगोवदंसणया, समोयारे, अणुगमे ॥सू० १३५॥

छाया—अथ का सा संग्रहस्य अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी ? संग्रहस्य अनौ है। इसको समाप्त होते ही नैगमव्यवहारनयसंमत अनौपनिधिकी कालानुपूर्वीका यह प्रकरण समाप्त हो रहा है इस बात को सूचित करने के लिये सूत्रकार कहते हैं कि (से तं णेगमववहाराणं अणोवणिहिया कालाणुपुव्वी) इस प्रकार से यह नैगमव्यवहारनयसंमत अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी है ॥सू०-१३४॥

अब सूत्रकार संग्रहनय के मन्तव्यानुसार अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी का कथन करते हैं —“से किं तं संग्रहस्स” इत्यादि।

शब्दार्थ — (से किं तं संग्रहस्स अणोवणिहिया कालाणुपुव्वी) हे भदंत । संग्रहनयमान्य अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी क्या है ?

उत्तर — (संग्रहस्स अणोवणिहिया) संग्रहनय मान्य अनौपनिधिकी (कालाणुपुव्वी) कालानुपूर्वी (पंचविहा पणत्ता) पांच प्रकार की

छे. ” आ कथन पर्यन्तत्तुं क्षेत्रानुपूर्वीना प्रकरणभांतुं समस्त कथन अह्मिं अह्मिं करवुं लेख्ये तेनी समाप्ति यतां न नैगमव्यवहार नयसंमत अनौपनिधिकी कालानुपूर्वीत्तुं आ प्रकरण समाप्त यत्तुं छे, ये बातने सूचित करवाने भाटे सूत्रकार आ प्रमाणे कहे छे—(से तं णेगमववहाराणं अणोवणिहिया कालाणुपुव्वी) “नैगमव्यवहार नयसंमत अनौपनिधिकी कालानुपूर्वीत्तुं उपर गताण्या प्रमाणेत्तुं स्वप्प छे. ” ॥सू० १३४॥

इसे सूत्रकार संग्रहनयना मंतव्य अनुसार अनौपनिधिकी कालानुपूर्वीत्तुं कथन करे छे—“से किं तं संग्रहस्स” इत्यादि—

शब्दार्थ—(से किं तं संग्रहस्स अणोवणिहिया कालाणुपुव्वी ?) हे भगवन् ! संग्रहनयमान्य अनौपनिधिकी कालानुपूर्वीत्तुं स्वप्प केवुं छे ?

उत्तर—(संग्रहस्स अणोवणिहिया कालाणुपुव्वी पंचविहा पणत्ता) संग्रहनय-

પનિધિકી કાલાનુપૂર્વી પશ્ચવિધા પ્રજ્ઞતા, તથા-અર્થપદપ્રરૂપણતા, ભંગસમુત્કીર્તનતા, ભંગોપદર્શનતા, સમવતારઃ અનુગમઃ ॥સૂ. ૧૩૫॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ । વ્યાખ્યાસ્ય પૂર્વવદ્ વોધ્યા ॥સૂ. ૧૩૫॥

અર્થપદપ્રરૂપણતાદીનાં નિરૂપણાયાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં સંગ્રહસ્સ અટ્ટપયપરૂવણયા ? एयाइं पंच वि दाराइं जहा खेत्ताणुपुव्वीए संग्रहस्स तहा कालाणुपुव्वीए वि भाणियव्वाणि, णवरं ठिई अभिलावो, जाव से तं अणुगमे से तं संग्रहस्स अणौवणिहिया कालाणुपुव्वी ॥सू. १३६॥

છાયા—અથ કા સા સંગ્રહસ્ય અર્થપદપ્રરૂપણતા ? एतानि पञ्चापि द्वाराणि यथा क्षेत्रानुपूर्व्या संग्रहस्य तथा कालानुपूर्व्यामपि भणितव्यानि, नवरं स्थित्यभिलापः, यावत्स एषोऽनुगमः । सैवा संग्रहस्य अनौपनिधिकी कालानुपूर्वी ॥सू. १३६॥

ટીકા—“સે કિં તં” ઇત્યાદિ ।

અથ કા સા સંગ્રહસમ્મતાડર્થપદપ્રરૂપણતા ? इति प्रश्नः । उत्तरयति—एतानि= अर्थप्ररूपणतादीनि पञ्चापि द्वाराणि संग्रहमते क्षेत्रानुपूर्व्यामेकोत्तरशततमे सूत्रे

કહી ગઈ હૈ (તં જહા) जैसे—(अट्टपयपरूवणया भंगसमुक्कित्तणया, भंगो- वदंसणया ‘समोयारे’ अणुगमे) अर्थपदप्ररूपणता, भंगसमुत्कीर्तनता, भंगोपदर्शनता समवतार और अनुगम इत्यस्य सूत्र की व्याख्या पहिले की गई व्याख्या के अनुसार ही जाननी चाहिये ॥सू. ૧૩૫॥

“સે કિં તં સંગ્રહસ્સ” ઇત્યાદિ ।

शब्दार्थ—(से किं तं संग्रहस्स अट्टपयपरूवणया) हे भदंत । संग्रहनयमान्य अर्थपद प्ररूपणता क्या है ? (एयाइं पंच वि दाराइं जहा खेत्ताणुपुव्वीए संग्रहस्स तहा कालाणुपुव्वीए वि भाणियव्वाणि)

સંમત અનૌપનિધિકી કાલાનુપૂર્વી પાંચ પ્રકારની કહી છે. “તં જહા” તે પાંચ પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે—(अट्टपयपरूवणया भंगसमुक्कित्तणया, भंगोवदंसणया, समोयारे, अणुगमे) (૧) અર્થપદ પ્રરૂપણતા, (૨) ભંગસમુત્કીર્તનતા, (૩) ભંગોપદર્શનતા, (૪) સમવતાર અને (૫) અનુગમ આ સૂત્રની વ્યાખ્યા પહેલાં કહ્યા પ્રમાણે સમજવી ॥સૂ. ૧૩૫॥

“સે કિં તં સંગ્રહસ્સ” ઇત્યાદિ—

शब्दार्थ—(से किं तं संग्रहस्स अट्टपयपरूवणया) हे भगवन् ! संग्रहनयसंमत अर्थपद प्ररूपणतानुं चक्षुं કેવું છે ?

ઉત્તર—(एयाइं पंच वि दाराइं जहा खेत्ताणुपुव्वीए संग्रहस्स तहा कालाणुपु- व्वीए वि भाणियव्वाणि) संग्रहनयसंमत क्षेत्रानुपूर्वीमां आ पांचे दारेनुं

યથા સન્તિ તથા કાલાનુપૂર્વ્યામપિ સંગ્રહમતે મણિતવ્યાનિ । નવરં=વિશેષસ્તવ્યમેવ-
યદત્ર સ્થિત્યભિલાપઃ કર્તવ્યઃ । અયં ભાવઃ-ક્ષેત્રાનુપૂર્વ્યાં “તિષ્પણસોગાદે આણુ-
પુન્વી, ચતુષ્પણસોગાદે આણુપુન્વી” इत्याद्युक्तम्, एवमिदं-“ तिस्रमयद्विहए
आणुपुन्वी, चउसमयद्विहए आणुपुन्वी ” इत्यादि वक्तव्यमिति । क्षेत्रानुपूर्वीवत्
कियंदवधिवक्तव्यम् ? इत्याह-‘ जाव से तं ’ इति । यावत्स एषोऽनुगम इति
पर्यन्तं क्षेत्रानुपूर्वीवदेव वक्तव्यमिति । प्रकृतमुपसंहरन्नाह-‘ से तं संगहस्स ’
इत्यादि । सैषा संग्रहनयसम्पत्ता अनौपनिधिकी कालानुपूर्वीति ॥ सू० १३६ ॥

ઉત્તર--સંગ્રહનય માન્ય હન પાંચોં દ્વારોં કા કથન જિસ પ્રકાર કા
ક્ષેત્રાનુપૂર્વી મેં કિયા ગયા હૈ ઉસી પ્રકાર કા કથન સંગ્રહનયસંમત હન
પાંચોં દ્વારોં કા હસ કાલાનુપૂર્વી મેં ભી જાનના ચાહિયે । (જવરં ઠિઈ
અભિલાવો જાવ સે તં અણુગમે) પરન્તુ વિશેષતા કેવલ હતની હૈ કિ
ક્ષેત્રાનુપૂર્વી મેં “ત્રિપ્રદેશાવગાઠ આનુપૂર્વી ચતુષ્પ્રદેશાવગાઠ આનુપૂર્વી”
હસ પ્રકાર સે ભંગોં કા આલાપ કરને મેં આયા હૈ તવ યહાં પર ” તિ
સમયદ્વિહए આણુપુન્વી ચउસમયદ્વિહए આણુપુન્વી ” इत्यादि प्रकार से
भंगों का आलाप करना चाहिये । क्षेत्रानुपूर्वी की तरह हन आनुपूर्वी
आदि भंगों का संग्रह कहाँ तक करना चाहिये इसके लिये सूत्रकार क-
हते हैं कि “से तं अणुगमे” इस प्रकार यह क्षेत्रानुपूर्वी संबन्धी अनु-
गम का स्वरूप है ” यहां तक संग्रह करना चाहिये । (सेतं संगहस्स अ-
णोवणिहिया कालानुपुन्वी) इस प्रकार यह संग्रहनय संमत अनौप-
निधिकी कालानुपूर्वी है ।

જેવું કથન કરવામાં આવ્યું છે, એવું જ કથન સંગ્રહનયસંમત આ કાલા-
નુપૂર્વીના પાચે દ્વારોના વિષયમાં પણ સમજી લેવું. (જવરં ઠિઈ અભિલાવો
જાવ સે તં અણુગમે) પરન્તુ ક્ષેત્રાનુપૂર્વીના કથન કરતાં આ કથનમાં નીચે
પ્રમાણે વિશિષ્ટતા રહેલી છે-ક્ષેત્રાનુપૂર્વીના પ્રકરણમાં “ ત્રિપ્રદેશાવગાઠ
આનુપૂર્વી, ચતુષ્પ્રદેશાવગાઠ આનુપૂર્વી, ” (આ પ્રકારે ભંગોનું કથન કરવામાં
આવ્યું છે, ત્યારે સંગ્રહનયસંમત કાલાનુપૂર્વીમાં “ તિસમયદ્વિહए આણુપુન્વી,
ચउસમયદ્વિહए આણુપુન્વી, ” इत्यादि प्रकारे ભંગોનું કથન કરવું જોઈએ
ક્ષેત્રાનુપૂર્વીના પ્રકરણગત પાઠનું કથન, “ સે તં અણુગમે ” “ આ પ્રકારનું
અનુગમનું સ્વરૂપ છે. આ સૂત્રપાઠ પર્યન્ત કરવું જોઈએ. (સે તં સંગહસ્સ
અણોવણિહિયા કાલાનુપુન્વી) આ પ્રકારનું સંગ્રહનયસંમત અનૌપનિધિકી
કાલાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ છે.

અથ ઔપનિધિકીં કાલાનુર્વીં પ્રરૂપયિતુમાદ-

મૂલ્ય-સે કિં તં ઓવણિહિયા કાલાણુપુર્વી ? ઓવણિહિયા કાલાણુપુર્વી તિવિહા પળ્લન્તા, તં જહા-પુવાણુપુર્વી પચ્છાણુપુર્વી અણાણુપુર્વી । સે કિં તં પુવાણુપુર્વી ? પુવાણુપુર્વી સમણ, આવલિયા, આણ, પાણૂ, થોવે, લવે, મુહુત્તે, અહોરત્તે, પક્ખે, માસે, ઉઝ્ઝ, અયણે, સંવચ્છરે, જુગે, વાસસણ, વાસસહસ્સે, વાસસયસહસ્સે, પુઠ્ઠંગે, પુઠ્ઠે, તુઢિયંગે, તુઢિણ, અઢઢંગે, અઢઢે, અવંગે, અવવે, હુહુઅંગે, હુહુણ, ઉપ્પલંગે, ઉપ્પલે, પડમંગે, પડમે, ણલિણંગે, ણલિણે, અત્થનિઝ્ઝરંગે, અત્થનિઝ્ઝરે, અડઅંગે, અડણ, નડઅંગે, નડણ, પડઅંગે, પડણ, ચૂલિઅંગે, ચૂલિયા, સીસપહેલિઅંગે, સીસપહેલિયા, પલિઓવમે, સાગરોવમે, ઓસ્સપ્પિણી,

આવાર્થ-- સૂત્રકાર ને હસ સૂત્ર દ્વારા સંગ્રહનય માન્ય અનૌપનિધિકી કાલાનુર્વીં કે અર્થપદપ્રરૂપણતા આદિ પાંચ દ્વારોં કે સ્વરૂપ કથન કે વિષય મેં યહ સમજાયા હૈ કિં હન પાંચ દ્વારોં કે સ્વરૂપ કા કથન ક્ષેત્રાનુર્વીં મેં સંગ્રહનય કી માન્યતા કે પ્રકરણ મેં જિસ પ્રકાર સે કિયા ગયા હૈ વૈસા હી સ્વરૂપ કથન હનકા હસ કાલાનુર્વીં મેં હસ પ્રકરણ મેં જાનનાં ચાહિયે । પરન્તુ ડસ પ્રકરણ મેં પ્રદેશોં કો લેકર આનુર્વીં આદિ અંગોં કા સ્વરૂપ કથન કરને મેં આયા હૈ-તથ કિં યહાં પર સમયોં કો લેકર આનુર્વીં આદિ અંગોં કા સ્વરૂપ દિશાયા ગયા હૈ । સૂ૦ ૧૩૬॥

ભાવ.થં-સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં સંગ્રહનયસંમત અનૌપનિધિકી કાલાનુર્વીંના અર્થપદ પ્રરૂપણતા આદિ પાંચ દ્વારોના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કર્યું છે-સંગ્રહનયસંમત ક્ષેત્રાનુર્વીંના પ્રકરણમાં આ પાંચ દ્વારો વિષે જેવું કથન કરવામાં આવ્યું છે, એવું જ કથન અહીં પણ ગ્રહણ કરવાનું કર્યું છે. તે પ્રકરણના કથન કરતાં આ પ્રકરણના કથનમાં એટલી જ વિશેષતા છે કે તે પ્રકરણમાં પ્રદેશોની અપેક્ષાએ ભંગોનું કથન કરવામાં આવ્યું છે, પરન્તુ અહીં સમયોની અપેક્ષાએ આનુર્વીં આદિ દ્રવ્યોના ભંગોનું કથન કરવામાં આવ્યું છે, એમ સમજવું ॥સૂ૦૧૩૬॥

उत्सर्पिणी, पोग्गलपरियट्टे, अईयद्धा, अणागयद्धा, सब्बद्धा ।
 से किं तं पच्छाणुपुव्वी? पच्छाणुपुव्वी-सब्बद्धा अणागयद्धा जाव
 समए । से तं पच्छाणुपुव्वी । से किं तं अणाणुपुव्वी ? अणाणु-
 पुव्वी-एयाए चेव एगाइयाए इगुत्तरियाए अणंतगच्छगयाए
 सेढीए अणमण्णव्भासो दुरूव्वणो । से तं अणाणुपुव्वी । अहव
 ओवणिहिया कालाणुपुव्वी तिविहा पणत्ता, तं जहा-पुव्वाणु-
 पुव्वी, पच्छाणुपुव्वी, अणाणुपुव्वी । से किं तं पुव्वाणुपुव्वी ?
 पुव्वाणुपुव्वी-एगसमयट्ठिइए, दुसमयट्ठिइए, तिसमयट्ठिइए
 जाव दससमयट्ठिइए संखिज्जसमयट्ठिइए असंखिज्जसमयट्ठिइए
 से तं पुव्वाणुपुव्वी । से किं तं पच्छाणुपुव्वी ? पच्छाणुपुव्वी-
 असंखिज्जसमयट्ठिइए जाव एगसमयट्ठिइए । से तं पच्छाणुपुव्वी ।
 से किं तं अणाणुपुव्वी ? अणाणुपुव्वी-एयाए चेव एगाइयाए
 एगुत्तरियाए असंखिज्जगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नव्भासो
 दुरूव्वणो, से तं अणाणुपुव्वी । से तं ओवणिहिया कालाणुपुव्वी ।
 से तं कालाणुपुव्वी ॥सू० १३७॥

छाया—अथ का सा औपनिधिकी कालानुपूर्वी ? औपनिधिकी कालानुपूर्वी
 त्रिविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा-पूर्वानुपूर्वी पश्चानुपूर्वी अनानुपूर्वी । अथ का सा पूर्वानु-
 पूर्वी ? पूर्वानुपूर्वी-समयः आवलिका आनः प्राणः स्तोकः लवः मुहूर्तः अहोरात्रः पक्षः
 मासः ऋतुः अयनं संवत्सरः युगं वर्षशतं वर्षसहस्रं वर्षगतसहस्रं पूर्वार्द्धं पूर्वं त्रुटिताङ्गं
 त्रुटितम् अटटाङ्गम् अटटम् अववाङ्गम् अववम् हुहुकाङ्गं हुहुकम् उत्पलाङ्गम् उन्पलं
 पद्याङ्गं पद्यं, नलिनाङ्गं नलिनम् अर्थनिपूराङ्गम् अर्थनिपूम् अयुताङ्गम् अयुतं नयुताङ्गं
 नयुतं प्रयुताङ्गं प्रयुतं चूलिकाङ्गं चूलिका शीर्षप्रदेलिकाङ्गं शीर्षप्रदेलिका पलोपमं
 सागरोपमम् अवसर्पिणी उत्सर्पिणी पुद्गलपरिवर्तः अतीताद्धा अनागताद्धा सर्वाद्धा ।
 तेषां पूर्वानुपूर्वी । अथ का सा पश्चानुपूर्वी ? पश्चानुपूर्वी-सर्वाद्धा अनागताद्धा

યાવત્ સમયઃ । સૈવા પશ્ચાન્નુપૂર્વી । અથ કા સા અનાનુપૂર્વી ? અનાનુપૂર્વી-एतस्या-
मेव एकादिकायामेकोत्तरिकायामनन्तगच्छगतायां श्रेण्यामन्योऽन्याभ्यासो द्विरू-
पोनः । सैषाऽनानुपૂર્વી । अथवा-औपनिधिकी कालानुपૂર્वी त्रिविधा मज्ञप्ता,
तद्यथा-पूर्वानुपૂર્वी, पश्चानुपૂર્वी अनानुपૂર્वी । अथ कા સા પૂર્વાનુપૂર્વી ? પૂર્વાનુપૂર્વી-
एकसमयस्थितिको द्विसमयस्थितिकः त्रिसमयस्थितिको यावद् दशसमयस्थितिकः
संख्येयसमयस्थितिकः असंख्येयतमस्थितिकः । सैवा પૂર્વાનુપૂર્વી । અથ કા સા
પશ્ચાન્નુપૂર્વી ? પશ્ચાન્નુપૂર્વી-असंख्येयसमयस्थितिको यावद् एकसमयस्थितिकः । सैवा
पश्चानुपૂર્વી । अथ कા સા અનાનુપૂર્વી ? અનાનુપૂર્વી-एतस्यामेव एकादिकायामे-
कोत्तरिकायामसंख्येयगच्छगतायां श्रेण्यामन्योऽन्याभ्यासो द्विरूपोनः । सैवा
अनानुपૂર્વી । सैवा औपनिधिकी कालानुपૂર્वी । सैवा कालानुपૂર્वी ॥सू० १३७॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

અથ કા સા ઔપનિધિકી કાલાનુપૂર્વી ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ-ઔપનિધિકી
કાલાનુપૂર્વી પૂર્વાનુપૂર્વી પશ્ચાન્નુપૂર્વ્યનાનુપૂર્વીભેદેન ત્રિવિધા મજ્ઞપ્તા । તત્ર પૂર્વાનુ-
પૂર્વી-સમયઃ=વક્ષ્યમાણસ્વરૂપઃ સર્વસુક્ષ્મઃ કાલાંશઃ एष हि सर्वप्रमाणानां प्रभव-

અથ સૂત્રકાર ઔપનિધિકી કાલાનુપૂર્વીની પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

“સે કિં તં ઓવણિહિયા” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ — (સે કિં તં ઓવણિહિયા કાલાનુપૂર્વી ?) હે ભદન્ત !
ઔપનિધિકી કાલાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર— (ઓવણિહિયા કાલાનુપૂર્વી) ઔપનિધિકી કાલાનુપૂર્વી
(ત્રિવિધા પળગત્તા) ત્રીન પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ (તં જહા) વે પ્રકાર યે હૈ
(પુન્વાણુપુન્વી, પચ્છાણુપુન્વી, અણાણુપુન્વી) ? પૂર્વાનુપૂર્વીઃ પશ્ચાન્નુપૂર્વીઃ
અનાનુપૂર્વી । (સે કિં તં પુન્વાણુપુન્વી) હે ભદન્ત ! પૂર્વાનુપૂર્વી કયા હૈ ?

ઉત્તર—“સમણ, આવલિયા, આણ, પાણૂ, થોવે, લવે, મુહુત્તે, અહો

હવે સૂત્રકાર ઔપનિધિકી કાલાનુપૂર્વીની પ્રરૂપણા કરે છે—

“સે કિં તં ઓવણિહિયા” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ઓવણિહિયા કાલાનુપૂર્વી ?) હે ભગવન્ ! ઔપનિ-
ધિકી કાલાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ઓવણિહિયા કાલાનુપૂર્વી) ઔપનિધિકી કાલાનુપૂર્વીના (ત્રિવિધા
પળગત્તા, તંજહા) નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે—(પુન્વાણુપુન્વી, પચ્છાણુ-
પુન્વી, અણાણુપુન્વી) (૧) પૂર્વાનુપૂર્વી, (૨) પશ્ચાન્નુપૂર્વી, અને (૩) અનાનુપૂર્વી.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પુન્વાણુપુન્વી ?) હે ભગવન્ ! પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(સમણ, આવલિયા, આણ, પાણૂ, થોવે, લવે, મુહુત્તે, અહોરત્તે,

રત્ને, પક્ષ્મે, માસે, હઠ, અયણે", સમય આવલિકા, આન, પ્રાણ, સ્તોક
લવ, મુહૂર્ત, અહોરાત્ર, પક્ષ, માસ, ઋતુ, અયન (સંવચ્છરે) સંવત્સર (જુ-
ગે) યુગ, (વાસસ્રણ) વર્ષશત (વાસસહસ્ત્રે) વર્ષ સહસ્ત્ર, (વાસસયસહ-
સ્ત્રે) વર્ષશતસહસ્ત્ર, (પુન્વંગે) પૂર્વાંગ (પુન્વે) પૂર્વ (તુહિયંગે) તુહિતાંગ
(તુહિણ) તુહિત, (અહઢંગે) અહટાંગ (અહઢે) અહટ (અવવંગે) અવવાંગ (અ-
વવે) અવવ (હુહુઅંગે) હુહુકાંગ (હુહુણ) હુહુક (ઉપ્પલંગે) ઉત્પલાંગ (ઉ-
પ્પલે) ઉત્પલ (પડમંગે) પદ્માંગ (પડમે) પદ્મ (ળલિંગે) નલિનાંગ (ળલિણે)
નલિન (અત્થનિઝરંગે) અર્થ નિપૂરાંગ (અત્થનિઝરે) અર્થ નિપૂર (અઝઅંગે)
અયુતાંગ (અઝણ) અયુત (નઝઅંગે) નયુતાંગ (નઝણ) નયુત (પઝઅંગે) પ્ર-
યુતાંગ (પઝણ) પ્રયુત (ચૂલિઅંગે) ચૂલિકાંગ (ચૂલિયા) ચૂલિકા (સીસ પ-
હેલિઅંગે) શીર્ષપ્રહેલિકાંગ (સીસપહેલિયા) શીર્ષપ્રહેલિકા (પલિઓવમે)
પલ્યોપમ (સાગરોવમે) સાગરોપમ (ઓસપ્પિણી) અવસર્પિણી (હસ્સ-
પ્પિણી) હસ્સર્પિણી (પોગલપરિચદ્દે) પુદ્ગલપરિવર્ત (અર્દ્યદ્દા) અતીતાદ્દા
(અણાગયદ્દા) અનાગતાદ્દા (સન્વદ્દા) સર્વાદ્દા । યહ પૂર્વાનુપૂર્વી છું । સમ-
ય કાં સ્વરૂપ આગે સ્વયં સૂત્રકાર કહેંગે । યહ કાલ કા સપ્ત સે સૂક્ષ્મ
અંશ છે । હસસે હી સમસ્ત પ્રમાણોં કી આવલિકા આદિકોં કી - હ-

પક્ષ્મે, માસે, હઠ, અયણે,) સમય, આવલિકા, આન, પ્રાણ, સ્તોક, લવ,
મુહૂર્ત, અહોરાત્ર, પક્ષ, માસ, ઋતુ, અયન, (સંવચ્છરે, જુગે) સંવત્સર, યુગ,
(વાસસ્રણ) વર્ષશત, (વાસસહસ્ત્રે) વર્ષસહસ્ત્ર, (વાસસયસહસ્ત્રે) વર્ષશત
સહસ્ત્ર (વાસસયસહસ્ત્રે) વર્ષશતસહસ્ત્ર, (પુન્વંગે, પુન્વે) પૂર્વાંગ, પૂર્વ (તુહિયંગે, તુહિણ,) તુહિતાંગ,
તુહિત, (અહઢંગે, અહઢે) અહટાંગ, અહટ, (અવવંગે, અવવે) અવવાંગ, અવવ,
(હુહુઅંગે, હુહુણ) હુહુકાંગ, હુહુક, (ઉપ્પલંગે, ઉપ્પલે) ઉત્પલાંગ, ઉત્પલ (પડમંગે,
પડમે) પદ્માંગ, પદ્મ, (ળલિંગે, ળલિણે) નલિનાંગ, નલિન, (અત્થનિઝરંગે)
અર્થનિપૂરાંગ, (અત્થનિઝરે) અર્થનિપૂર, (અઝઅંગે) અયુતાંગ, (અઝણ) અયુત,
(નઝઅંગે, નઝણ) નયુતાંગ, નયુત, (પઝઅંગે) પ્રયુતાંગ, (પઝણ) પ્રયુત, (ચૂલિ-
અંગે) ચૂલિકાંગ, (ચૂલિયા) ચૂલિકા, (સીસપહેલિઅંગે) શીર્ષપ્રહેલિકાંગ, (સીસપ-
હેલિયા) શીર્ષપ્રહેલિકા, (પલિઓવમે) પલ્યોપમ, (સાગરોવમે) સાગરોપમ,
(ઓસપ્પિણી) અવસર્પિણી, (હસ્સપ્પિણી) હસ્સર્પિણી, (પોગલપરિચદ્દે) પુદ્ગલપરિ-
વર્ત, (અર્દ્યદ્દા) અતીતાદ્દા, (અણાગયદ્દા) અનાગતાદ્દા, (સન્વદ્દા) સર્વાદ્દા,
આ ક્રમે પદોનો ઉપન્યાસ કરવો તેનું નામ પૂર્વાનુપૂર્વી છે. કાળના સૌથી
સૂક્ષ્મ અંશનું નામ 'સમય' છે. સૂત્રકાર પોતે જ તેનું સ્વરૂપ આગળ
સમજાવવાના છે. તે સમયને આધારે જ આવલિકા આદિ કાળપ્રમાણોની

ત્વાત્ પ્રથમં નિર્દિષ્ટઃ, આવલિકા इयं हि असंख्येयैः समयैर्निष्पद्यते । आन=एक
 उच्छ्वासः संख्येयाऽऽवलिकारूपः, उपलक्षणार्थसंख्येयावलिकारूपो निःश्वासोऽपि-
 ग्राह्यः । प्राणः=संख्येयावलिकारूपयोरुच्छ्वासनिःश्वासयोः कालः, स्तोत्रः=सप्त-
 प्राणात्मकः, लवः=सप्तस्तोकात्मकः, मुहूर्त्तः=सप्तसप्ततिलवात्मकः, अहोरात्रः=
 त्रिंशन्मुहूर्त्तात्मकः, पक्षः=पञ्चदशाहोरात्ररूपः, मासः=पक्षद्वयरूपः, ऋतुः=मास-
 द्वयरूपः, अयनम्=ऋतुत्रयात्मकम्, संवत्सरः=अयनद्वयात्मकः, युगं=पञ्चवर्षात्म-
 कम्, वर्षशतं=विंशतियुगात्मकम्, वर्षसहस्रम्, वर्षशतसहस्रम्-शतगुणितं सहस्र-
 शतसहस्रं-वर्षाणां शतसहस्रं वर्षशतसहस्रं-लक्षवर्षाणि, पूर्वाङ्गम्=चतुरशीतिलक्ष-
 त्पत्ति होती है इसलियે સૂત્રકાર ને સર્વ પ્રથમ હસકા ઉપન્યાસ કિયા હૈ ।
 અસંખ્યાન સમયોં કોં એક આવલિકા હોતી હૈ । સંખ્યાન આવલિકાઓં
 કા એક ઉચ્છ્વાસ હોના હૈ । હસી પ્રકાર સંખ્યાન આવલિકા રૂપ એક
 નિશ્વાસ હોતા હૈ । સંખ્યાત આવલિકા રૂપ જો ઉચ્છ્વાસ નિઃશ્વાસ
 કા કાલ હૈ વહી પ્રાણ હૈ સાત પ્રાણોં કા એક સ્તોત્ર હોતા હૈ । સાત સ્તો-
 ત્રોં કા એક લવ હોતા હૈ । સતહત્તરલવોં કા એક મુહૂર્ત્ત હોતા હૈ । તી-
 સ મુહૂર્ત્તોં કા એક અહોરાત્ર હોતા હૈ । ૧૫ અહોરાત્ર કા એક પક્ષ હો-
 તા હૈ । દો પક્ષોં કા એક માસ હોતા હૈ । દો મહીનોં કી એક ઋતુ હોતી
 હૈ । ત્રીન ઋતુઓં કા એક અયન હોતા હૈ । દો અયનોં કા એક સંવત્સર
 હોતા હૈ । પાંચ વર્ષ કા એક યુગ હોતા હૈ । વીસ યુગોં કા એક સૌ વર્ષ
 હોતા હૈ । દશસૌ વર્ષોં કા એક વર્ષસહસ્ર હોતા હૈ । સૌ હજાર વર્ષોં કા
 એક લાખ વર્ષ હોતા હૈ । ચૌરાસી લાખ વર્ષોં કા ૧ પૂર્વાઙ્ગ હોતા હૈ ।

ગણતરી કરી શકાય છે, તેથી જ સૂત્રકારે સૌથી પહેલાં સમયનો ઉપન્યાસ
 કર્યો છે. અસંખ્યાત સમયોની એક આવલિકા થાય છે. સંખ્યાત આવલિ-
 કાઓનો એક નિઃશ્વાસ (નિઃશ્વાસ પ્રમાણ કાળ) થાય છે. સંખ્યાત આવલિ-
 કાઓ ૩૫ જે ઉચ્છ્વાસ નિઃશ્વાસનો કાળ છે. તેનું નામ જ પ્રાણ છે. સાત
 પ્રાણોનો એક સ્તોત્ર થાય છે સાત સ્તોત્રનો એક લવ થાય છે. ૭૭ લવનું
 એક મુહૂર્ત્ત થાય છે. ૩૦ મુહૂર્ત્તનું એક અહોરાત્ર (દિનરાત્રિ) થાય છે ૧૫
 અહોરાત્રનું એક પક્ષ (પખવાડિયું) થાય છે. બે પક્ષોનો એક માસ થાય
 છે. બે માસની એક ઋતુ થાય છે. ત્રણ ઋતુનું એક અયન થાય છે. બે
 અયનોનું એક સંવત્સર (વર્ષ) થાય છે પાંચ સંવત્સરનો એક યુગ થાય છે.
 વીસ યુગના શતવર્ષ થાય છે હસ સો વર્ષપ્રમાણ કાળને વર્ષસહસ્ર કહે છે.
 એ હજાર (લાખ) વર્ષપ્રમાણ કાળને લાખવર્ષ કહે છે ૮૪ લાખ વર્ષોનું એક

વર્ષાત્મકમ્, પૂર્વમ્=ચતુરશીત્યા લક્ષૈર્ગુણિતે ચતુરશીતિલક્ષાત્મકેઽક્રે યાવતી સંખ્યા-
લંબ્યતે તત્પ્રમાણમ્, તા સંખ્યાચ-સત્તતિકોટિલક્ષાણિ પદ્મપ્રશ્નશ્ચકોટિસદસ્રાણિ
(૭૦૫૬૦૦૦૦૦૦૦૦૦૦) વર્ષાણામ્ । ઉક્તંચ—

“પુન્નવસ્સ ડ પરિમાણં, સયરી સ્વલ્લ હંતિ કોટિલક્ષાડ ।

છપ્પણં ચ સદસ્રા, વોદ્ધવ્વા વાસકોડીણં ॥”

છાયા—પૂર્વસ્ય તુ પરિણામં સક્ષતિઃ સ્વલ્લ ભવન્તિ કોટિલક્ષાઃ ।

પદ્મપ્રશ્નશ્ચ સદસ્રાણિ વોદ્ધવ્વા વર્ષકોટીનામ્ ॥ઙ્ઙિતિ॥

ઇદમપિ ચતુરશીત્યાલક્ષૈર્ગુણિતં ત્રુટિતાઙ્ગં ભવતિ । ત્રુટિતાઙ્ગં હિ ચતુરશીત્યાલક્ષૈ-
ર્ગુણિતં સદેકં ત્રુટિતં ભવતિ । ત્રુટિતં ચ ચતુરશીત્યાલક્ષૈર્ગુણિતં સદેકમ્ અટટાઙ્ગં
ભવતિ । ચતુરશીત્યાલક્ષૈર્ગુણિતં ચ અટટાઙ્ગમેકમટટં ભવતિ । એવમેવ ઇતઃ પ્રથુતિ

ચૌરાસી લાખપૂર્વાઙ્ગ કા? પૂર્વ હોતા હૈ । હસમે વર્ષોં કો સંખ્યા ૭૦૫૬૦૦૦,
૦૦૦,૦૦૦૦ ઇતનો આતી હૈ । યહી ચાત “પુન્નવસ્સ ડ પરિમાણં” ઇત્યાદિ
ગાથા દ્વારા પ્રકટ કી હૈ । હન વર્ષોં મેં ૮૪ લાખ કા ગુણા કરને પર જો
સંખ્યા આતી હૈ વહ ત્રુટિતાઙ્ગ કા પરિમાણ હૈ । ત્રુટિતાંગ પરિમાણ મેં
ચૌરાસીલાખ કા ગુણા કરને પર એક ત્રુટિત હોતા હૈ । એક ત્રુટિત કો
૮૪ લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ અટટાઙ્ગ હોતા હૈ । એક અટટાઙ્ગ કો ચૌરા-
સી લાખ સે ગુણા કરને પર એક અટટ હોતા હૈ । ૧ અટટ પ્રમાણ મેં
ચૌરાસી લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ એક અવવાઙ્ગ હોતા હૈ । ૧ અવવાઙ્ગ
મેં ૮૪ લાખ કા ગુણા કરને પર એક અવવ હોતા હૈ । હસી પ્રકાર આગેર
શીર્ષપ્રદેલિકા તક કે પ્રમાણોં મેં એસે હી કરતે ચલે જોના ચાહિયે ।
અર્થાત્ ૧ અવવ મેં ચૌરાસી લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ હુહુકાઙ્ગ, ૧ હુ-
હુકાઙ્ગ મેં ચૌરાસી લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ હુહુક, ૧ હુહુક મેં ચૌરાસી

પૂર્વાંગ થાય છે, અને ૮૪ લાખ પૂર્વાંગોનું એક પૂર્વ થાય છે. એક પૂર્વના
૭૦૫૬૦૦૦૦૦૦૦૦૦૦ વર્ષ થાય છે એજ વાત સૂત્રકારે “પુન્નવસ્સ ડ
પરિમાણં” ઇત્યાદિ સૂત્રપાઠ દ્વારા પ્રકટ કરી છે. ૮૪ લાખ પૂર્વનું એક
ત્રુટિતાંગ થાય છે એટલે કે ૭૦૫૬૦૦૦૦૦૦૦૦૦૦ વર્ષને ૮૪ લાખ વડે
ગુણવાથી જેટલાં વર્ષ આવે છે, તેટલાં વર્ષપ્રમાણ કાળને એક ત્રુટિતાંગ કહે
છે ૮૪ લાખ ત્રુટિતાંગનું એક ત્રુટિત થાય છે. ૮૪ લાખ ત્રુટિતોનું એક
અટટાંગ થાય છે. ૮૪ લાખ અટટનું એક અવવાંગ થાય છે ૮૪ લાખ
અવવાંગોનું એક અવવ થાય છે. એક અવવના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી
એક હુહુકાંગપ્રમાણ કાળ બને છે. ૮૪ લાખ હુહુકાંગનું એક હુહુક બને છે

પૂર્વ પૂર્વ ચતુરશીત્યાલક્ષેશ્વતુરશીત્યાલક્ષેશ્વ ગુણિતમ્ ઉત્તરોત્તરમેકૈકંકાલપ્રમાણં યાવત્
શીર્ષપ્રહેલિકાન્તં बोध्यम् । શીર્ષપ્રહેલિકાયાઃ સ્વરૂપમક્કત્ત એવં बोध्यम्-૭૫,૮૨.

લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ ઉત્પલાઙ્ગ એક ઉત્પલાઙ્ગ મેં ચૌરાસી લાખ સે
ગુણા કરને પર એક ઉત્પલ, ૧ ઉત્પલ મેં ૮૪ લાખ સે ગુણા કરને પર ૧-
પદ્માઙ્ગ, ૧ પદ્માઙ્ગ મેં ચૌરાસી લાખ સે ગુણા કરને પર એક પદ્મ એક પ-
દ્મ મેં ૮૪ લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ નલિનાઙ્ગ, ૧ નલિનાઙ્ગ મેં ચૌરાસી
લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ નલિન ૧ નલિન મેં ૮૪ સે ગુણા કરને પર
૧ અર્થ નિપૂરાઙ્ગ એક અર્થ નિપૂરાઙ્ગ મેં ચૌરાસી લાખ સે ગુણા કરને પર
૧ અર્થ નિપૂર ૧ અર્થનિપૂર મેં ૮૪ લાખ સે ગુણા કરને પર એક અયુતાંગ
૧ અયુતાંગ મેં ૮૪ લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ અયુત, ૧ અયુત મેં ૮૪
લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ નયુતાંગ ૧ નયુતાઙ્ગ મેં ૮૪ લાખ સે ગુણા ક-
રને પર ૧ નયુત ૧ નયુત મેં ૮૪ લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ પ્રયુતાઙ્ગ ૧-
૧ પ્રયુતાઙ્ગ મેં ૮૪ લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ પ્રયુત, ૧ પ્રયુત મેં ૮૪ લાખ સે
ગુણા કરને પર એક ચૂલિકાઙ્ગ, ૧ ચૂલિકાઙ્ગ મેં ચૌરાસી લાખ સે ગુણા
કરને પર ચૂલિકા એક એક ચૂલિકા મેં ૮૪ લાખ સે ગુણા કરને પર ૧ શીર્ષ
પ્રહેલિકાઙ્ગ ઓર એક શીર્ષ પ્રહેલિકાઙ્ગ મેં ચૌરાસી લાખ સે ગુણા કરને
પર ૧ શીર્ષપ્રહેલિકા કા પ્રમાણ હોતો હૈ । હસ શીર્ષપ્રહેલિકા કે અંકો

હુહુકને ૮૪ લાખ વડે ગુણવાથી એક ઉત્પલાંગ થાય છે. ૮૪ લાખ ઉત્પલા-
ંગનો એક ઉત્પલ કાળ થાય છે ૮૪ લાખ ઉત્પલનું એક પદ્માંગ થાય છે
અને ૮૪ લાખ પદ્માંગનું એક પદ્મ થાય છે. તેના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી
એક નલિનાંગ થાય છે. એક નલિનાંગના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક
નલિન આવે છે. નલિનના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક અર્થનિપૂરાંગ આવે
છે એક અર્થનિપૂરાંગના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક અર્થનિપૂર આવે છે.
એક અર્થનિપૂરના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક અયુતાંગ, એક અયુતાંગના
૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક અયૂત, એક અયૂતના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી
એક નયુતાંગ, એક નયુતાંગના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક નયુત, એક
નયુતના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક પ્રયુતાંગ, એક પ્રયુતાંગના ૮૪ લાખ ગણાં
કરવાથી એક પ્રયુત, એક પ્રયુતના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક ચૂલિકાંગ,
એક ચૂલિકાંગના ૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક ચૂલિકા, એક ચૂલિકાના
૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક શીર્ષપ્રહેલિકાંગ અને એક શીર્ષપ્રહેલિકાંગના
૮૪ લાખ ગણાં કરવાથી એક શીર્ષપ્રહેલિકા નામના કાળનું પ્રમાણ આવે છે.

૬૩, ૨૫, ૩૦, ૭૩૦, ૧૦, ૨૪, ૧૧, ૫૭, ૯૭, ૩૫, ૬૯, ૯૭, ૫૬, ૦૬, ૪૦, ૬૨, ૧૮, ૯૬, ૬૮, ૪૮૦, ૮૦૧૮, ૩૨, ૯૬, એતદગ્રે ચત્વાર્શિશદુત્તરૈકશતસંખ્યકાનિ શૂન્યાનિ (૧૪૦) નિક્ષેપ્તવ્યાનિ । તદેવં શીર્ષપ્રહેલિકાયાં ચતુર્નવત્યધિકશતસંખ્યકાનિ અક્લસ્થાનાનિ ભવન્તિ । અનેન પૂર્વોક્તેન કાલમાનેન કેપાંચિદ્ રત્નપ્રમાનારકાણાં ભવનપતિવ્યન્તરસુરાણાં સુષમદુષ્પમારકસમ્ભવિનાં નરતિરશ્વાં ચ યથાસંભવમાયુષો માનં ભવતિ । એતસ્માન્ન ચ પરતોઽપિ સંખ્યેયઃ કાલોઽસ્તિ, કિન્તુ તસ્ય અતિશયજ્ઞાનવર્જિતાનાં છદ્મસ્થાનામસંવ્યવહાર્યત્વાત્, સર્પપાશુપમયાઽત્રૈવ વક્ષ્યમાણત્વાચ નેહોક્તઃ । કિં તર્હિ ? ઉપમામાત્રપ્રતિપાદ્યાનિ પલ્યોપમાદીન્યેવ । તત્ર પલ્યોપમસા-

કા પ્રમાણ ૭૫૮૨૬૩૨૫૩૦૭૩૦૧૦૧૪૧૧, ૬૭૯૭૩૫૬૯, ૦૭૫૬૯૬૪-૦૬૨૧૮૯૬૬૮૪૮૦૮૦૧૮૩૨૯૬, ઓર હસકે ૧૪૦ શૂન્ય રાખને સે હ-તના હોતા હૈ । હસ સમસ્ત અંકો કી સંખ્યા કા યોગ ૧૯૪ અંક પ્રમા-ણ હોતા હૈ । હસ પૂર્વોક્ત કાલ પ્રમાણ સે કિતનેક રત્નપ્રમાણ નારકો કી તથા ભવનપતિ, વ્યન્તર દેવો કી ઓર સુષમદુષ્પમારક હૈ ઉત્પન્ન હુએ મનુષ્ય તિર્યશ્ચો કી યથાસંભવ આયુ કા પ્રમાણ કહા જાતા હૈ । હસસે આગે ભી સંખ્યાત કાલ હૈ । પરન્તુ વહ યદાં જો નહીં કહા ગયા હૈ । ડસકા કારણ યહ હૈ કિ એકતો વહ અતિશયજ્ઞાન વર્જિત જો છદ્મસ્થ પ્રાણી હૈં ડનકે દ્વારા અસંવ્યવહાર્ય હૈ । તથા દૂસરે સર્પ આદિ કી ઉપમા દેકર સૂત્રકાર આગે ડસે હસી શાસ્ત્ર મેં સ્વયં કહેંગે ભી । ઉપમા માત્ર દેકર જિનકા સ્વરૂપ સમજાયા જા સકતા હૈ એસે પલ્યોપમ

ઉપરના કોષ્ટકને આધારે એક શિર્ષપ્રહેલિકાનાં વર્ષોની ગણતરી કરવામાં આવે તો ૧૬૪ આંકડાની સંખ્યા આવે છે. તે સંખ્યા નીચે પ્રમાણે છે- ૭૫૮૨૬૩૨૫૩૦૭૩૦૧૦૨૪૧૧૫૭૬૭૩૫૧૬૯૭૫૬૬૪૦૬૨૧૮૬૬૬૮૪૮૦૮ ૦૧૮૩૨૬૬ આ ૫૪ આંકડા ઉપર જમણી તરફ ૧૪૦ શૂન્ય મૂકવાથી જે ૧૬૪ આંકડાની સંખ્યા આવે છે, તે સંખ્યા એક શિર્ષપ્રહેલિકાનાં વર્ષો ગણાવે છે. આ પૂર્વોક્ત કાળપ્રમાણને આધારે કેટલાક રત્નપ્રમાણ નરકના નારકોના, ભવનપતિ દેવોના, વ્યન્તર દેવોના, અને સુષમદુષ્પમા આરામાં ઉત્પન્ન થયેલા મનુષ્યોના યથાસંભવ આયુનું પ્રમાણ કહી શકાય છે. શીર્ષપ્રહેલિકાની આગળ પણ સંખ્યાત કાળ છે. પરન્તુ અહીં તેનું કથન કરવામાં આવ્યું નથી કારણ કે તે અતિશય જ્ઞાનવર્જિત છદ્મસ્થ જીવો દ્વારા અસંવ્યવહાર્ય છે-છદ્મસ્થ જીવો દ્વારા તેનો વ્યવહારમાં ઉપયોગ થઈ શકે તેમ નથી સૂત્રકાર સર્પ (સરસવ) આદિની ઉપમા દ્વારા તે કાળપ્રમાણનું આગળ ઉપર નિરૂપણ કરવાના છે. ઉપમા દ્વારા જ જેના સ્વરૂપને સમજાવી શકાય

ગરોપમે વક્ષ્યમાણસ્વરૂપે । દશમાગરોપમકોટાકોટિમમાણાત્વવસર્પિણી, તાવન્મા-
નૈવ ઉત્સર્પિણી । અનન્તા અવસર્પિણ્યુત્સર્પિણ્યઃ પુદ્ગલપરિવર્ત્તઃ । અનન્તાઃ પુદ્ગલપરા-
વર્ત્તી અતીતાદ્વા । અનાગતાદ્વાઽપ્યનન્તપુદ્ગલપરાવર્ત્તમાનૈવ વોધ્યા । અતીતાઽના-
ગતવર્ત્તપાનકાલસ્વરૂપા સર્વાદ્વા । इयं पूर्वानुपूर्वी । पश्चानुपूर्वी तु 'सर्वाद्वा' इत्या-
रभ्य 'समयः' इत्यन्ता वोध्या । अतानुपूर्वी तु—'समयः' इत्याद्यारभ्य 'सर्वाद्वा'

और सागरोपम जो काल हैं उन्हें सूत्रकार आगे प्रगट करेंगे । दश सा-
गरोपम कोटि कोटि का १ एक अवसर्पिणी काल और इतने ही प्रणाम
वाला एक उत्सर्पिणी काल होना है । एक पुद्गल परावर्त काल अनन्त अ-
वसर्पिणी उत्सर्पिणी काल का होता है । तथा जो अतीताद्व-काल
होना है उसमें अनन्त पुद्गल परावर्त होते हैं । अर्थात् अनन्त पुद्गलपरा-
वर्तों का एक अतीताद्व काल होता है । इसी प्रकार जो अनागताद्व
काल होता है वह भी अनन्त पुद्गल परावर्तों का होना है । तथा जो
सर्वाद्व काल है वह अतीत अनागत और वर्तमान काल इन तीनों का
संमिलित रूप होता है । इस प्रकार यह पूर्वानुपूर्वी है । तथा सर्वाद्व से
लेकर समय पर्यन्त जो व्युत्क्रम से इनकी स्थापना-विन्यास-करना है
वह पश्चानुपूर्वी है । यही बात (से किं तं पच्छाणुपुन्वी ?) हे भदन्त ! प-
श्चानुपूर्वी क्या है इस प्रश्न के उत्तर में (सव्याद्व अनागयद्व जाव स-
मय) इन पदों द्वारा प्रगट की गई है । (से तं पच्छाणुपुन्वी) इस प्रकार

એમ છે એવાં પદ્યોપમકાળ અને સાગરોપમ કાળનું સ્વરૂપ સૂત્રકાર આગળ
પ્રકટ કરવાના છે. દસ સાગરોપમ કોટિકોટિનો એક અવસર્પિણીકાળ થાય છે
અને ઉત્સર્પિણી કાળનું પણ એટલું જ પ્રમાણ કહ્યું છે. અનંત અવસ
ર્પિણીકાળનો એક પુદ્ગલપરાવર્ત કાળ થાય છે. અનંત પુદ્ગલપરાવર્તનો
એક અતીતાદ્વા-કાળ થાય છે એટલે કે અતીતાદ્વામાં અનંત પુદ્ગલપરાવ-
ર્તકાળ હોય છે. એજ પ્રમણે અનંત પુદ્ગલપરાવર્તનો એક અનાગતાદ્વા-
કાળ થાય છે. જે સર્વાદ્વા કાળ છે તે અતીત, અનાગત અને વર્તમાન, આ
ત્રણે કાળના સંમિલિતકાળ રૂપ હોય છે. આ પ્રકારનું 'પૂર્વાનુપૂર્વી' સ્વરૂપ છે.
હવે પશ્ચાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ પ્રકટ કરવામાં આવે છે—

પ્રશ્ન—(સે કિં પચ્છાણુપુન્વી?) હે ભગવન્ ! પશ્ચાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર—(સવ્યાદ્વા, અનાગયદ્વા જાવ સમય) સર્વાદ્વા, અનાગતાદ્વા ઇત્યાદિ
ઉત્તર ક્રમે સમય પર્યન્તના પદોનો વિન્યાસ (સ્થાપના) કરવો, તેનું નામ
પશ્ચાનુપૂર્વી છે. (સે તં પચ્છાણુપુન્વી) આ પ્રકારનું પશ્ચાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ છે.

इत्यन्तानामन्योऽन्याभ्यासे ये अनन्ता भङ्गा भवन्ति, तेषु आद्यन्तरूपभङ्गकद्वय-
विवक्षामपहाय सर्वभङ्गगुणनात्मिका बोध्या। अत्र कालविचारस्य प्रस्तुतत्वात्
समयादेशकालत्वेन प्रसिद्धत्वात् अनुपङ्गतो विनैयानां समयादिकालज्ञानं भवतु,
इति प्रकारान्तरेण कालानुपूर्वीमाह-‘अहवा’ इत्यादिना। अथवा औपनिषिकी
कालानुपूर्वी पूर्वानुपूर्व्यादिभेदेन त्रिविधा प्रज्ञप्ता। तत्र-पूर्वानुपूर्वी-एकसमय-
यह पश्चानुपूर्वी का स्वरूप है। (से किं तं अणाणुपुन्वी?) हे भदन्त? अनानु-
पूर्वी का क्या स्वरूप है ?

उत्तर—(एयाए चेव एगाहयाए एगुत्तरियाए अणंतगच्छगयाए
सेढीए अणमणगन्भासो दूरवृणो) अनानुपूर्वी में समयादि पदों का एकर
की वृद्धि पूर्वक उपन्यास किया जाता है, फिर बाद में आपस में इनका
गुणा किया जाता है। इस प्रकार गुणा करने पर जो अनन्त भंगरूप रा-
शि उत्पन्न होती है उसमें से आदि और अन्त के दो भंग घटा दिये
जाते हैं। इस प्रकार से अनानुपूर्वी अनन्त भंगात्मक होती है। यहाँ
काल का विचार प्रस्तुत है और समयादिक कालरूप से प्रसिद्ध हैं। इस
लिये शिष्यों को समयादिरूप कालका आनुषंगिकरूप से ज्ञान हो जावे
इसलिये सूत्रकार प्रकारान्तर से कालानुपूर्वीका कथन करते हैं—(अहवा
ओवणिहिया कालाणुपुन्वी तिविहा पणत्ता) अथवा औपनिषिकी
कालानुपूर्वी तीन प्रकार की कही गई है (तं जहा) जैसे (पुन्वाणुपुन्वी
पच्छाणुपुन्वी, अणाणुपुन्वी) पूर्वानुपूर्वी, पश्चानुपूर्वी और अनानुपूर्वी।

उत्तर—(एयाए चेव एगाहयाए एगुत्तरियाए अणंतगच्छगयाए सेढीए अण-
मणगन्भासो दूरवृणो) अनानुपूर्वीમાં સમયાદિ પદોનો એક એકની વૃદ્ધિથી
ઉપન્યાસ કરવામાં આવે છે. ત્યાર બાદ આપસમાં (અંદરે અંદર) તેમના
ગુણાં (તેમનો ગુણાકાર) કરવામાં આવે છે. આ પ્રકારે ગુણાકાર કરવાથી જે
અનંત ભંગરૂપ રાશિ ઉત્પન્ન થાય છે તેમાંથી શરૂઆતનો અને અન્તનો
એક, એમ બે ભંગો ઓછાં કરવામાં આવે છે. આ પ્રકારે અનાનુપૂર્વી
અનંત ભંગરૂપ હોય છે. અહીં કાળનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે અને સમ-
યાદિક કાળરૂપે પ્રસિદ્ધ છે તેથી શિષ્યોને સમયાદિ રૂપ કાળનું આનુષંગિક
રૂપે જ્ઞાન થઈ જાય તે હેતુથી સૂત્રકાર કાલાનુપૂર્વીના સ્વરૂપનું અન્ય પ્રકારે
નિરૂપણ કરે છે—(અહવા ઓવણિહિયા કાલાણુપુન્વી તિવિહા પણત્તા) અથવા—
ઔપનિષિકી કાલાનુપૂર્વી ત્રણ પ્રકારની થઈ છે. (તંજહા) તે ત્રણ પ્રકારે
નીચે પ્રમાણે છે—(પુન્વાણુપુન્વી, પચ્છાણુપુન્વી, અણાણુપુન્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી,
પશ્ચાનુપૂર્વી અને અનાનુપૂર્વી.

સ્થિતિકઃ—એકઃ સમયઃ સ્થિતિર્યસ્ય દ્રવ્યવિશેષસ્ય સ તથાભૂતો દ્રવ્યવિશેષો बोध्यः ।
 एवमेव—द्विसमयस्थितिकस्त्रिसमयस्थितिको यावदशसमयस्थितिकः संख्येयसमय-
 स्थितिकोऽसंख्येयसमयस्थितिकश्च द्रव्यविशेषः पूर्वानुपूर्वीं बोध्या । पश्चानुपूर्वीतु-
 असंख्येयसमयस्थितिको यावदेकसमयस्थितिकश्च । अनानुपूर्वीं तु—एकसमयस्थिति-
 काधारभ्य असंख्येयसमयस्थितिकानामन्योन्याभ्यास्तेऽसंख्येया भङ्गा भवन्ति, तेषु
 आद्यन्तरूपभङ्गकद्वयविवक्षामपहाय सर्वभङ्गगुणनात्मिका बोध्या । इयमौपनिधिकी
 कालानुपूर्वीं बोध्या । एतदेवाह—‘ से तं ओवणिहिया’ इत्यादि । सैषा औपनिधि-

(સે કિં તં પુઞ્જાણુપુઞ્વી) હે ભદ્રન્ત ! પૂર્વાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

उत्तर—(पुञ्जाणुपुञ्वी) पूर्वानुपूर्वी का स्वरूप इस प्रकार से है—
 (एगसमयद्विहए, दुसमयद्विहए, तिसमयद्विहए जाव दस समयद्विहए
 संखिजसमयद्विहए असंखिजसमयद्विहए) एक समय की स्थितिवाला,
 दो समय की स्थितिवाला, तीन समय की स्थितिवाला यावत् दश सम-
 य की स्थितिवाला संख्यातसमय की स्थितिवाला असंख्यातसमय की
 स्थितिवाला जितना भी द्रव्य विशेष है वह सब पूर्वानुपूर्वी है । (से किं
 तं पच्छाणुपुञ्वी) हे भदन्त ! पश्चानुपूर्वी का कया स्वरूप है ? (असंखि-
 जसमयद्विहए जाव एगसमयद्विहए पच्छाणुपुञ्वी) असंख्यातसमय की
 स्थितिवाले द्रव्य से लेकर एकसमय तक की स्थितिवाला जो द्रव्य
 विशेष है वह पश्चानुपूर्वी है । (से तं पच्छाणुपुञ्वी) यह पश्चानुपूर्वी
 का स्वरूप है । (से किं तं अणाणुपुञ्वी?) हे भदन्त अनानुपूर्वी का

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પુઞ્જાણુપુઞ્વી) હે ભગવન્ ! પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(પુઞ્જાણુપુઞ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—(એગસમય-
 દ્વિહએ, દુસમયદ્વિહએ, તિસમયદ્વિહએ જાવ દસસમયદ્વિહએ, સંખિજસમયદ્વિહએ,
 અસંખિજસમયદ્વિહએ) એક સમયની સ્થિતિવાળાં, બે સમયની સ્થિતિવાળાં,
 ત્રણથી લઈને ઠસ પર્યન્તની સ્થિતિવાળાં, સંખ્યાત સમયની સ્થિતિવાળાં અને
 અસંખ્યાત સમયની સ્થિતિવાળાં બેટલાં દ્રવ્યવિશેષો તેઓ પૂર્વાનુપૂર્વી રૂપ છે.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પચ્છાણુપુઞ્વી?) હે ભગવન્ ! પશ્ચાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(અસંખિજસમયદ્વિહએ જાવ એગસમયદ્વિહએ પચ્છાણુપુઞ્વી) અસંખ્યાત
 સમયની સ્થિતિવાળાંથી લઈને એક સમય પર્યન્તની સ્થિતિવાળાં બે દ્રવ્યવિ-
 શેષો છે, તે પશ્ચાનુપૂર્વી રૂપ છે (સે તં પચ્છાણુપુઞ્વી) આ પ્રકારનું પશ્ચાનુ-
 પૂર્વીનું સ્વરૂપ છે.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં અણાણુપુઞ્વી?) હે ભગવન્ ! અનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

કી કાલનુપૂર્વી । इत्थं कालानुपूर्वी समाप्तेति सूचयितुमाह-‘ से तं ’ इत्यादि-
सैषा कालानुपूर्वीति ॥सू० १३७॥

अथ पूर्वोक्तामुत्कीर्तनानुपूर्वीं प्रतिपादयितुमाह-

मूलम्-से किं तं उक्त्तिणाणुपुर्वी ? उक्त्तिणाणुपुर्वी तिविहा
पण्णत्ता, तं जहा-पुव्वाणुपुर्वी पच्छाणुपुर्वी अणाणुपुर्वी । से किं
तं पुव्वाणुपुर्वी ? पुव्वाणुपुर्वी-उसभे अजिए संभवे अभिणंदणे
सुमई पउमप्पहे सुपासे चंदप्पहे सुविहा सीयले सेज्जसे वासु-

क्या स्वरूप है ? (एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए असंखिज्जगच्छ-
गयाए सेढीए अन्नमन्नव्भासो दुरूवूणो अणाणुपुर्वी)

उत्तर-एक से लेकर असंख्यात तक एकर की वृद्धि करते हुए
असंख्यानश्रेणि मांडो, फिर इन श्रेणियों में परस्पर में गुणा कर दो
और उस उत्पन्न असंख्यात भंग रूप महाराशि में से आदि अंत के
दो भंगों-पूर्वानुपूर्वी और पश्चानुपूर्वी रूप दो भंगों और अवक्तव्यक
भंगों को कम कर दो-यही अनानुपूर्वी का स्वरूप है । (से तं ओवणि-
हिया कालाणुपुर्वी-से तं कालाणुपुर्वी) इस प्रकार औपनिधिकी काला-
नुपूर्वी है । इसके समाप्त होते ही पूर्वप्रक्रान्त कालानुपूर्वी का कथन
समाप्त हो गया ॥सू० १३७॥

ઉત્તર-(एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए असंखिज्जगच्छायाए सेढीए
अन्नमन्नव्भासो दुरूवूणो अणाणुपुर्वी) એકથી લઈને અસંખ્યાત પર્યન્ત એક
એકની વૃદ્ધિ કરતાં કરતાં અસંખ્યાત શ્રેણી સુધીનાં દ્રવ્યોનો ઉપન્યાસ કર-
વામાં આવે છે ત્યાર બાદ તે શ્રેણીઓનો પરસ્પરમાં ગુણાકાર કરવામાં આવે
છે અને આ પ્રકારે જે અસંખ્યાત ભંગ રૂપ મહારાશિ ઉત્પન્ન થાય છે,
તેમાંથી આદિ અને અન્તના બે ભાગાઓ-પૂર્વાનુપૂર્વી અને પશ્ચાનુપૂર્વી રૂપ
બે ભાગાઓ-બાદ કરવામાં આવે છે આ પ્રકારનું અનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ છે
(સે તં અણાણુપુર્વ) આ ઔપનિધિકી અનાનુપૂર્વી છે (સે તં ઓવણિહિયા
કાલાણુપુર્વ-સે તં કાલાણુપુર્વ) આ પ્રકારનું ઔપનિધિકી કાલાનુપૂર્વીનું
સ્વરૂપ છે. તેના સ્વરૂપનું કથન સમપ્ત થતાની સાથે જ પૂર્વપ્રક્રાન્ત કાલા-
નુપૂર્વીના સ્વરૂપનું કથન પણ સમાપ્ત થાય છે. ॥સૂ० ૧૩૭॥

पुञ्जे विमले अणंते धम्मं संती कुंथू अरे मल्ली मुणिसुव्वण
णमी अरिद्वणेमी पासे वद्धमाणे । से तं पुव्वणुपुव्वी । से किं
तं पच्छाणुपुव्वी ? पच्छाणुपुव्वी—वद्धमाणे जाव उखभे । से तं
पच्छाणुपुव्वी । से किं तं अणणुपुव्वी ? अणणुपुव्वी—एयाए
चेव एगाइयाए एगुत्तरियाए चउवीसगच्छगयाए सेढीए अण्ण-
मण्णव्भासो दुरूवूणो । से तं अणणुपुव्वी । से तं उक्कित्तणा-
णुपुव्वी ॥सू० १३८॥

छाया—अथ का सा उत्कीर्तनानुपूर्वी ? उत्कीर्तनानुपूर्वी त्रिविधा प्रज्ञप्ता,
तद्यथा—पूर्वानुपूर्वी पश्चानुपूर्वी अनानुपूर्वी । अथ का सा पूर्वानुपूर्वी ? पूर्वानुपूर्वी—
ऋषभः अजितः संभवः अभिनन्दनः सुमतिः पद्मप्रभः सुपार्श्वः चन्द्रप्रभः सुविधिः
शीतलः श्रेयांसः वासुपूज्यः विमलः अनन्तः धर्मः शान्तिः कुन्थुः अरः मल्लिः
मुनिसुव्रतः नमिः अरिष्टनेमिः पार्श्वो वर्द्धमानः । सैषा पूर्वानुपूर्वी । अथ का सा
अनानुपूर्वी ? अनानुपूर्वी—एतस्यामेव एकादिकायामेकोत्तरिकायां चतुर्विंशति-
गच्छगतायां श्रेण्यामन्योन्याभ्यासो द्विरूपोनः । सैषा अनानुपूर्वी । सैषा उत्की-
र्तनानुपूर्वी ॥मू० १३८॥

टीका—‘ से किं तं ’ इत्यादि—

अथ का सा उत्कीर्तनानुपूर्वी ? इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरयति—उत्कीर्तनं=कथ-
नम् अभिधानोच्चारणमिति यावत् , तस्य आनुपूर्वी=अनुपरिपाटिः पूर्वानुपूर्वादि-

अथ सूत्रकार पूर्वोक्त उत्कीर्तनानुपूर्वी का प्रतिपादन करते हैं—

‘ से किं तं उक्कित्तणाणुपुव्वी ? इत्यादि ।

शब्दार्थ—हे भदन् ! (से किं तं उक्कित्तणाणुपुव्वी ?) पूर्व प्रकान्त
उत्कीर्तनानुपूर्वी का स्वरूप क्या है ?

उत्तर—(उक्कित्तणाणुपुव्वी निविहा पण्णत्ता) उत्कीर्तनानुपूर्वी तीन

हुवे सूत्रकार पूर्वोक्त उत्कीर्तनानुपूर्वीना स्वरूपं निरूपणु करे छे—

“ से किं तं उक्कित्तणाणुपुव्वी ” इत्यादि—

शब्दार्थ—(से किं तं उक्कित्तणाणुपुव्वी ?) हे भगवन् ! पूर्वप्रकान्त उत्की-
र्तनानुपूर्वीनुं स्वरूप ठेपुं छे ?

उत्तर—(उक्कित्तणाणुपुव्वी निविहा पण्णत्ता—तंजहा) उत्कीर्तनानुपूर्वीना

भेदेन त्रिविधा प्रज्ञप्ता । तत्र-पूर्वानुपूर्वी-ऋषभादि वर्द्धमानान्ता । सर्वप्रथमोत्पन्नाद् ऋषभस्य प्रथममुपादानम् । तदनन्तरं क्रमेण अजितादय उक्ताः । पश्चानुपूर्वी तु-

प्रकार की कही गई है । (तं जहा) उसके वे प्रकार ये हैं-(पुष्पाणुपुष्वी, पच्छाणुपुष्वी, अणाणुपुष्वी) पूर्वानुपूर्वी, पश्चानुपूर्वी और अनानुपूर्वी । उत्कीर्तन शब्द का अर्थ नाम का उच्चारण करना ऐसा है । इस उत्कीर्तन की जो परिपाटी है उसका नाम उत्कीर्तनानुपूर्वी है । (से किं तं पुष्पाणुपुष्वी) पूर्व प्रक्रान्त पूर्वानुपूर्वी क्या है ?

उत्तर—(उसमे अजिए संभवे अभिनंदणे, सुमई, पद्मप्पहे, सुपासे, चंदप्पहे, सुविही, सीयले, सेज्जंसे, वासुपुज्जे, विमले, अणंते, धम्मे, संती, कुंथू, अरे, मल्ली, सुणिसुव्वए, णमी, अरिट्ठणेमी, पासे, वद्धमाणे, से तं पुष्पाणुपुष्वी) ऋषभ, अजित, संभव, अभिनंदन, सुमति, पद्मप्रभ, सुपार्श्व, चंद्रप्रभ, सुविधि, शीतल, श्रेयांस, वासुपूज्य, विमल, अनन्त, धर्म, शान्ति, कुन्धु, अर, मल्ली, सुनिसुव्रत, नमि, अरिष्टनेमि, पार्श्व, और वर्द्धमान । इस प्रकार परिपाटिरूप से नामोच्चारण करना इसका नाम उत्कीर्तनानुपूर्वी का प्रथम भेद पूर्वानुपूर्वी है । ऋषभनाथ सब से प्रथम उत्पन्न हुए हैं । इसलिये उनका प्रथम नामोच्चारण किया है । तदनन्तर क्रमशः अन्य अजित आदि हुए हैं इसलिये उनका नामोच्चारण हुआ है । पश्चानुपूर्वी में वर्द्धमान को

नीचे प्रमाणे त्रय प्रकार कहे छे—(पुष्पाणुपुष्वी, पच्छाणुपुष्वी, अणाणुपुष्वी) (१) पूर्वानुपूर्वी, (२) पश्चानुपूर्वी अने (३) अनानुपूर्वी.

“ नामनुं उच्चारणु करवुं ” अट्ठे उत्कीर्तन आ उत्कीर्तननी (नामनुं उच्चारणु करवानी) ने परिपाटी (पद्धति) छे, तेनुं नाम उत्कीर्तनानुपूर्वी छे.

प्रश्न—(से किं तं पुष्पाणुपुष्वी) छे लगवन् ! पूर्वानुपूर्वीनुं स्वइय केवुं छे ?

उत्तर—(उसमे, संभवे, चंदप्पहे, सुविही, सीयले, सेज्जंसे, वासुपुज्जे, विमले, अणते, धम्मे, संती, कुंथू, अरे, मल्ली, सुणिसुव्वए, णमी, अरिट्ठणेमी, पासे, वद्धमाणे, से तं पुष्पाणुपुष्वी) ऋषभ, अजित, संभव, अभिनंदन, सुमति, पद्मप्रभ, सुपार्श्व, चंद्रप्रभ, सुविधि, शीतल, श्रेयांस, वासुपूज्य, विमल, अनन्त, धर्म, शान्ति, कुन्धु, अर, मल्ली, सुनिसुव्रत, नमि, अरिष्टनेमि, पार्श्व अने वर्द्धमान, आ प्रकारे परिपाटी इपे नामोच्चारणु करवुं तेनुं नाम पूर्वानुपूर्वी छे. ते उत्कीर्तनानुपूर्वीना प्रथम लेह इय छे. ऋषभनाथ लगवान सौथी पडेदां थछ गयां होवाथी तेमना नामनुं उच्चारणु सौथी पडेदां करवानां आव्युं छे. त्थार णाह अजित आदि तीर्थंकरा क्रमशः थछ गया होवाथी तेमनां नामानुं क्रमशः उच्चारणु करायुं छे.

વર્દમાનાદિ ઋષભાન્તા બોધ્યા । અનાનુપૂર્વી તુ-ઋષમાદિવર્ધમાનાન્તાનાં ચતુર્વિં-
શતિપદાનામન્યોઽન્યાભ્યાસે આદ્યન્તરૂપમજ્જકદ્વયવિવક્ષામપહાય મજ્જા વિધાતવ્યા-
સ્તદાત્મિકા બોધ્યા । નનુ ઔપનિધિક્યા દ્રવ્યાનુપૂર્વ્યા અસ્યાશ્ચ કો ભેદઃ ? ઉચ્યતે,
તત્ર હિ દ્રવ્યાણાં વિન્યાસમાત્રમેવ પૂર્વાનુપૂર્વ્યાદિભાવેન ચિન્તિતમ્ । અત્ર તુ તેષામેવ
તથૈવોત્કીર્તનં ક્રિયતે-इत्येतावन्मात्रेण एतयोर्भेदो बोध्यः । નનુ અસ્ત્યેવંતથાઽ-
પ્યત્ર શાસ્ત્રે આવશ્યકસ્ય પ્રસ્તુતત્વાદત્રાપિ સામાયિકાદ્યધ્યયનાનામેવોત્કીર્તનં યુક્તમ્,

આદિ કરકે-ઋષભપદ કો અન્ત મેં ઉચ્ચરિત ક્રિયા જાતા હૈ । તથા
અનાનુપૂર્વી આદિ કે ઋષભપદ સે લેકર અન્તિમ વર્દમાન તક કે ચૌ-
વીસ પદોં કા પરસ્પર મેં ગુણા કરને પર ઔર ગુણિતરાશિ મેં સે આદિ
અન્ત રૂપ ભંગ દ્વય કો વિવક્ષા કો કમ કરને પર જિતને ભંગ બચતે હૈ
ઉન ભંગ સ્વરૂપ હોતી હૈ ।

શંકા—ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી સે હસ મેં કયા ભેદ હૈ ?

ઉત્તર—ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી મેં દ્રવ્યોં કા કેવલ વિન્યાસ હી
પૂર્વાનુપૂર્વી આદિરૂપ સે વિચારિત હોતા હૈ ઔર હસ ઉત્કીર્તનાનુપૂર્વી
મેં ઉન્હી દ્રવ્યોં કા આનુપૂર્વી આદિરૂપ સે નામોચ્ચારણ ક્રિયા જાતા હૈ ।

શંકા—હસ શાસ્ત્ર મેં આવશ્યક કા પ્રકરણ હોને સે હસ આનુપૂર્વી
મેં મી સામાયિક આદિ અધ્યયનોં કા હી ઉત્કીર્તન કરના ઉચિત થા-

પશ્ચાનુપૂર્વી'નું' સ્વરૂપ આ પ્રકારનું' છે-ઉપર જે ક્રમે નામોચ્ચારણ
કરાયું' છે તેના કરતાં ઊલટા ક્રમે નામોચ્ચારણ કરવાથી પશ્ચાનુપૂર્વી'બને છે.
તેમાં વર્ધમાનથી લઈને ઋષભ પર્યન્તના પદોનું' ઉચ્ચારણ કરાય છે આ રીતે
'વર્ધમાન' પદ પહેલું' અને 'ઋષભ' પદ છેલ્લું આવે છે અનાનુપૂર્વી'માં
શરૂઆતના ઋષભ પદથી લઈને છેલ્લા વર્ધમાન પર્યન્તના ૨૪ પદોનો પર-
સ્પરની સાથે ગુણાકાર કરવામાં આવે છે અને તેથી જે મહારાશિ આવે છે
તેમાંથી આદિ અને અન્ત ૩૫ જે ભંગોને બાદ કરવામાં આવે છે. આ બે
ભંગો બાદ કરવાથી જે ભંગો બાકી રહે છે, તે ભંગો૩૫ અનાનુપૂર્વી' હોય છે.

શંકા—ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી' કરતાં આ ઉત્કીર્તનાનુપૂર્વી'માં શો તફાવત છે ?

ઉત્તર—ઔપનિધિકી દ્રવ્યાનુપૂર્વી'માં દ્રવ્યોનો કેવળ વિન્યાસ જ પૂર્વાનુ-
પૂર્વી' આદિ રૂપે કરવામાં આવે છે, પરન્તુ આ ઉત્કીર્તનાનુપૂર્વી'માં તો એજ
દ્રવ્યોનું' આનુપૂર્વી' આદિ રૂપે ઉચ્ચારણ કરવામાં આવે છે

શંકા—આ શાસ્ત્રમાં આવશ્યકનો અધિકાર આલતો હોવાથી આ આનુ-
પૂર્વી'માં સામાયિક આદિ અધ્યયનોનું' જ ઉત્કીર્તન (ઉચ્ચારણ) કરાયું' હોત

કથમપ્રક્રાન્તાનામૃપમાદીનામુત્કીર્તનં કૃતમ્ ? इति चेदाह—इदं शास्त्रं सर्वव्यापक-
मित्यादावेवमुक्तम् । तत्समर्थयितुमेव ऋषमादीनामुपादानं कृतम् । ऋषमादीनां
तीर्थकर्तृत्वात्तन्नामोच्चारणे सकलमपि श्रेयः प्राप्नोति जन इति युक्तमेव तेषां
भगवतां नामोच्चारणम् । एवं विधस्थलेऽन्यत्राप्येवमेव समाधेयमिति । प्रकृतमुप
संहरन्नाह—‘ से तं ’ इत्यादि । सैषा उत्कीर्तनानुपूर्वी ॥सू० १३८॥

अथ पूर्वोक्तामेव गणनानुपूर्वीं निरूपयितुमाह—

मूलम्—से किं तं गणणाणुपुर्वी ? गणणाणुपुर्वी तिविहा पणत्ता,
तं जहा—पुव्वाणुपुर्वी पच्छाणुपुर्वी अणाणुपुर्वी । से किं तं पुव्वा-
णुपुर्वी ? पुव्वाणुपुर्वी—एगो, दस, सयं, सहस्रं, दस सहस्राइं,

तो फिर अपक्रान्त-प्रकरण बाह्य-ऋषभ आदिकों का उत्कीर्तन
सूत्रकारने क्यों किया ?

उत्तर—यह तो पहिले ही कहा जा चुका है कि यह शास्त्र सर्व
व्यापक है । सो इसी बात का समर्थन करने के लिये यहां ऋषभादिकों
का उत्कीर्तन किया है । ये ऋषभ आदि तीर्थ कर्ता हैं । इनके नाम का
उच्चारण करने वाला मनुष्य समस्त श्रेयको पा लेता है । अतः उनके
नाम का उच्चारण करना युक्त ही है । दूसरे और भी इसी प्रकार के
स्थलों में ऐसा ही समाधान समझना चाहिये । इस प्रकार से यह
उत्कीर्तनानुपूर्वी है । सूत्रस्य बाकी पद सुगम्य हैं अतः उनका भिन्न
भिन्न रूप से अर्थ नहीं लिखा है ॥सू० १३८॥

તે ઉચિત ગણાત તેને બદલે અપ્રક્રાન્ત (પ્રકરણના વિષયથી બાહ્ય એવાં)
ઋષભ આદિકોનું ઉત્કીર્તન સૂત્રકારે શા કારણે કર્યું છે ?

ઉત્તર—એ વાત તો પહેલાં જ કહેવામાં આવી ચુકી છે કે શાસ્ત્ર
સર્વવ્યાપક છે એજ વાતનું સમર્થન કરવાને માટે અહીં ઋષભાદિકોનું
ઉત્કીર્તન (નામોનું ઉચ્ચારણ) કરવામાં આવ્યું છે. આ ઋષભ આદિ તીર્થ-
કરોએ તીર્થની સ્થાપના કરી હતી. તેમનાં નામનું ઉચ્ચારણ કરનાર મનુષ્યનું
દરેક પ્રકારે શ્રેય જ થાય છે. તેથી તેમનાં નામોનું ઉચ્ચારણ કરવું ઉચિત જ
ગણી શકાય આ પ્રકરનાં બીજાં સ્થાનોમાં પણ આ પ્રકારનું જ સમાધાન સમજવું.

આ પ્રકારનું ઉત્કીર્તનનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ છે આ સૂત્રમાં આવેલાં બાકીનાં
પદોનો અર્થ સુગમ હોવાથી અહીં તેમનું, વધુ સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં
આવ્યું નથી. ॥સૂ० ૧૩૮॥

સયસહસ્ત્રં, દસ સયસહસ્ત્રાઈં, કોડી, દસ કોડીઓ, કોડીસયં, દસ કોડીસયાઈં । સે તં પુઞ્વાણુપુઞ્વી । સે કિં તં પચ્છાણુપુઞ્વી? પચ્છાણુપુઞ્વી—દસ કોડીસયાઈં જાવ ઇગો સે તં પચ્છાણુપુઞ્વી । સે કિં તં અણાણુપુઞ્વી? અણાણુપુઞ્વી—અયાણ ચેવ ઇગાઈયાણ ઇગુત્તરિયા । દસકોડીસયગચ્છગયાણ સેઠીણ અન્નમન્નબ્ભાસો દુરૂવૂણો । સે તં અણાણુપુઞ્વી । સે તં ગણણાણુપુઞ્વી ॥સૂ૦ ૧૩૯॥

છાયા—અથ કા સા ગણનાનુપૂર્વી? ગણનાનુપૂર્વી ત્રિવિધા પ્રજ્ઞતા, તથા—પૂર્વાનુપૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વી । અથ કા સા પૂર્વાનુપૂર્વી? પૂર્વાનુપૂર્વી—એકો, દશ, શતં, સહસ્રં, દશ સહસ્રાણિ, શતસહસ્રં, દશ શતસહસ્રાણિ, કોટિઃ, દશકોટયઃ, કોટિશતં, દશકોટિશતાનિ । સૈવા પૂર્વાનુપૂર્વી । અથ કા સા પશ્ચાનુપૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વી દશકોટિશતાનિ યાદદેકઃ । સૈવા પશ્ચાનુપૂર્વી । અથ કા સા અનાનુપૂર્વી? અનાનુપૂર્વી એતસ્યામેવ એકાદિકાયામેકોત્તરિકાયાં દશકોટિશતગચ્છગતાયાં શ્રેણ્યામન્યોન્યાભ્યાસો દ્વિરુગોતઃ । સૈવા અનાનુપૂર્વી । સૈવા ગણનાનુપૂર્વી ॥સૂ૦ ૧૩૯॥

ટીકા—‘ સે કિં તં ’ ઇત્યાદિ—

અથ કા સા ગણનાનુપૂર્વી? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—ગણનાનુપૂર્વી પૂર્વાનુપૂર્વ્યાદિભેદેન ત્રિવિધા । તત્ર—એકાદિદશકોટિશતાન્તાપૂર્વાનુપૂર્વી । દશકોટિશતાચે-

ગણનાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ—હસ ઘાત કો અવ સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરતે હૈ —“સે કિં તં ગણણાણુપુઞ્વી ?” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ગણણાણુપુઞ્વી)

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ? ગણનાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(ગણણાણુપુઞ્વી તિવિહા પળ્ળતા) ગણનાનુપૂર્વી ત્રીજ પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ । (તંજહા) જૈસે (પુઞ્વાણુપુઞ્વી પચ્છાણુપુઞ્વી, અણાણુપુઞ્વી)

હવે સૂત્રકાર ગણનાનુપૂર્વીના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“ સે કિં તં ગણણાણુપુઞ્વી ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ગણણાણુપુઞ્વી?) હે ભગવન્ ! ગણનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ગણણાણુપુઞ્વી તિવિહા પળ્ળતા) ગણનાનુપૂર્વી ત્રણ પ્રકારની કહી છે—(તંજહા) તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(પુઞ્વાણુપુઞ્વી, પચ્છાણુપુઞ્વી, અણાણુપુઞ્વી) (૧) પૂર્વાનુપૂર્વી, (૨) પશ્ચાનુપૂર્વી અને (૩) અનાનુપૂર્વી.

કાન્તા પશ્ચાનુપૂર્વી । તથા—એતસ્યાયેવ એકાદિકાયામેકોત્તરિકાયાં દશકોટિશત-
ગચ્છગતાયાં શ્રેણ્યામન્યોન્યામ્યાસો દ્વિરૂપોનઃ—અનાનુપૂર્વી, વ્યાख्या પૂર્વવત્ ।

પૂર્વાનુપૂર્વી, પશ્ચાનુપૂર્વી, અનાનુપૂર્વી. (સે કિં તં પુઞ્વાણુપુઞ્વી) હે ભદન્ત !
પૂર્વાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર— (પુઞ્વાણુપુઞ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈ—
(એગો) એક (દસ) દશ, (સયં) સો (સહસ્તં) હજાર (દસસહસ્તાઈં) દશ
હજાર (સયસહસ્તાઈં) લાખ (દસસયસહસ્તાઈં) દશ લાખ (કોઢી)
કરોડ (દસ કોઢીઓ) દસ કરોડ (કોઢીસયં) અર્બ, (દસ કોઢીસયાઈં) દસ
અર્બ (સે તં પુઞ્વાણુપુઞ્વી) યહ પૂર્વ પ્રક્રાન્ત પૂર્વાનુપૂર્વી હૈ । (સે કિં તં પચ્છાણુ-
પુઞ્વી?) હે ભદન્ત ! ગણનાનુપૂર્વી કે ભેદ રૂપ પશ્ચાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર— (પચ્છાણુપુઞ્વી) પશ્ચાનુપૂર્વી કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈ ।
(દસ કોઢીસયાઈં જાવ એગો) દસ અર્બ સે લેકર વ્યુત્ક્રમ સે એક નક્ક
ગિનના (સે તં પચ્છાણુપુઞ્વી) સો પશ્ચાનુપૂર્વી હૈ । (સે કિં તં અણાણુપુઞ્વી)
હે ભદન્ત ! અનાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ ? (અણાણુપુઞ્વી) અનાનુપૂર્વી
કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈ—(એયાએ ચેવ એગાહયાએ એગુત્તરિયાએ દસ
કોઢીસયગચ્છગયાએ સેઢીએ અન્નમન્નઅસો દૂરુવૂળો) એક સે લેકર

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પુઞ્વાણુપુઞ્વી?) હે ભગવન્ ! પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર—(પુઞ્વાણુપુઞ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—(એગો) એક,
(દસ) દસ, (સયં) સો, (સહસ્તં) હજાર, (દસસહસ્તાઈં) દસ હજાર, (સયસહ-
સ્તાઈં) લાખ, (દસસયસહસ્તાઈં) દસ લાખ, (કોઢી) કરોડ, (દસ કોઢીઓ)
દસ કરોડ, (કોઢીસયં) અબજ, (દસ કોઢીસયાઈં) દસ અબજ, (સે તં
પુઞ્વાણુપુઞ્વી) ઇત્યાદિ રૂપે ગણના કરવી તેનું નામ પૂર્વાનુપૂર્વી છે.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પચ્છાણુપુઞ્વી?) હે ભગવન્ ! ગણનાનુપૂર્વીના બીજા ભેદ
રૂપ પશ્ચાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(પચ્છાણુપુઞ્વી) પશ્ચાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—(દસકોઢી-
સયાઈં જાવ એગો, દસ અબજથી લઈને ઊત્તર ક્રમે એક સુધીની ગણતરી
કરવી (સે તં પચ્છાણુપુઞ્વી) તેનું નામ પશ્ચાનુપૂર્વી છે.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં અણાણુપુઞ્વી?) હે ભગવન્ ! ગણનાનુપૂર્વીના ત્રીજા ભેદ
રૂપ અનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(અણાણુપુઞ્વી) અનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—(એયાએ ચેવ
એગાહયાએ એગુત્તરિયાએ દસકોઢીસયગચ્છગયાએ સેઢીએ અન્નમન્નઅસો દૂરુવૂળો)

અત્રોક્તાઃ સંખ્યા ઉપલક્ષણમાત્રમ્, અત્ર ઇતોડન્યા અપિ સંભાવ્યમાનાઃ સંખ્યા
અવગમન્તવ્યાઃ । ઉત્કીર્તનાનુપૂર્વ્યાં નામમાત્રોત્કીર્તનં કૃતમ્, અત્ર ગણનાનુપૂર્વ્યાં તુ-
एकादि संख्यानामभिधानं कृतमिति बोध्यम् । प्रकृतमुपसंहरन्नाह-‘से तं’
इत्यादि । सैषा गणनानुपूर्वी ॥सू० १३९॥

अथ प्रागुद्दिष्टामेव संस्थानानुपूर्वीमाह-

मूलम्-से किं तं संठाणाणुपुर्वी ? संठाणाणुपुर्वी त्रिविधा पणत्ता,
तं जहा-पुट्वाणुपुर्वी पच्छाणुपुर्वी अणाणुपुर्वी । से किं तं
पुट्वाणुपुर्वी ? पुट्वाणुपुर्वी-समचउरंसे निग्गोहमंडले सादी
खुज्जे वामणे हुंडे । से तं पुट्वाणुपुर्वी । से किं तं पच्छाणुपुर्वी ?
पच्छाणुपुर्वी-हुंडे जाव चउरंसे । से तं पच्छाणुपुर्वी । से किं
तं अणाणुपुर्वी ? अणाणुपुर्वी एयाए चेव एगाइयाए एगुत्तरि-
याए छ गच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नवभासो दुरुवूणो । से तं
अणाणुपुर्वी । सा एसा संठाणाणुपुर्वी ॥सू० १४०॥

છાયા-અથ કા સા સંસ્થાનાનુપૂર્વી ? સંસ્થાનાનુપૂર્વી ત્રિવિધા પ્રજ્ઞપ્તા, તથા-
પૂર્વાનુપૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વી । અથ કા સા પૂર્વાનુપૂર્વી ? પૂર્વાનુપૂર્વી-સમચ-
તુરસં ન્યગ્રોધમણ્ડલં સાદિ કુવ્વજં વામનં હુણ્ડમ્ । સૈષા પૂર્વાનુપૂર્વી । અથ કા સા
પશ્ચાનુપૂર્વી ? પશ્ચાનુપૂર્વી-હુણ્ડં યાવત્ સમચતુરસ્રમ્ । સૈષા પશ્ચાનુપૂર્વી । અથ કા

દશ કોટિશતક કી એક એક કી વૃદ્ધિવાલી શ્રેણી મેં સ્થાપિત સંખ્યા
કા પરસ્પર જે ગુણ કરને પર ઔર ઉત્પન્ન હસ મહારાશિ મેં સે ભંગ
દ્વય કી વિવક્ષા કો કામ કરને પર અવશિષ્ટઅંગાત્મક (સે તં અણાણુપુ-
ર્વી) અનાનુપૂર્વી હૈ (સે તં ગણનાણુપુર્વી) હસ પ્રકાર યહ ગણનાનુપૂર્વી
કા સ્વરૂપ હૈ ॥સૂ० ૧૩૯॥

એકથી લઇને દસ અબજ પર્યન્તની એક એકની વૃદ્ધિવાળી શ્રેણીમાં સ્થાપિત
સંખ્યાનો પરસ્પરની સાથે ગુણાકાર (સંયોજન) કરીને જે ભંગોની મહારાશિ
ઉત્પન્ન થાય છે તેમાંથી આદિ અને અન્તના બે ભંગોને બાદ કરવાથી જે ભંગો
બાકી રહે છે, તે ભંગોને (સે તં અણાણુપુર્વી) અનાનુપૂર્વી ૩૫ ગણવામાં આવે
છે. (સે તં ગણનાણુપુર્વી) આ પ્રકારનું ગણનાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ છે. ॥સૂ० ૧૩૯॥

સા અનાનુપૂર્વી? અનાનુપૂર્વી—એવસ્યાએવ એકાદિકાયામે કોત્તરિકાયાં છ ગચ્છગતાયાં શ્રેણ્યામન્યોન્યામ્યાસો દ્વિરુપોતઃ। સૈવા અનાનુપૂર્વી। સૈવા સંસ્થાનાનુપૂર્વી॥મ્. ૧૪૦॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

અથ કા સા સંસ્થાનાનુપૂર્વી? ઇતિ પ્રશ્નઃ। ઉત્તરયતિ—સંસ્થાનાનુપૂર્વી સંસ્થાનાનિ-
=આકૃતિવિશેષઃ, તેષામાનુપૂર્વી=ચરિણી સંસ્થાનાનુપૂર્વી આકૃતિવિશેષરૂપાણિ।
સંસ્થાનાનિ જીવાજીવભેદેન યથાપિ દ્વિવિધાનિ તથાપિ ‘સમચરંસે’ ઇત્યાદ્યભિ-
ધાનેન જીવસમ્બન્ધીન્યેષ તાનિ વેદ્યાનિ। ઇયં સંસ્થાનાનુપૂર્વ્યપિ પૂર્વાનુપૂર્વ્યાદિ-
ભેદેન ત્રિવિધા પ્રોક્તા। તત્ર-પૂર્વાનુપૂર્વી-સમચતુરસ્રમ્-સમં=નાભેરુપર્યધશ્ચ સકલ-
પુરુષલક્ષણોપેતાવચરતવા ચતુરસ્રમ્ અન્યુનાધિકાશ્ચતસ્રઃ અસ્રયઃ—કોણા યસ્ય તત્

અથ સૂત્રકાર પૂર્વોક્ત સંસ્થાનાનુપૂર્વી કા સ્વરૂપ કથન કરતે હિ—

“સે કિં તં સંઠાણાણુપુઞ્વી” ઇત્યાદિ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સંઠાણાણુપુઞ્વી?) હે ભદ્રં! પૂર્વપ્રકાન્ત સંસ્થાનાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ?

ઉત્તર—(સંઠાણાણુપુઞ્વી તિવિદ્યા પળ્લન્તા) સંસ્થાનાનુપૂર્વી ત્રીણ પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ (તં જહા) વે પ્રકાર વે હૈ — (પુઞ્વાણુપુઞ્વી, પચ્છાણુપુઞ્વી, અણાણુ પુઞ્વી,) પૂર્વાનુપૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વી ઔર અનાનુપૂર્વી (સે કિં તં પુઞ્વાણુપુઞ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ?

ઉત્તર—(પુઞ્વાણુપુઞ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર સે હૈ—(સમ-
ચરંસે, નિગ્ગોહમંડલે, સાદી લુઞ્જે વામણે હુંડે) સમચતુરસ્ર સંસ્થાન,
ન્યપ્રોધમંડલ સંસ્થાન, સાદિસંસ્થાન, કુઞ્જ સંસ્થાન, વામન સંસ્થાન,

હવે સૂત્રકાર પૂર્વોક્ત સંસ્થાનાનુપૂર્વીનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં સંઠાણાણુપુઞ્વી?” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સંઠાણાણુપુઞ્વી?) હે ભગવન્! પૂર્વોક્ત સંસ્થાના-
નુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર—(સંઠાણાણુપુઞ્વી તિવિદ્યા પળ્લન્તા) સંસ્થાનાનુપૂર્વી ત્રણ પ્રકારની
કહી છે. (તં જહા) તે ત્રણ પ્રકારની નીચે પ્રમાણે છે—(પુઞ્વાણુપુઞ્વી પચ્છાણુપુઞ્વી
અણાણુપુઞ્વી) (૧) પૂર્વાનુપૂર્વી (૨) પશ્ચાનુપૂર્વી અને (૩) અનાનુપૂર્વી

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પુઞ્વાણુપુઞ્વી?) હે ભગવન્! પૂર્વાનુપૂર્વીનું
સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર—(પુઞ્વાણુપુઞ્વી) પૂર્વાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—(સમચરંસે,
નિગ્ગોહમંડલે, સાદી, લુઞ્જે, વામણે, હુંડે) સમચતુરસ્ર સંસ્થાન, ન્યપ્રોધમંડલ
સંસ્થાન, સાદિ સંસ્થાન, કુઞ્જ સંસ્થાન, વામન સંસ્થાન અને હુંડ સંસ્થાન,

ચતુરસ્રમ્ । અત્યોઃ કર્મધારયઃ । તુલ્યારોહપરિણાહઃ સમ્પૂર્ણલક્ષણોપેતાક્ષોપાક્ષાવયવઃ
સ્વાકુળાષ્ટાધિકશતોચ્છ્રાયઃ સર્વસંસ્થાનેષુ મુખ્યઃ પચ્ચેન્દ્રિયજીવશરીરાકારવિશેષ

ઔર હુંડ સંસ્થાન । આકૃતિ વિશેષ કા નામ સંસ્થાન હૈ । इन संस्थानों
की जो परिपाटी है उसका नाम आनुपूर्वी है । यद्यपि ये संस्थान जीव
और अजीव के संबन्धी होने से दो प्रकार के हैं तो भी ” इस प्रकार
के कथन से यहाँ जीवसंबन्धी ही ग्रहण किये गये हैं । जिस संस्थान
में नाभि से ऊपर के और नीचे के समस्त अवयव सामुद्रिक शास्त्र के
अनुसार अपने २ प्रमाण से युक्त हों, हीनाधिक न हों उसका नाम सम-
चतुस्र है, ” समं चतुस्रम् यस्य तत् समचतुरस्रम् ” यह इसकी व्युत्पत्ति
है । इसका तात्पर्य यह है कि इस संस्थान में जितने भी शरीर के नाभि
से ऊपर नीचे के अंग उपांग रूप अवयव होते हैं वे सब समस्त लक्षणों से
सहित होते हैं । न्यूनाधिक भाव इनमें नहीं होता है शरीर के चारों कोने
इसमें बराबर होते हैं । इस संस्थान में आरोह और परिणाह-उतार
चढाव-एकसा होता है । सामुद्रिक शास्त्र में सुहावने शरीर के जितने भी
लक्षण कहे गये हैं वे सब लक्षण इस संस्थान वाले शरीर के अंग और

આ ક્રમે સંસ્થાનોનો વિન્યાસ કરવો તેને સંસ્થાનાનુપૂર્વીના પ્રથમ ભેદ
૩૫ પૂર્વાનુપૂર્વી કહે છે.

સંસ્થાન એટલે આકાર આ આકારોની જે પરિપાટી તેનું નામ આનુ-
પૂર્વી છે જો કે આ સંસ્થાન જીવ અને અજીવ વિષયક હોવાને કારણે
મુખ્ય બે પ્રકારનું હોય છે, પરંતુ “ સમચતુરસ્રે ” ઇત્યદિ પદો દ્વારા અહીં
જીવસંબંધી સંસ્થાનોને ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે,

સમચતુરસ્ર સંસ્થાન જે સંસ્થાનમાં (આકાર વિશેષમાં) નાભિની નીચેના
અને નાભિની ઉપરનાં સમસ્ત અવયવો સામુદ્રિક શાસ્ત્રમાં ળતાવ્યા પ્રમાણેના
પોતપોતાનાં પ્રમાણવાળાં હોય છે—હીન અથવા અધિક પ્રમાણવાળાં હોતાં નથી,
તે સંસ્થાનને સમચતુરસ્ર સંસ્થાન કહે છે. તેની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે થાય છે—

“ સમં ચતુસ્રમ્ यस્ય તત્ સમચતુરસ્રમ્ ” આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે
છે—આ સંસ્થાનમાં નાભિની ઉપરનાં અને નીચેનાં સમસ્ત અંગ ઉપાંગો સમસ્ત
લક્ષણોથી યુક્ત હોય છે. કોઈ પણ અંગ ઉપાંગ ન્યૂન અથવા અધિકપ્રમાણ-
વાળું હોતું નથી. પણ સપ્રમાણ હોય છે તેમાં શરીરના ચારે ખૂણા બરાબર
હોય છે આ સંસ્થાનમાં આરોહ અને અવરોહ—ચઢાવ અને ઉતાર—એક
સરખો હોય છે સામુદ્રિક શાસ્ત્રમાં સુંદર શરીરના જેટલાં લક્ષણો કહ્યાં છે,
તે બધાં લક્ષણો આ શરીરના અંગઉપાંગોનાં જોવામાં આવે છે આ સંસ્થા-

इत्यर्थः । न्यग्रोधमण्डलम्=न्यग्रोधो वटवृक्षरतद्वन्मण्डलं परच तत्तथा, यथा-न्य-
ग्रोध उपरि सम्पूर्णवियवोऽधस्तनभागे पुनर्न तथा, तथेदमपि नाभेरुपरि विस्तर-
बहुलं शरीरलक्षणोक्तप्रमाणभागम्, अधस्तु हीनाधिकप्रमाणं विज्ञेयम् । सादि-
आदिरिह उत्सेधाख्यो नाभेरधस्तनो देहभागो गृह्यते । आदिना=नाभेरधस्तनकाय-
लक्षणेन सह वर्तते इति सादिः । यद्यपि सर्वशरीरमादिना सह वर्तते तथापि सादि-
त्वविशेषणान्यथाऽनुपपत्त्या विशिष्ट एव प्रमाणलक्षणोपपन्न आदिरिह गृह्यते, तत

હપાંગોં મેં રહા કરતેં હેં । અપને અંગુલ સે હસ સંસ્થાન વાલા શરીર ૧૦૮
અંગુલ કી ઝંઘાઈવાલા હોતા હૈ । યહ સંસ્થાન સમસ્ત સંસ્થાનોં મેં મુખ્ય
હોતા હૈ । ઔર યહ પંચેન્દ્રિય જીવ કે શરીરકા એક વિશેષ આકારરૂપ
હોતા હૈ । ન્યગ્રોધમણ્ડલ-ન્યગ્રોધ નામ વટવૃક્ષ કા હૈ । હસકે સમાન
જિસકા મંડલ હો-અર્થાત્ જિસ પ્રકાર ન્યગ્રોધ-વટવૃક્ષ-ઝપર મેં સંપૂર્ણ
અવયવોંવાલા હોના હૈ ઔર નીચે વૈસા નહીં હોતા, ડસી પ્રકાર યહ
સંસ્થાન ભી નાભિ સે ઝપર મેં બહુત વિસ્તારવાલા હોતા હૈ ઔર નાભિ
સે નીચે હીનાધિક પ્રમાણવાલા હોતા હૈ એસે સંસ્થાન કા નામ ન્યગ્રોધ
મંડલ હૈ । સાદિ-નાભિ સે નીચે કા જો ઉત્સેધ નામ કા દેહ ભાગ હૈ
વહ યહાં આદિ સે ગ્રહણ ક્રિયા હૈ । નાભિ સે નીચે કા ભાગ કાયરૂપ
આદિ કે સાથ જો રહતા હૈ ડસકા નામ સાદિ હૈ । યદ્યપિ સમસ્ત
શરીર આદિ સહિત હોતે હેં તો ભી સંસ્થાન કા જો સાદિ વિશેષગ

નવાળા મનુષ્યની ઊંચાઈ તેના ૧૦૮ આંગળપ્રમાણ હોય છે. આ સંસ્થાન
બધાં સંસ્થાનોમાં મુખ્ય (શ્રેષ્ઠ) ગણાય છે. અને આ સંસ્થાન પંચેન્દ્રિય ઊવના
શરીરના એક આકારવિશેષ રૂપ હોય છે.

ન્યગ્રોધમંડલસંસ્થાન-વડના વૃક્ષને ન્યગ્રોધ કહે છે. તે વડના જેવું જે
સંસ્થાન (આકાર) હોય છે તે સંસ્થાનનું નામ ન્યગ્રોધમંડલસંસ્થાન છે. જેમ
વડનો ઉપરનો ભાગ સંપૂર્ણ અવયવોવાળો હોય છે, પણ નીચે એવો હોતો
નથી, એજ પ્રમાણે આ સંસ્થાન નાભિથી ઉપરના ભાગમાં ઘણા વિસ્તાર-
વાળું હોય છે, પરંતુ નાભિની નીચેનો ભાગમાં ન્યૂનાધિક પ્રમાણવાળું હોય
છે. માટે આ પ્રકારના સંસ્થાનનું નામ ન્યગ્રોધમંડલ સંસ્થાન છે

સાદિસંસ્થાન-નાભિની નીચેનો જે ઉત્સેધ નામનો શરીરનો ભાગ છે,
તેને અહીં “આદિ” પદ વડે ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે. નાભિથી નીચેનો
જે ભાગ કાયરૂપ આદિની સાથે રહે છે તેનું નામ ‘સાદિ’ છે. જે કે સમસ્ત
શરીરો આદિ સહિત જ હોય છે, છતાં પણ અહીં જે સાદિ વિશેષણ લગા-

ઉક્તમ્-ઉત્સેધવહુલમિતિ। અત્રેદમુક્તં ભવતિ-યત્સ્થાનં નાભેરધઃ પ્રમાણોપપન્ન-
મુષ્ણૈ ચ હીનં તત્સાદીતિ બોધ્યમ્। કુઙ્ગ-યત્ર સંસ્થાને શિરો ગ્રીવં હસ્તપાદા-
દિકં ચ યથોક્તપ્રમાણલક્ષણોપેતમ્, ઉદરાદિમણ્ડલં ચ યથોક્તપ્રમાણરહિતં તત્
કુઙ્ગમિત્યુચ્યતે। વામનમ્-યત્ર તુ હૃદયોદરપૃષ્ઠં સર્વલક્ષણોપેતં શેષં તુ હીનલક્ષણં
તદ્ વામનમ્-કુઙ્ગવિપરીતમિત્યર્થઃ। હુણ્ડમ્=યત્ર સંસ્થાને સર્વેઽપ્યવયવાઃ પ્રાયો
લક્ષણવિરુદ્ધા ભવન્તિ, તત્સંસ્થાનં હુણ્ડમિત્યુચ્યતે। ચતુરસ્રસંસ્થાનસ્ય સમસ્તલક્ષ-

રખા હૈ વહ અન્યથાનુપપત્તિ કે બલ સે વિશિષ્ટ પ્રમાણલક્ષણોપેત આદિ
સે હી સંબંધિત હોતા હૈ। હસીલિયે ઉત્સેધવહુલ એસા કહા હૈ। હસકા
તાત્પર્ય યહ હૈ કિ નાભિ સે નીચે કા ભાગ જિસ સંસ્થાન મેં ઘઘુત
વિસ્તારવાલા હોતા હૈ ઓર નાભિ સે ડપર કા ભાગ હીન હોતા હૈ વહ
સંસ્થાન સાદિ હૈ। કુઙ્ગ જિસ સંસ્થાન મેં શિર, ગ્રીવા, હાથ, પગ આદિ
યથોક્ત પ્રમાણવાલે હોં ઓર ઉદર આદિ કા મંડલ યથોક્ત પ્રમાણ સે વિહીન
હો વહ કુઙ્ગ સંસ્થાન હૈ। વામન-જિસ સંસ્થાન મેં હૃદય, ઉદર ઓર પીઠ
યે સમસ્ત લક્ષણોં સે યુક્ત હોં ઓર બાકી કે અવયવ હીન લક્ષણવાલે
હોં ઉસકા નામ વામન સંસ્થાન હૈ। યહ સંસ્થાન કુઙ્ગ સે વિપરીત હોતા
હૈ। હુણ્ડ સંસ્થાન-જિસ સંસ્થાન મેં સમસ્ત અવયવ પ્રાયઃ લક્ષણહીન હોતે
હૈં ઉસકા નામ હુણ્ડ સંસ્થાન હૈ। સમચતુસ્ર સંસ્થાન સમસ્ત લક્ષણોં સે

ડવામાં આબ્યું છે, તે અન્યથાનુપપત્તિના બળથી વિશિષ્ટ પ્રમાણ લક્ષણોપેત
આદિ વડે જ સંબંધિત હોય છે. તેથી જ તેને ઉત્સેધ બહુલ કહ્યું છે. આ
કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-જે સંસ્થાનમાં નાભિની નીચેનો ભાગ
ઘણા વિસ્તારવાળો હોય, પરંતુ નાભિની ઉપરનો ભાગ હીનપ્રમાણવાળો
હોય છે, તે સંસ્થાનને સાદિ સંસ્થાન કહે છે.

કુઙ્ગસંસ્થાન-જે સંસ્થાનમાં શિર, ગ્રીવા, હાથ, પગ આદિ અંગો
શાસ્ત્રોક્ત પ્રમાણવાળાં હોય, પરંતુ ઉદર આદિ અંગો યથોક્ત પ્રમાણથી
વિહીન હોય છે, તે સંસ્થાનને કુઙ્ગસંસ્થાન કહે છે.

વામનસંસ્થાન-જે સંસ્થાનમાં હૃદય, પેટ, અને પીઠ, આ અંગો સમસ્ત
લક્ષણોથી યુક્ત હોય છે, પરંતુ બાકીનાં અવયવો હીન લક્ષણવાળાં હોય છે,
તે સંસ્થાનને વામનસંસ્થાન કહે છે. આ સંસ્થાન કુઙ્ગસંસ્થાન કરતાં
વિપરીત લક્ષણોવાળું હોય છે.

હુણ્ડસંસ્થાન-જે સંસ્થાનમાં શરીરનાં બધા અવયવો યથોક્ત લક્ષણો-
વાળાં હોવાને બદલે વિપરીત લક્ષણોવાળાં હોય છે, તે સંસ્થાનને
હુણ્ડસંસ્થાન કહે છે.

ળોપેત્તત્રાત્ મુખ્યત્વમ્ । તતઃ શેઠાણાં યથાક્રમં હીનત્વાદ્ દ્વિતીયાદિત્વં बोध्यम् ।
સૈષા પૂર્વાનુપૂર્વી बोध्या । पश्चानुपूर्वी तु, हुण्डादिवतुरस्रान्ता बोध्या । तथा-चतुर-
स्रादि हुण्डान्तानां पदानामन्योन्याभ्यासो द्विरूपोनः । आद्यन्तरूपद्वयभङ्गकविव-
क्षामपहाय ये भङ्गास्ते-अनानुपूर्वीति । ननु यदीत्थं संस्थानानुपूर्वी प्रोच्यते, तर्हि
संहननवर्णरसस्पर्शाद्यानुपूर्व्योऽपि वक्तव्याः स्युः, तथा सति आनुपूर्व्याः प्राग्
द्वासप्ततितमसूत्रोक्तदशसंख्यकत्वमेव परिहीयेत, एवं च आनुपूर्व्याः दशविधन्व

યુક્ત હોતા હૈ । इसलिये उस में मुख्यता है । शेष प्रमाणोपेत-लक्षणों से
यथाक्रम हीन हैं इसलिये उन में अमुख्यता द्वितीयता आदि है । यही
पूर्वप्रक्रान्त पूर्वानुपूर्वी है । हुण्ड संस्थान से लेकर समचतुरस्र संस्थान
तक पश्चानुपूर्वी होती है । तथा समचतुरस्र से लेकर हुण्ड संस्थान तक
के पदों का परस्पर में गुणाकरने पर और उस गुणिन राशि में आदि
अंत के भंगद्वय की विवक्षा कम करने पर जो भंग होते हैं उन भंग
स्वरूप अनानुपूर्वी होती है । शंका-यदि इस प्रकार से संस्थानानुपूर्वी
आप कहते हैं तो संहनन, वर्ण, रस, स्पर्श आदि कों की भी आनुपूर्वियां
आपको कहनी चाहिये । इस प्रकार से आनुपूर्वियां कहने पर जो ७२
वें सूत्र में " आनुपूर्वियां दश होती हैं " ऐसा कहा है सो उस संख्या
में ही आती है ।

સમચતુરસ્ર સંસ્થાન સમસ્ત લક્ષણોથી યુક્ત હોય છે. તેથી તેમાં
પ્રધાનતા માનીને તેનું કથન પહેલાં કરવામાં આવ્યું છે. બાકીનાં સંસ્થાનો
શાસ્ત્રોક્ત લક્ષણો કરતાં ક્રમશઃ ઓછાં ઓછાં લક્ષણો ધરાવે છે તેથી તે
સંસ્થાનોને ગૌણ ગણીને તેમનું કથન સમચતુરસ્રસંસ્થાનનું કથન કર્યા બાદ
કરવામાં આવ્યું છે. આ પ્રકારનો કથનનો જે ક્રમ છે તેને જ અહીં
પૂર્વાનુપૂર્વી રૂપ ગણવામાં આવેલ છે. હુંડ સંસ્થાનથી લઈને ઊલટા ક્રમે
સમચતુસ્ર પર્યન્તના સંસ્થાનોનો ક્રમ રાખવાથી પશ્ચાનુપૂર્વી રૂપ બીજી
સંસ્થાન'નુપૂર્વી બને છે

અનાનુપૂર્વી-સમચતુરસ્ર સંસ્થાનથી લઈને હુંડસંસ્થાન પર્યન્તની એક
એકની વૃદ્ધિવાળી શ્રેણિમાં સ્થાપિત સંસ્થાનોનો પરસ્પરની સાથે ગુણાકાર
(સંયોજન) કરવાથી જે ગુણિતરાશિ આવે તેમાંથી આદિ અને અન્તના બે
ભાગોને બાદ કરવાથી જે ભાગસમૂહ બાકી રહે છે, તે ભાગસમૂહ
રૂપ અનાનુપૂર્વી હોય છે.

શંકા-જે આ પ્રકારે આપ સંસ્થાનાનુપૂર્વીનું કથન કરો છો, તો સંહનન,
વર્ણ, રસ, સ્પર્શ આદિકોની આનુપૂર્વીઓનું આપે કથન કરવું જોઈએ આ
પ્રકારે આનુપૂર્વીઓ કહેવામાં આવે તો ૭૨માં સૂત્રમાં " આનુપૂર્વીઓ દસ
હોય છે, " આ પ્રકારનું જે કથન કર્યું છે તે કેવી રીતે સંમત માની શકાય ?

કથનમસંગતમ્ ? इति चेदाह पूर्वोक्तमानुपूर्व्या दशविधत्वं नो संख्याया नियाम-
कम् अपि तु उपलक्षणमात्रम् । अतो दशविधानुपूर्व्यतिरिक्ता अन्या अपि
संभाव्यमाना आनुपूर्व्यः सुधिया स्वधिया विभावनीयाः ॥सू० १४०॥

अथ सामाचार्यानुपूर्वीमाह-

मूलम्—से किं तं सामायारी आणुपुर्वी ? सामायारी आणुपुर्वी
तिविहा पणत्ता, तं जहा-पुव्वाणुपुर्वी पच्छानुपुर्वी अणाणु-
पुर्वी । से किं तं पुवानुपुर्वी ? पुव्वाणुपुर्वी-इच्छागारो, मिच्छा-
गारो, तहकारो, आवसिसया, निसीहिया, आपुच्छणा, पडिपुच्छणा,
छंदणा, निमंतणा, उवसंपया । से तं पुव्वाणुपुर्वी । से किं तं
पच्छाणुपुर्वी ? पच्छाणुपुर्वी-उवसंपया जात्र इच्छागारो । से तं
पच्छाणुपुर्वी । से किं तं अणाणुपुर्वी ? अणाणुपुर्वी-एयाए चेव
एगाइयाए एगुत्तरियाए दसगच्छगयाए सेढीए अन्नमन्नब्भासो
दुरुवूणो । से तं अणाणुपुर्वी । से तं सामायारी आणुपुर्वी । सू. १४१ ।

છાયા—અથ કા સા સામાચાર્યાનુપૂર્વી ? સામાચાર્યાનુપૂર્વી ત્રિવિધા પ્રજ્ઞા,
તથા—પૂર્વાનુપૂર્વી પથાનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વી । અથ કા સા પૂર્વાનુપૂર્વી—ઇચ્છાકારઃ,
મિથ્યાકારઃ, તથાકારઃ, આવશ્યકી, નૈષેધિકી, આપચ્છના, પ્રતિપચ્છના, છન્દના,

उत्तर — पहिले जो आनुपूर्वी में दश प्रकारता प्रकट की है वह
संख्यात की नियामकता रूप से प्रकट की है, किन्तु वह तो उपलक्षण
मात्र से कही है । इसलिये दश प्रकार की आनुपूर्वियों से भी अतिरिक्त
और भी आनुपूर्वियां संभवित होती हैं ऐसा इससे भाव निकलना है ।
इसलिये ऐसी आनुपूर्वियों को बुद्धि शाली जन अपनी बुद्धि से उद्भा-
वित करलें । सूत्र " १४० "

ઉત્તર-પહેલાં આનુપૂર્વીમાં જે દસ વિધતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે
તે સંખ્યાતની નિયામકતા રૂપે પ્રકટ કરવામાં આવી નથી, પણ તે તો ઉપ-
લક્ષ્ય માત્રની અપેક્ષાએ પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે, તેથી દસ પ્રકારની
આનુપૂર્વીઓ સિવાયની બીજી આનુપૂર્વીઓ પણ સંભવિત હોય છે, એવો
તે કથનનો ભાવાર્થ સમજવો તેથી બુદ્ધિશાળી માણસોએ એવી આનુપૂર્વી-
ઓને પોતાની બુદ્ધિથી જ ઉદ્ભાવિત કરી લેવી જોઈએ. ॥સૂ. ૧૪૦॥

નિમન્ત્રણા, ઉપસંપદ્ । સૈવા પૂર્વાનુપૂર્વી । અથ કા સા પશ્ચાનુપૂર્વી, પશ્ચાનુપૂર્વી-
ઉપસંપદ્ યાવદિચ્છાકારઃ । સૈવા પૂર્વાનુપૂર્વી । અથ કા સા અનાનુપૂર્વી ? અનાનુ
પૂર્વી-એતસ્યામેવ એકાદિકાયામેતોત્તરિકાયાં દશગચ્છગતાયાં શ્રેણ્યામન્યોન્યા-
ભ્યાસો દ્વિરૂપોનઃ । સૈવા અનાનુપૂર્વી । સૈવા સામાચાર્યાનુપૂર્વી ॥મુ૦ ૧૪૧॥

ટીકા—‘ સે કિં તં ’ ઇત્યાદિ—

અથ કા સા સામાચાર્યાનુપૂર્વી ? ઇતિ શિષ્યમશ્નઃ । સામાચાર્યાનુપૂર્વી-
સમાચરણં સમાચારઃ શિષ્ટજનાચરિતઃ ક્રિયાકલાપઃ, સ એવ સામાચારી, સ્વાર્થે-
વ્યજ્, પિત્વાન્ડીષ્, તદ્રૂપા આનુપૂર્વી સામાચાર્યાનુપૂર્વી । સા હિ પૂર્વાનુપૂર્વ્યાદિ

અથ સૂત્રકાર સામાચારી આનુપૂર્વી કા કથન કરતે હૈં —

“સે કિં તં સામાચારી આણુપુર્વી” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સામાચારી આણુપુર્વી) હે મદન્ત ! પૂર્વપ્રક્રાન્ત
સામાચારી આનુપૂર્વી કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—(સામાચારી આણુપુર્વી તિવિદ્યા પળ્લન્તા) સામાચારી આનુપૂર્વી
કા તાત્પર્ય હૈ શિષ્યજનોં દ્વારા આચરિત ક્રિયાકલાપ રૂપ સમાચાર । યહ
સમાચાર હી સ્વાર્થ મેં વ્યજ્ પ્રત્યય ઓર ડીષ્ હોને સે સામાચારી એસા બન
જાતા હૈ । હસ સામાચારી રૂપ જો આનુપૂર્વી હૈ । યહ સામાચારી આનુપૂર્વી
કહી જાતી હૈ । યહ આનુપૂર્વી ત્રીન પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ । (તં જહા)
જૈસે (પુર્વાણુપુર્વી, પચ્છાણુપુર્વી, અણાણુપુર્વી) પૂર્વાનુપૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વી ઓર
અનાનુપૂર્વી । (સે કિં તં પુર્વાણુપુર્વી) હે મદન્ત ! પૂર્વાપૂર્વી સામાચારી કયા હૈ ?

હવે સૂત્રકાર સામાચારી આનુપૂર્વીનું નિરૂપણ કરે છે—

“ સે કિં તં સામાચારી આણુપુર્વી ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સામાચારી આણુપુર્વી ?) હે ભગવન્ ! પૂર્વોક્ત
સામાચારી આનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(સામાચારી આણુપુર્વી તિવિદ્યા પળ્લન્તા, તંજહા) શિષ્યજનો દ્વારા
આચરિત ક્રિયાકલાપ રૂપ સમાચારને સામાચારી આનુપૂર્વી કહે છે. તે સમા-
ચાર જ સામાચારી રૂપ હોવાથી તેનું નામ સામાચારી પડયું છે. આ
સામાચારી રૂપ જે આનુપૂર્વી છે તેને સામાચારી આનુપૂર્વી કહે છે. તેના
નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે—(પુર્વાણુપુર્વી પચ્છાણુપુર્વી, અણાણુપુર્વી)
(૧) પૂર્વાનુપૂર્વી, (૨) પશ્ચાનુપૂર્વી અને (૩) અનાનુપૂર્વી.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પુર્વાણુપુર્વી ?) હે ભગવન્ ! પૂર્વાનુપૂર્વી સામાચારીનું
સ્વરૂપ કેવું છે ?

ભેદેન ત્રિવિધા પ્રજ્ઞાતા । તત્ર પૂર્વાનુપૂર્વી ઇચ્છાકારઃ, મિથ્યાકારઃ, તથાકારઃ, તત્ર-ઇચ્છાકારઃ-ઇચ્છાયા વલાભિયોગમન્તરેણ કરણમ્ ॥૧॥મિથ્યાકારઃ=મિથ્યા=યદેનન્મયાઽઽચરિતં તદસદિતિ મનસિ કરણમ્ । કસ્મિંશ્ચિદકૃત્યે કર્મણિ કૃતે સત્તિ ભવ્યેનૈવં વિચિન્ત્યતે-યદિદં મયા કૃતં તદ્ ભગવતાઽનુક્તત્વાત્ મિથ્યાભૂતમ્, અતો મયેદં દુષ્કૃતં કૃતમિત્યેવં યદસત્ક્રિયાતો નિવૃત્તિઃ સ મિથ્યાકાર ઇતિ ભાવઃ ॥૨॥

ઉત્તર — (પુઞ્જાણુપુઞ્જી) પૂર્વાનુપૂર્વી સામાચારી હસ પ્રકાર સે હૈ—(ઇચ્છાગારો મિચ્છાગારો, તદ્વકારો આવસ્થિયા નિસીહિયા, આપુચ્છણા' પઙ્કિપુચ્છણા છંદ્ણા' નિમંતળા, ઉદ્ધસંપયા) ઇચ્છાકાર, મિથ્યાકાર, તથાકાર, આવશ્યકી, નૈષેધિકી, આપ્રચ્છના, પ્રતિપ્રચ્છના, છન્દના, નિમંત્રણા, ઓર ઉપસંપત્ । કિસી કી જવર્દસ્તી વિના વ્રતાદિક આચરણ કરને કી ઇચ્છા કરના હસકા નામ ઇચ્છાકાર હૈ । મેરે પ્રમાદ આદિ સે અકૃત્ય કા સેવન હો ગયા હૈ વહ મેરા નિષ્ફલ હો-અસત્ હો એસા મન મેં વિચાર કરના હસકા નામ મિથ્યાકાર હૈ । કોઈ અકૃત્ય કર્મ જલ્લ બન જાતા હૈ । તલ્લ અવ્યપુરુષ જન મેં એસા ચિન્તવન કરતા હૈ કિ જો યહ મેંને કિયા હૈ જહ ભગવાન્ દ્વારા અનુક્ત હોને સે મિથ્યાભૂત હૈ । હસલિયે યહ દુષ્કૃત્ય હૈ ઓર યહ મેંને કિયા હૈ-અવ આમે નહીં કરુંગા-હસ પ્રકાર

ઉત્તર-(પુજ્જાણુપુજ્જી) પૂર્વાનુપૂર્વી સામાચારીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—(ઇચ્છાગારો, મિચ્છાગારો, તદ્વકારો, આવસ્થિયા, નિસીહિયા, આપુચ્છણા, પઙ્કિપુચ્છણા, છંદ્ણા, નિમંતળા, ઉદ્ધસંપયા) ઇચ્છાકાર, મિથ્યાકાર, તથાકાર, આવશ્યકી, નૈષેધિકી, આપ્રચ્છના, પ્રતિપ્રચ્છના, છન્દના, નિમંત્રણા અને ઉપસંપત્, આ ક્રમે પદોનો વિન્યાસ (સ્થાપના) કરવો તેનું નામ પૂર્વાનુપૂર્વી સામાચારી છે હવે ઇચ્છાકાર આદિ પદોનો અર્થ સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—કોઈની બળજબરી વિના-બહારના કોઈ પણ દબાણ વિના-વ્રતાદિક આચરવાની ઇચ્છા કરવી તેનું નામ ઇચ્છાકાર છે.

“મારા દ્વારા પ્રમાદ આદિને કારણે આ અકૃત્યનું જે સેવન થઈ ગયું છે, તે મારું અકૃત્ય નિષ્ફલ (મિથ્યા) હો,” આ પ્રકારનો મનમાં વિચાર કરવો તેનું નામ મિથ્યાકાર છે. જ્યારે કોઈ અકૃત્યનું સેવન થઈ જાય છે ત્યારે અવ્યપુરુષ મનમાં એવું ચિન્તવન કરે છે કે “આ મેં જે કયું છે તે ભગવાન દ્વારા અનુક્ત હોવાથી મિથ્યાભૂત છે, તેથી તે દુષ્કૃત્ય રૂપ જ છે. એવું દુષ્કૃત્ય મારા વડે સેવાઈ ગયું છે, પરંતુ હવેથી હું તેનું સેવન નહીં કરું,” આ પ્રકારનો વિચાર કરીને અસત્ ક્રિયાઓથી દૂર રહેવું-એવી ક્રિયાઓ કરનાં પાયાં રહેવાં, તેનું નામ મિથ્યાકાર છે.

तथाकारश्च-सूत्रव्याख्यानादौ प्रस्तुते गुरुभिः कस्मिंश्चिद् वचस्युदीरिते सति यथा
भवंतः प्रतिपादयन्ति तथैवैत” इत्येवं करणम्-वितर्कमकृत्यैव गुर्वज्ञाऽभ्युपगमि
इत्यर्थः ॥३॥ आवश्यक-ज्ञानाद्यर्थमुपाश्रयादवश्यं बहिर्गमने समुपस्थिते ‘अवश्यं
मिदं कर्तव्यमतोऽहं गच्छामि’ इत्येवं या गुरुं प्रति निवेदना सा आवश्यकीति
तात्पर्यम् ॥४॥ नैषेधिकी-निषेधे भाग-नैषेधिकी=उपाश्रयाद् बहिः कर्तव्यव्यापारं
परिसमाप्य पुनस्तत्रैव प्रविशतः साधोः शेषसाधूनामुत्त्रासादि-दोषपरिजिहीर्षया
बहिर्व्यापारनिषेधेन उपाश्रयप्रवेशमुचनम् ॥५॥ आप्रच्छना=“भदन्त ! करोमीद”

विचार कर भस्त्र किया भों से पीछे इटना उनसे दूर रहना इसका नाम
मिथ्याकार है । सूत्र व्याख्यान आदि जब हो रहा हो तब उस समय
गुरुजन जो कोई भी वचन उच्चरित करें तब ऐसा कहना कि जिस
प्रकार आप कहते हैं वह वैसा ही है । इसका नाम तथाकार है । तात्पर्य
यह है कि वितर्क किये बिना ही गुरुदेव की आज्ञा का स्वीकार करना
तथाकार है । आवश्यक कर्तव्य करने के लिये उपाश्रय से बहिर्गमन यदि
अवश्य कर्तव्य रूप में उपस्थित हो तब ” अवश्यं कर्तव्यमिदम् अतो
गच्छामि” ऐसा ख्याल करके गुरु से बाहर जाने की आज्ञा प्राप्त करने के
लिये निवेदन करना इसका नाम आवश्यकी है । उपाश्रय से बाहिर कर्तव्य
कर्म को समाप्त करके जब साधु उपाश्रय में प्रवेश करे, तब शेष साधु
जनों को मेरे द्वारा कोई उत्त्रास आदि न हो इस प्रकार के ख्याल से
उपाश्रय में अपने प्रवेश की सूचना देना इसका नाम नैषेधिकी है ।

सूत्रनुं व्याख्यान आदि न्याये याही-इहं-हेतु, त्वारे गुरुने-व्युत्ते।
कडे तेने स्वीकारी-लेवा-“हे गुरुदेव ! आपु ने कडे छे तेने प्रवृत्त छे-
आपनी प्रात यथार्थ छे, ” आ प्रवृत्तनां-व्युत्तेनुं उत्तरारण्य करवुं तेनुं-
नाम तथाकार छे. ओउते के-वितर्क कर्मा बिना न गुरुनी आज्ञाने, स्वीकार
करवुं तेनुं नाम तथाकार छे

आवश्यक-आवश्यक कर्तव्य करवाने माटे उपाश्रयभांथी पहार नवानुं
ने आवश्यक कर्तव्य इहे उपस्थित थाय, तो “अवश्यं कर्तव्यमिदम् अतो गच्छामि”
“आ कार्य अवश्य करवा योग्य छे, ” आ प्रवृत्तने विचार करीने पहार
नवानी आज्ञा प्राप्त करवा माटे गुरुनी आज्ञा निवेदन-करवुं तेनुं नाम
आवश्यक छे. उपाश्रयनी पहारना कार्यने पनावीने न्याये साधु उपाश्रयभां
प्रवेश करे, त्वारे ते पताना उपाश्रयभां पाछां करवानी सूचना आये छे.
आ पहारे उपाश्रयभां पुनः प्रवेशनी ने सूचना अपाय छे तेने नैषेधिकी कडे
छे. आभं करवानुं कारण्य ओ छे के तेना आगमनी प्रतीक्षा करतां आकीना

મિત્યેવં ગુરું પ્રતિ પ્રચ્છન્મ્ ॥૬॥ પ્રતિપ્રચ્છના=કિંચિત્કર્ત્તવ્યમુદ્દિશ્ય શિષ્યેણ પૃષ્ઠો ગુરુઃ તત્કાર્યં કર્તું દત્તાજ્ઞોઽપિ પુનઃ કાર્યારંભસમયે કથયતિ-સા પ્રતિપ્રચ્છના । અથવા-ગ્રામાન્તરગમનાય ગુરુણાદિષ્ટઃ શિષ્યો ગમનકાલે યત્પુનર્ગુરું પ્રતિપૃચ્છતિ સા પ્રતિપ્રચ્છના 'એવં પ્રત્યેકકાર્યેઽપિ बोध्यम्' ॥૭॥ છન્દના=સાધુઃ સ્વાનીતાશ-નાદ્યુપભોગવિપયે ગુર્વાજ્ઞયા 'परिमुञ्चयेदं कुरु मयि कृपाम्' इत्येवं-यथારાત્નિક-મન્યસાધૂન્ પ્રતિ આગ્રહં કરોતિ, સા છન્દના ॥૮॥ નિમન્ત્રણા='इमं-पदार्थमुप-

हे भदन्त । मैं यह काम करता हूँ इस प्रकार से गुरु महाराज से पूछना इसका नाम आप्रचछना है । किसी कर्तव्य कार्य को उद्देश्य करके जब शिष्य गुरुजन से उस कार्य को करने की आज्ञा प्राप्त करने के लिये पूछता है, और कार्य की आज्ञा होने पर भी कार्य करने के समय में गुरु से पुनः पूछना इसका नाम प्रतिप्रचछना है । अथवा दूसरे ग्राम में जाने के लिये गुरुद्वारा आदिष्ट हुआ शिष्य जब जाने लगे तो उसका कर्तव्य है कि वह जाते समय पुनः गुरु महाराज से पूछे-इस प्रकार के पूछने का नाम भी प्रतिप्रचछना है । यह प्रतिप्रचछना प्रत्येक कार्य में भी हो सकती है । साधु अपने जाग का आहार आदि के लिये यथा रात्रिक अन्य साधुओं से गुरु की आज्ञा प्राप्त कर जो ऐसा आग्रह

સાધુઓને તેના આગમનની ખબર પડે છે અને તેના દ્વારા ડોહને ઉત્ત્રામ ઉત્પન્ન થવાની સંભાવના રહેતી નથી.

આપ્રચ્છના-“હે ભગવન્ ! હું આ કામ કરું છું” આ પ્રકારે ગુરુ મહાજને પૂછવું તેનું નામ આપ્રચ્છના છે.

પ્રતિપ્રચ્છના-કોઈ કામ કરવા માટે શિષ્ય ગુરુ પાસે આજ્ઞા માગે, અને તે કાર્યની શરૂઆતે આજ્ઞા આપ્યા છતાં પણ કાર્ય કરતી વખતે આ પ્રમાણે ગુરુને ફરીથી પૂછવું તેનું નામ પ્રતિપ્રચ્છના છે.

અથવા-ખીજે ગામ જવાની ગુરુ દ્વારા આજ્ઞા મળી હોય, છતાં પણ ખીજે ગામ ગમન કરતી વખતે શિષ્યે ફરીથી ગુરુની આજ્ઞા લેવી જોઈએ આ પ્રકારે પૂર્વે આજ્ઞા પ્રાપ્ત થઈ ગયા બાદ ગમન કરતી વખતે ગુરુને ફરી જે પૂછવામાં આવે છે તેનું નામ પ્રતિપ્રચ્છના છે પ્રત્યેક કાર્યમાં પણ આ પ્રતિપ્રચ્છના સંભવી શકે છે.

છન્દના-પોતાના ભાગના આદાર દિને જોજનાદિ રૂપે ગ્રહણ કરવાની અન્ય સંયોગિત સાધુઓને વિનંતિ કરવી તેનું નામ છન્દના છે. ગુરુની આજ્ઞા લઈને તે સાધુ યથારાત્રિક અન્ય સાધુઓને જા પ્રમાણે આગ્રહ કરે

લભ્યાહં તુભ્યં દાસ્યામીતિ મે ભાવો ર્તતે ' इत्येवं पदार्थमाप्तेः पूर्वमेव यत्ताधू-
नामामन्त्रणं सा निमन्त्रणा । उक्तं च —

“પુવ્વગ્ગહિણ છંદણ નિમંત્રણા હોઈ અગ્ગહિણં”

છાયા—પૂર્વગૃહીતેન છંદના નિમન્ત્રણા મત્યગૃહીતેનેતિ ॥૯॥

તથા-ઉપસમ્પત્=“ત્વદીયોઽહ” મિત્યેવં રૂપેણ શ્રુતાઘર્થમન્યદીવસત્તાઽમ્યુપગમઃ
॥૧૦॥ इह धर्मस्य परानुपतापमूलत्वात् इच्छाकारस्य आज्ञाबलाभियोगलक्षणपरो-
पतापवर्जकत्वात् प्राधान्येन प्रथममुपन्यासः । परानुपतापकेनापि च कथंचित्सखलने

करता है कि सुझ पर कृपा करके इसे आप ग्रहण करिये—अपने उप-
योग में लाइये उसका नाम छंदना है । पदार्थ प्राप्ति के पहिले ही जो
अन्य साधुजनों से ऐसा कहना कि इस पदार्थ को लाकर मैं तुम्हें दूँगा
इसका नाम निमंत्रणा है । उक्तं च करके (पुव्वगगहिण) इत्यादि गाथा
द्वारा यही बात कही गई है । श्रुतादिके अर्थ को सीखने के लिये मैं
आपका ही हूँ इस प्रकार से अन्य साधु आदि की आधीनता स्वीकार
करना इसका नाम उपसंपत् है । धर्म परानुपतापमूलक होता है—
अर्थात् धर्म वही है कि जिस से—किसी भी प्राणी को कष्ट न हो ।
इच्छाकार इसी प्रकार का धर्म है । क्योंकि इसमें जिनव्रतादिकों को
आचरण करनेकी इच्छा की जाती है उसमें पर की आज्ञा और बला-
भियोग काम नहीं करता है । क्योंकि इन से दूसरे प्राणियों को संताप

છે—“કૃપા કરીને આપ આ આહારાદિને ગ્રહણ કરો અને તેનો ઉપયોગ
કરો.” આ પ્રકારની સાધુ સામાચારીનું નામ છંદના છે.

નિમંત્રણા—પદાર્થની પ્રાપ્તિ થયાં પહેલાં કેઈ પણ સાધુને કેઈ પણ
અન્ય સાધુ દ્વારા એવું જે કહેવામાં આવે છે કે અમુક પદાર્થ વહોરી
લાવીને હું આપને આપીશ, આ પ્રમાણે કેઈ પણ વસ્તુ લાવી આપવાનો
ભાવ છે તેમ કહેવું તેનું નામ નિમંત્રણા છે. “પુવ્વગગહિણ” ઇત્યાદિ
સૂત્રપાઠ દ્વારા આ વાત જ પ્રકટ કરવામાં આવી છે.

ઉપસંપત્—શ્રુતાદિનો અર્થ શીખવાને માટે “હું આપનો જ છું,”
આ પ્રકારનાં વચનો દ્વારા અન્ય સાધુની આધીનતાનો સ્વીકાર કરવો તેનું
નામ ઉપસંપત્ છે.

ધર્મ પરાનુપતાપમૂલક હોય છે એટલે કે ધર્મ તેને જ કહી શકાય કે
જેના દ્વારા કેઈ પણ પ્રાણીને કષ્ટ ન થાય ઇચ્છાકાર એજ પ્રકારનો ધર્મ
છે, કારણ કે તેમાં જે વ્રતાદિકોનું આચરણ કરવાની ઇચ્છા કરાય છે, તેમાં
અન્યની આજ્ઞા અથવા બળબળરી ચાલી શકતી નથી, કારણ કે એવી આજ્ઞા

મિથ્યાદુષ્કૃતં દાતવ્યમિતિ તદનન્તરં મિથ્યાકારસ્યોપન્યાસઃ । એતૌ ય ગુરુવચન-
પ્રતિપત્તાવેવ જ્ઞાતું શક્યૌ, ગુરુવચનં ચ તથાકારકરણેનૈવ સમ્યક્ પ્રતિપન્નં ભવતીતિ
તદનન્તરં તથાકારસ્યોપન્યાસઃ । ગુરુવચનં સ્વીકૃત્યાપિ શિષ્ય ઉપાશ્રયાદ્ બહિ-
ર્નિર્ગમનકાલે ગુરુ પૃથૈવ નિર્ગચ્છેત્, અતસ્તથાકારાનન્તરં ગુરુપૃચ્છારૂપાયા આવ-
શ્યવ્યકથનમ્ । બહિર્નિર્ગતઃ શિષ્યો નૈષેધિકાં પૂર્વકમેવોપાશ્રયે પ્રવિશેદિતિ આવ-
શ્યવ્યકથના અનન્તરં નૈષેધિકયાઃ કથનમ્ । ઉપાશ્રયે પ્રવિષ્ટઃ સાધુર્ગુરુમાપૃચ્છયૈવ સર્વ-

હોતા હૈં થાં હો સકતા હૈં । અતઃ વ્રતાદિકોં કીં ચાહના મૈં આત્મા કીં
નિજ હચ્છા-હીં કામ કરતી હૈં । હસલિયે હચ્છાકાર મૈં પ્રધાનતા હોને સે
ઉસકાં યહાં સર્વ પ્રથમ ઉપન્યાસ કિયા હૈં । દુસરોં કો અનુપતાપક હોને
વાલેં ભીં ગુરુજન દ્વારા કથંચિત્ વ્રતાદિક સે સ્વલિત હોને પર શિષ્યા-
દિજનોં કોં લિયે મિથ્યાદુષ્કૃત દિયા જાતા હૈં હસલિયે હચ્છાકાર કે
ધાર્મ્યે મિથ્યાદુષ્કૃત કા પાઠ રખા હૈં । હચ્છાકાર ઓર મિથ્યાદુષ્કૃત
સેં દોલોં ગુરુવચનોં પર વિશ્વાસ રખને પર યાં ઉનકી સ્વીકૃતિ કરને પર
હીં જ્ઞાતું શક્ય હૈં હસલિયે ગુરુમહારાજ કે વચનોં કા સ્વીકાર કિયા
જાનાં તથાકાર સે હીં જાના જાના હૈં હસલિયે મિથ્યાકારકે બાદ
તથાકાર કા પાઠ રખા હૈં । ગુરુવચન કો સ્વીકાર કરકે ભીં શિષ્ય
કાં કર્તવ્ય હૈં જિજ્ઞાસુ વહ ઉપાશ્રય સે બાહર જાવે તો ગુરુ સે પૂછકર
હીં જાવે હસ-વાત કો સ્પષ્ટ કરને કો લિયે તથાકાર કે બાદ આવશ્યકી

જાને, બુદ્ધિપરીક્ષવામાં આવે તો અન્ય જીવને સંતાપ થાય છે કે થઈ
શકે છે. તેથી વ્રતાદિકની ચાહનામાં આત્માની પોતાની જ ઈચ્છા કાર્યસાધક
બને છે, આ પ્રકારે ઈચ્છાકારમાં પ્રધાનતા હોવાને કારણે અહીં સૌથી પહેલાં
ઈચ્છાકારનો ઉપન્યાસ કરવામાં આવ્યો છે. બીજારે કોઈ સાધુ કોઈ અકૃત્યનું
મેરુત્ત કરે છે, અથવા વ્રતાદિકનો ભંગ કરે છે ત્યારે અન્ય જીવને કંટ
હીં, આપમારુ, એનાં ગુરુનો દ્વારા મિથ્યાદુષ્કૃત દેવામાં આવે છે, તેથી
ઈચ્છાકારનો ઉપન્યાસ કર્યા બાદ મિથ્યાકારનો ઉપન્યાસ કરવામાં આવ્યો છે.
ઈચ્છાકારનો મિથ્યાદુષ્કૃત આ બન્નેનો સદ્ભાવ ત્યારે જ હોઈ શકે છે
કે અન્ય ગુરુતાં પૃથને, શિષ્યને વિશ્વાસ હોય છે ગુરુના વચનોનો શિષ્ય
સ્વીકાર કરે છે, એ વાત તથાકાર વડે જ બાણી શકાય છે. તે કારણે મિથ્યા-
કારની તથાકારનો પહેલો રાખવામાં આવ્યો છે.

ગુરુના વચનો તથાકાર દ્વારા સ્વીકાર કરનાર શિષ્યે ઉપાશ્રયમાંથી કોઈ
આવશ્યક કાર્ય નિમિત્તે બહાર જવા માટે ગુરુની આજ્ઞા લેવી જોઈએ, એજ
વાતને ઈચ્છે દેવતાને માટે તથાકાર પછી આવશ્યકીનો પાઠ રાખવામાં આવ્યો

મનુતિષ્ઠેદિતિ નૈષેધિકયા અનન્તરમાપચ્છનાયાઃ કથનમ્ । ક્વિચિત્કાર્યં કર્તુમધ્યવ-
સિતઃ પ્રાપ્તાજ્ઞોઽપિ શિષ્યઃ કાર્યકરણસમયે ગુરું પુનઃ પૃચ્છેદિતિ ગુરોરનુમતિ
પ્રાપ્તુકામઃ કારણપદર્શનપૂર્વકં પુનઃપૃચ્છેદિતિ આપચ્છનાનન્તરં પ્રતિપચ્છનાયાઃ
કથનમ્ । પ્રતિપૃષ્ઠેન ગુરુણાઽનુજ્ઞાતઃ શિષ્યો સ્વસંવિમાગપ્રાપ્તાશનાઘાદારપરિમોગાર્થ
પર્યાયજ્યેષ્ઠક્રમેણ સાધુનામન્ત્રયેદિતિ પ્રતિપચ્છનાનન્તરં છન્દનાયા ઉપન્યાસઃ ।

કા પાઠ રખા હૈ । બાહર ગયા હુઆ શિષ્ય નૈષેધિકીપૂર્વક હી ઉપાશ્રય
મેં પ્રવેશ કરે હસ વિષય કો બતાને કે લિયે આવશ્યકી કે વાદ નૈષે-
ધિકી કા પાઠ રખા હૈ । ઉપાશ્રય મેં પ્રવિષ્ટ હુઆ શિષ્ય જો કુછ મી
કરે વહ ગુરુમહારાજ કી આજ્ઞા લેકર હી કરે હસ વિષય કો કહને કે
લિયે નૈષેધિકી કે વાદ આપચ્છના કા પાઠ રખા હૈ । કિસી કર્તવ્ય
કાર્ય કો કરને કે લિયે શિષ્ય ગુરુ મહારાજ સે પૂછે પરન્તુ વે યદિ ઉસ
કાર્ય કો કરને કી આજ્ઞા દેવે શિષ્ય તત્પશ્યાત્ પુનઃ આવશ્યક કાર્ય
કો કરને કે લિયે ગુરુ મહારાજ સે આવેદન કરે ઓર ઉસ
કાર્ય કો કરને કી ઉનસે આજ્ઞા પ્રાપ્ત કરને કે લિયે પૂછે યહ સંવંધ
બતાને કે લિયે આપચ્છના કે વાદ પ્રતિપચ્છના કા પાઠ રખા હૈ । ગુરુ
મહારાજ સે આજ્ઞા પ્રાપ્ત કર અશનાદિક કો લાયા હુઆ શિષ્ય ઉસકે
પરિભોગ કે લિયે સાર અન્ય સાધુઓં કો આમંત્રિત કરે હસ વાત કો

છે. ઉપાશ્રયની ખડાર ગયેલા સાધુએ નૈષેધિકીપૂર્વક જ ઉપાશ્રયમાં પ્રવેશ
કરવો જોઈએ, એ વાતને પ્રકટ કરવા માટે આવશ્યકીના પાઠ પછી નૈષેધિ-
કીના પાઠ રખવામાં આવ્યો છે. ઉપાશ્રયમાં પ્રવિષ્ટ થયેલો શિષ્ય જે કામ
કરે તે કામ તેણે ગુરુમહારાજની આજ્ઞા લઈને જ કરવું જોઈએ, એ વાત
પ્રકટ કરવાને માટે નૈષેધિકીના પાઠ પછી આપચ્છનાનો પાઠ રખવામાં આવ્યો
છે. કોઈ પણ કાર્ય કરવા માટે શિષ્ય ગુરુની આજ્ઞા માગે અને ગુરુ તે કાર્ય
કરવાની આજ્ઞા આપે, તે પછી થોડીવાર થોડીને તેણે ફરીથી કાર્યનો
આરંભ કરતી વખતે ગુરુની ફરીથી આજ્ઞા માગવી તે બતાવવા માટે
પ્રતિપચ્છના (ફરી પૂછવા)ને! પ્રસંગ ઉપસ્થિત થાય છે, તે કારણે સૂત્રકારે
આપચ્છના પછી પ્રતિપચ્છનાનો પાઠ મૂક્યો છે ગુરુમહારાજની આજ્ઞા લઈને
જે આહારાદિ સાધુ લાવ્યો હોય તેના ઉપલોગને માટે અન્ય સાધુઓને
માનપૂર્વક બોલાવવા જોઈએ, એ વાતને પ્રકટ કરવા માટે પ્રતિપચ્છના પછી
છન્દનાનો પાઠ રખવામાં આવ્યો છે.

છન્દના તુ ગૃહીત અશનાદો સંભવેત્, અગૃહીતે તુ નિમન્ત્રણૈવ, અતઃછન્દનાયા
અનન્તરં નિમન્ત્રણાયા ઉપન્યાસઃ । ૧ ગુરુપસત્તિમન્તરેણ=ગુરુપામીપ્યં વિના ઇચ્છા-
કારાદિનિમન્ત્રણાન્તા સર્વાઽપિ સામાચારી ગુરુપસત્તિમન્તરેણ=ગુરુસામીપ્યં વિના
ન જ્ઞાયતે इति सर्वान्તે उपसम्पद उपन्यासः १ । इति पूर्वानुपूर्वीत्वे हेतुर्बोध्यः ।
उपसंहरन्नाह—सैषा पूर्वानुपूर्वीति । पश्चानुपूर्वी तु उपसम्पदादीच्छाकारान्ता बोध्या ।

કહને કે લિયે પ્રતિપ્રચ્છના કે બાદ છન્દના કા પાઠ રખા હૈ । ગૃહીત
અશનાદિક મેં હી છન્દના હોતી હૈ પરન્તુ જો અગૃહીત અશનાદિક હૈ
उनमें तो निमंत्रणा ही होती है । इसलिये छन्दना के बाद निमंत्रणा का
पाठ रखा है । इच्छाकार से लगाकर निमंत्रणा तक की जितनी भी
सामाचारी हैं वे सब गुरु महाराज को निकटना के बिना नहीं जानी
जा सकती है इस बात को कहने के लिये अन्त में उपसंपत् का उपन्यास
क्रिया है । इस प्रकार इस सामाचारी के पूर्वानुपूर्वीत्व में यह सब
हेतु जानना चाहिये ।

(સે તં પુઞ્વાણુપુઞ્વી) હસ પ્રકાર યહ પૂર્વાનુપૂર્વી હૈ । (સે કિં તં
પચ્છાણુપુઞ્વી) હે ભદન્ત ! પશ્ચાનુપૂર્વી સામાચારી કયા હૈ ?

ઉત્તર—(ઉપસંપદા જાવ ઇચ્છામારો) ઉપસંપદા સે ઇચ્છાકાર પર્યન્ત
(પચ્છાણુપુઞ્વી) પશ્ચાનુપૂર્વી હૈ । (સે કિં તં અણાણુપુઞ્વી ?) હે ભદન્ત !

ગૃહીત અશનાદિના વિષયમાં જ છન્દના સંભવી શકે છે, પરન્તુ અગૃ
હીત અશનાદિકના વિષયમાં નિમંત્રણા સંભવી શકે છે, તે કારણે છન્દનાના
પાઠ પછી નિમંત્રણાનો પાઠ રાખવામાં આવ્યો છે ઇચ્છાકારથી લઈને નિમં-
ત્રણા પર્યન્તની જેટલી સામાચારી છે, તેમને જાણવાને માટે ગુરુની નિકટ-
તાની જરૂર રહે છે, એ વાતને પ્રકટ કરવા માટે ત્રીથી છેલ્લો ઉપસંપત્નો
ઉપન્યાસ કરવામાં આવ્યો છે. સામાચારીમાં ઇચ્છાકાર આદિ ક્રમે પહેલી જે
સ્થાપના કરવામાં આવે છે તેનું નામ પૂર્વાનુપૂર્વી છે. આ પહેલે આ પ્રકારનો
ક્રમ આપવાનું કારણ ઉપર પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે. (સે તં પુઞ્વાણુપુઞ્વી)
આ પ્રકારનું પૂર્વાનુપૂર્વી સામાચારીનું સ્વરૂપ છે.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પચ્છાણુપુઞ્વી ?) હે ભગવન્ ! પશ્ચાનુપૂર્વી સામાચારીનું
સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ઉપસંપદા જાવ ઇચ્છામારો) ઉપસંપદાથી લઈને ઇચ્છાકાર પર્ય-
ન્તના બિચ્છા ક્રમમાં પહેલો ઉપન્યાસ (સ્થાપના) કરવો (પચ્છાણુપુઞ્વી)
તેનું નામ પશ્ચાનુપૂર્વી છે.

તથા-ઈચ્છાકારાદ્યુપસંપદન્તાનાં પદાનામન્યોઽન્યાભ્યાસો દ્વિલપોતઃ-આગ્રન્તપદ-
દ્વયવિવક્ષામપહાય ચે ભજ્ઞાસ્તે-અનાનુપૂર્વી વોધ્યાઃ । પ્રકૃતમુપસંહરન્નાહ-સૈવા
સામાચર્યાનુપૂર્વીતિ ॥સૂ૦ ૧૪૧॥

અથ ભાવાનુપૂર્વીમાહ—

મૂઢ્ય-સે કિં તં ભાવાણુપુઢ્વી? ભાવાણુપુઢ્વી તિવિહા પળ્ળત્તા,
તં જહા-પુઢ્વાણુપુઢ્વી પચ્છાણુપુઢ્વી અણાણુપુઢ્વી । સે કિં તં
પુઢ્વાણુપુઢ્વી? પુઢ્વાણુપુઢ્વી-ઉદણ ૧, ઉવસમિણ ૨, સ્વાહણ ૩,
સ્વઓવસમિણ ૪, પારિણામિણ ૫, સંનિવાહણ ૬, । સે તં પુઢ્વાણુ-
પુઢ્વી । સે કિં તં પચ્છાણુપુઢ્વી? પચ્છાણુપુઢ્વી સંનિવાહણ જાવ
ઉદહણ । સે તં પચ્છાણુપુઢ્વી । સે કિં તં અણાણુપુઢ્વી? અણા-

અનાનુપૂર્વી કયા હૈ? (અણાણુપુઢ્વી) અનાનુપૂર્વી સામાચારી હસ પ્રકાર
સે હૈ (અયાણ ચેવ અગાહયાણ ઉગુત્તરિયાણ દસ મચ્છગયાણ સેઢીણ અળ્ળ-
મન્નન્માસો દુરુઢ્વળો) ઇચ્છાકાર સે લેકર ઉપસંપદા તક્ક કે દશ પદો
કા એક એક અધિક સંખ્યા કર કે પરસ્પર મેં ગુણા કરના ચાહિયે ઓર
હસ પ્રકાર સે જો રાશિ ઉત્પન્ન હોવે ઉસમેં સે લાદિ અન્ત કે ભંગ દ્વય
કી વિવક્ષા કો કમ કર દેના ચાહિયે । અન્ત મેં જિતને ભંગ બચતે હેં
ઉન ભંગાત્મક ચહ અનાનુપૂર્વી સામાચારી હોતી હૈ । (સે તં સામાચારી
આણુપુઢ્વી) હસ પ્રકાર ચહ સામાચારી આનુપૂર્વી હૈ ॥સૂ૦ ૧૪૧॥

પ્રશ્ન-(સે કિં ત અણાણુપુઢ્વી) હે લગવન્! અનાનુપૂર્વી સામાચારીનું
સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર-(અણાણુપુઢ્વી) અનાનુપૂર્વી સામાચારીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે-
(અયાણ ચેવ અગાહયાણ ઉગુત્તરિયાણ દસમચ્છગયાણ સેઢીણ અળ્ળમન્નન્માસોદુરુઢ્વળો)
ઈચ્છાકારથી લઈને ઉપસંપદા પર્યન્તના દસ પદોનો એક એક અધિક સંખ્યા
લઈને પરસ્પરમાં ગુણાકાર કરવો જોઈએ આ પ્રકારે જે રાશિ પ્રાપ્ત થાય
તેમાંથી અદિ અને અન્તના બે લાંગોની વિવક્ષા બાદ કરી નાખવી જોઈએ
આ બે લાંગો બાદ જતાં જેટલા લાંગો બાકી રહે છે તેટલા લાંગોરૂપ આ
અનાનુપૂર્વી સામાચારી હોય છે. (સે તં સામાચારી આણુપુઢ્વી) સામાચારી
આનુપૂર્વીનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે. ॥સૂ૦ ૧૪૧॥

ણુપુઞ્વી-एयाए चे३ एगाइयाए एगुत्तरियाए छ गच्छगयाए
सेढीए अन्नमन्नवभासो दुरूवूणो। से तं अणाणुपुञ्वी। से तं
भावाणुपुञ्वी। से तं आणुपुञ्वी। आणुपुञ्वीति पयं समत्तं ॥सू. १४२॥

છાયા—અથ કા સા ભાવાનુપૂર્વી ? ભાવાનુપૂર્વી ત્રિવિધા પ્રજ્ઞપ્તા, તથા—
પૂર્વાનુપૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વી અનાનુપૂર્વી । અથ કા સા પૂર્વાનુપૂર્વી ? પૂર્વાનુપૂર્વી-ઔદ-
યિકઃ ૧, ઔપશમિકઃ ૨, ક્ષાયિકઃ ૩, ક્ષાયોપશમિકઃ ૪, પારિણામિકઃ ૫, સાન્નિ-
પાતિકઃ ૬ । સૈવા પૂર્વાનુપૂર્વી । અથ કા સા પશ્ચાનુપૂર્વી ? પશ્ચાનુપૂર્વી-સાન્નિપાતિકો
યાવદૌદયિકઃ । સૈવા પશ્ચાનુપૂર્વી । અથ કા સા અનાનુપૂર્વી ? અનાનુપૂર્વી-एत-
स्यामेव एकादिकायाम् एकोत्तरिकायां पङ्गगच्छगतायां श्रेण्यामन्योऽन्याभ्यासो
द्विरूपोनः । સૈવા અનાનુપૂર્વી । સૈવા ભાવાનુપૂર્વી । સૈવા આનુપૂર્વી । આનુપૂર્વીતિ
પદં સનાપ્તમ્ ॥સૂ. ૧૪૨॥

ટીકા—‘ સે કિં તં ’ इत्यादि—

અથ કા સા ભાવાનુપૂર્વી ? इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरयति-भावानुपूर्वी-
भावाः=भाव्यन्ते विन्त्यन्ते पदार्था यैस्ते भावाः-अन्तःकरणपरिवर्तिविशेषाः ।
भूयते तेन तेन रूपेणाऽऽत्मना यैस्ते भावाः जीवस्य परिणामविशेषा औदयिकादयः,
तेषामानुपूर्वी=भावानुपूर्वी । सा पूर्वानुपूर्व्यादिभेदैस्त्रिविधा प्रज्ञप्ता । तत्र-पूर्वानु-

अथ सूत्रकार भावानुपूर्वी का कथन करते हैं—

‘ સે કિં તં ભાવાણુપુઞ્વી ? ’ इत्यादि

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ભાવાણુપુઞ્વી ?) हे भदन्त । पूर्वप्रक्रान्त भावा-
नुपूर्वी क्या है ?

उत्तर—(भावानुपुञ्वी) भावानुपूर्वी (तिविहा) तीन प्रकार की
(पणजप्ता) कही गई है । (तं जहा) उसके वे तीन प्रकार ये हैं—(पुञ्वाणु-
पुञ्वी) १ पूर्वानुपूर्वी (पच्छाणुपुञ्वी) २ पश्चानुपूर्वी और (अणाणुपुञ्वी)

હવે સૂત્રકાર ભાવાનુપૂર્વીનું નિરૂપણ કરે છે—

“ સે કિં તં ભાવાણુપુઞ્વી ? ” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ભાવાણુપુઞ્વી ?) हे भदन्त । पूर्वप्रक्रान्त भावानुपूर्वीनું
સ્વરૂપ કયું છે ?

જિતર—(भावानुपुञ्वी त्रिविहा पणजप्ता-संज्ञहा) ભાવાનુપૂર્વીના ત્રીવિ પ્રમાણે
ત્રણ પ્રકાર દર્શાવે છે—(पुञ्वाणुपुञ्वी) (१) पूर्वानुपूर्वी, (पच्छाणुपुञ्वी) (२)
पश्चानुपूर्वी અને (अणाणुपुञ्वी) (३) अनानानुपूर्वी.

પૂર્વા-ઔદયિકઃ ઔપશમિકઃ ક્ષાયિકઃ ક્ષાયોપશમિકઃ પારિણામિકઃ સાન્નિપાતિકશ્ચેતિ પટ્ । ઔદયિકાદિસ્વરૂપસ્ય પુરસ્તાદ વક્ષ્યમાણત્વેનાત્ર તેષાં સ્વરૂપનિરૂપણં ન ક્રિયતે । અત્ર શાસ્ત્રે નારકાદિગતિરૌદયિકો ભાવ इति વક્ષ્યતે ।

૩ અનાનુપૂર્વી । જિનકે દ્વારા પદાર્થોં કા વિચાર ક્રિયા જાતા હૈં ઉનકા નામ ભાવ હૈં । ઔર યે ભાવ અન્તઃકરણ કી પરિણતિ વિશેષરૂપ હૈં । અથવા આત્મા ઉસ ૨ રૂપ સે હોતા હૈં વે ભાવ હૈં । એસે વે ભાવ જીવ કે પરિણામ વિશેષરૂપ હૈં । ઔર યે પરિણામ વિશેષ ઔદયિક આદિ રૂપ હોતે હૈં । इन परिणाम रूप भावों की आनुपूर्वी का नाम भावानुपूर्वी है । (से किं तं पुत्राणुपुत्री?) हे भदन्त ! भावानुपूर्वी का भेद जो पूर्वानुपूर्वी है उसका क्या स्वरूप है अर्थात् वह क्या है ?

ઉત્તર--(પુત્રાણુપુત્રી) વહ પૂર્વાનુપૂર્વી' હસ પ્રકાર સે હૈ--(ઉદ્દહ) ઔદયિક (ઉવસમિ) ઔપશમિક (સ્વાહ) ક્ષાયિક (સ્વઓવસમિ) ક્ષાયોપશમિક (પારિણામિ) પારિણામિક (સંનિવાહ) ઔર સાન્નિપાતિક इन औदयिक आदिकों का स्वरूप आगे कहा जायगा, इसलिये यहां उसका स्वरूप निरूपण नहीं किया है । इस शास्त्र में नारकादि रूप चारों गतियां औदयिक भाव रूप से कही जावेंगी इसलिये औद-

જેમના દ્વારા પદાર્થોનો વિચાર કરવામાં આવે છે, તેમનું નામ ભાવ છે. આ ભાવો અન્તઃકરણની પરિણતિવિશેષ રૂપ (પરિણામ રૂપ) હોય છે. અથવા આત્મા જે જે રૂપે હોય છે તે તે રૂપનું નામ ભાવ છે. એવાં તે ભાવો જીવના પરિણામવિશેષ રૂપ હોય છે. અને તે પરિણામવિશેષ ઔદયિક આદિ રૂપ હોય છે તે પરિણામો રૂપ ભાવોની આનુપૂર્વીનું નામ ભાવાનુપૂર્વી છે.

પ્રશ્ન--(સે કિં તં પુત્રાણુપુત્રી?) હે ભગવન્ ! ભાવાનુપૂર્વીનો જે પૂર્વાનુપૂર્વી નામનો પહેલો ભેદ છે, તેનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે ?

ઉત્તર--(પુત્રાણુપુત્રી) તે પૂર્વાનુપૂર્વી આ પ્રકારની છે (ઉદ્દહ) ઔદયિક, (ઉવસમિ) ઔપશમિક, (સ્વાહ) ક્ષાયિક, (સ્વઓવસમિ) ક્ષાયોપશમિક, (પારિણામિ) પરિણામિક, (સંનિવાહ) અને સાન્નિપાતિક, આ ક્રમે પહેલો ઉપન્યાસ કરવો તેનું નામ પૂર્વાનુપૂર્વી ભાવાનુપૂર્વી છે.

આ ઔદયિક આદિ પહેલો અર્થ સૂત્રકર દ્વારા આગળ પ્રકટ કરવામાં આવશે, તેથી અહીં તેમના સ્વરૂપનું નિરૂપણ ક્યું નથી આ શાસ્ત્રમાં નરકાદિ રૂપ ચારે ગતિઓનું ઔદયિક ભાવ રૂપે પ્રતિપદન કરવામાં આવશે તેથી ઔદયિક ભાવ રૂપ નરકાદિ ગતિઓનો સદ્ભાવ હોય, તો જ બાકીના

ઔદાયિકભાવરૂપનાસ્કાદિગતૌ સત્યામેવ ઔપશમિકાદયઃ શેષભાવા યથાસમ્ભવં પ્રાદુર્ભવન્તીતિ શેષભાવાધારત્વેન ઔદયિકસ્ય પ્રાધાન્યમ્ । અત એવ પ્રથમં તદુપ-
 ન્યાસઃ । તતઃ શેષાણાં પશ્ચાનામપિ ભાવાનાં મધ્યે ઔપશમિકસ્ય સ્તોકવિષયત્વાત્
 સ્તોકતયા પ્રતિપાદયિષ્યતે इति સૂચીકટાહન્યાયેન ઔદાયિકાનન્તરમવશિષ્ટેષુ
 પશ્ચસુ મધ્યે પૂર્વમૌપશમિકસ્યોપન્યાસઃ । ઔપશમિકાપેક્ષયાઽધિકવિષયત્વાત્ક્ષાયિક-
 કસ્ય તદનન્તરમુપન્યાસઃ । તતશ્ચ વિષયાણાં તારતમ્યમાશ્રિત્ય ક્રમેણ ક્ષાયોપશ-
 મિકસ્ય પારિણામિકસ્ય ચોપન્યાસઃ । સાન્નિપાતિકભાવો હિ પૂર્વોક્તભાવાનાં
 દ્વિકાદિસંયોગેન સમુત્પદ્યતે इति સર્વાન્તે સાન્નિપાતિકભાવોપન્યાસઃ । इयं ભાવાનાં
 યિક ભાવરૂપ નરકાદિ ગતિયોં કે હોને પર હી શેષ ઔપશમિક આદિ
 ભાવ યથાસંભવ ઉત્પન્ન હોતે હૈં । હસલિયે શેષ ભાવોં કે આધારભૂત
 હોને સે ઔદયિક ભાવ મેં પ્રધાનતા હૈ । હસી કારણ હસકા સર્વપ્રથમ
 સૂત્રકારને વિન્યાસ કિયા હૈ । હસ કે બાદ અવશિષ્ટ પાંચોં ભાવોં કે
 વીચ મેં ઔપશમિક ભાવ સ્તોક વિષયવાલા હૈ હસલિયે વહ સ્વયં
 સ્તોક હૈ હસ પ્રકાર સે આગે પ્રતિપાદિત કિયા જાવેગા, અતઃ સૂચીક-
 ટાહન્યાય સે ઔદયિક કે અનન્તર અવશિષ્ટ પાંચ ભાવોં કે વીચમેં
 સે પહિલે ઔપશમિક કા પાઠ કિયા ગયા હૈ । ઔપશમિક કી અપેક્ષા
 અધિક વિષયવાલા હોને સે ક્ષાયિક કા પાઠ ઔપશમિક કે બાદ કિયા
 ગયા હૈ । હસ કે અનન્તર વિષયોં કી તરતમતા કા આશ્રય કરકે ક્રમ
 સે ક્ષાયોપશમિક ઔર પારિણામિક કા પાઠ કિયા ગયા હૈ । હન પૂર્વોક્ત
 ભાવોં કે દ્વિકાદિ સંયોગ સે સાન્નિપાતિક ભાવ ઉત્પન્ન હોતા હૈ હસલિયે

ઔપશમિક આદિ ભાવો ઉત્પન્ન થઈ શકે છે આ પ્રકારે બાકીના ભાવોના
 અધાર રૂપ હોવાને લીધે ઔદયિક ભાવમાં પ્રધાનતા છે. તેથી જ સૂત્રકારે
 તેનો વિન્યાસ સૌથી પહેલાં કર્યો છે—એટલે કે તેને સૌથી પહેલું સ્થાન
 અપ્યું છે. બાકીના પાંચ ભાવોમાંનો ઔપશમિક ભાવ સ્તોક (અર્થ) વિષય-
 વાળો હોવાથી તે પોતે જ સ્તોક છે. (આ વાતનું સૂત્રકાર આગળ પ્રતિપા-
 દન કરશે) તેથી સૂચીકટાહ ન્યાયે ઔદયિક ભાવ પછી ઔપશમિક ભાવને
 મૂકવામાં આવ્યો છે. ઔપશમિક ભાવ કરતાં અધિક વિષયવાળો હોવાને
 કારણે ક્ષાયિકભાવને ઔપશમિક ભાવ પછી મૂકવામાં આવેલ છે. વિષયોની
 અધિકતરતા અને અધિકતમતાને કારણે ક્ષાયિક ભાવ પછી અનુક્રમે ક્ષાયો
 પશમિક અને પારિણામિક ભાવોને મૂકવામાં આવ્યા છે. આ પૂર્વોક્ત ભાવોના
 દ્વિનયોગ અદિથી સાન્નિપાતિક ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી સૌથી છેલ્લે

પૂર્વાનુપૂર્વી । સૈષાં પૂર્વાનુપૂર્વીતિ । પશ્ચાનુપૂર્વી તુ સાન્નિપાતિકાઔદયિકાન્તા
બોધ્યા । તથા-ઔદયિકાદિ સાન્નિપાતિકાન્તાનાં ષણ્ણાં પદાનામન્યોન્યાભ્યાસો
દ્વિરુપોનઃ-આઘન્તપદદ્વયવિવક્ષામપહાય યે મજ્ઞાસ્તદાત્મિકાઽનાનુપૂર્વી બોધ્યા ।

સબ કે અન્ત મેં સાન્નિપાતિક ભાવ કા ઉપન્યાસ કિયા ગયા હૈ । (સે
તં પુ૦) હસ પ્રકાર યહ ભાવોં કી પૂર્વાનુપૂર્વી હૈ । (સે કિં તં પચ્છાણુ-
પુઁવી) હે મદન્ત ! પશ્ચાનુપૂર્વી કયા હૈ ? (પચ્છાણુપુઁવી) પશ્ચાનુપૂર્વી હસ
પ્રકાર સે હૈ-(સંનિવાહૈ જાવ ઉદહૈ) સાન્નિપાતિક ભાવ સે લેકર
ઔદયિક ભાવ તક પશ્ચાનુપૂર્વી હૈ । (સે તં પચ્છાણુપુઁવી) યહી પૂર્વપ્રકા-
ન્ત ભાવોં કી પશ્ચાનુપૂર્વી હૈ । (સે કિં તં અણાણુપુઁવી ?) હે મદન્ત !
ભાવોં કી અનાનુપૂર્વી કયા હૈ ? (અયાૈ ચેવ અગાહ્યાૈ અગુત્તરિયાૈ
છ ગચ્છગયાૈ સેઢીૈ અન્નમન્નઃભાસો દુરૂઘ્ણો) ઔદયિકાદિ સાન્નિ-
પાતિકાન્ત છહ પદોં કો પરસ્પર મેં ગુણા કરના ઓર ગુણિત રાશિરૂપ
ભાગોં મેં સે આદિ અન્ત કે પદદ્વય કી વિવક્ષા કો કમ કરના હસ
પ્રકાર જો મંગ વચતે હૈં ડન મંગ સ્વરૂપ યહ ભાવોં કી (અણાણુ પુ૦)
અનાનુપૂર્વી હૈ । (સે તં અણાણુપુઁવી) યહી પૂર્વપ્રકાન્ત અનાનુપૂર્વી હૈ ।
(સે તં ભાવાણુપુઁવી) હસ પ્રકાર યહ ભાવાનુપૂર્વી હૈ । (સે તં આણુપુઁવી)

સાન્નિપાતિક ભાવનો ઉપન્યાસ કરવામાં આવ્યો છે. (સે તં પુઁવાણુપુઁવી) આ
પ્રકારની આ ભાવોની પૂર્વાનુપૂર્વી છે.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં પચ્છાણુપુઁવી ?) હે ભગવન્ ! ભાવાનુપૂર્વીની પશ્ચાનુપૂ-
ર્વીનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(પચ્છાણુપુઁવી) પશ્ચાનુપૂર્વીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે-(સંનિવાહૈ
જાવ ઉદહૈ) પૂર્વાનુપૂર્વી કરતાં ઊલટા ક્રમના-એટલે કે સાન્નિપાતિક ભાવથી
લઈને ઔદયિકભાવ પર્યન્તના-ભાવે ને પશ્ચાનુપૂર્વી કહે છે.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં અણાણુપુઁવી ?) હે ભગવન્ ! ભાવોની અનાનુપૂર્વીનું
સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(અયાૈ ચેવ અગાહ્યાૈ અગુત્તરિયાૈ છ ગચ્છગયાૈ સેઢીૈ અન્નમન્ન-
ઃભાસો દુરૂઘ્ણો) ઔદયિકથી લઈને સાન્નિપાતિક પર્યન્તના છ પદોનો પરસ્પ-
રની સાથે ગુણાકાર કરવો, અને તેને લીધે જે રાશિરૂપ ભાંગાઓ આવે
તેમાંથી આદિ અને અન્તના બે ભાંગાઓ બાદ કરવાથી જે ભાંગાઓ બાકી
રહે છે, તે ભાંગાઓ રૂપ (અણાણુપુઁવી) અનાનુપૂર્વી સમજવી.

(સે તં ભાવાણુપુઁવી) આ પ્રકારની ભાવાનુપૂર્વી હોય છે (સે તં આણુ-
પુઁવી) આ પ્રકારે નામાનુપૂર્વીથી લઈને ભાવાનુપૂર્વી પર્યન્તની દસે આનુપૂ-
ર્વીઓના સ્વરૂપનું નિરૂપણ અહીં પૂરું થાય છે, એવાત સૂચિત કરવા માટે

प्रकृतमुपसंहरन्नाह-सैषा भावानुपूर्वीति । नामानुपूर्वादि भावानुपूर्व्यन्ता दशा-
ऽप्यानुपूर्व्यः समुद्दिष्टा इति सूचयितुमाह-सैषा आनुपूर्वीति । इत्थमुपक्रमस्य
आनुपूर्वीनामकः प्रथमो भेदः समुद्दिष्ट इति सूचयितुमाह-आनुपूर्वीति पदं
समाप्तमिति ॥सू० १४२॥

सम्पत्त्युपक्रमस्य नामाभिधेयं द्वितीयं भेदं व्याख्यातुमाह—

मूलम्-से किं तं णामे ? णामे दसविहे पणत्ते, तं जहा-
एगणामे, दुणामे तिणामे, चउणामे, पंचणामे, छणामे, सत्त-
णामे, अट्टणामे, नवणामे, दसगामे ॥सू० १४३॥

छाया-अथ किं तन्नाम? नाम दशविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-एकनाम, द्विनाम, त्रिनाम,
चतुर्नाम, पञ्चनाम, षण्णाम, सप्तनाम, अष्टनाम, नवनाम, दशनाम ॥सू० १४३॥

टीका—‘ से किं तं ’ इत्यादि—

शिष्यः पृच्छति—अथ किं तन्नाम? इति । उत्तरयति-नाम-जीवगतज्ञानादिप-
र्यायाजीवगतरूपादिपर्यायानुसारेण प्रतिवस्तुभेदेन नमति=तदभिधायकत्वेन वक्षते
यहां तक नामानुपूर्वी से लेकर भावानुपूर्वी तक जो दश आनुपूर्वियां हैं
वे सब प्रतिपादित हो चुकी इसकी सूचना के लिये सूत्रकारने “ से तं
आणुपुर्वी ” यह कहा है । (आणुपुर्वीतिपयं समत्तं) इस प्रकार यहां
तक उपक्रम का यह आनुपूर्वी नाम का प्रथम भेद कथित हो चुका
अर्थात् समाप्त हुआ ॥सू० १४२॥

अथ सूत्रकार उपक्रम का जो द्वितीय भेद नाम नाम का है उसकी
व्याख्या करने के लिये कहते हैं कि-“से किं तं णामे ?” इत्यादि ।

शब्दार्थ — (से किं तं णामे) हे अदन्त ! पूर्वप्रकान्त नाम क्या
है ? (णामे दसविहे पणत्ते)

सूत्रकारे “ से तं आणुपुर्वी ” आ प्रकारने सूत्रपठ भूयो छे (आणुपुर्वी-
त्पियं समत्तं) आ प्रकारे उपक्रमना आनुपूर्वी नामना प्रथम भेदतुं निरूपण
अस्तीं समाप्त आय छे ॥सू० १४२॥

उपक्रमने भीले भेद ‘ नाम ’ छे हुवे सूत्रकार ते नामतुं निरूपण करे छे-

“ से किं तं णामे ? ” इत्यादि—

शब्दार्थ—(से किं तं णामे ?) हे अदन्त ! उपक्रमना भीले प्रकार ३५
नाम शुं छे ।

इति नाम-वस्त्वभिधानमित्यर्थः । उक्तंच-

“जं वत्थुणोऽभिहाणं पज्जयभेयाणुसारि तं णामं ।

पइभेअं जं नमई. पइभेयं जाइ जं भणिअं” ॥१॥

छाया—यद्वस्तुनोऽभिधानं, पर्ययभेदानुसारि तन्नाम ।

प्रतिभेदं यन्नमति, प्रतिभेदं याति यद् भणितम् ॥इति॥

एवंविधमिदं नाम दशविधं प्रज्ञप्तम् । दशविधत्वमाह-तद्यथा-एकनाम द्विनाम त्रिनामेत्यादि । तत्र-येन केन एकेनापि सता नाम्ना सर्वेऽपि विवक्षितपदार्था अभिधातुं शक्यन्ते, तदेकनाम बोध्यम् । एवं याभ्यां द्वाभ्यां नामभ्यां सर्वेऽपि

उत्तर — यह नाम दश प्रकार का कहा गया है । जीवगत ज्ञाना-
दिक पर्यायों और अजीवगत रूपादिक पर्यायों के अनुसार जो प्रतिव-
स्तु के भेद से नमता है — झुकता है — अर्थात् उनका अभिधायक-
वाचक होना है वह नाम है । उक्तंच-करके “ जं वत्थुणोऽभिहाणं”
इत्यादि गाथा द्वारा यही नाम शब्द की व्युत्पत्ति स्पष्ट की है । (तं जहा)
नाम के दस प्रकार ये हैं — (एगणामे दुणामे तिणामे चउणामे, पंच-
णामे, छणामे, सत्तणामे, अट्ठणामे ‘नवणामे, दसणामे) एक नाम, दो-
नाम, तीन नाम, चार नाम, पांच नाम, छह नाम, सात नाम, आठ-
नाम, नौ नाम, और दश नाम । जिस एक नाम से समस्त पदार्थों का
कथन हो जाता है वह एक नाम है । जैसे सत्, सत् इस नाम से सम-
स्त पदार्थों का युगपत् कथन हो जाता है क्योंकि ऐसा कोई भी पदार्थ

ઉત્તર-(ણામે દસવિધે ધણતે) તે નામના દસ પ્રકાર કહ્યા છે જીવગત જ્ઞાનાદિક પર્યાયો અને અજીવગત રૂપાદિક પર્યાયો પ્રમાણે જે પ્રત્યેક વસ્તુના ભેદથી નમે છે-ઝૂકે છે-એટલે કે તેમનું અભિધાયક (વાચક) હોય છે, તેનું નામ “ નામ ” છે “ જં વત્થુણોઽભિહાણં ” ઇત્યાદિ ગાથા દ્વારા ‘ નામ ’ શબ્દની ઉપર પ્રમાણેની વ્યુત્પત્તિ જે પ્રકટ કરવામા આવી છે.

(તંજહા) નામના દસ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે-(એગણામે, દુણામે, તિણામે, ચઉણામે, પંચણામે, છણામે, સત્તણામે, અટ્ઠણામે, નવણામે, દસણામે) (૧) એકનામ, (૨) બે નામ, (૩) ત્રણ નામ, (૪) ચાર નામ, (૫) પાંચ નામ, (૬) છ નામ, (૭) સાત નામ, (૮) આઠ નામ, (૯) નવ નામ અને (૧૦) દસ નામ.

જે એક નામથી સમસ્ત પદાર્થોનું કથન થઈ જાય છે, તેને “ એકનામ ” કહે છે. જેમ કે “ સત્ ” “ સત્ ” આ નામથી સમસ્ત પદાર્થોનું એક સાથે કથન થઈ જાય છે, કારણ કે એવો કોઈ પણ પદાર્થ નથી કે જે આ સત્

વિવક્ષિતપદાર્થા અભિધાતું શક્યન્તે તદ્ દ્વિનામ । તથા—યૈસ્તુ ત્રિભિર્નામભિઃ
સર્વેઽપિ વિવક્ષિતપદાર્થા અભિધાતું શક્યન્તે તત્ ત્રિનામ । एवं रीत्या चतुर्नामादि-
दशनामान्तविषयेऽपि बोध्यम् ॥सू० १४३॥

તત્રોદ્દેશકમેણ નિર્દેશન્ પ્રથમમેકનામસ્વરૂપં નિર્દેશતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં ઇગળામે? ઇગળામે—ળામાણિ જાણિ કાણિ
વિ, દ્વવાણ ગુણાણ પઞ્જવાણ ચ । તેસિં આગમનિહસે, નામાનિ
પરૂવિયા સપ્પણા ॥૧॥ સે તં ઇગળામે ॥સૂ૦ ૧૪૪॥

છાયા—અથ કિં તદેક નામ? એકનામ—નામાનિ યાનિ કાન્યપિ દ્રવ્યાણાં
ગુણાનાં પર્યવાણાં ચ । તેપામાગમનિકષે—નામેતિ પ્રરૂપિતા સંજ્ઞા । તદેત-
દેકનામ ॥સૂ૦ ૧૪૪॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि

अथ किं तदेकनाम? इति शिष्यपश्च । उत्तरयति—एकनाम—एकं सत् नामेति
विग्रहः । तत्स्वरूपमेवाह—‘णामाणि जाणि’ इति गाथया । अयं भावः=द्रव्याणां=

नहीं है जो इस सत् नाम रहित हो । अतः सत् यह एक नाम है । इसी
प्रकार जिन दो नामों से समस्त विवक्षित पदार्थ अभिधातुं शक्य होते
हों वह दो नाम हैं । तथा जिन तीन नामों से समस्त विवक्षित पदार्थ
कहने में आ जाते हों वह त्रि नाम हैं । इसी प्रकार से चतुर्नामादि से
लेकर दशनाम तक के विषय में भी जानना चाहिये । सू० १४३॥

उद्देश क्रम से निर्देश करने वाले सूत्रकार सर्व प्रथम एक नाम के
स्वरूप का कथन करते हैं—“से किं तं इगलामे?” इत्यादि ।

शब्दार्थ—(से किं तं इगलामे) हे भदन्त ! पूर्वप्रक्रान्त एक नाम क्या है?

નામથી રહિત હોય તેથી ‘સત્’ એક નામરૂપ છે. એજ પ્રમાણે જે જે
નામોથી સમસ્ત વિવક્ષિત પદાર્થોનું કથન થઈ જાય છે, તેમને જે નામ રૂપ
સમજવા તથા જે ત્રણ નામોથી સમસ્ત વિવક્ષિત પદાર્થોનું કથન થઈ જાય
છે, તે ત્રણ નામોને ત્રિનામ કહે છે. એજ પ્રમાણે ચતુર્નામથી લઈને દસ
નામ પર્યન્તના નામના પ્રકારો વિષે પણ સમજવું. ॥સૂ૦ ૧૪૩॥

પૂર્વસૂત્રમાં નામના પ્રકારો પ્રકટ કરવામાં આવ્યાં હોયે સૂત્રકાર નામના
પ્રથમ પ્રકાર રૂપ એકનામના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં ઇગળામે?” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ઇગળામે?) હે ભગવન્ ! પૂર્વપ્રક્રાન્ત એકનામ શું
છે ? એટલે કે એકનામનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

જીનાજીવભેદાનાં, ગુણાનાં=જ્ઞાનાદીનાં રૂપાદીનાં ચ, તથા-પર્યાયાણાં=નારકત્વા-
દીનામેકગુણકૃષ્ણત્વાદીનાં ચ નામાનિ=અભિધાનાનિ યાનિ કાનિચિલ્લોકે
રુદ્ધાનિ, તદ્યથા-જીવો જન્તુરાત્મા પ્રાણીત્યાદિ, આકાશં નભસ્તારાપથો વ્યોમામ્બ-
રમિત્યાદિ । તથા-જ્ઞાનં બુદ્ધિર્બોધં ઇત્યાદિ, તથા-રૂપં રસો ગન્ધ ઇત્યાદિ, તથા-
નારકસ્તિર્યઙ્મનુષ્ય ઇત્યાદિ, એકગુણકૃષ્ણો દ્વિગુણકૃષ્ણ ઇત્યાદિ । તેષાં સર્વેપા-
મપ્યભિધાનાનામ્-આગમનિકષે-આગમ એવ નિકષઃ=હેમરજતસદૃશ જીવાદિ-
પદાર્થસ્વરૂપપરિજ્ઞાનહેતુત્વાત્ કપપદ્મસ્તસ્મિન્ 'નામ' ઇત્યેવંરૂપા સંજ્ઞા=આરૂપા

ઉત્તર — (નામાણિ જાણિ કાણિ વિ, દબ્બાણ, ગુણાણ, પઞ્જવાણ
ચ । તેસિં આગમનિહસે નામંતિ પરુવિયા સ્રણ્ણા "૧" સે તં એગણામે)
એક હોકર જો નામ હોતા હૈ વહ એક નામ હૈ । હસી કા સ્વરૂપ હસ
ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર ને કહા હૈ—જીવ અજીવ ભેદ વિશિષ્ટ દ્રવ્યોં કે,
જ્ઞાનાદિક ગુણોં કે, રૂપાદિ ગુણોં કે તથા નારકત્વ આદિ પર્યાયોં કે
લોક મેં જિતને બી નામ રુદ્ધ હૈ — જૈસે-જીવ-જન્તુ, આત્મા' પ્રાણી
ઈત્યાદિ, આકાશ, નભસ તારાપથ, વ્યોમન્ (વ્યોમ) અમ્બર ઇત્યાદિ'તથા
જ્ઞાન બુદ્ધિ, બોધ ઇત્યાદિ, તથા રૂપ, રસ, ગંધ, ઇત્યાદિ તથા નારક તિર્યઙ્
મનુષ્ય ઇત્યાદિ એક ગુણ કૃષ્ણ, 'દો ગુણ કૃષ્ણ ઇત્યાદિ—इन सब
अभिधानों की "नाम" ऐसी एक संज्ञा आगम रूप निकष (कसौटी)
कही गई है । सो ये सब जीव जन्तु आदि अभिधान एक नामत्व

ઉત્તર-(નામાણિ જાણિકાણિ વિ, દબ્બાણ, ગુણાણ, પઞ્જવાણ ચ તેસિં આગમ
નિહસે' નામંતિ પરુવિયા સ્રણ્ણા ॥૧॥ સે તં એગણામે) એક જ અર્થને પ્રકટ
કરનારું જે નામ હોય છે તેને 'એકનામ' કહે છે. તે એકનામનું સ્વરૂપ
સૂત્રકારે ઉપરની ગાથા દ્વારા પ્રકટ કર્યું છે. તેનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—

જીવ અજીવ રૂપ ભેદવાળાં દ્રવ્યોના જ્ઞાનાદિક ગુણોના, ઉપાદિ ગુણોના,
તથા નારકત્વ આદિ પર્યાયોના લોકમાં જેટલાં નામો રૂઢ (પ્રચલિત) છે, તે
બધાં અભિધાનોની (નામોની) 'નામ' એવી એક સંજ્ઞા આગમ રૂપ
નિકષ (કસૌટી) કહેવામાં આવી છે જેમ કે જીવ-જન્તુ, આત્મા, પ્રાણી
ઈત્યાદિ. તથા જ્ઞાન, બુદ્ધિ, બોધ ઇત્યાદિ તથા નભ, તારાપથ, વ્યોમ, આકાશ,
અમ્બર ઇત્યાદિ તથા રૂપ, રસ, ગંધ ઇત્યાદિ તથા નારક, તિર્યંચ, મનુષ્ય
ઈત્યાદિ એક ગણું કૃષ્ણ, બે ગણું કૃષ્ણ ઇત્યાદિ આ બધાં અભિધાનોની
“નામ” એવી એક સંજ્ઞા-આગમરૂપ કસૌટી-કહી છે. તેથી તે સધળા
જીવ-જન્તુ આદિ અભિધાનને એક નામત્વ સામાન્યની અપેક્ષાએ “એકનામ”

પ્રરૂપિતા=વ્યવસ્થાપિતા । અર્થ માત્ર:-સર્વાણ્યપિ જીવો જન્તુરિત્યાદ્યભિધાનાનિ નામત્વસામાન્યમાશ્રિત્યૈકેન નામ શબ્દેનોવ્યન્તે इति । इत्थं च एकेनाप्यनेन नामशब्देन लोकरूढाभिधानानि सर्वाण्यपि वस्तूनि प्रतिपाद्यन्ते इत्येतदेकनामोच्यते । तदेव उपसंहरन्नाह तदेतदेकनामेति ॥सू० १४४॥

સામાન્ય કે આશ્રય સે એક નામ શબ્દ સે કહે જાતે હૈં । હસ પ્રકાર એક બી હસ નામ શબ્દ સે વસ્તુઓં કે, ગુણોં કે ઓર પર્યાયોં કે જો બી લોક રૂઢ નામ હૈં વે સર્વ" નામત્વ" હસ એક સામાન્ય પદ સે ગૃહીત હો જાતે હૈં । હસલિયે હસ એક બી નામ શબ્દ સે લોકરૂઢાભિધાન વાલી સ્વયં બી વસ્તુઈં પ્રતિપાદિત હો જાતી હૈં । અતઃ એક નામ કહ-લાના હૈં । (સે તં એગમામે) હસ પ્રકાર યહ એક નામ હૈં ।—

ભાવાર્થ— એક નામ કયા હૈં હસ જિજ્ઞાસા કા સમાધાન કરને કે નિમિત્ત સૂત્રકાર ને યહાં ડસી કા વર્ણન કિયા હૈં । હસમેં ડન્હોંને સમ-જાયા હૈં કી જિનને સંસાર મેં દ્રવ્યોં કે, પર્યાયોં કે ઓર ગુણોં કે લોક રૂઢ નામ હૈં—ચચપિ વે સર્વ જુદે ૨ હૈં । ફિર બી નામત્વ સામાન્ય કે આશ્રયભૂત હોને કે કારણ વે સર્વ એક હી હૈં । હસ પ્રકાર નામત્વ સામાન્ય કી દૃષ્ટિ સે યે સર્વ નામ એક હૈં—કયોં કિ જિતને અભિધાનરૂપ વ્યક્તિ હૈં ડન સર્વ મેં નામત્વરૂપ સામાન્ય રહતા હૈં । યહી વાત આગમરૂપ

શબ્દ દ્વારા પ્રકટ કરવામાં આવે છે આ રીતે એક પણ આ નામ વડે—શબ્દ વડે—વસ્તુઓના ગુણોનાં અને પર્યાયોનાં જે નામો લોકમાં રૂઢ થયેલા હોય છે, તે બધાંને “ નામત્વ ” આ એક સામાન્ય પદ વડે થ્રહ્મ કરી શકાય છે. તેથી આ એક નામ શબ્દથી પણ લોકમાં રૂઢ એવા અભિધાનવાળી બધી વસ્તુઓ પ્રતિપાદિત થઈ જાય છે. તેથી તેને એક નામ કહે છે (સે તં એગમામે) આ પ્રકારનું એક નામનું સ્વરૂપ છે

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં, ‘ એક નામ શું છે, ’ આ પ્રશ્નનું સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે. તેમણે આ સૂત્રમાં એ વાત સમજાવી છે કે સંસારમાં દ્રવ્યોનાં, પર્યાયોનાં અને ગુણોનાં જેટલાં લોકરૂઢ (લોકમાં પ્રચલિત) નામો છે, તે નામો જે કે જુદાં જુદાં છે, છતાં પણ નામત્વ સામાન્યના આશ્રયભૂત હોવાને કારણે તેઓ સૌ એક જ છે. આ રીતે નામત્વ સામાન્યની દૃષ્ટિએ વિચાર કરવામાં આવે તો તે બધાં નામો એકનામ રૂપ જ છે, કારણ કે જેટલા અભિધાન રૂપ પદાર્થો છે, તે સંઘના પદાર્થોમાં નામત્વ રૂપ સામાન્યનો સદ્ભાવ રહે છે, એજ વાત આગમ રૂપ કસોટીની ઉપમા દ્વારા

મૂલ્ય-સે કિં તં દુનામે? દુનામે દુવિહે પળ્લન્તે, તં જહા-
 ઇગ્ગક્ખરિણ્ણ ય અળેગ્ગક્ખરિણ્ણ ય । સે કિં તં ઇગ્ગક્ખરિણ્ણ? ઇગ્ગ-
 ક્ખરિણ્ણ અળેગ્ગવિહે પળ્લન્તે, તં જહા-હી, સી, ધી, થી, । સે તં
 ઇગ્ગક્ખરિણ્ણ । સે કિં તં અળેગ્ગક્ખરિણ્ણ? અળેગ્ગક્ખરિણ્ણ અળેગ્ગ-
 વિહે પળ્લન્તે, તં જહા-કલ્લા તીળા લયા માલા । સે તં અળેગ્ગ-
 ક્ખરિણ્ણ । અહવા-દુનામે દુવિહે પળ્લન્તે, તં જહા-જીવનામે ય
 અજીવનામે ય । સે કિં તં જીવનામે? જીવનામે અળેગ્ગવિહે
 પળ્લન્તે, તં જહા-દેવદત્તો જલ્લદત્તો વિઘ્નદત્તો સોમદત્તો । સે
 તં જીવનામે । સે કિં તં અજીવનામે? અજીવનામે અળેગ્ગવિહે
 પળ્લન્તે, તં જહા-ઘટો પટો કટો રહો । સે તં અજીવનામે ।
 અહવા દુનામે દુવિહે પળ્લન્તે, તં જહા વિસેસિણ્ણ ય અવિસેસિ-
 ણ ય । અવિસેસિણ્ણ દઢ્ઢે, વિસેસિણ્ણ જીવદઢ્ઢે અજીવદઢ્ઢે ય ।
 અવિસેસિણ્ણ જીવદઢ્ઢે, વિસેસિણ્ણ ણેરડ્ઢે તિરિક્કલ્લજોણિણ્ણ મળ્ણ-

કસોટી સે પ્રસિદ્ધ થી ગઈ છે । છતાં પર આગમ કો જો કસોટી કી ઉપમા
 દી ગઈ છે ઉસકા કારણ યહ છે કિં ઝિસ પ્રકાર હેમ રજત આદિ કે વાસ્ત-
 વિક સ્વરૂપ કા પરિજ્ઞાન નિરૂપણ સે હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર હેમ રજત કે
 સદૃશ જો જીવદિ પદાર્થ હૈં ઉન કે સ્વરૂપ કા પરિજ્ઞાન શાસ્ત્ર-આગમ
 -સે હી હોતા હૈ । અતઃ ઉનકે સ્વરૂપ કે પરિજ્ઞાન કા હેતુ હોને સે આગમ
 કો યહાં સૂત્રકાર ને નિરૂપ કી ઉપમા સે ઉપમિત કિયા હૈ ॥સૂ૦ ૪૪॥

વ્યક્ત કરવામાં આવી છે અહીં આગમને કસોટી ઉપમા દેવાનું કારણ એ
 છે કે જેવી રીતે મેતુ, ચાંદી આદિના વાસ્તવિક સ્વરૂપનું પરિજ્ઞાન નિકપ-
 પટ્ટ (કસોટી કરવાનો પથ્થર) વડે થાય છે, એજ પ્રમાણે સોનાચાંદી જેવાં
 જીવાદિ પદાર્થો છે તેમના વાસ્તવિક સ્વરૂપનું પરિજ્ઞાન આગમ (શાસ્ત્ર) વડે
 જ થાય છે. તેથી તેમના સ્વરૂપના પરિજ્ઞાનના હેતુભૂત હોવાને કારણે સૂત્ર-
 કારે આગમને અહીં નિકપ (કસોટી પથ્થર)ની ઉપમા આપી છે ॥સૂ૦ ૧૪૪॥

स्मे देवे । अविसेसिए णेरइए, विसेसिए रयणप्पहाए सक्करप्पहाए
 वालुअप्पहाए पंकप्पहाए धूमप्पहाए तमाए तमतमाए । अविसे-
 सिए रयणप्पहा पुढवीणेरइए, विसेसिए पज्जत्तए य अपज्जत्तए य ।
 एवं जाव अविसेसिए तमतमा पुढवी नेरइए, विसेसिए पज्जत्तए य
 अपज्जत्तए य । अविसेसिए तिरिक्खजोणिए, विसेसिए एगिंदिए
 वेइंदिए तेइंदिए चउरिंदिए पंचिंदिए । अविसेसिए एगिंदिए,
 विसेसिए पुढविकाइए आउकाइए तेउकाइए वाउकाइए वणस्सइ-
 काइए । अविसेसिए पुढविकाइए, विसेसिए सुहुमपुढविकाइए य
 बादरपुढविकाइए य । अविसेसिए सुहुमपुढविकाइए, विसेसिए
 पज्जत्तयसुहुमपुढविकाइए य अपज्जत्तयसुहुमपुढविकाइए य ।
 अविसेसिए य बादरपुढविकाइए, विसेसिए पज्जत्तयबादरपुढ-
 विकाइए य अपज्जत्तयबादरपुढविकाइए य । एवं आउकाइए
 तेउकाइए वाउकाइए वणस्सइकाइए अविसेसिए, विसेसिए य
 पज्जत्तय अपज्जत्तय भेएहिं भाणियव्वा । अविसेसिए वेइंदिए,
 विसेसिए पज्जत्तय वेइंदिए य अपज्जत्तय वेइंदिए य । एवं तेइंदिय-
 चउरिंदियावि भाणियव्वा । अविसेसिए पंचिंदियतिरिक्खजो-
 णिए, विसेसिए जलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिए थलयरपंचिंदिय-
 तिरिक्खजोणिए खहयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिए । अविसेसिए
 जलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणिए विसेसिए संमुच्छिमजलयर-
 पंचिंदियतिरिक्खजोणिए य गढभवक्कंतियजलयरपंचिंदियतिरि-
 क्खजोणिए य । अविसेसिए संमुच्छिमजलयरपंचिंदियतिरिक्ख-
 जोणिए, विसेसिए पज्जत्तयसंमुच्छिमजलयरपंचिंदियतिरिक्ख-

जोणि ए य । अपञ्जत्तयसंमुच्छिमजलयरपंचिंदियतिरिक्खजो-
 णि ए य । अविसेसि ए गढभवक्कंतियजलयरपंचिंदियतिरिक्ख-
 जोणि ए, विसेसि ए पञ्जत्तयगढभवक्कंतियजलयरपंचिंदियतिरि-
 क्खजोणि ए य, अपञ्जत्तगढभवक्कंतियजलयरपंचिंदियतिरिक्खजो-
 णि ए य । अविसेसि ए थलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणि ए, विसेसि ए
 चउप्पयथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणि ए य परिसप्पथलयरपंचि-
 दियतिरिक्खजोणि ए य अविसेसि ए चउप्पयथलयरपंचिंदियति-
 रिक्खजोणि ए, विसेसि ए सम्मुच्छिमचउप्पयथलयरपंचिंदियतिरि-
 क्खजोणि ए य गढभवक्कंतियचउप्पयथलयरपंचिंदियतिरिक्खजो-
 णि ए य । अविसेसि ए सम्मुच्छिमचउप्पयथलयरपंचिंदियतिरि-
 क्खजोणि ए, विसेसि ए पञ्जत्तयसंमुच्छिमचउप्पयथलयरपंचि-
 दियतिरिक्खजोणि ए य अपञ्जत्तयसंमुच्छिमचउप्पयथलयर-
 पंचिंदियतिरिक्खजोणि ए य । अविसेसि ए गढभवक्कंतियचउप्प-
 यथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणि ए, विसेसि ए पञ्जत्तयगढभवक्कं-
 तियचउप्पयथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणि ए य अपञ्जत्तयगढभ-
 वक्कंतियचउप्पयथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणि ए य । अविसेसि ए
 परिसप्पथलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणि ए, विसेसि ए उरपरिसप्प-
 थलयरपंचिंदियतिरिक्खजोणि ए य भुयपरिसप्पथलयरपंचिंदिय-
 तिरिक्खजोणि ए य । ए ए वि सम्मुच्छिमा पञ्जत्तगा अपञ्जत्तगा
 य, गढभवक्कंतिया वि पञ्जत्तगा अपञ्जत्तगा य भाणियव्वा ।

अविसेसिए खहयरपंचिदियतिरिक्खजोणिए, विसेसिए सम्मु-
 च्छिमखहयरपंचिदियतिरिक्खजोणिए य गढभवक्कंतियखहयर-
 पंचिदियतिरिक्खजोणिए य । अविसेसिए संमुच्छिमखहयरपंचि-
 दियतिरिक्खजोणिए, विसेसिए पज्जत्तयसंमुच्छिमखहयरपंचि-
 दियतिरिक्खजोणिए य अपज्जत्तयसंमुच्छिमखहयरपंचिदियति-
 रिक्खजोणिए य । अविसेसिए गढभवक्कंतियखहयरपंचिदियति-
 रिक्खजोणिए, विसेसिए पज्जत्तयगढभवक्कंतियखहयरपंचिदिय-
 तिरिक्खजोणिए य अपज्जत्तयगढभवक्कंतियखहयरपंचिदियति-
 रिक्खजोणिए य । अविसेसिए मणुस्से, विसेसिए संमुच्छिमम-
 णुस्से गढभवक्कंतियमणुस्से । अविसेसिए संमुच्छिममणुस्से,
 विसेसिए पज्जत्तगसंमुच्छिममणुस्से य अपज्जत्तसंमुच्छिममणुस्से
 य । अविसेसिए गढभवक्कंतियमणुस्से, विसेसिए कम्मभूमिओ
 य अकम्मभूमिओ य अंतरदीवओ य संखिज्जवासाउय असं-
 खिज्जवासाउय पज्जत्तापज्जत्तओ । अविसेसिए देवे विसेसिए
 भवणवासी वाणमंतरे जोइसिए वेमाणिए य । अविसेसिए भव-
 णवासी, विसेसिए असुरकुमारे नागकुमारे सुवण्णकुमारे विज्जु-
 कुमारे अग्गिकुमारे दीवकुमारे उदहिकुमारे दिसीकुमारे वाउ-
 कुमारे थणियकुमारे । सव्वेसिं पि अविसेसियविसेसिय पज्जत्तग
 अपज्जत्तगभेया भाणियव्वा । अविसेसिए वाणमंतरे, विसेसिए
 पिसाए, भूए, जक्खे, रक्खसे, किन्नरे, किंपुरिसे, महोरगे, गंधव्वे,
 एएसिं पि अविसेसियविसेसियपज्जत्तयअपज्जत्तयभेया भाणि-

यत्वा । अविसेसिए जोइसिए, विसेसिए चंद्रसूरे गहगणे नवखत्ते
 तारारूवे । एएसिं पि अविसेसियविसेसियपज्जत्तयअपज्जत्तय-
 भेया भाणियत्वा अविसेसिए वेसाणिए, विसंसिए कप्पोवगे य
 कप्पातीयगे य । अविसेसिए कप्पोवगे, विसेसिए सोहम्मए ईसा-
 णए सणंकुमारए माहिंदए बंभलोए लंतयए महासुक्कए सह-
 स्सारए आणयए पाणयए आरणए अच्चुयए । एएसिंपि अवि-
 सेसियविसेसियपज्जत्तगअपज्जत्तगभेया भाणियत्वा । अविसे-
 सिए कप्पातीयए, विसेसिए गेवेज्जगे य अणुत्तरोववाइए य
 अविसेसिए गेवेज्जए, विसेसिए हेट्ठिमे, मज्झिमे, उवरिमे । अवि-
 सेसिए हेट्ठिमगेवेज्जए, विसेसिए हेट्ठिमहेट्ठिमगेवेज्जए, हेट्ठिम-
 मज्झिमगेवेज्जए, हेट्ठिम उवरिमगेवेज्जए । अविसेसिए मज्झि-
 मगेविज्जए, विसेसिए मज्झिमहेट्ठिमगेवेज्जए, मज्झिममज्झिम-
 गेवेज्जए, मज्झिम उवरिमगेवेज्जए । अविसेसिए उवरिमगेवेज्जए,
 विसेसिए उवरिमहेट्ठिमगेवेज्जए उवरिममज्झिमगेवेज्जए उव-
 रिमउवरिमगेवेज्जए य । एएसिंपि सव्वेसिं अविसेसियविसंसि-
 यपज्जत्तगापज्जत्तगभेया भाणियत्वा । अविसेसिए अणुत्तरोव-
 वाइए, विसेसिए विजयए वेजयंतए जयंतए अपराजियए
 सव्वट्ठसिद्धए य । एएसिंपि सव्वेसिं अविसेसियविसेसियपज्ज-
 तगापज्जगभेया भाणियत्वा । अविसेसिए अजीवदव्वे, विसेसिए
 धम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकाए आगासत्थिकाए पोग्गलत्थिकाए
 अद्धासमए य । अविसेसिए पोग्गलत्थिकाए, विसेसिए

परमाणुपोग्गले दुप्पएसिए तिप्पएसिए जाव अणंतपएसिए
य । से तं दुनामे ॥सू० १४५॥

छाया—अथ किं तद् द्विनाम ? द्विनाम द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—एकाक्ष-
रिकं च अनेकाक्षरिकं च । अथ किं तदेकाक्षरिकम् ? एकाक्षरिकम् अनेकविधं
प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—ह्रीः श्रीः धीः स्त्री । तदेतदेकाक्षरिकम् । अथ किं तदनेकाक्षरिकम् ?
अनेकाक्षरिकमनेकविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—कन्या वीणा लता माला । तदेतदनेका-
क्षरिकम् । अथवा—द्विनाम द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा जीवनाम च अजीवनाम च ।
अथ किं तद् जीवनाम ? जीवनाम अनेकविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—देवदत्तो यज्ञदत्तो
विष्णुदत्तः सोमदत्तः । तदेतद् जीवनाम । अथ किं तदजीवनाम ? अजीवनाम
अनेकविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—घटः पटः कटो रथः । तदेतदजीवनाम । अथवा—
द्विनाम द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—विशेषितं च अविशेषितं च । अविशेषितं द्रव्यम्,
विशेषितं जीवद्रव्यमजीवद्रव्यं च । अविशेषितं जीवद्रव्यम्, विशेषितम्—नैरयिकः,
तिर्यग्योनिकः, मनुष्यो देवः । अविशेषितम् नैरयिकः, विशेषितम् रत्नप्रभाकः,
शर्कराप्रभाको, बालुकाप्रभाकः, पङ्कप्रभाको, धूमप्रभाकः, तमस्कः, तमस्तमस्कः ।
अविशेषितम्—रत्नप्रभापृथिवीनैरयिकः, विशेषितम्—पर्याप्तकश्च अपर्याप्तकश्च ।
एवं यावत् अविशेषितम्—तमस्तमः पृथिवी—नैरयिको, विशेषितम्—पर्याप्तकश्च
अपर्याप्तकश्च । अविशेषितम्—तिर्यग्योनिकः, विशेषितम्—एकेन्द्रियो द्वीन्द्रियस्त्रीन्द्रि-
यश्चतुरिन्द्रियः पञ्चेन्द्रियः । अविशेषितम्—एकेन्द्रियः, विशेषितम्—पृथिवीकायिकः,
अष्कायिकः, तेजस्कायिकः, वायुकायिकः, वनस्पतिकायिकः । अविशेषितम्—
पृथिवीकायिकः, विशेषितम्—सूक्ष्मपृथिवीकायिकश्च वादरपृथिवीकायिकश्च । अवि-
शेषितम्—सूक्ष्मपृथिवीकायिकः, विशेषितम्—पर्याप्तकसूक्ष्मपृथिवीकायिकश्च अप-
र्याप्तकसूक्ष्मपृथिवीकायिकश्च । अविशेषितं च—वादरपृथिवीकायिकः, विशेषितम्—
पर्याप्तकवादरपृथिवीकायिकश्च अपर्याप्तकवादरपृथिवीकायिकश्च । एवम्—अष्का-
यिकः, तेजस्कायिको वायुकायिको वनस्पतिकायिकः, अविशेषितं विशेषितं पर्याप्त-
कापर्याप्तकभेदाभ्याम् भणितव्ये अविशेषितम्—द्वीन्द्रियः, विशेषितम्—
पर्याप्तकद्वीन्द्रियश्च अपर्याप्तकद्वीन्द्रियश्च । एवं त्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियावपि भणितव्यौ ।
अविशेषितम्—पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः, विशेषितम्—जलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः,
स्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः । खेचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः । अविशेषितम्—जलचर-
पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः, विशेषितम्—संपूर्च्छिमजलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च गर्भ-
व्युत्क्रान्तिकजलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च । अविशेषितम्—संपूर्च्छिमजलचरपञ्चे-

न्द्रियतिर्यग्योनिकः, विशेषितम् पर्याप्तक-संमूर्च्छिमजलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च
 अपर्याप्तकसंमूर्च्छिमजलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च । अविशेषितम्-गर्भव्युत्क्रान्ति-
 कजलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः, विशेषितम्-पर्याप्तकगर्भव्युत्क्रान्तिकजलचरपञ्चे-
 न्द्रियतिर्यग्योनिकश्च अपर्याप्तकगर्भव्युत्क्रान्तिकजलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च ।
 अविशेषितम् स्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः, विशेषितम्-चतुष्पदस्थलचरपञ्चे-
 न्द्रियतिर्यग्योनिकश्च परिसर्पस्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च । अविशेषितम्-चतु-
 ष्पदस्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः, विशेषितम्-संमूर्च्छिमचतुष्पदस्थलचरपञ्चे-
 न्द्रियतिर्यग्योनिकश्च गर्भव्युत्क्रान्तिकचतुष्पदस्थलचरपञ्चेन्द्रियग्योनिकश्च ।
 अविशेषितम्-संमूर्च्छिमचतुष्पदस्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः, विशेषितम्-
 पर्याप्तकसंमूर्च्छिमचतुष्पदस्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च अपर्याप्तकसंमू-
 र्च्छिमचतुष्पदस्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च । अविशेषितम्-गर्भव्युत्क्रान्तिकचतु-
 ष्पदस्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः, विशेषितम्-पर्याप्तकगर्भव्युत्क्रान्तिकचतुष्पद-
 स्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च अपर्याप्तकगर्भव्युत्क्रान्तिकचतुष्पदस्थलचरपञ्चे-
 न्द्रियतिर्यग्योनिकश्च । अविशेषितम्-परिसर्पस्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः, विशेष-
 पितम्-उरःपरिसर्पस्थलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च भुजपरिसर्पस्थलचरपञ्चेन्द्रिय-
 तिर्यग्योनिकश्च । एतेऽपि संमूर्च्छिमाः पर्याप्तका अपर्याप्तकाश्च, गर्भव्युत्क्रान्तिका अपि
 पर्याप्तका अपर्याप्तकाश्च भणितव्याः । अविशेषितम् खेचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकविशे-
 पितम् संमूर्च्छिमखेचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च गर्भव्युत्क्रान्तिकखेचरपञ्चेन्द्रियतिर्य-
 ग्योनिकश्च । अविशेषितम्-संमूर्च्छिमखेचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः, विशेषितम्-पर्या-
 प्तकसंमूर्च्छिमखेचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च । अपर्याप्तकसंमूर्च्छिमखेचरपञ्चेन्द्रिय-
 तिर्यग्योनिकश्च । अविशेषितम्-गर्भव्युत्क्रान्तिकखेचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः विशे-
 पितम् पर्याप्तकगर्भव्युत्क्रान्तिकखेचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च अपर्याप्तकगर्भव्यु-
 त्क्रान्तिकखेचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकश्च । अविशेषितम्-मनुष्यः, विशेषितम्-संमू-
 र्च्छिममनुष्यश्च गर्भव्युत्क्रान्तिकमनुष्यश्च । अविशेषितम्-संमूर्च्छिममनुष्यः, विशे-
 पितम्-पर्याप्तकसंमूर्च्छिममनुष्यश्च अपर्याप्तकसंमूर्च्छिममनुष्यश्च । अविशेषितम्-
 गर्भव्युत्क्रान्तिकमनुष्यः, विशेषितम्-कर्मभूमिजश्च अकर्मभूमिजश्च अन्तरद्वीपजश्च,
 संख्येयवर्षायुष्कः असंख्येयवर्षायुष्कः पर्याप्तकः अपर्याप्तकः । अविशेषितम्-देवः,
 विशेषितम्-भवनवासी वानव्यन्तरः ज्यौतिषिको वैमानिकश्च । अविशेषि-
 तम्-भवनवासी, विशेषितम्-असुरकुमारो नागकुमारः सुपर्णकुमारो विष्णुकुमारः
 अग्निकुमारो द्वीपकुमारः उदधिकुमारो दिक्कुमारो वायुकुमारः सन्नितकुमारः । सर्वेषा-
 मपि अविशेषितविशेषितपर्याप्तापर्याप्तकभेदा भणितव्याः । अविशेषितवानव्यन्तरः,

विशेषितम्—पिशाची भूतो यक्षो राक्षसः किन्नरः किंपुरुषो महोद्गो गन्धर्व ।
एतेषामपि अविशेषितविशेषितपर्याप्तापर्याप्तकभेदा भणितव्याः । अविशेषितम्—
ज्योतिषिकः, विशेषितम्—चन्द्रः सूर्यः ग्रहगणः नक्षत्रं तारारूपम् । एतेषामपि
अविशेषितविशेषितपर्याप्तापर्याप्तकभेदा भणितव्याः । अविशेषितम्—वैमानिकः,
विशेषितम्—कल्पोपगश्च कल्पपातीतकश्च । अविशेषितम्—कल्पोपगः, विशेषितम्—
सौधर्मकः ईशानकः सनत्कुमारको माहेन्द्रको ब्रह्मलोकको लान्तकको महाशुक्रकः
सहस्रारक आनतकः प्राणतकः आरणकः अच्युतकः । एतेषामपि अविशेषितविशे-
षितपर्याप्तकापर्याप्तकभेदा भणितव्याः । अविशेषितम्—कल्पपातीतकः, विशेषितम्—
ग्रैवेयकश्च अनुत्तरोपपातिकश्च । अविशेषितम्—ग्रैवेयकः, विशेषितम्—अधस्तनः,
मध्यमः, उपरितनः । अविशेषितम्—अधस्तनग्रैवेयकः, विशेषितम्—अधस्तनाधस्तन-
ग्रैवेयकः, अधस्तनमध्यमग्रैवेयकः, अधस्तनोपरितनग्रैवेयकः । अविशेषितम्—मध्य-
मग्रैवेयकः, विशेषितम्—मध्यमाधस्तनग्रैवेयकः, मध्यममध्यमग्रैवेयकः, मध्यमोपरि-
तनग्रैवेयकः । अविशेषितम्—उपरितनग्रैवेयकः, विशेषितम्—उपरितनाधस्तनग्रैवेयकः,
उपरितनमध्यमग्रैवेयकः, उपरितनोपरितनग्रैवेयकश्च । एतेषामपि सर्वेषां अविशे-
षितविशेषितपर्याप्तकापर्याप्तकभेदा भणितव्याः । अविशेषितम्—अनुत्तरोपपातिकः,
विशेषितम्—विजयको वैजयन्तको जयन्तकः अपराजितकः सर्वार्थसिद्धकश्च । एतेषा-
मपि सर्वेषाम् अविशेषितविशेषितपर्याप्तकापर्याप्तकभेदा भणितव्याः । अविशेषि-
तम्—अजीवद्रव्यम्, विशेषितम्—धर्मास्तिकायः, अधर्मास्तिकायः, आकाशास्ति-
कायः, पुद्गलास्तिकायः, अद्वासमयश्च । अविशेषितम्—पुद्गलास्तिकायः, विशेषि-
तम्—परमाणुपुद्गलो द्विप्रदेशिकः त्रिप्रदेशिको यावदनन्तप्रदेशिकश्च । तदेतद्
द्विनाम ॥ सू० १४५ ॥

टीका—‘से किं तं’ इत्यादि—

अयं किं तद् द्विनाम ? इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरयति—द्विनाम—द्विविधं नाम—
द्विनाम । द्विनामत्वादेवेदं द्विप्रकारकं बोध्यम् । द्विप्रकारकत्वमेवाह—तद्यथा—एका-

अथ सूत्रकार द्विनाम की प्ररूपणा करते हैं—

“से किं तं दुनामे ?” इत्यादि

शब्दार्थ—(से किं तं दुनामे) हे भगवन् ! वह द्विनाम क्या है ?

इवे सूत्रकार द्विनामना स्वरूपमुं निरूपयुं करे छे—

“से किं तं दुनामे” इत्यादि—

शब्दार्थ—(से किं तं दुनामे ?) हे भगवन् ! नामना भीज्य प्रकार रूप
द्विनामनुं स्वरूप डेवुं छे ?

एकाक्षरिकं च अनेकाक्षरिकं च । तत्रैकाक्षरिकम्—एकं च तदक्षरं चेति एकाक्षरम्, तेन निर्वृत्तमेकाक्षरिकम्, तद्धि—हीः—लज्जा, श्रीः—लक्ष्मीः, धीः—बुद्धिः, इत्यादिकमेकाक्षरिकं द्विनाम बोध्यम् । तथा—अनेकाक्षरिकम्—अनेकानि च तान्यक्षराणि—अनेकाक्षराणि तैर्निर्वृत्तमनेकाक्षरिकम्, तद्धि—कन्या वीणा लता मालेत्यादिकमनेकाक्षरिकं द्विनाम बोध्यम् । एवं ‘बलाका पताका’ इत्यादि त्र्याक्षरनिष्पन्नमपि

उत्तर—(द्विनामे दुविहे पणत्ते) द्विनाम—द्विविधनाम—दो प्रकार का है । यहां द्विनाम का तात्पर्य दो प्रकार के नाम से है । दो प्रकार का जो नाम है वह द्विनाम है (तं जहा) नाम के दो प्रकार ये हैं—(एगक्खरिए य अणेगक्खरिए य) एकाक्षरिक और अनेकाक्षरिक एक अक्षर से जो नाम निष्पन्न हो वह एकाक्षरिक नाम है और जो अनेक अक्षरों से निष्पन्न होता है वह अनेकाक्षरिक नाम है । जैसे ‘ही’ लज्जा, ‘श्री’ लक्ष्मी, ‘धी’ बुद्धि, स्त्री, ये सब एकाक्षरिक द्विनाम हैं । कन्या, वीणा, लता, माला ये सब अनेकाक्षरिक द्विनाम हैं । यही बात (से किं तं एगक्खरिए ? एगक्खरिए अणेगविहे पणत्ते,) तं जहा—ही, सी, धी, धी, से तं एगक्खरिए—से किं तं अणेगक्खरिए ? अणेगक्खरिए—अणेगविहे पणत्ते—तं जहा—कण्णा, वीणा, लया, माला, से तं अणेगक्खरिए) इस सूत्रपाठ द्वारा प्रश्नोत्तरपूर्वक सूत्रकारने प्रदर्शित की है । इसी प्रकार “बलाका पताका” इन तीन अक्षरों से निष्पन्न हुआ नाम

ઉત્તર—(દ્વિનામે દુવિહે પણત્તે) દ્વિનામ—દ્વિવિધનામ બે પ્રકારનું છે—અહીં દ્વિનામ પદ બે પ્રકારના અર્થમાં વપરાયું છે. તેથી બે પ્રકારનું જે નામ છે તેનું નામ દ્વિનામ છે. (તંજહા) નામના બે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(એગક્કરિય અણેગક્કરિય) (૧) એકાક્ષરિક અને (૨) અનેકાક્ષરિક જે નામ એક અક્ષર વડે નિષ્પન્ન થાય છે, તે નામને એકાક્ષરિક નામ કહે છે. અને જે નામ અનેક અક્ષરો વડે નિષ્પન્ન થાય છે, તેને અનેકાક્ષરિક નામ કહે છે.

જેમ કે “હી” (લજ્જા), “શ્રી” (લક્ષ્મી), “ધી” બુદ્ધિ, ‘સ્ત્રી’ આદિ એકાક્ષરિક દ્વિનામ છે. કન્યા, વીણા, લતા, માલા, આદિ અનેકાક્ષરિક દ્વિનામ છે. એજ વાત સૂત્રકારે આ સૂત્રપાઠ દ્વારા પ્રશ્નોત્તરપૂર્વક પ્રકટ કરી છે—

(સે કિં તં એગક્કરિય ? એગક્કરિય અણેગવિહે પણત્તે, તંજહા—હી, સી, ધી, ધી, સે તં એગક્કરિય । સે કિં તં અણેગક્કરિય ? અણેગક્કરિય અણેગવિહે પણત્તે—તંજહા—કણ્ણા, વીણા, લયા, માલા, સે તં અણેગક્કરિય) આ સૂત્રપાઠને ભાવાર્થ ઉપર પ્રશ્ન કરવામાં આવ્યો છે. એજ પ્રમાણે “બલાકા,

બોધ્યમ્ । इत्यमेकाक्षरानेकाक्षरेति द्विप्रकारेण नाम्ना विवक्षितस्य समस्तस्यापि वस्तुजातस्य प्रतिपादनाद् द्विनामेत्युच्यते । द्विरूपं सत् सर्वस्य नामेति द्विनाम । द्वयोः नाम्नोः समाहार इति पक्षे तु द्विनामेतिच्छाया बोध्या । अथ प्रकारान्तरेण द्विनाम निरूपयति—अथवा—द्विनाम द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—जीवनाम च अजीवनाम चेति । तत्र—देवदत्तयज्ञदत्तादिभेदेन जीवनाम अनेकविधम् । तथा—घटपटादिभेदेना-

भी अनेकाक्षर निष्पन्न नाम में अन्तर्हित जानना चाहिये । इस प्रकार एकाक्षर और अनेकाक्षर से निष्पन्न दो प्रकारवाले नाम से, विवक्षित समस्त भी वस्तु समूह का प्रतिपादन होता है इससे दो नाम ऐसा कहा जाता है । “द्विरूपं सत् सर्वस्य नामेति द्विनाम” सर्व का नाम दो रूपवाला होता है । इसलिये वह द्विनाम है । एकाक्षरिक और अनेकाक्षरिक ये ही नाम के दो रूप हैं । “द्वयोः नाम्नोः, समाहारः इति द्विनाम” इस पक्ष में भी द्विनाम ऐसी ही छाया जाननी चाहिये ।

अब सूत्रकार प्रकारान्तर से द्विनाम का निरूपण करते हैं—(अहवा-
दुनामे दुविहे पणत्ते) अथवा—द्विनाम दो प्रकार का प्रज्ञप्त—हुआ है
(तं जहा) जैसे (जीव नामे य अजीव नामे य) जीव नाम और अजीव
नाम (से किं तं जीवनामे ?) है भदन्त ! जीव नाम क्या है ?—
(जीवनामे अणेगविहे पणत्ते) जीव नाम अनेक प्रकार का प्रज्ञप्त हुआ

પતાકા ” આ ત્રણ અક્ષરોથી નિષ્પન્ન થતા નામનો અનેકાક્ષર નિષ્પન્ન નામમાં જ સમાવેશ કરવો જોઈએ આ પ્રકારે એકાક્ષર અને અનેકાક્ષર વડે નિષ્પન્ન થતા બે પ્રકારવાળા નામ વડે વિવક્ષિત સમસ્ત વસ્તુસમૂહનું પ્રતિપાદન થાય છે, તેથી તેને દ્વિનામ રૂપ ગણવામાં આવે છે. “દ્વિ રૂપં સત્ સર્વસ્ય નામેતિ દ્વિનામ” સર્વનું નામ બે રૂપવાળું હોય છે, તેથી તે દ્વિનામ રૂપ છે એકાક્ષરિક અને અનેકાક્ષરિક, આ બે જ, નામનાં બે રૂપો છે. “દ્વયોઃ નામ્નોઃ સમાહારઃ ઇતિ દ્વિનામ” આ પક્ષે પણ ‘દ્વિનામ’ એવી જ છાયા સમજવી જોઈએ હવે સૂત્રકાર બીજી રીતે દ્વિનામનું નિરૂપણ કરે છે—

(અહવા-દુનામે દુવિહે પણત્તે) અથવા—દ્વિનામ બે પ્રકારના કદ્યા છે—
(તં જહા) તે બે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(જીવનામે, ય, અજીવનામે ય)
(૧) જીવનામ અને (૨) અજીવ નામ.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં જીવનામે ?) હે ભગવન્ ! જીવનામ એટલે શું ?

ઉત્તર—(જીવનામે અણેગવિહે પણત્તે) જીવનામના અણેક પ્રકાર કદ્યા છે.
(તં જહા) જેમ કે... (દેવદત્તો જણદત્તો વિણ્ણદત્તો સોમદત્તો) દેવદત્ત, યજ્ઞદત્ત,
વિણ્ણદત્ત, સોમદત્ત, વગેરે.

જીવનામાપ્યનેકવિધમ્ । જીવાજીવેતિ દ્વાભ્યાં નામભ્યામેવ વિપ્રક્ષિતસમસ્તપદાર્થાનાં સંગ્રહાદ્ દ્વિનામેત્યુચ્યતે । પુનરેતદેવ પ્રકારાન્તરેણાહ—અથવા દ્વિનામ દ્વિવિધં પ્રજ્ઞ-સમ્—અવિશેષિતં ચ વિશેષિતં ચ । તન્ન—અવિશેષિતં દ્રવ્યમ્ । વિશેષિતં—જીવદ્રવ્યમ્-જીવદ્રવ્યં ચ । પ્રત્યેકમિદમવિશેષિતવિશેષિતભેદાત્ પુનર્ભેદાન્તરાચાનેકપ્રકારકં ભવતીતિ મૂલાદેવ વિજ્ઞેયમ્ । સૌગમ્યાચ્છ મૂલસ્ય વ્યાખ્યા ન ક્રિયતે । અત્રેદં વોધ્યમ્—

હૈ । (તં જહા) જૈસે (દેવદત્તો જળગદત્તો વિષ્ણુદત્તો સોમદત્તો) દેવદત્ત, યજ્ઞદત્ત, વિષ્ણુદત્ત, સોમદત્ત આદિ । (સે કિં તં અજીવ નામે) વહ અજીવ નામ કયા હૈ ? (અજીવનામે અણેગવિહે પળ્લન્તે)

ઉત્તર—અજીવ નામ અનેક પ્રકાર કા પ્રજ્ઞસ હુઆ હૈ (તં જહા) જૈસે (ઘડો, પડો, કડો, રહો) ઘટ, પટ, કટ, રથ, આદિ । (સે તં અજીવ નામે) વહ અજીવ નામ હૈ । (અહવા દુનામે દુવિહે પળ્લન્તે) અથવા—દ્વિનામ દો પ્રકાર કા પ્રજ્ઞસ હુઆ હૈ । (તં જહા) જૈસે (વિસેસિય ય અવિસેસિય ય) વિશેષિત ઓર અવિશેષિત (અવિસેસિય દ્રવ્યે વિસેસિય જીવદ્રવ્યે અજીવદ્રવ્યે ય) અવિશેષિત દ્રવ્ય કહ-લાતા હૈ ઓર વિશેષિત ઉસકે ભેદ કહલાતે હૈ । દ્રવ્ય એસા નામ અવિશેષિત દ્વિનામ હૈ । ઓર દ્રવ્ય દો પ્રકાર કા હોતા હૈ—૧ જીવ દ્રવ્ય ઓર દૂસરા અજીવ દ્રવ્ય એસા નામ વિશેષિત દ્વિનામ હૈ । इनमें जीव द्रव्य और अजीव द्रव्य ये अविशेषित और विशेषित के भेद से तथा और भी भेदान्तरों से अनेक प्रकार के हो जाते हैं यह बात मूल से

પ્રશ્ન—(સે કિં તં અજીવનામે?) હે ભગવન્ । અણવનામ એટલે શું ?

ઉત્તર—(અજીવનામે અણેગવિહે પળ્લન્તે) અણવનામના અનેક પ્રકારો દેહ્યા છે. (તં જહા) જેમ કે (ઘડો, પડો, કડો, રહો) ઘટ પટ, કટ (ચટાઈ), રથ વગેરે (સે તં અજીવનામે) આ પ્રકારનું અણવનામ હોય છે. (અહવા દુનામે દુવિહે પળ્લન્તે) અથવા દ્વિનામના બે પ્રકાર દેહ્યા છે. (તં જહા) જેમ કે.... (વિસેસિય ય અવિસેસિય ય) (૧) વિશેષિત અને (૨) અવિશેષિત (અવિસેસિય દ્રવ્યે, વિસેસિય જીવદ્રવ્યે અજીવદ્રવ્યે ય) દ્રવ્યને વિશેષિત રૂપ કહેવાય છે અને દ્રવ્યના જીવ અજીવ રૂપ ભેદને વિશેષિત કહેવાય છે. ‘દ્રવ્ય’ એવું નામ અવિશેષિત દ્વિનામ છે. દ્રવ્ય બે પ્રકારનું હોય છે—(૧) જીવ દ્રવ્ય અને (૨) અજીવદ્રવ્ય આ જીવદ્રવ્ય અને અજીવદ્રવ્ય રૂપ નામને વિશેષિત દ્વિનામ કહે છે. વળી જીવ દ્રવ્ય અને અજીવ દ્રવ્યના અવિશેષિત અને અવિશેષિત નામના બે ભેદો તથા બીજાં પણ ઘણા ભેદો પડતા હોવાથી તે દ્રવ્યોના અનેક પ્રકાર હોય છે, આ વાત મૂળ સૂત્રમાંથી જ નાજી લેવી જેમ કે—

ये तु संमूर्च्छन्ति=तथाविधकर्मोदयाद् गर्भमन्तरेणैवोत्पद्यन्ते ते सम्मूर्च्छिमाः । येषां तु गर्भे व्युत्क्रान्तिः=उत्पत्तिस्ते गर्भव्युत्क्रान्तिकाः । परिसर्पन्ति ये ते परिसर्पाः । ते हि-उरःपरिसर्प-भुजपरिसर्पभेदाभ्यां द्विप्रकाराः । तत्र-उरःपरिसर्पाः-सर्पादयः । भुजपरिसर्पास्तु गोधानकुलादयः । इति । प्रकृतमुपसंहरन्नाह-तदेतत् द्विनामेति ॥सू० १४५॥

હી જાન લેની યાહિયે જૈસે— (અવિસેસિય જીવદબ્બે, વિસેસિય ણેરહૈય તિરિક્કજોણિય, મણુસસે દેવે) જીવ દ્રવ્ય એસા નામ અવિશેષિત દ્વિનામ હૈ તથા નારક, તિર્યગ્યોનિક, મનુષ્ય, દેવ યે વિશેષિત દ્વિનામ હૈ । (ણેરહૈય અવિસેસિય) નૈરયિક યહ અવિશેષિત દ્વિનામ હૈ ઓર (રયણપ્પહાણ સક્કરપ્પહાણ, વાલુઅપ્પહાણ, પંકપ્પહાણ, ધૂમપ્પહાણ તમાણ, તમતમાણ વિસેસિય) રત્નપ્રભાગત નૈરયિક, શર્કરા પ્રભાગત નૈરયિક, વાલુકા પ્રભાગત નૈરયિક, પંક પ્રભાગત નૈરયિક, ધૂમ પ્રભાગત નૈરયિક, તમઃપ્રભાગત નૈરયિક તમસ્તમઃપ્રભાગત નૈરયિક યે વિશેષિત દ્વિનામ હૈ । આગે મી હસી પ્રકાર સે સૂત્ર કે અન્ત તક પ્રત્યેક ભેદ મેં અવિશેષિત ઓર વિશેષિત દ્વિનામ કી યોજના કર લેની યાહિયે । સૂત્ર સુગમ હોને સે આગે કે પદોં કી વ્યાખ્યા નહીં કી હૈ । સંમૂર્ચ્છિમ વે જીવ હૈ જો તથાવિધ કર્મ કે ઉદય સે ગર્ભ કે વિના હી ઉત્પન્ન હો જાતે હૈ । વ્યુત્ક્રાન્તિ કા તાત્પર્ય ઉત્પત્તિ હૈ । જિન જીવોં કી ઉત્પત્તિ

(અવિસેસિય જીવદબ્બે, વિસેસિય ણેરહૈય તિરિક્કજોણિય મણુસસે, દેવે) ‘અવદ્રવ્ય’ આ નામ અવિશેષિત દ્વિનામ છે, તથા નારક, તિર્યંચ, મનુષ્ય અને દેવ, આ ચારે વિશેષિત દ્વિનામો છે.

(ણેરહૈય અવિસેસિય) ‘નારક’ આ નામને બે અવિશેષિત દ્વિનામ કહેવામાં આવે, તે (રયણપ્પહાણ, સક્કરપ્પહાણ, વાલુઅપ્પહાણ, પંકપ્પહાણ ધૂમપ્પહાણ, તમાણ, તમતમાણ વિસેસિય) રત્નપ્રભાના નારક, શર્કરાપ્રભાના નારક, વાલુકાપ્રભાના નારક, પંકપ્રભાના નારક, ધૂમપ્રભાના નારક, તમઃપ્રભાના નારક, અને તમસ્તમઃપ્રભાના નારકને વિશેષિત દ્વિનામ કહે છે. એજ પ્રકારે સૂત્રના અન્ત સુધીના પ્રત્યેક લેહમાં અવિશેષિત અને વિશેષિત દ્વિનામની યોજના કરી લેવી બેઈએ સૂત્ર સુગમ હોવાથી પછીનાં પદોની વ્યાખ્યા આપવામાં આવી નથી જે હવે તથાવિધ કર્મના ઉદયથી ગર્ભ વિના જ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે, તે હવેને સંમૂર્ચ્છિમ હવે કહે છે. ‘વ્યુત્ક્રાન્તિ’ પદનો અર્થ ‘ઉત્પત્તિ’ થાય છે. જે હવેની ઉત્પત્તિ ગર્ભજન્મથી થાય છે,

त्रिनाम निरूपयितुमाह—

मूलम्—से किं तं तिनामे ? तिनामे तिविहे पणत्ते, तं जहा दव्वणामे गुणणामे पज्जवणामे य । से किं दव्वणामे ? दव्वणामे छविहे—पणत्ते, तं जहा—धम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकाए आगा-सत्थिकाए जीवत्थिकाए पुग्गलत्थिकाए अच्चासमए य । से तं दव्वणामे । से किं तं गुणणामे ? गुणणामे पंचविहे पणत्ते, तं जहा—वणणणामे गंधणामे रसणामे फासणामे संठाणणामे । से किं तं वणणणामे ? वणणणामे पञ्चविहे पणत्ते, तं जहा—काल-वणणणामे नीलवणणणामे लोहियवणणणामे हालिद्ववणणणामे सुक्खिलवणणणामे । से तं वणणणामे । से किं तं गंधणामे—गंध-णामे दुविहे पणत्ते, तं जहा—सुरभिगंधणामे य दुरभिगंधणामे य । से तं गंधणामे । से किं तं रसणामे ? रसणामे पंचविहे पणत्ते, तं जहा—तित्तरसणामे कडुयरसणामे कसायरसणामे अंबिलरसणामे म्हररसणामे य । से तं रसणामे । से किं तं

गर्भ जन्म से होती है वे गर्भव्युत्क्रान्ति जीव हैं । जो सरकते हैं वे परिसर्प हैं । उरःपरिसर्प और भुजपरिसर्प के भेद से परिसर्प जीव दो प्रकार के हैं । सर्पादिक जीव जो कि छाती से सरकते हैं—उरः परि-सर्प हैं । और गोघा, नकुल आदि जीव जो भुजाओं से सरकते—चलते हैं वे भुजपरिसर्प हैं । इस प्रकार यह त्रिनाम हैं ॥सू० १४६॥

ते जिवोने गर्भव्युत्क्रान्तिक जिवो कडे छे, जे जिवो सरकतां सरकतां यावे छे ते जिवोने परिसर्प कडे छे. परिसर्प जिवोना उरःपरिसर्प अने भुजप-रिसर्प नामना जे लेख पडे छे. सर्पादिक जे जिवो छातीना भणथी सरके ते जिवोने उरःपरिसर्प कडे छे. गदोणी, नोणिया आदि जिवो भुजाज्येना भणथी सरके (यावे) छे, तेथी तेमने भुजपरिसर्प कडे छे. आ प्रकारनुं आ त्रिनामनुं स्वरूप छे. ॥सू० १४५॥

फासणामे ? फासणामे अट्टविहे पणत्ते, तं जहा—कक्खडफास-
णामे मउयफासणामे गरुयफासणामे लहुयफासणामे सीयफा-
सणामे उसिणफासणामे णिद्धफासणामे लुक्खफासणामे । से तं
फासणामे । से किं तं संठाणनामे ? संठाणनामे—पंचविहे पणत्ते
तं जहा परिमंडलसंठाणनामे वट्टसंठाणनामे तंसंठाणनामे
चउरंसंठाणनामे आययसंठाणनामे । से तं संठाणनामे से
तं गुणनामे ॥सू० १४६॥

छाया—अथ किं तत् त्रिनाम ? त्रिनाम त्रिविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—द्रव्यनाम,
गुणनाम पर्यवनाम च । अथ किं तद् द्रव्यनाम ? द्रव्यनाम षड्विधं प्रज्ञप्तम्,
तद्यथा—धर्मास्तिकायः अधर्मास्तिकायः आकाशास्तिकायो जीवास्तिकायः पुद्गला-
स्तिकायः अद्वासमयश्च । तदेतद् द्रव्यनाम । अथ किं तद् गुणनाम ? गुणनाम
पञ्चविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—वर्णनाम गन्धनाम रसनाम स्पर्शनाम संस्थाननाम ।
अथ किं तद् वर्णनाम ? वर्णनाम पञ्चविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—कालवर्णनाम नील-
वर्णनाम लोहितवर्णनाम हारिद्रवर्णनाम भुक्कवर्णनाम तदेतद्वर्णनाम । अथ किं तत्
गन्धनाम ? गन्धनाम द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—सुरभिगन्धनामच दुरभिगन्धनाम
च । तदेतद् गन्धनाम । अथ किं तद् रसनाम ? रसनाम पञ्चविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—
तिक्तरसनाम, कटुकरसनाम, कषायरसनाम अम्लरसनाम मधुररसनाम च ।
तदेतद् रसनाम । अथ किं तत् स्पर्शनाम ? स्पर्शनाम—अष्टविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—
कर्कशस्पर्शनाम मृदुकस्पर्शनाम गुरुकस्पर्शनाम लघुकस्पर्शनाम शीतस्पर्शनाम उष्ण-
स्पर्शनाम स्निग्धस्पर्शनाम रूक्षस्पर्शनाम । तदेतत् स्पर्शनाम । अथ किं तत् संस्थान-
नाम ? संस्थाननाम पञ्चविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—परिमण्डलसंस्थाननाम वृत्तसंस्था-
ननाम त्र्यसंस्थाननाम चतुरसंस्थाननाम आयतसंस्थाननाम । तदेतत् संस्थान-
नाम । तदेतद् गुणनाम ॥सू० १४६॥

टीका—‘से किं तत् त्रिनाम ? इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरयति—त्रिनाम=त्रिरूपं
नाम त्रिनाम तत् त्रिविधं प्रज्ञप्तम् । यत एवेदं त्रिनाम अत एवेदं त्रिविधं

अथ त्रिनाम का सूत्रकार निरूपण करते हैं—

“से किं तं त्रिनामे ” इत्यादि ।

इवे सूत्रकार त्रिनामं निरूपण करे छे—

“से किं तं त्रिनामे ” इत्यादि—

બોધ્યમ્ । ત્રૈવિધ્યમેવાહ-તદ્યથા-દ્રવ્યનામ-દ્રવતિ=ગच्छति तांस्तान् पर्यायान्
 प्राप्नोतीति द्रव्यं, तस्य नाम-द्रव्यनाम । गुणनाम-गुण्यन्ते=संख्यायन्ते इति
 गुणास्तेषां नाम-गुणनाम । तथा-वर्णनाम-वर्ण्यते=अलङ्क्रियते वस्त्वनेनेति वर्णः,
 तस्य नाम वर्णनाम । एषु त्रिविधेषु नामसु प्रथमं द्रव्यनाम जिज्ञासमानः शिष्यः
 पृच्छति-अथ किं तद् द्रव्यनाम ? उत्तरयति-द्रव्यनाम हि धर्मास्तिकायादिभेदैः
 षड्विधम् । धर्मास्तिकायादीनां व्याख्या पूर्वं कृता । गुणनामतु वर्णगन्धरसस्पर्श-

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં તિનામે ?) હે ભદ્રન્ત ! ત્રિનામ કયા હૈ ?

ઉત્તર—(તિનામે તિવિહે પળ્ણત્તે) ત્રિનામ ત્રીન પ્રકાર કા કહા ગયા
 હૈ ત્રીન રૂપ વાલા જો નામ હૈ વહ ત્રિનામ હૈ । ત્રિનામ સે હી યહ
 ત્રિવિધ હૈ । (તં જહા) વે ત્રીન પ્રકાર ચે હૈ—(દ્વવ્વણામે, ગુણનામે, પઙ્ગ-
 વણામે) દ્રવ્યનામ, ગુણનામ, પર્યાય નામ । ઉન ૨ પર્યાયોં કો જો પ્રાપ્ત
 કરતા હૈ ઉસકા નામ દ્રવ્ય હૈ । હસ દ્રવ્ય કા જો નામ હૈ વહ દ્રવ્યનામ
 હૈ । જો ગિને જાવેં ઉનકા નામ ગુણ હૈ યહ ગુણ શબ્દ કી વ્યુત્પત્તિ હૈ ।
 હનકા જો નામ હૈ વહ ગુણ નામ હૈ । પર્યાય કા જો નામ હૈ વહ પર્યાય
 નામ હૈ । પર્યાય નામ કા વર્ણન સૂત્રકાર ૧૪૭ વેં સૂત્ર મેં કરેંગે । (સે-
 કિં તં દ્વવ્વનામે) વહ દ્રવ્ય નામ કયા હૈ ?

ઉત્તર—(દ્વવ્વણામે છવ્વિહે પળ્ણત્તે) દ્રવ્ય નામ ૬ પ્રકાર કા કહા
 હૈ । (તં જહા) જૈસે—(ધમ્મત્થિકાણ, અધમ્મત્થિકાણ, આગાસત્થિકાણ

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં તિનામે ?) હે ભગવન્ ! ત્રિનામ એટલે શુ ?

ઉત્તર—(તિનામે તિવિહે પળ્ણત્તે) ત્રિનામના ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે. ત્રણ રૂપ-
 'વાણુ' જે નામ છે, તેને ત્રિનામ કહે છે ત્રિનામ હોવાને લીધે જ તે ત્રણ
 પ્રકારનું છે. (તં જહા) તે ત્રણ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(દ્વવ્વણામે, ગુણનામે,
 પઙ્ગવણામે) (૧) દ્રવ્યનામ, (૨) ગુણનામ અને (૩) પર્યાયનામ (પર્યાયનામ.)

જુદી જુદી પર્યાયોને જે પ્રાપ્ત કરે છે, તેનું નામ દ્રવ્ય છે. આ દ્રવ્યનું
 જે નામ છે તેને દ્રવ્ય નામ કહે છે. ગુણ શબ્દની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે છે.
 “જે ગણાય તે ગુણ છે.” તે ગુણનું જે નામ છે તેને ગુણનામ કહે છે.
 ‘પર્યાયનું’ જે નામ છે, તેનું નામ પર્યાયનામ છે. આગળ ૧૪૭માં સૂત્રમાં
 સૂત્રકાર આ ‘પર્યાયનામનું’ વર્ણન કરવાના છે.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં દ્વવ્વનામે?) તે દ્રવ્યનામ શું છે ?

ઉત્તર—(દ્વવ્વણામે છવ્વિહે પળ્ણત્તે) દ્રવ્યનામ છ પ્રકારનું કહ્યું છે. (તં જહા)
 જેમ કે... (ધમ્મત્થિકાણ, અધમ્મત્થિકાણ, આગાસત્થિકાણ, જીવત્થિકાણ, પુગલત્થિ-

સંસ્થાનભેદૈઃ પञ्चविधम् । तत्र वर्णनाम-कृष्णनीललोहितहारिद्रशुक्लनामभेदैः पञ्च-
विधम् । धूसरारुणरूप कपिशादयस्तु वर्णा संयोगेनैवोत्पद्यन्ते, नत्वेते तेभ्यो भिन्ना
इति न पृथगुपात्ताः । तथा-गन्धनाम-गन्ध्यते=आघ्रायते इति गन्धस्तस्य नाम=
गन्धनाम । तद्धि-सुरभिदुरभिभेदाद् द्विविधम् । तत्र-सौमुख्यकृत् सुरभिः, वैमुख्य-

जीवत्थिकाए, पुग्गलत्थिकाए, अद्धासमए य) धर्मास्तिकाय, अधर्मा-
स्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय और अद्धा
समय । इन सबकी व्याख्या पहिले की जा चुकी है । अतः यहाँ नहीं
की है । (से तं दब्बनामे) इस प्रकार यह द्रव्य नाम है । (से किं तं गुण-
नामे) वह गुण नाम क्या है ?

उत्तर—(गुणनामे पंचविहे पणत्ते) गुणानाम पांच प्रकार का कहा
गया है । (तं जहा) जैसे—(वण्णणामे, गंधणामे रसणामे, फासणामे,
संठाणणामे) वर्णनाम, गंध नाम, रस नाम, स्पर्श नाम, संस्थान नाम ।
वस्तु जिससे अलंकृत की जाती है वह वर्ण शब्द की व्युत्पत्ति है । इस
वर्ण का जो नाम है वह वर्ण नाम है । जो सूंघी जावे वह गंध है । इस
गंध का जो नाम है वह गंधनाम है । जो चखा जाता है वह रस है । रस
का जो नाम है वह रस नाम है । जो स्पर्श से जाना जाता
है वह स्पर्श है । संस्थान नाम आकार का है । इस संस्थान का जो नाम
है वह संस्थान नाम है ।

काए, अद्धासमए य) धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, જીવાસ્તિ-
કાય, પુદ્ગલાસ્તિકાય અને અદ્ધાસમય (કાળ) આ બધાં પહેલી વ્યાખ્યા
પહેલાં આપવામાં આવી છે, તેથી અહીં તેમની વ્યાખ્યા આપવામાં આવી
નથી (સે તં દબ્બનામે) આ પ્રકારનું તે દ્રવ્યનામ છે.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં ગુણનામે?) હે ભગવન્ ! ગુણનામ કેને કહે છે ?

ઉત્તર—(ગુણનામે પંચવિહે પણત્તે-તં જહા) ગુણનામ પાંચ પ્રકારનું કહ્યું
છે. તે પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે—(વણ્ણણામે, ગંધણામે, રસણામે, ફાસણામે,
સંઠાણણામે) વર્ણનામ, ગંધનામ, રસનામ, સ્પર્શનામ અને સંસ્થાનનામ
વસ્તુને જેના વડે અલંકૃત કરાય છે, તેને વર્ણ કહે છે. તે વર્ણનું જે નામ
છે તેને વર્ણનામ કહે છે. સૂંઘવાથી જેના અનુભવ થાય છે, તે ગંધ છે.
આ ગંધનું જે નામ છે તેને ગંધનામ કહે છે. ચાખવાથી જેના અનુભવ
થાય તે રસ છે. એવા રસનું જે નામ છે, તે રસનામ છે. કોઈ પણ વસ્તુને
અડકવું તેનું નામ સ્પર્શ છે. આ સ્પર્શનું જે નામ છે તેને સ્પર્શનામ કહે
છે. સંસ્થાન એટલે આકાર આ સંસ્થાનના નામને સંસ્થાનનામ કહે છે.

કુદદુરભિઃ । તથા-રસનામ-રસ્યતે=આસ્વાદ્યતે इति रसस्तस्य नाम-रसनाम ।
તત્ત્વ-તિક્તકટુકકષાયામ્લમધુરનામ ભેદાત્ પશ્ચવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તત્ર-તિક્તરસનામ-
-શ્લેષ્માદિદોષહન્તા રસઃ, તસ્ય નામ તિક્તરસનામ । તિક્તરસસેવનફલમુક્તમાયુ-
ર્વેદશાસ્ત્રે-“શ્લેષ્મામરુચિઃ પિત્તં તૃષં કુપ્થં ત્રિપં જ્વરમ્ । હન્યાત્તિક્તો રસો બુદ્ધેઃ કર્ત્ત્વ

(સે કિં તં વર્ણણામે) વહ વર્ણનામ કયા હૈ ?

ઉત્તર-(વર્ણણામે પંચવિદ્ધે વર્ણણત્તે) વર્ણનામ પાંચ પ્રકાર કા કહા
ગયા હૈ । (તં જહા) જૈસે-(કાલવર્ણણામે, નીલવર્ણણામે, લોહિ-
યવર્ણણામે, હાલિદ્રવર્ણણામે, સુક્તિકલવર્ણણામે) કાલ કૃષ્ણ-વર્ણ
નામ, નીલવર્ણનામ, લોહિતવર્ણનામ, હારિદ્રવર્ણનામ, શુક્લવર્ણનામ ।
ધૂસર, અરુણ રૂપ જો કપિશાદિ વર્ણ હૈ-વે સંયોગ સે હી ઉત્પન્ન હોતે
હૈ, હસલિયે યે સ્વતંત્રવર્ણ નહીં હૈ હસલિયે હનકા સ્વતંત્ર રૂપ સે સૂત્ર
મેં પાઠ નહીં કિયા હૈ । સુરભિગંધ ઓર દુરભિગંધ કે ભેદ સે ગન્ધ ગુણ
દો પ્રકાર કા હૈ । જો ગંધ અપની ઓર આકૃષ્ટ કરતી હૈ વહ સુરભિ
ગંધ ઓર જો અપને સે વિમુખ કરતી હૈ વહ દુરભિગંધ હૈ । તિક્ત,
કટુક, કષાય, અમ્લ ઓર મધુર નામ કે ભેદ સે રસ પાંચ પ્રકાર હૈ ।
શ્લેષ્મ આદિ દોષોં કો નષ્ટ કરનેવાલા જો રસ હૈ વહ તિક્ત રસ હૈ ।
તિક્ત રસ કે સેવન કા ફલ આયુર્વેદ શાસ્ત્ર મેં એસા કહા હૈ-માત્રા સે

પ્રશ્ન-(સે કિં તં વર્ણણામે) હે લગવન્ । વર્ણનામનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે ?

ઉત્તર-(વર્ણણામે પંચવિદ્ધે વર્ણણત્તે) વર્ણનામ પાંચ પ્રકારના કહ્યાં છે.

(તં જહા) જેમ કે....(કાલવર્ણણામે, નીલવર્ણણામે, લોહિયવર્ણણામે, હાલિદ્રવર્ણ-
ણામે, સુક્તિકલવર્ણણામે) (૧) કૃષ્ણવર્ણનામ, (૨) નીલવર્ણનામ, (૩) લોહિત
(રક્ત) વર્ણનામ, (૪) હારિદ્ર (પીળો) વર્ણનામ, અને (૫) શુક્લવર્ણનામ.

આ સિવાયના જે ધૂસર આદિ વર્ણો છે, તેઓ ઉપર્યુક્ત વર્ણોના સંયો-
ગથી જ ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી તેમને સ્વતંત્ર વર્ણ રૂપ ગણી શકાય નહીં,
તેથી અહીં તેમને સ્વતંત્ર પ્રકારો રૂપે બતાવવામાં આવેલ નથી સુરભિગંધ
(સુગંધ) અને દુરભિગંધ (દુર્ગંધ)ના લેખથી ગંધશુશ્રુતા બે પ્રકાર પડે છે.
જે ગંધ જીવોને પોતાની તરફ આકર્ષે છે તે ગંધને સુરભિગંધ અને જે
ગંધ જીવોને પોતાની તરફ ખેંચવાને બદલે વિમુખ કરે છે એવી ગંધને
દુરભિગંધ કહે છે. રસના નીચે પ્રમાણે પાંચ પ્રકાર છે-(૧) તિક્ત (તીખો),
(૨) કટુક (કડવો), (૩) કષાય (તુરો), (૪) અમ્લ (ખાટો) અને (મધુર)
કષ્ આદિ દોષોનો નાશ કરનાર જે રસ છે તેનું નામ તિક્તરસ છે. આયુર્વેદ
શાસ્ત્રમાં તિક્તરસના સેવનના નીચે પ્રમાણે લાભો બતાવ્યા છે-યોગ્ય માત્રામાં

માત્રોપસેવિતઃ” । इति । तथा-कटुकरसनाम-गळरोगप्रशमनो मरिचनागराद्याश्रितो रसः-कटुकरसः-तस्य नाम-कटुकरसनाम । कटुकरससेवनफलमुक्तमायुर्वेदे-कटुर्गलामयं शोफं, हन्ति युक्त्योपसेवितः । दीपनः पाचको रुच्यो बृंहणोऽतिक्फापहः । इति॥ तथा-कषायरसनाम-रक्तदोषाद्यपनेताविभीतकामलककपित्थाद्याश्रितो रसः-कषायरसः, तस्य नाम कषायरसनाम । उक्तंचास्य सेवनफलम्-“रक्तदोषं कफं पित्तं, कषायो हन्ति सेवितः । रुक्षः शीतो गुणग्राही रोचकश्च स्वरूपतः” ॥इति॥

સેવન ક્રિયા તિક્તરસ શ્લેષ્મા-કફ અરુચિ, પિત્ત, તૃષા, કુષ્ઠ, વિષ, જ્વર, इनका नाश करता है और बुद्धि को बढाता है । इस तिक्तरस का जो नाम है वह तिक्तरस नाम है । गले के रोग को प्रशान्त करनेवाला एवं मरिच और नागर आदि में-रहनेवाला जो रस है वह कटुकरस है । इस कटुकरस के सेवन का फल आयुर्वेदशास्त्र में ऐसा कहा है-युक्ति से सेवन किया गया कटुक रस....शोफ—सूजन को नष्ट करता है, दीपक, पाचक, रुच्य और बृंहण होता है । बढे हुए कफ को नष्ट करता है । रक्त दोष आदि का नाशक-विभीतक-बहेड़ा आमलक-आँवला एवं कपित्थ आदि के आश्रित जो रस है वह कषाय रस है । इसका जो नाम है वह कषाय रस नाम है । इसके सेवन का फल ऐसा कहा है—सेवित हुआ यह कषाय रस रक्तदोष, कफ, पित्त, को नाश करता है । यह स्वरूप से रुक्ष, शीत और गुणग्राही होता है तथा

તિક્તરસનું જે સેવન કરવામાં આવે, તે કફ, અરુચિ, પિત્ત, તૃષા, કુષ્ઠ, વિષ અને જ્વરનો નાશ થાય છે અને બુદ્ધિની વૃદ્ધિ થાય છે. આ તિક્ત-રસનું જે નામ છે, તે તિક્તરસ નામ છે.

ગળાના રોગોને પ્રશાન્ત કરનારો અને મરિચ અને નાગર આદિમાં રહેનારો જે રસ છે, તે રસનું નામ કટુકરસ (કડવોસ્વાદ) છે. આયુર્વેદ શાસ્ત્રમાં આ કટુક રસના સેવનનું ફળ નીચે પ્રમાણે કહ્યું છે—યોગ્ય માત્રામાં જે કટુક રસનું સેવન કરવામાં આવે, તે શરીરના કેઈ પણ ભાગનો સોને ઉતરી જાય છે, દીપક (પાચનક્રિયામાં મદદ રૂપ) હોય છે, રુચ્ય અને બૃંહણ (શક્તિવર્ધક) હોય છે તે વધારાના કફનો નાશ કરે છે.

રક્તદોષ આદિનો નાશક, બહેડા, આમળાં, કેઠાં આદિમાં રહેલો જે રસ છે તેને કષાય (તુરો) રસ કહે છે. તેનું જે નામ છે તે કષાયરસ નામ છે. અયુર્વેદમાં કષાયરસના સેવનનું ફળ નીચે પ્રમાણે કહ્યું છે—જે યોગ્ય રીતે સેવન કરવામાં આવે તે કષાયરસ રક્તદોષ, કફ, અને પિત્તનો નાશ કરે છે. તે રુક્ષ, શીત, ગુણગ્રાહી અને રોચક હોય છે.

તથા-અમ્લરસનામ-અગ્નિદીપનાદિકૃદમ્લીકાઘાશ્રિતો રસઃ-અમ્લરસઃ, તસ્ય નામ-અમ્લરસનામ । ઉક્તં ચાસ્ય ફલમ્-“અમ્લોઽગ્નિદીપ્તિકૃત્ સ્નિગ્ધઃ, શોફ-પિત્તકફાપહઃ । ક્લેદનઃ પાચનો રુચ્યો, ગૂઢવાતાનુલોમકઃ ॥” ॥ઈતિ॥ તથા-મધુરરસ-નામપિત્તાદિપ્રશમનઃ સ્વણ્ડશર્કરાઘાશ્રિતો રસો મધુરરસઃ, તસ્ય નામ-મધુરરસનામ । ઉક્તં ચાસ્ય ફલમ્-“પિત્તં વાતં વિષં હન્તિ, ધાતુવૃદ્ધિકરો ગુરુઃ । જીવનઃ કેશ-કૃદ્ વાલવૃદ્ધ ક્ષીણૌજસાં હિતઃ” ॥ઈતિ॥ અન્યત્ર હિ સિન્ધુલવણાઘાશ્રિતો લવણ-રોચક હોતા હૈ । અમ્લીક-ફમલી આદિ મેં રહા હુઆ જો રસ હૈ વહ અમ્લરસ હૈ । યહ અગ્નિદીપન આદિ કા કરને વાલા હોતા હૈ । હસ રસ કા જો નામ હૈ વહ અમ્લ રસ નામ હૈ । હસકા ફલ હસ પ્રકાર કહા હૈ-યહ રસ અગ્નિદીપક હોતા હૈ, સ્નિગ્ધ હોતા હૈ । શોફ, પિત્ત ઓર કફ કો નાશ કરતા હૈ । ક્લેદન, (પસીના ઉત્પન્ન કરનેવાલી શરીરકા અગ્નિવિશેષ) પાચન કરતા હૈ-ઓર રુચ્ય હોતા હૈ તથા ગૂઢ વાયુ કા અનુલોમક હોતા હૈ । પિત્તાદિકા પ્રશમન કરને વાલા જો રસ હૈ વહ મધુર રસ હૈ । યહ મધુર રસ રાંઢ, શકર આદિ કા આશ્રિત રહતા હૈ । હસકા જો નામ હૈ વહ મધુરરસનામ હૈ । હસકા ફલ એસા કહા હૈ કિ મધુરરસ પિત્ત, વાત, ઓર વિષકા નાશક હોતા હૈ, ધાતુ કી વૃદ્ધિ કરતા હૈ ગુરુ હોતા હૈ । વાલક, વૃદ્ધ ઓર ક્ષીણ શક્તિ વાલોં કા યહ હિત કર્તા હોના હૈ । જીવનપ્રદ ઓર કેશવર્ધક હોતા હૈ । દૂસરી જગહ સિન્ધુ લવણસૈન્ધવ-આદિ કે આશ્રિત લવણ રસ ઓ

આમલી આદિમાં રહેલા રસને અમ્લરસ (ખાટોસ્વાદ) કહે છે. તે અગ્નિદીપન (જઠરાગ્નિને સતેજ કરનારો) આદિ કરનારો હોય છે. આ રસનું જે નામ છે તે અમ્લરસ નામ છે. અમ્લરસના સેવનનું ફળ આ પ્રકારનું કહ્યું છે-આ રસ અગ્નિદીપક અને સ્નિગ્ધ હોય છે. સોજા પિત્ત અને કફનો નાશક હોય છે ક્લેદન, પાચન કરે છે. અને રુચ્ય (રુચિકર) હોય છે વળી આ રસ ગૂઢ વાયુનો અનુલોમક હોય છે.

પિત્તાદિકનું શમન કરનારો જે રસ છે તેનું નામ મધુરરસ છે. તે ખાંડ, સાકર, ગોળ આદિમાં રહેલા હોય છે. તેનું જે નામ છે તે મધુરરસનામ છે તેના સેવનનું ફળ આ પ્રકારનું કહ્યું છે-મધુરરસ વાત, પિત્ત અને વિષનો નાશક હોય છે, ધાતુની વૃદ્ધિ કરનારો અને ગુરુ હોય છે બાલકો, વૃદ્ધો અને કમજોર માણસોને લાલકારી હોય છે, જીવનપ્રદ અને કેશવર્ધક હોય છે કેટલાક વ્રોકો લવણરસ (ખારો સ્વાદ) ને પણ એક પ્રકારના સ્વતંત્ર રસ

રસોડપિ પઠ્યતે । અયં રસો હિ સ્તંભિતાહારબંધવિધ્વંસાદિકર્તા ભવતિ । અયં રસો
 હિ મધુરાદિરસસંસર્ગજત્વાત્તદભિન્તત્વેન વિવક્ષ્યતે । યતો લવણરસયોગાદેવાન્યે-
 ડપિ રસાઃ સ્વાદીયસ્ત્વં ભજન્તે, અતસ્તિત્કાદિષુ પશ્ચસુ રસેષુ લવણરસસ્યાન્તર્ભાવઃ,
 અત એવ ન તસ્ય પૃથગુપાદાનમ્ । પ્રકૃતગુપસંહરન્નાહ-તદેતદ્રસનામેતિ । અથ ગુણ-
 નામ્નશ્ચતુર્થભેદં જિજ્ઞાસિતુકામઃ પૃચ્છતિ-અથ કિં તત્ સ્પર્શનામ ? इति । उत्तरयति-
 स्पर्शनाम-स्पृश्यते=त्वग्निन्द्रियेणावबुध्यते इति स्पर्शः, तस्य नाम स्पर्शनाम ।
 तद्धि अष्टविधम्=अष्टसंख्यकं बोध्यम् । अष्ट विधत्वमेवाह-तद्यथा-कर्कश स्पर्शनाम-

एक-एक स्वतंत्र रस कहा गया है । यह रस स्तंभित आहार
 आदि का विध्वंस कर्त्ता होता है आहार वर्धक एवं मलव-
 द्धता नाशक होता है । यह रस मधुर आदि रस के संसर्ग
 से उत्पन्न होने के कारण उनसे-अभिन्न ही माना गया है ।
 क्योंकि लवण रस के भोग से ही अन्य दूसरे रस स्वादिष्ट लगते
 हैं । इसलिये तिक्तादि पांच रसों में ही लवण रस का अन्तर्भाव हो
 जाता है । इसलिये इस रस का स्वतंत्र रूप से सूत्रकार ने कथन नहीं
 किया है । यह अर्थ “से किं तं गंधनामे” यहां से लेकर ”महुररसणामे”
 यहां तक के पाठ का किया है । (से तं रसणामे) इस प्रकार यह रस
 नाम है । (से किं तं फासणामे) हे भदन्त ! गुणनाम का जो चतुर्थ भेद
 स्पर्श नाम है वह क्या है ?

उत्तर—(फासणामे अट्टविहे पणत्ते) स्पर्श नाम आठ प्रकार
 का प्रज्ञप्त हुआ है । स्पर्शन इन्द्रिय से जो जाना जाता है वह स्पर्श है ।

इये ગણાવે છે, સિધાલુણુ, નમક, આદિમાં આ રસનો સદ્ભાવ હોય છે.
 આ રસ સ્તંભિત આહાર આદિનો વિધ્વંસ કરવાવાળા હોય છે.
 આહારવર્ધક અને બંધકોશનો નાશક હોય છે. આ રસ મધુર આદિ
 રસના સંસર્ગથી ઉત્પન્ન થતો હોવાને કારણે, તે રસોથી અભિન્ન જ
 ગણીને અહીં તેને સ્વતંત્ર પ્રકાર રૂપે ગણવામાં આવેલ નથી કારણ કે
 લવણરસના યોગથી જ અન્ય રસો સ્વાદિષ્ટ લાગે છે. તેથી તિક્તતાદિ પાંચ
 રસોમાં લવણરસનો સમાવેશ થઈ જાય છે. તેથી જ સૂત્રકારે આ રસનું
 સ્વતંત્ર રૂપે કથન કર્યું નથી “સે કિં તં ગંધનામે” આ સૂત્રથી લઈને
 “મહુરરસણામે” આ સૂત્ર પર્યન્તના સૂત્રપાઠનો ભાવાર્થ ઉપર પ્રકટ કરવામાં
 આવ્યો છે. (સે તં રસણામે) આ પ્રકારનું રસનામનું સ્વરૂપ સમજવું.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં ફાસણામે ?) હે ભગવન્ ! ગુણનામના ચોથા ભેદ રૂપ
 જે સ્પર્શનામ છે, તેનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ફાસણામે અટ્ટવિહે પણત્તે) સ્પર્શનામ આઠ પ્રકારનું પ્રજ્ઞપ્ત થયું
 છે. સ્પર્શેન્દ્રિયની મદદથી જે અનુભવ થાય છે, તેનું નામ સ્પર્શ છે

સ્તબ્ધતાકારણં પાષાણાદિગતઃ સ્પર્શઃ-કર્કશસ્પર્શઃ-તસ્ય નામ કર્કશસ્પર્શનામ । મૃદુકસ્પર્શનામ-કોમલસ્પર્શકારણં તિનિશલતાદિગતઃ સ્પર્શઃ-મૃદુકસ્પર્શસ્તસ્ય નામ । ગુરુકસ્પર્શનામ-અધઃપતનહેતુસ્યોગોલકાદિગતઃ સ્પર્શઃ-ગુરુકસ્પર્શસ્તસ્ય નામ । લઘુકસ્પર્શનામપ્રાયસ્તિર્યગૂર્ધ્વાધોગમનહેતુર્કર્તૂલાદિ નિશ્ચિતઃ સ્પર્શઃ-લઘુ-
 હસ સ્પર્શ કા જો નામ હૈ વહ સ્પર્શ નામ હૈ । (તંજહા) હસકે આઠ પ્રકાર યેહૈં-(કક્ષલ્હકાસણામે, મઝયકાસણામે, ગરુયકાસણામે, લહુય-કાસણામે, સીયકાસણામે, હસિણકાસણામે, ણિદ્ધકાસણામે, લુક્કલ-કાસણામે) કર્કશ સ્પર્શ નામ મૃદુક સ્પર્શ નામ, ગુરુકસ્પર્શ નામ, લઘુ-કસ્પર્શ નામ, શીતસ્પર્શ નામ, ઉષ્ણસ્પર્શ નામ, સ્નિગ્ધસ્પર્શ નામ, રુક્ષ-સ્પર્શ નામ । કર્કશસ્પર્શ પાષાણ આદિ મેં રહતા હૈ । યહ સ્પર્શ સ્તબ્ધતા કા કારણ હોતા હૈ । હસકા જો નામ હૈ વહ કર્કશસ્પર્શ નામ હૈ । કોમલસ્પર્શ કા જો કારણ હોતા હૈ તથા તિનિશલતા-વેત્ર લતા આદિ મેં જો રહતાં હૈ વહ મૃદુકસ્પર્શ હૈ । હસકા જો નામ હૈ વહ મૃદુકસ્પર્શ નામ હૈ । જો અધઃપતન કા કારણ હોતા હૈ ઓર અયોગોલક આદિ મેં રહતા હૈ વહ ગુરુકસ્પર્શ હૈ । હસકા જો નામ હૈ વહ ગુરુકસ્પર્શ નામ હૈ । જો સ્પર્શ પ્રાયઃ તિર્યગ્ ઊર્ધ્વ, અધઃ ગમન મેં કારણ હોતા હૈ ઓર જો અર્કતૂલ આદિ કે આશ્રય રહતા હૈ વહ લઘુક સ્પર્શ હૈ । હસકા જો

આ સ્પર્શનું જે નામ છે તે સ્પર્શનામ છે. (તંજહા) તે સ્પર્શનામના આઠ પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે-(કક્ષલ્હકાસણામે, મઝયકાસણામે, ગરુયકાસણામે, લહુ-યકાસણામે, સીયકાસણામે, હસિણકાસણામે, ણિદ્ધકાસણામે, લુક્કલકાસણામે) (૧) કર્કશસ્પર્શનામ, (૨) મૃદુસ્પર્શનામ, (૩) ગુરુસ્પર્શનામ, (૪) લઘુસ્પર્શનામ, (૫) શીતસ્પર્શનામ, (૬) ઉષ્ણસ્પર્શનામ, (૭) સ્નિગ્ધસ્પર્શનામ (૮) રુક્ષસ્પર્શનામ.

પાષાણુ આદિમાં કર્કશ સ્પર્શનો સહભાવ હોય છે. આ સ્પર્શ સ્તબ્ધતાના કારણભૂત બને છે. તેનું જે નામ છે તે કર્કશસ્પર્શનામ છે કોમલ-સ્પર્શનો અનુભવ કરાવનાર તિનિશલતા (વેત્રલતા) આદિના સ્પર્શને મૃદુ-સ્પર્શ કહે છે તેનું જે નામ છે. તે મૃદુકસ્પર્શનામ છે જે વસ્તુના અધઃપતનમાં કારણભૂત બને છે એવા લોહના ગોળા આદિના સ્પર્શને ગુરુકસ્પર્શ કહે છે. આ સ્પર્શ દ્વારા વસ્તુ ભારે છે એવો અનુભવ થાય છે. આ ગુરુક સ્પર્શનું જે નામ છે તે ગુરુકસ્પર્શનામ છે. આંકડો તેલ આદિ હલકી વસ્તુઓના સ્પર્શને લઘુકસ્પર્શ કહે છે આ સ્પર્શ વસ્તુના તિર્યગ્-ગમન, ઉર્ધ્વગમન અને અધોગમનમાં કારણભૂત બને છે, તેનું જે નામ છે તે

કસ્પર્શસ્તસ્ય નામ । શીતસ્પર્શનામ-દેહસ્તમ્ભાદિ હેતુઃ હિમાદ્યાશ્રિતઃ સ્પર્શઃ શીત-
સ્પર્શસ્તસ્ય નામ । ઉષ્ણસ્પર્શનામ-આહારપાકાદિકારણં વહન્યાધનુગતઃ સ્પર્શઃ
ઉષ્ણસ્પર્શસ્તસ્ય નામ । સ્નિગ્ધસ્પર્શનામ-પુદ્ગલદ્રવ્યોનાં મિથઃ સંયુજ્યમાનાનાં બન્ધ-
નિબન્ધનં તૈલાદિસ્થિતઃ સ્પર્શઃ સ્નિગ્ધસ્પર્શસ્તસ્ય નામ । તથા-રુક્ષસ્પર્શનામપુદ્ગલ-
દ્રવ્યોનામબન્ધનિબન્ધનં ભસ્માદિસ્થિતઃ સ્પર્શઃ રુક્ષસ્પર્શસ્તસ્ય નામ । इत्यष्टविधं
સ્પર્શનામ બોધ્યમ્ । તદેતદુપસંહરન્નાહ-તદેતત્સ્પર્શ નામેતિ । અથ કિં તત્ સંસ્થાન-
નામ ? इति प्रश्नः । उत्तरयति-संस्थाननाम हि परिमण्डलसंस्थाननामादिभेदैः

નામ હૈ વહ લઘુક સ્પર્શ નામ હૈ । દેહસ્તમ્ભ આદિ કા જો હેતુ
હોતા હૈ એવં જો હિમ આદિ કે સહારે રહતા હૈ વહ શીતસ્પર્શ હૈ ।
હસકા જો નામ હૈ વહ શીતસ્પર્શ નામ હૈ । આહાર કે પકાને આદિ કા
જો કારણ હોતા હૈ એસા અગ્નિ આદિ કે સહારે રહા હુઆ જો સ્પર્શ
હૈ વહ ઉષ્ણસ્પર્શ હૈ । હસકા જો નામ હૈ વહ ઉષ્ણસ્પર્શ નામ હૈ । પરસ્પર
મિલે હુए પુદ્ગલ દ્રવ્યોં કે સંશ્લિષ્ટ હોને કા કારણ હોતા હૈ એસા તૈલા
દિક પદાર્થ કે સહારે રહા હુઆ સ્પર્શ-સ્નિગ્ધસ્પર્શ હૈ । હસકા જો
નામ હૈ વહ સ્નિગ્ધસ્પર્શ નામ હૈ । જો પુદ્ગલ દ્રવ્યોં કે અબન્ધ કા કારણ
હોના હૈ એસા ભસ્માદિ સ્થિત સ્પર્શ રુક્ષસ્પર્શ હૈ । હસકા જો નામ હૈ
વહ રુક્ષસ્પર્શ નામ હૈ । (સે તં ફાસણામે) હસ પ્રકાર યહ આઠ પ્રકાર
કા સ્પર્શનામ હૈ । (સે કિં તં સંઠાણણામે) વહ સંસ્થાન નામ કયા હૈ ?

લઘુકસ્પર્શનામ છે હિમ, ઝરફ આદિના સ્પર્શથી જે સ્પર્શનેા અનુભવ થાય
છે તે સ્પર્શને શીતસ્પર્શ કહે છે. શરીર ઠુંઠવાઈ જવામાં કે અકડાઈ જવામાં
આ સ્પર્શ કારણભૂત બને છે. તેનું જે નામ છે, તે શીતસ્પર્શનામ છે.
આહારને રાંધવા આદિમાં જે કારણભૂત થાય છે અને અગ્નિ આદિમાં જેના
સદ્ભાવ હોય છે, તે સ્પર્શને ઉષ્ણસ્પર્શ કહે છે તેનું જે નામ છે તે ઉષ્ણ-
સ્પર્શનામ છે. તેલ, ઘી આદિ પદાર્થોમાં જે સ્પર્શનેા સદ્ભાવ હોય છે તે
સ્પર્શને સ્નિગ્ધસ્પર્શ કહે છે. પરસ્પર મળેલાં પુદ્ગલ દ્રવ્યોના એક બીજા
સાથે સંશ્લિષ્ટ રહેવામાં આ સ્પર્શ કારણભૂત બને છે. તેનું જે નામ છે તે
સ્નિગ્ધસ્પર્શનામ છે જે સ્પર્શ પુદ્ગલ દ્રવ્યોના અબન્ધમાં કારણભૂત બને છે
તે સ્પર્શને રુક્ષસ્પર્શ કહે છે ભસ્મ આદિમાં આ સ્પર્શનેા સદ્ભાવ હોય છે.
તેનું જે નામ છે તે રુક્ષસ્પર્શનામ છે (સે તં ફાસણામે) આ પ્રકારનું આઠ
પ્રકારના સ્પર્શનામનું સ્વરૂપ છે.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં સંઠાણણામે ? હે ભગવન્ ! સંસ્થાન નામનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

પંચવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । સંસ્થાનમાકારવિશેષસ્તત્સ્વરૂપં પ્રસિદ્ધમેવ । તદેતદુપસંહરન્નાહ-
તદેતત્ સંસ્થાનનામેતિ । इत्थं गुणनाम प्ररूपितमिति सूचयितुमाह-तदेतत्
गुणनामेति ॥सू० १४६॥

મૂલ્ય-સે કિં તં પઞ્જવળામે ? પઞ્જવળામે અળેગવિહે
પળ્ળત્તે, તં જહા-એગગુણકાલણ દુગુણકાલણ તિગુણકાલણ
જાવ દસગુણકાલણ સંઘિજ્જગુણકાલણ અસંઘિજ્જગુણકાલણ
અળંતગુણકાલણ । એવં નીલલોહિયહાલિદ્ધસુકિલ્લા વિ ભાણિ-
યવ્વા । એગગુણસુરભિગંધે દુગુણસુરભિગંધે તિગુણસુરભિગંધે

(સંઠાણનામે પંચવિહે પળ્ળત્તે) સંસ્થાન નામ પાંચ પ્રકાર કા પ્રજ્ઞપ્ત હુઆ
હૈ (પરિમંડલસંઠાણનામે, વટ્ટસંઠાણનામે, તંસ સંઠાણનામે, ચત્તરંસ-
સંઠાણનામે આયયસંઠાણનામે) સંસ્થાન નામ આકાર વિશેષ કા હૈ ।
યહ સંસ્થાન નામ પરિમંડલ સંસ્થાન નામ આદિ કે ભેદ સે પાંચ પ્રકાર
કા હૈ । इन संस्थानों का स्वरूप प्रसिद्ध ही है । संस्थान के नाम इस
प्रकार से हैं-परिमंडल संस्थान, वृत्त संस्थान, व्यस्रसंस्थान, चतुरस्र-
संस्थान, और आयतसंस्थान । (से तं संठाणनामे) इस प्रकार यह
संस्थान नाम है । (से तं गुणनामे) इस प्रकार से यहांतक यह गुणनाम
का वर्णन है । द्रव्यों के नाम द्रव्यनाम, वर्ण रस आदिकोंके नाम
गुणनाम है । ॥सू० १४६॥

ઉત્તર-(સંઠાણનામે પંચવિહે પળ્ળત્તે) સંસ્થાનનામના પાંચ પ્રકાર કહ્યા
છે. (તંજહા) તે પ્રકારે નીચે પ્રમાણે છે-(પરિમંડલસંઠાણનામે, વટ્ટસંઠાણનામે,
તં સંસંઠાણનામે, ચત્તરંસસંઠાણનામે, આયયસંઠાણનામે) આકાર વિશેષનું નામ
સંસ્થાન છે આ સંસ્થાનનામના પરિમંડલ સંસ્થાન નામ આદિ પાંચ પ્રકારે
છે. આ સંસ્થાનોનું સ્વરૂપ જાણીતું હોવાથી અહીં તેમનું વર્ણન કરવામાં
આવ્યું નથી સંસ્થાનનાં નામ આ પ્રમાણે છે-(૧) પરિમંડલસંસ્થાન (૨)
વૃત્તસંસ્થાન, (૩) વ્યસ્રસંસ્થાન, (૪) ચતુરસ્રસંસ્થાન અને (૫) આયત-
સંસ્થાન. (સે તં સંઠાણનામે) આ પ્રકારનું સંસ્થાન નામનું સ્વરૂપ છે. (સે તં
ગુણનામે) વર્ણ, રસ, ગંધ, સ્પર્શ અને સંસ્થાનનામ રૂપ શુણ્ણનામનું આ
પ્રકારનું સ્વરૂપ છે દ્રવ્યોનાં નામને દ્રવ્યનામ કહે છે અને વર્ણ રસ ગંધ,
સ્પર્શ અને સંસ્થાનના નામને શુણ્ણનામ કહે છે. ॥સૂ० ૧૪૬॥

જાવ અંગંતગુણસુરભિગંધે । એવં દુરભિગંધોઽપિ ભાણિયઞ્વો ।
 એગુણતિત્તે જાવ અંગંતગુણતિત્તે । એવં કઢુયકસાય અંબિલ-
 મધુરાવિ ભાણિયઞ્વા । એગુણકવ્વલે । જાવ અંગંતગુણકવ્વલે
 એવં મઝયગરુયલહુયસીતઽસિણિહલુલ્લાવિ- ભાણિયઞ્વા ।
 સે તં પજ્જવણામે ॥સૂ. ૧૪૭॥

છાયા—અથ કિં તત્ પર્યવનામ ? પર્યવનામ અનેકવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્, તથા—
 એકગુણકાલકઃ, દ્વિગુણકાલકઃ, ત્રિગુણકાલકો યાવદ્ દશગુણકાલકઃ સંખ્યેય-
 ગુણકાલકઃ અસંખ્યેયગુણકાલકઃ અનન્તગુણકાલકઃ । એવં નીલલોહિતહારિદ્રથુક્ત્વા
 અપિ મણિતવ્યાઃ । એકગુણસુરભિગંધો દ્વિગુણસુરભિગંધઃ ત્રિગુણસુરભિગંધો
 યાવદનન્તગુણસુરભિગંધઃ । એવં દુરભિગંધોઽપિ મણિતવ્યઃ । એકગુણતિત્તો
 યાવદનન્તગુણતિત્તઃ । એવં કઢુકકપાયામ્લમધુરા અપિ મણિતવ્યાઃ । એકગુણકર્કશો
 યાવદનન્તગુણકર્કશઃ । એવં મૃદુકગુરુકલઘુકશીતોષ્ણ સિન્ધુરુક્ષા અપિ મણિતવ્યાઃ ।
 તદેતત્ પર્યવનામ ॥સૂ. ૧૪૭॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

સમ્પ્રતિ પર્યવનામ પરિજ્ઞાતું પૃચ્છતિ—અથ કિં તત્ પર્યવનામ ? ઇતિ । ઉત્તર-
 યતિ—પર્યવનામ—પરિ=સમન્તાત્ અવન્તિ=અપગચ્છન્તિ ન તુ દ્રવ્યવત્ સર્વદૈવાવતિ-
 ણ્ઠન્તે ઇતિ પર્યવાઃ । અથવા—પરિ=સમન્તાત્ અવનાનિ=ગમનાનિ=દ્રવ્યસ્યાવસ્થા-
 ન્તરપ્રાપ્તિરૂપાણીતિ પર્યવાઃ=એકગુણકાલત્વાદયસ્તેષાં નામ—પર્યવનામ । પર્યાય-

“સે કિં તં પજ્જવણામે” ? ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં પજ્જવણામે) હે ભદ્રન્ત ! પર્યવ નામ કયાં છે ?

ઉત્તર—(પજ્જવણામે અણેગવિહે પણ્ણત્તે) પર્યવનામ અનેક પ્રકાર
 કા પ્રજ્ઞપ્ત હુઆ છે । દ્રવ્ય કે જેવી જો સર્વદા નહીં ઠહરતી છે—કિંતુ
 વદલતી રહતી છે તે પર્યવ છે । અથવા જો દ્રવ્ય કી ભિન્ન ૨ અવસ્થારૂપ
 હોં તે પર્યવ છે । એ પર્યવ એક ગુણકાલત્વ આદિ છે । इनका नाम पर्यव-

હવે પર્યવનામની પ્રજ્ઞપણા કરવામાં આવે છે—

“સે કિં તં પજ્જવણામે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં પજ્જવણામે?) હે ભગવન્ ! પર્યવનામનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(પજ્જવણામે અણેગવિહે પણ્ણત્તે) પર્યવનામ અનેક પ્રકારના કદમાં
 છે. દ્રવ્યની જેમ જેનું અસ્તિત્વ સદા રહેતું નથી, પણ જે બદલાતી જ રહે
 છે તેનું નામ પર્યાય અથવા પર્યવ છે અથવા તે દ્રવ્યની વિન્ન વિન્ન અવ-

નામેતિ પાઠાન્તરપક્ષે-પરિ=સમન્તાત્ અયન્તે=અપગચ્છન્તીતિ પર્યાયાઃ । યદ્વા-
પરિ=સામસ્ત્યેન યન્તિ=અભિગચ્છન્તિ વસ્તુતામિતિ પર્યાયાસ્તેષાં નામપર્યાયનામ ।
અત્રપક્ષેડ્યર્થઃ પૂર્વોક્ત એવ વોધ્યઃ । પર્યવનામ હિ અનેકવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । અનેક-
વિધસ્વમેવાહ-તદ્વથા-એકગુણકાલકઃ-અત્ર ગુણશબ્દોડ્યાર્થકઃ । એકગુણેન=એકાં-
શેન કાલકઃ=કૃષ્ણઃ પરમાણ્વાદિરેકગુણકાલક इत्युच्यते । સમસ્તસ્યાપિ ત્રૈલોક્ય-

નામ હૈં । જલ “ પજ્જવણામે ” હસકી સંસ્કૃત છાયા પર્યાયનામ એસી
હોતી હૈ તલ હસ પાઠાન્તર પક્ષ મૈં બી યહી પર્યવ નામોક્ત ધર્થ હી
નિકલતા હૈ (તંજહા) યહ પર્યવનામ અનેક પ્રકાર કા હસ પ્રકાર સે હૈ-
(એકગુણકાલક, દુગુણકાલક, ત્રિગુણકાલક, જાલ દસગુણકાલક
સંલિજ્જગુણકાલક, અસંલિજ્જગુણકાલક અણંતગુણકાલક) એક
ગુણકાલક, દ્વિગુણકાલક, ત્રિગુણકાલક, યાલત્ દશગુણકાલક, સંખ્યા-
તગુણકાલક, અસંખ્યાતગુણકાલક, અનંતગુણકાલક । યહાં ગુણ
શબ્દ અંશ કા લાચક હૈ । જિસ પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય મૈં કૃષ્ણ ગુણ કા
એક અંશ હો લહ પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય એક ગુણકાલક હૈ । હસી પ્રકાર
જિસ પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય મૈં કૃષ્ણ ગુણ કે દો અંશ હૈં લહ દ્વિગુણકા-
લક હૈ ત્રીન અંશ કૃષ્ણ ગુણ કે હૈં લહ ત્રિગુણકાલક હૈ યાલત્
સંખ્યાત અંશ કૃષ્ણગુણ કે હૈં લહ સંખ્યાતગુણકાલક હૈ અસંખ્યાત

સ્થાઓ । રૂપ હોલ છે. દ્રવ્યની ઓક ગણી, બે ગણી કાળાશ આદિ રૂપ આ
પર્યાય હોલ છે. “ પજ્જવણામે ” આ પદની સંસ્કૃત છાયા ‘ પર્યાયનામ ’
થાલ છે. તે પર્યાયનામનો અર્થ પણ પર્યવનામ થાલ છે. આ રીતે પર્યાય
અને પર્યવ, આ બન્ને સમાન અર્થી પદો છે.

(તંજહા) તે પર્યવનામના અનેક પ્રકારો છે જેમ કે (એકગુણકાલક,
દુગુણકાલક, ત્રિગુણકાલક, જાલ દસગુણકાલક, સંલિજ્જગુણકાલક, અસંલિ-
જ્જગુણકાલક, અણંતગુણકાલક) ઓક ગુણકાલક, દ્વિગુણકાલક, ત્રિગુણકાલક લધને
દસગુણ પર્યન્તનું કાલક, સંખ્યાત ગુણકાલક, અસંખ્યાત ગુણકાલક અને
અનંતગુણકાલક અહીં ‘ ગુણ ’ શબ્દ અંશનો લાચક છે. જે પરમાણુ આદિ
દ્રવ્યમાં કાળાશનો ઓક અંશ હોલ છે તે પરમાણુ આદિ દ્રવ્યને ઓકગુણ
કાલક દ્રવ્ય કહે છે. એજ પ્રમાણે જે પરમાણુ આદિ દ્રવ્યમાં કાળાશના બે
અંશ હોલ છે તે પરમાણુ આદિ દ્રવ્યને દ્વિગુણકાલક દ્રવ્ય કહે છે એજ પ્રમાણે
દસગુણકાલક પર્યન્તના દ્રવ્યેનો અર્થ પણ સમજવો જે દ્રવ્યમાં કાળાશના
સંખ્યાત અંશ હોલ છે તે દ્રવ્યને સંખ્યાત ગુણકાલક કહે છે જે દ્રવ્યમાં

ગતકાલકસ્ય અસત્કલ્પનયા પિષ્કિતસ્ય ચ એકઃ=સર્વજઘન્યો ગુણઃ=અંશસ્તેન
કાલકઃ-એકગુણકાલકઃ-સર્વજઘન્ય-કૃષ્ણ इत्यर्थः। एवं द्विगुणकालकप्रभृत्यनन्त-
गुणकालकान्ताः परमाणवो बोध्याः। एवमेव एकगुणनीलकादय एकगुणलोहित-

અંશ કૃષ્ણગુણ કે હૈં વહ અસંખ્યાત ગુણકાલક હૈં ઓર અનંત અંશ
કૃષ્ણ ગુણ કે હૈં વહ અનંતગુણકાલક હૈં। એક ગુણ સે જો કાલા હૈં
એસા પરમાણવાદિ દ્રવ્ય એક ગુણકાલક શબ્દ કા વાચ્યાર્થ હૈં। હસી
પ્રકાર સે અન્યત્ર ધી-દ્વિગુણકાલક આદિ મેં ધી સમજના ચાહિયે।
તાત્પર્ય કહને કા ઘહ હૈં કિ તીન લોક મેં જિતના ધી કાલક ગુણ હૈં
ઉસકો અસત્ કલ્પના સે એકત્રિત કરલો, ફિર ઉસમેં સે ઉસ કૃષ્ણ
વર્ણ કા સબસે જઘન્ય અંશ લેલો-હસ જઘન્ય કૃષ્ણાંશ સે જો કાલા
હો-વહ એક ગુણકાલક પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય હૈં। (એવં) હસી પ્રકાર
(નીલલોહિયહાલિદસુક્કિલા વિ ભાણિયઘ્વા) એક ગુણ-અંશ નીલવર્ણ
કા જિસમેં હૈં વહ એક ગુણનીલક પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય હૈં। દો ગુણ-
અંશ-નીલવર્ણ કે જિસમેં હૈં વહ દ્વિગુણનીલક હૈં। હસી પ્રકાર સે તીન
ચાર આદિ સંખ્યાત, અસંખ્યાત ઓર અનન્ત અંશ નીલવર્ણ કે જિસમેં
હૈં વે તીન ગુણનીલક, ચાર ગુણનીલક યાવત્ સંખ્યાત ગુણનીલક

કાળાશના અસંખ્યાત અંશ હોય છે, તે દ્રવ્યને અસંખ્યાત ગુણ કાલક કહે
છે અને જે દ્રવ્યમાં કાળાશના અનંત અંશ હોય છે તે દ્રવ્યને અનંતગુણ
કાલક કહે છે. આ રીતે કાળાશના એક ગુણ અથવા અંશવાળું પરમાણુ
આદિ દ્રવ્ય “ એકગુણકાલક ”નું સમાનાર્થી પદ છે. એજ પ્રમાણે દ્વિગુણ-
કાલક આદિના વિષયમાં પણ સમજવું આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-
ત્રણે લોકમાં જેટલો કાલકગુણ (કાળાશ) છે તેને ધારે કે અસત્કલ્પનાને
આધારે એકત્ર કરવામાં આવે ત્યાર બાદ તેમાંથી તે કૃષ્ણ વર્ણનો જઘન્ય
(સૌથી નાનો) અંશ લઈ લો. આ જઘન્ય કૃષ્ણઅંશ પ્રમાણ કાળા દ્રવ્યને
એક ગુણ કાલક પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય કહે છે. (એવં) એજ પ્રમાણે (નીલ,
લોહિય, હાલિદસુક્કિલા વિ ભાણિયઘ્વા) જે પરમાણુ આદિ દ્રવ્યમાં નીલ વર્ણનો
એક અંશ હોય છે તેને એક ગુણ નીલક પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય કહે છે જેમાં
નીલવર્ણના બે અંશ હોય છે તેને દ્વિગુણનીલક દ્રવ્ય કહે છે એજ પ્રમાણે
ત્રણ, ચાર આદિ દસ પર્યાન્તના નીલવર્ણના અંશ જેમાં હોય છે તે દ્રવ્યોને
ત્રણગુણ નીલક, ચારગુણનીલક, (યાવત્) દસ ગુણનીલક દ્રવ્ય કહે છે એજ
પ્રમાણે સંખ્યાત, અસંખ્યાત અને અનંત અંશ નીલવર્ણ ધરાવતાં દ્રવ્યોને

કાદય એકગુણહારિદ્રાદય એકગુણશુક્લાદયશ્ચ પરમાણ્વો વૌધ્યાઃ । તથા-એકગુણસુ-
રભિગંધાદ્યનન્તગુણસુરભિગંધાન્તાઃ પરમાણ્વો વૌધ્યાઃ । એવમેકગુણદુરભિગંધાદ્ય-

અસંલ્પાત ગુણનીલક એવં અનન્ત ગુણનીલક પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય હૈં ।
इसी प्रकार एक आदि अंश लोहितवर्ण का जिसमें है वह एक गुण
लोहितक परमाणु आदि द्रव्य है, एक गुण आदि पीतवर्ण का जिसमें
है वह एक गुण पीतवर्णवाला दो गुण पीत वर्णवाला परमाणु आदि द्रव्य
है । इसी प्रकार से एक गुण आदि शुल्क वर्णवाले परमाणु आदि द्रव्य
भी जानना चाहिये । (एकगुणसुरभिगंधे दुगुणसुरभिगंधे, तिगुण-
सुरभिगंधे जाव अणंतगुणसुरभिगंधे-एवं दुरभिगंधोऽपि भाणियन्वो)
एक -जघन्य-अंश सुरभिगंधवाला परमाणु आदि दो अंश सुरभिगंध-
वाले परमाणु आदि यावत् अनंत अंश सुरभि गंधवाले परमाणु आदि
भी जानना चाहिये ! एक जघन्य अंश दुरभिगंध का जिसमें है वह
एक गुण दुरभिगंधवाला परमाणु आदि द्रव्य है यावत् अनंत अंश
दुरभिगंध के जिसमें हैं वे अनन्त गुण दुरभिगंधवाले परमाणु आदि हैं ।

અનુક્રમે સંજ્ઞાત ગુણનીલક, અસંજ્ઞાત ગુણનીલક અને અનંતગુણનીલક
દ્રવ્યો કહે છે. એજ પ્રમાણે જે પરમાણુ આદિ દ્રવ્યમાં લાલવર્ણનો એક
અંશ હોય છે, તે પરમાણુ આદિ દ્રવ્યને એક ગુણ લોહિતક દ્રવ્ય કહે છે
એજ પ્રમાણે દ્વિગુણલોહિતકથી લઈને અનંતગુણ લોહિતક પર્યન્તના પદોનો
અર્થ જાતે જ સમજી શકાય એવો છે જે પરમાણુ આદિ દ્રવ્યમાં પીળાવ-
ર્ણનો એક અંશ હોય છે, તેને એક ગુણ પીતવર્ણવાળું કહે છે એજ પ્રમાણે
દ્વિગુણ પીત વર્ણવાળાં દ્રવ્યોથી લઈને અનંતગુણપીતવર્ણવાળાં દ્રવ્યો વિષે
પણ સમજવું એજ પ્રમાણે શુક્લ વર્ણના એકથી લઈને અનંત પર્યન્તના
અંશવાળા પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય વિષે પણ સમજવું.

પર્યવનામના વધુ પ્રકારોને હવે પ્રકટ કરવામાં આવે છે—

(એકગુણસુરભિગંધે, દુગુણસુરભિગંધે, ત્રિગુણસુરભિગંધે, જાવ અણંતગુણ
સુરભિગંધે, એવં દુરભિગંધોઽપિ ભાણિયન્વો) એક સુરભિગંધવાળું પરમાણુ આદિ
(ઓછામાં ઓછા સુરભિના અંશવાળું પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય), સુરભિના એ અંશ-
વાળું, અને ત્રણથી લઈને અનંત પર્યન્તના સુરભિગંધના અંશોવાળાં પરમાણુ
આદિ દ્રવ્યો પણ હોય છે એજ પ્રમાણે એકથી લઈને અનંત પર્યન્તના દુરભિ-
ગંધના અંશોવાળાં પરમાણુ આદિ દ્રવ્યો હોય છે જે પરમાણુ આદિ દ્રવ્યમાં
દુર્ગંધનો ઓછામાં ઓછો અંશ-એક અંશ-હોય તે દ્રવ્યને એક ગુણ દુરભિ-
ગંધવાળું કહે છે. એજ પ્રમાણે બાકીનાં પદોનો અર્થ પણ સમજી લેવો.

નન્તગુણદુરભિગન્ધાન્તાઃ પરમાણવો બોધ્યાઃ । તથા—એકગુણતિક્તાઘનન્તગુણતિક્ત-
પર્યન્તાઃ પરમાણવો બોધ્યાઃ । એવમેવ—એકગુણકઠુકાદયઃ, એકગુણ કષાયાદયઃ,
એકગુણામ્લાદયઃ, એકગુણમધુરાદયશ્ચાપિ પરમાણવો બોધ્યાઃ । તથા—એકગુણકર્કશ-
પ્રભૃત્યનન્તગુણકર્કશાન્તાઃ બોધ્યાઃ । એવમેવ—એકગુણમૃદુકાદયઃ, એકગુણગુરુકા-
દયઃ, એકગુણલઘુકાદયશ્ચ—કર્કશમૃદુ—ગુરુલઘુસ્પર્શાઃ પરમાણુષુ ન લભ્યન્તે, एषां
વાદરાનન્તપ્રદેશિસ્કન્ધેષ्वેવ સદ્ભાવાત્, તતોऽत्रપરમાણવો ન ગ્રાહ્ય इति । તથા
એકગુણશીતાદયઃ, એકગુણોષ્ણાદયઃ, એકગુણસ્નિગ્ધાદયઃ, એકગુણરુક્ષાદયશ્ચ

તથા એક ગુણ તિક્ત કા જિસમેં હૈ વહ એક ગુણ તિક્તવાલા પરમાણુ
આદિ હૈ યાવત્ અનંત અંશ તિક્ત ગુણ કે જિસમેં હૈં વે અનંત ગુણ
તિક્તવાલે પરમાણુ આદિ હૈં એસા જાનનાં ચાહિયે । હસી પ્રકાર સે એક
ગુણ કઠુકાદિવાલે, એક ગુણ કષાય આદિવાલે, એક ગુણ અમ્લાદિવાલે
ઔર એક ગુણ મધુરાદિ રસવાલે પરમાણુ આદિ બી જાનનાં ચાહિયે
તથા એક ગુણ કર્કશ સ્પર્શવાલે સે લેકર અનંત કર્કશાંશવાલે બી એસે
હી જાનનાં ચાહિયે ! હસી પ્રકાર એક ગુણ મૃદુક આદિવાલે, એક ગુણ
ગુરુ સ્પર્શ આદિવાલે એક ગુણ લઘુ સ્પર્શ આદિવાલે બી જાનનાં ચાહિયે
કર્કશ મૃદુ—ગુરુ લઘુ યે ચાર સ્પર્શ પરમાણુ મેં નહીં હોતે હૈં, કયોં કિ યે
ચાર સ્પર્શ વાદર અનન્તપ્રદેશી સ્કન્ધ મેં હી હોતે હૈં । તથા એક ગુણ

રસની અપેક્ષાએ પર્યાયના નીચે પ્રમાણે પ્રકારો છે—એક ગુણતિક્ત
રસવાળું પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય એજ પ્રમાણે અનંત પર્યન્તના તિક્તગુણવાળાં
પરમાણુ આદિ દ્રવ્યો પણ હોય છે. એજ પ્રમાણે એક ગુણ કઠુકથી લઈને
અનંતગુણ કઠુક પર્યન્તના, એક ગુણ કષાયથી લઈને અનંત ગુણ કષાય
એક ગુણ અમ્લરસથી લઈને અનંતગુણ પર્યન્તના અમ્લ રસવાળાં અને
એક ગુણ મધુરથી લઈને અનંત પર્યન્તના મધુરગુણવાળાં દ્રવ્યો પણ હોય છે.

સ્પર્શની અપેક્ષાએ પર્યાયના નીચે પ્રમાણે પ્રકારો છે—એક ગુણ કર્કશ
સ્પર્શવાળાથી લઈને અનંતગુણ કર્કશ સ્પર્શવાળા, એજ પ્રમાણે એક ગુણ
મૃદુકથી લઈને અનંત ગુણ મૃદુક પર્યન્તના, એક ગુણથી લઈને અનેક ગુણ
પર્યન્તના ગુરુ સ્પર્શવાળાં, એક ગુણથી અનેક ગુણ પર્યન્તના લઘુ સ્પર્શવાળાં,
એક ગુણથી લઈને અનેક ગુણ શીતસ્પર્શવાળાં, એકથી લઈને અનેક ગુણ ઉષ્ણ-
સ્પર્શવાળાં, એકથી લઈને અનેક ગુણ પર્યન્તના સ્નિગ્ધ સ્પર્શવાળાં અને
એકથી અનેક ગુણ પર્યન્તના રુક્ષસ્પર્શવાળાં, દ્રવ્યો પણ હોય છે કર્કશ, મૃદુ,

બોધ્યાઃ । નનુ-ગુણપર્યાયયોઃ કો ભેદઃ ? इति चेदुच्यते-सर्वदा सहवर्त्तिनो गुणाः, क्रमवर्त्तिनः पर्यायाः, एवं च-सदैव सहवर्त्तित्वाद् वर्णगन्धरसादयः सामान्येन गुणा उच्यन्ते, न हि मूर्ते वस्तुनि कदाचिदपि वर्णगन्धरसादयो निवर्त्तन्ते । एकगुण-कालકત્વાદયસ્તુ પર્યાયાઃ । દ્વિગુણકાલકત્વાવસ્થાયામેકગુણકાલત્વસ્યાભાવેન

શીતાદિવાલે, એક ગુણ ઉષ્ણાદિવાલે, એક ગુણસ્નિગ્ધાદિવાલે ઓર એક ગુણ રુક્ષાદિવાલે મી જાનના ચાહિયે ।

શંકા-ગુણ ઓર પર્યાય મેં કયા ભેદ હેં ? શંકાકાર કા યહ અભિ-પ્રાય હૈ કિ દ્રવ્ય મેં ગુણ ઓર પર્યાયે યુગપત્ રહા કરતી હેં તબ યે દોનોં એક હી હેં-ફિર ગુણ ઓર પર્યાયોં કો સૂત્રકાર ને અલગ અલગ કયોં કહા ?

ઉત્તર-ગુણ ઓર પર્યાયેં યદ્યપિ દ્રવ્ય મેં એકસાથ રહતી હેં-ફિર મી હનમેં યહ ભેદ હૈ કિ ગુણ તો દ્રવ્ય કે સહવર્તી હોતે હેં ઓર પર્યાયેં ક્ષણ વિઘ્વંસી હોને કે કારણ દ્રવ્ય કી સહવર્તી નહીં હોતી હેં । યે તો ક્રમવર્તિની હી હોતી હેં । હસલિયે સર્વદા સહવર્તી હોને કે કારણ વર્ણ ગંધ, ઓર રસાદિક સામાન્ય સે ગુણ કહે જાતે હેં ઓર ઊનકી એક ગુણ કાલકત્વાદિ ક્રમવર્તી અવસ્થાએ પર્યાય કહી જાતી હેં । યે વર્ણ, ગંધ, આદિ ગુણ મૂર્ત વસ્તુ જો પુદ્ગલ હેં ઊસસે કમી મી નિવૃત્ત નહીં હોતે હેં ।

ગુરુ અને લઘુ, આ ચાર સ્પર્શોનો પરમાણુમાં સદ્ભાવ હોતો નથી, કારણ કે તે ચાર સ્પર્શોનો સદ્ભાવ બાહર અનંત પ્રદેશી સ્કન્ધમાં જ હોય છે.

શંકા-ગુણ અને પર્યાય વચ્ચે શો ભેદ છે ? (આ પ્રશ્નનો ભાવાર્થ એ છે કે દ્રવ્યમાં ગુણ અને પર્યાયો એક સાથે જ રહેતાં હોય છે આ રીતે તે બંને એક જ હોવા છતાં પણ સૂત્રકારે ગુણ અને પર્યાયોનું જુદા જુદા વિષય રૂપે શા માટે કથન કર્યું છે ?)

ઉત્તર-ગુણ અને પર્યાયો બે કે દ્રવ્યમાં એક સાથે રહે છે, છતાં પણ તે બંનેમાં આ પ્રમાણે ભેદ છે-

ગુણતો દ્રવ્યોનો સહવર્તી હોય છે, પરંતુ પર્યાયો ક્ષણ વિઘ્વંસી હોવાને કારણે દ્રવ્યના સહવર્તી હોતા નથી વર્ણ, ગંધ, રસ આદિ સર્વદા સહવર્તી હોવાને કારણે તેમને ગુણ કહેવામાં આવે છે. પણ તેમની એક ગુણકાલત્વ આદિ ક્રમવર્તી અવસ્થાઓને પર્યાય કહેવામાં આવે છે. વર્ણ, ગંધ આદિ જે ગુણો છે તેમનો મૂર્ત વસ્તુમાંથી-પુદ્ગલમાંથી-કદી પણ નાશ (નિવૃત્તિ) થતો નથી ગુણોના અંશોનું નામ પર્યાય છે. ગુણનો એક અંશ બે અંશોની

एकगुणकालकत्वावस्थायां द्विगुणकालकत्वस्याभावेन च एकगुणकालकत्वादीनां क्रमवृत्तित्वात् पर्यायत्वं बोध्यम् । उक्तंच—

“सहवर्त्तिनो गुणाः, यथा जीवस्य चैतन्यामूर्त्तत्वादयः ।

क्रमवर्त्तिनः पर्यायाः यथा तस्यैव नारकत्वतिर्यक्त्वादयः ॥” इति ।

નનુ યદ્યેવં તર્હિ વર્ણાદિસામાન્યસ્ય ભવતુ ગુણત્વમ્, તદ્વિશેષાણાં કૃષ્ણાદીનાં તુ ગુણત્વં ન સ્યાત્, તેષામનિયમિતત્વાત્, इति चेदाह—कृष्णादीनां वर्णसामान्यभेदा-

गुणों के गुणांश पर्याय हैं । गुण का एक अंश दो अंशों की अवस्था में निवृत्त हो जाती—हैं । इसलिये ये गुणांश पर्याय हैं । तात्पर्य कहने का यह है कि जब परमाणु द्रव्य में सर्व जघन्य रूप कृष्णादि गुण रहते हैं तब वे, दो अंश कृष्णादि गुणों के आने पर निवृत्त हो जाते हैं । इसी प्रकार कृष्णादि गुणों के दो अंश एक अंश कृष्णादि गुणों की अवस्था में निवृत्त हो जाते हैं । इसलिये कृष्णादि गुणों के ये एक, दो तीन यावत् संख्यात असंख्यात और अनंत अंश सब पर्याय हैं । क्योंकि ये क्रमवर्ती हैं । उक्तंच—“सहवर्ती” इत्यादि गुण सहवर्ती होते हैं—जैसे जीव के चैतन्य अमूर्तत्व आदि । पर्याये क्रमवर्ती होती हैं—जैसे जीव की नारक तिर्यक् आदि पर्याये ।

શંકા—યદિ યહી બાત હૈ તો ફિર વર્ણાદિ સામાન્ય મેં હી ગુણપના હોના ચાહિયે—વર્ણાદિકોં કે વિશેષ જો કૃષ્ણ આદિ હૈં ઉનમેં ગુણપના

અવસ્થામાં નિવૃત્ત થઈ જાય છે અને બે અંશ એક અંશની અવસ્થામાં પણ નિવૃત્ત થઈ જાય છે. તેથી તે ગુણાંશને પર્યાય રૂપ ગણવામાં આવે છે. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—ધારો કે કોઈ દ્રવ્યમાં ઓછામાં ઓછા પ્રમાણવાળા એટલે કે એક ગુણ (અંશ) કાળાશ આદિ ગુણ રહેલો હોય પરંતુ બે અંશ (ગુણ) કૃષ્ણાદિ ગુણોનું તે દ્રવ્યમાં આગમન થતાં જ તે એક ગુણ કૃષ્ણાદિ ગુણોની નિવૃત્તિ થઈ જાય છે એજ પ્રમાણે કૃષ્ણાદિ ગુણોના બે અંશ રહેલા હોય, તો એક ગુણકૃષ્ણાદિ અવસ્થાની પ્રાપ્તિ થતાં જ તે બે અંશોની નિવૃત્તિ થઈ જાય છે તેથી કૃષ્ણાદિ ગુણોના એક, બે, ત્રણ, ચાર, આદિથી લઈને સંખ્યાત, અસંખ્યાત અને અનંત પર્યંતના બધા અંશો પર્યાય રૂપ છે, કારણ કે તેઓ ક્રમવર્તી હોય છે. કહ્યું પણ છે કે—(“સહવર્તી”) ઇત્યાદિ આ કથન દ્વારા એ વાત પ્રકટ કરવામાં આવી છે કે ગુણ સહવર્તી હોય છે. જેમ કે જીવના ચૈતન્ય, અમૂર્તત્વ આદિ ગુણો સહવર્તી છે. પર્યાયો ક્રમવર્તી હોય છે. જેમ કે જીવની નારક, તિર્યક આદિ પર્યાયો.

શંકા—જો એવું હોય, તો વર્ણાદિ સામાન્યમાં જ ગુણપણ હોવું જોઈએ પરંતુ કાળાશ આદિ જે વર્ણવિશેષો છે તેમાં ગુણપણનો અભાવ હોવો જોઈએ,

નામપિ પ્રભૂતકાલં પ્રાયઃ સહાવસ્થાયિત્વમિતિ તેષામપિ ગુણત્વં વોધ્યમ્ । નન્વેતે ગુણપર્યાયાઃ પુદ્ગલાસ્તિકાયસ્યૈવ ભવતાઽભિહિતાઃ, ન તુ ધર્માસ્તિકાયાદીનામ્ । દૃશ્યન્તે ચ ધર્માસ્તિકાયાદીનામપિ ગુણા ગતિસ્થિત્યવગાહોપયોગવર્તનાદયઃ, પર્યાયાશ્ચ પ્રત્યેકમનન્તા અગુરુલઘ્વાદય इति चेदाह-इन्द्रियप्रत्यक्षगम्यत्वात् सुप्रति-

નહીં હોના ચાહિયે । ક્યોંકિ યે અનિયમિત હૈં । શંકાકાર કી હસ શંકા કા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ જિસ પ્રકાર ગુણ કે એક અંશ દો-અંશ આદિ અનિયમિત હૈ હસલિયે યે પર્યાય હૈં ડસી પ્રકાર કૃષ્ણાદિ ભી અનિયમિત હૈ અતઃ ઇન્હેં ભી-પર્યાય હી માનના ચાહિયે-ગુણ નહીં । સો હસ શંકા કા ઉત્તર યહ હૈ કિ વર્ણ સામાન્ય કે ભેદ જો યે-કૃષ્ણાદિ હૈં વે પ્રાયઃ વહુત સમય તક દ્રવ્ય કે સાથ અવસ્થિત રહતે હૈં । હસલિયે ઇનમેં ગુણતા માની ગઈ હૈ । પર્યાયેં હસ પ્રકાર સે દ્રવ્ય કે સાથ નિયમિત પ્રભૂતકાલ તક-નહીં રહતી હૈં । હસલિયે અચિરસ્થાયી હોને સે ડનમેં ગુણતા નહીં માની ગઈ હૈ ।

શંકા-યે ગુણ પર્યાયેં આપને પુદ્ગલાસ્તિકાય કી હી કહી હૈં ધર્માસ્તિકાયાદિકોં કી નહીં કહીં હૈં । સો એસા તો હૈ નહીં ક્યોંકિ પુદ્ગલાસ્તિકાય કે જૈસા ધર્માસ્તિકાયાદિકોં મેં ભી ગતિહેતુત્વ, સ્થિતિહેતુત્વ, અવગાહહેતુત્વ, ઉપયોગ એવં વર્તનાદિ ગુણ ઓર ઇનમેં પ્રત્યેક મેં અનન્ત અગુરુલઘુ આદિ રૂપ પર્યાયેં દેખી જાતી હૈં-

કારણુ કે તેઓ અનિયમિત છે, અહીં શંકા કરનાર વ્યક્તિ એવું કહેવા માગે છે કે જેમ ગુણના એક અંશ, બે અંશ આદિ અનિયમિત હોવાથી તેમને પર્યાય રૂપ ગણવામાં આવે છે, એજ પ્રમાણે કૃષ્ણાદિ ગુણો પણ અનિયમિત હોય છે, તેથી તેમને પણ ગુણરૂપ માનવાને બદલે પર્યાય રૂપ જ માનવા જોઈએ.

આ શંકાનું સમાધાન આ પ્રમાણે કરી શકાય—

વર્ણસામાન્યના ભેદ રૂપ જે કૃષ્ણાદિ વર્ણો છે, તેઓ સામાન્ય રીતે ઘણા સમય સુધી દ્રવ્યની સાથે અવસ્થિત રહે છે (વિદ્યમાન રહે છે) તેથી કૃષ્ણાદિ વર્ણને દ્રવ્યના ગુણરૂપ માનવામાં આવેલ છે પરન્તુ પર્યાયો એ રીતે દ્રવ્યની સાથે લાંબા સમય સુધી રહેતા નથી આ રીતે અચિરસ્થાયી હોવાને કારણે તેમને દ્રવ્યના ગુણરૂપ માનવાતે બદલે દ્રવ્યની પર્યાયો રૂપ માનવામાં આવે છે.

શંકા-આપે અહીં પુદ્ગલાસ્તિકાયના જ ગુણો અને પર્યાયોનું પ્રતિપાદન કર્યું છે. ધર્માસ્તિકાય આદિના ગુણો અને પર્યાયો તો આપે કથન જ કર્યું નથી પુદ્ગલાસ્તિકાયની જેમ ધર્માસ્તિકાય આદિકોમાં પણ ગતિ હેતુત્વ, સ્થિતિ-હેતુત્વ, અવગાહહેતુત્વ, ઉપયોગ અને વર્તનાદિ ગુણોનો અને અનન્ત અગુરુલઘુ આદિ પર્યાયોનો અહીં શા કારણે ઉલ્લેખ કરાયો નથી ?

પાઘતયા પુદ્ગલદ્રવ્યસ્યૈવ ગુણપર્યાયા ઉક્તાઃ, ન તુ શેષાણાં ધર્માસ્તિકાયાદીનામ્ ।
તસ્માદ્ યત્ કિમપિનામ્ તેન સર્વેણાપિ દ્રવ્યનામ્ના ગુણનામ્ના પર્યાયનામ્ના વા
ભવિતવ્યમ્, નાતઃ પરં કિમપિ નામાસ્તિ । તતઃ સર્વસ્યૈવાનેન સંગ્રહાત્ ત્રિનામૈ-
તદુચ્યતે इति ॥ સૂ. ૧૪૭ ॥

ઉત્તર-પુદ્ગલ દ્રવ્ય કો ગુણ પર્યાયેં ઇન્દ્રિય પ્રત્યક્ષ દ્વારા ગમ્ય હોને સે
સુપ્રતિપાદ્ય હૈં હસલિયે સૂત્રકારને ઉમ્મકી હી ગુણ ઓર પર્યાયેં યહાં
કહી હૈં શેષ ધર્માસ્તિકાયાદિકોં કી નહીં । હસલિયે જો ભી કોઈ નામ
હૈ વહ યા તો દ્રવ્ય કા નામ્ હોગા, યા પર્યાય કા નામ્ હોગા યા ગુણ
કા નામ્ હોગા । હસસે આગે ઓર કોઈ નામ નહીં હોગા અતઃ સમસ્ત
નામોં કા હસ ત્રિનામ સે સંગ્રહ હો જાને સે યહ ત્રિનામ કહલાતા હૈ ।

ભાવાર્થ-સૂત્રકારને હસ સૂત્ર દ્વારા ત્રિનામ કી વ્યાખ્યા કી હૈ-
ઉમ્મકેં ઉન્હોને યહ સ્પષ્ટ કિયા હૈ કિ ત્રીન પ્રકાર કા જો નામ હૈ વહ
ત્રિનામ હૈ । નામ કે ત્રીન પ્રકાર દ્રવ્ય ગુણ ઓર પર્યાય નામ હૈ । જો ભી
નામ હોગા વહ યા તો દ્રવ્ય કો લેકર હોગા, યા ગુણ કો લેકર હોગા
યા પર્યાય કો લેકર હોગા । ધર્માસ્તિકાયા આદિ જો નામ હૈં વે દ્રવ્યાશ્રિત
નામ હૈ । અર્થાત્-દ્રવ્યોં કે જો નામ હૈં વે દ્રવ્ય નામ હૈં । ગુણોં કે જો

ઉત્તર-પુદ્ગલદ્રવ્યના ગુણો અને પર્યાયો ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ દ્વારા અનુભવી
શકાય તેવાં હોવાથી તેમનું પ્રતિપાદન સરળતાપૂર્વક કરી શકાય છે પરંતુ
ધર્માસ્તિકાયાદિના ગુણ પર્યાયોનો ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ દ્વારા અનુભવ કરી શકતો
નથી તેથી જ સૂત્રકારે અહીં પુદ્ગલ દ્રવ્યના જ ગુણો અને પર્યાયોનું પ્રતિ-
પાદન કર્યું છે, બાકીનાં ધર્માસ્તિકાયા આદિકોના ગુણો અને પર્યાયોનું પ્રતિ-
પાદન કર્યું નથી તેથી જ જે કોઈ પણ નામ હશે તે કાં તો દ્રવ્યનું નામ હશે,
કાં તો ગુણનું નામ હશે કાં તો પર્યાયનું નામ હશે તેનાં કરતાં આગળ બીજું
કોઈ પણ નામ નહીં હોય તેથી સમસ્ત નામોનો આ ત્રિનામ વડે સંગ્રહ
થઈ જવાથી, તેમને અહીં ત્રિનામ રૂપ કહેવામાં આવેલ છે.

ભાવાર્થ-સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા ત્રિનામનું નિરૂપણ કર્યું છે આ સૂત્રમાં
તેમણે એ વાત સ્પષ્ટ કરી છે કે ત્રણ પ્રકારનું જે નામ છે તે ત્રિનામ છે.
નામના ત્રણ પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે-(૧) દ્રવ્યનામ, (૨) ગુણનામ, અને (૩)
પર્યાયનામ જે કોઈ પણ નામ હશે કાં તો દ્રવ્યને આધારે હશે, કાં તો
ગુણને આધારે હશે, કાં તો પર્યાયને આધારે હશે ધર્માસ્તિકાયા આદિ
જે નામો છે તેઓ દ્રવ્યાશ્રિત નામો છે એટલે કે દ્રવ્યોનાં જે નામ

નામ હૈં વે ગુણનામ હૈં-હસીલિયે ગુણનામ પાંચ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ। યદપિ ગુણ રૂપ રસાદિ કે ભેદ સે ચાર પ્રકાર કા હોતા હૈ પરન્તુ સંસ્થાન કો બી પુદ્ગલ દ્રવ્યાશ્રિત સર્વદા હોને કે કારણ ગુણરૂપ માંન લિયા ગયા હૈં હસલિયે ગુણનામ મેં પંચવિધતા કહી ગઈ હૈ। પાંચ પ્રકાર કે વર્ણોં કા, દો પ્રકાર કે ગંધોં કા, પાંચ પ્રકાર કે રસોં કા ઓર આઠ પ્રકાર કે સ્પર્શોં કા તથા પાંચ પ્રકાર કે પરિમંડલ આદિ આકારોં કા જો ૨ નામ હૈં વહ ગુણ નામ હોકર બી ભિન્ન ૨ રૂપ સે વર્ણાદિ નામ હૈં। હસ પ્રકાર યે ગુણનામ ૨૫ પ્રકાર કે હોકર બી એક ગુણનામ મેં હી અન્તર્ભૂત હૈં। પર્યાય નામ નિયમિત નહીં હૈં।-ક્યોંકિ પર્યાયેં સ્વયં અનેકવિધ હૈં। રૂપ, રસ, ગંધ આદિ જિતને બી ગુણ હૈં उन सब में उनके एक दो तीन चार आदि संख्यान, असंख्यात अनंत अंश हૈં એક કૃષ્ણ ગુણ કો હી લે લીજિયે-કોઈ પદાર્થ કમ્ કૃષ્ણ હૈં, કોઈ ઉસસે અધિક કૃષ્ણ હૈં ઓર કોઈ ઉસસે બી અધિક કૃષ્ણ હૈં। યહ કૃષ્ણ ગુણ કી તરતમતા ઉસકે અંશોં કે ઉપર નિર્ભર હૈં। કૃષ્ણ ગુણ કા સવસે કમ્ જો એક

છે તે દ્રવ્યનામ છે. ગુણોનાં જે નામ છે તે ગુણુનામ છે. તે ગુણુનામ પાંચ પ્રકારના કહ્યા છે જે કે વર્ણુ, રસ, ગંધ, અને સ્પર્શુ ૩૫ ચાર ગુણુ હોય છે, પરન્તુ સંસ્થાન (આકાર)નો પણ પુદ્ગલ દ્રવ્યમાં સદા સદ્ભાવ રહે છે, તે કારણે અહીં સંસ્થાનને પણ ગુણુ ૩૫ ગણીને ગુણુનામમાં પંચવિધતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે. પાંચ પ્રકારના વર્ણુના, બે પ્રકારના ગંધોનાં, પાંચ પ્રકારના રસોના, આઠ પ્રકારના સ્પર્શોનાં અને પાંચ પ્રકારના સંસ્થાનોનાં (આકારોનાં) જે જે નામો છે તે ગુણુનામ હોવા છતાં પણ જુદાં જુદાં વર્ણુાદિ નામ ૩૫ છે. આ પ્રકારે આ ગુણુનામ ૨૫ પ્રકારના હોવા છતાં પણ એક ગુણુનામમાં જ સમાવિષ્ટ થઈ જાય છે. પર્યાયનામ નિયમિત નથી, કારણ કે પર્યાયો અનેકવિધ હોય છે ૩૫, રસ, ગંધ આદિ જેટલા ગુણુ છે તેમાં વર્ણુાદિના એક, બે, ત્રણ, ચાર, આદિથી લઈને ૧૦ પર્યાયના અંશોનો, સંખ્યાત અંશોનો, અસંખ્યાત અંશોનો અને અનેક અંશોનો સદ્ભાવ હોઈ શકે છે. એકલા કૃષ્ણ વર્ણુ ૩૫ ગુણુનો જ દાખલો લઈએ કોઈ પદાર્થમાં ઘણી ઓછી કાળાશ હોય છે, કોઈકમાં અધિક કાળાશ હોય છે, કોઈમાં અધિકતર કાળાશ હોય છે, તે કોઈમાં અધિકતમ કાળાશ હોય છે. આ કૃષ્ણ ગુણુની ન્યૂનાધિકતાનો આધાર તેમાં રહેલી કાળાશના અંશો પર આધાર રાખે છે. કૃષ્ણ ગુણુનો જે સૌથી જઘન્ય (ન્યૂનમાં ન્યૂન) અંશ છે તે એક અંશ ૩૫

પુનઃપ્રકારાન્તરેણ ત્રિનામ પ્રોચ્યતે—

મૂલ્કમ્—તં પુણ ણામં તિવિહં, इत्थी पुरिसं णपुंसगं चैव ।

एएसिं तिण्हंपि य, अंतंमि य पख्वणं वोच्छं ॥१॥

तत्थ पुरिसस्स अंता, आई ऊओ हवंति चत्तारि ।

ते चैव इत्थियाओ, हवंति ओकारपरिहीणा ॥२॥

અંશ હૈ વહ કૃષ્ણ ગુણ કા જઘન્ય અંશ હૈ । યહ કૃષ્ણ ગુણાંશ કૃષ્ણ-ગુણ કા પર્યાય હૈ । હસ પર્યાયવાલા જો પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય હૈ વહ કૃષ્ણ ગુણ કી એક અંશ રૂપ પર્યાયવાલા હોને સે એક ગુણ કૃષ્ણવાલા-એક ગુણકાલક-પરમાણુ આદિ હસ નામ સે કહા જાતા હૈ । હસી પ્રકાર સે અન્ય દ્વિગુણ આદિ કાલક દ્રવ્ય પર્યાય નામ મેં જાનના ચાહિયે । હસી પ્રકાર સે અન્ય ગંધાદિ ગુણોં કે એકાદિ અંશોપેત પરમાણુ આદિ દ્રવ્યોં કે નામ કે વિષય મેં જાનના ચાહિયે । યહાં પર કૃષ્ણાદિ ગુણોં કી એક અંશ દો અંશ આદિ પર્યાયેં કહી હૈં ઓર इन पर्यायों के आश्रित एक गुण कालक परमाणु ऐसा जो नाम है वह पर्यायाश्रित नाम है । પર્યાયાશ્રિત નામ મેં પર્યાય કી મુખ્યતા રહતી હૈ । ગુણ ઓર પર્યાયોં મેં સહવર્તિત્વ ઓર ક્રમવર્તિત્વ અનિયમિતત્વ-કો લેકર ભેદ હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ સહવર્તી ગુણ ઓર ક્રમવર્તી પર્યાયેં હૈં । ॥સૂ૦૧૪૭॥

ગણાય છે તે કૃષ્ણ ગુણાંશ કૃષ્ણ ગુણની પર્યાય રૂપ ગણાય છે. આ પર્યાય-વાળું જે પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય હોય છે તે કૃષ્ણ ગુણના એક અંશ રૂપ પર્યાયવાળું હોવાથી તેને એક ગુણ કૃષ્ણતાવાળું અથવા એક ગુણ કાલક પરમાણુ આદિ રૂપ કહેવામાં આવે છે. દ્વિગુણ આદિ કાલક દ્રવ્યપર્યાયના વિષયમાં પણ એજ પ્રકારનું સ્પષ્ટીકરણ સમજવું એજ પ્રમાણે અન્ય ગંધાદિ ગુણોના એક આદિ અંશોવાળા પરમાણુ આદિ દ્રવ્યોના નામ વિષેનું કથન પણ સમજવું જોઈએ.

અહીં કૃષ્ણાદિ ગુણોના એક અંશ, એ અંશ આદિને પર્યાયો રૂપ કહેવામાં આવેલ છે. અને તે પર્યાયોને આધારે એક ગુણ કાલક પરમાણુ, આદિ જે નામો આપવામાં આવ્યાં છે, તે પર્યાયાશ્રિત નામો છે પર્યાયાશ્રિત નામના પર્યાયની પ્રધાનતા રહે છે ગુણ અને પર્યાયમાં સહવર્તિત્વ અને ક્રમવર્તિત્વ (અનિયમિતત્વ)ની અપેક્ષાએ ભેદ હોય છે એટલે કે ગુણ સહવર્તી હોય છે અને પર્યાય ક્રમવર્તી હોય છે. ॥સૂ૦૧૪૭॥

अंतिअ इंतिय उंतिय—अंताउ णपुंसगस्स वोद्धव्वा ।

एएसिं तिण्हंपि य, वोच्छामि निदंसणे एत्तो ॥३॥

आगारंतो राया, ईगारंतो गिरी य सिहरी य ।

ऊगारंतो विण्हू, दुमो य अंतो उ पुरिसाणं ॥४॥

आगारंता माला, ईगारंतो सिरी य लच्छी य ।

ऊंगारंता जंबू, बहू य अंता उ इत्थीणं ॥

अंकारंतं धन्नं, इंकारंतं नपुंसगं अत्थि ।

उंकारंतं पीलुं महुं च अंता णपुंसाणं ॥से चंतिणामे ॥सू.१४८॥

छाया—तत्पुनर्नाम त्रिविधम्, स्त्री पुरुषो नपुंसकं चैव ।

एतेषां त्रयाणामपि च, अन्ते च प्ररूपणां वक्ष्ये ॥

तत्र पुरुषस्य अन्ताः, आईऊओ भवन्ति चत्वारः ।

तएव स्त्रियाः, भवन्ति ओकारपरिहीनाः ॥

अं इति च इं इति च, उं इति च अन्तास्तु नपुंसकस्य बोधव्याः ।

एतेषां त्रयाणामपि, वक्ष्यामि निदर्शनमितः ॥

आकारान्तो 'राया' ईकारान्तो 'गिरी' च 'सिहरी' च ।

ऊकारान्तो 'विण्हू' 'दुमो' च अन्तस्तु पुरुषाणाम् ॥

आकारान्ता 'माला' ईकारान्ता 'सीरी' च 'लच्छी' च ।

ऊकारान्ता 'जंबू' 'बहू' च अन्यस्तु स्त्रीणाम् ॥

अंकारान्तं 'धन्नं' इंकारान्तं नपुंसकम् 'अत्थि' ।

उंकारान्तः 'पीलुं' 'महुं' च अन्तो नपुंसकानाम् ॥

तदेतत् त्रिनाम ॥सू० १४८॥

टीका—'तं पुण' इत्यादि—

द्रव्यसम्बन्धि तत्पुनर्नाम स्त्रीपुंनपुंसकभेदेन त्रिविधं त्रिज्ञेयम् । एषां त्रयाणामपि च नाम्नाम् अन्ते यान्याकारादीन्यक्षराणि तद्वद्वारा नाम्नः प्ररूपणां करि-

प्रकारान्तरं ये पुनः इसी त्रिनाम को सूत्रकार कहते हैं—

“तं पुण णामं तिविह” इत्यादि—

इवे सूत्रकार त्रिनामतुं गीज प्रकारे उच्यते उदे छे—

“तं पुण णामं तिविह” इत्यादि—

હ્યામિ ॥૧॥ તત્ર=ત્રિવિધનામ્નો મધ્યે પુરુષસ્ય=પુલ્લિઙ્ગનામ્નઃ અન્તાઃ=અન્ત-
સ્થિતા વર્ણા 'આઈ ડો' इति भवन्ति । तथा-સ્ત્રીલિઙ્ગ નામ્નઃ અન્તસ્થિતા વર્ણા
ઓકારવર્જિતાઃ પૂર્વોક્તા એવ વર્ણા બોધ્યાઃ । આકારાન્તા ઈકારાન્તા ડકારાન્તાશ્ચ
શબ્દા સ્ત્રીલિઙ્ગા બોધ્યાઃ ॥૨॥ તથા-નપુંસકશબ્દાનામ્ 'અં' इति च 'इं' इति च
'उं' इति च अन्ता बोध्याः । अयं भावः-अंकारान्ता इंकारान्ता उंकारान्ताश्च शब्दा
नपुंसकलिङ्गे बोध्याः । इतोऽग्रे एतेषां त्रयाणामपि निदर्शनम्=उदाहरणं वक्ष्यामि=

શબ્દાર્થ—દ્રવ્ય સંબન્ધી (તં પુણનામં) વહ નામ (તિવિહં) ત્રીન
પ્રકારકા હૈ (હૃથી પુરિસં નપુંસગં ચેવ) સ્ત્રીનામ પુરુષનામ ઔર નપુંસક
નામ । (एएसिं तिण्हं पि अंतमियपरूवणं वोच्छं) મૈં ઇન ત્રીનોં મી નામોં
કી અન્ત મેં આગત આકારાદિ અક્ષરોં દ્વારા પ્રરૂપણા કરૂંગા । (तत्थ)
ત્રીન પ્રકાર કે નામ કે બીચ મેં (पुरिसस्स) પુલ્લિઙ્ગ નામ કે (अंतो)
અન્ત મેં (आईउ ओ चत्तारि हवन्ति) આ ઈ ડ, ડો, યે ચાર વર્ણ હોતે હૈં ।
(इत्थियाओ) સ્ત્રીલિઙ્ગ નામ કે અન્ત મેં (ओकार परिहीणा) ઓકાર વર્ણ
સે રહિત યે પૂર્વોક્ત હી વર્ણ (हवन्ति) હોતે હૈં । અર્થાત્ આકારાન્ત,
ઈકારાન્ત ઔર ડકારાન્ત શબ્દ સ્ત્રીલિઙ્ગવાલે હોતે હૈં । તથા (अन्ताः)
જિનકે અન્ત મેં (अंतिअ इंतिय उंतिय) અં, ઇં, ડં યે વર્ણ હોતે હૈં વે
(नपुंसगस्स) શબ્દ નપુંસકલિઙ્ગ, કે (बोद्धव्वा) જાનના ચાહિયે । તાત્પર્ય
યહ હૈ કિ પ્રાકૃત ભાષા મેં અં, ઇં, ડં, અન્તવાલે શબ્દ નપુંસકલિઙ્ગ,

શબ્દાર્થ—દ્રવ્ય વિષયક (તં પુણનામં) તે નામ (તિવિહં) ત્રણ પ્રકારનું
હોય છે જેમ કે (હૃથી પુરિસં નપુંસગં ચેવ) (૧) સ્ત્રીનામ, (૨) પુરુષનામ
(૩) નપુંસકનામ (एएसिं तिण्हं पि अंतमियपरूवणं वोच्छं) હવે આ ત્રણે
પ્રકારનાં નામોની તેમના અંત્યાક્ષરો દ્વારા પ્રરૂપણા કરવામાં આવે છે એટલે
કે સ્ત્રીલિંગ, આદિનાં નામોને અન્તે કયા કયા અક્ષરો આવે છે, તે પ્રકટ
કરવામાં આવે છે—(तत्थ पुरिसस्स अंता आ, ई, ऊ, ओ चत्तारि हवन्ति) પુરુ-
ષનામો (पुलिङ्गनामो, नरजतिनां नामो) ને અન્તે આ, ઇ, ડ કે ઓ, આ
ચારમાંનો કોઈ પણ વર્ણ (अक्षर) હોય છે. (इत्थियाओ ओकारपरिहीणा)
સ્ત્રીનામો (नारी जतिनां नामो) ને અન્તે 'ઓ' સિવાયના પૂર્વોક્ત વર્ણો
એટલે કે આ, ઈ કે ડ (हवन्ति) હોય છે એટલે કે આકારાન્ત, ઈકારાન્ત અને
ડકારાન્ત શબ્દો નારી જાતિનાં (સ્ત્રીલિંગ) હોય છે, તથા (अन्ताः) જે શબ્દને
અન્તે (अंतिअ इंतिय उंतिय) અં, ઇં કે ડં હોય છે, તે શબ્દોને (नपुंस-
गस्स) નપુંસક લિંગના (नान्येतर जतिना) (बोद्धव्वा) સમજવા આ કથનનું
તાત્પર્ય એ છે કે પ્રાકૃત ભાષામાં અં, ઇં અને ડં અન્તવાળા પદોને નપું-

કથયિષ્યામિ ॥૩॥ અથ પુલ્લિજ્જશ્વદોદાહરણમાહ—‘રાયા’ ઇતિ આકારાન્તઃ શ્વદો બોધ્યઃ । ‘ગિરી’ ‘સિહરી’ ચ શ્વદૌ ઈકારાન્તૌ, । ‘વિઠ્ઠ’ ઇતિ ઝકારાન્તઃ ‘દુમો’ ઇતિ ઓકારાન્તઃ । એતે પુલ્લિજ્જશ્વદાઃ ॥૪॥ અથ સ્ત્રીલિજ્જશ્વદોદાહરણાન્યાહ— ‘માલા’ ઇતિ આકારાન્તઃ શ્વદઃ । ‘સિરીલચ્છી’ શ્વદૌ ઈકારાન્તૌ । ‘જંબૂ વહૂ’ શ્વદૌ ચ ઝકારાન્તૌ । આકારાન્તા ઈકારાન્તા ઝકારાન્તાશ્ચ માલાદયઃ શ્વદાઃ સ્ત્રીલિજ્જા બોધ્યાઃ ॥૫॥ અથ નપુંસકલિજ્જશ્વદોદાહરણાન્યાહ—‘અંકારં તં ધન્નં’

માને ગયે હૈં । (એતેસિં તિઠ્ઠંપિ ય એતો ણિદંસણે વોચ્છામિ) અવ મૈં યહાં સે આગે હન તીનોં કે ઉદાહરણ કહતા હૂં—(આગારંતો રાયા, ઈગારંતો ગિરી, ય સિહરી ય, ઝગારંતો વિઠ્ઠ દુમો ય અંતો ઉ પુરિસાણં) “રાયા” યહ પુલ્લિજ્જકે આકારાન્ત શ્વદ કા ઉદાહરણ હૈ “ગિરી” એવં “સિહરી” યે દો શ્વદ પુલ્લિજ્જ, કે ઈકારાન્ત શ્વદ કે ઉદાહરણ હૈં । “વિઠ્ઠ” યહ પુલ્લિજ્જ કે ઓકારાન્ત શ્વદ કા ઉદાહરણ હૈ । ઓર “દુમો” યહ પુલ્લિજ્જકે ઝકારાન્ત શ્વદ કા ઉદાહરણ હૈં । (ઇત્થીણ) સ્ત્રીલિજ્જ શ્વદ કે ઉદાહરણ યે હૈં—(આગારંતા માલા) આકારાન્ત “માલા” શ્વદ (ઈગારંતા) ઈકારાન્ત (સિરી ય લચ્છી ય) “સિરી” ઓર “લચ્છી” યે દો શ્વદ (ઝગારંતા જંબૂ વહૂય) ઓકારાન્ત “જંબૂ” ઓર “વહૂ” યે દો શ્વદ । ઇસ પ્રકાર આકારાન્ત, ઈકારાન્ત ઓર ઝકારાન્ત માલાદિકશ્વદ સ્ત્રીલિજ્જ જાનના ચાહિયે । અવ સૂત્રકાર નપુંસકલિજ્જ શ્વદોં કે ઉદાહરણ

સકલિંગના નામે ગણવામાં આવે છે. (એતેસિ તિઠ્ઠંપિ ય એતો ણિદંસણે વોચ્છામિ) હવે આ ત્રણે લિંગના પદોના ઉદાહરણો આપવામાં આવે છે— (આગારંતો રાયા, ઈગારંતો ગિરી, ય સિહરી ય, ઝગારંતો વિઠ્ઠ, ઓગારંતો દુમો, અતો ઉ પુરિસાણં) પુલ્લિલિંગના આકારાન્ત પદનું ઉદાહરણ “રાયા” (રાણ), છે. “ગિરી” (ગિરિ) અને “સિહરી” (શિખરી) આ બે પદો ઇકારાન્ત નરભતિનાં પદો છે. “વિઠ્ઠ (વિઠ્ઠ)” આ પદ ઊકારાન્ત નરભતિનું પદ છે. “દુમો (વૃક્ષ, દુમ)” આ પ્રાકૃત પદ ઓકારાન્ત નરભતિનું પદ છે. (ઇત્થીણ) સ્ત્રીલિંગ (નારીભતિનાં) પદોના નીચે પ્રમાણે ઉદાહરણ છે—(આગારંતા માલા) “માલા” આ પદ આકારાન્ત નારીભતિનું છે, (ઈગારંતા સિરી ય લચ્છી ય “સિરી” અને “લચ્છી” આ બે પ્રાકૃત પદો ઇકારાન્ત-નારી ભતિનાં પદો છે, (ઝગારંતા જંબૂ, વહૂય) “જંબૂ” અને “વહૂ” આ બે પદો ઊકારાન્ત નારીભતિનાં પદો છે. આ પ્રકારે આકારાન્ત, ઇકારાન્ત અને ઊકારાન્ત માલા આદિ પદોને સ્ત્રીલિંગ સમજવા નોંધ્યે હવે સૂત્રકાર નપુંસક

અંકારાન્તઃ શબ્દઃ ‘ધન્નં’ इति विज्ञेयः । ‘अत्थि’ इति शब्द इंकारान्तो बोध्यः । ‘पीलुं મહું’ चेति शब्द द्वयं उंकारान्तं बोध्यम् । एते अंकारान्तादयः शब्दा नपुंसकलिङ्गा बोध्याः । लिङ्गत्रये य एते शब्दा उक्तास्ते विभक्तिकाः प्राकृतशब्दा विज्ञेयाः प्रकृतमुपसंहरन्नाह—तदेतत् त्रिनामेति ॥सू० १४८॥

કહતેં હૈં—(અંકારાન્તં ધન્નં) અંકારાન્ત શબ્દ “ધન્નં” હૈં । (ઈંકારાન્તં નપુંસગં અત્થિ) ઈંકારાન્ત શબ્દ “અત્થિ” હૈ (ઉંકારાન્તં પિલું મહું ચ) ઔર ઉંકારાન્ત “પીલું” “મહું” હૈં યે અંકારાન્તાદિ શબ્દ (અન્તા) કિ જિનકે અન્ત મેં “અં” “ઈં” “ઉં” યે વર્ણ હૈં વે (નપુંસગાણં) નપુંસકલિંગ હૈં । ત્રીનોં લિંગોં મેં જો યે ઉદાહરણ કહે ગયે હૈં વે વિભક્તિયુક્ત પ્રાકૃત શબ્દ હૈં । (સે તં ત્રિનામે) ઇસ પ્રકાર યહ ત્રિનામ હૈ ।

ભાવાર્થ—પ્રાકૃત ભાષા મેં ત્રીન લિંગ હૈં । ડભમેં જિન શબ્દોં કે અન્ત મેં “આ ઈં ડ ઔ” યે ચાર વર્ણ હોં વે પુલ્લિંગ હૈં—જૈસે “રાયા” યહ શબ્દ “સંસ્કૃત મેં “રાયા” કી છાયા “રાજન્” હૈ । ઔર યહ વહાં હલન્તપુલ્લિંગ મેં નકારાન્ત શબ્દ હૈ । “ગિરી ઔર સિહરી” યે દો શબ્દ ઇકારાન્તપુલ્લિંગ કે ઉદાહરણ હૈં । સંસ્કૃત મેં ઇન કી છાયા “ગિરિ”

લિંગના (નાન્યતર જાતિનાં) પદોના ઉદાહરણો આપે છે—(અંકારાન્તં ધન્નં) “ધન્નં” આ પ્રાકૃત પદ અંકારાન્ત નપુંસક લિંગનું પદ છે (ઈંકારાન્તં નપુંસગં અત્થિ) “અત્થિ” આ પ્રાકૃત પદ ઇકારાન્ત નપુંસક લિંગનું પદ છે. (ઉંકારાન્તં પીલું મહું ચ) “પીલું” અને “મહું” આ પદો ઉંકારાન્ત નપુંસક લિંગના પદો છે. જે શબ્દોને અન્તે “અં, ઈં, ઉં” છે તે પદો (નપુંસગાણં) નપુંસકલિંગના હોય છે, આ વાત તો પહેલાં પ્રકટ કરવામાં આવી ચુકી છે. ત્રણે લિંગોનાં (જાતિનાં) આ જે પદોના ઉદાહરણો આપવામાં આવ્યા છે, તે વિભક્તિયુક્ત પ્રાકૃત શબ્દો છે. (સે તં ત્રિનામે) આ પ્રકારનું ત્રિનામનું સ્વરૂપ સમજવું.

ભાવાર્થ—પ્રાકૃત ભાષામાં ઉપયુક્ત ત્રણ લિંગ હોય છે. જે શબ્દોને અન્તે “આ, ઈં, ડ કે ઔ” આ ચાર વર્ણોમાંનો કોઈ પણ વર્ણ હોય છે તે પદો પુલ્લિંગ હોય છે જેમ કે આકારાન્ત “રાયા” પદ આ શબ્દની સંસ્કૃત છાયા “રાજન્,” થાય છે તેને ગુજરાતીમાં “રાજા” કહે છે. આ શબ્દ આકારાન્ત પુલ્લિંગનું ઉદાહરણ છે. “ગિરી” અને “સિહરી” આ બે પદો ઇકારાન્ત પુલ્લિંગના ઉદાહરણો રૂપે અહીં વપરાયાં છે. “ગિરી” આ પ્રાકૃત પદની સંસ્કૃત છાયા “ગિરી” થાય છે, “સિહરી” આ પદની

और “शिखरी” ऐसी होती है—गिरि शब्द वहां अजन्त पुल्लिङ्ग और शिखरिन् शब्द हलन्तपुल्लिङ्ग है। “विण्हु” यह शब्द उकारान्त पुल्लिङ्ग का है। इसकी संस्कृत छाया “विष्णु” ऐसी है। विष्णु शब्द यहां अजन्त पुल्लिङ्ग है। “द्रुमो” यह शब्द ओकारान्त पुल्लिङ्ग का है। इसकी छाया “द्रुमः” ऐसी है। यह शब्द वहां अकारान्त पुल्लिङ्ग है। स्त्रीलिङ्ग में प्राकृत आकारान्त माला शब्द है। संस्कृत छाया इसकी माला ही है। संस्कृत में भी यह शब्द अजन्त स्त्रीलिङ्ग ही है। प्राकृत भाषा में ओकारान्त शब्द स्त्रीलिङ्ग नहीं माना जाता है। जैसे देवो आदि शब्द। ओकारान्त शब्द सब ही पुल्लिङ्ग है। लच्छी सिरी—कि जिनकी संस्कृत छाया लक्ष्मीः और श्री ऐसी होती है दोनों शब्द ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग हैं। उकारान्त जंबू बहू शब्द प्राकृत में स्त्रीलिङ्ग हैं। संस्कृत में भी ये दोनों स्त्रीलिङ्ग में हैं। प्राकृत भाषा में नपुंसकलिङ्ग की निशानी अं इं उं है। जिनके अन्त में ये अं इं उं होते हैं वे नपुंसकलिङ्ग माने जाते हैं। जैसे अत्थि=अस्थि, महुं=मधु पीलुं=पीलु। इस प्रकार

संस्कृत छाया “शिखरी” थाय છે, ગુજરાતીમાં તેને અર્ધ પર્વત થાય છે “વિણ્હુ” આ પદ ઉકારાન્ત પુલ્લિંગના ઉદાહરણુ રૂપ છે. તેની સંસ્કૃત છાયા “વિષ્ણુ” થાય છે. “દ્રુમો” આ પદ ઓકારાન્ત પુલ્લિંગના ઉદાહરણુ રૂપ છે. તેની સંસ્કૃત છાયા “દ્રુમઃ” થાય છે તેને ગુજરાતીમાં “વૃક્ષ” કહે છે સંસ્કૃતમાં ‘દ્રુમ’ પદ અકારાન્તપુલ્લિંગ છે. આકારાન્ત સ્ત્રીલિંગ પદતુ ઉદાહરણુ “માલા” પદ છે. તેની સંસ્કૃત છાયા પણ ‘માલા’ જ થાય છે સંસ્કૃતમાં પણ આ શબ્દ આકારાન્ત સ્ત્રીલિંગ જ છે પ્રાકૃતમાં ઓકારાન્ત શબ્દને સ્ત્રીલિંગવાળો ગણવામાં આવતો નથી જેમ કે “દેવો” બધાં ઓકારાન્ત પદો પુલ્લિંગ જ હોય છે “સિરી અને લચ્છી” આ બંને પદો ઉકારાન્ત સ્ત્રીલિંગનાં ઉદાહરણુ છે તેમની સંસ્કૃત છાયા અનુક્રમે “શ્રી” અને “લક્ષ્મી” છે. સંસ્કૃતમાં પણ આ બંને પદો સ્ત્રીલિંગનાં જ પદો છે. ઝ કારાન્ત “જંબૂ” અને “બહૂ” આ બંને પ્રાકૃતમાં સ્ત્રીલિંગના શબ્દો છે સંસ્કૃત ભાષામાં પણ આ બંને શબ્દો સ્ત્રીલિંગ જ છે. જે શબ્દોના અન્ત્યાક્ષરો “અં” “ઈ” “ઉં” હોય છે, તે શબ્દો નપુંસકલિંગના હોય છે જેમ કે “અત્થિ” આ પદ ઇંકારાન્ત, “મહું” પદ ંકારાન્ત અને “પીલું” આ પદ ંકારાન્ત અને ‘ઘઙ્ઙ’ આ પદ અંકારાન્ત નપુંસકલિંગના પદો છે સંસ્કૃતમાં તેમના અર્થના વાગ્યક અનુક્રમે “મધુ”, ‘પીલુ’

અથ ચતુર્નામ નિરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં ચડનામે? ચડનામે ચડવિહે પળ્લત્તે, તં જહા—આગમેળં લોવેળં પયર્દૈવ વિગારેળં । સે કિં તં આગમેળં? આગમેળં વંકં, વયંસે, અદ્મુત્તણ્ । સે તં આગમેળં । સે કિં તં લોવેળં? લોવેળં તે ઇત્થ=તેસ્થ, પહો ઇત્થ=પહોસ્થ, ઘહો ઇત્થ=ઘહોસ્થ । સે તં લોવેળં । સે કિં તં પર્ગર્દૈવ? પર્ગર્દૈવ—હોઈ હહ ગહ્ઠે આવહંતી, આલિક્કવામો ઇણિહ, અહો અચ્છરિયં । સે તં પર્ગર્દૈવ । સે કિં તં વિગારેળં? વિગારેળં—દંડસ્સ અર્ગ્ગં=દંડર્ગ્ગં, સા આગયા=સાઽઽગયા, દહિ ઇર્ણં=દહીર્ણં, નર્દૈહ=નર્દૈહ, મધુ ઉદર્ગં=મધૂદર્ગં વહૂ ઝહો=વહૂહો । સે તં વિગારેળં । સે તં ચડનામે ॥સૂ૦ ૧૪૯॥

છાયા—અથ કિં તચ્ચતુર્નામ? ચતુર્નામ ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞસમ્, તથા—આગમેન, લોપેન, પ્રકૃત્યા, વિકારેણ । અથ કિં તદાગમેન? આગમેન—વક્રમ્, વયસ્યઃ, અતિપ્રુક્તકઃ । તદેતદાગમેન । અથ કિં તદ્ લોપેન? લોપેન—તે અન્ન=તેઽન્ન, પટો અન્ન=પટોઽન્ન, ઘટો અન્ન=ઘટોઽન્ન । તદેતદ્ લોપેન । અથ કિં તત્ પ્રકૃત્યા? પ્રકૃત્યા—ભવતિ—ઈહ, ગર્ત્તે આપત્તન્તી આલેક્ષ્યામ ઇદાનીમ્, અહો આશ્ચર્યમ્ તદેતત્ પ્રકૃત્યા । અથ કિં તદ્ વિકારેણ વિકારેણ દણ્ડસ્ય અગ્રમ્=દણ્ડાગ્રમ્, સા આગતા=સાઽઽગતા, દધિ ઇદમ્=દધીદમ્, નદી ઇહ=નદીહ, મધુ ઉદકમ્=મધૂદકમ્, વધૂ ઝહઃ=વધૂહઃ । તદેતદ્ વિકારેણ । તદેતચ્ચતુર્નામ ॥મૂ૦ ૧૪૯॥

સ્ત્રીલિંગ, પુલિંગ્ગ ઓર નપુંસકલિંગ્ગ સંબન્ધી શબ્દોં સે નિષ્પન્ન સ્ત્રીનામ—પુલિંગ્ગ નામ ઓર નપુંસક નામ હૈં । હસ પ્રકાર લિંગ્ગાનુસાર યહ ત્રિનામ સ્વરૂપ હૈ ॥સૂ૦ ૧૪૮॥

અને “ જન ” છે આ પ્રકારનાં સ્ત્રીલિંગ, પુલિંગ્ગ અને નપુંસકલિંગના શબ્દોમાંથી બનતાં નામોને અનુક્રમે સ્ત્રીનામ, પુલિંગ્ગનામ અને નપુંસકનામ કહે છે. લિંગ (ભૂતિ) અનુસાર ત્રિનામનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ સમજવું. ॥સૂ૦ ૧૪૮॥

ટીકા—‘ સે કિં તં ’ ઇત્યાદિ—

શિષ્યઃ પૃચ્છતિ-અથ કિં તચ્ચતુર્નામ ? ઇતિ ઉત્તરયતિ-ચતુર્નામ-ચતુષ્પ્રકારકં નામ-ચતુર્નામ, તદ્ધિ ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । ચતુર્વિધત્વમેવાહ-આગમેન, લોપેન, પ્રકૃત્યા, વિકારેણ ચેતિ । આગમેનેત્યાદિષુ સર્વં ‘ નિષ્પન્ન ’-મિત્યધ્યાહાર્યમ્ । તત્ર-આગમેન નિષ્પન્નમ્-‘ વંકં, વયસે, અદ્મુંતણ્ ’ વક્રં, વયસ્યઃ, અતિમુક્તકઃ, અત્ર પ્રાકૃતે આગમરૂપોઽનુસ્વારઃ, “ વક્રાદાવન્તઃ ” (૮.૧.૨૬) તથા લોપેન નિષ્પન્નં નામ-‘ તે

અવ સૂત્રકાર ચાર પ્રકાર કે નામ કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

“ સે કિં તં ચઙગામે ” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ-(સે કિં તં ચઙગામે) હે ભદન્ત ! વહ ચતુર્નામ કયા હૈ ।

ઉત્તર-(ચઙગામે ચઙગ્વિવહે પળ્લન્તે) ચતુર્નામ-ચાર પ્રકાર કા પ્રજ્ઞપ્ત હુઆ હૈ । (તં જહા) જૈસે (આગમેણ, લોવેણં પયર્હૈ, વિગારેણં) એક આગમ નિષ્પન્ન નામ, દૂસરા લોપનિષ્પન્ન નામ તૈસરાં પ્રકૃત નિષ્પન્ન નામ ઓર ચૌથા વિકાર નિષ્પન્ન નામ । (સે કિં તં આગમેણં) હે ભદન્ત ! આગમ નિષ્પન્ન નામ કયા હૈ ?

ઉત્તર—(આગમેણં વંકં વયસે, અદ્મુંતણ્) આગમનિષ્પન્ન નામ વક્ર વયસ્ય ઓર અતિમુક્તક હૈ । (સે તં આગમેણં) હસ પ્રકાર યે સવ આગમ સે નિષ્પન્ન નામ હૈ । (સે કિં તં લોવેણં) હે ભદન્ત ! લોપ નિષ્પન્ન નામ કયા હૈ ?

હવે સૂત્રકાર ચતુર્નામની પ્રરૂપણા કરે છે—

“ સે કિં તં ચઙગામે ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ-(સે કિં તં ચઙગામે) હે ભગવન્ ! નામના ચૌથાલેહ રૂપ ચતુર્નામનુ’ સ્વરૂપ કેલુ’ છે ?

ઉત્તર-(ચઙગામે ચઙગ્વિવહે પળ્લન્તે) ચતુર્નામ ચાર પ્રકારનુ’ કહ્યું છે— (તં જહા) તે ચાર પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(આગમેણ, લોવેણં, પયર્હૈ, વિગારેણં) (૧) આગમનિષ્પન્ન નામ, (૨) લોપનિષ્પન્ન નામ, (૩) પ્રકૃતિનિષ્પન્ન નામ (૪) વિકારનિષ્પન્ન નામ.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં આગમેણં) હે ભગવન્ ! આગમનિષ્પન્ન નામ કોને કહે છે ? ઉત્તર-(આગમેણં વંકં, વયસે, અદ્મુંતણ્) વક્ર, વયસ્ય અને અતિમુક્તક, આ પદો આગમનિષ્પન્ન નામો છે. (સે તં આગમેણં) આ પ્રકારનાં આગમનિષ્પન્ન નામો હોય છે

પ્રશ્ન-(સે કિં તં લોવેણં) હે ભગવન્ ! લોપનિષ્પન્ન નામ કેલુ’ હોય છે ?

एत्थ तेत्थ, पडो एत्थ पडोत्थ' ते अत्र=तेऽत्र, पटो अत्र=पटोऽत्र इत्यादि, अत्र प्राकृतप्रयोगे 'एत्थ' इत्यस्य एकारस्य लोपः "त्यदाद्यव्ययात् तत्स्वरस्य लुक्" (८।१।४०) । तथा-प्रकृत्या निष्पन्नं नाम-'गह्वरे-आवडंती, आलेखामो-एणिह, होइ-इह' गर्ते आपतन्ती, आलेक्ष्याम इदानीम्, भवति-इह, इत्यादि । अत्र "एदोतोःस्वरे" (८।१।७) "त्यादेः" (८।१।९) एतत्सूत्रानुसारेण प्राकृते प्रकृति-भावो भवति । तथा-विकारेण निष्पन्नं नाम-'दंडस्स अग्गं दंडग्गं, सा आगया-

उत्तर—(लोवेणं) लोप निष्पन्न नाम इस प्रकार से हैं—(ते एत्थ=तेऽत्थ, पडो एत्थ=पडोऽत्थ, घडो एत्थ=घडोऽत्थ) ते अत्र=तेऽत्र पटो अत्र=पटोऽत्र घटो अत्र=घटोऽत्र (से तं लोवेणं) इस प्रकार ये लोपसे निष्पन्न नाम हैं । (से किं तं पगईए ?) हे भदन्त ! प्रकृति भाव से निष्पन्न नाम क्या है ? (पगईए) प्रकृति भाव से निष्पन्न नाम इस प्रकार से है (होइ इह, गह्वरे आवडंती आलिखामो एणिह अहो अच्छरियं) भवति इह गर्ते आपतन्ती, आलेक्ष्याम इदानीम्, अहो आश्चर्यम् (से तं पगईए) इस प्रकार ये प्रयोग प्रकृति भाव से निष्पन्न नाम हैं । (से किं तं विगारेणं) हे भदन्त ! विकार से निष्पन्न नाम क्या है ?

उत्तर—(विगारेणं) विकार से निष्पन्न नाम इस प्रकार से है—(दंडस्स+अग्गं=दंडग्गं, सा+आगया=साऽऽगया, दहि+इणं=दहीणं, नई+

ઉત્તર—(લોવેણં) લોપનિષ્પન્ન નામ આ પ્રકારના હોય છે—(તે એત્થ=તેઽત્થ, પહો એત્થ=પહોઽત્થ, ઘહો એત્થ=ઘહોઽત્થ) તેઅત્ર=તેઽત્ર(તેત્ર, તે અને ત્ર વચ્ચે 'ડ' આવું જે નિશાન છે તેને અવગ્રહચિહ્ન કહે છે. આ પ્રકારનું નિશાન પછીના પદના 'અ' નો લોપ થયો છે એમ સૂચવે છે) પટોઅત્ર=પટોઽત્ર, અને ઘટોઅત્ર=ઘટોઽત્ર (આ પદોમાં અત્રના અ નો લોપ થવાથી અવગ્રહચિહ્ન મૂકવામાં આવ્યાં છે. (સે તં લોવેણં) આ પ્રકારે લોપથી નિષ્પન્ન જે નામો હોય છે તેમને લોપનિષ્પન્ન નામો કહે છે.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં પગઈએ ?) હે ભગવન્ ! પ્રકૃતિલાવથી નિષ્પન્ન નામ કેવું હોય છે ?

ઉત્તર—(પગઈએ) પ્રકૃતિલાવથી નિષ્પન્ન નામ આ પ્રકારનું હોય છે—(હોइ इह, गह्वरे आवडंती, आलिखामो एणिह, अहो अच्छरियं) ભવતિ ઇહ, ગર્તે આપતન્તી, આલેક્ષ્યામ ઇદાનીમ્, અહો આશ્ચર્યમ્ (સે તં પગઈએ), આ પ્રકારના આ પ્રયોગો પ્રકૃતિલાવનિષ્પન્ન નામના ઉદાહરણો પૂરાં પાડે છે.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં વિગારેણં) હે ભગવન્ ! વિકારનિષ્પન્ન નામ કેવું હોય છે ?

ઉત્તર—(વિગારેણં) વિકારનિષ્પન્ન નામ આ પ્રકારનું હોય છે—(દંડસ્સX

સાગયા'દળ્ડસ્ય—અગ્ર દળ્ડાગ્રમ્, સા—આગતા સાઽઽગતા'ઇત્યાદિ બોધ્યમ્ । વિકારો હિ વર્ણસ્ય સ્થાને વર્ણાન્તરાપાદનરૂપ । નામત્વંચાત્ર તેન તેન રૂપેણ નમનાત્=પરિણમનાદ્ બોધ્યમ્ । લોકે હિ યાવન્તઃ શબ્દાસ્તે આગમાઘન્યતમનિષ્પન્ના એવ સન્તિ । યે ચ હિત્ય હવિત્યાદયઃ કૈશ્ચિદવ્યુત્પન્નત્વેનાભિમતાસ્તેઽપિ શાકટાયનમતે વ્યુત્પન્ના એવ । ઉક્તંચ—

“નામ ચ ધાતુજમાહ નિરુક્તે, વ્યાકરણે શરૂટસ્યચ સ્તોકમ્ (અપત્યમ્) ।

યન્ન પદાર્થવિશેષસમુત્થં, પ્રત્યયતઃ પ્રકૃતેશ્ચ તદૂહ્યમ્” ॥૩૮૮॥

ઇત્યં ચ સર્વેષાં શબ્દાનામાગમાદિમિશ્વરુર્મિઃ સંગ્રહાદિદમાગમાદિકં ચતુર્નામેત્યુચ્યતે । પ્રકૃતમુપસંહરન્નાહ—તદેતચ્ચતુર્નામેતિ ॥સૂ૦ ૧૪૯॥

હહ=નર્દહ મહુ+ઉદગં+મહૂદગં, બહૂ+ઝહો=બહૂહો । દળ્ડ+અગ્ર=દળ્ડાગ્ર સા+આગતા=સાગતા દધિ+હદં=દધીદં નદી+હહ=નદીહ, મધુ+ઉદક=મધૂદક, વધૂ+ઝહ વધૂહઃ (સે તં વિગારેણ) હસ પ્રકાર કે યે શબ્દ વિકાર નિષ્પન્ન નામ હૈં । (સે તં ચડનામે) યે પૂર્વોક્ત ચતુર્નામ હૈં ।

ભાવાર્થ—આગમ નિષ્પન્ન, લોપ નિષ્પન્ન, પ્રકૃતિ નિષ્પન્ન ઓર વિકાર નિષ્પન્ન હસ પ્રકાર સે ચતુર્નામ ચાર પ્રકાર કે હોતે હૈં । આગમ રૂપ અનુસ્વાર સે જો શબ્દ નિષ્પન્ન હોતે હૈં વે આગમ નિષ્પન્ન ચતુર્નામ હૈ+જૈસે પ્રાકૃત ભાષા મેં વંકં, વયંસે, અર્હ મુન્તણ યે શબ્દ હૈં । “વક્રાદાવન્તઃ” હસ સૂત્ર સે પ્રાકૃત ભાષા મેં વક્રાદિ શબ્દો મેં આગમરૂપ અનુસ્વાર હોતા હૈ । “વંકં” શબ્દકી સંસ્કૃત છાયા “વક્રમ્” હૈ । વયંસે “શબ્દ કી

અગં=દંહગં, સા+આગયા=સાઽઽગયા, દહિ+ઇણં=દહીણં, નર્દ×હહ=નર્દહ, મહુ×હદગં=મહૂદગં, બહૂ×ઝહો=બહૂહો) ઠંડ+અથ=ઠંડાથ, સા+આગતા=સાગતા, દધિ×હદં=દધીદં, નદી×ઈહિ=નદીહિ, મધુ+ઉદક=મધૂદક, વધૂ×ઝહ=વધૂહઃ (સે તં વિગારેણ) આ બધાં શબ્દો વિકારનિષ્પન્ન નામો છે. (સે તં ચડનામે) આ બધાં નામો પૂર્વોક્ત ચતુર્નામ રૂપ ગણાય છે.

ભાવાર્થ—ચતુર્નામના ચાર પ્રકાર છે—આગમનિષ્પન્ન, લોપનિષ્પન્ન, પ્રકૃતિનિષ્પન્ન, અને વિકારનિષ્પન્ન આગમ રૂપ અનુસ્વાર વડે જે જે શબ્દો અને તેમને આગમનિષ્પન્ન ચતુર્નામ રૂપ સમજવા જેમ કે પ્રાકૃત ભાષાના “વંકં, વયંસે અને અર્હમુન્તણ” આ શબ્દો આગમનિષ્પન્ન ચતુર્નામો છે. “વક્રાદાવન્તઃ” આ સૂત્ર એ વાત પ્રકટ કરે છે કે પ્રાકૃત ભાષામાં વક્રાદિ શબ્દોમાં આગમ રૂપ અનુસ્વાર હોય છે. “વંકં” આ પ્રાકૃત શબ્દની સંસ્કૃત છાયા “વક્રમ્” છે. “વયંસે” આ પ્રાકૃત પદની સંસ્કૃત છાયા

સંસ્કૃત છાયા” વચસ્ય:” હૈ । “અહમુંતૅ” કી જગહ પર અહમુત્તૅ ખી રૂપ હોતે હૈં । પરન્તુ વંકં આદિ જો યે નામ-પ્રતિપાદિક સંજ્ઞક શબ્દ હૈં વે આગમ નિષ્પન્ન નામ હૈં અર્થાન્ અનુસ્વાર કે આગમ સે બને હુૅ નામ હૈં । તે+ૅત્થ, પઢો+ૅત્થ, ઇન પ્રાકૃત પ્રયોગો મેં “ૅત્થ” શબ્દ કે ઇકાર કા લોપ “ત્યદાચવ્યયાત્ તત્સ્વરસ્ય લુક્” ઇસે સૂત્ર સે હોતા હૈ । ઇસલિયે “તેત્થ પઢોત્થ” યે લોપ નિષ્પન્ન નામ હૈં । “ગઙ્ગે આવડંતી, આલેક્ષમો ઇહિ હોઈ ઇહ” ઇન પ્રકૃતિભાવ નિષ્પન્ન નામોં મેં “ૅદેતોઃ સ્વરે ત્યાદેઃ ઇન સૂત્રોં કે અનુસાર પ્રાકૃત ભાષા મેં પ્રકૃતિભાવ હોતા હૈ । જો પ્રયોગ જૈસે હૈં ઊનકા વૈસા હી રૂપ રહના ઇસકા નામ પ્રકૃતિ ભાવ હૈ । પ્રકૃતિ ભાવ મેં મૂલ રૂપ મેં કોઈ વિકાર નહીં હોતા હૈ । ગર્ત્તે+આપતન્તી યહાં પર સંસ્કૃત વ્યાકરણ કે અનુસાર ૅ કે સ્થાન મેં અવ્ હોના યાહિયે, આલેક્ષ્યામ+હદાનીમ્ યહાં પર “આદ્ગુણ” સે ૅ ગુણ હોના યાહિયે, ભવતિ+ઈહ યહાં પર અકઃ સવર્ણે દીર્ઘઃ” સે દીર્ઘ હોના યાહિયે-પરન્તુ પ્રકૃતિ ભાવ હોને પર ઇન નામોં મેં કોઈ ખી સંધિરૂપ વિકાર નહીં હુઆ હૈ ।

“વચસ્યઃ” છે. “અહમુંતૅ” આ પ્રાકૃત પદની સંસ્કૃત છાયા “અતિમુક્તકઃ” છે. “વંકં” આ પદની જગ્યાએ “વર્તકં,” “વચસે” આ પદની જગ્યાએ “વચસે” અને “અહમુંતૅ” આ પદની જગ્યાએ “અહમુત્તૅ” આ રૂપોનો પણ પ્રયોગ થાય છે. પરન્તુ વંકં આદિ ઉપર્યુક્ત નામો-પ્રતિપાદન કરનારા ઉદાહરણ રૂપ શબ્દો-આગમનિષ્પન્ન નામો છે, કારણ કે આ નામો અનુસ્વારના આગમથી બનેલાં છે. “ત્યદાચવ્યયાત્ તત્સ્વરસ્ય લુક્” આ સૂત્રમાં બતાવેલા નિયમ અનુસાર “તે+ૅત્થ” અને “પઢો+ૅત્થ” આ પ્રાકૃત પદોમાં “ૅત્થ” પદના “ૅ” નો લોપ થવાથી “તેત્થ” અને “પઢોત્થ”, આ લોપનિષ્પન્ન નામો બન્યાં છે. “ૅદેતોઃ સ્વરે ત્યાદેઃ” આ સૂત્રમાં બતાવેલા નિયમ પ્રમાણે “ગઙ્ગે આવડંતી” અને “આલેક્ષમો ઇહિ, હોઈ ઇહ” આ પ્રકૃતિભાવ નિષ્પન્ન નામોમાં પ્રકૃતિભાવનો સદ્ભાવ રહે છે પ્રકૃતિભાવમાં મૂળરૂપમાં કોઈ પણ પ્રકારનો વિકાર થતો નથી પરન્તુ જે પ્રયોગ જેવા સ્વરૂપે હોય એવાં જ સ્વરૂપે રહે છે. “ગર્ત્તે+આપતન્તી” આ બે પદોની સંધિ થતાં સંસ્કૃત વ્યાકરણના નિયમ પ્રમાણે “ૅ” નો ‘અવ્’ થવો જોઈએ, અને “આલેક્ષ્યામ+હદાનીમ્” આ પદોની સંધિ કરતાં અ+હ=ૅ આ નિયમ અનુસાર “આલેક્ષ્યામેદાનીમ્” થવું જોઈએ, “ભવતિ+ઈહ” આ પદોમાં ઇ+હ=ઈ થવાથી ‘ભવતીહ’ થવું જોઈએ; પરન્તુ આ પદો પ્રકૃતિભાવ નિષ્પન્ન નામો હોવાથી, તે નામોમાં કોઈ પણ પ્રકારનો સંધિ રૂપ વિકાર થયો નથી.

अथ पञ्चनाम निरूपयितुमाह—

मूलम्—से किं तं पञ्चनामे? पञ्चनामे—पञ्चविहे पणत्ते, तं जहा—नाभियं जेवाइयं अक्खाइयं ओवस्सहिगयं मिससं। आसे

दण्ड+अगं दण्ड+अग्रम् सा आगया, दहि+इणं, नई+ईह महु+उदगं, बहू+ऊहो, इन विकार निष्पन्न नामों में सर्वत्र दीर्घरूप विकार हुआ है। वर्ण के स्थान में दूसरे वर्ण का होना इसका नाम विकार है तथा उस उस रूप से परिणमन होना इसका नाम नाम है। विकार होने पर इनका “दंडगं साऽऽगया, दहीणं, नईह महुदगं, बहूहो” ऐसा रूप हो जाता है। लोक में जितने भी शब्द हैं वे आगम आदि किसी एक से निष्पन्न हुए ही होते हैं। तथा “डित्थ डवित्थ आदि जो शब्द अव्युत्पन्न किन्हीं के द्वारा माने हुए हैं वे भी शाकटायन के मत में व्युत्पन्न ही माने गये हैं। उक्तं च—नाम च धातुजमाह निरुक्ते व्याकरणे शकटस्य च तोकम्। यन्न पदार्थविशेषसमुत्थं, प्रत्ययतः प्रकृतेश्च तदूह्यम्” इस प्रकार समस्त शब्दों का इन आगमादि चारों से संग्रह हो जाता है इसलिये आगमादिक चतुर्नाम कहे जाते हैं ॥सू० १४९॥

“दंड+अगं सा+आगया दहि+इणं, नई+ईह, महु+उदगं, अने बहू+ऊहो” आ अधां पटोभां सन्धि इय विकार यधने “दंडाग्रम्, सागया, दहीणं, नईह, महुदगं, बहूहो” धत्यादि विकारनिष्पन्न नामो अन्यां छे. केधं ओक वलुने स्थाने भीम वलुने प्रयोग यवे तेनुं नाम विकार छे. जे नामोभां आ प्रकारनुं परिणमन यथुं डोय छे, ते नामोने विकारनिष्पन्न नामो कहे छे. “दंड+अगं” आदि उपयुक्त पटोभां सन्धिने कारणे विकार यधं जवाधी “दण्डाग्र, साऽऽगया, दहीणं, नईह, महुदगं बहूहो आ प्रकारनां इपे अनि गयां छे. लोकभां जेटलां शब्दो छे, तेओ आगम आदि पूर्वोक्त चार प्रकारोभांना केधं ओक प्रकारे निष्पन्न यथेलां डोय छे. तथा ‘डित्थ डवित्थ’ आदि जे शब्दोने केधं केधं लोको द्वारा अव्युत्पन्न मानवामां आवे छे, परन्तु शाकटायनना मत अनुसार तेमने पणु व्युत्पन्न न मानवामां आवेल छे. कहुं पणु छे के—“नाम च धातुजमाह निरुक्ते व्याकरणे शकटस्य च तोकम् यन्न पदार्थविशेषसमुत्थं, प्रत्ययतः प्रकृतेश्च तदूह्यम्” आ प्रकारे समस्त पटोना आ आगम आदि चारेभां समावेश यधं जय छे. तेधी आगमादि इय चतुर्नाम इपे अही तेमने प्रतिपादित करवामां आवेल छे. ॥सू० १४९॥

તિ નામિયં, યલુ તિ નેવાઈયં, ધાવઈતિ અઘ્વાઈયં, પરિતિ ઓવસગિયં, સંજણ તિ મિસ્સં । સે તં પંચનામ ॥સૂ૦ ૧૫૦॥

છાયા—અય કિં તત્ પશ્ચનામ? પશ્ચનામ પશ્ચવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્, તથા-નામિકં, નૈપાતિકમ્, આખ્યાતિકમ્, ઔપસર્ગિકં, મિશ્રમ્ । અશ્વ ઇતિ નામિકમ્ । ‘યલુ’ ઇતિ નૈપાતિકમ્ । ‘ધાવતિ’ ઇતિ આખ્યાતિકમ્ । ‘પરિ’ ઇતિ ઔપસર્ગિકમ્ । સંયત ઇતિ મિશ્રમ્ । તદેતત્ પશ્ચનામ ॥સૂ૦ ૧૫૦॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—અથ કિં તત્ પશ્ચનામ? ઇતિ । ઉત્તરયતિ—પશ્ચનામ—પશ્ચ-પ્રકારકં નામ—પશ્ચનામ, તદ્દિ પશ્ચવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । પશ્ચવિધત્વમેવાહ—નામિકમિ-ત્યાદિ । તત્ર—અશ્વ ઇતિ નામિકમ્—વસ્તુવાચકત્વાત્ । ‘યલુ’ ઇતિ નૈપાતિકમ્—નિપાતેષુ પઠિતત્વાત્ । ધાવતીતિ આખ્યાતિકં ક્રિયાપ્રધાનત્વાત્ । ‘પરિ’ ઇતિ

અથ સૂત્રકાર પશ્ચનામ કા નિરૂપણ કરતે હૈં—

“સે કિં તં પંચનામે” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં પંચનામે?) હે ભદ્રન્ત ! પંચનામ કયા હૈ?

ઉત્તર—(પંચનામે પંચવિદ્દે પળ્લન્તે) પંચ નામ પાંચ પ્રકાર કા પ્રજ્ઞપ્ત હુઆ હૈ । (તં જહા) ઉસ કે પાંચ પ્રકાર યે હૈં—(નામિયં, નેવાઈયં, અઘ્વા-ઈયં, ઓવસગિયં મિસ્સં) નામિક નૈપાતિક, આખ્યાતિક, ઔપસર્ગિક, ઔર મિશ્ર । વસ્તુ કા વાચક હોને સે (આસેત્તિ નામિયં)—અશ્વ યહ શબ્દ નામિક હૈ । (યલુત્તિ નેવાઈયં) યલુ શબ્દ નિપાતોં મેં પઠિત હોને કે કારણ નૈપાતિક હૈ । ક્રિયાપ્રધાન હોને સે (ધાવઈતિ અઘ્વાઈયં) ધાવતિ” યહ તિજ્ઞન્ત પદ આખ્યાતિક હૈ । (પરિતિ ઓવસગિયં) પરિ

હવે સૂત્રકર પંચનામનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં પંચનામે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં પંચનામે?) હે ભગવન્ ! પંચનામ કેને કહે છે ?

ઉત્તર—(પંચનામે પંચવિદ્દે પળ્લન્તે) પંચનામ પાંચ પ્રકારના કહ્યા છે. (તંજહા) તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(નામિયં, નેવાઈયં, ઓવસગિયં, મિસ્સં) (૧) નામિક, (૨) નૈપાતિક, (૩) આખ્યાતિક, (૪) ઔપસર્ગિક અને (૫) મિશ્ર.

વસ્તુનું વાચક હોવાને કારણે (આસેત્તિ નામિય) “અશ્વ” પદ નામિકના ઉદાહરણ રૂપ સમજવું (યલુત્તિ નેવાઈયં) “યલુ” પદ નિપાતોમાં વપરાતું હોવાને કારણે નૈપાતિકના ઉદાહરણ રૂપ સમજવું (ધાવઈતિ અઘ્વાઈયં) “ધાવતિ” આ પદ ક્રિયાપ્રધાન હોવાને કારણે આખ્યાતિકના ઉદાહરણ

ઔપસર્ગિકમ્ ઉપસર્ગેષુ પઠિતત્વાત્ । ‘સંયતઃ’ ઇતિ મિશ્રમ્-ઉપસર્ગનામોભયનિબ્ધ-
ત્વાત્ । एतैर्नामिकादिभिः पञ्चभिः सकलशब्दसंग्रहणात् पञ्चनामत्वं बोध्यम् ।
પ્રકૃતમુપસંહરન્નાહ-તદેતત્ પશ્ચનામેતિ ॥સૂ૦ ૧૫૦॥

અથ પળ્ણામં નિરૂપયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં છળ્ણામે? છળ્ણામે છવ્વિહે પળ્ણત્તે,
તં જહા-ઉદ્દિણ, ઉવસમિણ સ્વદ્દિણ સ્વઓવસમિણ પારિણામિણ
સંનિવાદ્દિણ ॥સૂ૦ ૧૫૧॥

છાયા—અથ કિં તત્ પળ્ણામ? પળ્ણામ પડ્વિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્, તદ્વથા-ઔદયિકઃ,
ઔપશમિકઃ, ક્ષાયિકઃ, ક્ષાયોપશમિકઃ, પારિણામિકઃ, સાન્નિધાતિક ॥સૂ૦ ૧૫૧॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ—

અથ કિં તત્ પળ્ણામ? ઇતિ શિષ્યપ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—પળ્ણામ પદ્-
પ્રકારકં નામ-પળ્ણામ, તદ્વિ-ઔદયિકાદિભેદેન પડ્વિધં વિજ્ઞેયમ્ । નન્વત્ર પ્રકૃતં
યહ ઉપસર્ગ, ઉપસર્ગો મેં પઠિત હોને સે ઔપસર્ગિક હૈ । (સંજણ ત્તિ
મિસ્સં) સંયત યહ સુબન્ત પદ ઉપસર્ગ ઓર નામ હન દોનોં સે નિબ્ધપન્ન
હોને કે કારણ મિશ્ર હૈ । હન નામિક આદિ પાંચોં સે સમસ્ત શબ્દોં કા
સંગ્રહ હો જાતા હૈં હસલિયે યે પાંચ નામ કહે જાતે હૈં । (સે તં પંચનામ)
હસ પ્રકાર યહ પંચનામ કા સ્વરૂપ હૈ ॥સૂ૦ ૧૫૦॥

અવ સૂત્રકાર છહનામં કા નિરૂપણ કરતે હૈં—‘સે કિં તં છળ્ણામે’ ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં છળ્ણામે?) હે ભદન્ત ! છહ નામ કયા હૈ ?

ઉત્તર—(છળ્ણામે છવ્વિહે પળ્ણત્તે) છહ નામ છહ પ્રકાર કા પ્રજ્ઞપ્ત

રૂપ છે. (પરિત્તિ ઓવસગિયં) “પરિ” આ ઉપસર્ગ છે. ઉપસર્ગ રૂપે તેનો
અયોગ થાય છે, તે કારણે તેને ઔપસર્ગિક કહે છે (સંજણ ત્તિ મિસ્સં) સંયત
પદ ‘સમ્’ ઉપસર્ગ અને ‘યત’ પદના સંયોગથી બન્યું હોવાથી તેને
મિશ્રના ઉદાહરણ રૂપ ગણી શકાય આ નામિક આદિ પાંચે પંચનામો વડે
સમસ્ત શબ્દોનો સંગ્રહ થઈ જાય છે, તેથી તેમને પંચનામ કહે છે. (સે તં
પંચનામ) આ પ્રકારનું પંચનામનું સ્વરૂપ સમજવું ॥સૂ૦ ૧૫૦॥

હવે સૂત્રકાર છનામની પ્રરૂપણા કરે છે—

“સે કિં તં છળ્ણામે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં છળ્ણામે?) હે ભગવન્ ! નામના છઠ્ઠા પ્રકાર રૂપ
છનામનું સ્વરૂપ કેવું કહ્યું છે ?

ઉત્તર—(છળ્ણામે છવ્વિહે પળ્ણત્તે) છનામના ૬ પ્રકારો કહ્યા છે (તેનામના

નામ, ન તુ પદર્થાઃ, એવં ચ નામ્નઃ પ્રકરણે તદર્થાનાં ભાવલક્ષણાનાં પ્રરૂપણમયુક્તમિતિ વેદાદ્, નામ નામવતોરભેદોપચારાદ્ નામાર્થપ્રરૂપણમય્યદુષ્ટમેવેતિ ન કશ્ચિદ્ દોષઃ । તત્ર જ્ઞાનાવરણાદીનામષ્ટાનાં સ્વ સ્વરૂપેણ વિપાકતોઽનુભવનમ્ ઉદયઃ, સ એવ ઔદયિકઃ । અથવા-ઉદયેન નિષ્પન્ન ઔદયિકઃ । ઔદયિકશ્ચ ભાવ એવ સામર્થ્યાદ્ ગમ્યતે । એવમગ્રેઽપિ ભાવ इत्याक्षेप्यઃ સામર્થ્યાત્ । ઉપશમ-

હુઆ હૈ । છહ પ્રકારવાલા જો નામ હૈ વહ છહ નામ હૈ । યહ નામ છહ પ્રકારવાલા હૈ હસીલિયે યહ છહ ભેદવાલા હૈ । (તં જહા) ઉસકે વે છહ પ્રકાર યે હૈ—(ઉદૈય, ઉવસમિય, સ્વૈય, સ્વઓવસમિય, પારિણમિય, સંનિવાદૈય) ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક પારિણમિક ઓર સાન્નિપાતિક ।

શંકા—યહાં પ્રકરણ નામ કા ચલ રહા હૈ । નામ કે અર્થો કા નહીં હસ પ્રકાર નામકે પ્રકરણમેં ઉસકે અર્થરૂપ ભાવોં કી પ્રરૂપણા કરના યુક્ત નહીં હૈ?

ઉત્તર—નામ ઓર નામવાલે અર્થ મેં અભેદ કે ઉપચાર સે નામાર્થ કી પ્રરૂપણા કરના અયુક્ત નહીં હૈ । ઔદયિક ભાવ—જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ પ્રકાર કે કર્મોં કે અપનેર રૂપ સે વિપાક કા અનુભવ કરના હસ કા ઉદય હૈ । હસ ઉદય કા નામ હી ઔદયિક હૈ । અથવા ઉદય સે નિષ્પન્ન હુઆ જો ભાવ હૈ વહ ઔદયિક હૈ । ઔદયિક પદ કી સામર્થ્ય સે યહાં ઔદયિક ભાવ હી લિયા ગયા હૈ । હસી પ્રકાર સે આગે મી

૬ પ્રકારે કોવાને લીધે જ અહીં તેને પરનામ (છનામ કહ્યું છે) તે ૬ ભેદો નીચે પ્રમાણે છે—

(ઉદૈય, ઉવસમિય સ્વૈય, સ્વઓવસમિય, પારિણમિય, સંનિવાદૈય) (૧) ઔદયિક, (૨) ઔપશમિક, (૩) ક્ષાયિક, (૪) ક્ષાયોપશમિક, (૫) પારિણમિક અને (૬) સાન્નિપાતિક.

શંકા—અહીં નામનું પ્રકરણ ચાલી રહ્યું છે. નામના અર્થોનું આ પ્રકરણ નથી આ પ્રકારના નામના પ્રકરણમાં તેના અર્થરૂપ ભાવોની પ્રરૂપણા કરવી તે ઉચિત લાગતું નથી છતાં આપે શા કારણે અહીં અર્થરૂપ ભાવોની પ્રરૂપણા કરી છે ?

ઉત્તર—નામ અને નામવાળા અર્થમાં અભેદ માનીને આ પ્રકારે નામાર્થની પ્રરૂપણા કરવી અયુક્ત નથી.

ઔદયિકભાવ—જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકારના કર્મોના રૂપ વિપાકનો—અનુભવ કરવો, તેનું નામ ઉદય છે આ ઉદયનું નામ જ ઔદયિક છે. અથવા ઉદયથી નિષ્પન્ન થયેલો જે ભાવ છે તેનું નામ ઔદયિક છે. ઔદયિક પદ અહીં ઔદયિક ભાવનું જ વાચક છે. એજ પ્રમાણે ઔપશ-

नम्-उपशमः-कर्मणोऽनुदयाक्षीणावस्था भस्मराश्यन्तरालस्थितवह्निवत्, स एव,
तेन वा निर्वृत्त औपशमिकः । क्षयः=कर्मणोऽपगमः, स एव तेन वा निर्वृत्तः-
क्षायिकः । क्षायोपशमिकः-क्षय उपशमश्च उक्त एव, तदेव भावः क्षायोपशमिकः,
तेन निर्वृत्तो वा क्षायोपशमिकः । अयं च-ईषद्विध्यातमस्मवह्निवद् बोध्यः ।

औपशमिक भाव क्षायिक भाव, क्षायोपशमिक भाव, पारिणामिक
भाव, और सान्निपातिक भाव उन २ पदों से जानना चाहिये । औप-
शमिक-कर्मों का उदय में नहीं रहना, किन्तु उनकी उपशमावस्था का
होना इसी का नाम अनुदयाक्षीणावस्था है । इसी अवस्था का नाम
उपशम है । जैसे भस्मराशि के भीतर अग्नि छुपी रहती है उसी
प्रकार से इस उपशम अवस्था में कर्मों का उदय नहीं है किन्तु वे
सत्ता में बैठे रहते हैं । इस उपशम का नाम ही औपशमिक भाव है ।
अथवा इस उपशम से जो भाव निवृत्त (बनता) होता है वह औप-
शमिक भाव है । कर्मों का अत्यंत विनाश होना इसका नाम क्षय है ।
यह क्षय ही क्षायिक है । अथवा इस क्षय से जो उत्पन्न होता है-वह
क्षायिक है । कर्मों का क्षय और उपशम होना इसका नाम क्षयोपशम
है । यह क्षयोपशम ही क्षायोपशमिक है । अथवा क्षयोपशम से जो भाव
उत्पन्न होता है वह क्षायोपशमिक भाव है । यह भाव कुछ बुझी हुई
अग्नि के जैसा जानना चाहिये । तात्पर्य कहने का यह है कि इस क्षयो-

भिकभाव, क्षायिकभाव, क्षायोपशमिकभाव, पारिणामिकभाव અને સાન્નિપાતિક
ભાવને પણ ઔપશમિક આદિ પદો વડે નિષ્પન્ન થયેલા સમજવા જોઈએ.

ઔપશમિક-કર્મો ઉદયાવસ્થામાં રહેલાં ન હોય, પણ ઉપશમાવસ્થામાં
'રહેલાં' હોય, ત્યારે તે અવસ્થાને અનુદયાક્ષીણાવસ્થા કહે છે એજ અવસ્થાનું
નામ ઉપશમ છે. જેમ રાખના ઢગલા નીચે અગ્નિ છુપાયેલી રહે છે, એજ
પ્રમાણે 'ઉપશમ અવસ્થામાં' કર્મોનો ઉદય હોતો નથી પણ તેમનું અસ્તિત્વ
તો હોય છે જ આ ઉપશમનું નામ જ ઔપશમિક ભાવ છે અથવા આ ઉપશમ
વડે જે ભાવ નિષ્પન્ન થાય છે તે ભાવનું નામ ઔપશમિક ભાવ છે કર્મોનો
અત્યંત વિનાશ થવો તેનું નામ ક્ષય છે. તે ક્ષય જ ક્ષાયિક રૂપ સમજવો,
અથવા આ ક્ષયથી જે ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે તે ભાવને ક્ષાયિકભાવ કહે છે
કર્મોનો ક્ષય અને ઉપશમ થવો તેનું નામ ક્ષયોપશમ છે. તે ક્ષયોપશમ જ
ક્ષાયોપશમિક છે. અથવા ક્ષયોપશમ વડે જે ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે, તે ભાવનું
નામ ક્ષાયોપશમિક ભાવ છે આ ભાવને થોડી થોડી ખુલાયેલી અગ્નિ જેવો

પરિણામઃ—તેન તેન રૂપેણ વસ્તૂનાં પરિણમનં—ભવનમ્, સ એવ, તેન વા નિર્વૃત્તઃ પારિણામિકઃ । સન્નિપાતઃ=અનન્તરોક્તાનાં ભાવાનાં દ્વયાદિરૂપેણ મેલનં સ એવ, તેન વા નિર્વૃત્તઃ સાન્નિપાતિકઃ ॥૬૮૧॥

સમ્પ્રતિ एतेषां भावानां स्वरूपं निरूपयितुमाह—

મૂલમ્—સે કિં તં ઉદઇષ? ઉદઇષ દુવિહે પળણત્તે, તં જહા-
ઉદઇષ ય ઉદયનિપ્પણે ય । સે કિં તં ઉદઇષ? ઉદઇષ-
અટ્ટપહં કમ્મપયડીણં ઉદણં સે તં ઉદઇષ । સે કિં તં ઉદય-
નિપ્પણે? ઉદયનિપ્પણે—દુવિહે પળણત્તે, તં જહા—જીવોદય-

પશમ મેં કિતનેક સર્વઘાતિ સ્પર્દ્ધકોં (અંશો) કા ઉદયાભાવી ક્ષય
ઔર કિતનેક સર્વઘાતિસ્પર્દ્ધકોં કા સદવસ્થારૂપ ઉપશમ હોતા હૈ
ઔર દેશઘાતિ પ્રકૃતિરૂપ જો સમ્યક્ પ્રકૃતિ હૈ ઉસકા ઉદય રહતા હૈ ।
હસલિયે હસ ભાવ કો કુછ બુઝી હુઈ ઔર કુછ નહીં બુઝી હુઈ અગ્નિ
કી ઉપમા દી ગઈ હૈ । ઉસ ૨ રૂપ સે વસ્તુઓં કા જો પરિણમન હોતા
હૈ વહ પરિણામ હૈ । વહ પરિણામ હી પારિણામિક ભાવ હૈ । અથવા હસ
પરિણામ સે જો ભાવ ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ પારિણામિક ભાવ હૈ । હન
પાંચ ભાવોં કા દ્વયાદિ સંયોગરૂપ સે જો મિલના હૈ વહ સન્નિપાત હૈ ।
યહ સન્નિપાત હી સાન્નિપાતિક ભાવ હૈ । અથવા હસ સન્નિપાત સે જો
ભાવ ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ સાન્નિપાતિક ભાવ હૈ ॥સૂ. ૧૫૧॥

સમજવો. આ) કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે આ-ક્ષયોપશમમાં કેટલાક સર્વઘાતિ
સ્પર્દ્ધકોનો (અંશોનો) ઉદયાભાવી ક્ષય અને કેટલાક સર્વઘાતિ સ્પર્દ્ધકોનો
સદવસ્થા રૂપ (વિદ્યમાનતા રૂપ) ઉપશમ થાય છે, અને દેશઘાતિ પ્રકૃતિ રૂપ
જે સમ્યક્ પ્રકૃતિ છે તેનો ઉદય રહે છે તેથી આ ભાવને થોડી ખુઝાયેલી
અને થોડી ન ખુઝાયેલી અગ્નિની ઉપમા આપવામાં આવી છે. તે તે રૂપે
વસ્તુઓનું જે પરિણમન થાય છે તેને પરિણામ કહે છે. તે પરિણામ-જ
પારિણામિક ભાવ છે. અથવા તે પરિણામ વડે જે ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે,
તેને પારિણામિકભાવ કહે છે આ પાંચ ભાવોનું જે દ્વિકસંયોગ આદિ સંયોગ
રૂપે મિલન- (સંયોગ) થાય છે, તેનું નામ સન્નિપાત છે. તે સન્નિપાત-જ
સાન્નિપાતિક ભાવ રૂપ છે અથવા તે સન્નિપાત વડે જે ભાવ ઉત્પન્ન થાય
છે, તેનું નામ સાન્નિપાતિક ભાવ છે. ॥સૂ. ૧૫૧॥

निष्फण्णे य अजीवोदयनिष्फण्णे य। से किं तं जीवोदयनिष्फ-
ण्णे ? जीवोदयनिष्फण्णे-अणेगविहे पणत्ते, तं जहा-णेरइए
तिरिक्खजोणिए मणुस्से देवे पुढविकाइए जाव तसकाइए
कोहकसाई जाव लोहकसाई, इत्थीवेदए पुरिसवेदए णपुंसगवेदए
कणहलेसे जाव सुकलेसे मिच्छादिट्ठी सम्मदिट्ठी मीसदिट्ठी
अविरए असण्णी अण्णाणी आहारए छउमत्थे सजोगी संसारत्थे
असिद्धे । से तं जीवोदयनिष्फण्णे । से किं तं अजीवोदयनिष्फ-
ण्णे ? अजीवोदयनिष्फण्णे-अणेगविहे पणत्ते, तं जहा-उरालियं वा
सरीरं, उरालियसरीरपओगपरिणामियं वा दव्वं, वेउव्वियं वा सरीरं,
वेउव्वियसरीरपओगपरिणामियं वा दव्वं, एवं आहारगं सरीरं,
तेयगं सरीरं, कम्मगं सरीरं च भाणियव्वं । पओगपरिणामिए वण्णे
गंधे रसे फासे । से तं अजीवोदयनिष्फण्णे । से तं उदयनि-
ष्फण्णे से तं उदइए ॥सू० १५२॥

छाया—अथ कोऽसौ औदयिकः ? औदयिको द्विविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—
औदयिकश्च उदयनिष्पन्नश्च । अथ कोऽसौ औदयिकः ? औदयिकः—अष्टानां कर्म-
प्रकृतीनामुदयः खलु । स एष औदयिकः । अथ कोऽसौ उदयनिष्पन्नः ? उदय-
निष्पन्नो द्विविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—जीवोदयनिष्पन्नश्च अजीवोदयनिष्पन्नश्च । अथ
कोऽसौ जीवोदयनिष्पन्नः ? जीवोदयनिष्पन्नः अनेकविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—नैरयिकः
तिर्यग्योनिको मनुष्यो देवः पृथिवीकायिको यावत् त्रसकायिकः क्रोधकषायी
यावद् लोभकषायी स्त्रीवेदकः पुरुषवेदको नपुंसकवेदकः कृष्णलेश्यो यावत्
शुक्ललेश्यो मिथ्यादृष्टिः सम्यग्दृष्टिः मिश्रदृष्टिः अविरतः असंज्ञी अज्ञानी आहारकः
छन्नस्थः सयोगी संसारस्थः असिद्धः । स एष जीवोदयनिष्पन्नः । अथ कोऽसौ
अजीवोदयनिष्पन्नः ? अजीवोदयनिष्पन्नः—अनेकविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—औदारिकं
वा शरीरम्, औदारिकशरीरप्रयोगपरिणामितं वा द्रव्यम्, वैकुर्विकं वा शरीरं
वैकुर्विकशरीरप्रयोगपरिणामितं वा एवम्द्रव्यम्, —आहारकं शरीरम्, तैजस्कं

શરીરં કાર્મકં શરીરં ચ મણિતવ્યમ્ । પ્રયોગપરિણામિતો વર્ણો ગન્ધો રસઃ સ્પર્શઃ ।
સ એષોઽજીવોદયનિષ્પન્નઃ । સ એષ ઉદયનિષ્પન્નઃ । સ એષ ઔદયિકઃ ॥ સૂ. ૧૫૨ ॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ.

અથ કોઽસૌ ઔદયિકઃ ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—ઔદયિકો દ્વિવિધઃ
પ્રજ્ઞસઃ । દ્વૈવિધ્યમેવાહ—ઔદયિકઃ ઉદયનિષ્પન્નશ્ચ । તત્ર ઔદયિકઃ—જ્ઞાનાવરણી-
યાદીનામષ્ટકર્મપ્રકૃતીનામુદયઃ । ‘જં’ ઇતિ વાક્યાલંકારે । અયં પ્રથમો ભેદઃ ।
દ્વિતીયશ્ચ ભેદ ઉદયનિષ્પન્નઃ । સ હિ—જીવોદયનિષ્પન્નઃ, અજીવોદયનિષ્પન્નશ્ચ ।

અવ સૂત્રકાર इन्होंने भावों का स्वरूपनिरूपण करते हैं—

‘સે કિં તં ઉદહરે’ ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ઉદહરે ?) હે ભદ્રન્ત ! પૂર્વપ્રક્રાન્ત ઔદયિક
ભાવ કયા હૈ ?

ઉત્તર—(ઉદહરે દુવિદ્ધે પળ્લભે) ઔદયિક ભાવ દો પ્રકાર કા
પ્રજ્ઞસ હુઆ હૈ । (તં જહા) ઉસકે વે દો પ્રકાર ચે હૈ—(ઉદહરે ચ ઉદય
નિષ્કળ્લભે ચ) એક ઔદયિક ઓર દૂસરા ઉદયનિષ્પન્ન (સે કિં તં ઉદહરે ?)
હે ભદ્રન્ત ! ઔદયિક ભાવ કયા હૈ ? (અદ્વળ્લહં કમ્મપયડીળં ઉદણ્ણં ઉદહરે)

ઉત્તર—જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મ પ્રકૃતિયોં કા ઉદય ઔદ-
યિક હૈ । (સે તં ઉદહરે) હસ પ્રકાર યહ ઔદયિક હૈ ।

(સે કિં તં ઉદયનિષ્કળ્લભે ?) હે ભદ્રન્ત ! ઉદયનિષ્પન્ન કયા હૈ ?

આગલા સૂત્રમાં ઔદયિક આદિ જે ભાવો પ્રકટ કરવામાં આવ્યા છે,
તે ભાવોના સ્વરૂપનું હવે સૂત્રકાર નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં ઉદહરે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં ઉદહરે ?) હે ભગવન્ ! નામના છ લેહમાંના
પહેલા લેહ રૂપ ઔદયિક ભાવનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે ?

ઉત્તર—(ઉદહરે દુવિદ્ધે પળ્લભે) ઔદયિક ભાવ જે પ્રકારનો કહ્યો છે.
(તં જહા) તે જે પ્રકાર નીચે પ્રમાણે સમજવો—(ઉદહરે ચ ઉદયનિષ્કળ્લભે ચ) (૧)
ઔદયિક અને (૨) ઉદયનિષ્પન્ન.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં ઉદહરે ?) હે ભગવાન્ ! ઔદયિકનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે.

ઉત્તર—(અદ્વળ્લહં કમ્મપયડીળં ઉદણ્ણં ઉદહરે) જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ
કર્મ પ્રકૃતિઓનો ઉદય ઔદયિક રૂપ સમજવો (સે તં ઉદહરે) આ રીતે ઔદયિકનું
સ્વરૂપ સમજવું.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં ઉદયનિષ્કળ્લભે ?) હે ભગવન્ ! ઉદયનિષ્પન્નનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે ?

તત્ર-જીવોદયનિષ્પન્નઃ-જીવે ઉદયેન નિષ્પન્નઃ । ઔદયિકભાવોઽનેકવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ ।
અનેકવિધત્વમેત્રાહ-‘નેરરૂપ’ ઇત્યાદિ । નૈરયિકાદિરસિદ્ધાન્તો જીવોદયનિષ્પન્ન
ઔદયિકો ભાવો बोध्यः । નૈરયિકાદયઃ શબ્દા ભાવપરા बोध्याः । નારકત્વાદયઃ
પર્યાયાઃ-કર્મણામુદયેનૈવ જીવે નિષ્પન્નન્તે ઇત્યત એતે જીવોદયનિષ્પન્ના ઇતિ ભાવઃ ।

ઉત્તર—(ઉદયનિષ્ક્રમણે-દુવિહે પળળત્તે) ઉદયનિષ્પન્ન દો પ્રકાર કા
કહા ગયા હૈ । (તં જહા) વે દો પ્રકાર યે હૈ—(જીવોદયનિષ્ક્રમણે ય અજી-
વોદયનિષ્ક્રમણે ય)—એક જીવોદય નિષ્પન્ન ઓર દૂસરા અજીવોદય-
નિષ્પન્ન । (સે કિં તં જીવોદયનિષ્ક્રમણે ?) હે ભદન્ત ! જીવ મેં ઉદય સે
જો ભાવ નિષ્પન્ન હોતા હૈં વહ કયા હૈ ?

ઉત્તર—(જીવોદયનિષ્ક્રમણે અળેગવિહે પળળત્તે) જીવ મેં ઉદય સે
જો ઔદયિક ભાવ નિષ્પન્ન હોતા હૈં વહ અનેક પ્રકાર કા કહા હૈ (તં
જહા) જૈસે—(નેરરૂપ, તિરિક્કલજોની, મણુસે, દેવે, પુઢવિકાઈ, જાવ
તસકાઈ, કોહકસાઈ, જાવ લોહકસાઈ, ઇત્થીવેદ, પુરિસવેદ, ણપું-
સગવેદ, કળહલેસે, જાવ સુક્કલેસે મિચ્છાદિટ્ટી, સમ્મદિટ્ટી, મીસદિટ્ટી,
અવિર, અસણી, અળળાણી, આહાર, છઝમત્થે, સજોગી, સંસાર-
ત્થે, અસિદ્ધે) નૈરયિક, તિર્યગ્યોનિક, મનુષ્ય, દેવ, પૃથિવીકાયિક યાવત્
ત્રસકાયિક, ક્રોધકષાયી, યાવત્ લોભકષાયી, સ્ત્રીવેદક, પુરુષવેદક,
નપુંસકવેદક, કૃષ્ણલેશ્યા, યાવત્ શુક્લેશ્યા, મિથ્યાદૃષ્ટિ, સમ્યક્દૃષ્ટિ,

ઉત્તર—(ઉદયનિષ્ક્રમણે દુવિહે પળળત્તે) ઉદયનિષ્પન્નના બે પ્રકાર પડે છે.
(તં જહા) તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(જીવોદયનિષ્ક્રમણે ય, અજીવોદયનિષ્ક્રમણે ય)
(૧) ઊવોદય નિષ્પન્ન, (૨) અઊવોદય નિષ્પન્ન.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં જીવોદયનિષ્ક્રમણે ?) હે ભગવાન્ ! ઊવમાં ઉદયથી જે
ભાવ નિષ્પન્ન થાય છે, તે ભાવનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે ?

ઉત્તર—(જીવોદયનિષ્ક્રમણે અળેગવિહે પળળત્તે) ઊવમાં ઉદયથી જે ઔદયિક-
ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે, તે અનેક પ્રકારનો હોય છે (તં જહા) જેમ કે... (નેર-
રૂપ, તિરિક્કલજોની, મણુસે, દેવે, પુઢવિકાઈ, જાવ તસકાઈ, કોહ કસાઈ
જાવ લોહકસાઈ, ઇત્થીવેદ, પુરિસવેદ, ણપુંસગવેદ, કળહલેસે જાવ સુક્કલેસે,
મિચ્છાદિટ્ટી, સમ્મદિટ્ટી, મીસદિટ્ટી, અવિર, અસણી, અળળાણી, આહાર-
રૂપ, છઝમત્થે, સજોગી, સંસારત્થે, અસિદ્ધે) નારક, તિર્યગ્યોનિક, મનુષ્ય, દેવ,
પૃથ્વીકાયિક આદિ સ્થાવર, ત્રસકાયિક, ક્રોધકષાયીથી લઈને લોભકષાયી પર્યં-
ન્તના, સ્ત્રીવેદક, પુરુષવેદક, નપુંસકવેદક, કૃષ્ણલેશ્યાથી લઈને શુક્લલેશ્યા

નનુ નારકત્વાદિભ્યોઽન્યેઽપિ નિદ્રાપશ્ચક વેદનીયહાસ્યાદયો બહવઃ કર્મોદયજન્યાઃ પર્યાયાઃ સન્તિ, કથં તર્હિ નારકત્વાદયઃ કતિપય एवोदाહતાઃ ? इति वेदाह-
 નારકત્વાદયોઽત્રોપલક્ષણત્વેનોદાહતાઃ, અતઃ એમ્હોઽન્યેઽપિ સમ્ભવિનઃ પર્યાયા બોધ્યાઃ । નનુ કર્મોદયજનિતાનાં નારકત્વાદીનાં ભવત્વત્રોપન્યાસઃ, પરન્તુ લેશ્યાસુ

મિશ્રદૃષ્ટિ અવિરત, અસંજી, અજ્ઞાની, આહારક, છદ્મસ્થ, સયોગી સંસારસ્થ, અસિદ્ધ । ये सब नैरयिक से लेकर असिद्ध पर्यन्त जीवोदय-
 નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવ હૈં । નૈરયિક આદિ શબ્દ ભાવ પરક જાનનાં
 ધાહિયે । નારકત્વ આદિ પર્યાયે કર્મો કે ઉદય સે હી જીવ મેં નિષ્પન્ન
 હોતી હૈં હસલિયે યે જીવોદય નિષ્પન્ન હૈં ।

શંકાઃ-નારકત્વ આદિ સે ભિન્ન ઓર મી નિદ્રાપશ્ચક-નિદ્રા
 નિદ્રા, પ્રચલા, પ્રચલા પ્રચલા, સ્ત્યાનગૃહ્ણિ વેદનીય ઓર હાસ્યાદિ અનેક
 કર્મોદય જન્ય પર્યાયે હૈં । તો ફિર સૂત્રકાર ને યહાં ઇન નારક આદિ
 થોડી સી પર્યાયોં કો હી ઉદાહૃત કર્યોં કિયા હૈં ?

ઉત્તરઃ-સૂત્રકાર ને જો યહાં ઇન નારક આદિ પર્યાયોં કો ઉદાહૃત
 કિયા હૈં વહ કેવલ ઉપલક્ષણ રૂપ સે કિયા હૈં । હસલિયે ઇન સે મી
 અતિરિક્ત જિતની મી પર્યાયે કર્મોદય જન્ય હૈં વે સબ ઇનસે ગૃહીત
 હો જાતી હૈં ।

શંકા-કર્મોદય જનિત ઇન નારક આદિ પર્યાયોં કા ઔદયિક ભાવ

પર્યન્તમી લેશ્યાવાળા, મિથ્યાદૃષ્ટિ, સમ્યક્દૃષ્ટિ, મિશ્રદૃષ્ટિ, અસંજી, અજ્ઞાની,
 આહારક, છદ્મસ્થ, સયોગી, સંસારસ્થ અને અસિદ્ધ, આ બધાં જીવોદય-
 નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવો છે. નૈરયિક આદિ શબ્દોને ભાવપરક સમજવા બેઠએ
 નારકત્વ આદિ પર્યાયો કર્મોના ઉદયથી જ જીવમાં નિષ્પન્ન (ઉત્પન્ન) થાય
 છે, તેથી તેમને જીવોદયનિષ્પન્ન કહેવામાં આવેલ છે.

શંકા-નારકત્વ આદિ ઉપર્યુક્ત પર્યાયો સિવાયની નિદ્રાપશ્ચક (નિદ્રા,
 નિદ્રાનિદ્રા, પ્રચલા, પ્રચલાપ્રચલા, સ્ત્યાનગૃહ્ણિ), વેદનીય અને હાસ્યાદિક અનેક
 કર્મોદય જન્ય પર્યાયો છે. છતાં સૂત્રકારે તે પર્યાયોને ગણાવવાને બદલે માત્ર
 નારકાદિ પર્યાયોને જ કેમ ગણાવેલ છે ?

ઉત્તર-સૂત્રકારે તો અહીં ઉદાહરણ રૂપે નારકાદિ પર્યાયોને જીવોદય-
 નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવ રૂપે ગણાવેલ છે. કેવળ ઉપલક્ષણ રૂપે જ આ પ્રમાણે
 કરવામાં આવ્યું છે. પરન્તુ તે સિવાયની કર્મોદય જન્ય બેટલા પર્યાયો છે,
 તેમને પણ અહીં ગ્રહણ કરી શકાય છે.

શંકા-કર્મોદય જનિત આ નારક આદિ પર્યાયોને ઔદયિક ભાવમાં બદલે

कस्यचित् कर्मण उदये भवन्तीत्येतन्नमसिद्धम्, तत् कथमिह कृष्णलेश्यादयः पठ्यन्ते ? इति चेदाह—लेश्यास्तु योगपरिणामः त्रिविधोऽपि योगः कर्मोदयजन्य एव, ततो लेश्यानामपि योगकर्मोदयेत्युभयजन्यत्वं न विरुध्यते इति नास्ति लेश्यानाम पाठे कश्चिद् दोषः। केचित्त्वेवं मन्यन्ते—यथा कर्माष्टकोदयात् संसारस्थत्वमसिद्धत्वं च जायते, तथैव लेश्यावत्त्वमपि जायते, इति। प्रकृतमुप-
सहरन्नाह—स एष जीवोदयनिष्पन्न इति। अथ कोऽसौ अजीवोदयनिष्पन्नः ?

में उपन्यास भले रहो, परन्तु लेश्याएँ औदयिक हैं यह बात संभवित नहीं होती, क्योंकि लेश्याएँ किसी कर्म के उदय से होनी हों यह बात प्रसिद्ध नहीं है। अतः जब ऐसी बात है, तो फिर सूत्रकार ने औदयिक भाव में इनका पाठ क्यों रखा है ?

उत्तरः—लेश्याएँ योगों के परिणाम-प्रवृत्ति रूप हैं। और तीनों प्रकार का जो योग है वह शरीर नाम कर्मोदय जन्य है। इसलिए लेश्याओं को योग और शरीर नामकर्मोदय इन दोनों द्वारा जन्य के होने के कारण इनका पाठ—औदयिक भाव में रखना निर्दोष है। कोई २ इस विषय में ऐसा मानते हैं—कि जैसे आठ कर्मों के उदय से संसार-स्थत्व और असिद्धत्व होता है, उसी प्रकार लेश्यावत्त्व भी होता है, (से तं जीवोदयनिष्फण्णे) इस प्रकार यह जीवोदय निष्पन्न औदयिक भाव हैं। (से किं तं अजीवोदय-निष्फण्णे) हे भदन्त ! अजीवोदय-निष्पन्न औदयिक भाव क्या है ?।

समाविष्ट कश्चात्मा आवे, परन्तु लेश्याञ्चो औदयिक होवानुं संभवी शक्तुं नथी, कारण के लेश्याञ्चोने कर्मोदयजन्य मानवामां आवती नथी छतां पणु सूत्रकारे-शा कारणे औदयिक भावमां तेनो समावेश कर्थो छे ?

उत्तर—लेश्याञ्चो योगोना परिणाम-प्रवृत्ति-रूप होय छे अने त्रये प्रकारना योग-शरीरनाम कर्मजन्य होय छे। तेथी योग अने शरीरनाम कर्मोदय आ-गन्ने द्वारा जन्य होवाने कारणे लेश्याञ्चोने उपर्युक्त औदयिक भावमां समावेश करवामां कोछ होष जणुतो नथी कोछ कोछ होके 'अणु' भाने छे के-जेवी रीते आठ कर्मोना उदयथी संसारीपणुानी अने असिद्ध-त्वनी प्राप्ति थाय छे, अणु प्रमाणे लेश्यायुक्तत्व पणु प्राप्त थाय छे। (से तं जीवोदयनिष्फण्णे) आ प्रकारनुं लोकोदय निष्पन्न औदयिक भावनुं स्वरूप छे।

प्रश्न—(से किं तं अजीवोदयनिष्फण्णे?) छे सगवन् ! अल्लोकोदय निष्पन्न औदयिक भावनुं स्वरूप केहुं होय छे ?

इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरयति-अजीवोदयनिष्पन्नः-अजीवे उदयेन निष्पन्न औद-
यिक भावः अनेकविधः प्रज्ञप्तः । अनेकविधत्वमेवाह-तद्यथा-औदारिकं वा शरीरम्=
विशिष्टाकारपरिणतं तिर्यङ्मनुष्यदेवरूपमौदारिकं शरीरकम् । औदारिकशरीरप्रयो-
गपरिणामितं वा द्रव्यम्-औदारिकशरीरस्य प्रयोगेण=व्यापारेण परिणामितं=
निष्पादितं वा द्रव्यम् । एतद्द्रव्यमपि अजीवे=पुद्गलद्रव्ये औदारिकशरीरनाम-
कर्मोदयेन निष्पद्यते, अत एतद् द्रव्यम् अजीवोदयनिष्पन्न औदयिको भाव उच्यते ।
एवं वैकुण्ठिकादिवतुःशरीरविषयेऽपि बोध्यम् । औदारिकादि शरीरप्रयोगेण यत्

उत्तर-(अजीवोदयनिष्पण्णे अणेगविहे पण्णत्ते) अजीव में उदय
से निष्पन्न औदयिक भाव अनेक प्रकार का कहा गया है । (तं जहा)
जैसे-(उरालियं वा सरीरं उरालियसरीरं पओगपरिणामियं
वा दव्वं) विशिष्ट आकार परिणत हुआ तिर्यञ्चो और मनुष्यों
का देहरूप औदारिक शरीर, अथवा औदारिक शरीर के
व्यापार से निष्पादित द्रव्य, ये दोनों भी अजीवपुद्गलद्रव्य-
में औदारिक शरीर नामकर्म के उदय से निष्पन्न होते हैं ।
इसलिये ये दोनों अजीवोदय निष्पन्न औदयिक भाव कहे जाते हैं ।
(वेउव्वियं वा सरीरं, वेउव्वीयसरीरपओगपरिणामियं वा दव्वं एवं
आहारगं सरीरं, तेयगं सरीरं कम्मगं सरीरं च भाणियव्वं) इसी प्रकार से
वैक्रिय शरीर, अथवा वैक्रिय शरीर के व्यापार से निष्पादित द्रव्य, आहारक
शरीर अथवा आहारक शरीर के व्यापार से निष्पादित द्रव्य, तेजस
शरीर अथवा तेजस शरीर के व्यापार से निष्पादित द्रव्य, कामाण

ઉત્તર-(અજીવોદયનિષ્પણ્ણે અણેગવિહે પણ્ણત્તે) અણવમાં ઉદયથી નિષ્પન્ન
ઔદયિકભાવ અનેક પ્રકારનો કહ્યો છે. (તંજહા) જેમ કે...(ઉરાલિયં વા સરીરં
ઉરાલિયસરીરં-પઓગપરિણામિયં વા દવ્વં) વિશિષ્ટ આકારમાં પરિણત થયેલું
તિર્યંચો અને મનુષ્યોના દેહરૂપ ઔદારિક શરીર, અથવા ઔદારિક શરીરના
વ્યાપારથી નિષ્પાદિત દ્રવ્ય આ બંને અણવ-પુદ્ગલ દ્રવ્ય-માં ઔદારિક શરીર
નામકર્મના ઉદયથી નિષ્પન્ન (ઉત્પન્ન) થાય છે. તેથી તે બંનેને અણવોદય
નિષ્પન્ન ઔદયિકભાવ કહેવામાં આવે છે. (વેઉવ્વિયં વા સરીરં, વેઉવ્વિય-
સરીરપઓગપરિણામિયં વા દવ્વં, एवं આહારગં સરીરં, તેયગં સરીરં, કમ્મગં
સરીરં ચ ભાણિયવ્વં) એજ પ્રકારે વૈક્રિય શરીર, અથવા વૈક્રિય શરીરના વ્યા-
પારથી નિષ્પાદિત દ્રવ્ય, આહારક શરીર અથવા આહારક શરીરના વ્યાપારથી
નિષ્પાદિત દ્રવ્ય, તેજસ શરીર અથવા તેજસ શરીરના વ્યાપારથી નિષ્પાદિત

પરિણમ્યતે દ્રવ્યં તત્ સ્વયમેવ દર્શયતિ સૂત્રકાર:-‘પ્રયોગપરિણામિ’ इत्यादि । प्रयोगपरिणामितो वर्णो गन्धो रसः स्पर्शः । अयं भाव-औदारिकादीनां पञ्चानामपि शरीराणां प्रयोगेण निष्पादितं वर्णगन्धरसस्पर्शस्वरूपं द्रव्यं बोध्यम् । एतद्भिन्नमानप्राणादिकमपि यच्छरीरे उत्पद्यते तदप्युपलक्षणत्वाद् ग्राह्यमिति । ननु यथा नारकत्वादयः पर्याया जीवे भवन्तीति जीवोदयनिष्पन्ने औदयिके पठ्यन्ते, एवं शरीराण्यपि जीवे एव भवन्ति, अत एतान्यपि जीवोदयनिष्पन्ने औदयिक एव पठनीयानि, कथं पुनरजीवोदयनिष्पन्ने औदयिके पठ्यन्ते ? इति

શરીર અથવા કાર્માણ શરીર કે વ્યાપાર સે નિષ્પાદિત દ્રવ્ય કે વિષય મેં भी जानना चाहिये । औदारिकादि शरीर के व्यापार से जो द्रव्य औदारिकादि रूप परिणामित होता है उसे सूत्रकार स्वयं दिखलाते हैं-(प्रयोगपरिणामए वर्णे, गंधे, रसे, फासे,) प्रयोग परिणामित वर्ण, गंध, रस, और स्पर्श हैं । इसका तात्पर्य यह है-कि औदारिक आदि पाँचों भी शरीरों के व्यापार से जो द्रव्य निष्पादित होता है वह वर्ण, गंध, रस, और स्पर्शरूप है । इनसे भिन्न आन प्राण आदिक भी जो शरीर में उत्पन्न होते हैं वे भी उपलक्षण से यहां ग्रहण कर लेना चाहिये !

શંકા-જैसे નારકત્વ આદિ પર્યાયેં જીવ મેં હોતી હેં હસ અભિપ્રાય સે વે જીવોદય નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવ મેં કહી ગઈ હૈ, હસી પ્રકાર શરીર भी जीव में ही होते हैं-अतः वे भी जीवोदयनिष्पन्न औदयिक

द्रव्य अने कार्माणु शरीर अथवा कार्माणु शरीरना व्यापारथी निष्पादित द्रव्यना विषयमां पणु समजवु औदारिक आदि शरीरना व्यापारथी ने द्रव्य औदारिक आदि इपे परिणामित थाय छे, तेने सूत्रकार पोते न बतावे छे-(प्रयोगपरिणामिए वर्णे, गंधे, रसे, फासे) प्रयोगपरिणामित वर्ण, गंध, रस अने स्पर्श छे. आ कथनने लावार्थ नीचे प्रमाणे छे-औदारिक आदि पांचे शरीरना व्यापारथी ने द्रव्य निष्पादित थाय छे, ते वर्ण, गंध, रस अने स्पर्श इपे होय छे. आ सिवाय ने आन, प्राण आदिकनी शरीरमां उत्पत्ति थाय छे तेमने पणु उपलक्षणनी अपेक्षाओ आडीं ग्रहण करवा नेछेओ.

શંકા-જેવી રીતે નારકત્વ આદિ પર્યાયોનો જીવમાં સદ્ભાવ હોય છે, અને તે દારણે તો તે પર્યાયોનો જીવોદય નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવમાં સમાવેશ કરવામાં આવ્યો છે, એજ પ્રમાણે શરીરનો પણ જીવમાં સદ્ભાવ હોય છે, તેથી તેમનો પણ જીવોદય નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવોમાં સમાવેશ થવો જોઈતો હતો.

ચેદાહ-યદ્યપ્યૌદારિકાદિશરીરાણિ જીવે ભવન્તિ. તથાપિ ઔદારિકાદિશરીર નામ-
કર્મોદયસ્ય મુખ્યતયા શરીરપુદ્ગલેષ્વેવ વિપાકો ભવતિ, અત એતાનિ ઔદારિ-
કાદીનિ પંચશરીરાણિ અજીવોદયનિષ્પન્ને ઔદયિક એવ ભાવે પઠ્યન્તે, અતો
નાસ્તિ કશ્ચિદ્ દોષઃ । इत्थमजीवोदयनिष्पन्न औदयिकभावः प्ररूपित इति सूच-
यितુમાह-स एषोऽजीवोदयनिष्पन्न इति । उदयनिष्पन्नो भावः सकलोऽपि
प्ररूपित इति सूचयितुमाह-स एष उदय निष्पन्न इति । एतावता औदयिको भावः
प्ररूपित इति सूचयितुमाह-स एष औदयिक इति । इत्थं द्विविधोऽप्यौदयिक-
भावः प्ररूपित इति विज्ञेयम् ॥મૂ० ૧૫૨॥

ભાવ મેં હી કહના ચાહિયે થે, ફિર ક્યો-ઉન્હે અજીવોદયનિષ્પન્ન ઔદ-
યિક ભાવ મેં રખા-હૈ ?

ઉત્તર-યદ્યપિ ઔદારિક આદિ શરીર જીવ મેં હોતે હૈ, તો મી
ઔદારિક આદિ શરીર નામ કર્મકા વિપાકમુખ્યતયા શરીર પુદ્ગલો મેં
હી હોતા હૈ, હસલિયે હન ઔદારિક આદિ પાંચ શરીરોં કો અજીવોદય
નિષ્પન્ન ઔદારિક ભાવ મેં હી રખા હૈ । હસલિયે હસમેં કોઈ દોષ નહીં
હૈ । (સે તં અજીવોદયનિષ્કળ્ણે) હસ પ્રકાર સે યહ અજીવોદય નિષ્પન્ન
ઔદયિક ભાવ કા કથન હૈ । (સે તં ઉદયનિષ્કળ્ણે, સે તં ઉદઈએ)
એતાવતા ઔદયિક ભાવ પ્રરૂપિત હો ચુકા । ઓર હસ પ્રરૂપણા સે દોનોં
પ્રકાર કા મી ઔદયિક ભાવ કથિત હો ચુકા એસા જાનના ચાહિયે ।

ભાવાર્થ-સૂત્રકાર ને હસ મૂત્ર દ્વારા ઔદયિક ભાવ કા કથન કિયા
હૈ । હસમેં ઉન્હોંને યહ સમજાયા હૈ કિ અષ્ટવિધ કર્મોં કા જો ઉદય હૈ

છતાં અહીં તેને અભ્યવેદ્ય નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવ રૂપે શા કારણે
ગણાવવામાં આવેલ છે ?

ઉત્તર-જે કે ઔદારિક આદિ શરીરોનાં ભવમાં સદ્ભાવ હોય છે,
છતાં પણ ઔદારિક આદિ શરીર નામકર્મનો વિપાક મુખ્યત્વે શરીર પુદ્-
ગલોમાં જ થાય છે. તેથી ઔદારિક આદિ પાંચ શરીરોને અભ્યવેદ્ય નિષ્પન્ન
ઔદયિક ભાવ રૂપ કહેવામાં આવેલ છે. તેથી તે પ્રકારનું કથન નિર્દોષ જ
ગણી શકાય. (સે તં અજીવોદયનિષ્કળ્ણે) આ પ્રકારનું અભ્યવેદ્ય નિષ્પન્ન
ઔદયિક ભાવનું સ્વરૂપ સમજવું (સે તં ઉદયનિષ્કળ્ણે, સે તં ઉદઈએ) આ પ્રકારે
ઔદયિક ભાવની પ્રરૂપણા અહીં સમાપ્ત થાય છે આ પ્રરૂપણા દ્વારા બન્ને
પ્રકારના ઔદયિક ભાવોની પ્રરૂપણા સમાપ્ત થઈ જાય છે.

ભાવાર્થ-સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા ઔદયિક ભાવનું કથન કર્યું છે. આ
સૂત્ર દ્વારા તેમણે એ વાતનું પ્રતિપાદન કર્યું છે કે આઠ પ્રકારનાં કર્મોનાં

एक तो वह औदयिक भाव है, दूसरा अष्टविध कर्मों के उदय से जो भाव उत्पन्न होता है वह औदयिक भाव है। यह कर्मोदय निष्पन्न औदयिक भाव जीवोदय निष्पन्न और अजीवोदय निष्पन्न के भेद से दो प्रकार का कहा गया है। कर्मों के उदय से जो भाव जीव में उदित होता है वह जीवोदय निष्पन्न और जो अजीव में उदित होता है वह अजीवोदय निष्पन्न औदयिक भाव है। वह जीवोदय निष्पन्न औदयिक भाव में चारों गतियां चारों कषाय, तीनों वेद मिथ्या दर्शन अज्ञान छहों लेश्याएँ असंयम, असिद्धभाव आदि परिणमित किये गये हैं। क्योंकि ये सब जीव में ही विवक्षित अपने कर्म के उदय से निष्पन्न होते हैं—जैसे मनुष्यगति नाम के उदय से मनुष्य गति, तिर्यञ्चगतिनामकर्म के उदय से तिर्यञ्चगति, देवगति नामकर्म के उदय से देवगति और नरकगति नामकर्म के उदय से नरक गति उत्पन्न होती है। इसी प्रकार से चारों कषाय वेदनीय के उदय से होता है। तात्पर्य यह है कि मोहनीय कर्म-दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय के भेद से दो प्रकार का है।

જે ઉદય છે તે ઔદયિક ભાવ રૂપ છે અને બીજું એ પણ પ્રકટ કર્યું છે કે આઠ પ્રકારના કર્મોના ઉદયથી જે ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે તે પણ ઔદયિક ભાવ રૂપ છે તે કર્મોદય નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવના નીચે પ્રમાણે બે ભેદ કહ્યા છે—(૧) જીવોદય નિષ્પન્ન અને (૨) અજીવોદય નિષ્પન્ન. કર્મોના ઉદયથી જે ભાવ જીવમાં ઉદિત થાય છે તેને જીવોદયનિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવ કહે છે. અને કર્મોના ઉદયથી જે ભાવ અજીવોમાં ઉત્પન્ન (ઉદિત) થાય છે, તેને અજીવોદય નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવ કહે છે. જીવોદયનિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવમાં ચારે ગતિઓ, ચારે કષાયો, ત્રણે વેદ, મિથ્યાદર્શન અજ્ઞાન, છએ લેશ્યાઓ, અસંયમ, અસિદ્ધભાવ આદિને ગણવામાં આવેલ છે, કારણ કે એ બધાં ભાવોનો જીવમાં જ સદ્ભાવ હોય છે. અને જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મોના ઉદયથી આ ભાવો નિષ્પન્ન થતા હોય છે જેમ કે મનુષ્યગતિ નામકર્મના ઉદયથી મનુષ્યગતિ, તિર્યંચગતિ નામ કર્મના ઉદયથી તિર્યંચગતિ, દેવગતિ નામકર્મના ઉદયથી દેવગતિ અને નરકગતિ નામકર્મના ઉદયથી નરકગતિ ઉત્પન્ન થાય છે. ચારે કષાયોની ઉત્પત્તિ પણ કષાયવેદનીયના ઉદયથી થાય છે આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે—મોહનીય કર્મના બે પ્રકાર છે—ચારિત્ર-મોહનીય અને દર્શનમોહનીય દર્શનમોહનીયના નીચે પ્રમાણે ત્રણ ભેદ પડે

દર્શન મોહનીય કે, સમ્યક્ત્વ, મિથ્યાત્વ ઓર તદુભય-સમ્યક્ત્વ મિથ્યાત્વ યે ત્રીન ભેદ હૈં । ચારિત્ર મોહનીય કે કષાય વેદનીય ઓર નો કષાય વેદનીય યે દો ભેદ હૈં । इनमें जो कषाय वેदनीय है, उसके उदय होने पर क्रोध मान, माया और लोभ ये चारों कषायें उत्पन्न होते हैं । और नोकषाय चारित्र मોહનીय के उदय होने पर तीन वेद निष्पन्न होते हैं । मिथ्यात्व मोहनीय के उदय से मिथ्या दर्शन होता है । किसी ज्ञानावरण कर्म के उदय से अज्ञान भी होता है । लेश्याएँ योग परिणाम रूप हैं । इसलिये ये योग जनक शरीर नामकर्म उदय के फल है । चारित्रमोहनीय के सर्वघाति स्पर्धकों (कर्मों के अंश) के उदय से असंयत भाव होता है । किसी भी कर्म के उदय से असिद्ध भाव होता है इस प्रकार जो भी जीव में कर्मोदय से पर्याय निष्पन्न होती है वह सब औदयिक भाव है ऐसा जानना चाहिए । अजीव में उदय से निष्पन्न जो भाव है, वह अजीवोदय निष्पन्न औदयिक भाव है । यह अजीवोदय निष्पन्न औदयिक भाव अनेक प्रकार का कहा गया है । जैसे औदारिक आदि शरीर अथवा औदारिक शरीर आदि के व्यापार से निष्पादित द्रव्य । ये शरीरादि अजीवोदय निष्पन्न औद-

છે-સમ્યક્ત્વ, મિથ્યાત્વ અને તદુભય (સમ્યક્ત્વ મિથ્યાત્વ) ચારિત્ર મોહનીયના ત્રીણે પ્રમાણે બે ભેદ પડે છે-(૧) કષાયવેદનીય અને (૨) નોકષાયવેદનીય જ્યારે કષાયવેદનીયનો ઉદય થાય છે ત્યારે ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ રૂપ ચારે કષાયો ઉત્પન્ન થાય છે અને નોકષાયચારિત્ર મોહનીયનો ઉદય થાય ત્યારે ત્રણ વેદ (ત્રી, પુરુષ અને નંપુંસક રૂપ ત્રણ વેદ) નિષ્પન્ન થાય છે મિથ્યાત્વ મોહનીયના ઉદયથી મિથ્યાદર્શન ઉત્પન્ન થાય છે. જ્ઞાનાવરણીય કર્મના ઉદયથી અજ્ઞાનભાવ ઉત્પન્ન થાય છે લેશ્યાઓ યોગપરિણામ રૂપ ગણાય છે તેથી યોગજનક શરીર-નામકર્મના ઉદયના ફલ રૂપ તેમને ગણી શકાય છે. ચારિત્રમોહનીયના સર્વઘાતિ સ્પર્ધકોના (કર્મોના અંશોના) ઉદયથી અસંયત ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે કોઈ પણ કર્મના ઉદયથી અસિદ્ધભાવ ઉત્પન્ન થાય છે. આ રીતે કર્મોદયને કારણે જીવમાં જે પર્યાયો ઉત્પન્ન થાય છે તે બધી પર્યાયોને ઔદયિક ભાવ રૂપ સમજવી જોઈએ.

અજીવમાં કર્મોદયને લીધે જે ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે તે ભાવને અજીવોદય નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવ કહે છે. આ અજીવોદય નિષ્પન્ન ઔદયિકભાવ અनेक प्रकारનો બતાવ્યો છે જેમ કે ઔદારિક આદિ શરીરો અથવા ઔદારિક આદિ શરીરોના વ્યાપારથી નિષ્પાદિત દ્રવ્ય આ શરીરાદિને અજીવોદય

અથ ઔપશમિકં ભાવં નિર્દિશતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં ઉવસમિષ્ણે? ઉવસમિષ્ણે દુવિહે પપ્પણત્તે, તં જહા—ઉવસમે ય ઉવસમનિષ્ણણે ય। સે કિં તં ઉવસમે? ઉવસમે—મોહણિજ્જસ્સ કમ્મસ્સ ઉવસમેણં। સે તં ઉવસમે। સે કિં તં ઉવસમનિષ્ણણે? ઉવસમનિષ્ણણે અણેગવિહે પપ્પણત્તે, તં જહા—ઉવસંતકોહે જાવ ઉવસંતલોહે ઉવસંતપેજ્જે ઉવસંતદોસે ઉવસંતદંસણમોહણિજ્જે ઉવસંતમોહણિજ્જ ઉવસમિયા સમ્મત્તલદ્ધી ઉવસમિયા ચરિત્તલદ્ધી ઉવસંતકસાય છઉમત્થવીયરાગે। સે તં ઉવસમનિષ્ણણે। સે તં ઉવસમિષ્ણે ॥સૂ૦ ૧૫૩॥

છાયા—અથ કોડસી ઔપશમિકઃ? ઔપશમિકો દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથા—ઉપશમશ્ચ ઉપશમનિષ્પન્નશ્ચ। અથ કોડસાવુપશમઃ—મોહનીયસ્ય કર્મણ ઉપશમઃ સ્વછ। સોડસાવુપશમઃ। અથ કોડસાવુપશમનિષ્પન્નઃ? ઉપશમનિષ્પન્નઃ અનેકવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથા—ઉપશાન્ત—ક્રોધો યાત્રદુપશાન્તલોભ, ઉપશાન્તપ્રેમ ઉપશાન્તદ્વેષ ઉપશાન્તદર્શનમોહનીય ઉપશાન્તમોહનીયઃ ઔપશમિકી સમ્યક્ત્વલબ્ધિઃ ઔપશમિકી ચારિત્રલબ્ધિઃ ઉપશાન્તકષાયછન્નસ્થવીતરાગઃ। સ એષ ઉપશમનિષ્પન્નઃ। સ એષ ઔપશમિકઃ ॥સૂ૦ ૧૫૩॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ।

થિક ભાવ હસલિયે કહે ગયે હૈં કિ ઔદારિક આદિ શરીર નામ કર્મ કા વિપાક મુખ્યતયા હન શરીર પુદ્ગલોં મેં હી હોતા હૈ। હસીલિયે હન્હે પુદ્ગલ વિપાકી પ્રકૃતિયોં મેં પરિણમિત કિયા ગયા હૈ। ॥સૂ૦ ૧૫૨॥

અવ સૂત્રકાર ઔપશમિક ભાવ કા કથન કરતે હૈ—

“સે કિં તં ઉવસમિષ્ણે” ઇત્યાદિ।

નિષ્પન્ન ઔદયિક ભાવ રૂપે પ્રકટ કરવાનું કારણ એ છે કે ઔદારિક આદિ શરીર નામકર્મનો વિપાક મુખ્યત્વે આ શરીરપુદ્ગલોમાં જ થાય છે. તેથી તેમને પુદ્ગલવિપાકી પ્રકૃતિઓમાં પરિણમિત કસાયેલ છે ॥સૂ૦ ૧૫૨॥

હવે સૂત્રકાર ઔપશમિક ભાવનું પ્રતિપાદન કરે છે—

“સે કિં તં ઉવસમિષ્ણે” ઇત્યાદિ—

શિષ્યઃ પૃચ્છતિ-અથ કોડસૌ ઔપશમિકઃ ? इति । उत्तरयति-औपशमिकः-
 उपशमोपशमनिष्पन्नभेदेन द्विविधः प्रज्ञप्तः । तत्र-मोहनीयस्य कर्मण उपशम एव
 उपशम इत्युच्यते । 'णं' इति वाक्यालङ्कारे । अयं प्रथमो भेदोऽष्टाविंशतिविधस्य
 मोहनीयस्यैव कर्मण उपशमश्रेण्यां द्रष्टव्यः, 'मोहस्सेवोवसमो' (मोहस्यैवोपशमः)
 इति वचनात् । अथ द्वितीयं भेदमाह-अथ कौडसौ उपशमनिष्पन्नः ? इति प्रश्नः ।
 उत्तरयति-उपशमनिष्पन्न उपशान्तक्रोधाद्युपशान्तकषायछन्नस्थवीतरागान्तो

हे भदन्त ! (સે કિં તં ઉવસમિએ ?) વહ ઔપશમિકભાવ કયા હે ?
 (ઉવસમિએ દુવિહે પળ્લત્તે).

ઉત્તર-ઔપશમિક ભાવ દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । (તંજહા)
 ઉસકે વે દો પ્રકાર યે હૈં-(ઉવસમે ય ઉવસમનિષ્કળ્ણે ય) એક ઉપશમ
 ઔર દૂસરા ઉપશમ નિષ્પન્ન હૈ । (સે કિં તં ઉવસમે ?) હે ભદન્ત ! વહ
 ઉપશમ કયા હૈ ?

ઉત્તર-(ઉવસમે મોહણિજ્જસ્સ કમ્મસ્સ ઉવસમેણં) અઢાઈસ પ્રકાર
 કે સમસ્ત મોહનીય કર્મકાં જો ઉપશમ હૈ વહી ઉપશમ હૈ ।

યહ ઉપશમ ૮ વેં ૯ વેં ૧૦ વેં ૧૧ વેં ગુણસ્થાન રૂપ ઉપશમશ્રેણી
 મેં હોતા હૈ । (સે તં ઉવસમે) ઇસ પ્રકાર યહ ઉપશમ હૈ । (સે કિં તં
 ઉવસમનિષ્કળ્ણે ?) હે ભદન્ત ! વહ ઉપશમ નિષ્પન્ન કયા હૈ ?

ઉત્તર-(ઉવસમનિષ્કળ્ણે અળેગવિહે પળ્લત્તે) ઉવશમ નિષ્પન્ન

શબ્દાર્થ-(સે કિં તં ઉવસમિએ ?) હે લગવન્ । તે ઔપશમિકભાવનું
 સ્વરૂપ કેવું કહ્યું ?

ઉત્તર-(ઉવસમિએ દુવિહે પળ્લત્તે) ઔપશમિક ભાવ બે પ્રકારનો કહ્યો છે
 (તંજહા) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(ઉવસમે ય ઉવસમનિષ્કળ્ણે ય) (૧) ઉપશમ
 અને (૨) ઉપશમનિષ્પન્ન.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં ઉવસમે ?) હે લગવન્ । તે ઉપશમનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(ઉવસમે મોહણિજ્જસ્સ કમ્મસ્સ ઉવસમેણં) ૨૮ પ્રકારના સમસ્ત
 મોહનીય કર્મના ઉપશમને જ અહીં ઉપશમ ભાવ કહેવામાં આવ્યો છે.
 આઠ, નવ, દસ અને અગિયારમાં ગુણસ્થાન રૂપ ઉપશમ શ્રેણીમાં આ ઉપ-
 શમ ભાવનો સદ્ભાવ રહે છે (સે તં ઉવસમે) આ પ્રકારનું ઉપશમનું સ્વરૂપ હોય છે.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં ઉવસમનિષ્કળ્ણે ?) હે લગવન્ । ઔપશમિક ભાવના
 બીજા ભેદ રૂપ ઉપશમ નિષ્પન્નનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(ઉવસમનિષ્કળ્ણે અળેગવિહે પળ્લત્તે) ઉપશમ નિષ્પન્ન ઔપશમિક

बोध्यः । अत्रेदं बोध्यम्—मोहनीयस्योपशमेन दर्शनमोहनीयं चारित्रमोहनीयं चोप-
शान्तं भवति, एतद्द्वये उपशान्ते क्रोधादय उपशान्ता भवन्तीति । स एषोऽनन्त
रोक्तो द्वितीयो भेदो बोध्यः । प्रकृतमुपसंहरन्नाह—स एष औपशमिक इति । इत्थं
निर्दिष्टो द्विविधोऽप्यौपशमिको भावः ॥ सू० १५३ ॥

औपशमिक भाव अनेक प्रकार का कहा गया है । (तंजहा) जैसे—(उव-
संत कोहे) क्रोध का उपशान्त होना (जाव उवसंतलोहे) यावत् लोभ
का उपशान्त होना, (उवसंतपेमे) प्रेम-राग-का उपशान्त होना
(उवसंत दोसे) द्वेष का उपशान्त होना (उवसंत दंसणमोहणिज्जे)
दर्शनमोहनीय का उपशान्त होना (उवसंतमोहणिज्जे) मोहनीय कर्म
का उपशान्त होना (उवसमिया सम्मत्तलद्धी) औपशमिकी सम्यक्त्व
लब्धि, (उवसमिया चरित्तलद्धी) औपशमिकी चारित्रलब्धि (उवसंत
कसाय छडमत्थवीयरगे) उपशान्त कषाय, छद्मस्थवीत राग (से तं
उपसमनिष्फण्णे) इस प्रकार यह उपशम निष्पन्न औपशमिक
भाव हैं । (से तं उवसमिए) इस प्रकार दोनों प्रकार का औपशमिक
निर्दिष्ट हो चुका ।

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा सूत्रकारने औपशमिक भाव का स्वरूप
दिखलाया है । उसमें उन्होंने यह स्पष्ट किया है कि उपशम से होनेवाला
औपशमिक भाव दो प्रकार का होता है । एक प्रकार का औपशमिक

भाव अनेक प्रकारना कहा छे. (तंजहा) जेम के—(उवसंते कोहे जाव उवसंते
लोहे) क्रोध उपशान्त थवे, मानउपशान्त थवुं, मायाउपशान्त थवी, वेला
उपशान्त थवे, (उवसंत पेमे) प्रेम (राग) उपशान्त थवे, (उवसंतदोसे) द्वेष
उपशान्त थवे, (उवसंत दंसण मोहणिज्जे) दर्शनमोहनीयनुं उपशान्त थवुं,
(उवसंतमोहणिज्जे) मोहनीय कर्मनुं उपशान्त थवुं, (उवसमिया सम्मत्तलद्धी)
औपशमिकी सम्यक्त्वलब्धि, (उवसमिया चरित्तलद्धी) औपशमिकी चारित्रलब्धि
(उवसंत कसाय छडमत्थवीयरगे) उपशान्त कषाय, छद्मस्थवीतराग, (से तं
उपसमनिष्फण्णे) इत्यादि इप आ उपशमनिष्पन्न औपशमिक भाव छे (से तं
उवसमिए) आ प्रकारनुं गन्ने प्रकारना औपशमिक भावोनुं स्वरूप समजवुं.

भावार्थ—आ सूत्र द्वारा सूत्रकारे औपशमिक भावना स्वरूपनुं निरूपण
कयुं छे. सूत्रकारे उपशम जनित औपशमिक भावना जे प्रकारे गताव्या छे.
अेक प्रकारना औपशमिक भाव अेवे होय छे के जे मात्र मोहनीयकर्मना

ભાવ વહ હૈ જો કેવલ મોહનીય કર્મ કે હી ઉપશમ સ્વરૂપ હોતા હૈ । તાત્પર્ય હસ કથન કા યહ હૈ કિ કર્મોં કી દસ અવસ્થાઓં મૈં એક ઉપશાન્ત અવસ્થામી હૈ । જિન કર્મ પરમાણુઓં કી ઉદીરણા સંભવ નહીં અર્થાત્ જો ઉદીરણા કે અયોગ્ય હોતે હૈં વે ઉપશાન્ત કહલાતે હૈં । યહ અવસ્થા આઠોં કર્મોં મૈં સમ્ભવિત હૈ । પ્રકૃત મૈં હસ ઉપશાન્ત અવસ્થા સે પ્રયોજન નહીં હૈ । કિન્તુ અધઃ કરણ આદિ પરિણામોં સે જો મોહનીય કર્મ કા ઉપશમ હોતા હૈ પ્રકૃત મૈં ઉસી સે પ્રયોજન હૈ । હસીલિયે “મોહનીયસ્યૈવોપશમઃ” એસા પાઠ યહાં જાનના ચાહિયે ક્યોં કિ અન્યત્ર એસા હી પાઠ હૈ । મોહનીય કર્મ દર્શનમોહનીય કે ૩ ભેદોં ઓર ચરિત્રમોહનીયને ૨૫ ભેદોં કો લેકર ૨૮ પ્રકાર કા હૈ, હસ સમ્પૂર્ણ મોહનીય કર્મ કા ઉપશમ, ઉપશમ શ્રેણી મૈં હોતા હૈ, હસલિયે મોહનીય કર્મ કા ઉપશમ રૂપ ઔપશમિક ભાવ ઉપશ્રેણી મૈં હોના કહા ગયા હૈ । દૂસરા-ઉપશમ નિષ્પત્ત ઔપશમિક ભાવ અનેક પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ સો ઉસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ મોહનીય કે ઉપશમ સે દર્શન મોહનીય ઓર ચારિત્ર મોહનીય વે દોનોં ઉપશાન્ત હો જાતે હૈં । इनके ઉપશાન્ત હોને પર ક્રોધાદિક મી ઉપશાન્ત હો જાતે હૈં હસ પ્રકાર યહ ઔપશમિક ભાવ કા વિવેચન હૈ । ॥સૂ૦૧૫૩॥

ઉપશમ રૂપ હોય છે. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે-કર્મોની દસ અવસ્થાઓમાંની એક ઉપશમ અવસ્થા પણ છે. જે કર્મપરમાણુઓની ઉદીરણા શક્ય હોતી નથી, એટલે કે જે કર્મપરમાણુઓ ઉદીરણાને માટે અયોગ્ય હોય છે, તેમને ઉપશાન્ત કહે છે આ અવસ્થાનો આઠ પ્રકારનો કર્મોમાં સંભવ હોય છે. પ્રકૃતમાં (અહીં) આ ઉપશાન્ત અવસ્થાનું પ્રયોજન નથી, પરંતુ અધઃકરણ આદિ પરિણામોથી જે મોહનીય કર્મનો ઉપશમ થાય છે, તેનું જ અહીં પ્રયોજન છે તેથી જ “મોહનીયસ્યૈવોપશમઃ” આ પ્રકારનો પાઠ અહીં સમજવો જોઈએ કારણ કે અન્યત્ર એવો જ પાઠ આવે છે.

દર્શન મોહનીયકર્મના ત્રણ ભેદો અને ચારિત્રમોહનીયના પચીસ ભેદો મળીને મોહનીયકર્મના કુલ ૨૮ પ્રકાર છે આ સંપૂર્ણ મોહનીયકર્મનો ઉપશમ, ઉપશમ શ્રેણીમાં થાય છે તેથી મોહનીય કર્મના ઉપશમ રૂપ ઔપશમિક ભાવ ઉપશમ શ્રેણીમાં હોવાનું કહેવામાં આવ્યું છે. બીજા પ્રકારનો જે ઉપશમનિષ્પત્ત ઔપશમિક ભાવ છે, તે અનેક પ્રકારનો કહ્યો છે. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે-મોહનીયના ઉપશમથી દર્શનમોહનીય અને ચારિત્રમોહનીય, એ બંને ઉપશાન્ત થઈ જાય છે તેઓ ઉપશાન્ત થઈ જવાથી ક્રોધાદિક પણ ઉપશાન્ત થઈ જાય છે આ પ્રકારનું ઔપશમિક ભાવના સ્વરૂપનું વિવેચન અહીં કરવામાં આવ્યું છે. ॥સૂ૦૧૫૩॥

अथ क्षायिकं नाम निरूपयति-

मूलम्-से किं तं खइए? खइए दुविहे पणत्ते, तं जहा-
 खइए य खयनिप्फण्णे य । से किं तं खइए? खइए-अट्ठण्हं
 कम्मपयडीणं खए णं से तं खइए । से किं तं खयनिप्फण्णे ?
 खयनिप्फण्णे अणेगविहे पणत्ते, तं जहा-उप्पण्णणाणदंसणधरे
 अरहा जिणे केवली, खीण आभिणिबोहियणाणावरणे, खीण
 सुयणाणावरणे, खीण ओहिणाणावरणे, खीणमणपज्जवणाणाव-
 रणे, खीणकेवलणाणावरणे, अणावरणे, निरावरणे, खीणावरणे,
 णाणावरणिज्जकम्मविप्पमुक्के, केवलदंसी, सब्बदंसी, खीणनिहे,
 खीणनिहानिहे, खीणपयले, खीणपयलापयले, खीण थीणगिद्धी,
 खीणचक्खुदंसणावरणे, खीणअचक्खुदंसणावरणे खीण-
 ओहिदंसणावरणे, अणावरणे, निरावरणे, खीणावरणे,
 दरिसणावरणिज्जकम्मविप्पमुक्के, खीणसायावेयणिजे खीण-
 असायावेयणिजे, अवेयणे, निव्वेयणे खीणवेयणे,
 सुभासुभवेयणिज्जकम्मविप्पमुक्के, खीणकोहे, जाव खीण-
 लोहे, खीणपेजे, खीणदोसे, खीणदंसणमोहाणिजे, खीण-
 चरित्तमोहाणिजे, अमोहे, निम्मोहे, खीणमोहे, मोहाणिज्जकम्म-
 विप्पमुक्के, खीणणेरइयाउए, खीणतिरिक्खजोणिआउए,
 खीणमणुस्साउए, खीणदेवाउए, अणाउए, निराउए, खीणा-
 उए, आउकम्मविप्पमुक्के, गइजाइसरीरंगोवंगबंधणसंघायण-
 संघयणसंठाण अणेगबोदि विंदसंघायविप्पमुक्के, खीणसुभणामे,
 खीण असुभणामे, अणामे निण्णामे, खीणनामे, सुभासुभ-

णामकम्मविप्पमुक्के, खीणउच्चागोए, खीणणीयागोए, अगोए,
 निग्गोए, खीणगोए, उच्चणीयगोत्तकम्मविप्पमुक्के, खीणदाणं-
 तराए, खीणलाभंतराए, खीणभोगंतराए, खीणउवभोगंतराए,
 खीणवीरियंतराए, अणंतराए, णिरंतराए, खीणंतराए, अंतराय-
 कम्मविप्पमुक्के, सिद्धे, बुद्धे, मुत्ते, परिणिव्वुए, अंतगडे, सब्ब-
 दुक्खप्पहीणे । से तं खयनिष्फण्णे । से तं खइए ॥सू० १५४॥

छाया—अथ कोऽसौ क्षायिकः ? क्षायिको द्विविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—क्षायि-
 कश्च क्षयनिष्पन्नश्च । अथ कोऽसौ क्षायिकः ? क्षायिकः—अष्टानां कर्मप्रकृतीनां
 क्षयः खलु । सोऽसौ क्षायिकः । अथ कोऽसौ क्षयनिष्पन्नः ? क्षयनिष्पन्नोऽनेक-
 विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—उत्पन्नज्ञानदर्शनधरः अरहा जिनः केवली क्षीणाभिनिबो-
 धिकज्ञानावरणः क्षीणश्रुतज्ञानावरणः क्षीणावधिज्ञानावरणः क्षीणमनःपर्यवज्ञाना-
 वरणः क्षीणकेवलज्ञानावरणः अनावरणः निरावरणः क्षीणावरणो ज्ञानावरणीयकर्म-
 विप्रमुक्तः केवलदर्शी सर्वदर्शी, क्षीणनिद्रः क्षीणनिद्रानिद्रः क्षीणप्रचलः क्षीणप्रचला
 प्रचलः क्षीणस्त्यानगृद्धिः, क्षीणचक्षुर्दर्शनावरणः क्षीणाचक्षुर्दर्शनावरणः क्षीणावधि-
 दर्शनावरणः क्षीणकेवलदर्शनावरणः अनावरणः निरावरणः क्षीणावरणः दर्शनावर-
 णीयकर्मविप्रमुक्तः । क्षीणसातावेदनीयः क्षीणासातावेदनीयः अवेदनो निर्वेदनः
 क्षीणवेदनः शुभाशुभवेदनीयकर्मविप्रमुक्तः । क्षीणक्रोधो यावत् क्षीणलोभः क्षीणप्रेमा
 क्षीणद्वेषः क्षीणदर्शनमोहनीयः क्षीणचारित्रमोहनीयः अमोहो निर्मोहः क्षीणमोहो
 मोहनीयकर्मविप्रमुक्तः । क्षीण नैरयिकायुष्कः क्षीणतिर्यग्योनिकायुष्कः क्षीणमनुष्या-
 युष्कः क्षीणदेवायुष्कः अनायुष्को निरायुष्कः क्षीणायुष्कः आयुर्कर्मविप्रमुक्तो, गति
 जातिशरीराङ्गोपाङ्गवन्धनसंघातनसंहननसंस्थानानेकशरीरवृन्दसंघातविप्रमुक्तः क्षी-
 णशुभनामा क्षीणाशुभनामा अनामा निर्नामा क्षीणनामा शुभाशुभनामकर्मविप्रमुक्तः ।
 क्षीणोच्चगोत्रः क्षीणनीचगोत्रः अगोत्रः निर्गोत्रः उच्चनीचगोत्रकर्मविप्रमुक्तः । क्षीणदा-
 नान्तरायः क्षीणलाभान्तरायः क्षीणभोगान्तरायः क्षीणवीर्यान्तरायः अनन्तरायो
 निग्नन्तरायः क्षीणान्तरायः अन्तरायकर्मविप्रमुक्तः । सिद्धो बुद्धो मुक्तः परिनिवृत्तः
 अन्तकृतः सर्वदुःखप्रहीणः । सोऽसौ क्षयनिष्पन्नः । सोऽसौ क्षायिकः ॥सू० १५४॥

ટીકા—‘ સે કિં તં ’ ઇત્યાદિ—

અથ કોડસૌ ક્ષાયિકઃ ? ઇતિ શિષ્ય પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—ક્ષાયિકઃ ક્ષય એવ, ક્ષયેણ નિષ્પન્નો વા ક્ષાયિકઃ । સ દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ । દ્વૈવિધ્યમેવાહ—તદ્વથા—ક્ષાયિકશ્ચ ક્ષયનિષ્પન્નશ્ચ । તત્ર—ક્ષાયિકઃ સ્વલુ અઘ્તાનાં કર્મપ્રકૃતીનાં=જ્ઞાનાવરણીયાઘટ્ટવિધ-કર્મપ્રકૃતીનાં ક્ષયઃ । ક્ષયનિષ્પન્નસ્તુ અનેકવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ । અનેકવિધત્વમાહે—

અથ સૂત્રકાર ક્ષાયિક ભાવ કા નિરૂપણ કરતે હૈં—

“સે કિં તં સ્વહૃદ ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સ્વહૃદ ?) હે ભદન્ત ! વહ ક્ષાયિક કયા હૈ ?

ઉત્તર—(સ્વહૃદ દુવિહે પળ્લત્તે) ક્ષાયિક દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ—
(તંજહા) (જૈસે—સ્વહૃદ ય સ્વયનિષ્કળ્લે ય) એક ક્ષય રૂપ ક્ષાયિક ઓર દૂસરા ક્ષય નિષ્પન્ન । (સે કિં તં સ્વહૃદ) હે ભદન્ત ! વહ ક્ષાયિક કયા હૈ ? (અટ્ટપહં કમ્મપયહીણં સ્વણં) આઠ કર્મ પ્રકૃતિયોં કા જો ક્ષય હૈ વહી ક્ષાયિક હૈ । (સે તં સ્વહૃદ) હસ પ્રકાર વહ યહ ક્ષાયિક હૈ (સે કિં તં સ્વયનિષ્કળ્લે) હે ભદન્ત ! વહ ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક કયા હૈ ? (સ્વયનિષ્કળ્લે અળેગવિહે પળ્લત્તે).

ઉત્તર—ક્ષય નિષ્પન્ન ક્ષાયિક ભાવ અનેક પ્રકાર કા હૈ । (તંજહા) જૈસે—(ઉપ્પળ્લગ્ગાણદંસળ્લધરે અરહા જિળે કેવલી) ઉત્પન્ન જ્ઞાન દર્શન કો

હવે સૂત્રકાર ક્ષાયિક લાવનું નિરૂપણ કરે છે—

“ સે કિં તં સ્વહૃદ ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સ્વહૃદ ?) હે ભગવન્ ! પૂર્વપ્રકાન્ત ક્ષાયિક લાવનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(સ્વહૃદ દુવિહે પળ્લત્તે) ક્ષાયિક લાવ યે પ્રકારનો કહ્યો છે. (તંજહા) તે યે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—(સ્વહૃદ ય સ્વયનિષ્કળ્લે ય) (૧) ક્ષય રૂપ ક્ષાયિક અને (૨) ક્ષયનિષ્પન્ન.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં સ્વહૃદ ?) હે ભગવન્ ! તે ક્ષાયિક લાવનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(અટ્ટપહં કમ્મપયહીણં સ્વણં) આઠ કર્મપ્રકૃતિઓના ક્ષયનું નામ જ ક્ષાયિક છે. (સે તં સ્વહૃદ) ક્ષાયિકનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં સ્વયનિષ્કળ્લે ?) હે ભગવન્ ! ક્ષાયિક લાવના બીજા ભેદ રૂપ ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક લાવનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(સ્વયનિષ્કળ્લે અળેગવિહે પળ્લત્તે) ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિકલાવ અનેક પ્રકારનો કહ્યો છે. (તંજહા) જેમ કે... (ઉપ્પળ્લગ્ગાણદંસળ્લધરે અરહા જિળે કેવલી) ઉત્પન્ન જ્ઞાનદર્શનધારી અહંત જિન કેવલી ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક લાવ રૂપ છે. જેવી

તથા-ઉત્પન્નજ્ઞાનદર્શનધર:-ઉત્પન્નયો:-અપનીતમલાદર્શમण्डलप्रभावत् सकल-
 तदावरणापगमादभिव्यक्तयोः ज्ञानदर्शनयोर्धरः=धारकः, अरहाः-नास्ति रहः=
 रहस्यं यस्यासौ अरहाः-अविद्यमानरहस्यः, नास्य किंचिदपि गोप्यमस्तीति भावः,
 जिनः-आवरणशत्रुजेतृत्वात्, केवली-केवलं=संपूर्ण ज्ञानमस्यास्तीति केवली-
 केवलज्ञानवान्, क्षीणाभिनिबोधिकज्ञानावरणः-क्षीणमाभिनिबोधिकज्ञानावरणं

ધારણ કરનેવાલે અર્હંત જિન કેવલી-જિસ પ્રકાર-મલ કે અપગમ સે
 આદર્શ મण्डल की प्रभा में पदार्थ प्रतिबिम्बित होने लगते हैं, उसी
 प्रकार-मूलरूप ज्ञानावरण और दर्शनावरण कर्मों के विनाश से उत्पन्न
 निर्मल अनन्त ज्ञान और अनन्त दर्शन में त्रिकालवर्ति समस्त ज्ञेय
 झलकने लगते हैं ऐसे ज्ञान और दर्शन को जो धारण करते हैं तथा जो
 अरहा-जिनके लिये-कोई भी जगत का पदार्थ गोप्य नहीं हैं। आवरण
 रूप शत्रु के विजेता होने से जो जिन हैं, तथा जिनका ज्ञान संपूर्ण है,
 इसलिये जो केवली हैं, यहां केवल शब्द का अर्थ सम्पूर्ण ज्ञान है। इस
 सम्पूर्ण ज्ञान रूप केवल ज्ञान से जो युक्त हैं ऐसे वे उत्पन्न ज्ञानदर्शन
 को धारण करनेवाले अरहा जिन केवली क्षयनिष्पन्न क्षાયिक भावरूप हैं।

अब सूत्रकार प्रत्येक कर्म के नष्ट होने से जो २ नाम होते हैं उनका यहाँ
 से कथन करते हैं-यह कथन सिद्धपरमैष्टी की अपेक्षा से जानना चाहिये-
 क्योंकि वे ही प्रत्येक कर्म के क्षय से क्षायिकभाव रूप निष्पन्न होते हैं।

રીતે અરીસા ઉપરનો મેલ દૂર કરી નાખવામાં આવે તો અરીસામાં પદાર્થનું
 સ્પષ્ટ પ્રતિબિંબ દેખાય છે, એજ પ્રમાણે જ્ઞાનાવરણ અને દર્શનાવરણ રૂપ
 કર્મ મળી દૂર થઈ જવાને લીધે ઉત્પન્ન થયેલા નિર્મળ, અનંત જ્ઞાન અને
 અનંત દર્શનમાં ત્રિકાળવર્તી સમસ્ત જ્ઞેય પદાર્થો સ્પષ્ટ રૂપે દેખવા માંડે છે.
 એવા જ્ઞાન અને દર્શનના ધારક અર્હંત જિન કેવલી ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક
 ભાવ રૂપ છે. 'અરહા' - જેમને માટે જગતનો કોઈ પણ પદાર્થ ગોપ્ય
 (અદૃશ્ય) નથી અથવા જેમણે કામ, ક્રોધાદિ શત્રુઓનો નાશ કરી નાખ્યો
 છે એવાં તીર્થંકર ભગવાનોને અરહા અથવા અર્હંત કહે છે. કર્મારિ રૂપ
 શત્રુઓ પર વિજય મેળવનારા હોવાથી તેમને જિન કહ્યા છે. તેમનું જ્ઞાન
 સંપૂર્ણ હોવાથી તેમને કેવલી કહ્યા છે કેવલજ્ઞાન એટલે સંપૂર્ણજ્ઞાન.

હવે સૂત્રકાર પ્રત્યેક કર્મનો નાશ થવાથી જે જે નામ થાય છે, તેમનું
 નિરૂપણ કરે છે આ કથન સિદ્ધ પરમાત્માની અપેક્ષાએ કરવામાં આવ્યું છે
 એમ સમજવું, કારણ કે તેમના પ્રત્યેક કર્મનો ક્ષય થવાને કારણે તેઓ જ
 ક્ષાયિક ભાવ રૂપે નિષ્પન્ન થાય છે.

યસ્ય સ તથા, એવં-ક્ષીણશ્રુતાવધિમનઃપર્યવકેવલજ્ઞાનાવરણરૂપાણિ ચત્વારિ પદાનિ
બોધ્યાનિ । તથા-અનાવરણઃ-અવિદ્યમાનમાવરણં યસ્ય ત તથા, વિમલપ્રકાશવત્વાત્
નિર્મલાકાશસ્થિતચન્દ્રવત્ । નિરાવરણઃ-નિર્ગતમ્ આવરણં યસ્ય સ તથા સમસ્તાવરણ-

જ્ઞાનાવરણ કર્મ પાંચ પ્રકાર કા હૈ—

૧ મતિ જ્ઞાનાવરણ, શ્રુતજ્ઞાનાવરણ, અવધિજ્ઞાનાવરણ, મનઃપર્યવ-
જ્ઞાનાવરણ ઓર કેવલજ્ઞાનાવરણ જીવ જવ અહૈંત જિન કેવલી ઘનતા
હૈ, તથ હસકા સમ્પૂર્ણ જ્ઞાનાવરણકર્મ નષ્ટ હો જાતા હૈ-હસલિયે
(સ્ત્રીણ આભિણિવોહિયણાણાવરણે) ક્ષીણ હો ગયા હૈ આભિનિવોધિક
જ્ઞાનાવરણ જિસકા (સ્ત્રીણ સુયણાણાવરણે) ક્ષીણ હો ગયા હૈ શ્રુતજ્ઞાના-
વરણ કર્મ જિસકા (સ્ત્રીણ ઓહિયણાણાવરણે) ક્ષીણ હો ગયા હૈ અવધિ
જ્ઞાનાવરણ કર્મ જિસકા (સ્ત્રીણ મળપજ્જવણાણાવરણે) ક્ષીણ હો ગયા હૈ
મનઃપર્યવજ્ઞાનાવરણ જિસકા, (સ્ત્રીણ કેવલણાણાવરણે) ક્ષીણ હો ગયા
હૈ કેવલજ્ઞાનાવરણ જિસકા, એસા હોને-કે કારણ ક્ષીણાભિનિવોધિક
જ્ઞાનાવરણ, ક્ષીણ શ્રુતજ્ઞાનાવરણ, ક્ષીણાવધિજ્ઞાનાવરણ, ક્ષીણ મનઃપર્યવ-
જ્ઞાનાવરણ, ક્ષીણ કેવલજ્ઞાનાવરણ ચે ભિન્ન ૨ નામ સમસ્ત જ્ઞાનાવર-
ણીય કર્મ કે ક્ષય હો જાને કી અપેક્ષા સે નિવ્યન્ન હો જાતે હૈ । હસી
પ્રકાર સે (અણાવરણે નિરાવરણે, સ્ત્રીણાવરણે, ણાણાવરણિજ્જકમ્મવિપ્પ-
મુકે) જવ સમસ્ત આવરણ કર્મ નષ્ટ હો જાતા હૈ તથ વહ આત્મા

જ્ઞાનાવરણ-કર્મ પાંચ -પ્રકારનાં છે-

(૧)-મતિજ્ઞાનાવરણ, (૨) શ્રુતજ્ઞાનાવરણ, (૩) અવધિજ્ઞાનાવરણ,
(૪) મનઃપર્યવજ્ઞાનાવરણ અને (૫) કેવલજ્ઞાનાવરણ.

જીવ જ્યારે અહૈંત જિન કેવલી બને છે, ત્યારે તેના સમસ્ત જ્ઞાનાવ-
રણ કર્મોનો નાશ થઈ જાય છે, તેથી તે (સ્ત્રીણ આભિણિવોહિય ણાણાવરણે)
ક્ષીણ આભિનિવોધિક જ્ઞાનાવરણવાળો, (સ્ત્રીણ સુયણાણાવરણે) ક્ષીણ શ્રુતજ્ઞાનાવરણ
કર્મવાળો, (સ્ત્રીણ ઓહિયણાવરણે) ક્ષીણ અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મવાળો, (સ્ત્રીણ
મળપજ્જવણાણાવરણે) ક્ષીણ મનઃપર્યવજ્ઞાનાવરણ કર્મવાળો અને (સ્ત્રીણ કેવલ-
ણાણાવરણે) ક્ષીણ કેવલજ્ઞાનાવરણ કર્મવાળો થઈ જાય છે તે કારણે સમસ્ત
જ્ઞાનાવરણીય કર્મોનો ક્ષય થઈ જવાને કારણે તેના આ પાંચ નામો નિવ્યન્ન
થાય છે. (૧) ક્ષીણ આભિનિવોધિકજ્ઞાનાવરણ, (૨) ક્ષીણ શ્રુતજ્ઞાનાવરણ, (૩)
ક્ષીણ અવધિજ્ઞાનાવરણ, (૪) ક્ષીણ મનઃપર્યવજ્ઞાનાવરણ અને (૫) ક્ષીણ કેવલજ્ઞા-
નાવરણ એજ પ્રમાણે (અણાવરણે, નિરાવરણે, સ્ત્રીણાવરણે, ણાણાવરણિજ્જકમ્મ-
વિપ્પમુકે) જ્યારે સમસ્ત આવરણ કર્મોનો નાશ થઈ જાય છે ત્યારે તે આત્મા

રહિતત્વાત્ । વિગતમલસ્વર્ણવત્ , ક્ષીણાવરણઃ-ક્ષીણો નિઃસત્તાકીભૂતઃ આવરણો
યસ્ય સ તથા, અપુનર્ભાવાવરણરહિતત્વાત્ । અપોકૃતમલાવરણજાત્યમણિવત્ । ઉપ-
સંહરન્નાહ-જ્ઞાનાવરણીયકર્મવિપ્રમુક્તઃ-જ્ઞાનાવરણીયેન કર્મણા વિવિધૈઃ=અનેકપ્રકારૈઃ
પ્રકર્ષેણ મુક્તઃ । एषां पदानां नयमतभेदेन भेदो बोध्यः । इत्थं ज्ञानावरणीयक्षया-
पेक्षाणि नामान्युक्तानि ।

નિર્મલ આકાશ મેં સ્થિતપૂર્ણ ચન્દ્ર કે જેણા નિર્મલ પ્રકાશવાળા હો જાતા
હૈં ફસલિયે અવિદ્યમાન આવરણવાળા હોને સે ઉસકા “ અનાવરણ ”
એસા નામ હો જાતા હૈં । અતઃ અનાવરણ યહ ઉસકી નામ રૂપ અવસ્થા
આવરણ કે ક્ષય સે નિષ્પન્ન હોને કે કારણ ક્ષાયિક ભાવ રૂપ હૈં । આંગે
કિસી ખી પ્રકાર કે આવરણ કર્મ કા સંબન્ધ ફિર ઉસ આત્મા સે હોતા
નહીં હૈં ફસલિયે વહ નિરાવરણ અવસ્થા વિશિષ્ટ બન જાતા હૈં । તથ
ઉસકા નામ “ નિરાવરણ ” એસા હો જાતા હૈં । ફસી પ્રકાર વહ નિઃસત્તા
કી ભૂત આવરણવાળા હોને કે કારણ ક્ષીણ મલાવરણવાળે જાત્યમણિ
કે જેણા “ ક્ષીણાવરણ ” ફસ નામવાળા બનજાતા હૈં । ફસ પ્રકાર વિવિધ
પ્રકાર સે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ દ્વારા વિપ્રમુક્ત બને હુણ ઉસ આત્મા કે યે
પૂર્વોક્ત સમસ્ત નામ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે ક્ષય કી અપેક્ષા સે કહે ગયે
હૈં । યદ્યપિ શબ્દનયની અપેક્ષા સે ફનમેં કોઈ ખી ભેદ નહીં હૈં ફસલિયે

નિર્મળ આકાશમાં રહેલા પૂર્ણચન્દ્રના સમાન વિમલ પ્રકાશવાળો બની જાય
છે. આ રીતે અવિદ્યમાન આવરણવાળો હોવાને લીધે તેનું “ અનાવરણ ” નામ
નિષ્પન્ન થાય છે આ ‘ અનાવરણ ’ નામ રૂપ તેની અવસ્થા આવરણના ક્ષયથી
ઉત્પન્ન થયેલી હોવાને કારણે ક્ષાયિક ભાવરૂપ ગણાય છે.

ભવિષ્યમાં કેઈ પણ પ્રકારનું આવરણ કર્મ તે આત્માને લાગવાનું
નથી, તેથી તે આત્મા નિરાવરણ અવસ્થા સંપન્ન બની જાય છે. તેથી તેનું
‘ નિરાવરણ ’ નામ નિષ્પન્ન થઈ જાય છે એજ પ્રમાણે તે આત્મા નિઃસત્તા-
ભૂત આવરણવાળો (આવરણના અસ્તિત્વ વિનાનો) બની જવાને કારણે ક્ષીણ
મલાવરણવાળા ઉત્કૃષ્ટ મણિની જેમ “ ક્ષીણાવરણ ” આ નામવાળો બની જાય
છે આ પ્રકારે વિવિધ પ્રકારે જ્ઞાનાવરણીય કર્મમાંથી વિપ્રમુક્ત થયેલા તે
આત્માને પૂર્વોક્ત સમસ્ત નામે જ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયની અપેક્ષાએ કહે-
વામાં આવ્યાં છે જો કે શબ્દનયની અપેક્ષાએ તે નામે વચ્ચે કેઈ પણ ભેદ
ન હોવાને કારણે આ શબ્દને પર્યાયવાચી શબ્દો જ ગણી શકાય છે, પરંતુ

અથ દર્શનાવરણીયક્ષયાપેક્ષાણિ નામાન્યાહ-કેવલદર્શી-કેવલેન=ક્ષીણાવરણેન દર્શનેન પશ્યતીતિકેવલદર્શી-સર્વ પશ્યતીતિ સર્વદર્શી-ક્ષીણદર્શનાવરણત્વાત્ સકલ-પદાર્થદર્શી । એવં ક્ષીણનિદ્રાદીનિ પશ્ચનામાનિ તથા દર્શનાવરણચતુષ્કક્ષયસમ્ભ-વીન્યપરાણ્યપિ ક્ષીણચક્ષુર્દર્શનાવરણાદીનિ નામાનિ વોધ્યાનિ । તત્ર નિદ્રાપશ્ચક-લક્ષણમેવમવગન્તવ્યમ્-

ये पर्यायवाची शब्द हैं । फिर भी समभिरुद्धनय की अपेक्षा से इनके वाच्यार्थ में भिन्नता होने से इनमें भेद है, ऐसा जानना चाहिये ।

अब सूत्रकार दर्शनावरणीय कर्म के क्षय की अपेक्षा से जायमान नामों को कहते हैं-(केवलदंसी) आत्मा से जब दर्शनावरणीय कर्म सर्वथा निर्मूल हो जाता है, तब वह आत्मा, क्षीणावरणवाले दर्शन से, सामान्यरूप में समस्त ज्ञेयों को देखता है, इसलिये केवलदर्शी वह कहलाने लगता है । (सव्वदंसी) क्षीण दर्शनावरणवाला होने से समस्त पदार्थों का वह दृष्टा बन जाता है । इसलिये वह सर्वदर्शी कहलाता है । (खीणनिद्रे, खीणनिद्रानिद्रे, खीणपयले, खीणपयलापयले, खीणधीण-गिद्धी, खीणचक्खुदंसणावरणे, खीण अचक्खुदंसणावरणे, खीण ओहि-दंसणावरणे खीण केवलदंसणावरणे अणावरणे, निरावरणे, खीणा-वरणे) निद्रादर्शनावरणीय कर्म नष्ट होने से वह क्षीण निद्र हो जाता है; निद्रानिद्रा दर्शनावरणीयकर्म निर्मूल होने से क्षीणनिद्रानिद्र, प्रचला दर्शनावरणीय कर्म नष्ट होने से क्षीण प्रचल,

સંભલિરૂઢ નયની અપેક્ષાએ તેમના વાચ્યાર્થમાં ભિન્નતા હોવાના કારણે તેમની વચ્ચે ભેદ (અંતર-તફાવત) છે, એમ સમજવું જોઈએ.

હવે સૂત્રકાર દર્શનાવરણીય કર્મના ક્ષયની અપેક્ષાએ જે નામો નિબ્ધન થાય છે તેમનું કથન કરે છે-(કેવલદંસી) આત્મા પરથી જ્યારે દર્શનાવરણીય કર્મો સર્વથા નિર્મૂળ થઈ જાય છે ત્યારે તે આત્મા, ક્ષીણાવરણવાળા દર્શન વડે સામાન્ય રૂપે સમસ્ત જ્ઞેય પદાર્થોને દેખી શકે છે, તેથી તેને 'કેવલદર્શી' કહેવામાં આવે છે. (સવ્વદંસી) ક્ષીણદર્શનાવરણવાળો થઈ જવાને કારણે તે આત્મા સમસ્ત પદાર્થોનો દ્રષ્ટા બની જાય છે, તેથી તેને "સર્વદર્શી" કહેવામાં આવે છે. (ખીણનિદ્રે, ખીણનિદ્રા નિદ્રે, ખીણપયલે, ખીણપયલાપયલે, ખીણ ધીણગિદ્ધી, ખીણ ચક્કુદંસણાવરણે, ખીણ અચક્કુદંસણાવરણે, ખીણ ઓહિદસણાવરણે, ખીણ કેવલદંસણાવરણે, અણાવરણે નિરાવરણે, ખીણાવરણે) તે આત્માના નિદ્રા-વરણીય કર્મનો નાશ થઈ જવાને લીધે તે 'ક્ષીણનિદ્ર' કહેવાય છે, તેના નિદ્રાનિદ્રા દર્શનાવરણીય કર્મ નિર્મૂળ થઈ જવાથી તે 'ક્ષીણનિદ્રાનિદ્ર' કહેવાય છે. તેના પ્રચલા દર્શનાવરણીય કર્મ નષ્ટ થઈ જવાથી તેને 'ક્ષીણ-

“સુહ પડિબોહા નિદા દુહપડિબોહા ય નિદનિદાય ।
 પયલા હોઈ ઠિયસ્સ ડ, પયલાપયલા ય ચંક્રમઓ ॥૧॥
 અહસંકિલિદ્ધકમ્માણુ વેયણો હોઈ થીણગિદ્ધી ય ।
 મહનિદા દિણચિતિયવાવાર પસાહણી પાયં ॥૨॥”

છાયા—સુત્રપ્રતિબોધા નિદ્રા દુઃસ્વપ્રતિબોધા ચ નિદ્રાનિદ્રા ચ ।

પ્રચલા ભવતિ સ્થિતસ્ય પ્રચલાપ્રચલા ચ ચક્લ્લમતઃ ॥૧॥

અતિસંક્લિષ્ટકર્માનુવેદનો ભવતિ સ્ત્યાનગૃદ્ધિસ્તુ ।

મહાનિદ્રા દિનચિન્તિતવ્યાપાર પ્રસાધનીપ્રાયઃ ॥૨॥ઈતિ ।

પ્રચલા પ્રચલા દર્શનાવરણીય કર્મ નષ્ટ होने સે ક્ષીણ પ્રચલાપ્રચલા, સ્ત્યાનગૃદ્ધિ દર્શનાવરણીય કર્મ ક્ષીણ होने સે ક્ષીણ સ્ત્યાનગૃદ્ધિ ચક્ષુર્દર્શનાવરણીય કર્મ નષ્ટ होने સે ક્ષીણ ચક્ષુર્દર્શનાવરણ, અચક્ષુર્દર્શનાવરણ કર્મનષ્ટ होने સે ક્ષીણ અચક્ષુર્દર્શનાવરણ, અવધિદર્શનાવરણ કર્મ નષ્ટ होने સે ક્ષીણાવધિદર્શનાવરણ, કેવલદર્શનાવરણ કર્મ નષ્ટ होने સે ક્ષીણ કેવલદર્શનાવરણ કહલानે લગતા હૈ । અર્થાત્ દર્શનાવરણ કર્મ કે સર્વથા વિગમ ક્ષય હો જાને સે उस आत्मा के ये पूर्वोक्त नाम निष्पन्न हो जाते हैं । નિદ્રા પંચક કા લક્ષણ હસ પ્રકાર સે હૈ—સુહપડિબોહા—ઈત્યાદિ—જિસ કર્મ કે ઉદય સે સુત્ર પૂર્વક જાગ સકે ઁસી નિદ્રા આવે વહ નિદ્રા દર્શનાવરણ કર્મ હૈ । જિસકે ઉદય સે નિદ્રા સે જાગના અત્યન્ત દુષ્કર હો વહ નિદ્રાનિદ્રા દર્શનાવરણ-

પ્રચલ 'કહેવાય છે. તેના પ્રચલાપ્રચલા દર્શનાવરણીય કર્મ નષ્ટ થઈ જવાથી તેને ક્ષીણપ્રચલાપ્રચલ કહેવાય છે, તેના સ્ત્યાનગૃદ્ધિ દર્શનાવરણીય કર્મનો ક્ષય થઈ જવાથી તેને 'ક્ષીણસ્ત્યાનગૃદ્ધિ' કહેવાય છે. તે આત્માના ચક્ષુર્દર્શનાવરણીય કર્મનો નાશ થઈ જવાથી તેને 'ક્ષીણચક્ષુર્દર્શનાવરણ' કહેવાય છે. તેના અચક્ષુર્દર્શનાવરણ કર્મનો નાશ થઈ જવાથી તેને 'ક્ષીણઅચક્ષુર્દર્શનાવરણ' કહેવાય છે. તેના અવધિદર્શનાવરણ કર્મનો ક્ષય થઈ જવાથી તેને 'ક્ષીણાવધિદર્શનાવરણ' કહેવાય છે તેના કેવલ દર્શનાવરણ કર્મનો નાશ થઈ જવાથી તેને 'ક્ષીણકેવલદર્શનાવરણ' કહેવાય છે એટલે કે દર્શનાવરણ કર્મનો સંપૂર્ણ નાશ થઈ જવાને કારણે તે આત્માના પૂર્વોક્ત નામો નિષ્પન્ન થાય છે.

નિદ્રાપંચકનાં લક્ષણ નીચે પ્રમાણે સમજવાં—

“સુહપડિબોહા” ઇત્યાદિ—જે કર્મના ઉદયથી સુષુપ્ત પૂર્વક જાગી શકાય એવી નિદ્રા આવી જાય છે, તે કર્મને નિદ્રાદર્શનાવરણ કર્મ કહે છે જે કર્મના ઉદયથી નિદ્રામાંથી જાગવાનું અત્યંત દુષ્કર થઈ જાય છે, તે કર્મને નિદ્રાનિદ્રા

તથા-અનાવરણાદિશબ્દાઃ પૂર્વ જ્ઞાનાવરણાભાવાપેક્ષયા પ્રોક્તાઃ, અત્રતુ દર્શનાવરણા-ભાવાપેક્ષયા बोध्याः । उपसंहरन्नाह-दर्शनावरणीयकर्मविप्रमुक्त इति ।

કર્મ હૈ । जिस कर्म के उदय से बैठे २ या खड़े २ हा नींद आ जावे वह प्रचलादर्शनावरण कर्म है । जिस कर्म के उदय से चलते २ ही निद्रा आ जावे वह प्रचला प्रचला दर्शनावरण कर्म है । स्त्यानगृद्धि यह महानिद्रा है । इस निद्रावस्था में, जागृत अवस्था में सोचे हुए काम करने का सामर्थ्य प्रकट हो जाता है । जिस जीव को अति संक्लिष्ट कर्मका उदय होता है उसी जीव के यह स्त्यानगृद्धि होती है । इस निद्रा में सहज बल से कई अनेक गुण अधिक बल प्रकट होता है ।— पहिले जिस प्रकार ज्ञानावरण कर्म के अभाव को लेकर अनावरण निरावरण, क्षीणावरण, इन शब्दों का अर्थ प्रकट किया गया है उसी प्रकार यहां पर दर्शनावरण कर्म के अभाव की अपेक्षा लेकर इन शब्दों का अर्थ लगा लेना चाहिये । (दरिसणावरणिज्जकम्मविप्पमुक्के इस प्रकार ये पूर्वोक्त नाम दर्शनावरणीय कर्म के क्षय की अपेक्षा से सूत्रकार ने कहे हैं ।

દર્શનાવરણુ કર્મ કહે છે જે કર્મના ઉદયથી બેઠાં બેઠાં કે ઊભાં ઊભાં નિદ્રા આવી જાય છે, તે કર્મને પ્રચલાદર્શનાવરણુ કર્મ કહે છે. જે કર્મના ઉદયથી ચાલતાં ચાલતાં નિદ્રા આવી જાય છે, તે કર્મને પ્રચલાપ્રચલા દર્શનાવરણુ કર્મ કહે છે ‘સ્ત્યાનગૃદ્ધિ’ આ પદ મહાનિદ્રાનું વાચક છે. આ પ્રકારની નિદ્રાવસ્થામાં જાગૃત અવસ્થામાં જે કામો કરવાનો વિચાર કરવામાં આવ્યો હોય તે કામ કરવાનું સામર્થ્ય પ્રકટ થઈ જાય છે. જે જીવમાં અતિ સંક્લિષ્ટ કર્મનો ઉદય હોય છે, એજ જીવમાં આ સ્ત્યાનગૃદ્ધિ દર્શનાવરણુનો સદ્ભાવ રહે છે સ્વાભાવિક બળ કરતાં કેટલાય ગણું અધિક બળનો આ પ્રકારની નિદ્રામાં અનુભવ થાય છે.

આગળ જ્ઞાનાવરણુ કર્મના અભાવની અપેક્ષાએ અનાવરણુ, નિરાવરણુ અને ક્ષીણાવરણુ, આ પદોનો અર્થ પ્રકટ કરવામાં આવ્યો છે એજ પ્રકારે અહીં દર્શનાવરણુ કર્મના અભાવને અનુલક્ષીને અનાવરણુ, નિરાવરણુ અને ક્ષીણાવરણુનો અર્થ સમજી લેવો જોઈએ.

(દરિસણાવરણિજ્જકમ્મવિપ્પમુક્કે) સૂત્રકારે દર્શનાવરણીય કર્મના ક્ષયની અપેક્ષાએ કેવળદર્શીથી લઈને નિરાવણુ પર્યન્તના ઉપર્યુક્ત નામો પ્રકટ કર્યા છે.

इत्थं दर्शनावरणीयक्षयापेक्षया नामान्युक्त्वा सम्प्रति वेदनीयकर्मक्षयापेक्षाणि नामानि प्रतिपादयितुमाह—‘खीणसायावेयणिज्जे’ इत्यादि। वेदनीयं द्विविधं भवति—सातम् असातं च, तत्र—सातं प्रीत्युत्पादकम्, असातम् अप्रीत्युत्पादकम्, सत्क्षये क्षीणसातावेदनीयः क्षीणासातावेदनीयश्च भवति। तथा—अवेदनः=वेदना-रहितः—अयम् अल्पवेदनोऽपि व्यवह्रीयते। तथा—निर्वेदनः=सर्ववेदनाभ्यो रहितः। कालान्तरेऽपि वेदना न भवतीति सूचयितुमाह—क्षीणवेदनः—क्षीणा=अपुनर्भाविताया

अब वे वेदनीय कर्म के क्षय की अपेक्षा से जायमान नामों को कहते हैं—

(खीणसायावेयणिज्जे खीण असायावेयणिज्जे) वेदनीय कर्म दो प्रकार का है—एक साता वेदनीय कर्म और दूसरा असाता वेदनीय कर्म—जिस कर्म के उदय से जीव को सुख का अनुभव हो वह साता वेदनीय और जिसके उदय से प्राणी को दुःख का अनुभव हो वह असाता वेदनीय है। इन दोनों प्रकार के वेदनीय कर्म के क्षय होने पर जीव क्षीणसातावेदनीय और क्षीणासातावेदनीय हो जाता है। (अवेयणे, निव्वेयणे) वेदनारहित हो जाता है। अवेदन शब्द का अर्थ अल्प वेदनावाला ऐसा भी होता है। क्योंकि अवेदन में जो “अ” है वह ईषदर्थ—में भी प्रयुक्त होता है। इसलिये निर्वेदन—सर्व प्रकार की वेदना से वह रहित बन जाता है। (खीणवेयणे) कालान्तर में भी वेदना इस जीव को नहीं होती है—इसलिये क्षीणवेदन अर्थात् अपुनर्भाविवेदन हो

હવે વેદનીય કર્મના ક્ષયની અપેક્ષાએ જે નામો નિષ્પન્ન થાય છે, તે પ્રકટ કરવામાં આવે છે—(ખીણસાયાવેયણિજ્જે ક્ષીણ અસાયાવેયણિજ્જે) વેદનીય કર્મના બે પ્રકાર પડે છે—(૧) સાતાવેદનીય કર્મ અને (૨) અસાતાવેદનીય કર્મ જે કર્મના ઉદયથી જીવને સુખનો અનુભવ થાય છે, તે કર્મને સાતાવે-નીય કર્મ કહે છે જે કર્મના ઉદયથી જીવને દુઃખનો અનુભવ થાય છે, તે કર્મને અસતાવેદનીય કર્મ કહે છે આ બંને પ્રકારના વેદનીય કર્મોનો ક્ષય થઈ જવાથી જીવ “ક્ષીણસાતાવેદનીય” અને “ક્ષીણાસાતાવેદનીય” બની જાય છે. (અવેયણે, નિવ્વેયણે) વેદનીય કર્મનો ક્ષય થઈ જવાથી આત્મા વેદનારહિત બની જાય છે. “અવેદન” પદ અલ્પવેદનાનું પણ વાચક છે, કારણ કે ‘અવેદન’ પદમાં જે ‘અ’ ઉપસર્ગ છે તે અલ્પતાના અર્થમાં પણ પ્રયુક્ત થાય છે તેથી સૂત્રકારે ‘નિર્વેદન’ પદના પ્રયોગ દ્વારા એ વાત પ્રકટ કરી છે કે વેદનીય કર્મનો સર્વથા ક્ષય થવાથી આત્મા સર્વપ્રકારની વેદનાથી રહિત થઈ જાય છે. (ક્ષીણવેયણે) કાલાન્તરે (ભવિષ્યમાં) પણ તે જીવને વેદનાનો અનુભવ કરવો પડતો નથી તેથી તે જીવને “ક્ષીણવેદન” કહ્યો છે.

સર્વથા વિનષ્ટા વેદના यस્ય સ તથા । एतदुपसंहरन्नाह-शुभाशुभवेदनीयकर्मविप्रमुक्त इति । अथ मोहनीयक्षयापेक्षाणि नामानि प्ररूपयितुमाह-‘खीणक्रोहे’ इत्यादि । मोहनीयं द्विविधं भवति-दर्शनमोहनीयं चारित्रमोहनीयं च । तत्र-दर्शनमोहनीयं सम्यक्तन्मिश्र मिथ्यात्वभेदात् त्रिविधं भवति । चारित्रमोहनीयं तु क्रोधादिकषाय हास्यादि नोकषायभेदात् द्विविधं भवति । एतत्क्षये यानि नामानि भवन्ति तान्याह सूत्रकारः-क्षीणक्रोधो यावत् क्षीणलोभः । एतानि नामानि सुबोध्यानि । तथा-क्षीणप्रेमा-क्षीणं प्रेम=मायालोभो यस्य स तथा-अपगतमायालोभ इत्यर्थः ।

જાતા હૈ, (સુભાસુભવેયણિજ્જકમ્મવિપ્પમુક્કે) શુભ ઓર અશુભવેદનીય કર્મ સે વિપ્રમુક્ત હુણે ઉસ જીવ કે યે પૂર્વોક્ત ક્ષીણ સાતાવેદનીય આદિ નામ હૈ ।

અવ સૂત્રકાર મોહનાય કર્મ કે ક્ષય સે જો નામ હોતે હૈ ઉન્હે કહતે હૈ—

(ક્ષીણ ક્રોહે જાવ ક્ષીણલોહે) મોહનીય કર્મ દો પ્રકાર કા હોતા હૈ એક દર્શન મોહનીય ઓર દૂસરા ચારિત્ર મોહનીય—इनमें मिथ्यात्व, सम्यक्तन्मिश्र मिथ्यात्व और मिश्र के भेद से दर्शन मोहनीय तीन प्रकार का है— तथा चारित्र मोहनीय, क्रोधादिकषाय और हास्यादिक नोकषाय के भेद से दो प्रकार का है—इस दोनों प्रकार के मोहनीय के क्षय होने पर जो नाम होते हैं उन्हें सूत्रकारने क्षीण क्रोध यावत् क्षीण लोभ इन शब्दों द्वारा प्रकट किया है । ये नाम सुबोध्य हैं । (ક્ષીણપેજ્જે) પ્રેમ શબ્દ

(સુભાસુભવેયણિજ્જ કમ્મવિપ્પમુક્કે) શુભ અને અશુભ વેદનીય કર્મથી વિમુક્ત થયેલા તે જીવના ક્ષીણસાતાવેદનીય આદિ પૂર્વોક્ત નામો સમજવાં.

હવે સૂત્રકાર મોહનીય કર્મના ક્ષયથી આત્માનાં જે જે નામો નિષ્પન્ન થાય છે તેમનું નિરૂપણ કરે છે—

(ક્ષીણ ક્રોહે જાવ ક્ષીણ લોહે) મોહનીય કર્મના નીચે પ્રમાણે જે પ્રકારે પડે છે—(૧) દર્શનમોહનીય અને (૨) ચારિત્ર મોહનીય મિથ્યાત્વ, સમ્યક્ત્વ-મિથ્યાત્વ અને મિશ્રતા લેઈથી દર્શનમોહનીય કર્મ ત્રણ પ્રકારના કહ્યાં છે. ક્રોધાદિક કષાય અને હાસ્યાદિક નોકષાયના લેઈથી ચારિત્ર મોહનીય કર્મ જે પ્રકારનું કહ્યું છે. આ બન્ને પ્રકારના મોહનીય કર્મનો આત્મામાંથી ક્ષય થઈ જવાથી આત્માનાં નીચેનાં નામો નિષ્પન્ન થાય છે—ક્ષીણક્રોધ, ક્ષીણમાન, ક્ષીણમાયા અને ક્ષીણલોભ આ નામનો અર્થ સુગમ હોવાથી તેમના વિષે વધુ સ્પષ્ટતા કરવાની જરૂર નથી. (ક્ષીણ પેજ્જે) પ્રેમ

ક્ષીણદ્વેષઃ=ક્ષીણો દ્વેષઃ=ક્રોધમાનો यस્ય સ તથા-અપગત ક્રોધમાન इत्यर्थः । તથા-
અમોહઃ-અપગતમોહનીયકર્મ, અયં ચ અલ્પમોહોદયોઽપિ લોકે વ્યવહ્રિયતે ।
તથા-નિર્મોહઃ-નિર્ગતો મોહાન્નિર્મોહઃ । યતોઽમોહઃ, અત એવ નિર્મોહો बोध्यः ।
નિર્મોહસ્તુ કાલાન્તરે મોહોદયયુક્તોઽપિ સ્યાદુપશાન્તમોહવદિતિ પ્રત્યયો મા ભવ-
ત્વિતિ હેતોરાહ-ક્ષીણમોહઃ-અપુનર્ભાવિમોહોદયઃ इत्यर्थः, એતદુપસંહરન્નાહ-મોહ-

માયા ઓર લોભ કા બોધક હૈ । મોહનીય કર્મ કે-નષ્ટ હોને પર માયા
ઓર લોભ નષ્ટ હો જાતે હૈ । (ક્ષીણ દોસે) હસી પ્રકાર દ્વેષ-માન ઓર
ક્રોધ-ભી નષ્ટ હો જાતા હૈ । અતઃ ક્ષીણ પ્રેમા, ક્ષીણ દ્વેષ યે નામ-
હોતે હૈ । (અમોહે નિમ્મોહે, ક્ષીણમોહે) અમોહ નિર્મોહ ક્ષીણ મોહ-યે
નામ ભી મોહનીય કર્મ કે અભાવ મે હોતે હૈ । અલ્પ મોહવાલે મેં ભી
અમોહ શબ્દ કા પ્રયોગ હોતા હૈ સો એસા અમોહ યહાં નહીં લિયા ગયા
હૈ કિન્તુ મોહનીય કર્મ સે જો અપગત હૈ વહી અમોહ હૈ, એસા અમોહ
હી યહાં ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ । જિસ કારણ યહ અમોહ હૈં હસલિયે
નિર્મોહ હૈ । કોઈ એસી શંકા ભી કર સકતા હૈ કિ જો નિર્મોહ હોતા
હૈ, વહ કાલાન્તર મેં મોહોદય સે યુક્ત ભી બન સકતા હૈ-જૈસે ઉપશાન્ત
મોહવાલા બન જાતા હૈ । સો હસ આશંકા કો નિર્મૂલ કરને કે લિયે
સૂત્રકાર ને ક્ષીણમોહ યહ પદ રહ્યા હૈ । હસસે ઉન્હોને, યહ સ્પષ્ટ કિયા
હૈ કિ અપુનર્ભાવ મોહોદય જિસ જીવ કે હોતે હૈ, વહી યહાં અમોહ

શબ્દ માયા અને લોભનો બોધક છે. મોહનીય કર્મનો નાશ થઈ જવાથી
જીવના માયા અને લોભ નષ્ટ થઈ જાય છે, તેથી તે જીવને 'ક્ષીણપ્રેમા'
કહેવાય છે. (ક્ષીણ દોસે) એજ પ્રમાણે મોહનીય કર્મનો નાશ થઈ જવાથી
આત્માનો દ્વેષ ભાવ પણ નષ્ટ થઈ જાય છે તેથી તે આત્માનું "ક્ષીણદ્વેષ"
નામ નિષ્પન્ન થાય છે. (અમોહે નિમ્મોહે, ક્ષીણમોહે) મોહનીય કર્મનો અભાવ
થઈ જવાથી આત્માનાં 'અમોહ,' 'નિર્મોહ,' અને ક્ષીણમોહ નામો પણ
નિષ્પન્ન થાય છે અલ્પ મોહવાળામાં પણ અમોહ શબ્દનો પ્રયોગ થાય છે.
પરંતુ અમોહ શબ્દનો એવો અર્થ અહીં ગ્રહણ કરવાનો નથી અહીં તે
મોહનીય કર્મનો સર્વથા ક્ષય થઈ જવાને લીધે આત્મામાં મોહનો સર્વથા
અભાવ જ ગ્રહણ કરવાનો છે. જે કારણે તે આત્મામાં આ અમોહનો સદ્-
ભાવ છે એજ કારણે નિર્મોહનો પણ સદ્ભાવ છે. કદાચ કોઈ એવી શંકા
ઉઠાવે કે કાલાન્તરે નિર્મોહી આત્મામાં મોહનો ઉદય થઈ જવાથી તે મોહો-
દયયુક્ત પણ બની શકે છે, તો તે આશંકાનું નિવારણ કરવાને માટે સૂત્રકારે
'ક્ષીણમોહ' પદનો પ્રયોગ કર્યો છે, આ પદ દ્વારા સૂત્રકારે એ વાત પ્રકટ

નીયકર્મવિપ્રમુક્ત इति । नारकायुष्कादिभेदेन आयुष्कर्म चतुर्विधं बोध्यम् । सम्प्रति तत्क्षयोद्भवानि नामानि प्ररूपयति—क्षीणनैरयिकायुष्कः, क्षीणतिर्यग्यो-
निकायुष्कः, क्षीणमनुष्यायुष्कः, क्षीणदेवायुष्कः । एतानि चत्वार्यपि पदानि
सुगमानि । तथा—अनायुष्कः=अविद्यमानायुष्कः । अविद्यमानायुष्कस्तु तद्भविकायुः

નિરમોહ નામવાલા ગ્રહણ કિયો ગયા હૈ । હસ પ્રકાર (મોહણિજ્જકમ્મ
વિપ્પમુક્કે) મોહનીય કર્મ સે વિપ્રમુક્ત થને હુએ જીવ કે યે ક્ષીણ ક્રોધ
સે લેકર ક્ષીણ મોહ તક કે નામ હૈ । અવ આયુકર્મ કે ક્ષયાપેક્ષ જો
નામ હોતે હૈ, ઉન્હેં સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરતે હૈ—આયુ કર્મ ચાર પ્રકાર કા
હૈ—નરક આયુ તિર્યગાયુ, મનુષ્ય આયુ દેવ આયુ સો इनमें से (स्त्रीण-
णेरइयाउए, स्त्रीणतिरिक्खजोणिआउए, स्त्रीण मणुस्साउए स्त्रीण-
देवाउए) नरकायुष्क के क्षय होने से क्षीण नरकायुष्क, तिर्यग्योनिक
आयुष्क के क्षय होने से क्षीणतिर्यग्योनिकायुष्क, मनुष्य आयुष्क-के
नष्ट होने से क्षीण मनुष्यायुष्क और देवायुष्क के नष्ट होने से क्षीण
देवायुष्क ये नाम होते हैं (अणाउए, नीराउए, स्त्रीणाउए) अनायुष्क,
निरायुष्क और और क्षीणायुष्क ये नाम भी होते हैं तद्भवसंबन्धी आयु

કરી છે કે જે જીવમાં અપુનર્ભાવિમોહોદય (ભવિષ્યમાં ફરી ઉદયમાં ન આવે
એવો અમોહ) હોય છે, તે જીવને જ અહીં ‘અમોહ’ અને ‘નિર્મોહ’
નામનાં જો કહ્યો છે. (મોહણિજ્જકમ્મવિપ્પમુક્કે) મોહનીય કર્મથી સંપૂર્ણતઃ વિમુક્ત
થયેલા જીવના ક્ષીણક્રોધથી લઇને ક્ષીણમોહ પર્યન્તનાં ઉપયુક્ત નામો સમજવાં.
હવે સૂત્રકાર આયુકર્મના ક્ષયથી આત્માના જે જે નામો નિષ્પન્ન થાય
છે, તેમનું નિરૂપણ કરે છે—

આયુકર્મના ચાર પ્રકાર છે—(૧) નરકાયુ, (૨) તિર્યગાયુ, (૩) મનુષ્યાયુ
અને (૪) દેવાયુ. (સ્ત્રીણણેરહયાઉએ, સ્ત્રીણતિરિક્કજોણિ આઉએ, સ્ત્રીણમણુ-
સ્સાઉએ, સ્ત્રીણદેવાઉએ) નરકાયુષ્કનો ક્ષય થઇ જવાને લીધે જીવ ‘ક્ષીણનરકાયુષ્ક’
બની જાય છે, તિર્યગ્યોનિક આયુષ્યનો ક્ષય થઇ જવાથી જીવ “ક્ષીણતિર્ય-
ગ્યોનિકાયુષ્ક” બની જાય છે, મનુષ્ય આયુષ્કનો ક્ષય થઇ જવાથી જીવ
“ક્ષીણમનુષ્યાયુષ્ક” થઇ જાય છે અને દેવાયુષ્કનો ક્ષય થઇ જવાથી જીવ
“ક્ષીણદેવાયુષ્ક” થઇ જાય છે. આ પ્રકારે ચારે ગતિના આયુષ્યનો ક્ષય થઇ
જવાથી જીવના ઉપયુક્ત ચાર નામો નિષ્પન્ન થાય છે. (અણાઉએ, નિરાઉએ,
સ્ત્રીણાઉએ) આયુકર્મનો ક્ષય થઇ જવાથી જીવનાં “અનાયુષ્ક,” “નિરાયુષ્ક”
અને “ક્ષીણાયુષ્ક” આ ત્રણ નામોપણ નિષ્પન્ન થાય છે. તદ્ભવ સંબંધી (તે

ક્ષયમાત્રેऽપિ ભવતી, ત્યત્રાહ-નિરાયુષ્કઃ-નિર્ગતાયુષ્ક ઇતિ । નિરાયુષ્કસ્તુ શૈલે-
શીમવસ્થાં કિંવિદવત્તિષ્ઠમાનાયુઃ-શેષોऽપિ ઉપચારતઃ સ્યાદત આહ-ક્ષીણાયુષ્ક
ઇતિ । एतदुपसंहरन्नाહ-आयुष्कर्मविप्रमुक्त इति । नामकर्मसामान्येन शुभाशुभमेदतो
द्विविधम्, विशेषतस्तु गतिजातिशरीराङ्गोपाङ्गादि भेदाद् द्विचत्वारिंशदादिभेद-

जिस जीव की नष्ट हो गई हो ऐसा जीव भी अनायुष्क कहलाता है-
अतः ऐसा अनायुष्क यहां गृहीत नहीं है किन्तु जिसका आयुर्कर्म
समाप्त हो चुका है ऐसा ही निरायुष्क अनायुष्क यहां लिया गया है ।
यदि इस पर ऐसी आशंका की जावे कि ऐसी निरायुष्क
अवस्था जीव की शैलेशी अवस्था में हो जाती है-परन्तु
यहां सम्पूर्णरूप से वह जीव निरायुष्क तो नहीं बनता है-फिर भी
निरायुष्क इस नाम से किंचित आयु अवशिष्ट होने पर भी उपचार से
कहा ही जाता है । अतः इस आशंका को दूर करने के लिये सूत्रकारने
क्षीणायुष्क यह पद रखा है । इसलिये अनायुष्क निरायुष्क ये नाम तब
ही जानना चाहिये कि जब सम्पूर्णरूप से आयुर्कर्म नष्ट हो चुका होता
है । (आयुर्कर्मविप्रमुक्के) इस प्रकार से आयुर्कर्म के सर्वथा अभाव
होने पर क्षीणनरकायुष्क आदि ये नाम निष्पन्न होते हैं । (गङ्गाह

ભવતુ) જેનું આયુષ્ય નષ્ટ થઈ ગયું હોય છે એવા જીવને પણ અનાયુષ્ક
કહી શકાય છે. પરન્તુ એવા અનાયુષ્કની વાત અહીં કરવામાં આવી નથી
અહીં તો એવા અનાયુષ્કની વાત કરવામાં આવી છે કે જેના આયુર્કર્મનો
સદંતર ક્ષય થઈ ચુક્યો હોવાને કારણે જે નિરાયુષ્ક બની ગયેલો છે એટલે
કે અહીં નિરાયુષ્ક (આયુષ્યરહિત) જીવને જ અનાયુષ્ક પદ વડે ગ્રહણ કર-
વામાં આવેલ છે. કદાચ અહીં કોઈ એવી શંકા ઉઠાવે કે એવી નિરાયુષ્ક
અવસ્થા તો જીવની શૈલેશી અવસ્થામાં થઈ જાય છે, પરન્તુ આ અવસ્થાવાળો
જીવ સંપૂર્ણ રૂપે નિરાયુષ્ક બનતો નથી; છતાં પણ ‘નિરાયુષ્ક’ આ નામનો
પ્રયોગ, થોડું આયુ બાકી હોવા છતાં પણ ઔપચારિક રૂપે કરવામાં આવે
છે. આ આશંકાને દૂર કરવાને માટે સૂત્રકારે “ક્ષીણાયુષ્ક” પદ મૂક્યું છે
તેથી આત્માને અનાયુષ્ક, અને નિરાયુષ્ક રૂપે ત્યારે જ ગણી શકાય કે જ્યારે
આયુર્કર્મનો સંપૂર્ણપણે ક્ષય થઈ ગયો હોય છે. (આયુર્કર્મવિપ્રમુક્કે) આ
પ્રકારે આયુર્કર્મનો સર્વથા અભવ થઈ જવાથી આત્માનાં ક્ષીણનરકાયુષ્ક
અઃદિ ઉપર્યુક્ત નામો નિષ્પન્ન થાય છે.

હવે નામકર્મના ક્ષયથી આત્માના જે જે નામો નિષ્પન્ન થાય છે, તે
નામોની સૂત્રકાર પ્રકરણ કરે છે—

स्थानान्तराद् विज्ञेयम् । अत्र तु तत्क्षयभावीनि क्रियन्त्यपि तन्नामानि प्राह-गति जातिशरीराङ्गोपाङ्गबन्धनसंघातनसंहननसंस्थानानेकशरीरवृन्दसंघातविप्रमुक्तः—तत्र गतिः=नारकादिगतिचतुष्टयहेतुभूतं गतिनाम, जातिः—एकेन्द्रियादि जातिपञ्चक-कारणं जातिनाम, शरीरम्—औदारिकादिशरीरपञ्चकनिबन्धनशरीरनाम, अङ्गो-पाङ्गम्=औदारिकवैक्रियाहारकशरीरत्रयाङ्गोपाङ्गनिवृत्तिकारणम् अङ्गोपाङ्गनाम, बन्धनम्=काष्ठादिखण्डसंयोजकलाक्षादिद्रव्यमिव शरीरपञ्चकपुद्गलानां परस्परं

सरीरंगोवंगबंधनसंघायणसंठाणअणेगबोदिविंदसंघायविप्पमुक्के) नाम-कर्म सामान्य से शुभनामकर्म और अशुभनामकर्म इस प्रकार दो भेदवाला हैं और विशेषरूप से गति जाति शरीर अंगो-पाङ्ग आदि के भेद से ४२ प्रकार के हैं । तथा ४२ प्रकार से भी और अधिक भेदवाला है । इसके ये सब भेद अन्य शास्त्रों से जानलेना चाहिये । यहां पर तो सूत्रकारने इस नामकर्म के क्षय से जो नाम उत्पन्न होते हैं उन्हें कहा है । नारक आदि चार गतियों का हेतुभूत जो कर्म है वह गति नामकर्म है । एकेन्द्रिय आदि पांच जाति का जो कारण होता है वह जातिनामकर्म है । औदारिक आदि पांच शरीर का जो कारण होता है वह शरीर नामकर्म है । औदारिक अंगोपांग, वैक्रीय अंगोपांग और आहारक अंगोपांग की रचना का जो हेतु हो वह अंगोपांग नामकर्म है । जिस प्रकार काष्ठादि खंडों

(गइजाइसरीरंगोवंगबंधनसंघायणसंठाणअणेगबोदिविंदसंघायविप्पमुक्के) नाम-कर्मना नीचे प्रमाणे जे मुख्य लेह कहा छे. (१) शुभनामकर्म अने (२) अशुभनामकर्म. परन्तु विशेष इपे विचार करवाभां आवे तो गति, जाति, शरीर, अंगोपांग आदिना लेहथी नाम कर्मना ४२ लेह पडे छे, तथा आ ४२ लेहो सिवायना केटलाक वधु लेहो पणु पडे छे तेना आ सधणा लेहो विषेनी भाडिती अन्य शास्त्रोभांथी भेजवी लेवी अही तो सूत्रकारे आ नामकर्मना क्षय थछ जवाथी आत्माना जे जे नामो निष्पन्न थाय छे तेमनुं ज कथन कथुं छे. नारक आदि आर गतिओनी प्राप्तिना कारणभूत जे कर्म छे तेनुं नाम गतिनामकर्म छे ओकेन्द्रिय आदि पांच जातिना कारणभूत जे कर्म छे तेने जातिनामकर्म कहे छे. औदारिक आदि शरीरना कारणभूत जे कर्म छे तेनुं नाम शरीरनामकर्म छे. औदारिक अंगोपांग, वैक्रिय अंगो-पांग अने आहारक अंगोपांगनी रचनाना कारणभूत जे कर्म छे तेने अंगोपांग नामकर्म कहे छे. जेवी रीते काष्ठादिना टुकडोओने लाख आदि

બન્ધહેતુર્વન્ધનનામ, સંઘાતનં=કાષ્ઠસમુચ્ચયકારકઃ કર્મકર इव तेषामेव पुद्गलानां
 પરસ્પરં બન્ધનાર્થમન્યોઽન્ય સાંનિધ્યરૂપ સંઘાતકારણં સંઘાતનામ, સંહનનમ્=
 કપાટાદીનાં લોહપટ્ટાદિરિવ ઔદારિકશરીરાસ્થનાં પરસ્પરબન્ધવિશેષનિબન્ધનં સંહ-
 નનનામ, સંસ્થાનમ્=સંસ્થાનનામ-સંતિષ્ઠન્તે વિશિષ્ટાવયવરચનાત્મિકયા શરીરા-
 કૃત્યા જન્તવો ભવન્તિ येन तत् संस्थाननाम। इदं हि समचतुरस्रादिसंस्थान-
 કારણમ્। તથા-अनेकशरीरवृन्दसंघातः-अनेकानि शरीराणि-अनेकशरीराणि-

કો પરસ્પર મેં જોડનેવાલા લાલ આદિ દ્રવ્ય હોતા હૈં ઉસી પ્રકાર પાંચ
 ઔદારિક શરીર આદિ કે પુદ્ગલોં કો જો પરસ્પર મેં જોડતા હૈં । વહ
 બંધન નામકર્મ હૈં । કાષ્ઠકો ચુન ચુન ૨ કર રાખને વાલે કર્મકર કી
 તરહ જો ઉન્હોં પુદ્ગલોં કો પરસ્પર મેં બન્ધને કે લિધે અન્યોન્યસાંનિધ્ય-
 રૂપ સંઘાત કા કારણ હોતા હૈં । અર્થાત્ વદ્ધ પુદ્ગલોં કો શરીર કે નાનાં
 વિધ આકારોં મેં વ્યવસ્થિત કરને વાલા જો કર્મ હૈં વહ સંઘાત કર્મ હૈં ।
 જૈસે કપાટ આદિકોં કો લોહ પટ્ટ પરસ્પર મેં બાંધ દેતા હૈં ઉસી પ્રકાર
 જો ઔદારિક શરીર કી હડ્ડિયોં કો પરસ્પર મેં બાંધ દેતા હૈં વહ સંહનન
 નામકર્મ હૈં । અર્થાત્ યહ નામકર્મ અસ્થિબંધ કી વિશિષ્ટ રચના રૂપ
 હોતા હૈં । જિસકર્મ સે અવયવોં કી વિશિષ્ટ રચનારૂપ શરીર કી આકૃતિ
 બને વહ સંસ્થાન નામકર્મ સમચતુરસ્રાદિ સંસ્થાન કા કારણ હૈં । તથા-
 અનેક શરીરોં કા જો સમૂહ રૂપ સંઘાત હૈં વહ અનેક શરીરવૃન્દ સંઘાત

દ્રવ્યો વડે પરસ્પરની સાથે જોડવામાં આવે છે, એજ પ્રમાણે પાંચ ઔદારિક
 શરીર આદિના પુદ્ગલોને પરસ્પરની સાથે જોડનારું જે કર્મ છે તેનું નામ
 બંધન નામ કર્મ છે, યોગ્ય કાષ્ઠને વીણી વીણીને જોડવાના કારીગર (સુથાર)ની
 જેમ, એજ કર્મ પુદ્ગલોને પરસ્પરની સાથે બાંધવાને માટે અન્યોન્ય સાંનિધ્ય
 રૂપ સંઘાતમાં જે કર્મ કારણભૂત બને છે-એટલે કે બદ્ધ પુદ્ગલોને શરીરના વિવિધ
 આકારોમાં જોડવાનારું (સ્થાપિત કરનારું) જે કર્મ છે તેનું નામ સંઘાત કર્મ છે.
 જેવી રીતે કમાડ આદિનાં પાટિયાંએને લોઢાની પાટી પરસ્પરની સાથે બાંધી
 દે છે, એજ પ્રમાણે ઔદારિક શરીરનાં હાડકાંએને પરસ્પરની સાથે બાંધી
 દેનારું જે કર્મ છે તેને સંહનન નામકર્મ કહે છે એટલે કે આ નામકર્મ
 અસ્થિબંધની વિશિષ્ટ રચના રૂપ હોય છે. જે કર્મ અવયવોની વિશિષ્ટ રચના
 રૂપ શરીરની આકૃતિ બનાવવામાં કારણભૂત બને છે તે કર્મનું નામ સંસ્થાન
 નામકર્મ છે. આ સંસ્થાન નામકર્મ સમચતુરસ્રાદિ સંસ્થાનમાં કારણભૂત બને

तेषां वृन्दं=समूहस्तदेव पुद्गलसंघातरूपत्वात् संघातः-अनेकशरीरवृन्दसंघातः, शरीरानेकत्वं जन्मान्तरीयशरीराण्यादाय । अस्मिन्नपि जन्मनि जघन्यत औदारिक-तैजसकर्मणरूपशरीरत्रयस्य सद्भावाद् वा शरीरानेकत्वं बोध्यम् । गत्यादिशब्दानां द्वन्द्वसमासः, तै विप्रमुक्तो यः स तथा । शरीरशब्देन शरीरनिबन्धनं नामकर्म गृहीतम्, 'शरीरवृन्दे' त्यत्र शरीरशब्देन तु तत्कार्यभूतशरीराण्येव गृह्यन्ते, इत्यनयोर्भेदः, अतो न पौनरुक्त्यम्, तथा-क्षीणशुभनामा-क्षीणं=विनष्टं शुभनाम=तीर्थकर

शरीर की अनेकता है । अथवा जीव के दूसरे जन्म में तैजस और कर्मण ये दो शरीर साथ रहते हैं, इसलिये इन जन्मान्तरीय शरीरों को लेकर कम से कम एक जीव में इस जन्म में भी औदारिक तैजस और कर्मण ये तीन शरीर रहते हैं । इस अपेक्षा से भी शरीर की अनेकता रूप-अनेक शरीर वृन्द संघात सधजाता है । इन गत्यादिक शब्दों में द्वन्द्व समास है, इन गत्यादिकों से जो विप्रमुक्त है वह गति जाति-शरीर-अंगोपांग बन्धन-संघात संहनन संस्थान-अनेक शरीरवृन्दसंघात विप्रमुक्त शब्द का वाच्यार्थ है । गति जाति शरीर आदि में जो यह शरीर शब्द है उसका अर्थ शरीर नामकर्म है, इस नामकर्म के उद्दय से औदारिक आदि शरीरों की रचना होती है तथा "अनेक शरीर वृन्द" में जो शरीर शब्द आया है, वह उस शरीर नामकर्म के कार्य-भूत उन औदारिक आदि शरीरों का वाचक है । इस प्रकार इनमें

छे अनेक शरीराना समूहइय जे संघात छे तेने अनेक शरीरवृन्द संघात कहे छे. ते अनेक शरीरवृन्द संघात शरीरनी अनेकता इय डोय छे अथवा एवनी साथे रहे छे. तेथी आ जन्मान्तरीय शरीरानी अपेक्षाये विचार करवाभां आवे तो ओके एवभां औदारिक, तैजस अने कर्मण, आ त्रय शरीराने। सद्भाव डोय छे आ दृष्टिअये विचार करवाभां आवे तो शरीरनी अनेकता इय अनेक शरीरवृन्द संघातनुं प्रतिपादन थछ नय छे उपर्युक्त गति आदि शब्दोभां द्वन्द्व सम स छे. आ गति आदिथी जे एव विप्रमुक्त थछ गयेले। डोय छे ते एवने गति, जाति, शरीर, अंगोपांग, बन्धन, संघात, संहनन, संस्थान अने अनेक शरीरवृन्दसंघातविप्रमुक्त गणुवाभां आवे छे. ओइ के ओवा एवना गतिविप्रमुक्त जातिविप्रमुक्त आदि नामे निष्पन्न धाय छे. गति, जाति, शरीर आदिभां जे शरीर शब्द छे तेने अर्थ शरीरनामकर्म छे. आ नामकर्मना उद्दयथी औदारिक आदि शरीरानी रचना धाय छे. तथा- "अनेक शरीरवृन्द" आ पदभां जे 'शरीर' शब्द आव्यो छे ते शरीर शब्द शरीर नामकर्मना कार्यभूत ते औदारिक आदि शरीराने वाचक छे.

શુભસુભગસુસ્વરાદેયયશઃકીર્ત્યાદિકં यस્ય સ તથા । ક્ષીણાશુભનામા-ક્ષીણમ્
અશુભનામ-નરકગત્યશુભદુર્ભગદુઃસ્વરાનાદેયાયશઃકીર્ત્યાદિકં यस્ય સ તથા ।
અનામા નિર્નામા ક્ષીણનામા ઇતિ ત્રયોઽપિ શબ્દાઃ, 'અમોહઃ' ઇત્યાદિવદ્ ભાવ-
નીયાઃ । ઉપસંહરન્નાહ-શુભાશુભનામકર્મવિપ્રમુક્ત ઇતિ । ગોત્રમ્-ઉચ્ચનીચમેદેન
દ્વિવિધં ભવતિ । સમ્પતિ તત્ક્ષયસંભવીનિ નામાન્યાહ-'ક્ષીણોચ્ચગોત્રઃ' ઇત્યારમ્ય

મિન્નતા જાનની ચાહિયે । (ક્ષીણ સુભનામે) નામકર્મ-કે નષ્ટ હોને પર-
તીર્થકર, શુભ, સુગમ, સુસ્વર, આદેય ઓર યશઃકીર્તિ આદિ-જો શુભ
નામ હૈં યે સબ વિનષ્ટ હો જાતે હૈં ઇસલિયે "ક્ષીણશુભનામા" યહ
નામ નિષ્પન્ન હોતા હૈં । (ક્ષીણ અસુભનામે) ઇસી પ્રકાર નામકર્મ-કે
નષ્ટ હોને પર નરકગતિ, અશુભ, દુર્ભગ, દુઃસ્વર અનાદેય, ઓર અયશઃ
કીર્તિ આદિક અશુભ નામ નષ્ટ હો જાતે હૈં । ઇસલિયે 'ક્ષીણાશુભ-
નામા" યહ નામ નિષ્પન્ન હો જાતા હૈં । (અનામે, નિષ્ણામે, ક્ષીણનામે)
અનામ, નિર્નામ ઓર ક્ષીણનામ યે ત્રીનો શબ્દ મી અમોહ આદિ
શબ્દો-કે જૈસે સમજના ચાહિયે । (સુભાસુભનામકર્મવિપ્રમુક્ત-કે)
ઇસ પ્રકાર ગતિ વિપ્રમુક્ત સે લેકર ક્ષીણનામ તક-કે યે નામ ઇસ
શુભાશુભનામકર્મ સે સર્વથા રહિત હો જાને પર નિષ્પન્ન હોતે હૈં ।
(ક્ષીણ ઉચ્ચાગોઽક્ષીણ નીચાગો) અથ સૂત્રકાર ગોત્રકર્મ સે વિપ્રમુક્ત

આ પ્રકારે તેમની વચ્ચે ભિન્નતા સમજવી ભેઠએ. (ક્ષીણસુભનામે) નામકર્મનો
નાશ થતાં જ તીર્થકર, શુભ, સુલગ, સુસ્વર, આદેય, યશ કીર્તિ યુક્ત આદિ
જે શુભ નામે હોય છે તેમનો પણ નાશ થઈ જાય છે, તેથી એવા જીવનું
"ક્ષીણશુભનામા" આ નામ નિષ્પન્ન થાય છે. (ક્ષીણ અસુભનામે) એજ પ્રમાણે
નામકર્મનો નાશ થતાં જ નરકગતિ, અશુભ, દુર્ભગ, દુઃસ્વર, અનાદેય,
અયશઃકીર્તિક આદિ અશુભ નામોનો પણ નાશ થઈ જાય છે તેથી એવા
જીવનું "ક્ષીણાશુભનામા" નામ નિષ્પન્ન થાય છે. (અનામે, નિષ્ણામે, ક્ષીણ-
નામે) વળી નામકર્મ નિર્મૂળ થઈ જવાથી જીવના "અનામ, નિર્નામ, અને
ક્ષીણનામ" આ નામે પણ નિષ્પન્ન થાય છે. આ ત્રણે શબ્દોનો ભેદ અમોહ,
નિર્મોહ અને ક્ષીણમોહના જેવો જ સમજવો. (સુભાસુભનામકર્મવિપ્રમુક્ત-
આદે આત્મા શુભાશુભ નામકર્મથી સર્વથા રહિત થઈ જાય છે ત્યારે તેના
ગતિવિપ્રમુક્તથી ક્ષીણનામ પર્યન્તના ઉપર્યુક્ત નામે નિષ્પન્ન થાય છે.

હવે સૂત્રકાર ગોત્રકર્મનો ક્ષય થઈ જવાથી આત્માના જે જે નામે નિષ્પન્ન
થાય છે, તેમનું નિરૂપણ કરે છે—

‘ઉચ્ચનીચકર્મવિપ્રમુક્તઃ’ इत्यन्तैः पदैः । एषां व्याख्या पूर्ववद् भावनीया । अन्तरायकर्म हि दानान्तरायादिभेदैः पञ्चविधं बोध्यम् । सम्प्रति, तत्क्षयनिष्पन्नानि नामानि प्राह—‘क्षीणदानान्तरायः’ इत्यारभ्य ‘अन्तरायकर्मविप્રमुक्तः’ इति । एषां होने पर जो नाम निष्पन्न होते हैं उन्हें कहते हैं । गोत्र कर्म दो प्रकार का है—उच्च गोत्र और नीच गोत्र । संतान क्रम से चले आये हुए जीव के आचरण का नाम गोत्र है । प्रतिष्ठा प्राप्त हो ऐसे कुलमें जन्म दिलानेवाला कर्म उच्च गोत्र और शक्ति रहने पर भी प्रतिष्ठा न मिल सके ऐसे कुल में जन्म दाता कर्म, नीच गोत्र कहलाना है । गोत्र कर्म के अभाव होते ही उच्च और नीच दोनों प्रकार का गोत्र नष्ट हो जाता है—अतः क्षीणोच्चगोत्र और क्षीण नीचगोत्र ये नाम निष्पन्न होते हैं । (अगोत्र निगोत्र खीणगोत्र) इन अगोत्र निगोत्र क्षीणगोत्र शब्दों की व्याख्या पहिले जैसी ही जाननी चाहिये । अब सूत्रकार अन्तराय कर्म के अभाव में जो नाम निष्पन्न होते हैं उन्हें बताते हैं—दानान्तराय आदि के भेद से अन्तराय कर्म ५ प्रकार का है । इनमें (खीणदाणंतराय, खीणलाभंतराय, खीणभोगंतराय, खीणउवभोगंतराय, खीणवीरियंतराय) दानान्तराय के क्षय होने से क्षीण दानान्तराय,

(खीण उच्चागोत्र, खीण नीचागोत्र) गोत्रકર્મના નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર પડે છે—(૧) ઉચ્ચગોત્ર, (૨) નીચગોત્ર જે કુળમાં જન્મ થવાથી પ્રતિષ્ઠા મળે છે, એવા કુળમાં જન્મ અપાવનાર કર્મને ઉચ્ચગોત્ર કર્મ કહે છે શક્તિ હોવા છતાં પણ—યોગ્યતા હોવા છતાં પણ પ્રતિષ્ઠા ન મળે એવા કુળમાં જન્મ અપાવનાર કર્મને નીચ ગોત્રકર્મ કહે છે ગોત્રકર્મનો ક્ષય થતાંની સાથે જ ઉચ્ચ અને નીચ, આ બંને પ્રકારના ગોત્રનો નાશ થઈ જાય છે તેથી જેના ગોત્રકર્મનો નાશ થઈ ગયો છે એવા જીવના “ક્ષીણોચ્ચગોત્ર” અને “ક્ષીણનીચગોત્ર” નામે નિષ્પન્ન થાય છે. (અગોત્ર, નિગોત્ર, ક્ષીણગોત્ર) વળી એવા આત્માને “અગોત્ર” “નિગોત્ર” અને “ક્ષીણગોત્ર” પણ કહેવામાં આવે છે. આ પદોની વ્યાખ્યા ‘અમોહ’ આદિની વ્યાખ્યાને આધારે સમજી શકાય એવી છે.

હવે સૂત્રકાર અન્તરાય કર્મના અભાવથી આત્માના જે જે નામે નિષ્પન્ન થાય છે, તેમનું કથન કરે છે—

દાનાન્તરાય આદિના ભેદથી અન્તરાયકર્મ પાંચ પ્રકારના કહ્યા છે. (ખીણદાણંતરાય, ખીણલાભંતરાય, ખીણભોગંતરાય, ખીણઉવભોગંતરાય, ખીણવીરિયંતરાય) જીવના દાનાન્તરાયકર્મનો ક્ષય થઈ જવાથી ‘ક્ષીણદાનાન્તરાય,’

ક્યારૂપ્યાઽપિ પૂર્વવદેવ વોધ્યા । इत्थं ज्ञानावरणाद्यन्तरायकर्मन्ताष्टप्रकृतीनामेकैक-
 क्षयेण निष्पन्नानि नामान्यभिधाय सम्प्रति समुदिताष्टकर्म प्रकृतिसये यानि नामानि-
 निष्पद्यन्ते तान्याह-‘सिद्धे’ इत्यादि-सिद्धः=सिद्ध समस्तप्रयोजनत्वात् सिद्धः ।
 बुद्धः=बोधस्वरूपत्वाद् बुद्धः । मुक्तः=बाह्याभ्यन्तरग्रन्थबन्धन मुक्तत्वाद् मुक्तः । परि-

લાભાન્તરાય કે ક્ષય હોને સે ક્ષીણ લાભાન્તરાય, ભોગાન્તરાય કે ક્ષય
 હોને સે ક્ષીણ ભોગાન્તરાય ઉપભોગાન્તરાય કે નષ્ટ હોને સે
 ક્ષીણ ઉપભોગાન્તરાય ઓર વીર્યાન્તરાય કે નષ્ટ હોને સે
 ક્ષીણ વીર્યાન્તરાય યે નામ નિષ્પન્ન હોતે હૈં (અણંતરાય, ગિરંતરાય,
 સ્ત્રીણંતરાય) તથા અનન્તરાય નિરન્તરાય ઓર ક્ષીણાન્તરાય યે નામ
 નિષ્પન્ન હોતે હૈં । હસ પ્રકાર યે સઘ પૂર્વોક્ત નામ (અંતરાયકર્મવિષ્ણ
 મુક્તકે) અન્તરાય કર્મ સે વિપ્રમુક્ત હોને પર હોતે હૈં । (સિદ્ધે, બુદ્ધે, મુક્તે
 પરિણિવ્વુણ, અંતગઢે, સઘ્વદુક્કલ્પહીણે) અથ સૂત્રકાર યહ કહતે
 હૈં કિ યે જો જ્ઞાનાવરણ આદિ સે લેકર અન્તરાય કર્મ પર્યન્ત આઠકર્મ
 હૈં ડનમેં સે એક એક કર્મ કે નાશ હોને સે જૈસે યે ભિન્ન ૨ નામ કહે
 ગયે હૈં ડસી પ્રકાર સે આઠ કર્મોં કે સર્વથા નષ્ટ હોને પર જો નામ હોતે
 હૈં વે યે હૈં-સિદ્ધ-સમસ્ત પ્રયોજન સિદ્ધ હો જાને સે સિદ્ધ-યહ નામ

લાભાન્તરાય કર્મનો ક્ષય થઈ જવાથી “ક્ષીણુલાભાન્તરાય,” ભોગાન્તરાયનો
 ક્ષય થઈ જવાથી “ક્ષીણુભોગાન્તરાય,” ઉપભોગાન્તરાયનો ક્ષય થઈ જવાથી
 “ક્ષીણુઉપભોગાન્તરાય,” અને વીર્યાન્તરાયનો ક્ષય થઈ જવાથી “ક્ષીણુવીર્યા-
 ન્તરાય” આ પ્રકારનાં છવનાં નામો નિષ્પન્ન થાય છે. (અણંતરાય, ગિરંતરાય,
 સ્ત્રીણંતરાય) તથા છવના અન્તરાય કર્મનો ક્ષય થઈ જવાથી તેના “અન-
 તરાય,” “નિરન્તરાય” અને “ક્ષીણાન્તરાય” આ નામો નિષ્પન્ન થાય છે.
 ક્ષીણુજ્ઞાનાન્તરાયથી લઈને ક્ષીણાન્તરાય પર્યન્તના ઉપર્યુક્ત નામો આત્માને
 ત્યારે જ ઝોળાખી શકાય છે કે જ્યારે તેના અન્તરાય કર્મનો સંપૂર્ણતા
 ક્ષય થઈ ગયો હોય છે.

(સિદ્ધે, બુદ્ધે, મુક્તે, પરિણિવ્વુણ, અંતગઢે, સઘ્વદુક્કલ્પહીણે) જ્ઞાનાવરણથી
 લઈને અન્તરાય પર્યન્તના પ્રત્યેક કર્મનો નાશ થવાથી છવના જે ભિન્ન ભિન્ન
 નામો નિષ્પન્ન થાય છે. તેમનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર, આઠે કર્મોનો સર્વથા
 વિનાશ થવાથી છવના જે જે નામો નિષ્પન્ન થાય છે, તે નામોને પ્રકટ કરે છે-

આઠે પ્રકારના કર્મોનો જ્યારે સર્વથા ક્ષય થઈ જાય છે ત્યારે છવના
 સમસ્ત પ્રયોજનો સિદ્ધ થઈ જાય છે તેથી એવા છવનું “સિદ્ધ” “સિદ્ધ”

નિર્વૃત્તઃ=પરિ=સમન્તાત્-સર્વપ્રકારૈઃ નિર્વૃત્તઃ=શીતીભૂતઃ પરિવૃત્તિઃ પરિનિર્વૃત્તત્વં ચ સર્વોત્કૃષ્ટસકલસમીહિતમોક્ષરૂપાર્થપ્રાપ્ત્યા બોધ્યમ્ । અન્તકૃતઃ-અન્તકૃતત્વં તુ સમસ્તસંસારાન્તકારિત્વાદ્ બોધ્યમ્ । તથા-સર્વદુઃખપ્રહીણઃ । સર્વદુઃખપ્રહીણત્વં તુ શારીરમાનસદુઃખાનામાત્યન્તિકક્ષયેણ બોધ્યમ્ । સમ્પ્રતિ પ્રકૃતમુપસંહરન્નાહ-સ એષ ક્ષયનિષ્પન્ન ઇતિ । નિરૂપિતઃ ક્ષાયિકો ભાવ ઇતિ સૂચયિતુમાહ-સ એષ ક્ષાયિક ઇતિ ॥સૂ. ૧૫૪॥

નિષ્પન્ન હોતા હૈ ।-બુદ્ધ-બોધ સ્વરૂપ હો જાને સે બુદ્ધ યહ નામ નિષ્પન્ન હોતા હૈ । મુક્ત-બાહ્ય ઓર આભ્યન્તરરૂપ પરિગ્રહ બન્ધન સે છૂટજાને સે મુક્ત યહ નામ નિષ્પન્ન હોતા હૈ । પરિનિર્વૃત્ત-સર્વ પ્રકાર સે, સર્વ તરફ સે શીતી ભૂત હો જાને સે પરિનિર્વૃત્ત યહ નામ નિષ્પન્ન હોતા હૈ । સકલ સમીહિતો મેં સર્વોત્કૃષ્ટ સમીહિત એક મોક્ષ હી હૈ-સો ડસકી પ્રાપ્તિ સે પરિનિર્વૃત્તપના-જાનના ચાહિયે । અન્તકૃત-સમસ્ત સંસાર કા અન્ત-કારી હોને સે અન્તકૃત યહ નામ નિષ્પન્ન હોતા હૈ સર્વ દુઃખપ્રહીણ-શારીરિક એવં માનસિક સમસ્ત દુઃખોં કે આત્યંતિક ક્ષય હો જાને સે સર્વ દુઃખ પ્રહીણ યહ નામ નિષ્પન્ન હોતા હૈ ।

અબ સૂત્રકાર ઇસ પ્રકરણ કા ઉપસંહાર કરને કે નિમિત્ત કહતે હૈ

નામ નિષ્પન્ન થાય છે. એવો જીવ કેવળજ્ઞાન અને કેવળદર્શનથી મુક્ત થઈ જવાને કારણે “ બુદ્ધ ” ગણાય છે. એવો જીવ બાહ્ય અને આભ્યન્તર પરિ-ગ્રહરૂપ બન્ધનમાંથી મુક્ત થઈ જાય છે તેથી તેને “ મુક્ત ” કહેવામાં આવે છે. એવો જીવ સર્વપ્રકારના પરિતાપથી નિર્વૃત્ત થઈને શીતલીભૂત થઈ જાય છે, તેથી તેનું ‘ પરિનિર્વૃત્ત ’ નામ નિષ્પન્ન થાય છે. સકળ સમીહિતોમાં સર્વોત્કૃષ્ટ સમીહિત તો માત્ર મોક્ષ જ ગણાય છે, તે મોક્ષની પ્રાપ્તિ થઈ જવાના કારણે તે આત્મામાં પરિનિર્વૃત્તતા સમજવી એવો જીવ સમસ્ત સંસારને અન્તકારી બને છે તેથી તેને “ અન્તકૃત ” કહે છે. એવા જીવના શારીરિક અને માનસિક સમસ્ત દુઃખોનો આત્યંતિક (સંપૂર્ણ) ક્ષય થઈ જવાને કારણે તેને સર્વદુઃખ પ્રહીણ કહે છે. આ પ્રકારે આઠે ક્રમેનો સર્વથા ક્ષય કરી નાખનાર જીવના નીચે પ્રમાણે નામે નિષ્પન્ન થાય છે-(૧) સિદ્ધ’ (૨) બુદ્ધ, (૩) મુક્ત, (૪) પરિનિર્વૃત્ત, (૫) અન્તકૃત અને (૬) સર્વદુઃખપ્રહીણ.

હવે આ સૂત્રનો ઉપસંહાર કરતા સૂત્રકાર કહે છે કે—

(સે તં ક્ષયનિષ્પન્ને) આ પ્રકારનું ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક ભાવનું સ્વરૂપ છે.

કિ (સે તં સ્વયનિષ્પન્ને) હસ પ્રકાર યહ ક્ષય નિષ્પન્ન હૈ । (સે તં સ્વરૂપ) હસ પ્રકાર યહ ક્ષાયિક ભાવ કા નિરૂપણ હૈ—

ભાવાર્થ—સૂત્રકારને હસ સૂત્ર દ્વારા ક્ષાયિક ભાવ કા નિરૂપણ કિયા હૈ । ઉસમેં ઉન્હોને યહ કહા હૈ કિ જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકાર કે કર્મો કા જો ક્ષય હૈ એક તો વહ ક્ષાયિક ભાવ હૈ—ઔર દુસરા ક્ષાયિક ભાવ વહ હૈ જો હન કર્મો કે ક્ષય સે નિષ્પન્ન હોતા હૈ । કર્મો કે ક્ષય સે નિષ્પન્ન હુઆ ક્ષાયિક અનેક પ્રકાર કા કહા હૈ । ઉનમેં પાંચ પ્રકાર કે જ્ઞાનાવરણ કર્મ કે ક્ષય સે નૌ પ્રકાર કે દર્શનાવરણ કર્મ કે ક્ષય સે દો પ્રકાર કે વેદનીય કર્મ કે ક્ષય સે, ૨૮ પ્રકાર કે મોહનીય કર્મ કે ક્ષય સે ચાર પ્રકાર કે આયુ કર્મ કે ક્ષય સે, ૪૨ પ્રકાર કે નામ કર્મ કે ક્ષય સે, દો પ્રકાર કે ગોત્રકર્મ કે ક્ષય સે ઔર પાંચ પ્રકાર કે અન્તરાય કે ક્ષય સે સૂત્ર પ્રદર્શિત જિતને બી નામ નિષ્પન્ન હોતે હૈં વે સબ ક્ષાયિક હૈં । ક્યોંકિ યે ભિન્ન ૨ પ્રકાર કે કર્મો કે ક્ષય સે નિષ્પન્ન હોતે હૈં । યહાંપર ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક ભાવ મેં ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક નામોં કા કથન જો કિયા ગયા હૈ વહ આપ્રાસંગિક નહીં હૈ, ક્યોંકિ ક્ષાયિક

(સે તં સ્વરૂપ) ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક ભાવનું નિરૂપણ સમાપ્ત થવાથી ક્ષાયિક ભાવના સ્વરૂપનું નિરૂપણ પણ અહીં પૂરું થાય છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા ક્ષાયિક ભાવનું નિરૂપણ કયું છે. તેમાં તેમણે ક્ષાયિક ભાવના બે પ્રકાર બતાવ્યા છે. જ્ઞાનાવરણીય, આદિ આઠ પ્રકારનાં કર્મોના બે ક્ષય છે તેને ક્ષાયિક રૂપ પહેલો પ્રકાર ગણવામાં આવે છે. જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના ક્ષયથી નિષ્પન્ન થનાં ક્ષાયિક ભાવને ક્ષયનિષ્પન્ન રૂપ બીજા પ્રકારનો ક્ષાયિક ભાવ કહ્યો છે. કર્મોના ક્ષયથી નિષ્પન્ન થતો ક્ષાયિક ભાવ અનેક પ્રકારનો કહ્યો છે. પાંચ પ્રકારના જ્ઞાનાવરણ કર્મના ક્ષયથી, નવ પ્રકારના દર્શનાવરણ કર્મના ક્ષયથી, બે પ્રકારના વેદનીય કર્મના ક્ષયથી, ૨૮ પ્રકારના મોહનીય કર્મના ક્ષયથી, ચાર પ્રકારના અયુકર્મના ક્ષયથી, ૪૨ પ્રકારના નામકર્મના ક્ષયથી, બે પ્રકારના ગોત્રકર્મના ક્ષયથી, અને પાંચ પ્રકારના અન્તરાય કર્મના ક્ષયથી સૂત્રોક્ત બેટલાં નામ નિષ્પન્ન થાય છે, તેમને ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક ભાવ રૂપે ગણવા બેઠએ, કારણ કે તે નામો ભિન્ન ભિન્ન પ્રકારનાં કર્મોના ક્ષયથી નિષ્પન્ન થાય છે.

આ સૂત્રમાં ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક ભાવોમાં ક્ષયનિષ્પન્ન ક્ષાયિક નામોનું બે કથન કરવામાં આવ્યું છે, તે અપ્રાસંગિક નથી. તેનું કારણ નીચે

भाव का तात्पर्य है क्षय से उत्पन्न हुई अवस्था के परिणाम। यह आत्मा की निज स्वाभाविक अवस्था है। इसमें जो भी परिणाम हैं वे सब शुद्ध आत्मस्वरूप हैं। इन्हीं परिणामों को लेकर-जो नाम कहे गये हैं। वे नाम, स्थापना या द्रव्यरूप नहीं हैं, किन्तु भावरूप हैं। कर्मों के नष्ट होने पर आत्मा का जो मौलिक रूप प्रकट हो जाता है, उसी मौलिकरूप के ये वाचक हैं इसलिये इन नामों का क्षायिकभाव के प्रकरण में विवेचन करना युक्ति युक्त ही है। अप्रासंगिक नहीं है। जैसे जब केवलज्ञानावरण नष्ट हो जाता है तब आत्मा में केवलज्ञानगुण प्रकट हो जाता है केवलज्ञानावरण के नष्ट होते ही क्षायोपशमिक चार ज्ञान क्षायिकरूप हो जाते हैं-अर्थात् केवल ज्ञान में अन्तर्हित हो जाते हैं। तब इस आत्मा का क्षीण केवल ज्ञानावरण ऐसा नाम जो होता है वह नाम, स्थापना या द्रव्यरूप नहीं है। किन्तु भावनिपेक्ष रूप है। कारण उस प्रकार की पर्याय उस आत्मा में निष्पन्न हो चुकी है, और उसी का यह वाचक है। इसी प्रकार से शेष कर्मों के क्षय से निष्पन्न हुए नामों में भी जनाना चाहिये। इसीलिये क्षायिक भाव के प्रकरण में सूत्रकार ने इनका निर्देशन किया है ॥ सू० १५४ ॥

प्रमाणे छे-क्षयथी उत्पन्न थयेली अवस्थाना परिणामने क्षायिक भाव गणाय छे. ते आत्माना निज स्वाभाविक अवस्था छे. तेमां जे जे परिणामो छे, ते अर्थां परिणामो शुद्ध आत्मस्वरूप छे. ते परिणामोना विचार करीने जे नामो अताववामां आव्यां छे तेओ नाम, स्थापना के द्रव्यरूप नथी, परन्तु भावरूप छे. कर्मोना क्षय थछ जवाथी आत्मानुं जे मौलिक भूल रूप प्रकट थछ जाय छे, ओज मौलिक रूपना तेओ वाचक छे. तेथी ते नामोनुं क्षायिक भावना प्रकरणमां विवेचन करवुं ते अनुचित अथवा अप्रासंगिक नथी, परन्तु उचित अने प्रासंगिक ज छे. जेम के केवलज्ञानावरण कर्मोना संपूर्ण क्षय थछ जतां ज आत्मां केवलज्ञानगुण प्रकट थछ जाय छे. केवलज्ञानावरणोना नाश थतां ज क्षायोपशमिक चार ज्ञान क्षायिक रूप थछ जाय छे, ओटले के आ आरे ज्ञान केवलज्ञानमां ज समाविष्ट थछ जाय छे. त्यारे ते आत्मानुं “क्षीणकेवलज्ञानावरण” आ नाम निष्पन्न थछ जाय छे. ते नाम, स्थापना अथवा द्रव्यरूप होतुं नथी, परन्तु भावनिपेक्ष रूप ज होय छे, कारण के ते प्रकारनी पर्याय ते आत्मां निष्पन्न थछ चुकी होय छे, अने आ नाम तेनुं ज वाचक छे. ओज प्रमाणे आकीनां कर्मोना क्षयथी निष्पन्न थयेलां नामोना विषयमां पणु समजवुं. तेथी ज क्षायिक भावना प्रकरणमां सूत्रकारे तेमो निर्देश कर्यो छे. ॥ सू० १५४ ॥

अथ क्षायोपशमिकं नाम निरूपयति —

मूलम्—से किं तं खओवसमिण् ? खओवसमिण् दुविहे पणत्ते, तं जहा—खओवसमे य, खओवसमनिप्फण्णे य । से किं तं खओवसमे ? खओवसमे चउण्हं घाइकम्माणं खओवसमेणं, तं जहा—णाणावरणिज्जस्स, दंसणावरणिज्जस्स, मोहणिज्जस्स, अंतरायस्स, खओवसमेणं, से तं खओवसमे । से किं तं खओवसमनिप्फण्णे ? खओवसमनिप्फण्णे अणेगविहे पणत्ते, तं जहा खओवसमिया आंभिणिबोहियणाणलद्धी, जाव खओवसमिया मणपज्जवणाणलद्धी, खओवसमिया मइअण्णाणलद्धी, खओवसमिया सुयअण्णाणलद्धी, खओवसमिया विभंगणाणलद्धी, खओवसमिया चक्खुदंसणलद्धी, अचक्खुदंसणलद्धी ओहिदंसणलद्धी, एवंसम्मदंसणलद्धी मिच्छादंसणलद्धी, सम्ममिच्छादंसणलद्धी, खओवसमिया सामाइयचरित्तलद्धी, एवं छेयोवट्ठावणलद्धी, परिहारविसुद्धियलद्धी, सुहुमसंपरायचरित्तलद्धी, एवं चरित्ताचरित्तलद्धी, खओवसमिया दाणलद्धी, एवं लाभलद्धी, भोगलद्धी, उवभोगलद्धी, खओवसमिया वीरियलद्धी, एवं पंडियवीरियलद्धी, बालवीरियलद्धी, बालपंडियवीरियलद्धी, खओवसमिया सोइंदियलद्धी, जाव खओवसमिया फासिंदियलद्धी, खओवसमिण् आयारंगधरे, एवं सुयगडंगधरे, ठाणंगधरे, समवायंगधरे, विवाहपण्णत्तिधरे, नायाधम्मकहाधरे, उवासगदसाधरे, अंतगडदसाधरे, अणुत्तरोववाइयदसाधरे, पणहावागरणधरे, विवागसुयधरे

खओवसमिण दिट्ठिवायधरे, खओवसमिण णवपुव्वी, खओव-
समिण जाव चउदस्सपुव्वी, खओवसमिण गणी, खओवसमिण
वायए, से तं खओवसमनिष्फण्णे, से तं खओवसमिण ॥सू० १५५॥

छाया—अथ कोऽसौ क्षायोपशमिकः ? क्षायोपशमिकः द्विविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-
क्षयोपशमश्च क्षयोपशमनिष्पन्नश्च । अथ कोऽसौ क्षयोपशमः ? क्षयोपशमः—चतुर्णां
घातिकर्मणां क्षयोपशमः खलु तद्यथा—ज्ञानावरणीयस्य, दर्शनावरीयस्य मोहनीयस्य,
अन्तरायस्य क्षयोपशमः खलु, स एष क्षयोपशमः । अथ कोऽसौ क्षयोपशमनिष्पन्नः ?
क्षयोपशमनिष्पन्नः अनेकविधः प्रज्ञप्तः—तद्यथा—क्षायोपशमिकी आभिनिवोधिक-
ज्ञानलब्धिः, यावत् क्षायोपशमिकी मनः पर्ययज्ञानलब्धिः, क्षायोपशमिकी मत्यज्ञान-
लब्धिः, क्षायोपशमिकी श्रुताज्ञानलब्धिः, क्षायोपशमिकी विभङ्गज्ञानलब्धिः,
क्षायोपशमिकी चक्षुर्दर्शनलब्धिः, अचक्षुर्दर्शनलब्धिः, अवधिदर्शनलब्धिः, एवं
सम्यक्दर्शनलब्धिः, मिथ्यादर्शनलब्धिः, सम्यग्मिथ्यादर्शनलब्धिः, क्षायोपश-
मिकी सामायिकचारित्रलब्धिः, एवं छेदोपस्थापनलब्धिः परिहारविशुद्धिकलब्धिः,
सूक्ष्मसंपरायचारित्रलब्धिः, एवं चरित्राचरित्रलब्धिः क्षायोपशमिकी दानलब्धिः, एवं
लाभलब्धिः, भोगलब्धिः, उपभोगलब्धिः, क्षायोपशमिकी वीर्यलब्धिः, एवं
पण्डितवीर्यलब्धिः, बालवीर्यलब्धिः बालपण्डितवीर्यलब्धिः, क्षायोपशमिकी श्रोत्रे-
न्द्रियलब्धिः, यावत् क्षायोपशमिकी स्पर्शेन्द्रियलब्धिः, क्षायोपशमिकः आचाराङ्गधरः,
एवं सूत्रकृताङ्गधरः, स्थानाङ्गधरः समवायाङ्गधरः, व्याख्याप्रज्ञप्तिधरः, ज्ञाताधर्म-
कथाधरः, उपासकदशाधरः, अन्तर्दृष्टाधरः, अनुत्तरोपपातिकदशाधरः, प्रश्नव्या-
करणधरः, विपाकश्रुतधरः, क्षायोपशमिको दृष्टिवादधरः, क्षायोपशमिको नवपूर्वीधरः,
क्षायोपशमिको यावत् चतुर्दशपूर्वीधरः, क्षायोपशमिको गणी, क्षायोपशमिको-
वाचकः । स एष क्षयोपशमनिष्पन्नः । स एष क्षायोपशमिकः ॥सू० १५५॥

टीका—‘से किं तं’ इत्यादि—

अथ कोऽसौ क्षायोपशमिकमः ? इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरयति—क्षायोपशमिकः

अथ सूत्रकार क्षायोपशमिकभावका निरूपण करते हैं—

‘से किं तं खओवसमिण’ इत्यादि ।

शब्दार्थ—(से किं तं खओवसमिण ?) हे भदन्त ! वह क्षायोपश-
मिक क्या है ?

इवे सूत्रकार क्षायोपशमिक भावतुं निरूपण करे छे—

“से किं तं खओवसमिण” इत्यादि—

शब्दार्थ—(से किं तं खओवसमिण ?) हे भगवन् पूर्वप्रक्षान्त क्षायो-
पशमिकतुं स्वरूप देवुं छे ?

ક્ષયોપશમ-ક્ષયોપશમનિષ્પન્નેતિ દ્વિવિધઃ । તત્ર-ક્ષયોપશમઃ-કેવલજ્ઞાનપ્રતિબંધક-
સ્ય જ્ઞાનાવરણીયદર્શનાવરણીયમોહનીયાન્તરાયરૂપઘાતિકર્મચતુષ્ટયસ્ય ક્ષયોપશમો-
ર્બોધ્યઃ । અયં ભાવઃ-વિવક્ષિતજ્ઞાનાદિગુણવિઘાતકસ્ય કર્મણઃ ઉદયપ્રાપ્તસ્ય ક્ષયઃ=
સર્વથાઽપગમઃ, અનુદીર્ણસ્ય તસ્યૈવ કર્મણ ઉપશમઃ=વિપાકત ઉદયાભાવઃ । તત્ત્વ
ક્ષયોપલક્ષિતઃ ઉપશમ ઇતિ । નનુ ઔપશમિકે ભાવે ઉદયપ્રાપ્તસ્ય કર્મણઃ સર્વથા

ઉત્તર-સ્વઓવસમિષ્ટ દુવિદ્ધે પળ્લન્તે) ક્ષયોપશમિક દો પ્રકાર
કા પ્રજ્ઞસ હુઆ હૈ । (તં જહા) જૈસે-સ્વઓવસમે યં સ્વઓવસમનિષ્ક-
ળ્લે ય) એક ક્ષયોપશમરૂપ ક્ષાયોપશમિક ઓર દસરા ક્ષયોપશમનિષ્ક
ક્ષાયોપશમિક ।

(સે કિં તં સ્વઓવસમે ?) હે ભદન્ત ! વહ ક્ષાયોપશમ વ્યા હૈ ।

ઉત્તર-(સ્વઓવસમે ચતુષ્ઠં ઘાઠકમ્માણં સ્વઓવસમેણં) કેવલ
જ્ઞાન કે પ્રતિબંધક જ્ઞાનાવરણીય દર્શનાવરણીય મોહનીય ઓર અન્ત-
રાય હન ચાર ઘાતિક કર્મોં કાં જો ક્ષયોપશમ હૈ વહ ક્ષાયોપશમ હૈ ।
હસકા તાત્પર્યં યહ હૈ કિં વિવક્ષિત જ્ઞાનાદિક ગુણોં કો ઘાત કરને વાલે
ઉદય પ્રાપ્ત કર્મ કા ક્ષય-સર્વથા અપગમ-ઓર અનુદીર્ણ ઉસી કર્મ કા
ઉપશમ-વિપાક કી અપેક્ષા સે ઉદયાભાવ હસ પ્રકાર ક્ષય સે ઉપલક્ષિત
જો ઉપશમ હૈ વહી ક્ષયોપશમ હૈ ।

શંકા-ઔપશમિક ભાવ મેં ઉદય પ્રાપ્ત કર્મકા સર્વથા ક્ષય હૈ ઓર

ઉત્તર-(સ્વઓવસમિષ્ટ દુવિદ્ધે પળ્લન્તે, તંજહા) ક્ષાયોપશમિક ભાવના
નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર કહ્યા છે-(સ્વઓવસમે યં સ્વઓવસમનિષ્કળ્લે ય) (૧)
ક્ષયોપશમ રૂપ ક્ષાયોપશમિક અને (૨) ક્ષયોપશમ નિષ્પન્ન ક્ષાયોપશમિક.

પ્રશ્ન-(સે કિં તં સ્વઓવસમે ?) હે ભગવન્ ! તે ક્ષાયોપશમનું સ્વરૂપ
કેવું છે ?

ઉત્તર-(સ્વઓવસમે ચતુષ્ઠં ઘાઠકમ્માણં સ્વઓવસમેણં) કેવળજ્ઞાનના પ્રતિબ-
ંધક-કેવળજ્ઞાનને પ્રકટ થતું રોકનારાં-જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય, મોહનીય
અને અન્તરાય, આ ચાર ઘાતિયા કર્મોનાં જે ક્ષયોપશમ રૂપ લાવ છે, તેને
ક્ષયોપશમ કહે છે. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે-વિવક્ષિત જ્ઞાનાદિક
ગુણોના ઘાત કરનારા ઉદય પ્રાપ્ત કર્મોના ક્ષય (સર્વથા અપગમ) અને
અનુદીર્ણ એજ કર્મોના ઉપશમ (વિપાકની અપેક્ષાએ ઉદયાભાવ), આ પ્રકારના
ક્ષયથી ઉપલક્ષિત જે ઉપશમ છે, તેનું નામ જ ક્ષયોપશમ છે.

શંકા-ઔપશમિક ભાવમાં ઉદયપ્રાપ્ત કર્મોના સર્વથા ક્ષય થાય છે અને

क्षयः, अनुदयप्राप्तं तु कर्म न क्षीणं नापि तस्योदयोऽतस्तस्योपशमश्च उच्यते, क्षयोपशमिकेऽस्मिन्नपि भावे उदीर्णस्य क्षयः, अनुदीर्णस्य चोपशम इत्युच्यते, इत्थमनयोः को भेदः? इति चेदाह-कर्मणः क्षयोपशमे तु विपाकत एवोदयाभावः, प्रदेशस्तु अस्त्येवोदयः, औपशमिके भावे तु कर्मणः प्रदेशतोऽप्युदयो नास्तीत्यनयोर्भेदो बोध्यः। क्षयोपशमस्तु ज्ञानावरणादि कर्मचतुष्टयस्यैव भवति, नान्येषां

अनुदय प्राप्त जो कर्म है उसका न क्षय है और न उदय है, किन्तु उपशम है, इसी प्रकार इस क्षयोपशमिक भाव में भी उदीर्ण कर्मका क्षय है और अनुदीर्ण कर्मका उपशम है। तब औपशमिक और क्षयोपशमिक में क्या भेद है?

उत्तर-क्षयोपशम भाव में जो कर्म का उपशम कहा गया है वह विपाक की अपेक्षा से ही उदयाभाव रूप उपशम कहा गया है, प्रदेश की अपेक्षा नहीं-प्रदेश की अपेक्षा से तो वहां कर्मका उदय है परन्तु औपशमिक भाव में जो उपशम कहा गया है वह विपाक और प्रदेश दोनों की अपेक्षा से कहा गया है। अर्थात् औपशमिक भाव में कर्म का न विपाकोदय है, और न प्रदेशोदय है। नीरस किंचे हुए कर्म दलिकों का वेदन प्रदेशोदय है और रस विशिष्ट दलिकों का विपाक वेदन विपाकोदय है। क्षयोपशम ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय और अंतराय इन चार कर्मों का ही होता है। निषिद्ध होने

अनुदय प्राप्त જે કર્મ છે તેનો ક્ષય પણ થતો તથા અને ઉદય પણ થતો નથી પરન્તુ ઉપશમ જ થાય છે. એજ પ્રકારે ક્ષાયોપશમિક લાવમાં પણ ઉદીર્ણ કર્મનો ક્ષય અને અનુદીર્ણ કર્મનો ઉપશમ થતો હોય છે. તો પછી औप-શમિક અને ક્ષાયોપશમિકમાં શો ભેદ છે ?

ઉત્તર-ક્ષયોપશમ લાવમાં કર્મનો જે ઉપશમ કહેવામાં આવ્યો છે તે વિપાકની અપેક્ષાએ જ ઉદ્યાલાવ (ઉદયનો અલાવ) રૂપ ઉપશમ બતાવવામાં આવ્યો છે, પ્રદેશની અપેક્ષાએ બતાવવામાં આવ્યો નથી. પ્રદેશની અપેક્ષાએ તો ત્યાં કર્મનો ઉદય જ છે. પરન્તુ औपશમિક લાવમાં જે ઉપશમ બતાવવામાં આવ્યો છે, તે વિપાક અને પ્રદેશ, આ બન્નેની અપેક્ષાએ બતાવવામાં આવ્યો છે એટલે કે औપશમિક લાવમાં કર્મનો વિપાકોદય હોતો નથી, પણ પ્રદેશોદય હોય છે. નીરસ કરાયેલાં કર્મદલિકોનું વેદન પ્રદેશોદય રૂપ છે અને રસવિશિષ્ટ દલિકોનું વિપાકવેદન વિપાકોદય રૂપ છે. જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય, મોહ-

કર્મણાં, નિષિદ્ધત્વાત્ । સમ્પ્રતિ પ્રથમં ભેદમુપસંહરન્નાહ-સ एष क्षयोपशम इति ।
 द्वितीयं ભેદં પૃચ્છતિ-અથ કોઽસૌ ક્ષયોપશમનિષ્પન્નઃ ? ઇતિ । ઉત્તરયતિ-ક્ષયોપશ-
 નિષ્પન્નઃ અનેકવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ । અનેકવિધત્વમેવાહ-તદયથા-ક્ષાયોપશમિકી આમિ-
 નિવોધિકજ્ઞાનલબ્ધિઃ ક્ષયોપશમેન નિષ્પન્ના ક્ષાયોપશમિકી, સા કા ? ઇત્યાહ-
 આમિનિવોધિકજ્ઞાનલબ્ધિરિતિ । આમિનિવોધિકજ્ઞાનં=મતિજ્ઞાનં તસ્ય લબ્ધિઃ=પ્રાપ્તિઃ
 इयं हि-સ્વાવરણકર્મક્ષયોપશમેનોપસમ્પद्यते, अत एवेयं क्षायोपशमिकीत्युच्यते ।
 इत आरभ्य क्षायोपशमिकी मनः पर्यवज्ञानलब्धिरिति यावद् वक्तव्यम् । तत्तज्ज्ञान

સે અન્ય કર્મો' કો નહીં' હોતા હૈ । (સે તં સ્વઓવસમે) હસ પ્રકાર યહ-
 ક્ષયોપશમ હૈ (સે ' કિં તં સ્વઓવસમણિષ્કણ્ણે ?) હે મદંત । ક્ષયોપશમ
 નિષ્પન્ન ક્ષાયોપશમિક ભાવ કયા હૈ ?

ઉત્તર-(સ્વઓવસમણિષ્કણ્ણે અણેગવિહે પણ્ણત્તે) ક્ષયોપશમ નિષ્પન્ન
 ક્ષાયોપશમિક ભાવ અનેક પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । (તં જહા) વે
 પ્રકાર યે હૈ-

(સ્વઓવ સમિયા આમિણિવોહિયાણણલહ્હી જાવ સ્વઓવસમિયા મળ-
 પજ્જવણાણલહ્હી) ક્ષયોપશમિકી આમિનિવોધિક જ્ઞાનલબ્ધિ-અમિનિ-
 વોધક નામ મતિજ્ઞાન હૈ । હસ મતિજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ કા નામ આમિનિવોધિક
 જ્ઞાનલબ્ધિ હૈ । યહ આમિનિવોધિકજ્ઞાનલબ્ધિ મતિજ્ઞાનાવરણ કર્મ કે
 ક્ષયોપશમ સે હોતી હૈ । હસલિયે હસે ક્ષાયોપશમિકી કહી હૈ, હસી પ્રકાર
 શ્રુતજ્ઞાનલબ્ધિ શ્રુતજ્ઞાનાવરણકર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હોતી હૈ । અવધિ-

નીય અને અંતરાય, આ ચાર પ્રકારનાં કર્મેણાં જ ક્ષયોપશમ થાય છે, અન્ય કર્મેણાં
 ક્ષયોપશમ થતો નથી. (સે તં સ્વઓવસમે) આ પ્રકારનું ક્ષયોપશમનું સ્વરૂપ છે.
 પ્રશ્ન-(સે કિં તં સ્વઓવસમણિષ્કણ્ણે ?) હે ભગવન્ ! ક્ષયોપશમનિષ્પન્ન
 ક્ષાયોપશમિક ભાવનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(સ્વઓવસમણિષ્કણ્ણે અણેગવિહે પણ્ણત્તે) ક્ષયોપશમનિષ્પન્ન ક્ષાયો-
 પશમિક ભાવ અનેક પ્રકારનો કહ્યો છે. (તંજહા) જેમ કે....(સ્વઓવસમિયા
 આમિણિવોહિયાણણલહ્હી જાવ સ્વઓવસમિયા મળપજ્જવણાણલહ્હી) ક્ષાયોપશમિકી
 આમિનિવોધિક જ્ઞાનલબ્ધિ મતિજ્ઞાનને આલિનિવોધિક જ્ઞાન કહે છે. આ
 મતિજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ નામ આલિનિવોધિક જ્ઞાનલબ્ધિ છે. મતિજ્ઞાનાવરણ
 કર્મના ક્ષયોપશમથી આ આલિનિવોધિક જ્ઞાનલબ્ધિની પ્રાપ્તિ થાય છે તેથી
 તેને ક્ષાયોપશમિકી કહેવામાં આવી છે. જો પ્રભાણે શ્રુતજ્ઞાનાવરણ કર્મના
 ક્ષયોપશમથી શ્રુતજ્ઞાનલબ્ધિની, અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મના ક્ષયોપશમથી

प्राप्तिर्हि तत्तदावरणकर्मक्षयोपशमजन्या बोध्या । केवलज्ञानलब्धिस्तु तदावरण-
कर्मणः क्षय एवोत्पद्यते अतोऽत्र नोक्ता । तथा-क्षायोपशमिकी मत्तज्ञानलब्धिः-
अज्ञानं-कुत्सितं ज्ञानम्-भज्ञानम्, कुत्सार्थेऽपि नवोवृत्तिः, कुत्सितं-शीलम्-
अशीलम् इत्यादौ तथा दृष्टत्वात्, मतिरेवाज्ञानं मत्तज्ञानं तस्य लब्धिः=योग्यता
स्वावरणक्षयोपशमेनैव निष्पद्यते । कुत्सितत्वं चास्य मिथ्यादर्शनोदयदूषितत्वाद्
बोध्यम् । एवं क्षायोपशमिकी श्रुतज्ञानलब्धिरपि बोध्या । तथा-क्षायोपशमिकी
विभङ्गज्ञानलब्धिः-भङ्गप्रकारो भेदइति पर्यायाः । भङ्गशब्दस्त्विह प्रक्रमादवधिवाचकः ।

ज्ञानालब्धि अवधिज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से होती है, और
मनःपर्यवज्ञानलब्धि मनः पर्यवज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से होती
है । इसलिये इन लब्धियों को क्षायोपशमिक कहा है । केवलज्ञानलब्धि को
सूत्रकार ने जो यहां नहीं कहा है उसका कारण यह है कि यह के-
वलज्ञानावरणकर्म के क्षय से होती है । (खओवसमिया मइ अण्णाण
लद्धी, खओवसमिया सुय अण्णाणलद्धी, खओवसमिया विभंगणाण-
लद्धी) मतिअज्ञानावरण के क्षयोपशम से मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञाना-
वरण के क्षयोपशम से श्रुतज्ञान, विभंगज्ञानावरण के क्षयोपशम से
विभंगज्ञान की प्राप्ति होती है, इसलिये इन्हें क्षायोपशमिकी मत्तज्ञान
लब्धि, क्षायोपशमिकी श्रुताज्ञानालब्धि और क्षायोपशमिकी विभंग
ज्ञान लब्धि कहा है । कुत्सित ज्ञान का नाम अज्ञान है । कुत्सित अर्थ
में भी नञ् होता है । जैसे कुत्सितशील अशील आदि (खओवसमिया

अवधिज्ञान लब्धिनी अने मनःपर्यवज्ञानावरणुना क्षयोपशमथी मनःपर्यवज्ञान
लब्धिनी प्राप्ति थाय छे, ते कारणे ते लब्धिअने क्षयोपशमिक कडेवाभां
आवी छे अही सूत्रकारे केवलज्ञान लब्धिने उल्लेख कर्छे नथी, कारणे के
केवलज्ञानावरण कर्मना क्षयथी न केवलज्ञान लब्धिनी प्राप्ति थाय छे,
क्षयोपशमथी तेनी प्राप्ति थती नथी.

(खओवसमिया मइ अण्णाणलद्धी, खओवसमिया सुय अण्णाणलद्धी, खओ-
वसमिया विभंगणाणलद्धी) मति अज्ञानावरणुना क्षयोपशमथी मति अज्ञान,
श्रुतअज्ञानावरणुना क्षयोपशमथी श्रुताज्ञान अने विभंगज्ञानावरणुना क्षयोपश-
मथी विभंगज्ञाननी प्राप्ति थाय छे, तेथी तेमने क्षायोपशमिकी मत्तज्ञान-
लब्धि, क्षायोपशमिकी श्रुताज्ञानलब्धि अने क्षायोपशमिकी विभंगज्ञानलब्धि
कडेवाभां आवेद छे. कुत्सित ज्ञाननुं नाम अज्ञान छे. कुत्सितना अर्थभां पणु
नञ् (नकार वाचक) ने प्रयोग थाय छे. जेम के कुत्सितशील, अशील आदि.

વિરુપઃ=કુત્સિતો મજ્ઞો વિમજ્ઞઃ, સ એવ જ્ઞાનં-વિમજ્ઞજ્ઞાનમ્-જ્ઞાનત્વં વાસ્ય અર્થપરિજ્ઞા-
નાત્મકત્વાદ્ બોધ્યમ્ । મિથ્યાદૃષ્ટિદેવાદેરવધિજ્ઞાનં વિમજ્ઞજ્ઞાનમુચ્યતે । વિમજ્ઞજ્ઞાનસ્વ-
લબ્ધિઃ=વિમજ્ઞજ્ઞાનલબ્ધિઃ । इयमपि स्वावरणक्षयोपशमैर्नैव भवति, अतोऽस्या अपि
क्षायोपशमिकीर्त्तवं बोध्यम् । एवं मिथ्यात्वादिकर्मणः क्षयोपशमसाध्याः शेषा अपि
संम्यग्दर्शनादिलब्धयो यथासम्भवं भावनीयाः । तथा-क्षायोपशमिकी वीर्यलब्धिः-
इयं हि वीर्यान्तरायकर्मक्षयोपशमाद् भवति । एवं-पण्डितवीर्यलब्धिः, बालवीर्यलब्धिः,

ચક્રચુદંસળલઢ્ઢી) ક્ષાયોપશમિકીચક્ષુઃ દર્શન લબ્ધિ, (અચક્રચુદંસળ-
લઢ્ઢી, ઓહિદંસળલઢ્ઢી) અચક્ષુદર્શનલબ્ધિ અવધિદર્શનલબ્ધિ હૈ । જન
મેં ચક્ષુદર્શનાવરણ કે ક્ષયોપશમ સે ચક્ષુદર્શન લબ્ધિ, અચક્ષુદર્શનાવરણ
કે ક્ષાયોપશમ સે અચક્ષુદર્શનલબ્ધિ ઓર અવધિદર્શનાવરણ કે ક્ષયોપ-
શમ સે અવધિદર્શનલબ્ધિ હોતી હૈ । (એવં સમ્મદંસળલઢ્ઢી, મિચ્છાદંસળ-
લઢ્ઢી સમ્મમિચ્છાદંસળલઢ્ઢી) હસપ્રકાર સે સમ્યક્દર્શનલબ્ધિ, મિથ્યા-
દર્શનલબ્ધિ (સ્વઓવસમિયા સામાઢ્યચરિત્તલઢ્ઢી, એવં હેયોવદ્વાવળલઢ્ઢી,
પરિહારવિસુદ્ધિલઢ્ઢી સુદ્ધમસંપરાયચરિત્તલબ્ધિ એવં ચરિત્તાચરિત્તલઢ્ઢી)
ક્ષાયોપશમિકી સામાયિક ચરિત્રલબ્ધિ હેદોપસ્થાપનાલબ્ધિ, પરિહારવિ-
શુદ્ધિક લબ્ધિ, સૂક્ષ્મ સંપરાયચારિત્રલબ્ધિ, ચારિત્રાચરિત્રલબ્ધિ (સ્વઓવ
સમિયા દાળલઢ્ઢી, એવં લાભલઢ્ઢી, ભોગલઢ્ઢી, ઉપભોગલઢ્ઢી) ક્ષાયોપશ-
મિકી દાનલબ્ધિ લાભલબ્ધિ, ભોગલબ્ધિ ઉપભોગલબ્ધિ, (સ્વઓવસમિયા

(સ્વઓવસમિયા ચક્રચુદંસળલઢ્ઢી) ક્ષાયોપશમિકી ચક્ષુઃ દર્શનલબ્ધિ,
(અચક્રચુદંસળલઢ્ઢી, ઓહિદંસળલઢ્ઢી) અચક્ષુદર્શનલબ્ધિ અને અવધિદર્શનલબ્ધિ
પણ ક્ષયોપશમ નિષ્પન્ન ક્ષાયોપશમિક લાવરૂપ છે, કારણ કે ચક્ષુઃદર્શનાવરણ
કર્મના ક્ષયોપશમથી ચક્ષુઃદર્શનલબ્ધિની પ્રાપ્તિ થાય છે, અચક્ષુદર્શનાવરણ
કર્મના ક્ષયોપશમથી અચક્ષુદર્શનલબ્ધિની પ્રાપ્તિ થાય છે અને અવધિદર્શના-
વરણના ક્ષયોપશમથી અવધિદર્શનલબ્ધિની પ્રાપ્તિ થાય છે. (એવં સમ્મદંસળલઢ્ઢી,
મિચ્છાદંસળલઢ્ઢી, સમ્મમિચ્છાદંસળલઢ્ઢી) એજ પ્રમાણે સમ્યક્દર્શનલબ્ધિ,
મિથ્યાદર્શનલબ્ધિ, સમ્યગ્મિથ્યાદર્શનલબ્ધિ, (સ્વઓવસમિયા સામાઢ્યચરિત્ત-
લઢ્ઢી, એવં હેયોવદ્વાવળલઢ્ઢી, પરિહારવિસુદ્ધિલઢ્ઢી) ક્ષાયોપશમિકી સામાયિક
ચારિત્રલબ્ધિ, હેદોપસ્થાપનાલબ્ધિ, પરિહારવિશુદ્ધિકલબ્ધિ, (સુદ્ધમસંપરાય
ચરિત્તલઢ્ઢી, એવં ચરિત્તાચરિત્તલઢ્ઢી) સૂક્ષ્મ સંપરાય ચરિત્રલબ્ધિ, ચારિત્રા-
ચારિત્રલબ્ધિ, (સ્વઓવસમિયા દાળલઢ્ઢી, એવં લાભલઢ્ઢી, ભોગલઢ્ઢી, ઉપભોગલઢ્ઢી)
ક્ષાયોપશમિકી દાનલબ્ધિ, લાભલબ્ધિ, ભોગલબ્ધિ અને ઉપભોગલબ્ધિ;
(સ્વઓવસમિયા વીર્યલઢ્ઢી) ક્ષાયોપશમિકી વીર્યલબ્ધિ, (એવં પંચીયવીર્યલઢ્ઢી,

बालपण्डितवीर्यलब्धिरिति बोध्यम् । अयं भावः-पण्डिताः=साधवः, बालाः=अविरताः, बालपण्डिताः=देशविरताः । एषां स्वस्ववीर्यान्तरायकर्मक्षयोपशमेन स्वस्ववीर्यलब्धिः प्रादुर्भवतीति । तथा-क्षायोपशमिकी श्रोत्रेन्द्रियलब्धिः यावत् क्षायोपशमिकी स्पर्शेन्द्रियलब्धिः । अत्र-इन्द्रियाणि लब्ध्युपयोगरूपाणि भावेन्द्रियाणि बोध्यानि, तेषां लब्धिः=मतिश्रुतज्ञानचक्षुरचक्षुर्दर्शनावरणक्षयोपशमजन्यत्वात् क्षायोपशमिकीति बोध्यम् । तथा-क्षायोपशमिक आचाराङ्गधर इत्यारभ्य क्षायोपशमिको वाचक इत्यन्तोऽपि श्रुतज्ञानावरणकर्मक्षयोपशमजन्यो बोध्यः । आचाराङ्गधरत्वादि पर्याया हि श्रुतज्ञानप्रभवाः, श्रुतज्ञानं च तदावरणकर्मक्षयोपशमेन निष्पद्यते, अत आचाराङ्गधरादयः क्षायोपशमिका बोध्या इति भावः ।

वीरियलब्धी) क्षायोपशमिकी वीर्यलब्धि, (एवं पण्डितवीरियलब्धी) पण्डित वीर्यलब्धि (बाल वीरियलब्धी) बालवीर्यलब्धि (बालपण्डितवीरियलब्धी) बालपण्डित वीर्यलब्धि (खओवसमिया सोइंदियलब्धी) क्षायोपशमिकी श्रोत्रेन्द्रियलब्धि (जाव) यावत् (खओवसमिया फासिंदियलब्धी) क्षायोपशमिकी स्पर्शन इन्द्रियलब्धि (खओवसमिए आचारंगधरे) क्षायोपशमिक आचारंगधारी, (एवं सुयगडंगधरे, ठाणंगधरे, समवायंगधरे, विवाहपण्णत्तिधरे, नायाधम्मकहाधरे) सूत्रकृताङ्गधारी, स्थानांगधारी, समवायाङ्गधारी, विवाहप्रज्ञसिधारी ज्ञाताधर्मकथाधारी (उवासगदसाधरे) उपासकदशाधारी, (अंतंगडदसाधरे) अन्तकृदशाधारी, (अणुत्तरोववाइयदसाधरे) अनुत्तरौपपातिक दशाधारी, (पण्हावागरणधरे) प्रश्नव्याकरणधारी, (विवाग सुयधरे) विपाक श्रुतधारी (खओवसमिए दिट्ठिवायधरे) क्षायोपशमिक दृष्टिवादधारी (खओवसमिए णवपुंन्वी) क्षायोपशमिक नव-

बालवीरियलब्धी, बालपण्डितवीरियलब्धी) क्षायोपशमिकी पण्डितवीर्यलब्धि, बालवीर्यलब्धि अने बालपण्डितवीर्यलब्धि.

(खओवसमिया सोइंदियलब्धी जाव खओवसमिया फासिंदियलब्धी) क्षायोपशमिकी श्रोत्रेन्द्रियलब्धिथी लधने क्षायोपशमिकी स्पर्शेन्द्रियलब्धिपर्यन्तनी पांच प्रकारनी लब्धिओ, (खओवसमिए आचारंगधरे) क्षायोपशमिक आचारंगधारी, (एवं सुयगडंगधरे, ठाणंगधरे, समवायंगधरे, विवाह पण्णत्तिधरे, नायाधम्मकहाधरे, उवासगदसाधरे, अणुत्तरोववाइयदसाधरे, पण्हावागरणधरे, विवागसुयधरे,) ओअ प्रभाण्ण क्षायोपशमिक सूत्रकृतांगधारी, स्थानांगधारी, समवायांगधारी, विवाहप्रज्ञसि (व्याख्याप्रज्ञसि)धारी, उपासकदशाधारी, अन्तकृतदशाधारी; अनुत्तरौपपातिक दशाधारी, प्रश्नव्याकरणधारी विपाकश्रुतधारी, (खओवसमिए दिट्ठिवायधरे)

પ્રકૃતમુપસંહરનાહ-સ એષ ક્ષાયોપશમનિષ્પન્ન ઇતિ । ક્ષાયોપશમિકો ભાવઃ પ્રરૂપિત ઇતિ સૂચયિતુમાહ-સ એષ ક્ષાયોપશમિક ઇતિ ॥સૂ. ૧૫૬॥

પૂર્વધારી (સ્વઓવસમિષ્ણ જાવ ચડદસ પુઞ્વી) ક્ષાયોપશમિક યાવત્ ચતુર્દશપૂર્વધારી (સ્વઓવસમિષ્ણ ગણી) ક્ષાયોપશમિક ગણી સ્વઓવસમિષ્ણ વાયવ) ક્ષાયોપશમિકવાચક (સે તં સ્વઓવસમ્મનિષ્ણ) હસપ્રકાર યે સ્વ ક્ષાયોપશમ નિષ્ણ હૈં (સે તં સ્વઓવસમિષ્ણ) યહ વહ ક્ષાયોપશમિક હૈ । -

ભાવાર્થ-હસ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારને ક્ષાયોપશમિક ક્યા હૈ હસકા વિવેચન કિયા હૈ । ઉન્હોને કહા-હૈ કિ એક તો ક્ષાયોપશમ હી ક્ષાયોપશમિક હૈ ઓર દૂસરા ક્ષાયોપશમ નિષ્ણ ક્ષાયોપશમિક હૈ । હનમેં ચાર ઘાતિક કર્મોં કા ક્ષય ઉપલક્ષિત જો ઉપશમ હૈ વહ ક્ષાયોપશમિક હૈ । ક્ષાયોપશમિક જ્ઞાન કે આવારક જો કર્મ હૈં હનમેં સર્વઘાતિસ્પર્દક (કર્માંશ) ઓર દેશઘાતિસ્પર્દક યે દોનોં પ્રકાર કે સ્પર્દક પાયે જાતે હૈં । હસલિયે હનકા ક્ષાયોપશમ હોતા હૈ । નવ નોકષાયોં મેં કેવલ દેશઘાતિસ્પર્દક હી પાયે જાતે હૈં હસલિયે હનકા ક્ષાયોપશમ નહીં હોતા કેવલ જ્ઞાનાવરણ આદિ પ્રકૃતિયોં મેં કેવલ સર્વઘાતિસ્પર્દક પાયે જાતે હૈં

ક્ષાયોપશમિક દૃષ્ટિવાદધારી, (સ્વઓવસમિષ્ણ જગપુઞ્વી) ક્ષાયોપશમિક નવપૂર્વધારીથી લઇને (સ્વઓવસમિષ્ણ જાવ ચડદસપુઞ્વી) ક્ષાયોપશમિક ચૌદ પૂર્વધારી પર્યન્તના જીવો, (સ્વઓવસમિષ્ણ ગણી) ક્ષાયોપશમિક ગણી, (સ્વઓવસમિષ્ણ વાયવ) અને ક્ષાયોપશમિક વાયવક (સે તં સ્વઓવસમનિષ્ણ) આ બધા ક્ષાયોપશમ નિષ્ણ ભાવો છે. (સે તં સ્વઓવસમિષ્ણ) ક્ષાયોપશમિકનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે.

ભાવાર્થ-આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે ક્ષાયોપશમિક ભાવના સ્વરૂપનું વિવેચન કર્યું છે તેમાં તેમણે એવું પ્રતિપાદન કર્યું છે કે એક તો ક્ષાયોપશમ જ ક્ષાયોપશમિક છે અને બીજું ક્ષાયોપશમનિષ્ણ ક્ષાયોપશમિક છે. ચાર ઘાતિયા કર્મોના ક્ષયથી ઉપલક્ષિત જે ઉપશમ છે, તેનું નામ ક્ષાયોપશમિક છે. ક્ષાયોપશમિક જ્ઞાનનું આવરણ કરનારા જે કર્મો છે તેમાં સર્વઘાતિ સ્પર્દકો અને દેશઘાતિ સ્પર્દકો રૂપ બન્ને પ્રકારના સ્પર્દકોનો સદ્ભાવ રહે છે.

इसलिये उनका भी क्षयोपशम नहीं होता है। यद्यपि प्रत्याख्यानावरण और अप्रत्याख्यानावरण कषाय सर्वघाति ही हैं—किन्तु उन्हें अपेक्षा-कृत देशघाति मान लिया जाता है इसलिये अनंतानुबन्धी आदि का क्षयोपशम बन जाता है। अघातिया कर्मों में तो देशघाति और सर्व-घाति यह विकल्प ही संभव नहीं, इसलिये उनके क्षयोपशम का प्रश्न ही नहीं उठता। अतः सूत्रकारने यह तो क्षयोपशम की सामान्य योग्यता का विवेचन किया है। क्षयोपशम और उपशम में केवल अन्तर इतना ही है कि क्षयोपशम में कितनेक सर्वघातिस्पर्द्धकों का उदयाभावी क्षय रहता है और कितनेक उन्हीं सर्वघातिस्पर्द्धकों का सदवस्था रूप उपशम रहता है—तथा देशघातिस्पर्द्धकों का उदय रहता है। तब कि उपशम में किसी का भी उदय नहीं रहता है। सबका उपशम ही रहता है—

अब सूत्रकार यह कहते हैं कि किन २ कर्मों के क्षयोपशम से कौन २ से भाव प्रकट होते हैं—मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण अवधि-ज्ञानावरण, और मनःपर्यवज्ञानावरण के क्षयोपशम से मति, श्रुत,

તેથી તેમનો ક્ષયોપશમ થાય છે. નવ નોઠપાયોમાં કેવળ દેશઘાતિ સ્પર્દ્ધકો (કર્મદલિકો)નો જ સદ્ભાવ હોય છે, તેથી તેમનો ક્ષયોપશમ થતો નથી કેવળજ્ઞાનાવરણ આદિ પ્રકૃતિઓમાં કેવળ સર્વઘાતિ સ્પર્દ્ધકોનો જ સદ્ભાવ હોય છે, તેથી તેમનો ક્ષયોપશમ પણ થતો નથી જો કે પ્રત્યાખ્યાનાવરણ અને અપ્રત્યાખ્યાનાવરણ કષાય સર્વઘાતિ જ છે, પરંતુ તેમને અપેક્ષાકૃત દેશઘાતિ માની લેવામાં આવેલ છે, તેથી અનંતાનુબંધી આદિનો ક્ષયોપશમ સંભવિત બની જાય છે. અઘાતિયા કર્મોમાં તો દેશઘાતિ અને સર્વઘાતિ રૂપ વિકલ્પ જ સંભવી શકતો નથી, તેથી તેમના ક્ષયોપશમનો તો પ્રશ્ન જ ઉદ્ભવતો નથી આ પ્રકારે સૂત્રકારે ક્ષયોપશમની સામાન્ય યોગ્યતાનું અહીં વિવેચન કર્યું છે ક્ષયોપશમ અને ઉપશમ વચ્ચે નીચે પ્રમાણેનું અંતર સમજવું—ક્ષયોપશમમાં કેટલાક સર્વઘાતિ સ્પર્દ્ધકોનો ઉદયાભાવી ક્ષય રહે છે અને કેટલાક સર્વઘાતિ સ્પર્દ્ધકોના સદવસ્થારૂપ ઉપશમ રહે છે તથા દેશઘાતિ સ્પર્દ્ધકોનો ઉદય રહે છે પરંતુ ઉપશમમાં તેમનો ઉદય રહેતો નથી પણ ઉપશમ જ રહે છે.

હવે સૂત્રકાર એ વાત પ્રકટ કરે છે કે કયાં કયાં કર્મોના ક્ષયોપશમથી કયા કયા ભાવ પ્રકટ થાય છે—મતિજ્ઞાનાવરણ, શ્રુતજ્ઞાનાવરણ, અવધિજ્ઞાનાવરણ અને મનઃપર્યવજ્ઞાનાવરણ કર્મોના ક્ષયોપશમથી અનુક્રમે મતિજ્ઞાન, શ્રુત-

અવધિ ઓર મનઃપર્યવજ્ઞાન પ્રકટ હોતે હૈં । સૂત્ર મેં લબ્ધિ શબ્દ કા અર્થ પ્રાપ્તિ હૈ । યહ સ્ત્રીલિંગ હૈં હસલિયે “ક્ષાયોપશમિકી” શબ્દ મી સ્ત્રીલિંગ મેં વ્યવહૃત કિયા ગયા હૈં । અપને ૨ આચારક કર્મોં કે ક્ષયોપશમ સે મતિજ્ઞાનાદિકોં કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈં । હસલિયે યહ પ્રાપ્તિ ક્ષાયોપશમિકી હૈં । કેવલજ્ઞાન કો ક્ષયોપશમિક નહીં માના ગયા હૈં । વહ તો ક્ષાયિક હૈં । કયોં કિ યહ કેવલજ્ઞાનાવરણ કે ક્ષય સે હોતા હૈં ।

શંકા-યદિ કેવલજ્ઞાન, કેવલજ્ઞાનાવરણ કર્મ કે ક્ષય સે હોતા હૈ-તો ફિર ઉસે એસા કયોં કહા જાતા હૈં કિ યહ જ્ઞાનાવરણ કર્મ કે ક્ષય સે હોતા હૈં ?

ઉત્તર-આત્મા કા સ્વભાવ કેવલજ્ઞાન હૈં । હસે કેવલજ્ઞાનાવરણ આવૃત કિયે હુણ હૈં । તથાપિ વહ પૂરા આવૃત નહીં હો-પાતા, અતિમન્દ જ્ઞાન પ્રકટ હી બના રહતા હૈં । જિસે મતિજ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મ આવૃત ફરતે હૈં, હસસે સ્પષ્ટ હૈં કિ કેવલજ્ઞાન કો પ્રકટ ન હોને દેના જ્ઞાનાવરણ કે પાંચોં ભેદોં કા સાક્ષાત્ રોકતા હૈં ઓર મતિજ્ઞાનાવરણ આદિ પરંપરા સે । હસલિયે જ્ઞાનાવરણકર્મ કે ક્ષય સે કેવલજ્ઞાન હોતા હૈં

જ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન અને મનઃપર્યવજ્ઞાન પ્રકટ થાય છે. સૂત્રમાં જે ‘લબ્ધિ’ પદ વપરાયુ છે તેનો અર્થ ‘પ્રાપ્તિ’ સમજવો. ‘લબ્ધિ’ પદ સ્ત્રીલિંગમાં હોવાથી તેની સાથે ‘ક્ષાયોપશમિકી’ આ પદનો પણ સ્ત્રીલિંગમાં જ પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે. મતિજ્ઞાન આદિકોની પ્રાપ્તિ ત્યારે જ થાય છે કે જ્યારે તે પ્રત્યેક જ્ઞાનના આવરક (આવરણ કરનારાં) કર્મોનો ક્ષયોપશમ થાય છે. તેથી તેમની તે પ્રાપ્તિને ક્ષાયોપશમિકી કહી છે. કેવળજ્ઞાનને ક્ષયોપશમિક ગણવામાં આવતું નથી, તેને તો ક્ષાયિક જ ગણવામાં આવે છે, કારણ કે કેવળજ્ઞાનાવરણ કર્મના ક્ષયથી જ કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થાય છે.

શંકા-જો કેવળજ્ઞાનાવરણ કર્મના ક્ષયને લીધે કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત થતું હોય, તો એવું શા માટે કહેવામાં આવે છે કે જ્ઞાનાવરણ કર્મનો ક્ષય થવાથી કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે ?

ઉત્તર-આત્માનો સ્વભાવ કેવળજ્ઞાન છે તેના ઉપર કેવળજ્ઞાનાવરણ કર્મનું આવરણ હોય છે છતાં પણ તે પૂરેપૂરું આવૃત થઈ શકતું નથી અતિ મન્દ જ્ઞાન પ્રકટ જ થતું રહે છે, કે જેને મતિજ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મ આવૃત કરે છે. તેથી એ વાત સ્પષ્ટ થાય છે કે કેવળજ્ઞાનને પ્રકટ ન થવા દેવામાં જ્ઞાનાવરણના પાંચે ભેદો કારણભૂત બને છે કેવળજ્ઞાનાવરણ કર્મ કેવળજ્ઞાનને સાક્ષાત્ રૂપે રોકે છે અને મતિજ્ઞાનાવરણ આદિ ચાર કર્મો તેને પરંપરા

એસા કહા જાતા હૈ । મતિઅજ્ઞાનાવરણ, શ્રુતઅજ્ઞાનાવરણ, ઓર વિભંગજ્ઞાનાવરણ કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે મત્યજ્ઞાન, શ્રુતાજ્ઞાન, ઓર વિભંગજ્ઞાન પ્રકટ હોતે હૈ । યહાં અજ્ઞાન સે તાત્પર્ય જ્ઞાનાભાવ સે નહીં હૈ, કયોં કિ જ્ઞાનાવરણ રૂપ અજ્ઞાન ઔદયિક ભાવ હૈ । યહ જ્ઞાનાવરણ કર્મ કે ઉદય સે હોતા હૈ । કિન્તુ કુત્સિત જ્ઞાન કા નામ અજ્ઞાન હૈ । જય મતિજ્ઞાન આદિ મિથ્યાદર્શન કે ઉદય સે દૂષિત હોતે તય વે કુત્સિતજ્ઞાન કહલાતે હૈ । વિભંગ મેં ભંગશબ્દ પ્રકરણવશ અવધિવાચક હૈ । વૈસે તો યહ પ્રકાર ભેદ-કા વાચક હૈ । ઓર “વિ” શબ્દ વિરૂપ-કુત્સિત અર્થ કા વાચક હૈ । હસ તરહ વિરૂપઃ ભંગઃ વિભંગઃ વિભંગ એવ જ્ઞાનમ્” એસી હસકી વ્યુત્પત્તિ હૈ । હસ વિભંગ મેં જો જ્ઞાન પના હૈ, વહ અર્થ પરિજ્ઞાનાત્મક હોને સે હૈ । મિથ્યાદૃષ્ટિ દેવાદિકોં કા અવધિજ્ઞાન વિભંગજ્ઞાન કહલાતા હૈ । ચક્ષુર્દર્શનાવરણ, અચક્ષુર્દર્શનાવરણ, ઓર અવધિદર્શનાવરણ કે ક્ષયોપશમ સે ચક્ષુર્દર્શન અચક્ષુર્દર્શન ઓર અવધિદર્શન પ્રકટ હોતે હૈ । હસલિયે ક્ષાયોપશમિક સમ્પદર્શન

રૂપે રોકે છે. તેથી “જ્ઞાનાવરણકર્મના ક્ષયથી કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે.” એવું કહેવામાં આવે છે.

મતિઅજ્ઞાનાવરણ, શ્રુતઅજ્ઞાનાવરણ અને વિભંગજ્ઞાનાવરણ કર્મના ક્ષયોપશમથી અનુક્રમે મત્યજ્ઞાન, શ્રુતાજ્ઞાન અને વિભંગજ્ઞાન પ્રકટ થાય છે. અહીં “અજ્ઞાન” પદ દ્વારા જ્ઞાનાભાવ સમજવાનો નથી કારણ કે જ્ઞાનાભાવ રૂપ અજ્ઞાન તો ઔદયિક ભાવરૂપ છે, અને જ્ઞાનાવરણ કર્મના ઉદયથી તે ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે. પરંતુ કુત્સિતજ્ઞાનને અજ્ઞાન કહે છે. જ્યારે મતિજ્ઞાન આદિ મિથ્યાદર્શનના ઉદયથી દૂષિત હોય છે, ત્યારે તેમને કુત્સિત જ્ઞાનરૂપ ગણવામાં આવે છે ‘વિભંગ’ પદમાં જે “ભંગ” પદ છે તે અહીં અવધિવાચક છે. આમ તો તે પદ પ્રકારભેદનું વાચક ગણાય છે. અને “વિ” પદ વિરૂપકુત્સિત અર્થનું વાચક છે. વિભંગજ્ઞાનની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે થાય છે—“વિરૂપઃ ભંગઃ વિભંગઃ વિભંગ એવ જ્ઞાનં વિભંગજ્ઞાનમ્” આ વિભંગમાં જે જ્ઞાનપણ છે તે અર્થપરિજ્ઞાનાત્મકતાની અપેક્ષાએ છે. મિથ્યાદૃષ્ટિ દેવાદિકોના અવધિજ્ઞાનને વિભંગજ્ઞાન કહે છે ચક્ષુર્દર્શનાવરણ, અચક્ષુર્દર્શનાવરણ અને અવધિદર્શનાવરણ કર્મના ક્ષયોપશમથી અનુક્રમે ચક્ષુર્દર્શન અચક્ષુર્દર્શન અને અવધિદર્શન પ્રકટ થાય છે. તેથી તેમને પણ ક્ષાયોપશમિક કહેવામાં આવેલ છે. મિથ્યાત્વકર્મના ક્ષયોપશમથી ક્ષયોપશમિક સમ્પદ

કી પ્રાપ્તિ મિથ્યાત્વ કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હોતી હૈ । હસી પ્રકાર સે ઓર બી લબ્ધિયોં મેં યથાસંભવ ક્ષાયોપશમિકતા જાન લેની ચાહિયે । વીર્ય લબ્ધિ વીર્યાન્તરાય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હોતી હૈ । હસી પ્રકાર સે પંડિતવીર્ય લબ્ધિ બાલવીર્ય લબ્ધિ, બાલપંડિતવીર્ય લબ્ધિ કો બી જાનના ચાહિયે । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ-પંડિત સે યહાં સાધુજન બાલ સે અવિરતિજન, ઓર બાલપંડિત સે દેશવિરતજન લિયે ગયે હૈં । ઇનકો અપને ૨ વીર્યાન્તરાય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે અપની ૨ વીર્યલબ્ધિ પ્રકટ હોતી હૈ ।

સમ્યગ્મિથ્યાદર્શનલબ્ધિ સમ્યક્ત્વ કા ભેદ હૈ । હસલિયે યહ લબ્ધિ મિથ્યાત્વકર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હોતી હૈ । સામાયિકચારિત્રલબ્ધિ, હેદોપસ્થાપનલબ્ધિ, પરિહારવિશુદ્ધિકલબ્ધિ, સૂક્ષ્મ સંપરાયચારિત્રલબ્ધિ ઓર ચારિત્રાચારિત્રલબ્ધિ યે સબ ચારિત્ર-મોહનીય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હોતી હૈ હસીલિયે ઇનમેં ક્ષાયોપશમિકતા હૈ । સંયત કે કર્મોં કો નિવારણ કરને કે લિયે જો અન્તરંગ ઓર બહિરંગ પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ વહ ચારિત્ર હૈ-અર્થાત્ આત્મિક શુદ્ધ દશા મેં સ્થિર રહને કા પ્રયત્ન કરના હી ચારિત્ર હૈ । પરિણામ શુદ્ધિ કે તરતમ ભાવ કી અપેક્ષા ઓર નિમિત્ત ભેદ સે

ઘટશંનની પ્રાપ્તિ થાય છે. એજ પ્રમાણે બીજી બધી સૂત્રોક્ત લબ્ધિઓમાં પણ યથાસંભવ ક્ષાયોપશમિકતા સમજી લેવી. વીર્યાન્તરાય કર્મના ક્ષયોપશમથી વીર્યલબ્ધિ પ્રકટ થાય છે. એજ પ્રમાણે પંડિતવીર્ય લબ્ધિ, બાલ વીર્યલબ્ધિ અને બાલપંડિતવીર્ય લબ્ધિને પણ ક્ષાયોપશમિક જ સમજવી જોઈએ. પંડિતપદ અહીં સાધુજનનું, બાલપદ અવિરતયુક્તજનનું અને બાલ-પંડિતપદ દેશવિરત જનનું વાચક છે. તેમને પોતપોતાના વીર્યાન્તરાય કર્મના ક્ષયોપશમ થવાથી પંડિતવીર્ય લબ્ધિ આદિની પ્રાપ્તિ થાય છે.

સમ્યગ્મિથ્યાદર્શન લબ્ધિ સમ્યક્ત્વના એક ભેદ રૂપ છે. તેથી મિથ્યાત્વ કર્મના ક્ષયોપશમથી તે લબ્ધિની પ્રાપ્તિ થાય છે, સામાયિક ચારિત્ર લબ્ધિ, હેદોપસ્થાપનલબ્ધિ, પરિહાર વિશુદ્ધિક લબ્ધિ, સૂક્ષ્મ સંપરાય લબ્ધિ અને ચારિત્રચારિત્ર લબ્ધિ, આ બધી લબ્ધિઓની પ્રાપ્તિ ચારિત્રમોહનીય કર્મના ક્ષયોપશમને લીધે થાય છે, તેથી તેમનામાં ક્ષાયોપશમિકતા સમજવી જોઈએ. કર્મોદ્ નિવારણ કરવા માટે સંયત જે અન્તરંગ અને બહિરંગ પ્રવૃત્તિ કરે છે તેનું નામ ચારિત્ર છે. એટલે કે આત્મિક શુદ્ધ દશામાં સ્થિર રહેવાનો પ્રયત્ન કરવો તેનું જ નામ ચારિત્ર છે. પરિણામ શુદ્ધિના

चारित्र के सामायिक आदि पांच विभाग किये गये हैं। विशेष खुलासा इस प्रकार से है—सामायिक का अर्थ है सम्यक्त्व, ज्ञान, संयम और तप इनके साथ ऐक्य स्थापित करने की अर्थात् समभाव में स्थिर रहने के लिये सम्पूर्ण अशुद्ध प्रवृत्तियों को त्याग करने की आत्मपरिणामों की वृत्ति बनाये रखना। इस सामायिक चारित्र की प्राप्ति सामायिक चारित्र लब्धि है। सामायिक चारित्र में रागद्वेष का निरोध कर के सब आवश्यक कर्तव्यों में समता बनाये रखना ही होता है। इसके नियत-काल और अनियतकाल ऐसे दो भेद होते हैं। जिनका समय निश्चित है ऐसे स्वाध्याय आदि नियतकाल सामायिक है। और जिन का समय नियत नहीं है ऐसे ईर्ष्यापथ आदि अनियतकाल सामायिक है। जैसे अहिंसाव्रत सब व्रतों का मूल है, वैसे ही सामायिक चारित्र सब चारित्रों का मूल है। मैं “सर्वसावद्ययोग से जीवन पर्यन्त विरत हूँ” इस एक व्रत में समावेश हो जाने से एक सामायिक व्रत माना है और वही एक व्रत पांच रूप से विवक्षित होने के कारण छेदोपस्थापना चारित्र कहलाता है। प्रथम दीक्षा लेने के बाद विशिष्ट श्रुत का अभ्यास

ततश्च लावनी अपेक्षाये अने निमित्त लेहनी अपेक्षाये चारित्रना सामायिक आदि पांच विभाग पाठवामां आख्या छे. तेनुं वधु स्पर्ष्टीकरण आ प्रमाणे छे—सम्यक्त्व, ज्ञान, संयम अने तपनी साथे ऐक्य स्थापित करवानी—अष्टदे के समभावमां स्थिर रहवाने भाटे समस्त अशुद्ध प्रवृत्तियोंना त्याग करवानी आत्मपरिणामोनी वृत्ति राखवी तेनुं नाम सामायिक छे आ सामायिक चारित्रनी प्राप्तिनुं नाम सामायिक चारित्र लब्धि छे. सामायिक चारित्रनी आराधनामां रागद्वेषना निरोध करीने सधणां आवश्यक कर्तव्योमां सदा समभाव न राखवे पडे छे. तेना नियतकाल अने अनियतकाल इप ने लेहो छे जेभनो समय निश्चित छे ओवां स्वाध्याय आदिने नियतकाल सामायिक कडे छे. जेभनो समय नियत नथी ओवा ईर्ष्यापथ आदिने अनियतकाल सामायिक कडे छे. जेभ अहिंसाव्रतने सधणां व्रतानुं भूण मानवामां आवे छे, ओन प्रमाणे सामायिक चारित्रने सधणां चारित्रानुं भूण मानवामां आवे छे. “हुं एवमपर्यन्त सर्व सावद्ययोगोऽथी विरत थडि छुं” आ ओक व्रतमां समावेश थडि नवने कारणे सामायिक व्रतने ओक न व्रत गणवामां आख्या छे. अने ओन ओक व्रत पांच इपे विवक्षित थवने कारणे छेदोपस्थापना चारित्र कडेवाय छे. प्रथम दीक्षा लीधा आदि विशिष्ट

કર ચુકને પર વિશેષ શુદ્ધિ કે નિમિત્ત જો જીવન પર્યન્ત પુનઃ દીક્ષા લી જાતી છે એવું પ્રથમ લી હુઈ દીક્ષા કા છેદ કરકે ફિર નવેસિરે સે જો દીક્ષા કા આરોપણ કિયા જાતા છે-વહ છેદોપસ્થાપન ચારિત્ર છે. જિસમેં ઘાસ વિશિષ્ટ પ્રકાર કે તપઃ પ્રધાન આચાર કા પાલન કિયા જાતા છે વહ પરિહારવિશુદ્ધિ ચારિત્ર છે. જિસમેં ક્રોધ આદિ કષાયોં કા તો ઉદય નહીં હોતા, સિર્ફ લોભ કા અંશ અતિ સૂક્ષ્મરૂપ મેં રહતા છે, વહ સૂક્ષ્મ સંપરાય ચારિત્ર છે. યહ ચારિત્ર કેવલ દશવેં ગુણસ્થાન મેં હોતા છે. ચારિત્રાચારિત્ર કા નામ દેશ ચારિત્ર છે. યહ અનન્તાનુબન્ધી આદિ અષ્ટવિધ કષાય કે ક્ષયોપશમ આદિ સે આવિર્ભૂત હોતા છે. તથા સર્વવિરતિ રૂપ ચારિત્ર અનન્તાનુબન્ધી આદિ ૧૨ પ્રકાર કે કષાય કે ક્ષાયોપશમ આદિ સે આવિર્ભૂત હોતા છે. દાન, લાંભ, ભોગ, ઉપભોગ ઓર વીર્ય ઇનકી લઙ્ઘિ વીર્યન્તરાય કર્મ કે દાનાન્તરાય આદિ કે ક્ષાયોપશમ આદિ સે હોતી છે,, । શ્રોત્રેન્દ્રિય સે લેકર જો સ્પર્શનેન્દ્રિય તક કી લઙ્ઘિયાં કહી હેં । વે દ્રવ્યેન્દ્રિય કી અપેક્ષા સે નહીં કહી હેં, કિન્તુ ભાવેન્દ્રિય કી અપેક્ષા સે કહી હેં ।

શ્રુતનો અભ્યાસ કરી લીધા બાદ વિશેષશુદ્ધિને નિમિત્તે જે જીવનપર્યન્તની પુનઃ દીક્ષા લેવામાં આવે છે અને પ્રથમ લીધેલી દીક્ષાનો છેદ કરીને (ત્યાગ કરીને) ફરી નવેસરથી જે દીક્ષાનું આરોપણ કરવામાં આવે છે, તેનું નામ છેદોપસ્થાપન ચારિત્ર છે. જેમાં વિશિષ્ટ પ્રકારના તપઃ પ્રધાન આચારનું પાલન કરવામાં આવે છે, તેનું નામ પરિહારવિશુદ્ધિ ચારિત્ર છે. જે ચારિત્રમાં ક્રોધાદિ કષાયોનો ઉદય રહેતો નથી, પરંતુ લોભનો અંશ અતિ સૂક્ષ્મ પ્રમાણમાં બાકી રહી જાય છે એવા ચારિત્રનું નામ સૂક્ષ્મ સંપરાય ચારિત્ર છે. દસમાં ગુણસ્થાનમાં જે આ ચારિત્રનો સદ્સાવ રહે છે અંશતઃ ચારિત્ર અથવા દેશચારિત્રને ચારિત્રાચારિત્ર કહે છે. અનન્તાનુબન્ધી આદિ આઠ પ્રકારના કષાયના ક્ષયોપશમ આદિથી તેનો આગિર્ભાવ થાય છે. સર્વવિરતિ રૂપ ચારિત્ર અનન્તાનુબન્ધી આદિ ૧૨ પ્રકારના કષાયના ક્ષયોપશમ આદિથી આવિર્ભૂત (પ્રકટ) થાય છે. અન્તરાય કર્મના પ્રકાર રૂપ દાનાન્તરાય, લાભાન્તરાય, લોભાન્તરાય, ઉપલોભાન્તરાય અને વીર્યાન્તરાય કર્મના ક્ષયોપશમથી અનુક્રમે દાનલઙ્ઘિ, લાભલઙ્ઘિ, ઉપલોભલઙ્ઘિ અને વીર્યલઙ્ઘિની પ્રાપ્તિ થાય છે. એજ પ્રમાણે શ્રોત્રેન્દ્રિયથી લઈને સ્પર્શેન્દ્રિયલઙ્ઘિ પર્યન્તની પણ પાંચ લઙ્ઘિઓ કહી છે. આ પાંચ લઙ્ઘિઓ દ્રવ્યેન્દ્રિયની અપેક્ષાએ કહી નથી, પણ ભાવે-

સમ્પ્રતિ પારિણામિકં નામ નિરૂપયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં પારિણામિષ ? પારિણામિષ દુવિહે પળ્લન્તે, તં જહા—સાહપારિણામિષ ય અણાહપારિણામિષ ય । સે કિં તં સાહપારિણામિષ ? સાહપારિણામિષ અળેગવિહે પળ્લન્તે તં જહા—જુળ્લસુરા, જુળ્લગુલો જુળ્લઘયં જુળ્લતંદુલા ચેવ । અબ્ભા ય અબ્ભરુક્ખા સંઙ્ગાગંધવળ્લગરા ય ॥૧॥ ઉક્કાવાયા દિસાદાહા

ભાવેન્દ્રિયલબ્ધિ ઉપયોગ કે ભેદ સે દો પ્રકાર કી હૈ । इनकी लब्धि मति ज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, चक्षुर्दर्शनावरण, अचक्षुर्दर्शनावरण, के क्षयोपशम से होती है । तात्पर्य यह है कि मतिज्ञानावरणीय कर्म आदि का क्षायोपशम जो एक प्रकार का आत्मिक परिणाम है वह लब्धीन्द्रिय हैं । और लब्धि, निवृत्ति, तथा उपकरण इन तीनों के मिलने से जो रूपादि विषयों का सामान्य और विशेषबोध होता है वह उपयोगेन्द्रिय है । मतिज्ञान तथा चक्षु अचक्षुर्दर्शनरूप है । इसी प्रकार आचाराङ्ग, आदि १२ अंगों को धारण करने रूप तथा वाचकरूप पर्याये हैं वे सब श्रुतज्ञान प्रभव हैं । श्रुतज्ञान, श्रुतज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से होता है । इसलिये ये आचाराङ्गधर आदि पर्याये क्षायोपशमिक हैं । इस प्रकार क्षायोपशम निष्पन्न क्षायोपशमिक भाव का स्वरूप है ॥सू० १५५॥

ન્દ્રિયની અપેક્ષાએ કહી છે. ભાવેન્દ્રિયો લબ્ધિ ઉપયોગના લેદથી બે પ્રકારની છે મતિજ્ઞાનાવરણ, શ્રુતજ્ઞાનાવરણ, ચક્ષુઃદર્શનાવરણ અને અચક્ષુઃદર્શનાવરણના ક્ષયોપશમથી તેમની લબ્ધિ થાય છે. આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે, કે મતિજ્ઞાનાવરણીય કર્મ આદિના ક્ષયોપશમ, રૂપ જે એક પ્રકારનું આત્મિક પરિણામ છે, તે લબ્ધીન્દ્રિય રૂપ છે અને લબ્ધિ, નિવૃત્તિ તથા ઉપકરણ, આ ત્રણે મળવાથી રૂપાદિ વિષયોનો જે સામાન્ય અને વિશેષ બોધ થાય છે તે ઉપયોગેન્દ્રિય રૂપ છે ઉપયોગેન્દ્રિય મતિજ્ઞાન તથા ચક્ષુ અચક્ષુ દર્શન-રૂપ છે એજ પ્રમાણે આચારાંગ આદિ ૧૨ અંગને ધરણ કરવા રૂપ તથા વાચક રૂપ જે પર્યાયો છે તે શ્રુતજ્ઞાન સ્વરૂપ છે શ્રુતજ્ઞાનાવરણ કર્મના ક્ષયોપશમથી શ્રુતજ્ઞાન પ્રાપ્ત થાય છે, તેથી આચારાંગધર આદિ ૧૨ પર્યાયો પણ ક્ષાયોપશમિક છે. આ પ્રકારનું ક્ષયોપશમ નિષ્પન્ન ક્ષાયોપશમિક ભાવનું સ્વરૂપ છે. ॥સૂ० ૧૫૫॥

गजियं विज्जू णिग्घाया जूवया जक्खादिता धूमिया महिया
 रयुग्घाया चंदोवरागा सूरुवरागा चंदपरिवेसा सूरपरिवेसा पडि-
 चंदा पडिसूरा इंदधणू उदगमच्छा कविहसिया अमोहावासा
 वासधरा गाम्मा णगरा घरा पव्वया पायाला भवणा निरया
 रयणप्पहा सक्करप्पहा वालुयप्पहा पंकप्पहा धूमप्पहा तमप्पहा
 तमतमप्पहा सोहम्ममे जाव अच्चुए गेवेज्जे अणुत्तरे ईसिप्पभारा
 परमाणुपोगले दुपएसिए जाव अणंतपएसिए । से तं साइ-
 पारिणामए । से किं तं अणाइपारिणामए ? अणाइपारिणामिए
 धम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकाए आगासत्थिकाए जीवत्थिकाए
 पुग्गलत्थिकाए अद्दासमए लोए अलोए भवसिद्धिया अभव-
 सिद्धिया । से तं अणाइपारिणामिए । से तं पारिणामिए ॥सू० १५६॥

छाया—अथ कोऽसौ पारिणामिकः ? पारिणामिको द्विविधः प्रज्ञप्तः, तथा-
 सादिपारिणामिकश्च अनादिपारिणामिकश्च । अथ कोऽसौ सादिपारिणामिकः
 सादिपारिणामिकः—अनेकविधः प्रज्ञप्तः, तथा—जीर्णसुरा जीर्णगुडः जीर्णघृतम्
 जीर्णतण्डुलाश्चैव । अभ्राणि च अभ्रवृक्षाः संध्या गन्धर्वनगराणि च ॥१॥ उत्का-
 पाताः, दिग्दाहाः, गर्जितं, विद्युत्, निर्घाताः, यूपकाः, यक्षा दीप्तकानि,
 धूमिका, मिहिका, रजउद्धाताः, चन्द्रोपरागाः, सूर्योपरागाः, चन्द्रपरिवेष्टाः,
 सूर्यपरिवेष्टाः, प्रतिचन्द्राः, प्रतिसूर्याः, इन्द्रधनुः, उदकमत्स्याः, कपिहसितानि,
 अमोघा, वर्षाणि, वर्षधराः, ग्रामाः, नगराणि, गृहाः, पर्वताः, पातालाः, भव-
 नानि, निरया, रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, पङ्कप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा,
 तमस्तःप्रभा, सौधर्मो, यावत् अच्युतः, ग्रैवेयकः, अनुत्तरः, ईषत्प्राग्भारा, परमाणु
 पुद्गलो, द्विप्रदेशिको, यावत् अनन्तप्रदेशिकः । सएष सादिपारिणामिकः । अथ को-
 ऽसौ अनादिपारिणामिकः ? अनादिपारिणामिकः—धर्मास्तिकायः अधर्मास्तिकायः,
 आकाशास्तिकायः जीवास्तिकायः पुद्गलास्तिकायः अद्वासमयः, लोकः, अलोकः,
 भवसिद्धिकाः, अभवसिद्धिकाः, सएष अनादि पारिणामिकः । सएष पारिणा-
 मिकः ॥ सू ० १५६ ॥

टीका- 'से किं तं' इत्यादि-

अथ कोऽसौ पारिणामिकः ? इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरयति-पारिणामिकः-
परिणमनं=सर्वथाऽपरित्यक्तपूर्वावस्थस्य यद्रूपान्तरेण भवनं स परिणामः, उक्तं च-
“परिणामो ह्यर्थान्तरगमनं न च सर्वथा व्यवस्थानम् ।

न च सर्वथा विनाशः, परिणामस्तद्विदामिष्टः ॥ इति ।

स एव तेन वा निर्वृत्तः पारिणामिकः । स सादि पारिणामिकानादि पारिणामिकेति भेद-
द्वयविशिष्टः । तत्र सादिपारिणामिकः अनेकविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-जीर्णसुरा, जीर्णगुडो,

अथ सूत्रकार पारिणामिक भाव का निरूपण करते हैं-

“से किं तं पारिणामिए ?” इत्यादि ।

शब्दार्थः- (से किं तं पारिणामिए) हे भदन्त ! पारिणामिक भाव
क्या है ?

उत्तर-(पारिणामिए, दुबिहे पणत्ते) पारिणामिक भाव दो प्रकार
का-कहा गया है । (तंजहा) वे प्रकार ये हैं-(साहपारिणामिए य अणाह
पारिणामिए य सादि पारिणामिक और अनादि पारिणामिक । जिसमें
द्रव्य की पूर्वअवस्था का तो सर्वथा परित्याग हो नहीं और एक अवस्था
से दूसरी अवस्थाएँ होती रहें इसीका नाम परिणमन-परिणाम है ।
कहा भी है-“परिणामो” इत्यादि यही बात अन्यत्र कही है, कि
एक अवस्था से दूसरी अवस्था का होना यही परिणाम है । अर्थात् स्व-
रूप में स्थित रहकर उत्पन्न तथा नष्ट होना परिणाम है, सर्वथा व्यवस्थान

इवे सूत्रकार पारिणामिक भावना स्वरूपं निरूपयति-

“से किं तं पारिणामिए” इत्यादि-

शब्दार्थः-(से किं तं पारिणामिए ?) हे भगवन् ! पारिणामिक भाव
स्वरूपं केवुं छे ?

उत्तर-(पारिणामिए दुबिहे पणत्ते, तंजहा) पारिणामिक भावना नीचे प्रमाण
के प्रकार कही छे-(साह पारिणामिए य अणाह पारिणामिए य) (१) सादि पारि-
णामिक अने (२) अनादि पारिणामिक के परिणामां द्रव्यनी पूर्व अवस्थानो
सर्वथा परित्याग थतो न होय जेवी रीते जेक अवस्थाभांथी भील अवस्थाओ
थती रडे, जेवा परिणमनने सादिपरिणाम कडे छे कहुं पण छे के-“परिणामो”
इत्यादि जे वात भील जग्याजे पण आ प्रमाणे न कही छे-जेक अव-
स्थाभांथी भील अवस्था इय परिणमन थवुं तेनुं नाम परिणाम छे

યા સર્વથા વિનાશ પરિણામ નહીં હૈ । પરિણામ કા દૂસરા નામ પર્યાય હૈ । જિસ દ્રવ્ય કા જો સ્વભાવ હૈ ઉસી કે ખીતર ઉસકા પરિણમન-પરિવર્તન હોતા હૈ । જૈસે મનુષ્ય બાલક સે ઓર યુવા યુવા સે વૃદ્ધ હોતા હૈ પર વહ મનુષ્યત્વ કા પરિત્યાગ નહીં કરતા, વૈસે હી પ્રત્યેક દ્રવ્ય અપની મર્યાદા કે ખીતર રહતા હુઆ હી પરિવર્તન કરતા રહતા હૈ । વહ ન તો સર્વથા નિત્ય હૈ ઓર ન સર્વથા ક્ષણિક હી । નૈયાયિક આદિ ભેદવાદી દર્શન જો ગુણ ઓર દ્રવ્ય કા સર્વથા-એકાન્ત-ભેદ માનતે હૈં ઉનકે મન્તવ્યાનુસાર દ્રવ્ય તો સર્વથા અવિકૃત રહતા હૈ ઓર ગુણ ઉસમેં ઉત્પન્ન વિનષ્ટ હોતે રહતે હૈં યહી વહ પરિણામ હૈ । તથા બૌદ્ધલોગ વસ્તુમાત્ર કોં ક્ષણસ્થાયી ઓર નિરન્વય વિનાશી માનતે હૈં, ઉનકે મતાનુસાર પરિણામ કા અર્થ ઉત્પન્ન હોકર વસ્તુ કા સર્વથા નાશ હો જાના એસા નિકલતા હૈ । ઇન્હી મન્તવ્યોં કા નિરાકરણ કરને કે નિમિત્ત “ન ચ સર્વથા વ્યવસ્થાનમ્” ન ચ સર્વથા વિનાશઃ પરિણામઃ” એસા કહા હૈ । અતઃ ‘અર્થાન્તરગમનપરિણામઃ’ યહી પરિણામ કા લક્ષણ યુક્તિ યુક્ત હૈ । એસા જો પરિણામ હૈ વહી પારિણામિક હૈ અથવા ઇસ

એટલે કે સ્વરૂપમાં સ્થિત રહીને ઉત્પન્ન તથા નષ્ટ થવું તેનું નામ પરિણામ છે સર્વથા વ્યવસ્થાન અથવા સર્વથા વિનાશને પરિણામ કહી શકાય નહીં પરિણામનું ખીણું નામ પર્યાય છે. જે દ્રવ્યનો જે સ્વભાવ છે તે સ્વભાવમાં રહીને જ તેનું પરિણમન (પરિવર્તન) થાય છે. જેમ કે મનુષ્ય બાલક ક્રમાંથી યુવાન અને યુવાનમાંથી વૃદ્ધ બને છે, પરંતુ તે મનુષ્યત્વનો પરિત્યાગ કરતો નથી. એજ પ્રમાણે પ્રત્યેક દ્રવ્ય પોતાની મર્યાદામાં રહીને જ પરિણમન પામતું રહે છે. તે સર્વથા નિત્ય પણ નથી અને સર્વથા ક્ષણિક પણ નથી. નૈયાયિક આદિ ભેદવાદી દર્શન જે ગુણ અને દ્રવ્યનો સર્વથા (એકાન્તતઃ) ભેદ માને છે તેમની માન્યતા પ્રમાણે દ્રવ્ય તો સર્વથા અવિકૃત જ રહે છે, અને તેમાં ગુણની ઉત્પત્તિ તથા વિનાશ થતો રહે છે. તેનું નામ જ પરિણામ છે. ખીદ્ધ મતવાદીઓ વસ્તુ માત્રને ક્ષણસ્થાયી અને નિરન્વય વિનાશી માને છે. તેમના મત પ્રમાણે પરિણામનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે—“ઉત્પન્ન થઈને વસ્તુનો સર્વથા નાશ થઈ જવો તેનું નામ પરિણામ છે” આ માન્યતાઓનું ખંડન કરવા માટે સૂત્રકારે અહીં આ પ્રકારનું કથન કર્યું છે—“ન ચ સર્વથા વિનાશઃ પરિણામઃ” તેથી “અર્થાન્તરગમનપરિણામઃ” આ પરિણામનું લક્ષણ જ યુક્તિયુક્ત લાગે છે. એવું જે પરિણામ છે, એજ પારિણામિક છે. અથવા તે પરિણામથી જે નિષ્પન્ન છે, તેનું નામ જ પારિણામિક છે.

જીર્ણઘૃતં, જીર્ણતંદુલાં ઇતિ । અત્ર જીર્ણત્વપરિણામસ્ય સાદિત્વાત્ સાદિપારિણામિકતા બોધ્યા સુરાદિ-દ્રવ્યાણિ નવ્યજીર્ણોભયાવસ્થયોરપ્યનુગતાનિ । તત્ર નવ્યતાયાં નિવૃત્તાયાં જીર્ણતારુપેણયઃ પરિણામઃ સસુલાવબોધો ભવતિ, અતો જીર્ણેતિ વિશેષણવિશિષ્ટાઃ સુરાદયઃ શબ્દા ઉક્તાઃ । સુરાદિદ્રવ્યાણાં તું નવ્યાવસ્થાયામપિ સાદિ પારિણામિકત્વમસ્ત્યેવ । કારણદ્રવ્યસ્યૈવ નૂતનસુરાદિરુપેણ પરિણમનાત્, પરિણામ સે જો નિર્વત્તિ (નિષ્પન્ન) હૈ વહ પારિણામિક હૈ । (સે કિં તં સાદિપારિણામિય ?) હે ભદન્ત । સાદિપારિણામિક કયા હૈ ?

ઉત્તર—(સાદિપારિણામિય અણેગવિદે પળ્લત્તે) સાદિ પારિણામિક અનેક પ્રકાર કા કહા ગયો હૈ । (તં જહા) જૈસે—(જુળ્ણસુરા, જુળ્ણગુલો, જુળ્ણઘયં, જુળ્ણતંદુલાં ચેવ) જીર્ણસુરા, જીર્ણગુહ, જીર્ણઘૃત, જીર્ણતંદુલ, સુરા મેં, ગુહ મેં ઘૃત મેં, એવં તંદુલોં મેં જો જીર્ણપર્યાયરૂપ પરિણામ આયા હૈ વહ સાદિ હૈ । ક્યોંકિ જીર્ણતા કે કાલકી પૂર્વકોટિ જ્ઞાત હો સકતી હૈ । સુરાદિ દ્રવ્ય નવ્ય પર્યાય ઓર જીર્ણ પર્યાય હન દોનોં અવસ્થાઓં મેં બી અનુગતરૂપ સે રહતે હૈં । જવ નવ્ય-નવીનતા-પર્યાય, હનસે નિવૃત્ત હો જાતી હૈ—તત્ર જીર્ણતા પર્યાય આજાતી હૈ યહ વાત સમી કે લિયે સ્પષ્ટ હૈ । હસી કારણ સૂત્રકાર ને યહાં જીર્ણ વિશેષણ સે વિશિષ્ટ હન સુરા આદિ શબ્દોં કો રલા હૈ ।

શંકા—યહ વાત હમ માનતે હૈં કિ સુરાદિક દ્રવ્યોં મેં જીર્ણ અવસ્થા મેં સાદિ પારિણામિકતા હૈ ક્યોંકિ હનમેં જીર્ણઅવસ્થા કે સમયકી

પ્રશ્ન—(સે કિં તં સાદિ પારિણામિય ?) હે ભગવન્ । સાદિ પારિણામિકત્વં સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(સાદિપારિણામિય અણેગવિદે પળ્લત્તે) સાદિ પારિણામિક ભાવે અનેક પ્રકારનો કહ્યો છે. (તંજહા) જેમ કે—(જુળ્ણસુરા, જુળ્ણગુલો, જુળ્ણઘયં, જુળ્ણતંદુલાં ચેવ) જીર્ણસુરા, જીર્ણગોળ, જીર્ણ ધી, અને જીર્ણતંદુલ. જીર્ણ સુરામાં, ગોળમાં, ધીમાં અને તંદુલમાં જે જીર્ણપર્યાય રૂપ પરિણામ આવે છે, તે સાદિ પારિણામિક ભાવ રૂપ છે, કારણ કે જીર્ણતાના કાળની પૂર્વકોટિ જાણી શકાય છે. સુરાદિ દ્રવ્ય નવી પર્યાય અને જીર્ણપર્યાય, એ બન્ને અવસ્થાઓમાં પણ અનુગત રૂપે રહે છે જ્યારે નવીનતા પર્યાય આ દ્રવ્યોમાંથી નિવૃત્ત થઈ જાય છે ત્યારે તે દ્રવ્યોમાં જીર્ણતા પર્યાય આવી જાય છે, આ વાત સૌને માટે સ્પષ્ટ છે. તે કારણે જ સૂત્રકારે જીર્ણ વિશેષણ યુક્ત સુરાદિક દ્રવ્યોને સાદિ પારિણામિક ભાવના દૃષ્ટાન્તો રૂપે અહીં પ્રકટ કરેલ છે.

શંકા—એ વાત તો અમે માની લઈએ છીએ કે સુરાદિક દ્રવ્યોમાં જીર્ણાવસ્થામાં સાદિ પારિણામિકતા હોય છે, કારણ કે તે દ્રવ્યોમાં જીર્ણ

અન્યથા કાર્યાનુત્પત્તિઃ પ્રસજ્યેત । તથા-અભ્રાણિ=મેઘાઃ । અભ્રવૃક્ષાઃ=વૃક્ષાકારેણ પરિણતાન્યભ્રાણ્યેવ । સન્ધ્યા=કૃષ્ણ નીલાઘાકાશપરિણતિમાન્ અહોરાત્રસન્ધિ-

પૂર્વકોટિ જ્ઞાત હો જાતી છે । પરન્તુ 'इनकी जो नव्य अवस्था है उसमें सादिपारिणामिकता कैसे मानी जा सकती है ? क्योंकि उसके समय की पूर्वकोटि तो ज्ञात नहीं है ?

ઉત્તર-ऐसी बात नहीं है-क्योंकि नव्य पर्याय के भी समय की पूर्वकोटि ज्ञात हो जाती है । वह इस प्रकार से-कि सुरादिरूप जो नव्य पर्याय है । वह सुरादिजनक कारण द्रव्यों से ही उद्भूत हुई है । अतः उसमें भी सादि पारिणामिकता है । तात्पर्य कहने का यह है, कि सुरादि जनक जो द्रव्य हैं वे ही सुरादिरूप परिणाम से परिणमित हो जाते हैं अतः यह सुरादिरूप पर्याय उनकी सादि पर्याय हैं और जब यह सादिरूप पर्याय उनमें से कालान्तर में निवृत्त हो जाती है तब उसकी निवृत्ति होते ही उनमें जीर्णतारूप पर्याय आ जाती है । इस प्रकार सुरादिद्रव्यों में नव्यता जीर्णता सादि परिणाम है । यदि यह बात न मानी जावे कि उपादान कारण द्रव्य ही कार्यरूप से परिणमित होता है तो फिर कार्य की उत्पत्ति ही नहीं हो सकती है ।

અવસ્થાના સમયની પૂર્વકોટિ જ્ઞાત થઈ જાય છે, પરન્તુ તેમની જે નવ્ય (નવીન) અવસ્થા છે, તેમાં સાદિ પારિણામિકતા કેવી રીતે માની શકાય તેમ છે ? તેના સમયની પૂર્વકોટિ તો જ્ઞાત હોતી નથી ?

ઉત્તર—એવી વાત શક્ય નથી, કારણ કે નવીન પર્યાયના સમયની પૂર્વ કોટિ પણ જ્ઞાત થઈ જાય છે. તે આ પ્રકારે સમજવું—સુરાદિ દ્રવ્ય રૂપ જે નવીન પર્યાય છે તે સુરાદિજનક કારણ દ્રવ્યોમાંથી જ ઉદ્ભવી હોય છે. તેથી તેમાં પણ સાદિ પારિણામિકતાનો સદ્ભાવ રહે છે. આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે સુરાદિજનક જે દ્રવ્યો છે તેઓ જ સુરાદિરૂપ પરિણામમાં પરિણમિત થઈ જાય છે, તેથી તેમની આ સુરાદિરૂપ પર્યાય સાદિ પર્યાય રૂપ જ છે, અને જ્યારે કાલાન્તરે આ સાદિ રૂપ પર્યાય તે દ્રવ્યોમાંથી નિવૃત્ત થઈ જાય છે, ત્યારે તેની નિવૃત્તિ થતાં જ તે દ્રવ્યોમાં જીર્ણતા રૂપ પર્યાય આવી જાય છે, આ પ્રકારે સુરાદિ દ્રવ્યોમાં નવીનતા (નવ્યતા) અને જીર્ણતા સાદિ પરિણામ રૂપ જ ગણી શકાય છે, જે એ વાત માનવામાં ન આવે કે ઉપાદાનકારણ દ્રવ્ય જ કાર્ય રૂપે પરિણમિત થાય છે, તો કાર્યની ઉત્પત્તિ જ થઈ શકે નહીં

तथा-(अवभया य अवभृक्त्वा, संज्ञा, गवज्वणगरा य) अभ्र (मेघ),

કાલઃ । ગન્ધર્વ નગરાણિ=ઉત્તમોત્તમ પ્રાસાદોપશોભિત નગરાકૃતિતયા પરિણતાસ્ત-
યાવિધનમઃપુદ્ગલાઃ । ઉલ્કાપાતાઃ=આકાશપ્રદેશતસ્તેજઃ પુન્નપતનનિ । દિગ્દાહાઃ=
અન્યતરસ્યાં દિશિ નમઃપ્રદેશે જ્વાલામાલાકરારલિત જ્વલનાવભાસનાનિ । તથા-ગર્જિતં
વિદ્યુત્ એતૌ પ્રસિદ્ધાવેવ । નિર્ઘાતાઃ=વિદ્યુત્પાતાઃ । તથા-યૂપકાઃ=શુક્લપક્ષીય-
દિનત્રયાવસ્યાયિનઃ સંધ્યાચ્છેદાવરણા બાલચંદ્રેતિ પ્રસિદ્ધાઃ=॥ઉક્તંચાવશ્યકે-

“સંજ્ઞાચ્છેદાવરણો ય જૂયઓ સુકદિણ તિન્નિ” ॥

છાયા—સંધ્યાચ્છેદાવરણથ્થ યૂપકઃ શુક્લે દિનાનિ ત્રીણિ-इति ॥

તથા-યક્ષાદીપ્તાનિ=નભસિ દૃશ્યમાનાઃ પિશાચાકૃતયોઽગ્નયઃ ધૂમિકા=નભસિ
રુક્ષઃ પ્રવિરલો ધૂમ इव દૃશ્યમાનો ‘ધૂમિકા’ इत्युच्यते । મહિકા-જલકળયુતા

તથા-(અભાય અભરુક્ષા, સંજ્ઞા ગંધર્વનગરાય)અભ્ર-મેઘ અભ્ર-
વૃક્ષ-વૃક્ષાકાર મેં પરિણમિત હુએ મેઘ, સંધ્યા-અહોરાત્રકા સંધિકાલ કિ
જિસમેં આકાશ કૃષ્ણ, નીલાદિરૂપ મેં પરિણત હો જાતા હૈ । ગંધર્વ-
નગર-ઉત્તમોત્તમ પ્રાસાદ સે શોભિત નગર કી આકૃતિ જૈસે બને હુએ
આકાશ પુદ્ગલ (ઉલ્કાવાયા) ઉલ્કાપાત આકાશ પ્રદેશ સે ગિરતા હુઆ
તેજઃ પુંજ (દિસા દાહા) દિગ્દાહ-કિસી એક દિશાકી ઓર આકાશ મેં
જલતી હુઈ અગ્નિ કા આભાસ-(દિલ્લાઈ દેના) હોના (ગજિજયા) ગર્જિત
મેઘ કી ગર્જના, (વિજ્જૂ) વિજલી (ગિગધાયા) નિર્ઘાત-વિજલી કા પાત
(જૂવયા) યૂપક-શુક્લપક્ષસંબન્ધી ત્રીન દિનકા બાલચન્દ્ર, (જક્ષાદિત્તા)
યક્ષાદીસ-આકાશ મેં દિલ્લાઈ દેતી હુઈ પિશાચાકૃતિ જૈસી અગ્નિ (ધૂમિયા)
ધૂમિકા-આકાશ મેં રુક્ષ એવં વિરલ દિલ્લાઈ પડતી હુઈ ધૂમકી તરહ
એક પ્રકાર કી ધૂમસ, (મહિયા) મહિકા-જલકળ યુક્ત ધૂમ જૈસી ભાપ

અભ્રવૃક્ષ (વૃક્ષાકારે પરિણમિત થયેલા મેઘ) સંધ્યા (દિવસ અને રાત્રિનો
સંધિકાળ કે જેમાં આકાશ કૃષ્ણ, નીલાદિ રૂપે પરિણમિત થઈ જાય છે),
ગંધર્વનગર (ઉત્તમોત્તમ પ્રાસાદોથી શોભતા નગરની આકૃતિ જેવાં બનેલાં
આકાશપુદ્ગલો), (ઉલ્કાવાયા) ઉલ્કાપાત (આકાશખંડમાં સરકતો તેજઃપુંજ),
(દિસાદાહા) દિગ્દાહ (કોઈ એક દિશામાં આકાશની અંદર પ્રજ્વલિત અગ્નિનો
આભાસ થવો), (ગજિજયા) મેઘની ગર્જના, (વિજ્જૂ) વિજળી, (ગિગધાયા), નિર્ઘાત
(વિજલી પડવી), (જૂવયા) યૂપક (શુક્લ પક્ષનો ત્રણ દિવસનો બાલચન્દ્ર),
(જક્ષાદિત્તા) યક્ષાદીપ્ત (આકાશમાં દેખાતી પિશાચાકૃતિ જેવી અગ્નિ), (ધૂમિયા)
ધૂમિકા (ધૂમસ) (મહિયા) મહિકા (જલકળ યુક્ત ધુમાડા જેવો ઘાડ ધૂમસ)

सैव । रजउद्धाताः=दिक्षु रजसामुत्थानानि । चन्द्रोपरागाः सूर्योपरागाः-चन्द्र-
सूर्याणां राहुग्रहणानि । अर्धतृतीयद्वीपसमुद्रवर्तिनोऽनेके चन्द्रसूर्याः सन्ति, अतः
'चन्द्रोपरागाः सूर्योपरागाः' इति पदद्वयं बहुत्वेन निर्दिष्टम् । तथा-चन्द्रपरिवेषाः
सूर्यपरिवेषाः-चन्द्रसूर्ययोः परितो वलयाकारपुद्गलपरिणामाः । प्रतिचन्द्रः प्रतिसूर्यः-
उत्पातसूचकं द्वितीयचन्द्रादित्यदर्शनम् । इन्द्रधनुः=नभसि नीलपीतादिवर्णविशिष्टं
धनुराकारं यद् दृश्यते तदिन्द्रधनुरित्युच्यते । इदं च लोके प्रसिद्धम् । उदकम-
त्स्याः=इन्द्रधनुः खण्डानि । कपिहसितानि=यदा कदाचिन्नभसि जायमाना
अन्युग्रशब्दाः श्रूयन्ते, त एव कपिहसितान्युच्यन्ते । अमोघाः=सूर्यस्य उदयास्त-
समये तत्किरणैः समुत्पद्यमाना रेखाविशेषाः । वर्षाणि भरतादीनि । वर्षधराः=

कुहरा-(रयुग्धाया) रजउद्धात-दिशाओं में धूलि का उड़ना, (चंदो-
वराग-चन्द्रोपराग-चंद्रग्रहण (सूरोवरागा) सूर्यग्रहण (चंदपरिवेसा, सूर-
परिवेसा) चन्द्र परिवेष-चन्द्रमा की चारों ओर गोलाकार में परिणत
हुए पुद्गल परमाणुओं का चक्रवाल (गोल मंडल) सूर्य की चारों ओर
गोल चूड़ी के जैसे आकार में परिणत हुए पुद्गल परमाणुओं का चक्र-
वाल (पडिचंदा) प्रतिचंद्र (पडिसूरा) प्रतिसूर्य-उत्पात सूचक द्वितीय चंद्र
की ओर सूर्यका दिखलाई पड़ना (इंद्रधनु) इन्द्रधनुष-आकाश में नीलपीत
आदि वर्ण विशिष्ट जो धनुष के आकार दिखलाई देता है वह कि जिसे
भाषा में "सदान" कहते हैं (उदगमच्छा) उदक मत्स्य इन्द्र धनुष के
खंड (कविहसिया) कपिहसित-यदा कदाचित्-जब कभी आकाश में
सुनाई पड़नेवाले अन्युग्रशब्द (अमोहा) अमोघ सूर्य के उदय और अस्त
के समय में उसकी किरणोंद्वारा उत्पन्न रेखा विशेष-(वासा) भरत

(रयुग्धाया) रजउद्धात (दिशाओंमें धूल उड़ती ते) (चंदोवराग) चन्द्रोपराग (चन्द्र-
ग्रहण), (सूरोवराग) सूर्यग्रहण, (चंदपरिवेसा, सूरपरिवेसा) चन्द्रपरिवेष (चन्द्रने
क्षरतुं गोलाकारमें परिणत थयेला पुद्गलपरमाणुओंनुं गोलाकारनुं मंडल),
सूर्यपरिवेष (सूर्यनी आसपास आदि दिशाओंमें गोला चूडलीना आकारे परिणत
थयेला पुद्गलपरमाणुओंनुं गोलाकारनुं मंडल (पडिचंद) प्रतिचन्द्र (उत्पात
सूचक पीत चन्द्रनुं देखावु), (पडिसूरा) प्रतिसूर्य (उत्पात सूचक पीत सूर्यनुं
देखावु), (इंद्रधनु) मेघधनुष (आकाशमें आभासामें जे सप्तर्षी कामडी
देखाव छे ते), (उदगमच्छा) उदक मत्स्य (मेघधनुष्यना मंड), (कविहसिया)
कपिहसित (आकाशमेंथी कयारेक संलग्ना अतिउग्र कडाका), (अमोहा)
अमोघ (सूर्योदय अने सूर्यास्त वअने सूर्यना किरणों द्वारा उत्पन्न यती

હિમવદાદયઃ પર્વતાઃ । ગ્રામાદયઃ પ્રસિદ્ધાઃ । પાતાલાઃ=પાતાલકલશાઃ । શેષા મન્વનાઘનન્તપ્રદેશિકાન્તાઃ પ્રસિદ્ધા એવ । નન્નુ વર્ષધરાદયઃ શાશ્વતાઃ, ન તે કદા-
ચિદપિ સ્વકીયં ભાવં મુશ્ચન્તિ, તત્કથં પુનરેષાં સાદિપારિણામિકત્વમુક્તમ્ ? ઇતિ-
ચેદાહ-વર્ષધરાદીનાં શાશ્વતત્વં તદાકારમાત્રેણૈવાવતિષ્ઠમાન્તવાદ્ બોધ્યમ્ । પુદ્ગલા-

આદિ ક્ષેત્ર (વાસધરા) હિમવત્ આદિ પર્વત (ગામા, નગરા, ઘરા, પવ્વયા, પાયાલા) ગ્રામ, નગર, ઘર, પર્વત, પાતાલકલશ (ભવળા) ભવન (નિરયા) નરક, (રયણપ્પહા) રત્નપ્રભા (સક્કરપ્પહા) શર્કરાપ્રભા (વાલુયપ્પહા) વાલુકા પ્રભા (પંકપ્પહા) પંક પ્રભા (ધૂમપ્પહા) ધૂમપ્રભા (તમપ્પહા) તમઃપ્રભા (તમ તમપ્પહા) તમસ્તમઃ પ્રભા (સોહમ્મે) સૌધર્મ (જાવઅચ્ચુપ્પ) યાવત્ અચ્યુત (ગેવેજ્જે અણુત્તરે) ગ્રૈવેયક, અનુત્તર, (હસિપ્પભારા) ઈષ્ટપ્રા-
ભારા (પરમાણુપોગ્ગલે) પરમાણુપુદ્ગલ (દુપપ્પસિપ્પ) દ્વિપ્રદેશિક (જાવ અણંત પપ્પસિપ્પ) યાવત્ અનંતપ્રદેશિક (સે તં સાહપારિણામિપ્પ) હસ પ્રકાર વહ યહ સાદિ પારિણામિક હૈ ।

શંકા-વર્ષધરાદિક તો શાશ્વત હૈં । ક્યોંકિ યે કમી મી અપને અસ્તિત્વ કા પરિત્યાગ નહીં કરતે હૈં । ફિર ઇન્હેં સાદિ પરિણામવાલા કૈસે સૂત્રકારને કહા હૈ ?

ઉત્તર-વર્ષધરાદિકોં મેં જો શાશ્વતપના કહા હૈ વહ “વે અપને આકાર માત્ર સે હી સદા અવસ્થિત રહતે હૈં ”હસી રુચાલ સે કહા ગયા

રેખાવિશેષ), (વાસા) ભરત આદિ ક્ષેત્ર. (વાસધરા) હિમવાન્ આદિ પર્વત, (ગામા, નગરા, ઘરા, પવ્વયા પાયાલા) ગ્રામ, નગર, ઘર, પર્વત, પાતાલકલશ, (ભવળા) ભવન, (નિરયા) નરક, (રયણપ્પમા) રત્નપ્રભા, (સક્કરપ્પમા) શર્કરાપ્રભા, (વાલુયપ્પમા) વાલુકાપ્રભા, (પંકપ્પહા) પંકપ્રભા, (ધૂમપ્પહા) ધૂમપ્રભા, (તમ-પ્પહા) તમઃપ્રભા, (તમતમપ્પહા) તમસ્તમઃપ્રભા, (સોહમ્મે જાવ અચ્ચુપ્પ) સૌધ-ર્મથી લઈને અન્યુત પર્થન્તના કલ્પો, (ગેવેજ્જે અણુત્તરે) ગ્રૈવેયકો, અનુત્તર વિમાનો, (હસિપ્પભારા) ઈષ્ટપ્રાભારા, (પરમાણુ પોગલે) પરમાણુ પુદ્ગલ (દુપ-પ્પસિપ્પ જાવ અણંતપપ્પસિપ્પ) દ્વિપ્રદેશિકથી લઈને અનંતપ્રદેશિક પર્થન્તના સ્કંધો, (સે તં સાહ પારિણામિપ્પ) આ બધાંને સાદિપારિણામિક ભાવ રૂપ સંમજવા.

શંકા-વર્ષધર આદિ પર્વતો તો શાશ્વત છે, કારણ કે તેઓ કદી પણ પોતપોતાના અસ્તિત્વનો પરિત્યાગ કરતા નથી છતાં સૂત્રકારે તેમને સાદિ પારિણામિક શા કારણે કહ્યા છે ?

ઉત્તર-વર્ષધર આદિકોમાં જે શાશ્વતતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે તેનું કારણ એ છે કે તેઓ તેમના આકાર માત્રની અપેક્ષાએ જ સદા અવસ્થિત

સ્તુ અસંખ્યેયકાલાદર્ધ્વ પરિણમન્ત એવ । સામ્પ્રતિ કેષુ વર્ષધરાદિષુ યે પુદ્ગલાઃ સન્તિ તે ચોત્કૃષ્ટતોઽસંખ્યેયકાલાદર્ધ્વમપગમિષ્યન્ત્યેવ (૧) ઉત્તંચાત્રવિષયેઽ-
ત્રૈવસૂત્રે-“ નેગમવ્યવહારાણં આણુપુર્વીદન્વાઈં કાલઓ કિયચિરં હોઈ? એનં
દર્ધ્વં પદુચ્ચ જહણેનં એનં સમયં ઉક્તોસેનં અસંખેજ્જં કાલં ”
ઈતિ । સૂ. ૬ પૃ. ૧૧૩ મુદ્રિત પૃષ્ઠ ૫૭ સૂ. ૮૫ તત્સ્થાને અપરેઽપરે
પુદ્ગલાઃ સંગતાઃ સન્તસ્તદ્ભાવેન પરિણમિષ્યન્તિ, અતઃ પુદ્ગલપરિવૃત્તિમાદાય વર્ષ-
ધરાદીનાં સાદિ પારિણામિકત્વં ન વિરુદ્ધયતે ઇતિ નાસ્તિ દોષઃ । એતદુપસંહરનાઈ-
સ એપ સાદિપારિણામિક ઇતિ । દ્વિતીયભેદવિષયે શિષ્યઃ પૃચ્છતિ-અથ કોઽસૌ
અનાદિપારિણામિકઃ? ઇતિ । ઉત્તરયતિ-અનાદિપારિણામિકઃ-ધર્માસ્તિકાયાઘ-

હૈ । ઇસકા-તાત્પર્ય યહ થોડે હી હો સકતા હૈ કિ ડનમેં પરિણમન નહીં
હોતા હૈ । વર્ષધરાદિક પૌદ્ગલિક હૈ । પુદ્ગલ અસંખ્યાતકાલ કે બાદ પરિ-
ણમન કરતે હૈ । ઇસ સમય કે વર્ષધરાદિકો મેં જો પુદ્ગલ હૈ વે વર્ષા
જ્યાદા સે જ્યાદા અસંખ્યાત કાલ તક રહેંગે-બાદ મેં વર્ષા સે જ્યુત
હો જાવેંગે । યહ બાત ઇસી સૂત્ર કે ૮૫ વેં સૂત્ર મેં પહિલે સ્પષ્ટ હી કી
જા ચુકી હૈ કિ નૈગમવ્યવહારનયસંમત આનુપૂર્વીદ્રવ્ય કાલકી અપેક્ષા
આનુપૂર્વી રૂપ મેં જઘન્ય સે એક દ્રવ્યકો આશ્રિત કરકે એક સમય તક
ઔર ઉત્કૃષ્ટ સે અસંખ્યાત કાલ તક રહતે હૈ । જ્યુત હુએ ડન પુદ્ગલોં કે
સ્થાન મેં ઔર દૂસરે દૂસરે પુદ્ગલ સંગત હોકર ડસ રૂપ સે પરિણમ જાવેંગે ।
ઇસલિયે પુદ્ગલ કી ઇસ પરિવૃત્તિ-પરિણમન કો લેકર કે વર્ષધરાદિકો
મેં સાદિ પારિણામિકતા કા કથન વિરુદ્ધ નહીં પડતા હૈ । (સે કિં.તં
અનાદિપારિણામિએ) હૈ ભદન્ત । વહ અનાદિ પારિણામિક ક્યા હૈ ?

રહે છે. તેનો અર્થ એવો થતો નથી કે તેમનામાં પરિણમન જ થતું નથી
તેમનામાં પરિણમન તો જરૂર થતું જ રહે છે વર્ષધરાદિક પૌદ્ગલિક છે પુદ્ગલો
તો અસંખ્યાત કાળ બાદ પરિણમન કરે જ છે. હાલના વર્ષધર આદિકોમાં
જે પુદ્ગલો હાલમાં છે. તેઓ ત્યાં વધારેમાં વધારે અસંખ્યાત કાળ સુધી
રહેશે, ત્યાર બાદ તેઓ ત્યાંથી ચલીને જશે આગળ ૮૫માં સૂત્રમાં આ
વાત સ્પષ્ટ કરવામાં આવી છે તે સૂત્રમાં એવું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે
કે “ નૈગમવ્યવહાર નયસંમત આનુપૂર્વી દ્રવ્ય કાળની અપેક્ષાએ એક દ્રવ્યની
દૃષ્ટિએ વિચાર કરવામાં આવે તો ઓછામાં ઓછા એક સમય સુધી અને
વધારેમાં વધારે અસંખ્યાત કાળ સુધી આનુપૂર્વી દ્રવ્ય રૂપે રહે છે.” ચલેલા
થયેલા તે પુદ્ગલોને સ્થાને અન્ય પુદ્ગલો સંગત થઈને તે રૂપે પરિણમી જશે
તેથી પુદ્ગલોની આ પરિવૃત્તિ (પરિણમન)ને કારણે વર્ષધરાદિકોમાં પણ સાદિ
પારિણામિકતાનું કથન વિરુદ્ધ પડતું નથી.

ભવસિદ્ધિકાન્તો बोध्यः । धर्मास्तिकायादयोऽनादिकालादेव तत्तद्रूपतया परिणताः सन्ति, अत एषामनादिपारिणामिकत्वम् । एतदुपसंहरन्नाह—स एषोऽनादिपारिणामिक इति । पारिणामिको भावः प्ररूपित इति सूचयितुमाह—स एष पारिणामिक इति ॥सू० ૧૫૬॥

અથ સાન્નિપાતિકં નામ પ્રરૂપયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં સણિવાઙ્ગે? સણિવાઙ્ગે એસિં ચેવ ઉદ્દય ઉવસમિય—સ્વદય—સ્વઓવ સમિયપારિણામિયાણં ભાવાણં દુગસંજોણં તિયસંજોણં ચઠ્ઠસંયોણં પંચગસંજોણં જે

ઉત્તર—(અણાહપારિણામિય ધમ્મત્થિકાએ, અધમ્મત્થિકાએ, આગાસ-
ત્થિકાએ, જીવત્થિકાએ, પુગ્ગલત્થિકાએ, અદ્ધાસમએ, લોએ, અલોએ, ભવ-
સિદ્ધિયા અભવસિદ્ધિયા) અનાદિ પારિણામિક ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિ-
કાય, આકાશાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય, પુદ્ગલાસ્તિકાય, અદ્ધાસમય,
લોક, અલોક ભવસિદ્ધિક અભવસિદ્ધિક છે । (સે તં અણાહપારિણામિય)
યહ અનાદિ પારિણામિક છે । તાત્પર્યેં હસકા યહ છે કિં ધર્માસ્તિકાયા-
દિક અનાદિ કાલ સે હી ઉસ ૨ રૂપ સે પરિણત છે । હસલિયેં હનમેં
અનાદિ પારિણામિકતા છે । (સે તં પારિણામિય) હસપ્રકાર પારિણામિક
ભાવ કા નિરૂપણ છે ॥ સૂ૦ ૧૫૬ ॥

પ્રશ્ન—(સે કિં તં અણાહ પારિણામિય?) હે ભગવન્! અનાદિ પારિણામિક
ભાવનું સ્વરૂપ કેવું છે?

ઉત્તર—(અણાહ પારિણામિય ધમ્મત્થિકાએ, અધમ્મત્થિકાએ, આગાસત્થિકાએ,
જીવત્થિકાએ, પુગ્ગલત્થિકાએ, અદ્ધાસમએ, લોએ, અલોએ, ભવસિદ્ધિયા, અભવસિ-
દ્ધિયા) ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય, પુદ્ગલા-
સ્તિકાય, અદ્ધાસમય (કાળ), લોક, અલોક, ભવસિદ્ધિક અને અભવસિદ્ધિક,
આ ભાવો અનાદિ પારિણામિક છે ધર્માસ્તિકાય આદિ અનાદિ કાળથી જ
ધર્માસ્તિકાય આદિ રૂપે પરિણત હોવાને કારણે તેમને અનાદિ પારિણામિક
ભાવો કહ્યા છે. (સે તં અણાહ પારિણામિય) આ પ્રકારનું અનાદિ પારિણામિક
ભાવનું સ્વરૂપ છે. (સે તં પારિણામિય) આદિ પારિણામિક અને અનાદિ પારિ-
ણામિક ભાવોનું નિરૂપણ સમાપ્ત થવાથી પારિણામિક ભાવનું કથન
અહીં પૂરું થાય છે. ॥સૂ૦૧૫૬॥

निष्फज्जइ सव्वे से सण्णिवाइए नामे । तत्थ णं दस दुयसंजोगा,
दस तियसंजोगा, पंच चउक्कसंजोगा, एगे पंचगसंजोगे ॥सू. १५७॥

छाया—अथ कोऽसौ सान्निपातिकः ? सान्निपातिकः—एतेषामेव औदयिकौ-
पशमिकक्षायिकक्षायोपशमिकपारिणामिकानां भावानां द्विकसंयोगेन त्रिकसंयोगेन
चतुष्कसंयोगेन पञ्चकसंयोगेन यो निष्पद्यते सर्वः स सान्निपातिको नाम । तत्र खलु दश
द्विकसंयोगाः, दश त्रिकसंयोगाः, पञ्चचतुष्कसंयोगाः, एकः पञ्चकसंयोगः ॥सू. १५७॥

टीका—‘से किं तं’ इत्यादि—

अथ कोऽसौ सान्निपातिकः ? इति शिष्यप्रश्नः । उत्तरयति—सान्निपातिकः—
सन्निपतनम्=औदयिकादिभावानां द्व्यादिसंयोगेन संयोजनं सन्निपातः, स एव
तेन निर्वृत्तो वा सान्निपातिकः । अमुमेवार्थमाह—सूत्रकारः—‘एएसिं चेव’ इत्या-
दिना । एतेषामेव औदयिकादीनां पञ्चानां भावानां द्विकत्रिकचतुष्कपञ्चकसंयोगेन
यो यो भावः सम्पद्यते स सर्वोपि भावः सान्निपातिको बोध्यः । स सान्निपातिक-
भाव एव सान्निपातिकनामेत्युच्यते । तत्र हि दश द्विकसंयोगा भवन्ति, दश
त्रिकसंयोगाः, पञ्च चतुष्कसंयोगाः, एकः पञ्चकसंयोग इति ॥सू. १५७॥

अब सूत्रकार सान्निपातिक भावकी प्ररूपणा करते हैं—

“से किं तं सण्णिवाइए” इत्यादि ।

शब्दार्थ—(से किं तं सण्णिवाइए ?) हे भदन्त ! वह सान्निपातिक
भाव क्या है ? (सण्णिवाइए एएसिंचेव उदइए उवसमिय-खइय-
खओवसमिय पारिणामियाणं भावाणं दुगसंजोएणं तिय संजोएणं चउ-
क्कसंजोएणं पंचकसंजोएणं जे निष्फज्जइ)।

उत्तर—इन औदयिक आदि पांच भावों के दो के, तीन के चार के
और पांच के संयोग से जो जो भाव निष्पन्न होते हैं वे सब भी भाव
सान्निपातिक भाव है । इस सान्निपातिक भावों में दश भाव द्विकसंयोगज,

छे सूत्रकार सान्निपातिक भावनी प्ररूपणा करे छे—

“से किं तं सण्णिवाइए” इत्यादि—

शब्दार्थ—(से किं तं सण्णिवाइए ?) डेलगवन ! पूर्वप्रकान्त सान्निपातिक
भावनुं स्वरूप केवुं छे ?

उत्तर—(सण्णिवाइए एएसिं चेव उदइए उवसमिय-खइय-खओवसमिय-
पारिणामियाणं भावाणं दुगसंजोएणं, तियसंजोएणं, चउक्कसंजोएणं, पंचकसंजो-
एणं जे निष्फज्जइ) औदयिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक, अने पारि-
णामिक, आ पांच भावोना द्विकसंयोग, त्रिकसंयोग चतुष्कसंयोग अने
पंचक संयोगधी जे भावो निष्पन्न थाय छे ते षड् भावोने सान्निपातिक
भावो डडे छे आ रीते द्विकसंयोग जन्य १० भावो, त्रिकसंयोग जन्य १०

દ્વિકાદિ પञ्ચકાન્તાઃ સંયોગા સસંખ્યકા ઉક્તાઃ । તત્ર દ્વિકાદિસંયોગાઃ કે? इति तान् प्रदर्शयितुमाह—

મૂળમ્—एत्थ णं जे ते दस दुगसंयोगा ते णं इमे—अत्थि णामे उदइयउवसमियनिष्फण्णे? अत्थि णामे उदइयखाइग- निष्फण्णे२, अत्थि णामे उदइयखओवसमियनिष्फण्णे३, अत्थि णामे उदइयपारिणामियनिष्फण्णे४, अत्थि णामे उवसमिय- खइयनिष्फण्णे५, अत्थि णामे उवसमिय खओवसमियनिष्फ- ण्णे६, अत्थि णामे उवसमियपारिणामियनिष्फण्णे७, अत्थि- णामे खइयखओवसमियनिष्फण्णे८, अत्थિ णामे खइयપારિ- ãamiyaniṣṭhaṇṇe 9, અત્થિ ણામે ખઓવસમિયપારિણામિયનિ- ષ્ઠાṇṇe 10 । કયરે સે ણામે ઉદइय उवसमियनिष्फण्णे? उदइय- उवसमियनिष्फण्णे-उदइएत्ति मणुस्से उवसंता कसाया । एसणं से णामे उदइय उवसमियनिष्फण्णे॥१॥ कयरे से णामे- उदइयखाइयनिष्फण्णे? उदइयखाइयनिष्फण्णे—उदइएत्ति मणु- स्से खइयं सम्मत्तं । एस णं से णामे उदइयखइयनिष्फण्णे॥२॥ कयरे से णामे उदइयखओवसमियनिष्फण्णे? उदइयखओव- समियनिष्फण्णे—उदइएत्ति मणुस्से खओवसमियाइं इंदियाइं । एस णं से णामे उदइयखओवसमियनिष्फण्णे॥३॥ कयरे से

દશભાવ ત્રિકસંયોગજ, પાંચભાવ ચતુષ્ક સંયોગ, ઔર एक भाव पंचक- संयोगज बनते हैं । इस प्रकार ये २६ सांनिपातिक भाव हैं । ॥सू० १५७॥

લાવો, ચતુષ્કસંયોગ જન્ય પાંચ લાવો અને પંચકસંયોગ જન્ય એક લાવ, નિષ્પન્ન થાય છે. આ પ્રકારે કુલ ૨૬ સાંનિપાતિક લાવો થાય છે. ॥સૂ० ૧૫૭॥

णामे उदइयपारिणामियनिष्फण्णे ? उदइयपारिणामियनिष्फण्णे-
 उदइयत्ति मणुस्से पारिणामिए जीवे । एस णं से णामे उदइय-
 पारिणामियनिष्फण्णे ॥४॥ कयरे से णामे उवसमियखइयनिष्फ-
 ण्णे ? उवसमियखइयनिष्फण्णे-उवसंता कसाया-खइयं सम्मत्तं ।
 एस णं से णामे उवसमियखइयनिष्फण्णे ॥५॥ कयरे से णामे
 उवसमियखओवसमियनिष्फण्णे ? उवसमियखओवसमियनि-
 ष्फण्णे-उवसंता कसाया खओवसमियाइं इंदियाइं एस णं
 से णामे उवसमियखओवसमियनिष्फण्णे ॥६॥ कयरे से णामे
 उवसमियपारिणामियनिष्फण्णे ? उवसमियपारिणामियनिष्फ-
 ण्णे-उवसंता कसाया पारिणामिए जीवे । एस णं से णामे उव-
 समियपारिणामियनिष्फण्णे ॥७॥ कयरे से णामे खइयखओव-
 समियनिष्फण्णे ? खइयखओवसमियनिष्फण्णे-खइयं सम्मतं
 खओवसमियाइं इंदियाइं । एस णं से णामे खइयखओवसमिय-
 निष्फण्णे ॥८॥ कयरे से णामे खइयपारिणामियनिष्फण्णे ? खइय-
 पारिणामियनिष्फण्णे-खइयं सम्मतं पारिणामिए जीवे । एस णं
 से णामे खइयपारिणामियनिष्फण्णे ॥९॥ कयरे से णामे खओवस-
 मियपारिणामियनिष्फण्णे ? खओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे-
 खओवसमियाइं इंदियाइं पारिणामिए जीवे । एस णं णामे
 खओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे ॥१०॥ ॥सू० १५८॥

छाया—अत्र खलु ये ते दश द्विकसंयोगास्ते खलु इमे-अस्ति नाम औद-
 यिकौपशमिकनिष्पन्नम् ॥१॥ अस्ति नाम औदयिकक्षायिकनिष्पन्नम् ॥२॥ अस्ति
 नाम औदयिकसायोपशमिकनिष्पन्नम् ॥३॥ अस्ति नाम औदयिकपारिणामिक -

निष्पन्नम्॥४॥ अस्ति नाम औपशमिकक्षायिकनिष्पन्नम्॥५॥ अस्ति नाम औपश-
मिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम्॥६॥ अस्ति नाम औपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्॥७॥
अस्ति नाम क्षायिक क्षायोपशमिकनिष्पन्नम्॥८॥ अस्ति नाम क्षायिकपारिणामिक-
निष्पन्नम्॥९॥ अस्ति नाम क्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्॥१०॥ कतरत्तन्नाम
औदयिकौपशमिकनिष्पन्नम्? औदयिकमिति मानुष्यम्, उपशान्ताः कषायाः।
एतत् खलु तन्नाम औदयिकौपशमिकनिष्पन्नम्॥१॥ कतरत्तन्नाम औदयिकक्षायि-
कनिष्पन्नम्? औदयिकक्षायिकनिष्पन्नम् औदयिकमितिमानुष्यं, क्षायिकं सम्यक्-
त्वम्। एतत् खलु तन्नाम औदयिकक्षायिकनिष्पन्नम्॥२॥ कतरत्तन्नाम औदयिक-
क्षायोपशमिकनिष्पन्नम्? औदयिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम्—औदयिकमिति मानुष्यं
क्षायोपशमिकानि इन्द्रियाणि। एतत् खलु तन्नाम औदयिकक्षायोपशमिक-
निष्पन्नम्॥३॥ कतरत्तन्नाम औदयिकपारिणामिकनिष्पन्नम्? औदयिकपारिणामिक
निष्पन्नम् औदयिकमिति मानुष्यम् पारिणामिको जीवः। एतत् खलु तन्नाम
औदयिकपारिणामिकनिष्पन्नम्॥४॥ कतरत् तन्नाम औपशमिकक्षायिकनिष्पन्नम्?
औपशमिकक्षायिकनिष्पन्नम्—उपशान्ताः कषायाः क्षायिकं सम्यक्त्वम्। एतत्
खलु तन्नाम औपशमिकक्षायिकनिष्पन्नम्॥५॥ कतरत् तन्नाम औपशमिकक्षायोप-
शमिकनिष्पन्नम्? औपशमिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम्—उपशान्ताः कषायाः क्षायो-
पशमिकानि इन्द्रियाणि। एतत् खलु तन्नाम औपशमिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम्॥६॥
कतरत् तन्नाम औपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्? औपशमिकपारिणामिकनिष्प-
न्नम्—उपशान्ताः कषायाः, पारिणामिको जीवः। एतत् खलु तन्नाम औपशमिक-
पारिणामिकनिष्पन्नम्॥७॥ कतरत् तन्नाम क्षायिक क्षायोपशमिकनिष्पन्नम्?
क्षायिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम्—क्षायिकं सम्यक्त्वं क्षायोपशमिकानि इन्द्रियाणि।
एतत् खलु तन्नाम क्षायिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम्॥८॥ कतरत् तन्नाम क्षायिक-
पारिणामिकनिष्पन्नम्? क्षायिकपारिणामिकनिष्पन्नम्—क्षायिकं सम्यक्त्वं पारि-
णामिको जीवः। एतत् खलु तन्नाम क्षायिकपारिणामिकनिष्पन्नम्॥९॥ कतरत्
तन्नाम क्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्? क्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्—
क्षायोपशमिकानि इन्द्रियाणि, पारिणामिको जीवः। एतत् खलु तन्नाम क्षायोप-
शमिकपारिणामिकनिष्पन्नम् ॥१०॥ सू० १५८॥

टीका—‘एत्थ णं’ इत्यादि—

अत्र=सान्निपातिके भावे दश द्विकसंयोगा उक्ताः, ते दश द्विकसंयोगाः

दो दो भावों के संयोग से जो १० भाव निष्पन्न होते हैं। सूत्र-
कार उन्हें कहते हैं—“एत्थ णं जे ते” इत्यादि

अण्णे लावेना संयोगथी ७ १० लावे निष्पन्न थाय छे, तेभने
सूत्रकार प्रकट करे छे—“एत्थणं जे ते” इत्यादि—

भङ्गा-‘अस्ति नाम औदयिकौपशमिकनिष्पन्नम्’ इत्यारभ्य ‘अस्ति नाम
‘अस्ति नाम क्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्’ इत्यन्ता बोध्याः । एषु
औदयिकेन सह औपशमिकादि भावचतुष्टयसंयोगात् चत्वारो भङ्गाः,
औपशमिकेन सह क्षायिकादिभावत्रयस्य संयोगात् त्रयो भङ्गाः, क्षायिकेन
सह क्षायोपशमिकादि भावद्वयसंयोगात् द्वौ भङ्गौ, तथा-क्षायोपशमिकेन सह

शब्दार्थ-(एत्थ णं जे ते दस दुगसंयोगा, ते णं इमे) यहाँ जो दो दो
भावों के संयोग से भाव निष्पन्न-होते हैं वे इस प्रकार से हैं-
(अत्थिणामे उदइयउवसमियनिष्फण्णे ?) पहिला औदयिक और औप-
शमिक के संयोग से निष्पन्न भाव एक, (अत्थिणामे उदइयखाइग-
निष्फण्णे २) दूसरा औदयिक और क्षायिक के संयोग से निष्पन्न
भाव (अत्थिणामे उदइयखओवसमनिष्फण्णे) तीसरा-औदयिक
और क्षायोपशमिक के संयोग से निष्पन्न भाव (अत्थि-
णामे उदइयपारिणामियनिष्फण्णे) चौथा औदयिक और पारि-
णामिक के संयोग से निष्पन्न भाव (अत्थि णामे उवसमियखइय-
निष्फण्णे) पांचवा-औपशमिक और क्षायिक के संयोग से निष्पन्न भाव
(अत्थिणामे उवसमिय खओवसमियनिष्फण्णे) छठा-औपशमिक और
क्षायोपशमिक के संयोग से निष्पन्न भाव (अत्थिणामे उवसमियपारि-
णामियनिष्फण्णे) सातवां-औपशमिक और पारिणामिक के संयोग से
निष्पन्नभाव (अत्थिणामे खइय, खओवसमियनिष्फण्णे) आठवां-क्षायिक
और क्षायोपशमिक के संबन्ध से निष्पन्नभाव (अत्थिणामे खइय पारि-

शब्दार्थ-(एत्थ णं जे ते दस दुगसंयोगा, तेणं इमे) अज्जे लावेना संयो-
गधी जे दस लावे। निष्पन्न थय छे ते नीचे प्रमाणे छे-(अत्थिणामे उदइय
उवसमिय निष्फण्णे) (१) औदयिक अने औपशमिकना संयोगधी निष्पन्न लाव
(अत्थिणामे उदइयखाइयनिष्फण्णे २) (२) औदयिक अने क्षायिकना संयोगधी
निष्पन्न थयेले लाव (अत्थिणामे उदइय खओवसमनिष्फण्णे ३) (३) औदयिक
अने क्षायोपशमिकना संयोगधी निष्पन्न थयेले लाव (अत्थिणामे उदइय
पारिणामियनिष्फण्णे) (४) औदयिक अने पारिणामिकना संयोगधी निष्पन्न
लाव (अत्थिणामे उवसमियखइयनिष्फण्णे) (५) औपशमिक अने क्षायिकना
संयोगधी निष्पन्न लाव (अत्थिणामे उवसमियखओवसमियनिष्फण्णे) (६)
औपशमिक अने क्षायोपशमिकना संयोगधी निष्पन्न थयेले लाव (अत्थिणामे
उवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) (७) औपशमिक अने पारिणामिकना संयो-
गधी निष्पन्न लाव (अत्थिणामे खइयखओवसमियनिष्फण्णे) (८) क्षायिक

પારિણામિકભાવસ્ય સંયોગાદેકો ભક્તઃ । इति दश भङ्गा बोध्याः । इत्थं सामान्यतो
 દશ ભક્તાન જ્ઞાત્વા વિશેષતસ્તાન જિજ્ઞાસિતુકામઃ શિષ્યઃ પૃચ્છતિ-કતરત્ તન્નામ
 ઔદયિકૌપશમિકનિષ્પન્નમ્-ઔદયિકૌપશમિકભાવેન યન્નિષ્પદ્યતે તન્નામ કિમ્ ?
 इति । उत्तरयति-औदयिकौपशमिकनिष्पन्नमेवं विज्ञेयम्-औदयिकमितिमानुष्यम्,

નામિયનિષ્કણે) ૯વાં-ક્ષાયિક ઓર પારિણામિક કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન
 ભાવ (અત્થિણામે સ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કણે) ૧૦ વાં-ક્ષાયો-
 પશમિક ઓર પારિણામિક કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન હુઆ ભાવ । હસ
 પ્રકાર યે ઔદાયિક કે સાથ ઔપશમિક આદિ ચાર ભાવોં કે સંયોગ
 સે ૪ ભંગ, ઔપશમિક કે સાથ ક્ષાયિક આદિ ત્રીન ભંગોં કે સંયોગ
 સે ત્રીન ભંગ, ક્ષાયિક કે સાથ ક્ષાયોપશમિક આદિ દો ભાવોં કે સંયોગ
 સે દો ભંગ તથા ક્ષાયોપશમિક કે સાથ પારિણામિક ભાવ કે સંયોગ
 સે એક ભંગ યે દશ ભંગ હો જાતે હૈં । હસ પ્રકાર સામાન્ય સે દશ ભંગોં
 કો જાનકર વિશેષરૂપ સે શિષ્ય પૂછતા હૈ । કિ (કયરે સે ણામે ઉદહય
 ઉવસમિય નિષ્કણે ? હે ભદન્ત ! ઔદયિક એવં ઔપશમિક ભાવ કે
 સંયોગ સે જો સાન્નિપાતિક ભાવરૂપ ભંગ નિષ્પન્ન હોતા હૈ વહ કેસા હૈ ?

उत्तर- (उदहयउवसमियनिष्कण्णे) औदयिक एवं औपशमिक

અને ક્ષયોપશમિકના સંયોગથી નિષ્પન્ન ભાવ (અત્થિણામે સ્વહય પારિણમિય-
 નિષ્કણે) (૯) ક્ષાયિક અને પારિણામિકના સંયોગથી નિષ્પન્ન ભાવ (અત્થિણામે
 સ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કણે) (૧૦) ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિકના
 સંયોગથી નિષ્પન્ન ભાવ આ પ્રકારે ઔદયિકની સાથે ઔપશમિક આદિ ચારના
 સંયોગથી ૪ ભંગ, ઔપશમિક ભાવની સાથે ક્ષાયિક આદિ ત્રણ ભાવના
 સંયોગથી ૩ ભંગ, ક્ષાયિકભાવની સાથે ક્ષાયોપશમિક આદિ બે ભાવના
 સંયોગથી ૨ ભંગ તથા ક્ષાયોપશમિકની સાથે પારિણામિક ભાવના સંયોગથી
 એક ભંગ અને છે આ રીતે દ્વિકસંયોગી કુલ ૧૦ ભંગ બને છે.

આ પ્રકારે આ ભંગોતું સામાન્ય કથન કરીને હવે સૂત્રકાર દરેક
 ભંગના સ્વરૂપનું વિવેચન કરે છે-

પ્રશ્ન-(કયરે સે ણામે ઉદહયઉવસમિયનિષ્કણે?) હે ભગવન્ ! ઔદયિક
 અને ઔપશમિક ભાવના સંયોગથી જે સાન્નિપાતિક ભાવ રૂપ ભંગ નિષ્પન્ન
 થાય છે, તેનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે ?

ઉપશાન્તાઃ કષાયાઃ, इति । अयं भावः—औदयिके भावे मनुष्यत्व=मनुष्यगति-
रुत्पद्यते । उपलक्षणमिदम्—तिर्यगादिगतिजातिशरीरनामादिकर्मणामपि, तेषाम-
प्यत्र संभवात् । औपशमिके भावे तु कषाय उपशान्ता भवन्ति । इदमप्युदाहरण-
मात्रम्—दर्शनमोहनीयनोकषायमोहनीयावपि औपशमिके भावे समुत्पद्येते । एत-
दुपसंहरन्नाह—‘एस णं’ इत्यादि । एतत्=अनन्तरोक्तं, ‘खलु’ इति वाक्यालङ्कारे,
तत्—प्रसिद्धम् औदयिकौपशमिकनिष्पन्नं नाम बोध्यमिति प्रथमद्विकयोगे यदिद-
मुक्तं तद् विवक्षामात्रम् । न पुनरीदृशो भङ्गः क्विज्जीवे संभवति तथाहि यस्य

भाव के संयोग से जो सान्निपातिक भावरूप भंग उत्पन्न होता है वह
ऐसा है—(उदइएत्तिमणुस्से उवसंता कसाया) औदयिक भाव में मनुष्यत्व-
मनुष्यगति-उपशान्त कषाय यहां “मणुस्से” यह पद उपलक्षण है,
इससे तिर्यगादि चारों गतियां, जाति और शरीरनामादिकर्मों का भी
ग्रहण हुआ है । क्योंकि यहां पर उनका भी सद्भाव पाया जाता
है । औपशमिक भाव में कषाय उपशान्त होती है । सो यह भी—उदा-
हरण मात्र है । क्योंकि औपशमिक भाव में दर्शनमोहनीय और नो
कषायमोहनीय इन दोनों का भी उपशम रहता है । (एस णं से णामे
उदइयउवसमियनिष्फण्णे) इस प्रकार यह औदयिकौपशमिक-
नाम का प्रथम सान्निपातिक भावरूप भंग है । इस प्रथम भंगरूप सान्नि-
पातिक भाव में मनुष्यगति उपशान्त कषाय ऐसा जो कहा है वह केवल
विवक्षामात्र है । क्योंकि ऐसा सान्निपातिक भाव किसी भी जीव में

ઉત્તર—(ઉદइयउवसमियनिष्फण्णे) . औदयિક અને औપશમિક ભાવના
સંયોગથી જે સાન્નિપાતિક ભાવરૂપ ભંગ ઉત્પન્ન થાય છે તે આ પ્રકારનો
છે—(ઉદइएत्ति मणुस्से उवसंता कसाया) औदयिक ભાવમાં મનુષ્યત્વ—મનુષ્ય-
ગતિ અને औपशमिकભાવમાં ઉપશાન્ત કષાયને ગણાવી શકાય. અહીં
‘મનુષ્યગતિ’ આ પદ ઉદાહરણ રૂપે વપરાયેલું હોવાથી તેના દ્વારા તિર્યચ
આદિ ચારે ગતિઓ, જાતિ અને શરીરનામાદિકર્મોને પણ ગ્રહણ કરવામાં
આવેલ છે. કારણ કે અહીં તેમનો પણ સદ્ભાવ રહે છે औपशमिकભાવમાં
કષાય ઉપશાન્ત હોય છે આ વાત પણ ઉદાહરણ રૂપે જ આપવામાં આવી
છે, કારણ કે औपशमिकભાવમાં દર્શન મોહનીય અને નોકષાયમોહનીય,
આ બંને પ્રકારના કર્મોનો પણ ઉપશમ રહે છે. (एस णं से णामे उदइय
उवसमियनिष्फण्णे) આ પ્રકારનો આ औदयिकऔपशमिक નામનો પ્રથમ સાન્નિ-
પાતિક ભાવરૂપ ભંગ છે. આ પ્રથમ ભંગમાં “મનુષ્યગતિ અને ઉપશાન્ત
કષાય” આ પ્રકારનું જે કથન કરવામાં આવ્યું છે, તે કથન માત્ર વિવક્ષારૂપ

જીવસ્ય ઔદયિકી મનુષ્યગતિઃ, ઔપશમિકાઃ કષાયાઃ ભવન્તિ, તસ્ય ક્ષાયોપશ-
મિકાનીન્દ્રિયાણિ પારિણામિકં જીવત્વં ચાપિ ભવન્તિ । કસ્યચિત્તુ ક્ષાયિકં સમ્ય-
ક્ત્વમપિ સંભવતિ । એવં નવમભજ્ઞાતિરિક્તસર્વેષુ ભજ્ઞેષુ બોધ્યમ્ । નવમો ભજ્ઞસ્તુ
સિદ્ધવિષયો બોધ્યઃ । સિદ્ધસ્ય ક્ષાયિકં સમ્યક્ત્વં પારિણામિકં તુ જીવત્વમિત્યેતદ્
ભાવદ્વયં ભવતિ । ઇતઃ પરો ન કોઽપિ ભાવો ભવતિ । તસ્માત્ સિદ્ધસ્યાયમેક એવ
ભજ્ઞો ભવતીતિ બોધ્યમ્ । નવમાતિરિક્તા નવ ભજ્ઞાસ્તુ પ્રરૂપણામાત્રમેવ । યતઃ સિદ્ધાતિ-

સંભવિત નહીં હોતા હૈ । જિસ જીવ કો મનુષ્યગતિ હૈ ઓર કષાય ઉપ-
શમિત હૈ સો ઇસ પ્રકાર સે ઉસકે ઔદયિક ઓર ઔપશમિક
ઇન દો ભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન ઔદયિકૌપશમિક નામ કા પ્રથમ
સાન્નિપાતિક ભાવ મોના જાતા તબ કિ જબ ઉસકે ઓર દૂસરે ભાવ
નહીં હોતે । ઔદયિકૌપશમિકભાવ કે સાથ વહાં ક્ષાયોપશમિક ભાવ
રૂપ ઇન્દ્રિયાં પારિણામિક ભાવ રૂપ જીવત્વ બી હૈ । કિસી ૨ જીવ કો
ઇસ ઔદયિકૌપશમિક કે સાથ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વ બી સંભવિત હોતા
હૈ ઇસ પ્રકાર કા વિચાર નૌવે-ભંગ કે સિવાય સમસ્ત ભંગો મેં જાનના
ચાહિયે । ક્યોંકિ જો નૌવાં ભંગ હૈ વહ સિદ્ધ ભગવાન્ કો અપેક્ષા સે
હૈ । સિદ્ધ ભગવાન્ મેં ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ ઓર પારિણામિક ભાવ રૂપ
જીવત્વ રહતા હૈ । ઇનકે અતિરિક્ત ઓર ભાવ વહાં નહીં રહતે હૈ ।
ઇસલિયે સિદ્ધ મેં યહ નૌવાં ભંગરૂપ એક સાન્નિપાતિક ભાવ હી હૈ ।

જ છે, કારણ કે એવો સાન્નિપાતિક ભાવ કોઈ પણ જીવમાં સંભવિત હોતો
નથી જે જીવમાં મનુષ્યગતિ છે અને કષાય ઉપશમિત છે, આ પ્રકારે તેના
ઔદયિક અને ઔપશમિક, આ બંને ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન ઔદયિકૌ-
પશમિક નામનો પ્રથમ સાન્નિપાતિક ભાવ તો ત્યારે જ માની શકાય કે જ્યારે
તે જીવમાં અન્ય કોઈ ભાવનો સદ્ભાવ જ ન હોય ઔદયિકૌપશમિક ભાવની
સાથે ત્યાં ક્ષાયોપશમિક ભાવ રૂપ ઇન્દ્રિયો અને પારિણામિક ભાવ રૂપ
જીવત્વનો પણ સદ્ભાવ રહે છે. કોઈ કોઈ જીવમાં આ ઔદયિકૌપશમિકની
સાથે ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ પણ સંભવિત હોય છે. આ પ્રકારનો વિચાર નવમાં
ભંગ સિવાયના સમસ્ત ભંગોમાં સમજવો જોઈએ, કારણ કે જે નવમો ભંગ
છે તે સિદ્ધ ભગવાનની અપેક્ષાએ ગ્રહણ કરવાનો છે. સિદ્ધ ભગવાનમાં ક્ષાયિક
સમ્યક્ત્વ અને પારિણામિક ભાવ રૂપ જીવત્વનો સદ્ભાવ રહે છે. તે સિવાયના
અન્ય ભાવોનો તેમનામાં સદ્ભાવ હોતો નથી તેથી જ સિદ્ધ જીવોમાં નવમાં
ભંગ રૂપ એક સાન્નિપાતિક ભાવનો સદ્ભાવ કહ્યો છે તે સિવાયના જે નવ

રિક્તાનામન્યેષાં જીવાનાં ન્યૂનતોઽપિ ઔદયિકી ગતિઃ ક્ષાયોપશમિકાનીન્દ્રિયાણિ
પારિણામિકં તુ જીવત્વમ્, इत्येतद् भावत्रयं लभ्यते एवेति बोध्यम् ॥સૂ૦ ૧૫૮॥

હસકે અતિરિક્ત ઓર જો નો ભંગ હૈં વે કેવલ પ્રરૂપણા માત્ર હી હૈં ।
ક્યોંકિ સિદ્ધોં કે સિવાય જિતને બી સંસારી જીવ હૈં, ડનકો કમ સે
કમ ત્રીન ભાવ તો હોતે હીં હૈં । જિસ ગતિ મેં વે હૈં ઇક તો વહ, તથા
ઇન્દ્રિયાં ઓર જીવત્વગતિ ઔદયિક ભાવ હૈ । ઇન્દ્રિયાં ક્ષાયોપશમિક
ભાવ હૈ ઓર જીવત્વ પારિણામિક ભાવ હૈ ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકારને દો ભાવોં કે સંયોગ હોને પર જો દશ સાન્નિપાતિક
ભાવ હોતે હૈં ડનકે વિષય મેં હસ સૂત્રદ્વારા વિવેચન કિયા હૈ । હસમેં જહાં
પર ઔદયિક ભાવ પ્રત્યેક સંયોગ મેં પ્રધાન રૂપ સે રહતા હૈ, ઓર
ક્ષોષ ઔપશમિક આદિ મેં સે ઇક ર છૂટતા ચલા જાતા હૈ વહ પહિલા દ્વિ
ભાવ સંયોગી ભેદ હોતા હૈ । હસકે ચાર ભંગ બનાયે ગયે હૈં । ડનમેં ઔદ-
યિક ઔપશમિક—સાન્નિપાતિક ભાવ નામ કા પહિલા ભંગ હૈ । જૈસે
યહ મનુષ્ય ઉપશાંત કષાય હૈ । અર્થાત્ યહ મનુષ્ય ઉપશાન્ત ક્રોધી
યાવત્ મનુષ્ય ઉપશાન્ત લોભી હૈ— યહાં પર ઉપશાંત ક્રોધ હોને સે તો
ઔપશમિક ભાવ ઓર મનુષ્ય કહને સે મનુષ્યગતિ કર્મ કે ઉદય સે

લ'ગો છે તેમનો ઉલ્લેખ તો માત્ર પ્રશ્નણાની અપેક્ષાએ જ કરવામાં આવ્યો
છે, કારણ કે સિદ્ધ જીવો સિવાયના જે સંસારી જીવો છે તે જીવોમાં તો
આંછામાં આંછા ત્રણ ભાવો અવશ્ય હોય છે. જે ગતિમાં તેમનો સદ્ભાવ
છે તે ગતિ તથા ઇન્દ્રિયો અને જીવત્વગતિ ઔદયિક ભાવ છે ઇન્દ્રિયો
ક્ષાયોપશમિક ભાવ રૂપ અને જીવત્વ પારિણામિક ભાવ રૂપ છે.

ભાવાર્થ—ખખે ભાવોનો સંયોગ થવાથી જે દસ સાન્નિપાતિક ભાવો
નિષ્પન્ન થાય છે, તેમના વિષયમાં સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં વિવેચન કર્યું છે.
પહેલા ચાર દ્વિભાવ સંયોગી સાન્નિપાતિક ભાવોમાં ઔદયિક ભાવ પ્રધાન
રૂપે રહે છે. ઔદયિક ભાવની સાથે ઔપશમિકથી લઈને પારિણામિક પર્યન્તના
ચાર ભાવોનો સંયોગ કરીને પહેલા ચાર ભંગ (ભાંગાઓ) બને છે. તેમાં
ઔદયિક અને ઔપશમિક ભાવોના સંયોગથી પહેલો સાન્નિપાતિક ભાવ રૂપ
ભંગ બન્યો છે જેમ કે...આ મનુષ્ય ઉપશાન્ત કષાય છે. એટલે કે આ મનુષ્ય
ઉપશાન્ત ક્રોધી, ઉપશાન્ત માની, ઉપશાન્ત માયી અને ઉપશાન્ત લોભી છે.
આ પ્રકારનું કથન કરવાથી પહેલો સાન્નિપાતિક ભાવ આ પ્રકારે શ્રદ્ધ થાય
છે 'અહીં ક્રોધ ઉપશાન્ત થયેલો હોવાથી ઔપશમિક ભાવનો, અને મનુષ્ય

ઔદયિક ભાવ ઘટિત હોતા હૈ । इसी प्रकार से मनुष्य उपशान्त मानी, मनुष्य उपशान्त मायी और मनुष्य उपशान्त क्रोधी इन इन वचनों में भी घटित कर लेना चाहिये । औदयिक क्षायिक सान्निपातिक नाम का दूसरा भंग है—इसका दृष्टान्त इस प्रकार से जानना चाहिये कि जैसे यह मनुष्य क्षीणकषायी है । औदयिक क्षायोपशमिक नाम का तीसरा सान्निपातिक भंग है जैसे मनुष्य पंचेन्द्रिय है । औदयिक पारिणामिक नाम का चौथा सान्निपातिक भंग है जैसे मनुष्य जीव है । जहां पर औदयिक भाव को छोड़ कर औपशमिक भाव के साथ क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक भावों का संयोग कर भंग बनाये जाते हैं वहां ५ वां ६ ठा और सातवां ये सान्निपातिक भाव बनते हैं । उनमें औपशमिक क्षायिक यह सान्निपातिक नाम का पहिला भंग है । जैसे यह उपशान्त लोभी दर्शन मोहनीय के क्षीण होजाने से क्षायिक सम्यग्दृष्टि है । औपशमिक क्षायिक नामका दूसरा भंग है जैसे यह उपशान्त मानी आभिनिबोधिक ज्ञानी है । औपशमिक पारिणामिक नाम का तीसरा भंग है—जैसे उपशान्त मायाकषाय वाला भव्य । जहां पर औपशमिक

કહેવાથી મનુષ્ય ગતિ કર્મના ઉદયને લીધે ઔદયિક ભાવનો સદ્ભાવ બતાવ્યો છે. એજ પ્રમાણે ઉપશાન્ત મानी મનુષ્ય, ઉપશાન્ત માयी મનુષ્ય અને ઉપશાન્ત લોभी મનુષ્ય, આ ત્રણે પ્રકારના કથનમાં પણ ઔદયિક અને ઔપશમિક ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન સાન્નિપાતિક ભાવ જ ઘટિત થઈ જાય છે. “ઔદયિક ક્ષાયિક સાન્નિપાતિક ભાવ” નામના ખીજા ભંગનું દૃષ્ટાન્ત નીચે પ્રમાણે છે—“આ મનુષ્ય ક્ષીણ કષાય છે.”

“ઔદયિક ક્ષાયોપશમિક” નામના ત્રીજા સાન્નિપાતિક ભંગનું દૃષ્ટાન્ત—“મનુષ્ય પંચેન્દ્રિય છે.” ઔદયિક પારિણામિક નામના ચોથા સાન્નિપાતિક ભંગનું દૃષ્ટાન્ત—“મનુષ્ય જીવ છે.”

ઔપશમિક ભાવની સાથે અનુક્રમે ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક ભાવના સંયોગથી પાંચમાં, છઠ્ઠા અને સાતમાં સાન્નિપાતિક ભાવ રૂપ ત્રણ ભંગો નિષ્પન્ન થાય છે.

“ઔપશમિક ક્ષાયિક” નામના પાંચમાં સાન્નિપાતિક ભંગનું દૃષ્ટાન્ત—“આ ઉપશાન્ત લોभी દર્શનમોહનીય કર્મનો ક્ષય થઈ જવાથી ક્ષાયિક સમ્યગ્દૃષ્ટિ છે.”

“ઔપશમિક ક્ષાયોપશમિક” નામના છઠ્ઠા સાન્નિપાતિક ભંગનું દૃષ્ટાન્ત—“આ ઉપશાન્ત મानी આભિનિબોધિક જ્ઞાની છે.”

“ઔપશમિક પારિણામિક” નામના સાતમાં સાન્નિપાતિક ભંગનું દૃષ્ટાન્ત—“ઉપશાન્ત માયા કષાયવાળો ભવ્ય.”

ભાવ મી છોડદિયાજાતા હૈ । વહાં ક્ષાયિકભાવ કે સાથ ક્ષાયોપશમિક ઓર પારિણામિક ભાવકા સંબન્ધ હોનેપર તીસરા દ્વિભાવ સંયોગી ભેદ હોતા હૈ—ઉસકે દો ભંગ હસપ્રકાર સે હૈ—ઝનમે ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક પ્રથમ સાન્નિપાતિકભાવ હૈ ઓર દૂસરા ક્ષાયિક પારિણામિક હૈ । ઝનમે પ્રથમ કા દૃષ્ટાન્ત ક્ષાયિક સમ્યગ્દૃષ્ટિ શ્રુતજ્ઞાની હૈ ઓર દૂસરે કા દૃષ્ટાન્ત ક્ષીણકષાયી ભવ્ય હૈ । જહાંપર ક્ષાયિકભાવ કા મી પરિત્યાગ હો જાતા હૈ કેવલ ક્ષાયોપશમિક પારિણામિક રૂપ સંયોગ રહતા હૈ, વહાં પર એક હી ક્ષાયોપશમિક પારિણામિક એસા ભંગ હોતા હૈ । હસકા દૃષ્ટાન્ત—જૈસે અવધિજ્ઞાની જીવ હૈ । હસપ્રકાર યે દ્વિભાવ સંયોગી ભંગ મિલકર ૧૦ હૈ । ઝનમે જો નૌર્વા ભંગ હૈ કિ જિસકા નામ ક્ષાયિક પારિણામિક હૈ વહ સિદ્ધજીવોં કી અપેક્ષા સે હૈ ઓર વહી શુદ્ધનિર્દોષ હૈ ઘાકી કે અવશિષ્ટ નૌ ભંગ વિવક્ષા માત્ર હૈ—કયોંકિ ઝનમે અન્ય ભાવોં કા મી સંબન્ધ ઘટિત હોતા હૈ । જૈસે યહ મનુષ્ય ઉપશાંત ક્રોધી હૈ યહાં પર મનુષ્ય કો મનુષ્યગતિનામ કર્મકો ઉદય હૈ હસલિયે ઔદયિક ભાવ હૈ । ક્રોધ કા ઉપશમ હૈ, હસલિયે ઔપશમિક ભાવ હૈ ।

ક્ષાયિક ભાવની સાથે અનુક્રમે ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક ભાવનો સંયોગ કરવાથી આઠમાં અને નવમાં સાન્નિપાતિક ભાવ રૂપ બે ભંગો બને છે.

“ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક” નામના આઠમાં સાન્નિપાતિક ભંગનું દૃષ્ટાન્ત—ક્ષાયિક સમ્યગ્દૃષ્ટિ શ્રુતજ્ઞાની અને ‘ક્ષીણકષાયી ભવ્ય’ ક્ષાયિક પારિણામિક નામના નવમાં સાન્નિપાતિક ભંગના દૃષ્ટાન્ત રૂપ છે.

ક્ષાયોપશમિક ભાવ અને પારિણામિક ભાવના સંયોગથી ૧૦ મેં સાન્નિપાતિક ભંગ બને છે. “અવધિજ્ઞાની જીવ,” આ ભંગના દૃષ્ટાન્ત રૂપ છે.

આ પ્રકારે બે ભાવોના સંયોગથી કુલ ૧૦ ભંગ બને છે. તેમાં બે નવમો ભંગ (ક્ષાયિક પારિણામિક નામનો ભંગ) છે, તે સિદ્ધ જીવોને લાભ પડે છે, આ ભંગ જ ખરી રીતે સંભવી શકે છે તેથી આ ભંગ જ શુદ્ધ નિર્દોષ ભંગ રૂપ છે. બાકીના બે નવ ભંગો છે તેમનું તો અહીં વિવક્ષા માત્ર રૂપે જ (પ્રરૂપણા કરવા માટે જ) કથન કરવામાં આવ્યું છે, કારણ કે તે ભાવોમાં અન્ય ભાવોનો સંબંધ પણ શક્ય હોય છે જેમ કે “આ મનુષ્ય ઉપશાન્ત ક્રોધી છે.” અહીં મનુષ્યમાં મનુષ્યગતિ નામકર્મનો ઉદય છે, તેથી ઔદયિક ભાવનો સદ્ભાવ છે, અને ક્રોધનો ઉપશમ હોવાથી ઔપશમિક ભાવનો પણ સદ્ભાવ છે. પરંતુ સાથે સાથે તે મનુષ્યમાં બીજાં ભાવો પણ

अथ त्रिकयोगान्निरूपयितुमाह—

मूलम्—तत्थ णं जे ते दस तिगसंजोगा ते णं इमे—अत्थि
णामे उदइयउवसमियखइयनिप्फण्णे१ अत्थि णामे उदइयउव-
समियखओवसमियनिप्फण्णे२, अत्थि णामे उदइय उवसमिय-
पारिणामियनिप्फण्णे३, अत्थि णामे उदइय खइयखओवसमिय-
निप्फण्णे४, अत्थि णामे उदइयखइयपारिणामियनिप्फण्णे५,
अत्थि णामे उदइयखओवसमियपारिणामियनिप्फण्णे६, अत्थि
णामे उवसमियखइयखओवसमियनिप्फण्णे७, अत्थि णामे
उवसमियखइयपारिणामियनिप्फण्णे८, अत्थि णामे उवसमिय
खओवसमियपारिणामियनिप्फण्णे९, अत्थि णामे खइयखओव-
समियपारिणामियनिप्फण्णे१०। कयरे से णामे उदइयउवसमि-
यखइयनिप्फण्णे ? उदइयउवसमियखइयनिप्फण्णे—उदइएत्ति
मणुस्से उवसंता कसाया खइयं सम्मत्तं। एस णं से णामे उदइ-
यउवसमियखइयनिप्फण्णे ॥१॥ कयरे से णामे उदइयउवसमिय-
खओवसमियनिप्फण्णे ? उदइयउवसमियखओवसमियनिप्फण्णे-
उदइएत्ति मणुस्से उवसंता कसाया खओवसमियाइं इंदियाइं।
एस णं से णामे उदइयउवसमियखओवसमियनिप्फण्णे ॥२॥
कयरे से णामे उदइयउवसमियपारिणामियनिप्फण्णे ? उदइय-
उवसमियपारिणामियनिप्फण्णे—उदइएत्ति मणुस्से उवसंता

परन्तु साथ २ उसके और भी भाव मौजूद हैं । क्योंकि समस्त संसारी जीवों में कम से कम तीन भाव तो होते ही हैं । ॥ सू० १५८ ॥

મોજૂદ હોય છે, કારણ કે સમસ્ત સંસારી જીવોમાં ઝોઝામાં ઝોઝા ત્રણ ભાવોનો તો અવશ્ય સદૃશાવ હોય છે. ॥સૂ.૦૧૫૮॥

कसाया पारिणामिए जीवे । एस णं से णामे उदइयउवसमियपारि-
 णामियनिष्फणणे॥३॥ कयरे से णामे उदइयखइयखओवसमिय-
 निष्फणणे ? उदइयखइयखओवसमियनिष्फणणे—उदइएत्ति मणुस्से
 खइयं सम्मत्तं खओवसमियाइं इंदियाइं । एस णं से णामे उदइय-
 खइयखओवसमियनिष्फणणे॥४॥ कयरे से णामे उदइयखइय-
 पारिणामियनिष्फणणे ? उदइयखइयपारिणामियनिष्फणणे—उदइ-
 एत्ति मणुस्से खइयं सम्मत्तं पारिणामिए जीवे । एस णं से णामे
 उदइएखइयपारिणामियनिष्फणणे॥५॥ कयरे से णामे उदइय-
 खओवसमियपारिणामियनिष्फणणे ? उदइयखओवसमियपारि-
 णामियनिष्फणणे—उदइएत्ति मणुस्से खओवसमियाइं इंदियाइं
 पारिणामिए जीवे । एस णं से णामे उदइयखओवसमियपारि-
 णामियनिष्फणणे॥६॥ कयरे से णामे उवसमियखइयखओव-
 समियनिष्फणणे ? उवसमियखइयखओवसमियनिष्फणणे—उव-
 संता कसाया खइयं सम्मत्तं खओवसमियाइं इंदियाइं । एस णं से
 णामे उवसमियखइयखओवसमियनिष्फणणे॥७॥ कयरे से णामे
 उवसमियखइयपारिणामियनिष्फणणे ? उवसमियखइयपारिणा-
 मियनिष्फणणे—उवसंता कसाया खइयं सम्मत्तं पारिणामिए
 जीवे । एस णं णामे उवसमियखइयपारिणामियनिष्फणणे॥८॥
 कयरे से णामे उवसमियखओवसमियपारिणामियनिष्फणणे ?
 उवसमियखओवसमियपारिणामियनिष्फणणे—उवसंता कसाया
 खओवसमियाइं इंदियाइं पारिणामिए जीवे । एस णं से णामे उव-

समियखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे॥९॥ कयरे से णामे खइय
खओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे? खइयखओवसमियपारि-
णामियनिष्फण्णे—खइयं सम्मत्तं खओवसमियाइं इंदियाइं
पारिणामिए जीवे। एस णं से णामे खइयखओवसमिय पारि-
णामियनिष्फण्णे॥१०॥सू०१५९॥

छाया—तत्र खलु ये ते दश त्रिकसंयोगास्ते खलु इमे—अस्ति नाम औदयिकौ-
पशमिक क्षायिकनिष्पन्नम् १, अस्ति नाम औदयिकौपशमिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम् २
अस्ति नाम औदयिकौपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम् ३, अस्ति नाम औदयिकक्षायि-
कक्षायोपशमिकनिष्पन्नम् ४, अस्ति नाम औदयिकक्षायिकपारिणामिकनिष्पन्नम् ५,
अस्ति नाम औदयिकक्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम् ६, अस्ति नाम औपश-
मिकक्षायिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम् ७, अस्ति नाम औपशमिकक्षायिकपारिणामिक-
निष्पन्नम् ८, अस्ति नाम औपशमिकक्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम् ९, अस्ति
नाम क्षायिकक्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम् १०। कतरत् तन्नाम औदयिकौ-
पशमिकक्षायिकनिष्पन्नम्? औदयिकौपशमिकक्षायिकनिष्पन्नम्—औदयिकमिति
मानुष्यम् उपशान्ताः कषायाः क्षायिकं सम्यक्त्वम्। एतत् खलु तन्नाम औदयिकौ-
पशमिकक्षायिकनिष्पन्नम्॥१॥ कतरत् तन्नाम औदयिकौपशमिकक्षायोपशमिकनि-
ष्पन्नम्? औदयिकौपशमिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम्—औदयिकमिति मानुष्यं उप-
शान्ताः कषायाः क्षायोपशमिकानीन्द्रियाणि। एतत् खलु तन्नाम औदयिकौपशमिक-
क्षायोपशमिकनिष्पन्नम्॥२॥ कतरत् तन्नाम औदयिकौपशमिकपारिणामिक-
निष्पन्नम्? औदयिकौपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्—औदयिकमिति मानुष्यम्
उपशान्ताः कषायाः पारिणामिको जीवः। एतत् खलु तन्नाम औदयिकौपशमिक-
पारिणामिकनिष्पन्नम्॥३॥ कतरत् खलु औदयिकक्षायिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम्?
औदयिकक्षायिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम्—औदयिकमिति मानुष्यम्, क्षायिकं
सम्यक्त्वं क्षायोपशमिकानीन्द्रियाणि। एतत् खलु तन्नाम औदयिकक्षायिकक्षायो-
पशमिकनिष्पन्नम्॥४॥ कतरत् तन्नाम औदयिकक्षायिकपारिणामिकनिष्पन्नम्?
औदयिकक्षायिकपारिणामिकनिष्पन्नम्—औदयिकमिति मानुष्यं क्षायिकं सम्यक्त्वं
पारिणामिको जीवः। एतत् खलु तन्नाम औदयिकक्षायिकपारिणामिकनिष्-
पन्नम्॥५॥ कतरत् तन्नाम औदयिकक्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्? औदयि-
कक्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्—औदयिकमितिमानुष्यं क्षायोपशमिकानि

इन्द्रियाणि पारिणामिको जीवः । एतत् खलु तन्नाम औदयिकक्षायोपशमिक-
 निष्पन्नम्॥६॥ कतरत् तन्नाम औपशमिकक्षायिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम् ?
 औपशमिकक्षायिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम्-उपशान्ताः कषायाः क्षायिकं
 सम्यक्त्वं क्षायोपशमिकानि इन्द्रियाणि । एतत् खलु तन्नाम औपशमिकक्षायिक-
 क्षायोपशमिकनिष्पन्नम्॥७॥ कतरत् तन्नाम औपशमिकक्षायिकपारिणामिक-
 निष्पन्नम् ? औपशमिकक्षायिकपारिणामिकनिष्पन्नम्-उपशान्ताः कषायाः
 क्षायिकं सम्यक्त्वं पारिणामिको जीवः एतत् खलु तन्नाम औपशमिकक्षायिक-
 पारिणामिकनिष्पन्नम्॥८॥ कतरत् तन्नाम औपशमिकक्षायोपशमिकपारिणामिक-
 निष्पन्नम् ? औपशमिकक्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्-उपशान्ताः कषायाः
 क्षायोपशमिकानि इन्द्रियाणि पारिणामिको जीवः । एतत् खलु तन्नाम औपशमिक-
 क्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्॥९॥ कतरत् तन्नाम क्षायिकक्षायोपशमिक-
 पारिणामिकनिष्पन्नम् ? क्षायिकक्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्-क्षायिकं
 सम्यक्त्वं क्षायोपशमिकानि इन्द्रियाणि पारिणामिको जीवः । एतत् खलु तन्नाम
 क्षायिक क्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्॥१०॥ सू० १५९॥

टीका—‘तत्थ णं जे ते दस’ इत्यादि—

त्रिक संयोगेऽपि दश भङ्गा भवन्ति । तत्र आद्य भावद्वयं परिपाट्या निक्षिप्य
 अवशिष्टानां त्रयाणां मध्ये क्रमेण एकैकस्य तत्र संयोगे कृते सति त्रयो भङ्गा

અવ સૂત્રકાર ત્રીન ભાવોં કે સંયોગ સે જો સાન્નિપાતિક ભાવ ઘનતે
 હેં ઉનકા કથન કરતે હેં—“તત્થળં જે તે” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(તત્થ ણં જે તે દસ તિગ સંજોગા તે ણં હમે) इन सान्निपा-
 तिक भावों में जो तीन २ भावों के संयोग से १० सान्निपातिक भाव के
 दश भंग घनते हैं—वे हस प्रकार से हैं—(अत्थिणामे उद्वयउवसमिय
 खद्वयनिष्फण्णे?) औदयिक, औपशमिक, क्षायिक, इन तीनों भावों के
 संयोग से निष्पन्न औदयिकौपशमिक क्षायिक सान्निपातिक भाव
 एक (अत्थि णामे उद्वयउवसमियखओवसमियनिष्फण्णे २) दूसरा—

ત્રણ ભાવોના સંયોગથી જે સાન્નિપાતિક ભાવો બને છે તેમનું સૂત્રકાર
 હવે નિરૂપણ કરે છે—“તત્થ ણં જે તે” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(તત્થ ણં જે તે દસતિગસંજોગા તેણં હમે...) ત્રણ ત્રણ ભાવોના
 સંયોગથી જે દસ સાન્નિપાતિક ભાવો બને છે તે નીચે પ્રમાણે છે—(અત્થિ-
 ણામે ઉદ્વયઉવસમિય—ખદ્વયનિષ્ફણે?) (૧) ઔદયિક, ઔપશમિક અને
 ક્ષાયિક, આ ત્રણે ભાવોના સંયોગથી બનતા “ઔદયિકૌપશમિક ક્ષાયિક
 સાન્નિપાતિક ભાવ,” (અત્થિ ણામે ઉદ્વયઉવસમિયખઓવસમિયનિષ્ફણે) (૨)

औदयिक औपशमिक, एवं क्षायोपशमिक इन तीनों भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ औदयिकौपशमिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक भाव (अत्थिणामे उदइय उवसमिय पारिणामिय निष्फण्णे) तीसरा-औदयिक, औपशमिक और पारिणामिक, इन तीन भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ औदयिक औपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक भाव (अत्थिणामे उदइयखइयखओवसमियनिष्फण्णे) चौथा-औदयिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक इन तीनों भावों के संयोग से निष्पन्न औदयिक क्षायिक, क्षायोपशमिक सान्निपातिक भाव (अत्थिणामे उदइय खइय पारिणामिय निष्फण्णे) पांचवां-औदयिक क्षायिक और पारिणामिक इन तीनों भावों के संयोग से निष्पन्न औदयिक क्षायिक पारिणामिक सान्निपातिक भाव (अत्थि णामे उदइय खओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) छठा-औदयिक क्षायोपशमिक और पारिणामिक इन तीनों भावों के संयोग से निष्पन्न औदयिक क्षायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक भाव (अत्थि-णामे उवसमियखइयखओवसमियनिष्फण्णे) सातवां-औपशमिक क्षायिक और क्षायोपशमिक इन तीनों भावों के संयोग से निष्पन्न औपशमिक, क्षायिक क्षायोपशमिक नाम का सान्निपातिक भाव

औदयिक, औपशमिक अने क्षायोपशमिक, आ त्रणु भावेना संयोग्थी भनते।
“ औदयिकौपशमिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक भाव. ”

(अत्थिणामे उदइयउवसमियपारिणामियनिष्फण्णे३) (३) औदयिक, औपशमिक अने पारिणामिक आ त्रणु भावेना संयोग्थी भनते। “औदयिकौपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक भाव. ”

(अत्थि णामे उदइयखइयखओवसमियनिष्फण्णे) (४) औदयिक, क्षायिक अने क्षायोपशमिक सान्निपातिक भाव. ”

(अत्थि णामे उदइयखइयपारिणामियनिष्फण्णे) (५) औदयिक, क्षायिक अने पारिणामिक, आ त्रणु भावेना संयोग्थी निष्पन्न थते। “औदयिक क्षायिक पारिणामिक सान्निपातिक भाव. ”

(अत्थि णामे उदइयखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) (६) औदयिक, क्षायोपशमिक अने पारिणामिक भावेना संयोग्थी भनते। “ औदयिक क्षायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक भाव. ”

(अत्थि णामे उवसमियखइयखओवसमियनिष्फण्णे) (७) औपशमिक, क्षायिक अने क्षायोपशमिक, आ त्रणु भावेना संयोग्थी भनते। “ औपशमिक क्षायिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक भाव. ”

(અસ્થિનામે ઉવસમિયસ્વહ્યપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) આઠવાં-ઔપશ-
મિક ક્ષાયિક ઔર પારિણામિક इन तीन भावों के संयोग से निष्पन्न
ઔપશમિક ક્ષાયિક પારિણામિક નામ કા સાન્નિપાતિક ભાવ (અસ્થિ-
નામે ઉવસમિયસ્વઔવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) નૌવાં-ઔપશ-
મિક, ક્ષાયોપશમિક ઔર પારિણામિક इन तीन भावों के संयोग से
નિષ્પન્ન ઔપશમિક ક્ષાયોપશમિક પારિણામિક નામ કા સાન્નિપાતિક
ભાવ, અસ્થિનામે સ્વહ્યસ્વઔવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) દસવાં-
ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક, ઔર પારિણામિક इन तीनों भावों के संयोग
से निष्पन्न ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક પારિણામિક નામ કા સાન્નિપાતિક
ભાવ । (કયરે સે નામે ઉદહ્યુવસમિયસ્વહ્યનિષ્કળ્ણે)

પ્રશ્ન-હે ભદ્રન્ત ! ઔદયિકૌપશમિક ક્ષાયિક નામ કા જો પ્રથમ
ત્રિક ભાવ સંયોગી સાન્નિપાતિક ભાવ હૈ વહ કૈસા હૈ ?

ઉત્તર-(ઉદહ્યુવસમિયસ્વહ્યનિષ્કળ્ણે) ઔદયિકૌપશમિક ક્ષાયિક-
નામ કા જો પ્રથમ ત્રિક સંયોગી સાન્નિપાતિક ભાવ હૈ-વહ એસા હૈ-
ઉદહ્યુત્તિમણુસે ઉવસંતા-કસાયા સ્વહ્ય સંમત્તં) મનુષ્યગતિ ઔદયિક
ભાવ મેં હૈ કષાયોં કા ઉપશમ ઔપશમિક ભાવ મેં હૈ ઔર ક્ષાયિક

(અસ્થિ નામે ઉવસમિયસ્વહ્યપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) (૮) ઔપશમિક,
ક્ષાયિક અને પારિણામિક, આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી બનતો “ ઔપશમિક
ક્ષાયિક પારિણામિક નામનો સાન્નિપાતિક ભાવ. ”

(અસ્થિનામે ઉવસમિય સ્વઔવસમિય પારિણામિય નિષ્કળ્ણે) (૯) ઔપશમિક,
ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી બનતો
“ ઔપશમિક ક્ષાયોપશમિક પારિણામિક નામનો સાન્નિપાતિક ભાવ. ”

(અસ્થિનામે સ્વહ્યસ્વઔવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) (૧૦) ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશ-
મિક અને પારિણામિક, આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી બનતો “ ક્ષાયિક ક્ષાયોપ-
શમિક પારિણામિક નામનો સાન્નિપાતિક ભાવ. ”

પ્રશ્ન-(કયરે સે નામે ઉદહ્યુવસમિયસ્વહ્યનિષ્કળ્ણે ?) હે ભગવન્ !
ઔદયિકૌપશમિક ક્ષાયિક નામનો જે પહેલો ત્રિકભાવ સંયોગી સાન્નિપાતિક
ભાવ છે તે કેવો છે ?

ઉત્તર-(ઉદહ્યુવસમિયસ્વહ્યનિષ્કળ્ણે) ઔદયિક ઔપશમિક ક્ષાયિક
નામનો જે પહેલો ત્રિકભાવસંયોગી સાન્નિપાતિક ભાવ છે તે આ પ્રકારનો
છે-(ઉદહ્યુત્તિ મણુસે ઉવસંતા કસાયા સ્વહ્ય સંમત્તં) મનુષ્ય ગતિ ઔદયિક
ભાવ છે, કષાયોનો ઉપશમ ઔપશમિક ભાવ છે અને ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ

સમ્યક્ત્વ ક્ષાયિક ભાવ મેં હૈ—(એણં સે ણામે ઉદહયઽવસમિયસ્વહય-
નિષ્ફળે) હસ પ્રકાર યહ ઔદયિક ઔપશમિક ક્ષાયિક નિષ્પન્ન નામ
સાન્નિપાતિક ભાવ હૈ । (કયરે સે ણામે ઉદહયઽવસમિયસ્વઔવ-
સમિયનિષ્ફળે) હે ભદન્ત ! ઔદયિક ક્ષાયોપશમિક સાન્નિપાતિક
ભાવ કેસા હૈ ?

ઉત્તર—(ઉદહય ઽવસમિયસ્વઔવસમિયનિષ્ફળે) ઔદયિક ઔપ-
શમિક ક્ષાયોપશમિક નામકા સાન્નિપાતિકભાવ એસા હૈ (ઉદહય
ત્તિમણુસ્સે ઽવસંતા કસાયા સ્વઔવસમિયાહં હંદિયાહં) મનુષ્યગતિ ઔદ-
યિક, ઉપશાન્તકષાયે ઔપશમિક, ઔર ઇન્દ્રિયા ક્ષાયોપશમિક (એણં
સે ણામે ઉદહયઽવસમિયસ્વઔવસમિયનિષ્ફળે) હસ પ્રકાર યહ
ઔદયિકૌપશમિક ક્ષાયોપશમિક સાન્નિપાતિક ભાવ હૈ । (કયરે
સે ણામે ઉદહયઽવસમિયપારિણામિયનિષ્ફળે ?) હે ભદન્ત ! ઔદ-
યિકૌપશમિક પારિણામિક નામ કા તીસરા સાન્નિપાતિક ભાવ કેસા
હૈ ? (ઉદહયઽવસમિયપારિણામિયનિષ્ફળે)

ઉત્તર—ઔદયિકૌપશમિક પારિણામિક નામકા જો તીસરા સાન્નિ-
પાતિક ભાવ હૈ વહ એસા હૈ—(ઉદહયેત્તિ મણુસ્સે ઽવસંતા કસાયા પારિ-

ક્ષાયિક ભાવ છે. (એણં સે ણામે ઉદહયઽવસમિયસ્વહયનિષ્ફળે) આ પ્રકારનો
આ ઔદયિકૌપશમિક ક્ષાયિક નિષ્પન્ન નામનો સાન્નિપાતિક ભાવ છે.

પ્રશ્ન—કયરે સે ણામે ઉદહયઽવસમિયસ્વઔવસમિયનિષ્ફળે ? હે ભગવન્ !
ઔદયિકૌપશમિક સાન્નિપાતિક ભાવ કેવો છે ?

ઉત્તર—(ઉદહયઽવસમિયસ્વઔવસમિયનિષ્ફળે) ઔદયિકૌપશમિક—ક્ષાયોપશમિક
નામનો સાન્નિપાતિક ભાવ આ પ્રકારનો છે—(ઉદયત્તિ મણુસ્સે, ઽવસંતા-
કસાયા, સ્વઔવસમિયાહં હંદિયાહં) મનુષ્ય ગતિ ઔદયિક ભાવ છે, ઉપશાન્ત
કષાયો ઔપશમિક ભાવ છે અને ઇન્દ્રિયો ક્ષાયોપશમિક ભાવ છે. (એણં સે
ણામે ઉદહયઽવસમિયસ્વઔવસમિયનિષ્ફળે) આ પ્રકારનો આ ઔદયિકૌપશમિક
ક્ષાયોપશમિક સાન્નિપાતિક ભાવ છે.

પ્રશ્ન—(કયરે સે ણામે ઉદહયઽવસમિયપારિણામિયનિષ્ફળે ? હે ભગવન્ !
ઔદયિકૌપશમિક પારિણામિક નામનો ત્રીજો સાન્નિપાતિક ભાવ કેવો છે ?

ઉત્તર—(ઉદહયઽવસમિયપારિણામિયનિષ્ફળે ?) ઔદયિકૌપશમિક પારિણા-
મિક નામનો ત્રીજો સાન્નિપાતિક ભાવ આ પ્રકારનો છે—(ઉદહયેત્તિ
મણુસ્સે, ઽવસંતા કસાયા, પારિણામિય જીવે) મનુષ્ય ગતિ ઔદયિક ભાવ છે,

જામિએ જીવે) મનુષ્યગતિ ઔદયિક ભાવ હૈ કષાયોં કી ઉપશાંતિ ઔપશમિક ભાવ હૈ ઓર જીવ પારિણામિક ભાવ હૈ । (એસણં સે જામે ઉદહયઉવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) હસ પ્રકાર યહ ઔદયિકૌપશમિકપારિણામિક નામ કા સાન્નિપાતિક ભાવ હૈ । (કયરે સે જામે-ઉદહયલ્હયલ્હઓવસમિયનિષ્કળ્ણે ?) હે ભદન્ત ! ઔદયિક ક્ષાયિક ઓર ક્ષાયોપશમિક હન તીન ભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન હુઆ ઔદયિક ક્ષાયિકક્ષાયોપશમિક નામ કા સાન્નિપાતિક ભાવ કૈસા હૈ ?

ઉત્તર-(ઉદહયલ્હયલ્હઓવસમિયનિષ્કળ્ણે) ઔદયિક, ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક નામ કા સાન્નિપાતિક ભાવ એસા હૈ-

(ઉદ્દણ્તિ મણુસે લ્હયં સમ્મત્તં લ્હઓવસમિયાહં હંદિયાહં) મનુષ્યગતિ ઔદયિક ભાવ મેં હૈ । ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ યહ ક્ષાયિકભાવ મેં હૈ, ઓર હન્દ્રિયાં ક્ષાયોપશમિકભાવ મેં હૈ । (એસણં સે જામે ઉદહયલ્હયલ્હઓવસમિયનિષ્કળ્ણે) હસ પ્રકાર યહ ઔદયિકક્ષાયિકક્ષાયોપશમિક નામકા સાન્નિપાતિક ભાવ હૈ ।

(કયરે સે જામે ઉદહયલ્હયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે ?) હે ભદન્ત ! ઔદયિક ક્ષાયિક ઓર પારિણામિક હન તીન ભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન હુઆ સાન્નિપાતિક ભાવ કૈસા હૈ ? (ઉદહયલ્હયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે)

કષાયોની ઉપશાન્તિ ઔપશમિક ભાવ છે અને જીવ પારિણામિક ભાવ છે. (એસણં સે જામે ઉદહયઉવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) આ પ્રકારનું ઔદયિકૌપશમિક પારિણામિક નામના સાન્નિપાતિક ભાવનું સ્વરૂપ છે.

પ્રશ્ન-(કયરે સે જામે ઉદહયલ્હયલ્હઓવસમિયનિષ્કળ્ણે) હે ભગવન્ ! ઔદયિક ક્ષાયિક અને ક્ષાયોપશમિક આ ત્રણે ભાવોના સંયોગથી બનતા ઔદયિક ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક નામના ચોથા સાન્નિપાતિક ભાવનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(ઉદહયલ્હયલ્હઓવસમિયનિષ્કળ્ણે) ઔદયિક ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક નામના ચોથા સાન્નિપાતિક ભાવનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે-(ઉદ્દણ્તિ મણુસે, લ્હયં સમ્મત્તં, લ્હઓવસમિયાહં હંદિયાહં) મનુષ્ય ગતિ ઔદયિક ભાવ રૂપ છે, ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ ક્ષાયિક ભાવ રૂપ છે અને હન્દ્રિયો ક્ષાયોપશમિક ભાવ રૂપ છે. (એસણં સે જામે ઉદહયલ્હયલ્હઓવસમિયનિષ્કળ્ણે) આ પ્રકારનું ઔદયિક ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક નામના સાન્નિપાતિક ભાવનું સ્વરૂપ છે.

પ્રશ્ન-(કયરે સે જામે ઉદહયલ્હયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે ?) હે ભગવન્ ! ઔદયિક, ક્ષાયિક અને પારિણામિક ભાવોના સંયોગથી બનતા ચાંચમાં સાન્નિપાતિક ભાવનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-ઔદયિક ક્ષાયિક ઔર પારિણામિક इन तीन भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ सान्निपातिक नामका भाव इस प्रकार से है—(उदइएत्ति मणुस्से खइयं सम्मत्तं पारिणामिए जीवे) मनुष्य गति यह औदयिक भाव है, क्षायिक सम्पत्तव यह क्षायिक भाव है और जीव यह पारिणामिक भाव है । (एसणं से णामे उदइयखइयपारिणामिय-निष्फण्णे) इसप्रकार यह औदयिक क्षायिक पारिणामिक नामका सान्निपातिक भाव है । (कयरे से णामे उदइय खओवसमियपारिणामिय-निष्फण्णे ?) हे भदन्त ! औदयिक क्षयोपशमिक और पारिणामिक इन तीन भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ सान्निपातिक भाव कैसा है ?

उत्तर—(उदइय खओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) औदयिक क्षायोपशमिक और पारिणामिक इन तीनों भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ सान्निपातिक भाव ऐसा है—(उदइएत्तिमणुस्से खओवसमियाइं इंदियाइं पारिणामिए जीवे) मनुष्यगति यह औदयिक भाव है । इन्द्रियां ये क्षायोपशमिक भाव हैं और जीव यह पारिणामिक भाव है । (एसणं से णामे उदइयखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) इस प्रकार से यह औदयिक क्षायोपशमिक पारिणामिक नाम का सान्निपातिक भाव है ।

ઉત્તર—(उदइयखइयपारिणामियनिष्फण्णे) औदयिक क्षાયિક અને પારિણામિક, આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી બનતા પાંચમે સાન્નિપાતિક ભાવ આ પ્રકારનો છે—(उदइए त्ति मणुस्से, खइयं सम्मत्तं, पारिणामिए जीवे) मनुष्य गति औदयिक ભાવ રૂપ છે, ક્ષાયિક સમ્પત્તવ ક્ષાયિક ભાવ રૂપ છે અને જીવ પારિણામિક ભાવ રૂપ છે. (एसणं से णामे खइयपारिणामियनिष्फण्णे) આ પ્રકારનું ઔદયિક ક્ષાયિક પારિણામિક નામના સાન્નિપાતિક ભાવનું સ્વરૂપ છે.

પ્રશ્ન—(કયરે સે ણામે ઉદइयखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे ?) હે ભગવન્ ! ઔદયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ત્રણે ભાવોના સંયોગથી બનતા છઠા સાન્નિપાતિક ભાવનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(उदइयखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) ઔદયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ત્રણે ભાવોના સંયોગથી બનતા છઠા સાન્નિપાતિક ભાવનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—(उदइए मणुस्से खओवसमिाइं इंदियाइं, पारिणामिए जीवे) मनुष्यगति ઔદયિક ભાવરૂપ છે, ઇન્દ્રિયો ક્ષાયોપશમિક ભાવ રૂપ છે અને જીવ પારિણામિક ભાવ રૂપ છે. (एसणं से णामे उदइयखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) આ પ્રકારનો ઔદયિક ક્ષાયોપશમિક પારિણામિક નામનો સાન્નિપાતિક ભાવ છે.

(कधरे से जाने उवसमियखहयखओवसमियनिष्फण्णे ?) हे भदन्त !
 औपशमिक क्षायिक और क्षायोपशमिक इन तीनों भावों के संयोग से
 निष्पन्न हुआ सान्निपातिक भाव कैसा है ?

उत्तर—(उवसमिद्य खह्यखओवसमियनिष्कण्णे) औपशमिक-
क्षायिक और क्षायोपशमिक इन तीन भावों से निष्पन्न हुआ—सान्नि-
पातिकभाव इसप्रकार से है—(उवसंता कसाया खहयं सम्मत्तं खओव
समियाहं इंदियाहं) उपशमित हुई कषाये औपशमिक भाव हैं, क्षायिक
सम्यत्त्व क्षायिक भावरूप है और इन्द्रियां क्षायोपशमिक भाव है। (एसणं
से णामे उवसमिद्य खह्यखओवसमियनिष्कण्णे) इस प्रकार यह औपश-
मिक क्षायिक क्षायोपशमिक इन तीन भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ
सान्निपातिक भाव है, (कथरे से णामे उवसमिद्य खह्यपारिणामिय-
णिष्कण्णे) हे भदन्त ! औपशमिक क्षायिक और पारिणामिक इन तीन
भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ सान्निपातिक भाव कैसा है ?

उत्तर-(उवसमिधखइयपारिणामियनिष्फण्णे) औपशमिक क्षाधिक और पारिणामिक इन तीनों भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ सान्निपातिक भाव इसप्रकार से है । (उवसंता कसाया, खइयं सम्मत्तं, पारि-

પ્રશ્ન—(કયરે સે જામે ઉવસમિયલ્હ્યજ્ઞઓસમિયનિત્ક્ષણે ?) હેં લગવન્ !
 ઔપશમિક, ક્ષાયિક અને ક્ષાયોપશમિક, આ ત્રણેના સંયોગથી બનતા સાતમાં
 સાન્નિપાતિક ભાવનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(ઉવસમિય સ્વદ્યસ્વઔવસમિયનિષ્કર્ણે) ઔપશમિક, ક્ષાયિક અને ક્ષાયોપશમિક, આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી બનતા સાતમાં સાન્નિપાતિક ભાવનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે-(ઉત્તરસંતા કસાયા, સ્વદ્ય સમ્મત્તં, સ્વઔવસમિ-ચાઈં ઇંદિયાઈં) ઉપશમિત થયેલા કષાયો ઔપશમિક ભાવ રૂપ છે, ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ ક્ષાયિક ભાવ રૂપ છે અને ઇન્દ્રિયો ક્ષાયોપશમિક ભાવ રૂપ છે. (પસલં સે ણામે ઉવસમિયસ્વદ્યસ્વઔવસમિયનિષ્કર્ણો?) આ પ્રકારનો ઔપશ-મિક ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક નામનો સાન્નિપાતિક ભાવ હોય છે.

પ્રશ્ન-(કયરે સે જામે ઉત્તરમિય રૂઢિપારિજામિયનિષ્કણે?) હે ભગવન્ !
 ઔપશમિક, ક્ષાયિક અને પારિજામિક, આ ત્રણ ભાવેના સંયોગથી બનતા
 આઠમાં સાક્ષિપાતિક ભાવેનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(ઝવસમિયસ્વદ્યપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) ઔપશમિક, ક્ષાયિક અને પારિશ્લુમિક, આ ત્રણ લાવેના સંયોગથી બનતો આન્નિપાતિક લાવ આ પ્રકારનો છે-(ઝવસંતા કસાયા, સ્વદ્યં સમ્મત્તં, પારિણામિય જીવે) ઉપશમિત

ળમિએ જીવે) ઉપશમિત હુઈ કષાયેં ઔપશમિક ભાવ હૈં ક્ષાયિક સમ્ય-
ત્તવ ક્ષાયિકભાવ હૈં ઔર જીવ પારિણામિકભાવ હૈં । (એસણં સે ણામે
ઉવસમિયસ્વહ્યપારિણામિયનિષ્કળે) હસપ્રકાર યહ ઔપશમિકક્ષાયિક
ઔર પારિણામિક હન ત્રીન ભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન હુઆ સન્નિ-
પાતિકભાવ હૈં । (કયરે સે ણામે ઉવસમિયસ્વઔવસમિય પારિણામિય
નિષ્કળે ?) હે ભદન્ત ! ઔપશમિક ક્ષાયોપશમિક ઔર પારિણામિક
હનત્રીનોં ભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન હુઆ સાન્નિપાતિકભાવકૈસા હૈં ?

ઉત્તર—(ઉવસમિય સ્વઔવસમિયપારિણામિયનિષ્કળે) ઔપશ-
મિક, ક્ષાયોપશમિક, ઔર પારિણામિક હન ત્રીન ભાવોં કે સંયોગ સે
નિષ્પન્ન હુઆ સાન્નિપાતિક ભાવ હસ પ્રકાર સે હૈં—(ઉવસંતા કસાયા સ્વઔવ-
સમિયાઈં હંદિયાઈં પારિણામિએ જીવે) ઉપશમિત કષાય ઔપશમિક ભાવ
હૈં, હન્દ્રિયાં ક્ષાયોપશમિક ભાવ હૈં ઔર જીવ યહ પારિણામિક ભાવ હૈં ।
(એસણં સે ણામે ઉવસમિયસ્વઔવસમિયપારિણામિયનિષ્કળે) હસ પ્રકાર
યહ ઔપશમિક ક્ષાયોપશમિક ઔર પારિણામિક હન ત્રીન ભાવોં
કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન હુઆ સાન્નિપાતિક ભાવ હૈં । (કયરે સે ણામે સ્વહ્ય
સ્વઔવસમિયપારિણામિયનિષ્કળે) હે ભદન્ત ! ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક

થયેલા કષાયો ઔપશમિક ભાવ રૂપ છે, ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ ક્ષયિક ભાવ રૂપ
છે અને જીવ પારિણામિક ભાવ રૂપ છે. (એસણં સે ણામે ઉવસમિયસ્વહ્ય-
પારિણામિયનિષ્કળે) આ પ્રકારનો ઔપશમિક ક્ષાયિક પારિણામિક નામનો
સાન્નિપાતિક ભાવ છે.

પ્રશ્ન—(કયરે સે ણામે ઉવસમિયસ્વઔવસમિયપારિણામિયનિષ્કળે ?)
હે ભગવન્ ! ઔપશમિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ત્રણ ભાવોના
સંયોગથી નિષ્પન્ન થતો નવમો સાન્નિપાતિક ભાવ કેવો છે ?

ઉત્તર—(ઉવસમિય સ્વઔવસમિયપારિણામિયનિષ્કળે) ઔપશમિક, ક્ષાયોપશમિક
અને પારિણામિક, આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી બનતો નવમો સાન્નિપાતિક ભાવ
આ પ્રકારનો છે—(ઉવસંતા કસાયા, સ્વઔવસમિયાઈં હંદિયાઈં, પારિણામિએ જીવે)
ઉપશમિત કષાયો ઔપશમિક ભાવ રૂપ છે, હન્દ્રિયો ક્ષાયોપશમિક ભાવ રૂપ
છે અને જીવ પારિણામિક ભાવ રૂપ છે (એસણં સે ણામે ઉવસમિયસ્વઔવસ-
મિયપારિણામિયનિષ્કળે) આ પ્રકારનો ઔપશમિક ક્ષાયોપશમિક અને પારિણા-
મિક નામનો સાન્નિપાતિક ભાવ છે.

પ્રશ્ન—(કયરે સે ણામે સ્વહ્યસ્વઔવસમિયપારિણામિયનિષ્કળે ?) હે
ભગવન્ ! ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ત્રણ ભાવોના
સંયોગથી બનતો દસમો સાન્નિપાતિક ભાવ કેવો છે ?

और पारिणामिक इन तीन भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ सान्निपातिक भाव कैसा है ?

उत्तर—(खड्गखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) क्षायिक क्षायोपशमिक और पारिणामिक इन तीन भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ सान्निपातिक भाव ऐसा है—(खड्गं सम्मत्तं खओवसमियाइं इंदियाइं पारिणामिए जीवे) क्षायिक सम्यक्त्व क्षायिक भाव है, इन्द्रियां क्षायोपशमिक भाव हैं तथा जीव यह पारिणामिक भाव है। (एस णं से णामे खड्गखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) इस प्रकार यह क्षायिक क्षायोपशमिक और पारिणामिक इन तीन भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ क्षायिक क्षायोपशमिक पारिणामिक नामका सान्निपातिक भाव है—

भावार्थ—सूत्रकारने इस सूत्र द्वारा तीन भावों के संयोग से जो १० सान्निपातिक रूप भंग होते हैं उनका प्रदर्शन किया है। इनमें औदयिक और औपशमिक इन दो भावों को परिपाटी से निक्षिप्त कर के अवशिष्ट क्षायिक क्षायोपशमिक और पारिणामिक इन तीनों भावों में से एक एक भाव का उनके साथ संयोग किया है। इस प्रकार करने से तीन भंग निष्पन्न होते हैं, इनमें औदयिक औपशमिक क्षायिक सान्निपातिक भाव इस प्रकार से घटित करना चाहिये कि यह मनुष्य उपशान्त क्रोधादि कषायवाला होकर क्षायिक सम्यक् दृष्टि है। मनुष्य से यहाँ

उत्तर—(खड्ग खओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) क्षायिक, क्षायोपशमिक અને પારિણામિક, આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી બનતો દસમાં સાન્નિપાતિક ભાવ આ પ્રકારનો છે—(खड्गं सम्मत्तं, खओवसमियाइं इंदियाइं, पारिणामिए जीवे) क्षायિક સમ્યક્ત્વ ક્ષાયિક ભાવ રૂપ છે, ઇન્દ્રિયો ક્ષાયોપશમિક ભાવ રૂપ છે અને જીવ પારિણામિક ભાવ રૂપ છે. (एस णं से णामे खड्गखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) આ પ્રકારનું ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી બનતા દસમાં સ.નિપાતિક ભાવનું સ્વરૂપ છે.

ભાવાર્થ—ત્રણ ભાવોના સંયોગથી જે દસ સાન્નિપાતિક ભાવ રૂપ ૧૦ ભંગ બને છે, તેમનું સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં નિરૂપણ કર્યું છે ઔદયિક અને ઔપશમિક ભાવોની સાથે અનુક્રમે ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક ભાવોનો સંયોગ કરવાથી પહેલા ત્રણ ભંગ બન્યા છે.

(૧) “ ઔદયિકૌપશમિક સાન્નિપાતિક ભાવ ” રૂપ પહેલા ભંગનું ઉદાહરણ આ પ્રમાણે છે—“ આ મનુષ્ય ઉપશાન્ત ક્રોધાદિ કષાયવાળો છે અને ક્ષાયિક સમ્યક્દૃષ્ટિ છે. ” મનુષ્ય પદ અહીં મનુષ્યગતિનું વાચક છે. મનુષ્ય ગતિ ઔદયિક ભાવ રૂપ હોય છે, કારણ કે મનુષ્યગતિ નામકર્મના ઉદયથી

भवन्ति । तत आद्यं तृतीयं च परिपाट्या निक्षिप्य अवशिष्टयोर्द्वयोस्तत्र क्रमेण संयोगे भङ्गद्वयम् । ततः प्रथमचतुर्थपञ्चमभावानां संयोगे एको भङ्गः । इत्थं पद भङ्गाः । ततो द्वितीयं च मात्रपरिपाट्या निक्षिप्य तत्र चतुर्थपञ्चमयोः क्रमेण योगे भङ्गद्वयम् । ततो द्वितीयचतुर्थपञ्चमभावानां च योगे एको भङ्गः । तथा-तृतीयचतु-

મનુષ્યગતિ લી ગઈ है। मनुष्यगति यह औदयिक भाव है। क्यों कि मनुष्यगति नामकर्म के उदय से मनुष्य होता है। उपशान्त क्रोधादि कषायवाला कहने से औपशमिक भाव घटित होता है और क्षायिक सम्यक्त्व से क्षायिक भाव। इसी प्रकार से शेष दो भंगों में-औदयिकौपशमिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक भाव में यह मनुष्य उपशान्त कषायवाला पंचेन्द्रिय है यथा औदयिकौपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक भंग में यह मनुष्य उपशान्त कषायवाला जीव है-घटित करलेना चाहिये। जहां पर औपशमिक भाव का परित्याग कर औदयिक और क्षायिक भाव का ग्रहण हो तथा क्षायोपशमिक एवं पारिणामिक भावों में से एक २ का ग्रहण हो वह दूसरा त्रिभाव संयोगी सान्निपातिक भाव का भेद है-इसके दो भंग हैं-एक औदयिक क्षायिकक्षायोपशमिक और दूसरा औदयिक क्षायिक पारिणामिक, पहिलेका दृष्टान्त-क्षीण कषायी मनुष्य

મનુષ્ય ગતિની પ્રાપ્તિ થાય છે. ઉપશાન્ત ક્રોધાદિ કષાયવાળો કહેવાથી ઔપશમિક ભાવ ઘટિત થાય છે અને ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ યુક્ત કહેવાથી ક્ષાયિક ભાવ ઘટિત થાય છે એજ પ્રમાણે બીજા અને ત્રીજા ભંગોનો ભાવાર્થ પણ સમજી શકાય એવો છે.

(૨) “ઔદયિકૌપશમિક ક્ષાયોપશમિક સાન્નિપાતિક ભાવ” રૂપ બીજા ભંગનું ઉદાહરણ આ પ્રમાણે છે-

‘આ મનુષ્ય ઉપશાન્ત કષાયવાળો પંચેન્દ્રિય જીવ છે.’

(૩) ઔદયિકૌપશમિક પારિણામિક સાન્નિપાતિક ભંગનું ઉદાહરણ.

“આ મનુષ્ય ઉપશાન્ત કષાયવાળો જીવ છે.”

ત્યાર પછીનો ચોથો અને પાંચમો ભંગ આ પ્રમાણે બને છે-અહીં ઔદયિકભાવની સાથે ઔપશમિક ભાવ લેવાને બદલે ક્ષાયિક ભાવ લેવો અને ઔદયિક અને ક્ષાયિક ભાવની સાથે અનુક્રમે ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક ભાવોનો સંયોગ કરવાથી ચોથો અને પાંચમો ભંગ બને છે.

(૪) ઔદયિક ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક સાન્નિપાતિક ભાવનું ઉદાહરણ
“ક્ષીણ કષાયી મનુષ્ય શ્રુતશાનિ.”

પૃથક્કમભાવાનાં ચ યોગે ઈકો ભજ્ઞઃ । ઇત્યં સર્વે ભજ્ઞાં દશ સંખ્યકા ભવન્તિ ।
એતેષામેવ સ્વરૂપવિવરણાય ગ્રાહ-‘કયરે સે ગામે’ ઇત્યાદિ । ઈષાં વ્યાખ્યા પૂર્વ-
વદ્ વોધ્યા । તત્ર પશ્ચમો ભજ્ઞઃ કેવલિનાં સંભવતિ । કેવલિનાં હિ-ઔદયિકી

શ્રુતજ્ઞાની ઔર દૂસરે કા દૃષ્ટાન્ત જિસકા દર્શન મોહનીયાદિ કર્મ ક્ષીણ
હો ગયા હૈ એસા વહ મનુષ્ય જીવ હૈ । જહાંપર કેવલ ઔદયિક ભાવકા
ગ્રહણ હૈ ઔર ઔપશમિક એવં ક્ષાયિક કા પરિત્યાગ હૈ વહ તીસરા
ત્રિભાવ સંયોગી સાન્નિપાતિકભાવ હૈ । ડસકા ઔદયિક ક્ષાયોપશમિક
પારિણામિક ઈક-એસા છઠા ભંગ હૈ । ઇસકા દૃષ્ટાન્ત-જિસ પ્રકાર મનુષ્ય
મનોયોગી જીવ હૈ । જહાં પર ઔદયિક ભાવ કો છોડકર શેષ ઔપશ-
મિકાદિ ચાર ભાવોં સેં ઈક ૨ કા પરિત્યાગ ક્રિયા જાવે વહ ચૌથા
ત્રિભાવ સંયોગી ભેદ હૈ ઔર ડસકે ઇસ પ્રકાર સે ચાર ભંગ માને ગયે
હૈ-પહલા ભંગ-ઔપશમિક ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક સાન્નિપાતિક નામ
કા દૂસરા ભંગ ઔપશમિક ક્ષાયિકપારિણામિક સાન્નિપાતિક નામકો
તીસરા ભંગ-ઔપશમિક ક્ષાયોપશમિક પારિણામિક સાન્નિપાતિક નામ
કા । ચૌથા-ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક પારિણામિક સાન્નિપાતિક નામ કો
ઇસ પ્રકાર સે સઽવ ભંગ ૧૦ હો જાતે હૈ । ઇનમેં જો ઔદયિક, ક્ષાયિક
એવં પારિણામિક ભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન ૫વાં સાન્નિપાતિક ભાવકા

(૫) ઔદયિક ક્ષાયિક પારિણામિક સાન્નિપાતિક ભાવનું દૃષ્ટાન્ત-“જેના
દર્શનમોહનીય આદિ કર્મ ક્ષીણ થઇ ગયાં છે એવો મનુષ્ય જીવ.”

જે સાન્નિપાતિકભાવમાં ઔદયિક ભાવની સાથે ઔપશમિક અને ક્ષાયિક,
આ બે ભાવોને લેવાને બદલે બાકીના બે ભાવો લેવામાં આવે છે એવો
છટો ભંગ નીચે પ્રમાણે છે-“ઔદયિક ક્ષાયોપશમિક પારિણામિક સાન્નિપાતિક
ભાવ તેનું દૃષ્ટાન્ત નીચે પ્રમાણે છે-“મનુષ્ય મનોયોગી જીવ છે.”

બાકીના ચાર ભંગ આ પ્રકારે બન્યા છે-આ ચારે ભંગમાં ઔદયિકભાવ
સિવાયના ચાર ભાવોમાંના ત્રણ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી ચાર ભંગ બન્યા છે,

ઔપશમિક અને ક્ષાયિક, આ બે ભાવો સાથે ક્ષાયોપશમિક ભાવના
સંયોગથી સાતમો ભંગ અને પારિણામિકભાવના સંયોગથી આઠમો ભંગ બન્યો છે.

નવમાં ભંગમાં ઔપશમિક ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક ભાવોના
સંયોગથી જે સાન્નિપાતિક ભાવ બને છે તે ગ્રહણ કરવો અને દસમાં ભંગમાં
ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી બનતો
સાન્નિપાતિક ભાવ ગ્રહણ થયો છે. આ પ્રકારે કુલ ૧૦ ભંગ બને છે.

ઔદયિક, ક્ષાયિક અને પારિણામિક ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન પાંચમા
સાન્નિપાતિક ભાવનો તે માત્ર કેવલીઓમાં જ સદ્ભાવ હોય છે, કારણ કે

મનુષ્યગતિઃ ક્ષાયિકાણિ જ્ઞાનદર્શનચારિત્રોણિ પારિણામિકં જીવત્વમિતિ ત્રયો ભાવા ભવન્તિ । ઔપશમિકસ્તુ તેષુ નાસ્તિ, ઔપશમિકસ્ય મોહનીયાશ્રયત્વાત્, કેવલિષુ મોહનીયસ્યાસંભવાત્ । ક્ષાયોપશમિકો ભાવોઽપ્યેષાં નાસ્તિ, ક્ષાયોપશમિકાણિ ઇન્દ્રિયાદિપદાર્થત્વેનાભિમતાઃ, ઇન્દ્રિયાદિપદાર્થાસ્તુ કેવલિષુ ન સન્તિ, તેષામતીન્દ્રિયત્વાત્ । ઉક્તંચાપિ-‘અતીન્દ્રિયાઃ કેવલિનઃ’ ઇતિ । ઇત્થં ચ ઔદયિક-ક્ષાયિકપારિણામિકેતિ ભાવત્રયનિષ્પન્નઃ પશ્ચમો ભક્તઃ કેવલિનાં સંભવતિ । પશ્ચો ભક્તસ્તુ નારકાદિષુ ચતસ્રણુ ગતિષુ બોધ્યઃ । તથાહિ-નારકાદ્યન્યતમા ગતિઃ ઔદ-

ભંગ હૈ વહ કેવલિયોં કે સંભવતા હૈ-કયોંકિ કેવલિયોં કે ઔદયિક-મનુષ્યગતિ હૈ જ્ઞાનદર્શન ઔર ચારિત્ર યે ક્ષાયિકરૂપ હૈ । ઔર પારિણામિક રૂપ જીવત્વ હૈ । વહાં યે ત્રીન ભાવ હૈ । ઔપશમિક ભાવ ઉનમેં નહોં હૈ, કયોંકિ ઔપશમિક મોહનીય કે આશ્રય સે હોતા હૈ । ઔર મોહનીય કેવલિયોં મેં હૈ નહોં । ક્ષાયોપશમિક ભાવ બી કેવલિયોં મેં નહોં હોતા હૈ । કયોંકિ ક્ષાયોપશમિક ભાવ ઇન્દ્રિય આદિ પદાર્થરૂપ માને ગયે હૈ । ઇન્દ્રિયાદિરૂપ પદાર્થ કેવલિયોં મેં નહોં હૈ । કયોંકિ બે ઇન્દ્રિયાતીત હૈ । “અતીન્દ્રિયા કેવલિનઃ” એસા અન્યત્ર કહા હૈ । તાત્પર્ય હસકા યહ હૈ કિ કેવલિયોં કા જ્ઞાન ઇન્દ્રિયાતીત-અતીન્દ્રિય-હૈ । હસ પ્રકાર ઔદયિક ક્ષાયિક ઔર પારિણામિક હન ત્રીન ભાવોં સે નિષ્પન્ન પંચમ ભંગ કેવલિયોં મેં સંભવતા હૈ । તથા જો છઠા ઔદયિક ક્ષાયોપશમિક એવં

કેવલીઓમાં મનુષ્ય ગતિ રૂપ ઔદયિક લાવનો, જ્ઞાનદર્શન રૂપ ક્ષાયિક લાવનો અને જીવત્વ રૂપ પારિણામિક લાવનો સદ્લાવ રહે છે આ રીતે કેવલીઓમાં આ ત્રણ લાવોનો જ સદ્લાવ રહે છે. તેમનામાં ઔપશમિક લાવનો સદ્લાવ હોતો નથી કારણ કે ઔપશમિક લાવ મોહનીય કર્મના ઉપશમ પર આધાર રાખે છે. કેવલીઓમાં મોહનીય કર્મનો સદ્લાવ જ હોતો નથી કેવલીઓમાં ક્ષાયોપશમિક લાવનો પણ સદ્લાવ હોતો નથી કારણ કે ક્ષાયોપશમિક લાવ ઇન્દ્રિયાદિ પદાર્થ રૂપ મનાય છે છે ઇન્દ્રિયાદિ રૂપ પદાર્થ કેવલીઓમાં હોતા નથી, કારણ કે તેઓ ઇન્દ્રિયાતીત હોય છે. “અતીન્દ્રિયા કેવલિનઃ” એવું સિદ્ધાન્તકથન છે. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે કેવલીઓનું જ્ઞાન ઇન્દ્રિયાતીત (અતીન્દ્રિય) હોય છે આ પ્રકારે ઔદયિક, ક્ષાયિક અને પારિણામિક, આ ત્રણ લાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થતો પાચમો ભંગ માત્ર કેવલીઓમાં જ સંભવી શકે છે.

ઔદયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ત્રણ લાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થતા સાક્ષિપાતિક લાવ રૂપ છઠો ભંગ નારકાદિ આદિ ગતિઓમાં

યિકી, ક્ષાયોપશમિકાનિ ઇન્દ્રિયાણિ, પારિણામિકં જીવત્વમ્, ઇતિ ઔદયિક-ક્ષાયોપશમિકપારિણામિકેતિ ભાવત્રયનિષ્પન્નઃ ષષ્ઠો ભક્તો નારકાદિગતિચતુષ્ટયે સંભવતિ । અતઃ સ્તરેત્વષ્ઠો ભક્તોઃ પ્રરૂપણામાત્રમ્, તેષાં ક્ષાડ્પ્યસંભવાત્ ॥સૂ.૧૫૯॥

અથ ચતુષ્કસંયોગાન્નિરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ્—તત્થ ણં જે તે પંચ ચતુક્કસંજોગા તે ણં ઇમે—અત્થિ
 ણામે ઉદ્દય—ઉવસમિય—સ્વદય—સ્વઓવસમિયનિષ્કળે? અત્થિ
 ણામે ઉદ્દય—ઉવસમિયસ્વદયપારિણામિયનિષ્કળે૨, અત્થિ
 ણામે ઉદ્દયઉવસમિયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કળે૩, અ-
 ત્થિ ણામે ઉદ્દયસ્વદયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કળે૪,
 અત્થિ ણામે ઉવસમિયસ્વદયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કળે૫।
 ‘કયરે સે ણામે ઉદ્દયઉવસમિયસ્વદયસ્વઓવસમિયનિષ્કળે ?,
 ઉદ્દયઉવસમિયસ્વદયસ્વઓવસમિયનિષ્કળે-ઉદ્દયુત્તિ મણુસ્સે,

પારિણામિક ઇન ભાવોં સે—નિષ્પન્ન ભંગ હૈ વહ નારકાદિ ચારોં ગતિયોં
 મેં હોતા હૈ કયોં કિ યે નારકાદિ ગતિયાં ઔદયિકી માની ગઈ હૈ ઔર
 વહાં જો ઇન્દ્રિયાં હૈં વે ક્ષાયોપશમિક ભાવરૂપ હૈ ઔર જીવત્વ વહાં
 પારિણામિક ભાવ રૂપ હૈ । હસ પ્રકાર ઔદયિક ક્ષાયોપશમિક ઔર
 પારિણામિક ઇન ત્રીન ભાવોં સે નિષ્પન્ન યહ છઠા ભંગ નારક આદિ
 ચારોં ગતિયોં મેં સંભવતા હૈ । તથા ઇનસે અતિરિક્ત ઔર જો આઠ ભંગ
 હૈં વે કેવલ પ્રરૂપણા માત્ર હૈં । કયોં કિ ઇન ભંગોં કી કહીં પર ખી
 સંભાવના નહીં હૈ ! ॥સૂ.૧૫૯॥

સંભવી શકે છે, કારણ કે નારકાદિ ગતિઓને ઔદયિક માનવામાં આવે છે.
 આ ગતિના જીવોમાં જે ઇન્દ્રિયો હોય છે તે ક્ષાયોપશમિક ભાવ રૂપ ગણાય
 છે. અને જીવત્વ પારિણામિક ભાવ રૂપ ગણાય છે આ રીતે ઔદયિક, ક્ષાયો-
 પશમિક અને પારિણામિક, આ ત્રણ ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થતા છઠો
 ભંગ નારકાદિ ચારે ગતિઓમાં સંભવી શકે છે.

પાંચમાં અને છઠા ભંગ સિવાયના આઠે ભંગોની કોઈ પણ જગ્યાએ
 શક્યતા હોતી નથી તેથી માત્ર પ્રરૂપણા કરવા નિમિત્તે જ તે ભંગોનું કથન
 અહીં કરવામાં આવ્યું છે, એમ સમજવું. ॥સૂ.૧૫૯॥

उवसंता कसाया, खइअं सम्मत्तं, खओवसमियाइं इंदियाइं ।
 एस णं से णामे उदइयउवसमियखइयखओवसमियनिष्फण्णे ?
 कयरे से णामे उदइयउवसमियखइयपरिणामियनिष्फण्णे ?
 उदइयउवसमियखइयपरिणामियनिष्फण्णे—उदइएत्ति मणुस्से,
 उवसंता कसाया, खइयं सम्मत्तं, पारिणामिए जीवे । एस णं
 से णामे उदइयउवसमियखइयपरिणामियनिष्फण्णे २ । ‘कयरे
 से णामे उदइयउवसमियखओवसमियपरिणामियनिष्फण्णे—
 उदइयउवसमियखओवसमियपरिणामियनिष्फण्णे उदइएत्ति
 मणुस्से, उवसंता कसाया, खओवसमियाइं इंदियाइं,
 पारिणामिए जीवे । एस णं से णामे उदइयउवसमियखओव-
 समियपरिणामियनिष्फण्णे ३ । कयरे से णामे उदइयखइयख-
 ओवसमियपरिणामियनिष्फण्णे ? उदइयखइयखओवसमिय-
 परिणामियनिष्फण्णे—उदइएत्ति मणुस्से, खइयं सम्मत्तं, खओ-
 वसमियाइं इंदियाइं, पारिणामिए जीवे । एस णं से नामे उद-
 इयखइयखओवसमियपरिणामियनिष्फण्णे ४ । कयरे से नामे
 उवसमियखइयखओवसमियपरिणामियनिष्फण्णे ? उवसमि-
 यखइयखओवसमियपरिणामियनिष्फण्णे—उवसंता कसाया,
 खइयं सम्मत्तं, खओवसमियाइं इंदियाइं, पारिणामिए जीवे ।
 एस णं से नामे उवसमियखइयखओवसमियपरिणामिय-
 निष्फण्णे ५ ॥ सू० १६० ॥

छाया—तत्र खलु ये ते पञ्च चतुष्कसंयोगाः, ते खलु इमे—अस्ति नाम औदयि-
 कौपशमिकक्षायिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम् ? अस्ति नाम औदयिकौपशमिकक्षायिक-
 पारिणामिकनिष्पन्नम् २, अस्ति नाम औदयिकौपशमिकक्षायोपशमिकपारिणा-

મિકનિષ્પન્નમ્૩, અસ્તિ નામ ઔદયિકક્ષાયિકક્ષાયોપશમિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્૪,
અસ્તિ નામ ઔપશમિકક્ષાયિકક્ષાયોપશમિકપારિણારિણામિકનિષ્પન્નમ્૫, કતરત્વ

અથ સૂત્રકાર—ચાર ભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન સાન્નિપાતિક ભાવોં
કી પ્રસ્થાપના કરતે હૈં—“ તત્થ ણં જે તે પંચ ” इत्यादि ।

શબ્દાર્થ—(તત્થ ણં જે તે પંચ ચત્તકસંજોગા તે ણં इमे) યહાં જો
ચતુષ્ક સંયોગી પાંચ ભંગ હૈં વે હસ પ્રકાર સે હૈં—(અત્થિ ણામે ઉદય, ઉવસમિય—સ્વય—સ્વઓવસમિયનિષ્કણે૧) ઔદયિક, ઔપશમિક
ક્ષાયિક ઔર ક્ષાયોપશમિક હન ચાર ભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન પહિલા
ભંગ હૈ । (અત્થિ ણામે ઉદય—ઉવસમિય—સ્વય—પારિણામિયનિષ્કણે૨)
ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયિક ઔર પારિણામિક હન ચાર ભાવોં કે
સંયોગ સે નિષ્પન્ન દૂસરા ભંગ હૈ । (અત્થિ ણામે ઉદય ઉવસમિય, સ્વઓ-
વસમિય—પારિણામિય નિષ્કણે૩) ઔદયિક, ઔપશમિક ક્ષાયોપશમિક
ઔર પારિણામિક હન ચાર ભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન તોસરા ભંગ હૈ ।
(અત્થિ ણામે ઉદયસ્વયસ્વઓવસમિય પારિણામિયનિષ્કણે૪)
ઔદયિક ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક ઔર પારિણામિક હન ચાર ભાવોં કે
સંયોગ સે નિષ્પન્ન ચૌથા ભંગ હૈ (અત્થિ ણામે ઉવસમિયસ્વયસ્વઓવ-

ચાર ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થતા સાન્નિપાતિક ભાવોનું સૂત્રકાર
હવે નિરૂપણ કરે છે—“ તત્થ ણં જે તે પંચ ” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(તત્થ ણં જે તે પંચ ચત્તકસંજોગા તે ણં इमे) ચાર ભાવોના સંયોગથી
બનતા ચતુષ્કસંયોગી પાંચ ભંગ બને છે, તે ચતુષ્કસંયોગી પાંચ ભંગો
નીચે પ્રમાણે છે—(અત્થિ ણામે ઉદય—ઉવસમિય—સ્વય—સ્વઓવસમિયનિષ્કણે)
પહેલો ભંગ—ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયિક અને ક્ષાયોપશમિક, આ ચાર
ભાવોના સંયોગથી બનતો સાન્નિપાતિક ભાવ (અત્થિ ણામે ઉદય, ઉવસમિય,
સ્વય, પારિણામિય, નિષ્કણે) બીજો ભંગ—ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયિક અને
પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના સંયોગથી બનતો સાન્નિપાતિક ભાવ

(અત્થિ ણામે ઉદય—ઉવસમિય—સ્વઓવસમિય—પારિણામિયનિષ્કણે) ત્રીજો
ભંગ—ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર
ભાવોના સંયોગથી બનતો સાન્નિપાતિક ભાવ.

ચોથો ભંગ—(અત્થિ ણામે ઉદય—સ્વય—સ્વઓવસમિય—પારિણામિયનિષ્કણે)
ઔદયિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના સંયો-
ગથી નિષ્પન્ન થતો સાન્નિપાતિક ભાવ.

પાંચમો ભંગ—(અત્થિ ણામે ઉવસમિય—સ્વય સ્વઓવસમિય—પારિણામિય

તન્નામ ઔદયિકૌપશમિક્ષાયિક્ષાયોપશમિકનિષ્પન્નમ્ ? ઔદયિકૌપશમિક્ષાયિક-
ક્ષાયોપશમિકનિષ્પન્નમ્—ઔદયિકમિતિ માનુષ્યમ્, ઉપશાન્તાઃ કષાયાઃ
ક્ષાયિકં સમ્યક્ત્વં, ક્ષાયોપશમિકાનિન્દ્રિયાણિ। एतत् खलु तन्नाम औदयिकौपश-
मिकक्षायिकक्षायोपशमिकनिष्पन्नम् ? । कतरत् तन्नाम औदयिकोपशमिक क्षायिक-

સમિય-પારિણામિયનિષ્કળ્ણે ?) ઔપશમિક ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક
ઔર પારિણામિક इन चार भावों के संयोग से निष्पन्न ५वां भंग है ।
(कयरे से नामे उदइयउवसमियखइयखओवसमियनिष्कળ्णे) हे भदन्त !
ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયિક ઔર ક્ષાયોપશમિક इन चार भंगों के
સંયોગ સે જો સાન્નિપાતિક ભાવ રૂપ ભંગ નિષ્પન્ન હોતા હૈ વહ કેસા હૈ ?

ઉત્તર—(उदइयउवसमियखइयखओवसमियनिष्कળ्णे) ઔદયિક
ઔપશમિક-ક્ષાયિક ઔર ક્ષાયોપશમિક इन चार भावों के संयोग से
જો સાન્નિપાતિક ભાવ નિષ્પન્ન હોતા હૈ વહ એસા હૈ—(उदइएत्ति मणुस्से
उवसंता कसाया खइयं सम्मत्तं खओवसमियाइं इंदियाइं) यहां मनुष्य
ગતિ यह औदयिक भावरूप है, उपशांत कषाय ये औपशमिक भावरूप
है, क्षायिक सम्यक्तव यह क्षायिक भावरूप है, इन्द्रियां क्षायोपशमिक
ભાવ રૂપ હૈ । (एस णं से णामे उदइयउवसमिय, खइयखओवसमिय-
निष्कળ्णे) इस प्रकार यह औदयिकौपशमिक क्षायिक क्षायोपशमिक
नाम का इन भावों से निष्पन्न सान्निपातिक भाव का प्रथम भंग है ।

નિષ્કળ્ણે) ઔપશમિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર
ભાવોના સંયોગથી બનતો સાન્નિપાતિક ભાવ.

પ્રશ્ન—(કયરે સે ણામે ઉદઇયઉવસમિયખઇયખઓવસમિયનિષ્કળ્ણે?) હે
ભગવન્ ! ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયિક અને ક્ષાયોપશમિક, આ ચાર ભાવોના
સંયોગથી બનતા સાન્નિપાતિક ભાવ રૂપ પહેલા ભંગનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(उदइय उवसमियखइयखओवसमियनिष्कળ्णे) ઔદયિક, ઔપ-
શમિક, ક્ષાયિક અને ક્ષાયોપશમિક, આ ચાર ભાવોના સંયોગથી બે સાન્નિ-
પાતિક ભાવ રૂપ ભંગ બને છે તે આ પ્રકારનો છે—(उदइएत्ति मणुस्से, उवसंता
कसाया, खइयं सम्मत्तं, खओवसमियाइं इंदियाइं) આ સાન્નિપાતિક ભાવમાં મનુષ્ય
ગતિ ઔદયિક ભાવ રૂપ છે, ઉપશાન્ત કષાય ઔપશમિક ભાવ રૂપ છે, ક્ષાયિક
સમ્યક્ત્વ ક્ષાયિક ભાવ રૂપ છે અને ઇન્દ્રિયો ક્ષાયોપશમિક ભાવરૂપ છે.
(एस णं से णामे उदइय उवसमियखइयखओवसमियनिष्कળ्णे) આ પ્રકારનો
તે ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયિક અને ક્ષાયોપશમિક, આ ચાર ભાવોના
સંયોગથી બનતો સાન્નિપાતિક ભાવ છે.

પારિણામિકનિષ્પન્નમ્? ઔદયિકૌપશમિક્ષાયિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્—ઔદયિક-
મિતિ માનુષ્યં, ઉપશાન્તાઃ કષાયાઃ, ક્ષાયિકં સમ્યક્ત્વં, પારિણામિકો જીવઃ।
एतत् खलु तन्नाम औदयिकौपशमिरुक्षायिकपारिणामिकनिष्पन्नम्, कतरत्
तन्नाम औदयिकौपशमिकक्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्?, औदयिकौपश-

(કયરે સે નામે ઉદય્યુવસમિયસ્વહ્યપારિણામિયનિષ્કળ્ણે?) હે મદન્ત !
ઔદયિક ઔપશમિક, ક્ષાયિક ઔર પારિણામિક इन चार भावों के
संयोग से निष्पन्न जो सान्निपातिक भाव रूप भंग है वह कैसा है ?

उत्तर—(उदय्युवसमि यस्वह्यपारिणामियनिष्कળ्णे) औदयिक
औपशमिक, क्षायिक, एवं पारिणामिक इन चार भावों के-संयोग से
निष्पन्न हुआ भंग ऐसा है—(उदय्येति मणुस्से उवसंता कसाया, स्वह्यं
सम्मत्तं पारिणामिए जीवे) यहां मनुष्यगति यह औदयिक है, उपशान्त
हुई कषाये औपशमिक भावरूप है, क्षायिक सम्यक्त्व क्षायिकरूप है।
तथा जीवत्व यह पारिणामिक रूप है। (एसणं से णामे उदय्युवस-
मिय स्वह्यपारिणामियनिष्कળ्णे) इस प्रकार औदयिक, औपशमिक,
क्षायिक और पारिणामिक इन चार भंगों से निष्पन्न हुआ इस नाम
का यह-द्वितीय भंग है। (कयरे से णामे उदय्य उवसमियस्वओवस-
मियपारिणामियनिष्कળ्णे ?) हे मदन्त ! औदयिक, औपशमिक, क्षायो-

પ્રશ્ન—(કયરે સે નામે ઉદય્યુવસમિયસ્વહ્યપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) હે
ભગવન્ ! ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના
સંયોગથી નિષ્પન્ન થતો જે સાન્નિપાતિક ભાવરૂપ બીજો ભંગ છે તેનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર—(ઉદય્યુવસમિયસ્વહ્યપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) ઔદયિક, ઔપશ-
મિક ક્ષાયિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના સંયોગથી બનતા
સાન્નિપાતિક ભાવનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—(ઉદય્યેતિ મણુસ્સે, ઉવસંતા કસાયા,
સ્વહ્યં સમ્મત્ત, પારિણામિય જીવે) આ સાન્નિપાતિક ભાવમાં મનુષ્યગતિ ઔદ-
યિક ભાવ રૂપ છે, ઉપશાન્ત કષાયો ઔપશમિક ભાવ રૂપ છે, ક્ષાયિક
સમ્યક્ત્વ ક્ષાયિક ભાવ રૂપ છે અને જીવત્વ પારિણામિક ભાવ રૂપ છે,
(એમણં સે ણામે ઉદય્યુવસમિયસ્વહ્યપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) આ પ્રકારનું ઔદયિક
ઔપશમિક ક્ષાયિક અને પારિણામિક આ ચાર ભાવોના સંયોગથી બનેલા
સાન્નિપાતિક ભાવ રૂપ બીજા ભંગનું સ્વરૂપ છે.

મિક્ષાયોપશમિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્-ઔદયિકમિતિમાનુષ્યમ્, ઉપશાન્તાઃ કષાયાઃ, ક્ષાયોપશમિકાનિ ઇન્દ્રિયાણિ, પારિણામિકો જીવઃ । એતત્ સ્વલ્પ તન્નામ ઔદયિકૌપશમિક ક્ષાયોપશમિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્ ૩ । કતરત્ તન્નામ ઔદયિક ક્ષાયિકક્ષાયોપશમિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્ ? ઔદયિકક્ષાયિકક્ષાયોપશમિક-

પશમિક, ઔર પારિણામિક ઇન ચાર ભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન હુઆ ભંગ કેસા હૈ ?

ઉત્તર-(ઉદય્યુત્તરમિયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કર્ણે) ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયોપશમિક એવં પારિણામિક ઇન ચાર ભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન ત્રીસરા ભંગ એસા હૈ-(ઉદયન્તિ મણુસ્સે, ઉવસંતા કસાયા, સ્વઓવસમિયાઈં ઇન્દિયાઈં, પારિણામિય જીવે) મનુષ્ય ગતિ યહ ઔદયિક ભાવરૂપ હૈ, ઉપશાન્ત હુઈ કષાયેં ઔપશમિક ભાવ હૈ, ઇન્દ્રિયાં ક્ષાયોપશમિક ભાવ રૂપ હૈ ઔર જીવત્વ યહ પારિણામિક ભાવ રૂપ હૈ । (એસ ણં સે ણામે ઉદય્યુત્તરમિયસ્વઓવસમિય પારિણામિયનિષ્કર્ણે) ઇસ પ્રકાર યહ ઔદયિક, ઔપશમિક ઔર પારિણામિક ઇન ચારભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન હુઆ ઇસ નામકા તૃતીય ભંગ હૈ । (કયરે સે ણામે ઉદય્યુત્તરમિયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કર્ણે ?) હે ભદન્ત ! ઔદયિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક ઔર પારિણામિક ઇન ચાર ભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન ભંગ કેસા હૈ ?

પ્રશ્ન-(કયરે સે ણામે ઉદય્યુત્તરમિયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કર્ણે) હે ભગવન્ ! ઔદયિક, ઔપશમિક,, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના સંયોગથી બનતા સાન્નિપાતિક ભાવ રૂપ ત્રીણ ભંગનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

ઉત્તર-(ઉદય્યુત્તરમિયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કર્ણે) ઔદયિક, ઔપશમિક ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના સંયોગથી બનતા ત્રીણે સાન્નિપાતિક ભાવ આ પ્રકારનો છે-(ઉદયન્તિ મણુસ્સે, ઉવસંતા કસાયા, સ્વઓવસમિયાઈં ઇન્દિયાઈં, પારિણામિય જીવે) ત્રીણ પ્રકારના સાન્નિપાતિક ભાવમાં મનુષ્યગતિ ઔદયિક ભાવ રૂપ છે, ઉપશાન્ત કષાયે ઔપશમિક ભાવ રૂપ છે, ઇન્દ્રિયે ક્ષાયોપશમિક ભાવ રૂપ છે અને જીવત્વ પારિણામિક ભાવ રૂપ છે. (એસણં સે ણામે ઉદય્યુત્તરમિયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કર્ણે) આ પ્રકારનો આ “ ઔદયિકૌપશમિક ક્ષાયોપશમિક પારિણામિક ” નામનો ત્રીણે ભંગ છે.

પ્રશ્ન-(કયરે સે ણામે ઉદય્યુત્તરમિયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કર્ણે ?) હે ભગવન્ ! ઔદયિક, ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના સંયોગથી બનતા ચોથા પ્રકારના સાન્નિપાતિક ભાવનું સ્વરૂપ કેવું છે.

પારિણામિકનિષ્પન્નમ્-ઔદયિકમિતિ માનુષ્યં, ક્ષાયિકં સમ્યક્ત્વં, ક્ષાયોપશમિકાનિ ઇન્દ્રિયાણિ, પારિણામિકો જીવઃ । एतत् खलु तन्नाम औदयिकक्षायिक-
ક્ષાયોપશમિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્ । कतरत् तन्नाम औपशमिकक्षायिकक्षायो-
પશમિકનિષ્પન્નમ્?, ઔપશમિકક્ષાયિકક્ષાયોપશમિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્-
उपशान्ताः कषायाः, ક્ષાયિકં સમ્યક્ત્વં, ક્ષાયોપશમિકાનિ ઇન્દ્રિયાણિ, પારિણા-

(ઉદહય સ્વહયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) ઔદયિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક-ઔર પારિણામિક હન ચાર ભાવો કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન-હુઆ ભંગ એસાં હૈ-(ઉદહરત્તિ મણુસે સ્વહયં સમ્મત્તં, સ્વઓવસમિયાઈં ઇન્દિયાઈં, પારિણામિય જીવે) મનુષ્યગતિ યહ ઔદયિક ભાવરૂપ હૈ, ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ યહ ક્ષાયિક ભાવરૂપ હૈ, ઇન્દ્રિયાં વે ક્ષાયોપશમિક ભાવરૂપ હૈ ઔર જીવત્વ યહ પારિણામિક ભાવરૂપ હૈ । (એસ ણં સે નામે ઉદહય સ્વહયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) હસ પ્રકાર યહ ઔદયિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક ઔર પારિણામિક હનચાર ભાવોં સે નિષ્પન્ન હુઆ હસ નામકા ચતુર્થ ભંગ હૈ । (કયરે સે નામે ઉવસમિય સ્વહયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે?) હૈ ભદન્ત । ઔપશમિક ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક ઔર પારિણામિક હન ચાર ભાવોં કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન હુઆ પાંચવાં ભંગ કેસા-હૈ ?

ઉત્તર—(ઉવસમિયસ્વહયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે)

ઉત્તર—(ઉદહયસ્વહયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) ઔદયિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના સંયોગથી બનતા સાન્નિપાતિક ભાવનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે, એટલે કે એથા ભંગ આ પ્રકારનો છે—(ઉદહરત્તિ મણુસે, સ્વહયં સમ્મત્તં, સ્વઓવસમિયાઈં ઇન્દિયાઈં, પારિણામિય જીવે) આ એથા પ્રકારના સાન્નિપાતિક ભાવમાં મનુષ્યગતિ ઔદયિક ભાવરૂપ છે, ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ ક્ષાયિક ભાવરૂપ છે, ઇન્દ્રિયો ક્ષાયોપશમિક ભાવરૂપ છે અને જીવત્વ પારિણામિક ભાવરૂપ છે. (એસ ણં સે નામે ઉદહયસ્વહયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે) આ પ્રકારનું ઔદયિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના સંયોગથી બનતા “ઔદયિક ક્ષાયોપશમિક પારિણામિક” નામના એથા ભંગનું સ્વરૂપ છે.

પ્રશ્ન—(કયરે સે નામે ઉવસમિયસ્વહયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કળ્ણે?) હૈ ભગવન્ ! ઔપશમિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના સંયોગથી બનતા પાંચમાં પ્રકારનો સાન્નિપાતિક ભાવ કેવો છે ?

મિકો જીવઃ । એતત્ સ્વલુ તન્નામ ઔપશમિકક્ષાયિકક્ષાયોપશમિકપારિણામિક-
નિષ્પન્નમ્ ૬ ॥ સૂ. ૧૬૦ ॥

ટીકા—‘તત્થ ણં જે તે પંચ’ इत्यादि—

પચ્ચસુ ભાવેષુ પચ્ચમં ભાવં પરિહાય અવિશિષ્ટમાત્રનિષ્પન્નત્વેન પ્રથમો મજ્જો
બોધ્યઃ । ચતુર્થ પરિહાય શેષનિષ્પન્નત્વેનં દ્વિતીયો મજ્જઃ । તૃતીયં પરિહાય શેષ-

ઔપશમિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક ઔર પારિણામિક इन चार भावों
के संयोग से निष्पन्न हुआ भंग ऐसा है—(उवसंता कसाया, खइयं सम्म-
त्तं, खओवसमियाइं इंदियाइं पारिणामिए जीवे) उपशान्त हुई कषाये
औपशमिकभाव है, क्षायिक सम्पत्त्व क्षायिक भाव रूप है, इन्द्रियां
क्षायोपशमिक भावरूप है, और जीवत्व यह पारिणामिक भाव रूप है
(एसं णं से नामे उवसमिय खइयखओवसमियपारिणामियनिष्कण्णे)
इस प्रकार यह औपशमिकक्षायिक क्षायोपशमिक और पारिणामिक इन
चार भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ इस नामका पांचवां भंग है ।

भावार्थ—इस सूत्रद्वारा सूत्रकारने चार २ भावों के संयोग
से ६ भंग निष्पन्न हुए हैं वे कहे हैं । इनमें पांचवां भाव
जो पारिणामिक भाव है उसे छोड़कर बाकी के चार भावों के
संयोग से प्रथम भंग निष्पन्न हुआ है । चौथा भाव जो क्षायोपशमिक
भाव है उसे छोड़कर शेष चार भावों के संयोग से द्वितीय भंग निष्प-

ઉત્તર—(ઉવસમિયલ્હયલ્હઓવસમિયપારિણામિયનિષ્કણ્ણે) ઔપશમિક,
ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના સંયોગથી બનતો
પાંચમો ભંગ આ પ્રકારનો છે—(ઉવસંતા કસાયા, લહયં સમ્મત્તં, લઓવસમિયાઈ
ઈન્દિયાઈ’ પારિણામિય જીવે) આ સાન્નિપાતિક ભવમાં ઉપશાન્ત કષાયો
ઔપશમિક ભાવ રૂપ છે, ક્ષાયિક સમ્પત્ત્વ ક્ષાયિક ભાવ રૂપ છે, ઇન્દ્રિયો
ક્ષાયોપશમિક ભાવ રૂપ છે અને જીવત્વ પારિણામિક ભાવ રૂપ છે. (એસં ણં
સે નામે ઉવસમિયલ્હયલ્હઓવસમિય, પારિણામિયનિષ્કણ્ણે) આ પ્રકારનો
ઔપશમિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના
સંયોગથી બનતો “ ઔપશમિક ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક પારિણામિક ” નામનો
પાંચમો ભંગ સમજવો.

ભાવાર્થ—ચાર ચાર ભાવોના સંયોગથી બનતા પાંચ ભંગોનું સૂત્રકારે
આ સૂત્ર દ્વારા નિરૂપણ કર્યું છે. પહેલો ભંગ આ પ્રકારે બન્યો છે—પાંચ
ભાવોમાંના છેલ્લા પારિણામિક ભાવ સિવાયના સંયોગથી પહેલો ભંગ બન્યો છે.

નિષ્પન્નત્વેન તૃતીયો ભક્તઃ । દ્વિતીયં પરિહાય શેષનિષ્પન્નત્વેન ચતુર્થો ભક્તઃ । પ્રથમં પરિહાય અવશિષ્ટભાવચતુષ્ટયનિષ્પન્નત્વેન પञ्ચમશ્ચ ભક્તો बोध्यः । एतान् पञ्च भङ्गान् विवरीतुमाह—‘कयरे से णामे’ इत्यादि । एषा व्याख्या पूर्ववद् बोध्या । एषु पञ्चसु भङ्गेषु तृतीयो भङ्गो नारकादिगतिचतुष्टये भवति । तथाहि— औदयिकी नारकाद्यन्यतमा गतिः, नारकतिर्यग्देवगतिषु प्रथमसम्यक्त्वलाभकाले एव उपशमभावो भवति, मनुष्यगतौ तु-तत्रोपशमश्रेण्यां चौपशमिकं सम्यक्त्वम्, क्षायोपशमिकानीन्द्रियाणी, पारिणामिकं जीवत्वम्, इत्येवमयं भङ्गकः सर्वाद्य

ન્ન હુઆ છે । તૃતીય ભાવ જો ક્ષાયિક ભાવ છે તેને છોડીને બાકી કે ચાર ભાવો કે સંયોગ સે તૃતીય ભંગ નિષ્પન્ન હુઆ છે । દ્વિતીય જો ઔપશમિક ભાવ છે તેને છોડીને શેષ ભાવો કે સંયોગ સે ચતુર્થ ભંગ નિષ્પન્ન હુઆ છે । પ્રથમ ભાવ જો ઔદયિક ભાવ છે તેને છોડીને શેષ-ભાવો કે સંયોગ સે પંચમ ભંગ નિષ્પન્ન હુઆ છે । इन पांच भंगों में से जो औदयिक, औपशमिक, क्षायोपशमिक एवं पारिणामिक इन चार भावोंके संयोग से निष्पन्न तृतीयभंग है वह नारक आदि चारगतियों में होता है । वहाँ विवक्षितगति औदयिकी है । इनमें प्रथम सम्यक्त्व के लाभकाल में ही उपशमभाव होता है । मनुष्यगति में उपशमश्रेणी में औपशमिक सम्यक्त्व होता है । इंद्रियां यहां क्षायोपशमिक भावरूप हैं । जीवत्व पारिणामिक भाव है इस प्रकार यह तृतीयभंग सर्व गतियों

ખીલે લંગ-ક્ષાયોપશમિક લાવ નામના ચોથા લાવને છોડીને ખાડીના ચાર લાવોના સંયોગથી ખીલે લંગ બન્યો છે.

ત્રીલે લંગ-ક્ષાયિક લાવ નામના ત્રીજા લાવ સિવાયના ચારે લાવોના સંયોગથી ત્રીલે લંગ બન્યો છે.

ચોથો લંગ-ઔપશમિક નામના ખીજા લાવને છોડી દઈને ખાડીના ચાર લાવોના સંયોગથી ચોથો લંગ બન્યો છે.

પાંચમો લંગ-ઔદયિક નામના પહેલા લાવને છોડી દઈને ખાડીના ચાર લાવોના સંયોગથી પાંચમો લંગ બન્યો છે.

ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર લાવોના સંયોગથી જે ત્રીલે લંગ બને છે-જે ત્રીજા પ્રકારનો સાન્નિપાતિક લાવ નિષ્પન્ન થાય છે તેનો નારક આદિ ચારે ગતિઓમાં સદ્ભાવ હોય છે ત્યાં નારક આદિ ગતિ ઔદયિક લાવ રૂપ છે. આ ગતિઓમાં પ્રથમ સમ્યક્-ત્વના પ્રાપ્તિ કાળે જે ઉપશમ લાવનો સદ્ભાવ હોય છે, મનુષ્ય ગતિમાં તે ઉપશમ શ્રેણીમાં ઔપશમિક સમ્યક્ત્વનો સદ્ભાવ હોય છે ઇન્દ્રિયો ક્ષાયોપ-

ગતિષ્વપલભ્યતે । યદિહ સૂત્રે-‘ઉદ્દહણ્તિ મણુસ્સે ઉવસંતા કસાયા’ ઇત્યુક્તમ્, તન્મનુષ્યગત્યપેક્ષયોક્તમ્ । ઉપશમશ્રેણ્યાં મનુષ્યત્વોદયઃ કષાયોપશમશ્ચ ભવતઃ । મૂલોક્તં તૂપલક્ષણં બોધ્યમ્ । એવમ્ ઔદયિકક્ષાયિકક્ષાયોપશમિકપારિણામિક- નિષ્પન્નશ્ચતુર્થમજ્ઞોઽપિ નારકાદિગતિચતુષ્ટયવિષયો બોધ્યઃ । તૃતીયમજ્ઞવદેવાત્રાપિ માવના કર્તવ્યા । વિશેષસ્ત્વયમેવ-તૃતીયમજ્ઞે યદુપશમસમ્યક્ત્વમુક્તં તત્સ્થાનેત્વિહ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વં વાચ્યમ્ । ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વં તુ સર્વાસ્વપિ ગતિષુ જાયતે । નારકતિર્યગ્દેવગતિષુ પૂર્વપ્રતિપન્નસ્ય પ્રતિપદ્ધમાનસ્ય ચાપિ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વં

મેં પાયા જાતા હૈ । જો હસ સૂત્રમેં “ઉદ્દહણ્તિ મણુસ્સે ઉવસંતા કસાયા” એસાપાઠ કહા હૈ વહ મનુષ્યગતિ કી અપેક્ષા સે કહા હૈ । ઉપશમશ્રેણી મેં મનુષ્યત્વ કા ઉદય ઓર કષાયોં કા ઉપશમ હોતા હૈ । મૂલોક્તપાઠ ઉપલક્ષણ હૈ એસાજાનના ચાહિયે । હસીપ્રકાર ઔદયિક ક્ષાયિક, ક્ષાયો- પશમિક ઓર પારિણામિક હનચાર ભાવોં કે સંયોગ સે ચૌથા ભંગ વના હૈ, વહ બી નારક આદિ ચારગતિયોં મેં હોતા હૈ એસા જાનના ચાહિયે । તૃતીય ભંગ કી તરહ હી યહાં પર બી કથન સમજના ચાહિયે । પરન્તુ હસમેં વિશેષતા હતની હી હૈ કિ તૃતીય ભંગ મેં ઉપશમ સમ્યક્ત્વ કહા હૈ સો ઉસકે સ્થાન મેં યહાં ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ સમજના ચાહિયે । ક્ષાયિકસમ્ય- ક્ત્વ ચારોં ગતિયોં મેં હોતા હૈ । નારક, તિર્યક્ ઓર દેવ હન ગતિયોં મેં- પૂર્વ પ્રતિપન્ન જીવ કો હી ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ હોતા હૈ । ઓર મનુષ્યગતિ

શમિક ભાવ રૂપ અને જીવત્વ પારિણામિક ભાવરૂપ હોય છે. આ પ્રકારે ત્રીજો ભંગ બધી ગતિઓમાં શક્ય બને છે. આ સૂત્રમાં “ઉદ્દહણ્તિ મણુસ્સે ઉવસંતા કસાયા” આ પ્રકારનો જે પાઠ આપવામાં આવ્યો છે તે મનુષ્ય ગતિની અપેક્ષાએ આપવામાં આવ્યો છે. ઉપશમ શ્રેણીમાં મનુષ્યત્વનો ઉદય અને કષાયોનો ઉપશમ હોય છે. મૂલોક્ત પાઠ ઉપલક્ષણ છે એવું સમજવું જોઈએ.

એજ પ્રમાણે ઔદયિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ ચાર ભાવોના સંયોગથી જે ચોથો ભંગ બને છે, તેનો પણ નારક આદિ ચારે ગતિઓમાં સંભવ હોય છે, એમ સમજવું ત્રીજા ભંગના જેવું જ કથન અહીં પણ સમજવું જોઈએ, પરન્તુ ત્રીજા ભંગમાં જે ઉપશમ સમ્યક્ત્વ કહ્યું છે તેને બદલે અહીં ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ સમજવું જોઈએ ચારે ગતિઓમાં ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વનો સદ્ભાવ સંભવી શકે છે. નારક, તિર્યચ અને દેવ, આ ત્રણ ગતિઓમાં પૂર્વપ્રતિપન્ન જીવમાં જ ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ હોય છે. પરન્તુ મનુષ્યગતિમાં તો પૂર્વપ્રતિપન્નમાં અને પ્રતિપદ્ધમાનમાં ક્ષાયિક

મન્વતિ । इत्थं चात्र तृतीयचतुर्थ भङ्गौ एव वस्तुगतत्वेन संभवतः । इतरे भङ्गारतु प्रदर्शनमात्रम् । तद्रूपेण तेषां वस्तुन्यसंभवादिति ॥सू० १६०॥

अथ पञ्चकसंयोगं निरूपयति—

મૂલમ્—તત્થં ણં જે સે એકે પંચગસંજોએ સે ણં હમે—અતિથિ-
નામે ઉદ્દય ઉવસમિય યદ્યયસ્વઓવસમિયપારિણામિયનિષ્ફળે?
કયરે સે નામે ઉદ્દય ઉવસમિય યદ્યયસ્વઓવસમિયપારિણામિય-
નિષ્ફળે?, ઉદ્દય ઉવસમિય યદ્યયસ્વઓવસમિયપારિણામિય-
નિષ્ફળે—ઉદ્દયેતિ મણુસે ઉવસંતા કસાયા યદ્યયં સમ્મત્તં
સ્વઓવસમિયાઈં હંદિયાઈં પારિણામિયે જાવે । એસ ણં સે
ણામે જાવ પારિણામિયનિષ્ફળે । સે તં સન્નિવાહણ । સે તં
છપણામે ॥સૂ૦ ૧૬૧॥

છાયા—તત્ર સ્વલુ યઃ સ એકઃ પચ્ચકસંયોગઃ સ સ્વલુ અયમ્—અસ્તિ નામે
ઔદયિકૌપશમિક્ષાયિક્ષાયોપશમિકપારિણામિકનિષ્પન્નમ્? । કતરત્ તન્નામે
મેં પૂર્વે પ્રતિપન્ન કો ઔર પ્રતિપચ્ચમાન કો ખી હોતા હૈ । હસપ્રકાર
તૃતીય ઔર ચતુર્થ યે દો ભંગ હી વાસ્તવિક રૂપ મેં વસ્તુગત સંભવિત
હોતે હૈ । હતર શેષ-ત્રીન ભંગ નહીં પાયે જાતે હૈ ॥સૂ૦ ૧૬૦॥

અવ સૂત્રકાર પાંચ ભાગોં કે સંયોગ સે જો-ભંગ નિષ્પન્ન હોતા હૈ
ઉસકી પ્રરૂપણા કરતે હૈ—“તત્થ ણં જે સે એકે” હત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(તત્થ ણં જે સે એકે પંચક સંયોગે સે ણં હમે) પાંચોં ભાગોં
કે સંયોગ સે જો એક ભંગ ઉત્પન્ન હોતા હૈ વંહ હસ પ્રકાર સે હૈ—

સમ્યક્ત્વ હોય છે. આ પ્રકારે અહીં ત્રીજો અને ચોથો, આ બે ભાગ જ
વાસ્તવિક રૂપે વસ્તુગત સંભવિત હોય છે બાકીના ત્રણ ભાગો વાસ્તવિક રૂપે
તો સંભવિત જ નથી છતાં પ્રરૂપણા કરવાના હેતુથી જ અહીં તે ભાગોનું
નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે. ॥સૂ૦ ૧૬૦॥

પાંચ ભાવોના સંયોગથી જે સાન્નિપાતિક ભાવ નિષ્પન્ન થાય છે, તેની
સૂત્રકાર હવે પ્રરૂપણા કરે છે—“તત્થ ણં જે સે એકે” હત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(તત્થ ણં જે સે એકે પંચગસંજોગે સે ણં હમે) પાંચે ભાવોના
સંયોગથી જે એક ભાગ બને છે તે આ પ્રમાણે છે—(અતિથિનામે ઉદ્દયઉવસ-

औदयिकौपशमिक्षायिकक्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम्?, औदयिकौपशमिक-
क्षायिक क्षायोपशमिकपारिणामिकनिष्पन्नम् औदयिकमितिमानुष्यम्, उपशान्ताः
कषायाः, क्षायिकं सम्यक्त्वं, क्षायोपशमिकानि इन्द्रियाणि, पारिणामिको जिवः ।

(अंति णामे उदइय उवसमियखइयखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे?)
औदयिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक इन
पांचों भावों के संयोग से निष्पन्न-हुआ औदयिकौपशमिक क्षायिक
क्षायोपशमिक पारिणामिक इस नामका सान्निपातिक भाव है । (कयरे
से नामे उदइय उवसमियखइयखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे?) हे
भदन्त ! औदयिकौपशमिक क्षायिक क्षायोपशमिक पारिणामिक नाम का
जो पांचों भावों के संयोग से निष्पन्न सान्निपातिक-भाव वह कैसा है?

उत्तर-(उदइय उवसमियखइयखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे)
औदयिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणा-
मिक इन पांचों भावों के संयोग से जो सान्निपातिक भाव निष्पन्न
होता है वह ऐसा है-(उदइएत्ति मणुस्से उवसंता कसाया खइयं सम्मत्तं
खओवसमियाइं इंदियाइं पारिणामिए जीवे) यहां इस सान्निपातिक भाव
में मनुष्य गति यह औदयिकी है, उपशमित कषाये औपशमिक भाव है
क्षायिक सम्यक्त्व क्षायिकभाव है इन्द्रियां क्षायोपशमिकभाव है जीवत्व

मिय खइयखओवसमियपारिणामियनिष्फण्णे) औदयिक, औपशमिक, क्षायिक,
क्षायोपशमिक અને પારિણામિક, આ પાંચે લાવેના સંયોગથી બનતો
“ ઔદયિકૌપશમિક-ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિક ” નામનો સાન્નિપાતિક લાવ, આ
એક જ લાગ બને છે.

પ્રશ્ન-(કયરે સે નામે ઉદઇયઉવસમિયખઇયખઓવસમિયપારિણામિયનિષ્ફણે)
હે ભગવન્ ! ઔદયિક, ઔપશમિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક,
આ પાંચે લાવેના સંયોગથી નિષ્પન્ન થતો સાન્નિપાતિક લાવ કેવો છે ?

ઉત્તર-(ઉદઇયઉવસમિયખઓવસમિયપારિણામિયનિષ્ફણે) ઔદયિક,
ઔપશમિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક, આ પાંચે લાવેના
સંયોગથી નિષ્પન્ન થતો સાન્નિપાતિક લાવ આ પ્રકારનો છે-(ઉદઇએત્તિ
મણસ્સે, ઉવસંતા કસાયા, યઇયં સમ્મત્તં, યઓવસમિયાઇં ઇંદિયાઇં, પારિણામિય
જીવે) આ સાન્નિપાતિક લાવમાં મનુષ્યગતિ ઔદયિક લાવ રૂપ છે, ઉપશાન્ત
કષાયો ઔપશમિક લાવ રૂપ છે, ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ ક્ષાયિક લાવ રૂપ છે,
ઇન્દ્રિયો ક્ષાયોપશમિક લાવ રૂપ છે અને જીવત્વ પારિણામિક લાવ રૂપ છે.

एष खलु तन्नाम यावत् पारिणामिकनिष्पन्नम् । स एष सान्निपातिकः ।
तदेतत् षण्णाम ॥सू० १६१॥

टीका—‘तत्थ णं’ इत्यादि—

व्याख्या सुगमा । अयं पञ्चक संयोगस्तस्यैव संभवति यः क्षायिकसम्यग्दृष्टिः सन् उपशमश्रेणिं प्रतिपद्यते । अन्यस्य तु न संभवति । अन्यत्र हि समुदितभावपञ्चकस्यास्यासंभवादिति । अत्रेदं बोध्यम्—एकः क्षायिकपारिणामिकभावद्वयनिष्पन्नरूपो नवमो भङ्गो द्विकसंयोगे, औदयिकक्षायिकपारिणामिकभावत्रयनिष्पन्नरूपः पञ्चमः, औदयिकक्षायोपशमिकपारिणामिक भावत्रयनिष्पन्न-

यह पारिणामिक भाव है । (एसणं से णामे जाव पारिणामियनिष्फण्णे, से तं सन्निवाइए से तं छण्णामे) इस प्रकार यह पांच भावों के संयोग से निष्पन्न हुए इस नाम के सान्निपातिक भाव का स्वरूप है । यहां तक औदयिक भाव से लेकर पारिणामिक भाव तक के पांच भावों के संयोग-से जीतने सान्निपातिक भाव निष्पन्न होते हैं उनका प्रतिपादन किया—इस प्रकार यह छह प्रकार के नामका स्वरूप कथन समाप्त हुआ ।—

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्रद्वारा पांचो भावों के संयोग से निष्पन्न हुए सान्निपातिक भाव का कथन किया है । यह पंचक संयोग रूप सान्निपातिक भाव उसी को संभवित होता है, जो क्षायिक सम्यग्दृष्टि होकर उपशम श्रेणी पर चढ़ता है । अन्यजीव को नहीं क्योंकि; उस को इस समुचित भाव पंचकरूप सान्निपातिक भावका अभाव होता है । यहां पर इस प्रकार से जानना चाहिये—द्विक संयोग में क्षायिक और

(एस णं से णामे जाव પરિણામિયનિષ્ફણ્ણે, સે તં સન્નિવાઈએ, સે તં છણ્ણામે) આ પ્રમાણે આ પાંચે લાવેના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલ આ નામનું સાન્નિપાતિક સ્વરૂપ છે અહીં સુધી ઔદયિક લાવથી માંડીને પારિણામિક ભાવ સુધીના પાંચ લાવેના સંયોગથી જોડેલા સાન્નિપાતિક ભાવો નિષ્પન્ન થાય છે. તેમનું પ્રતિપાદન કયું છે. આ પ્રમાણે આ છ પ્રકારના નામનું સ્વરૂપ-કથન પુરું થયું છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર વડે પાંચે લાવેના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલ સાન્નિપાતિક ભાવનું કથન કયું છે. આ પંચક સંયોગ રૂપ સાન્નિપાતિક ભાવ તેમને જ સંભવે છે કે જે ક્ષાયિક સમ્યગ્દૃષ્ટિ થઈને ઉપશમ શ્રેણી પર ચઢે છે. ખીજાઓને નહિ કારણ કે તેમને આ સમુદિતભાવ પંચક રૂપ સાન્નિપાતિક ભાવનો અભાવ હોય છે અહીં એમ સમજવું જોઈએ કે દ્વિક-સંયોગમાં ક્ષાયિક અને પારિણામિક આ બે લાવેના સંયોગથી નિષ્પન્ન

પષ્ઠથેતિ દ્વી મજ્ઞૌ ત્રિકસંયોગે, ઔદયિકૌપશમિક ક્ષાયોપશમિકપારિણામિક ભાવ
ચતુષ્ટયનિષ્પન્નરૂપરત્તીયઃ, ઔદયિકક્ષાયિકક્ષાયોપશમિકપારિણામિકભાવચતુષ્ટય
નિષ્પન્નરૂપશ્ચતુર્થથેતિ દ્વી મજ્ઞૌ ચતુષ્કસંયોગે, ભાવપञ्चકરૂપ એકો મજ્ઞઃ પञ્ચક-
સંયોગે। इत्येवमेते षड्भङ्गाः सम्भाव्यत्वेन बोध्याः। इतोऽपरेर्विंशतिर्भङ्गास्तु
संभाव्यत्वरहिता अपि योगप्रदर्शनार्थमेव प्रोक्ताः। षण्णामसूत्रे ये द्विकसंयोग-

પારિણામિક, इन दो भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ जो इस नाम
का नौवां भंग है वह, तथा त्रिक संयोग में औदयिक, क्षायिक और
पारिणामिक, इन तीन भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ इस नाम का
पांचवां-भंग और औदयिक, क्षायोपशमिक एवं पारिणामिक, इन तीन
भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ इस नामका छठा भंग, तथा चतुष्क
संयोग में औदयिक, औपशमिक क्षायोपशमिक और पारिणामिक इन
चार भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ इस नाम का तृतीय भंग, और
औदयिक क्षायिक, क्षायोपशमिक एवं पारिणामिक इन चार भावों के
संयोग से निष्पन्न हुआ इस नाम का चौथा भंग तथा पांचो भावों के
संयोग से निष्पन्न हुआ एक इस नाम का भंग ये छह भंग जीवों में
वास्तविकरूप से पाये जाते हैं और इनसे अतिरिक्त जो २० भंग हैं;
वे वास्तविक रूप से-नहीं पाये जाते हैं; ऐसा, जानना चाहिये। २०
भंग जब कि भव्यत्व रहित है तो फिर ये क्यों कहे गये हैं ? तो इस

થયેલ જે આ નવમે ભંગ છે તે તેમજ ત્રિકસંયોગમાં ઔદયિક ક્ષાયિક,
અને પારિણામિક આ ત્રણ લાવેના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલ આ નામનો
પાંચમે ભંગ અને ઔદયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક આ ત્રણ
લાવેના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલ છઠો ભંગ તેમજ ચતુષ્ક સંયોગમાં ઔદ-
યિક, ઔપશમિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક આ ચાર લાવેના સંયો-
ગથી નિષ્પન્ન થયેલ આ નામનો ત્રીજો ભંગ અને ઔદયિક, ક્ષાયિક,
ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક આ ચાર લાવેના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલ
આ નામે ચોથો ભંગ તથા પાંચે લાવેના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલ એક
આ નામે ભંગ એ છ ભંગો જીવોમાં વાસ્તવિક રૂપે મળે છે અને એમના
સિવાય જે ૨૦ ભંગો છે. તે વાસ્તવિક રૂપે પ્રાપ્ત થતા નથી આમ સમજવું
જોઈએ ૨૦ ભંગો જ્યારે ભવ્યત્વ રહિત છે તો પછી એમનું કથન શા
ભાટે કરવામાં આવ્યું છે ? આ શંકાનું નિરાકરણ આ પ્રમાણે છે કે આ ૨૦-

ત્રિકસંયોગચતુષ્કસંયોગપञ्चકસંયોગલક્ષણા મજ્ઞાસ્તે કિલ સિદ્ધકેવલિગતિચતુષ્ટ-
યોપપ્પાન્તમોહમનુષ્યવિષયા વિજ્ઞેયાઃ । इयमत्रभावना-द्विकसंयोगभङ्गेष्वेकः क्षायि-
कपारिणामिकभावद्वयनिष्पन्नरूपो नवमो भङ्गः सिद्धेषु भवति । त्रिकसंयोगभङ्गेषु
औदयिकक्षायिकपारिणामिकभावत्रयनिष्पन्नरूपः पञ्चमो भङ्गः केवलिषु, औद-
यिकक्षायोपशमिकपारिणामिकभावत्रयनिष्पन्नरूपः षष्ठो भङ्गो गतिचतुष्टये
भवति । चतुष्कसंयोगभङ्गेषु-औदयिकौपशमिकक्षायोपशमिकपारिणामिकभावचतु-

શંકાં કા સમાધાન યહ હૈ કિ-યે ૨૦વીસભંગ યોગ પ્રદર્શન કે નિમત્ત
હી કહે ગયે હૈં અર્થાત્ इन पांच भावों के योग से किस २ प्रकार से
कितने भंग बन सकते हैं ? यह प्रकट करने के अभिप्राय से कहे गये
हैं । षण्णाम सूत्र में जो द्विकसंयोग, त्रिकसंयोग, चतुष्कसंयोग और
पञ्चकसंयोग रूप भंग हैं, वे सिद्धों में, केवलियों में, चारों गतियों में,
और उपशांत मोहमनुष्यों में पायेजाते हैं; ऐसा जानना चाहिये-अर्थात्-
द्विकसंयोगवाले भंगों में जो क्षायिक पारिणामिक भावद्वय
से निष्पन्न नौवां भंग है, यह सिद्धों में पाया जाता है । त्रिकसंयोगवाले
भंगों में जो औदयिक, क्षायिक और पारिणामिक, इन तीन भावों के
संयोग से निष्पन्न हुआ पंचम भंग है, वह केवलियों में पाया जाता है ।
औदयिक क्षायोपशमिक, और पारिणामिक इन तीन भावों के संयोग
से जन्म लठा भंग चार गतियों-में पाया जाता है । चतुष्क संयोगवाले
भंगों में औदयिक, औपशमिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक-इन

ભંગો યોગ પ્રદર્શનના નિમિત્તથી કહેવામાં આવ્યા છે. એટલે કે આ પાંચ
ભાવોના યોગથી કેવી રીતે કેટલા ભંગો થઈ શકે છે? આ સ્પષ્ટ કરવાના
ઉદ્દેશથી જ કહેવામાં આવ્યાં છે. ‘ષણ્ણામ’ સૂત્રમાં જે દ્વિકસંયોગ, ત્રિક-
સંયોગ, ચતુષ્ક સંયોગ અને પંચક સંયોગ રૂપ ભંગો છે તે સિદ્ધોમાં
કેવલિઓમાં, ચારે ગતિઓમાં અને ઉપશાંત મોહવાળા માણુઓમાં મળે છે.
આમ સમજવું જોઈએ એટલે કે દ્વિકસંયોગવાળા ભંગોમાં જે ક્ષાયિક પારિ-
ણામિક ભાવદ્વયથી નિષ્પન્ન નવમો ભંગ છે. તે સિદ્ધોમાં પ્રાપ્ત થાય છે.
ત્રિકસંયોગવાળા ભંગોમાં જે ઔદયિક, ક્ષાયિક અને પારિણામિક આ ત્રણ
ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલ પંચમ ભંગ છે, તે કેવલિઓમાં પ્રાપ્ત
થાય છે. ઔદયિક, ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક આ ત્રણ ભાવોના સંયો-
ગથી નિષ્પન્ન છઠો ભંગ ચારે ગતિઓમાં પ્રાપ્ત થાય છે ચતુષ્ક સંયોગવાળા
ભંગોમાં ઔદયિક ઔપશમિક-ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક આ ચાર
ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલ ત્રીજો ભંગ તેમજ ઔદયિક, ક્ષાયિક,

દ્રુયનિષ્પન્નરૂપસ્તૃતીયઃ, ઔદયિકક્ષાયિક્ષાયોપશમિકપારિણામિકભાવચતુષ્ટય-
નિષ્પન્નરૂપશ્ચતુર્થથેત્યેતાવપિ દ્વૌ મજ્ઞૌ ગતિચતુષ્ટયેऽપિ લભ્યેતે । ભાવપञ्चकनिष्पन्न-
રૂપ એકો મજ્ઞ ઉપશાન્તમોહમનુષ્યેષ્વેવ લભ્યતે । વિસ્તરતસ્તુ સ્વસ્વમજ્ઞસ્વરૂપે
વિલોકનીયમ્ । પ્રકૃતમુપસંહરન્નાહ-સ એષ સાન્નિપાતિક ઇતિ । ઇત્યમુક્તઃ સાન્નિ-
પાતિકો ભાવઃ । ઉક્તે તસ્મિન્શ્ચોક્તાઃ षडपि भावाः । તે ચ તદ્વાચકૈર્નામભિર્વિના
પ્રરૂપયિતું ન શક્યન્તે ઇતિ તદ્વાચકાન્યૌદયિકાદીનિ નામાન્યપ્યુક્તાનિ । એતૈશ્ચ પદ્મભિ-
રપિ ધર્માસ્તિકાયાદેઃ સમસ્તસ્યાપિ વસ્તુનો ગ્રહણાત્ત્વં પદ્મ પ્રકારકં સત્ સમસ્તસ્યા-
પિ વસ્તુનો નામ ષણ્ણામેત્યુચ્યતે । એતદેવોપસંહરન્નાહ-તદેતત્ત્વં ષણ્ણામેતિ ॥ સૂ. ૧૬૧ ॥

ચારભાવો કે સંયોગ સે નિષ્પન્ન હુઆ તૃતીયભંગ તથા ઔદયિક ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક એય-પારિણામિક इन चार भावों के संयोग से निष्पन्न हुआ चौथा भंग चारों गतियों में पाये जाते हैं, तथा पांचों भावों के संयोग से-निष्पन्न हुआ चौथाभंग ये दोनों भी भंग चारों गतियों में पाये जाते हैं तथा पांचों भावों के संयोग से-निष्पन्न हुआ एकभंग उप-
શાન્તમોહી મનુષ્યોં મેં હી પાયા જાતા હૈ । વિસ્તાર પૂર્વક इनका कथन अपने २ भंग-स्वरूप में देखलेना चाहिये । इसप्रकार सान्निपातिकभाव का कथन है-इस भाव के कथित होने पर अब छहों भाव कथित हो चुके । इन भावोंका कथन उनके वाचक नामों के बिना हो नहीं सकता है इसलिये उन भावों के वाचक औदयिक आदि नामों को-भी यहाँ कहा गया है । इन छह नामों से भी-धर्मास्तिकायादिक समस्त वस्तुओं का ग्रहण हो जाता है, इसलिये ये समस्त वस्तु के नाम छह प्रकार के होने से छह नाम इस प्रकार से कहलाये हैं । ॥सू० १६१॥

ક્ષાયોપશમિક અને પારિણામિક આ ચાર ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલ ચોથો ભંગ આ બન્ને ભંગો પછી આરે ગતિઓમાં પ્રાપ્ત થાય છે. તેમજ પાંચે ભાવોના સંયોગથી નિષ્પન્ન થયેલ એક ભંગ ઉપશાન્ત મોહી માણસોમાં જ પ્રાપ્ત ન બને છે. આ વિષે સવિસ્તર વિવેચન પોતપોતાના ભંગ-સ્વરૂપમાં બેઠેલો બેઠેલો આ પ્રમાણે સાન્નિપાતિક ભાવનું કથન છે. આ ભાવને કહ્યા બાદ છએ છ ભાવો કથિત થઈ ગયા. આ ભાવોનું કથન તેમના વાચકનામો વગર સંભવે જ નહિ એટલા માટે તે ભાવોના વાચક ઔદયિક વગેરે નામોનું પણ અહીં કથન થયું છે. આ છ નામોથી પણ ધર્માસ્તિકાયાદિક સમસ્ત વસ્તુઓનું ઘડણ થઈ જાય છે એટલા માટે આ બધી વસ્તુઓના છ પ્રકારના નામો હોવાથી છ નામો આ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યાં છે. ॥સૂ. ૦૧૬૧॥

અથ સપ્તનામ પ્રરૂપયતિ—

મૂળમ્—સે કિં તં સત્ત નામે ? સત્તનામે—સત્ત સરા પળ્લતા, તં જહા—સજ્જે રિસહે ગંધારે, મઙ્ગિમે પંચમે સરે । ધેવણ્ ચેવ નિસ્સાણ્ સરા સત્ત વિયાહિયા ॥૧॥સૂ૦૧૬૨॥

છાયા—અથ કિં તત્ સપ્ત નામ ? સપ્ત નામ—સપ્ત સ્વરાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તદ્વથા—પઙ્ગજઃ ઋષભઃ ગાન્ધારઃ મધ્યમઃ પશ્ચમઃ સ્વરઃ । ધૈવતશ્ચૈવ નિષાદઃ, સ્વરાઃ સપ્ત વ્યાખ્યાતાઃ ॥૧॥સૂ૦૧૬૨॥

ટીકા—‘સે કિં તં સત્તનામે’ ઇત્યાદિ—

અથ કિં તત્ સપ્તનામ ? ઇતિ શિષ્યપ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—સપ્તનામ=સપ્તવિધં નામ સપ્તનામ, તત્ત્વ-સપ્ત=સપ્ત સંખ્યકાઃ સ્વરાઃ=ધ્વનિવિશેષાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ । તાનેવ સ્પષ્ટયતિ—તદ્વથા—પઙ્ગજ ઋષભ ઇત્યાદિના । તત્ર—પઙ્ગજઃ—નાસિકાકંઠોરસ્તાલુજિહ્વા-દન્તેતિ પટ્ટસ્થાનસંજ્ઞાતત્વાત્ અયં સ્વરઃ પઙ્ગજ ઇત્યુચ્યતે । ઉક્તંચ—

અબ સૂત્રકાર સપ્ત નામ કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

“સે કિં તં સત્તનામે ?” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સત્તનામે ?) હે ભદન્ત ! સપ્તનામ કયા હૈ ?

ઉત્તર—(સત્તનામ) સપ્ત પ્રકાર રૂપ-જો સપ્તનામ હૈ વહ (સત્તસરા-પળ્લતા) સાતસ્વર સ્વરૂપપ્રજ્ઞપ્ત હુઆ હૈ । અર્થાત્ સાતસ્વર હી સપ્તનામ હૈ । (તં જહા) વે સાત સ્વર હસ પ્રકાર સે હૈ—(સજ્જે રિસહે ગંધારે, મઙ્ગિમે, પંચમે સરે । ધેવણ-ચેવ નિસ્સાણ સરા સત્ત વિયાહિયા) પઙ્ગજ ઋષભ, ગાન્ધાર, મધ્યમ, પંચમ, ધૈવત, ઓર નિષાદ । નાસિકા, કંઠ, ઊરસ્થલ, તાલુ, જિહ્વા ઓર પન્ન હન છહ સ્થાનો સે ઉત્પન્ન હોને કે કારણ પ્રથમ સ્વર ‘પઙ્ગજ’ કહલાતા હૈ । રૂચ કરકે “નાસાં કળ્ઠ”

હવે સૂત્રકાર સપ્તનામની પ્રરૂપણા કરે છે.

“સે કિં તં સત્તનામે ?” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં સત્તનામે ?) હે ભદન્ત ! સપ્તનામ શ્રી ક્ષાપ-વતાં કહે છે તે (સત્ત સરા પળ્લતા) સાત સ્વર સ્વરૂપ પ્રજ્ઞપ્ત થયેલ છે. કોઈ ઠે સાત સ્વર જ સપ્તનામે છે. (તંજહા) તે સાત સ્વરો આ પ્રમાણે છે—(સજ્જે રિસહે, ગંધારે, મઙ્ગિમે, પંચમે, સરે । ધેવણ ચેવ નિસ્સાણ સરા સત્ત વિયાહિયા) પઙ્ગજ ઋષભ, ગાંધાર, મધ્યમ, પંચમ ધૈવત અને નિષાદ. નાસિકા, કંઠ, ઊરસ્થાન, તાલુ, જિહ્વા અને દંત આ છ સ્થાનોથી ઉત્પન્ન થવાના કારણથી પ્રથમ સ્વર

“ નાસાં કળ્ઠમુરસ્તાલું જિહ્વાંદન્તાંશ્ચ સંશ્રિતઃ ।

ષડ્ભિઃ સંજાયતે યસ્માત્તસ્માત્ ષડ્જ ઇતિ સ્મૃતઃ ॥ ઇતિ ॥

તથા—ઋષભો—વૃષભઃ, તદ્વદ્ યો વર્તતે સ ઋષભઃ । ઉક્તંચાસ્ય લક્ષણમ્—

“વાયુઃ સમુત્થિતો નાભેઃ, કળ્ઠશીર્ષસમાદતઃ ।

નર્દન્ વૃષભવદ્ યસ્તત્, તસ્માત્, વૃષભ ઉચ્યતે ॥ ઇતિ ॥

તથા—ગાન્ધારઃ—ગન્ધમ્ ઇર્યતિ—પ્રાપ્નોતીતિ ગન્ધારઃ, સ઼ૈવ ગાન્ધારઃ ગન્ધપ્રાપકઃ સ્વરવિશેષઃ । ઉક્તંચ -

વાયુઃ સમુત્થિતો નાભે—હૃદિકળ્ઠે સમાદતઃ ।

નાનાગન્ધવહઃ પુણ્યો ગાન્ધારસ્તૈન હેતુના ॥ ઇતિ ॥

ઇત્યાદિ શ્લોક દ્વારા યહી બાત કહી ગઈ હૈ । ઋષભનામ બૈલ કા હૈ । બૈલ કે સ્વર કે જૈસે જો સ્વર હોતા હૈ, ઉસકા નામ ઋષભ હૈ । ઇસકા લક્ષણ ઇસ પ્રકાર કહા હુઆ હૈ—નાભિ સે જો વાયુ ઉઠતા હૈ, વહ કળ્ઠ ઓર શીર્ષ મેં જાકર ટકરાતા હૈ । ઇસસે બૈલ કે સ્વર કે જૈસે આવાજ હોતી હૈ । ઇસલિયે ઇસ સ્વર કા નામ ઋષભ હૈ । ગંધ કો જો સ્વર પ્રાપ્ત કરતા હૈ ઉસકા નામ ‘ગાંધાર’ સ્વર હૈ । ઇસ કા લક્ષણ ઇસ પ્રકાર કહા ગયા હૈ—જો વાયુ નાભિ સે ઉત્થિત હોકર હૃદય ઓર કંઠ મેં ટકરાતા હૈ તથા નાના પ્રકાર કે ગંધોં કો વહન કરતા હૈ ઇસલિયે હૃદય ઓર કંઠ સે ટકરાને પર જો આવાજ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, ઉસકા નામ ‘ગાન્ધાર’ હૈ । શરીર કે બીચ મેં જો સ્વર હોતા હૈ, ઉસકા નામ ‘મધ્યમ’ સ્વર હૈ । ઇસકા લક્ષણ ઇસ પ્રકાર સે હૈ—નાભિપ્રદેશ સે ઉત્પન્ન હુઆ

ષડ્ જ કહેવાય છે ઉક્તંચ પછી “ નાસા કળ્ઠ ” વગેરે શ્લોક વડે એજ વાત સ્પષ્ટ કરવામાં આવી છે. ઋષભ બળદનું નામ છે. બળદના સ્વરની જેમ જે સ્વર હોય છે તેનું નામ ઋષભ છે. આનું લક્ષણ આ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે—નાભિસ્થાનથી જે વાયુ ઉપર ઉઠે છે તે કંઠ અને શીર્ષમાં જઈને અથડાય અને તેથી બળદની જેમ અવાજ થાય છે. એટલા માટે જ આ સ્વરનું નામ ઋષભ છે. ગંધને જે સ્વર પ્રાપ્ત કરે છે તેનું નામ ‘ગાંધાર’ સ્વર છે. આનું લક્ષણ આ પ્રમાણે સ્પષ્ટ કરવામાં આવ્યું છે. જે વાયુ નાભિસ્થાનથી ઉપર ઉઠીને હૃદય અને કંઠ સ્થાનમાં અથડાય છે તેમજ વિવિધ ભાતના ગંધોનું વહન કરે છે એટલા માટે હૃદય અને કંઠને અથડાયા પછી જે સ્વર ઉત્પન્ન થાય છે તેનું નામ ગાન્ધાર છે. શરીરની વચ્ચે જે સ્વર હોય છે તેનું નામ મધ્યમ સ્વર છે આનું લક્ષણ આ પ્રમાણે છે નાભિસ્થાનથી ઉત્પન્ન થયેલ વાયુ

તથા-મધ્યમઃ-મધ્યે કાયસ્ય ભવો મધ્યમઃ । ઉક્તંચ-

વાયુઃ સમુત્થિતો નાભેરુરોહદિ સમાદતઃ ।

નાભિ પ્રાપ્તો મહાનાદો, મધ્યમત્વં સમશ્નુતે ॥

યદ્વા-“તદ્વદેવોત્થિતો વાયુ રુરઃ કણ્ઠસમાદતઃ । નાભિ પ્રાપ્તો મહાનાદો મધ્યસ્થ-
સ્તેન મધ્યમઃ ॥” ઇતિ ॥

તથા-પંચમઃ-પંચાનાં=પદ્મજાદિસ્વરાનુસારેણ પંચસંખ્યકાનાં સ્વરાણાં પૂરણઃ
સ્વરઃ પંચમઃ । યદ્વા-પંચસુ નાભ્યાદિ સ્થાનેષુ માતીતિ પંચમઃ । ઉક્તંચ-

“વાયુઃ સમુદ્ભવો નામે રુરો હૃત્કણ્ઠમૂર્ધસુ ।

વિચરન્ પંચમસ્થાનપ્રાપ્ત્યા પંચમ ઉચ્યતે” ॥” ઇતિ ॥

વાયુ ડરસ્થલ ઓર હૃદય મેં ટકરાતા હૈ ઓર ફિર નાભિસ્થાન મેં આકર
વડી આવાજ ઉત્પન્ન કરતા હૈ-હસલિયે હસ સ્વર કા નામ મધ્યમ
સ્વર હૈ । અથવા-ડસી પ્રકાર સે ઉત્થિત હુઆ વાયુ ડરસ્થલ ઓર
કણ્ઠ મેં ટકરાતા હૈ ફિર નાભિસ્થલ મેં પહુંચ કર વડે મારી શબ્દ કો
ઉત્પન્ન કરતા હૈ । હસ પ્રકાર મધ્યસ્થ હોને સે યહ સ્વર મધ્યમ કહા
ગયા હૈ । પદ્મજ આદિ સ્વરોં કી યહ સ્વર પાંચવી સંખ્યા કી પૂર્નિ
કરતા હૈ હસલિયે હસ સ્વર કા નામ ‘પંચમ’ સ્વર હુઆ હૈ । અથવા
નાભિ આદિ પાંચ સ્થાનોં મેં યહ સ્વર સમા જાતા હૈ હસલિયે યહ-સ્વર
પંચમ સ્વર કહલાયા હૈ । હસ કા લક્ષણ હસ પ્રકાર સે કહા ગયા હૈ-
નાભિસ્થાન સે જો વાયુ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, વહ વક્ષસ્થલ હૃદય કંઠ ઓર
મસ્તક મેં ટકરાના હુઆ પંચમસ્થાન મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ । હસલિયે હસ

ઉત્થળ અને હૃદયમાં અથડાય છે અને પછી નાભિસ્થાનમાં આવીને મોટો
અવાજ ઉત્પન્ન કરે છે, એટલા માટે આ સ્વરનું નામ મધ્યમસ્વર છે. અથવા
પહેલાની જેમ જ ઉપરની તરફ ઉઠતો વાયુ ઉત્થળ અને કંઠમાં અથડાય
છે પછી નાભિસ્થાનમાં પહોંચીને બહુ મોટો અવાજ ઉત્પન્ન કરે છે. આ
પ્રમાણે મધ્યસ્થ હોવા બદલ આ સ્વર મધ્યમ કહેવાય છે. પણ જો વગેરે
સ્વરોમાં આ સ્વર પાંચમી સંખ્યાને પૂરે છે એટલા માટે આ સ્વરનું નામ
પંચમસ્વર છે. અથવા નાભિ વગેરે પાંચ સ્થાનોમાં આ સ્વર સમાવિષ્ટ થઈ
જાય છે. એથી આ સ્વર પંચમસ્વર કહેવાય છે આનું લક્ષણ આ પ્રમાણે
કહેવામાં આવ્યું છે નાભિસ્થાનમાંથી જો વાયુ ઉત્પન્ન થાય છે તે વક્ષસ્થળ
હૃદય કંઠ અને મસ્તકમાં અથડાઈને પંચમસ્થાનમાં ઉત્પન્ન થાય છે. એટલા
માટે આનું નામ આ પ્રમાણે રાખવામાં આવ્યું છે. જે સ્વર બાકી રહેલા

તથા-ધૈવતઃ-અભિસન્ધયતે=અનુસન્ધયતિ શેષસ્વરાનિતિ ધૈવતઃ । યદ્વા-ધીમતા-મયં ધૈવતઃ । પક્ષદ્વયેऽપિ પૃષોદરાદિત્વાત્ સાધુત્વમ્ । ઉક્તંચાસ્ય લક્ષણમ્-

“અભિસન્ધયતે યસ્માદેત્રાન્ પૂર્વોદિતાન્ સ્વરાન્ ।

તસ્માદસ્ય સ્વરસ્યાપિ, ધૈવતત્વં વિધીયતે” ॥ ઇતિ ।

તથા-નિષાદઃ-નિષીદન્તિ સ્વરા યસ્મિન્ સ નિષાદઃ । ઉક્તં ચાપિ--

“નિષીદન્તિ સ્વરાઃ યસ્મિન્, નિષાદસ્તેન હેતુના ।

સર્વાંશ્ચાભિ ભવત્યેષ, યદાદિત્યોઽસ્ય દૈવતમ્” ॥ ઇતિ ।

તદેવં સપ્ત=સપ્તસંખ્યકાઃ સ્વરાઃ=જીવાજીવાશ્રયાઃ સ્વરાઃ વ્યાખ્યાતાઃ=વિવિધપ્રકારેણ તીર્થદ્વરગણધરૈઃ કથિતાઃ । નન્નુ કાર્યં હિ કારણાયત્તં, તત્ત્વ કારણં કાર્યભૂતાનાં સ્વરાણાં જિહ્વાદિકં, તાનિ ચ દ્વીન્દ્રિયાદિ ત્રસજીવાનામસંખ્યેયત્વાદસંખ્યેયાનિ કિમુતાજીવનિસૃતાનાં તતઃ કથં સ્વરાણાં સપ્તસંખ્યકત્વં ન વિરુદ્ધતે ? ઉચ્યતે-

કા નામ એસા કહા ગયા હૈ । જો સ્વર શેષ સ્વરોં કા અનુસંધાન કરતા હૈ વહ ‘ધૈવત’ હૈ । અથવા સંગીત વિશારદોં કા જો સ્વર હૈ વહ ‘ધૈવત’ હૈ । હસ કા લક્ષણ હસ પ્રકાર સે કહા હૈ-“અભિસંધયતે” ઇત્યાદિ હસ શ્લોક કા અર્થ સ્પષ્ટ હૈ । જિસ મેં સ્વર ટહરતા હૈ હસકા નામ નિષાદ સ્વર હૈ । યહ સ્વર સમસ્ત સ્વરાં કા પરામ્ભવ કરતા હૈ ક્યોંકિ હસકા દેવ આદિત્ય હૈ । યે જો સાત સ્વર હૈં વે જીવ ઓર અજીવ દોનોં કે આશ્રય રહતે હૈં । એસા તીર્થંકર અગવંતોને કહા હૈ ।

શંકા-કાર્ય કારણોં કે આધીન હોતા હૈ । હન સાત સ્વરસ્વરૂપ કાર્ય કે કારણ જિહ્વા આદિક હૈં । યે જિહ્વા આદિ કારણ દ્વીન્દ્રિય આદિ ત્રસ જીવોં કે અસંખ્યાત હોને સે અસંખ્યાત હૈં । અજીવ નિસૃત સ્વરોં કે વિષય કી તો વાત હી ક્યા હૈ । હસલિયે સ્વરોં કા સાત પ્રકાર કા કહના ઠીક નહીં હૈ ।

સ્વરોંનું અનુસંધાન કરે છે તે “ધૈવત” છે. અથવા સંગીત વિશારદોને જે સ્વર છે. તે ધૈવત છે આનું લક્ષણ આ પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે. “અભિસન્ધયતે ઇત્યાદિ” આ પ્રદેશનો અર્થ સ્પષ્ટ જ છે જેમાં સ્વર સ્થિર થાય છે તેનું નામ નિષાદ સ્વર છે. આ સ્વર બધા સ્વરોને પરામ્ભૂત કરે છે કેમ કે આનો દેવ આદિત્ય છે જે આ સાત સ્વર છે તે શુભ અને અશુભ બન્ને ને આશ્રિત રહે છે. આમ તીર્થંકર ભગવંતોને કહ્યું છે.

શંકા-કાર્ય કારણોને આધીન હોય છે. આ સાત સ્વર રૂપ કાર્યના કારણો જિહ્વા વગેરે છે. આ જિહ્વા વગેરે કારણો દ્વીન્દ્રિય વગેરે ત્રસ શુભ અસંખ્યાત હોવાથી અસંખ્યાત છે અશુભ નિસૃત સ્વરોના વિષયની તો વાત જ શી કરવી? એટલા માટે સ્વરોના સાત પ્રકારો યોગ્ય કહેવાય નહિ.

વિશેષભાષિત્યાસંખ્યેયા અપિ સ્વરાઃ સામાન્યેન સર્વેઽપિ સમસ્ત્રેવાન્તર્ભવતિ ॥ ચ
સૂત્રે સ્વરાણાં ચત્ સમસંખ્યકત્વમુક્તં તત્ સ્થૂલસ્વરાન્ ગીતં ચાશ્રિન્ય
સર્વેષાં સ્વરાણાં સમસ્ત્રાનુપાતિત્વાદતો નાસ્તિ કોઽપિ સ્વરાણાં સમસંખ્યાગણને
દોષ इति ॥ સૂ० ૧૬૨ ॥

इत्थं स्वरान्नामतो निरूप्य संप्रति तानेव कारणत आह—

मूलम्—एएसिं णं सत्तपहं सराणं सत्त सरट्ठाणा पणत्ता, तं
जहा—सज्जं च अग्गजीहाए, उरेण रिसहं सरं । कंठुग्गएण गंधारं,
मज्झजीहाए मज्झिमं ॥१॥ नासाए पंचमं बूया, दंतोद्वेण य
धेवयं । मुद्धाणेण य णेसायं, सरट्ठाणा वियाहिया ॥३॥ सत्तसरा
जीवणिसिसया पणत्ता, तं जहा—सज्जं रवइ मऊरो, कुक्कुडो
रिसभं सरं । हंसो रवइ गंधारं, मज्झिमं च गवेलगा ॥४॥ अह
कुसुमसंभवे काले, कोइला पंचमं सरं । छट्ठं च सरसा कोचा,
नेसायं सत्तमं गया ॥५॥ सत्तसरा अजीवणिसिसया पणत्ता, तं
जहा—सज्जं रवइ मुयंगो, गोमुही रिसहं सरं । संखो रवइ गंधारं,

उत्तर—विशेष की अपेक्षा लेकर स्वर यद्यपि असंख्यात हैं परन्तु,
ये सब असंख्यात स्वर सामान्यरूप से इन सात स्वरों में ही अन्तर्भूत
हो जाते हैं । अथवा सूत्रकारने जो “सात स्वर हैं ” ऐसा सूत्र कहा है,
वह स्थूल स्वरों से एवं गीत को लेकर कहा है ऐसा जानना चाहिये ।
क्योंकि और जितने भी स्वर हैं, वे सब इन्हीं सात स्वरों में समा
जाया करते हैं । इसलिये स्वर सात हैं इस प्रकार के कथन में
कोई दोष नहीं है । सू० १६२ ॥

ઉત્તર—વિશેષની અપેક્ષાથી સ્વર નો કે અસંખ્યાત છે છતાં એ આ બધા
અસંખ્યાત સ્વરો સામાન્ય રૂપથી આ સાત સ્વરોમાં જ અન્તર્ભૂત થઇ બધ
છે. અથવા સૂત્રકારે જે ‘સાત સ્વરો છે’ આમ કહ્યું તે સ્થૂલ સ્વરો અને
ગીતને લઇને કહ્યું છે આમ બાણુવું બોધ એ કેમ કે બીજા બેટલા સ્વરો છે
તે બધા એજ સાત સ્વરોમાં સમાવિષ્ટ થઇ બધ છે એટલા માટે સ્વર સાત
છે આ બાતના કથનમાં કોઈ પણ બાતનો દોષ નથી. ॥સૂ० ૧૬૨॥

મઙ્ગિમં પુણ ઝલ્લરી ॥૬॥ ચઉચરણપદ્ધટ્ટાણા, ગોહિયા પંચમં સરં ।
આડંબરો ધેવડયં, મહાભેરી ય સત્તમં ॥૭॥ સૂ૦ ૧૬૩ ॥

છાયા—એતેષાં સ્વરોનાં સ્વરણાં સપ્ત સ્વરસ્થાનાનિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તથા—
ષડ્જં ચ અગ્રજિહ્વા, ઉરસા ઋષભં સ્વરમ્ । કણ્ઠાગ્રેણ ગાન્ધારં, મધ્યે જિહ્વા મધ્ય-
મમ્ ॥૨॥ નાસિકયા પશ્ચમં બ્રૂયાત્, દન્તોષ્ઠેન ચ ધૈવતમ્ । મૂર્ધ્ના ચ નિષાદમ્, સ્વર-
સ્થાનાનિ વ્યાખ્યાતાનિ ॥૩॥ સપ્તસ્વરાઃ જીવનિશ્રિતાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તથા—ષડ્જં

હસ પ્રકાર નામ સે સ્વરોં કા કથન કરકે અવ સૂત્રકાર ઉન્હોં સ્વરોં
કા કારણ કી અપેક્ષા લેકર કથન કરતે હૈં—

‘एएसिं णं सत्तण्हं’ इत्यादि ।

શબ્દાર્થ—(एएसिं) इन (सत्तसराणं) सात स्वरों के (सप्त)सात
(सरट्टाणा) स्वरस्थान (पणत्ता) कहे गये हैं । (तं जहा) वे इस प्रकार
से हैं ।—(सज्जं च अगगजीहाए) जिह्वा के अग्र भाग से षड्ज
स्वर बोलना चाहिये (उरेण रिसहं सरं) वक्षस्थल से ऋषभस्वर
बोलना चाहिये (कंठुगएणं गंधारं) कण्ठ के अग्रभाग से गांधार स्वर
बोलना चाहिये । (मज्झजीहाए मज्झिमं) जिह्वा के मध्य भाग से
मध्यम स्वर बोलना चाहिये । (नासाए पंचमं) नासिका से पंचम स्वर
बोलना चाहिये (दंतोष्ठेण य धेवयं) दन्तोष्ठ से धैवत स्वर बोलना
चाहिये (मुद्धाणेणं य णेसायं ब्रूया) और मूर्धा से निषाद स्वर बोल-

આ પ્રમાણે સ્વરોનું નામની અપેક્ષાએ કથન કરીને હવે સૂત્રકાર તેજ
સ્વરોનું કારણની અપેક્ષાએ કથન કરે છે—

“एएसिं णं सत्तण्हं” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(एएसिं णं) आ (सत्तसराणं) सात स्वरानां (सप्त) सात (सर-
ट्टाणा) स्वरस्थानो (पणत्ता) कहेवाभां आयां छे. (तंजहा) ते आ प्रमाणे छे
(सज्जं च अगगजीहाए) जलना अग्रभागथी षड्ज स्वरनुं उच्यारणुं करवुं
लेधये (उरेण रिसहं सरं) वक्षस्थलथी ऋषभ स्वरनुं उच्यारणुं करवुं लेधये.
(कंठुगएणं गंधारं) कंठना अग्रभागथी गांधार स्वरनुं उच्यारणुं करवुं लेधये
(मज्झजीहाए मज्झिमं) जलना मध्यभागथी मध्यम स्वरनुं उच्यारणुं करवुं
लेधये. (नासाए पंचमं) नासिकी पंचमस्वरनुं उच्यारणुं करवुं लेधये.
(दंतोष्ठेण य धेवयं) दन्तोष्ठथी धैवत स्वरनुं उच्यारणुं करवुं लेधये (मुद्धाणेणं य
णेसायं ब्रूया) अने मूर्धाथी निषाद स्वरनुं उच्यारणुं करवुं लेधये. (सरट्टाणा
व्याहिया) आ प्रमाणे सात स्वर स्थानानुं कथन करवाभां आयुं छे.

रौति मयूरः, कुक्कुटः ऋषभं स्वरम् । हंसो रौति गान्धारं, मध्यमं च गवेलकः
(मेपाः) ॥४॥ अथ कुसुमसंभवे काले, कोकिलाः पञ्चमं स्वरम् । षष्ठं च सारसाः
क्रौञ्चाः, निषादं सप्तमं गजाः ॥५॥ सप्तस्वराः अजीवनिश्चिताः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—
षड्जं रौति मृदङ्गो, गोमुखी ऋषभं स्वरं । शंखो रौति गान्धारं, मध्यमं पुनर्ज्ञ-
ल्लरी ॥ ६ ॥ चतुश्चरणप्रतिष्ठाना, गोधिका पञ्चमं स्वरं । आडम्बरो धैवतकं, महा-
भेरीश्च सप्तमम् ॥ सू० १६३ ॥

ना चाहिये । (सरद्व्याणा विद्याहिया) इस प्रकार से सात स्वरस्थान व्या-
ख्यात किये हैं । (सत्तसरा जीवणिस्सिया पण्णत्ता) सात स्वर जीव-
निश्चित कहे गये हैं । (तंजहा) वे इस प्रकार से हैं—(सज्जं रवइ मउरो) षड्जस्वर मयूर बोलता है (कुक्कुडो रिसहं सरं) कुक्कुट—
ऋषभस्वर बोलता है । (हंसो रवइ गंधारं) हंस गान्धार स्वर
बोलता है (मज्झिमं च गवेलगा) गवेलक-मेष मध्यम-स्वर
बोलते हैं । (अह कुसुमसंभवे काले कोइला पंचमं सरं)
पुष्पोत्पत्तिकाल में कोयल पंचम स्वर बोलती है (छट्ठं च
सारसा कौंचा) छठा धैवत स्वर सारस और क्रौंच पक्षी बोलते हैं ।
(सत्तमं नेसायं गया) सातवां जो निषाद स्वर है उसे गज बोलते हैं ।
(सत्त सरा अजीवनिस्सिया पण्णत्ता) सात स्वर अजीवनिश्चित कहे
गये हैं—(तं जहा) वे इस प्रकार से हैं—(सज्जं रवइ मुयंगो) षड्ज
मृदंग बोलता है (गोमुही रिसहं सरं) गोमुखी-वाद्यविशेष-ऋषभ स्वर
बोलता है । (शंखो गंधारं रवइ) शंख-गान्धार स्वर बोलता है । (झल्लरी-
मज्झिमं) झल्लरी मध्यमस्वर बोलता है । (चउचरणपइद्व्याणा गोहिया)

(सत्तसरा जीवणिस्सिया पण्णत्ता) सात स्वरों अजीवनिश्चित कहेवालों आख्या छे
(तंजहा) ते आ प्रमाणे छे—(सज्जं रवइ मउरो) षड्ज स्वर मयूर-भोर-भावे
छे. (कुक्कुडो रिसहं सरं) कुक्कुटो ऋषभ स्वर भावे छे. (मज्झिमं च गवेलगा)
गवेलक-मेष-मध्यम स्वर भावे छे (अह कुसुमसंभवे काले कोइला पंचमं सरं)
पुष्पोत्पत्ति कालमां-कोयल पंचमस्वर भावे छे (छट्ठं च सारसा कौंचा) छठा
धैवत स्वर सारस अने-कौंचपक्षी विशेष भावे छे. (सत्तमं नेसायं गया)
सातवां निषाद स्वर हाथी भावे छे (सत्तसरा अजीवनिस्सिया पण्णत्ता) सात
स्वरों अजीव निश्चित कहेवालों आख्या छे (तंजहा) ते आ प्रमाणे छे—
सज्जं रवइ मुयंगो) षड्ज स्वर मृदंगमांथी नीकणे छे. (गोमुही रिसहं सरं)
गोमुखी-वाद्य विशेषमांथी ऋषभ स्वर नीकणे छे. (शंखो गंधारं रवइ) शंख-
मांथी गान्धार स्वर नीकणे छे. (झल्लरी मज्झिमं) झल्लरी मांथी मध्यम स्वर
नीकणे छे. (चउचरणपइद्व्याणा गोहिया) आरे पण जेना जमीन पर भूकवां

ટીકા—‘एएसि णं’ इत्यादि—

एतेषां सप्तानां स्वराणां सप्त स्वरस्थानानि प्रज्ञप्तानि, अयं भावः एते षड्जादि सप्तस्वरा यस्मात् यस्मात् स्थानात् समुत्पद्यते तानि जिह्वाग्रभागादिस्वरस्थानान्यपि सप्तसंख्यकानि सन्ति । नाभेरुत्थितोऽविकारी स्वर आभोगतोऽनाभोगतो वा जिह्वादिस्थानं प्राप्य विशेषमासादयतीति तत् स्वरस्योपकारकमतस्तत् स्वरस्थानमुच्यते, इति । तान्येव स्थानानि दर्शयति—तद्यथा—षड्जं स्वरम् अग्रजिह्वा—अग्रभूता जिह्वा—अग्रजिह्वा, तथा जिह्वाग्रभागेन ब्रूयात् । षड्जस्वरस्य स्थानं जिह्वाग्र-

चारोंपैरों से जमीन ऊपर रखी गई ऐसी गोधिका—वाद्यविशेष—(पंचमं सरं) पंचम स्वर को बोलती है (आडंबरो धेवयं) आडंबर धेवत स्वर को बोलता है (महाभेरीय सत्तमं) और महाभेरी सप्तम जो निषाद स्वर है, उसे बोलती है ।

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा सूत्रकारने सात स्वरों के सात स्थानों का कथन किया है । षड्ज आदि सात स्वर जिस २ स्थान से उत्पन्न होते हैं, वे जिह्वाग्रभाग आदि स्वरोत्पादक स्थान सात हैं । नाभिस्थान से उत्थित अविकारी स्वर आभोग (अनजान) से जिह्वा आदि स्थान को प्राप्त हो करके अपने में विशेषता प्राप्त कर लेता है, इसलिये वह जिह्वा आदि स्थान उस स्वर का उपकारक होता है । अतः वह उस स्वर का स्थान कहा जाता है । सूत्रकारने इन्हीं सात स्वर स्थानों को यहां दिखलाया है । षड्ज स्वर जिह्वाग्रभाग से बोला जाता है । इसलिये उसका स्थान जिह्वाग्रभाग है ।

આવે છે. એની ગોધિકા—વાદ્ય વિશેષમાંથી (પંચમં સરં) પંચમ સ્વર નીકળે છે (આડંબરો ધેવયં) આડંબરમાંથી ધેવત સ્વર નીકળે છે. (મહાભેરીય સત્તમં) અને મહાભેરીમાંથી સાતમો જે નિષાદ નામે સ્વર છે કે નીકળે છે.

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર વડે સૂત્રકારે સાત સ્વરોના સ્થાનોનું કથન કર્યું છે. ષડ્જ વગેરે સાત સ્વર જે જે સ્થાન વિશેષથી ઉત્પન્ન થાય છે. તે જિહ્વાગ્ર ભાગ વગેરે સાત સ્વરોત્પાદક સ્થાનો છે નાભિસ્થાનથી ઉત્થિત થયેલ અવિકારી સ્વર આભોગ (અજ્ઞ) થી કે અનાભોગ (અનજ્ઞ)થી જિહ્વા વગેરે સ્થાન સુધી પહોંચીને પોતાની બાતમાં એક વિશેષતા મેળવી લે છે. એટલા માટે જિહ્વા વગેરે સ્થાન તે સ્વર માટે ઉપકારક હોય છે. એથી તે તે સ્વરનું સ્થાન કહેવાય છે. સૂત્રકારે એજ સાત સ્વર સ્થાનોનું અહીં સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે ષડ્જ સ્વર જિહ્વાગ્ર ભાગથી ઉચ્ચરિત કરવામાં આવે છે તેથી તેનું નામ જિહ્વાગ્ર ભાગ છે.

ભાગ इत्यर्थः । ननु षड्जस्वरोच्चारणे कण्ठादीन्यपि स्थानान्याश्रीयन्ते, अग्रजिह्वा-
च्चस्वरान्तरेष्वप्याश्रीयते तत्कथं षड्जादिष्वेकैकस्य स्वरस्य अग्रजिह्वादिरूपमेकैकं
स्थानमुच्यते ? इति चेदाह—यद्यपि षड्जादयः सर्वेऽपि स्वराः जिह्वाग्रभागादीनि
सर्वाण्यपि स्थानान्यपेक्षन्ते, तथापि विशेषत एकैकस्वरो जिह्वाग्रभागादिष्वेकैकं स्थान-
मादायैव व्यज्यते । अतस्तत्तत्स्वरस्य तत्तत्स्थानमुक्तमिति बोध्यम् । तथा—उरसा=
वक्षसा ऋषभं स्वरं ब्रूयात् । ऋषभस्वरस्य स्थानं वक्षो बोध्यम् । तथा—कण्ठोद्गतेन
कण्ठादुद्गतम्-उद्गतिः=स्वरनिष्पत्तिहेतुभूताक्रिया तेन गान्धारं स्वरं ब्रूयात् । गान्धार-

શંકા—ષડ્જ સ્વર કે ઉચ્ચારણ કરને મેં કણ્ઠાદિક સ્થાનોં કા
भी सहारा लेना पड़ता है, तथा अग्रजिह्वा दूसरे स्वरों में भी उप-
युक्त होती है, तो फिर षड्ज-आदि स्वरों में से एक २ स्वर का अग्र-
जिह्वा आदि रूप एक २ स्थान प्रतिनियत कैसे कहा जा सकता है ?

उत्तर—यद्यपि षड्ज आदि समस्त भी स्वर जिह्वाग्रभाग आदि
रूप समस्त स्थानों की अपेक्षा करते हैं, तो भी विशेष रूप से एक २
स्वर जिह्वाग्रभागादिक रूप स्थानों में से एक २ स्थान को आश्रित
करके ही अभिव्यक्त (प्रकट) होता है । इसलिये उस २ स्वर का वह-
वह स्थान कहा जाता है । इसी अभिप्राय को लेकर यहां सूत्रकारने एक २
स्वर का एक एक स्थान कहा है । वक्षस्थल से ऋषभ स्वर बोलना
चाहिये इस कथन से यही जाना जाता है कि—‘ऋषभ स्वर का वक्ष-
स्थल स्थान है । स्वर की निष्पत्ति की हेतुभूत जो क्रिया कंठ से होती

શંકા—ષડ્જ સ્વરનો ઉચ્ચાર કરતાં કંઠ વગેરે સ્થાનોના પણ આધાર
લેવા પડે છે. તેમજ અગ્રજિહ્વા બીજા પણ કેટલાક સ્વરોના ઉચ્ચારણ માટે
સહાયભૂત હોય છે. તો પછી ષડ્જ વગેરે સ્વરોમાંથી એક એક સ્વરનું
અગ્રજિહ્વા વગેરે રૂપ એક એક સ્થાન પ્રતિનિયત કેવી રીતે કહેવાય ?

ઉત્તર—જે કે ષડ્જ વગેરે બધા સ્વરો જિહ્વાથી ભાગ વગેરે બધા
સ્થાનોનો ઉપયોગ કરે છે. છતાં એ વિશેષ રૂપથી દરેક સ્વર જિહ્વાથી ભાગા-
દિક સ્થાનોમાંથી કોઈ એક સ્થાનને સમાશ્રિત કરીને જે વ્યક્ત (લિખ્યરિત)
થાય છે. એટલા માટે તે સ્વરનું તે સ્થાન કહેવાય છે એજ અભિપ્રાયને લઈને
અહીં સૂત્રકારે દરેક સ્વરનું એક એક સ્થાન કહ્યું છે. વક્ષસ્થળથી ઋષભ
સ્વરનું ઉચ્ચારણ કરવું જોઈએ આ કથનથી એજ વાત સ્પષ્ટ થાય છે કે ઋષભ
સ્વરનું સ્થાન વક્ષસ્થળ છે સ્વરની નિષ્પત્તિમાં હેતુભૂત જે ક્રિયા કંઠથી થાય છે,

સ્વરસ્ય સ્થાનં કઠો વોધ્યમ્ । તથા-મધ્ય જિહ્વાજિહ્વાયા મધ્યો ભાગો મધ્યજિહ્વા,
તથા-મધ્યમં સ્વરં વ્રૂયાત્ । જિહ્વાયા મધ્યભાગો મધ્યમસ્વરસ્ય સ્થાનમિતિભાવઃ ।
તથા-નાસયા=નાસિકયા પશ્ચમં સ્વરં વ્રૂયાત્ । પશ્ચમસ્વરસ્ય સ્થાનં નાસિકેત્યર્થઃ ।
તથા-દન્તોષ્ઠેન=દન્તોષ્ઠક્રિયાયા ધૈવતં સ્વરં વ્રૂયાત્ । ધૈવતસ્વરસ્ય સ્થાનં દન્તોષ્ઠં
વોધ્યમ્ । તથા-મૂર્ધ્ના=મૂર્ધસ્થાનેન નિષાદં સ્વરં વ્રૂયાત્ । નિષાદસ્વરસ્ય સ્થાનં મૂર્ધા
વોધ્યમ્ । એતાનિ જિહ્વાગ્રભાગાદીનિ સપ્ત સ્વરસ્થાનાનિ ભગવતા વ્યાખ્યાતાનિ ।
इत्थं स्वरस्थानान्युक्त्वा सम्प्रति 'को जीवः कं स्वरं ब्रूते' इति दर्शयति-‘सत्त
सरा जीवनिस्सित्या’ इत्यादिना ‘णिसायं सत्तमं गया इत्यन्तेन । अर्थः स्पष्टः ।
नवरम्-गावश्च-एलकाश्चेति गवेलकाः, यद्वा गवेलकाः-मेषा एव । कुसुमसंभवे-

है, उसका नाम 'कंठोद्गत' है इससे गांधार स्वर बोला जाता है, अतः
गांधार स्वर का स्थान -कंठ है । जिह्वा का जो मध्य भाग है-उससे
मध्यम स्वर बोला जाता है; इस कारण मध्यम स्वर का स्थान जिह्वा
का मध्य भाग है । 'नासिका से पंचम स्वर बोलना चाहिये' इस कथन
से यही जाना जाता है-कि 'पंचम स्वर का स्थान नासिका है ।' 'दन्तो-
ष्ठ क्रिया से धैवत स्वर को बोलना चाहिये' इस कथन से यही स्पष्ट
होता है कि 'धैवत स्वर का स्थान दन्तोष्ठ है' । 'मूर्धा से निषाद
स्वर बोलना चाहिये' इससे यही जाना जाता है कि 'निषाद स्वर का
स्थान मूर्धा है ।' ये जिह्वाग्रभागादिक सप्तस्वरस्थान भगवान् ने कहे
हैं । इस प्रकार सात स्वरों के स्थान कहकर सूत्रकारने पुनः यह बत-
लाया है कि-कौन २ जीव किस २ स्वर को बोलता है—? “गवेलक”
में गौ और एलक ये दो प्राणी आये हैं । अथवा गवेलक का अर्थ मेष

તેનું નામ કંઠોદ્ગત છે. એનાથી ગાંધાર સ્વર ઉચ્ચરિત થાય છે એથી
ગાંધાર સ્વરનું નામ કંઠ છે. જિહ્વાના મધ્ય ભાગથી મધ્યમ સ્વરનું ઉચ્ચારણ
થાય છે. એથી જિહ્વાનો મધ્ય ભાગ મધ્યમ સ્વરનું સ્થાન છે નાકથી પંચમ
સ્વરનું ઉચ્ચારણ કરવું જોઈએ આ કથનથી આ વાત સ્પષ્ટ થાય છે કે પંચમ
સ્વરનું સ્થાન નાસિકા છે. દન્તોષ્ઠ ક્રિયાથી ધૈવત સ્વર બોલવો જોઈએ આ
કથનથી એજ વાત જણાય છે કે ધૈવત સ્વરનું સ્થાન દન્તોષ્ઠ છે મૂર્ધાથી
નિષાદ સ્વર બોલવો જોઈએ એથી એ વાત જણાય છે કે, નિષાદ સ્વરનું
સ્થાન મૂર્ધા છે એ જિહ્વાગ્ર ભાગ વગેરે સપ્તસ્વર સ્થાનો ભગવાને કહ્યા છે.

આ પ્રમાણે સપ્તસ્વરોના સ્થાન વિષે માહિતી આપીને સૂત્રકાર ફરી
એ બતાવે છે કે-કયા કયા જીવો કયા કયા સ્વરથી બોલે છે? “ગવેલક”માં
ગૌ અને એલક એ બે પ્રાણીઓ છે અથવા ગવેલકનો અર્થ મેષ પણ છે.

કાલે=વસન્તસમયે । અથ યસ્માત્ યસ્માત્ વાઘાદ યો યઃ સ્વરો નિર્ગચ્છાત, તં તમાદ-તદ્વા-તદ્દર્શયતિ-‘સત્ત સરા અજીવનિસ્સિયા’ इत्यादिना ‘महाभेरो य सत्तमं’ इत्यन्तेन । अर्थः स्पष्टः । नवरं-गोमुखी=यस्या मुखे गोशृङ्गादि वस्तु स्थाप्यते सा ‘काहला’ इत्यपरनाम्ना प्रसिद्धा । चतुश्चरणप्रतिष्ठाना गोधिका=चतुर्भिश्चरणैः प्रतिष्ठानं भुवि यस्याः सा तथाभूता गोधिका-गोधैव गोधिका चर्माश्चनद्धा दर्दरिकेत्यपरनाम्ना प्रसिद्धा वाद्यविशेषः । आडम्बरः=पटहः । सप्तमं=निषादम् । अत्रेदं बोध्यम्-यद्यपि मृदङ्गादि जनितेषु स्वरेषु नाभ्युरःकण्ठाद्युत्पद्यमानरूपो व्युत्पत्यर्थो न घटते, तथापि-मृदङ्गादि वाद्येभ्यः षड्जादिस्वरसदृश-स्वरा उत्पद्यन्ते । अतएव तेषां मृदङ्गाद्यजीवनिश्चितत्वमुक्तम् ॥सू० १६३॥

સંપ્રતિ एषां सप्तस्वराणां लक्षणान्याह—

શૂલમ્-एषां णं सत्तण्हं सराणं सत्त सरलवखणा पणत्ता, तं जहा-सज्जेण लहई वित्तिं, कयं च न विणस्सइ । गावो पुत्ता य मित्ता य, नारीणं होइ वल्लहो॥१॥ रिसहेण उ एसज्जं, सेणा-

भी है । कुसुमसंभवकाल का तात्पर्य वसन्त ऋतु से है । जिसके मुख पर गोशृंग आदि स्थापित किया जाता है तथा जिसका दूसरा नाम ‘काहला’ है, वह वाद्यविशेष ‘गोमुखी’ कहलाता है । चतुश्चरण प्रतिष्ठाना गोधिका भी एक प्रकार का वाद्यविशेष होता है इस का नाम ‘दर्दरिका’ है । यह चमड़े से मढ़ा हुआ होता है । ‘आडम्बर’ पटह को कहते हैं । यद्यपि मृदङ्ग आदि जनित स्वरों में नाभि उरस कण्ठ आदि से उत्पन्न होना रूप व्युत्पत्यर्थ घटित नहीं होता है, तो भी मृदंग आदि वाद्यों से षड्ज आदि स्वरों के सदृश स्वर उत्पन्न होते हैं, इसलिये उन्हें मृदंगरूप अजीव से निश्चित कहा है ॥सू० १६३॥

કુસુમ સંભવકાલ એટલે વસંત ઋતુ છે જેનાં મુખ પર ગોશ્વંગ, વગેરે સ્થાપિત કરવામાં આવે છે તેમજ જેનું ખીજું નામ ‘કાહલા’ છે તે વાદ્ય-વિશેષ ‘ગોમુખી’ કહેવાય છે ચતુશ્ચરણ પ્રતિષ્ઠાના ગોધિકા પણ એક વાદ્ય-વિશેષ છે એનું નામ ‘દર્દરિકા’ છે. એ ચામડથી બનાવેલું હોય છે ‘આડમ્બર’ પટહને કહે છે. જો કે મૃદંગ વગેરેથી ઉત્પન્ન સ્વરોમાં નાભિ, ઉરસ, કંઠ વગેરેથી ઉત્પત્તિ રૂપ વ્યુત્પત્યર્થ નીકળતો નથી, છતાં એ મૃદંગ વગેરે વાદ્યોથી ષડ્જ વગેરે સ્વરોની જેમ જ સ્વર ઉત્પન્ન થાય છે. એથી તેમને મૃદંગ રૂપ અજીવથી નિશ્ચિત કહ્યા છે. ॥સૂ૦ ૧૬૩॥

વચ્ચં ધણાણિ ય । વત્થ ગંધમલંકારં, इत्थिओ सयणाणि य॥२॥
 ગંધારે ગીયજુત્તિણ્ણા, वज्जवित्ती कलाहिया । हवन्ति कइणो
 પપ્પણા, જે અપ્પણે સત્થપારગા॥૩॥ मज्झिमस्सरसंपन्ना, हवन्ति
 સુહજીવિણો । खायई पियई देई, मज्झिमस्सरमस्सिसओ॥४॥
 પંચમસ્સરસંપન્ના હવંતિ પુઢવીવઈ । सूरसंगहकत्तारो अणेग-
 ગણનાયગા॥૫॥ धेवयस्सरसंपन्ना हवन्ति कलहपिया । साउणिया
 વગ્ગુરિયા, सोयरिया मच्छबंधा य ॥६॥ चंडाला मुट्ठिया सेया,
 જે અન્ને પાવકમ્મિણો । गोघातगा य जे चोरा, गिसायं
 સરમસ્સિયા ॥૭॥सू० १६४॥

છાયા—एतेषां खलु सप्तानां स्वराणां सप्त स्वरलक्षणानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—
 षड्जेन लभते वृत्तिः, कृतं च न विनश्यति । गावः पुत्राश्च मित्राणि च, नारीणां

अब सूत्रकार इन सात स्वरों के लक्षणों को कहते हैं—

“एएसि णं सत्तण्हं” इत्यादि ।—

શબ્દાર્થ—(एएसि सत्तण्हं सराणं) इन सात स्वरों के (सरलस्वणा)
 સ્વર લક્ષણ-तत् तत्-फल की प्राप्ति के अनुसार स्वर तत्त्व—(सत्त) सात
 (पण्णत्ता) कहे गये हैं । (तंजहा) वे इस प्रकार से हैं—(सज्जेण वित्ति ल-
 हई) षड्ज स्वर से अनुष्य-आजीविका प्राप्त करता है । (कयं च ण विण-
 स्सइ) तथा षड्ज स्वरवाले व्यक्ति का कृतकर्म नष्ट नहीं होता है ।
 (गावो पुत्ता य मित्ता य नारीणं होइ बल्लहो) इस को गाये पुत्र और

હવે સૂત્રકાર એ સાત સ્વરોના લક્ષણો કરે છે—

“एएसि णं सत्तण्हं” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(एएसि णं सत्तण्हं सराणं) એ સાત સ્વરોના (सरलस्वणा)
 સ્વરલક્ષણ-ते ते क्षणी प्राप्तिनी अपेक्षाये स्वरतत्त्व (सत्त) सात (पण्णत्ता) कहे-
 वामां आया છે (तंजहा) तेओ आ प्रभाये છે (सज्जेण वित्त लई) षड्ज स्वरधी
 भाषुस आजीविका प्राप्त करे છે (कयंच ण विणस्सइ) तेमज षड्ज स्वरवाणी व्यक्ति
 ओना कृतकर्मे नाश पावता नथी अर्थात् कार्य सिद्ध करे છે. (गावो पुत्ता य मित्ता य
 नारीणं होइ बल्लहो) आने गाये पुत्र अने मित्र होय છે. स्त्रीओने એ બહુજ

भवति बल्लभः॥१॥ ऋषभेण तु ऐश्वर्यं सेनापत्यं धनानि च । वस्त्रगन्धम् अलंकारम्,
स्त्रियः शयनानि च ॥२॥ गान्धारे गीतयुक्तिज्ञाः वर्यवृत्तयः कलाधिकाः । भवन्ति
कवयो प्राज्ञाः, ये अन्ये शास्त्रपारगाः ।३॥ मध्यम स्वरसम्पन्ना भवन्ति-सुख-
जीविनः । खादति पिवति ददाति, मध्यमस्वरमाश्रितः ॥४॥ पञ्चमस्वरसम्पन्ना

મિત્ર હોતે હૈં । યહ સ્ત્રિયોં કો બહુત પ્યારા હોતા હૈં । (રિસહેણ ૩
એસજ્જં) ઋષભ સ્વર સે મનુષ્ય એશ્વર્ય-ઈશનશક્તિવાલા-હોતા હૈં (સેના-
વચ્ચં ધણાણિય) હસ સ્વર કે પ્રભાવ સે વહ સેનાપતિત્વ કો ધન કો,
(વત્થગંધમલંકારં इत्थિओ सयणाणिय) વસ્ત્રોં કોં ગંધપદાર્થોં કો, અલં-
કારોં કો, સ્ત્રિયોં કો, ઓર શયનોં કો પાતા હૈં । (ગંધારે ગીયજુત્તિણ્ણા)
ગાન્ધાર સ્વર સે ગાના ગાનેવાલે મનુષ્ય (વજ્જવિત્તી કલાહિયા) શ્રેષ્ઠ
આજીવિકાવાલે હોતે હૈં તથા કલાઓં કે જ્ઞાતાઓં મેં શિરોમણિ હોતે
હૈં । (કહ્ણો પપ્પા હવંતિ) કવિ-કાવ્યકર્તા-હોતે હૈં અથવા-“કહ્ણો-
કૃતિનઃ” હસ છાયા પક્ષ મેં કર્તવ્યશીલ હોતે હૈં । પ્રાજ્ઞઃ-સદ્બોધ
સંપન્ન-હોતે હૈં । (જે અણ્ણે સત્થપારગા) તથા જો પૂર્વોક્ત ગીત યુક્તિજ્ઞ
આદિ કોં સે જો ભિન્ન હોતે હૈં-વે, સકલશાસ્ત્રોં મેં નિષ્ણાત હોતે હૈં ।
(મજ્ઞિમસ્સરસંપન્ના) જો મધ્યમ સ્વર સે યુક્ત હોતે હૈં, વે (સુહજીવિણો
હવંતિ) સુખજીવિ હોતે હૈં । (સાયઈ પિયઈ દેઈ મજ્ઞિમસ્સરમસ્સિઓ)
સુખજીવિ કૈસે હોતે હૈં ? હસીં વાત કો સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ વે સુસ્વાદુ
ભોજન કો મનમાના ખાતે હૈં, દુગ્ધાદિ કા પાન કરતે હૈં । દૂસરોં કો

પ્રિય હોય છે (રિસહેણ ૩ એસજ્જં) ઋષભ સ્વરથી માણુસ એશ્વર્ય-ઈશન શક્તિ
સંપન્ન-હોય છે (સેનાવચ્ચં ધણાણિય) આ સ્વરના પ્રભાવથી સેનાપતિત્વને,
ધનને, (વત્થગંધમલંકારં इत्थिओ सयणाणिय) વસ્ત્રો, ગંધપદાર્થો, અલંકારો,
સ્ત્રીઓ, તેમજ શયનને મેળવે છે. (ગંધારે ગીય જુત્તિણ્ણા) ગાન્ધાર સ્વરથી
ગાનારા માણુસો (વજ્જવિત્તી કલાહિયા) શ્રેષ્ઠ આજીવિકાવાળા હોય છે તેમજ
કલાવિદોમાં શ્રેષ્ઠ ગણાય છે. (કહ્ણોવપ્પા હવંતિ) કાવ્યકાર હોય છે અથવા
'કહ્ણો-કૃતિનઃ' આ છાયા પક્ષમાં કર્તવ્યશીલ હોય છે પ્રાજ્ઞઃ-સદ્બોધ
સંપન્ન હોય છે. (જે અણ્ણે સત્થપારગા) તેમજ પૂર્વોક્ત ગીત યુક્તિજ્ઞ વગેરેથી
જે ભિન્ન હોય છે તેઓ સકલ શાસ્ત્રોમાં નિષ્ણાત છે. (મજ્ઞિમસ્સરસંપન્ના)
જેઓ મધ્યમ સ્વર સંપન્ન હોય છે તેઓ (સુહજીવિણો હવંતિ) સુખજીવિ
હોય છે. (સાયઈ પિયઈ દેઈ, મજ્ઞિમસ્સરમસ્સિઓ) સુખજીવી કેવી રીતે હોય
છે ? એજ વાતને સૂત્રકાર હવે સ્પષ્ટ કરે છે-કે તેઓ પોતાની ઈચ્છા

भवन्ति पृथिवीपतयः । शूराः संग्रहकर्तारः, अनेकगणनायकाः ॥५॥ धैवतस्वर-
सम्पन्ना भवन्ति कलहप्रियाः । शाकुनिका वागुरिकाः सौकरिका मत्स्यबन्धाश्च ॥६॥
चाण्डालामौष्टिकाः सेया ये अन्ये पापकर्मणः । गोघातकाश्च ये चोरा निषाद-
स्वरमाश्रिताः ॥ ७ ॥ ॥ सू० १६४ ॥

भी इसी प्रकार से खिलाते पिलाते रहते हैं । (पंचमस्वरसंपन्ना हवन्ति पुढवीवई) जो पंचमस्वर से युक्त होते हैं वे पृथिवीपति होते हैं । (सूरा संग्रहकर्तारो अनेकगणनायगा) शूरवीर होते हैं, संग्रह करनेवाले होते हैं और अनेक गणों के नायक होते हैं । तथा जा (धैवयस्वरसंपन्ना हवन्ति कलहप्रिया) जो धैवतस्वरवाले होते हैं वे कलहप्रिय होते हैं-लड़ाई झगडा करना उन्हें बहुत पसन्द आता है । (साउणिद्यावगुरिया सोयरिया, मच्छबंधा य) शाकुनिक-पक्षियों का शिकार करनेवाले, होते हैं, वागुरिक-हरिणों की हत्या करनेवाले, होते हैं, सौकरिक-सुअरों का शिकार करनेवाले, होते हैं, और मत्स्यबंध-मछलियों को मारनेवाले, होते हैं ! (चंडाला) तथा जो चांडाल-रौद्रकर्मा हैं (मुष्टिया) मुष्टि से प्रहार करनेवाले हैं (सेया) अधम जातीय हैं-(जे अन्ने पावकस्मिणो) तथा इनसे भिन्न जो पाप कर्मों में पराधन बने हुए प्राणी हैं, तथा जो (गोघातगा) गोघात करनेवाले हैं (जे चोरा) जो चोरी करनेवाले हैं (णिसायं सरमस्सिया) वे सब निषाद स्वर से आश्रित

મુજમ તૃપ્તિદાયક સુસ્વાદુ લોજન મેળવે છે. દૂધ વગેરે પીવે છે. બીજાઓને
પણુ એવી રીતે ખવડાવતા પીવડાવતા રહે છે. (પંચમસ્વરસંપન્ના હવંતિ
પુઢવીવઈ) જેઓ પંચમ સ્વર સંપન્ન હોય છે તેઓ પૃથ્વીપતિ હોય છે.
(સૂરા સંગ્રહકર્તારો અણેગગણનાયગા) શૂરવીર હોય છે, સંગ્રહ કરનાર હોય છે
અને ઘણા ગણોના નેતા હોય છે (ધૈવયસ્વરસંપન્ના) તેમજ જે ધૈવત સ્વર-
વાળા હોય છે. (હવંતિ કલહપ્રિયા) તે કલહ પ્રિય હોય છે લડાઈ, કંકાસ,
તકરાર તેમને ખડુ ગમે છે. (સાઉણિયા વગુરિયા સોયરિયા, મચ્છબંધા ય) શાકુ-
નિક-પક્ષીઓના શિકાર કરનાર હોય છે વાગુરિક-હરણોની હત્યા કરનારા
હોય છે સૌકરિક-સુઅરનો શિકાર કરે છે અને મત્સ્ય બંધ-માછલીઓને
મારનાર હોય છે. (ચંડાલા) તેમજ ચાંડાલ-રૌદ્રકર્મા-છે, (મુષ્ટિયા) મુષ્ટિપ્રહાર
કરનારા હોય છે. (સેયા) અધમ જાતવાળા હોય છે (જે અન્ને પાવકસ્મિણો)
તેમજ એમનાથી ભિન્ન જે પાપકર્મોમાં રત રહે છે તથા જે (ગોઘાતગા)
ગોવધ કરનાર હોય છે (જે ચોરા) જેઓ ચોરી કરનારા છે. (ણિસાયં સર-

ટીકા—‘एषसि णं’ इत्यादि—

एतेषां सप्तानां स्वराणां सप्त स्वरलक्षणानि=तत्तत्फलप्राप्त्यनुसारीणि स्वर-
तत्त्वानि कथितानि । तान्येव फलत आह—तद्यथा-षड्जेन लभते वृत्तिम्
इत्यादिभिः सप्तभिः श्लोकैः । तथाहि—षड्जेन स्वरेण जनो वृत्तिः=जीविकां लभते ।
तथा षड्जस्वरवतो जनस्य कृतं कर्म विनष्टं न भवति सफलमेव भवतीत्यर्थः ।
तस्य गावः पुत्रा मित्राणि च भवन्ति । तथा स स्त्रीणां वल्लभः=प्रियश्च भवति ।
ऋषभेण स्वरेण तु ऐश्वर्यम्=ईशानशक्तिमत्त्वं, सैनापत्यं=सेनापतित्वं, धनानि, वस्त्र-
गन्धम्=वस्त्राणि गन्धांश्च, अलंकारं स्त्रियः शयनानि च लभते । तथा-गान्धारे=
गान्धारस्वरे गीतयुक्तिज्ञाः=गीतयोजनावेत्तारः-गान्धारस्वरगानकर्तार इत्यर्थः,
वर्यवृत्तयः-वर्याः=श्रेष्ठा वृत्तिः=जीविका येषां ते तथा-श्रेष्ठजीविकावन्तः, कला-
धिकाः-कलाभिरधिकाःकलाज्ञेषु मूर्धन्याश्च भवन्ति । तथा-कवयः=काव्यकर्तारः,
‘कृत्तिनः’ इतिच्छायापक्षे-कर्तव्यशीलाः, प्राज्ञाः=सद्बोधाश्च भवन्ति । ये अन्ये=
पूर्वोक्तेभ्यो गीतयुक्तिज्ञादिभ्यो ये भिन्ना भवन्ति ते शास्त्रपारगाः=सकल शास्त्र-
निष्णाता भवन्ति । तथा-मध्यमस्वरसम्पन्नास्तु सुखजीविनः=सुखेन जीवितुं शीला
भवन्ति । सुखजीवित्वमेव प्रकटयति मध्यमस्वरमाश्रितो जनो हि खादति=सुस्वादु
भोजनं भुङ्क्ते, पिबति=दुग्धादिपानं करोति, ददाति=अन्यानपि भोजयति पाय-
यति च । पञ्चमस्वरसम्पन्नास्तु पृथिवीपतयो भवन्ति, तथा-शूराः संग्रहकर्तारः
अनेकगणनायकाश्च भवन्ति । तथा-धैवतस्वरसम्पन्नास्तु कलहप्रियाः=क्लेशकारका
भवन्ति तथा-शकुनिकाः-शकुनेन=इयेनेन पर्यटन्ति, शकुनान्=पक्षिणो घ्नन्ति
वा शकुनिकाः=पक्षिघातका लुब्धकविशेषाः । वागुरिकाः-वागुरा=मृगबन्धिनी,
तथा चरन्तीति वागुरिकाः=हरिणघातका लुब्धकविशेषाः, सौकरिकाः=सूकरेण-
सूकरवधार्थं चरन्ति, सूकरान् घ्नन्ति वा सौकरिकाः=सूकरघातका लुब्धक-
विशेषाः, तथा-मत्स्यबन्धाः=मत्स्यघातिनश्च भवन्तीति । तथा-ये चाण्डालाः
चाण्डकर्माणः, मौष्टिकः-मुष्टिः प्रहरणं येषां ते तथा, मुष्टिभिः प्रहरणशीला
इत्यर्थः, सेयाः=अधमजातीया मनुष्याश्च सन्ति, एभ्योऽन्ये च ये पापकर्माणः=
पापकर्मपरायणाः सन्ति, तथा च ये गोघातकाः सन्ति, ये च चौराः सन्ति, ते
सर्वे निषादस्वरमाश्रिता विज्ञेयाः इति । एष पाठः स्थानाङ्गानुसारेण व्याख्यातो
गृहीतश्च ॥सू० १६४॥

हैं, ऐसा जानना चाहिये । यह पाठ स्थानाङ्ग के अनुसार व्याख्यात किया
है-और वहीं से लिया है । ॥सू० १६४॥

મત્સ્યઓ) તે નિષાદ સ્વરનું ઉચ્ચારણ કરે છે સ્થાનાંગ પ્રમાણે જ આ પાઠ અહીં
વ્યાખ્યાત કરવામાં આવ્યો છે-અને ત્યાંથી જ લેવામાં આવ્યો છે. ॥સૂ૦ ૧૬૪॥

अथैषां स्वराणां ग्रामान् एकैकग्रामस्य मूर्च्छनाश्चाह—

मूलम्—एएसिं णं सत्तण्हं सराणं तओ गामा पणत्ता, तं जहा—सज्जगामे मज्झिमगामे गंधारगामे । सज्जगामस्स णं सत्त मुच्छणाओ पणत्ताओ, तं जहा—मंगीकोरव्वीया हरी य, रयणी य सारकंता य । छट्ठी य सारसी नाम, सुद्धसज्जा य सत्तमा ॥१॥ मज्झिमगामस्स णं सत्त मुच्छणाओ पणत्ताओ, तं जहा—उत्तर मंदां रयणी, उत्तरा उत्तरा समा । समोकंता य सोवीरा, अभीरू हवइ सत्तमा ॥२॥ गंधारगामस्स णं सत्त मुच्छणाओ पणत्ताओ, तं जहा—नंदी य खुड्डिया पूरिमा य, चउत्थी य सुद्धगंधारा । उत्तरगंधारा वि य, पंचमिया हवइ मुच्छा उ ॥३॥ सुद्धुत्तर मायामा, सा छट्ठी नियमसो उ णायव्वा । अह उत्तरायया कोडिमा य सा सत्तमी मुच्छा ॥४॥ सू० १६५ ॥

छाया—एतेषां खलु सप्तानां स्वराणां त्रयो ग्रामा प्रज्ञप्ताः, तद्यथा षड्ज-ग्रामः मध्यमग्रामः गान्धारग्रामः । षड्जग्रामस्य खलु सप्त मूर्च्छनाः प्रज्ञप्ताः,

अब सूत्रकार इन स्वरो के ग्रामों को और एक एक ग्राम की मूर्च्छनाओं को कहते हैं—“एएसिं णं सत्तण्हं सराणं” इत्यादि ।

शब्दार्थ—(एएसिं णं सत्तण्हं सराणं) इन सातस्वरो के (तओ गामा पणत्ता) तीन ग्राम कहे गये हैं । (तं जहा) वे इसप्रकार हैं—(सज्जगामे, मज्झिमगामे गंधारगामे) १ षड्जग्राम, २ मध्यमग्राम, ३ गान्धारग्राम, । (सज्जगामस्स णं सत्तमुच्छणाओ पणत्ताओ) षड्ज-ग्राम की सात

छे सूत्रकार आ स्वरोना आभे। अने दरेके दरेक आभनी मूर्च्छनाओ। विषे कथन करे छे—“एएसिं णं सत्तण्हं सराणं ” इत्यादि—

शब्दार्थ—(एएसिं णं सत्तण्हं सराणं) आ सात स्वरोना (तओ गामा पणत्ता) त्रय आभे। कडेवाय छे (तं जहा) ते आ प्रभावे छे. (सज्जगामे, मज्झिमगामे गंधारगामे) १ षड्जआभ, २ मध्यम आभ, ३ गान्धारआभ. (सज्जगामस्स णं सत्तमुच्छणाओ पणत्ताओ) षड्ज आभनी सात मूर्च्छनाओ। कडे-

તથા - મંગી કૌરવીયા હરિશ્ચ, રજની ચ સારકાન્તા ચ । ષષ્ઠી ચ સારસીનામ, શુદ્ધપદ્મજા ચ સત્તમી ॥૧॥ મધ્યમગ્રામસ્ય સ્વલુ સપ્ત મૂર્ચ્છનાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તથા- ઉત્તરમન્દા રજની ઉત્તરા ઉત્તરસમા । સમવક્રાન્તા ચ સૌવીરા, અમીરુર્ભવતિ સપ્તમી ॥૨॥ ગાન્ધારગ્રામસ્ય સ્વલુ સપ્તમૂર્ચ્છનાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તથા- નન્દી ચ ક્ષુદ્રિકા પૂરિમા ચ ચતુર્થી ચ શુદ્ધગાન્ધારા । ઉત્તરગાન્ધારાઽપિ ચ સા પશ્ચમિકા ભવતિ મૂર્ચ્છા ॥૩॥ સુષ્ટુત્તરાયામા સા ષષ્ઠી નિયમશસ્તુ જ્ઞાતવ્યા । અથ ઉત્તરાયતા કોટિમા ચ સા સપ્તમીમૂર્ચ્છા ॥૪॥ સુત્ર ૦૧૬૫ ॥

મૂર્ચ્છનાઈ કહી હૈં । (તં જહા) વે હસપ્રકાર સે હૈં- (મંગી કૌરવીયા હરી ય, રયણી ય સારકંતા ય છટ્ટી ય સારસીનામ શુદ્ધસજ્જા ય સત્તમા) ૧ મંગી, ૨ કૌરવીયા, ૩ હરિ, ૪ રજની, ૫ સારકાન્તા, છટ્ટી સારસી ઓર સાતવીં શુદ્ધ પદ્મજા । (મજ્ઞિમગ્રામસ્સ ણં સત્તમુચ્છણાઓ પળણત્તાઓ) મધ્યમ ગ્રામ કી સાત મૂર્ચ્છનાઈ કહી હૈં । (તં જહા) વે હસ પ્રકાર સે હૈં- (ઉત્તરમંદા રયણી ઉત્તરા ઉત્તરા સમા સમોકંતા ય સૌવીરા, અમીરુ હવહ સત્તમા) ૧ ઉત્તર મંદા, ૨ રજની, ૩ ઉત્તરા ૪ ઉત્તરસમા, સમવક્રાન્તા, ૬ સૌવીરા ઓર સાતવીં અમીરુ । (ગંધારગ્રામસ્સ ણં સત્તમુચ્છણાઓ પળણત્તાઓ) ગાંધાર ગ્રામ કી સાત મૂર્ચ્છનાઈ કહી હૈં । (તં જહા-) વે હસપ્રકાર સે હૈં- (નંદી ય ક્ષુદ્રિકા, પૂરિમા ય, ચતુર્થીય શુદ્ધગંધારા । ઉત્તરગંધારા વિ ય પંચમિયા હવહ મુચ્છા) નન્દી, ક્ષુદ્રિકા, પૂરિમા, ચૌથી, શુદ્ધ ગાન્ધારા, પાંચવીં ઉત્તરગાંધારા (સુદ્ધુત્તરમાયાસા છટ્ટી નિયમસો ડ ણા-

વામાં આવી છે. (તંજહા) તે આ પ્રમાણે છે (મંગી કૌરવીયા હરી ય, રયણીય, સારકંતા ય છટ્ટીય સારસી નામ શુદ્ધપદ્મજા ય સત્તમા) ૧ મંગી, ૨ કૌરવીયા, ૩ હરિ, ૪ રજની ૫ સારકાન્તા, ૬ સારસી અને ૭ શુદ્ધપદ્મજા (મજ્ઞિમ ગ્રામસ્સ ણ સત્તમુચ્છણાઓ પળણત્તાઓ) મધ્યમ ગ્રામની સાત મૂર્ચ્છનાઓ કહેવાય છે. (તંજહા) તે આ પ્રમાણે છે (ઉત્તર-મંદા રયણી ઉત્તરા ઉત્તરા સમા સમોકંતા ય સૌવીરા, અમીરુ હવહ સત્તમા) ૧ ઉત્તરમંદા, ૨ રજની, ૩ ઉત્તરા, ૪ ઉત્તરસમા, ૫ સમવક્રાન્તા ૬ સૌવીરા, ૭ અને અભીરુ (ગંધારગ્રામસ્સ ણં સત્તમુચ્છણાઓ પળણત્તાઓ) ગાંધાર ગ્રામની સાત મૂર્ચ્છનાઓ કહેવામાં આવી છે. (તંજહા) તે આ પ્રમાણે છે:- (નંદી ય ક્ષુદ્રિકા, પૂરિમા ય, ચતુર્થીય, શુદ્ધગંધારા ઉત્તરગંધારા વિ ય પંચમિયા હવહ મુચ્છા) ૧ નન્દી, ૨ ક્ષુદ્રિકા, ૩ પૂરિમા, ૪ શુદ્ધ ગાંધારા, ૫ ઉત્તર ગાંધારા (સુદ્ધુત્તર-માયાસા છટ્ટી નિયમસો ડ ણાયજ્ઞા અહં ઉત્તરાયયા કોટિમા ય સા સત્તમી મુચ્છા) ૬ સુષ્ટુત્તરાયામા અને ૭ મૂર્ચ્છા ઉત્તરાયતા કોટિમા.

टीका—‘एषसि ण’ इत्यादि—

व्याख्या स्पष्टा ।—अयं भावः—मूर्च्छनानां सप्तसूहः षड्जादित्तिथा ग्रामो विज्ञेयः । एकैकस्मिन् ग्रामे तु सप्तसप्तमूर्च्छना भवन्ति । ततः सप्तस्वराणामन्यान्यस्वरविशेषान् उत्पादयतो गायकस्य एकविंशतिर्मूर्च्छना भणिताः । कर्ता च मूर्च्छित इव ताः करोतीति मूर्च्छना उच्यन्ते, मूर्च्छन्निव वासकर्ता ताः करोतीति मूर्च्छना उच्यन्ते इति । मङ्गीप्रभृतीनामेकविंशतिर्मूर्च्छनानां स्वरविशेषाः पूर्वगत-स्वप्राभृते भणिताः । इदानीं ते तद्विनिर्गतेभ्यो भरतादिनिर्मितशास्त्रेभ्यो विज्ञेयाः ॥सू० १६५॥

यच्चा । अह उत्तरायया कोडिमा य सा सत्तमी मुच्छा) छठी सुष्टूत्तरायामा और सातवीं मूर्च्छा उत्तरायता कोडिमा ।

भावार्थ—इसका भाव यह है कि मूर्च्छनाओं का जो समूह है उस समूह से युक्त जो षड्ज आदि ग्राम हैं, और वे तीन प्रकार के हैं । एक २ ग्राम में सात २ मूर्च्छनाएँ होती हैं । इस कारण सात स्वरों के अन्य अन्य विशेष स्वरों को उत्पन्न करने वाले गायक की २१ मूर्च्छनाएँ कही गई हैं गायनकर्ता मूर्च्छित हुए अथवा मानों के जैसा मूर्च्छित सा होकर—उन्हे करता है इसलिये मूर्च्छना कहलाती हैं । मङ्गी आदि २१ मूर्च्छनाओं के स्वर विशेष पूर्वसंबन्धी स्वर प्राभृत में कहे हुए हैं । इस समय वे, स्वर प्राभृत से निर्गत हुए शास्त्रों से जिन्हे कि भरत आदि—नाट्यकारों ने बनाये हैं । उनसे जाने जा सकते हैं ॥सू० १६५॥

भावार्थ—એનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે કે મૂર્છનાઓનો જે સમૂહ છે અને તે સમૂહથી યુક્ત જે ષડ્જ વગેરે ગ્રામો છે તે ત્રણ પ્રકારના કહેવામાં આવ્યા છે દરેકે દરેક ગ્રામમાં સાત મૂર્છનાઓ હોય છે એથી સાતસ્વરોના જુદા જુદા વિશેષ સ્વરોને ઉત્પન્ન કરનારા ગાયકની જેમ ૨૧ મૂર્છનાઓ કહેવામાં આવી છે. ગાયક મૂર્છિત (ખેલાન) થયેલાની જેમ અથવા જાણે કે મૂર્છિતની જેમ થઈને તમને કહે છે. એટલા માટે એઓ મૂર્છનાઓ કહેવાય છે મંગી વગેરે ૨૧ મૂર્છનાઓના સ્વર વિશેષ પૂર્વસંબંધી સ્વર પ્રાભૃતમાં કહેવામાં આવ્યા છે. હમણા તે સ્વર પ્રાભૃતથી નિર્ગત થયેલા શાસ્ત્રો વડે—કે જેમને ભરત વગેરે નાટ્યશાસ્ત્રકારોએ બનાવ્યા છે—જાણી શકાય છે. ॥સૂ० ૧૬૫॥

एते सप्तस्वराः कुतो भवन्ति ? इत्यादि प्रश्नचतुष्टयपूर्वाणि तदुत्तराणि प्रोच्यन्ते—

मूलम्—सत्त सरा कओ संभवन्ति ? गीयस्स का हवन्ति जोणी ? ।

કઈ સમયા ઉસ્સાસા ? કઈ વા ગીયસ્સ આગારા ? ॥૧॥ સત્ત સરા નામીઓ હવંતિ, ગીયં ચ રુદ્ધયજોણિયં । પાયસમા ડસાસા, તિણિયં ચ ગીયસ્સ આગારા ॥૨॥ આદમિડ આરમંતા સમુવ્વહંતા ચ મઙ્ગારમિ । અવસાણે તજ્જવિંતો, તિન્નિ ચ ગીયસ્સ આગારા ॥૩॥ સૂ૦ ૧૬૬ ॥

छाया— सप्त स्वराः कुतः संभवन्ति ? गीतस्य का भवन्ति योनयः ? कति समया उच्छ्वासाः ? कति वा गीतस्य आकाराः ? ॥१॥ सप्तस्वरा नाभितो, भवन्ति, गीतं च रुदितयोनिकम् । पादसमाउच्छ्वासाः, त्रयश्च गीतस्य आ-

ये सात स्वर कहां से होते हैं इत्यादि जो चार प्रश्न हैं उनका उद्भावन करते हुए सूत्रकार उनका उत्तर देते हैं—

“ सत्तसरा कओ ” इत्यादि ।—

शब्दार्थ—(सत्तसरा कओ संभवन्ति) प्रश्न—सात स्वर कहां से उत्पन्न होते हैं ? (गीयस्स का हवन्ति जोणी) गीत की जातियां क्या हैं ? (कइ समया उस्सासा ?) गीत के उच्छ्वास कितने समय के प्रमाणवाले होते हैं ? (कति वा गीयस्स आगारा) गीत के आकार कितने होते हैं ?

उत्तर—(सत्तसरनाभीओ हवन्ति) सात स्वर नाभि से उत्पन्न होते हैं । (गीयं च रुयजोणियं) गीत रुदितयोनिक होता है । (पायसमा डसासा) पाद सम उच्छ्वास होते हैं । (गीयस्स तिणिण आगारा) गीत के तीन

એ સાત સ્વરો ક્યાંથી પ્રગટ થાય છે વગેરે જે ચાર પ્રશ્નો છે તેમનું ઉદ્ભાવન કરતાં સૂત્રકાર તેમના જવાબમાં કહે છે કે—

“ સત્તસરા કઓ ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સત્તસરા કઓ સંભવંતિ) પ્રશ્ન સાત-સ્વરો ક્યાંથી ઉત્પન્ન થાય છે ? (ગીયસ્સ કા હવંતિ જોણી) ગીતોના ઉત્પત્તિ સ્થાનો કયા છે ? (કઈસમયા ઉસ્સાસા ?) ગીતના ઉચ્છ્વાસ કેટલા સમયના પ્રમાણવાળા હોય છે ? (કતિ વા ગીયસ્સ આગારા) ગીતના આકારો કેટલા હોય છે ?

ઉત્તર—(સત્ત સર નામીઓ હવંતિ) સાત સ્વરો નાભિયોથી ઉત્પન્ન થાય છે. (ગીયં ચ રુયજોણિયં) ગીત રુદિત યોનિક હોય છે (પાયસમા ડસાસા)

काराः ॥२॥ आदिमृदुम् आरभमाणाः समुद्रहन्तश्च मध्यकारे । अवसाने क्षपयन्तः,
प्रयोऽपि गीतस्य आकाराः ॥३॥ सू१६६॥

टीका—‘सत्त सरा’ इत्यादि—

एते षड्जादिसप्तस्वराः कुतः संभवन्ति=उत्पद्यन्ते ? तथा-गीतस्य
का योनयो=जातयो भवन्ति ? तथा गीतस्य कति समयाः=कियत्काल
प्रमाणा उच्छ्वासा भवन्ति ? तथा-गीतस्य कति वा=कियन्तो वा आकाराः=
आकृतयः-स्वरूपाणि भवन्ति ? इति चत्वारः प्रश्नाः । उत्तरयति-षड्जादयः
सप्त स्वरा नाभितो भवन्ति=जायन्ते । गीतं च रुदितयोनिक्-रुदितं
योनिः समानरूपतया जाति र्यस्य तत्तथाविधं भवति, गीतं रोदनसमानं भवती
त्यर्थः । उच्छ्वासाश्च पादसमा भवन्ति । यावता समयेन वृत्तस्य पादः समाप्यते
आकार होते हैं । (आइमिउ आरभंता, समुव्वहंता य मज्झगारमि,
अवसाणे तज्जर्वितो तिन्निय गीयस्स आगारा) सर्व प्रथम गीत मृदुध्वनि-
वाला होता है । मध्यभाग में वह तेजध्वनिवाला और अन्त में मन्द्र-
ध्वनिवाला होता है ।

भावार्थ—सूत्रकारने इस सूत्र द्वारा “ षड्ज आदि सात स्वर कहां
से उत्पन्न होते हैं ? गीत की जातियां क्या हैं ? गीत के उच्छ्वासों के
समय का प्रमाण कितने हैं, और गीत किस आकार का होना है ?—”
इन चार प्रश्नों के उत्तर दिये हैं । इसमें उन्होंने ने यह प्रकट किया है
कि—ये पूर्वोक्त षड्ज आदि सात स्वर नाभिस्थान से उत्पन्न होते हैं ।
गीत रोने की जाति के जैसा होता है । यहां योनि शब्द का अर्थ जाति
है । छन्द का पाद जितने समय में समाप्त होता है उतना ही समय गीत के

पादसम उच्छ्वास होय छे. (गीयस्स तिणिण आगारा) गीतना त्रष्टु आकार
होय छे. (आइमिउ आरभंता, समुव्वहंता य मज्झगारमि अवसाणे तज्जर्वितो
तिन्निय गीयस्स आगारा) सर्व प्रथम गीत मृदुध्वनि युक्त होय छे. मध्य-
भागमां ते तीव्रध्वनि युक्त होय छे अने छेवटे मन्द्रध्वनि युक्त होय छे.

भावार्थ—सूत्रकारे आ सूत्र वडे “ षड्ज ” वगेरे सात स्वरो कथांथी
उत्पन्न थया छे ? गीतना उत्पत्ति स्थानो कथा छे ? गीतना उच्छ्वासानुं प्रमाण
कैटलुं छे ? अने गीतना आकार कथं जातना छे ? ओ आर
प्रश्नोना जवाणो आपवाभां आण्यो छे आभां तेमणे स्पष्ट
कथुं छे के पूर्वोक्त षड्ज वगेरे सात स्वरो नाभिस्थानमांथी
उत्पन्न थया छे गीतनी जाति रुदन जेवी होय छे. अही योनि शब्दने

તાવત્સમયા ગીતે ઉચ્છ્વાસા ભવન્તીત્યર્થઃ । તથા—ગીતસ્ય આકારાશ્ચ ત્રયો ભવન્તિ । તાનેવાદ-આદિમૃદુ આદી પ્રારમ્ભે મૃદું ગીતધ્વનિમારભમાણાઃ, મધ્યકારે મધ્યમાને સમુદ્રહન્તઃ=મહતીં ગીતધ્વનિં કુર્વન્તઃ, ચ=પુનઃ અવસાને=અન્તે ક્ષપ-યન્તઃ=ગીતધ્વનિં મન્દ્રીકુર્વન્તશ્ચ ગાયકા ગીતં ગાયન્તિ । અતો ગાને સ્વરઃ આદૌ મૃદુઃ, મધ્યે તારઃ, અન્તે ચ મન્દ્રો ભવતિ । તતશ્ચ મૃદુતારમન્દ્રધ્વનિરૂપાસ્ત્રય આકારા ગીતસ્ય વિજ્ઞેયાઃ ॥સૂ૦॥૧૬૬॥

સમ્પ્રતિ ગીતે હેયોપાદેયાદિકં પ્રવક્તુમુપક્રમતે—

મૂલમ્—છદોસે અટ્ટગુણે, તિણિય વિત્તાઈં દો ય મળિઈંઓ ।
જાણાહિઈ સોગાહિઈ, સુસિલ્લિઓ રંગમજ્જંમિ ॥૧॥ મીયં
દુયં રહસ્સં, ગાયંતો માય ગાહિ ઉત્તાલં । કાકસ્સરમણુણાસં, ચ
હોંતિ ગીયસ્સ છદોસા ॥૨॥ પુણં રત્તં ચ અલંકિયં ચ વત્તં તંહા
અવિઘુટ્ટં । મહુરં સમં સુલલિયં અટ્ટગુણા હોંતિ ગીયસ્સ ॥૩॥ ઉર-
કંઠસિરપસત્થં, ગિજ્જઈ મઝયરિભિયપદબ્બં । સમતાલપડુ-
વ્ખેવં, સત્તસ્સરસીમરં ગીયાં ॥૪॥ નિહોસં સારમંતંચ, હેઽજુત્તમલં-
કિયં । ઉવળીયં સોવયારં ચ, મિયં મહુરમેવ ય ॥૫॥ સમં અઢ-

ઉચ્છ્વાસોં કા હૈ । ગાનેવાલે સબસે પહિલે ગીત કો મૃદુધ્વનિ સે પ્રારંભ કરતે હૈં, ફિર વીચ મેં ઉસે જોર કી આવાજ સે ગાતે હૈં વાદ મેં અન્ત મેં મન્દ્રધ્વનિ સે ઉસે સમાપ્ત કરતે હૈં । ફસલિયે ગાને મેં સ્વર આદિ મેં મૃદુ, મધ્ય મેં તાર, ઓર અન્ત મેં મંદ હોતા હૈ—અતઃ મૃદુ, તાર, ઓર મન્દ્ર ઇન ત્રીન ધ્વનિરૂપ આકાર ગાને કે જાનને ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧૬૬ ॥

અર્થ જાતિ છે. છન્દનો પાદ (ચરણ) બેટલા સમયમાં સમાપ્ત થાય છે તેટલો જ સમય ગીતના ઉચ્છ્વાસોનો છે ગાયકો સૌ પહેલાં ગીતને મૃદુધ્વનિથી પ્રારંભ કરે છે. પછી મધ્યમાં મોટા સ્વરે તેને ગાય છે ત્યાર પછી અંતે મન્દ્રધ્વનિમાં તેને સમાપ્ત કરે છે. બેટલા માટે ગાતી વખતે પ્રારંભમાં સ્વર મૃદુ મધ્યમાં સ્વર તાર અને અંતમાં સ્વર મંદ હોય છે એથી મૃદુ, તાર, અને મન્દ્ર આ ત્રણ ધ્વનિ રૂપ આકાર ગીતનો સંમજ્જવો જોઈએ. ॥સૂ૦૧૬૬॥

समं चेव, सवत्थ विसमं च जं । तिणिण वित्तपयाराइं, चउत्थं
नोवलब्भइ ॥६॥ सक्कया पायया चेव, दुहा भणिईओ आहिया ।
सरमंडलंमि गिज्जंते, पसत्था इसिभासिया ॥७॥ केसी गायइ
महुरं केसी गायइ खरं च रुक्खं च । केसी गायइ चउरं, केसी
य विलंबियं दुतं केसी ? ॥८॥ विस्सरं पुण केरिसी—सामा गायइ
महुरं, काली गायइ खरं च रुक्खं च । गौरी गायइ चउरं, काणा-
विलम्बं दुतं च अंधा ॥९॥ विस्सरं पुण पिंगला, तंतिसमं
तालसमं, पायसमं लयसमं गहसमं च । नीससिऊससियसमं,
संचारसमं सरा सत्त ॥१०॥ सत्तसरा तओ गामा मुच्छणा
एकवीसई । ताणा एगूणपण्णासं, सम्मत्तं सरमंडलं ॥११॥
से त्तं सत्तनामे ॥सू० १६७॥

छाया— षड्दोषान् अष्टगुणान् त्रीणि च वृत्तानि द्वेच भणितौ । ज्ञास्यति
स गास्यति सुशिक्षितो रत्नमध्ये ॥१॥ भीतं द्रुतं ह्रस्वं गायन् मा च गाय उत्तालम् ।
काकस्वरमनुनासं च भवन्ति गेयस्य षड्दोषाः ॥२॥ पूर्णं रक्तं च अलंकृतं च व्यक्तं
तथा अविघुष्टम् । मधुरं समं सुललितम् अष्टगुणा भवन्ति गेयस्य ॥३॥ उरः
कण्ठशिरः प्रशस्तं च गीयते मृदुक-रिभित-पदबद्धम् । समताल प्रत्युत्क्षेपं सप्त-
स्वरसीभरं गीतम् ॥४॥ निर्दोषं सारवच्च, हेतुयुक्तमलंकृतम् । उपनीतं सोपचारं च,
मितं मधुरमेव च ॥५॥ समम् अर्धसमं चैव, सर्वत्र विषमं च यत् । त्रयो वृत्त-
प्रकाराः, चतुर्थः नोपलभ्यते ॥६॥ संस्कृताः प्राकृताश्चैव द्विविधा भणितय आ-
ख्याताः । स्वरमण्डले गीयन्ते प्रशस्ता ऋषिभाषिताः ॥७॥ कीदृशी गायति मधुरं ?
कीदृशी गायति खरं च रुक्षं च ? ॥ कीदृशी गायति चतुरं ? कीदृशी च विलम्बितं
द्रुतं कीदृशी ? ॥८॥ विस्वरं पुनः कीदृशी ? श्यामा गायति मधुरं काली गायति
खरं च रुक्षं च । गौरी गायति चतुरं काणा विलम्बं द्रुतं च अन्धा ॥९॥ विस्वरं
पुनः पिङ्गला । तन्त्रोसमं तालसमं पादसमं लयसमं ग्रहसमं च । निःश्वसितोच्छ्व-
सितसमं संचारसमं स्वराः सप्त ॥१०॥ सप्तस्वराः त्रयो ग्रामा मूर्च्छनाः एकविंशति ।
तानाः एकोनपञ्चाशत्, समाप्तं स्वरमण्डम् ॥११॥ तदेतत् सप्तनाम ॥ सू० १६७॥

ટીકા—‘છદોસે’ इत्यादि—

गीते हि षड् दोषाः, अष्टगुणाः, त्रीणि वृत्तानि, द्वे भणितौ च भवन्ति ।
 यो जन एतान् यथावद् ज्ञास्यति स एव सुशिक्षितः सन् रङ्गमध्ये=नाट्यशालायां
 गांस्यति ॥संप्रति तानाह ‘भीयं’ इत्यादिना । हे गायक ! गीतं गाय च त्वं भीतं=
 भयपूर्वकं च मा गाय=गानं मा कुरु, द्रुतं=त्वरितं च मा गाय, ह्रस्वम्=अल्पस्वरेण
 च मा गाय, ॥३॥ उत्तालम्-उद्गत =औचित्याद्ध्वं गतस्तालो यत्र तत् उत्तालम्-
 अतितालमस्थानतालं चेत्यर्थः, तथा मा गाय । तालस्तु कांस्यादिशब्दो बोध्यः ।

અથ સૂત્રકાર ગીત મેં હેય ઓર ઉપાદેય આદિ કો કહતે હૈ—

“છદોસે અઢગુણે” इत्यादि ।

शब्दार्थ—(छदोसे अष्टगुणे तिणिण्य वित्ताइं दो य भणिईओ) छह
 दोषों को, आठगुणों को, तीन वृत्तों को और दो भणितियों को (जाणा-
 हिइ) जो यथावत् जानेगा (सो) वही (सुसिस्त्रिओ) सुशिक्षित-गान
 कला में निपुण हुआ व्यक्ति (रंगमज्झंमि) रंगशाला में (गाहिइ)
 गावेगा—। गीत के छहदोष-इस प्रकार से हैं (भीयं दुयं रहस्सं गायंतो
 मा य गाहि उत्तालं, कागस्सरमणुणासंच होंति गीयस्सं छदोसा) जब
 गायक गाना गाने को तैयार होने लगता है, तब उससे कहा जाता है
 कि—‘हे गायक ! तुम गीत गाओ तो सही-परन्तु भीत-भयभीत होकर
 मत गाना, गाने में उतावली मत करना, अर्थात् जल्दी २ से मत गाना,
 अल्प स्वर से मत गाना-उत्ताल मत गाना-अर्थात् अतिताल होकर

હવે સૂત્રકાર ગીતમાં હેય અને ઉપાદેય વગેરેનું કથન કરે છે—

“છદોસે અઢગુણે” इत्यादि—

शब्दार्थ—(छदोसे अष्टगुणे तिणिण्य वित्ताइं दो य भणिईओ) छ दोषोने,
 आठगुणोने, त्रय वृत्तोने અને બે ભાણિતિયોને (जाणाहिइ) જે સારી રીતે જાણશે
 (सो) તે (सुसिस्त्रिओ) સુશિક્ષિત-ગાનકલામાં નિપુણ થયેલ કલાકાર (रंगमज्झंमि)
 રંગશાળામાં (गाहिइ) ગાશે ગીતમાં છ દોષો આ પ્રમાણે છે. (भीयं दुयं
 रहस्सं गायंतो माय गाहि उत्तालं कागस्सरमणुणासंच होंति गीयस्सं छदोसा)
 ત્યારે ગાયક ગાવા માટે પ્રસ્તુત થાય છે ત્યારે તેને કહેવામાં આવે છે કે
 હે ગાયક ! તમે ગીત ગાવો તે યરાબર છે પણ તમે ખીતા ખીતા ગાશો
 નહિ ગાવામાં ખોટી ઉતાવળ કરશો નહિ એટલે કે જલ્દી જલ્દી ગાશો નહિ,
 અલ્પ સ્વરમાં ગાશો નહિ, ઉત્તાલ (તાલવગર) ગાશો નહિ, એટલે કે અતિતાલ
 થઇને કે અસ્થાનતાલ થઇને ગાશો નહિ. કાગડાના સ્વર જેવા સ્વરથી ગીત

तथा—काकस्वरम्—काकस्य स्वरइव स्वरो यस्मिन् गीते तत्, श्लक्षणाश्रयस्वरमित्यर्थः, तथा मा गाय । अनुनासम्—सानुनासिकं च मा गाय । यत् एते भीतादयः षट् गेयस्य दोषा भवन्तीति । इत्थं दोषानुक्त्वा सम्प्रति गुणानाह—‘पूर्ण’ इत्यादिना । पूर्णम्—यत्र गीते सर्वाः स्वरकलाः गायकैः प्रदर्श्यन्ते तत्र ‘पूर्ण’—नामा गुणो भवति ॥१॥ रक्तम्—गायको गीतरागेण रक्तः=भावितः सन् यद् गीतं गायति तत्र ‘रक्त’ नामा गुणो भवति ॥२॥ अलङ्कृतम्—यत्र गाने गायकोऽन्यान्यस्फुटशुभस्वरविशेषैर्गीतमलङ्करोति तत्र ‘अलङ्कृत’—नामको गुणः ॥३॥ व्यक्तम्—यत्र गाने गायकोऽक्षरान् स्वरांश्च स्फुटतयोच्चारयति तत्र ‘व्यक्त’—नामा गुणः ॥४॥ अविघुष्टम्—विक्रोशनमिव यद्विस्वरं भवति तद् विघुष्ट—मुच्यते, यत्र विघुष्टं न

या अस्थानताल होकर नहीं गाना, काक के स्वर के समान स्वर वाले होकर गान को मत गाना, सानुनासिक मत गाना । क्योंकि ये भीत आदि छ गान के दोष हैं ।

इस प्रकार दोष को कहकर अब गुणों को सूत्रकार कहते हैं—(पूर्णं रक्तं च अलंकियं च वक्तं तद्वा अविघुष्टं, महुरं समं सुललियं, अद्वगुणा ह्येति गीयस्स) जिस गीत में समस्त स्वरकलाएँ गीतकार गायन कला को दिख लाते हैं, वहाँ पूर्ण नामका गुण होता है । गायक गीतराग से भावित होता हुआ जिस गीत को गाता है वहाँ ‘रक्त’ नामका गुण होता है । जिस गान में गायक अन्य अन्य स्फुटस्वर विशेषों द्वारा गीत को सजाता है, वहाँ ‘अलंकृत’ नाम का गुण होता है । — जिस गान में गायक अक्षरों एवं स्वरों को स्फुटरूप से उच्चारित करता है, वहाँ ‘व्यक्त’ नाम का गुण होता है । विक्रोशन—गुस्से में आये हुए व्यक्ति के स्वर के जैसा अथवा चिल्लाते हुए व्यक्ति के स्वर के जैसा

गाशे। नडि नाकमां गाशे। नडि केमके आ भीत वगेरे छ गीतना दोषा छे, आ प्रमाणे गीतना दोषानुं स्पष्टीकरु करीने डवे सूत्रकार गुणे विषे कडे छे-के (पूर्णं रक्तं च अलंकियं च वक्तं तद्वा अविघुष्टं, महुरं समं सुललियं अद्व गुणा-ह्येति गीयस्स) जे गीतमां गीतकार समस्त गायन कलानुं प्रदर्शन करे छे ते पूर्ण नामे गुण कडेवाय छे, गायक गीत रागशी लावित यर्धने जे गीतमे गाय छे, ते रक्त नामे गुण कडेवाय छे, जे गीतमां गायक भीत विशेष स्फुट स्वरेशी गीतने अलंकृत करे छे, ते अलंकृत गुण कडेवाय छे, जे गीतमां गायक अक्षरों अने स्वरोंने स्फुट रूपमां उच्चारै छे ते व्यक्त नामे गुण कडेवाय छे विक्रो-शन—गुस्सामां लरेखी व्यक्तिनी जेम अथवा तो घांटा पाउती व्यक्तिना स्वरनी जेम जे गानारने स्वर डोय ते गान ‘विघुष्ट’ कडेवाय छे, जे गानमां विघुष्ट न

भवति तत्र 'अविघुष्ट' नामा गुणो बोध्यः॥५॥ मधुरम्-मधुमत्तकोकिलकल काक-
लीवत् यत्र गाने गायकस्य मधुरः स्वरः भवति तत्र 'मधुरस्वर'-नामा गुणः॥६॥
समम्-तालवंशस्वरादिसमनुगतो यत्र स्वरः भवति, तत्र 'सम'-नामको गुणः॥७॥
सुललितम्-स्वरघोलनाप्रकारेण शुद्धातिशयेन शब्दस्पर्शनेन श्रोत्रेन्द्रियस्य सुखो-
त्पादनाद् वा, ललतीव यत् तत् सुललितम्-सुकुमारमित्यर्थः, अयं गेयस्याष्टमो
गुणः॥८॥ एते अष्ट गुणा गीतस्य भवन्ति । एतद्विरहितं गीतं तु गातमेव न
भवति । तच्च गीताभासं विज्ञेयम् ॥ इतोऽन्येऽपि गीतगुणाः सन्ति, तान् प्रदर्शयि-
तुमाह-'उरकंठ' इत्यादि । च=पुनः उरःकण्ठशिरःप्रशस्तम्-उरःकण्ठशिरसां
द्वन्द्वः, ततः प्रशस्तेन सह तृतीयातत्पुरुषः । एवं च-उरः प्रशस्तं कण्ठप्रशस्तं शिरः
प्रशस्तमिति शुद्धमिति पदत्रयं लभ्यते । तत्र-उरसि यदा विशालः स्वरः भवति,

જો ગાન સ્વર વિહીન હોતા હૈ, વહ 'વિઘુષ્ટ' ગાન કહલાતા હૈ । જિસ
ગાન મેં વિઘુષ્ટ નહીં હોતા વહાં, 'અવિઘુષ્ટ' નામ કા યહ ગુણ હોતા હૈ ।
વસન્ત મેં મત્ત કોકિલાકી કલકાકલી કે જૈસા જિસ ગાન મેં ગાયક કા
સ્વર મધુર હોતા હૈ, ઉસ ગાન મેં 'મધુર' સ્વર નામ કા ગુણ હોતા હૈ ।
જિસ ગાન મેં તાલ, વંશ-સ્વર આદિ સે સમનુગત સ્વર હોતા હૈ ઉસ
ગાન મેં 'સમ' નામકા ગુણ હોતા હૈ । સ્વર ઘોલના પ્રકાર સે શુદ્ધાતિ-
શય સે અથવા શબ્દસ્પર્શન સે જો શ્રોત્રેન્દ્રિય કો સુખોત્પાદક હોતા હૈ
ઔર હસી કારણ જો વિશેષ પ્રિય લગતા હૈ વહ સુલલિત હૈ-યહ ગાન
કા અષ્ટમગુણ હૈ । હસ પ્રકાર યે ગીત કે ૮ ગુણ હૈ । હન ગુણો સે રહિત
હુઆ ગીત (ગાન) ગીત હી નહીં કહલાતા હૈ । વહ તો ગીતાભાસ હૈ ।
હન ગુણો સે અન્ય ઔર મી ગીત કે ગુણ હૈ, જો હસ પ્રકાર સે હૈ (ઉર-
કંઠસિરપસત્યં) ઉરઃપ્રશસ્ત કંઠપ્રશસ્ત ઔર શિરઃપ્રશસ્ત, ગાન કા

હોય ત્યાં 'અવિઘુષ્ટ' નામક ગુણ કહેવાય છે. વસન્તમાં મત્ત કોકિલની કલ-
કાકલીની જેમ જે ગીતમાં ગાયકનો સ્વર મધુર હોય છે, તે ગીતમાં મધુર
સ્વર નામે ગુણ હોય છે જે ગીતમાં તાલ, વંશ, સ્વર વગેરેથી સમનુગત
સ્વર હોય છે તે ગીતમાં 'સમ' નામક ગુણ હોય છે. સ્વરઘોલના પ્રકારથી,
શુદ્ધાતિશયથી અથવા શબ્દ સ્પર્શનથી જે શ્રોત્રેન્દ્રિયને સુખ અર્પે છે અને
એથી જે વિશેષ પ્રિય લાગે છે તે સુલલિત છે આ ગીતનો આઠમો ગુણ છે
આ પ્રમાણે આ ગીતના આઠ ગુણો છે. આ ગુણોથી હીન ગીત ગીત કહી
શકાય જ નહીં તે તો ગીતાભાસ છે. આ ગુણોની સાથે સાથે બીજા પાંચ
કેટલાક ગીતના ગુણો છે તે આ પ્રમાણે છે-(ઉરકંઠસિરપસત્યં) ઉરઃપ્રશસ્ત,
કંઠપ્રશસ્ત અને શિરઃપ્રશસ્ત ગીતનો વિશાળ સ્વર જ્યારે વક્ત્રસ્થળમાં પૂરિત

तदा-उरःप्रशस्तं विज्ञेयम्। यदा च कण्ठे स्वरो वर्तितोऽतिस्फुटितश्च तदा कण्ठ प्रशस्तम्। यदा च शिरसि प्राप्तः स्वरः स चेदानुनासिक्यरहितस्तदा शिरःप्रशस्तम्। यद्वा-उरःकण्ठशिरस्तु कफरहितेषु सत्सु यन् प्रशस्तं गीतं भवति तत्-उरः कण्ठशिरःप्रशस्तम्। तथा-मृदुक रिमितपदबद्धम्-मृदुना=कोमलेन स्वरेण यद् गीयते तद् मृदुकम्, यत्र अक्षरेषु घोलनया संचरन् स्वरो रङ्गतीव्र तद् घोलना-बहुलं रिमितम्, पदैः=गेयपदैः बद्धम्=विशिष्टरचनया रचितं-पदबद्धम्। पदत्रयस्य कर्मधारयः। तथा च-समतालप्रत्युत्क्षेपम्-तालः=हस्ततालसमुत्थः शब्दः, प्रत्यु-

विशालस्वर जब वक्षःस्थल में भर जाता है तब वह उरःप्रशस्त गान कहलाता है, गान का यह उरःप्रशस्त गुण है। गान का स्वर जब कंठ में भर जाता है और वह अतिस्फुट होता है तब वह कण्ठ प्रशस्त गान कहलाता है। गान का यह कण्ठप्रशस्त गुण है। जब गान का स्वर शिर में जाकर यदि अनुनासिक से वह रहित हो जाता है तब वह गान शिरःप्रशस्त कहलाता है। गान का यह शिरःप्रशस्त गुण है। अथवा-कफ रहित होने पर उर, कंठ और शिर ये सब प्रशस्त रहते हैं, उस समय गाया गया गीत भी प्रशस्त होता है। ऐसा गीत उरः कंठ शिरःप्रशस्त कहलाता है। (मउयरिभियपदबद्धं) तथा मृदुक रिमित और पदबद्ध, भी गान के ३ तीन गुण हैं-जो गान कोमल स्वर-से गाया जाता है, 'मृदुक' गुणवाला गाना है। जहां अक्षरों में घोलना से संचार करता हुआ स्वर चलता रहता है ऐसा वह घोलना बहुल गान 'रिमित' गुणवाला गान कहा जाता है। जिस गान

थઈ બાય છે ત્યારે તે ઉર:પ્રશસ્ત ગીત કહેવાય છે. ગીતનો આ ઉર:પ્રશસ્ત ગુણ છે ગાનનો. સ્વર બ્યારે કંઠપ્રદેશમાં ભરાઈ બાય છે અને તે અતિસ્ફુટ હોય છે ત્યારે તે કંઠપ્રશસ્ત ગીત કહેવાય છે ગાન નો આ કંઠપ્રશસ્ત ગુણ છે. બ્યારે ગાનનો સ્વર મસ્તકમાં બંધને તે અનુનાસિક વિનાનો થઈ બાય છે ત્યારે તે ગાન શિર:પ્રશસ્ત કહેવાય છે ગાનનો આ શિર:પ્રશસ્ત ગુણ છે. અથવા કફ રહિત હોવા બાદ ઉર, કંઠ, અને શિર આ બધા પ્રશસ્ત રહે છે તે વખતે ગવાયેલ ગીત પણ પ્રશસ્ત હોય છે એવું ગીત ઉર: કંઠ, શિર:પ્રશસ્ત કહેવાય છે. (મउयरिभियपदबद्धं) તેમજ મૃદુક રિમિત અને પદબદ્ધ આ પ્રમાણે પણ ગીતના ત્રણ ગુણો છે જે ગાન કોમળ સ્વરમાં ગવાય છે તે મૃદુક ગુણ યુક્ત ગાન કહેવાય છે જ્યાં અક્ષરોમાં ઘોલનાથી સંચરણ કરતો સ્વર ચાલતો રહે છે એવું તે ઘોલન બહુલ ગીત 'રિમિત' ગુણ યુક્ત ગીત કહેવાય છે જે ગીતમાં પદોની રચના વિશિષ્ટ હોય છે, તે 'પદ-

ત્ક્ષેપઃ=મુરજકાંસ્યાદીનાં ગીતોપકારકાણાં ધ્વનિઃ, નર્તકીપદપ્રક્ષેપલક્ષણો વા, સમ્રો તાલપ્રત્યુક્ષેપૌ યત્ર તત્ । તથા-સપ્તસ્વરસીમરમ્-સપ્ત સ્વરાઃ સીમરન્તિ=અક્ષર-દિમિઃ સહ સમા યત્ર ભવન્તિ તત્ । एवं विधं यद् गीतं गीयते तदेव सुगीतं भवति । इत्थं च उरःकण्ठ शिरःप्रशस्तत्वादयोऽपि गीतगुणा बोध्याः 'सप्त-स्वरसीमरम्' इत्युक्तं, तत्र ये सप्त स्वरास्ते क्वचित् एवमुक्ताः—

“अक्खरसमं पदसमं तालसमं च लयसमं ग्रहसमं ।

નીસસિઓસસિયસમં સંચારસમં સરા સત્ત ॥

છાયા—અક્ષરસમં પદસમં તાલસમં ચ લયસમં ગ્રહસમમ્ ।

નિઃશ્વસિતોચ્છ્વસિતસમં સશ્ચારસમં સ્વરાઃ સપ્ત ॥ઈતિ॥

અયમર્થઃ—અક્ષરસમમ્—યત્ર દીર્ઘેઽક્ષરે દીર્ઘો ગીતસ્વરઃ ક્રિયતે, હ્રસ્વે હ્રસ્વઃ, પ્લુતે પ્લુતઃ, સાનુનાસિકે સાનુનાસિકઃ, તદક્ષરસમમ્ ॥૧॥ પદસમમ્—યત્ પદં=ગીત-

મેં પદોં કી રચના વિશિષ્ટ હોતી હૈ, વહ ‘પદચદ્’ ગાન હૈ । (સમતાલ-પદુક્ષેવં) જિસ ગાન મેં તાલ-હસ્તતાલ સે ઉત્પન્ન હુઆ શબ્દ ઓર પ્રત્યુક્ષેપ-મૃદંગ કાંસ્ય આદિ કા જો કિ ગીત કે ઉપકારક હોતે હૈ ડનકી ધ્વનિ અથવા નર્તકીજન કા પાદપ્રક્ષેપ યે દોનોં જિસ મેં એક સાથ હોતે હૈ વહ સમતાલ પ્રત્યુક્ષેપ ગાન હૈ । યહ ગાન કા ગુણ હૈ । (સપ્ત-સ્વરસીમરં ગીયં) જિસ ગાન મેં સાત સ્વર અક્ષરોં કે સાથ સમાન હોતે હૈં વહ ગાન ‘સપ્તસ્વરસીમર’ કહલાતા હૈ । ઇસ પ્રકાર કા જો ગાનાં ગાયા જાતા હૈ વહી સુગીત (ગીત) કહલાતા હૈ । સપ્તસ્વર સીમર મેં જો સાત સ્વર કહે ગયે હૈં, વે કહીં ૨ પર ઇસ પ્રકાર સે કહે ગયે હૈં—અક્ષર-સમ ૧, પદસમ ૨, તાલસમ ૩, લયસમ ૪, ગ્રહસમ ૫, નિઃશ્વસિતોચ્છ્વસિત-સમ ૬, ઓર સંચારસમ ૭, જિસ ગાન મેં દીર્ઘ અક્ષર પર દીર્ઘસ્વર, હ્રસ્વ અક્ષર પર હ્રસ્વ સ્વર પ્લુત અક્ષર પર પ્લુત સ્વર ઓર સાનુનાસિક

બદ્ધ’ ગીત છે. (સમતાલ પદુક્ષેવં) જે ગીતમાં તાલ-હસ્તતાલથી ઉત્પન્ન થયેલ શબ્દ અને પ્રત્યુક્ષેપ-મૃદંગ કાંસ્ય વગેરેનો કે જે ગીતના માટે ઉપકારક હોય છે તેમનો ધ્વનિ-અથવા નર્તકીઓનું પાદપ્રક્ષેપણ અને બંને બેમાં એકી સાથે હોય છે તે સમતાલ પ્રત્યુક્ષેપ ગીત છે. આ ગીતનો ગુણ છે. (સપ્તસ્વરસીમરં ગીયં) જે ગીતમાં સાતસ્વર અક્ષરોની સાથે સમાન હોય છે તે ગીત ‘સપ્તસ્વર સીમર’ કહેવાય છે. આ પ્રમાણે જે ગીત ગવાય છે તે સુગીત (ગીત) કહેવાય છે. ‘સપ્તસ્વર સીમર’માં જે સાત સ્વરો કહેલા છે તેઓ ઠાઠક સ્થાને આ પ્રમાણે પણ કહેવામાં આવ્યા છે—૧ અક્ષરસમ, ૨ પદસમ, ૩ તાલસમ, ૪ લયસમ, ૫ ગ્રહસમ, ૬ નિઃશ્વસિતોચ્છ્વસિતસમ, અને ૭ સંચારસમ, જે ગીતમાં દીર્ઘઅક્ષર પર દીર્ઘસ્વર, હ્રસ્વઅક્ષર પર હ્રસ્વ-સ્વર, પ્લુત અક્ષર પર પ્લુતસ્વર અને સાનુનાસિક પર સાનુનાસિક સ્વર

પદમ્ યત્ર સ્વરે અનુપાતિ ભવતિ તત્ત્રૈવ યદા ગીયતે તદા પદસમં ભવતિ॥૨॥
 તાલસમમ્—યત્ પરસ્પરાભિહતહસ્તતાલસ્વાનુસારિણા સ્વરેણ ગીયતે તત્તાલ-
 સમમ્ ॥૩॥ લયસમં શ્રુગ્—દાર્વાઘન્યતમવસ્તુમયેનાઙ્ગુલીકોશેન સમાહતે તન્ન્યાદૌ
 યસ્તત્સ્વરપ્રકારઃ સ લયઃ, તમનુસરતા સ્વરેણ યદ્ ગીયતે તદ્લયસમમ્ ॥૪॥
 ગ્રહસમમ્—પ્રથમતો વંશતન્ન્યાદિભિર્યઃ સ્વરો ગૃહીતઃ સ ગ્રહઃ, તત્સમેન સ્વરેણ યદ્
 ગીયતે તદ્ ગ્રહસમમ્ ॥૫॥ નિઃશ્વસિતોચ્છ્વસિતસમમ્—નિઃશ્વસિતોચ્છ્વસિતમાન-
 મનંતિક્રમતો યદ્ ગેયં તદ્ નિઃશ્વસિતોચ્છ્વસિતસમમ્ ॥૬॥ સંચારસમમ્—વંશતન્ન્યા-
 દિષ્વેવ અઙ્ગુલીસંચારસમં યદ્ ગીયતે તત્સંચારસમમ્ । એવમેતે સપ્તસ્વરા ભવન્તિ ।

પર સાનુનાસિક સ્વર હોતા હૈ વહ અક્ષરસમ હૈ । જિસ સ્વર મૈ જો
 ગીતપદ અનુપાતી હોતા હૈ, વહ ગીત પદ જબ વહીં પર ગાગા જાતા હૈ
 તૈવ પદસમસ્વરવાલા ગીત હોતા હૈ । જો ગાના પરસ્પરાભિહત હસ્તતલ
 કે તાલસ્વર કે અનુસારવાલે સ્વર સે ગાંયા જાંતા હૈ વહ ગાના તાલસમ
 સ્વરવાલા કહલાતા હૈ । શ્રુંગ અથવાં દારુ કાઠ ઓદિ કિસી એક વસ્તુ
 કે બને હુએ અંગુલી કોશ સે તંત્રી ઓદિ કે બજાને પર જો ધ્વનિ નિક-
 લતી હૈ, ઉસકા નામ લેય હૈ । ઉસ લય કા અનુસરણ કરનેવાલે
 સ્વર સે જો ગાના ગાયા જાતા હૈ વહ લયસમસ્વરવાલા ગાના
 કહલાતા હૈ । વંશતંત્રી ઓદિકોં દ્વારા જો સ્વર પહિલે સે ગૃહીત
 કર લિયા જાતા હૈ ઉસકા નામ ગ્રહ હૈ । હસ ગ્રહ કે
 સમાન સ્વર સે જો ગીત ગાયા જાતા હૈ વહ ગ્રહસમ સ્વરવાલા
 ગીત કહલાતા હૈ । નિઃશ્વાસ ઉચ્છ્વાસ કે પ્રમાણાનુસાર જો ગાનાગાયા
 જાતા હૈ વહ નિશ્વસિતોચ્છ્વસિત સમ હૈ । વંશતંત્રી ઓદિ કોં

હોય છે તે અક્ષરસમ છે. જે સ્વરમાં જે ગીત પદ અનુપાતી હોય છે, તે
 ગીત પદ જ્યારે ત્યાંજ ગાવામાં આવે છે, ત્યારે પદ સમસ્વરવાળું ગીત
 કહેવાય છે. જે ગીત પર સ્વરાભિહત હસ્તતલના તાલસ્વર ને અનુસરતા
 સ્વરથી ગવાય છે. તે ગીત તાલસમ સ્વરવાળું કહેવાય છે શ્રુંગ અથવા દારુ-કાઠ
 વગેરે કોઈ પણ એક વસ્તુના બનેલા અંગુલી કોશથી તંત્રી વગેરે વગાડવાથી
 જે ધ્વનિ નીકળે છે તેનું નામ લય છે તે લયને અનુસરનાર સ્વરથી જે
 ગીત ગવાય છે તે લયસમસ્વરવાળું ગીત કહેવાય છે. વંશ તંત્રી વગેરે વડે
 જે સ્વર પહેલાથી જ ગૃહીત કરવામાં આવે છે તેનું નામ ગ્રહ છે. આ ગ્રહના
 સમાન સ્વરથી જે ગીત ગવાય છે તે ગ્રહસમ સ્વર યુક્ત ગીત કહેવાય છે.
 નિઃશ્વાસ ઉચ્છ્વાસના પ્રમાણ મુજબ જે ગીત ગવાય છે તે નિઃશ્વસિતોચ્છ્વ-

અત્રેદં बोध्यम्-एकोऽपि गीतस्वरोऽक्षरपदादिभिः सप्तभिः स्थानैः सह समत्वं प्रतिपद्यमानः सप्तधात्वं भजते, अतोऽक्षरसमादयः सप्तस्वरा भवन्तीति । अत्र तु सूत्रोपान्ते ‘तंतिसमं तालसमं’ इति गाथया सप्तस्वरा उच्यन्ते इति बोध्यम् । तथा गीते यः सूत्रबन्धः सोऽष्टगुण एव कर्तव्य इति तानाह-‘निर्दोसं’ इत्यादि । निर्दोषम्=‘अलिप्तमुपघायजणयं’ इत्यादि द्वात्रिंशदोषरहितम् १, सारवत्=विशिष्टार्थयुक्तम् २ हेतुयुक्तम्-गीतानामर्थबोधोऽनायासेन श्रोतॄणां भवत्विति हेतुमुपलक्ष्य यद् रचितं गीतं तत्, प्रासादगुणयुक्तमित्यर्थः ३, अलङ्कृतम्-उपमाद्यलङ्कारयुक्तम् ४,

કે ऊपर ही जो अंगुली के संचार के साथ २ गाना गाया जाता है, वह संचारसम है । इस प्रकार ये सात स्वर होते हैं । यहां पर ऐसा जानना चाहिये कि-एक ही गीत स्वर अक्षर पद आदि सात स्थानों के साथ उनकी समानता को पाता हुआ सात प्रकार का हो जाता है । इसलिये अक्षरसम आदि सात स्वर होते हैं । यहां तो सूत्र के उपान्त में “तंतिसमं, तालसमं” इस गाथा द्वारा सातस्वर कहे गये हैं । तथा गीत में जो सूत्रबन्ध-किया जावे वह आठ गुणवाला ही किया जाना चाहिये । आठ गुण इस प्रकार से हैं-(निर्दोसं सारमंतंच हेतुजुत्तमलंकियं उवणीयं सोवयारंच मियं महुरमेव य) निर्दोष-अलीक, उपघात जनक इत्यादि ३२ दोषों से रहित होना इसका नाम ‘निर्दोष’ है । सारवत्-विशिष्ट अर्थ से युक्त होना इसका नाम ‘सारवान्’ है । श्रोताजनों को अनायास ही गीत के अर्थ का बोध हो जावे, इस हेतु को ध्यान में रख कर जो गीत रचा गया हो वह ‘हेतुयुक्त’ है । तात्पर्य यह है कि

મિત સમ છે વંશ તંત્રી વગેરેની ઉપર જ જે આંગળીના સંચારની સાથે સાથે ગવાય છે તે ‘સંચારસમ’ છે. આ પ્રમાણે આ બધા સાત થાય છે. અહીં એમ સમજવું જોઈએ કે દરેક ગીત સ્વર અક્ષર પદ વગેરે સાત સ્થાનોની સાથે સાથે તેમની સમાનતા મેળવતું સાત પ્રકારનું થઈ જાય છે. અહીં સૂત્રના ઉપાન્તમાં “તંતિસમં તાલસમં” આ ગાથા વડે સાત સ્વરો કહેવામાં આવ્યા છે, તેમજ ગીતમાં જે સૂત્રબંધ કરવામાં આવે તે આઠ ગુણ યુક્ત જ હોવો જોઈએ આઠ ગુણો આ પ્રમાણે છે-(નિર્દોસં સારમંતં ચ હેતુ જુત્તમલંકિયં ઉવણીયં સોવયારં ચ મિયં મહુરમેવયં) નિર્દોષ-અલીક, ઉપઘાતજનક વગેરે બત્રીશ દોષ રહિત થવું તે નિર્દોષ છે. સારવત્-વિશિષ્ટ અર્થથી યુક્ત હોય તે સારવત્ છે. સાંભળનારાઓને અનાયાસ જ ગીતના અર્થનું જ્ઞાન થાય એ વાતને ધ્યાનમાં રાખીને જે ગીતની રચના કરવામાં આવે છે તે ‘હેતુયુક્ત’ કહેવાય છે મતલબ એ છે કે ગીત પ્રાસાદ ગુણ યુક્ત હોવું જોઈએ

उपनीतम्-उपनयनिगमनयुक्तम्-उपसंहारयुक्तमित्यर्थः५, सोपचारम्-क्लिष्टविरुद्ध-लज्जास्पदार्थावाचकं सानुप्रासं वा गीतम्६, मितम्-अतिवचनविस्तररहितं, संक्षिप्ताक्षरमित्यर्थः७, तथा-मधुरम्-माधुर्यगुणसमन्वितं-सुश्रव्यशब्दार्थयुक्त-मित्यर्थः८, एतादृशं यत् गीतं तदेव गानयोग्यं भवति । अथ यदुक्तं त्रीणि वृत्ता-नीति तान्याह-‘समं’ इत्यादि । यत्र वृत्ते चतुर्ष्वपि चरणेषु समानि अक्षराणि भवन्ति, तद् वृत्तं समम् । यत्र प्रथम तृतीययोर्द्वितीयचतुर्थयोश्च चरणयोः सामान्या-क्षराणि भवन्ति तदर्थसमम् । तथा-यत्र=वृत्ते सर्वत्र=चतुर्ष्वपि चरणेषु अक्षराणां

गीत को प्रासाद गुण युक्त होना चाहिये । उपमा आदि अलंकारों से जो गीत सजा हुआ होता है वह गीत ‘अलंकृत गुण वाला कहलाता है जो गीत उपसंहार से युक्त हो जाता है वह उपनीत गुण युक्त गीत माना जाता है । जो गीत क्लिष्ट विरुद्ध एवं लज्जास्पद पदार्थ का वाचक नहीं होता अथवा अनुप्रास युक्त होता है वह ‘सोपचार’ गीत कहलाता है । जिस गीत में वचनों का विस्तार अधिक नहीं होता है अर्थात् जो गीत संक्षिप्त अक्षरों वाला होता है, वह ‘मित’ गुण वाला गान है । जो गान सुश्राव्य शब्द और अर्थ वाला होता, है वह मधुर गुण युक्त गान कह लाता है । ऐसा जो गान — होता है वही गान योग्य होता है । गीत की तीन भणितियां इस प्रकार से हैं—(समं अद्धसमं चेव सव्वत्थविसमं च यं, तिण्णि वित्तपयाराइं चउत्थं नोवलम्भइ) जिस वृत्त में चारों चरणों में समान अक्षर होते हैं, वह ‘समवृत्त’ है । जिस वृत्त में प्रथम तृतीय पादों में और द्वि-तीय चतुर्थ पादों में समान अक्षर होते हैं वह अद्धसमवृत्त है । तथा

उपमा वगेरे अलंकारेથી જે ગીત અલંકૃત હોય છે તે ગીત અલંકૃત ગુણ-વાળું કહેવાય છે. જે ગીત ઉપસંહારથી યુક્ત હોય છે તે ઉપનીત ગુણ યુક્ત ગીત કહેવાય છે જે ગીત ક્લિષ્ટ, વિરુદ્ધ, અને લજ્જાસ્પદ પદાર્થ વાચક ન હોય અને અનુપ્રાસ યુક્ત હોય છે તે ‘સોપચાર’ ગીત કહેવાય છે. જે ગીતમાં વચનવિસ્તાર વધારે ન હોય એટલે કે જે ગીત સંક્ષિપ્ત અક્ષરો યુક્ત હોય છે, તે ‘મિત’ ગુણયુક્ત ગીત છે. જે ગીત સુશ્રાવ્ય શબ્દ અને અર્થવાળું હોય છે તે મધુર ગુણ યુક્ત ગીત કહેવાય છે. એવું જે ગીત હોય છે તેજ ગીત ગાવ લાયક હોય છે ગીતની ત્રણ ભણિતીઓ આ પ્રમાણે છે—(સમં અદ્ધસમં ચેવ સવ્વત્થ વિસમં ચ યં, તિણ્ણિ વિત્તપયારાઈં ચઉત્થં નોવલ્લભ્મઈ) જે વૃત્તમાં ચારે ચરણોમાં સમ અક્ષરો હોય છે તે ‘સમવૃત્ત’ છે જે વૃત્તમાં પ્રથમ-તૃતીય પાદમાં અને દ્વિતીય ચતુર્થ પાદોમાં સમાન અક્ષર હોય છે તે

વૈષમ્યં તદ્વૃત્તં વિષમમ્ । એતે ત્રય એવ વૃત્તપ્રકારા ભવન્તિ, ચતુર્થે વૃત્તં તુ નોપલભ્યતે ।
 તથા-ભણિતયઃ=ભાષાઃ સંસ્કૃતાઃ પ્રાકૃતાશ્ચ દ્વિવિધા દ્વિપ્રકારકા એવ આખ્યાતાઃ=
 ઉક્તાઃ । એતા ઋષિભાષિતા અતએવ પ્રશસ્તા ભાષા બોધ્યાઃ । અત એવ એતાઃ
 સ્વરમણ્ડલે=ષડ્જાદિ સ્વરસમૂહે ગીયન્તે ॥ અત્ર ગીતવિચારઃ પ્રસ્તુતઃ, અતઃ
 ‘કીદશી સ્ત્રી કથં ગાયતિ ?’ ઇતિ પૃચ્છતિ-‘કેસી ગાયઈ’ ઇત્યાદિના-કીદશી
 સ્ત્રી મધુરં=મધુરસ્વરેણ ગાયતિ ? ચ=પુનઃ કીદશી સ્ત્રી સ્વરં=સ્વરસ્વરેણ રુક્ષં=
 રુક્ષસ્વરેણ ચ ગાયતિ ? કીદશી સ્ત્રી ચતુરં=ચાતુર્યેણ-ગીતશાસ્ત્રોક્તયથાવિધિ

જિસ વૃત્ત મેં ચારોં હી પાદોં મેં અક્ષરોં કી વિષમતા રહતી હૈ, વહ
 ‘વિષમવૃત્ત’ હૈ । યે ત્રીન વૃત્તોં કે પ્રકાર હૈં ઓર ચતુર્થ પ્રકાર વૃત્ત કા
 કોઈ નહીં હૈ । (સવ્કયા પાયયા ચેવ દુહા મળિઈઓ આહિયા । સરમંડ-
 લંમિ ગિજ્જંતે પસત્થા ઇસિમાસિયા) તથા-ભણિતિ-ભાષા-સંસ્કૃત
 ઓર પ્રાકૃત કે ભેદ સે દો પ્રકાર કી હી કહી ગઈ હૈ । યે ઋષિજનોં દ્વારા
 ભાષિત હુઈ હૈં, હસલિયે હન્હે પ્રશસ્ત ભાષા જાનના ચાહિયે । પ્રશસ્ત
 ભાષા હોને કે કારણ હી યે દોનોં પ્રકાર કી ભાષાઈ ષડ્જ આદિ સ્વર
 સમૂહ મેં ગાઈ જાતી હૈં । યહાં પર ગીત કા વિચાર ચલ રહા હૈ હસલિયે
 પૂછા જા રહા હૈ કિ-કેસી સ્ત્રી કિસ પ્રકારં સે ગાતી હૈ ? હસી બાત કો
 સૂત્રકાર-અષ પ્રકટ કર રહેં હૈં-(કેસી ગાયઈ મધુરં) કેસી સ્ત્રી ગીત કો
 મધુર સ્વર સે ગાતી હૈ ? (કેસી ગાયઈ સ્વરં ચ રુક્ષં ચ) કેસી સ્ત્રી ગીત
 કો સ્વર સ્વર સે ગાતી હૈ ? કેસી સ્ત્રી ગીત કો રુક્ષસ્વર સે ગાતી હૈ ?
 (કેસી ગાયઈ ચતુરં ? કેસી ય વિલંબિયં દુતં કેસી ?) કેસી સ્ત્રી ચતુરાઈ

‘અર્ધ-સમવૃત્ત’ છે તેમજ બે વૃત્તમાં આદેયાર ચરણોમાં અક્ષરોની વિષ-
 મતા રહે છે તે ‘વિષમવૃત્ત’ છે આ ત્રણે વૃત્તોના પ્રકાર છે એ શિવાય
 વૃત્તનો એથો પ્રકાર નથી. (સવ્કયા પાયયા ચેવ દુહા મળિઈઓ આહિયા ।
 સરમંડલંમિ ગિજ્જંતે પસત્થા ઇસિમાસિયા) તેમજ ભણિતિ-ભાષા-સંસ્કૃત
 અને પ્રાકૃતના ભેદથી બે પ્રકારની કહેવામાં આવી છે એ ઋષિઓ વડે
 ભાષિત થયેલી છે એથી તેને પ્રશસ્ત ભાષા જાણવી જોઈએ એ પ્રશસ્ત
 ભાષા હોવા બદલ જ આ બંને જાતની ભાષાઓ ષડ્જ વગેરે સ્વર સમૂહોમાં
 ગવાય છે અહીં ગીત સંબંધી પ્રકરણ આવી રહ્યું છે એથી આ પ્રમાણે
 પૂછવામાં આવી રહ્યું છે કે કઈ સ્ત્રી કેવી રીતે ગાય છે ? એજ વાતને સૂત્ર-
 કાર હવે પ્રકટ કરે છે. (કેસી ગાયઈ મધુર) કેવી સ્ત્રી મધુર સ્વરે ગીત ગાય
 છે ? (કેસી ગાયઈ સ્વરં ચ રુક્ષં ચ) કઈ સ્ત્રી ગીતને અર સ્વરથી ગાય છે ?
 કઈ સ્ત્રી રુક્ષસ્વરથી ગીત ગાય છે ? (કેસી ગાયઈ ચતુરં ? કેસી વિલંબિયં

સ્વરવિધાનેન ગાયતિ ? કીદશી ચ સ્ત્રી વિલમ્બિતં=મન્થર (મન્દ) સ્વરેણ ગાયતિ ? કીદશી સ્ત્રી દ્રુતં=દ્રુતસ્વરેણ ગાયતિ ? તથા-કીદશી ચ સ્ત્રી વિસ્વરં=વિકૃતં સ્વરં કૃત્વા ગાયતિ ? ઉત્તરયતિ-‘સામા’ इत्यादिना । व्याख्या स्पष्टा । नवरं-पिङ्गला-कपिला । ‘सप्तसीभरम्’ इति यदुक्तम्, तत्र सप्त स्वराः के ? इति दर्शयति-‘तंतीसमं’ इत्यादि-तन्त्रीसमम्-तन्त्री-वीणा, तस्याः शब्देन समं=तुल्यं मिलितं

સે અર્થાત્ ગીત શાસ્ત્ર મેં કથિત વિધિ કે અનુસાર સ્વરવિધાન સે ગાતી હૈ ? કેસી સ્ત્રી વિલમ્બિત-મન્થર સ્વર-સે ગાતી હૈ ? કેસી સ્ત્રી દ્રુતસ્વર સે ગાતી હૈ ? (વિસ્સરં પુણ કેરિસી) ઓર કેસી સ્ત્રી વિકૃત સ્વર સે ગાતી હૈ અર્થાત્ સ્વર કો વિકૃત કર ગાતી હૈ ?

ઉત્તર-(સામા ગાયહ મહુરં) શ્યામા-ષોડશવાર્ષિકી-સ્ત્રી મધુર-સ્વર સે ગાતી હૈ (કાલી ગાયહ ચરં ચ રુક્ષંચ) કાલી કૃષ્ણરૂપ-વાલી સ્ત્રી ગીત કો ચર સે ઓર રુક્ષ સ્વર સે ગાતી હૈ । (ગોરી ગાયહ ચરં) ગૌરવર્ણસંપન્ના સ્ત્રી ગીત કો ચતુરાઈ સે ગાતી હૈ । (કાળા વિલમ્બં દ્રુતંચ અંધા) કાળી સ્ત્રી-एकाक्षी नारी ગીત કો મંદ સ્વર સે ગાતી હૈ । અંધી સ્ત્રી ગીત કો દ્રુતસ્વર સે ગાતી હૈ । (વિસ્સરં પુણ પિંગલા) ઓર જો કપિલા-कपिल वर्ण वाली સ્ત્રી હોતી હૈ વહ ગીત કો વિકૃત સ્વર સે ગાતી હૈ । (તંતિસમં, તાલસમં, પાયસમં, લયસમં, ગહસમં ચ નીસસિજસ-सियसमं સંચારસમં-सरा सत्त) તંત્રીસમ-तन्त्री-वीणा કે સમાન

દ્રુત' કેસી ?) કઈ સ્ત્રી ચતુરતાથી એટલે કે ગીતશાસ્ત્રમાં કથિત વિધિ મુજબ સ્વરવિધાનથી ગાય છે ? કઈ સ્ત્રી વિલમ્બિત-મન્થર-સ્વરથી ગીત ગાય છે ? કઈ સ્ત્રી દ્રુતસ્વરથી ગીત ગાય છે ? (વિસ્સરં પુણ કેરિસી) અને કઈ સ્ત્રી વિકૃત સ્વરથી ગીત ગાય છે એટલે કે સ્વરને વિકૃત કરીને ગાય છે ?

ઉત્તર-(સામા ગાયહ મહુરં) શ્યામા-ષોડશ વાર્ષિકી એટલે કે સોળ વર્ષની સ્ત્રી મધુર સ્વરથી ગીત ગાય છે. (કાલી ગાયહ ચરં ચ રુક્ષંચ) કાળી કૃષ્ણ રૂપવાળી-કાળારંગની-સ્ત્રી ખર અને રુક્ષ સ્વરથી ગાય છે. (ગોરી ગાયહ ચરં) ગૌરવર્ણ સંપન્ના એટલે કે ગોરી સ્ત્રી ચતુરાઈથી ગીત ગાય છે. (કાળા વિલમ્બં દ્રુતં ચ અંધા) કાળી સ્ત્રી-એક આંખવાળી-સ્ત્રી મંદ સ્વરથી ગીત ગાય છે આંધળી સ્ત્રી દ્રુતસ્વરથી-ઉતાવળથી-ગીત ગાય છે. (વિસ્સરં પુણ પિંગલા) અને જે કપિલા કપિલવર્ણવાળી સ્ત્રી હોય છે તે વિકૃત સ્વરથી ગીત ગાય છે. (તંતિસમં તાલસમં, પાયસમં, લયસમં ગહસમં ચ નીસસિજસસિયસમં સંચાર-સમં સરા સત્ત)-તંત્રી સમ-તંત્રી વીણા-ના શબ્દ જેવો અથવા તેના સ્વરની

વા ગેયમ્ । એવમગ્રેઽપિ ગેયમિતિ સંવન્ધનીયમ્ । ‘તાલસમમ્’ इत्यारभ्य संचार-
समम्’ इत्यन्तं पदषट्कं पूर्वं व्याख्यातम् । गेयस्वरयोरनर्थान्तरत्वादाह—‘सत्त सरा’
इति । इत्थं स्वरा बोध्या इति भावः । सम्प्रति समस्तं स्वरमण्डलं संक्षेपेणाह—
षड्जादयः सप्त स्वरा विज्ञेयाः, ग्रामाश्च त्रयः, मूर्च्छनाश्च एकविंशतिः तता,
तन्त्री, तान इति पर्यायाः भण्यन्ते, तत्र षड्जादिषु स्वरेषु प्रत्येकं सप्तभिस्तानै-
र्गीयते इत्यतः सप्त तन्त्रिकायां वीणायामेकोनपञ्चाशत्ताना भवन्ति । एवमेव
एकतन्त्रिकायां त्रितन्त्रिकायां वा वीणायां कण्ठेनापि वा गीयमाना एकोनपञ्चाश-

अथवा उसके साथ मिला हुआ जो स्वर आता है , वह तंत्री समस्वर
है । इसी प्रकार से ताल सम आदि के साथ भी “गेय” इसका संबंध
कर लेना चाहिये । गेय और स्वर में अर्थ भेद नहीं है । इसलिये गेय
से यहां स्वर लेना चाहिये । इस प्रकार ये सात स्वर हैं । तालसम से
लेकर संचारसम तक के ६ पदों की व्याख्या पहिले करदी गई है ।
(सत्तसरा तओ गामा मुच्छणा एकवीसई, ताणा एगूणपण्णासं सम्मत्तं
सरमंडलं) इस प्रकार संक्षेपसे समस्तस्वर मंडल सातस्वर, तीन ग्राम
इक्कीस मूर्च्छना और ४९ तान इस प्रकार से हैं । तता, तंत्री, तान, ये
सब पर्यायवाची-शब्द हैं । षड्ज आदि सात स्वरों में से प्रत्येक स्वर
सात तानों से गाया जाता है । इसलिये सप्त तंत्रिका वाली वीणा में ४९
ताने होती हैं । इसी प्रकार एक तंत्रिका वाली अथवा त्रितंत्रिकावाली
वीणा में कंठ से भी गाई गई ताने ४९ ही होती हैं । इस प्रकार सात-

સાથે મિશ્રિત થયેલા જે સ્વર છે તે ‘તંત્રીસમ સ્વર’ છે આ પ્રમાણે
તાલ-સમ વગેરે માટે પણ ‘ગેય’ શબ્દનો સંબંધ સમજવો જોઈએ ગેય
અને સ્વરમાં અર્થ-ભેદ નથી એટલા માટે ગેયથી અહીં સ્વર લેવો જોઈએ
આ પ્રમાણે સ્વરો સાત છે ‘તાલ સમ’થી લઈને ‘સંચાર સમ’ સુધીના છ
પદોની વ્યાખ્યા પહેલા કરવામાં આવી છે. (સત્તસરા તઓ ગામા મુચ્છણા એક-
વીસઈ, તાણા એગૂણપણ્ણાસં સમ્મત્તં સરમંડલં) આ પ્રમાણે ટૂંકમાં સમસ્ત સ્વર-
મંડળ-સાતસ્વર, ત્રણગ્રામ, એકવીસ મૂર્ચ્છના અને ૪૯ તાન-આ પ્રમાણે
છે તતા-તંત્રી, તાન, આ બધા પર્યાયવાચી શબ્દો છે ષડ્જ વગેરે સાત
સ્વરોમાંથી દરેકે દરેક સાત તાનોથી ગવાય છે. એથી સપ્ત તંત્રિકા યુક્ત
વીણામાં ૪૯ તાનો હોય છે આમ એક તંત્રિકા યુક્ત વીણા અથવા ત્રિતંત્રિકા-
વાળી વીણામાં કંઈથી ગવાયેલ તાનો પણ ૪૯ હોય છે આ પ્રમાણે સાત

દેવ તાના ભવન્તિ । इत्थं षड्जादिभिः सप्तभिर्नाभिः सर्वस्यापि स्वरमण्डलस्य ग्रहणादिदं सप्तनामेत्युच्यते । इदमेवोपसंहरन्नाह—‘तदेतत् सप्तनामे’ति॥सू. १६७॥

अथाष्टनाम निरूपयितुमाह—

મૂલમ્—સે કિં તં અટ્ટનામે ? અટ્ટનામે અટ્ટવિહા વચનવિભક્તી પળણત્તા, તં જહા—નિદેસે પઢમા હોઈ, વિઙ્ઘા ઉવણસળે । તઙ્ઘા કરણમ્મિ કયા, ચઉત્થી સંપયાવળે॥૧॥ પંચમી ચ અવાયાળે, છટ્ટી સસ્સામિવાયળે । સત્તમી સણિહાણત્થે, અટ્ટમાઽઽમંતળી ભવે॥૨॥ તત્થ પઢમા વિભક્તી, નિદેસે સો ઇમો અહં વત્તિ । વિઙ્ઘા પુળ ઉવણસે મળ કુળસુ ઇમં વ તંવત્તિ॥૩॥ તઙ્ઘા કરણમ્મિ કયા, મળિયં ચ કયં ચ તેળ વ મણ વા । હંદિ ણમો સાહાણ, હવઈ ચઉત્થી પયાળંમિ॥૪॥ અવળય મિળહ ય ણત્તો, ઇઉત્તિ વા પંચમી અવાયાળે । છટ્ટી તસ્સ ઇમસ્સ વ ગયસ્સ વા સામિસંબંધે॥૫॥ હવઈ પુળ સત્તમી તં, ઇમંમિ આહારકાલ-ભાવે ય । આમંતળે ભવે અટ્ટમી ઉ જહા હે જુવાળત્તિ॥૬॥ સે તં અટ્ટનામે ॥સૂ૦ ૧૬૮॥

છાયા—અથ કિં તત્ અષ્ટનામ ? અષ્ટનામ—અષ્ટવિધાઃ વચનવિભક્તયઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તથા—નિર્દેશે પ્રથમા ભવતિ, દ્વિતીયા ઉપદેશને । તૃતીયા કરણે કૃતા, ચતુર્થી નામોં સે સમસ્ત મી સ્વરમંડલ કા ગ્રહણ હો જાતા હૈ । इसलिये यह सप्तनाम ऐसा कहा जाता है । (सेत्तं सत्तनामे) इस प्रकार से यह सप्तनाम है । ॥सू० १६७॥

अब सूत्रकार अष्ट नाम का निरूपण करते हैं—

“से किं तं अट्टनामे” इत्यादि ।

નામોથી આખા સ્વરમંડળનું ગ્રહણ સમજવું જોઈએ એથી ‘સપ્તનામ’ આમ કહેવાય છે. (સેત્તં સત્તનામે) આ પ્રમાણે આ સપ્તનામો છે ॥સૂ૦ ૧૬૭॥

હવે સૂત્રકાર અષ્ટ નામનું નિરૂપણ કરે છે—

“સે કિં તં અટ્ટનામે” ઇત્યાદિ—

સંપ્રદાપને ॥૧॥ પંચમી ચ અપાદાને, વૃષ્ટી સ્વસ્વામિવાચને । સપ્તમી સન્નિવાનાયે,
અષ્ટમી આમન્ત્રણી ભવેત ॥૨॥ તત્ર પ્રથમાવિભક્તિઃ, નિર્દેશો સઃ । અયમ્ અઠવા
ઇતિ । દ્વિતીયા પુનરુપદેશે મણ કુરુ ઇદમ્ વા તત્ વા ઇતિ ॥૩॥ તૃતીયા કરણે કૃતા

શબ્દાર્થ-(સે કિં તં અઢનામે) હે ભદન્ત । વહ અઢ નામ કયા હે ?
(અઢ વિહા વચનવિભક્તી પળણત્તા)

ઉત્તર-આઠ પ્રકાર, કી જો વચનવિભક્તિ હૈ વહ અઢ નામ હૈ । જો
કહે જાતે હૈ, વે 'વચન' હૈ । તથા કર્તા, કર્મ આદિરૂપ અર્થ જિસકે
દ્વારા પ્રકટ કિયા જાતા હૈ વહ 'વિભક્તિ' હૈ । વચનો-પદો, કી જો
વિભક્તિ હૈ વહ 'વચનવિભક્તિ' હૈ । એસા તીર્થ કર એવં ગળધરોને
કહા હૈ । વચનવિભક્તિ સે યહાં પર સુબન્ત રૂપ પ્રથમા આદિ વિભ-
ક્તિયો કો કહનેવાલી વચનવિભક્તિ ગૃહીત હુઈ હૈ । તિજ્જન્તરૂપ આખ્યાત
વિભક્તિ નહીં । (તંજહા) વચનવિભક્તિ કે આઠ પ્રકાર યે હૈ-(નિદેસે
પદમા હોઈ) (પ્રાતિપદિક અર્થમાત્ર કા પ્રતિપાદન કરના । સ્કા નામ
નિર્દેશ હૈ । સ નિર્દેશ મેં "સુ ઓ, જસ" યહ પ્રથમા વિભક્તિ હોતી
હૈ । (ઊવણસળે વિદ્યા) કિસી એક ક્રિયા મેં પ્રવર્તન હોને કે લિયે ઇચ્છા
કે ઉત્પાદન કરને મેં "અમ્ ઓદ્ર શસ" યહ દ્વિતીયા વિભક્તિ હોતી
હૈ । "ઊવણસળ" યહ પદ ઉપલક્ષણ હૈ । સસે "પ્રામં ગચ્છતિ"
શ્ત્યાદિ પદ મેં સ્કે વિના યો દ્વિતીયા વિભક્તિ હોતી હૈ । (કરણમિ

શબ્દાર્થ-(સે કિં તં અઢનામે) હે ભદન્ત । આ અઢનામે શુ ઇ ? (અઢ
વિહા વચનવિભક્તી પળણત્તા.)
ઉત્તર-આઠ પ્રકારની જે વચન વિભક્તિ છે તે અઢનામે છે. જે કહેવામાં
આવે છે, તે 'વચન' છે તેમજ કર્તા, કર્મ વગેરે રૂપ અર્થ એના વડે પ્રકટ
કરવામાં આવે છે તે 'વિભક્તિ' છે. વચનો-પદોની જે વિભક્તિ છે તે વચન-
વિભક્તિ છે. આમ તીર્થ કરોએ અને ગણધરોએ કહ્યું છે વચનવિભક્તિથી
અહીં સુબન્ત રૂપ પ્રથમા વિભક્તિઓને પ્રકટ કરનારી વચન વિભક્તિ ગૃહીત
થયેલી છે તિજ્જન્ત રૂપ આખ્યાત વિભક્તિ નથી (તંજહા) વચન વિભક્તિના
આઠ પ્રકારો આ પ્રમાણે છે. (નિદેસે પદમા હોઈ) પ્રાતિપદિક અર્થ માત્રનું
પ્રતિપાદન કરવું તેનું નામ નિર્દેશ છે. આ નિર્દેશમાં 'સુ ઓ જસ' આ પ્રથમા
વિભક્તિ હે. ૪ છે. (ઊવણસળે વિદ્યા) કોઈ એક ક્રિયામાં પ્રવર્તિત થવા માટે
ઈચ્છા ઉત્પન્ન કરવામાં 'અમ્, ઓદ્ર શસ' આ દ્વિતીયા વિભક્તિ હોય છે
"ઊવણસળ" આ પદ ઉપલક્ષણ છે એનાથી "પ્રામં ગચ્છતિ" વગેરે પદોમાં

મણિતં ચ કૃતં ચ તેન વા મયા વા । હન્દિ નમઃ સ્વાહાયૈ મવતિ ચતુર્થીપદાને॥૪॥
અપનય ગૃહાણ ચ, અસ્માત્ इतः इति वा पञ्चमी अपादाने । षष्ठी तस्य अस्य च
गतस्य वा स्वामिसम्बन्धे॥૫॥ મવતિ પુનઃ સપ્તમી સા અસ્મિન્ આધારકાલભાવે
ચ । આમન્ત્રણે ભવેત્ અષ્ટમી તુ યથા હે યુવન્ इति॥૬॥ તદેતદ્ અષ્ટનામ્॥મુ. ૧૬૮॥

ટીકા—‘ સે કિં તં ’ ઇત્યાદિ—

અથ કિં તત્ અષ્ટનામ ? ઇતિ શિષ્ય પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—અષ્ટનામ—અષ્ટવિધં
નામ—અષ્ટનામ, તથાદિ—અષ્ટવિધા=અષ્ટપ્રકારા વચનવિભક્તિઃ—ઉચ્યન્તે ઇતિ
વચનાનિ=પદાનિ, વિભજ્યતે=પ્રકટીક્રિયતે કર્તુકર્માદિરૂપોઽર્થોઽનયેતિ વિભક્તિઃ,
વચનાનાં વિભક્તિઃ—વચનવિભક્તિઃ પ્રજ્ઞપ્તા=કથિતા તીર્થકરગણધરૈઃ । વચનવિમ-

તહયા કયા) કરણ મેં “ટા, મ્યામ્ મિસ્” યહ તૃતીયા વિભક્તિ હોતી હૈ।
(સંપયાવળે ચતુર્થી) સંપદાન મેં ચતુર્થી હે, મ્યામ્ મ્યસ્—યહ વિભક્તિ
હોતી હૈ। (અવાયાળે પંચમીચ) અપાદાન મેં હસિ મ્યામ્, મ્યસ્, “યહ
પંચમી વિભક્તિ હોતી હૈ। (સસ્સામિવાયળે છઠી) સ્વ સ્વામી સંબંધ
પ્રતિપાદન કરને મેં “હસ્ ઓસ્ આમ્” યહ ષષ્ઠી વિભક્તિ હોતી હૈ।
(સણિહાળત્યે સત્તમી) સન્નિધાન અર્થ મેં “હિ ઓસ્ સુપ્” યહ
સપ્તમી વિભક્તિ હોતી હૈ। (આમંતળી અદુમા ભવે) સન્મુલ્લ કરને કે
અર્થ મેં સંબોધનરૂપ આઠવીં વિભક્તિ હોતી હૈ। તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ
કિ—‘યહાં પર સૂત્રકાર ને અષ્ટ નામ કયા હૈ ? યહ કહા હૈ। નામ કે
વિચાર કા પ્રસ્તાવ હોને સે પ્રથમાદિ વિભક્ત્યન્ત નામ કા હી
ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ। યહ નામ વિભક્તિ કે ભેદ સે આઠ

એના વગર પણ દ્વિતીયા વિભક્તિ હોય છે. (કરણમ્મિ તહયા કયા) કરણમાં
“ટા, મ્યામ્, મિસ્” આ તૃતીયા વિભક્તિ હોય છે (સંપયાવળે ચતુર્થી)
સંપદાનમાં ચતુર્થી “હે, મ્યામ્, મ્યસ્” આ વિભક્તિ હોય છે. (અવાયાળે
પંચમી ચ) અપાદાનમાં “હસિ, મ્યામ્ મ્યસ્,” આ પાંચમી વિભક્તિ હોય છે
(સસ્સામિવાયળે છઠી) સ્વ સ્વામી સંબંધ પ્રતિપાદન કરવામાં ‘હસ્ ઓસ્
આમ્’ આ ષષ્ઠી વિભક્તિ હોય છે. (સણિહાળત્યે સત્તમી) સન્નિધાન અર્થમાં
‘હિ ઓસ્, સુપ્’ આ સપ્તમી વિભક્તિ હોય છે (આમંતળી અદુમાભવે)
અભિમુખ કરવાના અર્થમાં સંબોધન રૂપ આઠમી વિભક્તિ હોય છે મતલબ
આ છે કે ‘અહીં’ સૂત્રકારે અષ્ટનામ એટલે શું ? આ કહ્યું છે નામવિચાર
વિષે જ પ્રસ્તાવ હોવા બદલ પ્રથમા વગેરે વિભક્ત્યન્ત નામનું જ ગ્રહણ કર-
વામાં આવ્યું છે આ નામ વિભક્તિ લેકથી આઠ પ્રકારના હોય છે. પ્રથમા

ક્તિસ્તુ નામવિભક્તિઃ સુવન્તરૂપા પ્રથમાદિકા વૌધ્યા, ન તુ તિङ્શ્તરૂપા-આરૂપા-
 વિભક્તિઃ । અષ્ટપ્રકારાં લ્ઘનવિભક્તિમેવાહ-તથા-નિર્દેશે-પ્રાતિપદિકાર્થમાત્રસ્ય
 પ્રતિપાદનં નિર્દેશસ્તસ્મિન્ 'સુ ઓ જસ્' इति प्रथमा विभक्तिर्भवति । उपदेशने-
 अन्यतरक्रियायां प्रवर्तनेच्छोत्पादने 'अम् औट् शस्' इति द्वितीया विभक्ति
 भवति । उपदेशनमित्युपलक्षणम्, तेन ग्रामं गच्छतीत्यादौ तदन्तरेणापि भवति ।
 करणे 'टा भ्यां भिस्' इति तृतीया विभक्ति भवति । अत्र करण शब्दस्तन्त्रेण
 निर्दिष्टः । तेनात्र कर्तरि=क्रियायां स्वातन्त्र्येण विवक्षितेऽर्थे देवदत्तादौ करणे=
 क्रियासिद्धौ प्रकृष्टोपकारके च तृतीयाविभक्ति भवति । करोतीति करणः, 'कृत्य-
 ल्युटो बहुल' मिति बाहुलकात् कर्तरि ल्युट् । क्रियतेऽनेनेति करणम्, करणे

પ્રકાર કા હોતા હે । પ્રથમા વિભક્તિ દ્વિતીયા વિભક્તિ આદિ
 કે ભેદ સે વિભક્તિયાં આઠ હે । इनमें प्रातिपदिकार्थ मात्र के प्रतिपादन
 र्हे प्रथमा विभक्ति होती है । संस्कृत में कारक विभक्तियों को प्रकट
 करने के लिये सु औ जस् आदि २१ विभक्तियां=प्रत्यय, हैं । ये सुप्-
 प्रत्यय कह लाते हैं । ये सुप्प्रत्यय जिन शब्दों में जुड़ते हैं उन्हें 'प्राति-
 पदिक' कहते हैं । सुप्प्रत्यय जुड़ने पर ही प्रातिपदिक शब्दों का वाक्य
 में प्रयोग हो सकता है । करण में तृतीया विभक्ति होती है । ऐसा जो
 कहा है वह तंत्र (१) से कहा है । इसलिये तृतीया विभक्तिकर्ता में-
 क्रिया में स्वतंत्ररूप से विवक्षित देवदत्त आदि रूप अर्थ में-एवं
 करण में-क्रिया की सिद्धि में प्रकृष्टतम उपकारक में-होती है । "कृत्य-
 ल्युटो बहुलम्" इस सूत्र के अनुसार कृत्य और ल्युट्प्रत्यय कर्ता और

વિભક્તિ દ્વિતીયા વિભક્તિ વગેરેના લેક્ષ્મી વિભક્તિઓ આઠ છે આમાં ફક્ત
 પ્રાતિપદિકાર્થના પ્રતિપાદનમાં પ્રથમા વિભક્તિ હોય છે સંસ્કૃતમાં કારક વિભ-
 ક્તિઓને પ્રકટ કરવામાં માટે સુ, ઓ, જસ્ વગેરે ૨૧ વિભક્તિના પ્રત્યયો છે.-
 છે એ સુપ્ પ્રત્યયો કહેવાય છે એ સુપ્ પ્રત્યયો જે શબ્દોમાં ઉમેરાય છે
 તે પ્રાતિપદિક કહેવાય છે સુપ્ પ્રત્યય ઉમેરાયા પછી જ પ્રાતિપદિક શબ્દોનો
 વાક્યમાં પ્રયોગ થઈ શકે છે. કરણમાં તૃતીયા વિભક્તિ હોય છે, એવું જે
 કહેવામાં આવ્યું છે તે તંત્ર (સિદ્ધાંત)થી કહેવામાં આવ્યું છે એટલા માટે
 તૃતીયા વિભક્તિ કર્તામાં, ક્રિયામાં સ્વતંત્ર રૂપથી વિવક્ષિત દેવદત્ત વગેરે
 રૂપ અર્થમાં અને કરણમાં ક્રિયાની સિદ્ધિમાં પ્રકૃષ્ટતમ ઉપકારક હોય છે.
 'કૃત્યલ્યુટો વહુલમ્' આ સૂત્ર મુજબ 'કૃત્ય' અને 'લ્યુટ્' પ્રત્યય કર્તા અને
 કરણ એ બંનેમાં હોય છે આ પ્રમાણે 'કરોતિ' इति करणम्, क्रियते

લ્યુટ્ । સંપદાપને-સંપદાને-દાનસ્ય કર્મણા યોઽભિપ્રેતસ્તસ્મિન્ 'હિ ધ્યામ્ ધ્યસ્' इति चतुर्थी विभक्ति भवति । अपादाने-अपायावधिभूते 'हसि ध्याम્ ध्यस्' इति पञ्चमी विभक्ति भवति । स्वस्वामिवाचने-स्वम्-भृत्यादि, स्वामी-राजादिस्तयो-वाचने-तत्सम्बन्धप्रतिपादने 'हस् ओस् आम्' इति षष्ठी विभक्ति भवति । सन्निधानार्थे वाच्ये 'हि ओस् सुप्' इति सप्तमी विभक्ति भवति । तथा-अष्टमी=संबोधनविभक्तिः आमन्त्रणी=अभिमुखी करणार्था भवति । इत्थं सामान्येनोक्त्वा सम्प्रति सोदाहरणमाह-निर्देशे प्रथमा, विभक्ति भवति, यथा-सः अयम् अहं वेति । उपदेशे पुनः द्वितीया विभक्ति भवति । यथा-'भण कुरु इदं वा तद्वेति इदं प्रत्यक्षं यत् श्रुतं तद् भण, इदं प्रत्यक्षं कार्यं कुरु, तत्-परोक्षं वा यत् श्रुतं तद्

करण इन दोनों में होते हैं । इस प्रकार करोति इति करणः क्रियतेऽने-नेति करणम् "यहां दोनो जगह ल्युट् प्रत्यय हुआ है । दान रूप क्रिया के कर्म का जिसके साथ संबन्धकर्ता को दृष्ट हो उसमें चतुर्थी विभक्ति होती है । अपाय की अवधिभूत पदार्थ का नाम अपादान है । इसमें पंचमी विभक्ति होती है । स्वस्वामी संबन्ध में सेव्य सेवक आदि भाव लिया गया है । स्व का तात्पर्य सेवक, भृत्यादि से है और स्वामी का सेव्य राजादि से । सन्निधान और आमन्त्रणी इन शब्दों का अर्थ स्पष्ट है । इस प्रकार सामान्य से कह कर अब सूत्रकार इस अष्ट नाम को उदाहरण देकर समझाते हैं-(तत्थ निद्देसे पढमा विभत्ती) निर्देश में प्रथमा विभक्ति होती है-जैसे (सो इमो अहं वत्ति) वह यह अथवा मैं । (बिइया पुण उवएसे) उपदेश में द्वितीयाविभक्ति होती है जैसे-(भण कुणसु इमं व तं वत्ति) जो तुमने प्रत्यक्ष में सुना है, उसे कहो, इस सामने के काम को करो, जो परोक्ष में तुमने सुना है उसे कहो अथवा उस

अनेન इति करणम्' અહીં બન્ને સ્થાને, લ્યુટ્ પ્રત્યય થયેલ છે. દાનરૂપ ક્રિયાના કર્મના જેની સાથે સંબંધ કર્તાને દ્રષ્ટ હોય તેમાં ચતુર્થી વિલક્ષિત થાય છે. અપાય (જુદા થવું)ની અવધિભૂત પદાર્થનું નામ અપાદાન છે આમાં પંચમી વિલક્ષિત થાય છે સ્વસ્વામી સંબંધમાં સેવ્ય સેવક વગેરે ભાવ ગ્રહણ કરવામાં આવે છે સ્વતુ' તાત્પર્ય' સેવક ભૂત્ય વગેરેથી છે અને સ્વામીનું સેવ્ય રાજા વગેરેથી સન્નિધાન અને આમન્ત્રણી આ સંબોધન શબ્દોનો અર્થ સ્પષ્ટ છે.

આ પ્રમાણે સૂત્રકાર સામાન્ય રૂપમાં ઉલ્લેખ કરીને હવે આ અષ્ટ-નામને સોદાહરણ સમજાવે છે. (તત્થ નિદ્દેસે પદમા વિભત્તિ) નિર્દેશમાં પ્રથમા વિલક્ષિત હોય છે. જેમ કે (સો ઇમો અહં વત્તિ) 'તે,' 'આ' કે 'હું' (બિહ્યા પુણ ઉવણ્ણે) ઉપદેશમાં બીજી વિલક્ષિત હોય છે. જેમ કે (ભણ કુણસુ ઇમં વ તં વત્તિ) જે તમે પ્રત્યક્ષમાં સાંભળ્યું છે, તેને કહો, આ સામેનું કામ

મળ, તત્-પરોક્ષં કાર્યં વા કુરુ ઇતિ । તૃતીયા વિભક્તિઃ કરણે-કર્તરિકરણે ચ
 ભવતિ । યથા-મળિતં ચ કૃતં ચ તેન વા મયા વેતિ, કર્તરીદમુદાહરણમ્ । કરણેતુ
 ‘રથેન યાતિ’ ઇત્યાદિકં સ્વબુદ્ધયા વિભાવનીયમ્ । સંપ્રદાને ચતુર્થી વિભક્તિર્ભવતિ,
 યથા-મુનયે દાનં દદાતિ । નમઃ શબ્દયોગેઽપિ ચતુર્થી વિભક્તિર્ભવતિ, યથા-
 ‘હન્દિ । નમો જિનેશ્વરાય’ ઇતિ । ‘હન્દિ’ હતિ કોમલામન્ત્રણે । અપાદાને પંચમી
 ભવતિ, યથા-‘ઉપનય ગૃહાણ એતસ્માદિતો વે’તિ । સ્વામિસંબન્ધે=સ્વસ્વામિ
 ભાવસંબન્ધે વાચ્યે ષષ્ઠી ભવતિ, તથા-‘ગતસ્ય તસ્ય, ગતસ્ય અસ્ય વા ઇદમસ્તિ’

પરોક્ષ કાર્ય કો કરો । (તદ્વા કરણમિ-કયા) તૃતીયા વિભક્તિ
 કરણ કર્તા ઓર કરણ-મેં હોતી હૈ જૈસે-(મળિયં ચ કયં ચ
 તેણ મણવા) ઉસને ઓર મૈને કહા અથવા ઉસને ઓર મૈને કિયા ।
 યહ ઉદાહરણકર્તા મેં હૈ । કરણ મેં ઉદાહરણ “વહ રથ સે જાતા હૈ”
 આદિ હૈ । એસે ઉદાહરણ અપની બુદ્ધી સે ઓર મી કલ્પિત કરલેના
 ચાહિયે । (ચતુર્થી સંપ્રયાણમિ હવહ) ચતુર્થી વિભક્તિ સંપ્રદાન મેં હોતી હૈ-
 જૈસે (હંદિ નમો સહાય) હન્દિ ! જિનેશ્વર કે લિયે નમસ્કાર હો, અગ્નિ કે
 લિયે સ્વાહા હો (યહાં પર ‘હન્દિ’ યહ શબ્દ કોમલામંત્રણ મેં આયા હૈ ।
 હસી પ્રકાર સે ‘દા’ ધાતુ કે યોગ મેં ચતુર્થી હોતી હૈ-જૈસે વહ મુનિ કે
 લિયે દાન દેતા હૈ । (અવાયાણે પંચમી) અપાદાન મેં પંચમી હોતી હૈ-
 જૈસે (અવણય ગિળ્હ ય એત્તો ઇ ઉત્તિવા) હસસે દૂર કરો અથવા હસસે
 લેલો (સામિ સંબંધે) જહાં સ્વ-સ્વામી સંબંધ વાચ્ય હોતા હૈ યહાં પર
 ષષ્ઠી વિભક્તિ હોતી હૈ, જૈસે (ગયસ્સ તસ્સ ગયસ્સ ઇમસ્સ વ) ગયે હુણ

કરો જે પરોક્ષમાં તમે સાંભળ્યું છે તેને કહો અથવા તે પરોક્ષક્રમને કરો.
 (તદ્વા કરણમિ કયા) ત્રીજી વિભક્તિ કરણ કર્તા અને કરણમાં હોય છે જેમ કે
 (મળિયં ચ કયં તેણ મણવા) તેણે અને મેં કહ્યું અથવા તેણે અને મેં કયું આ ઉદા-
 હરણ કર્તામાં છે કરણમાં ઉદાહરણ આ પ્રમાણે છે-તે રથથી જાય છે વગેરે છે એવા
 ઉદાહરણો પોતાની બુદ્ધિથી કલ્પિત કરી લેવા જોઈએ (ચતુર્થી સંપ્રયાણમિ
 હવહ) ચતુર્થી વિભક્તિ સંપ્રદાનમાં હોય છે જેમ કે (હંદિ નમો સહાય) હન્દિ !
 જિનેશ્વર માટે મારા નમસ્કાર અગ્નિ માટે સ્વધા અહીં ‘હન્દિ’ આ શબ્દ
 કોમલામંત્રણ માટે આવે છે આ પ્રમાણે ‘દા’ ધાતુના યોગમાં ચતુર્થી
 હોય છે જેમ કે તે મુનિ માટે દાન આપે છે. (અવાયાણે પંચમી) અપાદાનમાં
 પંચમી હોય છે જેમ કે (અવણય ગિળ્હ ય એત્તો ઇ ઉત્તિવા) આને દૂર કરો
 અથવા એનાથી લઈ લો. (સામિ સંબંધે) જ્યાં સ્વસ્વામિ સંબંધ વાચ્ય હોય
 છે ત્યાં ષષ્ઠી વિભક્તિ થાય છે જેમ કે (ગયસ્સ તસ્સ ગયસ્સ ઇમસ્સ વ) ગયેલ

इति । आधारकालभावे=आधारे काले भावे च सप्तमी भवति, यथा-‘तत् अस्मि’
न्निति, अस्मिन् कुण्डादौ तद् वदरादिकं तिष्ठति, इत्यर्थः । अत्राधारे सप्तमी
बोद्धा । काले यथा-‘मधौ रमते’ भावे तु-‘चारित्र्येऽवतिष्ठते’ इति । आमन्त्रणे
तु अष्टमी विभक्ति भवति । यथा-‘हे युव’-न्निति । अत्र च नामविचारप्रस्तावात्
प्रथमादि विभक्त्यन्तं नामैव गृह्यते । तथा चाष्ट विभक्तिभेदादष्टविधमिदं भवति ।
न च प्रथमादि विभक्त्यन्तनामाष्टकमन्तरेणाऽपरं नामास्ति, अतोऽनेन नामाष्टकेन
सर्वस्य वस्तुनोऽभिधानद्वारेण सङ्ग्रहादष्टनामेत्युच्यते, इति भावार्थः । एतदुप
संहरन्नाह-तदेतदष्टनामेति ॥ सू० १६८ ॥

उसकी अथवा गये हुए इसकी यह वस्तु है । (आहारकालभावे य
सप्तमी पुण हवइ) आधार में, काल में और भाव में सप्तमी विभक्ति
होती है । जैसे-तं इमस्मि) इस कुण्ड आदि में वदरादि फल हैं । यह
आधार में सप्तमी विभक्ति का दृष्टान्त है । काल में सप्तमी विभक्ति का
दृष्टान्त “मधौ रमते” कोयल वसन्त में आनंद पाती है, यह है । भाव
में सप्तमी विभक्ति का दृष्टान्त-“चारित्र्येऽवतिष्ठते” यह साधु अपने
चारित्र में उहरा हुआ है-यह है । (आमंत्रणे अष्टमी भवे) आमंत्रण
अर्थ में अष्टमी विभक्ति होती है । (जहा)-जैसे-(हे जुवाणत्ति) ये युवन्-
तरुण ! यहां पर नाम के विचार का प्रस्ताव होने से प्रथमादि विभक्त्य-
न्त नाम ही ग्रहण किया गया है । इस प्रकार आठ प्रकार की विभ-
क्तियों के भेद से नाम आठ प्रकार का होता है । प्रथमादि विभक्त्यन्त
नामाष्टक के बिना और दूसरा नाम नहीं है । इसलिये इस नामाष्टक

તેની અથવા ગયેલ આની આ વસ્તુ છે. (આહાર કાલભાવે ય સપ્તમી પુણ હવઈ)
આધારમાં, કાળમાં અને ભાવમાં સપ્તમી વિભક્તિ હોય છે જેમ કે-(તં
ઈમસ્મિ) આ કુંડ વગેરેમાં બદર વગેરે ફળો છે આ આધારમાં સપ્તમી વિભ-
ક્તિનું ઉદાહરણ છે હાલમાં સપ્તમી વિભક્તિનું ઉદાહરણ “મધૌ રમતે”
કોયલ વસંતમાં આનંદ માણે છે ભાવમાં સપ્તમી વિભક્તિનું ઉદાહરણ
“ચારિત્ર્યેઽવતિષ્ઠતે” આ સાધુ પોતાના ચારિત્રમાં જ સ્થિર છે. (આમંત્રણે
અષ્ટમી) આમંત્રણ અર્થમાં આઠમી વિભક્તિ હોય છે. (જહા) જેમ કે (હે જુવા-
ણત્તિ!) હે યુવન્! તરુણ! અહીં નામવિચાર પ્રસ્તાવને લીધે પ્રથમા વગેરે
વિભક્ત્યંત નામ જ ગ્રહણ કરવામાં આવ્યાં છે આ પ્રમાણે આઠ પ્રકારની
વિભક્તિઓના લેક્ષ્યી નામ આઠ પ્રકારના હોય છે પ્રથમા વગેરે વિભક્ત્યંત

અથ નવનામ નિર્દિશતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં નવનામે?, નવનામે—(નવ કવચરસા પળ્લતા,
તં જહા—વીરો સિંગારો અબ્ધુઓ ય રોદો ય હોદ્ બોદ્ધવ્વો ।
વેલ્લળઓ વીમચ્છો, હાસો કલુળો પસંતો ય ॥૧॥સૂ૦ ૧૬૯॥

છાયા—અથ કિં તત્ નવ નામ? નવનામ—નવ કાવ્યરસાઃ પ્રજ્ઞસાઃ,
સઘથા—વીરઃ શૃંગારઃ અદ્ભુતશ્ચ રૌદ્રશ્ચ ભવતિ બોદ્ધવ્યઃ । વ્રીડનકો વીમત્સો હાસ્યઃ
કરુણઃ પ્રશાન્તશ્ચ ॥ ૧ ॥સૂ૦ ૧૬૯॥

સે સમસ્તવસ્તુઓં કે કથન કા સંગ્રહ હો જાતા હૈ—અતઃ યહ અષ્ટ-
નામ એસા કહા ગયા હૈ । (સે તં અટ્ટનામે) હસ પ્રકાર યહ અષ્ટ
નામ હૈ । ॥ સૂ૦ ૧૬૮ ॥

અવ સૂત્રકાર નવ નામકા કથન કરતે હૈ—

“સે કિં તં નવનામે?” ઇત્યાદિ ।

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નવ નામે ?) હે ભદન્ત ! વહ નવ પ્રકાર કા
નામ કયા હૈ ?

ઉત્તર—(નવ નામે) નવ નામ હસ પ્રકાર સે હૈ—(નવ કવચરસા પળ્લતા)
કાવ્યં કે જો નૌ રસ હૈ, વે હી નવ નામ રૂપ સે પ્રજ્ઞસ છુપ હૈ । (તં જહા) વે
નૌ રસ યે હૈ—(વીરો સિંગારો, અબ્ધુઓ ય રોદો ય હોદ્ બોદ્ધવ્વો । વેલ્લ-
ળઓ વીમચ્છો હાસો કલુળો પસંતો ય) વીરરસ, શૃંગારરસ, અદ્ભુતરસ
રૌદ્રરસ, વ્રીડનકરસ, વીમત્સરસ, હાસ્યરસ, કરુણરસ, ધૌર પ્રશાન્તરસ ।

નામાષ્ટક સિવાય બીજું નામ નથી એટલા માટે આ નામાષ્ટકથી બધી વસ્તુઓના
સંબંધ થઈ જાય છે. એથી આ અષ્ટનામ આમ કહેવામાં આવ્યું છે (સે તં
અટ્ટનામે) આમ આ આઠનામે છે. ॥સૂ૦ ૧૬૮॥

હવે સૂત્રકાર નવ નામનું કથન કરે છે—

“સે કિં તં નવનામે?” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(સે કિં તં નવનામે ?) હૈ ભદન્ત ! તે નવપ્રકારનું નામ શું છે ?

ઉત્તર—(નવનામે) નવ નામ આ પ્રમાણે છે. (નવ કવચરસા પળ્લતા)
કાવ્યના જે નવ રસો છે તેજ નવ નામથી પ્રજ્ઞા થયેલ છે. (તં જહા) તે નવ
નામે આ પ્રમાણે છે. (વીરો સિંગારો, અબ્ધુઓ ય રોદો ય હોદ્ બોદ્ધવ્વો । વેલ્લ-
ળઓ વીમચ્છો હાસો કલુળો પસંતો ય) વીરરસ, શૃંગારરસ, અદ્ભુતરસ, રૌદ્રરસ,
વ્રીડનકરસ, વીમત્સરસ, હાસ્યરસ, કરુણરસ અને પ્રશાન્તરસ.

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि—

अथ किं तत् नव नाम ? इति शिष्य प्रश्नः । उत्तरयति—नवनाम—नवविधं नवनाम—नवसंख्यकाः काव्यरसाः—कवेः कर्म काव्यम्, रस्यन्ते—अन्तरात्मनाऽनुभूयन्ते इति रसाः, तत्तत्सहकारि कारणसामीप्यात्समुद्भूताश्चित्तोत्कर्षविशेषा इत्यर्थः, उक्तं च—

“बाह्यार्थालम्बनो यस्तु, सूक्ष्मो मानसो भवेत् ।

स भावः कथ्यते सद्भिस्तस्योत्कर्षो रसः स्मृतः ॥” इति॥

—काव्ये समुપનિબદ્ધા રસાઃ કાવ્યરસાઃ પ્રજ્ઞાસાઃ=કથિતાઃ । તાનેવાહ—‘વીરઃ શૃંગારઃ’ इत्यादिना—वीरयति=विक्रमयुक्तं करोति त्यागंतपः—कर्म शत्रुनिग्रहेषु प्रेरयति जनमिति वीरः—उत्तम प्रकृति पुरुष—चरितश्रवणादि हेतु समुद्भूतो दाना-

કવિ કે કર્મકા નામ ‘કાવ્ય’ હૈ । અન્તરાત્મા સે જિનકા અનુભવ કિયા જાતા હૈ ઉનકા નામ રસ હૈ । યે રસ તત્તત્સહકારી કારણોં કી સમીપતા સે ચિત્તમેં જો ઉત્કર્ષ વિશેષ ઉત્પન્ન હોતે હૈં ઉનરૂપ હોતે હૈં । કહાં મો હૈ—“બાહ્યાર્થ इत्यादि—बाह्यार्थ के अवलम्बन से जो मानसिक उल्लास होता है वह ‘भाव’ है । इस भाव का उत्कर्ष रस है । काव्य मे उपनिबद्ध हुए रस काव्यरस शब्द के वाच्यार्थ हैं । जो रस मनुष्य को विक्रम युक्त करता है—अर्थात् त्याग में शत्रुओं के निग्रह करने में प्रेरित करता है—वह वीररस है । तात्पर्य कहने का यह है कि—रस का जो वीર यह विशेषण है वह અન્યરસોં કી અપેક્ષા હસમેં યહી વિશેષતા પ્રકટ કરતા હૈ, કિ હસરસ કે સદ્ભાવ મેં ત્યાગ મેં તપશ્ચરણ મેં, ઓર કર્મરૂપ શત્રુ કે નિગ્રહ કરને મેં વિક્રમયુક્ત આત્મપારિણામ હોતા

કવિકર્મ કાવ્ય કહેવાય છે. અન્તરાત્માથી જે અનુભવાય છે તે રસ કહેવાય છે એ રસોં તત્તત્સહકારી કારણોની સમીપતાથી ચિત્તમાં જે ઉત્કર્ષ વિશેષ ઉત્પન્ન કરે છે તે અનુરૂપ હોય છે કહ્યું પણ છે કે—“बाह्यार्थ इत्यादि—” બાહ્યાર્થના અવલંબનથી જે માનસિક ઉલ્લાસ હોય છે તે ‘ભાવ’ છે. તે ભાવનો ઉત્કર્ષ રસ છે. કાવ્યમાં ઉપનિબદ્ધ થયેલ રસ કાવ્ય રસ શબ્દોનો વાચ્યાર્થ છે જે રસ માણસને વીરત્વપૂર્ણ કરે છે એટલે કે ત્યાગમાં, તપમાં અને કર્મરૂપ શત્રુઓના નિગ્રહ કાર્યમાં પ્રેરિત કરે છે તે વીર રસ છે. તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે કે રસનું જે વીર વિશેષણ છે તે બીજા રસો કરતાં આમાં એજ વિશેષતા પ્રકટ કરે છે કે આ રસના સદ્ભાવમાં, ત્યાગમાં, તપશ્ચરણમાં અને કર્મરૂપ શત્રુનિગ્રહમાં વીરત્વપૂર્ણ આત્મપરિણામ હોય છે. અને

દ્યુત્સાહપ્રકર્ષાત્મકો રસઃ । રસ इति सर्वत्र योजनीयः ॥२॥ શૃંગારઃ-શૃંગ=પ્રા-
ધાન્યમ્ ઇર્યતિ-ગચ્છતીતિ-શૃંગારઃ । અતएव—

“શૃંગાર-હાસ્યકરુણ, -રૌદ્ર-વીર ભયાનકાઃ ।

વીરભક્ત્યાઽદ્ભુતશાન્તાશ્ચ, નવ નાટ્યે રસાઃ સ્મૃતાઃ” ॥

इत्यत्र शृङ्गारस्यैव प्रथममुपादानं कृतम् । अत्र तु वीररसस्य प्रथमत उपादानम् ।
अत्रायं हेतुः-त्यागतपःकर्मनिग्रहगुणो वीररसे भवति । अतोऽस्य सर्वरसप्रधानत्वम् ।
उक्तं च—“त्यागेन कर्ममलमेति लयं समस्तं, त्यागेन निर्मलतरत्वमुपैति जीवः ।
त्यागेन केवलमवाप्य समेति सिद्धिं, त्यागो गुणो गुणशताधिको मतो मे” ॥१॥

है । और वह परिणाम उस मनुष्य को उस ओर बढ़ने के
लिये प्रेरणा देता है । इस प्रकार के परिणाम की-उद्भूति
के कारण उत्तम प्रकृतिवाले सत्पुरुषों के चरित्र श्रवण बगैरह
हैं । इसलिये यह रस दानादिको में उत्साह का प्रकर्ष होने रूप है । रस
शब्द का संबन्ध सर्वत्र वीर, शृंगार आदि के साथ लगा लेना चाहिये
“शृंगप्राधान्यं इर्यति गच्छति इति शृंगारः” जो रस प्रधान रूप से
विषयों की ओर प्रेरित करता है वह रस शृंगार है । इसलिये—“शृंगार
हास्य-करुण” इत्यादि श्लोक में इस शृंगार रसका प्रथम उपादान
किया गया है । परन्तु यहां सूत्र में वीररस का प्रथम पाठ रखा है सो
उसका कारण यह है कि लोग में, तप में एवं कर्मनिग्रह करने में
प्रेरणा देना रूप जो गुण है वह एक इस वीररस में है । इसलिये इसमें
सर्व रसों की अपेक्षा प्रधानता है कहा भी है “त्यागेन इत्यादि”—

તે પરિણામ તે માણસને તે તરફ આગળ વધવામાં પ્રેરણા આપે છે આ જાતના
પરિણામની ઉદ્ભૂતિમાં ઉત્તમ પ્રકૃતિ (સ્વભાવવાળા) સંતોના ચરિત્ર શ્રવણ
વગેરે જ કારણ છે. એટલા માટે આ રસ દાન વગેરેમાં ઉત્સાહના-પ્રકર્ષ
માટે છે વીર, શૃંગાર વગેરે રસોની સાથે પણ રસ શબ્દનો સંબંધ બધો
લગાડવો જોઈએ. (શૃંગ-પ્રાધાન્યં ઇર્યતિ ગચ્છતિ इति शृंगारः-જે રસ પ્રધાનતયા
વિષયો તરફ વાળે છે તે રસ શૃંગાર છે. એથી જ “શૃંગારહાસ્યકરુણ”
“વગેરે શ્લોકમાં આ શૃંગાર રસનું સૌથી પહેલા શ્રદ્ધણ કરવામાં આવ્યું
છે. પણ અહીં સૂત્રમાં વીરરસનો પાઠ પહેલાં રાખવામાં આવ્યો છે. તેનું
કારણ એ છે કે લોકોને તપ અને કર્મનિગ્રહ કરવામાં જે પ્રેરણાત્મક શુદ્ધ
હોય છે તે આ રસ વીરરસમાં જ હોય છે. એટલા માટે આમાં બધા
રસોની અપેક્ષાએ પ્રાધાન્ય છે. કહ્યું પણ છે કે “त्यागेन इत्यादि” ત્યાગથી

इति, 'परलोकातिगं धाम तपः श्रुतम्' इति च । तपः श्रुतं चे त्यपि मोक्षप्रापकमि
त्यर्थः अतोऽत्र वीररसस्य प्रथममुपादानम् ॥२॥ अद्भुतः—श्रुतं शिल्पं त्यागतपः
शौर्यकर्मादि वा यस्य सकलजनातिगमस्ति, तदेवंविधमपूर्वं किमपि वस्तु अद्भुतमि-
त्युच्यते । तद्दर्शनश्रवणजो रसोऽप्युपचाराद् विस्मयरूपोऽद्भुतः ॥३॥ रौद्रः रोद-
यति=अतिदारुणतया अश्रूणि मोचयतीति रौद्रम्-शत्रुजन-महारण्य-गाढतिमि-
रादि, तद्दर्शनाद्युद्भवो विकृताध्यवसायरूपो रसोऽपि रौद्रः ॥४॥ व्रीडयति-

ત્યાગ સે કર્મરૂપ મૈલ વિલય-વિનાશ-કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ, ત્યાગ સે જીવ
નિર્મલતા કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ, ત્યાગ સે હી કેવલજ્ઞાન કો પાકર કે આત્મા
સિદ્ધિ કો પાતા હૈ । ફસલિયે સૈંકડોં ગુણો સે અધિક એક ત્યાગ ગુણ
માના ગયા હૈ । તથા—"પરલોકાતિગં ધામ તપઃ શ્રુતમ્" અર્થાત્ તપ
ઔર શ્રુત યે બી મોક્ષ કો પ્રાપ્ત કરાનેવાલે હૈ " ફસલિયે યહાં સૂત્ર મેં
વીર રસ કા સર્વ પ્રથમ ઉપાદાન કિયા ગયા હૈ । શ્રુત, શિલ્પ, અથવા
ત્યાગ, તપ, શૌર્ય કર્મ આદિ જિસકે સકલ જનોં કી અપેક્ષા અધિક હૈ
ફસ પ્રકાર કી વહ કોઈ બી અપૂર્વ વસ્તુ અદ્ભુત કહલાતી હૈ । ઁસ
અપૂર્વવસ્તુ કે દર્શન સે યા શ્રવણ સે જો રસ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, વહ રસ
બી ઉપચાર સે 'અદ્ભુત રસ' કહલાતા હૈ । યહ વિસ્મય રૂપ હોતા હૈ ।
જો અતિદારુણ હોને કે કારણ રુલાતા હૈ—અર્થાત્ અશ્રુઓં કો નિકલ-
વાતા હૈ વહ 'રૌદ્ર' હૈ । શત્રુ, જન, મહાઅરણ્ય ગાઢતિમિર આદિ રૌદ્ર
હૈ । ફનકે દર્શન આદિ સે અદ્ભુત હુઆ વિકૃત અધ્યવસાય-પરિણામ

કર્મરૂપ માલિન્ય વિલય-વિનાશ-ને પામે છે. ત્યાગથી જીવ નિર્મળ થાય છે.
ફક્ત ત્યાગથી જ કેવલજ્ઞાનને મેળવીને આત્મા સિદ્ધિ પામે છે. એટલા
માટે હજારો ગુણો કરતાં પણ વધારે પડતો ત્યાગગુણ મનાય છે. તેમજ
" પરલોકાતિગં ધામ તપઃશ્રુતમ્ " એટલે કે તપ અને શ્રુત પણ મોક્ષ આપ-
નારા છે એથી અહીં સૂત્રમાં વીરરસનું સર્વપ્રથમ ઉપાદાન કરવામાં આવ્યું
છે શ્રુત, શિલ્પ, અથવા ત્યાગ, તપ શૌર્ય કર્મ વગેરે જેના સૌ કરતાં વધારે
છે, એવી ગમે તે વસ્તુ હોય-તો તે પણ અદ્ભુત કહેવામાં આવશે જ
એ પૂર્વ વસ્તુના દર્શનથી કે શ્રવણથી જે રસ ઉદ્ભવે છે તે રસ પણ ઉપ-
ચારથી અદ્ભુત રસ કહેવાય છે. આ વિસ્મય રૂપ હોય છે. જે અતિદારુણ
હોવા બદલ રડાવે છે એટલે કે અશ્રુ વહેવડાવે છે તે રૌદ્ર છે. શત્રુઓ,
મહારણ્ય, ગાઢતિમિર, વગેરે રૌદ્ર છે. એમના દર્શન વગેરેથી ઉદ્ભવેલ
વિકૃત અધ્યવસાય-પરિણામ રૂપ રસ પણ રૌદ્ર છે જે લત્તજનક છે તે

લજ્જામુત્પાદયતીતિ ત્રીઢનકઃ—લજ્જાસ્પદવસ્તુદર્શનાદિ—જન્યો મનોગ્લાનાદિ સ્વ-
રૂપોઽયં રસઃ । અસ્ય સ્થાનેઽન્યત્ર ભયાનકો રસઃ પ્રોક્તઃ । અયં हि—ભયजनक
संग्रामादि दर्शनेन जायते । अस्य रौद्रसेऽन्तर्भावनादत्र नायं पृथगुक्तः ॥ ५ ॥
वीभत्सः—शुकशोणितोच्चारप्रस्रवणाद्यनिष्ठोद्वेगजनकवस्तुदर्शनश्रवणादिजो जुगु-
प्साप्रकर्षो रसो वीभत्सः ॥ ६ ॥ हास्यः—हास्यास्पदविकृताऽसम्बद्धपरवचनवेषाल-
ङ्कारादिश्रवणदर्शनजो मनःप्रकर्षादि चेष्टात्मको रसो हास्यरसः ॥ ७ ॥ करुणः—
प्रियविषयोगादि दुःखहेतुसमुद्भवः शोकप्रकर्षस्वरूपो रसः करुणरसः । कुत्सितं

રૂપ રસ બી રૌદ્ર છે । જો લજ્જા કો ઉત્પન્ન કરતા છે વહ 'ત્રીઢનક' છે । યહ રસ લજ્જાસ્પદ વસ્તુ કે દેખને આદિ સે ઉત્પન્ન મનોગ્લાનિ આદિ રૂપ હોતા છે । હસકે સ્થાન મેં દૂસરી જગહ ભયાનક રસ કહા ગયા છે । યહ ભય જનક સંગ્રામ આદિ કે દેખને સે ઉત્પન્ન હોતા છે । હસકા અન્તર્ભાવ રૌદ્ર રસ મેં કરલિયા છે, હસલિયે ઉસે યહાં પૃથક્ નહીં કહા ગયા છે । શુક, શોણિત, ઉચ્ચાર-વિષ્ટા, પ્રસ્રવણ-પેશાબ, મૂત્ર, આદિ જો અનિષ્ટ એવં ઉદ્વેગ જનક વસ્તુએં છે, ઉનકે દેખને સે, સુનને આદિ સે જો જુગુપ્સા કા પ્રકર્ષ હોતા છે વહી જુગુપ્સા પ્રકર્ષ વિભત્સ રસ કહલાતા છે । હાસ્યાસ્પદ, વિકૃત એવં અસંબદ્ધ એસે દૂસરો કે વચન સુનને સે, વેષ અલંકાર આદિ કે દેખને સે જો મનપ્રકર્ષ આદિ કેચેષ્ટાત્મક રસ હોતા છે વહ 'હાસ્ય રસ' છે । પ્રિય પદાર્થ કે વિયોગ સે જન્ય દુઃખ આદિ હેતુ સે ઉદ્ભૂત હુઆ શોક પ્રકર્ષ સ્વરૂપ જો રસ છે વહ 'કરુણરસ' છે । જીસસે પ્રાણી વુરી તરહ સે રોતા છે અથવા જિસકે

ત્રીઢનક છે. આ રસ લજ્જાજનક વસ્તુ જોવા વગેરેથી ઉત્પન્ન થયેલ મનોગ્લાનિ વગેરે રૂપ હોય છે. એના સ્થાને બીજા જગ્યાએ ભયાનક રસ કહેવામાં આવ્યો છે. આ ભયાનક રસ સંગ્રામ વગેરે જોવાથી ઉત્પન્ન થાય છે એનો અન્તર્ભાવ રૌદ્ર રસમાં જ કરવામાં આવ્યો છે. એથી આહી- પૃથક્ કથન કર્યું નથી શુક, શોણિત, ઉચ્ચાર-મલવિષ્ટા, પ્રસ્રવણ-મૂત્ર વગેરે જે અનિષ્ટ અને ઉદ્વેગજનક વસ્તુઓ છે એમને જોવાથી, સાંભળવા વગેરેથી જે જુગુપ્સાત્મક ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે તેજ જુગુપ્સાપ્રકર્ષ રસ બીભત્સ રસ કહેવાય છે. હાસ્યજનક, વિકૃત અને અસંબદ્ધ એવા બીજા ભાણુસોના વચ્ચેના સાંભળવાથી વેષ અલંકાર વગેરે જોવાથી જે મનપ્રકર્ષ વગેરે ચેષ્ટાત્મક રસ હોય છે તે હાસ્ય રસ છે. પ્રિયપદાર્થના વિયોગથી જન્ય દુઃખ વગેરે હેતુથી ઉદ્ભૂત થયેલ શોક પ્રકર્ષ સ્વરૂપ જ રસ છે તે કરુણ રસ છે જેનાથી પ્રાણી વાચકર રીતે રડે છે અથવા

રૈત્યનેનેતિ કરુણાસ્પદત્વાદ્ વા કરુણઃ, इत्युभयविधाऽपि करुणशब्दव्युत्पत्ति-
र्बोध्या ॥८॥ प्रशान्तःपरमगुरुवचःश्रवणादि हेतुसमुद्भव उपशमप्रकर्षात्मको रसः
प्रशान्त रसः । प्रशाम्यति-क्रोधादिजनितचित्तविक्षेपादिरहितो भवत्यनेनेति
प्रशान्तशब्दव्युत्पत्तिर्बोध्या ॥ ९ ॥ सू० १६९ ॥

एतानेव रसान् लक्षणादि द्वारेण विवक्षुः प्रथमं तावद् वीररसं लक्षणनिर्देश-
पुरस्सरं निरूपयति—

मूलम्—तत्थ परिच्चायंमि य, तवचरणसत्तुजणविणासे
य । अणणुसयधिइपरकम—लिंगो वीरो रसो होइ ॥१॥ वीरो रसो
जहा—सो नाम महावीरो, जो रज्जं पयहिऊणपठवइओ । काम-
कोहमहासत्तुपक्खनिग्घायणं कुणइ ॥२॥ सू० १७० ॥

छाया—तत्र—परित्यागे च तपश्चरणे शत्रुजनविनाशे च । अननुशयधृतिपराक्रम-
कारण प्राणी करुणा का आस्पद (स्थान) बनता है, वह रस ‘करुणरस’
है । करुणशब्द की दोनों प्रकार की यह व्युत्पत्ति संगत जाननी चाहिये ।
परमगुरुओं के वचन श्रवणादिरूप हेतु से उद्भूत जो उपशम की प्रक-
र्षतारूपरस है, वह ‘प्रशान्तरस’ है । जिसके द्वारा प्राणी क्रोध आदिसे
जनित—चित्त विक्षेप आदि से विहीन बन जाता है ऐसी यह प्रशान्त
शब्द की व्युत्पत्ति है । ॥ सू० १६९ ॥

अब सूत्रकार इन्हीं रसों को लक्षणादि द्वारा कहने की इच्छा से
सर्व प्रथम लक्षण निर्देश पुरस्सर वीररस का कथन करते हैं ।

“तत्थ परिच्चायंमि” इत्यादि ।

शब्दार्थ—(तत्थ) इन नवरसों के बीच में (परिच्चायंमि य तव चरण-

જેનાથી પ્રાણી કંઈપણ પૂર્ણ થઈ જાય છે તે રસ કંઈજ રસ છે. કંઈજ શબ્દની
આ બંને પ્રકારની વ્યુત્પત્તિ યોગ્ય જ કહેવાય પરમગુરુજનોના વચન શ્રવણ
વગેરે રૂપ હેતુથી ઉદ્ભૂત જે ઉપશમની પ્રકર્ષતા રૂપ રસ છે તે પ્રશાન્ત રસ
છે. જેના વડે પ્રાણી ક્રોધ વગેરેથી ઉદ્ભવેલ ચિત્તવિક્ષેપાદિથી વિહીન થઈ
જાય છે પ્રશાન્ત શબ્દની આ વ્યુત્પત્તિ છે. ॥સૂ.૦૧૬૯॥

હવે સૂત્રકાર એજ રસોને લક્ષણો વગેરે દ્વારા સ્પષ્ટ કરવાની અપેક્ષાથી
અહીં ‘સર્વ પ્રથમ વીર રસનું કથન લક્ષણ નિર્દેશ પુરસ્સર કરે છે—

“તત્થ પરિચ્ચાયંમિ” ઇત્યાદિ—

શબ્દાર્થ—(તત્થ) આ નવ રસોમાં (પરિચ્ચાયંમિ ય તવચરણસત્તુજણ

લિંગો વીરો રસો ભવતિ ॥૧॥ વીરો રસો યથા-સ નામ મહાવીરો યો રાજ્યં પ્રહાય
પ્રવ્રજિતઃ । કામક્રોધમહાશત્રુપક્ષનિર્વાતનં કરોતિ ॥૨॥ સૂ૦ ॥૧૭૦ ॥

ટીકા—‘તત્થ’ इत्यादि—

તત્ર તેષુ નવ રસેષુ મધ્યે પરિત્યાગે ચ તપશ્ચરણે ચ શત્રુજનવિનાશે અનનુ-
શયધૃતિપરાક્રમલિંગો વીરો રસો ભવતિ । અયં ભાવઃ—પરિત્યાગે—દાને અનનુશય-
લિંગઃ—અનુશયઃ—ગર્વઃ પશ્ચાત્તાપો વા, સ લિંગ્ઃ=લક્ષણં यस્ય સોઽનુશયલિંગઃ, ન
અનુશયલિંગઃ અનનુશયલિંગઃ—દાનં દત્વાઽહંકારં પશ્ચાત્તાપં વા ન કરોતિ તદા વીરો
રસો વોદ્યઃ । તપશ્ચરણે =તપસિ ધૃતલિંગઃ=ધૈર્યચિહ્નઃતપશ્ચર્યાયાં ધૈર્યમેવ કરોતિ
ન પશ્ચાત્તાપં તદા વીરો રસો ભવતિ । શત્રુવિનાશે=શત્રૂણામુન્મૂલને પરાક્રમલિંગઃ=

સત્તુજનવિનાસેય) પરિત્યાગ કરને મેં, તપશ્ચરણ કરને મેં ઓર શત્રુજન
કે વિનાશ કરને મેં અણણુસયધિપરક્રમ-લિંગો વીરરસો હોઈ) અન-
નુશય ધૃતિ, પરાક્રમ इन चिन्हों वाला वीररस होता है । अनुशय
शब्द का अर्थ गर्व अथवा पश्चात्ताप है । यह जिसका लक्षण है,
वह अनुशयलिंग है यह लिंग जिसमें नहीं होता वह
अननुशय लिंग है दान देकर के जो अहंकार या पश्चात्ताप नहीं
करता है, उससमय वीररस होता है । तपश्चर्या करने में जो धैर्यरखता
है—पश्चात्ताप नहीं करता है वह वीररस का काम है । “शत्रुजन के
विनाश करने में जो पराक्रमका अवलम्बन करता है वैक्लव्य-विकलता
कमजोरी हृदय में नहीं लाता है, यह सब वीररस के द्वारा होता है ।
इन अननुशय, धैर्य और पराक्रम लक्षणों से यह जाना जाता है कि
‘यह मनुष्य वीररस में वर्तमान है । इसीप्रकार से अन्यत्र भी समझना

विनासे य) परित्याग करवाभां, तपश्चरण करवाभां, अने शत्रुजना विनाश
करवाभां (अणणुसयधिपरकमलिंगो वीररसो होइ) अननुशय, धृति, परा-
क्रम आ लक्षणोवाणो रस वीररस कहेवाय छे. अनुशय शब्दने।
अर्थ गर्व—अथवा पश्चात्ताप छे. आ जेनुं लक्षण छे, ते अनुशय लिंग
छे. जे जेभां होतो नथी. ते अननुशय लिंग छे. दान आपीने जे
अहंकार के पश्चात्ताप करतो नथी ते वीररस कहेवाय छे. तपश्चर्याभां
जे धैर्य राखे छे—पश्चात्ताप करतो नथी ते वीररसने लीधे ज. शत्रुजनना
विनाशार्थे जे पराक्रम भतावे छे वैक्लव्य—विकलता—नभणापणुं भतावतो नथी ते
वीर रसने लीधे ज. आ सवे अननुशय, धैर्य अने पराक्रमना लक्षणोथी अभ
जणाय छे के ‘आ भाणुस वीररस युक्त छे.’ आ प्रमाणे जीजे पणु समजवुं लेधजे.

પરાક્રમચિહ્નઃ પરક્રમતે ન તુ વૈકલ્પ્યમવલમ્બતે તદા ચ વીરો રસો ભવતિ । एतस्मिन्-
મિલ્લેક્ષણે જ્ઞાતે યદયં જનો વીરે રસે વર્તતે ઇતિ । एवमन्यत्रापि बोध्यम् । सम्प्रति
ઉદાહરણં દર્શયિતુમાહ —વીરો રસો યથા યથા=યેન પ્રકારેણ વીરો રસો જ્ઞાયતે-
તથોચ્યતેऽનુપદવક્ષ્યમાણયા ગાથયા ‘સો નામ’ ઇત્યાદિ રૂપયા । यो राज्यं परि-
ત્યज्य प्रव्रजितः सन् कामक्रोधरूपमहाशत्रुपक्षस्य निर्वातनं=विनाशं करोति स
નામ=નિશ્ચયેન મહાવીરો ભવતિ । वीररसे यथा पुरुषचेष्टाप्रतिपाद्यते तथैवैवंविधेषु
કાવ્યેષુ પુરુષચેષ્ટાપ્રતિપાદનાત્ વીરો રસો બોધ્યઃ । तथा चात्र मोक्षप्रतिपादके
પ્રસ્તુતશાસ્ત્રે મહાપુરુષવિજેતવ્યકામક્રોધાદિભાવશત્રુજયેનૈવ વીરરસોદાહરણમ્ । मा-

चाहिये । अब सूत्रकार (वीरों रसों जहा) वीररस जिस प्रकार के दृष्टान्त
સે જાના જાતા હૈ, उस प्रकार के दृष्टान्त को इस गाथा द्वारा प्रकट
करते हैं—(सो नाम महावीरों जो रज्जं पयहिऊण पव्वहओ, काम कोह-
महासत्तुपक्खनिग्घायणं कुणइ) ‘जो राज्य का परित्याग करके
દીક્ષિત હોતા હૈ ઓર દીક્ષિત હોકર જો-કામ ક્રોધ રૂપ
મહાશત્રુ કે પક્ષકા વિનાશ કરતા-હૈં વહ નિશ્ચય સે મહાવીર હોતા હૈ ।
वीररस में जैसी पुरुष चेष्टा कही जाती है वैसी ही पुरुष चेष्टा इस
પ્રકાર કે કાવ્યોં મેં પ્રકટ કી જાતી હૈ અર્થાત્ વર્ણિત કી જાતી હૈ—इस-
लिये वहां वीररस जानना चाहिये । यह प्रस्तुत शास्त्र मोक्ष का प्रति-
पादन करने वाला है । इसलिये इसमें महा पुरुष द्वारा विजेतव्य जो
કામ ક્રોધ આદિ ભાવશત્રુ હૈં, उनके जीतने से ही वीररस का उदा-
हरण कहा गया है । साधारण मनुष्यद्वारा साध्य—ऐसे संसार का कारण

હવે સૂત્રકાર આ (વીરો રસો જહા) વીરરસ જે પ્રકારના દૃષ્ટા-
ન્તથી જાણવામાં આવે છે તે પ્રકારના દૃષ્ટાન્તને આ ગાથા વડે
સ્પષ્ટ કરે છે—(સો નામ મહાવીરો જો રજ્જં પયહિઊણ પવ્વહઓ, કામકોહ
મહાસત્તુપક્કલનિગ્ધાયણં કુણઇ) ‘જે રાજ્યના વૈભવને ત્યજીને દીક્ષા ગ્રહણ
કરે છે અને દીક્ષિત થઈને જે કામ-ક્રોધ રૂપ મહાશત્રુનાં પક્ષને વિનષ્ટ કરે
છે, તે ચોક્કસ મહાવીર હોય છે. વીરરસમાં જેવી પુરુષ-ચેષ્ટા કહેવામાં આવે
છે તેવી પુરુષચેષ્ટા આ જાતના કાવ્યોમાં પ્રકટ કરવામાં આવે છે એટલે કે
વર્ણવવામાં આવે છે. એથી ત્યાં વીરરસ જાણવો જોઈએ આ પ્રસ્તુતશાસ્ત્ર
મોક્ષપ્રતિપાદક છે. એટલા માટે આ શાસ્ત્રમાં મહાપુરુષ વડે વિજેતવ્ય કામ,
ક્રોધ વગેરે શત્રુભાવો છે, તેમને જીતવાના જ વીરરસના ઉદાહરણો પ્રસ્તુત
માનવામાં આવ્યાં છે. સામાન્ય માણસો વડે સાધ્ય એવા સંસારના કારણભૂત

કૃતમનુજસાધ્યસંસારકારણદ્રવ્યશત્રુનિગ્રહસ્યાપ્રસ્તુતત્વાન્ન તથાનિધોદાહરણમન્ન
દત્તમ્ । એવમન્યત્રાપિ બોધ્યમ્ ॥સૂ૦ ૧૭૦॥

અથ દ્વિતીયં શૃંગારરસં સલક્ષણં નિરૂપયતિ—

મૂલમ્—સિંગારો નામ રસો રતિસંજોગાભિલાસસંજનણો ।
મંડળવિલાસવિવોયહાસલીલારમણલિંગો ॥૪॥ સિંગારો રસો
જહા મધુરવિલાસસલિયં હિયુઝમ્માદનકરં જુવાણાણં । સામા
સદ્દુદામં દાણ્તી મેહલાદામં ॥૫॥ ધી ધીમં સિંગારે, સાહૂર્ણ
જો ઉવજિયવો ય । મોક્ષગિહઅગ્ગલા સો, નાયરિયવો ય
મુણિહિ હમો ॥૬॥સૂ૦ ૧૭૧॥

છાયા— શૃંગારો નામરસો રતિસંયોગાભિલાષસંજનનઃ । મંડળવિલાસ વિ-
વ્વોક હાસ્યલીલારમણલિંગોઃ ॥૪॥ શૃંગારો રસો યથા—મધુરવિલાસસુલલિતં હૃદ-
યોન્માદનકરં યુનામ્ । શ્યામા શબ્દોદામં દર્શયતિ મેહલાદામ ॥૫॥ ધિગ્ધિગ્ ઇમં
શૃંગારં, સાધૂનાં યસ્તુ વર્જિતવ્યશ્ચ । મોક્ષગૃહાર્ગલા સઃ, નાચરિતવ્યશ્ચ મુનિ-
મિરયમ્ ॥૬॥ સૂ૦ ૧૭૧॥

ટીકા —‘સિંગારો’ इत्यादि—

શૃંગારો નામ રસો હિ—રતિસંયોગાભિલાષસંજનનઃ—રતિઃ રતિકારણાનિ
લલનાદીનિ ગૃહ્યન્તે કાર્યે કારણોપચારાત્, તત્સંયોગાભિલાષસ્ય—લલનાભિઃ સહ
શ્રુત જો દ્રવ્ય શત્રુ કા નિગ્રહ કરના હૈ વહ યહાં અપ્રસ્તુત હૈ । ફસલિયે
સૂત્રકારને ફસ પ્રકાર કા ઉદાહરણ યહાં નહીં દિયા હૈ ફસી પ્રકાર સે
અન્યત્ર ખી જાનના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧૭૦ ॥

અથ સૂત્રકાર લક્ષણ સહિત શૃંગાર રસ કા નિરૂપણ કરતે હૈ—
“સિંગારો નામ રસો” इत्यादि ।

શબ્દાર્થ— (સિંગારો નામ રસો રતિસંજોગાભિલાસ—સંજનણો)
શૃંગાર નામક રસ રતિસંયોગાભિલાષ જનક હોતા હૈ । રતિ સે

જે દ્રવ્યશત્રુનું દમન કરવું તે અહીં અપ્રસ્તુત છે. એથી જ સૂત્રકારે આ નોંધવું
ઉદાહરણ અહીં આપ્યું નથી આ પ્રમાણે ખીજે પણ બાણવું જોઈએ. ॥સૂ૦ ૧૭૦॥

હવે સૂત્રકાર લક્ષણસહિત શૃંગારરસનું નિરૂપણ કરે છે—

“સિંગારો નામ રસો” इत्यादि—

શબ્દાર્થ—(સિંગારો નામ રસો રતિસંજોગાભિલાસસંજનણો) શૃંગાર રસ
રતિસંયોગાભિલાષજનક હોય છે. અહીં રતિથી કાર્યમાં કારણના ઉપચારથી

સક્ષમેચ્છાયાઃ સંજનનઃ=સમુત્પાદકઃ, તથાચ મण्डनविलासविब्वोकहास्यरमण-
लिङ्गः-मण्डनम्-अलङ्कारैर्गात्रालङ्करणम्, विलासः-प्रियसमीपगमने यः स्थानास-
नगमनविब्वोकितेषु विकारोऽकस्माच्च क्रोधस्मितचमत्कारमुखविक्रवनं स विलासः,
विब्वोकः=अभिमतप्राप्तौपि गर्वादनादरः, सापराधस्य स्रक्चन्दनादिना संयमनं
ताडनं च, हास्यम्=प्रतीकार्यम्, लीला=सकामगमनभाषितादि रमणीयचेष्टा,
अलब्धप्रियसमागमया स्त्रिया स्वचित्तविनोदार्थं प्रियस्य या वेषगतिदृष्टिदृष्टितम-
णितैरनुकृतिः क्रियते सा वा लीला, रमणं=क्रीडनम्, एतानि लिङ्गं-चिह्नं यस्य
स तथाविधो भवति । उदाहरणमाह-शृङ्गारो रसो यथा-श्यामा-पोडशवर्षदे-

यहां પર કાર્ય મેં કારણ કે ઉપચાર સે રતિ કે કારણભૂત જો
લલના આદિ પદાર્થ હૈં, વે ગ્રહણ કિયે ગયે હૈં । उनके साथ संगम की
इच्छा का जनक यह शृङ्गार रस होता है । (मंडणाविलासविब्वोय,
हास, लीलारमणलिंगो) अलंकारों से शरीर को सज्जित=अलंकृत,
करना इसका नाम 'मण्डन' है । प्रिय के समीप जाने में जो स्थान,
आसन, गमन, एवं विलोकन में विकार और अकस्मात् क्रोध, स्मित,
चमत्कार, मुख विक्रवन होता है, वह विलास है । अभिमत की प्राप्ति
में भी गर्व (अहंकार) से अनादर, करना और अपराधसहित का
स्रक-माला चंदन आदि से संयमन करना, ताडन करना, यह विब्वोक
है । हास्य-हँसना । सकाम गमन एवं भाषित आदि जो रमणीय चेष्टाएँ
है, वे 'लीला' हैं । अथवा जिस स्त्री को प्रिय का समागम अलब्ध हो
रहा है, वह जो अपने चित्त को विनोदित करने के लिये प्रिय के वेष

રતિના કારણ જે લલના વગેરે પદાર્થો છે તેમનું અહણ કરવામાં આવ્યું છે.
તેમની સાથે સંગમની ઇચ્છાને ઉદ્ભાવક આ શૃંગાર રસ હોય છે. (મંડન-
વિલાસવિબ્વોય, હાસ, લીલા રમણલિંગો) અલંકારોથી શરીરને સુસજ્જિત-
અલંકૃત-કરવું તેનું નામ 'મંડન' છે. પ્રિયની પાસે જતાં જે સ્થાન,
આસન, ગમન અને વિલોકનમાં વિકાર તેમજ ઓચિંતા-ક્રોધ, સ્મિત, ચમ-
ત્કાર, મુખવિક્રલવન હોય છે, તે વિલાસ છે અભિમતની પ્રાપ્તિમાં પણ ગર્વ
(અહંકાર)થી અનાદર કરવો, તેમજ અપરાધીનું સ્રક-માળા-ચંદન વગેરેથી
સંયમન કરવું, તાડન કરવું વિખેાક છે હાસ્ય-હસવું સકામ ગમન અને
ભાષિત જે રમણીય ચેષ્ટાઓ છે, તે 'લીલા' છે. અથવા જે સ્ત્રી પ્રિયસમા-
ગમ મેળવી શકી નહીં તેવી સ્ત્રી પોતાના ચિત્તને પ્રસન્ન કરવા માટે પ્રિયના
વેષનું ગતિનું દૃષ્ટિનું, હાસ્યનું, વાણીનું અનુકરણ કરે છે, તે 'લીલા' છે.

શીયા-સ્ત્રી, 'શ્યામા ષોડશવાર્ષિકી' इत्यभिधानात्, शब्दोद्दाम-शब्दउद्दामा= प्रचुरो यत्र तत्-किङ्किणी स्वनमुखरम् 'उद्दाम' शब्दस्य परनिपात आर्षत्वात्, अतः एवं युनां=तरुणानां हृदयोन्मादकरम् प्रबलस्मरप्रकटीकरणम् हृदयोन्मत्तता विधायकं स्वकीयं मेखलादाम=कटिसूत्रं मधुरविलाससुललितम्-मधुरैः=कामिजनहृदयाह्लादकतया माधुर्यमुपगतैः विलासैः सकामचेष्टाविशेषैः सुललितम्=अतिशयमनोहारि यथास्यात्तथा दर्शयति । शृङ्गारप्रधानचेष्टाप्रतिपादनादयं शृङ्गारो रसः,

का, गति का, दृष्टि का, हास्य का, बोली का अनुकरण करती है, वह 'लीला' है । क्रीडा करना इसका नाम रमण है । इस शृङ्गार रस के मंडन, विलास, विन्धोक, हास्य, लीला और रमण ये चिह्न हैं ।

अब सूत्रकार (सिंगारो रसो जहा) यह शृङ्गार रस जिस प्रकार से जाना जाता है, उस प्रकार को इस गाथा द्वारा प्रकट करते हैं—(सामा) “श्यामा षोडशवार्षिकी” इस कथनानुसार कोई षोडशवर्षदेशीया—सोलह वर्ष की अवस्था वाली तरुण वयस्का-स्त्री (सहुद्दामं) क्षુદ્રघंटिकाओं के शब्द से मुखरित अतएव (जुवाणाणं) युवा पुरुषों के (हियउम्मादणकरं) हृदय को प्रबलस्मरकी पीड़ा उत्पन्न करने से उन्मत्त करने वाले ऐसे (मेहलादामं) अपने कटिसूत्र को (मधुरविलाससुललियं) कामिजनों के हृदय को आह्लादक होने के कारण मधुर लगने वाले विलासों-सकाम चेष्टा विशेषों-से अतिशय मनोहारी जैसे वह होता है उस प्रकार से (दाएती) दिखलाते हैं इस शृंगाररस में शृंगारप्रधान चेष्टाओं का प्रतिपादन होता है इसलिये इसे 'शृंगाररस'

ક્રીડા કરવી તે રમણ કહેવાય છે મંડન, વિલાસ, વિન્ધોક, હાસ્ય, લીલા તેમજ રમણ આ સર્વે શૃંગાર રસના ચિહ્નો છે.

હવે સૂત્રકાર (સિંગારો રસો જહા) શૃંગારરસ 'જેનાથી જણાય છે તેનું આ ગાથા વડે કથન કરે છે. (સામા) “શ્યામા ‘ષોડશવાર્ષિકી’” આ કથન મુજબ કોઈ સોળ વર્ષની અવસ્થાવાળી તરુણવયસ્કા-સ્ત્રી (સહુદ્દામં) ક્ષુદ્રઘંટિકાઓથી મુખરિત તેથી (જુવાણાણં) યુવકોના (હિયઉમ્માદણકરં) હૃદયોને પ્રબલતમ સ્મર પીડથી યુક્ત કરીને ઉન્મત્ત કરનાર (મેહલા દામં) પોતાના કટિ-સૂત્રને (મધુરવિલાસસુલલિયં) કામુકોના હૃદયને આહ્લાદક હોવા બદલ મધુર લાગે તેવા વિલાસો-સકામ ચેષ્ટા વિશેષોથી અતિશય મનોહારી લાગે તેમ (દાણતી) તેને બતાવે છે. આ શૃંગાર રસમાં શૃંગાર પ્રધાન ચેષ્ટાઓનું પ્રતિપાદન થાય છે એથી આને શૃંગાર રસ કહેવામાં આવે છે. (ધી ધીમં

इति बोध्यम् ॥ इमं = पूर्वोक्तस्वरूपं शृङ्गारं = शृङ्गाररसं धिग् धिग् = धिगस्तु यस्तु-
साधूनां = सर्वविरतिमतां मुनीनां वर्जितव्यः । स शृङ्गारः मोक्षमार्गला = मोक्षद्वार-
स्यागलाभूतोऽतोऽसौ शृङ्गाररसः मुनिभिर्नावरितव्यः = न सेवनीयः ॥ ६ ॥ सू० १७१ ॥

अथ तृतीयमद्भुतरसं सलक्षणमाह—

मूलम्—विम्हयकरो अपुव्वो, अनुभूयपुव्वो य जो रसो होई ।
हरिसविसा उप्पत्ति,—लक्खणो अब्भुओ नाम ॥ ६ ॥ अब्भुओ
रसो जहा—अब्भुयतरमिहएत्तो अन्नं किं अत्थि जीवलोगंमि ।
जं जिणवयणे अत्था तिकालजुत्ता मुणिज्जंति ? ॥ ७ ॥ सू० १७२ ॥

छाया—विस्मयकरः अपूर्वः अनुभूतपूर्वश्च यो रसो भवति । हर्षविपादोत्प-
त्तिलक्षणः—अद्भुतो नाम ॥ अद्भुतो रसो यथा—अद्भुततरमिह एतस्मात् अन्यत्
किमस्ति जीवलोके । यत् जिनवचने अर्थाः त्रिकालयुक्ता ज्ञायन्ते ॥ सू० १७२ ॥

टीका—‘विम्हयकरो’ इत्यादि—

अपूर्वः = अननुभूतपूर्वः, अनुभूतपूर्वः—पूर्वमनुभूतो वा विस्मयकरः—कस्मि-
श्चिदद्भुते पदार्थे दृष्टे यदाश्चर्यं जायते, अतः स पदार्थो विस्मयकर उच्यते,

कहा है । (धी धीमं शृंगारं) इसपूर्वोक्त स्वरूपवाले शृंगाररस—को धिक्कार
हो धिक्कार हो (जो उ) क्योंकि यह (साहूणं) साधुजनों को (वज्जियव्वो)
छोड़ने योग्य कहा गया है । कारण इसका यह है कि यह (मोक्खगिह
अगलाओ) मोक्ष रूपी घरकी अगला रूप है । अतः (मुणिहि इमो नाय-
रियव्वो) मुनि जनों को इसका सेवन नहीं करना चाहिये ॥ सू० १७१ ॥

अब सूत्रकार लक्षणनिर्देश पुरस्सर तीसरे अद्भुत रस का कथन
करते हैं ।—“विम्हयकरो अपुव्वो अनुभूयपुव्वो” इत्यादि ।

शब्दार्थ—(अपुव्व) पूर्व में कभी अनुभव में नहीं आये अथवा (अनु-

सिगार) आ उपरोक्त स्वरूपवाला शृंगार रसने धिक्कार छे, धिक्कार छे.
(जो उ) केम के ओ (साहूणं) साधु जनोने सर्व विरति संपन्न मुनिजनोना
भाटे (विवज्जियव्वो) त्याज्य छोड़वाभां आव्यो छे. केम के आ (मोक्खगिह-
अगलाओ) मोक्षरूपी घरनी अगला छे. ओथी (मुणिहि इमो नायरियव्वो)
मुनिजनो आ रसजुं सेवन करे नही. ॥ सू० १७१ ॥

इसे सूत्रकार लक्षण सहित त्रीन अद्भुत रसजुं कथन करे छे—

“विम्हयकरो अपुव्वो अनुभूयपुव्वो” इत्यादि—

शब्दार्थ—(अपुव्व) पूर्व के छे पणु दिवसे न अनुभवेल अथवा ते।

તદર્શનોદ્ભવો રસોઽપિ વિસ્મયકરો बोध्यः एतादृशो यो रसो भवति स हर्षविषा
दोत्पत्तिलक्षणः आश्चर्यमये शुभे वस्तुनि दृष्टे हर्षोत्पत्तिः, तथैवाशुभे वस्तुनि दृष्टे
विषादोत्पत्तिः, एतदुभयचिह्नः अद्भुतो नाम रसो बोध्यः । उदाहरणमाह—अद्भुतो
रसो यथा—इह=अस्मिन् जीवलोके=संसारे इतोऽन्यत्=अस्मात्परम् अद्भुततरम्=
आश्चर्यतरम् किमस्ति ?=न किंचिदप्यस्ति । कुतो न ? इत्याह—यत्=यस्मात् कारणात्
जिनवचने त्रिकालयुक्ताः=अतीतानागतवर्तमानरूपत्रिकालयुक्ता अपि अर्थाः=
जीवादयः सूक्ष्मव्यवहिततिरोहितातीन्द्रिया मूर्त्तादिस्वरूपा ज्ञायन्ते इति॥सू० १७२॥

ભૂયપુવ્વો) અનુભવ મેં મી આયે હુએ એસે (વિમ્હયકરો) કિસી અદ્ભૂત
પદાર્થ કે દેખને પર જો આશ્ચર્ય હોતા હૈ, ઉસ આશ્ચર્ય કા જનક વહ
પદાર્થ વિસ્મય કર કહલાતા હૈ તથા ઉસસે જો રસ ઉત્પન્ન હોતા હૈ,
વહ રસ-મી વિસ્મયકર કહા જાતા હૈ । હસ અદ્ભૂત રસ કા- લક્ષણ
હર્ષ ઓર વિષાદ કી ઉત્પત્તિ હોના હૈ । આશ્ચર્ય જનક કિસી શુભવસ્તુ
કે દેખને પર હર્ષોત્પત્તિ હોતી હૈ, ઓર અશુભવસ્તુ દેખને પર વિષાદો-
ત્પત્તિ હોતી હૈ । અતઃ યહ અદ્ભૂત રસ હન દોનોં ચિહ્ન વાલા હોતા હૈ,
એસા જાનના ચાહિયે । અવ સૂત્રકાર હસ રસ કો જાનને કે લિયે ઉદા-
હરણ કહતે હૈ । વે કહતે હૈ કિ (અબ્ધુઓ રસો) ‘યહ અદ્ભૂત રસ
હસપ્રકાર સે હૈ (જહા) જૈસે-(અબ્ધુયતરમિહ એત્તો અન્નં કિં અત્થિજીવ-
લોગંમિ) હસ-જીવલોક મેં હસસે અધિક ઓર દૂસરા આશ્ચર્ય-
કયા હૈ ? (જં જિણવયણે તિકાલજુત્તા અત્થા મુણિજ્જંતિ) જો જિન વચન
મેં સ્થિત ત્રિકાલ-અતીત -અનાગત-ઓર વર્તમાન કાલવર્તી સમસ્ત

(અનુભૂયપુવ્વો) અનુભવેલ (વિમ્હયકરો) કોઈ પણ અદ્ભૂત પદાર્થને જોઈને
જે આશ્ચર્ય થાય છે, તે આશ્ચર્યને ઉત્પન્ન કરનાર તે પદાર્થ વિસ્મયકારી
કહેવાય છે. તેમજ તેના વડે જે રસ ઉત્પન્ન થાય છે, તે રસ પણ વિસ્મય-
કર કહેવાય છે આ અદ્ભૂત રસનું લક્ષણ હર્ષ અને વિષાદની ઉત્પત્તિ થવી
તે છે આશ્ચર્યોત્પાદક કોઈ શુભ વસ્તુને જોવાથી હર્ષ ઉત્પન્ન થાય છે.
અને અશુભ વસ્તુને જોવાથી વિષાદની ઉત્પત્તિ થાય છે. એથી
આ અદ્ભૂત રસ આ બંને ચિહ્નો યુક્ત હોય છે. હવે સૂત્રકાર આ રસને
જાણવા માટે ઉદાહરણો પ્રસ્તુત કરે છે. તેઓ કહે છે કે (અબ્ધુઓ રસો)
આ અદ્ભૂત રસ આ પ્રમાણે છે-(જહા) જેમ કે (અબ્ધુયતરમિહ એત્તો અન્નં
કિં અત્થિ જીવલોગંમિ) આ જીવલોકમાં એના કરતાં બીજી કંઈ નવાઈ
પ્રમાણે તેવી વાત છે. કે (જં જિણવયણે તિકાલ જુત્તા અત્થા મુણિજ્જંતિ) જે
જિન વચનમાં સ્થિત ત્રિકાલ-અતીત-અનાગત અને વર્તમાનકાલીન સર્વ

अथ चतुर्थं रौद्ररसं सलक्षणमाह—

मूलम्—भयजण्णरूवसदंधयारचिंताकहासमुपपण्णो । संमोह-
संभमविसायमरणलिंगो रसो रोदो ॥८॥ रोदो रसो जहा—भिउडी
विडंबियमुहो संदट्ठोइ इयरुहिरमाकिण्णो । हणसि पसुं असुरणिभो
भीमरसिय अइरोह ! रोदोऽसि ॥९॥ सू० १७३॥

छाया—भयजननरूपशब्दान्धकारचिन्ताकथासमुत्पन्नः । सम्मोहसंभ्रमवि-
षादमरणलिङ्गो रसो रौद्रः ॥ रौद्रो रसो यथा—भुकुटिविडम्बितमुखः संदष्टौष्ठः
इति रुधिरमाकीर्णः । हंसि पशुम् असुरनिभो भीमरसित अतिरौद्रः ।
रौद्रोऽसि । सू० १७३॥

टीका—‘भयजण्ण’ इत्यादि—

भयजननरूपशब्दान्धकारचिन्ताकथासमुत्पन्नः—रूपं=शत्रुपिशाचादीनामाकृतिः,

सूक्ष्म व्यवहित एवं तिरोहित पदार्थ जान लिये जाते हैं । स्वभाव विप्र-
कृष्ट परमाणु आदि पदार्थ सूक्ष्म हैं । काल विप्रकृष्ट—राम—रावण आदि
आदि पदार्थ व्यवहित हैं देश विप्रकृष्ट—सुमेरु पर्वत आदि पदार्थ
तिरोहित हैं । इस प्रकार अतीन्द्रिय एवं अमूर्त स्वरूप जितने भी आगम-
कथित त्रिकालवर्ति जीवादिक पदार्थ हैं, वे सब जिनवचन के प्रभाव
से प्रत्यक्ष और परोक्षरूप से जानलिये जाते हैं ॥ सू० १७२ ॥

अब सूत्रकार चौथा रौद्र रस का लक्षण निर्देशपूर्वक कथन
करते हैं—“भयजण्णरूव” इत्यादि

शब्दार्थ—(भयजण्णरूवसदंधयारचिंताकहासमुपपण्णो) भय,

सूक्ष्म व्यवहित अने तिरोहित, पदार्थों जलणी लेवाय छे स्वभाव विप्रकृष्ट
परमाणु वगेरे पदार्थों सूक्ष्म छे. कालविप्रकृष्ट राम—रावण वगेरे पदार्थों
व्यवहित छे, देशविप्रकृष्ट सुमेरुपर्वत वगेरे पदार्थों तिरोहित छे. आ प्रमाणु
जेटलां आगम कथित त्रिकालवर्ती अतीन्द्रिय अने अमूर्त स्वरूप एवादि
पदार्थों छे, ते सर्वे जिन वचनना प्रभावधी प्रत्यक्ष तेमन परोक्ष रीते
जलणी लेवाय छे. ॥सू० १७२॥

उवे सूत्रकार चतुर्थं रौद्र रसतुं लक्षण सहित कथन करे छे—

“ भयजण्णरूव ” इत्यादि—

शब्दार्थ—(भयजण्णरूवसदंधयारचिंता कहा समुपपण्णो) लघोत्पादक ३५,

શબ્દઃ=તેષામેવ શત્રુપિશાચાદીનાં શબ્દઃ, અન્ધકારઃ-નિવિહતમઃ, एतेषां द्वन्द्वः,
 भयजननाः=भयोत्पादका ये रूपशब्दान्धकाराः-तेषां चिन्ता=तत्स्वरूपपर्यालो-
 चनरूपा स्मृतिः, कथा=स्वरूपप्रकथनं च, उपलक्षणत्वाद् दर्शनमपि बोध्यम्, ततः
 समुत्पन्नः=संजातः, तथा-संमोहसंभ्रमविषादमरणलिङ्गः-संमोहः विवेकरहित्यम्,
 संभ्रमः=व्याकुलता, विषादः=ममाऽत्रप्रदेशे समागमनमशोभनमित्येवं शोकः,
 मरणं=भयोद्विग्नस्य गजसुकुमालहन्तुः सोमिलब्राह्मणस्येव झटिति प्राणोत्क्रमणम्,
 एतानि लिङ्गानि=चिह्नानि यस्य स तथाभूतो रौद्रो रसो भवति । नन्वयं भयजन-
 क रूपादि स्मरणकथनदर्शनसमुत्पन्नः सम्मोहादिलक्षणो भयानक एव भवति,
 कथमस्य रौद्ररसत्वमभिहितम् ? इति चेदाह-यद्यप्ययं भवत्कथनानुसारेण भयानक

जनक रूप, शब्द और अंधकार की स्वरूपपर्यालोचनारूप स्मृति से स्वरूप कथनरूप कथा से ' दर्शन से उत्पन्न हुआ (संमोहसंभ्रमविसा-
 यमरणलिङ्गो) तथा विवेकरहितपना रूप संमोह व्याकुलतारूप संभ्रम
 शोक रूप विषाद और प्राणविसर्जन रूप मरण इन-लिङ्गों चिह्नों वाला
 (रौद्र रसो) रौद्र रस होता है । तात्पर्य कहने का यह है कि यह रौद्र
 रस भयजनक रूपादिकों के स्मरण आदि से उत्पन्न होता है और
 यह संमोह चिह्नों से जाना जाता है मेरा इस प्रदेश में समागमन
 ठीक नहीं है , इस प्रकार से शोक करने का नाम विषाद है । गज
 सुकुमाल को मारने वाले सोमिल ब्राह्मण की तरह भयोद्विग्न व्यक्ति
 के जो जल्दी से प्राणों का उत्क्रमण है वह मरण है ।

શંકા-ભયજનક રૂપાદિકોં કે સ્મરણ સે, કથન સે એવં દર્શન સે,-

શબ્દ અને અન્ધકારની સ્વરૂપ પર્યાલોચના રૂપ સ્મૃતિથી, સ્વરૂપ કથન રૂપ
 કથાથી દર્શનથી ઉત્પન્ન થયેલ (સંમોહસંભ્રમવિસાયામરણલિંગો) તેમજ
 વિવેકરહિત્ય રૂપ સંમોહ, વ્યાકુલતા રૂપ સંભ્રમ, શોકરૂપ વિષાદ અને
 પ્રાણ વિસર્જન રૂપ મરણ આ ચિહ્નો યુક્ત (રોહો રસો) રૌદ્ર રસ હોય છે.
 તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે કે આ રૌદ્ર રસ લયોત્પાદક રૂપ વગેરેના સ્મરણથી
 ઉત્પન્ન થાય છે. આ સંમોહન ચિહ્નોથી જાણવામાં આવે છે માટે આ
 પ્રદેશમાં સમાગમન ઉચિત નથી, આ પ્રમાણે ચિન્તા કરવી તે વિષાદ છે.
 ગજસુકુમાલને મારનાર સોમિલ બ્રાહ્મણની જેમ લયોદ્વિગ્ન વ્યક્તિના
 પ્રાણોનું જે જલ્દી ઉત્ક્રમણ છે, તે મરણ છે.

શંકા-ભયોત્પાદક રૂપાદિકેને સ્મરણથી, કથનથી અને દર્શનથી ઉત્પન્ન

एव, तथाऽपि पिशाचादिरौद्रवस्तुसंजातत्वादस्य रौद्रत्वं विवक्षितम्। अतो न कश्चिद् दोषः। किं च शत्रुजनादिदर्शने तच्छिरच्छेदने समुद्युक्तानां छागशूकरकुरङ्गवधादिप्रवृत्तानां च यो रौद्राध्यवसायात्मको भ्रुकुटीभङ्गादिलिङ्गो रौद्रो रसोऽप्युपलक्षणत्वादत्रैव बोध्यः। अन्यथा स निरास्पद एव स्यात्। अत एवात्र रौद्रपरिणामवत्पुरुषचेष्टाप्रतिपादकमेवोदाहरणं वक्ष्यति। भयत्रस्तचेष्टाप्रतिपादकमुदाहरणं

उत्पन्न हुआ संमोहादिलक्षणोंवाला भयानक रसही होता है, फिर इसे रौद्ररस रूप कैसे कहा ?

उत्तर-यद्यपि यह आपके कथनानुसार भयानक रस ही है-तो भी पिशाच आदि रौद्र वस्तु के देखने आदि से यह उत्पन्न होता है, इसलिये इसमें रौद्रता विवक्षित हुई है। किंच-शत्रुजन आदि के दर्शन होनेपर उनके शिरच्छेद करने में कटिबद्ध हुए व्यक्तियों के और यकरा, शूकर एवं कुरंग-हिरण-आदि जानवरों की हिंसा करने में प्रवृत्त हुए व्यक्तियों के जो रौद्र परिणाम होते हैं, कि जो भ्रुकुटी भङ्ग आदि चिह्नों से जाने जाते हैं वे भी रौद्ररस स्वरूप ही होते हैं। अतः उपलक्षण-से रौद्ररस यहां पर जानना चाहिये। नहीं तो, रौद्राध्यवसाय रूप-रौद्ररस निराश्रय मानना पड़ेगा। इसीलिये रौद्रपरिणाम युक्त पुरुष की चेष्टाओं का प्रतिपादक ही उदाहरण यहां सूत्रकार ने कहा है। भय से त्रस्त हुए व्यक्तियों की चेष्टाओं का प्रतिपादन करने वाला उदा-

થયેલ સંમોહાદિ લક્ષણોવાળો ભયાનક રસ જ હોય છે, ત્યારે એને રૌદ્ર રસ રૂપ શા માટે કહેવામાં આવ્યો છે ?

ઉત્તર-જો કે તમારા કહ્યા મુજબ તો આ ભયાનક રસ જ છે છતાં એ પિશાચ વગેરે રૌદ્ર વસ્તુને જોવા વગેરેથી તે ઉત્પન્ન થાય છે, એથી આમાં રૌદ્રત્વ વિવક્ષિત છે. કિંચ શત્રુજન વગેરેના દર્શનથી, તેમજ શિરચ્છેદન કરવા માટે તત્પર થયેલ વ્યક્તિઓને અને બકરા, શૂકર તેમજ કુરંગ-હિરણ વગેરે જાનવરોની હિંસા કરવા માટે પ્રવૃત્ત થયેલ વ્યક્તિઓના જે રૌદ્ર રસ પરિણામ હોય છે અને જે ભ્રુકુટી-ભંગ વગેરે ચિહ્નોથી જાણવામાં આવે છે તે પણ આ રૌદ્રરસ સ્વરૂપ જ હોય છે. માટે ઉપલક્ષણથી રૌદ્રરસ અહીં જ જાણવો જોઈએ નહિતર, રૌદ્રાધ્યવસાય રૂપ રૌદ્રરસ નિરાશ્રય માનવો પડશે એથી રૌદ્ર પરિણામ યુક્ત પુરુષની ચેષ્ટાઓનું પ્રતિપાદક ઉદાહરણ જ અહીં સૂત્રકારે કહ્યું છે. ભય સંત્રસ્ત વ્યક્તિની ચેષ્ટાઓનું પ્રતિપાદન કરનાર

સ્વયમેવાભ્યુત્થમ્ । અતોદાહરણમાહ-રોદ્ધો રસો યથા-શુકુટીવિડમ્બિતમુખઃ-શુકુટિઃ
 =ક્રોધાદિના લલાટસંકોચનં તથા વિડમ્બિતં=વિકૃતી-મૂત મુખં यस્ય સ તથા,
 પુનઃ-સન્દષ્ટોઃ-સન્દષ્ટઃ=દન્તૈ-ર્દષ્ટ ઓળો યેન સ તથામૂતઃ, इति=અતઃ-
 રુધિરાકીર્ણઃ-રુધિરૈઃ આકીર્ણઃ-શોણિતસંકુલો હે ભીમરસિન-ભીમં=મયંકરં
 રસિતં यस્ય તત્સંબુદ્ધો, -હે મયજનકશબ્દકારિન્ ! ત્વમ્ અસુરનિમ્-દૈત્ય इव पशु
 હસિ, અતો હે અતિરોદ્ધ=અતિશયરોદ્ધરૂપધારિન્ ! ત્વં રોદ્ધોઽસિ=રોદ્ધપરિણામયુક્તો-
 ઽસીતિ નરકનિગોદાદિદુઃસ્વં મોક્ષ્યસે ॥ સૂ. ૧૭૩ ॥

હરણ તો અપને આપ જાન લેના ચાહિયે । રોદ્ધરસ કા જ્ઞાન જિસપ્રકાર
 સે હો સકતા હૈ સૂત્રકાર (રોદ્ધો રસો જહા) इन पदोंद्वारा उसी प्रकार के
 उदाहरणद्वारा प्रकट करते हैं-जैसे-(भिडकी विडम्बियमुहो संदहोदह्य
 रुधिरमाकिण्णो) पशुहिंसा में निरत बने हुए किसी हत्यारे मनुष्य से
 कोई धर्मात्मा मनुष्य यह कह रहा है कि अरे । यह तेरा मुख इस
 समय शुकुटी से विकराल बना हुआ है । क्रोधादिक के आवेग से तेरे चे-
 दांत अधरोष्ठ को डस रहे हैं । खून से तेरा शरीर लथ पथ हो रहा
 है (भीमरसिय) जो तेरे मुख से शब्द निकल रहे हैं, बड़े भयावने हैं ।
 अतः महाभयजनक शब्द बोलने वाले तुम (असुरनिमो) असुर जैसे
 बने हुए हो और (पशुं हणसि) पशुकी हत्या कर रहे हो । अतः (अह-
 रोद) अतिशय रौद्ररूपधारी तुम (रोदोऽसि) रौद्रपरिणामों से युक्त होने
 के कारण रौद्ररस रूप हो-सो याद रखो, नरकनिगोद आदि के दुःस्वों
 को भोगोगे-॥ सू० १७३ ॥

ઉદાહરણ તો પોતાની મેળે જ બાણી લેવું બોધ્યું. જે રીતે રોદ્ધ
 રસનું જ્ઞાન થઈ શકે છે હવે સૂત્રકાર (રોદ્ધો રસો જહા) તે પ્રમાણ આ પદો
 વડે ઉદાહરણો પ્રસ્તુત કરીને સ્પષ્ટ કરે છે. જેમ કે-(ભિડકી વિડમ્બિયમુહો
 સંદહોદહ્યરુધિરમાકિણ્ણો) પશુ હિંસા માટે તત્પર થયેલા કોઈ ઘાતક
 માણસને કોઈ ધર્માત્મા પુરૂષ આ પ્રમાણે કહે કે અરે ! આ તારા ઘાંત
 હંમણાં શુકુટીઓથી વિકરલ બની રહ્યાં છે-ક્રોધ વગેરેના આવેગથી તારા ઘાંત
 અધરોષ્ઠાને લીસી રહ્યા છે તારાં શરીર લોહીથી ખરડાઈ રહ્યાં છે. (भीमर-
 सिय) तारा वचनो अती लघोत्पादक છે. એથી મહાભયજનક શબ્દો બોલ-
 નાર તું, (असुरनिमो) असुर જેવો થઈ ગયો છે. અને (पशुं हणसि) पशुनी
 हत्या करी रहीं છે. એથી (अहरोद) अतिशय रौद्र रूप धारीतું (रोदोऽसि)
 रौद्र-परिणामથી युक्त होवा બહલ રોદ્ધરસ રૂપ છે તો તું યાદ રાખ કે
 नरकनिगोद वगेरना दुःखो लोगववा पड्यो. ॥ सू० १७३ ॥

अथ पञ्चमं व्रीडनकरसं सलक्षणं निरूपयति—

मूलम्—विणओवयारगुज्जगुरुद्वारमेरावइवइक्कमुप्पण्णो ।
वेलणओ नाम रसो, लज्जासंकाकरणलिंगो ॥१०॥ वेलणओ रसो
जहा—किं लोइयकरणीओ लज्जणी अतरंति लज्जयामुत्ति । वारि-
ज्जम्मिं गुरुयणो परिवंदइ जं बहुप्पोत्तं ॥११॥ सू० १७४॥

छाया—विनयोपचारगुह्यगुरुद्वारमर्यादाव्यतिक्रमोत्पन्नः । व्रीडनको नाम
रसो लज्जाशङ्काकरणलिङ्गः ॥ व्रीडनको रसो यथा—किं लौकिककरण्या लज्जनीय-
तरं लज्जयामीति । वारिज्जे गुरुजनः परिवन्दते यत् बहुपोतम् ॥ सू० १७४॥

टीका—‘विणओ’ इत्यादि—

विनयोपचारगुह्यगुरुद्वारमर्यादाव्यतिक्रमोत्पन्नः—विनयोपचारः—विनय-
योग्ये=मातापित्रादिगुरुजने विनयकरणम्, गुह्यं=रहस्यम्, गुरुद्वारमर्यादा=पितृ-
व्यकलाचार्यादि गुरुजनभार्याभिः सह औचित्येन वर्त्तनम्, एतेषां द्वन्द्वः, तेषां
व्यतिक्रमः=विपर्ययस्तस्मादुत्पन्नः—संजातः, तथा—लज्जाशङ्काकरणलिङ्गः—लज्जा=

अब सूत्रकार पांचवे व्रीडनक रस का लक्षण को कहते हुए
कथन करते हैं—“विणओवयार गुज्ज” इत्यादि ।

शब्दार्थ—(विणओवयारगुज्जगुरुद्वार मेरावइक्कमुप्पण्णो) विनय
करने के योग्य माता पिता आदि गुरु जनों की विनय के व्यतिक्रम-
उल्लंघन—से मित्रादिजनों की गुप्त बातें आदि रूप रहस्य को अन्यजनों
के समक्ष प्रकट करने से तथा पितृव्य—चाचा, एवं कलाचार्य आदि
मान्यजनों की धर्मपत्नियों के साथ औचित्यपूर्ण व्यवहार का अतिक्रम
करने से व्रीडनक रस उत्पन्न होता है । (लज्जासंकाकरणलिंगो)

इसे सूत्रकार पांचमो व्रीडनक रसनું लक्षणसहित कथन करे छे—

“विणओवयारगुज्ज” इत्यादि—

शब्दार्थ—(विणओवयारगुज्जगुरुद्वारमेरावइक्कमुप्पण्णो) विनय करवा
योग्य मातापिता वगेरे गुरुओंनी साथे अविनयपूर्ण व्यवहार करवाधी;
मित्र वगेरेनी गुप्त बात वगेरे रूप रहस्यने भीलओनी साथे प्रकट करवाधी
तेमन् पितृव्य (काका) अने कलाचार्य वगेरे मान्यजनोनी धर्मपत्नीओ साथे
औचित्यपूर्ण व्यवहारना अतिक्रम करवाधी आ व्रीडनक रस उत्पन्न थाय
छे. (लज्जा-संका करणलिंगो) लज्जा अने शंका उत्पन्न थवी ते आ रसनું

શિરોઽધોઽવનમનાદિરૂપા, શઙ્કા=માં ન કશ્ચિત્ કિશ્ચિદ્ વદે? દિતિરૂપા, તયોઃ
 કરણં=વિવાનં લિઙ્ગં=લક્ષણં यस્ય સ તથાભૂતો વ્રીડનકો નામ રસો ભવતિ । અયં
 ભાવઃ-વિનયયોગ્યાનાં માતાપિત્રાદિપૂજ્યજનનાં વિનયોપચારવ્યતિક્રમે સતિ
 સવ્જનસ્ય પશ્ચાદ્ વ્રીડા પ્રાદુર્ભવતિ-અહો ! મયા કથં માતાપિત્રાદીનામપમાનઃ
 કૃતઃ ?-ઇતિ, તથા-સુહૃદાં રહસ્યસ્ય અન્યજનસન્નિધૌ કથને પશ્ચાદ્ સવ્જનસ્ય
 વ્રીડા ભવતિ-કથં મયા સુહૃદો રહસ્યમન્યજનસન્નિધૌ નિવેદિતમ્ ?-ઇતિ, તથા-
 તથા-પિતૃવ્યકંઠાચાર્યાદિગુરુજનનાં માર્યાણાં શીલભંગે કૃતે સતિ પશ્ચાદ્ વ્રીડા
 સમુત્પદ્યતે-અહો ! મયા દુરાત્મના કિમિદં દુષ્કૃતં કૃતમ્ ?-ઇતિ-ઇત્યેવં રૂપેણ
 વ્રીડનકો રસઃ સમુત્પદ્યતે । તથા ચ-શિરોઽધોઽવનમનાત્રસંકોચરૂપા લજ્જા, માં

લજ્જા ઓર શંકાકરના એ હસ રસ કે ચિહ્ન હોતે હૈં । એસા (વેલણઓ
 નામ રસો) યહ વ્રીડનક નામ કા રસ હોતા હૈ । તાત્પર્ય હસકાં યહ
 હૈ કિ-‘વિનય યોગ્ય પૂજ્ય માતા પિતા આદિ ગુરુજનોં કા યથાયોગ્ય
 વિનયોપચાર જબ ઉલ્લંઘિત હો જાતા હૈ, તબ સવ્જન પુરુષોં કો બાદ મેં
 લજ્જા આતી હૈ । વે વિચારતે હૈં કિ અરે ! હમને કયોં માતા પિતા
 આદિ જનોં કા અપમાન કિયા હૈ ? તથા અપને મિત્રજનોં કા રહસ્ય
 જબ દૂસરે વ્યક્તિયોં કે પાસ પ્રગટ કરતા હૈ, તબ બાદ મેં ઉસ
 ઉદ્ઘાટનકર્તા સવ્જન કો લજ્જા આતી હૈ ઓર વહ સોચતા હૈ કિ-
 ‘કયાં મૈને દૂસરોં કે સમક્ષ અપને મિત્ર કે રહસ્ય કા ઉદ્ઘાટન કિયા ?
 તથા-પિતૃવ્ય, કલાચાર્ય આદિ ગુરુજનોં કી માર્યાઓં કા શીલભંગ કર
 દેને પર ‘મનુષ્ય કો બાદ મેં વ્રીડા ઉત્પન્ન હોતી હૈ । વહ સોચતા હૈ-સુશ
 દુરાત્મા-ને યહ દુષ્કૃત કયોં કિયા ? હસ પ્રકાર સે યહ વ્રીડનક રસ
 ઉત્પન્ન હોતા હૈ । શિર કો નીચા નમાના શરીર કો સંકુચિત કરના હસ

ચિહ્ન છે. એવો વ્રીડનક નામે રસ હોય છે. તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે કે વિનય
 યોગ્ય પૂજ્ય માતાપિતા વગેરે ગુરુજનો સાથેના ઉચિત વિનયોપચાર બ્યાદે
 સવ્જનો વડે ઉલ્લંઘિત થાય છે ત્યારે તેમને લજ્જાની અનુભૂતિ થાય છે.
 તેઓ વિચાર કરે છે, કે ‘અરે ! અમે માતાપિતા વગેરેનું અપમાન કર્યું
 છે.’ તેમજ માણસ પોતાના મિત્રોની ગુપ્ત વાત બ્યાદે બીજાને કહે છે ત્યારે
 તેને ગુપ્ત વાત કહ્યા બાદ લજ્જાની અનુભૂતિ થાય છે અને તે વિચાર કરે
 છે કે ‘અરે ! મેં દુરાત્માએ આ કામ શું કામ કર્યું ?’ આ પ્રમાણે તે
 વ્રીડનક રસ ઉત્પન્ન થાય છે લજ્જામાં મસ્તક નીચે થવું અને શરીર સંકુચિત

કશ્ચિત્ કચિત્ કિમપિ કથયિષ્યતિ તુ ન ? इत्येवं सर्वत्र या मनसोऽभिशङ्कना सा शङ्का, तयोः करणं=निष्पादनमेवास्य लक्षणमिति । अस्योदाहरणमाह-त्रीडनको रसो यथा-लौकिककरण्याः=भौकिकक्रियायाः परं लज्जनीयतरम्=अतिशयलज्जास्पदं किमस्ति ? नातः परं किमपि लज्जास्पदमस्तीत्यर्थः, इत्यतोऽहं लज्जे । लज्जायां हेतुमाह-यत्=यस्मात् कारणात् वारिज्जमि देशी शब्दोऽयम्, विवाहे बधूवरयोः प्रथमसंगमे जाते 'वारिज्जमि विवाहे इत्यर्थः गुरुजनः=श्वश्रूश्चभुरादिः बधूपोतं=स्तुषापरिधानवस्त्रं परिवन्दते=नमस्करोति । अस्य गाथाया अवतरणमेवं बोध्यम्-कस्मिंश्चिद् देशेऽयं व्यवहारोऽस्ति, यत् बधूवरयोः प्रथम-

रूप 'लज्जा' होती है । 'मुझसे कोई कुछ कहेगा तो नहीं ?' इस प्रकार सर्वत्र जो मने में आशंका बन जाती है उसका नाम 'शंका' है । लज्जा और शंका इनका उत्पन्न करना ही इस त्रीडनक रस के लक्षण हैं । इसका ज्ञान जिस प्रकार से होता है, सूत्रकार उस प्रकार को (बेलणओ रसो जहा) इन पदों द्वारा प्रकट करने की सूचना देते हैं । वे कहते हैं कि-'यह त्रीडनक रस इस प्रकार से है ।' जैसे-(किं लोइयकरणीओ लज्जणीअतरं ति लज्जया मुत्ति) इस लौकिकक्रिया से अधिक और लज्जास्पद बात क्या हो सकती है ? मैं तो इससे बहुत लजाती हूँ । (वारिज्जमि गुरुजणो परिवंदइ जं बहुप्पोत्तं) बधूवर के प्रथम संगम होनेपर गुरुजन-सास ससुर आदि-जो बधूपोत को-बहु द्वारा परिधृत वस्त्र की प्रशंसा करते हैं । इस गाथा का अवतरण इसप्रकार से है-किसी देश में ऐसे चाल है-कि 'जब बधूवर का

કરવું થાય છે 'મને કોઈ કંઈ કહેશે તો નહીં ?' આ પ્રમાણે મનમાં જે આશંકાઓ ઉત્પન્ન થાય છે તે 'શંકા' છે લજ્જા અને શંકા ઉત્પન્ન થવી તેજ ત્રીડનક રસનું લક્ષણ છે આ રસનું જ્ઞાન કેવું હોય છે, સૂત્રકાર તે વિષયમાં કહે છે કે 'આ ત્રીડનકરસ આ પ્રમાણે છે. જેમ કે (કિં લોહ્યકરણીઓ લજ્જણીઅતરંતિ લજ્જયા મુત્તિ) આ લૌકિક વ્યવહારથી વધારે કંઈ લજ્જાસ્પદ વાત થઈ શકે છે ? 'મને તો એનાથી બહુજ શરમ આવે છે.' (વારિજ્જમિ ગુરુજણો પરિવંદઈ જં બહુપ્પોત્તં) મને તો આનાથી બહુજ શરમ આવે છે (વારિજ્જમિ ગુરુજણો પરિવંદઈ જં બહુપ્પોત્તં) વધૂ-વરના પ્રથમ-સમાગમ પછી ગુરુજનો-સાસુસસરા વગેરે-વહુએ પહેરેલા વસ્ત્રના વખાણ કરે છે. આ ગાથાનું અવતરણ આ પ્રમાણે છે-કોઈ એક

सूत्रमे यदि वध्वा निवसनं शोणिताभिषिक्तं भवति, तदा सा पूर्वमकृतसंगमास्तः सती वर्तते इति लोका मन्यन्ते । तस्यास्तद्वक्तारुणितं वसनं तत्सतीत्वख्यापनार्थं प्रतिगृहे भ्राम्यते । तस्याः श्वशुरादयो गुरुजना बहुमानपुरस्सरं तद्वस्त्रं वन्दते । अमुं देशाचारमनुसृत्य कस्याश्चिद्वध्वास्तथाविधं निवसनं प्रतिगृहं नीयते गुरुजनैश्च तद्वन्द्यते । तद् दृष्ट्वा वधूः स्वसखीं वदति - 'किं लोह्यकरणीओ' इत्यादि ॥ सू. १७४ ॥
इति श्री विश्वविख्यात जगद्ब्रह्मादिपदभूषित बालब्रह्मचारी 'जैनाचार्य' पूज्यश्री घासीलालव्रतिविरचिता "अनुयोगद्वारसूत्रस्य" अनुयोगचन्द्रिकाख्यायां टीकायां
प्रथमो भागः समाप्तः

सुहागरात्रि में प्रथम संगम होता-है-तब उस संगम में-यदि वधू का पहिरा हुआ वस्त्र-खून से युक्त होता तो, उससे वह ऐसी जानी जाती है कि-'यह पहिले अकृतसंगमा रही है अतः सती है । ऐसा लोग मानते हैं । उसके उस रुधिररक्त-वस्त्र को हर एक घर-में उसके सतीत्व के ख्यापन के लिये घुमाया जाता है । उसके श्वशुर आदि गुरुजन बहुमान पुरस्सर उस वस्त्र की प्रशंसा करते हैं । इसी देशाचार को लेकर किसी वधू के उस प्रकार के वस्त्र को गुरुजनों द्वारा वंदित होता हुआ देख-कर किसी वधू ने अपनी सखी से ऐसा कहा है-कि" किं लोह्यकरणीओ इत्यादि । ॥ सू० १७४ ॥

जैनाचार्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत 'अनुयोगद्वार' सूत्र की अनुयोगचन्द्रिकाटीका का प्रथम भाग समाप्त

देशमां એવી પ્રથા છે કે જ્યારે સુહાગરાત્રિમાં વધૂવરનો પ્રથમ-સંગમ થાય છે ત્યારે તે સંગમમાં જો વધૂએ પહેરેલું વસ્ત્ર લોહીવાળું થઈ જાય છે તો તેથી એમ માનવામાં આવે છે કે તે સ્ત્રી પહેલાં અકૃતસંગમાં રહી છે. એથી તે સતી છે. એવું લોકો માને છે તેથી વધૂના તે લોહીથી ખરડાયેલા વસ્ત્રને તેના સતીત્વની પ્રસિદ્ધિ માટે દરેકે દરેક ઘરમાં ખતાવવામાં આવે છે તેના શ્વસુર વગેરે ગુરૂજનો ભારે સન્માનપૂર્વક તે વસ્ત્રોના ખૂબજ વખાણ કરે છે. આ જાતના લોકાચારને અનુલક્ષીને કોઈ એક વધૂના વસ્ત્રને ગુરૂજનો વડે પ્રશંસિત થતું જોઈને તે વધૂએ પોતાની સખીને આ પ્રમાણે કહ્યું છે કે-
"કિં લોહ્યકરણીઓ" ॥સૂ. ૧૭૪॥

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજીમહારાજકૃત 'અનુયોગદ્વાર સૂત્ર' ની અનુયોગ-ચન્દ્રિકાટીકાનો પહેલો ભાગ સમાપ્ત.

